

श्रीमद्राजचन्द्रजैनशास्त्रमाला

श्रीमन्नेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्तीरचित

लब्धिसार

(क्षपणासार गर्भित)

पंडितप्रवर श्री टोडरमल्लजीकृत सम्यग्ज्ञानचंद्रिका भाषाटीका सहित

संपादक
श्री पं० फूलचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्री

प्रकाशक
श्री परमश्रुत प्रभावक मण्डल
श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम, अगास

वीरनिर्वाण संवत् २५०६ ईस्वी सन् १९८० विक्रम संवत् २०३६

मूल्य रु० ४२)

प्रकाशक
मनुभाई भ० मोदी, प्रमुख
श्री परमश्रुत प्रभावक मण्डल,
श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम,
स्टेशन- स; वाया-आणद,
पोस्ट-बोरिया-३८८१३० (गुजरात)

[प्रथमावृत्ति विक्रम स० १९७३ प्रति १०००]
[द्वितीयावृत्ति विक्रम स० २०३६ प्रति १०००]

मुद्रक
बाबूलाल जैन फागुल्ल,
महावीर प्रेस,
भेलूपुर, वाराणसी ।



श्रीमद् राजचंद्र

जन्म ववाणिया
वि स १९२४ कार्तिक पूर्णिमा, रविवार

देहविलय राजकोट
वि स १९५७ चैत्र वद ५, मगलवार

एक अन्य पत्रमें लिखते हैं—"कितने ही निर्णयोसे मैं यह मानता हूँ कि इस कालमें भी कोई-कोई महात्मा गतभवको जातिस्मरणज्ञानसे जान सकते हैं, यह जानना कल्पित नही किंतु सम्यक् (यथार्थ) होता है। उत्कृष्ट सवेग, ज्ञानयोग और सत्सगसे भी यह ज्ञान प्राप्त होता है अर्थात् पूर्वभव प्रत्यक्ष अनुभवमें आ जाता है। जब तक पूर्वभव अनुभवगम्य न हो तब तक आत्मा भविष्यकालके लिए सशकित धर्मप्रयत्न किया करता है, और ऐसा सशकित प्रयत्न योग्य सिद्धि नही देता।" (पत्रांक ६४)

अवधान-प्रयोग, स्पर्शनशक्ति

वि० स० १९४० से श्रीमद्जी अवधान-प्रयोग करने लगे थे। धीरे-धीरे वे *शतावधान तक पहुँच गये थे। जामनगरमें बारह और सोलह अवधान करने पर उन्हें 'हिन्दका हीरा' ऐसा उपनाम मिला था। वि० स० १९४३ में १९ वर्षकी उम्रमें उन्होने बम्बईकी एक सार्वजनिक सभामें डॉ० पिटर्सनकी अध्यक्षतामें शतावधानका प्रयोग दिखाकर बडे-बडे लोगोको आश्चर्यमें डाल दिया था। उस समय उपस्थित जनताने उन्हें 'सुवर्णचन्द्रक' प्रदान किया था और 'साक्षात् सरस्वती' की उपाधिसे सम्मानित किया था।

श्रीमद्जीकी स्पर्शनशक्ति भी अत्यन्त विलक्षण थी। उपरोक्त सभामें उन्हें भिन्न-भिन्न प्रकारके बारह ग्रन्थ दिये गये और उनके नाम भी उन्हें पढ कर सुना दिये गये। बादमें उनकी आँखोपर पट्टी बाँध कर जो-जो ग्रन्थ उनके हाथ पर रखे गये उन सब ग्रन्थोके नाम हाथोंसे टटोलकर उन्होने बता दिये।

श्रीमद्जीकी इस अद्भुत शक्तिसे प्रभावित होकर तत्कालीन बबई हाईकोर्टके मुख्य न्यायाधीश सर चार्ल्स सारजन्टने उन्हें यूरोपमें जाकर वहाँ अपनी शक्तियाँ प्रदर्शित करनेका अनुरोध किया, परन्तु उन्होने इसे स्वीकार नही किया। उन्हें कीर्तिकी इच्छा न थी, बल्कि ऐसी प्रवृत्ति आत्मोन्नतिमें बाधक और सन्मार्ग-रोधक प्रतीत होनेसे प्राय बीस वर्षकी उम्रके बाद उन्होने अवधान-प्रयोग नही किये।

महात्मा गांधीने कहा था

महात्मा गाधीजी श्रीमद्जीको धर्मके सम्बन्धमें अपना मार्गदर्शक मानते थे। वे लिखते हैं—

"मुझ पर तीन पुरुषोंने गहरा प्रभाव डाला है—टालसटॉय, रस्किन और रायचन्दभाई। टालसटॉयने अपनी पुस्तको द्वारा और उनके साथ थोडे पत्रव्यवहारसे, रस्किनने अपनी एक ही पुस्तक 'अन्टु दि लास्ट' से—जिसका गुजराती नाम मैने 'सर्वोदय' रखा है, और रायचन्दभाईने अपने गाढ परिचयसे। जब मुझे हिन्दुधर्ममें शका पैदा हुई उस समय उसके निवारण करनेमें मदद करनेवाले रायचन्दभाई थे

जो वैराग्य (अपूर्व अवसर एवो क्यारे आवशे ?) इस काव्यकी कडियोमें झलक रहा है वह मैंने उनके दो वर्षके गाढ परिचयमें प्रतिक्षण उनमें देखा है। उनके लेखोंमें एक असाधारणता यह है कि उन्होने जो अनुभव किया वही लिखा है। उसमें कही भी कृत्रिमता नही है। दूसरे पर प्रभाव डालनेके लिए एक पंक्ति भी लिखी हो ऐसा मैंने नही देखा।

---

* शतावधान अर्थात् सौ कामोंको एक साथ करना। जैसे शतरज खेलते जाना, मालाके मनके गिनते जाना, जोड बाकी गुणाकार एव भागाकार मनमें गिनते जाना, आठ नई समस्याओकी पूर्ति करना, सोलह निर्दिष्ट नये विषयोपर निर्दिष्ट छदमें कविता करते जाना, सोलह भाषाओके अनुक्रमविहीन चार सौ शब्द कर्ताकर्मसहित पुन अनुक्रमबद्ध कह सुनाना, कतिपय अलकारोंका विचार, दो कोठोमें लिखे हुए उल्टे-सीधे अक्षरोसे कविता करते जाना इत्यादि। एक जगह ऊँचे आसनपर बैठकर इन सब कामोमें मन और दृष्टिको प्रेरित करना, लिखना नही या दुबारा पूछना नही और सभी स्मरणमें रख कर इन सौ कामोको पूर्ण करना। श्रीमद्जी लिखते हैं—"अवधान आत्मशक्तिका कार्य है यह मुझे स्वानुभवमे प्रतीत हुआ है।" (पत्रांक १८)

खाते, बैठते, सोते, प्रत्येक क्रिया करते उनमें वैराग्य ता होता हो। किसी समय इस जगतके किसी भी वैभवमें उन्हें मोह हुआ हो ऐसा मैंने नही देखा।

व्यवहारकुशलता और धर्मपरायणताका जितना उत्तम मेल मैंने कविमें देखा उतना किसी अन्यमें नही देखा।"

'श्रीमद् राजचन्द्र जयन्ती' के प्रसग पर ईस्वी सन् १९२१ मे गाधीजी कहते है—"बहुत बार कह और लिख गया हूँ कि मैंने बहुतोके जीवनमेंसे बहुत कुछ लिया है। परन्तु सबसे अधिक किसीके जीवनमेंसे मैंने ग्रहण किया हो तो वह कवि (श्रीमद्जी) के जीवनमेंसे है। दयाधर्म भी मैंने उनके जीवनमेंसे सीखा है। खून करनेवालेसे भी प्रेम करना यह दयाधर्म मुझे कविने सिखाया है।"

गृहस्थाश्रम

वि० स० १९४४ माघ सुदी १२ को २० वर्षकी आयुमें श्रीमद्जीका शुभ विवाह जौहरी रेवाशकर जगजीवनदास मेहताके बडे भाई पोपटलालकी महाभाग्यशाली पुत्री झबकबाईके साथ हुआ था। इसमें दूसरोकी 'इच्छा' और 'अत्यन्त आग्रह' ही कारणरूप प्रतीत होते है। विवाहके एकाध वर्ष बाद लिखे हुए एक लेखमें श्रीमद्जी लिखते है—"स्त्रीके सबधमें किसी भी प्रकारसे रागद्वेष रखनेकी मेरी अशमात्र इच्छा नही है। परन्तु पूर्वोपार्जनसे इच्छाके प्रवर्तनमें अटका हूँ।" (पत्राक ७८)

स० १९४६ के पत्रमें लिखते है—"तत्त्वज्ञानकी गुप्त गुफाका दर्शन करनेपर गृहाश्रमसे विरक्त होना अधिकतर सूझता है।" (पत्राक ११३)

श्रीमद्जी गृहवासमें रहते हुए भी अत्यन्त उदासीन थे। उनकी मान्यता थी—"कुटुबरूपी काजलकी कोठडीमें निवास करनेसे ससार बढता है। उसका कितना भी सुधार करो, तो भी एकान्तवाससे जितना ससारका क्षय हो सकता है उसका शताश भी उस काजलकी कोठडीमें रहनेसे नही हो सकता, क्योकि वह कषायका निमित्त है और अनादिकालसे मोहके रहनेका पर्वत है।" (पत्राक १०३) फिर भी इस प्रतिकूलतामें वे अपने परिणामोको पूरी सम्भाल रखकर चले।

सफल एवं प्रामाणिक व्यापारी

श्रीमदजी २१ वर्षकी उम्रमें व्यापारार्थ ववाणियासे बबई आये और सेठ रेवाशकर जगजीवनदासकी दुकानमें भागीदार रहकर जवाहिरातका व्यापार करने लगे। व्यापार करते हुए भी उनका लक्ष्य आत्माकी ओर अधिक था। व्यापारसे अवकाश मिलते ही श्रीमद्जी कोई अपूर्व आत्मविचारणामें लीन हो जाते थे। ज्ञानयोग और कर्मयोगका इनमें यथार्थ समन्वय देखा जाता था। श्रीमद्जीके भागीदार श्री माणेकलाल घेलाभाईने अपने एक वक्तव्यमें कहा था—"व्यापारमें अनेक प्रकारकी कठिनाइयाँ आती थी, उनके सामने श्रीमद्जी एक अडोल पर्वतके समान टिके रहते थे। मैंने उन्हे जड वस्तुओकी चितासे चिंतातुर नही देखा। वे हमेशा शान्त और गम्भीर रहते थे।"

जवाहिरातके साथ मोतीका व्यापार भी श्रीमद्जीने शुरू किया था और उसमें वे सभी व्यापारियोमें अधिक विश्वासपात्र माने जाते थे। उस समय एक अरब अपने भाईके साथ मोतीकी आढतका धन्धा करता था। छोटे भाईके मनमें आया कि आज मै भी बडे भाईकी तरह बडा व्यापार करूँ। दलालने उसकी श्रीमद्जीसे भेंट करा दी। उन्होने कस कर माल खरीदा। पैसे लेकर अरब घर पहुँचा तो उसके बडे भाईने पत्र दिखाकर कहा कि वह माल अमुक किमतके बिना नही बेचनेकी शर्त की है और तूने यह क्या किया? यह सुनकर वह घबराया और श्रीमद्जीके पास जाकर गिडगिडाने लगा कि मै ऐसी आफतमें आ पडा हूँ।

श्रीमद्‌जीने तुरन्त माल वापस कर दिया और पैसे गिन लिये। मानो कोई सौदा किया ही न था ऐसा समझकर होनेवाले बहुत नफेको जाने दिया। वह अरब श्रीमद्‌जीको खुदाके समान मानने लगा।

इसी प्रकारका एक दूसरा प्रसग उनके करुणामय और नि स्पृही जीवनका ज्वलत उदाहरण है। एक बार एक व्यापारीके साथ श्रीमद्‌जीने हीरोका सौदा किया कि अमुक समयमें निश्चित किये हुए भावसे वह व्यापारी श्रीमद्‌जीको अमुक हीरे दे। उस विषयका दस्तावेज भी हो गया। परन्तु हुआ ऐसा कि मुद्दतके समय भाव बहुत बढ गये। श्रीमद्‌जी खुद उस व्यापारीके यहाँ जा पहुँचे और उसे चिन्तामग्न देखकर वह दस्तावेज फाड डाला और बोले—"भाई, इस चिट्ठी (दस्तावेज) के कारण तुम्हारे हाथ-पाँव बँधे हुए थे। बाजार भाव बढ जानेसे तुमसे मेरे साठ-सत्तर हजार रुपये लेने निकलते है, परन्तु मैं तुम्हारी स्थिति समझ सकता हूँ। इतने अधिक रुपये मैं तुमसे ले लूँ तो तुम्हारी क्या दशा हो? परन्तु राजचन्द्र दूध पी सकता है, खून नही।" वह व्यापारी कृतज्ञभावसे श्रीमद्‌जीकी ओर स्तब्ध होकर देखता ही रह गया।

भविष्यवक्ता, निमित्तज्ञानी

श्रीमद्‌जीका ज्योतिष-सबधी ज्ञान भी प्रखर था। वे जन्मकुडली, वर्षफल एव अन्य चिह्न देख कर भविष्यकी सूचना कर देते थे। श्री जूठाभाई (एक मुमुक्षु) के मरणके बारेमें उन्होने सवा दो मास पूर्व स्पष्ट बता दिया था। एक बार स० १५५५ की चैत्र वदी ८ को मोरबीमें दोपहरके ४ बजे पूर्व दिशाके आकाशमें काले बादल देखे और उन्हें दुष्काल पडनेका निमित्त जानकर उन्होने कहा—"ऋतुको सन्निपात हुआ है।" तदनुसार स० १९५५ का चौमासा कोरा रहा और स० १९५६ में भयकर दुष्काल पडा। श्रीमद्‌जी दूसरेके मनकी बातको भी सरलतासे जान लेते थे। यह सब उनकी निर्मल आत्मशक्तिका प्रभाव था।

कवि-लेखक

श्रीमद्‌जीमें, अपने विचारोकी अभिव्यक्ति पद्यरूपमें करनेकी सहज क्षमता थी। उन्होने 'स्त्रीनीति-बोधक', 'सद्‌बोधशतक', 'आर्यप्रजानी पडती', 'हुन्नरकला वधारवा विषे' आदि अनेक कविताएँ केवल आठ वर्षकी वयमें लिखी थी। नौ वर्षकी आयुमें उन्होने रामायण और महाभारतकी भी पद्य-रचना की थी जो प्राप्त न हो सकी। इसके अतिरिक्त जो उनका मूल विषय आत्मज्ञान था उसमें उनकी अनेक रचनाएँ हैं। प्रमुखरूपसे 'आत्मसिद्धि', 'अमूल्य तत्त्वविचार', 'भक्तिना वीस दोहरा', परमपदप्राप्तिनी भावना (अपूर्व अवसर)', 'मूलमार्ग-रहस्य', 'तृष्णानी विचित्रता' है।

'आत्मसिद्धि-शास्त्र'के १४२ दोहोकी रचना तो श्रीमद्‌जीने मात्र डेढ घटेमें नडियादमें आश्विन वदी १ (गुजराती) स० १९५२ को २९ वर्षकी उम्रमें की थी। इसमें सम्यग्दर्शनके कारणभूत छ पदोका बहुत ही सुन्दर पक्षपातरहित वर्णन किया है। यह कृति नित्य स्वाध्यायकी वस्तु है। इसके अग्रेजीमें भी गद्य पद्यात्मक अनुवाद प्रगट हो चुके हैं।

गद्य-लेखनमें श्रीमद्‌जीने 'पुष्पमाला', 'भावनाबोध' और 'मोक्षमाला'की रचना की। इसमें 'मोक्षमाला' तो उनकी अत्यन्त प्रसिद्ध रचना है जिसे उन्होने १६ वर्ष ५ मासकी आयुमें मात्र तीन दिनमें लिखी थी। इसमें १०८ शिक्षापाठ हैं। आज तो इतनी आयुमें शुद्ध लिखना भी नही आता जब कि श्रीमद्‌जीने एक अपूर्व पुस्तक लिख डाली। पूर्वभवका अभ्यास ही इसमे कारण था। 'मोक्षमाला'के सबधमें श्रीमद्‌जी लिखते है—"जैनधर्मको यथार्थ समझानेका उसमें प्रयास किया है, जिनोक्त मार्गसे कुछ भी न्यूनाधिक उसमें नही कहा है। वीतराग मार्गमें आबालवृद्धकी रुचि हो, उसके स्वरूपको समझे तथा उसके बीजका हृदयमें रोपण हो, इस हेतुसे इसकी बालावबोधरूप योजना की है।"

श्री कुन्दकुन्दाचार्यके 'पचास्तिकाय' ग्रथकी मूल गाथाओका श्रीमदजीने अविकल (अक्षरश) गुजराती अनुवाद भी किया है। इसके अतिरिक्त उन्होने श्री आनन्दघनजीकृत चोबीसीका अर्थ लिखना भी प्रारम्भ किया था, और उसमें प्रथम दो स्तवनोका अर्थ भी किया था, पर वह अपूर्ण रह गया है। फिर भी इतने से, श्रीमद्जीकी विवेचन शैली कितनी मनोहर और तलस्पर्शी है उसका ख्याल आ जाता है। सूत्रोका यथार्थ अर्थ समझने-समझानेमें श्रीमद्जीकी निपुणता अजोड थी।

मतमतान्तरके आग्रहसे दूर

श्रीमद्जी की दृष्टि वडी विशाल थी। वे रूढ़ि या अन्धश्रद्धाके कट्टर विरोधी थे। वे मतमतान्तर और कदाग्रहादिसे दूर रहते थे, वीतरागताकी ओर ही उनका लक्ष्य था। उन्होने आत्मधर्मका ही उपदेश दिया। इसी कारण आज भी भिन्न-भिन्न सम्प्रदायवाले उनके वचनोका रुचिपूर्वक अभ्यास करते हुए देखे जाते है।

श्रीमद्जी लिखते है—

"मूलतत्त्वमें कही भी भेद नही है, मात्र दृष्टिका भेद है ऐसा मानकर आशय समझकर पवित्र धर्ममें प्रवृत्ति करना।" (पुष्पमाला–१४)

"तू चाहे जिस धर्मको मानता हो इसका मुझे पक्षपात नही, मात्र कहनेका तात्पर्य यही कि जिस मार्गसे ससारमलका नाश हो उस भक्ति, उस धर्म और उस सदाचारका तू सेवन कर।" (पुष्पमाला–१५)

"दुनिया मतभेदके बन्धनसे तत्त्व नही पा सकी।" (पत्राक–२७)

"जहाँ तहाँसे रागद्वेषरहित होना ही मेरा धर्म है मैं किसी गच्छमें नही हूँ, परन्तु आत्मामें हूँ यह मत भूलियेगा।" (पत्राक–३७)

श्रीमद्जी ने प्रीतम, अखा, छोटम, कबीर, सुन्दरदास, सहजानन्द, मुक्तानन्द, नरसिंह मेहता आदि सन्तोकी वाणीको जहाँ-तहाँ आदर दिया है और उन्हें मार्गानुसारी जीव (तत्त्वप्राप्तिके योग्य आत्मा) कहा है। फिर भी अनुभवपूर्वक उन्होने जैनशासनकी उत्कृष्टताको स्वीकार किया है—

"श्रीमत् वीतराग भगवन्तोका निश्चितार्थ किया हुआ ऐसा अचिन्त्य चिन्तामणिस्वरूप, परम-हितकारी, परम अद्भुत, सर्व दुखका नि सशय आत्यन्तिक क्षय करनेवाला, परम अमृतस्वरूप ऐसा सर्वोत्कृष्ट शाश्वत धर्म जयवन्त वर्तो, त्रिकाल जयवन्त वर्तो। उस श्रीमत् अनन्तचतुष्टयस्थित भगवानका और उस जयवन्त धर्मका आश्रय सदैव कर्तव्य है।" (पत्राक–८४३)

परम वीतरागदशा

श्रीमद्जीकी परम विदेही दशा थी। वे लिखते है—

"एक पुराणपुरुष और पुराणपुरुषकी प्रेमसम्पत्ति सिवाय हमें कुछ रुचिकर नही लगता, हमें किसी पदार्थमें रुचिमात्र रही नही है हम देहधारी है या नही—यह याद करते है तब मुश्केलीसे जान पाते है।" (पत्राक–२५५)

"देह होते हुए भी मनुष्य पूर्ण वीतराग हो सकता है ऐसा हमारा निश्चल अनुभव है। क्योंकि हम भी अवश्य उसी स्थितिको पानेवाले है, ऐसा हमारा आत्मा अखण्डतासे कहता है और ऐसा ही है, जरूर ऐसा ही है।" (पत्राक–३३४)

"मान लें कि चरमशरीरीपन इस कालमें नही है, तथापि अशरीरी भावसे आत्मस्थिति है तो वह भावनयसे चरमशरीरीपन नही, अपितु सिद्धत्व है, और यह अशरीरीभाव इस कालमें नही है ऐसा यहाँ कहें तो इस कालमें हम खुद नही है, ऐसा कहने तुल्य है।" (पत्राक–४११)

अहमदाबादमें आगाखानके बँगलेपर श्रीमद्‌जीने श्री लल्लुजी तथा श्री देवकरणजी मुनिको बुलाकर अन्तिम सूचना देते हुए कहा था—"हमारेमें और वीतरागमें भेद न मानियेगा।"

एकान्तचर्या, परमनिवृत्तिरूप कामना

मोहमयी (बम्बई) नगरीमें व्यापारिक काम करते हुए भी श्रीमद्‌जी ज्ञानाराधना तो करते ही रहते थे और पत्रो द्वारा मुमुक्षुओंकी शकाओका समाधान करते रहते थे, फिर भी बीच-बीचमें पेढीसे विशेष अवकाश लेकर वे एकान्त स्थान, जगल या पर्वतोंमें पहुँच जाते थे। मुख्यरूपसे वे खभात, वडवा, काविठा, उत्तरसडा, नडियाद, वसो, रालज और ईडरमें रहे थे। वे किसी भी स्थान पर बहुत गुप्तरूपसे जाते थे, फिर भी उनकी सुगन्धी छिप नही पाती थी। अनेक जिज्ञासु-भ्रमर उनके सत्समागमका लाभ पानेके लिए पीछे-पीछे कही भी पहुँच ही जाते थे। ऐसे प्रसगो पर हुए बोधका यत्किंचित् सग्रह 'श्रीमद् राजचन्द्र' ग्रन्थमें 'उपदेशछाया', 'उपदेशनोध' और 'व्याख्यानसार' के नामसे प्रकाशित हुआ है।

यद्यपि श्रीमद्‌जी गृहवास-व्यापारादिमें रहते हुए भी विदेहीवत् थे फिर भी उनका अन्तरङ्ग सर्वसगपरित्याग कर निर्ग्रन्थदशाके लिए छटपटा रहा था। एक पत्रमें वे लिखते हैं—"भरतजीको हिरनके सगसे जन्मकी वृद्धि हुई थी और इस कारणसे जडभरतके भवमें असग रहे थे। ऐसे कारणोसे मुझे भी असगता बहुत ही याद आती है, और कितनी ही बार ता ऐसा हो जाता है कि उस असगताके बिना परम दु ख होता है। यम अन्तकालमें प्राणीको दु खदायक नही लगता होगा, परन्तु हमें सग दु खदायक लगता है।" (पत्राक २१७)

फिर हाथनोधमें वे लिखते हैं—"सर्वसग महास्रवरूप श्री तीर्थंकरने कहा है सो सत्य है। ऐसी मिश्रगुणस्थानक जैसी स्थिति कहाँ तक रखनी ? जो बात चित्तमें नही सो करनी, और जो चित्तमें है उसमें उदास रहना ऐसा व्यवहार किस प्रकारसे हो सकता है ? वैश्यवेषमें और निर्ग्रन्थभावसे रहते हुए कोटि-कोटि विचार हुआ करते है।" (हाथनोध १–३८) "आकिंचन्यतासे विचरते हुए एकान्त मौनसे जिनसदृश ध्यानसे तन्मयात्मस्वरूप ऐसा कब होऊँगा ?" (हाथनोंध १–८७)

सवत् १९५६ में अहमदाबादमें श्रीमद्‌जीने श्री देवकरणजी मुनिसे कहा था—"हमने सभामें स्त्री और लक्ष्मी दोनोका त्याग किया है, और सर्वसगपरित्यागकी आज्ञा माताजी देंगी ऐसा लगता है।" और तदनुसार उन्होंने सर्वसगपरित्यागरूप दीक्षा धारण करनेकी अपनी माताजीसे अनुज्ञा भी ले ली थी। परन्तु उनका शारीरिक स्वास्थ्य दिन-पर-दिन बिगडता गया। ऐसे ही अवसर पर किसीने उनसे पूछा—"आपका शरीर कृश क्यो होता जाता है ?" श्रीमद्‌जीने उत्तर दिया—"हमारे दो बगीचे हैं, शरीर और आत्मा। हमारा पानी आत्मारूपी बगीचेमें जाता है, इससे शरीररूपी बगीचा सूख रहा है।" अनेक उपचार करने पर भी स्वास्थ्य ठीक नही हुआ। अन्तिम दिनोंमें एक पत्रमें लिखते हैं—"अत्यन्त त्वरासे प्रवास पूरा करना था, वहाँ बीचमें मेहराका मरुस्थल आ गया। सिर पर बहुत बोझ था उसे आत्मवीर्यसे जिस प्रकार अल्पकालमें सहन कर लिया जाय उस प्रकार प्रयत्न करते हुए, पैरोंने निकाचित उदयरूप थकान ग्रहण की। जो स्वरूप है वह अन्यथा नही होता यही अद्भुत आश्चर्य है। अव्याबाध स्थिरता है।" (पत्राक ९५१)

अन्त समय

स्थिति और भी गिरती गई। शरीरका वजन १३२ पौंडसे घटकर मात्र ४३ पौंड रह गया। शायद उनका अधिक जीवन कालको पसन्द नही था। देहत्यागके पहले दिन शामको अपने छोटे भाई मनसुखलाल

आदिसे कहा—"तुम निश्चिन्त रहना। यह आत्मा शाश्वत है। अवश्य विशेष उत्तम गतिको प्राप्त होनेवाला है। तुम शान्ति और समाधिपूर्वक रहना। जो रत्नमय ज्ञानवाणी इस देहके द्वारा कही जा सकनेवाली थी उसे कहनेका समय नही है। तुम पुरुषार्थ करना।" रात्रिको ढाई बजे वे फिर बोले—"निश्चिन्त रहना भाईका समाधिमरण है।" अवसानके दिन प्रात पौने नौ बजे कहा—'मनसुख, दुखी न होना। मैं अपने आत्मस्वरूपमें लीन होता हूँ।" फिर वे नही बोले। इस प्रकार पांच घटे तक समाधिमें रहकर सवत् १९५७ की चैत्र वदी ५ (गुजराती) मगलवारको दोपहरके दो बजे राजकोटमें इस नश्वर शरीरका त्याग करके उत्तम गतिको प्राप्त हुए। भारतभूमि एक अनुपम तत्त्वज्ञानी सन्तको खो बैठी। उनके देहावसानके समाचारसे मुमुक्षुओमें अत्यन्त शोकके बादल छा गये। जिन-जिन पुरुषोको जितने प्रमाणमें उन महात्माकी पहचान हुई थी उतने प्रमाणमें उनका वियोग उन्हें अनुभूत हुआ था।

उनकी स्मृतिमें शास्त्रमालाकी स्थापना

वि० स० १९५६ में भादो मासमें परम सत्श्रुतके प्रचार हेतु बम्बईमें श्रीमद्जीने परमश्रुतप्रभावकमण्डलकी स्थापना की थी। श्रीमद्जीके देहोत्सर्गके बाद उनकी स्मृतिस्वरूप 'श्री रायचन्द्रजैनग्रन्थमाला' की स्थापना की गई जिसके अन्तर्गत दोनो सम्प्रदायोके अनेक सद्ग्रन्थोका प्रकाशन हुआ है जो तत्त्वविचारकोके लिए इस दुषमकालको वितानेमें परम उपयोगी और अनन्य आधाररूप है। महात्मा गाधीजी इस सस्थाके ट्रस्टी और श्री रेवाशकर जगजीवनदास मुख्य कार्यकर्त्ता थे। श्री रेवाशकरके देहोत्सर्ग बाद सस्थामें कुछ शिथिलता आ गई परन्तु अब उस सस्थाका काम श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम अगासके ट्रस्टियोने सम्भाल लिया है और सुचारुरूपसे पूर्वानुसार सभी कार्य चल रहा है।

श्रीमद्जीके स्मारक

श्रीमद्जीके अनन्य भक्त आत्मनिष्ठ श्री लघुराजस्वामी (श्री लल्लुजी मुनि) की प्रेरणासे श्रीमद्जीके स्मारकके रूपमें और भक्तिधामके रूपमें वि० स० १९७६ की कार्तिकी पूर्णिमाको अगास स्टेशनके पास 'श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम' की स्थापना हुई थी। श्री लघुराज स्वामीके चौदह चातुर्मासोसे पावन हुआ यह आश्रम आज बढते-बढते गोकुल-सा गाँव बन गया है। श्री स्वामीजी द्वारा योजित सत्सगभक्तिका क्रम आज भी यहाँ पर उनकी आज्ञानुसार चल रहा है। धार्मिक जीवनका परिचय करानेवाला यह उत्तम तीर्थ बन गया है। सक्षेपमें यह तपोवनका नमूना है। श्रीमद्जीके तत्त्वज्ञानपूर्ण साहित्यका भी मुख्यत यहींसे प्रकाशन होता है। इस प्रकार यह श्रीमद्जीका मुख्य जीवत स्मारक है।

इसके अतिरिक्त वर्तमानमें निम्नलिखित स्थानोंपर श्रीमद् राजचन्द्र मदिर आदि सस्थाएँ स्थापित हैं जहाँ पर मुमुक्षु-बन्धु मिलकर आत्म-कल्याणार्थ वीतराग-तत्त्वज्ञानका लाभ उठाते है—ववाणिया, राजकोट, मोरबी, वडवा, खभात, काविठा, सीमरडा, वडाली, भादरण, नार, सुणाव, नरोडा, सडोदरा, धामण, अहमदाबाद, ईडर, सुरेन्द्रनगर, वसो, वटामण, उत्तरसडा, बोरसद, बम्बई (घाटकोपर एव चौपाटी), देवलाली, बेंगलोर, इन्दोर, आहोर (राजस्थान), मोम्बासा (आफ्रिका) इत्यादि।

अन्तिम प्रशस्ति

आज उनका पार्थिव देह हमारे बीच नही है मगर उनका अक्षरदेह तो सदाके लिए अमर है। उनके मूल पत्रो तथा लेखोका सग्रह गुर्जरभाषामें 'श्रीमद् राजचन्द्र' ग्रन्थमें प्रकाशित हो चुका है (जिसका हिन्दी अनुवाद भी प्रगट हो चुका है) वही मुमुक्षुओके लिए मार्गदर्शक और अवलम्बनरूप है। एक-एक पत्रमें कोई

अहमदावादमें आगाखानके बँगलेपर श्रीमद्जीने श्री लल्लुजी तथा श्री देवकरणजी मुनिको बुलाकर अन्तिम सूचना देते हुए कहा था—'हमारेमें और वीतरागमें भेद न मानियेगा।'

एकान्तचर्या, परमनिवृत्तिरूप कामना

मोहमयी (बम्बई) नगरीमें व्यापारिक काम करते हुए भी श्रीमद्जी ज्ञानाराधना तो करते ही रहते थे और पत्रो द्वारा मुमुक्षुओकी शकाओका समाधान करते रहते थे, फिर भी बीच-बीचमें पेढीसे विशेष अवकाश लेकर वे एकान्त स्थान, जगल या पर्वतोमें पहुँच जाते थे। मुख्यरूपसे वे खभात, वडवा, काविठा, उत्तरसडा, नडियाद, वसो, रालज और ईडरमें रहे थे। वे किसी भी स्थान पर बहुत गुप्तरूपसे जाते थे, फिर भी उनकी सुगन्धी छिप नही पाती थी। अनेक जिज्ञासु-भ्रमर उनके सत्समागमका लाभ पानेके लिए पीछे-पीछे कही भी पहुँच ही जाते थे। ऐसे प्रसगो पर हुए बोधका यत्किंचित् सग्रह 'श्रीमद् राजचन्द्र' ग्रन्थमें 'उपदेशछाया', 'उपदेशनोध' और 'व्याख्यानसार' के नामसे प्रकाशित हुआ है।

यद्यपि श्रीमद्जी गृहवास-व्यापारादिमें रहते हुए भी विदेहीवत् थे फिर भी उनका अन्तरङ्ग सर्वसगपरित्याग कर निर्ग्रन्थदशाके लिए छटपटा रहा था। एक पत्रमें वे लिखते हैं—"भरतजीको हिरनके सगसे जन्मकी वृद्धि हुई थी और इस कारणसे जडभरतके भवमें असग रहे थे। ऐसे कारणोसे मुझे भी असगता बहुत ही याद आती है, और कितनी ही बार तो ऐसा हो जाता है कि उस असगताके विना परम दुःख होता है। यम अन्तकालमें प्राणीको दुःखदायक नही लगता होगा, परन्तु हमें सग दुःखदायक लगता है।" (पत्राक २१७)

फिर हाथनोधमें वे लिखते है—"सर्वसग महास्रवरूप श्री तीर्थंकरने कहा है सो सत्य है। ऐसी मिश्रगुणस्थानक जैसी स्थिति कहाँ तक रखनी ? जो वात चित्तमें नहीं सो करनी, और जो चित्तमें है उसमें उदास रहना ऐसा व्यवहार किस प्रकारसे हो सकता है ? वैश्यवेषमें और निर्ग्रन्थभावसे रहते हुए कोटि-कोटि विचार हुआ करते हैं।" (हाथनोध १–३८) "आकिंचन्यतासे विचरते हुए एकान्त मौनसे जिनसदृश ध्यानसे तन्मयात्मस्वरूप ऐसा कब होऊँगा ?" (हाथनोंध १–८७)

सवत् १९५६ में अहमदाबादमें श्रीमद्जीने श्री देवकरणजी मुनिसे कहा था—"हमने सभामें स्त्री और लक्ष्मी दोनोका त्याग किया है, और सर्वसगपरित्यागकी आज्ञा माताजी देगी ऐसा लगता है।" और तदनुसार उन्होने सर्वसगपरित्यागरूप दीक्षा धारण करनेकी अपनी माताजीसे अनुज्ञा भी ले ली थी। परन्तु उनका शारीरिक स्वास्थ्य दिन-पर-दिन बिगडता गया। ऐसे ही अवसर पर किसीने उनसे पूछा—"आपका शरीर कृश क्यो होता जाता है ?" श्रीमद्जीने उत्तर दिया—"हमारे दो बगीचे हैं, शरीर और आत्मा। हमारा पानी आत्मारूपी बगीचेमें जाता है, इससे शरीररूपी बगीचा सूख रहा है।" अनेक उपचार करने पर भी स्वास्थ्य ठीक नही हुआ। अन्तिम दिनोंमें एक पत्रमें लिखते है—"अत्यन्त त्वरासे प्रवास पूरा करना था, वहाँ बीचमें सेहराका मरुस्थल आ गया। सिर पर बहुत बोझ था उसे आत्मवीर्यसे जिस प्रकार अल्पकालमें सहन कर लिया जाय उस प्रकार प्रयत्न करते हुए, पैरोने निकाचित उदयरूप थकान ग्रहण की। जो स्वरूप है वह अन्यथा नही होता यही अद्भुत आश्चर्य है। अव्याबाध स्थिरता है।" (पत्राक ९५१)

अन्त समय

स्थिति और भी गिरती गई। शरीरका वजन १३२ पौंडसे घटकर मात्र ४३ पौंड रह गया। शायद उनका अधिक जीवन कालको पसन्द नही था। देहत्यागके पहले दिन शामको अपने छोटे भाई मनसुखलाल

आदिसे कहा—"तुम निश्चिन्त रहना। यह आत्मा शाश्वत है। अवश्य विशेष उत्तम गतिको प्राप्त होनेवाला है। तुम शान्ति और समाधिपूर्वक रहना। जो रत्नमय ज्ञानवाणी इस देहके द्वारा कही जा सकनेवाली थी उसे कहनेका समय नही है। तुम पुरुषार्थ करना।" रात्रिको ढाई बजे वे फिर बोले—"निश्चिन्त रहना भाईका समाधिमरण है।" अवसानके दिन प्रात पौने नौ बजे कहा—'मनसुख, दु खी न होना। मैं अपने आत्मस्वरूपमें लीन होता हूँ।" फिर वे नही बोले। इस प्रकार पांच घटे तक समाधिमें रहकर सवत् १९५७ की चैत्र वदी ५ (गुजराती) मगलवारको दोपहरके दो बजे राजकोटमें इस नश्वर शरीरका त्याग करके उत्तम गतिको प्राप्त हुए। भारतभूमि एक अनुपम तत्त्वज्ञानी सन्तको खो बैठी। उनके देहावसानके समाचारसे मुमुक्षुओंमें अत्यन्त शोकके बादल छा गये। जिन-जिन पुरुषोको जितने प्रमाणमें उन महात्माकी पहचान हुई थी उतने प्रमाणमें उनका वियोग उन्हें अनुभूत हुआ था।

उनकी स्मृतिमें शास्त्रमालाकी स्थापना

वि० स० १९५६ में भादो मासमें परम सत्श्रुतके प्रचार हेतु बम्बईमें श्रीमद्जीने परमश्रुतप्रभावकमण्डलकी स्थापना की थी। श्रीमद्जीके देहोत्सर्गके बाद उनकी स्मृतिस्वरूप 'श्री रायचन्द्रजैनग्रन्थमाला' की स्थापना की गई जिसके अन्तर्गत दोनो सम्प्रदायोके अनेक सद्ग्रन्थोका प्रकाशन हुआ है जो तत्त्वविचारकोके लिए इस दुषमकालको बितानेमें परम उपयोगी और अनन्य आधाररूप है। महात्मा गाधीजी इस सस्थाके ट्रस्टी और श्री रेवाशकर जगजीवनदास मुख्य कार्यकर्त्ता थे। श्री रेवाशकरके देहोत्सर्ग बाद सस्थामें कुछ शिथिलता आ गई परन्तु अब उस सस्थाका काम श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम अगासके ट्रस्टियोने सम्भाल लिया है और सुचारुरूपसे पूर्वानुसार सभी कार्य चल रहा है।

श्रीमद्जीके स्मारक

श्रीमद्जीके अनन्य भक्त आत्मनिष्ठ श्री लघुराजस्वामी (श्री लल्लुजी मुनि) की प्रेरणासे श्रीमद्जीके स्मारकके रूपमें और भक्तिधामके रूपमें वि० स० १९७६ की कार्तिकी पूर्णिमाको अगास स्टेशनके पास 'श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम' की स्थापना हुई थी। श्री लघुराज स्वामीके चौदह चातुर्मासोसे पावन हुआ यह आश्रम आज बढते-बढते गोकुल-सा गाँव बन गया है। श्री स्वामीजी द्वारा योजित सत्सगभक्तिका क्रम आज भी यहाँ पर उनकी आज्ञानुसार चल रहा है। धार्मिक जीवनका परिचय करानेवाला यह उत्तम तीर्थ बन गया है। सक्षेपमें यह तपोवनका नमूना है। श्रीमद्जीके तत्त्वज्ञानपूर्ण साहित्यका भी मुख्यत यहीसे प्रकाशन होता है। इस प्रकार यह श्रीमद्जीका मुख्य जीवत स्मारक है।

इसके अतिरिक्त वर्तमानमें निम्नलिखित स्थानोपर श्रीमद् राजचन्द्र मदिर आदि सस्थाएँ स्थापित है जहाँ पर मुमुक्षु-बन्धु मिलकर आत्म-कल्याणार्थ वीतराग-तत्त्वज्ञानका लाभ उठाते हैं—ववाणिया, राजकोट, मोरबी, वडवा, खभात, काविठा, सीमरडा, वडाली, भादरण, नार, सुणाव, नरोडा, सडोदरा, धामण, अहमदाबाद, ईडर, सुरेन्द्रनगर, वसो, वटामण, उत्तरसडा, बोरसद, बम्बई (घाटकोपर एव चौपाटी), देवलाली, बेंगलोर, इन्दोर, आहोर (राजस्थान), मोम्बासा (आफ्रिका) इत्यादि।

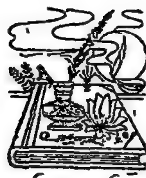
अन्तिम प्रशस्ति

आज उनका पार्थिव देह हमारे बीच नही है मगर उनका अक्षरदेह तो सदाके लिए अमर है। उनके मूल पत्रो तथा लेखोका सग्रह गुर्जरभाषामें 'श्रीमद् राजचन्द्र' ग्रन्थमें प्रकाशित हो चुका है (जिसका हिन्दी अनुवाद भी प्रगट हो चुका है) वही मुमुक्षुओंके लिए मार्गदर्शक और अवलम्बनरूप है। एक-एक पत्रमें कोई

अपूर्व रहस्य भरा हुआ है। उसका मर्म समझनेके लिये सतसमागमकी विशेष आवश्यकता है। इन पत्रोंमें श्रीमद्जीका पारमार्थिक जीवन जहाँ-तहाँ दृष्टिगोचर होता है। इसके अलावा उनके जीवनके अनेक प्रेरक प्रसंग जानने योग्य हैं, जिसका विशद वर्णन श्रीमद् राजचंद्र आश्रम प्रकाशित 'श्रीमद् राजचंद्र जीवनकला' में किया हुआ है (जिसका हिंदी अनुवाद भी प्रकट हो चुका है)। यहाँ पर तो स्थानाभावसे उस महान् विभूतिके जीवनका विहगावलोकनमात्र किया गया है।

श्रीमद् लघुराजस्वामी (श्री प्रभुश्री जी) 'श्री सद्गुरुप्रसाद' ग्रंथकी प्रस्तावनामें श्रीमद्के प्रति अपना हृदयोद्गार इन शब्दोंमें प्रकट करते हैं—"अपरमार्थमें परमार्थके दृढ आग्रहरूप अनेक सूक्ष्म भूलभूलैयाँके प्रसंग दिखाकर, इस दासके दोष दूर करनेमें इन आप्त पुरुषका परम सत्संग और उत्तम बोध प्रबल उपकारक बने हैं। संजीवनी औषध समान मृतको जीवित करें, ऐसे उनके प्रबल पुरुषार्थ जागृत करनेवाले वचनोंका माहात्म्य विशेष विशेष भास्यमान होनेके साथ ठेठ मोक्षमें ले जाय ऐसी सम्यक् समझ (दर्शन) उस पुरुष और उसके बोधकी प्रतीतिसे प्राप्त होती है, वे इस दुषम कलिकालमें आश्चर्यकारी अवलम्बन हैं। परम माहात्म्यवान सद्गुरु श्रीमद् राजचंद्रदेवके वचनोंमें तल्लीनता, श्रद्धा जिसे प्राप्त हुई है या होगी उसका महद् भाग्य है। वह भव्य जीव अल्पकालमें मोक्ष पाने योग्य है।"

ऐसे महात्माको हमारे अगणित वन्दन हो!



प्राक्कथन

लगभग ७ वर्ष पूर्व मैंने श्री प० बाबूलालजी फागुल्लके माध्यमसे श्री प० बाबूलालजी गोयलीय अगासके विशेष अनुरोधवश श्री लब्धिसारके सम्पादनका कार्य हाथमें लिया था। मैं चाहता था कि इस कार्यको यथासम्भव शीघ्र सम्पन्न करके श्री जयधवलाके अवशिष्ट रहे कार्यको सम्पन्न करनेमें लगूँ, ताकि दूसरे कार्योंकी ओर भी ध्यान दे सकूँ। किन्तु जब इच्छा और होनहारमें सुमेल नही होता तब चाहकर भी अप्रशस्त कार्यको तो छोडिये प्रशस्त कार्य भी सम्पन्न नही हो सकता। होनहार वस्तुगत योग्यता है। प्रयत्न और बाह्य योग उसीका अनुसरण करते हैं यह सहज सिद्ध नियम है। प्रधानतासे किसी एककी अपेक्षा कथन किया जाय यह दूसरी बात है।

मुद्रित ग्रन्थकी दृष्टिसे १४ फार्म तकका काम सम्पन्न करते-करते मुझे स्थायीरूपसे चारपाईकी शरण लेनी पडी है। उससे पूरी तरह छुटकारा अभीतक नही मिल सका है। फिर भी मेरा साहित्यिक-जीवन स्थायी होनेसे ऐसी अवस्थामें भी यथासम्भव मैं २-३ वर्षसे इस कार्यमें पुन योगदान करने लगा हूँ। उसीका परिणाम है कि अब शीघ्र ही लब्धिसार परमागम स्वाध्यायके लिये सुलभ हो जायगा।

मुझे सूचित किया गया था कि सस्कृत वृत्ति और सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका टीका सहित ही इसका सम्पादन होना है। आप जहाँ भी आवश्यक समझें मूल विषयको स्पष्ट करते जायें और श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती ने किस मूल सिद्धान्त ग्रन्थके आधारसे इसकी सकलना की है उसे भी अपनी टिप्पणियो द्वारा स्पष्ट करते जाये। यह मेरी उक्त ग्रन्थके सम्पादनकी रूपरेखा है। अत मैंने उक्त ग्रन्थके सम्पादनमें इस मर्यादाका पूरा ध्यान रखकर ही इसका सम्पादन किया है।

ऐसा नियम है कि प्रकाशित या अप्रकाशित जिस किसी ग्रन्थका सम्पादन किया जाय, उसका सम्पादन अनेक हस्तलिखित प्रतियोके आधारसे करना ही उपयुक्त होता है। उसके बिना यह विश्वासपूर्वक नही कहा जा सकता कि इसके सम्पादनमें यथासम्भव कोई त्रुटि नही रहने पाई है। किन्तु इसके लिये मैं प्रयत्न करनेपर भी अन्य हस्तलिखित प्रतियाँ उपलब्ध नही कर सका। अत जैन सिद्धान्त प्रकाशिनी सस्था कलकत्तामे प्रकाशित प्रतिके आधारसे ही इसका सम्पादन हुआ है। फिर भी कही-कही मूल गाथाके पाठमें कुछ परिवर्तन किया गया है। कुछ पाठ ये हैं—

गाथा	मूल पाठ	मुद्रित पाठ	सं० वृ०	स० च०
६७	उदरिय	ओदरिय	×	×
,,	उदीर्य	अवतीर्य	अवतीर्य	उतरि
६९	उक्कट्टिद-	ओकट्टिद	×	×
,,	उत्कर्पित-	अपकर्षित-	अपकर्षण भागहार	अपकर्षण भागहार
७२	उक्कट्टिदम्हि	अपकर्षिते	अपकर्षिते	अपकर्षण

२८४ उक्कट्ठिद-	ओकड्डिद-	अपकर्पिते	अपकर्पण
,, अपकर्षित-	अपकर्षित-	अपकर्पिते	अपकर्पण
४०१ उव्वट्टणा	ओवट्टणा	×	×
अतिस्थापना	अतिस्थापना	×	अतिस्थापन
सूचना-यहाँ पाठ अइट्ठवणा होना चाहिये ।			
४०३ उक्कट्ठदि	ओक्कडदि	×	×
,, उत्कृष्यन्ते	अपकृष्यन्ते	×	अपकर्पण
४३७ आवेत्त-	आजुत्त-	×	×
,, आवृत्त-	आयुक्त	(त्त)	आवृत्त
४६२ ओवट्टणिउट्टण	ओवट्टणुवट्टण	×	×
,, अपवर्तनोद्वर्तन	अपवर्तनोद्वर्तन	×	अपवर्तनोद्वर्तन
उक्कट्टिद	ओक्कड्डिद	×	×
अपकर्षित	अपकर्पित	×	अपकर्षण किया

(२) दर्शनमोहक्षपणा अधिकारके अन्तमें टिप्पणीमें कहा गया है कि गाथा १५६ 'सम्मे असख-वस्सिय' और गाथा १६७ 'उवणेउ मगल वो' इन दोनो गाथाओकी सस्कृत वृत्ति और सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका टीकाका अर्थ नही किया गया है। किन्तु गाथा १५६ की सस्कृत वृत्ति भी है और सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका टीकामें अर्थ भी किया गया है। मात्र १६७ गाथा पर वृत्ति और टीका दोनो नही है, अत हिन्दीमें इस गाथाके अर्थकी पूर्ति कर दी गई है।

(३) गाथा ४७५ के उत्तरार्धमें मध्यका कुछ भाग त्रुटित है। इस बातको ध्यानमें रखकर पण्डित श्री टोडरमलजीने उत्तरार्धका अर्थ न लिखकर यह टिप्पणी की है—'इस गाथा विषै लिखनेवालेने अक्षर केते इक न लिखे तातै आधा गाथाका अर्थ न जानि इहाँ नाही लिख्या है।' अत हमने जयधवलासे प्रकरण देखकर उक्त अशकी पूर्ति करके 'विशेष' में पूरे गाथाके अर्थका स्पष्टीकरण कर दिया है। पूर्वकी प्रतिमें उक्त गाथा इस प्रकार है—

विदियादिसु समयेसु वि पढम व अपुव्वफड्ढयाण विही।
णवरि य सखगुणूण पडिसमय।

यहाँ त्रुटित पाठ 'णिवत्तयदि' होना चाहिये ऐसा प्रकरणके अनुसार जयधवलासे समझ कर उक्त पाठकी पूर्ति कर दी है और जयधवलाके पूरे उद्धरणको टिप्पणमें दे दिया है।

अपनी प्रस्तावनामें मैंने आवश्यक विषयोंपर ही प्रकाश डाला है। इतिहास लिखना मेरा प्रयोजन नही था, इसलिये समयादि सम्बन्धी कुछ विषयोंको मैंने गौण कर दिया है। इतिहास अनुसन्धानका विषय है और अभी तक इसपर जो कुछ भी लिखा गया उसमेंसे कुछ मुख्य विषय अभी भी विवादके विषय बने हुए है। फिर भी जिन तथ्योको आवश्यक समझा उन्हींपर मैंने विशेष प्रकाश डाला है। अस्तु,

इस ग्रन्थके सम्पादनमें मेरे सामने अनेक कठिनाइयाँ रही हैं, फिर भी किसी प्रकार इसे सम्पन्न करनेमें मै सफल हुआ इसकी मुझे प्रसन्नता है। यह श्री प० बाबूलालजी गोयलीय अगास और श्री बाबूलालजी फागुल्लकी निष्ठाका परिणाम है कि यह कार्य सम्पन्न हो गया। प्रूफ जैसे कष्टसाध्य कार्यको मुझे ही सम्पन्न करना पडा है, इसलिये अशुद्धियाँ रहना सम्भव है सो स्वाध्यायप्रेमी बन्धु उन्हें

सुधारकर ही ग्रन्थका स्वाध्याय करें। मुद्रण कार्य श्री वाबूलालजी फागुल्लकी देख-रेखमे महावीर प्रेसमें हुआ है। अत उक्त दोनो बन्धुओका मैं आभारी हूँ।

बी ७/२४९ निर्वाण भवन
रवीन्द्रपुरी, वाराणसी–५
७–७–७९

फूलचन्द्र शास्त्री

प्रस्तावना

विषय परिचय

जैसा कि हम पहले ही लिख आये हैं, लब्धिसार ग्रन्थमें करणानुयोगके अनुसार सम्यग्दर्शन और सम्यक्चारित्रकी उत्पत्तिका कथन करनेके प्रसगसे सक्षेपमें उसके फलका भी निर्देश किया गया है। उसमें भी सर्वप्रथम सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति किस विधिसे होती है यह दिखलाते हुए निमित्त भेदसे उसके तीन भेद किये गये है। यथा—औपशमिक सम्यग्दर्शन, क्षायोपशमिक सम्यग्दर्शन और क्षायिक सम्यग्दर्शन। तात्पर्य यह है कि दर्शनमोहनीयके अन्तरकरण उपशम और अनन्तानुवन्धी चतुष्कके अनुदयरूप उपशमपूर्वक मिथ्यात्वरूप पर्यायका अभाव होकर जो आत्मविशुद्धि प्राप्त होती है वह औपशमिक सम्यग्दर्शन है। उक्त सात प्रकृतियोमेंसे छह प्रकृतियोके क्षयोपशम और सम्यक्प्रकृतिके उदयपूर्वक जो आत्मविशुद्धि प्राप्त होती है वह क्षायोपशमिक सम्यग्दर्शन है तथा उक्त सातो प्रकृतियोके क्षयपूर्वक जो आत्मविशुद्धि प्राप्त होती है वह क्षायिक सम्यग्दर्शन है। करणानुयोगके अनुसार यह इन तीनो सम्यग्दर्शनोकी उत्पत्तिका प्रकार है। इन तीनो सम्यग्दर्शनोमें आत्मविशुद्धि मुख्य है। जाति और स्वादकी अपेक्षा उनमें भेद नही है। भेद केवल कर्मोके सद्भाव और असद्भावको मुख्य कर किया गया है।

प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन

प्रथम प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन है। यह मुख्य और भूमिस्वरूप है। मुख्य इसलिए है, क्योकि सर्व प्रथम मोक्षमार्गका दरवाजा इस द्वारा ही उद्घाटित होता है और भूमिस्वरूप इसलिए है, क्योंकि मोक्षमार्गपर आरूढ होनेके लिए सर्वप्रथम यह जमीनका काम देता है। इसकी उत्पत्ति पांच लब्धियोके होनेपर ही होती है। वे ये है—क्षयोपशमलब्धि, विशुद्धिलब्धि, देशनालब्धि, प्रायोग्यलब्धि और करणलब्धि। इनमेंसे प्रारम्भकी चार लब्धियाँ यथासम्भव भव्यो और अभव्यो दोनोके पायी जाती है। इतना अवश्य है कि जो मिथ्यादृष्टि भव्य जीव औपशमिक सम्यग्दर्शन प्राप्त करनेके सन्मुख होते है वे इनके होनेपर ही करणलब्धिके सन्मुख होनेके पात्र होते है।

ऐसा नियम है कि दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयका उपशम और क्षय करणलब्धिके प्राप्त होनेपर ही होता है, इसलिये करणलब्धिके प्राप्त होनेके पूर्व जो क्षयोपशम आदि चार लब्धियाँ होती है उनमेंसे अन्तिम प्रायोग्यलब्धिके होनेपर जो कार्य होते है उनका विचार करते हुए बतलाया है कि आयु कर्मके बिना शेष कर्मोका बन्ध, स्थिति सत्त्व, अनुभागसत्त्व और प्रदेशसत्त्व न तो उत्कृष्ट होना चाहिये और न क्षपकश्रेणिके योग्य जघन्य ही होना चाहिये। वह एक तो उत्तरोत्तर विशुद्धिकी वृद्धि करता हुआ सातो कर्मोकी अन्त कोडाकोडीप्रमाण मध्यम स्थितिबन्ध करता है तथा चारो गतियोंमें स्थितिको घटाते हुए यथासम्भव प्रकृतिबन्धापसरण करता है जो सब मिलाकर ३४ होते है। आगे किस गतिमें कितनी प्रकृतियोंका बन्ध होता है इसका विचार कर किन प्रकृतियोका कैसा अनुभागबन्ध और प्रदेशबन्ध होता है इसका उल्लेख किया गया है।

उदयप्रकृतियोंका विचार करते हुए बतलाया गया है कि स्थितिकी अपेक्षा उदयप्राप्त एक स्थिति-निषेकका वेदक होता है, अनुभागकी अपेक्षा अप्रशस्त प्रकृतियोके द्विस्थानीय अनुभाग तथा प्रशस्त प्रकृतियोके

चतु स्थानीय अनुभागका वेदक होता है तथा प्रदेशोकी अपेक्षा अजघन्य-अनुत्कृष्ट प्रदेशोका वेदक होता है। इसके साथ ही वह उदयप्राप्त इन सबका उदीरक होता है।

सत्त्वका विचार करते हुए जिन प्रकृतियोका यथासम्भव सत्त्व सम्भव नही है उनका उल्लेख करनेके बाद जहाँ जितनी प्रकृतियोका सत्त्व होता है उनकी स्थिति, अनुभाग और प्रदेश अजघन्य-अनुत्कृष्ट ही होता है यह बतलाया गया है।

यह सब प्रायोग्यलब्धिका समग्र विचार है जो भव्यो और अभव्यो दोनोके सम्भव है। इस प्रकार हम देखते है कि क्षयोपशम आदि चार लब्धियां जैसे भव्योके सम्भव है वैसे ही अभव्योके भी हो सकती है। किन्तु जो भव्य जीव है वे ही इन लब्धियोके होनेपर यथासम्भव करणलब्धिको प्राप्त करते है। करण परिणामविशेषकी सज्ञा है। ऐसे परिणामोको जिनके होनेपर यह जीव नियमसे दर्शनमोहनीय और चारित्र-मोहनीयका यथासम्भव उपशम और क्षय करता है करणलब्धि कहते है। यद्यपि वेदक सम्यक्त्वकी प्राप्तिके समय भी किन्ही जीवोके अध प्रवृत्तकरण और अपूर्वकरणरूप करणलब्धि होती है पर उसकी यहाँ विवक्षा न कर करणलब्धिका उक्त लक्षण कहा गया है।

करणलब्धिके तीन भेद है—अध प्रवृत्तकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण। इनमेसे प्रत्येकका काल अन्तर्मुहूर्त है। उसमें भी अध प्रवृत्तकरणका काल सबसे अधिक है, उसका सख्यातवाँ भाग अपूर्वकरणका काल है और उसका भी सख्यातवाँ भाग अनिवृत्तिकरणका काल है। नीचेके समयवर्ती किसी जीवके परिणाम ऊपरके समयवर्ती अन्य किसी जीवके परिणामोंके सदृश हो सकते है, इसलिए इसकी अध प्रवृत्तकरण सज्ञा है। इसकी कही-कही यथाप्रवृत्तकरण सज्ञा भी पाई जाती है। जहाँ प्रत्येक समयमें जीवोके परिणाम भिन्न-भिन्न होते है उसकी अपूर्वकरण सज्ञा है और जहाँ एक समयवर्ती सब जीवोका परिणाम एक ही होता है उसकी अनिवृत्तिकरण सज्ञा है।

ये तीन करण है। इनमेंसे प्रथम करणमें गुणश्रेणिरचना, गुणसक्रमण, स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात ये चार कार्य नही होते। हाँ प्रत्येक, समयमें उत्तरोत्तर अनन्तगुणी विशुद्धि होनेसे अप्रशस्त कर्मोंके अनुभागमें अनन्तगुणी हानि, प्रशस्त कर्मोके अनुभागमें अनन्तगुणी वृद्धि होती रहती है। इसके साथ सख्यात हजार स्थितिबन्धापसरण भी होते है। एक स्थितिबन्धापसरणका प्रमाण पल्योपमके सख्यातवें भागप्रमाण और काल अन्तर्मुहूर्त है। इस प्रकार अध प्रवृत्तकरणके प्रथम समयमें जितना स्थिति-बन्ध होता है, उसके अन्तिम समयमें वह घटकर सख्यातगुणा हीन हो जाता है। यदि वही जीव प्रथम सम्यक्त्वके साथ देशसयम और सकलसयमको प्राप्त करता है तो उक्त स्थितिबन्ध असयतके जितना होता है उससे और भी सख्यातगुणा हीन हो जाता है।

परिणामोकी अपेक्षा विचार करने पर नाना जीवोंकी अपेक्षा इस करणके प्रत्येक समयमें वे परिणाम असख्यात लोकप्रमाण होते है जो उत्तरोत्तर एक-एक समयमें विशेष अधिक होते जाते है। परिणामोकी यह वृद्धि समानरूपसे होती है। यहाँ विशेषका प्रमाण लानेके लिए प्रतिभागका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त है। प्रकृतमें अध प्रवृत्तकरणका जितना काल होता है उसके सख्यातवें भागप्रमाण अनुकृष्टिकाल होता है। इसे निर्वर्गणा-काण्डक कहते है। एक निर्वर्गणाकाण्डकके जितने समय हो उतने प्रत्येक समयके परिणामोके खण्ड होते है जो प्रथम खण्डसे लेकर उत्तरोत्तर एक-एक चयप्रमाण अधिक होते है। यहाँ भी चयका प्रमाण लानेके लिए प्रतिभागका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त है। इस प्रकार प्रत्येक समयमें जितने खण्ड प्राप्त होते है उनमेंसे एक-एक खण्डमें भी असख्यात लोकप्रमाण परिणाम होते है जो षट्स्थान पतित वृद्धिसे युक्त होते है। प्रथम और

अन्तिम समयके प्रथम और अन्तिम खण्ड विसदृश होते हैं तथा शेष सब खण्ड यथासम्भव सदृश होते हैं। इस प्रकार प्रत्येक समयके परिणामोकी क्रमवार जो रचना बनती है उसके अनुसार द्विचरम समय तकके प्रथम खण्ड और अन्तिम समयके सब खण्डोकी विसदृश पक्ति बन जाती है। यहाँ विशुद्धिके तारतम्यका विचार ४८ सख्याक गाथामें किया गया है सो इसे सस्कृत और हिन्दी दोनो टीकाओसे जान लेना चाहिये।

दूसरे करणका नाम अपूर्वकरण है। यहाँ प्रत्येक समयके परिणाम अन्य-अन्य होते हैं, इसलिए इसकी अपूर्वकरणसज्ञा है। इस करणके भी प्रत्येक समयमें असख्यात लोकप्रमाण परिणाम होते हैं जो उत्तरोत्तर विशेष अधिक होते हैं। विशेषका प्रमाण लानेके लिए प्रतिभागका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त है। यहाँ विशुद्धिका प्रमाण उत्तरोत्तर अनन्तगुणा पाया जाता है जो पट्स्थानपतित वृद्धिको उल्लघन कर प्राप्त होती है। इस करणसे लेकर गुणश्रेणिरचना, गुणसक्रमण, स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात ये कार्य प्रारम्भ हो जाते हैं जो सम्यक्त्वमोहनीय और मिश्रमोहनीयके पूरण होनेके काल तक होते रहते हैं। स्थितिबन्धापसरण और स्थितिकाण्डकघातका काल समान है। तथा एक स्थितिकाण्डकघातके भीतर हजारो अनुभागकाण्डकघात होते हैं। गुणश्रेणिकी रचनाका आयाम अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे साधिक होता है। प्रकृतमें अपकर्षण और उत्कर्षणको ध्यानमें रखकर निक्षेप और अतिस्थापना आदिका विचार मूलमें विस्तारसे किया ही है। अधिक विस्तार होनेके कारण यहाँ उनपर विशेष प्रकाश नही डाल रहे हैं। यह गुणश्रेणिरचना आयुकर्मकी नही होती, शेष सभी कर्मोंकी होती है।

तीसरा अनिवृत्तिकरण है। इसके प्रत्येक समयमें एक ही परिणाम होता है, इसलिए इस करणका जितना काल है उतने इसके परिणाम जानने चाहिये। यहाँ स्थितिकाण्डकघात आदि सब कार्य नये होते हैं। इसका सख्यातवाँ भाग काल शेष रहनेपर दर्शनमोहनीयका अन्तरकरण प्रारम्भ होता है। प्रथम स्थिति और उपरितन स्थितिके मध्यकी अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थितिके निषेकोका उक्त स्थितियोंमें निक्षेपण करके अभाव करना अन्तरकरण कहलाता है। एक स्थितिकाण्डकघातमें जितना काल लगता है उतना ही अन्तरकरणका काल है। अन्तरका प्रमाण गुणश्रेणिशीर्षसे सख्यातगुणा है। अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न होनेके बाद द्वितीय स्थितिमें स्थित दर्शनमोहनीयका उपशम (उदयके अयोग्य) करता है। तदनन्तर प्रथम स्थितिके गलनेके बाद अन्तरके प्रथम समयमें यह जीव प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि हो जाता है और यहीसे मिथ्यात्वके द्रव्यको मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यग्प्रकृतिमिथ्यात्व इन तीन भागोमें विभक्त करता है। जब गुणसक्रमका काल पूरा हो जाता है तब से विध्यात सक्रमके द्वारा मिथ्यात्वके द्रव्यको मिश्र और सम्यक् प्रकृतिरूपसे परिणमाता है। यहाँ दर्शनमोहनीयके स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात नही होते, शेष कर्मोंके होते हैं इतना विशेष जानना चाहिये। दर्शनमोहनीयका उपशम करनेवाला जीव मरणको नही प्राप्त होता और सासादनगुणस्थानको भी नही प्राप्त होता। हाँ उपशम सम्यग्दृष्टि होनेके बाद उसके कालमें अधिकसे अधिक छह आवलि और कमसे कम एक समय शेष रहने पर वह सासादनगुणस्थानको प्राप्त हो सकता है।

यहाँ सस्कृत टीकामें बतलाया है कि उपशमनकालके भीतर अर्थात् उपशमन क्रिया करते समय इस जीवके अनन्तानुबन्धीका उदय न होनेसे वह सासादन-गुणस्थानको नही प्राप्त होता, किन्तु मिथ्यात्वगुणस्थानके अतिम समय तक अनन्तानुबन्धी चतुष्कमेंसे किसी एकका उदय बना रहता है, इसलिए यहाँ ऐसा समझना चाहिये कि दर्शनमोहनीयकी उपशमन क्रिया करते समय भी यहाँ अनन्तानुबन्धीका उदय रहते हुए भी वह सासादनगुणस्थानको नही प्राप्त होता, क्योंकि उसके मिथ्यात्वका उदय बना हुआ है। श्री जयधवला टीकामें गाथा ९९ में आये हुए 'णिरासाणो' पदका यही अर्थ किया है।

उपशमकरण क्रियाके साथ प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी प्राप्तिके समय उपयोग, योग और लेश्याका विचार करते हुए बतलाया है कि दर्शनमोहके उपशमका प्रारम्भ करनेवाला अध प्रवृत्तकरणके प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्तकाल तक स्थापक कहलाता है। उस समय इसके नियमसे ज्ञानोपयोग ही होता है, किन्तु इसके बाद मध्य अवस्थामें और समाप्त करनेके समय साकार या अनाकार कोई भी उपयोग हो सकता है। योगका विचार करते हुए मनोयोग, वचनयोग और काययोगमेंसे किसी एकको ग्रहण किया गया है। तथा लेश्याका विचार करते हुए लब्धिसार संस्कृत टीकामें तो इतना ही बतलाया है कि तिर्यंच और मनुष्य मन्दविशुद्धिवाला होता है तथापि पीतलेश्याके जघन्य अंशमें विद्यमान होकर ही प्रथमोपशमका प्रारम्भ करनेवाला होता है। इस प्रकार लब्धिसारकी संस्कृत टीकामें जहाँ यह नियम किया गया है कि तिर्यंच और मनुष्य प्रथमोपशम सम्यक्त्वका प्रारम्भ पीतलेश्याके जघन्य अंशमें ही करता है वहाँ जयधवलामें 'जहण्णए तेउलेस्साए' पदका यह स्पष्टीकरण किया गया है कि तिर्यंच और मनुष्य यदि अति मन्द विशुद्धिवाला हो तो भी उसके कमसे कम जघन्य पीतलेश्या ही होगी, इससे नीचेकी अशुभ लेश्या नही होगी। तात्पर्य यह है कि प्रथमोपशम सम्यक्त्वका प्रारम्भ करनेवाले तिर्यंच और मनुष्यके कृष्ण, नील और कापोत लेश्या नही होती।

जिस जीवने प्रथमोपशम सम्यक्त्वको प्राप्त किया है उसके दर्शनमोहनीयसम्बन्धी तीनो प्रकृतियाँ अन्तर्मुहूर्त कालतक सर्वोपशमरूप अवस्थाको प्राप्त रहती है अर्थात् प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश इन चारो प्रकारसे वे उपशान्त रहती है। हाँ अन्तर्मुहूर्त कालके बाद यदि मिथ्यात्व प्रकृतिकी उदीरणा होती है तो उक्त जीव मिथ्यादृष्टि हो जाता है और यदि सम्यक् प्रकृतिकी उदीरणा होती है तो उक्त जीव वेदक सम्यग्दृष्टि हो जाता है।

इस प्रकार प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी प्राप्ति कैसे होती है इसका विचार किया।

क्षायिक सम्यक्त्व

जो वेदकसम्यग्दृष्टि कर्मभूमिज मनुष्य तीर्थंकर केवली, सामान्य केवली और श्रुतकेवलीके पादमूलमें अवस्थित है वही दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रस्थापक होता है अर्थात् मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यको अन्तर्मुहूर्त कालतक सम्यक्त्व प्रकृतिमें संक्रमित करता है। तब उक्त जीवकी प्रस्थापक संज्ञा होती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। किन्तु दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका निष्ठापक यथासम्भव चारो गतियोका जीव होता है। विशेष इतना है कि दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाला उक्त जीव सर्वप्रथम त्रिकरणविधिसे अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी उदयावलिके बाहर स्थित स्थितिकी विसंयोजना करता है। जब यह जीव अनिवृत्तिकरणमें प्रवेश करता है तब अनन्तानुबन्धी चतुष्कके स्थितिसत्त्वकी अपेक्षा चार पर्व होते है। प्रारम्भमें लक्षपृथक्त्वसागरोपम प्रमाण स्थिति सत्त्व शेष रहता है। पुन क्रमसे घटकर एक सागरोपम प्रमाण स्थितिसत्त्व शेष रहता है। इसके बाद पुन घटकर दूरापकृष्टि संज्ञाप्रमाण स्थितिसत्त्व शेष रहता है। पुन अन्तमें उच्छिष्टावलिप्रमाण स्थितिसत्त्व शेष रहता है। यहाँ जब तक सागरोपमप्रमाण स्थितिसत्त्व नही प्राप्त होता तब तक स्थितिकाण्डकायाम पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण होता है। उसके बाद दूरापकृष्टिसंज्ञक स्थितिसत्त्वके प्राप्त होने तक स्थितिकाण्डकायाम पल्योपमके संख्यात बहुभागप्रमाण होता है। पुन इसके बाद उच्छिष्टावलिके प्राप्त होने तक काण्डकायाम पल्योपमके असंख्यात बहुभागप्रमाण होता है।

इस प्रकार क्रमसे अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसयोजना करनेके बाद यह जीव अन्तर्मुहूर्त काल तक विश्राम करके तदनन्तर त्रिकरण विधिसे दर्शनमोहनीयकी तीनो प्रकृतियोकी क्षपणा करता हुआ अनिवृत्तिकरणमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्व प्रकृतिका क्रमसे नाश करता हैं। इस विधिसे इनका नाश करते हुए दूरापकृष्टिसज्ञक स्थितिसत्त्वके शेप रहनेके बाद भी, जब हजारो स्थितिकाण्डकघात हो लेते हैं तब सम्यक्त्वमोहनीयके असख्यात समयप्रबद्धोकी उदीरणा करता है। यहांसे भागहार पल्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण होता है, असख्यात लोकप्रमाण नही। इस विधिसे दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करते हुए मिथ्यात्वकी उच्छिष्टावलिप्रमाण स्थिति शेष रहती है। पुन सम्यग्मिथ्यात्वके सख्यात हजार स्थितिकाण्डकोका घात होते समय अन्तिम स्थितिकाण्डकका पतन होने पर जब उच्छिष्टावलि प्रमाण स्थिति शेप रहती हैं उस समय सम्यक्त्वका स्थितिसत्त्व आठ वर्ष प्रमाण शेष रहता हैं। यहांसे लेकर अवस्थित गुणश्रेणिका नया क्रम चालू हो जाता है, स्थितिकाण्डकका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त आयामवाला होता हैं। तथा अनुभागका प्रत्येक समयमें अपवर्तन होने लगता हैं। इस विधिसे जब अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिका पतन होता हैं तब वहांसे लेकर इसकी कृतकृत्यवेदक सज्ञा हो जाती है।

इसका मरण भी हो सकता हैं। यदि प्रथम अन्तर्मुहूर्तमें मरण होता हैं तो वह मरकर नियमसे देव होता हैं। यदि दूसरे अन्तर्मुहूर्तमें मरण होता हैं तो नियमसे देव या मनुष्य कोई एक होता हैं। यदि तीसरे अन्तर्मुहूर्तमें मरण होता है तो देव, मनुष्य और तिर्यञ्चमेंसे कोई एक होता है और यदि चौथे अन्तर्मुहूर्तमें मरण होता है तो चारो गतियोंमेंसे किसी एक गतिमें जन्म लेता हैं। क्षायिक सम्यग्दर्शनका प्रारम्भ करनेवाला जीव जबतक कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि नही होता तब तक उसके जो लेश्या होती हैं वही रहती है। उसके अन्तर्मुहूर्त बाद यथासम्भव लेश्यापरिवर्तन हो सकता हैं। इस सम्बन्धमें जो विशेषता हैं उसे टीकामें स्पष्ट किया ही है। इस प्रकार कृतकृत्यवेदकका काल पूरा होने पर यह जीव क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो जाता है। यहां प्रसगसे अल्पबहुत्वका निरूपण किया हैं सो उसे मूलसे जान लेना चाहिये।

देशचारित्रलब्धि

चारित्र दो प्रकारका हैं—एक देशचारित्र और दूसरा सकलचारित्र। चढते समय इन्हें प्राप्त करनेके अधिकारी मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि दोनों हैं। जो मिथ्यादृष्टि जीव उपशम सम्यक्त्वके साथ देशचारित्रको प्राप्त करते है वे पूर्वोक्त तीनो करणोके होनेपर ही उसे प्राप्त करते हैं। जो वेदक-सम्यक्त्वके साथ देशचारित्रको ग्रहण करते हैं वे प्रारम्भके दो करण करके उसे प्राप्त करते हैं। इनके उस समय गुणश्रेणिरचना नही होती। किन्तु देशचारित्रके पाप्त होनेपर अवस्थित गुणश्रेणि प्रारम्भ हो जाती है जो देशचारित्र कालके भीतर सदा प्रवृत्त रहती हैं। देशचारित्रके दो भेद हैं—एकान्त वृद्धि देशचारित्र और यथाप्रवृत्त देशचारित्र। इनमेंसे प्रथमका काल अन्तर्मुहूर्त हैं। यह देशचारित्रके प्राप्त होनेके प्रथम समयसे अन्तर्मुहूर्त काल तक होता है। इस कालके भीतर समय समय परिणामोकी विशुद्धि अनन्तगुणी वढती जाती है। इस कारण इस कालके भीतर करण परिणामोंके विना भी स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात क्रिया चालू रहती है। किन्तु यथाप्रवृत्त देशचारित्रकालके भीतर स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात क्रिया नही होती।

जो देशसयत वाह्य कारणके विना केवल अन्तरग कारणके वश तीव्र सक्लेशको प्राप्त हो अन्तर्मुहूर्तके लिए असयतसम्यग्दृष्टि होकर पुन देशचारित्रको प्राप्त करता है उसके करणपरिणाम न होनेसे वह स्थिति-अनुभागकाण्डकघात नही करता। उक्त देशसयत जीव कभी सक्लेशको प्राप्त होता है और कभी

विशुद्धिको भी। इस कारण उसके विशुद्धिकालमें अनन्त भागवृद्धि और अनन्त गुणहानिको छोडकर यथासम्भव शेष चार प्रकारकी वृद्धिको लिये हुए गुणश्रेणि रचना होती है तथा सक्लेशकालमें अनन्त भागहानि और अनन्त गुणहानिको छोडकर यथासम्भव शेष चार प्रकारकी हानिको लिए हुए गुणश्रेणि रचना होती है।

जो मनुष्य देशचारित्रसे च्युत होकर अगले समयमें मिथ्यात्वको प्राप्त होता है उसके जघन्य देशसयमस्थान होता है और जो मनुष्य अगले समयमें सकलसयमको प्राप्त होता है उसके उत्कृष्ट देशसयमस्थान होता है। मध्यम देशसयमस्थान मनुष्य और तिर्यञ्च दोनोके होते है।

देशसयमस्थानोके तीन भेद है। देशसंयमसे भ्रष्ट होनेके अन्तिम समयमें प्रतिपात स्थान होते है। देशसयमको प्राप्त करनेके प्रथम समयमें प्रतिपद्यमान स्थान होते है। इनके विना अन्य जितने देशसयम स्थान होते है वे सब अनुभयगत स्थान कहलाते है।

सयमासयमलब्धिको क्षायोपशमिक बतलानेका कारण यह है कि अप्रत्याख्यानावरणको तो सयतासयत जीव वेदता नही, क्योंकि उसके अप्रत्याख्यानावरणका उदय नही पाया जाता। प्रत्याख्यानावरणका उदय होते हुए भी वह सकल सयमका घात करता है, इसलिए उससे सयमासयमका किसी प्रकारका भी उपघात नही होता। अब रहे चार सज्वलन और नौ नोकषाय सो ये सयमासयमको देशघाति करते है, इसीलिए सयमासयमको क्षायोपशमिक स्वीकार किया गया है। यत क्षयोपशमके असख्यात लोकप्रमाण भेद है, इसलिए सयमासयमके भी असख्यात लोकप्रमाण भेद हो जाते है।

सकलसंयमलब्धि—क्षायोपशमिक सकलसयमलब्धि

सकलसयमलब्धि तीन प्रकारकी है—१ क्षायोपशमिक, २ औपशमिक और ३ क्षायिक। जो औपशमिक सम्यक्त्वके साथ क्षायोपशमिक सयमलब्धिको ग्रहण करता है उसका कथन प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी प्राप्तिका निर्देश करते समय कर आये है। जो मिथ्यादृष्टि, अविरत सम्यग्दृष्टि और सयतासयत जीव वेदक सम्यक्त्वके साथ सकल सयमलब्धिको ग्रहण करता है वह प्रारम्भके दो करणपूर्वक उसे ग्रहण करता है। इसके गुणश्रेणि नही होती। मात्र सयमकी प्राप्ति होनेपर स्वस्थान गुणश्रेणि नियमसे होती है। जो जीव सकल सयमको प्राप्त होता है उसे सर्व प्रथम अप्रमत्त गुणस्थानकी प्राप्ति होती है। इसका शेष कथन सयमासयमके समान जान लेना चाहिये।

ऐसा नियम है कि कर्मभूमिज और अकर्मभूमिज दोनो प्रकारके मनुष्य सकल सयमलब्धिको प्राप्त करनेके अधिकारी है। उन्हें ही यहाँ क्रमसे आर्य और म्लेच्छ कहा गया है। अकर्मभूमिज मनुष्य सकल सयमको कैसे प्राप्त होते हैं इसका समाधान उत्तरकालमें टीकाकारोने इस प्रकार किया है कि चक्रवर्तीकी दिग्विजयके समय जो मनुष्य अकर्मभूमिज क्षेत्रसे आते है या अकर्मभूमिज राजाओकी कन्याओके साथ विवाह करनेपर जो सन्तानें उत्पन्न होती हैं वे सकलसयमको ग्रहण करनेके अधिकारी होनेसे अकर्मभूमिज मनुष्योके सकल सयमकी प्राप्ति बन जाती है।

यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि यहाँ जो मिथ्यादृष्टि मनुष्यो और तिर्यञ्चोंको देशसयमकी प्राप्तिका और मिथ्यादृष्टि मनुष्योको सकल सयमकी प्राप्तिका उल्लेख किया है सो उसका आशय यह है कि जिन मिथ्यादृष्टि मनुष्यों और तिर्यञ्चोने आचार शास्त्रके अनुसार निर्दोष रीतिसे श्रावकाचारका और मिथ्यादृष्टि मनुष्योंने अनगाराचारका पालन करते हुए तत्त्वाभ्यासपूर्वक आत्मसम्मुख होकर तीन करण करके सम्यग्दर्शनके साथ भाव सयमसयम और भावसयमको प्राप्त किया है या वेदक सम्यक्त्वके साथ उक्त विधिसे भावसयमासयम और भावसयमको प्राप्त किया है उन्हें लक्ष्य कर ही उक्त निर्देश किया गया है।

औपशमिक चारित्रलब्धि

जो क्षायिक सम्यग्दृष्टि मनुष्य हैं वे तो गुणस्थान परिपाटीके अनुसार औपशमिक चारित्रको प्राप्त करनेके अधिकारी हैं ही, किन्तु जो वेदकसम्यग्दृष्टि जीव हैं वे यदि उपशम श्रेणिपर आरोहण करना चाहते हैं तो सर्व प्रथम वे अनन्तानुबन्धीकी विसयोजना करके तथा दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोकी उपशमना करके द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि होकर ही उपशमश्रेणिपर आरोहण कर औपशमिक चारित्रको प्राप्त हो सकते है।

नियम यह है कि जो वेदक सम्यग्दृष्टि जीव अनन्तानुबन्धीकी विसयोजना करके दर्शनमोहनीयकी उपशमना करता है उसके अपूर्वकरणमें गुणसक्रमके स्थानपर विध्यातसक्रम और अध प्रवृत्त सक्रम होते हैं। उसमें भी अध प्रवृत्तसक्रम अप्रशस्त कर्मोंका होता है। अनिवृत्तिकरणमें उसका सख्यात बहुभाग जानेपर असख्यात समयप्रबद्धोकी उदीरणा होती है। उसके बाद अन्तर्मुहूर्त कालतक दर्शनमोहनीयकी अन्तरकरण क्रिया करता है। तदनन्तर प्रथम स्थितिके समाप्त होनेपर यह जीव द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि हो जाता है।

इस प्रकार द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि होनेके प्रथम समयसे लेकर जितना गुणसक्रमका पूरण काल है उससे सख्यातगुणे काल तक प्रति समय विशुद्धिकी वृद्धिके द्वारा उत्तरोत्तर वृद्धिको प्राप्त होता रहता है। तदनन्तर विशुद्धिकी वृद्धि और हानि द्वारा अप्रमत्त और प्रमत्त गुणस्थानोमें अनेक वार परिवर्तन करता है। चढते समय विशुद्धिको प्राप्त होता है और गिरते समय सक्लेश परिणामोसे युक्त हो जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

इसके बाद यह जीव चारित्रमोहनीयकी २१ प्रकृतियोका तीन करणविधिसे उपशम करता है। अन्य प्रकृतियोका उपशम नही होता। ऐसा करते समय अध प्रवृत्तकरण, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, स्थितिबन्धापसरण, क्रमकरण, देशघातिकरण, अन्तरकरण और उपशमकरण ये आठ कार्य विशेष होते हैं। इनमेंसे तीन करणोका लक्षण जैसा पहले बतला आये हैं उसी प्रकार जानना चाहिये। प्रकृतमें दर्शनमोहनीयका क्षय कर यदि कपायोको उपशमाता है तो उसके अपूर्वकरणके प्रथम समयमें जो स्थितिकाण्डक प्राप्त होता है वह नियमसे पल्योपमके सख्यातवें भागप्रमाण होता है। किन्तु जो दर्शनमोहके उपशमद्वारा द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि होकर कषायोका उपशम करता है उसके लिये ऐसा कोई नियम नही है। उसके जघन्य स्थितिकाण्डक पल्योपमके सख्यातवें भागप्रमाण होता है और उत्कृष्ट स्थितिकाण्डक सागरोपम पृथक्त्वप्रमाण होता है। स्थितिबन्धापसरण पल्योपमके सख्यातवें भागप्रमाण होता है। अनुभागकाण्डकघात अशुभ प्रकृतियोंका ही होता है।

यहाँ उदयावलिसे बाह्य गलितावशेष गुणश्रेणि होती है जो आयामकी अपेक्षा अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसाम्परायके कालसे कुछ अधिक प्रमाणवाली होती है। यहीसे नही बँधनेवाली नपुसकवेद आदि अप्रशस्त प्रकृतियोके गुणसक्रमका भी प्रारम्भ हो जाता है।

यह सब क्रिया करते हुए जब हजारो स्थितिकाण्डकोका घात हो जाता है तब सर्व प्रथम इस जीवके निद्रा-प्रचलाकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। जहाँ इनकी बन्धव्युच्छित्ति होती है वह अपूर्वकरणके सातवें भागप्रमाण है। यहाँसे अन्तर्मुहूर्त काल जानेपर परभवसम्बन्धी नामकर्मकी प्रकृतियोकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। ये सब प्रकृतियां अधिकसे अधिक ३० हैं। इनमें आहारक द्विक और तीर्थंकर ये तीन प्रकृतियाँ भी सम्मिलित हैं। जो इन तीनोका बन्ध नही करते उनके २७ प्रकृतियोकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। जो आहारक द्विकका बन्ध नही करते उनके २८ प्रकृतियोकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। जो मात्र तीर्थंकर प्रकृतिका बन्ध नही करते उनके २९ प्रकृतियोकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इन ३० प्रकृतियोकी बन्धव्युच्छित्ति अपूर्वकरणके

६ वें भागके अन्तमें होती है। तदनन्तर अपूर्वकरणके अन्तिम समयमें हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इन चार प्रकृतियोकी बन्धव्युच्छित्ति होती है।

इस प्रकार अपूर्वकरणको समाप्त कर यह जीव अनिवृत्तिकरणमें प्रवेश करता है। यहाँ स्थिति-काण्डकघात आदि नये कार्य प्रारम्भ होते है। इसके प्रथम समयमें ही सभी कर्मोंमेसे जो कर्मपुञ्ज अप्रशस्त उपशमनारूप है, जो कर्मपुज निधत्तिरूप है और जो कर्मपुज निकाचितरूप है, उन तीनोकी व्युच्छित्ति कर वे कर्मपुञ्ज क्रमश उदीरणाके योग्य, सक्रम और उदीरणाके योग्य तथा सक्रम, उत्कर्षण, अपकर्षण और उदीरणाके योग्य हो जाते है। हम देखते है कि अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें ही ये कार्य प्रारम्भ हो जाते है और इस विधिसे जब मोहनीयकर्मादिका स्थितिबन्ध शेप कर्मोंके स्थितिबन्धसे कम होने लगता है तब अन्तमें सबसे कम मोहनीयका, उससे अधिक तोसिय प्रकृतियोका, उससे अधिक वीसिय प्रकृतियोका और उससे अधिक वेदनीयका स्थितिबन्ध होता है और इस प्रकार क्रमकरणकी विधि समाप्त होती है। इस विधिसे क्रमकरणके अन्तमें कर्मोका जो स्थितिबन्ध होता है वह पल्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण होता है तथा असख्यात समयप्रबद्धोकी उदीरणा होती है।

इसके बाद यह जीव हजारो स्थितिबन्धापसरणोके व्यतीत होनेके बाद सर्वप्रथम मन पर्ययज्ञानावरण और दानान्तरायका देशघातिबन्ध करता है। तत्पश्चात् उतने उतने ही स्थितिबन्धापसरणोके व्यतीत होनेपर क्रमसे अवधिज्ञानावरण, अवधिदर्शनावरण और लाभान्तरायका तत्पश्चात् श्रुतज्ञानावरण, अचक्षु-दर्शनावरण और भोगान्तरायका तत्पश्चात् चक्षुदर्शनावरणका तत्पश्चात् आभिनिबोधिक ज्ञानावरण और परिभोगान्तरायका तथा सबके अन्तमें वीर्यान्तरायका देशघाती बन्ध करता है। तात्पर्य यह है कि इसके पहले इन कर्मोका जो सर्वघाती द्विस्थानीय बन्ध होता था वह अब परिणामविशेपोको निमित्तकर देशघाती द्विस्थानीय बन्ध होने लगता है।

तदनन्तर हजारो स्थितिबन्धापसरणोके जानेपर मोहनीयकी २१ प्रकृतियोका अन्तरकरण करता है। इनके अतिरिक्त अन्य कर्मोंका अन्तरकरण नही होता। यह क्रिया करते समय जिस सज्वलन कषाय और वेदका वेदन करता है उसकी प्रथम स्थिति अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थापित कर शेप १९ कर्मोकी स्थितिको एक आवलिप्रमाण स्थापित करता है। अन्तरकरण करते समय स्थितिके तीन भाग करता है—१ प्रथम स्थिति, २ अन्तरके लिए गृहीत स्थिति और ३ द्वितीय स्थिति। प्रथम स्थितिसे अन्तरके लिये गृहीत स्थिति सख्यात-गुणी होती है। उसके ऊपरकी शेष सब स्थितिको द्वितीय स्थितिसज्ञा है। उदयस्वरूप और अनुदयस्वरूप सभी प्रकृतियोके अन्तरसे ऊपरकी प्रथम स्थिति सदृश होती है, क्योकि द्वितीय स्थितिके प्रथम निपेकका सर्वत्र सदृशरूपसे अवस्थान होता है, किन्तु नीचे अन्तर विसदृश होता है, क्योकि अनुदय स्वरूप प्रकृतियोकी प्रथम स्थिति एक आवलिप्रमाण और उदयस्वरूप प्रकृतियोकी प्रथम स्थिति एक अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्वीकार की गई है। यहाँ उदयवाली प्रकृतियोके अन्तरायामका प्रमाण गुणश्रेणिशीर्ष और उससे सख्यातगुणा है तथा अनुदयवाली प्रकृतियोके अन्तरायामका प्रमाण अवशिष्ट गुणश्रेणि और उससे सख्यातगुणा है। एक स्थितिकाण्डकके उत्कीरण करनेमें जितना काल लगता है उतना ही काल अन्तरकरण क्रियाको सम्पन्न करनेमें लगता है। अन्तर करनेके लिये जो द्रव्य ग्रहण किया जाता है उसे अन्तरायाममें निक्षिप्त नही करता है। केवल उदयवाली प्रकृतियोके अन्तरकरणके लिए गृहीत द्रव्यको अपनी प्रथम स्थितिमें तथा उस समय बँधनेवाली सजातीय प्रकृतियोकी द्वितीय स्थितिमें निक्षिप्त करता है। केवल बँधनेवाली प्रकृतियोके अन्तर-करणके लिये गृहीत द्रव्यको उत्कर्षण कर उनकी द्वितीय स्थितिमें निक्षिप्त करता है। बन्ध और उदय उभयरूप प्रकृतियोके अन्तरकरणके लिये गृहीत द्रव्यको उनकी प्रथम स्थिति और द्वितीय स्थितिमें निक्षिप्त

करता है। तथा वन्ध और उदयसे रहित प्रकृतियोके अन्तरकरणके लिये गृहीत द्रव्यको वँधनेवाली अन्य सजीय प्रकृतियोकी द्वितीय स्थितिमें निक्षिप्त करता है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न करता है।

इस प्रकार अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न करनेके वाद सात करण प्रारम्भ होते है—१ मोहनीयकर्मका आनुपूर्वी सक्रम। २ लोभ सज्वलनका अन्य प्रकृतियोमें सक्रमका न होना। ३ मोहनीयकी वँधनेवाली प्रकृतियोका एक लतास्थानीय वन्ध होना। ४ नपुसक वेदका आयुक्त करणके द्वारा यहाँसे उपशमन क्रिया प्रारम्भ करना। ५ छह आवलियोके जानेपर उदीरणा होने लगना। ६ मोहनीयका एक स्थानीय उदय होने लगना तथा ७ मोहनीयका स्थितिवन्ध सख्यात वर्पप्रमाण होने लगना। ये सात करण अन्तरकरणके बाद नियमसे प्रारम्भ हो जाते है।

अन्तरकरणके वाद नपु सकवेद, स्त्रीवेद, सात नोकपाय तथा तीन क्रोध, तीन मान और तीन माया इनको क्रमसे उपशमाता है। मात्र नवकवन्धके एक समय कम दो आवलि प्रमाण समयप्रवद्धोको छोडकर उपशमाता है। इसके स्पष्टीकरणके लिए गाथा २६२ की टीका देखो।

अपगतवेदी होनेपर यह जीव पुरुपवेदके एक समय कम दो आवलि प्रमाण नवकवन्धके साथ जव तीन क्रोधोका उपशम करता हैं तव प्रथम स्थितिमें तीन आवलि शेप रहने तक अप्रत्याख्यान क्रोध और प्रत्याख्यान क्रोधको सज्वलन क्रोधमें सक्रमित करता हैं। इसके वाद इनको मान सज्वलनमें सक्रमित करता है। और इस प्रकार क्रोधसज्वलनकी प्रथम स्थिति एक आवलि प्रमाण शेप रहते समय तीनो क्रोधोका उपशम हो जाता है। यहाँ जो क्रोधसज्वलनकी उच्छिष्टावलि प्रमाण स्थिति शेप रही उसको क्रमसे स्तिवुकसक्रम द्वारा मान सज्वलनमें सक्रम करता है।

इस प्रकार जिस समय तीन क्रोधोका उपशम होता है उसके अनन्तर समयमें मानकी प्रथम स्थिति करनेके साथ उसका वेदक होता है। और इस प्रकार तीन मानोका उपशम भी तीन क्रोधोके समान करके तदनन्तर समयमें मायाकी प्रथम स्थिति करनेके साथ उसका वेदक होकर पूर्वोक्त विधिसे इनका भी उपशम करता है। इसके वाद लोभसज्वलनकी प्रथम स्थिति करनेके साथ उसका वेदक होता है। और इस प्रकार प्रथम स्थितिका प्रथमार्ध व्यतीत होकर जब द्वितीयार्ध प्रारम्भ होता है तब लोभके अनुभागकी सूक्ष्म कृष्टीकरण क्रिया प्रारम्भ करता है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये कि उपशमश्रेणिमें न तो पूर्व स्पर्धकोसे अपूर्वस्पर्धकोकी रचना होती है और न ही बादर कृष्टियोकी रचना होती है। किन्तु जघन्य स्पर्धकगत लोभसे नीचे सूक्ष्म कृष्टीकरणकी क्रिया सम्पन्न होती है। तात्पर्य यह है कि जो जघन्य स्पर्धकगत लोभ है उससे नीचे अनन्तगुणी हीन सूक्ष्म कृष्टियोकी रचना करता है। यह क्रिया सम्पन्न करते हुए प्रति समय अपूर्व-अपूर्व कृष्टियोकी रचना करता है। जैसे एक स्पर्धकमें क्रमवृद्धि या क्रमहानिरूप अविभागप्रतिच्छेद पाये जाते है उस प्रकार कृष्टियोमें क्रमवृद्धि या क्रमहानिरूप अविभागप्रतिच्छेद नही पाये जाते। इस प्रकार कृष्टिकरणकी क्रिया सम्पन्न करते हुए जव कृष्टिकरणके कालमें एक समय कम तीन आवलि काल शेप रहे तव अप्रत्याख्यान और प्रत्याख्यान लोभका सज्वलन लोभमें सक्रमण न होकर इनकी स्वस्थानमें ही उपशमन क्रिया सम्पन्न होती है। तथा जव सज्वलन लोभकी प्रथम स्थितिमें दो आवलि काल शेप रहता है तव आगाल-प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति हो जाती है और प्रत्यावलिके अन्तिम समयमें सज्वलन लोभकी जघन्य उदीरणा होती है।

एक वात और है। वह यह कि वादर लोभकी प्रथम स्थितिमें यहाँ इतना विशेप जानना चाहिए कि जव प्रत्यावलिमें एक समय शेप रहता है तव लोभसज्वलनका स्पर्धकगत पूरा द्रव्य तथा पूरा अप्रत्याख्यान

लोभका द्रव्य और पूरा प्रत्याख्यान लोभका द्रव्य उपशान्त हो जाता है। मात्र एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवक द्रव्य, उच्छिष्टावलिप्रमाण निषेकद्रव्य और सूक्ष्मकृष्टिगत द्रव्य उपशान्त नहीं होता।

इसके बाद तदनन्तर समयमें सूक्ष्मसाम्परायगुणस्थानको प्राप्त होकर सूक्ष्म कृष्टिकी अन्तर्मुहूर्त प्रमाण प्रथम स्थितिका कारक और वेदक होता है। यहाँ सूक्ष्म कृष्टिकी प्रथम स्थितिका काल बादर लोभके वेदक कालसे कुछ कम दो भागप्रमाण होनेसे यही सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानका काल है और यह उदयादि अवस्थित गुणश्रेणिरूप है। परन्तु ज्ञानावरणादि कर्मोंकी जो गुणश्रेणि होती है वह गलित शेष होती है जिसका काल सूक्ष्मसाम्परायके कालसे कुछ अधिक है, क्योंकि इन कर्मोंकी जो गुणश्रेणि रचना अपूर्वकरणके प्रथम समयमें की रही वही यहाँ इतनी अवशिष्ट रहती है।

सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानमें सब सूक्ष्म कृष्टियोको नहीं वेदता, किन्तु जो वेदने योग्य है उनका वेदन करता है और शेषको उपशमाता है। इसका विचार मूलमें किया ही है वहाँसे जानना चाहिये।

यहाँ इस बातका सकेत कर देना आवश्यक प्रतीत होता है वह यह कि बन्ध प्रकृतियाँ होनेसे पुरुषवेद, सज्वलन क्रोध, मान, माया और लोभका जो उस उस स्थानपर एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवक द्रव्य शेष रहता आया है सो उसका क्रमसे क्रोध, मान, माया, लोभ और सूक्ष्मकृष्टिकी प्रथम स्थितिके कालमें समय समय असख्यातगुणा-असख्यातगुणा उपशमित करता है। उदाहरणार्थ पुरुषवेदका एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवकबन्ध क्रोध सज्वलनकी प्रथम स्थितिके कालमें समय-समय उपशमित होता है। क्रोधसज्वलनका एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवक द्रव्य मानसज्वलनकी प्रथम स्थितिके कालमें उपशमित होता है। इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिए।

इस विधिसे जब सूक्ष्म कृष्टिकी प्रथम स्थितिमें दो आवलिकाल शेष रहता है तब आगाल-प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति हो जाती है, जब एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहता है तब जघन्य उदीरणा होती है और उच्छिष्टावलिप्रमाण निषेकोंके अवशिष्ट रहनेपर वे स्वमुखसे उदयरूप परिणम कर निर्जरित हो जाते हैं। तदनन्तर समयमें यह जीव उपशान्तमोह हो जाता है।

उपशान्तमोहमें मोहनीय कर्मका उदय न होनेसे सर्वत्र अवस्थित परिणाम रहते हैं। इसका काल अन्तर्मुहूर्त है। इसमें जो गुणश्रेणि रचना होती है वह उपशान्तमोहके कालके सख्यातवें भागप्रमाण कालवाली होती है। उससे अपूर्वकरणमें की गई गुणश्रेणिका शीर्ष सख्यातगुणा होता है। पूर्व समयसे यहाँ प्रथम समयमें असख्यातगुणे द्रव्यका निक्षेप होता है। यह गुणश्रेणि रचना ज्ञानावरणादि कर्मोकी जाननी चाहिये जो उदयादि अवस्थितस्वरूप होती है। यहाँ प्रत्येक समयमें अवस्थित परिणाम होनेसे द्रव्यका निक्षेप भी अवस्थितस्वरूप ही जानना चाहिये। प्रकृतमें इतनी विशेषता और जाननी चाहिये कि उपशान्तमोहके प्रथम समयमें की गई गुणश्रेणिके शीर्षका जिस समय उदय होता है उस समय ज्ञानावरणादि कर्मोका उत्कृष्ट प्रदेश उदय होता है।

यहाँ प्रसगसे कौन प्रकृतियाँ अवस्थित वेदक होती हैं और किन प्रकृतियोका यह जीव किस प्रकार अनवस्थित वेदक होता है इसका विशेष विचार किया गया है जिसे हमने विशेषार्थ द्वारा (पृ० २७२) मूलमें स्पष्ट किया ही है, इसलिए उसे वहाँसे जान लेना चाहिये।

उपशान्तकषाय गुणस्थानसे पतन एक तो भवका अन्त होनेसे होता है और इस प्रकार मरणको प्राप्त हुआ यह जीव नियमसे असयत सम्यग्दृष्टि वैमानिक देव होता है। उसके होनेके प्रथम समयमें ही सब करण उद्घाटित हो जाते हैं। अर्थात् उदयवाली मोह प्रकृतियोका अपकर्षण कर वह उदयावलिसे लेकर

निक्षेप करता है और जो अनुदयवाली मोह प्रकृतियाँ है उनका उदयावलिके बाहर निक्षेप करता है। इसी प्रकार अन्य करणोके विषयमें भी जानना चाहिये।

दूसरे उपशान्तकषाय गुणस्थानका काल समाप्त होनेपर इस जीवका पतन होता है। सो यहाँ ऐसा जानना चाहिये कि विशुद्धिवश यह जीव आरोहण करता है और सक्लेशवश उसका पतन होता है। इस प्रकार उपशान्तमोहसे गिरकर जब यह जीव सूक्ष्मसाम्परायमें प्रवेश करता है तब उसके प्रथम समयमें ही यह जीव अप्रत्याख्यान आदि तीन लोभोकी प्रशस्त उपशामनाको समाप्तकर सज्वलन लोभकी उदयादि अवस्थित गुणश्रेणि करता है शेष दो लोभोकी भी उदयावलि बाह्य अवस्थित गुणश्रेणि करता है जिनका काल सज्वलन लोभके कृष्टिवेदक कालसे एक आवलि अधिक कालप्रमाण होता है तथा आयु कर्मके बिना शेष कर्मोकी सूक्ष्मसाम्पराय, अनिवृत्तिकरण और अपूर्वकरणके कालसे कुछ अधिक कालप्रमाण गुणश्रेणि रचना करता है।

उतरनेवाले इस जीवके अप्रशस्त कर्मोका अनुभागबन्ध उत्तरोत्तर अनन्तगुणा बढने लगता है और प्रशस्त कर्मोका अनुभागबन्ध उत्तरोत्तर घटने लगता है। इसी प्रकार बन्धयोग्य सभी कर्मोका स्थितिबन्ध यथाविधि बढने लगता है। इतना ही नही, सूक्ष्म कृष्टिवेदनमें भी वृद्धि होने लगती है।

उतरते समय अनिवृत्तिकरणमें प्रवेश करनेपर उच्छिष्टावलिमात्र निषेकोको छोडकर शेष सूक्ष्म कृष्टियोका प्रथम समयमें ही स्पर्धकगत लोभरूप परिणमन हो जाता है तथा उच्छिष्टावलिमात्र निषेकोका स्तिबुक सक्रमण द्वारा उदयमें आनेवाले स्पर्धकरूप निषेकोमें निक्षेप होता रहता है। यहाँसे मोहके आनुपूर्वी सक्रमका नियम नही रहता सो यह कथन शक्तिकी अपेक्षा किया है। आगे लोभवेदक कालको समाप्तकर यह जीव क्रमसे माया, मान और क्रोधवेदक कालमें प्रवेश करता है। यहाँ और आगे जो-जो कार्य विशेष होते है उन्हें मूलसे जान लेना चाहिये। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये कि जब यह जीव क्रोधसज्वलनके वेदनके प्रथम समयमें स्थित होता है तब ज्ञानावरणादि कर्मोके साथ बारह कषायोका गलितशेष गुणश्रेणि निक्षेप होता है तथा तभी यह जीव अन्तरको भरता है। इसके बाद इस जीवके पुरुषवेदका उदय होते समय सात नोकषायोका उपशमकरण नष्ट हो जाता है। यहाँ बारह कषाय और सात नोकषायोकी ज्ञानावरणादि कर्मोके समान गुणश्रेणि होती है। आगे स्त्रीवेदके अनुपशान्त होनेके प्रथम समयमें मोहनीयकी २० प्रकृतियोकी गुणश्रेणिरचना होती है। आगे नपुसकवेदके अनुपशान्त होनेपर मोहनीयकी २१ प्रकृतियोकी गुणश्रेणि रचना होती है।

पहले चढनेवालेके छह आवलि काल जानेपर बँधनेवाली प्रकृतियोके उदीरणाका नियम है यह बतला आये है। किन्तु उतरनेवालेके सूक्ष्मसाम्परायके प्रथम समयसे ही यह नियम नही रहता। ससारी जीवोके समान बँधनेवाले कर्मोकी एक आवलिके बाद उदीरणा होने लगती है। इसी प्रकार चढते समय जिन कर्मोका मात्र देशघाति बन्ध होने लगता है सो यथास्थान उसका अभाव होकर सर्वघाति बन्ध होने लगता है। तथा उतरनेवालेके यथास्थान असख्यात समयप्रबद्धोकी उदीरणाका भी अभाव हो जाता है। इसी प्रकार चढनेवालेके जो स्थितिबन्धकी अपेक्षा क्रमकरण होनेका विधान कर आये है सो उसका भी अभाव हो जाता है।

इसके बाद जब यह जीव अपूर्वकरणमें प्रवेश करता है तब उसके प्रथम समयमें ही अप्रशस्त उपशामना, निधत्ति और निकाचन ये तीनो करण उद्घाटित हो जाते है। अर्थात् चढते समय अनिवृत्तिकरणमें प्रवेश करनेके पूर्व जो कर्मपुञ्ज अप्रशस्त उपशामना आदिरूप थे वे पुन उसरूप हो जाते है। इस विधिसे यह जीव क्रमसे अपूर्वकरणको पूरा कर अध प्रवृत्तकरणमें प्रवेश करता है। यहाँ यह पुरानी

गुणश्रेणिसे सख्यातगुणी आयामवाली अवस्थित गुणश्रेणिकी रचना करता है। इस कारणमें बन्ध प्रकृतियोका अध प्रवृत्त सक्रम होता है। अबन्ध प्रकृतियोका विध्यात सक्रम होता है। यहाँ गुणसक्रम नही होता।

अपूर्वकरणसे उपशमश्रेणिपर चढने और उतरनेमें जितना काल लगता है उसमे द्वितीयोपशम सम्यक्त्वका काल सख्यातगुणा है। यतिवृषभ आचार्यके उपदेशानुसार यदि उपशम श्रेणिसे उतरकर और सासादन गुणस्थानको प्राप्त होकर मरता है तो मर कर वह नरकगति, तिर्यञ्चगति और मनुष्यगतिमें जन्म नही लेता, नियमसे देव होता है, क्योकि जिसके नरकायु, तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुकी सत्ता होती है वह देशसयम और सकल सयमको प्राप्त करनेमें असमर्थ होनेके कारण उपशमश्रेणिपर आरोहण करनेमें असमर्थ है। इसलिए वहाँसे उतरकर और मरणकर उसका उक्त तीन गतियोको प्राप्त करना किसी भी अवस्थामें नही बन सकता। किन्तु आचार्य भूतबलिके उपदेशानुसार उपशमश्रेणिसे उतरा हुआ मनुष्य सासादन गुणस्थानको नही प्राप्त होता ऐसा प्रकृतमें जानना चाहिये। यहाँ इतना विशेप जानना चाहिये कि उपशमश्रेणिपर चढते समय जिस स्थानपर जिन प्रकृतियोकी बन्धव्युच्छित्ति होती है, उतरते समय उस स्थानको प्राप्त होनेपर उनका पुनः बन्ध होने लगता है। तथा उतरते समय सज्वलन क्रोधादि चार और तीन वेद इनमेंसे जिस प्रकृतिका जिस स्थानपर पुन उदय होता है उसकी गुणश्रेणिरचना करता है आदि।

यह मुख्यतया पुरुषवेद और क्रोधस ज्वलनके उदयसे चढे हुए जीवकी अपेक्षा प्ररूपणा है। किन्तु जो पुरुषवेदके साथ मान, माया या लोभसज्वलनके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है उसमें कुछ विशेषता है, वह विशेषता यह है कि यदि मानके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है तो क्रोधके उदयसे श्रेणिपर चढे हुए जीवकी जितनी क्रोध और मानके निमित्तसे प्रथम स्थिति होती है उतनी अकेले मानके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करनेवालेको होती है। क्रोधके उदयसे श्रेणिपर चढे हुए जीवके क्रोध, मान और मायाके निमित्तसे जितनी प्रथम स्थिति होती है उतनी अकेले मायाके उदयसे चढे हुए जीवके होती है। तथा क्रोधके उदयसे चढे हुए जीवके क्रोधादि चारोके निमित्तसे जितनी प्रथम स्थिति होती है। उतनी अकेले लोभके उदयसे चढे हुए जीवके होती है।

जिस कषायके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है उसकी प्रथम स्थिति अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्थापित कर अन्तर करता है तथा शेप कषायोकी एक आवलि प्रमाण प्रथम स्थिति स्थापित कर अन्तर करता है। एक यह भी नियम है कि क्रोधादि जिस कषायके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है उसकी प्रथम स्थिति समाप्त होनेपर उसके अनन्तर समयमें उससे अगली मायादि कषायकी प्रथम स्थिति स्थापित करता है। क्रोधके उदयसे चढा हुआ जीव जिस स्थानपर क्रोधत्रयको उपशमाता है, मानके उदयसे चढा हुआ जीव उसी स्थानपर क्रोधत्रयको उपशमाता है आदि। तात्पर्य यह है कि किसी भी कषायके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करे, परन्तु विवक्षित कषायके उपशमानेका जो स्थान है वही उसको उपशमाता है।

उपशमश्रेणिसे उतरते समय जो क्रोधके उदयसे श्रेणि चढता है उसके लोभ, माया, मान और क्रोधका उदय क्रमसे होता है, इसलिए इन कषायोंमेंसे प्रत्येककी अपेक्षा अलग-अलग गलितशेष गुणश्रेणि होती है। जो मानके उदयसे श्रेणि चढकर गिरता है उसके क्रमसे लोभ और मानका उदय होता है, इसलिए इसके मानका उदयकाल क्रोध और मानके उदयकाल प्रमाण होता है। यह तीन प्रकारके मानका अपकर्षणकर ज्ञानावरणादिकी गुणश्रेणिके आयामप्रमाण गलितशेप गुणश्रेणि करता है। जो मायाके उदयमे श्रेणि चढकर गिरता है उसके क्रमसे लोभ और मायाका उदय होता है, इसलिए इसके मायाका उदयकाल क्रोध, मान और मायाके उदयकाल प्रमाण होता है। यह तीन प्रकारकी मायाका अपकर्षणकर

निक्षेप करता है और जो अनुदयवाली मोह प्रकृतियाँ है उनका उदयावलिके बाहर निक्षेप करता है। इसी प्रकार अन्य करणोके विषयमें भी जानना चाहिये।

दूसरे उपशान्तकषाय गुणस्थानका काल समाप्त होनेपर इस जीवका पतन होता है। सो यहाँ ऐसा जानना चाहिये कि विशुद्धिवश यह जीव आरोहण करता है और सक्लेशवश उसका पतन होता है। इस प्रकार उपशान्तमोहसे गिरकर जब यह जीव सूक्ष्मसाम्परायमें प्रवेश करता है तब उसके प्रथम समयमें ही यह जीव अप्रत्याख्यान आदि तीन लोभोकी प्रशस्त उपशामनाको समाप्तकर सज्वलन लोभकी उदयादि अवस्थित गुणश्रेणि करता है शेष दो लोभोको भी उदयावलि बाह्य अवस्थित गुणश्रेणि करता है जिनका काल सज्वलन लोभके कृष्टिवेदक कालसे एक आवलि अधिक कालप्रमाण होता है तथा आयु कर्मके बिना शेष कर्मोकी सूक्ष्मसाम्पराय, अनिवृत्तिकरण और अपूर्वकरणके कालसे कुछ अधिक कालप्रमाण गुणश्रेणि रचना करता है।

उतरनेवाले इस जीवके अप्रशस्त कर्मोका अनुभागबन्ध उत्तरोत्तर अनन्तगुणा बढने लगता है और प्रशस्त कर्मोका अनुभागबन्ध उत्तरोत्तर घटने लगता है। इसी प्रकार बन्धयोग्य सभी कर्मोका स्थितिबन्ध यथाविधि बढने लगता है। इतना ही नही, सूक्ष्म कृष्टिवेदनमें भी वृद्धि होने लगती है।

उतरते समय अनिवृत्तिकरणमें प्रवेश करनेपर उच्छिष्टावलिमात्र निषेकोको छोडकर शेष सूक्ष्म कृष्टियोका प्रथम समयमें ही स्पर्धकगत लोभरूप परिणमन हो जाता है तथा उच्छिष्टावलिमात्र निषेकोका स्तिवुक सक्रमण द्वारा उदयमें आनेवाले स्पर्धकरूप निषेकोमें निक्षेप होता रहता है। यहाँसे मोहके आनुपूर्वी सक्रमका नियम नही रहता सो यह कथन शक्तिकी अपेक्षा किया है। आगे लोभवेदक कालको समाप्तकर यह जीव क्रमसे माया, मान और क्रोधवेदक कालमें प्रवेश करता है। यहाँ और आगे जो-जो कार्य विशेष होते है उन्हें मूलसे जान लेना चाहिये। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये कि जब यह जीव क्रोधसज्वलनके वेदनके प्रथम समयमें स्थित होता है तब ज्ञानावरणादि कर्मोके साथ बारह कषायोका गलितशेष गुणश्रेणि निक्षेप होता है तथा तभी यह जीव अन्तरको धारता है। इसके बाद इस जीवके पुरुषवेदका उदय होते समय सात नोकषायोका उपशमकरण नष्ट हो जाता है। यहाँ बारह कषाय और सात नोकषायोकी ज्ञानावरणादि कर्मोके समान गुणश्रेणि होती है। आगे स्त्रीवेदके अनुपशान्त होनेके प्रथम समयमें मोहनीयकी २० प्रकृतियोंकी गुणश्रेणिरचना होती है। आगे नपुसकवेदके अनुपशान्त होनेपर मोहनीयकी २१ प्रकृतियोंकी गुणश्रेणि रचना होती है।

पहले चढनेवालेके छह आवलि काल जानेपर बँधनेवाली प्रकृतियोके उदीरणाका नियम है यह बतला आये है। किन्तु उतरनेवालेके सूक्ष्मसाम्परायके प्रथम समयसे ही यह नियम नही रहता। ससारी जीवोके समान बँधनेवाले कर्मोकी एक आवलिके बाद उदीरणा होने लगती है। इसी प्रकार चढते समय जिन कर्मोका मात्र देशघाति बन्ध होने लगता है सो यथास्थान उसका अभाव होकर सर्वघाति बन्ध होने लगता है। तथा उतरनेवालेके यथास्थान असख्यात समयप्रबद्धोकी उदीरणाका भी अभाव हो जाता है। इसी प्रकार चढने-वालेके जो स्थितिबन्धकी अपेक्षा क्रमकरण होनेका विधान कर आये है सो उसका भी अभाव हो जाता है।

इसके बाद जब यह जीव अपूर्वकरणमें प्रवेश करता है तब उसके प्रथम समयमें ही अप्रशस्त उपशामना, निधत्ति और निकाचन ये तीनो करण उद्घाटित हो जाते है। अर्थात् चढते समय अनिवृत्ति-करणमें प्रवेश करनेके पूर्व जो कर्मपुञ्ज अप्रशस्त उपशामना आदिरूप थे वे पुन उसरूप हो जाते है। इस विधिसे यह जीव क्रमसे अपूर्वकरणको पूरा कर अध प्रवृत्तकरणमें प्रवेश करता है। यहाँ यह पुरानी

गुणश्रेणिसे सख्यातगुणी आयामवाली अवस्थित गुणश्रेणिकी रचना करता है। इस करणमें बन्ध प्रकृतियोका अध प्रवृत्त सक्रम होता है। अवन्ध प्रकृतियोका विध्यात सक्रम होता है। यहाँ गुणसक्रम नही होता।

अपूर्वकरणसे उपशमश्रेणिपर चढने और उतरनेमें जितना काल लगता है उससे द्वितीयोपशम सम्यक्त्वका काल सख्यातगुणा है। यतिवृषभ आचार्यके उपदेशानुसार यदि उपशम श्रेणिसे उतरकर और सासादन गुणस्थानको प्राप्त होकर मरता है तो मर कर वह नरकगति, तिर्यञ्चगति और मनुष्यगतिमें जन्म नही लेता, नियमसे देव होता है, क्योकि जिसके नरकायु, तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुकी सत्ता होती है वह देशसयम और सकल सयमको प्राप्त करनेमें असमर्थ होनेके कारण उपशमश्रेणिपर आरोहण करनेमें असमर्थ है। इसलिए वहाँसे उतरकर और मरणकर उसका उक्त तीन गतियोको प्राप्त करना किसी भी अवस्थामें नही बन सकता। किन्तु आचार्य भूतवलिके उपदेशानुसार उपशमश्रेणिसे उतरा हुआ मनुष्य सासादन गुणस्थानको नही प्राप्त होता ऐसा प्रकृतमें जानना चाहिये। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये कि उपशमश्रेणिपर चढते समय जिस स्थानपर जिन प्रकृतियोकी बन्धव्युच्छित्ति होती है, उतरते समय उस स्थानको प्राप्त होनेपर उनका पुन. बन्ध होने लगता है। तथा उतरते समय सज्वलन क्रोधादि चार और तीन वेद इनमेंसे जिस प्रकृतिका जिस स्थानपर पुन उदय होता है उसकी गुणश्रेणिरचना करता है आदि।

यह मुख्यतया पुरुषवेद और क्रोधसज्वलनके उदयसे चढे हुए जीवकी अपेक्षा प्ररूपणा है। किन्तु जो पुरुषवेदके साथ मान, माया या लोभसज्वलनके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है उसमें कुछ विशेषता है, वह विशेषता यह है कि यदि मानके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है तो क्रोधके उदयसे श्रेणिपर चढे हुए जीवकी जितनी क्रोध और मानके निमित्तसे प्रथम स्थिति होती है उतनी अकेले मानके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करनेवालेकी होती है। क्रोधके उदयसे श्रेणिपर चढे हुए जीवके क्रोध, मान और मायाके निमित्तसे जितनी प्रथम स्थिति होती है उतनी अकेले मायाके उदयसे चढे हुए जीवके होती है। तथा क्रोधके उदयसे चढे हुए जीवके क्रोधादि चारोंके निमित्तसे जितनी प्रथम स्थिति होती है। उतनी अकेले लोभके उदयसे चढे हुए जीवके होती है।

जिस कषायके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है उसकी प्रथम स्थिति अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्थापित कर अन्तर करता है तथा शेष कषायोकी एक आवलि प्रमाण प्रथम स्थिति स्थापित कर अन्तर करता है। एक यह भी नियम है कि क्रोधादि जिस कषायके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है उसकी प्रथम स्थिति समाप्त होनेपर उसके अनन्तर समयमें उससे अगली मायादि कषायकी प्रथम स्थिति स्थापित करता है। क्रोधके उदयसे चढा हुआ जीव जिस स्थानपर क्रोधत्रयको उपशमाता है, मानके उदयसे चढा हुआ जीव उसी स्थानपर क्रोधत्रयको उपशमाता है आदि। तात्पर्य यह है कि किसी भी कषायके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करे, परन्तु विवक्षित कषायके उपशमानेका जो स्थान है वही उसको उपशमाता है।

उपशमश्रेणिसे उतरते समय जो क्रोधके उदयसे श्रेणि चढता है उसके लोभ, माया, मान और क्रोधका उदय क्रमसे होता है, इसलिए इन कषायोमेंसे प्रत्येककी अपेक्षा अलग-अलग गलितशेष गुणश्रेणि होती है। जो मानके उदयसे श्रेणि चढकर गिरता है उसके क्रमसे लोभ और मानका उदय होता है, इसलिए इसके मानका उदयकाल क्रोध और मानके उदयकाल प्रमाण होता है। यह तीन प्रकारके मानका अपकर्षणकर ज्ञानावरणादिकी गुणश्रेणिके आयामप्रमाण गलितशेष गुणश्रेणि करता है। जो मायाके उदयसे श्रेणि चढकर गिरता है उसके क्रमसे लोभ और मायाका उदय होता है, इसलिए इसके मायाका उदयकाल क्रोध, मान और मायाके उदयकाल प्रमाण होता है। यह तीन प्रकारकी मायाका अपकर्षणकर

ज्ञानावरणादिकी गुणश्रेणिके समान गुणश्रेणि करता है। लोभके उदयमे चढकर गिरे हुए जीवके एक मात्र लोभका ही उदय होता है, इसलिए इसके प्रारम्भमे ही अन्य कर्माके समान गलितशेष गुणश्रेणी होती है।

मान, माया और लोभके उदयमे चढकर गिरा हुआ जीव क्रमसे नौ, छह और तीन कषायोकी गलितावशेष गुणश्रेणि करता है। जिस कषायके उदयमे चढकर गिरा है उस कषायका उदय होनेपर अपकर्षणकर अन्तरको पूरा करता (भरता) है। स्त्रीवेदके उदयमे चढा हुआ जीव अपगतवेदी होनेके बाद पुरुषवेद और छह नोकषायोको एक साथ उपशमाता है। नपुसकवेदके उदयमे श्रेणिपर चढा हुआ जीव नपुसकवेदका अन्तर करके पुरुषवेदके उदयसे चढे हुए जीवके जिस कालमें नपुसक वेदका उपशम होता है उस कालके भीतर नपुसकवेदका उपशमन करके पुरुषवेदके उदयमे चढे हुए जीवके जिस कालमें स्त्रीवेदका उपशम होता है उस कालके अन्तमें दोनो वेदाको युगपत् उपशमाता है। इसके बाद पुरुषवेद और छह नोकषायोको उपशमाता है।

क्षयिक चारित्रलब्धि (क्षापकश्रेणि)

चारित्रमोहकी क्षपणाका विचार इन अधिकारो द्वारा किया गया है—१ अधःप्रवृत्तकरण, २ अपूर्वकरण, ३ अनिवृत्तिकरण, ४ बन्धापसरण, ५ सत्त्वापसरण, ६ क्रमकरण, ७ क्षपणा, ८ देशघातिकरण, ९ अन्तरकरण, १० सक्रमण, ११ अपूर्व स्पर्धककरण, १२ कृष्टिकरण, और कृष्टि अनुभवन। इन अधिकारोमेंसे अधःप्रवृत्तकरण आदि तीन करणोका लक्षण पूर्ववत् जानना।

अधःप्रवृत्तकरणमें गुणश्रेणिरचना, गुणसक्रम, स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात ये चार कार्य नही होते। मात्र प्रति समय अनन्तगुणी विशुद्धिको प्राप्त कर प्रशस्त कर्मोका चतुःस्थानीय और अप्रशस्त कर्मोका द्विस्थानीय अनुभागबन्ध करता है। तथा प्रत्येक अन्तर्मुहूर्तमें उत्तरोत्तर प्रत्येकमें सख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्ध कम करके स्थितिबन्ध करता है। इस करणके प्रथम समयमें होनेवाले स्थितिबन्धसे उसके अन्तिम समयमें सख्यातगुणा हीन स्थितिबन्ध होता है।

अपूर्वकरणके प्रथम समयमें गुणश्रेणि, गुणसक्रम, स्थितिकाण्डकघात, अनुभागकाण्डकघात और अन्य स्थितिबन्ध आरम्भ करता है। यहाँ गुणश्रेणिका आयाम अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय और क्षीणकषाय गुणस्थानोसे कुछ अधिक होता है। यह गलितावशेष गुणश्रेणि है। अपूर्वकरणके प्रथम समयसे ही प्रति समय अनन्तगुणित क्रमसे द्रव्यका अपकर्षणकर गुणश्रेणिकी रचना करता है। जो अप्रशस्त अबन्ध प्रकृतियाँ हैं, असख्यातगुणे क्रमसे उनके द्रव्यको अपकर्षणकर बँधनेवाली अपनी जातिकी प्रकृतियोमें सक्रमित करता है। जघन्य अपवर्तनाका प्रमाण एक समय कम आवलिके एक समय अधिक त्रिभाग प्रमाण है। जिन कर्मोका सक्रमण या उत्कर्षण करता है वे एक आवलि काल तक तदवस्थ रहते है। उसके बाद वे भजितव्य है। किन्तु जिस कर्मपुञ्जका अपकर्षण होता है उसका तदनन्तर समयमें क्रियान्तर होना सम्भव है। अग्रस्थितिके कर्मपुञ्जके उत्कर्षण अपकर्षणका विशेष खुलासा मूलमें किया ही है, इसलिए इसे वहाँसे जान लेना चाहिये।

अपूर्वकरणके प्रथम समयमें जघन्य स्थितिकाण्डक पल्योपमके सख्यातवें भागप्रमाण होता है और उत्कृष्ट उससे सख्यातगुणा होता है, अपूर्वकरणके थम समयमें स्थितिकाण्डक, स्थितिबन्ध और स्थितिसत्त्वका जितना प्रमाण होता है, उसके अन्तिम समयमें वे सख्यातगुणे हीन होते है। अपूर्वकरणके प्रथम समयमें स्थितिबन्ध अन्तःकोटाकोटि प्रमाण होता है तथा स्थिति सत्त्व उससे सख्यातगुणा होता है। एक एक स्थितिकाण्डकघातके भीतर हजारो अनुभागकाण्डकघात होते हैं। अशुभ प्रकृतियोके अनुभागकाण्डकका प्रमाण अनन्त बहुभागप्रमाण है। किन्तु प्रशस्त प्रकृतियोंके अनुभागका घात नही होता। इस गुणस्थानके पहले,

५८ प्रकृतियोकी वन्धव्युच्छित्ति हो लेती है उनके अतिरिक्त इस गुणस्थानमें जिन ३६ प्रकृतियोकी बन्धव्युच्छित्ति होती है उनका नाम निर्देश पहले हो कर आये हैं।

अपूर्वकरणका काल पूरा होनेपर यह जीव बादरसाम्पराय गुणस्थानमें प्रवेश करता है। इसके प्रथम समयमें स्थितिकाण्डक आदि नये प्रारम्भ होते है। इसी समयमें अप्रशस्त उपशामना, निधत्ति और निकाचन इन तीन करणोकी व्युच्छित्ति होती है। इसके प्रथम समयमें पहला स्थितिकाण्डक विसदृश होता है। इसके आगे सब जीवोके वे समान होते है। प्रथम जघन्य स्थितिकाण्डक पल्योपमके सख्यातवें भागप्रमाण होता है तथा उत्कृष्ट इससे सख्यातवें भाग अधिक होता है। शेष सब स्थितिकाण्डक सदृश होते है।

आगे स्थितिबन्ध और स्थितिसत्त्व क्रमसे घटते हुए जब क्रमकरणकी विधिसे मोहनीयका सबसे कम स्थितिबन्ध होने लगता है। उससे कुछ अधिक तीसिय प्रकृतियोका उससे कुछ अधिक बीसिय प्रकृतियोका तथा उससे कुछ अधिक वेदनीय प्रकृतिका बन्ध होने लगता है तब स्थितिसत्त्व भी उसी अनुपातमें घटता जाता है जिसका विशेष खुलासा गाथा ४२७ की टीकामें किया ही है। और इस प्रकार जब पल्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्ध होता है तब असख्यात समयप्रबद्धोकी उदीरणा होने लगती है। इसके बाद सख्यात हजार स्थितिबन्ध होनेपर अप्रत्याख्यान और प्रत्याख्यानरूप आठ कषायोका चार सज्वलन और पुरुषवेदमें सक्रमण करता है। इसके बाद स्थितिबन्धपृथक्त्वके जानेपर दर्शनावरणकी स्त्यानगृद्धि आदि तीन निद्राओ और नामकर्मकी नरकगति आदि तेरह प्रकृतियोका सक्रम करता है। इसके बाद मन पर्यय-ज्ञानावरणादि प्रकृतियोका देशघातिकरण करता है।

तदनन्तर यह जीव हजारो स्थितिकाण्डकोंके व्यतीत होनेपर चार सज्वलन और नौ नोकषायोकी अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न करता है। चार सज्वलन और तीन वेद इनमेंसे जिन दो प्रकृतियोका उदय होता है उनकी प्रथम स्थिति अन्तर्मुहूर्तप्रमाण और शेष ग्यारह प्रकृतियोकी एक आवलिप्रमाण प्रथम स्थिति स्थापित करता है। इन प्रकृतियोके जिन निषेकोका अन्तर किया जाता है उनकी निक्षेप विधिको उपशम-श्रेणिके समान जान लेना चाहिए। अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न होनेके अनन्तर समयमें ये सात करण प्रारम्भ हो जाते है—१ मोहनीयका एक स्थानीय वन्ध, २ मोहनीयका एक स्थानीय उदय, ३ मोहनीयका सख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध, ४ आनुपूर्वी सक्रम, ५ लोभका असक्रम, ६ नपुसकवेदका आयुक्तकरण सक्रम और ७ बन्धके बाद छह आवलिकाल जानेपर उदीरणाका प्रारम्भ। आनुपूर्वी सक्रमके अनुसार नपुसकवेद और स्त्रीवेदके द्रव्यका पुरुषवेदमें सक्रम, सात नोकषायोके द्रव्यका क्रोध कषायमें सक्रम, क्रोध सज्वलनका मानसज्वलनमें सक्रम, मानसज्वलनका मायासज्वलनमें सक्रम तथा मायासज्वलनका लोभसज्वलनमें सक्रम होने लगता है। मात्र लोभसज्वलनका अन्य किसी प्रकृतिमें सक्रम न होकर उसका स्वमुखसे ही क्षय होता है। अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न होनेके बाद प्रतिलोभ सक्रम नही होता।

इसके बाद सख्यात हजार स्थितिबन्धोके जानेपर नपुसकवेदका पुरुषवेदमें सक्रम करता है। यहाँ पुरुषवेद आदि जिस प्रकृतिका बन्ध होता है उसके बन्धद्रव्यसे उदयद्रव्य असख्यातगुणा और उदयद्रव्यसे सक्रम द्रव्य असख्यातगुणा जानना चाहिए। यत प्रदेशबन्ध योगोंके अनुसार होता है और योगोमें चार प्रकारकी वृद्धि, चार प्रकारकी हानि और अवस्थान देखा जाता है तदनुसार प्रदेशबन्ध भी चार प्रकारकी वृद्धि, चार प्रकारकी हानि और अवस्थानकी अपेक्षा भजनीय जानना चाहिए। इसके बाद क्रमसे स्त्रीवेद और सात नोकषायोका सक्रामक होता है। यहाँ इतना और जानना चाहिए कि जितने अनु-भागको लिए हुए कर्मका जितना बन्ध होता है उससे अनन्तगुणे अनुभागके साथ कर्मका उदय होता है

और उससे अनन्तगुणे अनुभागसे युक्त कर्मका सक्रम होता है। किन्तु इतना विशेष जानना चाहिए कि जो अप्रशस्त कर्म हैं उनका अनुभागोदय अनन्तगुणा हीन होता है और प्रदेशोदय असंख्यातगुणा अधिक होता है। मात्र सक्रम भजनीय है, कारण कि एक काण्डकघात होने तक वह तदवस्थ रहता है। उसके बाद काण्डकके बदलनेपर उसका प्रमाण अनन्तगुणा हीन हो जाता है।

इस प्रकार यह जीव सात नोकषायोका सक्रामक होता है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अन्तमें पुरुषवेदका जो एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवक बन्ध शेष रहता है सो एक तो अपगतवेदी होनेके बाद ही उसका नाश करता है। दूसरे जिस समय यह जीव पुरुषवेदके प्राचीन सत्कर्मके साथ छह नोकषायोका क्षयकर प्रथम समयवर्ती अपगतवेदी होता है उसी समयसे यह चार सज्वलनोके अनुभागका अश्वकर्णकरण कारक होता है। प्रकृतमें अश्वकर्णकरणकी अपवर्तनोद्वर्तनकरण और हिंडोलकरण ये दो सज्ञाएँ होनेका कारण यह है कि सज्वलन क्रोधसे सज्वलन लोभ तकके अनुभागको देखनेपर वह उत्तरोत्तर अनन्तगुणा हीन दिखलाई देता है और सज्वलन लोभसे लेकर सज्वलन क्रोध तकके अनुभागको देखनेपर वह उत्तरोत्तर अनन्तगुणा अधिक दिखलाई देता है।

जिस समय यह जीव अनुभागकी अपेक्षा अश्वकर्णकरणको प्रारम्भ करता है उस समय काण्डकघातके लिए अनुभागके जिन स्पर्धकोको ग्रहण करता है वे क्रोधमें सबसे थोडे होते है तथा मान, माया और लोभमें क्रमसे विशेष अधिक होते है। तथा घात करनेपर जो अनुभाग स्पर्धक शेष रहते हैं वे लोभमें सबसे कम रहते है तथा माया, मान और क्रोधमें अनन्तगुणे शेष रहते हैं। और ऐसा करते समय पूर्व स्पर्धकोकी जघन्य वर्गणासे नीचे नये अपूर्व स्पर्धकोकी रचना करता है। यहाँ जिस प्रकार इन अपूर्व स्पर्धकोकी रचना करता है उसी प्रकार यथा सम्भव वे पूर्व स्पर्धकोके साथ उदीर्ण भी होते हैं। इसी प्रकार द्वितीयादि समयोमें भी जानना चाहिए। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि प्रति समय जो अपूर्व स्पर्धक किये जाते है वे पूर्वमें किये गये अपूर्व स्पर्धकोकी अपेक्षा उत्तरोत्तर असख्यातगुणे हीन होते है। ऐसा होते हुए प्रथम समयसे जिन अपूर्व स्पर्धकोकी रचना होती है वे क्रोधके सबसे थोडे होते है तथा इनसे मान, माया और लोभके उत्तरोत्तर विशेष अधिक होते हैं। इस प्रकार अश्वकर्णकरणके अन्तिम समय तक अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना करता है। यह अश्वकर्णकरणका काल क्रोधवेदकके कालका सधिक तीसरे भागप्रमाण है।

तदनन्तर क्रोधादि चारो कषायो सम्बन्धी पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोका अपकर्षण कर कृष्टियोकी रचना करता है। यहाँ ऐसा समझना चाहिए कि अपकर्षण किये गये द्रव्यमें पल्योपमके असख्यातवें भागका भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आवे उतना सूक्ष्म कृष्टियो सम्बन्धी द्रव्य है, शेष बहु भागप्रमाण द्रव्य बादर कृष्टियो सम्बन्धी है। क्रोधादि चारों कषायोंमेंसे प्रत्येककी सग्रह कृष्टियाँ तीन-तीन है और अन्तर कृष्टियाँ अनन्त है। यहाँ इतना विशेष जानना कि जो क्रोध कषायके उदयसे क्षपकश्रेणीपर चढता है उसके क्रोधादि चारों कषायोंकी बारह सग्रह कृष्टियाँ होती हैं। जो मानके उदयसे क्षपकश्रेणीपर चढता है उसके मानादि तीन कषायोकी नौ सग्रह कृष्टियाँ होती हैं। जो मायाके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढता है उसके माया और लोभकी छह सग्रह कृष्टियाँ होती है और जो लोभके उदयसे श्रेणिपर चढता है उसके एक मात्र लोभकषायकी तीन सग्रह कृष्टियाँ होती है। यह हम पहले ही बतला आये है कि एक-एक सग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टियाँ अनन्त होती हैं। ये सब लोभसे लेकर क्रोध तक उत्तरोत्तर अनन्तगुणी होती हैं और क्रोधसे लेकर लोभतक अनन्तगुणी हीन होती हैं। यहाँ इन सग्रह कृष्टियोके मध्य तथा नीचेकी अन्तर कृष्टिसे दूसरी अन्तर कृष्टिके मध्य जो अन्तर पाया जाता है उसे क्रमसे सग्रह कृष्ट्यन्तर तथा कृष्ट्यन्तर कहते हैं, सो

लोभसे लेकर क्रोधपर्यन्त स्वस्थान अन्तर अनन्तगुणे क्रमको लिए हुए हैं। उससे बादर संग्रह कृष्टियोंका अन्तर अनन्तगुणा है। सो इसका विशेष विचार मूलमें किया ही है, इसलिए इसे वहाँसे जानना।

ऐसा नियम है कि प्रति समय यह जीव संग्रह कृष्टियोंके नीचे नई पूर्व कृष्टियोको करता है और पूर्वमें की गई कृष्टियोके पार्श्वमें उनके समान अनुभागवाली कृष्टियोको भी करता है। जो अनन्तगुणी हीन शक्तिवाली कृष्टियाँ नीचे की जाती हैं उनकी अधस्तन् कृष्टि संज्ञा है और जो पार्श्वमें पूर्व कृष्टियोके समान शक्तिवाली की जाती हैं उनकी पार्श्व कृष्टि संज्ञा है।

इस विधिसे दूसरे समयमें जो संग्रह कृष्टियाँ और उनके मध्य अन्तर संग्रह कृष्टियाँ की जाती हैं वे सब मिलकर तेईस प्रकारकी हो जाती है तथा इनके अतिरिक्त जो अन्तर कृष्टियाँ होती हैं इन सबमें होनेवाले प्रदेश विन्यासके क्रमसे ऊँटकी रचना बन जाती है। जैसे ऊँटकी पीठ पिछले भागमें ऊँची होकर पुन मध्यमें नीची होती है तथा आगे भी नीच-उच्चरूपसे जाती है उसी प्रकार यहाँ भी प्रदेशपुज आदिमें बहुत पुन थोडा होता है तथा पुन सन्धियोंमें थोडा बहुत होकर निक्षिप्त होता है, इसलिए दिये जानेवाले प्रदेशपुजकी श्रेणि उष्ट्रकूटके समान हो जाती है। यहाँ दूसरे समयमें जैसे कृष्टियोमें दिये जानेवाले प्रदेश-पुजके तेईस उष्ट्रकूट बन जाते है उसी प्रकार आगे भी कृष्टिकरणके सभी कालोमें जानना चाहिए। किन्तु सर्वत्र सब मिलाकर द्रव्यको देखने पर वह लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिकी नवीन जघन्य कृष्टिसे लेकर क्रोधकी तीसरी संग्रह कृष्टिकी पुरातन अन्त कृष्टितक अनन्तवाँ भाग घटता क्रम लिए दिखलाई देता है।

कृष्टियो और स्पर्धकोंमें यह अन्तर है कि प्रथम कृष्टिसे लेकर अन्त कृष्टि तक प्रत्येक कृष्टिका अनुभाग उत्तरोत्तर अनन्तगुणा है। परन्तु स्पर्धकोमें प्रथम वर्गणासे लेकर अन्तिम वर्गणा तक वह विशेष अधिक, विशेष अधिक पाया जाता है।

यह जीव जिस कालमें कृष्टियोकी रचना करता है उस कालमें उसके पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोका उदय रहता है और इस प्रकार जब क्रोध सज्वलनकी प्रथम स्थितिमें उच्छिष्टावलिमात्र काल शेष रहता है तब कृष्टिकरणके कालको समाप्त करता है। तदनन्तर समयमें वह क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी प्रथम स्थिति करके मध्यकी कृष्टियोको वेदता है। वहाँ क्रोधके उच्छिष्टावलिमात्र जो निषेक शेष रहे उन्हें तो वह परमुखसे वेदता है और जो दो समय कम दो आवलिप्रमाण नवकबन्ध शेष रहता है उसे कृष्टिरूपसे परिणाम कर नाश करता है।

कृष्टियोको रचनेवाला तो लोभसे लेकर क्रोधतक क्रम लिए कृष्टियोंकी रचना करता है, किन्तु कृष्टियोका वेदक पहले क्रोधकी संग्रहकृष्टिको वेदता है, फिर मान, माया और लोभकी संग्रहकृष्टियोको वेदता है। उसमें भी वेदनकालमें जो क्रोधकी तीसरी संग्रहकृष्टि है उसे पहले वेदता है। उसके बाद दूसरी और पहली संग्रह कृष्टियोंको वेदता है। इस प्रकार क्रोधकी तीसरी कृष्टिको वेदता हुआ यह जीव प्रथम समयमें सर्व कृष्टियोके असख्यातवें भागका नाश करता है, दूसरे समयमें उसके असख्यातवें भागका नाश करता है। इस प्रकार उपान्त्य समय तक जानना चाहिए। यहाँ कौन कृष्टियाँ बन्ध-उदयसे रहित है, किन कृष्टियोका उदय होता है और कौन कृष्टियाँ बन्ध उदय दोनों सहित है आदि, सो इसका विचार मूलसे कर लेना चाहिए।

कृष्टियोके संक्रमणके विषयमें यह नियम है कि विवक्षित कषायकी प्रथमादि संग्रह कृष्टियोका द्रव्य अपनी अपनी संग्रहकृष्टियोंमें और अगले कषायकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें संक्रमित होता है। मात्र लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिका द्रव्य लोभकी द्वितीय और तृतीय संग्रहकृष्टियोंमें तथा लोभकी द्वितीय संग्रहकृष्टिका द्रव्य

उसीकी तीसरी सग्रहकृष्टिमें सक्रमित होता है तथा लोभकी तृतीय सग्रहकृष्टिका द्रव्य अन्य किसीमें सक्रमित नही होता।

यह कृष्टिवेदक जीव प्रत्येक समयमें बारह कृष्टियोके अग्र भागसे असख्यातवें भागप्रमाण कृष्टियोका नाश करता है। यहाँ काण्डकघात नही होता तथा यहाँ जिस द्रव्यका सक्रमण होता है उसके असख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यसे अघस्तन अपूर्व कृष्टियोको करता है तथा असख्यात बहुभागप्रमाण जो सक्रमण द्रव्य शेष रहता है उसे अन्तर कृष्टियोको देता है। बन्ध द्रव्यके सम्बन्धमें यह व्यवस्था है कि बन्धद्रव्यका अनन्तवें भागप्रमाण द्रव्य पूर्व कृष्टियो सम्बन्धी है, शेष अनन्त बहुभागप्रमाण द्रव्य अन्तर कृष्टियोको प्राप्त होता है। क्रोधकी प्रथम सग्रहकृष्टिमें कषायसम्बन्धी सक्रमण द्रव्यका अभाव होनेसे मात्र उसके बन्धद्रव्यसे अपूर्व कृष्टियोको करता है तथा शेष ग्यारह प्रकारकी सग्रह कृष्टियोमें सक्रमण और बन्ध दोनो प्रकारका द्रव्य पाया जाता है, इसलिए यथा सम्भव उन दोनोसे अपूर्व कृष्टियोको करता है। एक नियम यह भी है कि जिस समय जिस कषायकी जिस कृष्टिका वेदन करता है उस समय उस कषायकी उसी कृष्टिको बाँधनेके साथ शेष कषायोकी प्रथम कृष्टिको बाँधता है। तथा जिस समय जिस कृष्टिको वेदता है उस समय उसकी प्रथम स्थितिमें एक समय अधिक आवलिप्रमाण स्थिति शेष रहनेपर उसकी जघन्य उदीरणा होनेके साथ उसका अन्तिम समयवर्ती वेदक होता है। और इस प्रकार जब लोभसज्वलनकी द्वितीय सग्रहकृष्टिमें एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण काल शेष रहता है तब यह जीव अनिवृत्तिकरणको समाप्त करनेके साथ लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिको सूक्ष्म कृष्टिरूप परिणमाता है। इस समय मात्र एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवकबन्ध और एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण उच्छिष्ट द्रव्य बादर कृष्टिरूप शेष रहता है सो अगले समयमें सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानको प्राप्त होकर उस कालके भीतर उक्त दोनो प्रकारके द्रव्यको क्रमसे स्तिवुक सक्रमण द्वारा सूक्ष्म कृष्टिरूप परिणमाकर उनका अभाव करता है। सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानको प्राप्तकर उसके प्रथम समयमें जो कार्य विशेष प्रारम्भ होते हैं उनका विवरण इस प्रकार है—

(१) सूक्ष्म कृष्टिकी अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थितिके सख्यातवें भागप्रमाण स्थितिका एक स्थितिकाण्डकायाम होता है। (२) मोहके कृष्टिगत द्रव्यकी अनुसमयापवर्तना होने लगती है। (३) ज्ञानावरणादि कर्मोंका स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात पूर्ववत् चालू रहता है। तथा यहाँ नवीन उदयादि गुणश्रेणिकी रचना करता है। ऐसा करते हुए अपकर्षित किये गये द्रव्यके एक भागको गुणश्रेणिमें निक्षिप्त करता है, शेष रहे बहुभागप्रमाण द्रव्यको अन्तरके अन्तिम भागसे लेकर ऊपर द्वितीय स्थितिमें यथाविधि निक्षिप्त करता है।

इस विधिसे सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानका जब सख्यात बहुभाग प्रमाण काल व्यतीत होकर एक भागप्रमाण काल शेष रहता है तब अन्तिम स्थितिकाण्डकको ग्रहण करनेके साथ सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानके कालके बराबर गुणश्रेणि करता है और इस प्रकार सूक्ष्मलोभका वेदन करता हुआ यह जीव क्रमसे इस गुणस्थानके अन्तिम समयको प्राप्त होकर मोहनीयका सर्वथा अभाव करता है।

तदनन्तर समयमें क्षीणमोहको प्राप्त होकर यह जीव उस गुणस्थानके प्रथम समयमें ज्ञानावरणादि छह कर्मोंकी गुणश्रेणि रचना साधिक क्षीणमोहके कालप्रमाण करता है। यहाँ मात्र सातावेदनीयका ईर्यापथ बन्ध होता है जिसका काल एक समय है। यहाँ घाति कर्मोके स्थितिकाण्डकका प्रमाण एक मुहूर्तमात्र और अघाति कर्मोंके स्थितिकाण्डकका प्रमाण शेष रही स्थितिके असख्यात बहुभागप्रमाण है। जिस समय यह जीव घाति कर्मोके अन्तिम स्थितिकाण्डकका पतन करता है उस समय इसकी कृतकृत्य छद्मस्थ सज्ञा होती है। इसके आगे घाति कर्मोंकी उदयावलिके बाहर स्थित स्थितिकी उदीरणा तब तक करता है जब जाकर उनकी स्थिति उदयावलिके बाहर स्थित रहती है। उदयावलिमें प्रवेश करनेपर क्रमसे उदय होकर उसका

विच्छेद होता है। इस गुणस्थानमें जिसके निद्रा और प्रचलाका उदय है उसके उनकी उपान्त्य समयमें उदय व्युच्छित्ति हो जाती है। शेष १४ घाति प्रकृतियोकी अन्तिम समयमें व्युच्छित्ति होती है। वेद तीन है और कषाय चार है, सो इनके द्विसयोगी भग बारह हाते है। इनमेंसे किसी एक वेद और किसी एक कषायके उदयसे जीव क्षपकश्रेणि पर चढनेका अधिकारी है। इस दृष्टिसे होनेवाली विशेषताको मूलसे जान लेना चाहिए।

इसके बाद चार घातिकर्मोकी उदय और सत्त्व व्युच्छिति हो जानेके कारण यह जीव सर्वज्ञ-सर्वदर्शी सयोगी जिन हो जाता है। इसके प्रथम समयमें ही चार घाति कर्मोका अभाव होनेसे अनन्त चतुष्टयकी युगपत् प्राप्ति होती है। ऐसा नियम है कि ज्ञानावरणके समूल नाशसे केवलज्ञानकी प्राप्ति होती है। दर्शनावरणके समूल नाशसे केवलदर्शनकी प्राप्ति होती है। वीर्यान्तरायके नाशसे अनन्त वीर्यकी प्राप्ति होती है और नौ नोकषायो तथा शेष चार अन्तरायोके नाशसे अनन्त सुखकी प्राप्ति होतो है। यह पहले ही बतला आये है कि मोहकी सात प्रकृतियोके क्षयसे क्षायिक सम्यदर्शनकी प्राप्ति होती है और शेप चारित्रमोहनीयकी अप्रत्याख्यानावरण आदि बारह प्रकृतियोके क्षयसे क्षायिक चारित्रकी प्राप्ति होती है।

नौ नोकषाय और दानान्तराय आदि चार अन्तरायोके उदयका बल पाकर ससारी जीवोके वेदनीयके उदयजन्य जो इन्द्रियज सुख-दुख देखे जाते है उनका इनके सर्वथा अभाव हो जाता है, क्योकि उन कर्मोका बल न मिलनेसे वेदनीयकर्म अपना कार्य करनेमें अक्षम है। इसके सातावेदनीयका एक समयवाला स्थितिबन्ध होनेसे सातावेदनीय निरन्तर उदय प्रकृति होनेके कारण जिस समय असातावेदनीयका उदय होता है वह सातारूप परिणम जाता है। इनके परमौदारिक शरीर होता है, क्योकि एक तो बारहवें गुणस्थानके अन्तिम समय तक इनके शरीरमें रहनेवाले निगोद जीवोका अभाव हो जाता है, दूसरे उनके गलित होकर प्रति समय शेष रही स्थितिप्रमाण दिव्यतम नवीन नोकर्म वर्गणाओका बन्ध होता रहता है। इतनी विशेषता है कि समुद्घातरूप अवस्थामें दोनो प्रतर और लोकपूरणकालके भीतर तीन समयतक इन नोकर्म वर्गणाओका बन्ध नही होता। सयोगी जिनके शेष कालमें उक्त वर्गणाओका निरन्तर बन्ध होता रहता है।

जब आयुमें अन्तर्मुहूर्तकाल शेष रहता है तब शेप तीन अघाति कर्मोकी स्थितिको आयुकर्मकी स्थितिके बराबर करनेके लिए यथासम्भव केवली जिन समुद्घात करते है। दण्ड, कपाट, प्रतर और लोक-पूरणके भेदसे वह चार प्रकारका है। इसके करने और समेटनेमें ८ समय लगते है। जिस समय केवली जिन समुद्घातके सन्मुख होते है तब आवर्जितकरण होता है। इसका काम केवली जिनको समुद्घातके सन्मुख करना है।

केवली जिनके स्वस्थान अवस्थाके रहते हुए तथा आवर्जित करणके कालमें स्थिति और अनुभागका घात नही होता। यहाँ उदयादि अवस्थित गुणश्रेणि आयाम है तथा गुणश्रेणिका द्रव्य भी अवस्थित रहता है। मात्र स्वस्थान केवलीके स्वस्थान गुणश्रेणि आयामसे आवर्जितकरण सम्बन्धी गुणश्रेणि आयाम सख्यात गुणा हीन होता है। स्वस्थान गुणश्रेणिके कालमें जितने द्रव्यका अपकर्षण होता है उससे आवर्जितकरणके कालमें असख्यातगुणे द्रव्यका अपकर्षण होता है। इसका कारण अवशिस्ट रहे अन्तर्मुहूर्त प्रमाण आयुकर्मको जानना चाहिए। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि आवर्जितकरणके सम्पन्न होनेके बाद केवली जिन केवलिसमुद्घात क्रिया सम्पन्न करते है। आवर्जितकरण गुणश्रेणिका काल आवर्जितकरण करनेके समयसे लेकर शेष रहा सयोगी जिनका काल और अयोगी जिनके कालका सख्यातवाँ भाग इन दोनोको मिलानेपर जितना होता है उतना होता है।

समुद्घात करते समय प्रारम्भके चार समयोमें एक-एक समयके भीतर आयुकर्मके विना शेप तीन अघाति कर्मोकी अवशिष्ट रही स्थितिके असख्यात बहुभागका घात करता है और अप्रशस्त कर्मोके शेप रहे अनुभागके अनन्त बहुभागका घात करता हैं। इसके आगे स्थितिकाण्डक और अनुभागकाण्डक अन्तर्मुहूर्त-प्रमाण होता है। जिस समय यह जीव लोकपूरण क्रिया सम्पन्न करता है उस समय योगकी एक वर्गणा होती हैं। इसका तात्पर्य यह हैं कि इसके पहले आत्मप्रदेशोमें योगके अविभाग प्रतिच्छेद हीनाधिक होते है यहाँ वे सभी प्रदेशोमें समान हो जाते हैं सो ये सूक्ष्म निगोदिया जोवके जघन्य योगसम्बन्धी जघन्य वगणासे भी हीन होते है जो मात्र एक समय तक रहते है। इसके वाद पुन हीनाधिक हो जाते हैं।

केवलिसमुद्घातके बाद केवली जिन योगनिरोधकी क्रिया सम्पन्न करते हैं। पहले जो वादर मन, वचन, काय होते हैं उन्हे यथाविधि सूक्ष्म करते हैं और इस प्रकार क्रमसे मनोयोग और वचनयोगका तथा बादर काययोगका अभावकर वे सूक्ष्म काययोगी होकर सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाति ध्यानको प्राप्त होते हैं। तथा जिस समय सूक्ष्म काययोगका प्रारम्भ होता है उसी समयसे लेकर पहले योगसम्वन्धी पूर्व स्पर्धकोसे नीचे अन्तर्मुहूर्त काल तक श्रेणिके असख्यातवें भागप्रमाण अपूर्व स्पर्धकोकी रचना करते है। इनकी प्रथमादि समयोमें किस प्रकार रचना होती हैं इसे मूलसे जान लेना चाहिए। परन्तु जीवप्रदेशोके अपकर्पणकी विधि इससे उलटी है। अर्थात् योगको उत्तरोत्तर कम करनेके लिए प्रथम समयमें जितने जीवप्रदेशोका अपकर्षण करते हैं, द्वितीयादि समयोमें उत्तरोत्तर असख्यातगुणे जीवप्रदेशोका अपकर्षण करते हैं। ये योगसम्वन्धी सभी अपूर्व स्पर्धकोके समान जगश्रेणीके असख्यातवें भागप्रमाण होते हैं।

इसके बाद वह अपूर्व स्पर्धकोसे नीचे जगश्रेणिके असख्यातवें भागप्रमाण सूक्ष्म कृष्टियोको करते हैं जो अपूर्व स्पर्धकोसे असख्यातगुणी हीन शक्तिवाली होती है। जिस समय ये कृष्टिकरणकी क्रिया सम्पन्न करते है उसके अनन्तर समयमें दोनो प्रकारके स्पर्धकोका अभावकर अर्थात् उन्हें सूक्ष्म कृष्टिरूप करके सूक्ष्म कृष्टिगत योगी हो जाते हैं। इस प्रकार सूक्ष्म कृष्टिगत योगी होकर प्रथम समयमें सब कृष्टियो के असख्यातवें भागप्रमाण नीचेकी और ऊपरकी कृष्टियोको ।मध्यम कृष्टिरूप परिणमाकर नष्ट करते हैं तथा बहुभागप्रमाण कृष्टियोको उदय द्वारा नष्ट करते हैं। इसके बाद उत्तरोत्तर विशेष हीन कृष्टियोका उदय होता है और इस प्रकार सूक्ष्म कृष्टिके वेदक सयोगी जिन तीसरे सूक्ष्मक्रिया अप्रतिपाति ध्यानको ध्याते हैं। जब सयोग गुणस्थानका अन्तिम समय प्राप्त होता है तब जो कृष्टियोके असख्यात बहुभागप्रमाण मध्यकी कृष्टियाँ शेप रहती है उन सबका नाश करते हैं।

जिस समय सयोगी गुणस्थानका अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहता है उस समय वेदनीय, नाम और गोत्र कर्मके अन्तिम स्थितिकाण्डकको नाश करनेके लिए ग्रहण करते है। इसमें सयोगी और अयोगी गुणस्थानके कालके जितने समय शेष रहते है तत्प्रमाण निषेकोको छोडकर गुणश्रेणिशीर्ष सहित सम्पूर्ण उपरिम स्थितिको ग्रहण करते है। इस प्रकार उक्त कर्मोकी स्थितिको घटाते हुए अयोगी जिनके प्रथम समयमें आयुकर्मके समान शेष कर्मोकी स्थिति शेष रह जाती है। तब ये अन्तर्मुहूर्तकाल तक शीलके ईशपनेको प्राप्त होकर समुच्छिन्नक्रियानिवृत्ति नामके ध्यानको ध्याते है। और इस प्रकार यह जीव सब कर्मोंसे विप्रमुक्त होकर सिद्धिगतिको प्राप्त हो जाता हैं। इस सिद्धिगतिको प्राप्त हुए वे सिद्ध भगवान् हमें उत्कृष्ट सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरित्र लब्धिके साथ उत्कृष्ट समाधि प्रदान करें।

यह लब्धिसार ग्रन्थका सक्षिप्त सार है। इसमें उन विषयोको कम स्पर्श किया गया है जिनके लिए बहु वक्तव्य अपेक्षित था। हो सकता है कि इसमें कही कोई त्रुटि रह गई हो तो जिज्ञासु जन मूल आगमसे मिलाकर उसका स्वाध्याय करेंगे और त्रुटियोंके लिए हमें क्षमा करेंगे।

२. ग्रन्थ और ग्रन्थकार

वाचना द्वारा प्राप्त आगम परम्परा

भगवान् महावीरके वाद तीन अनुबद्ध केवली और पाँच श्रुतकेवली हुए हैं। अन्तिम श्रुतकेवली भगवान् भद्रबाहु थे। इनके जीवनकाल तक समग्र अग-पूर्वज्ञानकी परम्पराका महागगा नदीके प्रवाहके समान विच्छेद नही हुआ था। इसके वाद उसमें क्रमसे कमी आती गई, जिसमें ६८३ वर्ष लगे। इस ६८३ वर्षकी परम्पराका उल्लेख त्रिलोकप्रज्ञप्ति तथा घवला, जयधवला आदि ग्रन्थोमें अनेक आचार्योंने किया है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि आचार्य वीरसेनने घवलामें ६८३ वर्पप्रमाण कालगणनाका निर्देश नही किया है। वहाँ यह भी वतलाया है कि इस श्रुत विच्छेदकी कडीमें श्रुतका समूल विच्छेद कभी नही हुआ, उसका एक देश ज्ञान अविकल बना रहा[1]। इस कालमें जितना भी परम्परानुमोदित श्रुत लोकमें अवस्थित है यह उसीका सुपरिणाम है।

ऐसे ही मूल श्रुतके ज्ञाता जितने भी आचार्य हमारी दृष्टिमें आये है उनमेंसे प्रकृतमें दो प्रमुख हैं—एक घरसेन और दूसरे गुणधर। घरसेन सोरठ देशके गिरिनारकी चन्द्रगुफामें घ्यान-अध्ययन करते हुए रहते थे[2]। लगता है कि जन्मसे लेकर इनका पूरा जीवन मुक्यतया सौराष्ट्रमें ही व्यतीत हुआ था।

आचार्य वीरसेनने घवला (पु० १, पृ० ६८ आदि) में षट्खण्डागमके समुद्धारका इतिहास लिपिवद्ध किया है उससे कई तथ्योपर प्रकाश पडता है, यथा—

१ उस समय दक्षिणापथ और उत्तरापथके जितने भी दिगम्बर मुनिसघ थे उनमें परस्पर सम्पर्क बना हुआ था।

२ उसे और मजबूत करनेके लिए ही दक्षिणापथके आचार्योंका आन्ध्र प्रदेशमें वहनेवाली वेण्णा नदीके तटपर एक सम्मेलन हुआ था।

३ उसी सम्मेलनमें सम्मिलित हुए आचार्योंको लक्ष्यकर गिरिनारकी चन्द्रगुफावासी घरसेन आचार्यंने एक पत्र लिखा था, जिसके द्वारा ग्रहण-धारण करनेमें समर्थ योग्य दो साधुओको भेजनेका सकेत किया गया था। इससे विदित होता हैं कि गौतम गणघरसे लेकर वाचनाका जो क्रम चालू था वह गुरुपरम्परासे उन तक आगे भी बराबर चालू रहा।

प्रश्न यह है कि आचार्य घरसेनने वाचना देनेके लिए दक्षिणसे ही योग्य दो साधुओको क्यो बुलाया था, क्या सौराष्ट्र या उसके आस-पासके प्रदेशमें वाचना ग्रहण करनेमें समर्थ योग्य साघुओका सर्वथा अभाव हो गया था, यदि हाँ तो क्यो ? यह एक प्रश्न है जिसकी ओर अभी तक किसी भी इतिहास लेखकका घ्यान नही गया है। दक्षिण-प्रतिपत्ति पवाइज्जमाण-आचार्य परम्परासे आई हुई है और उत्तर प्रतिपत्ति अपवाइज्जमाण आचार्य परम्परासे आई हुई नहो है इसके वीज इसमें छिपे हुए तो है ही। साथ ही इससे और भी कई तथ्योपर प्रकाश पडना सम्भव है।

षट्खण्डागमकी उपलब्ध टीका घवला आदि ग्रन्थोमें ६८३ वर्ष तक मूल अग पूर्व सम्बन्धी श्रुत-परम्परा क्रमिक रूपसे न्यून होते जानेका जो निर्देश किया गया है उसे उत्तरोत्तर किस काल तक और

१ घवला पु० १, पृ० ६५।
२ घवला पु० १, पृ० ६८।

कौन-कौन आचार्य अपने पूर्ववर्ती गुरुसे अविकालरूपमें कितनी वाचना ग्रहण करनेमें समर्थ हुए मात्र इस तथ्यकी ओर ही सकेत करता है। इससे पुरुषोलो क्रममे मूल आगममें वाचनाक्रमसे किस प्रकार प्रामाणिकता बनी रही यह स्पष्ट हो जाता है।

बौद्ध परम्परामें जो सगीतिके और श्वेताम्बर परम्परामें जो वाचनाके उल्लेख दृष्टिगोचर होते हैं, दिगम्बर परम्परा अनेक आचार्यो द्वारा किये गये अपनी-अपनी स्मृतिके द्वारा सकलनरूप वैसी वाचनाको स्वीकर न कर गुरुपरम्परासे मिलनेवाली क्रमिक वाचनाको ही स्वीकार करता है। इससे दिगम्बर परम्परामें वर्तमान कालमें उपलब्ध होनेवाले गुरुपरम्परानुसारी आगमकी प्रामाणिकता सुस्पष्ट हो जाती है।

इस विधिसे देखनेपर मालूम होता है कि धरसेन और गुणधरको अपने पूर्ववर्ती गुरुओंसे जो वाचना मिली थी वही धरसेन आचार्यने पुष्पदन्त और भूतवलि आचार्यको दी और उस आधारपर पुष्पदन्त और भूतबलिने षट्खण्डागमकी रचना की। तथा गुणधर आचार्यने स्वय कपायप्राभृतकी रचनाकर उसे क्रमसे आयमक्षु और नागहस्तिको समर्पित किया। जिनसे क्रमश वाचना लेकर आचार्य यतिवृषभने चूर्णिसूत्र लिखे।

वर्तमानकालमें षट्खण्डागम और कषायप्राभृतके अविकल रूपमें पाये जानेका यह सक्षिप्त इतिहास है। षट्खण्डागमपर यद्यपि आचार्य कुन्दकुन्द आदिने अनेक टीकाएँ लिखी, पर वर्तमानमें एकमात्र आचार्य वीरसेन द्वारा लिखित टीका ही उपलब्ध होती है। तथा कषायप्राभृतपर सर्वप्रथम आचार्य यतिवृषभने चूर्णिसूत्र लिखे, उच्चारणाएँ भी अनेक लिखी गई। जिनको सम्मिलितकर वर्तमानमें जयधवला टीका पाई जाती है। अस्तु,

कषायप्राभृत

जैसा कि हम पहले १४ पूर्वोंका सकेत कर आये हैं, पाँचवाँ पूर्व उनमेंसे एक है। उसके वारह वस्तु अधिकार हैं और उसके २० प्राभृत नामक अधिकार है। प्रकृतमें तीसरा पेज्ज-दोसपाहुड (कसायपाहुड) विवक्षित है। इसीको माध्यम बनाकर आचार्य गुणधरने २३३ गाथाओ द्वारा प्रकृत पेज्जदोसपाहुडकी रचना की है।

यद्यपि आचार्य गुणधरने गाथा २ में १५ अधिकारोमें विभक्त १८० गाथाओके बनानेकी प्रतिज्ञा की है, अत कितने ही व्याख्यानाचार्य शेष ५३ गाथाओको नागहस्ति आचार्य कृत मानते हैं। किन्तु जयधवला टीकाके रचयिता आचार्य वीरसेन उनके इस मतसे सहमत नही हैं। उनका कहना है कि यदि ये गाथाएँ गुणधरभट्टारककृत नही मानी जाती तो उन्हें अज्ञताका प्रसग प्राप्त होता है। स्पष्ट है कि आचार्य गुणधरने सभी २३३ गाथाओकी रचना करके भी मात्र पन्द्रह अधिकार सम्बन्धी प्रयोजनीय १८० गाथाओका ही उल्लेख किया है।

कषायप्राभृतमें निर्दिष्ट १५ अधिकारोकी प्ररूपणाके अन्तमें एक चूलिका नामका स्वतन्त्र अधिकार भी उपलब्ध होता है। इसमें सूत्र गाथा सख्या १२ है। उनमेंसे क्षपणासम्बन्धी १० सूत्र गाथाएँ २३३ गाथाओंमेंसे ही ली गई है। प्रारम्भकी और अन्तकी शेष दो सूत्र गाथाएँ नई है। इनके रचयिता आचार्य गुणधर है या अन्य कोई इसका सकेत चूर्णिसूत्रोंसे तो इसलिए नही मिलता, क्योकि इन पर चूर्णिसूत्रोका सर्वथा अभाव है। जयधवला टीकामें अवश्य ही चूलिका अधिकारका स्वतन्त्र अस्तित्व स्वीकार किया गया है। वहाँ लिखा है—

एवमेत्तियण परूवणापवधेण सत्थाणसजोगिकेवलिविसय परूवणाविसेस सरिसमाणिय सपहि एत्थेव चरित्तमोहणीयपुरस्सराण घादिकम्माण खवणाविही समप्पदि त्ति कयणिच्छओ एदस्सेव खवणाहियारस्स चूलियापरूवणट्ठमुवरिमाओ सुत्तगाहाओ पढइ तत्थ ताव पढमा सुत्तगाहा—

इतना निर्देश करनेके बाद चूलिकासम्बन्धी १२ गाथाएँ देकर जयधवलामें उनकी क्रमसे व्याख्या प्रस्तुत की गई है।

प्रारम्भकी और अन्तकी दो गाथा सूत्र इस प्रकार है—

अण-मिच्छ-मिस्स सम्म अट्ठणवुसित्थिवेदछक्क च।
पुवेद च खवेदि हु कोहादीए च सजलणे॥ १ ॥
जाव ण छदुमत्थादो तिण्ह घादीण वेदगो होइ।
अधणतरेण खइया सव्वण्हू सव्वदरिसी य॥ १२॥

लगता है कि इन दो सूत्रगाथाओंके रचयिता भी स्वय गुणधर आचार्य ही है। फिर भी उपसहारात्मक सूत्रगाथाएँ होनेके कारण इन्हें २३३ मूल सूत्रगाथाओ के अतिरिक्त स्वतन्त्र रूपसे नही स्वीकार किया गया है। इसकी पुष्टि चूलिकाके अन्तमें पाये जानेवाले जयधवलाके समाप्तिसूचक इस वचनसे होती है—

तदो चरित्तमोहक्खवणासण्णिदो कसायपाहुडस्स पण्णारसमो अत्थाहियारो समप्पदि त्ति जाणावणट्ठमुवसहारवक्कमाह—चरित्तमोहक्खवणा त्ति समत्ता।

षट्खण्डागम और कषायप्राभृत

यह मूल आगम साहित्य है। इसे आगम इसलिये कहते है, क्यो कि भगवान् आदिनाथसे लेकर १४ पूर्वों और यथासम्भव ११ अगोंमें जो निश्चित तत्त्व व्यवस्था निरूपित की गई और अन्तमें उसी रूपमें जिसकी प्ररूपणा भगवान् महावीरने की वही आचार्य परम्परासे आचार्य धरसेन और गुणधर को प्राप्त हुई। इसे सिद्धान्त कहनेका कारण भी यही है। यह किसीके चिन्तनका फल नही है, क्योकि इस तत्त्वप्ररूपणाकी पृष्ठभूमिमें केवलज्ञानका माहात्म्य है। जितने भी तीर्थंकर जिन हुए उन्होंने कभी भी अपनी कल्पनाओंको उपदेशका माध्यम नही बनाया। केवलज्ञान होनेपर जो वस्तुव्यवस्था ज्ञानमें आई, उसीकी प्ररूपणा की और वही आचार्यपरम्परासे वाचना द्वारा आती हुई इन दोनो परमागमोमें निबद्ध की गई।

षट्खण्डागम जीवस्थानको छोड कर शेप पाँच खण्डो की आधारभूत वस्तु महाकम्मपयडिपाहुड है।[1] तथा कषायप्राभृतकी आधारभूत वस्तु पेज्ज-दोसपाहुड (कसायपाहुड) है। जीवस्थानकी आधारभूत सामग्री अन्य मूल अग-पूर्व भी है।[2]

धरसेन और गुणधर दोनो ही क्रमसे महाकम्मपयडिपाहुड और पेज्जदोसपाहुडके पूर्ण ज्ञाता आचार्य थे। इनमेंसे कौन अल्प ज्ञाता था और कौन अधिक ज्ञाता था, अपनी कल्पित तर्कणाको माध्यम बना कर ऐसा विधान जो कोई भी करता है वह उपहास्यास्पद ही प्रतीत होता है।[3]

---

१ धवला द्वि० आ०, भा० १ पृ० १२६।
२ धवला द्वि० आ० भा० १ पृ० १२४ आदि।
३. भगवान महावीर और उनकी आचार्य परम्परा पृ० २८।

वस्तुस्थिति यह है कि महाकम्मपयडिपाहुडमें आठो कर्मो को माध्यम बना कर प्ररूपणा हुई है और पेज्जदोसपाहुडमें मात्र मोहनीय कर्मको माध्यम बना कर प्ररूपणा हुई है। इसलिए यथासम्भव इन दोनो आगमोकी विषयवस्तुका मूलके अनुसार होना स्वाभाविक है। स्पष्ट है कि आचार्य गुणधरने जो सक्रम, उदय-उदीरणाकी स्वतन्त्र प्ररूपणा की है वह महाकम्मपयडिके आधारसे न करके मात्र पेज्जदोसपाहुडके आधारसे ही की है। यह कैसे माना जाय कि पेज्जदोसदाहुडमें इन अधिकारो की प्ररूपणा नही की गई, अत उन्होने इसे महाकम्मपयडिपाहुडसे लिया है। यह मात्र कल्पना ही है। रहा अल्पबहुत्व अधिकार सो वह दोनो में समान है। अन्तर केवल इतना है कि महाकम्मपयडिपाहुडमें आठ कर्मोको आश्रय बना कर उसकी प्ररूपणा हुई है और पेज्जदोसपाहुडमें मात्र मोहनीय कर्मको आश्रय बना कर उसकी प्ररूपणा हुई है। इसलिये कषाय प्राभृतमें भी इसकी प्ररूपणा पेज्जदोसपाहुडसे ही की गई है ऐसा स्वीकार करना ही तर्कसगत प्रतीत होता है।

एक बात यह भी समझनी चाहिये कि मूल आगयको सक्षिप्तकर विषय विभागके क्रमसे पुस्तकारूढ करते समय यह पुस्तकारूढ करनेवाले आचार्य की इच्छापर निर्भर रहा है कि वह किसे प्राथमिकता दे। देखो कषायप्राभृतमें पहले मोहनीयकर्मके सत्त्वकी प्ररूपणा की गई, बन्धकी नही। जब कि सत्त्वकी प्ररूपणा बन्धके बाद ही होनी चाहिये थी ऐसा कहा जा सकता है। यह भी एक तर्क ही है। इससे यथार्थतापर कोई प्रकाश नही पडता। मेरी रायमें धवला और जयधवलामें जो श्रुतावतारका इतिहास दिया है उसे ही प्रामाणिक माना जाना चाहिये।[1] अपनी बुद्धिसे ऐसे सूक्ष्म विषयपर कुछ भी टीका-टिप्पणी करना आगमानुसारी तर्क सगत प्रतीत नही होता।[2]

चूर्णिसूत्र

आचार्य यतिवृषभने कषायप्राभृत की सूत्रगाथाओपर चूर्णिसूत्रोकी रचना की है। यद्यपि आचार्य गुणधरने पन्द्रह अधिकारोको १८० गाथाओमें निबद्ध करने की प्रतिज्ञा की है। किन्तु इसमें कुल गाथाएँ २३३ हैं। इनके अतिरिक्त चूलिकामें दो गाथाएँ और हैं। इन सबको जयधवलाटीकाकारने गाथा सूत्र कहा है तथा २३३ सूत्रगाथाओमें से ५३ गाथाकी रचना भी स्वय गुणधर आचार्यने ही की है यह भी स्पष्ट किया है।[3]

१२ सम्बन्ध गाथाओके तथा ३५ सक्रामण गाथाओके साथ चूर्णिसूत्रो पर दृष्टिपात करनेसे भी यह स्पष्ट हो जाता है कि ये गाथाएँ गुणधर आचार्य द्वारा ही निबद्ध होनी चाहिये। यथा—'पुव्वम्मि पचमम्मि दु' इस प्रथम गाथा पर 'णाणपवादस्स पुव्वस्स' इत्यादि चूर्णिसूत्र है। 'गाहासदे असीदे' इत्यादि ११ गाथाओके पूर्व 'अत्थाहियारो पण्णारसविहो' यह चूर्णिसूत्र है। तथा उसके बाद चूर्णिसूत्रो द्वारा उनका नाम-निर्देश किया गया है। १३, १४ वी गाथाएँ तो १८० गाथाओमें सम्मिलित है ही और ये गुणधर आचार्य द्वारा निबद्ध हैं ऐसे सबने एक स्वरसे स्वीकार किया है। उनमेंसे १४वी गाथाका अन्तिम पाद 'अद्धापरिमाणणिद्देसो' है। इसके बाद ही अद्धापरिमाणका निर्देश करनेवाली 'आवलिय अणाहारे' इत्यादि छह गाथाएँ निबद्ध की गई है। गुणधर आचार्यके अभिप्रायानुसार १८० गाथाओमें विभक्त जिन पन्द्रह अधिकारोका नाम निर्देश किया गया है उनमें अद्धापरिमाण अधिकार सम्मिलित नही है। ऐसा होते हुए भी स्वय गुणधर आचार्य

---

१ धवला द्वि० आ०, भा० १ पृ० ६८ जयधवला द्वि० आ०, भा० १, पृ० ७९।

२ तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा भा०२, प० २८। कषायपाहुड सुत्त प्रस्तावना पृ १४।

३ जयधवला द्वि० आ०, भा० १, पृ० १६५।

अद्धापरिमाण अधिकारका अलगसे उल्लेख करते हैं। इससे मालूम पडता है कि 'आवलिय अणाहारे' इत्यादि छ गाथाओको भी स्वय गुणधर आचार्यने निबद्ध किया है। अब रही सक्रमणसम्बन्धी ३५ गाथाऐं सो उनपर तो चूर्णिसूत्र हैं ही। इससे भी ऐसा ही ज्ञात होता है कि इन ५३ गाथाओको निबद्ध करनेवाले आचार्य गुणधर ही है। यद्यपि आचार्य वीरसेनने अद्धापरिमाण अधिकारको सब अधिकारोमें समान होनेसे स्वतन्त्र अधिकार माननेका निषेध किया है, पर उससे उक्त तथ्यके फलित करनेमें कोई बाधा नही आती।

यद्यपि कषायप्राभृतकी समाप्ति १५ अधिकारोकी समाप्तिके बाद चूलिका नामक अनुयोगद्धारके समाप्त होने पर ही होती है। फिर भी यतिवषभ आचार्यने अपने चूर्णिसूत्रो द्वारा पश्चिम स्कन्ध नामक अधिकारकी रचना अलगसे की है। इस पर जयधवलकारने जो शका—समाधान किया है उसका अनुवाद अविकल रूपसे हम यहाँ दे रहे हैं—

शका—महाकर्मप्रकृतिप्राभृतके २४ अनुयोगद्धारोसे सम्बन्ध रखनेवाले इस पश्चिम स्कन्ध अधिकार-की इस कषायप्राभृतमें किसलिए प्ररूपणा की जा रही है?

समाधान—ऐसी आशका नही करनी चाहिये, क्योंकि दोनो स्थलोपर उसे स्वीकार करनेमें कोई बाधा नही आती। यथा—

महाकम्यपयडिपाहुडस्स चउवीसाणियोगद्दारेसु पडिबद्धो एसो पच्छिमक्खधाहियारो कधमेत्थ कसायपाहुडे परूविज्जदि त्ति णासका कायव्वा, उहयत्थ वि तस्स पडिबद्धत्तब्भुवगमे बाहाणुवल-भादो।

यह चूर्णिसूत्रोका सामान्य स्वरूप है।

जयधवला टीका

इसमें जहाँ कषायप्राभृतके प्रत्येक गाथा सूत्रका अलगसे विवेचन उपलब्ध होता है वही प्रत्येक गाथा सूत्र पर जितने चूर्णिसूत्र आये हैं उनकी भी स्वतन्त्ररूपसे व्याख्या की गई है। इतना अवश्य है कि अधिक-तर अधिकारोंमें पहले उस उस अधिकार सम्बन्धी सब गाथा सूत्र दे दिये गये हैं। उसके बाद उनपर जितने चूर्णि सूत्रोकी रचना हुई है वे भी व्याख्याके साथ दिये गये है। इसके लिए देखो सक्रम अधिकार, वेदक अधिकार, उपयोग अधिकार आदि। एक चारित्रमोहक्षपणा अधिकार ऐसा अवश्य है जिसमें प्रत्येक गाथासूत्र-पर चूर्णिसूत्र और जयधवला टीका अलग-अलग दी गई है। सम्भवत इस प्रकारकी व्यवस्था चूर्णि-सूत्रकार यतिवृषभ आचार्य द्वारा ही की गई प्रतीत होती है।

लब्धिसार और उसके कर्ता आचार्य नेमिचन्द्र

नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्तीने लब्धिसारकी रचनामें उक्त तीनो सिद्धान्त ग्रन्थोका समानरूपसे उपयोग किया है। इसमें दर्शनमोह उपशमना अधिकारसे लेकर अन्त तकके सभी अधिकारोका विषय सम्मलित किया गया है। उक्त जयधवला टीका ६०००० श्लोक प्रमाण मानी जाती है। इतने महा परिमाणवाले ग्रन्थके एक तिहाई भागको ६५३ गाथाओमें सकलित कर देना यह कोई साधारण काम नही है। उल्लेख-नीय बात यह है कि ऐसा करते हुए कोई विषय छूटने भी नही पाया है। साथ ही जिस विषयका जय-धवला टीकामें विशेष स्पष्टीकरण किया गया है उसे भी लब्धिसारमें निरूपित कर दिया गया है। लब्धिसारमें ऐसी अधिकतर गाथाएँ है जिन्हें समझनेके लिए टीकाकी सहायता लेनी पडती है। नेमिचन्द्र

सिद्धान्त चक्रवर्तीने कब और किस स्थान पर बैठकर इस ग्रन्थकी रचना की इसपर आगे सक्षेपमें प्रकाश डाला जाता है। साथ ही यह भी देखना है कि इनके दीक्षागुरु और शिक्षागुरु कौन थे ? नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्तीकी तीन रचनाएँ प्रसिद्ध है—गोम्मटसार जीवकाण्ड कर्मकाण्ड, लब्धिसार और त्रिलोकसार। क्षपणासार स्वतन्त्र ग्रन्थ नही है, लब्धिसारका ही एक अग है, ये तीनो रचनाएँ ऐसी है जिनसे उनकी बहुज्ञताको समझनेमें सहायता मिलती है, उनमेंसे यहाँ हम लब्धिसारको ही लेते है। उसके अन्तमें प्रशस्तिके रूपमें ये दो गाथाएँ आई है—

वीरिंदणदिवच्छेणप्पसुदेणभयणदिसिस्सेण।
दसण-चरित्तलद्धी सुसूइया णेमिचदेण ॥६५२॥
जस्स य पायपसाएणणतससारजलहिमुत्तिण्णो।
वीरिंदणदिवच्छो णमामि त अभयनदिगुरु ॥६५३॥

आशय यह है कि वीरनन्दि और इन्द्रनन्दिके वत्स, अल्पश्रुतज्ञानी तथा अभयनन्दिके शिष्य नेमिचन्द्रने दर्शन-चारित्र लब्धिको भले प्रकार निबद्ध किया है ॥६५२॥ जिसके चरणप्रसादसे अनन्त ससार समुद्रको पार किया उन अभयनन्दिगुरुको मैं वीरनन्दि और इन्द्रनन्दिका वत्स नमस्कार करता हूँ ॥६५३॥

इनमेंसे प्रथम गाथासे तो यही स्पष्ट होता है कि नेमिचन्द्र आचार्य वीरनन्दि और इन्द्रनन्दिसे छोटे थे तथा अभयनन्दिके शिष्य थे। कैसे शिष्य थे इसका पता दूसरी गाथाके पूर्वार्धसे लगता है। नेमिचन्द्रने अभयनन्दिको ससार समुद्रसे पार करनेवाला कहा है। इससे मालूम पडता है कि नेमिचन्द्रने अभयनन्दिसे दीक्षा ली थी। तथा दूसरी गाथामें पुन इस बातको दुहराया गया है कि नेमिचन्द्र वीरनन्दि और इन्द्रनन्दिसे छोटे थे। मेरी समझमें नेमिचन्द्रने स्वयको वीरनन्दि और इन्द्रनन्दिका वत्स कहा है उसका भी तात्पर्य यही है।

अब देखना यह है कि उन्होने दोनो मूल सिद्धान्त ग्रन्थोकी वाचना किससे ली थी, क्योकि उन्होने दोनो सिद्धान्त ग्रन्थोके आधारसे यथासम्भव गोम्मटसार जीवकाण्ड-कर्मकाण्ड और लब्धिसारकी रचना की है। लब्धिसारसे तो इसपर विशेष प्रकाश नही पडता। हाँ गो० कर्मकाण्डसे इस विषयका समाधान हो जाता है। वहाँ लिखा है—

जत्थ वरनेमिचदो महणेण विणा सुणिम्मलो जादो।
सो अभणणदिणिम्मलसुओवही हरउ पाणमल ॥४०८॥

जिसका आश्रय पाकर उत्कृष्ट नेमिचन्द्र बिना मथन किये अत्यन्त निर्मल हो गये वह अभयनन्दिद्वारा प्ररूपित निर्मल श्रुतरूपी सागर हमारा पापमल हरो ॥४०८॥

यद्यपि कर्मकाण्ड गाथा ७८५ में इन्द्रनन्दिको श्रुतसागरमें पारगत कहनेके साथ गुरु भी कहा गया है। पर मेरी समझमें यहाँ पर गुरु शब्द बडप्पनके अर्थमें ही प्रयुक्त हुआ है। दक्षिणमें ऐसी प्रथा भी रही है कि जो सहपाठी होनेके साथ अपनेसे बडा हो उसे गुरु शब्द द्वारा सम्बोधित करनेकी परिपाटी रही है। इस बातका समर्थन गो० कर्मकाण्डकी इस गाथासे होता है—

वरइदणदिगुरुणा पासे सोऊण सयलसिद्ध त।
सिरिकणयणदिगुरुणो सत्तट्ठाण समुद्दिट्ठ ॥३९६॥

उत्कृष्ट इन्द्रनन्दि गुरुके पास समस्त सिद्धान्तको सुनकर श्री कनकनन्दि गुरुने सत्त्वस्थानकी प्ररूपणा की ॥३९६॥

अथवा यह भी हो सकता है कि नेमिचन्द्रने प्रमुखरूपमें अभयनन्दिसे वाचना ली होगी और विशेष हृदयगम करनेके अभिप्रायसे इन्द्रनन्दिको माध्यम बनाकर भी सिद्धान्त ग्रन्थोका स्वाध्याय किया होगा। सत्त्वस्थानको प्ररूपणाका सम्बन्ध कनकनन्दिसे आता है और इस बातको ध्यानमें रखकर ही उन्होने कनकनन्दिको भी गुरु कहना मान्य रखा होगा। पर अभी यह बात विचारणीय है कि सत्त्वस्थानको ग्रन्थ रूप किसने दिया, क्योकि जहाँ एक ओर नेमिचन्द्र आचार्य सत्त्वस्थानकी प्ररूपणाका श्रेय कनकनन्दिको देते हैं वही दूसरी ओर वे यह भी कहते हैं कि इस प्रकार विस्तारपूर्वक सत्त्वस्थानका मैंने सम्यक् वर्णन किया। जो इसे पढता है, सुनता है और अभ्यासकर हृदयगम करता है वह मोक्षसुखका भोक्ता होता है। यथा—

एव सत्तट्ठाण सवित्थर वण्णिय मए सम्म।
जो पढइ सुणइ भावइ सो पावइ णिव्वुदि सोक्ख ॥३९५॥

सत्त्वस्थानकी स्वतन्त्र प्रतियाँ आराके जैन सिद्धान्त भवनमें उपलब्ध है। उनको सावधानीसे देखकर और उनका गो० कर्मकाण्डके सत्त्वस्थान प्रकरणसे मिलान करके ही यह निश्चय किया जा सकता है कि इस प्रकरणके सकलनमें किसका कितना योगदान है।

कनकनन्दिके गुरु इन्द्रनन्दि थे यह गो० कर्मकाण्डकी गाथा ३९६से ज्ञात होता है। उसकी सस्कृत टीकामें इन्द्रनन्दिको सूरि कहनेके साथ भट्टारक भी कहा गया है। यह सस्कृत टीका केशववर्णीकृत कर्णाटक वृत्तिका लगभग रूपान्तर है, इसलिए बहुत सम्भव है कि अपनी कर्णाटक वृत्तिमें केशववर्णीने भी इन्द्रनन्दिको भट्टारक समझ बूझकर लिपिबद्ध किया होगा। हो सकता है कि १०-११ वी शताब्दिमें नग्न भट्टारकोकी परम्परा प्रचलित हो गई हो। जो कुछ भी हो, यह विचारणीय अवश्य है। इससे कई तथ्योपर बहुत कुछ प्रकाश पडना सम्भव है। ३९६ गाथाकी सस्कृत टीका इस प्रकार है—

सूरिमतल्लिकाश्रीमदिन्द्रनन्दिभट्टारकपार्श्वे सकलसिद्धान्त श्रुत्वा श्रीकनकनन्दिसिद्धान्तचक्रवर्तिभि सत्त्वस्थान सम्यक् प्ररूपितम्।

इस प्रकार पूर्वोक्त विवेचनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती उसी समयके आचार्य है जब अभयनन्दि, वीरनन्दि, इन्द्रनन्दि और कनकनन्दि आदि मनीषी इस भूमण्डलको अपनी उपस्थितिसे अलकृत कर रहे थे। इन सब आचार्योका काल विक्रमकी ११वी शताब्दि है, अत इस हिसाबसे इन्हें भी विक्रमकी ११वी शताब्दिका समझना चाहिये। इस विषयमें विशेष स्पष्टीकरण अन्यत्र से जानना चाहिये।

अब देखना यह है कि उन्होने किस स्थान पर बैठकर सिद्धान्तादि ग्रन्थोकी रचना कर करणानुयोगकी श्रीवृद्धिमें चार चाँद लगाये है। उन्होने स्वय तो इस सम्बन्धमें कुछ लिखा नही। परन्तु कर्मकाण्डके अन्तमें जहाँ भगवान् बाहुबलिके उत्तुग जिन बिम्बका सम्मानके साथ उल्लेख किया गया है वही श्री वीरमार्तण्ड चामुण्डरायद्वारा निर्मापित श्री जिनमन्दिरका भी उल्लेख किया है। इससे प्रतीत होता है कि उन्होने अपनी गोम्मटसार, लब्धिसार आदि ग्रन्थोकी रचनाके लिए यही स्थान उपयुक्त समझा होगा।

लब्धिसारवृत्ति और उसके कर्ता

वर्तमान समयमें लब्धिसारपर चारित्र मोहउपशमना अधिकार तक ही एक वृत्ति पाई जाती है। वृत्तिका प्रारम्भ करते हुए ये दो अनुष्टुप् छन्द उपलब्ध होते हैं—

जयन्त्वन्वहमर्हन्त सिद्धा सूर्युपदेशका ।
साधवो भव्यलोकस्य शरणोत्तममगलम् ॥१॥
श्रीनागार्यतनूजातशान्तिनाथोपरोधत ।
वृत्तिर्भव्यप्रबोधाय लब्धिसारस्य कथ्यते ॥२॥

प्रथम छन्दमें पञ्च परमेष्ठीका जय-जयकार कर भव्य जीवोके लिए वे शरणभून, उत्तम और मगलस्वरूप है यह सूचित किया गया है। तथा दूसरे छन्दमें श्रीनागार्यके सुपुत्र शान्तिनाथकी प्रेरणासे भव्य जीवोको सम्यग्ज्ञानकी प्राप्तिके निमित्त लब्धिासारग्रन्थको वृत्तिके निर्माणकी प्रतिज्ञा की गई है।

इन दोनो छन्दोंके बाद जो उत्थानिका दी गई है उससे ऐसा भी प्रतोत होता है कि लब्धिसारकी रचना सम्यकत्व चूडामणि चामुण्डरायके प्रश्नके अनुसार हुई है।

इन दोनो छन्दोमेंसे अन्तिस छन्द और उत्थानिका ऐसी है जिनसे लब्धिसारवृत्तिके निर्माण पर अशत प्रकाश पडता है। किन्तु इस वृत्तिका रचयिता कौन है यह स्पष्ट नही होता। गोम्मटसार कर्मकाण्डके अन्तमें जो प्रशस्ति उपलब्ध होनो है उससे ऐसा प्रतीत होता है कि मूलसघ कुन्दकुन्दाम्नायी सूरत पट्टके[1] भट्टारक श्री ज्ञानभूषणके शिष्य और उनके उत्तराधिकारी भट्टारक प्रभाचन्द्रके द्वारा दिये गये सूरि या आचार्य पदसे अलकृत श्री नेमिचन्द्रने कर्णाटकीय वृत्तिके अनुसार मात्र गोम्मटसार जीवकाण्ड-कर्मकाण्ड की वृत्तिकी ही रचना की थी और उसका नाम तत्वप्रदीपिका रखा था। श्री केशववर्णीने जिस कर्णाटक वृत्तिकी रचना की है वह भी गोम्मटसार जीवकाण्ड-कर्मकाण्ड तक ही सीमित है[2]। दोगो वृत्तियोके अन्तरगकी परीक्षा करने पर यह स्पष्ट हो जाता है—

१ गोम्मटसार जीवकाण्ड और कर्मकाण्डके प्रत्येक अधिकारके अन्तमें इस प्रकारका पुष्पिका वाक्य उपलब्ध होता है—

इत्याचार्य श्रीनेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्तिविरचिताया गोम्मटसारापरनामपचसग्रहवृत्तो तत्त्वदीपिकाख्याया ।

जब कि लब्धिसारके प्रत्येक अधिकारके अन्तमें इस प्रकार अधिकारकी समाप्ति सूचक पुष्पिका वाक्य उपलब्ध होते हैं—

इति क्षायिकसम्यक्त्वप्ररूपण समासम्। इति देशसयमलब्धिविधानाधिकारः। आदि।

२ उक्त उदाहरणोसे यह तो स्पष्ट हो ही जाता है कि तत्वदीपिका यह नाम केवल जीवकाण्ड-कर्मकाण्ड वृत्तिका है, लब्धिसारवृत्तिका नही। लब्धिसार वृत्तिमें कुछ ऐसे उद्धरण भी उपलब्ध होते है जिनसे ऐसा प्रतीत होता है कि लब्धिसार वृत्तिको रचना करते समय वृत्तिकारके सामने तत्सम्बन्धी टिप्पण रहे है[3]। एक दूसरे स्थल पर वृत्तिकार यह भी सकेत करते है कि दर्शनमोहक्षपणाके अवसरपर सम्भव ३३ अल्पवहुत्वपदोका प्रवचनके अनुसार व्याख्यान किया[4]।

१-२ भट्टारक सम्प्रदाय पृ० २०१।२ प्रशस्ति गो० कर्मकाण्ड।
३ एव दर्शनमोहक्षपणटिप्पणम्।
४ एव दर्शनमोहक्षपणावसरे सम्भवदल्पवहुत्वपदानि त्रयस्त्रिशत्सख्यानि प्रवचनानुसारेण व्याख्यातानि।

यहाँ टिप्पण और प्रवचनसे वृत्तिकारको कौन विवक्षित है यह स्पष्ट ज्ञात नही हो सका।

नागपुरके सेनगण मन्दिरमें कर्मकाण्ड टीकाकी एक हस्तलिखित प्रति उपलब्ध है[1]। सम्भव है कि यह कर्मकाण्डकी मुद्रित टीकासे भिन्न होनी चाहिये, क्योकि इसमें जो प्रशस्ति दी गई है उसमें और कर्मकाण्डकी मुद्रित टीकाकी प्रशस्तिमें अन्तर है। उक्त हस्तलिखित प्रतिमें जो प्रशस्ति दी गई है वह इस प्रकार है—

मूलसघे महासाधुलक्ष्मीचन्द्रो यतीश्वर।
तस्य पादस्य वीरेन्दुविवुधा विश्ववेदिन॥
तदन्वये दयाभोधिज्ञानभूषो गुणाकर।
टीका हि कर्णकाण्डस्य चक्रे सुमतिकीर्तियुक्॥२॥

इस प्रशस्तिमें मूलसघ बलात्कार गणके शिष्य-प्रशिष्यके रूपमें लक्ष्मीचन्द्र, वीरचन्द्र और ज्ञातभूषण इन भट्टारकोके नाम देकर ज्ञानभूषणको भट्टारक सुमतिकीर्तिसे मिलकर कर्मकाण्डकी टीकाका रचयिता कहा गया है। जब कि मुद्रित कर्मकाण्डके अन्तमें पायी जानेवाली प्रशस्तिमें शिष्य-प्रशिष्यके रूपमें ज्ञानभूषण प्रभाचन्द्र और नेमिचन्द्र ये तीन नाम देकर नेमिचन्द्रको गोम्मटसार जीवकाण्ड और कर्मकाण्डकी वृत्तिका रचयिता बतलाया गया है। साथ ही उसमें यह भी कहा गया है कि कर्णाकदेशके राजा मल्लिभूपालके अनुरोध-वश त्रैविद्य मुनिचन्द्रसे नेमिचन्द्रने सिद्धान्तकी शिक्षा लेकर श्री धर्मचन्द्र और अभयचन्द्र भट्टारक तथा वर्णी-लाला आदिके आग्रहसे गुजरातके चित्रकूटमें जिनदास द्वारा निर्मापित जिनालयमें बैठकर उक्त वृत्तिकी रचना की। इसके निर्माणमें खण्डेलवाल कुलतिलक साह सागा और साह सहेस भी निमित्त हुए। नेमिचन्द्र ने यह वृत्ति त्रैविद्य विशालकीर्तिकी सहायतासे लिखी[2]।

ये दो प्रशस्तियाँ हैं। इनके आधारसे ये तथ्य फलित होते हैं—

१ गोम्मटसार कर्मकाण्डकी दो टीकायें है—एक ज्ञानभूषण भट्टारक द्वारा रचित और दूसरी उनके शिष्य नेमिचन्द्र द्वारा निर्मित।

२ नेमिचन्द्रने सिद्धान्तकी शिक्षा कर्णाटकके त्रैविद्य मुनिचन्द्रसे ली। तथा अपनी वृत्तिकी रचना कारजा बलात्करगण पट्टके भट्टारक त्रैविद्य विशालकीर्तिकी सहायतासे की।

३ नेमिचन्द्रकी इस वृत्तिको सशोधित करके अभयचन्द्रने लिखा। ये भट्टारक ज्ञानभूषणके पूर्ववर्ती भट्टारक वीरचन्द्रके सहाध्यायी तथा भट्टारक लक्ष्मीचन्द्रके शिष्य थे। इतना अवश्य है कि बलत्कारगण सूरत पट्टकी भट्टारकपरम्परामें नेमिचन्द्रका उल्लेख दृष्टिगोचर नही होता[3]।

इतने विवेचनके बाद हमें जो महत्त्वपूर्ण जानकारी मिलती है वह यह है कि गोम्मटसार जीवकाण्ड-कर्मकाण्डकी वृत्तिकी रचनामें कारजा, सूरत और कर्णाटकके भट्टारकोंने सम्यग्ज्ञान प्रसारकी दृष्टिसे परस्पर सहयोग किया है। कर्मकाण्डकी जिस दूसरी टीकाका हम पूर्वमें उल्लेख कर आये है उसकी रचना में सूरत और कर्णाटकके भट्टारकोंका परस्पर सहयोग होना चाहिये, क्योकि उसकी प्रशस्तिमें जिन सुमति-कीर्ति भट्टारकका उल्लेख किया गया है वे सम्भवत कर्णाटक प्रदेशीय हो होने चाहिये। गोम्मटसार

---

१ भट्टारकसम्प्रदाय पृ १८३।

२ भारतीय जैन सिद्धान्त प्रकाशिनी सस्था कलकत्ता।

३ भट्टारक सम्प्रदाय पृ० ३०१।

कर्मकाण्ड-जीवकाण्डकी वृत्तिमें जिन भट्टारक धर्मचन्द्र का नाम आता है वे बलात्कारगण कारजा पट्टके भट्टारक थे यह इस गणकी कारजा शाखाके अध्ययनसे ज्ञात हो जाता है ।

विशालकीर्ति नामके कई भट्टारक हुए है । यह सम्भावना की जाती है कि ये तत्त्वज्ञान तरगिणीके रचयिता विशालकीर्ति ही होने चाहिये[1] । किन्तु इनकी शुरू परम्पराका मेल बलात्कार गण सूरत शाखासे बैठता है[2] न कि बलात्कार गण ईडरशाखाकी भट्टारक परम्परासे । अत यह स्पष्ट है कि बलात्कार गण सूरत शाखाके जिन भट्टारक विशालकीर्तिके सहयोगसे कर्मकाण्डकी टीका रची जानेका उल्लेख मिलता है उन्हीके प्रशिष्य नेमिचन्द्रने कर्णाटक वृत्तिके अनुसार गो० जीवकाण्ड-कर्मकाण्डकी वृत्तिकी रचना की होगी ।

इतना सब होते हुए भी यह विवादास्पद ही है कि लब्धिसारकी वृत्तिकी रचना किसने की । जब तक कोई तथ्य सामने नही आते तब तक निर्विवादरूपसे नेमिचन्द्रको ही इसका रचयिता मानना उपयुक्त प्रतीत नही होता[3] । इतना अवश्य कहा जा सकता है कि इसकी रचना की शैली आदिको देखते हुए उसी कालके उक्त भट्टारकोके सम्मिलित सहयोगसे इसकी रचना की गई होनी चाहिये । यदि किसी एक भट्टारकका यह काम होता तो वह या अन्य कोई रचयिताके रूपमें उनके नामका उल्लेख अवश्य करते, जो कुछ भी हो, यह विषय है विचारणीय ही ।

३. अर्थसदृष्टि

लब्धिसारकी सस्कृत टीकामें बीजगणितके रूपमें अर्थदृष्टिका उपयोग किया गया है । प्रकृतमें गाथा सख्याके अनुसार तत्सम्बन्धी कुछ सकेतोका उल्लेख यहाँ कर देना उपयुक्त प्रतीत होता है—

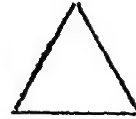
गाथा	३४	स्तोक अन्तर्मुहूर्त—	२१
,,	,,	सख्यातगुणा ,,	२११
,,	,,	पुन स गु ,,	२ १११
,,	३९	अन्तर्मुहूर्त ,,	२ ११
,,	,,	प्रमाण—प्र , फल—फ , इच्छा—इ अपसरणशलाका २११ १ २१११ १	
,,	४०	अन्त कोटाकोटि सागरोपम	सा० अत को २
,,	,,	सख्यातगुणहीन ,, ,,	सा० अ को २ ४
,,	४१	अध प्रवृत्तकरणमेंसे प्रथय समयसम्बन्धी स्थितिविशेष	सा अ को ४
,,	,,	सख्यातगुणहीन ,, ,,	सा अ को २ ४ ४
,,	,,	पुन ,, ,,	सा० अ० को २ ४ ४ ४
,,	४२	असख्यात लोक	≡a

१ ती महावीर और उनकी आचार्य परम्परा पृ ४१८

२ भट्टारक सम्प्रदाय पृ १८४–१८५ ।

३, जैनधर्मका प्राचीन इतिहास पृ २६३ ।

यहाँ गा० ३४ सख्यातगुणेमें सख्यातका सकेत १ स्वीकार किया गया है और गा० ४१ में सख्यात गुणहीन बतलानेके लिए सख्यातका सकेत-४ स्वीकार किया गया है। तथा गाथा ४२में प्रतिहारके रूपमें स्वीकृत अन्तर्मुहूर्तके प्रमाणका सकेत २ १ १ १ १ २ स्वीकार किया गया है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्तका प्रमाण तीन रूपमें स्वीकार किया गया है। आगे भी इसी प्रकार यथा सम्भव जानना चाहिए।



गाथा ५६ अपवर्तित द्रव्य निरक्षेप रचना

सर्वत्र कर्मस्थिति—क०

गाथा ७० समयप्रबद्ध स०, साधिक बारहका सकेत १२-,
सात कर्मोका सकेत ७, अनन्तका सकेत ख, मोहनीयकी सत्रह प्रकृतियोका सकेत १७, अपकर्षणका सकेत ओ, पल्योयमका सकेत प० ।

गाथा ७१-७२ आवलिका सकेत ८, द्विगुणहानिका सकेत १६
रूपोनेका सकेत १ =

गाथा ७७ सागरोपमपृथत्वव—सा० ८ ।

गाथा ८४ अन्तर्मुहूर्त २१ का सख्यात बहुभाग २१$\frac{४}{५}$, एक भाग २१$\frac{१}{५}$, इसमें बहुभागका सकेत $\frac{४}{५}$ एक भागका सकेत $\frac{१}{५}$।

गाथा ८५ यहाँ अन्तर्मुहूतमात्र अन्तरकरणके कालका सकेत २१।३/४।४

यहाँ शीर्षसे सख्यातगुणेके सकेत २१३/४ में सख्यातगुणे का सकेत ३/४

अर्थसदृष्टिके ये कतिपय सकेत है। स्वय वृत्तिकारने अपने सकेतोका कोई विवरण नही दिया है। सकेतोमें कही-कही विविधता भी दृष्टिगोचर होती है। उदाहरणार्थ अध प्रवृत्तकरणके प्रथम समयके परिणाम असख्यात लोकप्रमाण है। असख्यात लोकका सकेत चिह्न ≡ ∂ है। उसमें प्रथम समयके परिणामोका सकेत उन्होने यह रखा है— ≡ ∂ १/२१११ १२/२१११२ इन्हें विशेषाधिक करनेके लिए १/२१११२ १२ के स्थानमें ३/१ १ ऐसा करके पहले १ के स्थानमें ३ अक कर दिया है। तथा अन्तिम समयके परिणामोका सकेत ≡ ∂२१११।१२ / २१११२१११२ इस प्रकार दिया है। यहाँ प्रथम समयके परिणाम असख्यात लोकप्रमाण होते हुए भी और असख्यात लोकका सकेत ∂ ≡ होते हुए भी इन परिणामोंकी कल्पना उक्त प्रकारके सकेतके रूपमें की गई है। अस्तु।

४. सैद्धान्तिक चर्चा

कर्णाटक वृत्तिके रचयिता केशववर्णी हैं। इन्होने जीवकाण्ड प्रथम गाथाकी उत्थानिकामें षट्खण्डागमके छह खण्डोका नामोल्लेख अवश्य किया है[1]। पर इससे ऐसा नही लगता कि उन्होने षट्खण्डागमके छहोखण्डोका धवला टीका सहित पूरा अध्ययन करके अपनी जीवतत्त्वदीपिका वृत्तिकी रचना की होगी। यही स्थिति सस्कृत वृत्तिके रचयिताके सम्बन्धमें भी कही जा सकती है। इतना अवश्य है कि गुरुपरम्परासे वाचना द्वारा उन्हें यथासम्भव सिद्धान्त विषयक जितना ज्ञान प्राप्त हुआ उसी आधारपर इन वृत्तियोकी रचना की गई है। उसमें भी नेमिचन्द्र रचित वृत्ति कर्णाटक वृत्तिका अनुकरण मात्र है। इसे स्पष्ट करनेके लिए यहाँ एक उदाहरण दे देना इष्ट समझते है—

(१) जीवकाण्डका अर्थ है गुणस्थानो और मार्गणास्थानोके आलम्बनसे जीवोकी विविध अवस्थाओ और परिणामोको सूचित करनेवाला ग्रन्थ। आ० नेमिचन्द्र सि० च० ने इसका सकलन मुख्यतया जीवस्थान, क्षुल्लकबन्ध, जीवस्थानचूलिका, वेदनाखण्ड और वर्गणाखण्डके आधारसे किया है।

यह तो हम जानते है कि गुणस्थानोकी प्ररूपणा मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र और अविरति आदि जीवोके परिणामोंके आधारसे ही की गई है। अब रहे मार्गणास्थान, सो इनमें भी भावमार्गणाएँ ही विवक्षित है। द्रव्यमार्गणाएँ नही। इसके लिए क्षुल्लकबन्ध तो प्रमाणस्वरूप है ही। साथ ही इसकी पुष्टि जीवस्थान सत्प्ररूपणाके इस वचनसे भी होती है—

'इमानि' इत्यनेन भावमार्गणास्थानानि प्रत्यक्षीभूतानि निर्दिश्यन्त, नार्थमार्गणास्थानानि[2] पृ० १३२।

सूत्रमें आये हुए 'इमानि' इस पदसे प्रत्यक्षीभूत भावमार्गणास्थानोका निर्देश किया है, द्रव्यमार्गणाओ का निर्देश नही किया है।

आगे गति पदकी व्याख्याके प्रसगसे जो वचन आया है उससे भी उक्त तथ्यकी पुष्टि होती है।[3]

इन तथ्योसे स्पष्ट है कि सिद्धान्त ग्रन्थोमें चौदह मार्गणाओकी प्ररूपणा भावनिक्षेपके रूपमें ही हुई है, द्रव्यनिक्षेपके रूपमें नही। गतिमार्गणाके विषयमें भी ऐसा ही समझना चाहिये। श्वेताम्बरकार्मिक ग्रन्थोमें भी यही व्यवस्था स्वीकार की गई है। (२) प्रकृतमें गतिमार्गणाकी अपेक्षा विचार करनेपर गतिमार्गणा चार भेदोमें विभाजित की गई है—नारक, तिर्यञ्चयोनिज, मनुष्य और देव। नारक सब नपुसकवेदी होते है, इसलिए उनमें अवान्तर भेद लक्षित नही होते। देव स्त्रीवेद और पुरुषवेद इन दो वेदोमें विभाजित किये गये हैं। तदनुसार उनके देव और देवी ये दो भेद किये गये है। तिर्यञ्चयोनिज तीन भेदोमें विभाजित किये गये है। साथ ही उनमें पर्याप्त और अपर्याप्त तथा पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और तदितर तिर्यञ्च ये दो भेद और लक्षित होते है। मनुष्य तीन वेदोमें विभाजित किये गये है। उनमेंसे पुरुषवेदी और नपुसकवेदी पर्याप्त मनुष्योंकी आगममें मनुष्य पर्याप्त सज्ञा उपलब्ध होती है। स्त्रीवेदी मनुष्योकी मनुष्यिनी सज्ञा उपलब्ध होती है तथा नपुसकवेदी अपर्याप्त मनुष्योकी मनुष्य अपर्याप्त सज्ञा उपलब्ध होती है। यह आगमिक व्यवस्था है। इसी तथ्यको ध्यानमें रखकर गो० कर्मकाण्ड उदय प्रकरणमें मनुष्यिनीके किस वेदका उदय होता है इसका निर्देश करते हुए लिखा है—

मणुसिणिएत्थीसहिदा तित्थयराहारपुरिससढूणा।
पुण्णिदरेव अपुण्णे सगाणुगदिआउग णेय ॥३०१॥

---

१ जीवकाण्ड पृ० ९ भा० ज्ञानपीठ प्रकाशन।

२ जीवस्थान सत्प्ररूपणा १ जैन सस्कृति सरक्षक सघ सोलापुर।

३ वही पृ० १३६-१३७।

मनुष्यिनियोंमें स्त्रीवेदके उदयको सम्मिलित कर देना चाहिये तथा तीर्थंकर, आहारकद्विक, पुरुषवेद और नपुसकवेदके उदयको कम कर देना चाहिये ॥३०१॥

इस प्रकार सिद्धान्त ग्रन्थोमें मनुष्यिनी पदसे मनुष्य द्रव्यस्त्रियाँ नही ली गई है यह स्पष्ट होते हुए भी दोनों वृत्तिकारोंने गो० जीवकाण्ड गाथा १५९ में आये हुए पज्जत्तमणुस्साण तिचउत्थो माणुसीण परिमाण। गाथाके इस पूर्वार्ध पदकी व्याख्या करते हुए 'मानुसीण' पदका अर्थ द्रव्यवेदवाली मनुष्यस्त्रियाँ किया है। यथा—

पर्याप्त मनुष्यरुगल राशि त्रिचतुर्भाग मानुषिरय्य द्रव्यस्त्रीयर परिमाणमक्कु ४२ = ४२ = ४२ $\frac{3}{4}$। क० वृ०

पर्याप्त मनुष्यराशे त्रिचतुर्भागो मानुषीणा द्रव्यस्त्रीणा परिमाण भवति ४२ = ४२ = ४२ = $\frac{3}{4}$।

जो युक्तियुक्त नही है। अत यहाँ ऐसा समझना चाहिये कि वस्तुत यह सख्या द्रव्यस्त्रियोकी न होकर भाववेदकी अपेक्षा मनुष्यगतिके स्त्रीवेदी जीवोकी है। द्रव्यवेदकी मनुष्य स्त्री अपेक्षा तीनो वेदवाली होती है। (देखो जीवस्थान सत्प्ररूपणा ९३ टीका)।

आगे गो०'जीवकाण्ड गाथा १६३ में भी 'माणुसी' पदका अर्थ भाववेदवाली मनुष्यिनी ही लेना चाहिये, द्रव्यवेदवाली मनुष्यस्त्रियाँ नही। आगे आलाप अधिकारमें भी मनुष्यिनियोके एक स्त्रीवेद आलाप ही लिया गया है सो इससे भी उक्त तथ्यकी पुष्टि होती है। गो० जी० पृ० ९७७ आदि।

(२) इसी प्रकार गाथा १५० में तिर्यंचगतिके जीवोके ५ भेद और मनुष्य गतिके जीवोके ४ भेद किये गये है। तिर्यञ्चोमें वहाँ एक भेद तिर्यञ्चयोनिनी भी है। किन्तु उसका वृत्तिकारोने क्रमसे 'योनिमतियर्यंचरेंदु' 'योनिमत्तिर्यञ्च' यह अनुवाद किया है। हिन्दी टीकामें भी उसी बातको दुहराकर योनिमत् तिर्यंच अर्थ किया गया है। सिद्धान्त ग्रन्थोके अनुवादके समय हम लोगोसे भी ऐसी ही भूल हुई है। जैसा कि हम पहले लिख आये है कि आगममें सामान्य तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनी और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, अपर्याप्त ये पाँच भेद तथा मनुष्योके सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और मनुष्य अपर्याप्त ये चार भेद दृष्टिगोचर होते है। उन्हें ही सक्षेपमें इस गाथा द्वारा सकलित किया गया है। अत अनुवाद करते समय न तो योनिमत्तिर्यञ्च ही लिखना चाहिये और न योनिमत् मनुष्य ही। सिद्धान्तकी अपेक्षा ही ये दोनो प्रयोग गलत है। द्वितीय आवृत्तिके समय धवलामें मैंने इस भूलका परिमार्जन करना प्रारम्भ कर दिया है।

(३) सर्वार्थसिद्धिमें 'सत्सख्या' इत्यादि सूत्रकी व्याख्या षट्खण्डागम जीवस्थानके अनुसार ही की गई है। उसमें कही भी मतभेदकी अपेक्षा ऊहापोह नही किया गया है। इसलिए सासादन गुणस्थानमें जो कुछ कम बारह बटे चौदह भाग प्रमाण स्पर्शन कहा गया है वह स्पर्शन अनुयोगद्वारके अनुसार मारणान्तिक समुद्घातकी अपेक्षा ही जानना चाहिये। अत किसी किसी हस्तलिखित प्रतिमें जो यह वचन मिलता है—

अथवा येषा मते सासादन एकेन्द्रियेषु नोत्पद्यते तन्मतापेक्षया द्वादश भागा न दत्ता।

सो यह वचन मूल सर्वार्थसिद्धिका नही है, क्योकि सर्वार्थसिद्धिके सत्प्ररूपणामें जब एकेन्द्रियोसे लेकर असज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्यन्त जीवोंके केवल एकान्तसे एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान ही स्वीकार किया गया है[1] ऐसी अवस्थामें आचार्य पूज्यपादने स्पर्शन प्ररूपणामें मतभेदकी चर्चा नही की होगी यह स्पष्ट ही है। हमने

१ पृ० ३१।

सर्वार्थसिद्धिका सम्पादन करते समय सासादन गुणस्थानमें कुछ कम बारह बटे चौदह राजुप्रमाण स्पर्शन कैसे बनता है इसका स्पष्टीकरण टिप्पणमें श्री धवला स्पर्शन प्ररूपणाके आधारसे किया ही है[१]। दूसरे विशेषकी अपेक्षा विचार करते समय एकेन्द्रियोमें सर्वलोकप्रमाण ही स्पर्शन बतलाया गया है सो इससे भी उक्त तथ्यकी पुष्टि होती है। यदि पूज्यपादको अन्य आचार्योंके मतकी अपेक्षा एकेन्द्रियोमें सासादन गुणस्थान स्वीकार कर स्पर्शन बतलाना इष्ट होता तो वे विशेषकी अपेक्षा एकेन्द्रियोमें स्पर्शनकी प्ररूपणा करते समय 'येषा मते' इत्यादि कह कर सासादनमें एकेन्द्रियोका स्पर्शन कुछ कम सात बटे चौदह राजु अवश्य स्वाकार करते। किन्तु उन्होंने ऐसा कुछ भी सकेत नही किया, इसलिए 'अथवा येषा मते' इत्यादि वचन सर्वार्थसिद्धिमें पूज्यपादका स्वीकार न कर प्रक्षिप्त ही जानना चाहिये। भावरूपणासे भी इसकी पुष्टि होती है। आशा है इससे जिस लेखकको कही भी किसी प्रकारका भ्रम हुआ है उसका परिहार हो जाता है।

(४) लब्धिसार गाथा ६१ से लेकर ६७ तक की गाथाओमें उत्कर्षणसम्बन्धी निक्षेप अतिस्थापना आदिकी प्ररूपणा करते हुए गाथा ६५ की सस्कृत वृत्तिमें उक्त गाथामें निरूपित विषयको 'अथवा आचार्यान्तरख्याख्यानमतमेतत्' यह लिखकर भिन्न आचार्यके मतसे उक्त गाथाकी प्ररूपणाका निर्देश किया गया है। किन्तु वस्तुस्थिति यह नही है। वस्तुत नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्तीने गाथा ६२,६३ और ६४ द्वारा एक प्रकार से उत्कर्षण विषयक उत्कृष्ट निक्षेपका निरूपण कर गाथा ६५ द्वारा दूसरे प्रकारसे उत्कृष्ट निक्षेपको घटित करके बतलाया है। प्रथम प्रकार यह है—

(१) कोई एक जीव है उसने मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध ७० कोडाकोडी सागरोपम किया। पुन बन्धावलि काल जाने पर उसने अगले समयमें उक्त बन्धकी अग्रस्थितिके निषेकसम्बन्धी कुछ परमाणु पुजका अपकर्षण कर उदय समयसे लेकर निक्षेप किया। पुन अगले समयमें उस प्रदेशपुजको उस समय बँधनेवाली अपनी उत्कृष्ट स्थितिमें उत्कर्षित कर सात हजार वर्षप्रमाण उत्कृष्ट आबाधाको छोड कर बन्धस्थितिमें निक्षिप्त किया। ऐसा करनेपर उत्कृष्ट निक्षेपका प्रमाण सात हजार वर्ष और एक समय अधिक एक आवलिकम उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण प्राप्त होता है, क्योकि यहाँ बन्धावलिके बाद प्रथम समयमें अपकर्षण किया और दूसरे समयमें अपकर्षित द्रव्यका उत्कर्षण किया, इसलिए नये बन्धकी उत्कृष्ट स्थितिमेंसे एक समय अधिक एक आवलि तो यह कम हो गया तथा नये बन्धकी आबाधामें उर्कर्षित द्रव्यका निक्षेप नही होता, इसलिए उत्कृष्ट स्थितिमेंसे उत्कृष्ट आबाधाकाल और कम हो गया। यह उत्कृष्ट निक्षेपका एक प्रकार अपकर्षणपूर्वक उत्कर्षणको लक्ष्यमें रखकर सूचित किया गया है।

आगे अकर्षण किये विना उत्कृष्ट निक्षेप किस प्रकार घटित होता है इसका निर्देश करते हैं— उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होनेके एक आवलिबाद आबाधाकालके ऊपर स्थित प्रथम निषेकका तत्काल बन्धको प्राप्त समयप्रबद्धमें द्वितीय निषेकसे लेकर उत्कर्षण करनेपर इस प्रकार भी उत्कृष्ट निक्षेप प्राप्त होता है। यहाँ प्रथम बार उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे लेकर एक आवलिकाल बाद अगले समयमें होनेवाले उत्कृष्ट स्थिति बन्धके आबाधाकालके बाद जो निषेक रचना है उसमें प्रथम बार हुई बन्ध स्थितिके प्रथम निषेकका उत्कर्षण होकर निक्षेप विवक्षित है। उदाहरणार्थ प्रथम बार हुए उत्कृष्ट स्थिति बन्धका उत्कृष्ट आबाधाकाल आठ समय है और बन्धावलिकालके दो समय बाद तीसरे समयमें जो पुन उत्कृष्ट स्थितिबन्ध हुआ उसका भी उत्कृष्ट आबाधकाल आठ समय है। जो दसवें समयपर समाप्त होता है। यत यहाँ प्रथम समयमें हुए प्राक्तन स्थितिबन्धके नौवें समयमें स्थित निषेकका नये स्थितिबन्धमें उत्कर्षण करना है और यह उत्कर्षण करनेवाला जीव तीसरे समयमें स्थित होकर उत्कर्षण कर रहा है, अत इस नौवें समयके निषेकका उत्कर्षण

---

१ पृ० १। पृ० ४६। ३ पृ० ४८

होनेपर उसका दसवें और ग्यारवें समयप्रमाण अतिस्थापनावलिको छोडकर बारहवें समयके द्वितीय निषेक से लेकर नये बन्धकी उत्कृष्ट स्थितिमें निक्षेप होगा यहाँ नूतन स्थितिबन्धके नौवें और दसवें समयमें निषेक रचना नही है और प्राक्तन स्थितिबन्धके नौवें समयके प्रथम निषेकका उत्कर्षण होनेपर दसवें समयके साथ ग्यारहवाँ समय अतिस्थापनामें गया, इसलिए यहाँ भी उत्कृष्ट निक्षेप एक समय और एक आवलि अधिक उत्कृष्ट आबाधासे न्यून उत्कृष्ट बन्धस्थिति प्रमाण जानना चाहिये, क्योकि प्राक्तन जिस बन्धस्थितिके प्रथम निषेकका उत्कर्षण करना है वह आबाधाके ऊपर स्थित है तथा जिस निषेकका उत्कर्षण करना है उसमें उत्कर्षित द्रव्यका निक्षेप नही होता तथा उस निषेकके आगे एक आवलिप्रमाण अतिस्थापनावलि है, इसलिए उत्कृष्ट स्थितिबन्धमेंसे एक समय और एक आवलिकाल अधिक उत्कृष्ट आबाधासमय कम करके उत्कृष्ट निक्षेपका निर्देश किया गया है।

यहाँ ऐसा समझना चाहिए कि प्रत्येक समयमें जिस निषेकका अपकर्षण होता है उससे नीचे अतिस्थानकी छोडको शेष स्थितिमें अपकर्षित द्रव्यका निक्षेप होता है। और प्रत्येक समयमें जिस निषेकका उत्कर्षण होता है उससे ऊपरसे लेकर यथासम्भव अतिस्थापना होता है जिसमें उत्कर्षित द्रव्यका निक्षेप नही होता। इसी तथ्यको ध्यानमें रखकर सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका टीकामें आवश्यक प्रकरणका स्वाध्याय करना चाहिये। सस्कृत वृत्तिमें 'उपरि' अग्रे, अन्तिमातिस्थापनावलि युक्त्वा। पाठ होनेसे ही सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका टीकामें भी उन्ही पाठोको ध्यानमें रख कर अनुसरण किया गया है। जब कि अपकर्षणमें जिस निषेकके प्रदेश पुजका अपकर्षण किया जाता है ठीक उसके नीचे अतिस्थापना होती है और उत्कर्षणमें जिस निषेकके प्रदेशपुजका उत्कर्षण किया जाता है ठीक उसके ऊपर अतिस्थापना होती है। अत प्रकृतमें यह समझना चाहिये कि अतिस्थापनाके विषयमें उक्त टीकाओमें जो कुछ निर्देश किया गया है उसका उक्त आशयके साथ स्वाध्याय करना चाहिये।

(६) उपशान्तकषाय गुणस्थानमें परिणामो और उदयके सम्बन्धमें आगमके अनुसार यह व्यवस्था है—

(१) वहाँ नियमसे अवस्थित परिणाम होता है, क्योंकि वहाँ परिणामोके हीनाधिक होनेका कोई कारण नही पाया जाता।

(२) ज्ञानावरणादि ३५ प्रकृतियोका वह अवस्थित वेदक होता है।

(३) इनके सिवाय अन्य प्रकृतियोंका षड्गुणी हानि, षड्गुणी वृद्धिरूप और अवस्थितवेदक होता है।

यह व्यवस्था चूर्णिसूत्र, जयधवला और लब्धिसार (गा० ३०६-३०७) में एक स्वरसे स्वीकार की गई है।

किन्तु लब्धिसार गा० ३०६ की वृत्तिमें एक तो स्वीकार कर लिया है कि उपशान्तकषाय गुणस्थान में सक्लेश-विशुद्धिरूप परिणाम होते है। दूसरे जिन केवल ज्ञानावरण आदि प्रकृतियोका उक्त जीव अवस्थित वेदक होता है उनके उदयकी हानि-वृद्धि स्वीकार करके भी गा० ३०७ की वृत्तिमें उनका अवस्थित वेदक होता है यह भी स्वीकार कर लिया है जो युक्त नही है। अत यहाँ आगमके अनुसार निर्णय करके स्वाध्याव करना चाहिये।

ये कुछ तथ्य है जिनका सैद्धान्तिक चर्चाके प्रसगसे यहाँ निर्देश किया है।

विचारके लिए और भी विषय हो सकते है। पर तत्काल उनपर प्रकाश डालना सम्भव नहीं है।

सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका टीका

समग्र जैन समाजमें ऐसा एक भी व्यक्ति ढूढे नही मिल सकता जो आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी से सुपरिचित न हो। उनके द्वारा की गई साहित्य सेवा ही उनके पाण्डित्य और तलस्पर्शी ज्ञानका साक्ष्य है। आचार्यकल्प यह उपाधि उनकी केवल प्रशसामात्र नही है। यदि उनकी अन्य रचनाओंको ध्यानमें न भी लिया जाय तो भी एकमात्र सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका टीका ही उनके वैदुष्यकी अमर साक्षी है। गोम्मटसार जीवकाण्ड-कर्मकाण्डकी वृत्ति लिखते समय नेमिचन्द्रकी जोवप्रबोधिनी वृत्ति और लब्धिसारकी अनाम सस्कृत वृत्ति तथा माधवचन्द्र त्रैविद्यदेवका क्षपणासार ग्रन्थ उनके सामने रहा है। उक्त वृत्तियो और क्षपणासारको शब्दश आधार बनाकर ही उन्होने इस टीकाकी रचना की है। साथ ही इन ग्रन्थोपर उन्होने विस्तृत भूमिकाएँ और दोनो वृत्तियोंमें आई हुई अर्थसदृष्टियोपर स्वतन्त्र अर्थसदृष्टि प्रकरण भी लिखे हैं।

लब्धिसार मुख्यतया छह अधिकारोमें विभक्त है। पाँचवेंका नाम चारित्रमोहनीय उपशमना है। इस ग्रन्थकी यहीतक सस्कृत वृत्ति पाई जाती है। इसकी रचना किसने की इसपर न तो वृत्तिकारने ही कोई प्रकाश डाला है और न अपनी टीकामें पण्डितजीने ही। अन्तिम अधिकार चरित्रमोहनीयक्षपणा है। इसकी स्वतन्त्र सस्कृत वृत्ति नही है। माधवचन्द्र त्रैविद्यदेवका स्वतन्त्र क्षपणासार ग्रन्थ है जो इस समय कही कही त्रुटितरूपमें दिल्लीके किसी शास्त्रभण्डारमें मौजूद है। उपलब्ध होनेपर उसे व्यवस्थित कर उसपर काम किया जा सकता है। पण्डितजीने अवश्य उसे ही माध्यम बनाकर चरित्रमोहक्षपण अधिकारकी अपनी टीका लिखी है। पण्डितजीने अपनी टीकामें जितना कुछ लिपिबद्ध किया है उसे यदि हम उक्त सस्कृत वृत्तियो और क्षपणासार का मूलानुगामी अनुवाद कहें तो भी कोई अत्युक्ति नही होगी। इतना अवश्य है कि जहाँ आवश्यक समझा वहाँ भावार्थ आदि द्वारा उन्होने उसे विशद अवश्य किया है।

पण्डितजीकी सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका टीका विशद और सुबोध है। सस्कृत वृत्तियोकी तुलनामें मूल ग्रन्थोमें प्रवेश करने और विषयको हृदयगम करनेमें इससे विशेष सहायता मिलती है। जहाँ भी वृत्तियोके आधारपर मूल विषयको समझनेमें कठिनाई आती है वहाँ विद्वान भी इसीका सहारा लेकर मूल विषयको समझनेमे समर्थ होते है। आमतौरपर जयधवलामें पहले मूल गाथाका स्पष्टार्थ लिखनेके बाद ही उसमें गर्भित अर्थका विशेष विवरण प्रस्तुत किया है पर लब्धिसार वृत्तिमें इस पद्धतिको नाममात्र भी स्पर्श नही किया गया है। इससे प्राय चरित्रमोह उपशमना और क्षपणा प्रकरणमें गाथाके आधारसे अर्थबोध होना कठिन जाता है। सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका टीका यत सस्कृत वृत्तिका ही अनुसरण करती है तो भी उन्होने उसे बीजगणित (अर्थसदृष्टि) से मुक्त रखकर इसका निर्माण किया है, इसलिए उसके आधारसे विषयको हृदयगम करनेमें सरलता जाती है। पण्डितजीने एकादि स्थलपर ऐसा अवश्य ही सकेत किया है कि इसका अर्थ स्पष्टरूपसे मेरे लक्ष्यमें नही आया सो इसे उनकी सरलता ही समझनी चाहिये।

पण्डितजीने गोम्मटसारकी टीका विक्रम स० १८१८ के माघ शुक्ला ५ को पूर्ण की थी ऐसा गोम्मटसारकी प्रशस्तिसे ज्ञात होता है पर उसी कालके भीतर लब्धिसारकी टीका भी गर्भित जानना चाहिये। विज्ञेषु किमधिकम्।

■

प्रस्तावना

आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी

सम्यग्दर्शनचरनगुत पाय कुकर्म खिपाय।
केवलज्ञान उपाय प्रभु भये भजो शिवराय ॥१॥

जिनवानीके ज्ञानतैं होत तत्त्व श्रद्धान।
चरण धारि केवल लहै पावै पद निरवान ॥२॥

नेमिचन्द आह्लादकर माधवचद प्रधान।
नमौ जास उजासतैं जानै निज गुणठान ॥३॥

लब्धिसारकौ पायकै करिकैं क्षपणासार।
ह्वो है प्रवचनसार सो समयसार अविकार ॥४॥

ऐसैं मगलाचरण करि लब्धिसारके सूत्रनिका भाषारूप व्याख्यान करिए हैं ताका प्रयोजन कहा ? सो कहिए हैं—

श्रीमद्गोम्मटसार शास्त्रविषै जीवकाड कर्मकाड अधिकारनिकरि जीव अर कर्मका स्वरूप प्रगट कीया ताकौं यथार्थ जानि मोक्षमार्गविषै प्रवर्तना। जातैं आत्महित मोक्ष है तिसहीके अर्थि विवेकी जीवनिका उपाय है। सो मोक्षमार्ग सम्यग्दर्शन सम्यक्चारित्र हैं, सम्यग्ज्ञान भी मोक्षमार्ग है सो सम्यग्दर्शनका सहकारी ही जानना। तहा सम्यग्दर्शन तीन प्रकार औपशमिक १ क्षायोपशमिक २ क्षायिक ३। बहुरि सम्यक्चारित्र दोय प्रकार देशचारित्र १ सकलचारित्र २। तहाँ देशचारित्र तौ क्षायोपशमिक ही है अर सकलचारित्र तीन प्रकार है—क्षायोपशमिक १ औपशमिक २ क्षायिक ३। सो ऐसैं सम्यग्दर्शन सम्यक्चारित्रकी लब्धि भए केवलज्ञानकौं पाइ तहाँ सयोगी अयोगी जिन होइ सिद्धपदकौं प्राप्त हो है। सो इनि सबनिका स्वरूप नीकै जान्या चाहिए, जातैं एई आत्माके प्रयोजनभूत कार्य हैं, तातैं इनिकौं होतै पूर्वै भए कर्मनिके बध उदय सत्त्वकी कैसी कैसी अवस्था हो है अर जीवका परिणमन कैसैं कैसैं हो है ? इत्यादि विशेष जानना युक्त है। बहुरि याकौं जानैं चौदह गुणस्थाननिका भी स्वरूप विशेषपने नीकै जानिए है। अर जीव कर्मादिकी सर्व चर्चानिविषैं गुणस्थाननिकी चर्चा प्रधान है, तातैं इहा तिन औपशमिक सम्यक्त्व आदिका वर्णन अवश्य करना ऐसा प्रयोजन विचारि उद्यम कीया तब हम यत्रादि रचना सहित लब्धिसार नाम शास्त्रका मूल गाथानिका एक पुस्तक देख्या। तहा तिन औपशमिक सम्यक्त्वादिकनिका विशेष वर्णन जानि तिनि गाथानिका भाषारूप व्याख्यान करनेका विचार भया। बहुरि लब्धिसारकी टीकाके पुस्तक देखे, तहा औपशमिक चारित्रका वर्णन पर्यंत गाथानिहीकी संस्कृत टीकाकरि समाप्त करी। अवशेष क्षायिक चारित्रादिकका वर्णनरूप गाथानिकी संस्कृत टीका नाही। बहुरि एक क्षपणासार नामा जुदा ग्रंथ शास्त्र ताके पुस्तक देखे तहा गाथा तौ नाही अर संस्कृत धारारूप ही क्षायिक चारित्रादिकका वर्णन है। सो याके अर्थका अर तिनथ वशेष लब्धिसारकी गाथानिके अर्थका प्रयोजन समानसा देख्या, सो ऐसैं अवलोकि यह विचार कीया जो औपशमिक चारित्र पर्यंत गाथानिका व्याख्यान तौ संस्कृतटीकाके अनुसारि करना अर अवशेष गाथानिका व्याख्यान क्षपणासारके अनुसारि करना सो ऐसैं अनुसार लीए लब्धिसारकी गाथानिका संक्षेप

अर्थ इहा लिखिए है। विस्तार होनेके भयतै विशेष नाही लिखिए है वा कोई कठिन अर्थ मेरी समझिमैं नीके न आवनेतै इहा न लिखिए है, सो सस्कृत टीका वा क्षपणासारतै जानियो। वहुरि अैसै व्याख्यान करतै कही चूक होइ, बुद्धिकी मदतातै अन्यथा लिखो तहा विशेषज्ञानी सवारि शुद्ध करियो, जातै अर्थ तौ गभीर है अर बुद्धि मेरी तुच्छ है, तातै कही चूक भी परै। अैसै विचारिकरि इस भाषा करनेका प्रारभ कीजिए है। तहा प्रथम केते इक अर्थ वा सज्ञा विशेष दिखाइए है। जिनिकौ जानै आगै तिनिका वर्णन जहा आवै तहा इनिकौ यादिकरि नीके अर्थज्ञानी होइ। तहा इस शास्त्रविषै दश करणनिका विशेष प्रयोजन है, तातै प्रथम इनिका स्वरूप कहिए है--

कर्मनिकी दश अवस्था है—बध १ सत्त्व २ उदय ३ उदीरणा ४ उत्कर्पण ५ अपकर्षण ६ सक्रमण ७ उपशम ८ निघत्ति ९ निकाचना १० ए दश करण है। सो इनिका स्वरूप गोम्मटसारका कर्मकाडविषै दश करण चूलिका नामा अधिकार है तहा कह्या है सो जानना। इहा भी प्रयोजन जानि किछू लिखिए है—तहा नवीन पुद्गलनिका कर्मरूप आत्माकै सम्बन्ध होना ताका नाम बन्ध है। सो च्यारि प्रकार है—प्रकृतिवन्ध १ प्रदेशवन्ध २ स्थितिबन्ध ३ अनुभागबन्ध ४। तहा कर्मरूप होने योग्य जे कार्मण वर्गणारूप पुद्गल तिनिका ज्ञानावरणादि मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृतिरूप परिणमना सो प्रकृतिवन्ध है। तहा जेती प्रकृतिनिका जहा वन्ध सभवै तहा तितनी प्रकृतिबन्ध जानना। वहुरि तिनि प्रकृतिरूप जितनी पुद्गल परमाणू परिणमी तिनिका प्रमाणरूप प्रदेश वन्ध है, जातै इहा प्रदेश नाम पुद्गल परमाणूका है सो अभव्य राशितै अनन्तगुणा अैसा जो सिद्धराशिकै अनन्तवा भागमात्र प्रमाण तिस प्रमाणमात्र परमाणू मिलि एक कार्मण वर्गणा हो है। अर तितनी ही वर्गणा मिलि एक समयप्रवद्ध हो है। इतनी परमाणू समय समय विषै कर्मरूप होइ एक जीवकै बधै, तातै याका नाम समयप्रबद्ध है। सो यहु सामान्य प्रमाण है। विशेष योगनिकी अधिक हीनताके अनुसारि समयप्रबद्धविषै परमाणूनिकी अधिक हीनता जाननी। वहुरि एक समयविषै ग्रह्या हूवा जो समयप्रवद्ध सो यथासम्भव मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृतिरूप परिणमै। तहा तिन प्रकृतिनिके परमाणूनिके विभागका विधान गोम्मटसारका वन्ध सत्त्व उदय अधिकारविषै प्रदेश बन्धका व्याख्यान करते कह्या है सो जानना। सो जिस प्रकृतिकै जितनी परमाणू वटमें आवै तिस प्रकृतिका तितने परमाणूनिका समूहमात्र समयप्रवद्ध जानना। वहुरि जे परमाणू प्रकृतिरूप वन्धी ते परमाणू तिसरूप इतना काल रहसी अैसा बध होतै स्थितिका प्रमाण होना सो स्थितिबध है। तहा एक समयविषै जो स्थितिबध भया ताविषै बध समयतै लगाय आवाधा काल पर्यंत तौ तहा बधी हुई परमाणूनिकै उदय आवने योग्य पनेका अभाव है, तातै तहा निपेकरचना है नाही। ताके पीछै प्रथम समयतै लगाइ बधी हुई स्थितिका अन्त समय पर्यंत एक एक समयविषै एक एक निषेक उदय आवने योग्य हो है। तातै प्रथम निपेककी स्थिति एक समय अधिक आवाधा कालमात्र है। द्वितीय निषेककी स्थिति दोय समय अधिक आवाधा कालमात्र है। अैसें क्रमतें द्विचरम निपेकको स्थिति एक समय घाटि स्थितिबधप्रमाण है। अन्त निपेककी स्थिति सम्पूर्ण स्थितिबधप्रमाण है। जैसें मोहको सत्तर कोडाकोडी सागरको स्थिति बधो, तहा सात हजार वर्षका आवाधा काल है अर प्रथम निपेककी स्थिति एक समय अधिक सात हजार वर्ष है। द्वितीयादि निपेकनिकी क्रमतै एक एक समय अधिक होइ अन्त निपेककी सत्तर कोडाकोडी सागरप्रमाण स्थिति जाननी। अैसैं ही आयु विना सात कर्मनिका विधान है। वहुरि आयुका स्थितिबध विपैं आवाधा काल नाही गिनिए है, जातैं ताका आवाधा काल पूर्व पर्याय विपैं ही व्यतीत हो है। तहा तिस कायके उदय होने योग्यपनाका अभाव है, तातैं आयुका प्रथम निपेककी स्थिति एक समय द्वितीय निपेककी दोय समय अैसे क्रमतैं अन्त निपेककी सम्पूर्ण स्थितिबधमात्र स्थिति जाननी। अैसैं एक समय विपैं बधी जो स्थिति तिहिविपैं विशेप जानना।

बहुरि सामान्यपनैं जो अंत निषेककी स्थिति तिसप्रमाण है तहा स्थितिबंध कहिए हैं, जातैं सामान्य कथन-विषैं उत्कृष्टका ग्रहण कीजिए है।

बहुरि एक समयविषैं बंध्या जो प्रकृतिका समयप्रबद्ध ताके परिमाणूनिविषैं प्रथमादि निषेकनिका कैसे विभाग हो है ? ताके जाननेकौं गोम्मटसारविषैं कर्मकांडका कर्मस्थिति रचना सद्भावनामा अंतका जो अधिकार तहा द्रव्यस्थिति गुणहानि नानागुणहानि अन्योन्याभ्यस्तराशि दो गुणहानिका प्रमाण कहि तहा विधान कह्या है सो जानना। इहा भी आगैं संक्षेपसा विधान कहिएगा। बहुरि इनि प्रथमादि निषेकनिकी रचना ऊपरि ऊपरि लिखिए है, तातैं प्रथमादि पहले निषेकनिकौं नीचैके निषेक कहिए है अर पिछले निषेकनिकौं ऊपरिके निषेक कहिए है ऐसा जानना। बहुरि जैसैं भाजनादि निमित्ततैं पुष्पादिक है ते मदिरारूप परिणमैं तिनमैं ऐसी शक्ति हो है जो भक्षणकालविषैं हीनाधिक विशेष लीए पुरुषकौं उन्मत्तता करै तैसैं रागादि निमित्ततैं पुद्गल है ते कर्मरूप परिणमै, तिनमैं ऐसी शक्ति हो है जे उदयकालविषैं हीनाधिक विशेष लीए जीवकै ज्ञान आच्छादनादि करै। ऐसैं बंध होतैं शक्तिका होना ताका नाम अनुभागबंध है। तहा एक प्रकृतिके एक समयविषैं बंधे जे परमाणू तिनविषैं नानाप्रकार शक्ति हो है सो कहिए है—

शक्तिका अविभाग अंश ताका नाम अविभागप्रतिच्छेद है। बहुरि तिनके समूहकरि युक्त जो एक परमाणू ताका नाम वर्ग है। बहुरि समान अविभागप्रतिच्छेदयुक्त जे वर्ग तिनके समूहका नाम वर्गणा है। तहा स्तोक अनुभागयुक्त परमाणूका नाम जघन्य वर्ग है। तिनके समूहका नाम जघन्य वर्गणा है। बहुरि जघन्य वर्गतैं एक अधिक अविभागप्रतिच्छेदयुक्त जे वर्ग तिनके समूहका नाम द्वितीय वर्गणा है। ऐसैं क्रमतैं एक एक अविभागप्रतिच्छेद अधिक वर्गनिका समूहरूप वर्गणा यावत् होइ तावत् तिन वर्गणानिके समूहका नाम जघन्य स्पर्धक है। बहुरि जघन्य वर्गतै दूणा अविभागप्रतिच्छेद युक्त वर्गनिका समूहरूप द्वितीय स्पर्धक-की प्रथम वर्गणा हो है। बहुरि ताके ऊपरि एक एक अविभागप्रतिच्छेद अधिक क्रम लीए जे वर्ग तिनिका समूहरूप वर्गणा यावत् होइ तावत् तिनि वर्गणानिका समूहरूप द्वितीय स्पर्धक हो है। ऐसैं ही तृतीय चतुर्थादि स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके वर्गविषैं तौ जघन्य स्पर्धकतैं (जघन्य स्पर्धककी प्रथम वर्गणाकै वर्गनिके समूहतैं) तिगुणे चौगुणे आदि अविभागप्रतिच्छेद जानने। बहुरि इहा सर्व परमाणूनिका प्रमाण ऊपरि पूर्वोक्त एक एक अधिकका क्रम जानना। सो ऐसा विधान यावत् सर्व परमाणू संपूर्ण होइ तावत् जानना। बहुरि इहा सर्व परमाणूनिका प्रमाणमात्र तौ द्रव्य है अर वर्गणानिका प्रमाणमात्र अनंतप्रमाण लीए स्थिति है अर अनुभाग-संबंधी यथासंभव अनंतप्रमाण लीए गुणहानि अर नाना गुणहानि अर अन्योन्याभ्यस्तराशि अर दो गुण-हानि है। सो इनिकौ स्थापि तहा 'दिवड्ढगुणहाणि भाजिदे पढमा' इत्यादि आगै कहिए है सो विधान तातैं प्रथमादि गुणहानिनिका प्रथमादि वर्गणानिविषैं वर्गनिका प्रमाण ल्यावना। ऐसी वर्गणा एक स्पर्धकविषैं जितनी पाइए ताका नाम एक स्पर्धक वर्गणाशलाका है। बहुरि एक गुणहानिविषैं जेता स्पर्धक पाइए है तिनिका नाम एक गुणहानि स्पर्धकशलाका है। ऐसैं अविभागप्रतिच्छेदनिका समूह वर्ग है, वर्गनिका समूह वर्गणा है, वर्गणानिका समूह स्पर्धक है, स्पर्धकनिका समूह गुणहानि है। गुणहानिका प्रमाण सोई नाना गुणहानि है ऐसा जानना। सो यहु कथन गोम्मटसारविषैं भी है तथा इहा भी आगैं नीके कहिएगा।

बहुरि इन प्रथमादि स्पर्धकनिकी रचना ऊपरि ऊपरि करिए है, तातैं प्रथमादि पहिले स्पर्धकनिकौं नीचले स्पर्धक कहिए। अर पिछले स्पर्धकनिकौं ऊपरले स्पर्धक कहिए। बहुरि पूर्वोक्त विधानतैं प्रथमादि स्पर्धकनिविषैं क्रमतैं परमाणूनिका प्रमाण तौ घटता घटता है अर अनुभाग बधता बधता है। तहा प्रथमादि सर्व स्पर्धकनिका च्यारि विभाग करिए है ते घातियानिका तौ लता दारु अस्थि शैलसमान अर अप्रशस्त अघाति-

यानिका निंब काजीर विष हलाहलममान अर प्रशस्त अघातियानिका गुड खड शर्करा अमृतममान च्यारि भाग जानने। बहुरि घातियानिविषै लता भागके अर केताइक दारु भागके स्पर्धक देशघाती है। अवशेप सर्वघाती है। सो विशेष आगे आवेगा ऐसै अनुभागविषै विशेष है। सो स्थितिसबधी एक एक निषेकके परमाणूनिविषै ऐसा अनुभागका विशेष पाइए है। जैसें स्थितिके पहिले निषेक पहलै उदय आवै पिछले पीछें उदय आवै तैसै अनुभागके पहिले स्पर्धक पहिले उदय आवनेका पिछले स्पर्धक पीछे उदय आवनेका नियम नाही है। बहुरि सामान्यपनै जहा जो उत्कृष्ट अनुभाग पाइए सोई तहा अनुभागबधका प्रमाण कहिए है। ऐसै बधका स्वरूप कह्या।

बहुरि अनेक समयनिविषै बधे हुए कर्मनिका विवक्षित कालादिकविषै जीवकै अस्तित्व ताका नाम सत्त्व है सो च्यारि प्रकार प्रकृतिसत्त्व १ प्रदेशसत्त्व २ स्थितिसत्त्व ३ अनुभागसत्त्व ४। तहा अनेक समयनिविषै बधी जो ज्ञानावरणादिक मूल प्रकृति वा तिनकी उत्तर प्रकृति तिनिका जो अस्तित्व सो प्रकृतिसत्व है। बहुरि तिनि प्रकृतिरूप परिणमी ऐसे जे अनेक समयनिविषै बधी ग्रही हुई पुद्गल परमाणू तिनिका अस्तित्व सो प्रदेशसत्त्व है, सो समय समय विषै एक एक समयप्रबद्ध ग्रहे तिनके पूर्वोक्त प्रकार एक एक निषेक क्रमतै निर्जरै। तहा जिनि समयप्रबद्धनिके सर्व निषेक गले तिनिका तौ अस्तित्त्व रह्या ही नाही। बहुरि कोई समयप्रबद्धका अन्य निषेक गलि एक निषेक अवशेष रह्या, कोईके अन्य निषेक गलि दोय निषेक अवशेष रहै। ऐसै क्रमतै जाका एक निषेक गल्या ताके तिस बिना सर्व निषेक अवशेष रहै है। जाका कोई निषेक न गल्या ताके सर्व ही निषेक अवशेष रहे। ऐसै अवशेष रहे समस्त निषेक तिनके परमाणूनिका मिल्या हुवा प्रमाण किंचित उन ड्योढ गुणहानि गुणित समयप्रवद्ध प्रमाण है। सो याका विधान गोम्मटसारका कर्मस्थिति रचना सद्भाव अधिकारविषै त्रिकोण रचना करि दिखाया है सो जानना। ऐसैं इनि परमाणूनिका अस्तित्व सो प्रदेशसत्व जानना। इहा जो एक प्रकृतिकी विवक्षा होइ तौ एक प्रकृतिसबधी समयप्रबद्ध ग्रहण करना। जो सर्व प्रकृतिकी विवक्षा होइ तौ सर्व प्रकृतिसबधी समयप्रबद्ध जानना। बहुरि तिनि अनेक समयनि विषै बधी प्रकृतिनिकी स्थिति ताका नाम स्थितिसत्व है तहा तिनि प्रकृतिनिका जिस समयप्रबद्धका एक निषेक अवशेष रह्या ताकी एक समयकी स्थिति है, जाका दोय निषेक अवशेष रहे ताके प्रथम निषेकको एक समय अर द्वितीय निषेकको दोय समय स्थिति है। ऐसै क्रमतै जाका एक हू निषेक न गल्या ताकी प्रथमादि निषेकनिकी एक दोय आदि समयनिकरि अधिक आबाधाकालमात्र स्थितिका क्रमकरि तहा अत निषेकको सपूर्ण स्थितिबधमात्र स्थिति है। इहा सत्वविषै अनेक समयप्रबद्धनिके एक समयविषै उदय आवने योग्य अनेक निषेक मिलै जो होइ सो एक निषेक जानना। सो इनि विषै परमाणूनिका प्रमाण आगे कहैंगे। बहुरि सामान्यपनै जो एक प्रकृतिकी विवक्षा होइ तौ ताके पहिले बध्या वा पीछे बध्या समयप्रबद्धनिविषै जाके बहुत निषेक सत्ताविषै पाइए तिस समयप्रवद्धके अतका निषेककी जेती स्थिति तिस प्रमाण स्थितिसत्व कहना। अर सर्व प्रकृतिकी विवक्षा होइ तौ जिस प्रकृतिका समयप्रबद्धके अत निषेकको बहुत स्थिति होइ ताका अत निषेककी स्थितिप्रमाण स्थितिसत्व कहना। बहुरि तिन अनेक समयनिविषै बधी जे प्रकृति तिनिका जो अनुभाग सत्तारूप है ताका नाम अनुभागसत्व है। तहा एक समयविषै उदय आवने योग्य अनेक समयप्रबद्धनिके निषेक मिलि भया सत्तासबधी एक निषेक ताके परमाणूनिविषै अथवा अनेक समयनिविषै बधे समयप्रबद्धनिके गले पीछे अवशेष निषेक रहे तिन सबनिके परमाणूनिविषै पूर्वोक्त प्रकार अविभागप्रतिच्छेद वर्ग वर्गणा स्पर्धकरूप अनुभागका विशेष जानना। तहा परमाणूनिका प्रमाण पूर्वोक्त प्रकार ल्यावना। बहुरि सामान्यपनै तहा पूर्वोक्त च्यारि प्रकार अनुभागका ग्रहण जानना। ऐसै सत्त्वनिका निरूपण कीया।

बहुरि कर्मनिका अपने काल आए फल देनेरूप होइ खिरनेकी सन्मख होना सो उदय है सो च्यारि प्रकार-प्रकृति उदय १ प्रदेश उदय २ स्थिति उदय ३ अनुभाग उदय ४। तहा यथासभव मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृतिका फल देनेरूप उदय आवना सो प्रकृति उदय है। बहुरि तिस उदयरूप प्रकृतिके जे परमाणू खिरनेकों सन्मुख होइ उदय आवै सो प्रदेश उदय है। तहा अनेक समयनिविषै बधे समयप्रबद्धनिका तिस विवक्षित एक समयविषै उदय आवने योग्य जे निषेक तिन सब निषेकनिके परमाणू तिस विवक्षित एक समयविषै उदय हो है सो कहिए है—

जिस समयप्रबद्धका एकहू निषेक न गल्या ताका प्रथम निषेक उदय हो है। जाका प्रथम निषेक पूर्वै गल्या ताका द्वितीय निषेक तहा उदय हो है। ऐसै क्रमतै जाके दोय निषेक अवशेष रहे ताका तहा उपात निषेक उदय हो है। जाका एक निषेक ही अवशेष रह्या ताका सोई अत निषेक तहा उदय हो है। ऐसै सर्व निषेक मिली एक समयप्रबद्धमात्र परमाणूनिका उदय हो है। बहुरि तहा उदीरणा उत्कर्षण अपकर्षण आदिका वशतै विशेष है सो कहिए है—

ऊपरले नीचले अन्य समयनिविषै उदय आवने योग्य निषेकनिके परमाणू तिस विवक्षित समयविषै उदय आवने योग्य निषेकनिविषै मिलाया होइ तौ ते परमाणू भी तिनही की साथि तिसही समयविषै उदय हो है। जैसै अक सदृष्टि करि तरेसठिसै परमाणू तौ तिस समय उदय आवने योग्य निषेकनिके थे अर हजार परमाणू अन्य निषेकनिके तहा मिलाए तौ तहा तिहत्तरिसै परमाणूनिका उदय हो है। ऐसै ही तिस समय-विषै उदय आवने योग्य निषेक तिनिके परमाणू अन्य निषेकनिविषै मिलाए होइ तौ तहा तिनिके अवशेष परमाणू उदय हो है। जैसै तिरेसठिसै परमाणू तिस समयविषै उदय आवनेयोग्य निषेकनिके थे तिनमैं हजार परमाणू अन्य निषेकनिविषै मिलाए तौ तहाँ तरेपनसै परमाणूनिहीका उदय हो है। बहुरि तिस समय विषै उदय आवने योग्य निषेकनिका केतेइक परमाणू अन्य निषेकनिविषै अन्य निषेकनिका परमाणू तिनविषै मिलाए होइ तौ तहा जेते परमाणू हीन अधिक भए तिनिहीका उदय हो है। जैसै तिरेसठिसै परमाणू तिस समय उदय आवने योग्य निषेकके थे तिनमै सातसै परमाण तौ अन्य निषेकनिके मिले अर हजार परमाणू अन्य निषेकनिविषै दीए तौ तिस समयविषै छै हजार परमाणू ही का उदय हो है। ऐसै उदीरणादिककी अपेक्षा विशेष जानना। बहुरि विवक्षित एक समयविषै जे तिस समयविषै उदय आवने योग्य निषेक तिनिका ही उदय होइ। ताका उदय होतै सत्तारूप स्थितिविषै एक समय घटै है, तातै तहा एक समयमात्र स्थिति उदय जानना। बहुरि काडकविधानतै अनेक समयमात्र स्थिति घटाइए है सो विधान आगै लिखेंगे। बहुरि तिस एक समय विषै अनुभागका उदय होना सो अनुभाग उदय है। तहा तिस समयविषै उदय आवने योग्य परमाणूनिविषै पूर्वोक्त प्रकार अविभागप्रतिच्छेद वर्गणा स्पर्धक आदि विशेष जानना। बहुरि जो उत्कर्षण अपकर्षण काडकादि विधानतै अनुभागका घटना वधना भया होइ तौ तहा जैसा अनुभाग सभवै तितनाहीका उदय जानना। इहा प्रश्न—जो तिस समय विषै उदय आवने योग्य परमाणूनिविषै कोई परमाणूविषै स्तोक अनुभाग है कोई विषै बहुत है तिनि सबनिका एक समय विषै कैसै उदय हो है? ताका समाधान—जैसै कोई वस्तु स्तोक शीतलता करनेकौ कारण है कोई बहुत शीतलता करनेकौं कारण है तिनि सबनिकी गोली एक भई ताका एक काल भक्षण कीया तहा सबनिकी शीतलता मिलै जैसी शीतलता होनी सभवै तैसी भक्षण करनेवालेकै शीतलता हो है तैसै कोई परमाणूनिविषै स्तोक अनुभाग है कोई विषै बहुत अनुभाग है तिनि सबनिका एक निषेक भया ताका एक कालविषै उदय आया तहा सबनिका अनुभाग मिलै जैसा अनुभाग होना सभवै तैसा उदयवालेकै अनुभाग उदय हो है। सामान्यपनै च्यारि प्रकार अनुभाग यथासभव तहा जानना। ऐसै उदयका स्वरूप कह्या।

यानिका निंब काजीर विष हलाहलसमान अर प्रशस्त अघातियानिका गुड खंड शर्करा अमृतसमान च्यारि भाग जानने। बहुरि घातियानिविषै लता भागके अर केताइक दारु भागके स्पर्धक देशघाती हैं। अवशेष सर्वघाती हैं। सो विशेष आगे आवेगा असैं अनुभागविषै विशेष है। सो स्थितिसंबंधी एक एक निषेकके परमाणूनिविषै असा अनुभागका विशेष पाइए है। जैसें स्थितिके पहिले निषेक पहलै उदय आवै पिछले पीछैं उदय आवै तैसै अनुभागके पहिले स्पर्धक पहिले उदय आवनेका पिछले स्पर्धक पीछे उदय आवनेका नियम नाही है। बहुरि सामान्यपनै जहां जो उत्कृष्ट अनुभाग पाइए सोई तहां अनुभागबंधका प्रमाण कहिए है। असैं बंधका स्वरूप कह्या।

बहुरि अनेक समयनिविषै बंधे हुए कर्मनिका विवक्षित कालादिकविषै जीवकै अस्तित्व ताका नाम सत्त्व है सो च्यारि प्रकार प्रकृतिसत्त्व १ प्रदेशसत्त्व २ स्थितिसत्त्व ३ अनुभागसत्त्व ४। तहां अनेक समयनिविषै बंधी जो ज्ञानावरणादिक मूल प्रकृति वा तिनकी उत्तर प्रकृति तिनिका जो अस्तित्व सो प्रकृतिसत्त्व है। बहुरि तिनि प्रकृतिरूप परिणमी असे जे अनेक समयनिविषै बंधी ग्रही हुई पुद्गल परमाणू तिनिका अस्तित्व सो प्रदेशसत्त्व है, सो समय समय विषै एक एक समयप्रबद्ध ग्रहे तिनके पूर्वोक्त प्रकार एक एक निषेक क्रमतै निर्जरै। तहां जिनि समयप्रबद्धनिके सर्व निषेक गले तिनिका तौ अस्तित्व रह्या ही नाही। बहुरि कोई समयप्रबद्धका अन्य निषेक गलि एक निषेक अवशेष रह्या, कोईके अन्य निषेक गलि दोय निषेक अवशेष रहे। असैं क्रमतै जाका एक निषेक गल्या ताके तिस विना सर्व निषेक अवशेष रहै है। जाका कोई निषेक न गल्या ताकै सर्व ही निषेक अवशेष रहैं। असैं अवशेष रहे समस्त निषेक तिनके परमाणूनिका मिल्या हुवा प्रमाण किंचित् ऊन ड्योढ गुणहानि गुणित समय-प्रबद्ध प्रमाण है। सो याका विधान गोम्मटसारका कर्मस्थिति रचना सद्भाव अधिकारविषै त्रिकोण रचना करि दिखाया है सो जानना। असैं इनि परमाणूनिका अस्तित्व सो प्रदेशसत्व जानना। इहां जो एक प्रकृतिकी विवक्षा होइ तौ एक प्रकृतिसंबंधी समयप्रबद्ध ग्रहण करना। जो सर्व प्रकृतिकी विवक्षा होइ तौ सर्व प्रकृतिसंबंधी समयप्रबद्ध जानना। बहुरि तिनि अनेक समयनि विषै बंधी प्रकृतिनिकी स्थिति ताका नाम स्थितिसत्व है तहां तिनि प्रकृतिनिका जिस समयप्रबद्धका एक निषेक अवशेष रह्या ताकी एक समयकी स्थिति है, जाका दोय निषेक अवशेष रहे ताके प्रथम निषेकको एक समय अर द्वितीय निषेकको दोय समय स्थिति है। असैं क्रमतै जाका एक हू निषेक न गल्या ताकी प्रथमादि निषेकनिकी एक दोय आदि समयनिकरि अधिक आबाधाकालमात्र स्थितिका क्रमकरि तहां अंत निषेककी संपूर्ण स्थितिबंधमात्र स्थिति है। इहां सत्वविषै अनेक समयप्रबद्धनिके एक समयविषै उदय आवने योग्य अनेक निषेक मिलै जो होइ सो एक निषेक जानना। सो इनि विषै परमाणूनिका प्रमाण आगे कहेंगे। बहुरि सामान्यपनै जो एक प्रकृतिकी विवक्षा होइ तौ ताके पहिले बंध्या वा पीछे बंध्या समयप्रबद्धनिविषै जाके बहुत निषेक सत्ताविषै पाइए तिस समयप्रबद्धके अंतका निषेककी जेती स्थिति तिस प्रमाण स्थितिसत्व कहना। अर सर्व प्रकृतिकी विवक्षा होइ तौ जिस प्रकृतिका समयप्रबद्धके अंत निषेककी बहुत स्थिति होइ ताका अंत निषेककी स्थितिप्रमाण स्थिति-सत्व कहना। बहुरि तिन अनेक समयनिविषै बंधी जे प्रकृति तिनिका जो अनुभाग सत्तारूप है ताका नाम अनुभागसत्व है। तहां एक समयविषै उदय आवने योग्य अनेक समयप्रबद्धनिके निषेक मिलि भया सत्तासंबंधी एक निषेक ताके परमाणूनिविषै अथवा अनेक समयनिविषै बंधे समयप्रबद्धनिके गले पीछे अवशेष निषेक रहे तिन सबनिके परमाणूनिविषै पूर्वोक्त प्रकार अविभागप्रतिच्छेद वर्ग वर्गणा स्पर्धकरूप अनुभागका विशेष जानना। तहां परमाणूनिका प्रमाण पूर्वोक्त प्रकार ल्यावना। बहुरि सामान्यपनै तहां पूर्वोक्त च्यारि प्रकार अनुभागका ग्रहण जानना। असैं सत्वनिका निरूपण कीया।

बहुरि कर्मनिका अपने काल आए फल देनेरूप होइ खिरनेकौं सन्मुख होना सो उदय है सो च्यारि प्रकार—प्रकृति उदय १ प्रदेश उदय २ स्थिति उदय ३ अनुभाग उदय ४। तहां यथासंभव मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृतिका फल देनेरूप उदय आवना सो प्रकृति उदय है। बहुरि तिस उदयरूप प्रकृतिके जे परमाणू खिरनेकौं सन्मुख होइ उदय आवै सो प्रदेश उदय है। तहां अनेक समयनिविषै बंधे समयप्रबद्धनिका तिस विवक्षित एक समयविषै उदय आवने योग्य जे निषेक तिन सब निषेकनिके परमाणू तिस विवक्षित एक समयविषै उदय हो है सो कहिए है—

जिस समयप्रबद्धका एकहू निषेक न गल्या ताका प्रथम निषेक उदय हो है। जाका प्रथम निषेक पूर्वे गल्या ताका द्वितीय निषेक तहां उदय हो है। ऐसे क्रमतै जाके दोय निषेक अवशेष रहे ताका तहां उपांत निषेक उदय हो है। जाका एक निषेक ही अवशेष रह्या ताका सोई अंत निषेक तहां उदय हो है। ऐसे सर्व निषेक मिली एक समयप्रबद्धमात्र परमाणूनिका उदय हो है। बहुरि तहां उदीरणा उत्कर्षण अपकर्षण आदिका वशतै विशेष है सो कहिए है—

ऊपरले नीचले अन्य समयनिविषै उदय आवने योग्य निषेकनिके परमाणू तिस विवक्षित समयविषै उदय आवने योग्य निषेकनिविषै मिलाया होइ तौ ते परमाणू भी तिनही की साथि तिसही समयविषै उदय हो है। जैसे अंक संदृष्टि करि तरेसठिसै परमाणू तौ तिस समय उदय आवने योग्य निषेकनिके थे अर हजार परमाणू अन्य निषेकनिके तहां मिलाए तौ तहां तिहत्तरिसै परमाणूनिका उदय हो है। ऐसे ही तिस समयविषै उदय आवने योग्य निषेक तिनिके परमाणू अन्य निषेकनिविषै मिलाए होइ तौ तहां तिनिके अवशेष परमाणू उदय हो है। जैसे तिरेसठिसै परमाणू तिस समयविषै उदय आवनेयोग्य निषेकनिके थे तिनमैं हजार परमाणू अन्य निषेकनिविषै मिलाए तौ तहां तरेपनसै परमाणूनिहीका उदय हो है। बहुरि तिस समय विषै उदय आवने योग्य निषेकनिका केतेइक परमाणू अन्य निषेकनिविषै अन्य निषेकनिका परमाणू तिनविषै मिलाए होइ तौं तहां जेते परमाणू हीन अधिक भए तिनिहीका उदय हो है। जैसे तिरेसठिसै परमाणू तिस समय उदय आवने योग्य निषेकके थे तिनमैं सातसै परमाणू तौ अन्य निषेकनिके मिले अर हजार परमाणू अन्य निषेकनिविषै दीए तौं तिस समयविषै छै हजार परमाणू ही का उदय हो है। ऐसै उदीरणादिककी अपेक्षा विशेष जानना। बहुरि विवक्षित एक समयविषै जे तिस समयविषै उदय आवने योग्य निषेक तिनिका ही उदय होइ। ताका उदय होतें सत्तारूप स्थितिविषै एक समय घटै है, तातैं तहां एक समयमात्र स्थिति उदय जानना। बहुरि कांडकविधानतै अनेक समयमात्र स्थिति घटाइए है सो विधान आगै लिखेंगे। बहुरि तिस एक समय विषै अनुभागका उदय होना सो अनुभाग उदय है। तहां तिस समयविषै उदय आवने योग्य परमाणूनिविषै पूर्वोक्त प्रकार अविभागप्रतिच्छेद वर्गणा स्पर्धक आदि विशेष जानना। बहुरि जो उत्कर्षण अपकर्षण कांडकादि विधानतै अनुभागका घटना बधना भया होइ तौ तहां जैसा अनुभाग संभवै तितनाहीका उदय जानना। इहां प्रश्न—जो तिस समय विषै उदय आवने योग्य परमाणूनिविषै कोई परमाणूविषै स्तोक अनुभाग है कोई विषै बहुत है तिनि सबनिका एक समय विषै कैसै उदय हो है? ताका समाधान—जैसै कोई वस्तु स्तोक शीतलता करनेकौ कारण है कोई बहुत शीतलता करनेकौ कारण है तिनि सबनिकी गोली एक भई ताका एक काल भक्षण कीया तहां सबनिकी शीतलता मिलै जैसी शीतलता होनी संभवै तैसी भक्षण करनवालेकै शीतलता हो है तैसैं कोई परमाणूनिविषै स्तोक अनुभाग है कोई विषै बहुत अनुभाग है तिनि सबनिका एक निषेक भया ताका एक कालविषै उदय आया तहां सबनिका अनुभाग मिलै जैसा अनुभाग होना संभवै तैसा उदयवालेकै अनुभाग उदय हो है। सामान्यपनै च्यारि प्रकार अनुभाग यथासंभव तहां जानना। ऐसैं उदयका स्वरूप कह्या।

बहुरि अपक्वपाचन कहिए जो पच्या नाही—उदय कालकौं प्राप्त न भया जो कर्म ताका पाचन कहिए पचावना उदय कालविषै प्राप्त करना अैसा है लक्षण जाका सो उदीरणा कहिए है। तहा वर्तमान समयतै लगाए आवलीमात्र कालविषै उदय आवने योग्य जे निषेक तिनिका नाम उदयावली है। ताके ऊपरिवर्त्ती निषेकनिकौ उदयावलीबाह्य कहिए है। तहा उदयावली बाह्य तिष्ठते जे निषेक तिनके परमाणूनिकौं उदयावलीके निषेकनिविषै मिलावना। अैसै बहुत कालविषै उदय आवते ते अपक्व कहिए, तिनिकौ उदयावलीके निषेकनिका साथी उदय होने योग्य करना सो पाचन कहिए अैसा कार्य जिस समयविषै होइ तिस समयविषै उदीरणा नाम पावै है। तिस समयविषै पीछे सोई द्रव्य सत्तारूप वा उदयरूप कहिए है। अैसै उदीरणाका स्वरूप कह्या।

बहुरि स्थिति अनुभागका बधना ताका नाम उत्कर्षण है। तहा स्तोक कालमै उदय आवने योग्य जे नीचेके निषेक तिनिके परमाणू ते बहुत कालमें उदय आवने योग्य जे ऊपरिके निषेक तिनिविषै मिलै अैसै स्तोक स्थितिका बहुत स्थिति होनेका नाम स्थिति उत्कर्षण है। बहुरि स्तोक अनुभागयुक्त जे नीचेके स्पर्धक तिनिके परमाणू ते बहुत अनुभागयुक्त जे ऊपरिके स्पर्धक तिनिविषै मिलै अैसै स्तोक अनुभागका बहुत अनुभाग होनेका नाम अनुभाग उत्कर्षण है। बहुरि अैसै ही स्थिति अनुभागके घटनेका नाम अपकर्षण जानना। तहाँ बहुत कालमें उदय आवने योग्य जे ऊपरिके निषेक तिनके जे परमाणू ते स्तोक कालमै उदय आवने योग्य जे नीचेके निषेक तिनिविषै मिलै अैसै बहुत स्थितिका स्तोक स्थिति होनेका नाम स्थिति अपकर्षण है। बहुरि बहुत अनुभागयुक्त जे ऊपरिके स्पर्धक तिनिके जेते परमाणू ते स्तोक अनुभागयुक्त जे नीचेके स्पर्धक तिनिविषै मिलै अैसै बहुत अनुभागका स्तोक अनुभाग होनेका नाम अनुभाग अपकर्षण है। बहुरि तहाँ विवक्षित सर्व परमाणूनिके समूहकौ उत्कर्षण वा अपकर्षण भागहारका भाग दीए जो एक भागमात्र परमाणू तिनिकौं ग्रहि यथायोग्य नीचै वा ऊपरि मिलाइए तहाँ उत्कर्षण वा अपकर्षणका होना सभवै है। सो उत्कर्षणका वा अपकर्षण भागहारका प्रमाण आगे कहिए है—जो गुणसक्रम भागहार तातै तौ असख्यातगुणा अर अध प्रवृत्त सक्रम भागहारके असख्यातवे भाग अैसा पल्यके अर्धच्छेदनिके असख्यातवा भागमात्र जानना। अैसै उत्कर्षण अर अपकर्षणका स्वरूप कह्या।

बहुरि अन्य प्रकृतिका परमाणू अन्य प्रकृतिरूप जो होइ ताका नाम सक्रमण है। जैसै सक्लेशपनेतै पूर्वै असाता वेदनी बाधी थी पीछे विशुद्धताके बलतै ताका परमाणू साता वेदनीयरूप होइ परिणमै। अैसैही यथायोग्य अन्य प्रकृतिका भी सक्रम जानना। तहाँ सक्रमण होनेविषै पाच प्रकार भागहार सभवै है—उद्वेलन १ विध्यात २ अध प्रवृत्त ३ गुणसक्रम ४ सर्वसक्रम ५। सो इनका कथन गोम्मटसारका कर्मकाडविषै पच भागहार चूलिका अधिकार है तहाँ जानना वा यहा यथावसर कहेंगे। किछू स्वरूप अब भी कहिए है—

उद्वेलन प्रकृतिके जे परमाणू तिनकौं उद्वेलन भागहारका भाग दीए एक भागमात्र परमाणू जहाँ अन्य प्रकृतिरूप होइ परिणमै तहा उद्वेलन सक्रमण कहिए। बहुरि जहा मद विशुद्धतायुक्त जीवकै जाका बध न पाइए अैसी जो विवक्षित प्रकृति ताके परमाणूनिकौं विध्यातभागहारका भाग दीए एक भागमात्र परमाणू अन्य प्रकृतिरूप होइ परिणमैं तहा विध्यात सक्रमण कहिए। बहुरि जहा जाका बध सभवै अैसी जो विवक्षित प्रकृति ताके परमाणूनिकौं अध प्रवृत्त भागहारका भाग दीए एक भागमात्र परमाणू अन्य प्रकृतिरूप होइ परिणमै तहा अध प्रवृत्त सक्रमण कहिए। बहुरि जहा विवक्षित अशुभ प्रकृतिके परमाणूनिकौ गुणसक्रमण भागहारका भाग दीए एक भागमात्र परमाणू अन्य प्रकृतिरूप होइ परिणमैं। बहुरि प्रथम समय जेती परमाणू परिणइ, तातै दूसरे समय असख्यातगुणी परिणमैं, तातै तीसरे समय असख्यातगुणी परिणमैं अैसैं समय समय गुणकार सभवै तहा गुणसक्रमण भागहार कहिए। बहुरि तहा विवक्षित प्रकृतिके परमाणू

अन्य प्रकृतिरूप समय समय परिणमता सता अन्त समयविषैं अन्त फालिरूप ही अवशेष परमाणू ते सर्व ही अन्य प्रकृतिरूप होइ परिणमैं तहा सर्व संक्रमण कहिए। अब इनि भागहारनिका प्रमाण कहिए हैं—

सर्व संक्रमण भागहारका तौ प्रमाण एक है, जातै अवशेष रही परमाणूनिकौ एकका भाग दीए सर्व परमाणूमात्र प्रमाण आवै है, तातै असख्यातगुणा अैसा पल्यका अर्धच्छेद प्रमाणके असख्यातवे भागमात्र गुणसंक्रमण भागहारका प्रमाण है। बहुरि तातै असख्यात गुणा जो उत्कर्षण वा अपकर्षण भागहार तिसतै भी असख्यातगुणा अैसा पल्यके अर्धच्छेदनिके असख्यातवें भागमात्र अध प्रवृत्त संक्रमण भागहारका प्रमाण है। बहुरि तातै असख्यातगुणी जो सख्यात पल्यमात्र कर्मकी स्थिति तातै भी असख्यातगुणा अैसा सूच्यगुलका असख्यातवा भागमात्र विध्यात संक्रमण भागहारका प्रमाण है। बहुरि तातै असख्यातगुणा अैसा सूच्यगुलका असख्यातवा भागमात्र उद्वेलन संक्रमण भागहारका प्रमाण है। अैसै संक्रमणका स्वरूप कह्या।

बहुरि विवक्षित प्रकृतिके जे उदयावलीतै बाह्य निषेक तिनिके परमाणू जे उदयावलीविषै प्राप्त करने योग्य न होइ सो उपशात द्रव्य कहिए। इहाँ उपशम विधानतै मोहका उपशम करिए है ताका ग्रहण न करना, जातै उपशमभाव मोहहीका है अर उपशातकरण सर्व प्रकृतिनिकै पाइए है। अर उपशात आदि तीन करण अष्टम गुणस्थान पर्यंत ही कह्या अर उपशमभाव ग्यारहवा गुणस्थान पर्यंत पाइए है।

बहुरि जे विवक्षित प्रकृतिके परमाणू सक्रमण होनेकौ वा उदयावलीविषै प्राप्त होनेकौ योग्य न होइ सो निधत्तिकरण द्रव्य है। बहुरि जो विवक्षित प्रकृतिके परमाणू सक्रमण करनेकौं वा उदयावलीविषै प्राप्त करनेकौं वा उत्कर्षण अपकर्षण करने योग्य न होइ सो निकाचना द्रव्य है। अैसै इन तीन करणनिका स्वरूप कह्या। इहा अैसा नियमतै जानना जो उपशातादिरूप द्रव्य है सो उपशातादिरूप ही रहै है। पूर्वै उपशातादिरूप था पीछै अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें उदीरणा आदिरूप होइ तौ पीछै किछू दोष नाही है। या प्रकार दश करणनिका स्वरूप पहिचानना। अब इहा दर्शन-चारित्र लब्धिकरि मोक्षका साधन करिए है—

सो मोक्षकी प्राप्ति सवर निर्जरातै होइ। सवर निर्जरा है ते बध सत्वकी हानि भए होइ सो दर्शन-चारित्र लब्धिविषै बध सत्वकी हानि कैसै होइ सो सामान्य स्वरूप इहा कहिए है। विशेष आगे कहिएगा। तहा च्यारि प्रकार बध मिटनेका क्रम कहिए है—

दर्शन-चारित्र लब्धिके निमित्ततै पहिलै मिथ्यात्व नारकगति आदि अति अप्रशस्त प्रकृतिनिका पीछै ज्ञानावरणादि अप्रशस्त प्रकृतिनिका वा प्रशस्त प्रकृतिनिका बध अभाव हो है। तहा प्रकृतिबधका क्रमतै घटना ताका नाम प्रकृति बधापसरण कहिए है, जातै अपसरण नाम घटनेका है। बहुरि प्रदेशबध योगनिके अनुसारि है, तातै योगनिकी चचलता हीन भए प्रदेशबध हीन हो है। सर्वथा योग नाश भए प्रदेशबधका सर्वथा अभाव हो है। बहुरि स्थितिबध कषायनिके अनुसारि है, सो मिथ्यात्व कषायादिककौं हीन होतै स्थितिबध घटै है। तहा बहुरि स्थितिबधका क्रमतै घटना सो स्थितिबधापसरण है, सो पूर्वै जेता स्थितिबध होता था तातै विवक्षित कालविषै जेता स्थितिबध घट्या तिस प्रमाण लीए तहा स्थितिबधापसरण जानना। बहुरि घटै पीछै अवशेष जेता रह्या तितना तहाँ स्थितिबध जानना। बहुरि स्थितिबधापसरण भए जेता कालविषै समान स्थितिबध सम्भवै सो स्थितिबधापसरणका काल जानना। इहा दृष्टान्त—जैसै पूर्वै लक्षवर्षमात्र स्थितिबध सभवै था, तातै एक हजार वर्ष प्रमाण स्थितिबधापसरण भया तब अवशेष निन्याणवै हजार वर्षमात्र स्थितिबध रह्या। सो स्थितिबधापसरणके कालका पहिला समयविषै इतना स्थितिबध होइ, बहुरि इतना ही दूसरे समय होइ, अैसै स्थितिबधापसरणके कालका अत समय पर्यन्त समान स्थितिबध हूवा करै, पीछै आठसै वर्षमात्र अन्य स्थितिबधापसरण भया तब अठ्याणवै हजार दोयसै वर्षमात्र अवशेष स्थितिबध रह्या। सो तिस स्थितिबधापसरण

कालके प्रथमादि समयनिविषै तितना समान स्थितिबंध हूवा करै। ऐसैं ही यथासम्भव प्रमाण जानि स्वरूप जानना। ऐसैं स्थितिबंध घटतै अवना व्युच्छित्ति होनेका समयविषै जघन्य स्थितिबंध हो है पीछैं स्थितिबंधका नाश है। सो आयु विना सर्व प्रकृतिनिका ऐसै क्रमतै जानना। आयुका स्थिति-बंधापसरण न संभवै है, जातै नरक विना तीन आयुका स्थितिबंध विशुद्धतातै अधिक हो है। बहुरि अन्य सब शुभाशुभ प्रकृतिनिका स्थितिबंध संक्लेशतातै तौ बहुत हो है अर विशुद्धतातै स्तोक हो है। बहुरि अनुभागबंध है सो पापप्रकृतिनिका तौ संक्लेशतातै बहुत हो है अर विशुद्धतातै स्तोक हो है। बहुरि पुन्य प्रकृतिनिका संक्लेशतातै स्तोक हो है अर विशुद्धतातै बहुत हो है। सो अनंतगुणा वा यथासम्भव घटता वा बधता अप्रशस्त वा प्रशस्त प्रकृतिनिका अनुभागबंध अधिक हीन क्रमतै जैसैं जहां संभवै तैसै तहां जानना। बहुरि प्रशस्त प्रकृतिनिका अनुभागबंध अधिक होनेतै किछू आत्माका बुरा होता नाही, जातै संसारविषै रहना तौ स्थितिबंधके अनुसारि है अर घातियानितै आत्माका बुरा होइ सो घातिया अप्रशस्त हो है, तातै दर्शनचारित्रकी लब्धितै प्रशस्त प्रकृतिनिके अनुभागको अधिकता अप्रशस्त प्रकृतिनिके अनुभागकी हीनता हो है। तहां कषायनिका अभाव भए सर्वथा अनुभागबंधका अभाव हो है। ऐसैं बंधके अभावतै संवर होनेका विधान जानना। अब सत्त्वनाशका क्रम कहिए है—

दर्शन-चारित्र लब्धिके निमित्ततै पहलै मिथ्यात्वादि अति अप्रशस्त प्रकृतिनिका पीछैं ज्ञानावरणादि अप्रशस्त प्रकृतिनिका वा प्रशस्त प्रकृतिनिका सत्त्व नाश हो है सो सत्त्वनाश स्वमुख उदय करि अर परमुख उदय करि दोय प्रकार हो है। तहां जो प्रकृति अपने ही रूप रहि अपनी स्थिति सत्त्वका अंत निषेकका उदय भए अभावकौं प्राप्त होइ ताका स्वमुख उदय करि सत्त्वनाश कहिए। जैसैं संज्वलन लोभ है सो क्षपक सूक्ष्मसांपरायका अंतविषै अपने ही रूप उदय होइ नाशकौं प्राप्त हो है। बहुरि जो प्रकृति संक्रमणके वशतै अन्य प्रकृतिरूप परिणमि करि अपना अभावकौं प्राप्त होइ ताका परमुख उदय करि सत्त्वनाश कहिए। जैसैं अनंतानुबंधीका विसंयोजन होतै अनंतानुबंधी कषाय है सो अन्य कषायरूप परिणमि नाशकौं प्राप्त हो है। ऐसै ही यथासंभव अन्यत्र जानना। बहुरि एक एक सत्ताके निषेकके परमाणू एक एक समयविषै उदयरूप होइ निर्जरै। बहुरि दर्शन-चारित्र लब्धिके निमित्ततै ऊपरिके निषेकनिके परमाणू नीचले निषेक-रूप होइ परिणमै हैं। तहां एक एक समयविषै साधिक समयप्रबद्धकी वा अनेक समयप्रबद्धनिकी निर्जरा होइ अर बंध समय समय प्रति एक एक समयप्रबद्धका ही होइ, तातै तहां निर्जरा बहुत हो है अर बंध स्तोक हो है। अथवा किसी कालविषै कोई प्रकृतिका बंध नाही हो है, केवल निर्जरा ही हो है। ऐसै सर्व कर्म परमाणूनिका नाश भए सर्वथा प्रदेशसत्त्वका नाश हो है।

बहुरि स्थितिसत्व जो पाइए है तातै एक एक समय व्यतीत होतै तौ एक एक समय घटै ही है। बहुरि दर्शन-चारित्र लब्धिके निमित्ततै स्थिति कांडकविधानतै वा अपकृष्ट विधानतै स्थितिसत्त्वका घटना हो है। तहां प्रथम कांडक विधान कहिए है—

बहुत प्रमाण लीए स्थितिसत्त्व था ताके समय समय विषै उदय आवने योग्य बहुत ही निषेक थे तिनविषै केते इक ऊपरिके निषेकनिका फालिक्रमसे नाश करि स्थितिसत्त्व घटावना। तहां तिनि नाश करने योग्य निषेकनिके जे सर्व परमाणू तिनिकौं नाश कीए पीछैं जो स्थिति रहेगी ताके आवलीमात्र ऊपरिके निषेक जिनमें मिलाया उनके ऊपरके निषेक छोडि सर्व निषेकनिविषै मिलाइए है। तहां तिनि सर्व परमाणूनिविषै केते इक परमाणू पहिले समय मिलाइए है, केते इक दूसरे समय मिलाइए है, ऐसैं यथासंभव अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत परमाणूनिकौं नीचले निषेकनिविषै प्राप्त करिए तहां अंत समयविषै अवशेष रहे सर्व परमाणूनिकौं नीचले निषेकनिविषै प्राप्त होते संतै तिनि नाश करने योग्य निषेकनिका नाश भया तब जितने निषेकनिका नाश भया तितना समयप्रमाण स्थितिसत्त्व तहां घटता भया। इहां दृष्टांत—

जैसै स्थितिसत्त्व अठतालीस समयमात्र था ताके अठतालीस ही निषेक थे अर तिनि सर्व निषेकनिकी पचीस हजार परमाणू थी तिनिविषै आठ निषेकनिका नाश करना तहा तिनि निषेकनिके एक हजार परमाणू तिनिके अवशेष रहेंगे जे चालीस निषेक तिनिविषै अन्तिम फालिकी अपेक्षा ऊपरिके दोय निषेक छोडि नीचेके अठतीस निषेकनिविषै मिलाइए है, तहा तिन निषेकनिविषै केते इक परमाणू तौ पहिले समय मिलाइए, केते इक दूसरे समय मिलाइए, अैसै च्यारि समय पर्यंत मिलाइए हैं। तहा चौथे समय अवशेष सर्व परमाणूनिकौ तिनि अठतीस निषेकनिविषै मिलाए तिनि आठ निषेकनिका अभाव हो है। तिनिके अभाव होतै अठतालीस समयका स्थिति सत्त्व था सो चालीस समयहीका रहै है। अैसै ही यथासभव प्रमाण जानि दार्ष्टांतविषै विधान जानना। अब इहा सज्ञा कहिए है—

अैसै ऊपरिके निषेकनिकी क्रमतै निचले निषेकरूप परिणमाइ स्थितिका घटावना ताका नाम स्थिति-कांडक है वा स्थितिखड है। बहुरि इस एक कांडकविषै निषेकनिका नाश करि जेती स्थिति घटाई ताके प्रमाणका नाम स्थितिकांडक आयाम है। जैसै दृष्टांतविषै आठ समय। बहुरि तिनिका नाश करने योग्य निषेकनिका जो सर्व द्रव्य ताका नाम कांडकद्रव्य है। जैसै दृष्टांतविषै एक हजार। बहुरि इस द्रव्यकौ अवशेष स्थितिके निषेकनिविषै मिलावना तहा आवलीमात्र निषेकनिविषै न मिलाया ताका नाम अतिस्थापनावली है। जैसै दृष्टांतविषै दोय निषेक। बहुरि या विना अन्य अवशेष स्थितिके निषेकनिविषै तिस कांडक द्रव्यकौ मिलावना ताका नाम कांडकोत्करण है वा कांडकघात है। बहुरि एक कांडकका अपकर्षण अंत-र्मुहूर्त काल करि पूर्ण होइ ताका नाम कांडोत्करणकाल है। जैसै दृष्टांतविषै च्यारि समय। बहुरि इस कालके प्रथम समयविषै तिस कांडक द्रव्यकौ ग्रहि जेते परमाणू अवशेष निषेकनिविषै मिलाए ताका नाम प्रथम फालि है। द्वितीय समयविषै मिलाए ताका नाम द्वितीय फालि है। अैसै ही क्रमतै अंत समय विषै मिलाए ताका नाम चरम फालि है। अन्त समयतै पहिले समय विषै मिलाए ताका नाम द्विचरम फालि है। अैसै एक कांडक समाप्त भए द्वितीय कांडक प्रारम्भ हो है। अैसै ही अनेक कांडक भए स्तोक स्थितिसत्त्व अवशेष रहि जाइ तब कांडक क्रिया न हो है। एक एक समय व्यतीत होतै एक एक समय क्रमतै घाटि तिस अवशेष स्थितिका नाश हो है। अैसै कांडक विधान कह्या। अब अपकृष्टि विधान कहिए है--

विवक्षित कर्म प्रकृतिके सर्व निषेकसम्बन्धी सर्व परमाणू तिनकौं अपकर्षण भागहारका भाग दीए एकभागमात्र परमाणू ग्रहे ताका नाम अपकृष्ट द्रव्य है। तिस अपकृष्ट द्रव्यविषै केते इक परमाणू तौ उदया-वलीविषै मिलाए, केते इक परमाणू गुणश्रेणि आयामविषै मिलाए, अवशेष परमाणू उपरितन स्थितिविषै मिलाए। वहा वर्तमान समयतै लगाय आवलीमात्र समयसबधी जे निषेक तिनका नाम उदयावली है। तिन विषै उदयावली विषै देने योग्य जो द्रव्य ताकौं निषेक निषेक प्रति एक एक चय घटता क्रम करि मिलाईए। बहुरि तिनि आवलीमात्र निषेकनिके ऊपरिवर्ती यथासभव अतर्मुहूर्तके समयसबधी जे निषेक तिनिका नाम गुण-श्रेणी आयाम है। तिनिविषै गुणश्रेणी आयामविषै देने योग्य जो द्रव्य ताकौं निषेक निषेक प्रति असख्यात-गुणा क्रम लीए मिलाइए है। बहुरि तिनके उपरिवर्ती अवशेष सर्व स्थितिसबधी निषेक तिनका नाम उपरितन स्थिति है। तिनविषै अन्तके आवलीमात्र निषेकनिविषैं तौ द्रव्य न मिलाइए है ताका नाम तौ अतिस्थापना-वली है। अर तिस विना अन्य निषेकनिविषै उपरितन स्थितिविषै देने योग्य जो द्रव्य ताकौं नाना गुणहानि रचना करि निषेक प्रति चय घटता क्रम लीए मिलाइए है। इहा दृष्टात जैसै विवक्षित कर्म प्रकृतिकी स्थिति अठतालीस समय ताके निषेक अडतालीस, तिनके सर्व परमाणू पचीस हजार, तिनिकौं अपकर्षण भागहारका प्रमाण पाच ताका भाग दीए पाच हजार पाए सो सर्व परमाणूनिमैस्यौं इतनी परमाणू ग्रहिकरि तिनिविषै

दोयसै पचास परमाणू तौ उदयावलीविषै दई सो अठतालीस निषेकनिविषै प्रथमादि च्यारि निषेक उदयावली के हैं तिनविषै चय घटता क्रमकरि मिलाइए। बहुरि एक हजार परमाणू गुणश्रेणि आयामविषै दई सो पाचवा आदि बारहवा पर्यंत आठ निषेक गुणश्रेणि आयामके है तिनविषै असख्यातगुणा क्रम लीए मिलाइए। बहुरि तीन हजार सातसै पचास परमाणू उपरितन स्थितिविषै दई सो छत्तीस निषेक अवशेष रहे तिनिविषै अतके च्यारि निषेक अतिस्थापनारूप छोडि अवशेष तेरहवा आदि चवालीस पर्यंत बत्तीस[1] निषेकनिविषै नाना गुणहानिकी रचना लीए चय घटता क्रमकरि मिलाइए। ऐसै ही दार्ष्टांतविषै यथासभव प्रमाण जानि स्वरूप जानना। चय घटता क्रमकरि वा असख्यातगुणा क्रमकरि मिलाइए। मिलावनेका विधान आगे कहेंगे। इहा यहु उदयावलीतैं बाह्य गुणश्रेणी आयामका स्वरूप दिखाया। बहुरि कहो उदयादिक गुणश्रेणि आयाम हो है तहा अपकृष्ट द्रव्यविषै केता इक द्रव्यकौ तौ गुणश्रेणि आयाम प्रमाण जे वर्तमान समयसबधी निषेकतै लगाय निषेक तिनिविषैं असख्यातगुणा क्रमकरि मिलावै। अवशेषकौं उपरितन स्थितिविषैं मिलावै सो इहा गुणश्रेणिआयामविषै उदयावली गर्भित भई, तातै उदयादि गुणश्रेणि आयाम कहिए।

बहुरि गुणश्रेणिके निषेकनिका प्रमाणमात्र जो यह गुणश्रेणिआयाम कह्या सो कही गलितावशेष हो है, कही अवस्थित हो है। तहा गलितावशेष गुणश्रेणिका प्रारभ करनेकौं प्रथम समय विषै जो गुणश्रेणि आयामका प्रमाण था तामै एक एक समय व्यतीत होतैं ताके द्वितीयादि समयनिविषैं गुणश्रेणिआयाम क्रमतैं एक एक निषेक घटता होइ अवशेष रहै ताका नाम गलितावशेष है। बहुरि अवस्थित गुणश्रेणिआयामके प्रारभ करनेका प्रथम द्वितीयादि समयनिविषैं गुणश्रेणिआयाम जेताका तेता रहै। ज्यू ज्यू एक एक समय व्यतीत होइ त्यू त्यू गुणश्रेणिआयामके अनतरिवर्ती ऐसा उपरितन स्थितिका एक एक निषेक गुणश्रेणि आयामविषै मिलता जाइ तहा अवस्थित गुणश्रेणिआयाम कहिए है। बहुरि इस गुणश्रेणि आयामके अतके बहुत निषेकनिका नाम कही गुणश्रेणि शीर्ष कह्या है। कही अतके एक निषेकका ही नाम गुणश्रेणी शीर्ष है। जातै शीर्ष नाम ऊपरिवर्ती अगका है। ऐसै विवक्षित स्थानविषैं यथासभव प्रमाण जानि गुणश्रेणि निर्जराका विधान जानना।

बहुरि इहा उदयावलीविषै दीया द्रव्य ताका नाम उदीरणा जानना। बहुरि जहा स्तोक स्थिति सत्त्व अवशेष रहै है तहा गुणश्रेणिका भी अभाव हो है। अपकृष्ट द्रव्यविषै केताइक द्रव्यकौ उदयावलीविषै देइ अवशेषकौ उपरितन स्थितिविषै दे है। बहुरि एक समय अधिक आवलीमात्र स्थिति रहैं आवलीके उपरिवर्ती जो एक निषेक ताका द्रव्यकौं अपकर्षणकरि उदयावलीके[2] निषेकनिविषै एक समय घाटि आवली-का दोय त्रिभागमात्र निषेकनिकौं अतिस्थापनारूप छोडि समय अधिक आवलीको त्रिभागमात्र निषेकनिविषै मिलावै है। तहा जघन्य उदीरणा नाम पावै है। ऐसै अपकृष्टि विधान है। इहा ऐसा जानना—

काडकविधानतै तौ स्थिति सत्त्वका घटना मूलतै हो है जातै तहा ऊपरिके केते इक निषेकनिका नाशकरि स्थिति सत्त्वका घटना मूलतै है। बहुरि अनुकृष्टि विधानविषै ऊपरिकी निषेकनिकी केती इक पर-माणूनिहीकी स्थिति घटाइए है। मूलतैं निषेक नाश नाही होइ, तातैं मूलतै स्थितिसत्त्व घटना न हो है। बहुरि स्थितिसत्त्वविषै आवलीमात्र अवशेष रहै ताका नाम उच्छिष्टावली है। तहा उदीरणा आदि कार्य न हो है। पूर्वे कार्य भए थे तिनिकरि एक एक समयविषैं उदय आवने योग्य ऐसे

१ यहाँ जिस ४८वें निषेकके कुछ द्रव्यका अपकर्षण हुआ है उसे भी अतिस्थापनावलिमें सम्मिलित कर उनका कथन किया गया है।

२ मुद्रित प्रतिमें 'अपकर्षणकरि उदयावलिके निषेकनिविषै एक समयघाटि आवलिका उपरिवर्ती जो एक निषेकताका द्रव्यकौं अपकर्षणकरि उदयावलिके' ऐसा पाठ है।

अनेक समयप्रबद्धमात्र परमाणूके समूहरूप निषेक भए तिनकरि एक समय विषै गलै निर्जरै है। याका नाम अधोगलन है। ऐसै उच्छिष्टावली व्यतीत भये सर्वथा स्थितिसत्त्वका नाश हो है। ऐसै मुख्यपनै संक्षेप स्वरूप दिखाया है। विशेष आगे कहैं ही गे। बहुरि सत्तारूप विवक्षित कर्म प्रकृतिके जे परमाणू तिनविषै अनुभागकी अधिकता हीनताकरि स्पर्धक रचना है सो पूर्वै विधान कह्या है। तहा नीचेके स्पर्धक स्तोक अनुभाग युक्त है। ऊपरिके स्पर्धक बहुत अनुभागयुक्त है। तहाँ जो निषेक उदय आवै हैं ताके अनुभागका भी उदय पूर्वोक्त प्रकार हो है। बहुरि दर्शन-चारित्र लब्धितैं अप्रशस्त प्रकृतिनिका अनुभाग घटावना हो है। तहाँ जैसे स्थिति घटावने विषै काडक विधान कह्या तैसे इहां भी विधान जानना। सो कहिए है—

बहुत अनुभाग युक्त ऊपरिके बहुत स्पर्धकनिका अभाव करि तिनके परमाणूनिकौं स्तोक अनुभाग युक्त नीचेके स्पर्धकनिविषै क्रमतै मिलाइ अनुभागका घटावना ताका नाम अनुभाग काडक है वा अनुभाग खडन है। ताकौं लाछित करना कहिए खडन करना सो अनुभाग काडकोत्करण है वा अनुभाग काडकघात है। बहुरि एक अनुभाग काडकका घात अतर्मुहूर्तकालकरि सपूर्ण होइ तिस कालका नाम अनुभाग काडकोत्करण काल है। तिस कालविषै नाश करने योग्य स्पर्धकनिके परमाणूनिकौ ग्रहि नाश कीए पीछे जे अवशेष स्पर्धक रहे तिनिविषै केते इक ऊपरिके स्पर्धक अतिस्थापनारूप छोडि अन्य सर्व स्पर्धकनिविषै मिलावै है। इहा दृष्टात—

जैसे विवक्षित प्रकृतिके पाचसै स्पर्धक थे तिनिका अनतका प्रमाण पाच ताका भाग दीए तहा बहुभागप्रमाण च्यारिसै स्पर्धकनिका नाश करना। तहा तिनिके परमाणूनिकौं अवशेष सौ स्पर्धक रहैगे तिनिविषै दश स्पर्धक अतिस्थापनारूप छोडि निवै स्पर्धकनिविषै मिलावै है। ऐसे ही यथासभव प्रमाण जानि दृष्टातविषै स्वरूप जानना। बहुरि इहा एक अनुभाग काडककरि जेता अनुभाग घटाया ताका नाम अनुभाग काडक आयाम है। बहुरि नाश करने योग्य स्पर्धकनिके सर्व परमाणूनितैं ग्रहि करि अनुभाग काडकका प्रथम समयविषै जेती परमाणू अवशेष स्पर्धकनिविषै मिलाईं ताका नाम प्रथम फालि है। द्वितीय समय विषै मिलाईं ताका नाम द्वितीय फालि है ऐसै ही क्रम जानना। या प्रकार एक काडकको समाप्त भए अन्य काडकका प्रारम्भ हो है सो ऐसे अनेक अनुभाग काडकनिकरि अनुभाग घटाइए है। बहुरि जहा विशुद्धता बहुत हो है तहा अतर्मुहूर्त करि होता था जो काडकघात ताका अनुभाग हो है। अर समयापवर्तन हो है तहा समय समय प्रति अनतगुणा क्रमकरि अनुभाग घटाइए हैं। पूर्व समय विषै जो अनुभाग था ताकौ अनतका भाग दीए बहुभागका नाशकरि एक भागमात्र अनुभाग अवशेष राखै है। ऐसै समय समय प्रति अनुभागका घटावना भया तातैं याका नाम अनुसमयापवर्तन है।

बहुरि सज्वलन कषाय विषै अनुभाग घटनेका क्रमकरि अपूर्व स्पर्धक रचना अर बादर कृष्टि रचना हो है। सज्वलन लोभ विषै सूक्ष्म कृष्टि रचना हो है सो इनिका विशेष व्याख्यान आगै होगा। बहुरि सर्वत्र स्तोक अनुभागयुक्तकी तौ नीचै रचना अर बधती अनुभागयुक्तकी ऊपरि रचना जानना। ताकी अपेक्षा स्पर्धकनिकौं कृष्टिनिकौं नीचै ऊपरि कहिए है। ऐसै क्रमतै अप्रशस्त प्रकृतिनिका अनुभागसत्त्वका नाश हो है। प्रकृतिसत्त्व नाश भए सर्वथा तिनिका अनुभागसत्त्व नाश हो है। बहुरि प्रशस्त प्रकृतिनिका काडकादि विधानतैं अनुभागसत्त्वका नाश करिए है। प्रकृतिसत्त्वका नाशकी साथि तिनिका अनुभागसत्त्वका नाश जानना। या प्रकार सत्त्वनाशका क्रमकरि निर्जरा होनेका विधान जानना। बहुरि सवर निर्जराके योगतैं सर्व कर्मका सर्वथा नाश भए शुद्धात्माकी व्यक्त अवस्थारूप मोक्ष हो है सो यहु दर्शन-चारित्र लब्धिका फल है। इहा कोई क्रियानिका किंचित् स्वरूप दिखाया है। इनिका भी वा अन्य क्रिया अनेक हो है तिनिका विशेष व्याख्यान आगै ग्रथ विषै होइ होगा। अब इहा केती एक सज्ञा कही वा आगै सज्ञा कहैगे तिनका स्वरूप दिखाइए है।

कर्म प्रकृतिनिका कथनविषै तिनिकी परमाणूनिका नाम द्रव्य है। जैसै बधरूप परमाणूनिका नाम बध द्रव्य है, सत्त्वरूप परमाणूनिका नाम सत्त्वद्रव्य है। स्थिति काडकके निषेकनिकी परमाणूनिका नाम काडक द्रव्य है। तहा प्रथमादि फालिनिके परमाणूनिका नाम प्रथमादि फालिनिका द्रव्य है। ऊपरिके वा नीचैके निषेक छोडि बीचिके केते इक निषेकनिका अभाव करनेरूप अतरकरण हो है। तहा अभाव करनेरूप निषेकनिके परमाणूनिका नाम अतरकरण द्रव्य है। उदय आवनेकौं अयोग्य कीए परमाणूनिका नाम उपशम द्रव्य है। विवक्षित सत्तारूप निषेक था तिस विषै नवीन परमाणू मिलाई तिनका नाम दीयमान द्रव्य है। आगै सत्तारूप थी अर ए नवीन मिली इनि सब परमाणूनिके समूहका नाम दृश्यमान द्रव्य है। ऐसै ही अन्यत्र जानना।

बहुरि काडक नाम पर्वका है अर जैसै साठानिविषै पैली हो है तैसै मर्यादारूप स्थानका नाम पर्व है। जैसै स्थितिविषै घटनेकरि मर्यादारूप स्थान भया ताका नाम स्थिति काडक है। अनुभागविषै घटनेकरि मर्यादारूप स्थान भया ताका नाम अनुभाग काडक है। बहुरि अनतानुबधीकी स्थितिविषै च्यारि स्थान कहे तहा च्यारि पर्व कहे। बहुरि अपकृष्ट द्रव्यके मिलावनेके जहा तीन स्थान है तहा तीन पर्व कहे। ऐसै ही अन्यत्र जानना।

बहुरि आयाम नाम लबाईका है सो कालके समय भी युगपत् न हो है, तातै कालका प्रमाणविषै आयाम सज्ञा कहिए है। वा कही ऊपरि ऊपरि रचना होइ तहा तिनिका प्रमाणविषै भी आयाम सज्ञा कहिए है। जैसै स्थितिके प्रमाणका नाम स्थिति आयाम है। स्थिति काडकके निषेकनिके प्रमाणका नाम स्थिति काडक आयाम है। अतरकरणविषै जितने निषेकनिका अभाव कीया है ताका नाम अतरायाम है। गुण श्रेणिके निषेकनिके प्रमाणका नाम गुणश्रेणि आयाम है। ऐसै ही अन्यत्र जानना।

बहुरि गुण नाम गुणकारका है तहा गुणकारकी पक्ति लीए जहा निषेकनिविषै द्रव्य दीजिए ताका नाम गुणश्रेणि है। समय समय गुणकार लीए विवक्षित प्रकृतिकी परमाणू अन्य प्रकृतिरूप सक्रमण करै ताका नाम गुणसक्रम है। गुणकार लीए हानि कहिए हीनता घटवारी जहा होइ ताका नाम गुणहानि है। ऐसै ही अन्यत्र जानना।

बहुरि कर्मस्थितिविषै निषेकनिका प्रमाणरूप स्थिति कहिए है—जैसे विवक्षित निषेकनिके ऊपरिवर्ती निषेकनिका नाम उपरितन स्थिति है। गुणश्रेणिका कथनविषै तौ गुणश्रेणि आयामतै ऊपरिवर्ती निषेकनिका नाम उपरितन स्थिति है। केवल उदीरणाका कथनविषै उदयावलीतै ऊपरिवर्ती निषेकनिका नाम उपरितन स्थिति है इत्यादि जानना।

बहुरि विवक्षित प्रमाण लीए नीचले निषेकनिका नाम प्रथम स्थिति है। बहुरि उपरिवर्ती सर्वस्थितिके निषेकनिका नाम द्वितीय स्थिति है। जैसै अतरायामतै नीचले निषेकनिका नाम प्रथम स्थिति, ऊपरले निषेकनिका नाम द्वितीय स्थिति है। अथवा सज्वलन क्रोधका जेता प्रमाण लीए प्रथम स्थिति स्थापी ताके निषेकनिका नाम प्रथम स्थिति है। अवशेष सर्व स्थितिके निषेकनिका नाम द्वितीय स्थिति है। इत्यादि जानना।

बहुरि समुदायरूप एक क्रिया विषै जुदा जुदा खडकरि विशेष करना ताका नाम फालि है। जैसै काडक द्रव्यका काडकोत्करण काल विषै अन्यत्र प्राप्त करना तहा प्रथम समय प्राप्त कीया सो काडककी प्रथम फालि, द्वितीय समयविषै प्राप्त कीया सो द्वितीय फालि, इत्यादि। बहुरि ऐसै ही उपशमन कालविषै पहले समय जेता द्रव्य उपशमाया सो उपशमकी प्रथम फालि, द्वितीय समय उपशमाया सो ताकी द्वितीय फालि इत्यादि ऐसै ही अन्यत्र जानना। बहुरि अन्य निषेकके परमाणू अन्य निषेक विषै मिलाइए तहा मिलावना वा देना वा निक्षेपण करना कहिए। जिनि निषेकनिविषै दीए ते निषेक निक्षेपणरूप जानने।

अर जिनि निषेकनिविषै न मिलाइए ते निषेक अतिस्थापनरूप जानने। बहुरि द्वितीय स्थितिके निषेकनिका द्रव्यको प्रथम स्थितिके निषेकनिविषै मिलाइए तहा आगाल सज्ञा कहिए है। अर प्रथम स्थितिके निषेकनिका द्रव्यकौं द्वितीय स्थितिके निषेकनि विषै मिलाइये तहा प्रत्यागाल सज्ञा कहिये। बहुरि विवक्षितके कालका जो प्रमाण सोई ताका काल है। जैसै एक काडकका घात करनेका जो काल ताका नाम काडकोत्करण काल है। तहा प्रथम समयविषै प्रथम फालिका पतन जो नीचले निषेकनिविषै प्राप्त होना सो हो है। तातै तिस प्रथम समयकौं प्रथम फालिका पतन काल कहिए। द्वितीय समयकौ द्वितीय फालिका पतन काल कहिए। ऐसै ही अन्त समयकौं चरम फालि पतन काल कहिए। ताके पूर्व समयकौं द्विचरम फालि पतन काल कहिए। बहुरि जिस कालविषै अतरकरण करिए ताका नाम अतरकरण काल है। बहुरि जिस कालविषै क्रोधकौं वेदै ताके उदयकौं भोगवै ताका नाम क्रोध वेदककाल है। ऐसै ही अन्यत्र जानना।

बहुरि आवलीमात्र कालका वा तितने कालसबधी निषेकनिका नाम आवली है। तहा वर्तमान समयतै लगाय आवलीमात्र कालकौ आवली कहिए वा तिनिके निषेकनिकौ भी आवली कहिए वा उदयावली कहिए। अर ताके ऊपरिवर्ती जो आवली ताकौ द्वितीयावली कहिए वा प्रत्यावली कहिए। बहुरि बध समयतै लगाय आवलीपर्यंत उदीरणादि क्रिया न होइ सकै ताका नाम बधावली है वा अचलावली है वा आबाधावली है। बहुरि द्रव्य निक्षेपण करतै जिनि आवलीमात्र निषेकनिविषै नाही निक्षेपण करिए ताका नाम अतिस्थापनावली है। बहुरि स्थितिसत्त्व घटतै जो आवलीमात्र स्थिति अवशेष रहि जाय ताका नाम उच्छिष्टावली है। बहुरि जिस आवलीविषै सक्रमण पाइए सो सक्रमणावली अर उपशमन करना पाइए सो उपशमावली। इत्यादि ऐसै ही अन्यत्र जानना।

बहुरि अन्त नाम माहीका है सो उक्त प्रमाणतै किछू घाटि होइ तहा अत सज्ञा हो है, तहा कोडाकोडीके नीचै कोडिके ऊपरि ताकौं अन्तःकोटाकोटी कहिये। मुहूर्त्ततै घाटि आवलीतै अधिक ताकौ अतर्मुहूर्त कहिये। दिवसतै किछू घाटि ताकौं अतर्दिवस कहिये इत्यादि। बहुरि तीनके ऊपरि नवके नीचै ताका नाम पृथक्त्व है। वा कही बहुत हजारोका भी नाम पृथक्त्व है। सो यथासबध जानना। बहुरि कही दृष्टात अपेक्षा सज्ञा हो है जैसै कोऊ गायका पूछ क्रमतै घटता हो है तैसै इहा एक एक चय घटता क्रमकरि निषेक पाइए तहा गोपुच्छ सज्ञा कहिए। बहुरि द्रव्य देनेविषै जहा ऊटकी पीठिवत् हीन अधिकपना होइ तहा उष्ट्रकूट सज्ञा कहिए। बहुरि जहा समान पाटीका आकारवत् सर्वस्थाननिविषै समान रचना होइ तहा समपट्टिका कहिए इत्यादि जानना। या प्रकार जैसै व्याकरणविषै केती इक सज्ञा तौ सज्ञा सधिविषै कही, केती इक सज्ञा जहा प्रयोजन भया तहा कही तैसै इस ग्रथविषै केती इक सज्ञा तौ इहा पीठबधविषै कही है। केती इक सज्ञा आगै शास्त्रविषै जहा प्रयोजन होगा तहा कहिएगा। अब इहा द्रव्यका विभाग करनेका विधानकौ कारण करण सूत्र कहिए है। तहा नाना गुणहानिविषै चय घटता क्रमरूप द्रव्यके विभागका विधान कहिए है—

पहिलै द्रव्य १ स्थिति २ गुणहानि ३ नाना गुणहानि ४ दो गुणहानि ५ अन्योन्याभ्यस्त ६ राशि इनका स्वरूप वा प्रमाण जानना। तहा प्रथम सम्बन्ध विषै स्थिति रचनाकी अपेक्षा करि विवक्षित समयविषै ग्रहण कीए जे समयप्रबद्ध परिमाण परमाणू सो द्रव्य है। ताकी आबाधारहित स्थितिबधके समयनिका जो प्रमाण सो स्थिति है। तहा एक गुणहानिविषै निषेकनिका प्रमाण सो गुणहानि आयाम है। स्थितिविषै गुणहानिका जो प्रमाण सो नाना गुणहानि है। गुणहानि आयामतै दूणा प्रमाण सो दो गुणहानि है। नाना गुणहानिमात्र दूवा माडि परस्पर गुणै जो प्रमाण होइ सो अन्योन्याभ्यस्त राशि है। जैसै मिथ्यात्वका द्रव्य तौ अपने समयप्रबद्धमात्र है। स्थिति सत्तर कोडाकोडी सागर है। स्थितिकौं नाना गुणहानिका भाग दीए जो प्रमाण होइ तितना गुणहानिआयाम है। पल्यके अर्धच्छेदनिविषै पल्यकी वर्गशलाकाके अर्धच्छेद घटाए जो होइ तितना नाना गुण-

हानि है। गुणहानि आयामतै दूणा दो गुणहानि है। पल्यकौं पल्यकी वर्गशलाकाका भाग दीजिए इतना अन्योन्याभ्यस्तराशि है। अैसै ही अन्य प्रकृतिनिविषै यथासम्भव प्रमाण जानना। अब अनुभाग रचनाकी अपेक्षा कहिए है—

विवक्षित कर्म प्रकृतिके परमाणूनिका प्रमाण सो तो द्रव्य है। तहा सर्व वर्गणानिका जो प्रमाण सो स्थिति है। एक गुणहानिविषै वगणानिका प्रमाण सो गुणहानिआयाम है। स्थितिविषै गुणहानिका प्रमाण सो नानागुणहानि है। दूणा गुणहानिमात्र दो गुणहानि है। नाना गुणहानिमात्र दूवानिकौं परस्पर गुणें जो होइ सो अन्योन्याभ्यस्तराशि है। सो सर्व प्रकृतिनिकी अनुभाग रचनाविषै इन छहौनिका प्रमाण यथासभव हीनाधिकपनाकौं लीए अनन्त प्रमाण जानना। बहुरि जहा काडकादि द्रव्य ग्रहिकरि यथायोग्य निषेकनि विषै निक्षेपण करना होइ तहा कहिए है—

जेता द्रव्य ग्रह्या होइ सो तीहि प्रमाण तो द्रव्य है। जितने निषेकनिविषै देना होइ तिनिका प्रमाण मात्र स्थिति है। गुणहानिका प्रमाण बधकी स्थितिरचना विषै कह्या तितना है। याका भाग इहा सम्भवती स्थितिकौं दीए नाना गुणहानिका प्रमाण आवै है। दूणा गुणहानिमात्र दो गुणहानि है। नाना गुणहानिमात्र दूवानिकौं परस्पर गुणै अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण हो है। सो इहा इन छहौका प्रमाण विवक्षित स्थानविषै जैसा सभवै तैसा जानना। अब इहा स्थिति रचना अपेक्षा निषेकनिविषै द्रव्यका प्रमाण ल्यावनेकौं विधान कहिए है—

प्रथम दृष्टात—जैसै द्रव्य तरेसठिसै ६३००, स्थिति गीस ४८, गुणहानि आयाम आठ ८, नाना गुणहानि छह ६, दो गुणहानि सोलह १६, अन्योन्याभ्यस्त राशि चौसठि ६४, स्थापि विधान कहिए है– 'दिवड्ढ गुणहाणिभाजिदे पढमा" सर्व द्रव्यकौं साधिक डचोढ गुणहानिका भाग दीए प्रथम निषेक होइ जैसै तरेसठिसैकौं साधिक बारहका भाग दीए पाचसै बारा होइ। बहुरि 'त दोगुणहाणिणा भजिदे पचय' तिस प्रथम निषेककौं दो गुणहानिका भाग दीए चयका प्रमाण आवै है। जैसै पाचसै बाराकौं सोलहका भाग दीए बत्तीस होंइ सो द्वितीयादि निषेकनिविषै एक एक चय प्रमाण द्रव्य घटता जानना। जैसै द्वितीय निषेकनिविषै च्यारिसै असी, तृतीयविषै च्यारिसै अठतालीस इत्यादि जानना।

बहुरि अैसै क्रमतै जिस निषेकविषै प्रथम निषेकतैं आधा प्रमाण होइ तहातै लगाय दूसरी गुणहानि जाननी। जैसै दूसरी गुणहानिका प्रथम निषेक दोय सै छप्पन। बहुरि तहा चयका प्रमाण प्रथम गुणहानितै आधा है। जैसै सोलह। सो इहा भी द्वितीयादि निषेकनिविषै एक एक चय घटता क्रम जानना। अैसै प्रथम गुणहानितै द्वितोय गुणहानिविषै द्रव्य चय निषेकनिका प्रमाण आधा भया। याही प्रकार तृतीयादि गुणहानिनिविषै पूर्व पूर्व गुणहानितै द्रव्य चय निषेकनिका प्रमाण क्रमतै आधा आधा जानना। सो जितना नाना गुणहानिका प्रमाण होइ तितनो गुणहानिनि विषै अैसै रचना करनी। जैसै दृष्टातविषै रचना अैसी—

२८८	१४४	७२	३६	१८	९
३२०	१६०	८०	४०	२०	१०
३५२	१७६	८८	४४	२२	११
३८४	१९२	९६	४८	२४	१२
४१६	२०८	१०४	५२	२६	१३
४४८	२२४	११२	५६	२८	१४
४८०	२४०	१२०	६०	३०	१५
५१२	२५६	१२८	६४	३२	१६

बहुरि अन्यप्रकार विधान कहिए है—

मर्व द्रव्यकी एक घाटि अन्योन्याभ्यस्त राशिका भाग दीए अत गुणहानिके द्रव्यका प्रमाण आवै है

जैसैं तरेसठिसैंको तरेसठिका भाग दीए सौ होइ। बहुरि द्विचरम गुणहानि आदि विषै दूणा दूणा होइ। आधा अन्योन्याभ्यस्त राशिकरि अंत गुणहानिके द्रव्यकों गुणैं प्रथम गुणहानिका द्रव्य हो है। जैसैं सौकों बत्तीस करि गुणैं बत्तीससैं होइ। ऐसैं गुणहानिके द्रव्यका प्रमाण ल्याइ अब गुणहानिनिविषै निषेकनिके द्रव्यका प्रमाण ल्याइए है, तहां प्रथम गुणहानिका सर्व द्रव्य वा निषेकनिका प्रमाण जानना।

जैसैं द्रव्य बत्तीससैं ३२००, निषेक आठ, तहां 'अद्धाणेण सव्वधने खंडिदे मज्झिम-धणमागच्छदि' अध्वान जो निषेकनिका प्रमाणमात्र गच्छसोकरि सर्वधन जो सर्वद्रव्य सो भाजित कीए बीचके निषेकका प्रमाणमात्र मध्यम धन आवै है। जैसैं बत्तीससैंकों आठका भाग दीए च्यारिसैं होइ। बहुरि 'त रूऊणद्धाणूणेण णिसेयभागहारेण हदे पचय' तिस मध्यम धनकौ एक घाटि गच्छका आधा प्रमाण करि हीन जो निषेक भागहार दो गुणहानि ताका भाग दीए चयका प्रमाण आवै है। जैसैं सातका आधा साढा तीन ताकरि हीन सोलहकौं कीए साढा बारह ताका भाग च्यारिसैंकौ दीए बत्तीस पाये सो चयका प्रमाण है। बहुरि 'त दोगुणहाणिणा गुणिदे आदिणिसेय, तिस चयकौं दो गुणहानिकरि गुणै प्रथम निषेकका प्रमाण आवै है। जैसैं बत्तीसकौ सोहलकरि गुणें पाचसैं बारह होइ। बहुरि 'तत्तो विसेसहीणकम तहां पीछें द्वितीयादि निषेकनिविषैं विशेष कहिए चयका प्रमाण ताकरि हीनक्रम जानना। एक एक चयमात्र घटता क्रमतैं जानना। तहां एक एक अधिक गुणहानिकरि चयकौं गुणै अंत निषेकका प्रमाण हो है। जैसैं नवकरि बत्तीसकौ गुणे दोयसैं अठ्यासी होइ। बहुरि ऐसैं ही द्वितीयादि गुणहानिका द्रव्य स्थापि तहां निषेकनिके द्रव्यका प्रमाण ल्यावना। द्वितीयादि गुणहानिनिविषै पूर्व गुणहानितै द्रव्यका वा चयका वा निषेकका प्रमाण क्रमतै आधा आधा जानना। ऐसैं विधान कह्या।

बहुरि अनुभाग रचनाविषै भी ऐसैं ही विधान जानना। विशेष इतना—इहां द्रव्यादिकका प्रमाण जैसा संभवै तैसा जानना। बहुरि तहां जैसैं निषेकनिविषैं परमाणूनिका प्रमाण ल्याया तैसैं इहां वर्गणानिविषै परमाणूनिका प्रमाण ल्यावना। बहुरि ऐसैं ही देने योग्य द्रव्यविषैं भी विधान जानना। विशेष इतना—इहां द्रव्यादिकका प्रमाण जैसा संभवै तैसा जानना। बहुरि पूर्वोक्त प्रकार तहां निषेकनिका प्रमाण ल्याइ प्रथमादि निषेकनिका जो प्रमाण आवै तितना द्रव्य पूर्वैं जिनिविषैं द्रव्य देना तिनि सत्ताके प्रथमादि निषेकनिविषै यार्कौ मिलाय देना। बहुरि जहां द्रव्यकौं स्तोक निषेकनिहीविषैं देना होइ तहां गुणहानि रचना तौ संभवै नाहीं। तहां द्रव्य कैसैं देना ? सो कहिए है—

जैसैं एक गुणहानिके निषेकनिविषै द्रव्यके प्रमाण ल्यावनेका विधान कह्या है तैसैं ही "अद्धाणेण सव्वधणे खंडिदे मज्झिमधणमागच्छदि" इत्यादि विधानतैं तहां प्रथमादि निषेकनिका प्रमाण ल्यावना। विशेष इतना—इहां जितने निषेकनिविषै द्रव्य देना होइ तीहि प्रमाण गच्छ स्थापना। अर जेता द्रव्य तहां देने योग्य होइ तीहि प्रमाण द्रव्य स्थापना। ऐसैं कीए जो प्रथमादि निषेकनिका प्रमाण आवै तितने द्रव्यकौं विवक्षितके पूर्वैं सत्तारूपी जे प्रथमादि निषेक पाइए हैं तिनविषै मिलाय देना। उदयावलीविषै द्रव्य देना होइ तहां वा स्तोक स्थिति रहि गए उपरितन स्थितिविषैं द्रव्य देना होइ तहां वा अन्यत्र ऐसा विधान जानना। बहुरि गुणश्रेणी आयाम आदि विषैं द्रव्य देना होइ तहां विधान कहिए है—

'प्रक्षेपयोगोद्धृता मिश्रपिंडप्रक्षेपकाणा गुणको भवेदिति' इस करण सूत्र अनुसारि विधान जानना। सो कहिए है—जैसैं सीरके द्रव्यका नाम तौ मिश्रपिंड है। अर सीरीनिके विसवानिका नाम प्रक्षेप है। सो प्रक्षेपका जोड देइ ताका भाग मिश्रपिंडकौं दीए जो एक भागका प्रमाण आवै सो प्रक्षेपक, जे अपने अपने विसवे तिनिका गुणकार हो है। सो इनकौं परस्पर गुणै जो जो प्रमाण आवै सो सो अपने अपने विसवानिके स्वामी जे सीरी तिनिका द्रव्य जानना। इहां सीरका द्रव्य मिश्रपिंड सो सतरहसैं १७००, बहुरि सीरीनिके विसवे

एकका एक, दूसरेके च्यारि, तीसरेके सोलह, चौथेके चौसठि । १ । ४ । १६ । ६४ ए प्रक्षेप । बहुरि इनिका जोड पिच्यासी ताका भाग मिश्रपिंडकौं दीए वाम पाए ताकरि अपने अपने प्रक्षेप जे विसवे तिनकौं गुणैं पहिलेका वीस दूसरेका असी तीसराका तीनसैं वीस चौथाका बारहसैं असी द्रव्य आवैं हैं । असैं ही गुणश्रेणीका आयामविषै जेता द्रव्य देना सो तौ मिश्रपिंड जानना। बहुरि गुणश्रेणिआयामके प्रथम समयकी एक शलाका, द्वितीय समयकी तातैं असख्यातगुणी शलाका, तृतीय समयकी तातैं असख्यातगुणी शलाका इसही प्रकार असख्यातगुणा क्रम लीए ताका अत समय पर्यंतकी शलाका जाननी । इसका नाम प्रक्षेपक है । इनिकौं जोडैं जो प्रमाण आवैं ताका भाग तिस सर्व द्रव्यकौं दीए जो प्रमाण होइ तिसकरि अपनी अपनी शलाकानिका प्रमाणकौं गुणैं गुणश्रेणीआयामके प्रथमादि समयसबधी निषेकनि विषै द्रव्य देनेका प्रमाण आवैं हैं । इतना इतना द्रव्य गुणश्रेणीआयामके प्रथमादि निषेकनि विषै मिलाइए हैं । बहुरि असैं ही गुणसक्रमविषै विधान जानना । इहा जो गुण सक्रमकरि अन्य प्रकृतिरूप परिणमावने योग्य सर्व द्रव्य सो मिश्रपिंड अर गुणसक्रमकालके प्रथमादि समय सबधी एक आदि क्रमतैं असख्यातगुणी शलाका सो प्रक्षेपक हैं । इनिके जोडका भाग मिश्रपिंडकौं देइ लब्धकरि अपनी अपनी शलाकाकौं गुणैं गुणसक्रमकालका प्रथमादि समयनिविषै अन्य प्रकृतिरूप परिणमावने योग्य द्रव्यका प्रमाण आवैं है । याही प्रकार अन्यत्र भी यथासभव मिश्रपिंड वा प्रक्षेपनिका प्रमाण जानि जैसा जहा सभवै तैसा तहा जानना । या प्रकार द्रव्य देना आदि विषै विधान कह्या । अब सत्ताविषै जे निषेक पाइए हैं तिनके द्रव्य जाननेका विधान कहिए है—

विवक्षित कोई एक समयविषै जो सत्तारूप कर्म परमाणूनिका द्रव्य है तहा स्थितिसत्त्वका प्रथम समय वर्तमान है । तीहि विषै उदय आवने योग्य जो द्रव्य सो प्रथम निषेकका द्रव्य है । ताका प्रमाण तौ सपूर्ण समयप्रबद्धमात्र है । काहेतै ? सो कहिए है—

पूर्वै जे समय समय प्रति समयप्रबद्ध बाधे तिनिविषै जिस समयप्रबद्धका एक हू निषेक पूर्वै गल्या नाही ताका तौ प्रथम निषेक इस समय विषै उदय होने योग्य है । जाका एक निषेक पूर्वै गल्या ताका द्वितीय निषेक इस समय विषै उदय होने योग्य है । इसही क्रमतैं जाका एक निषेक विना अवशेष सर्व निषेक गले ताका अत निषेक इस समय विषै उदय होने योग्य है । असैं एक एक समयप्रबद्धका एक एक निषेक मिलि इस विवक्षित समयविषै उदय आवने योग्य सपूर्ण समयप्रबद्धमात्र द्रव्य भया सो सत्ताका प्रथम निषेक है । जैसैं एक समयप्रबद्धका पाचसै बारह, दूसरेका च्यारिसैं असी इत्यादि निषेकनिका द्रव्य मिलि तिरेसठिसैं होइ । बहुरि स्थितिसत्त्वका दूसरे समयविषै उदय आवने योग्य द्रव्य प्रथम निषेक घाटि समयप्रबद्ध मात्र है । कैसैं ? सो कहिए है—

प्रथम समयविषै जिस समयप्रबद्धका प्रथम निषेक गलै ताका तो दूसरा निषेक है । अर जाका दूसरा निषेक गलै ताका तीसरा निषेक इत्यादि क्रमतैं दूसरे समय उदय आवने योग्य निषेक है सो सर्व मिलि प्रथम निषेक घाटि समयप्रबद्धमात्र हो है । सो यह सत्ताका द्वितीय निषेक है । इहा प्रथम निषेकमात्र चय घटता भया । जैसैं एक समयप्रबद्धका च्यारिसैं असी, दूसरेका च्यारिसैं अठतालीस इत्यादि निषेकनिका द्रव्य मिलि सत्तावनसैं अठयासी होइ । इहा प्रथम समयविषै जाका अन्त निषेक गल्या ताका तौ कोई निषेक रह्या नाही । अर प्रथम निषेक जाका इस दूसरे समयविषै उदय होयगा असा समयप्रबद्ध न बधैगा तब वाका सत्त्व होइगा, इस समयविषै है नाही, तातैं सत्ताके द्वितीय निषेकका प्रमाण पूर्वोक्त जानना । बहुरि स्थितिसत्त्वका तृतीय समयविषै उदय आवनें योग्य प्रथम द्वितीय निषेक घाटि समयप्रबद्धमात्र द्रव्य है । कैसैं ? सो कहिए है—

दूसरे समय जाका द्वितीय निषेक गल्या ताका तीसरा निषेक, जाका तीसरा निषेक गल्या ताका चौथा निषेक इत्यादि क्रमतैं तीसरे समयविषै उदय आवने योग्य है सो सर्व मिलि प्रथम द्वितीय निषेक घाटि समयप्रबद्धमात्र द्रव्य है। सो सत्ताका तृतीय निषेक है। इहा द्वितीय निषेकमात्र चय घटता भया। जैसै एक समयप्रबद्धका च्यारिसै अठतालीस, दूसरेका च्यारिसै सोला इत्यादि मिलि तरेपनसै आठ होइ। इहा भी पूर्ववत् कारण जानना। ऐसै ही क्रमतै स्थिति सत्त्वका अन्त समयविषै उदय आवने योग्य समयप्रबद्ध अन्त निषेकमात्र द्रव्य है। काहेतै ? सो कहिए है—इस वर्त्तमान समयविषै जो सत्त्व द्रव्य है तिसविषै स्थिति-सत्त्वका अंत समयविषै एक समयप्रबद्धका एक अंत निषेक अवशेष रहेगा। अवशेष सब समयनिविषै गलैंगे। बहुरि जिनिका आगामी कालविषै बंध होइगा तिन समयप्रबद्धनिका तिस समय विषै उदय आवने योग्य निषेक होंगे तिनिका अबार अस्तित्व नाही। तातै समयप्रबद्धका एक अंत निषेकमात्र ही सत्ताका अन्त निषेक जानना। जैसै अंत निषेकके परमाणू नव, या प्रकार इन सर्व सत्ताके निषेकनिका जोड दीए किंचिदून द्वयर्ध गुणहानि गुणित समयप्रबद्धमात्र प्रमाण हो है सोइ सत्त्व द्रव्य जानना। जैसै तरेसठिसै अर सत्तावनसै अठ्यासी इत्यादि एक एक निषेक घाटि क्रम लीए सत्ताके निषेक लिखि तिनिका जोड दीए गुणहानि आयाम आठ ताका ड्योढ बारह तामैं किछू घटाइ ताकरि समयप्रबद्धका प्रमाण तरेसठिसै ताकौ गुणैं इकहत्तरि हजार तीनसै च्यारि हो है। सो यहु कथन त्रिकोण यत्रकी रचनाकरि गोम्मटसारविषै दिखाया है सो जानना। या प्रकार स्थिति सत्त्वके निषेकनिका द्रव्य स्वयसिद्ध तौ ऐसा क्रम लीए जानना।

बहुरि जो उत्कर्षण अपकर्षण गुणश्रेणि संक्रमण आदिकै वशतैं अन्य निषेकनिका द्रव्य अन्य निषेकनिविषै प्राप्त भया होइ वा अन्य प्रकृतिका द्रव्य अन्य प्रकृतिविषै प्राप्त भया होइ तौ तहा यथासम्भव आय द्रव्यकी अधिकता कीए व्यय द्रव्यकी हीनता कीए जिस प्रमाण लीए सभवै तिस प्रमाण लीए सत्ताके निषेकनिकी रचना जाननी। इहा जैसै लोकविषै जमा खरच कहिए तैसै विवक्षित विषै और परमाणू आनि मिलै ताका नाम आय द्रव्य है विवक्षितमैस्यो परमाणू निकसि अन्यत्र प्राप्त भए ताका नाम व्यय द्रव्य जानना। विशेष इतना—जहा निषेकनिका द्रव्य चय घटता क्रम लीए निकसै, जैसै निषेकनिका द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ एक भाग ग्रहण कीया तहा पूर्वै निषेकनिका सत्त्व जैसै चय घटता क्रम लीए था तैसै ही चय घटता क्रम लीए द्रव्यका ग्रहण भया। बहुरि जहा निषेकनिविषै चय घटता क्रम लीए द्रव्य मिलाया, जैसै उदयावली आदिकै निषेक पूर्वै चय घटता क्रम लीए थे तिनविषै चय घटता क्रम लीए ही द्रव्य दीया। तहा तौ आय व्यय होत सतै भी यथासम्भव चय घटता अनुक्रम रहै है। बहुरि जहा निषेकनिका द्रव्य हीनाधिक क्रम लीए ग्रहण करिए वा कोई निषेकनिका द्रव्य ग्रहण करिए कोई निषेकनिका नाही ग्रहण करिए, बहुरि जहा हीनाधिक क्रमकरि वा गुणकार क्रमकरि द्रव्य दीया होइ तहा जो निकस्या वा मिलाया द्रव्य स्तोक होइ अर सत्त्व द्रव्य बहुत होइ तौ यथासम्भव चय घटता क्रम रहै अर निकस्या वा मिलाया द्रव्य बहुत होई अर सत्त्वद्रव्य स्तोक होइ तौ तहा चय घटता क्रम नाही रहै है। ऐसै स्थितिसत्त्वविषै निषेकनिका प्रमाण आवै है। बहुरि अनुभाग सत्त्वविषै वर्गणानिका प्रमाण पूर्वोक्त प्रकार ल्यावना वा वर्गणानिविषै यथासम्भव द्रव्य निकासै वा मिलाए पूर्वोक्त प्रकार चय घटता क्रमका रहना वा न रहना जानना। बहुरि अनिवृत्तिकरणविषै अपूर्व स्पर्धक वा कृष्टिनिका नवीन सत्त्व हो है। ताका विधान तहा अवसर आए लिखैंगे सो जानना। ऐसै सत्त्वद्रव्यविषै क्रम जानना।

या प्रकार इहा द्रव्य देना आदि विषै विधान कह्या है सो ऐसै इहा जो यहु कथन कीया है ताकौ नीकै यादि करि लेना। जो इस कथनका स्मरण होइगा तौ आगैं ग्रंथविषैं नीकै प्रवेश होगा अर अर्थकौ नीकै पहिचानौगे। इस ही वास्तै पहिलै यहु केताइक कथन कीया है। जाका इहा व्याख्यान कीया ताका प्रयोजन ग्रंथविषै जहा आवै तहा कथन कीया ताके अनुसारि स्वरूप जानना। बहुरि व्याख्यान तौ सर्व आगैं ग्रंथविषै होइ होगा। ऐसै पीठबंध कीया।

एकका एक, दूसरेके च्यारि, तीसरेके सोलह चौथेके चौसठि १ । ४ । १६ । ६४ ए प्रक्षेप । बहुरि इनिका जोड पिच्यासी ताका भाग मिश्रपिंडकौं दीएं वाम पाए ताकरि अपने अपने प्रक्षेप जे विसवे तिनकौं गुणै पहिलेका वीस दूसरेका असी तीसराका तीनसै वीस चौथाका बारहसै असी द्रव्य आवै है । अैसै ही गुण-श्रेणीका आयामविषै जेता द्रव्य देना सो तौ मिश्रपिंड जानना । बहुरि गुणश्रेणिआयामके प्रथम समयकी एक शलाका, द्वितीय समयकी तातै असख्यातगुणी शलाका तृतीय समयकी तातै असख्यातगुणी शलाका इसही प्रकार असख्यातगुणा क्रम लीए ताका अत समय पर्यंतकी शलाका जाननी । इसका नाम प्रक्षेपक है । इनिकौ जोडें जो प्रमाण आवै ताका भाग निस सर्व द्रव्यकौ दीए जो प्रमाण होइ तिसकरि अपनी अपनी शलाकानिका प्रमाणकौं गुणै गुणश्रेणीआयामवे प्रथमादि समयसबधी निषेकनि विषै द्रव्य देनेका प्रमाण आवै है । इतना इतना द्रव्य गुणश्रेणीआयामके प्रथमादि निषेकनि विषै मिलाइए है । बहुरि अैसै ही गुणसक्रमविषै विधान जानना । इहा जो गुण सक्रमकरि अन्य प्रकृतिरूप परिणमावने योग्य सर्व द्रव्य सो मिश्रपिंड अर गुणसक्रमकालके प्रथमादि समय सबधी एक आदि क्रमतै असख्यातगुणी शलाका सो प्रक्षेपक है । इनिके जोडका भाग मिश्रपिंडकौ देइ लब्धकरि अपनी अपनी शलाकाकौ गुणै गुणसक्रमकालका प्रथमादि समयनिविषै अन्य प्रकृतिरूप परिणमावने योग्य द्रव्यका प्रमाण आवै है । याही प्रकार अन्यत्र भी यथासभव मिश्रपिंड वा प्रक्षेपनिका प्रमाण जानि जैसा जहा सभवै तैसा तहा जानना । या प्रकार द्रव्य देना आदि विषै विधान कह्या । अब सत्ताविषै जे निषेक पाइए है तिनके द्रव्य जाननेका विधान कहिए है—

विवक्षित कोई एक समयविषै जो सत्तारूप कर्म परमाणूनिका द्रव्य है तहा स्थितिसत्त्वका प्रथम समय वर्तमान है । तीहि विषै उदय आवने योग्य जो द्रव्य सो प्रथम निषेकका द्रव्य है । ताका प्रमाण तौ सपूर्ण समयप्रबद्धमात्र है । काहेतें ? सो कहिए है—

पूर्वै जे समय समय प्रति समयप्रबद्ध बाधे तिनिविषै जिस समयप्रबद्धका एक हू निषेक पूर्वै गल्या नाही ताका तौ प्रथम निषेक इस समय विषै उदय होने योग्य है । जाका एक निषेक पूर्वै गल्या ताका द्वितीय निषेक इस समय विषै उदय होने योग्य है । इसही क्रमतै जाका एक निषेक विना अवशेष सर्व निषेक गले ताका अत निषेक इस समय विषै उदय होने योग्य है । अैसै एक एक समयप्रबद्धका एक एक निषेक मिलि इस विवक्षित समयविषै उदय आवने योग्य सपूर्ण समयप्रबद्धमात्र द्रव्य भया सो सत्ताका प्रथम निषेक है । जैसै एक समयप्रबद्धका पाचसै बारह, दूसरेका च्यारिसै असी इत्यादि निषेकनिका द्रव्य मिलि तिरेसठिसै होइ । बहुरि स्थितिसत्त्वका दूसरे समयविषै उदय आवने योग्य द्रव्य प्रथम निषेक घाटि समयप्रबद्ध मात्र है । कैसै ? सो कहिए है—

प्रथम समयविषै जिस समयप्रबद्धका प्रथम निषेक गलै ताका तो दूसरा निषेक है । अर जाका दूसरा निषेक गलै ताका तीसरा निषेक इत्यादि क्रमतै दूसरे समय उदय आवने योग्य निषेक है सो सर्व मिलि प्रथम निषेक घाटि समयप्रबद्धमात्र हो है । सो यह सत्ताका द्वितीय निषेक है । इहा प्रथम निषेकमात्र चय घटता भया । जैसै एक समयप्रबद्धका च्यारिसै असी, दूसरेका च्यारिसै अठतालीस इत्यादि निषेकनिका द्रव्य मिलि सत्तावनसै अठयासी होइ । इहा प्रथम समयविषै जाका अन्त निषेक गल्या ताका तौ कोई निषेक रह्या नाही । अर प्रथम निषेक जाका इस दूसरे समयविषै उदय होयगा अैसा समयप्रबद्ध न बधैगा तब वाका सत्त्व होइगा, इस समयविषै है नाही, तातै सत्ताके द्वितीय निषेकका प्रमाण पूर्वोक्त जानना । बहुरि स्थितिसत्त्वका तृतीय समयविषै उदय आवने योग्य प्रथम द्वितीय निषेक घाटि समयप्रबद्धमात्र द्रव्य है । कैसै ? सो कहिए है—

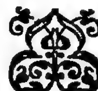
विषयसूची

विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ

६ चारित्रमोहक्षपणा

६ चारित्रमोहक्षपणा



लब्धिसार

ॐ

द्रव्यानुयोग परम गम्भीर और सूक्ष्म है, निर्ग्रन्थप्रवचनका रहस्य है, शुक्ल ध्यानका अनन्य कारण है। शुक्ल ध्यानसे केवलज्ञान समुत्पन्न होता है। महाभाग्यसे उस द्रव्यानुयोगकी प्राप्ति होती है।

दर्शनमोहका अनुभाग घटनेसे अथवा नष्ट होनेसे, विषयके प्रति उदासीनतासे और महत्पुरुषके चरणकमलकी उपासनाके बलसे द्रव्यानुयोग परिणत होता है।

ज्यो-ज्यो सयम वर्धमान होता है, त्यो-त्यो द्रव्यानुयोग यथार्थ परिणत होता है। सयमकी वृद्धिका कारण सम्यक्‌दर्शनकी निर्मलता है, उसका कारण भी 'द्रव्यानुयोग' होता है।

सामान्यत द्रव्यानुयोगकी योग्यता पाना दुर्लभ है। आत्माराम-परिणामी, परम वीतरागदृष्टिवान्, परम असग ऐसे महात्मा पुरुष उसके मुख्य पात्र हैं।

हे आर्य! द्रव्यानुयोगका फल सर्व भावसे विराम पानेरूप सयम है। इस पुरुषके इन वचनोको तू अपने अत करणमे कभी भी शिथिल मत करना। अधिक क्या? समाधिका रहस्य यही है। सर्व दु खसे मुक्त होनेका अनन्य उपाय यही है।

❀ ❀ ❀

यदि मन शकाशील हो गया हो तो 'द्रव्यानुयोग' विचारना योग्य है, प्रमादी हो गया हो तो 'चरणकरणानुयोग' विचारना योग्य है, और कषायी हो गया हो तो 'धर्मकथानुयोग' विचारना योग्य है, जड हो गया हो तो 'गणितानुयोग' विचारना योग्य है।

—श्रीमद् राजचद्र



श्री आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती
विरचित

लब्धिसार

संस्कृत तथा हिन्दी टीकाद्वय सहित

जयंत्यन्वहमर्हंत सिद्धा सूर्युपदेशका । साधवो भव्यलोकस्य शरणोत्तममंगलम् ॥ १ ॥
श्रीनागार्यतनूजातशातिनाथोपरोधत । वृत्तिर्भव्यप्रबोधाय लब्धिसारस्य कथ्यते ॥ २ ॥

जो भव्य जीवोके लिए शरणरूप और सर्वोत्कृष्ट मगलस्वरूपहैं वे अरहत सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु जयवन्त हो ॥१॥

श्री नागार्यके पुत्र शान्तिनाथके अनुरोधवश मैं (सस्कृत टीकाकार) भव्य जीवोको उत्कृष्ट सम्यग्ज्ञानको प्राप्तिके लिए श्री लब्धिसार ग्रन्थकी वृत्ति लिखता हूँ ॥२॥

श्रीमान्नेमिचद्रसिद्धातचक्रवर्ती सम्यक्त्वचूडामणिप्रभृतिगुणनामाकितचामुडरायप्रश्नानुरूपेण कषायप्राभृतस्य जयधवलाख्यद्वितीयसिद्धातस्य पचदशाना महाधिकाराणा मध्ये पश्चिमस्कधाख्यस्य पचदशस्यार्थं सगृह्य लब्धिसारनामधेय शास्त्र प्रारभमाणो भगवत्पचपरमेष्ठिस्तवप्रणामपूर्विका कर्तव्यप्रतिज्ञा विधत्ते—

अब कर्तव्यका प्रारभ करिए है। आगै चामुडराय नामा राजाके प्रश्नके वशतै कषायप्राभृत अर ताहीका द्वितीय नाम जयधवल ताके पद्रह अधिकार तिनिविषै पश्चिम स्कधनामा पद्रह्वा अधिकार ताका अर्थकौ ग्रहण करि श्रीनेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती लब्धिसार नामा ग्रथ कीया, ताके सूत्रनिका सक्षेपमात्र अर्थ लिखिए है। तहा प्रथम लब्धिसार टीकाके अनुसारि केतेइक सूत्रनिका अर्थ लिखिए है। टीकाविषै विस्तारतै व्याख्यान है। इहा ग्रथ वधनेके भयतै सकोचरूप व्याख्यान करिए है। तहा प्रथम ही मगल करिए है—

विशेष—श्रीनेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्तीने षट्खण्डागमके अन्तर्गत जीवस्थान खण्डके चूलिकानामक अर्थाधिकारकी ८ वी चूलिका और कषायप्राभृतके स्वय गुणधर आचाय द्वारा स्थापित अन्तके ६ अर्थाधिकारोका आलम्बन लेकर लब्धिसार और क्षपणासार महान् ग्रन्थकी रचना की है। कषायप्राभृतके अन्तमे पश्चिमस्कन्धनामक एक अनुयोगद्वार अवश्य है। किन्तु उसमे केवलिसमुद्घातके प्रथम समयसे लेकर सिद्धिगति प्राप्त होने तकके कार्यविशेषका मात्र निर्देश है। उसमे दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयकी उपशमना और क्षपणाका विधान नही है।

चौपाई—श्री अरहत सिद्धिवर सूरि । उपाध्याय धारै गुणभूरि ।।
साधु परम मगल जग श्रेष्ठ । जय शरणागतकौ परमेष्ठ ।।

अथ मूल सूत्र

सिद्धे जिणिदचदे आयरिय-उवज्झाय-साहुगणे ।
वदिय सम्मद्दसण–चरित्तलद्धि परूवेमो ।। १ ।।

सिद्धान् जिनेन्द्रचन्द्रान् आचार्योपाध्यायसाधुगणान् ।
वदित्वा सम्यग्दर्शनचारित्रलब्धि प्ररूपयाम. ।। १ ।।

स० टी०—सिद्धान् जिनेंद्रचद्रानाचार्योपाध्याश्च साधुगणान् वदित्वा सम्यग्यदर्शनचारित्रलब्धि प्ररूपयाम । सम्यग्दर्शन-सम्यक्चारित्रयोर्लब्धि —प्राप्तिर्यस्मिन् प्रतिपाद्यते स लब्धिसाराख्यो ग्रथ त प्ररूपयाम इति शास्त्रकारेण कृत्यप्रतिज्ञा दर्शिता । पूर्व किं कृत्वा ? वदित्वा–स्तुत्वा प्रणम्य चेत्यर्थ । कान् ? जिनेंद्रचद्रान्-जिनेद्रा अर्हन्त चद्रा इव चद्रा , सकललोकप्रकाशकाल्हादकत्वात् । मुख्यो वाय चद्रशब्द । तथा सिद्धान्—कृतकृत्यानुपलब्धस्वात्मनश्च तथा आचार्यान् पचाचारप्रवर्तनपरान् तथा उपाध्यायान्—उपेत्य विनयादधीयते भव्यलोका येभ्य इत्युपाध्यायास्तान् तथा साधुगणाश्च—साधयति मोक्षमार्गमाराधयतीति साधवस्तेषा गणान् देशान्तरकालान्तरवर्तिन समूहान् गुरुकुलभेदभिन्नान् वा ।। १ ।।

स० च०—जिनेंद्र अरहत तेई भए सकल लोकके प्रकाशनेतैं वा आल्हाद करनेतैं चद्रमा तिनिकौं अर कृतकृत्य भए सिद्ध भगवान तिनिकौ अर पचाचारके प्रवर्तक आचार्य तिनिकौं अर अध्ययन करना करवानाविषै अधिकारी उपाध्याय तिनकौ अर मोक्षमार्गके साधक साधुसमूह तिनिकौ वदिकरि सम्यग्दर्शन—सम्यक्चारित्रकी लब्धि कहिए प्राप्ति सो जिसविषै प्रतिपादन करिए असा लब्धिसार नामा शास्त्र ताकौ हम प्ररूपै है । असी आचार्य प्रतिज्ञा करी ।। १ ।।

एव कृतपचपरमेष्ठिस्तवप्रणामरूपमुख्यमगल आचार्य प्रथमोद्दिष्टसम्यग्दर्शनप्राप्त्युपायप्ररूपण प्रक्रमते—

चदुगदिमिच्छो सण्णी पुण्णो गब्भज विसुद्ध सागारो ।
पढमुवसम स गिण्हदि पचमवरलद्धिचरिमम्हि ।। २ ।।

चतुर्गतिमिथ्यः सज्ञी पूर्ण. गर्भजो विशुद्ध साकारः ।
प्रथमोपशमं स गृह्णाति पंचमवरलब्धिचरमे ।। २ ।।

स० टी०–चतुर्गतिमिथ्यादृष्टि सज्ञी पूर्णो गर्भजो विशुद्ध साकार प्रथमोपशम गृह्णाति पचमवर-लब्धिचरमे । अनादि सादिर्वा मिथ्यादृष्टिरेव चतसृष्वपि गतिषूत्पन्न दर्शनमोहस्य प्रथमोपशम गृह्णाति करोतीत्यर्थ । तिर्यग्गतौ तु सज्ञी पचेंद्रिय एव नान्य । तिर्यग्मनुष्यगत्योस्तु पर्याप्तको गर्भश्चैव नान्य । स च चतुगतिमिथ्यादृष्टिर्विशुद्ध एव क्षयोपशमलब्धिप्रथमसमयादारभ्य प्रतिसमयमनतगुणवृद्धया वर्धमानविशुद्धि-रित्यर्थ । सोऽपि साकारोपयोगवानेव, गुणदोषादिविचाररूपज्ञानोपयोगे सत्येव तत्त्वार्थश्रद्धानरूपसम्यक्त्व-

१ सो पुण पंचिदिओ सण्णी मिच्छाइट्ठी पज्जत्तओ सव्वविसुद्धो जी० चू० ८, सू० ४ । सो देवो वा णेरइओ वा तिरिक्खो वा मणुसो वा । इत्थिवेदो पुरिसवेदो णवुसयवेदो वा । मणजोगी वचिजोगी कायजोगी वा । कोधकसाई माणकसाई मायकसाई लोभकसाई वा, किंतु हायमाणकसाओ । असजदो । मदि-सुदसागारुवजुत्तो । तत्थ अणागारुवजुत्तो णत्थि, तत्थ वज्झत्थे पउत्तीए अभावादो । छण्ण लेस्साणमण्णदरलेस्सो, किंतु हायमाण असुहलेस्सो वड्ढमाणसुहलेस्सो । भव्वो । आहारी । ध० पु० ६, पृ० २०७ । क० पा० पृ० ६१५ ।

प्राप्तिसंभवात्, अनाकारे दर्शनोपयोगे तद्विचाराभावात्। कस्मिन् काले प्रथमोपशमं गृह्णाति ? पञ्चमी लब्धिः करणलब्धिः तस्या वरः उत्कृष्टो भागः अनिवृत्तिकरणपरिणामः, तस्य लब्धि प्राप्तिः तस्याः चरमसमये प्रथमोपशमसम्यक्त्वं गृह्णाति जीव इत्यर्थः। स च भव्य एव, अभव्यस्य तद्ग्रहणायोग्यत्वात्। विशुद्ध इत्यनेन शुभलेश्यत्वं संगृहीतम्, उदयप्रस्तावे स्त्यानगृद्धयादित्रयोदयाभावस्य वक्ष्यमाणत्वात् जागरत्वमप्युक्तमेव ॥२॥

तहाँ प्रथम ही प्रथमोपशमसम्यक्त्वका विधान कहिए है—

स० च०—च्यारयो गतिवाला अनादि वा सादि मिथ्यादृष्टि सञ्ज्ञी पर्याप्त गर्भज मंद कषायरूप जो विशुद्धता ताका धारक, गुण दोष विचाररूप जो साकार ज्ञानोपयोग ताकरि संयुक्त जो जीव सोई पांचवी करण लब्धिविषै उत्कृष्ट जो अनिवृत्तिकरण ताका अंत समयविषै प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौ ग्रहण करै। इहां ऐसा जानना—

जो मिथ्यादृष्टि गुणस्थानतै छूटि उपशम सम्यक्त्व होइ ताका नाम उपशम सम्यक्त्व है। बहुरि उपशमश्रेणी चढता क्षयोपशम सम्यक्त्वतै जो उपशम सम्यक्त्व ताका नाम द्वितीयोपशम सम्यक्त्व है, तातै मिथ्यादृष्टिका ग्रहण कीया है। बहुरि सो प्रथमोपशम सम्यक्त्व तिर्यंच गतिविषै असञ्ज्ञी जीव हैं तिनकै न हो है। अर मनुष्य तिर्यंचविषै लब्धि-अपर्याप्तक अर सन्मूर्छन हैं तिनकै न ही है। बहुरि च्यारयो गतिविषै संक्लेशताकरि युक्त जीवकै न हो है। बहुरि अनाकार दर्शनोपयोगका धारीकै न हो है, जातै तहां तत्त्वविचार न संभवै है। बहुरि आगे तीन निद्राके उदयका अभाव कहैंगे, तातै सूता जीवकै न हो है। अर भव्यहीकै सम्यक्त्व हो है, तातै अभव्यकै न हो है। ए भी विशेषण इहां संभवै है ॥ २ ॥

विशेष—यहाँ मुख्यरूपसे तीन बातोंका स्पष्टीकरण करना है—(१) जिस अनादि मिथ्यादृष्टि भव्य जीवका संसारमें रहनेका काल अधिकसे अधिक अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण शेष रहता है वह उक्त कालके प्रथम समयमें प्रथमोपशम सम्यक्त्वके योग्य अन्य सामग्रीके सद्भावमें उसे ग्रहण कर सकता है। उस समय उसे प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी प्राप्ति नियमसे होती है ऐसा कोई नियम नहीं है। मुक्त होनेके पूर्व इस कालके मध्यमें कभी भी वह प्रथमोपशम-सम्यक्त्वको प्राप्त करता है। प्रथमोपशमसम्यक्त्वके छूटने पर सादि मिथ्यादृष्टि जीव पुनः पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके जाने पर ही उसे प्राप्त करनेके योग्य होता है, इसके पूर्व नहीं। (२) संस्कृत टीकामें शुद्ध पदका शुभ लेश्यारूप अर्थ किया है। किन्तु नरकगतिमें शुभ लेश्याओंकी प्राप्ति सम्भव नहीं है। जीवस्थान चूलिकामें विशुद्धपदके स्थानमें सर्वविशुद्ध पद आया है। वहाँ इस पदका अर्थ 'जो जीव अधःप्रवृत्तकरण आदि तीन करण करनेके सन्मुख हैं' यह जीव लिया गया है। प्रकृतमें विशुद्ध पदका यही अर्थ ग्रहण करना चाहिए। (३) यहाँ गाथामें अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयमें यह जीव प्रथमोपशम सम्यक्त्वको प्राप्त करता है ऐसा कहा गया है सो उसका आशय यह लेना चाहिए कि अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयके व्यतीत होने पर अगले समयमें यह जीव प्रथमोपशमसम्यक्त्वको प्राप्त करता है। शेष कथन सुगम है।

अथ पञ्चलब्धिनामोद्देशं तत्कार्यविभागं च कुर्वन्नाह—

खयउवसमियविसोही देसणपाउग्गकरणलद्धी य।
चत्तारि वि सामण्णा करणं सम्मत्तचारित्ते ॥ ३ ॥

क्षयोपशमविशुद्धी देशनाप्रायोग्यकरणलब्धयश्च।
चतस्रोऽपि सामान्यात् करणं सम्यक्त्वचारित्रे ॥ ३ ॥

स० टी०—क्षयोपशमविशुद्धिदेशनाप्रायोग्यताकरणलब्धयश्च चतस्रोऽपि सामान्यात् करण सम्यक्त्वचारित्रे। लब्धिशब्द प्रत्येकमभिसबध्यते क्षयोपशमलब्धि विशुद्धिलब्धि देशनालब्धि प्रायोग्यतालब्धि करणलब्धिश्चेति एता पच लब्धय । अत्र आद्याश्चतस्रोऽपि लब्धय सामान्यादपि भव्याभव्यसाधारण्यादपि भवति[2] । करण-लब्धि पुनर्भव्यस्यैव सम्यक्चारित्रे च साध्ये भवति ॥ ३ ॥

आगै प्रथमोपशम सम्यक्त्व होनेतै पहलै मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषै पच लब्धि हो है तिनिका व्याख्यान करिए है—

स० च०—क्षयोपशम १ विशुद्धि १ देशना १ प्रायोग्यता १ करण १ ए पाँच लब्धि है। तहाँ आदिकी च्यारि तौ साधारण हैं। भव्यकैं वा अभव्यके भी हो हैं। बहुरि करण लब्धि भव्यहीकै सम्यक्त्व वा चारित्रकौ साध्यभूत होत सतै ही हो है ॥ ३ ॥

अब क्रम प्राप्त क्षयोपशमलब्धिका स्वरूप कहते हैं—

अथ क्रमप्राप्तक्षयोपशमलब्धिस्वरूप कथयति—

कम्ममलपडलसत्ती पडिसमयमणतगुणविहीणकमा ।
होदूणुदीरदि जदा तदा खओवसमलद्धी दु[2] ॥ ४ ॥

कर्ममलपटलशक्ति· प्रतिसमयमनतगुणविहीनक्रमा ।
भूत्वा उदीर्यते यदा तदा क्षयोपशमलब्धिस्तु ॥ ४ ॥

स० टी०—कर्ममलपटलशक्ति प्रतिसमयमनतगुणहीनक्रमा भूत्वा उदीर्यते यदा तदा क्षयोपशम-लब्धिस्तु—कर्मसु मलान्यप्रशस्तकर्माणि ज्ञानावरणादीनि तेपा पटल समूह तस्य शक्तिरनुभाग सा यदा यस्मिन् समये अनतगुणविहीनक्रमा अनतैकभागप्रमाणीभूत्वा क्रमेणोदेति तदा तस्मिन समये तदनुभागानतबहु-भागहानि क्षयोपशमलब्धि । तुशब्देन पुन प्रतिसमय तदनतबहुभागहानिक्रम सूच्यते । देशघातिस्पर्धकाना-मुत्कृष्टानुभागानतैकभागमात्राणामुदये सत्यपि सर्वघातिस्पर्धकानामुत्कृष्टानुभागानतबहुभागप्रमाणानामुदयाभाव क्षय , तेषामेवानुदयप्राप्ताना कर्मस्वभावेन सदवस्था उपशम , तयोर्लब्धि क्षयोपशमलब्धि ॥ ४ ॥

स० च०—कर्मनिविषै मलरूप जे अप्रशस्त ज्ञानावरणादिक तिनिका पटल जो समूह ताकी शक्ति जो अनुभाग सो जिस कालविषै समय समय प्रति अनतगुणा घटता अनुक्रमरूप होइ उदय होइ तिस कालविपै क्षयोपशम लब्धि हो है, जातै उत्कृष्ट अनुभागका अनतवा भागमात्र जे देश-घाती स्पर्धक तिनिके उदयकौ होतै भी उत्कृष्ट अनुभागका अनत बहुभागमात्र जे सर्वघाती स्पर्धक तिनिके उदयका अभाव सो तौ क्षय, अर तेई सर्वघाती स्पर्धक जे उदय अवस्थाकौ न प्राप्त भए तिनकी सत्ता अवस्था सो उपशम तिनकी प्राप्ति सो क्षयोपशमलब्धि जाननी ॥ ४ ॥

विशेप—क्षमोपशम लब्धिमे यथासम्भव घाति और अघाति सभी अप्रशस्त कर्मोसम्बन्धी अनुभाग शक्तिकी प्रति समय अनन्तगुणहानि होना विवक्षित है। किन्तु इस जीवके विशुद्धिलब्धिवश सातादि परावर्तमान प्रकृतियोके बन्ध योग्य ही विशुद्धि होती है। असाता आदिके बन्ध योग्य सक्लेश नही होता ऐसा यहाँ समझना चाहिए।

१ खयउवसमियविसोही देसण-पाओग्ग-करणलद्धी य । चत्तारि वि सामण्णा करण पुण होई समत्ते ॥ ध० पु० ६, पृ० २०५ । (२) एदाओ चत्तारि वि लद्धीओ भवियाभवियमिच्छाइट्ठीण साहारणाओ, दोसु वि एदाण सभवादो । ध० पु० ६, पृ० २०५ । २ पुव्वसचिदकम्ममलपडलस्स अणुभागफद्दयाणि जदा विसोहिए पडिसमयमणतगुणहीणाणि होदूणुदीरिज्जति तदा खओवसमलद्धी होदि ।

अथ विशुद्धिलब्धिस्वरूपमाह—

आदिमलद्धिभवो जो भावो जीवस्स सादपहुदीण ।
सत्थाण पयडीण बंधणजोगो विसुद्धलद्धी सो ॥ ५ ॥

आदिमलब्धिभवो य. भावो जीवस्य सातप्रभृतीनाम् ।
शस्ताना प्रकृतीना बधनयोग्यो विशुद्धिलब्धि स ॥ ५ ॥

स० टी०—आदिमलब्धिभवो यो भावो जीवस्य सातप्रभृतीना शस्ताना प्रकृतीना बधनयोग्यो विशुद्धिलब्धि स । मिथ्यादृष्टिजीवस्य प्रागुक्तक्षयोपशमलब्धौ सत्या सातादिप्रशस्तप्रकृतिबन्धहेतुर्यो भावो धर्मानुरागरूपशुभपरिणामो भवति तत्प्राप्तिर्विशुद्धिलब्धिरित्युच्यते । अशुभकर्मानुभागस्यानतगुणहानौ सत्या तत्कार्यस्य सक्लेशपरिणामस्य हानिर्यथा यथा भवति तद्विरुद्धस्य विशुद्धिपरिणामस्य तथा तथा सभवत्तुनगत एवेति ॥ ५ ॥

अब विशुद्धिलब्धिका स्वरूप कहते हैं—

स० च—पहली जो क्षयोपशम लब्धि तातैं उपज्या जो जीवकै साता आदि प्रशस्त प्रकृति-बध करनेकौं कारण धर्मानुरागरूप शुभ परिणाम होइ ताकी जो प्राप्ति सो विशुद्धि लब्धि है। सो अशुभ कर्मका अनुभाग घटै सक्लेशताकी हानि अर ताका प्रतिपक्षी विशुद्धताकी वृद्धि होनी युक्त ही है ॥ ५ ॥

अथ देशनालब्धिस्वरूपमाचष्टे—

छद्दव्वणवपयत्थोपदेसयरसूरिपहुदिलाहो जो ।
देसिदपदत्थधारणलाहो वा तदियलद्धी दु ॥ ६ ॥

षड्द्रव्यनवपदार्थोपदेशकरसूरिप्रभृतिलाभो य ।
देशितपदार्थधारणलाभो वा तृतीयलब्धिस्तु ॥ ६ ॥

स० टी०—षद्द्रव्यनवपदार्थोपदेशकरसूरिप्रभृतिलाभो य, देशितपदार्थधारणलाभो वा तृतीय-लब्धिस्तु। षद्द्रव्याणि जीवपुद्गलधर्माधर्मकालाकाशानि । पचास्तिकाया अत्रैवातर्भूता । नव पदार्था जीवाजीवा-स्रवबधसवरनिर्जरामोक्षपुण्यपापानि । सप्त तत्त्वान्यत्रैवातर्भूतानि । तेषामुपदेशकरा आचार्योपाध्यायादय, तेषा लाभो यस्तद्देशनाप्राप्ति चिरातीतकाले उपदेशितपदार्थधारणलाभो वा स देशनालब्धिर्भवति । तुशब्देनोपदेशक-रहितेषु नारकादिभवेषु पूर्वभवश्रुतधारिततत्त्वार्थस्य सस्कारबलात् सम्यग्दर्शनप्राप्तिर्भवति इति सूच्यते ॥ ६ ॥

आगै देशनालब्धिका स्वरूप कहै हैं—

स० च—छह द्रव्य नव पदार्थका उपदेश करनेवाले आचार्यादिकका लाभ तिनके उपदेशकी प्राप्ति अथवा उपदेशित पदार्थके धारनेकी प्राप्ति सो तीसरी देशनालब्धि है। तुशब्दकरि नारकादि

---

१ पडिसमयमणतगुणहीणक्कमेण उदीरिदअणुभागफद्दयजणिदजीवपरिणामो सादादिसुहकम्मबधणिमित्तो असादादिअसुहकम्मबधविरुद्धो विसोही णाम । तिस्से उवलभो विसोहिलद्धी णाम । ध० पु० ६, पृ० २०४ ।

२ छद्दव्व-णवपयत्थोवदेसो देसणा णाम । तीए देसणाए परिणदआइरियादीणमुवलभो देसिदत्थस्स गहण-धारण-विचारणसत्तीए समागमो अ देसणलद्धी णाम । ध० पु० ६, पृ० २०४ ।

विषै जहा उपदेश देनेवाला नाही तहा पूर्व भवविषै धारया हूवा तत्त्वार्थके सस्कार बलतै सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति जाननी ।। ६ ।।

अथ प्रायोग्यतालब्धिस्वरूप कथयति—

अतोकोडाकोडी विट्ठाणे ठिदिरसाण ज करणं ।
पाउग्गलद्धिणामा भव्वाभव्वेसु सामण्णा[1] ।। ७ ।।

अंतःकोटाकोटिद्विस्थाने स्थितिरसयोः यत्करणम् ।
प्रायोग्यलब्धिर्नामा भव्याभव्येषु सामान्यात् ।। ७ ।।

स० टी०—अत कोटाकोटिद्विस्थाने स्थितिरसयोर्यत्करण प्रायोग्यतालब्धिनामा भव्याभव्येपु सामान्यात् । कश्चिज्जीवो लब्धित्रयसपन्न प्रतिसमय विशुद्धचन् आयुर्वर्जितसप्तकर्मणा तत्कालस्थितिमेककाडकघातेन छित्वा काडकद्रव्यमत कोटाकोटिमात्रावशिष्टस्थितौ निक्षिपति । अप्रशस्ताना घातिनामनुभाग वानतवहुभागप्रमाण खडयित्वा तद्द्रव्य लतादारुसमाने द्विस्थानमात्रे अघातिना च निंवकाजीरसमाने अवशिष्टानुभागे निक्षिपति तदा जीवस्य तत्करण प्रायोग्यतालब्धिर्नाम वेदितव्या, सा च भव्याभव्ययो साधारणा भवति । विशुद्धचा प्रशस्तप्रकृतीनामनुभागखडन नास्ति ।। ७ ।।

अब प्रायोग्यलब्धिका स्वरूप कहते हैं—

स० च०—पूर्वोक्त तीन लब्धिसयुक्त जीव समय समय विशुद्धताकरि वर्धमान होत सता आयु बिना सात कर्मनिकी अत कोटाकोटीमात्र स्थिति अवशेष राखै । तिस कालविषै जो पूर्व स्थिति थी ताकौ एक काडक घातकरि छेदि तिस काडकके द्रव्यकौ अवशेष रही स्थितिविषै निक्षेपण करै है । बहुरि घातियानिका लता दारुरूप, अघातियानिका निंब काजीररूप द्विस्थानगत अनुभाग इहा अवशेष रहै है । पूर्व अनुभाग था तामै अनन्तका भाग दीए बहुभागमात्र अनुभागकौ छेदि अवशेष रह्या अनुभागविषै प्राप्त करै है । तिस कार्य करनेकी योग्यताकी प्राप्ति सो प्रायोग्यता लब्धि है । सो भव्यकै वा अभव्यकै भी समान हो है ।। ७ ।।

विशेष—विशुद्धिवश इसके प्रशस्त प्रकृतियोके अनुभागका घात नही होता है इतना यहाँ विशेष जानना चाहिए ।

अथ प्रसगायाता प्रथमोपशमसम्यक्त्वग्रहणायोग्यता प्रतिपादयति—

जेट्ठवरट्ठिदिबधे जेट्ठवरट्ठिदितियाण सत्ते य ।
ण य पडिवज्जदि पढमुवसमसम्म मिच्छजीवो हु[2] ।। ८ ।।

ज्येष्ठावरस्थितिबधे ज्येष्ठावरस्थितित्रिकाणा सत्त्वे च ।
न च प्रतिपद्यते प्रथमोपशमसम्यक्त्वं मिथ्यजीवो हि ।। ८ ।।

स० टी०—ज्येष्ठावरस्थितिबधे ज्येष्ठावरस्थितित्रयाणा सत्त्वे च न च प्रतिपद्यते प्रथमोपशमसम्यक्त्व मिथ्यादृष्टिर्जीव खलु । सर्वसक्लिष्टसज्ञिपचेंद्रियपर्याप्तजीवसभविन्युत्कृष्टस्थितिबधे सर्वविशुद्धक्षपकसभविनि

१ सव्वकम्माणमुक्कस्सट्ठिदिमुक्कस्साणुभाग च घादिय अतोकोडाकोडीट्ठिदिम्हि वेट्ठाणाणुभागे च अवट्ठाण पाओग्गलद्धी णाम । ध० पु० ९, पृ० २०४ । २ एवदिकालट्ठिदिएहि कम्मेहि सम्मत्त ण लहदि । जी० चू० ८, सू० १ । एद देसामासियसुत्त, तेण एदेसु कम्मेसु जहण्णट्ठिदिबधे उकस्सट्ठिदिबधे जहणुक्कस्सट्ठिदिसतकम्मेसु जहणुक्कस्सअणुभागसतकम्मेसु जहण्णुक्कस्सपदेससतकम्मेसु च सतेसु सम्मत्त ण पडिवज्जदि त्ति घेत्तव्व । ध० पु० ६, पृ० २०३ ।

जघन्यस्थितिबंधे सर्वसंक्लिष्टसंज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तकस्याभव्यस्योत्कृष्टस्थित्यनुभागप्रदेशसत्त्वे सर्वविशुद्धक्षपकाभिमुखे जघन्यस्थित्यनुभागप्रदेशसत्त्वे प्रथमोपशमसम्यक्त्वं जीवो न प्रतिपद्यते, उत्कृष्टबन्धसत्त्वयोस्तीव्रसंक्लेश-निबंधनत्वात् जघन्यबन्धसत्त्वयोश्च तीव्रविशुद्धिनिबंधनत्वेन मिथ्यादृष्टित्वाभावात् प्रागेव गृहीतसम्यग्दर्शनस्य क्षपकश्रेण्यारोहणात् । ततोऽन्त कोटाकोटिस्थितिद्विस्थानानुभागबन्धसत्त्वपरिणामकर्मणा जीव प्रथमोपशमयोग्यो भवतीति तात्पर्यम् ॥८॥

अब प्रसग प्राप्त प्रथमोपशमसम्यक्त्वके ग्रहणकी योग्यता बतलाते हैं—

स० च—सक्लेशी सज्ञी पचेंद्री पर्याप्तके सभवता ऐसा उत्कृष्ट स्थिति बंध अर उत्कृष्ट स्थिति अनुभाग प्रदेशका सत्त्व, बहुरि विशुद्ध क्षपक श्रेणीवालोंके सभवता ऐसा जघन्य स्थितिबंध अर जघन्य स्थिति अनुभाग प्रदेशका सत्त्व इनिकौं होतें जीव प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं न ग्रहै है ॥ ८ ॥

अथ प्रथमोपशमसम्यक्त्वाभिमुखस्य स्थितिबंधपरिणाममाह—

सम्मत्तहिमुहमिच्छो विसोहिवड्ढीहि वड्ढमाणो हु ।
अतोकोडाकोडि सत्तण्ह बंधण कुणइ[1] ॥ ९ ॥

सम्यक्त्वाभिमुखमिथ्य. विशुद्धिवृद्धिभि वर्धमान. खलु ।
अत कोटाकोटिं सप्ताना बधनं करोति ॥ ९ ॥

स० टी०—सम्यक्त्वाभिमुखमिथ्यादृष्टिर्विशुद्धिवृद्धिभिर्वर्धमान खलु अत कोटीकोटया सप्ताना बंधन करोति । प्रथमसम्यक्त्वाभिमुखो मिथ्यादृष्टिर्जीव प्रतिसमयमनतगुणविशुद्धिवृद्धया वर्धमान प्रायोग्यता-लब्धिकालप्रथमसमयादारभ्य आयुर्वजितसप्तकर्मस्थितिबध पूर्वस्थितिबन्धस्य सख्यातैकभागमात्रमत - कोटाकोटिप्रमित बध्नाति ॥ ९ ॥

अब प्रथमोपशम सम्यक्त्वके अभिमुख हुए जीवके स्थितिबन्धके योग्य परिणाम बतलाते हैं—

स० च०—प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं सन्मुख भया मिथ्यादृष्टि जीव सो विशुद्धताकी वृद्धिकरि वर्धमान होत सता प्रायोग्यलब्धिका प्रथम समयतैं लगाय पूर्व स्थितिबधके सख्यातवैं भागमात्र अत कोटाकोटी सागरप्रमाण आयु विना सात कर्मनिका स्थितिबध करै ॥ ९ ॥

अथ प्रायोग्यतालब्धिकाले प्रकृतिबधापसरणावतारमाह—

तत्तो उदहिसदस्स य पुधत्तमेत्त पुणो पुणोदरिय ।
बधम्मि पयडिबंधुच्छेदपदा होंति चोत्तीसं[2] ॥ १० ॥

ततः उदधे शतस्य च पृथक्त्वमात्रं पुन.पुनरुदीर्यं ।
बंधे प्रकृतिबधोच्छेदपदानि भवति चतुश्चत्वारिंशत् ॥ १० ॥

स० टी०—तत उदधिशतस्य च पृथक्त्वमात्र पुन पुनरवतीर्य बन्धे प्रकृतिबधोच्छेदपदानि भवति चतुस्त्रिंशत् । तस्मादत कोटाकोटिसागरोपमप्रमितात् स्थितिबन्धनात् पल्यसख्यातैकभागोना स्थितिमतर्मुहूर्त यावत्समानामेव बध्नाति । पुनस्तत पल्यसख्यातैकभागोनामपरा स्थितिमतर्मुहूर्त यावत् बध्नाति । एव पल्यसख्यातैकभागहानिक्रमेण पल्योनामन्त कोटीकोटिसागरोपमस्थितिमतर्मुहूर्तं यावद् बध्नाति । एव पल्यसख्यातैक-भागहानिक्रमेणैव पल्यद्वयोना पल्यत्रयोनामित्यादिस्थितिमतर्मुहूर्तं यावद् बध्नाति । तथा सागरोपमहीना द्विसागरोपम-

---

१ एदेसिं चेव सव्वकम्माण जावे अतोकोडाकोडिट्ठिदिं बधदि तावे पढमसम्मत्त लभदि । जी० चू० ८, सू० ३ । २. एत्थ विसोधीए वड्ढमाणाए सम्मत्ताहिमुहमिच्छादिट्ठिस्स पयडीण बधवोच्छेदकमो उच्चदे । ध० पु० ६, पृ० १३५ । क० पा०, पृ० ६१७ । जयध० पु० १२, पृ० २२१ ।

हीना त्रिसागरोपमहीना इत्यादिससाष्टशतलक्षसागरोपम-पृथक्त्वहीनामत कोटाकोटिस्थितिमतर्मुहूर्तं यावद् बध्नाति तदा एक नारकायु प्रकृतिबन्धापसरणस्थान भवति, तदा नारकायुर्बंधव्युच्छित्तिर्भवतीत्यर्थ । पुनरपि पूर्वोक्तक्रमेण सागरोपमशतपृथक्त्वहीनामत कोटीकोटिस्थितिं यदा बध्नाति तदा तिर्यगायुर्बंधव्युच्छेदो भवति । एवमनेन सागरोपमशतपृथक्त्वहानिक्रमेण स्थितिबन्धे एकैक प्रकृतिबन्धव्युच्छेदपद भवति यावत् चतुस्त्रिंशत्तम प्रकृतिबध-व्युच्छेदपद प्राप्नोति तावन्नेतव्य,॥ १० ॥

अब प्रायोग्यलब्धिके समय होनेवाले प्रकृतिबन्धपसरणका कथन करते है—

स० च—तिस अत कोटाकोटी सागरस्थितिबधतै पल्यका सख्यातवा भागमात्र घटता स्थिति-बध अन्तर्मुहूर्त पर्यंत समानता लीए करै। बहुरि तातै पल्यका सख्यातवाँ भागमात्र घटता स्थितिबध अतर्मुहूर्त पर्यंत करै। अैसै क्रमतै सख्यात स्थितिबधापसरणनिकरि पृथक्त्व सौ सागर घटै पहला प्रकृतिबधापसरणस्थान होइ। बहुरि तिस ही क्रमतै तिसतै भी पृथक्त्व सौ सागर घटै दूसरा प्रकृति-बधापसरणस्थान होइ। अैसै इस ही क्रमतै इतना इतना स्थितिबध घटै एक एक स्थान होइ। अैसै प्रकृतिबधापसरणके चौतीस स्थान होइ। इहा पृथक्त्व नाम सात वा आठका है, तातै इहाँ पृथक्त्व सौ सागर कहनेतै सातसै वा आठसै सागर जानने ॥ १० ॥

अथ चतुस्त्रिंशत्प्रकृतिबन्धापसरणस्थानानि गाथापञ्चकेनाह—

आऊ पडि णिरयदुगे सुहुमतिये सुहुमदोण्णि पत्तेयं।
बादरजुद दोण्णि पदे अपुण्णजुद बि-ति-चउसण्णि-सण्णीसु ॥११॥[1]

आयुः प्रति निरयद्विकं सूक्ष्मत्रयं सूक्ष्मद्वयं प्रत्येकं।
बादरयुत द्वे पदे अपूर्णयुतं द्वित्रिचतुरसंज्ञिसंज्ञिषु ॥ ११ ॥

स० टी०—प्रथम नारकायुषो व्युच्छित्तिपद, द्वितीय तिर्यगायुष, तृतीय मनुष्यायुष, चतुर्थ देवायुष, पचम नरकगतितदानुपूर्व्यो, षष्ठ सूक्ष्मापर्याप्तकसाधारणप्रकृतीना सयुक्तानाम्, सप्तम सूक्ष्मापर्याप्तकप्रत्येक-प्रकृतीना सयुक्तानाम्, अष्टम बादरापर्याप्तकसाधारणाना सयुक्तानाम्, नवम बादरापर्याप्तकप्रत्येकाना सयुक्तानाम्, दशम द्वीन्द्रियजात्यपर्याप्तकनाम्नो सयुक्तयो, एकादश त्रीन्द्रियजात्यपर्याप्तकनाम्नो, द्वादश चतुरिंद्रिय-जात्यपर्याप्तयो, त्रयोदश असज्ञिपचेंद्रियजात्यपर्याप्तयो, चतुर्दश सज्ञिपचेन्द्रियजात्यपर्याप्तयो ॥ ११ ॥

अब चौतीस स्थाननिविषै क्रमतै कैसी कैसी प्रकृतिका व्युच्छेद हो है सो कहिए है—

स० च—पहला नरकायुका व्युच्छित्तिस्थान है। इहातै लगाय उपशम सम्यक्त्व पर्यंत नरकायुका बध न होइ। अैसै ही आगै जानना। दूसरा तिर्यंचायुका है। तीसरा मनुष्यायुका है। चौथा देवायुका है। इहाँ प्रथमोपशम सम्यक्त्वविषै आयुबधका अभाव है, तातै सर्व आयुबधकी व्युच्छित्ति कही है। बहुरि पाचवाँ नरकगति-नरकानुपूर्वीका है। छठा सयोगरूप सूक्ष्म-अपर्याप्त-साधारणनिका है। इहा सयोगरूप कहनेकरि तीनोका मिलाप लीए तौ इहाँ ही पर्यंत बध होइ। अर इन तीनोविषै कोई प्रकृति बदलें यथासम्भव इनि प्रकृतिनिविषै कोई प्रकृतिका बध आगें भी होइ अैसा सयोगरूप कहनेका अभिप्राय जानना। आगै सयोगरूप कहनेका अैसै ही अर्थ समझना। बहुरि सातवाँ सयोगरूप सूक्ष्म-अपर्याप्त-प्रत्येकका है। आठवाँ सयोगरूप बादर-अपर्याप्त-साधारणनिका है। नवमा सयोगरूप बादर-अपर्याप्त-प्रत्येकका है। दशवाँ सयोगरूप बेंद्रीजाति-अपर्याप्तका है। ग्यारहवा सयोगरूप तेंद्री-अपर्याप्तका है। बारहवाँ सयोगरूप चौद्री-अपर्याप्तका है। तेरहवाँ सयोगरूप असज्ञी पचेंद्रिय-अपर्याप्तका है। चौदहवाँ सयोगरूप सज्ञी पचेंद्रिय-पर्याप्तका है ॥ ११ ॥

२ – क्षे-

१ ध० पु० ६, पृ० १३५-१३९।

अट्ठ अपुण्णपदेसु वि पुण्णेण जुदेसु तेसु तुरियपदे ।
एइंदिय आदावं थावरणाम च मिलिदव्वं ॥ १२ ॥

अष्टौ अपूर्णपदेष्वपि पूर्णेन युतेषु तेषु तुर्यपदे ।
एकेंद्रियमातपं स्थावरनाम च मेलयितव्यम् ॥ १२ ॥

स० टी—अष्टापूर्णपदेष्वपि पूर्णेन युतेषु तेषु तुर्यपदे एकेंद्रियमातपं स्थावरनाम च मेलयितव्यं । पञ्चदश सूक्ष्मपर्याप्तसाधारणानां संयुक्तानाम्, षोडश सूक्ष्मपर्याप्तप्रत्येकानां संयुक्तानाम्, सप्तदश बादरपर्याप्तसाधारणानां संयुक्तानाम्, अष्टादश बादरपर्याप्तप्रत्येकैकेंद्रियजात्यातपस्थावराणां संयुक्तानाम्, एकान्नविंश द्वीन्द्रियजातिपर्याप्तयो संयुक्तयो, विंश त्रीन्द्रियजातिपर्याप्तयो, एकविंश चतुरिन्द्रियजातिपर्याप्तयो, द्वाविंश असंज्ञिपञ्चेन्द्रियजातिपर्याप्तयो ॥ १२ ॥

स० च—पन्द्रहवां संयोगरूप सूक्ष्म पर्याप्त साधारणनिका है। सोलहवां संयोगरूप सूक्ष्म पर्याप्त प्रत्येकनिका है। सतरहवा संयोगरूप बादर पर्याप्त साधारणनिका है। अठारहवा संयोगरूप बादर पर्याप्त प्रत्येक एकेंद्री आतप स्थावरनिका है। उगणीसवा संयोगरूप बेंद्री पर्याप्तका है। बीसवा संयोगरूप तेंद्री पर्याप्तका है। इकवीसवा चौंद्री पर्याप्तका है। बावीसवा असंज्ञी पचेंद्री पर्याप्तका है ॥ १२ ॥

तिरिगदुगुज्जोवो वि य णीचे अपसत्थगमण दुभगतिए ।
हुंडासपत्ते वि य णउंसए वाम-खीलीए ॥ १३ ॥

तिर्यग्द्विकोद्योतोऽपि च नीचैः अप्रशस्तगमनं दुर्भगत्रिकं ।
हुंडासंप्राप्तेऽपि च नपुंसकं वामनकीलिते ॥ १३॥

स० टी०—त्रयोविंश तिर्यग्गतितदानुपूर्व्योद्योतानां संयुक्तानाम्, चतुर्विंश नीचैर्गोत्रस्य, पञ्चविंश अप्रशस्तगमनदुर्भगदुःस्वरानादेयानां संयुक्तानाम्, षड्विंश हुंडसंस्थानासंप्राप्तसृपाटिकासंहननयो, सप्तविंश नपुंसकवेदस्य, अष्टाविंश वामनसंस्थानकीलितसंहननयो ॥ १३ ॥

स० च०—तेईसवा संयोगरूप तिर्यंचगति, तिर्यंचानुपूर्वी उद्योतका है। चौईसवा नीच गोत्रका है। पचीसवा संयोगरूप अप्रशस्त विहायोगति दुर्भग दुःस्वर अनादेयनिका है। छवीसवा हुंडसंस्थान सृपाटिका संहननका है। सत्ताईसवा नपुंसकवेदका है। अठाईसवा वामन संस्थान कीलित संहननका है ॥ १३ ॥

खुज्जद्ध णाराए इत्थीवेदे य सादिणाराए ।
णग्गोध-वज्जणाराए मणुओरालदुग-वज्जे ॥ १४ ॥

कुब्जार्धनाराचं स्त्रीवेद च स्वातिनाराचे ।
न्यग्रोधवज्रनाराचे मनुष्यौदारिकद्विकवज्रे ॥ १४ ॥

स० टी०—एकान्नत्रिंश कुब्जसंस्थानार्द्धनाराचसंहननयो, त्रिंश स्त्रीवेदस्य, एकत्रिंश स्वातिसंस्थाननाराचसंहननयो, द्वात्रिंश न्यग्रोधसंस्थानवज्रनाराचसंहननयो, त्रयस्त्रिंश मनुष्यगतितदानुपूर्व्यौदारिकशरीरतदंगोपांगवज्रवृषभनाराचसंहननानां संयुक्तानाम् ॥ १४ ॥

स० च०—गुणतीसवा कुब्ज सस्थान अर्धनाराच सहननका है। तीसवा स्त्री वेदका है। इकतीसवा स्वाति सस्थान नाराच सहननका है। बत्तीसवा न्यग्रोध सस्थान वज्रनाराच सहननका है। तेतीसवा सयोगरूप मनुष्यगति मनुष्यानुपूर्वी औदारिक शरीर औदारिक अगोपाग वज्रवृषभ नाराच सहननका है ॥ १४ ॥

अथिरअसुभजस-अरदी सोय-असादे य होंति चोतीसा।
बंधोसरणट्ठाणा भव्वाभव्वेसु सामण्णा[1] ॥ १५ ॥

अस्थिर-अशुभायश. अरतिः शोकासाते च भवति चतुस्त्रिंशं।
बंधापसरणस्थानानि भव्याभव्येषु सामान्यानि ॥ १५ ॥

स० टी०—चतुस्त्रिंश अस्थिराशुभायशस्कीर्त्यरतिशोकासाताना सयुक्ताना प्रकृतीना बधव्युच्छित्ति-पद। प्रकृतिबन्धापसरणस्थानानि चतुस्त्रिंशदपि भव्याभव्ययो समानानि भवन्ति। सर्वत्र सागरोपमशतपृथक्त्व-हान्या आयुर्वर्जसप्तप्रकृतिस्थितिबन्धक्रमोऽपि पूर्ववद्द्रष्टव्य ॥ १५ ॥

स० च०—चौतीसवा सयोगरूप अस्थिर अशुभ अयश अरति शोक असातानिका वध व्युच्छित्तिस्थान है। ऐसै ए कहे चौंतीस स्थान ते भव्य वा अभव्यके समान हो है ॥ १५ ॥

विशेष—इन चौतीस बन्धापरणोमे वतलाई गई प्रकृतियोमेसे कुछ प्रकृतियाँ अशुभ है, कुछ प्रकृतियाँ अशुभतर है और कुछ प्रकृतियाँ अशुभतम है, अत इनकी बन्धव्युच्छिति विशुद्धिको प्राप्त होनेवाले भव्य और अभव्य दोनोके हो जाती है। किन्तु करणलब्धि भव्योके ही होती है।

अथ एतेपा प्रकृतिबधापसरणस्थानाना चतुर्गतिसभवविशेप कथयति—

णर-तिरियाण ओघो भवणति-सोहम्मजुगलए विदिय।
तदिय अट्ठारसम तेवीसदिमादि दसपद चरिम ॥ १६ ॥

नरतिरश्चामोघ· भवनत्रिसौधर्मयुगलके द्वितीयं।
तृतीयं अष्टादशमं त्रयोविंशत्यादिदशपदं चरमम् ॥ १६ ॥

स० टी०—नरतिरश्चोरोघ। भवनत्रिकसौधर्मयुगले द्वितीय तृतीय अष्टादश त्रयोविंशादीनि दशपदानि चरम। मनुष्यगतौ तिर्यग्गतौ च प्रथमसम्यक्त्वाभिमुखस्य मिथ्यादृष्टे पदानि चतुस्त्रिंशदपि सभवति। तद्बधयोग्याना सप्तदशोत्तरप्रकृतीना मध्ये नारकायुरादिपट्चत्वारिंशत्प्रकृतिबन्धापसरणकथनात्। तथाहि—नारकायुरादिपु षट्सु पदेपु नव, अष्टादशे पदे तिस्र, तत्तत्पदेपु द्वित्रिचतुरिन्द्रियजातयस्तिस्र, त्रयोविंशादिपु द्वादशसु पदेपु तिर्यग्द्विकोद्योतादय एकत्रिंशत्। एव चतुस्त्रिंशत्पदेपु षट्चत्वारिंशत्प्रकृतयो बन्धतो व्युच्छिन्ना इति सूत्रे सूचित-त्वात्, शेषा एकसप्ततिप्रकृतयस्तेन वध्यते। भावनादित्रये सौधर्मैशानयोश्च कल्पयोर्बन्धयोग्याना त्र्यधिकशत-प्रकृतीना मध्ये तिर्यगायुरादिपु चतुर्दशसु पदेपु एकत्रिंशत्प्रकृतयो बन्धतो व्युच्छिन्ना। शेषा द्वासप्ततिप्रकृतयो वध्यते ॥ १६ ॥

नरक, तिर्यञ्च और देवगतिमे बन्धपसरणोका निर्देश—

स० च०—मनुष्यतिर्यंचनिकै तौ समान्योक्त चौतीसौ स्थान पाइए है। तिनके वधयोग्य

[1] कुदो एस वधवोच्छेदकमो ? असुह-असुहयर-असुहतमभेएण पयडीणमवट्ठाणादो। एसो पयडिबध-वोच्छेदकमो विसुज्झमाणाण भव्वाभव्वमिच्छादिट्ठीण साहारणो। किन्तु तिण्णि करणाणि भव्वमिच्छादिट्ठिस्सेव, अण्णत्थ तेसिमणुवलभादो। ध० पु ६, पृ० १३९।

एकसौ सतरह प्रकृतिनिविषै चौंतीस स्थाननिकरि छियालीस प्रकृतिकी व्युच्छित्ति हो है। तहा आदिके छह स्थाननिविषै नव अर अठारहवाँ स्थाननिविषै एकेंद्रियादिक तीन अर उगणीसवाँ आदि बीचिके स्थाननिविषै वेंद्री तेंद्री चौद्री ए तीन अर तेईसवाँ आदि बारह स्थाननिविषै इकतीस ऐसें छियालीसकी व्युच्छित्ति हो है। अवशेष इकहत्तरि बाधिए है। बहुरि भवनत्रिक सौधर्म युगलविर्षे दूसरा तीसरा अठारहवाँ अर तेईसवाँ आदि दश अर अतका चौंतीसवाँ ए चौदह स्थान ही सभवै हैं। तहा इकतीस प्रकृतिकी व्युच्छित्ति हो है। बधयोग्य एकसौ तीनविषै बहत्तरि प्रकृतिनिका बध अवशेष रहै है ॥ १६ ॥

विशेष—दर्शनमोहनीयकी उपशामना करनेवाले जीवके तीर्थंकर प्रकृतिकी सत्ता तो होती ही नही। सादि मिथ्यादृष्टिके कदाचित् आहारकद्विककी सत्ता सम्भव है, परन्तु आहारद्विककी उद्वेलना करनेके बाद ही उक्त जीव दर्शनमोहनीयके उपशमना करनेके योग्य होता है। कारण कि सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वके उद्वेलना कालसे आहारकद्विकका उद्वेलना काल अल्प है। इसलिए भी दर्शनमोहनीयकी उपशमना करनेके सन्मुख हुए मिथ्यादृष्टि जीवके उक्त दो प्रकृतियोकी सत्ता नही पाई जाती।

अथ नरकगतौ देवगतौ च विशेषेण बधापसरणपदसभव कथयति—

ते चेव चोदसपदा अट्ठारसमेण हीणया होंति।
रयणादिपुढविछक्के सणक्कुमारादिदसकप्पे ॥ १७ ॥

तानि चैव चतुर्दशपदानि अष्टादशेन हीनानि भवति।
रत्नादिपृथ्वीषट्के सनत्कुमारादिदशकल्पे ॥ १७ ॥

स० टी०—तान्येव चतुर्दशपदानि अष्टादशेन हीनानि भवति। रत्नप्रभादिपृथ्वीषट्के सनत्कुमारादिदशकल्पेषु नरकगतौ रत्नप्रभादितम प्रभापर्यंते पृथ्वीषट्के प्रथमसम्यक्त्वाभिमुखमिथ्यादृष्टे प्रकृतिबधापसरणपदानि पूर्वोक्तान्येव अष्टादशेन हीनानि त्रयोदश भवति। तेषु तिर्यगायुरादयोऽष्टाविंशतिप्रकृतयो बन्धतो व्युच्छिन्ना, तद्योग्यप्रकृतिशतमध्ये तदपनयने शेषा द्वासप्ततिप्रकृतयो बध्यते। एव देवगतौ सनत्कुमारादिसहस्रारपर्यंतेषु दशसु कल्पेष्वपि बधापसरणपदानि बधव्युच्छिन्नप्रकृतयो बध्यमानप्रकृतयश्च ज्ञातव्या ॥ १७ ॥

रत्नप्रभा आदि छह पृथिवियोमे और सनत्कुमार आदि दश कल्पोमे बन्धापसरणोका निर्देश—

स० च०—रत्नप्रभा आदि छह नरक पृथ्वीनिविषैं अर सनत्कुमारादि दश स्वर्गनिविषै पूर्वोक्त चौदह स्थान अठारहवाँ विना पाइए है। तिन तेरह स्थाननिकरि अठाईस प्रकृति व्युच्छित्ति हो हैं। तहाँ बधयोग्य सौ प्रकृतिनिविषैं बहत्तरिका बध अवशेष रहै है ॥ १७ ॥

अथानतादिषु प्रकृतिबधापसरणस्थानानि कथयति—

ते तेरस विदिएण य तेवीसदिमेण चावि परिहीणा।
आणदकप्पादुवरिमगेवेज्जंतो त्ति ओसरणा ॥ १८ ॥

तानि त्रयोदश द्वितीयेन च त्रयोविंशतिकेन चापि परिहीनानि।
आनतकल्पाद्युपरिमग्रैवेयकांतमित्यपसरणाः ॥ १८ ॥

स० टी०—तानि त्रयोदश द्वितीयेन त्रयोविंशेन चापि परिहीनानि आनतकल्पाद्युपरिमग्रैवेयकात यावदपसरणानि। देवगतौ प्रथमसम्यक्त्वाभिमुखस्य मिथ्यादृष्टेरानतप्राणतादिपूपरिमग्रैवयकपर्यंतेषु विमानेषु वर्तमानस्य

विशुद्धिविशेषात्तान्येव पूर्वोक्तानि त्रयोदश प्रकृतिबधापसरणस्थानानि द्वितीयेन त्रयोविंशेन च हीनान्येकादशप्रकृति-बधापसरणस्थानानि भवति, तेष्वबध्यमाना प्रकृतयश्चतुर्विंशति । तद्योग्यपण्णवतिप्रकृतिमध्ये तदपनयने शेपा द्वासप्तति प्रकृतयो बध्यते ।। १८ ।।

आनतकल्पसे लेकर नौग्रैवेयक तकके देवोमे बन्धापसरणोका निर्देश—

स० च०—आनत स्वर्गादि उपरिम ग्रैवेयक पर्यतविपै तेरह स्थान दूसरा तेईसवा विना पाइए। तहा तिनि ग्यारह स्थाननिकरि चौवीस घटाइ बध योग्य छिनवै प्रकृतिनिविषै बहत्तरि बाधिए है ।। १८ ।।

अथ सप्तमपृथिव्या बधापसरणपदानि कथयति—

ते चेवेक्कारपदा तदिऊणा विदियठाणसपत्ता ।
चउवीसदिमेणूणा सत्तमिपुढविम्हि ओसरणा ।। १९ ।।

तानि चैवैकादशपदानि तृतीयोनानि द्वितीयस्थानसंयुक्तानि ।
चतुर्विंशतिकेनोनानि सप्तमीपृथिव्यामपसरणानि ।। १९ ।।

स० टी०—तान्येवैकादशपदानि तृतीयोनानि द्वितीयस्थानसयुक्तानि चतुर्विंशेनोनानि तान्येव सप्तम-पृथिव्यामपसरणानि । नरकगतौ सप्तमपृथिव्या प्रथमसम्यक्त्वाभिमुखस्य मिथ्यादृष्टे प्रकृतिबधापसरणस्थानानि पूर्वोक्तानि तृतीयस्थानरहितानि द्वितीयस्थानसहितान्येकादश चतुर्विंशेन स्थानेन रहितानि दश भवति । तेष्व-बध्यमाना प्रकृतयस्त्रयोविंशति । उद्योतेन सह चतुर्विंशतिर्वा । तद्योग्यपण्णवतिप्रकृतिमध्ये तदपनयने त्रिसप्ततिर्द्विसप्ततिर्वा प्रकृतयो बध्यते, उद्योतबधाबधयोस्तदा सभवात् ।। १९ ।

सातवी पृथिवीमे बन्धापसरणोका निर्देश—

स० च०—सातवी नरक पृथ्वीविषै जे ग्यारह स्थान तीसरा करि हीन अर दूसरा करि सहित चौईसवा करि हीन पाइए तहा तिनि दश स्थाननिकरि तेईसवा उद्योत सहित चौबीस घटाइ बधयोग्य छिनवे प्रकृतिनिविषैं तेहत्तरि बाधिए है, जातै उद्योतकौ बध वा अबध दोनो सभवै हैं ।। १९ ।।

अथ मनुष्यतिर्यग्गत्यो प्रथमसम्यक्त्वाभिमुखमिथ्यादृष्टिना बध्यमाना प्रकृतय कथ्यते—

घादिति साद मिच्छ कसायपुहस्सरदि भयस्स दुग ।
अपमत्तडवीसुच्चं बंधति विसुद्धणरतिरिया[1] ।। २० ।।

घातित्रयं सातं मिथ्यं कषायपुहास्यरतय. भयस्य द्विकम् ।
ाष्टविंशोच्चं बध्नति विशुद्धनरतिर्यंचः ।। २० ।।

स० टी०—ज्ञानावरणस्य पच, दर्शनावरणस्य नव, अतरायस्य पच, सातवेद्य, मिथ्यात्व पोडशकपाया पुवेदो, हास्य रतिर्भय जुगुप्सा, अप्रमत्तस्याष्टविंशतिरुच्चैर्गोत्रमित्येकसप्ततिप्रकृती प्रथमसम्यक्त्वाभिमुखा विशुद्धा मनुष्यतिर्यंचो बध्नति, चतुस्त्रिशद्बधापसरणपदेपु पट्चत्वारिंशत्प्रकृतीना बधव्युच्छेदस्य प्रागेवोक्तत्वात् ।।२०।।

सर्वविशुद्ध मनुष्यो और तिर्यञ्चोमे वन्धयोग्य प्रकृतियोका निर्देश—

स०च०—ऐसै व्युच्छित्ति भए प्रथम सम्यक्त्वकौ सन्मुख मिथ्यादृष्टि मनुष्य वा तिर्यञ्च

१ जी० चू० ३, सू० २ । जयध० पु० १२, पृ० २११ ।

है ते ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतरायकी उगणीस १९ सातावेदनीय १, मिथ्यात्व १ कषाय सोलह १६ पुरुषवेद १ हास्य १ रति १ भय १ जुगुप्सा १, अप्रमत्तकी अठाईस २८, उच्चगोत्र १ ऐसे इकहत्तरि प्रकृति बांधे है ॥ २० ॥

विशेष—प्रथमदंडकमे इस गाथासूत्रमे जिन ४३ प्रकृतियोंका क्रमोल्लेख है वे और अप्रमत्तसंयतके बँधनेवाली अन्य जो २८ प्रकृतियाँ है वे सब मिलाकर ७१ प्रकृतियाँ परिगणित की गई है।

अथाप्रमत्तस्याष्टाविंशतिं प्रकृतीरुद्दिशति—

देव-तस-वण्ण-अगुरुचउक्कं समचउर-तेज-कम्मइयं ।
सग्गमणं पंचिंदी थिरादिछण्णिमिणमडवीसं ॥ २१ ॥

देवत्रसवर्णागुरुचतुष्कं समचतुरस्रतेजः कार्मणकम् ।
सद्गमनं पंचेंद्रियस्थिरादिषण्णिर्माणमष्टाविंशम् ॥ २१ ॥

सं० टी०—देवत्रसवर्णागुरुचतुष्काणि समचतुरस्रसंस्थानं तैजसं कार्मणं सद्गमनं पंचेंद्रियजातिः स्थिरादिषट्कं निर्माणमित्यष्टाविंशतिः ॥ २१ ॥

अप्रमत्तजीवके बन्ध योग्य उक्त २८ प्रकृतियोंका निर्देश—

सं० च—देवचतुष्क ४, त्रसचतुष्क ४, वर्णचतुष्क ४, अगुरुलघुचतुष्क ४, समचतुरस्र १, कार्माण १, तैजस १, शुभविहायोगति एक १, पचेंद्री १, स्थिर आदि छह ६, निर्माण १ ए अठाईस प्रकृति अप्रमत्तसंबंधी जाननी ॥ २१ ॥

अथ देवनरकगत्योः प्रथमसम्यक्त्वाभिमुखमिथ्यादृष्टिना बध्यमानाः प्रकृतीरुद्दिशति—

तं सुरचउक्कहीणं णरचउवज्जजुद पयडिपरिमाणं ।
सुरछप्पुढवीमिच्छा सिद्धोसरणा हु बंधंति ॥ २२ ॥

तत् सुरचतुष्कहीनं नरचतुर्वज्रयुतं प्रकृतिपरिमाणं ।
सुरषट्पृथिवीमिथ्याः सिद्धापसरणा हि बध्नंति ॥ २२ ॥

सं० टी०—तत्सुरचतुष्कहीनं नरचतुष्कवज्रयुतं प्रकृतिपरिमाणं सुरषट्कपृथ्वीमिथ्यादृष्टयः सिद्धापसरणाः खलु बध्नंति । तिर्यग्मनुष्यबन्धप्रकृतिषु सुरचतुष्कमपनीय नरचतुष्के वज्रवृषभनाराचसंहनने च प्रक्लृप्ते द्विसप्तति प्रकृतीः प्रसिद्धबन्धापसरणाः सुरमिथ्यादृष्टयः षट्पृथ्वीनारकमिथ्यादृष्टयश्च बध्नंति ॥ २२ ॥

देवों और छह पृथिवियोंमे बँधनेवाली प्रकृतियोंका निर्देश—

सं० च—तिन इकहत्तरिविषैं देवचतुष्क घटाइ मनुष्यचतुष्क वज्रवृषभनाराच मिलाएँ बहत्तरि प्रकृतिनिकौं सिद्ध भए हैं बंधापसरण जिनके ऐसे मिथ्यादृष्टि देव छह पृथ्वीनिके नारकी बाँधै हैं। इहाँ देवचतुष्कविषै देवगति, देवानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर वैक्रियिकअंगोपांग जानना। अर मनुष्यचतुष्कविषै मनुष्यगति मनुष्यगत्यानुपूर्वी औदारिक औदारिक अंगोपांग जानने।

विशेष—दूसरे दण्डकमे उक्त ७१ प्रकृतियोंमेसे देवगतिचतुष्कको कम कर तथा मनुष्यगति-चतुष्क और वज्रर्षभनाराचसंहननको मिलाकर ७२ प्रकृतियाँ परिगणित की गई हैं।

१ जी० चू० ४, सू० २। जयध० पु० १२, पृ० २११।

अथ सप्तमपृथिव्यां बंधप्रकृतीरुद्दिशति—

तं णरदुगुच्चहीणं तिरियदुणीचजुदं पयडिपरिमाणं ।
उज्जोवेण जुदं वा सत्तमखिदिगा हु बंधंति[1] ॥ २३ ॥

तत् नरद्विकोच्चहीन तिर्यग्द्विकं नीचयुतं प्रकृतिपरिमाणं ।
उद्योतेन युतं वा सप्तमक्षितिगा हि बध्नन्ति ॥ २३ ॥

स० टी०—तन्नरद्विकोच्चैर्गोत्रहीनं तिर्यग्द्विकनीचैर्गोत्रयुतप्रकृतिपरिमाणं उद्योतेन युतं वा सप्तमक्षितिगा खलु बध्नन्ति । सुगमं ॥ २३ ॥ इति प्रथमसम्यक्त्वाभिमुखमिथ्यादृष्टेः प्रकृतिबंधाबंधविभागः कथितः ।

सातवीं पृथिवीमें बंधनेवाली प्रकृतियोंका निर्देश—

स० च०—तिनि बहत्तरनिविषै मनुष्यद्विक उच्चगोत्र विना अर तिर्यंचद्विक नीचगोत्र सहित बहत्तरि अथवा उद्योतसहित तेहत्तरि प्रकृतिनिकौं सातवीं नरक पृथ्वीवाले बांधै है ॥ २३ ॥ ऐसैं प्रकृतिबंध-अबंधका विभाग कह्या ।

विशेष—दूसरे दंडकमें उक्त ७२ प्रकृतियोंमेंसे मनुष्यगतिद्विक और उच्चगोत्रको कम कर तथा तिर्यंचगतिद्विक, उद्योत और नीचगोत्रको मिलाकर कुल ७३ प्रकृतियाँ तीसरे दण्डकमें परिगणित की गई हैं ।

अथ स्थित्यनुभागबंधभेदं कथयति—

अंतोकोडाकोडीठिदिं असत्थाण सत्थगाणं च ।
बिचउट्ठाणरसं च य बंधाणं बंधणं कुणइ[2] ॥ २४ ॥

अंतःकोटाकोटिस्थितिं अशस्तानां शस्तकानां च ।
द्विचतुःस्थानरसं च च बंधानां बंधनं करोति ॥ २४ ॥

स० टी०—अंतःकोटीकोटिस्थितिं अशस्तानां शस्तानां च द्विचतुःस्थानरसं च च बंधानां बंधनं करोति । चतुस्त्रिंशद्बंधापसरणपदेषु पदं प्रति पदं प्रति सागरोपमशतपृथक्त्वहीनामंतःकोटीकोटिसागरोपमप्रमितां बध्यमानप्रकृतीनां स्थितिं चतुर्गतिविशुद्धिमिथ्यादृष्टिर्बध्नाति । तत्र तत्र पदे अप्रशस्तप्रकृतीनां द्विस्थानगतमनुभागं प्रतिसमयमनंतगुणहान्या बध्नाति, प्रशस्तप्रकृतीनामनुभागं चतुःस्थानगतं प्रतिसमयमनंतगुणवृद्ध्या बध्नाति, तद्विशुद्धेः प्रतिसमयमनंतगुणवृद्धिसंभवात् ।। २४ ॥

अब स्थितिबन्ध और अनुभागबन्धके भेदका कथन करते हैं—

स० च०—प्रथम सम्यक्त्वकौं सन्मुख च्यारथों गतिवाला मिथ्यादृष्टि जीव बध्यमान प्रकृतिनिकी चौंतीस बंधापसरण स्थाननिविषै एक एक स्थान प्रति पृथक्त्व सौ सागर घटता क्रम लीए अंतःकोटाकोटी सागरप्रमाण स्थिति बांधै हैं । अर अनुभाग अप्रशस्त प्रकृतिनिका तौ दोय स्थानकौं प्राप्त समय समय अनंत अनंतगुणा घटता बांधै है । प्रशस्त प्रकृतिनिका च्यारि स्थानकौ प्राप्त समय समय अनंतगुणा बंधता बांधै है ।। २४ ॥

---

१ जी० चू० ५, सू० २ । जयध० पु० १२, पृ० २१२ ।
२ ध० पु० ६, पृ० २०९ । जयध० पु० १२, पृ० २१३ ।

अथ सम्यक्त्वाभिमुखमिथ्यादृष्टेः प्रदेशबंधविभागं कथयति—

मिच्छणथीणति सुरचउ समवज्जपसत्थगमणसुभगतियं ।
णीचुक्कस्सपदेसमणुक्कस्सं वा पबंधदि हु[1] ॥ २५ ॥

मिथ्यानस्त्यानत्रिकं सुरचतुः समवज्रप्रशस्तगमनसुभगत्रिकं ।
नीचैरुत्कृष्टप्रदेशमनुत्कृष्टं वा प्रबध्नाति हि ॥ २५ ॥

स० टी०—मिथ्यात्वमनंतानुबंधिनः स्त्यानगृद्ध्यादित्रयं सुरचतुष्कं समचतुरस्रसंस्थानं वज्रवृषभनाराच-संहननं प्रशस्तविहायोगमनं सुभगत्रयं नीचैर्गोत्रमित्येकान्नविंशतेः प्रकृतीनामुत्कृष्टं वा प्रदेशं प्रथमसम्यक्त्वाभि-मुखो विशुद्धश्चातुर्गतिको मिथ्यादृष्टिर्बध्नाति ॥ २५ ॥

अब सम्यक्त्वके अभिमुख हुए मिथ्यादृष्टिके प्रदेशबन्धके विभागको कहते हैं—

स० च०—यहु जीव मिथ्यात्व १ अनंतानुबंधीचतुष्क ४ स्त्यानगृद्धित्रिक ३ देवचतुष्क ४ समचतुरस्र १ वज्रवृषभनाराच १ प्रशस्तविहायोगति १ सुभगादि तीन ३ नीच गोत्र १ इन उगणीस प्रकृतिनिका उत्कृष्ट वा अनुत्कृष्ट प्रदेशबंध करै है ॥ २५ ॥

एदेहिं विहीणाणं तिण्णि महादंडएसु उत्ताणं ।
एकट्ठिपमाणाणमणुक्कस्सपदेसबंधणं कुणइ[2] ॥ २६ ॥

एतैर्विहीनानां त्रिषु महादंडकेषूक्तानाम् ।
एकषष्टिप्रमाणानामनुत्कृष्टप्रदेशबंधनं करोति ॥ २६ ॥

स० टी०—एतैर्विहीनानां त्रिषु महादंडकेषूक्तानां एकषष्टिप्रमाणानां प्रकृतीनामनुत्कृष्टप्रदेशबन्धनं करोति ॥ २६ ॥

स० च०—इनकरि जे हीन जे महादंडकनिविषै कही ऐसी प्रकृतिनिविषै इकसठि प्रकृतिनिका अनुत्कृष्ट प्रदेशबंध करै है ॥ २६ ॥

अथैतत्प्रकृतिसम्भवं कथयति—

पढमे सव्वे बिदिये पण तदिये चउ कमा अपुणरुत्ता ।
इदि पयडीणमसीदी तिदंडएसु वि अपुणरुत्ता ॥ २७ ॥

प्रथमे सर्वे द्वितीये पंच तृतीये चतुः क्रमादपुनरुक्ताः ।
इति प्रकृतीनामशीतिः त्रिदंडकेष्वपि अपुनरुक्ता ॥ २७ ॥

स० टी०—सिद्धांते प्रथमदंडके[3] सर्वा घातित्रयादयः एकसप्ततिप्रकृतयः उक्ताः । द्वितीयदंडके[4] नरचतुष्कं वज्रवृषभनाराचसंहननमिति पंच प्रकृतयः अपुनरुक्ता उक्ताः, तृतीयदंडके[5] तिर्यग्द्विकं नीचैर्गोत्रं उद्योतं इति चतस्रः प्रकृतयः अपुनरुक्ता उक्ताः । एवं क्रमात्त्रिष्वपि दंडकेषु अपुनरुक्तानां प्रकृतीनामशीतिः प्रोक्ता ॥ २७ ॥

---

(१) जयध० पु० पृ० १२, पृ० २१३, । ध० पु० ६, पृ० २१० ।
(२) जयध० पु० १२, पृ० २१३ । ध० पु० ६, पृ० २१० । (३) जीव चू० ३, सू० २ । ध० पु० ६ पृ० १३३ । (४) जी० चू० ४, सू० २ । ध० पु० ६, पृ० १४० । (५) जी० चू० ५, सू० २ । ध० पु० ६, पृ० १४१ ।

अब तीन महादण्डकोमे सम्भव प्रकृतियोको बतलाते हैं —

स० च—मनुष्य तिर्यंचकै बधयोग्य जो पहिला दडक तीहिं विषै सर्व इकहत्तर ही अपुनरुक्त बहुरि भवन त्रिकादिककै योग्य जो दूसरा दडक तीहिंविषै मनुष्यचतुष्क, वज्रवृषनाराच ए पॉच अपुनरुक्त है। अन्य प्रकृति पहिला दडकविषै कही ही थी। अर सातवी पृथ्वीवालोकै योग्य तीसरा दडकविषै तिर्यंचद्विक २, नीचगोत्र १, उद्योत १ ए च्मारि अपुनरुक्त है। अन्य प्रकृति पहिला दूसरा दडकविषैं कही ही थी। अैसै तीनो दडकनिविषै अपुनरुक्त असी प्रकृति जाननी ॥ २७॥

अैसै बध कहि अब तिस ही जीवकै उदय कहै है—

विशेष—प्रथम दडकमे जिन ७१ प्रकृतियोकी परिगणना की गई है उनका उल्लेख गाथा २० और २१ मे किया गया है।

एव प्रथमसम्यक्त्वाभिमुखस्य विशुद्धमिथ्यादृष्टे प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशबधावधभेदमभिधाय तस्यैवोदयप्रकृतिभेदमाह—

उदये चउदसघादी णिद्दापयलाणमेक्कदरग तु।
मोहे दस सिय णामे वचिठाण सेसगे सजोगेक्क[1] ॥

उदये चतुर्दश घातिन. निद्राप्रचलानामेकतरकं तु।
मोहे दश स्यात् नामनि वचःस्थानं शेषकं सयोग्येकं ॥ २८ ॥

स० टी०—नरकगतौ[2] प्रथमसम्यक्त्वाभिमुखविशुद्धमिथ्यादृष्टेरुदये वर्तमाना प्रकृतयो ज्ञानावरणस्य पच, दर्शनावरणस्य स्त्यानगृद्ध्यादित्रयेण निद्राप्रचलाभ्या च रहिता चतस्र, अतरायस्य पच, मोहनीयस्य दशक नवकमष्टक वा स्थानानि[3], नारकायुरेका, नाम्नो वाक्स्थानमेकान्नत्रिंशत् (प्रकृतय) वेदनीयस्यैका, नीचैर्गोत्र।

अत्र मोहनीयस्य ० अष्ट प्रकृतिस्थानेन युक्ता कस्यचिज्जीवस्य चतु पचाशत्प्रकृतय,

२ । २
१
४ । ४ । ४ । ४
१

तद्भगा मोहनीयस्याष्टौ, वेदनीयभगाभ्या गुणिता षोडश, नामप्रकृतीना स्थिरसुभगयुगद्वयवर्जिताना नरकगतावप्रशस्तानामेवोदयाद् भगाभाव। पुनस्ता एव कस्यचिज्जीवस्य भयेन जुगुप्सया वा १ नवप्रकृतिस्थानेन युक्ता

२ । २
१
४ । ४ । ४ । ४
१

---

१ ध० पु० ६, पृ० २१०।

२ ध० पु० ६, पृ० २११।

३ भयसहिय च जुगुछासहिय दोहिं वि जुद च ठाणाणि। मिच्छादि-अपुव्वते चत्तारि हवति णियमेण। गो० क०, गा० ४७७।

पचपचाशत्प्रकृतय तद्भगा पूर्वे एव भयजुगुप्साभ्या गुणिता द्वात्रिंशत् । पुन कस्यचिज्जीवस्य ता एव भयजुगुप्साभ्या २ दशप्रकृतिस्थानेन युक्ता षट्पचाशत्प्रकृतय , तद्भगा प्राग्वत् षोडश ।

२ । २
१
४ । ४ । ४ । ४
१

भयजुगुप्सयोर्युगपदुदयसभवाद् भगाभाव । तिर्यग्गतौ[1] पूर्वोक्तप्रकृतिषु सहनने प्रक्षिप्ते मोहाष्टकस्थानयुक्ता पचपचाशत्प्रकृतय , तद्भगा ० मोहस्य चतुर्विशति , वेदनीयस्य द्वौ, नामकर्मण[2] 'सठाणे सहडणे विहायजुम्मे य २ । २ चरिमचदुजुम्मे'

१ । १ । १
४ । ४ । ४ । ४
१
१ । १
१ । १
१ । १ इत्यनेनोक्ता द्वापचाशदुत्तराण्येकादशशतानि ११५२ । चतुर्विशत्या
१ । १
१ । १
१ १ १ १ १ १
१ १ १ १ १ १

द्वाभ्या च गुणितानि षण्णवत्युत्तरद्विशत्यधिकानि पचपचाशत्सहस्राणि ५५२९६ भवति । पुनस्ता एव प्रकृतय भयेन जुगुप्सया वा १ मोहनवकस्थानयुक्ता षट्पचाशद्भगा पूर्वभगा एव द्वाभ्या गुणिता २ । २ द्वानवत्युत्तरपचशत्यधिकदशसहस्रसयुक्तैकलक्षसख्या ११०५९२ ।

१ । १ । १
४ । ४ । ४ । ४
१

पुनस्ता एव प्रकृतयो युगपद्भयजुगुप्साभ्या २ मोहदशकस्थानयुक्ता सप्तपचाशत्, तद्भगा भय-
२ । २ जुगुप्साभगद्वयरहितास्त एव षण्णवत्यु-
१ । १ । १
४ । ४ । ४ । ४
१

त्तरद्विशत्यधिकानि पचपचाशत्सहस्राणि ५५२९६ । पुनरेतान्येव त्रीणि स्थलान्युद्योतेनाधिकानि षट्पचाशत्सप्तपचाशदष्टपचाशत्प्रकृतिकानि भवति, भगा पुन पूर्ववदेव । मनुष्यगतावपि[3] तिर्यग्गतिवत् । अय तु विशेष — उद्योतनामयुक्त स्थलत्रय नास्ति, तदुदयस्य तिर्यग्गतावेवेति नियमात् । उच्चैर्गोत्रस्याप्युदयोऽस्तीति तिर्यग्गति-भगा एव गोत्रभगद्वयेन गुणिता मनुष्यगतौ भगा भवति

५५	५६	५७
११०५९२	२२११८४	११०५९२

।

१ ध० पु० ६, पृ० ३१२ । जयध० पु० १२, पृ० २१९ ।
२ सठाणे सहणणे विहायजुम्मे य चरिमचदुजुम्मे । अविरुद्धेगदरादो उदयट्ठाणेसु भगा दु । गो० क०, गा ५९९ । ३ ध० पु० ६, पृ० ३१२ ।

देवगतावपि[1] नरकगतिवत् । अय तु विशेप —तत्र नामकर्मप्रकृतय प्रशस्ता एव, उच्चैर्गोत्रमेव, मोहप्रकृतिपु नपुसकवेदमपनीय स्त्रीपुवेदद्वयमेलनात् द्विगुणभगा — ० अत कारणात् स्थलत्रयेऽपि भगा एव—

२ । २
१ । १
४ ४ ४ ४
१

५४ ५५ ५६ । पुनर्निद्रया प्रचलया वा युक्ता पूर्वोक्ता एव गतिचतुष्टये प्रकृतय एकाधिका भवति,
३२ ६४ ३२

भगाश्च पूर्वोक्ता एव निद्राप्रचलाभगद्वयेन गुणिता भवति ॥ २८ ॥ अथ प्रथमसम्यक्त्वाभिमुखस्य विशुद्ध-मिथ्यादृष्टेरुदययोग्यप्रकृतीना स्थित्यनुभागौ व्याचष्टे—

अब प्रकृतमे उदय प्रकृतियोको बतलाते हैं—

स० च०—प्रथम सम्यक्त्व सन्मुख जीवकै नरकगतिविषै ज्ञानावरणकी पाँच ५, दर्शनावरणकी निद्रादि पाँच विना च्यारि ४, अन्तरायकी पाँच ५, मोहनीयकी दश १० वा नव वा आठ, आयुकी एक नरकायु, नामकी भाषापर्याप्ति कालविषै उदय आवने योग्य गुणतीस, तिनिके नाम गति १, जाति १, शरीर ३, अगोपाग १, निर्माण १, सस्थान १, वर्णचतुष्क ४, अगुरुलघु १, स्थिरयुगल २, शुभयुगल २, त्रस १, वादर १, पर्याप्त १, दुर्भग, अनादेय १, अयशस्कीर्ति १, प्रत्येक १, उपघात १, परघात १, उश्वास १, अशुभविहायोगति १, दु स्वर १, ए जाननी । बहुरि वेदनीयकी एक कोई, गोत्रकी एक नीच गोत्र अैसै इनि प्रकृतिनिका उदय है। इहा मोहनीयकी वा नामकी उदय प्रकृतिनिका अर प्रकृति बदलनेतै भग हो है तिनिका गोम्मटसारविषैं कर्मकाडका जो स्थानसमुत्कीर्तन अधिकार तिहिविषै विशेष वर्णन है तहाँतैं जानना । अैसै मोहनीयकी मिथ्यात्व अर अनतानुबधी आदि च्यारि प्रकार क्रोधादिविषै कोई एक अर नपु सक वेद अर हास्य शोक युगलविषै एक, रति अरति युगलविषै एक अैसै आठ प्रकृति सहित कोई जीवकै चौवन प्रकृतिका उदय हो है । तहाँ मोहनीयके च्यारि कषाय अर दोय युगलके बदलनेतै आठ भग अर दोय वेदनीयके भगनितै गुणे सोलह भग हो हैं । नामकी अप्रशस्तहीनिका इहा उदय है, तातैं नामकर्मकी अपेक्षा भग नाही है । बहुरि भय वा जुगुप्सा विषै कोई एक मिलाए मोहकी नव सहित पचवनका उदय होइ । तहा पूर्वोक्त सोलह भगनिकौ भय जुगुप्साकरि गुणे बत्तीस भग हो है । बहुरि भय जुगुप्सा दोऊनि करि युक्त मोहकी दश सहित छप्पन प्रकृतिका उदय होइ, तहा सोलह ही भग जानने, जातै इहा दोऊनिका उदय युगपत् है । इहा क्रोध सहित अन्य प्रकृति लगाए प्रथम भग, क्रोधकी जायगा मान कहैं दूसरा भग, अैसैं ही प्रकृति वदलनेतैं भगनिका होना जानना ।

वहुरि तिर्यंच गतिविषैं पूर्वोक्त प्रकृतिनिविपै एक सहनन मिलाए पचावन, छप्पन, सत्तावनका उदय जानना । तहा पचावन उदय विषै इहा तीनो वेद पाइए, तातै तिनके वदलनेतै मोहके भग चौईस हो हैं । अर वेदनीयके दोय हैं ही । अर नामके 'सठाणे सहडणे' इत्यादि सूत्रकरि छह सस्थान, छह सहनन, विहायोगतियुगल, सुभगयुगल, स्वरयुगल, आदेययुगल, यशस्कीर्तियुगल इनिके वदलनेतैं ग्यारहसै वावन भग हो हैं, जातैं इहा इन सवनिका उदय सभवै है । अैसै ए भग कहे । इनकौं परस्पर गुणै पचावन हजार दोयसै छिनवै भग भए । वहुरि छप्पनका उदयविपै भय-

१ ध० पु० ६, पृ० २१३ । जयध० पु० १२, पु० २१९ ।

जुगुप्सातै गुणै तिनतै दूणे ११०५९२ भग भए। बहुरि सत्तावनका उदयविषै पचावनवत् ही ५५२९६ भग जानने। बहुरि तिनविषैं उद्योत प्रकृति मिलाए तहा छप्पन सत्तावन अट्ठावनका उदय हो है। तहा भग तीनो जायगा पूर्वोक्त प्रकार ही जानने।

बहुरि मनुष्यगतिविषै तिर्यचवत् उदय जानना। विशेष इतना–तहा उद्योत सहित उदय नाही है। बहुरि तहा दोऊ गोत्रनिका उदय सभवै हे, तातै तिर्यचगतिविषैं कहे भगनितै तीनो जायगा गोत्रके बदलनेतै दूणा भग जानने।

बहुरि देवगतिविषै नरकवत् उदय जानना। विशेष इतना–इहा नामकी प्रशस्त प्रकृतिनिहीका अर उच्चगोत्रका अर मोहविषै नपुसक वेद विना स्त्री पुरुषविषै कोई एक वेदका उदय पाइए है। तहा दोय वेदके बदलनेतै नरक गतिविषै कहे भगनितैं तीनो जायगा दूणे भग जानने। ऐसै ए भग निद्राका उदय रहित जीवनिकी अपेक्षा कहे। बहुरि इन च्यार्यो गतिविषैं जे उदय कहे तिनविषैं निद्रा प्रचलाविषै कोई एक प्रकृति मिलाए एक एक प्रकृतिनिकरि अधिक उदय हो है। तहा इन दोऊ प्रकृतिनिके बदलनेतै सर्वत्र पूर्वोक्त भगनितै दूणे भग जानने ॥ २८ ॥

अब प्रकृतमे उदय योग्य प्रकृतियोके स्थिति और अनुभागको वतलाते हैं—

उदइल्लाण उदये पत्तेक्कठिदिस्स वेदगो होदि।
विचउट्ठाणमसत्थे सत्थे उदयल्लरसभुत्ती[1] ॥ २९ ॥

उदयवतामुदये प्राप्ते एकस्थितिकस्य वेदको भवति।
द्विचतु स्थानमशस्ते शस्ते उदीयमानरसभुक्तिः ॥ २९ ॥

सं० टी०—उदयवता कर्मणामुदय प्रति उदयमुद्दिश्य एकस्थितेरुदयागतस्यैकनिषेकस्य वेदकोऽनुभविता भवति स जीव, उदयवत्प्रकृतीनामप्रशस्ताना द्विस्थानगतस्य रसस्य प्रशस्ताना चतु स्थानगतस्य रसस्य भुक्तिरनुभवस्तेन जीवेन क्रियते ॥ २९ ॥ अथ तस्य प्रदेशोदयमुदीरणा चब्रवीति—

स० च०—उदयवान प्रकृतिनिका उदय अपेक्षा एक स्थिति जो उदयकौ प्राप्त भया एक निषेक ताहीका भोक्ता सो जीव हो है। बहुरि अप्रशस्त प्रकृतिनिका द्विस्थानरूप अर प्रशस्त प्रकृतिनिका चतु स्थानरूप अनुभागका भोगवना ताकौ हो है ॥ २९ ॥

अब प्रकृतमे प्रदेशोदय और उदीरणाको बतलाते है—

अजहण्णमणुक्कस्सप्पदेसमणुभवदि सोदयाण तु।
उदयिल्लाण पयडिचउक्काणमुदीरगो होदि[2] ॥ ३० ॥

अजघन्यमनुत्कृष्टप्रदेशमनुभवति सोदयानां तु।
उदयवता प्रकृतिचतुष्काणामुदीरको भवति ॥ ३० ॥

---

१ ध० पु० ६, पृ० २१३। जयध० पु० १२, पृ० २२०।

२ उदयस्सुदीरणस्स य सामित्तादो ण विज्जदि विसेसो। मोत्तूण तिण्णि ट्ठाण पमत्त जोगी अजोगी य। गो० क०, गा० २७८।

स० टी०—सोदयाना प्रकृतीनामजघन्यमनुत्कृष्ट च प्रदेशमनुभवति स जीव । पुनरुदयवता प्रकृति-स्थित्यनुभागप्रदेशाना चतुर्णामुदीरको भवति स जीव , उदयोदीरणयो स्वामिभेदाभावात्[1] ।। ३० ।। अथ तस्य सत्त्वप्रकृतीरुद्दिशति—

स० च०—उदय प्रकृतिनिका अजघन्य वा अनुत्कृष्ट प्रदेशकौं भोगवै है। जघन्य वा उत्कृष्ट परमाणूनिका इहा उदय नाही। बहुरि प्रकृति प्रदेश स्थिति अनुभाग जे उदयरूप कहे तिनहीका यहु उदीरणा करनेवाला हो है। जातैं जाकैं जिनिका उदय ताकौ तिनहीकी उदीरणा भी सभवै है ।। ३० ।।

अैसे उदय उदीरणा कहि अब सत्त्व कहै हैं—

दुति आउ तित्थहारचउक्कणा सम्मगेण हीणा वा।
मिस्सेणूणा वा वि य सव्वे पयडी हवे सत्तं ।। ३१ ।।

द्वित्रिआयुःतीर्थाहारचतुष्कै. सम्यक्त्वेन हीना वा।
मिश्रेणोना वापि च सर्वेषां प्रकृतीना भवेत् सत्त्वम् ।। ३१ ।।

स० टी०—अनादिमिथ्यादृष्टि सादिमिथ्यादृष्टिर्वा प्रथमोपशमसम्यक्त्वयोग्यो भवति । तत्रानादिमिथ्या-दृष्टेर्जीवस्याबद्धायुष इतरायुस्त्रयेण तीर्थकरत्वेनाहारकचतुष्केण सम्यक्त्वसम्यग्मिथ्यात्वाभ्या च दशभि प्रकृति-भिरूना सर्वा प्रकृतय १३८ सत्त्वेन विद्यते। तस्यैव बद्धायुष नवभिरूना १३९, सादिमिथ्यादृष्टेरबद्धायुषः इतरायुस्त्रय तीर्थकरत्वमाहारकचतुष्कमित्यष्टभिरूना १४०, तस्यैवोद्वेल्लितसम्यक्त्वस्य नवभिरूना १३९, तस्यैवोद्वेलितसम्यग्मिथ्यात्वस्य दशभिरूना १३८, तस्यैव बद्धायुष इतरायुर्द्वयेन तीर्थकरत्वेनाहारकचतुष्केण वा सप्तभिरूना १४१, तस्यैवोद्वेल्लितसम्यक्त्वस्याष्टभिरूनाः १४०, तस्यैवोद्वेल्लितसम्यग्मिथ्यात्वस्य नवभिरूना १३९ समस्ता प्रकृतय सत्त्वेन विद्यन्ते। अनुद्वेल्लिताहारकचतुष्कस्य तीर्थकरसत्कर्मणश्च सादिमिथ्यादृष्टे प्रथमोपशमसम्यक्त्वाभिमुखस्यासभवात् ।। ३१ ।। अथ सत्कर्मप्रकृतीना स्थित्यादिसत्त्वपूर्वक प्रायोग्यतालब्धि-मुपसहरति—

स० च०—सम्यक्त्व सन्मुख अनादि मिथ्यादृष्टिकै अबद्धायुकै तौ भुज्यमान विना तीन आयु ३, तीर्थंकर १, आहारकचतुष्क ४, सम्यग्मोहनी १, मिश्रमोहनी १, इनि दश विना एकसौ अठतीसका सत्त्व है। वहुरि तिस ही वद्धायुकैं एक बध्यमान आयु सहित एकसौ गुणतालीसका सत्त्व हो है। वहुरि सम्यक्त्व सन्मुख सादि मिथ्यादृष्टिकै अवद्धायुकैं तौ भुज्यमान विना तीन आयु ३, तीर्थंकर १, आहारकचतुष्क ४ इनि आठ विना एकसौ चालीसका सत्त्व है। सम्यक्त्व मोहनीकी उद्वेलना भए एकसौ गुणतालीसका सत्त्व हो है। मिश्रमोहनीकी उद्वेलना भए एकसौ अठतीसका सत्त्व हो है। वहुरि तिस ही वद्धायुकै वध्यमान आयु सहित एकसौ इकतालीस, एकसौ चालीस, एकसौ गुणतालीसका सत्त्व हो है। जातैं आहारकचतुष्टयकी उद्वेलना भए विना अर तीर्थंकर सत्तावाला जीव प्रथमोपशम सम्यक्त्वके सन्मुख न हो है ।। ३१ ।।

१. ध० पु० ६ पृ० २०९। जयध० पु० १२, पृ० २०७।

अब सत्त्वप्रकृतियोके स्थिति आदि तीनको कहते हैं—

अजहण्णमणुक्कस्स ठिदीतिय होदि सत्तपयडीणं[1] ।
एव पयडिचउक्कं बधादिसु होदि पत्तेय ॥ ३२ ॥

अजघन्यमनुत्कृष्ट स्थितित्रिक भवति सत्त्वप्रकृतीनाम् ।
एव प्रकृतिचतुष्क बधादिषु भवति प्रत्येकम् ॥ ३२ ॥

स० टी०—तस्य सत्कर्मप्रकृतीनामुक्ताना स्थित्यनुभागप्रदेशसत्त्वमजघन्यानुत्कृष्ट भवति, जघन्योत्कृष्टाभावस्य पूर्वमभिहितत्वात् । एव बधादिषु बधोदयोदीरणासत्त्वेषु प्रकृतिचतुष्क प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशा प्रत्येकमुक्तप्रकारेण प्रतिनियमिता । ईदृश प्रकृतिबध , ईदृश स्थितिबन्ध , ईदृशोऽनुभागबध , ईदृश प्रदेशबध इत्यादि विभज्य रूपिता प्रायोग्यतालब्धिकालचरमसमयपर्यं त प्रत्येतव्या ॥ ३२ ॥ अथ क्रमप्राप्ता करणलब्धिमाचष्टे—

स० च०—तिन सत्तारूप प्रकृतिनिका स्थिति अनुभाग प्रदेश हैं ते अजघन्य अनुत्कृष्ट है जघन्य वा उत्कृष्ट स्थित्ति अनुभाग प्रदेशका सत्त्व इहा न सभवै है । ऐसै प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेशरूप चतुष्क है सो बध उदय उदीरणा सत्त्वविषै प्रत्येक कह्या । सो प्रायोग्यता लब्धि का अत पर्यंत जानना ॥ ३२ ॥

अब क्रमप्राप्त करणलब्धिको कहते हैं—

तत्तो अभव्वजोग्ग परिणाम बोलिऊण भव्वो हु ।
करणं[2] करेदि कमसो अधापवत्त अपुव्वमणियट्टिं[3] ॥ ३३ ॥

तत अभव्ययोग्य परिणामं मुक्त्वा भव्यो हि ।
करण करोति क्रमश अध.प्रवृत्तमपूर्वमनिवृत्तिम् ॥ ३३ ॥

स० टी०—तत पश्चादभव्ययोग्य लब्धिचतुष्टयसभविन विशुद्धपरिणाम नीत्वा भव्य खलु क्रमेणाध प्रवृत्तकरणमपूर्वकरणयनिवृत्तिकरण च विशिष्टनिर्जरासाधन विशुद्धपरिणाम करोति ॥ ३३ ॥ अथ त्रिकरणपरिणामकालमल्पबहुत्वसहित कथयति—

स० च०—तहा पीछे अभव्यकै भी योग्य ऐसा च्यारि लब्धिरूप परिणामकौ समाप्तकरि भव्य है सोई अध प्रवृत्त, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरणको करै है । सो इन तीनो करणनिका व्याख्यान गोम्मटसारविषैं जीवकाडका गुणस्थानाधिकारविषै वा कर्मकाडका त्रिकोण चूलिका अधिकारविषै विशेष व्याख्यान है तहातैं जानना । इहा भी सामान्यसा गाथानिका अर्थ कहिए है ॥ ३३ ॥

अब तीन करणोसम्बन्धी परिणामोके कालको और उसके अल्पबहुत्वको बतलाते हैं—

अतोमुहुत्तकाला तिण्णि वि करणा हवति पत्तेय ।
उवरीदो गुणियकमा कमेण सखेज्जरूवेण ॥ ३४ ॥

---

१ ध० पु० ६, पृ० २०८–२०९ । जयध० पु० १२, पृ० २०७ ।

२ कध परिणामाण करणसण्णा ? ण एस दोसो, असि-वासीण व सहायतमभावविवक्खाए करणाण करणत्तुवलभादो । ध० पु० ६ पृ० २१७ । येन परिणामविशेषेण दर्शनमोहोपशमादिर्विवक्षितो भाव क्रियते निष्पाद्यते स परिणामविशेष करणमित्युच्यते । जयध० पु० १२, पृ० २३३ । ३ क० पा० पृ० ६२१ । ध० पु० ६, पृ० २१४ ।

स० टी०—सोदयाना प्रकृतीनामजघन्यमनुत्कृष्टं च प्रदेशमनुभवति स जीवः। पुनरुदयवतां प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशानां चतुर्णामुदीरको भवति स जीवः, उदयोदीरणयोः स्वामिभेदाभावात्[1] ॥ ३० ॥ अथ तस्य सत्त्वप्रकृतीरुद्दिशति—

स० च०—उदय प्रकृतिनिका अजघन्य वा अनुत्कृष्ट प्रदेशको भोगवै है। जघन्य वा उत्कृष्ट परमाणूनिका इहां उदय नाहीं। बहुरि प्रकृति प्रदेश स्थिति अनुभाग जे उदयरूप कहे तिनहीका यहु उदीरणा करनेवाला हो है। जातै जाकै जिनिका उदय ताकौ तिनहीकी उदीरणा भी संभवै है ॥ ३० ॥

ऐसै उदय उदीरणा कहि अब सत्त्व कहै हैं—

दुति आउ तित्थहारचउक्कूणा सम्मगेण हीणा वा।
मिस्सेणूणा वा वि य सव्वे पयडी हवे सत्तं ॥ ३१ ॥

द्वित्र्यायु तीर्थाहारचतुष्कै सम्यक्त्वेन हीना वा।
मिश्रेणोना वापि च सर्वेषां प्रकृतीनां भवेत् सत्त्वम् ॥ ३१ ॥

स० टी०—अनादिमिथ्यादृष्टिः सादिमिथ्यादृष्टिर्वा प्रथमोपशमसम्यक्त्वयोग्यो भवति। तत्रानादिमिथ्यादृष्टेर्जीवस्याबद्धायुष इतरायुस्त्रयेण तीर्थकरत्वेनाहारकचतुष्केण सम्यक्त्वसम्यग्मिथ्यात्वाभ्यां च दशभिः प्रकृतिभिरूना सर्वाः प्रकृतयः १३८ सत्त्वेन विद्यते। तस्यैव बद्धायुषः नवभिरूना १३९, सादिमिथ्यादृष्टेरबद्धायुषः इतरायुस्त्रयं तीर्थकरत्वमाहारकचतुष्कमित्यष्टभिरूना १४०, तस्यैवोद्वेल्लितसम्यक्त्वस्य नवभिरूना १३९, तस्यैवोद्वेल्लितसम्यग्मिथ्यात्वस्य दशभिरूना १३८, तस्यैव बद्धायुषः इतरायुर्द्वयेन तीर्थकरत्वेनाहारकचतुष्केण वा सप्तभिरूना १४१, तस्यैवोद्वेल्लितसम्यक्त्वस्याष्टभिरूना. १४०, तस्यैवोद्वेल्लितसम्यग्मिथ्यात्वस्य नवभिरूना १३९ समस्ताः प्रकृतयः सत्त्वेन विद्यन्ते। अनुद्वेल्लिताहारकचतुष्कस्य तीर्थकरसत्कर्मणश्च सादिमिथ्यादृष्टेः प्रथमोपशमसम्यक्त्वाभिमुखस्यासंभवात् ॥ ३१ ॥ अथ सत्कर्मप्रकृतीनां स्थित्यादिसत्त्वपूर्वकं प्रायोग्यतालब्धिमुपसंहरति—

स० च०—सम्यक्त्व सन्मुख अनादि मिथ्यादृष्टिकै अबद्धायुकै तौ भुज्यमान विना तीन आयु ३, तीर्थंकर १, आहारकचतुष्क ४, सम्यग्मोहनी १, मिश्रमोहनी १, इनि दश विना एकसौ अठतीसका सत्त्व है। बहुरि तिस ही बद्धायुकै एक बध्यमान आयु सहित एकसौ गुणतालीसका सत्त्व हो है। बहुरि सम्यक्त्व सन्मुख सादि मिथ्यादृष्टिकै अबद्धायुकै तौ भुज्यमान विना तीन आयु ३, तीर्थंकर १, आहारकचतुष्क ४ इनि आठ विना एकसौ चालीसका सत्त्व है। सम्यक्त्व मोहनीकी उद्वेलना भए एकसौ गुणतालीसका सत्त्व हो है। मिश्रमोहनीकी उद्वेलना भए एकसौ अठतीसका सत्त्व हो है। बहुरि तिस ही बद्धायुकै बध्यमान आयु सहित एकसौ इकतालीस, एकसौ चालीस, एकसौ गुणतालीसका सत्त्व हो है। जातै आहारकचतुष्टयकी उद्वेलना भए विना अर तीर्थंकर सत्तावाला जीव प्रथमोपशम सम्यक्त्वके सन्मुख न हो है ॥ ३१ ॥

---

१. ध० पु० ६ पृ० २०९। जयध० पु० १२, पृ० २०७।

अब सत्त्वप्रकृतियोके स्थिति आदि तीनको कहते हैं—

अजहण्णमणुक्कस्स ठिदीतिय होदि सत्तपयडीणं[1]।
एवं पयडिचउक्कं बंधादिसु होदि पत्तेयं ॥ ३२ ॥

अजघन्यमनुत्कृष्टं स्थितित्रिकं भवति सत्त्वप्रकृतीनाम्।
एवं प्रकृतिचतुष्कं बंधादिषु भवति प्रत्येकम् ॥ ३२ ॥

स० टी०—तस्य सत्कर्मप्रकृतीनामुक्तानां स्थित्यनुभागप्रदेशसत्त्वमजघन्यानुत्कृष्टं भवति, जघन्योत्कृष्टाभावस्य पूर्वमभिहितत्वात्। एवं बंधादिषु बंधोदयोदीरणासत्त्वेषु प्रकृतिचतुष्कं प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशाः प्रत्येकमुक्तप्रकारेण प्रतिनियमिताः। ईदृशः प्रकृतिबंधः, ईदृशः स्थितिबन्धः, ईदृशोऽनुभागबंधः, ईदृशः प्रदेशबंध इत्यादि विभज्य रूपिताः प्रायोग्यतालब्धिकालचरमसमयपर्यंतं प्रत्येतव्याः ॥ ३२ ॥ अथ क्रमप्राप्तां करणलब्धिमाचष्टे—

स० च०—तिन सत्तारूप प्रकृतिनिका स्थिति अनुभाग प्रदेश हैं ते अजघन्य अनुत्कृष्ट है जघन्य वा उत्कृष्ट स्थिति अनुभाग प्रदेशका सत्त्व इहां न संभवै है। ऐसैं प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेशरूप चतुष्क है सो बंध उदय उदीरणा सत्त्वविषैं प्रत्येक कह्या। सो प्रायोग्यता लब्धि का अंत पर्यंत जानना ॥ ३२ ॥

अब क्रमप्राप्त करणलब्धिको कहते हैं—

तत्तो अभव्वजोग्गं परिणामं वोलिऊण भव्वो हु।
करणं[2] करेदि कमसो अधापवत्तं अपुव्वमणियट्टिं[3] ॥ ३३ ॥

ततः अभव्ययोग्यं परिणामं मुक्त्वा भव्यो हि।
करणं करोति क्रमशः अधःप्रवृत्तमपूर्वमनिवृत्तिम् ॥ ३३ ॥

स० टी०—ततः पश्चादभव्ययोग्यं लब्धिचतुष्टयसंभविनं विशुद्धपरिणामं नीत्वा भव्यः खलु क्रमेणाधःप्रवृत्तकरणमपूर्वकरणमनिवृत्तिकरणं च विशिष्टनिर्जरासाधनं विशुद्धपरिणामं करोति ॥ ३३ ॥ अथ त्रिकरणपरिणामकालमल्पबहुत्वसहितं कथयति—

स० च०—तहां पीछे अभव्यकै भी योग्य ऐसा च्यारि लब्धिरूप परिणामको समाप्तकरि भव्य है सोई अधःप्रवृत्त, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरणको करै है। सो इन तीनो करणनिका व्याख्यान गोम्मटसारविषैं जीवकांडका गुणस्थानाधिकारविषैं वा कर्मकांडका त्रिकोण चूलिका अधिकारविषैं विशेष व्याख्यान है तहांतैं जानना। इहां भी सामान्यसा गाथानिका अर्थ कहिए है ॥ ३३ ॥

अब तीन करणोसम्बन्धी परिणामोके कालको और उसके अल्पबहुत्वको बतलाते हैं—

अंतोमुहुत्तकाला तिण्णि वि करणा हवंति पत्तेयं।
उवरीदो गुणियकमा कमेण संखेज्जरूवेण ॥ ३४ ॥

---

१ ध० पु० ६, पृ० २०८–२०९। जयध० पु० १२, पृ० २०७।

२ कधं परिणामाणं करणसण्णा? ण एस दोसो, असि-वासीणं व सहायतमभावविवक्खाए करणाणं करणत्तुवलंभादो। ध० पु० ६ पृ० २१७। येन परिणामविशेषेण दर्शनमोहोपशमादिर्विवक्षितो भावः क्रियते निष्पाद्यते स परिणामविशेषः करणमित्युच्यते। जयध० पु० १२, पृ० २३३। ३. क० पा० पृ० ६२१। ध० पु० ६, पृ० २१४।

अतर्मुहूर्तकालानि त्रीण्यपि करणानि भवति प्रत्येकम् ।
उपरित' गुणितक्रमाणि क्रमेण संख्यातरूपेण ॥ ३४ ॥

स० टी—एते त्रयोऽपि करणपरिणामा प्रत्येकमतर्मुहूर्तकाला भवति । तथापि उपरिनि अनिवृत्तिकरणकालात्क्रमेणापूर्वकरणाध प्रवृत्तकरणकालौ सख्येयरूपेण गुणितक्रमौ भवत । तत्र सर्वत स्तोकातर्मुहूर्त अनवृत्तिकरणकाल २१ तत सख्येयगुण अपूर्वकरणकाल २११ तत सख्येयगुण अध प्रवृत्तकरणकाल २१११ । अथाध प्रवृत्तकरणस्वरूप निरुक्तिपूर्वक व्याचष्टे—

स० च०—तीनो ही करण प्रत्येक अतर्मुहूर्त कालमात्र स्थितियुक्त है तथापि ऊपरतै सख्यातगुणा क्रम लीए है। अनिवृत्तिकरणका काल स्तोक है। तातै अपूर्वकरणका सख्यातगुणा है। तातै अध प्रवृत्तकरणका सख्यातगुणा हे ॥ ३४ ॥

विशेष—कषायप्राभृत चूर्णिसूत्रमे तीनो करणोके साथ चौथी उपशामनाद्धाको पृथक् से परिगणित किया हे। इस द्वारा उपशम सम्यग्दर्शनका काल लिया गया है।

अव अध प्रवृत्तकरणका स्वरूप कहते है—

जम्हा हेट्ठिमभावा उवरिमभावेहिं सरिसगा होंति ।
तम्हा पढम करण अधापवत्तो त्ति णिद्दिट्ठं[1] ॥ ३५ ॥

यस्मादधस्तनभावा उपरितनभावै सदृशा भवंति ।
तस्मात् प्रथम करण अध प्रवृत्तमिति निर्दिष्टम् ॥ ३५ ॥

स० टी०—यस्मात्कारणादधस्तनसमयवर्तिजीवविशुद्धिपरिणामा उपरितनसमयवर्तिजीवविशुद्धिपरिणामै सख्यया विशुद्धया च सदृशा भवति तस्मात्कारणात्प्रथम करणपरिणाम अध प्रवृत्त इत्यन्वर्थतो निर्दिष्ट' । तथाहि—

तत्काले प्रथमसमयद्वितीयपुजस्य परिणामसख्याविशुद्धी द्वितीयसमयप्रथमपुञ्जस्य परिणामसख्याविशुद्धिम्या सदृशे । तथा प्रथमद्वितीयतृतीयसमयेपु तृतीयद्वितीयप्रथमपुजाना परिणामसख्याविशुद्धी अन्योन्य सदृशे । एवमधस्तनोपरितनसमयपरिणामपुजसख्याविशुद्धिसादृश्य नेतव्य यावच्चरसमयचरमपुजे परिणामा अप्राप्ता, प्रथमसमयप्रथमपुजस्य चरमसमयचरमपुजस्य च सख्याविशुद्धिसादृश्याभावात् ॥३५॥ अथापूर्वानिवृत्तिकरणयो स्वरूप निरूपयति—

स० च०—जातै इहा नीचले समयवर्ती कोई जीवके परिणाम ऊपरले समयवर्ती कोई जीवके परिणामनिके सदृश हो है, तातै याका नाम अध प्रवृत्तकरण है। भावार्थ—करणनिका नाम नानाजीव अपेक्षा है सो अध करण माडै कोई जीवकौ स्तोक काल भया कोई जीवकौ बहुत काल भया तिनके परिणाम इस करणविषै सख्या वा विशुद्धताकर समान भी हो है ऐसा जानना ॥ ३५ ॥

विशेष—प्रथम समयसम्बन्धी प्रथम पुजके परिणाम और अन्तिम समयसम्बन्धी अन्तिम पुजके परिणाम ये किन्ही परिणामो के सदृश नही होते। अन्य जितने परिणाम है वे यथायोग्य सदृश भी होते हैं और विसदृश भी होते हैं।

अब अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणका स्वरूप कहते हैं—

१ उवरिमपरिणामा अध हेट्ठा हेट्ठिमपरिणामेसु पवत्तति त्ति अधापवत्तसण्णा । ध० पु० ६, पृ० २१७ । जयध० पु० १२, पृ० २३३ । गो० जी० गा० ४८ ।

समए-समए भिण्णा भावा तम्हा अपुव्वकरणो हु[1] ।
अणियट्टी वि तह वि य पडिसमयं एक्कपरिणामो[2] ॥ ३६ ॥

समये समये भिन्ना भावा तस्मादपूर्वकरणो हि ।
अनिवृत्तिरपि तथैव च प्रतिसमयमेकपरिणाम ॥ ३६ ॥

स० टी०—अध प्रवृत्तकरणकालस्योपरि अतर्मुहूर्तकालपर्यंत यस्मात्कारणात् समये समये भिन्ना एव अपूर्वा एव विशुद्धिपरिणामा खलु भवति, तस्मात्कारणात्सोऽपूर्वकरण इत्युच्यते। अधस्तनोपरितनसमयेपु विशुद्धिपरिणामाना सख्याविशुद्धिसादृश्य नास्तीत्यर्थ ।

अनिवृत्तिकरणोऽपि तथैव पूर्वोत्तरसमयेपु सख्याविशुद्धिसादृश्याभावात् भिन्नपरिणाम एव । अय तु विशेष.—प्रतिसमयमेकपरिणाम , जघन्यमध्यमोत्कृष्टपरिणामभेदाभावात् । यथाव प्रवृत्तापूर्वकरणपरिणामा प्रतिसमय जघन्यमध्यमोत्कृष्टभेदादसख्यातलोकमात्रविकल्पा पट्स्थानवृद्धचा वर्धमाना सति न तथाऽनिवृत्तिकरणपरिणामा , तेपामेकस्मिन् समये कालत्रयेऽपि विशुद्धिसादृश्यादैक्यमुपचर्यते ॥ ३६ ॥ अथाध प्रवृत्तकरणस्य विशेषलक्षण कथयति—

स० च०—समय समयविपै जीवनिके भाव भिन्न ही होइ सो अपूर्वकरण है। भावार्थ—कोई जीवकौ अपूर्वकरण माडें स्तोक काल भया, कोईकौं वहुत काल भया। तहा तिनके परिणाम सर्वथा सदृश न होइ। नीचले समयवालौके परिणामतै ऊपर समयवालोका परिणाम अधिक सख्या व विशुद्धता युक्त होइ अर इहाँ जिनकौ करण माडें समान काल भया तिनके परिणाम परस्पर सदृश भी होइ अथवा असदृश भी होइ ऐसा जानना। वहुरि जहा समय समय एक ही परिणाम होइ सो अनिवृत्तिकरण है। भावार्थ—जिनिकौ अनिवृत्तिकरण माडे समान काल भया तिनिके परिणाम समान ही होइ। बहुरि नीचले समयवर्तीनितै ऊपरि समयवर्तीनिके विशुद्धि अधिक होइ ऐसा जानना ॥ ३६ ॥

अब अध प्रवृत्तकरणका विशेष लक्षण कहते है—

गुणसेढी गुणसंकम ठिदिरसखड च णत्थि पढमम्हि ।
पडिसमयमणतगुणं विसोहिवड्ढीहिं वड्ढदि हु[3] ॥ ३७ ॥

गुणश्रेणि गुणसंक्रम स्थितिरसखड च नास्ति प्रथमे ।
प्रतिसमयमनतगुणं विशुद्धिवृद्धिभिर्वर्धते हि ॥ ३७ ॥

स० टी०—प्रथमे अध प्रवृत्तकरणे गुणश्रेणिविधान गुणसक्रमविधान स्थितिकाडकघातोऽनुभाग काडकघातश्च न सति तु पुन प्रतिसमयमनतगुणवृद्धचा विशुद्धिर्वर्धते ॥ ३७ ॥

स० च०—पहिला अध करणविषै गुणश्रेणि, गुणसक्रमण, स्थितिकाडकघात, अनुभाग-काडकघात न होइ। बहुरि इहा समय समय प्रति अनतगुणी विशुद्धता बधै है ॥ ३७ ॥

---

१ एदमणतरपरूविद समए समए अणुकट्टिवोच्छेदलक्खणमपुव्वकरणलक्खणमवहारेयव्वमिदि वुत्त होइ। जयध० पु० १२, पृ० २५४। ध० पु० ६, पृ० २२०। गो० जी० गा० ५१। २ क० पा०, पृ० २५६, एत्थ समय पडि एक्केक्को चेव परिणामो होदि, एक्कम्हि समए जहण्णुक्कस्सपरिणामभेदाभावा। ध० पु० ६, पृ० २२१। गो० जी० गा० ५६-५७। ३ क० पा०, पृ० ६२४। ध० पु० ६, पृ० २२२।

अंतर्मुहूर्तकालानि त्रीण्यपि करणानि भवति प्रत्येकम्।
उपरित' गुणितक्रमाणि क्रमेण सख्यातरूपेण ॥ ३४ ॥

स० टी—एते त्रयोऽपि करणपरिणामा प्रत्येकमतर्मुहूर्तकाला भवति। तथापि उपरित अनिवृत्तिकरणकालात्क्रमेणापूर्वकरणाव प्रवृत्तकरणकालो सख्येयरूपेण गुणितक्रमो भवत । तत्र सर्वत स्तोकातर्मुहूर्त अनवृत्तिकरणकाल २२ तत सख्येयगुण अपूर्वकरणकाल २२२ तत सख्येयगुण अप्र प्रवृत्तकरणकाल २२२२। अथाव प्रवृत्तकरणस्वरूप निरुक्तिपूर्वक व्याचष्टे--

स० च०—तीनो ही करण प्रत्येक अतर्मुहूर्त कालमात्र स्थितियुक्त है तथापि ऊपरतै सख्यातगुणा क्रम लीए है। अनिवृत्तिकरणका काल स्तोक हे। तातै अपूर्वकरणका सख्यातगुणा हे। तातै अध प्रवृत्तकरणका सख्यातगुणा है ॥ ३४ ॥

विशेष—कषायप्राभृत चूर्णिसूत्रमे तीनो करणोके साथ चौथी उपशामनाद्धाको पृथक् से परिगणित किया हे। इस द्वारा उपशम सम्यग्दर्शनका काल लिया गया हे।

अव अध प्रवृत्तकरणका स्वरूप कहते है—

जम्हा हेट्ठिमभावा उवरिमभावेहिं सरिसगा होंति।
तम्हा पढम करण अधापवत्तो त्ति णिद्दिट्ठ[1] ॥ ३५ ॥

यस्मादधस्तनभावा उपरितनभावै सदृशा भवति।
तस्मात् प्रथम करण अध प्रवृत्तमिति निर्दिष्टम् ॥ ३५ ॥

स० टी०—यस्मात्कारणादधस्तनसमयवर्तिजीवविशुद्धिपरिणामा उपरितनसमयवर्तिजीवविशुद्धिपरिणामै सख्यया विशुद्धया च सदृशा भवति तस्मात्कारणात्प्रथम करणपरिणाम अध प्रवृत्त इत्यन्वर्थतो निर्दिष्ट'। तथाहि—

तत्काले प्रथमसमयद्वितीयपुजस्य परिणामसख्याविशुद्धी द्वितीयसमयप्रथमपुञ्जस्य परिणामसख्याविशुद्धिभ्या सदृशे। तथा प्रथमद्वितीयतृतीयसमयेपु तृतीयद्वितीयप्रथमपुजाना परिणामसख्याविशुद्धी अन्योन्य सदृशे। एवमधस्तनोपरितनसमयपरिणामपुजसख्याविशुद्धिसादृश्य नेतव्य यावच्चरसमयचरमपुजे परिणामा अप्राप्ता, प्रथमसमयप्रथमपुजस्य चरमसमयचरमपुजस्य च सख्याविशुद्धिसादृश्याभावात् ॥३५॥ अथापूर्वानिवृत्तिकरणयो स्वरूप निरूपयति—

स० च०—जातै इहा नीचले समयवर्ती कोई जीवके परिणाम ऊपरले समयवर्ती कोई जीवके परिणामनिके सदृश हो है, तातैं याका नाम अध प्रवृत्तकरण है। भावार्थ—करणनिका नाम नानाजीव अपेक्षा है सो अध करण माडै कोई जीवकौ स्तोक काल भया कोई जीवकौ बहुत काल भया तिनके परिणाम इस करणविषैं सख्या वा विशुद्धताकर समान भी हो है अैसा जानना ॥ ३५ ॥

विशेष—प्रथम समयसम्बन्धी प्रथम पुजके परिणाम और अन्तिम समयसम्बन्धी अन्तिम पुजके परिणाम ये किन्ही परिणामो के सदृश नही होते। अन्य जितने परिणाम है वे यथायोग्य सदृश भी होते है और विसदृश भी होते हैं।

अब अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणका स्वरूप कहते हैं—

१ उवरिमपरिणामा अध हेट्ठा हेट्ठिमपरिणामेसु पवत्तति त्ति अधापवत्तसण्णा। ध० पु० ६, पृ० २१७। जयध० पु० १२, पृ० २३३। गो० जी० गा० ४८।

समए समए भिण्णा भावा तम्हा अपुव्वकरणो हु[1] ।
अणियट्टी वि तह वि य पडिसमय एक्कपरिणामो[2] ॥ ३६ ॥

समये समये भिन्ना भावा तस्मादपूर्वकरणो हि ।
अनिवृत्तिरपि तथैव च प्रतिसमयमेकपरिणाम ॥ ३६ ॥

स० टी०—अध प्रवृत्तकरणकालस्योपरि अतर्मुहूर्तकालपर्यंत यस्मात्कारणात् समये समये भिन्ना एव अपूर्वा एव विशुद्धिपरिणामा खलु भवति, तस्मात्कारणात्सोऽपूर्वकरण इत्युच्यते । अधस्तनोपरितनसमयेषु विशुद्धिपरिणामाना सख्याविशुद्धिसादृश्य नास्तीत्यर्थ ।

अनिवृत्तिकरणोऽपि तथैव पूर्वोत्तरसमयेषु सस्याविशुद्धिसादृश्याभावात् भिन्नपरिणाम एव । अय नु विशेष —प्रतिसमयमेकपरिणाम , जघन्यमध्यमोत्कृष्टपरिणामभेदाभावात् । यथाध प्रवृत्तापूर्वकरणपरिणामा प्रतिसमय जघन्यमध्यमोत्कृष्टभेदादसख्यातलोकमानविकल्पा षट्स्थानवृद्धया वर्तमाना इति न तथाऽनिवृत्तिकरणपरिणामा , तेपामेकस्मिन् समये कालत्रयेऽपि विशुद्धिसादृश्यादैक्यमुपचर्यंते ॥ ३६ ॥ अथाध प्रवृत्तकरणस्य विशेपलक्षण कथयति—

स० च०—समय समयविषै जीवनिके भाव भिन्न ही होइ सो अपूर्वकरण है । भावार्थ—कोई जीवको अपूर्वकरण माडें स्तोक काल भया, कोईकौ बहुत काल भया । तहा तिनके परिणाम सर्वथा सदृश न होइ । नीचले समयवालोके परिणामतै ऊपर समयवालोका परिणाम अधिक सख्या व विशुद्धता युक्त होइ अर इहाँ जिनकी करण माडें समान काल भया तिनके परिणाम परस्पर सदृश भी होइ अथवा असदृश भी होइ अैसा जानना । बहुरि जहा समय समय एक ही परिणाम होइ सो अनिवृत्तिकरण है । भावार्थ—जिनिकौ अनिवृत्तिकरण माडे समान काल भया तिनिके परिणाम समान ही होइ । बहुरि नीचले समयवर्तीनितै ऊपरि समयवर्तीनिके विशुद्धि अधिक होइ अैसा जानना ॥ ३६ ॥

अब अध प्रवृत्तकरणका विशेष लक्षण कहते हैं—

गुणसेढी गुणसकम ठिदिरसखड च णत्थि पढमम्हि ।
पडिसमयमणतगुण विसोहिवड्ढीहिं वड्ढदि हु[3] ॥ ३७ ॥

गुणश्रेणि गुणसंक्रम स्थितिरसखड च नास्ति प्रथमे ।
प्रतिसमयमनतगुणं विशुद्धिवृद्धिभिर्वर्धते हि ॥ ३७ ॥

स० टी०—प्रथमे अध प्रवृत्तकरणे गुणश्रेणिविधान गुणसक्रमविधान स्थितिकाडकघातोऽनुभागकाडकघातश्च न सति तु पुन प्रतिसमयमनतगुणवृद्धया विशुद्धिर्वर्धते ॥ ३७ ॥

स० च०—पहिला अध करणविषै गुणश्रेणि, गुणसक्रमण, स्थितिकाडकघात, अनुभागकाडकघात न होइ । बहुरि इहा समय समय प्रति अनतगुणी विशुद्धता बधै है ॥ ३७ ॥

---

१ एदमणतरपरूविद समए समए अणुकट्टिवोच्छेदलक्खणमपुव्वकरणलक्खणमवहारेयव्वमिदि वुत्त होइ । जयध० पु० १२, पृ० २५४ । ध० पु ६, पृ०२२० । गो० जी० गा० ५१ । २ क० पा०, पृ० ६५६, एत्थ समय पडि एक्केक्को चेव परिणामो होदि, एक्कम्हि समए जहण्णुक्कस्सपरिणामभेदाभावा । ध० पु० ६, पृ० २२१ । गो० जी० गा० ५६-५७ । ३ क० पा०, पृ० ६२४ । ध० पु० ६, पृ० २२२ ।

सत्थाणमसत्थाण चउविट्ठाण रग च बधदि हु ।
पडिसमयमणतेण य गुणभजियकम तु रसबधे[1] ।। ३८ ।।

शस्तानामशस्ताना चतुर्द्विस्थान रस च बध्नाति हि ।
प्रतिसमयमनतेन च गुणभजितक्रम तु रसबधे ।। ३८ ।।

स० टी०—अध प्रवृत्तकरणपरिणामे वर्तमानो जीव सातादिप्रशस्तप्रकृतीना चतु स्थानानुभाग प्रतिसमयमनतगुण बध्नाति, असाताद्यप्रशस्तप्रकृतीना द्विस्थानानुभाग प्रतिसमयमनतैकभागमात्र बध्नाति ।। ३८ ।।

स० च—अर सातादि प्रशस्त प्रकृतिनिका समय समय प्रति अनतगुणा चतु स्थानरूप अनुभाग बाधै है अर सातादि अप्रशस्त प्रकृतिनिका सगय समय प्रति अनतवें भागमात्र अनुभाग बाधै है ।। ३८ ।।

पल्लस्स सखभाग मुहुत्तअतेण ओसरदि बधे ।
सखेज्जसहस्साणि य अधापवत्तम्मि ओसरणा[2] ।। ३९ ।।

पल्यस्य सख्यभाग मुहूर्तातरेण अपसरति बधे ।
सख्येयसहस्राणि च अध प्रवृत्ते अपसरणानि ।। ३९ ।।

स० टी० - अध प्रवृत्तकरणकाले प्रथमसमयादारभ्यातर्मुहूर्तपर्यत प्राक्तनस्थितिबधात्पल्यसख्यातैकभागन्यूना स्थिर्ति बध्नाति, तत परमतर्मुहूर्तपर्यत पुनरपि पल्यासख्यातैकभागन्यूना स्थिर्ति बध्नाति । एव तत्कालचरमसमय यावत् स्थितिबधापसरणानि सख्यातसहस्राणि भवति । अनेनातर्मुहूर्तेन प्र एकस्या अपसरणशलाकाया

१ २ ११

फ एतावति काले—इ २ १ १ १ कियत्य स्थितिबधापसरणशलाका भवतीति त्रैराशिकेण लब्धा अपसरणशलाका १ ।। ३९ ।।

स० च०—अध प्रवृत्तका प्रथम समयतै लगाय अन्तर्मुहूर्त पर्यंत पूर्वस्थिति बधतै पल्यका सख्यातवा भागमात्र घटता स्थितिबध हो है । बहुरि तहा पीछैं अतर्मुहूर्त पर्यंत तातै भी पल्यका सख्यातवा भागमात्र घटता स्थितिबध है । ऐसै एक अन्तर्मुहूर्त करि पल्यका सख्यातवा भागमात्र घटता स्थितिबधापसरण होइ । ऐसैं अपसरण अध प्रवृत्तविषै सख्यात हजार हो है ।। ३९ ।।

आदिमकरणद्धाए पढमट्ठिदिबधदो दु चरिमम्हि ।
सखेज्जगुणविहीणो ठिदिबंधो होइ णियमेण[3] ।। ४० ।।

आदिमकरणाद्धाया प्रथमस्थितिबधतस्तु चरमे ।
संख्यातगुणविहीन स्थितिबंधो भवति नियमेन ।। ४० ।।

स० टी०—अध प्रवृत्तकरणप्रथमसमये स्थितिबध अत कोटिसागरोपमप्रमित । सा अत को २ । तस्माच्चरमसमये स्थितिबध सख्यातगुणहीनो नियमेन भवति सा अ को २ सख्यातसहस्रापसरणशलाकामहत्त्वेन तथाभावाविरोधात् ।। ४० ।। ४

१ अप्पसत्थकम्मसे जे बधइ ते दुट्ठाणिए अणतगुणहीणे च, पसत्थकम्मसे जे बधइ ते च चउट्ठाणिए अणतगुणे च समये समये । क० पा०, पृ० ६२४ ।

२ ट्ठिदिबधे पुण्णे पुण्णे अण्ण ट्ठिदिबध पलिदोवमस्स सखेज्जदिभागहीण बधदि । क० पा०, पृ० ६२४ ।

स० च०—ऐसैं होतैं प्रथम करणके कालविषैं प्रथम समयसम्बन्धी अन्त कोटाकोटी सागर-प्रमाण स्थितिबंधतैं ताके अन्तसमयविषै सख्यातगुणा घाटि हो है[1] ॥ ४० ॥

तच्चरिमे ठिदिबंधो आदिमसम्मेण देससयलजमं ।
पडिवज्जमाणगस्स वि संखेज्जगुणेण हीणकमो[2] ॥ ४१ ॥

तच्चरमे स्थितिबंध आदिमसम्येन देशसकलयमम् ।
प्रतिपद्यमानस्यापि सख्येयगुणेन हीनक्रम ॥ ४१ ॥

स० टी०—अथ प्रवृत्तकरणचरमसमये प्रथमसम्यक्त्वाभिमुखस्य य स्थितिबंध सा अ को २ तस्मा-
४

द्देशसयमेन सह प्रथमसम्यक्त्व प्रतिपद्यमानस्य स्थितिबंध सख्यातगुणहीन सा अ को २-तस्मात्सकलसयमेन
४ । ४

सह प्रथमसम्यक्त्व प्रतिपद्यमानस्य स्थितिबंध सख्यातगुणहीन सा अ को २—॥ ४१ ॥
४ । ४ । ४

स० च०—तीहि अतसमयविषै जो स्थितिबंध कह्या तातैं देशसयम सहित प्रथमोपशम सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवकैं सख्यातगुणा घाटि स्थितिबंध हो है। तातैं सकलसयम सहित प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं प्राप्त होनेवालेकैं सख्यातगुणा घाटि हो है ॥ ४१ ॥

आदिमकरणद्धाए पडिसमयमसंखलोगपरिणामा ।
अहियकमा हु विसेसे मुहुत्तअंतो हु पडिभागो[3] ॥ ४२ ॥

आदिमकरणाद्धाया प्रतिसमयमसख्यलोकपरिणामा ।
अधिकक्रमा हि विशेषे मुहूर्तातर्हि प्रतिभाग. ॥ ४२ ॥

स० टी०—अथ प्रवृत्तकरणकाले प्रथमसमयादारभ्याचरमसमय त्रिकालगोचरजीवसभविनो विशुद्धि-परिणामा असख्येयलोकमात्रा ≡ ∂ ते च प्रतिसमय विशेषाधिका क्रमेण गच्छति तत्र प्रथमसमये—

≡ ∂ २ ११११ । ११ २ । द्वितीयसमयविशेषाधिका – ≡ ∂ २ ११११ । ११ २ । एव प्रतिसमय
२ ११११ २ ११११ २   २ ११११ २ ११११ । ११ २

१ अधापवत्तपढमसमयट्ठिदिबंधादो चरिमसमयट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणहीणो । ध० पु० ६, पृ० २२३ ।

२ एत्थेव पढमसम्मत्त-सजमासजमाभिमुहस्स ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणहीणो । पढमसम्मत्तसजमाभिमुहस्स अधापवत्तकरणचरिमसमयट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणहीणो । ध० पु० ६, पृ० २२३ ।

३ पढमसमयपाओग्गपरिणामा असंखेज्जा लोगा, अधाकरणविदियसमयपाओग्गा वि परिणामा असंखेज्जा लोगा । एव समय पडि अधापवत्तपरिणामाण पमाणपरूवण कादव्व जाव अधापवत्तकरणद्धाए चरिमसमओ त्ति । पढमसमयपरिणामेहिंतो विदियसमयपाओग्गपरिणामा विसेसाहिया । विसेसो पुण अंतोमुहुत्तपडिभागिओ । ध० पु ६, पृ० २१४ । जयध० पु० १२, पृ० २३५ । गो जी , गाथा, ४९ ।
४

सत्थाणमसत्थाण चउविट्ठाण रस च वधदि हु ।
पडिसमयमणतेण य गुणभजियकम तु रसबधे ॥ ३८ ॥

शस्तानामशस्ताना चतुर्द्विस्थान रस च वध्नाति हि ।
प्रतिसमयमनतेन च गुणभजितक्रम तु रसवधे ॥ ३८ ॥

स० टी०—अध प्रवृत्तकरणपरिणामे वर्तमानो जीव सातादिप्रशस्तप्रकृतीना चतु स्थानानुभाग प्रतिसमयमनतगुण वध्नाति, असाताद्यप्रशस्तप्रकृतीना द्विस्थानानुभाग प्रतिसमयमनतैकभागमात्र वध्नाति ॥ ३८ ॥

स० च—अर सातादि प्रशस्त प्रकृतिनिका समय समय प्रति अनतगुणा चतु स्थानरूप अनुभाग वाधै है अर सातादि अप्रशस्त प्रकृतिनिका समय समय प्रति अनतवें भागमात्र अनुभाग वाधै है ॥ ३८ ॥

पल्लस्स सखभाग मुहुत्तअतेण ओसरदि बधे ।
सखेज्जसहस्साणि य अधापवत्तम्मि ओसरणा[2] ॥ ३९ ॥

पल्यस्य सख्यभाग मुहूर्तातरेण अपसरति बधे ।
सख्येयसहस्राणि च अध.प्रवृत्ते अपसरणानि ॥ ३९ ॥

स० टी० - अध प्रवृत्तकरणकाले प्रथमसमयादारभ्यातर्मुहूर्तपर्यंत प्राक्तनस्थितिवधात्पल्यसख्यातैकभागन्यूना स्थितिं वध्नाति, तत परमतर्मुहूर्तपर्यंत पुनरपि पल्यासख्यातैकभागन्यूना स्थितिं बध्नाति । एव तत्कालचरमसमय यावत् स्थितिवधापसरणानि सख्यातसहस्राणि भवति । अनेनातर्मुहूर्तेन प्र एकस्या अपसरणशलाकाया

१ २ ११

फ एतावति काले—इ २ ११ १ कियत्य स्थितिवधापसरणशलाका भवतीति त्रैराशिकेण लब्धा अपसरणशलाका १ ॥ ३९ ॥

स० च०—अध प्रवृत्तका प्रथम समयतै लगाय अन्तर्मुहूर्त पर्यंत पूर्वस्थिति बधतै पल्यका सख्यातवा भागमात्र घटता स्थितिबध हो है । बहुरि तहा पीछै अतर्मुहूर्त पर्यंत तातै भी पल्यका सख्यातवा भागमात्र घटता स्थितिबध है । ऐसै एक अन्तर्मुहूर्त करि पल्यका सख्यातवा भागमात्र घटता स्थितिबधापसरण होइ । ऐसैं अपसरण अध प्रवृत्तविषै सख्यात हजार हो है ॥ ३९ ॥

आदिमकरणद्धाए पढमट्ठिदिबधदो दु चरिमम्हि ।
सखेज्जगुणविहीणो ठिदिबंधो होइ णियमेण[3] ॥ ४० ॥

आदिमकरणाद्धाया प्रथमस्थितिबधतस्तु चरमे ।
सख्यातगुणविहीन स्थितिबधो भवति नियमेन ॥ ४० ॥

स० टी०—अध प्रवृत्तकरणप्रथमसमये स्थितिबध अत कोटिसागरोपमप्रमित । सा अत को २ । तस्माच्चरमसमये स्थितिवध सख्यातगुणहीनो नियमेन भवति सा अ को २ सख्यातसहस्रापसरणशलाकामहत्त्वेन तथाभावाविरोधात् ॥ ४० ॥ ४

---

१ अप्पसत्थकम्मसे जे बधइ ते दुट्ठाणिए अणतगुणहीणे च, पसत्थकम्मसे जे बधइ ते च चउट्ठाणिए अणतगुणे च समये समये । क० पा०, पृ० ६२४ ।

२ ट्ठिदिबधे पुण्णे पुण्णे अण्ण ट्ठिदिबध पलिदोवमस्स सखेज्जदिभागहीण वधदि । क० पा०, पृ० ६२४ ।

स० च०—ऐसैं होतैं प्रथम करणके कालविषैं प्रथम समयसम्बन्धी अन्त कोटाकोटी सागरप्रमाण स्थितिबंधतैं ताके अन्तसमयविषैं संख्यातगुणा घाटि हो है[1] ॥ ४० ॥

तच्चरिमे ठिदिबंधो आदिमसम्मेण देससयलजमं ।
पडिवज्जमाणगस्स वि संखेज्जगुणेण हीणकमो[2] ॥ ४१ ॥

तच्चरमे स्थितिबंध आदिमसम्येन देशसकलयमम् ।
प्रतिपद्यमानस्यापि संख्येयगुणेन हीनक्रम ॥ ४१ ॥

स० टी०—अध प्रवृत्तकरणचरमसमये प्रथमसम्यक्त्वाभिमुखस्य य स्थितिबंध सा अ को २ तस्मा- ४
द्देशसंयमेन सह प्रथमसम्यक्त्व प्रतिपद्यमानस्य स्थितिबंध संख्यातगुणहीन सा अ को २-तस्मात्सकलसंयमेन ४।४
सह प्रथमसम्यक्त्व प्रतिपद्यमानस्य स्थितिबंध संख्यातगुणहीन सा अ को २-॥ ४१ ॥ ४।४।४

स० च०—तीहि अंतसमयविषैं जो स्थितिबंध कह्या तातैं देशसंयम सहित प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं प्राप्त होनेवाले जीवकै संख्यातगुणा घाटि स्थितिबंध हो है। तातैं सकलसंयम सहित प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं प्राप्त होनेवालेकै संख्यातगुणा घाटि हो है ॥ ४१ ॥

आदिमकरणद्धाए पडिसमयमसंखलोगपरिणामा ।
अहियकमा हु विसेसे मुहुत्तअंतो हु पडिभागो[3] ॥ ४२ ॥

आदिमकरणाद्धाया प्रतिसमयमसंख्यलोकपरिणामा ।
अधिकक्रमा हि विशेषे मुहूर्तांतर्हि प्रतिभाग. ॥ ४२ ॥

स० टी०—अध प्रवृत्तकरणकाले प्रथमसमयादारभ्याचरमसमय त्रिकालगोचरजीवसंभविनो विशुद्धिपरिणामा असंख्येयलोकमात्रा ≡ ∂ ते च प्रतिसमय विशेषाधिका क्रमेण गच्छति तत्र प्रथमसमये—

≡ ∂ २ ೨ ೨ ೨ । ೨ २ । (१ ... १ ... ^) / २ ೨ ೨ ೨ २ ೨ ೨ ೨ ೨ २ द्वितीयसमयविशेषाधिका— ≡ ∂ २ ೨ ೨ ೨ । ೨ २ । (३ ... १ ^) / २ ೨ ೨ ೨ २ ೨ ೨ ೨ । ೨ २ एवं प्रतिसमय

---

१ अधापवत्तपढमसमयट्ठिदिबंधादो चरिमसमयट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणहीणो । ध० पु० ६, पृ० २२३ ।

२ एत्थेव पढमसम्मत्त-संजमासंजमाभिमुहस्स ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणहीणो । पढमसम्मत्तसंजमाभिमुहस्स अधापवत्तकरणचरिमसमयट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणहीणो । ध० पु० ६, पृ० २२३ ।

३ पढमसमयपाओग्गपरिणामा असंखेज्जा लोगा, अधाकरणविदियसमयपाओग्गा वि परिणामा असंखेज्जा लोगा । एवं समयं पडि अधापवत्तपरिणामाण पमाणपरूवण कादव्वं जाव अधापवत्तकरणद्धाए चरिमसमओ त्ति । पढमसमयपरिणामेहिंतो विदियसमयपाओग्गपरिणामा विसेसाहिया । विसेसो पुण अंतोमुहुत्तपडिभागिओ । ध० पु ६, पृ० २१४ । जयध० पु० १२, पृ० २३५ । गो जो, गाथा, ४९ ।
४

विशेषाधिकक्रमेण गत्वा चरमसमये परिणामा – ≡ ∂ २ ९ ९ ९ । ९ २ । एवं प्रतिसमय विशेषाधिका
२ ९ ९ ९ २ ९ ९ ९ ९ २
अपि तत्परिणामा आलापापेक्षया असख्यातलोकमात्रा इत्युच्यते। विशेषे आनेतव्ये आदिधनस्यातर्मुहूर्तमात्र प्रतिभागहारो भवति। तत्प्रमाण– २ ९ ९ ९ ९ २ । 'पदकदिसखेण भाजिद पचय' इत्यनेनानीत विशेष
२
सस्थाप्य आदिधनगुणकारभागहाराभ्यामुपर्यधश्च गुणयित्वा गुणकारभूत द्विक हारस्य हार कृत्वा समीक्ष्यमाणे आदिधनस्य भागहार । अध प्रवृत्तकरणकालात्सख्येयगुण किंचिदूनो भवति सोऽप्यतर्मुहूर्तमात्र एव ।। ४२ ।।

स० च०—पहला करणविषै त्रिकालवर्ती जीवनिके जे कषायनिके विशुद्धस्थान कहे हैं तिनिविषै अध प्रवृत्तकरणविषै सभवते असख्यात लोकमात्र हैं। तिनविषै समय-समय प्रति सभवते असख्यात लोकमात्र परिणाम हैं। ते प्रथम समयतैं द्वितीयादि समयनिविषै क्रमतै समान प्रमाणरूप एक-एक विशेष जो चय ताकरि वधते जानने। तहा आदि धन जो प्रथम समयसम्बन्धी परिणाम ताकौ अतर्मुहूर्तमात्र भागहारका भाग दीए विशेषका प्रमाण आवै है। 'पदकदिसखेण भाजिदे पचय' इस सूत्रकरि गच्छका वर्ग सख्यातगुणा ताका भाग सर्वधनकौ दीए जो चयका प्रमाण आवै है सो प्रथमसमयसबधी परिणामनिकौ किंचिदून सख्यातगुणा अध प्रवृत्तकरण कालमात्र जो अतर्मुहूर्त ताका भाग दीए भी इतना ही प्रमाण आवै है ।। ४२ ।।

ताए अधापवत्तद्धाए सखेज्जभागमेत्त तु ।
अणुकट्टीए[1] अद्धा णिव्वग्गणकडय तं तु[2] ।। ४३ ।।

तस्या अध प्रवृत्ताद्धाया संख्येयभागमात्रं तु ।
अनुकृष्टया अद्धा निर्वर्गणकांडक तत्तु ।। ४३ ।।

स० टी०—तस्या अध प्रवृत्ताद्धाया सख्येयभागमात्रोऽनुकृष्टयद्धा एकसमयपरिणामनानाखडसख्येत्यर्थ । अनुकृष्टय प्रतिसमयपरिणामखडानि तासामद्धा आयाम तत्सख्येत्यर्थ । तदेव तत्परिणामेष्वत्र निर्वर्गणकाडकमित्युच्यते। वर्गणा समयसादृश्य ततो निष्क्राता उपर्युपरि समयवर्तिपरिणामखडा तेषा काडक पर्व निर्वर्गणकाडक। तानि च अध प्रवृत्तकरणकाले सख्येयसहस्राणि भवति ।। ४३ ।।

स० च—तिहिं अध प्रवृत्त कालप्रमाण जो ऊर्ध्वगच्छ ताके सख्यातवें भागमात्र अनुकृष्टिका गच्छ हो है। एक एक समयसबधी परिणामनिविषै एते एते खड हो है ते वर्गणा काडक समान जानने। वर्गणा जो समयनिकी समानता ताकरि रहित ऊपरि समयवर्ती परिणाम खड तिनिका काडक जो पर्व ताका नाम निर्वर्गणाकाडक है। ते अध करणके कालविषै सख्यात हजार हो हैं ।। ४३ ।।

---

१ तेसिं (असखेज्जलोगमेत्तपरिणामट्ठाणाण) परिवाडीए विरचिदाण पुणरुत्तापुणरुत्तभावगवेसणा अणुकट्ठी णाम। अनुकर्षणमनुकृष्टिमन्योन्येन समानत्वानुचिन्तनमित्यनर्थान्तरम्। इह पुण तहा ण होइ, किंतु अतोमुहुत्तमेत्तमवट्ठिदमद्धाण सगद्धाए सखेज्जदिभाग गतूणाणुकट्टिवोच्छेदो होदि। जयध० पु० १२, पृ० २३५। २ एदिस्से अद्धाए सखेज्जदिभागो णिव्वग्गणकडय णाम। ध० पु० ६, पृ० २१५। जयध० पु० १२, पृ० २३६।

विशेष—प्रथम समयवर्ती जीवके परिणामोको उपरितन समयवर्ती जीवोके जहां तकके परिणामोके साथ समानता पाई जाती है वही तकके परिणामखडोमे अनुकृष्टिरचना वनती है। निर्वर्गणाकाण्डक भी उसीका नाम है। यह प्रथम समयके परिणामोकी अपेक्षा कथन हे। द्वितीयादि समयोकी अपेक्षा भी इन दोनोका इसीप्रकार विचार कर लेना चाहिए। एक निर्वर्गणाकाण्डक अध प्रवृत्तकरणके कालके सख्यातवे भाग कालप्रमाण होता है।

पडिसमयगपरिणामा णिव्वग्गणसमयमेत्तखडकमा।
अहियकमा हु विसेसे मुहुत्तअंतो हु पडिभागो[1] ॥ ४४ ॥

प्रतिसमयगपरिणामा निर्वर्गणसमयमात्रखडक्रमा।
अधिकक्रमा हि विशेषे मुहूर्तांतर्हि प्रतिभाग॰ ॥ ४४ ॥

स॰ टी॰ प्रतिसमयगा परिणामा निर्वर्गणसमयमात्रखडा कृता अध प्रवृत्तकरणकालसख्यातैकभागमात्रखडा कृता इत्यर्थ। ते च सख्यातावलिसमयमात्रा एव जघन्यखडात् आ उत्कृष्टखड विशेषाधिका गच्छति। तद्विशेषे साध्ये आदिखडस्यातर्मुहूर्तमात्र प्रतिभागहार। सोऽपि पूर्ववदानेतव्य ॥ ४४ ॥

स॰ च—समय समयसबधी परिणामनिविषै निर्वर्गणकाडक समान खड कीजिए, ते भी प्रथम खडतै द्वितीयादि खड क्रमतै विशेष जो समानप्रमाण लीएँ चय ताकरि बधता है। तहाँ प्रथम खडकौ अतर्मुहूर्तका भाग दीएँ विशेषका प्रमाण आवै है ॥ ४४ ॥

पडिखडगपरिणामा पत्तेयमसखलोगमेत्ता हु।
लोयाणमसखेज्जा छट्ठाणाणी विसेसे वि[2] ॥ ४५ ॥

प्रतिखंडगपरिणामा. प्रत्येकमसंख्यलोकमात्रा हि।
लोकानामसख्येया षट्स्थानानि विशेषेऽपि ॥ ४५ ॥

स॰ टी॰—प्रतिनियता खडा जघन्यमध्यमोत्कृष्टभेदभिन्ना तद्गता परिणामा विशुद्धिपरिणामविकल्पा प्रत्येकमेकस्मिन्नेकस्मिन् खडे असख्येयलोकमात्रा सति। अनन्तभागवृद्धिरसख्यातभागवृद्धि सख्यातभागवृद्धि सख्यातगुणवृद्धिरसख्यातगुणवृद्धिरनतगुणवृद्धिरिति षट्स्थानान्येकस्मिन् खडे असख्येयलोकमात्राणि सति। अनुकृष्टिविशेषेऽप्यसख्येयलोकमात्राणि षट्स्थानानि भवन्ति ॥ ४५ ॥

स॰ च॰—तहा एक एक खडविषैं जघन्य मध्यम उत्कृष्टता लीए विशुद्ध परिणामनिके भेद असख्यात लोकमात्र है। तहा जैसै गोम्मटसारका ज्ञानाधिकारविषै पर्याय समासविषै षट्स्थानपतित वृद्धिका अनुक्रम कह्या है तैसै इहा एक एक खडविषै वा एक एक अनुकृष्टि विशेषविषै भी असख्यात लोकमात्र बारह षट् स्थानपतित वृद्धि सभवैं हैं ॥ ४५ ॥

---

१ विवक्खियसमयपरिणामाण जत्तो परमणुकट्टिवोच्छेदो त णिव्वग्गणकडयमिदि भण्णदे। सपहि एदाणि खडाणि किमण्णोण्ण सरिसाणि आहो विसरिसाणि त्ति पुच्छिदे सरिसाणि ण होति, विसरिसाणि चेवेत्ति घेत्तव्व, अण्णोण्ण पेक्खिदूण जहाकममेदेसिं विसेसाहियकमेणावट्ठाणदसणादो। एसो विसेसो अतोमुहुत्तपडिभागिओ। जयध॰ पु॰ १२, पृ॰ २३६। ध॰ पु॰ ६, पृ॰ २१५।

२ अधापवत्तकरणपढमसमयप्पहुडि जाव चरिमसमओ त्ति ताव पादेक्कमेक्केक्कम्मि समये असखेज्जलोगमेत्ताणि परिणामट्ठाणाणि छवड्ढिकमेणावट्ठिदाणि ट्ठिदिबधोसरणादीण कारणभूदाणि अत्थि। जयध॰ पु॰ १२, पृ॰ २३४। ध॰ पु॰ ६, पृ॰ २१४।

विशेषाधिकक्रमेण गत्वा चरमसमये परिणामा – ≡ a २ ११ १ । १ २ । एवं प्रतिसमय विशेषाधिका
२ १ १ १ २ १ १ १ १ २
अपि तत्परिणामा आलापापेक्षया असख्यातलोकमात्रा इत्युच्यते। विशेषे आनेतव्ये आदिधनस्यातर्मुहूर्तमात्र प्रतिभागहारो भवति। तत्प्रमाण– २ १ १ १ १ २ । 'पदकदिसखेण भाजिद पचय' इत्यनेनानीत विशेष
२
सस्थाप्य आदिधनगुणकारभागहाराभ्यामुपर्यधश्च गुणयित्वा गुणकारभूत द्विक हारस्य हार कृत्वा समीक्ष्यमाणे आदिधनस्य भागहार । अध प्रवृत्तकरणकालात्सख्येयगुण किंचिदूनो भवति सोऽप्यतर्मुहूर्तमात्र एव ॥ ४२ ॥

स० च०—पहला करणविषै त्रिकालवर्ती जीवनिके जे कपायनिके विशुद्धस्थान कहे हैं तिनिविषै अध प्रवृत्तकरणविपै सभवते असख्यात लोकमात्र है। तिनविपै समय-समय प्रति सभवते असख्यात लोकमात्र परिणाम है। ते प्रथम समयतै द्वितीयादि समयनिविपै क्रमतै समान प्रमाणरूप एक-एक विशेष जो चय ताकरि बधते जानने। तहा आदि धन जो प्रथम समयसम्बन्धी परिणाम ताकौ अतर्मुहूर्तमात्र भागहारका भाग दीए विशेषका प्रमाण आवै है। 'पदकदिसखेण भाजिदे पचय' इस सूत्रकरि गच्छका वर्ग सख्यातगुणा ताका भाग सर्वधनकौ दीए जो चयका प्रमाण आवै है सो प्रथमसमयसबधी परिणामनिकौ किंचिदून सख्यातगुणा अध प्रवृत्तकरण कालमात्र जो अतर्मुहूर्त ताका भाग दीए भी इतना ही प्रमाण आवै है ॥ ४२ ॥

ताए अधापवत्तद्धाए सखेज्जभागमेत्तं तु।
अणुकट्टीए[1] अद्धा णिव्वग्गणकडय तं तु[2] ॥ ४३ ॥

तस्या अध प्रवृत्ताद्धाया· सख्येयभागमात्र तु।
अनुकृष्टया अद्धा निर्वर्गणकाडकं तत्तु ॥ ४३ ॥

स० टी०—तस्या अध प्रवृत्ताद्धाया सख्येयभागमात्रोऽनुकृष्टयद्धा एकसमयपरिणामनानाखडसख्येत्यर्थ । अनुकृष्टय प्रतिसमयपरिणामखडानि तासामद्धा आयाम तत्सख्येत्यर्थ । तदेव तत्परिणाममेव निर्वर्गणकाडकमित्युच्यते। वर्गणा समयसादृश्य ततो निष्क्राता उपर्युपरि समयवर्तिपरिणामखडा तेपा काडक पर्व निर्वर्गणकाडक। तानि च अध प्रवृत्तकरणकाले सख्येयसहस्राणि भवति ॥ ४३ ॥

स० च—तिहि अध प्रवृत्त कालप्रमाण जो ऊर्ध्वगच्छ ताके सख्यातवें भागमात्र अनुकृष्टिका गच्छ हो है। एक एक समयसबधी परिणामनिविषै एते एते खड हो है ते वर्गणा काडक समान जानने। वर्गणा जो समयनिकी समानता ताकरि रहित ऊपरि समयवर्ती परिणाम खड तिनिका काडक जो पर्व ताका नाम निर्वर्गणाकाडक है। ते अध करणके कालविषै सख्यात हजार हो है॥ ४३ ॥

१ तेसिं (असखेज्जलोगमेत्तपरिणामट्ठाणाण) परिवाडीए विरचिदाण पुणरुत्तापुणरुत्तभावगवेसणा अणुकट्टी णाम। अनुकर्षणमनुकृष्टिमन्योन्येन समानत्वानुचिन्तनमित्यनर्थान्तिरम्। इह पुण तहा ण होइ, किंतु अतोमुहुत्तमेत्तमवट्ठिदमद्धाण सगद्धाए सखेज्जदिभाग गतूणाणुकट्टिवोच्छेदो होदि। जयध० पु० १२, पृ० २३५। २ एदिस्से अद्धाए सखेज्जदिभागो णिव्वग्गणकडय णाम। ध० पु० ६, पृ० २१५। जयध० पु० १२, पृ० २३६।

विशेष—प्रथम समयवर्ती जीवके परिणामोको उपरितन समयवर्ती जीवोके जहाँ तकके परिणामोके साथ समानता पाई जाती है वही तकके परिणामखडोमे अनुकृष्टिरचना बनती है। निवर्गणाकाण्डक भी उसीका नाम है। यह प्रथम समयके परिणामोकी अपेक्षा कथन है। द्वितीयादि समयोकी अपेक्षा भी इन दोनोका इसीप्रकार विचार कर लेना चाहिए। एक निर्वर्गणाकाण्डक अध प्रवृत्तकरणके कालके सख्यातवे भाग कालप्रमाण होता है।

पडिसमयगपरिणामा णिव्वग्गणसमयमेत्तखडकमा।
अहियकमा हु विसेसे मुहुत्तअतो हु पडिभागो[1] ॥ ४४ ॥

प्रतिसमयगपरिणामा निर्वर्गणसमयमात्रखडक्रमा।
अधिकक्रमा हि विशेषे मुहूर्तार्तहि प्रतिभाग ॥ ४४ ॥

स० टी० प्रतिसमयगा परिणामा निर्वर्गणसमयमात्रखडा कृता अध प्रवृत्तकरणकालसख्यातैकभागमात्रखडा कृता इत्यर्थ। ते च सख्यातावलिसमयमात्रा एव जघन्यखडात् आ उत्कृष्टखड विशेषाधिका गच्छति। तद्विशेषे साध्ये आदिखडस्यातर्मुहूर्तमात्र प्रतिभागहार। सोऽपि पूर्ववदानेतव्य ॥ ४४ ॥

स० च—समय समयसबधी परिणामनिविषै निर्वर्गणकाडक समान खड कीजिए, ते भी प्रथम खडतै द्वितीयादि खड क्रमतै विशेष जो समानप्रमाण लीएँ चय ताकरि बधता हैं। तहाँ प्रथम खडकौ अतर्मुहूर्तका भाग दीएँ विशेषका प्रमाण आवै है ॥ ४४ ॥

पडिखडगपरिणामा पत्तेयमसखलोगमेत्ता हु।
लोयाणमसखेज्जा छट्ठाणाणी विसेसे वि[2] ॥ ४५ ॥

प्रतिखडगपरिणामाः प्रत्येकमसंख्यलोकमात्रा हि।
लोकानामसख्येया षट्स्थानानि विशेषेऽपि ॥ ४५ ॥

स० टी०—प्रतिनियता खडा जघन्यमध्यमोत्कृष्टभेदभिन्ना तद्गता परिणामा विशुद्धिपरिणामविकल्पा प्रत्येकमेकस्मिन्नेकस्मिन् खडे असख्येयलोकमात्रा सति। अनन्तभागवृद्धिरसख्यातभागवृद्धि सख्यातभागवृद्धि सख्यातगुणवृद्धिरसख्यातगुणवृद्धिरनतगुणवृद्धिरिति षट्स्थानान्येकस्मिन् खडे असख्येयलोकमात्राणि सति। अनुकृष्टिविशेषेऽप्यसख्येयलोकमात्राणि षट्स्थानानि भवन्ति ॥ ४५ ॥

स० च०—तहा एक एक खडविषैं जघन्य मध्यम उत्कृष्टता लीए विशुद्ध परिणामनिके भेद असख्यात लोकमात्र है। तहा जैसै गोम्मटसारका ज्ञानाधिकारविषै पर्याय समासविषै षट्स्थानपतित वृद्धिका अनुक्रम कह्या है तैसै इहा एक एक खडविषै वा एक एक अनुकृष्टि विशेषविषै भी असख्यात लोकमात्र बारह षट् स्थानपतित वृद्धि सभवैं हैं ॥ ४५ ॥

---

१ विवक्खियसमयपरिणामाण जत्तो परमणुकट्ठिवोच्छेदो त णिव्वग्गणकडयमिदि भण्णदे। सपहि एदाणि खडाणि किमण्णोण्ण सरिसाणि आहो विसरिसाणि त्ति पुच्छिदे सरिसाणि ण होति, विसरिसाणि चेवेत्ति घेत्तव्व, अण्णोण्ण पेक्खिदूण जहाकममेदेसि विसेसाहियकमेणावट्ठाणदसणादो। एसो विसेसो अतोमुहुत्तपडिभागिओ। जयध० पु० १२, पृ० २३६। ध० पु० ६, पृ० २१५।

२ अधापवत्तकरणपढमसमयप्पहुडि जाव चरिमसमओ त्ति ताव पादेक्कमेक्केक्कम्मि समये असखेज्जलोगमेत्ताणि परिणामट्ठाणाणि छवड्ढिकमेणावट्ठिदाणि ट्ठिदिबधोसरणादीण कारणभूदाणि अत्थि। जयध० पु० १२, पृ० २३४। ध० पु० ६, पृ० २१४।

विशेष—जिस करणमे ऊपर-ऊपरके समयवर्ती जीवोके परिणाम पूर्व-पूर्वके समयवर्ती जीवोके परिणामोके सदृश भी होते है उस करणको अध प्रवृत्तकरण कहते हैं। इसका काल अन्तर्मुहूर्त है और इस करणमे होनेवाले परिणामोका प्रमाण असख्यात लोकप्रमाण है। फिर भी इसके प्रथम समयके योग्य परिणाम भी असख्यात लोकप्रमाण है, दूसरे समयके योग्य परिणाम भी असख्यात लोकप्रमाण है। इसी प्रकार अध प्रवृत्तकरणके अन्तिम समय तक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि ये प्रत्येक समयके परिणाम उत्तरोत्तर सदृश वृद्धिको लिये हुए विशेष अधिक हैं। यह अध प्रवृत्तकरणके स्वरूपनिर्देशके साथ उसके काल और उसके प्रत्येक समयमे होनेवाले परिणामोकी क्रमवृद्धिको लिये हुए किस प्रकार कहाँ कितने परिणाम होते हैं इसका सामान्य निर्देश है। आगे इस करणके प्रत्येक समयमे परिणामस्थानोकी व्यवस्था किस प्रकार है इसे स्पष्ट करके बतलाते हैं। ऐसा नियम है कि अध प्रवृत्तकरणके प्रथम समयमे जितने परिणाम होते हैं वे अध प्रवृत्तकरणके कालके सख्यातवें भागप्रमाण खण्डोमे विभाजित हो जाते है, जो उत्तरोत्तर विशेष अधिक प्रमाणको लिए हुए होते हैं। यहा पर उन परिणामोके जितने खण्ड हुए, निर्वर्गणाकाण्डक भी उतने समयप्रमाण होता है। आगे भी इसी प्रकार जानना चाहिए। विवक्षित समयके परिणामोकी जिससे आगे अनुकृष्टिका विच्छेद हो जाता है उसका निर्वर्गणाकाण्डक सज्ञा है। इस निर्वर्गणाकाण्डकमे प्रत्येक समयके परिणामोके जितने खण्ड किये गये है उनमेसे प्रथम खण्डसे दूसरे खण्डको और दूसरे आदि खण्डोसे तीसरे आदि खण्डोको विशेष अधिक कहा है सो उस विशेषका प्रमाण तत्प्रायोग्य अन्तर्मुहूर्तका भाग देनेपर प्राप्त होता है। ये सब खण्ड परस्परमे समान न होकर विसदृश ही होते हैं, क्योकि प्रत्येक समयके परिणाम खण्ड उत्तरोत्तर विशेष अधिक प्रमाणको लिये हुए होते है। इनमेसे प्रथम समयके प्रथम खण्डगत परिणाम तो नाना जीवोकी अपेक्षा अध प्रवृत्तकरणके प्रथम समयमे ही पाये जाते हैं। शेष अनेक खण्ड और तद्गत परिणाम दूसरे समयमे स्थित जीवोके भी होते हैं। साथ ही यहाँ असख्यात लोकप्रमाण अन्य अपूर्व परिणाम भी होते हैं जो अन्तिम खण्डरूपसे दूसरे समयमे होते है। ये अपूर्व परिणाम प्रथम समयके अन्तिम खण्डमे तत्प्रायोग्य अन्तर्मुहूर्तका भाग देने पर जो लब्ध आवे उतने अधिक होते हैं। तीसरे समयमे दूसरे समयके जितने खण्ड और तद्गत परिणाम है। उनमेसे प्रथम खण्ड और तद्गत परिणामोको छोडकर वे सब प्राप्त होते हैं। साथ ही यहाँ असंख्यात लोकप्रमाण अन्य अपूर्व परिणाम भी प्राप्त होते है जो अन्तिम खण्डरूपसे तीसरे समयमे पाये जाते हैं। इसी प्रकार इसी प्रक्रियासे अध प्रवृत्तकरणके अन्तिम समयके प्राप्त होनेतक चौथे आदि समयोमे भी परिणामस्थानोकी व्यवस्था जान लेनी चाहिए।

यहा अकसदृष्टि द्वारा इसी विषयको स्पष्ट किया जाता है। अध प्रवृत्तकरणका काल अन्तर्मुहूर्त है, जो अक सदृष्टिसे १६ लिया गया है। कुल परिणाम असख्यात लोकप्रमाण है, जो यहा ३०७२ लिये गये हैं। ये सब परिणाम प्रथम समयसे लेकर अन्तिम समय तक उत्तरोत्तर समान वृद्धिको लिये हुए हैं। इस हिसाबसे यहाँ समान वृद्धि या चयका प्रमाण ४ है। प्रथम स्थानमे वृद्धिका अभाव है, इसलिये प्रथम समयको छोडकर १५ समयोमे वृद्धि हुई है, अत एक कम सब समयोके आधे को चय और समयोकी सख्यासे गुणित करनेपर १६ − १ = १५, १५ − २ = $\frac{१५}{२}$, $\frac{१५}{२}$ × ४ × १६ = ४८० चयधनका प्रमाण होता है। इसे सर्वधन ३०७२ मे से घटाकर शेष २५७२ मे सब समयोका भाग देने पर १६२ लब्ध आता है। यह प्रथम समयके परिणामोका प्रमाण है। आगे इसमे चय ४ के उत्तरोत्तर मिलाते जाने पर द्वितीयादि समयोके परिणामोका प्रमाणक्रमसे १६६,

१७०, १७४, १७८, १८२, १८६ आदि होता है। १६वे समयके परिणामोका प्रमाण २२२ होता है।

अब ऊपरके समयोमे स्थित जीवोके परिणामोकी पूर्वके समयाम स्थित जीवोके परिणामोके साथ सदृशता और विसदृशता किस प्रकार है यह बतलानेके लिए अनुकृष्टि रचना करते है। अध-प्रवृत्तकरणके प्रत्येक समयके सब परिणामोको उसीके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण कालके सख्यातवें भागप्रमाण कालके समयप्रमाण भागोमे विभक्त करे। इस हिसाबसे सख्यातका प्रमाण ८ स्वीकार करके उसका भाग १६ मे देनेपर ४ लब्ध आय। निर्वर्गणाकाण्डकका प्रमाण भी इतना ही है। अत प्रत्येक समयके परिणामोको चार-चार खण्डोमे विभाजित करना चाहिए। उसमे भी प्रथम खण्डसे द्वितीय खण्ड, द्वितीय खण्डसे तृतीय खण्ड और तृतीय खण्डसे चतुथ खण्ड विशेष अधिक है। यहाँ विशेष या चयका प्रमाण उक्त अन्तर्मुहूर्तका भाग निर्वर्गणाकाण्डकके प्रमाणमे देनेपर जो लब्ध आवे उतना है। पहले अकसदृष्टिमे निर्वगणाकाण्डकका प्रमाण ४ बतला आये है, अन्तर्मुहूर्तका प्रमाण भी इतना ही है। अत अन्तर्मुहूर्तका प्रमाण ४ का भाग निर्वगणाकाण्डकके प्रमाण ४ मे देनेपर लब्ध १ आया। यही प्रकृतमे विशेषका प्रमाण है। इस हिसाबसे यहाँ सब समयोके प्रथम खण्डमे तो वृद्धिका प्रश्न ही नही उठता। दूसरे, तीसरे और चौथे खण्डमे पहलेसे दूसरेमे, दूसरेसे तीसरेमे और तीसरेसे चौथेमे क्रमसे उत्तरोत्तर १-१ सख्याकी वृद्धि हुई है। अत वृद्धिरूप चयधन १ + २ + ३ = ६ होता है। इसे पृथक्-पृथक् प्रथमादि समयोके परिणाम पु जोमेसे घटा देने पर क्रमसे १५६, १६०, १६४, १६८ आदि प्राप्त होते है। इनमे खडप्रमाण सख्या ४ का भाग देने पर सर्वत्र प्रथमादि समयोमे प्रथम समयके खण्ड क्रमसे ३९, ४०, ४१, ४२ आदि सख्याप्रमाण प्राप्त होते है। इनमे क्रमसे चयधनके मिलाने पर प्रत्येक समयके चारो खण्डोके परिणाम पु जोका प्रमाण आ जाता है। रचना इस प्रकार है—

समय क्रम स०	परिणामोका प्रमाण	प्रथम खड	द्वि० खड	तृ० खड	च० खड
१	१६२	३९	४०	४१	४२
२	१६६	४०	४१	४२	४३
३	१७०	४१	४२	४३	४४
४	१७४	४२	४३	४४	४५
५	१७८	४३	४४	४५	४६
६	१८२	४४	४५	५६	४७
७	१८६	४५	४६	४७	४८
८	१९०	४६	४७	४८	४९
९	१९४	४७	४८	४९	५०
१०	१९८	४८	४९	५०	५१
११	२०२	४९	५०	५१	५२
१२	२०६	५०	५१	५२	५३
१३	२१०	५१	५२	५३	५४
१४	२१४	५२	५३	५४	५५
१५	२१८	५३	५४	५५	५६
१६	२२२	५४	५५	५६	५७

पढमे चरिमे समये पढम चरिमं च खडमसरित्थ ।
सेसा सरिसा[1] सव्वे अट्ठुव्वंकादिअतगया ॥ ४६ ॥

प्रथमे चरमे समये प्रथम चरम खडमसदृशम् ।
शेषा. सदृशा' सर्वे अष्टोर्वंकाद्यतगता. ॥ ४६ ॥

स० टी०—अध प्रवृत्तकरणकालस्य प्रथमसमये प्रथमखड ३९, चरमसमये चरमखड च ५७ । उपरित नाधस्तनसमयखडैरसदृक्षमेव, शेपाणि द्वितीयखडादीनि द्विचरमममयखडपर्यंतानि सर्वाण्यपि खडान्युपरितनाधस्तनसमयवर्तिखडे सदृशानि भवन्ति । तानि प्रथमादिचरमपर्यतानि सर्वाण्यपि खडान्यष्टाकादीनि उर्वंकातानि भवति, पट्स्थानानामादिरष्टाक अनतगुणवृद्धिरूप अन्त उर्वंक अनन्तभागवृद्धिरूप इति वचनात् ॥ ४६ ॥

स० च०—प्रथम समयका प्रथम खड अत समयका अत खड ए तौ कोऊ खडनिके समान नाही, अवशेप सर्व खड अन्य खडनिकरि यथायोग्य समानता धरै है । तहा खडनिविपै जो परिणामपुज कह्या तोहिविपै पहिला परिणाम तौ अष्टाक कहिए । पूर्व परिणामतै अनतगुणा वृद्धिरूप है । अर अतका परिणाम ऊर्वक कहिए पूर्व परिणामतै अनतभाग वृद्धिरूप है, जातै पट्स्थाननिकी आदि तौ अष्टाक अर अत ऊर्वक कह्या है ॥ ४६ ॥

विशेष—पिछली गाथाके विशेषार्थमे हम अक सदृष्टि दे आये है । उसे देखनेसे यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रथम समयका प्रथम खण्ड और अन्तिम समयका अन्तिम खण्ड अन्य किसी खण्डके सदृश नही है । इनके अतिरिक्त सब समयोके अन्य सब परिणाम खण्ड यथा सम्भव सदृश है ।

चरिमे सव्वे खडा दुचरिमसमओ त्ति अवरखडाए ।
असरिसखडाणोली अधापवत्तम्हि करणम्हि ॥ ४७ ॥

चरमे सर्वे खडा द्विचरमसमय इति अवरखडै. ।
असदृशखंडानामावलिरध.प्रवृत्ते करणे ॥ ४७ ॥

स० टी०—अध प्रवृत्तकरणकाले चरमसमयवर्तीनि जघन्यमध्यमोत्कृष्टानि सर्वाण्यपि प्रथमसमयादिद्विचरमसमयपर्यतवर्तीनि जघन्यानि च खडानि अकुशाकारपक्तिगतानि उपरि सादृश्याभावादसदृशानीत्युच्यन्ते ॥ ४७ ॥

स० च—अध प्रवृत्त करण कालविषै अत समयसबधी तौ सर्व खड अर प्रथम समय तैं लगाय द्विचरम समय पर्यंतका प्रथम खड हैं ते तिनिके ऊपरिके समयसबधी जे सर्व खड तिनितै समान नाही तातै असदृश हैं ॥ ४७ ॥

विशेप—अध प्रवृत्तकरणके प्रथम समयसे लेकर उपान्त्य समय तकके सब प्रथम खण्डोका अपनेसे ऊपरके समयोके अन्य किसी खण्डके साथ सादृश्य नही है । इसीप्रकार अन्तिम समयके सब परिणाम खण्ड भी उनसे ऊपर अन्य परिणाम खण्डोका अभाव होनेसे विसदृश ही है । अत इन परिणाम खण्डोकी अकुशाकार रचना इस प्रकार होती है—

---

१ ध० पु० ६, पृ० २१६ ।

३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५१ ५३ ५८
५५
५६
५७

इन सब परिणामोका योग ९१२ होता है। अध प्रवृत्तकरणके ३०७२ परिणामोमेसे उक्त ९१२ परिणाम अपुनरुक्त हैं। शेष सब परिणाम पुनरुक्त हैं। उदाहरणार्थ प्रथम समयके १६२ परिणामोमेसे प्रारम्भके ३९ परिणाम अपुनरुक्त हैं। पहले समयके शेष दूसरे, तीसरे, और चौथे खण्डके परिणाम पुनरुक्त है, क्योकि नाना जीवोकी अपेक्षा ये द्वितीयादि तीनो खण्डोके परिणाम दूसरे समयमे, तीसरे और चौथे खण्डके परिणाम तीसरे समयमे और चौथे खण्डके परिणाम चौथे समयमे भी पाये जाते है। इसीप्रकार यथा सम्भव आगे भी समझ लेना चाहिए।

अब अध प्रवृत्तकरणसम्बन्धी परिणामोमे विशुद्धिका तारतम्य बतलाते हैं—

पढमे करणे अवरा णिव्वग्गणसमयमेत्तगा तत्तो।
अहिगदिणा वरमवरं तो वरपती अणतगुणियकमा ॥ ४८ ॥

प्रथमे करणे अवरा निर्वर्गणसमयमात्रका. तत.।
अहिगतिना वरमवरमतो वरपक्तिरनतगुणितक्रमा ॥ ४८ ॥

स० टी०—अध प्रवृत्तकरणकाले निर्वर्गणकाडकसमयमात्रा प्रतिसमयप्रथमखडजघन्यपरिणामा उपर्युपर्यनतगुणितक्रमा गच्छति। तत प्रथमनिर्वर्गणकाडकचरमसमयप्रथमखडजघन्यपरिणामात् प्रथमसमयचरमखडोत्कृष्टपरिणामोऽनन्तगुण। ततो द्वितीयकाडकप्रथमसमयप्रथमखडजघन्यपरिणामोऽनतगुण। तत प्रथमकाडकद्वितीयसमयचरमखडोत्कृष्टपरिणामोऽनतगुण, ततो द्वितीयकाडकद्वितीयसमयप्रथमखडजघन्यपरिणामोऽनतगुण एव जघन्यादुत्कृष्टोऽनतगुण। उत्कृष्टाज्जघन्योऽनतगुणोऽहिगत्या गच्छति यावच्चरमकाडकचरमसमयप्रथमखडजघन्यपरिणाम प्राप्नोति। तस्माच्चरमकाडकप्रथमसमयचरमखडोत्कृष्टपरिणामोऽनतगुण। तस्मात्प्रतिसमयचरमखडोत्कृष्टपरिणामपक्तिरनतगुणितक्रमा गच्छति यावच्चरमकाडकचरमसमयचरमखडोत्कृष्टपरिणाम प्राप्नोति। सर्वत्र जघन्यपरिणामादुत्कृष्टपरिणाम असख्यातलोकमात्रवारानतगुणित। उत्कृष्टपरिणामाज्जघन्यपरिणाम एकवारमनन्तगुणित इति विशेषो ज्ञातव्य। सर्वजघन्यविशुद्धेरप्यविभागप्रतिच्छेदा. जीवराशेरनतगुणा सतीति अनतगुणवृद्धचादिषट्स्थानसभव ॥ ४८ ॥

स० च—प्रथम करणविषै विशुद्धताके अविभागप्रतिच्छेदनिकी अपेक्षा समय-समयसबधी प्रथम प्रथम खड तिनके जघन्य परिणाम हैं ते उपरि उपरि अनतगुणे है। बहुरि तहा पीछे निर्वगण-

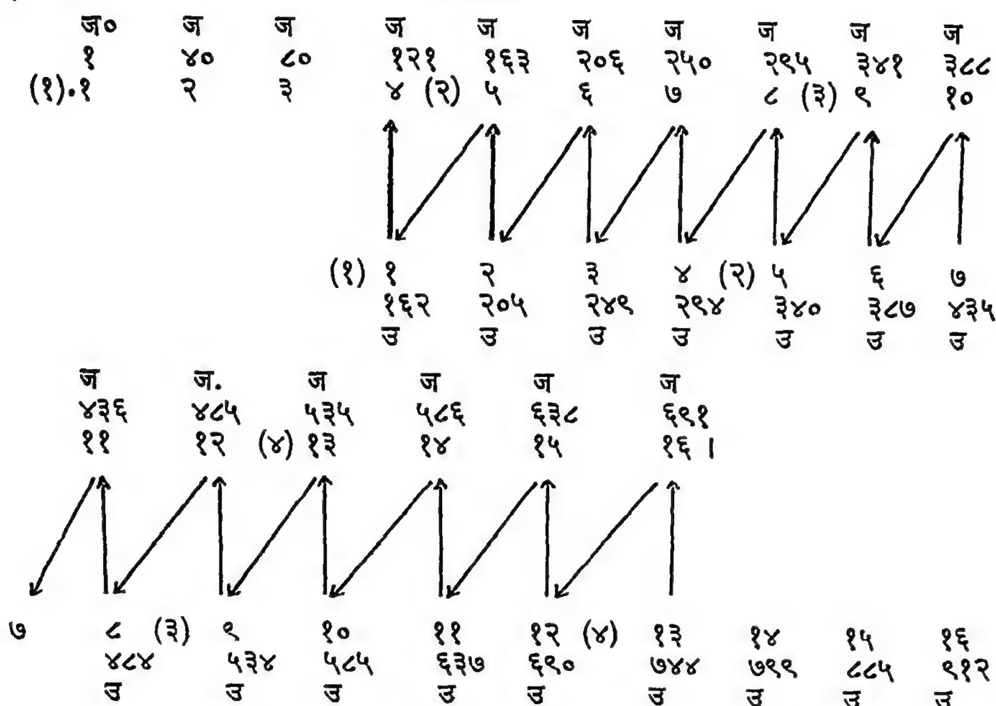
१ अधापवत्तकरणपढमसमए जहण्णिया विसोही थोवा। विदियसमए जहण्णिया विसोही अणतगुणा। एवमतोमुहुत्त। तदो पढमसमए उक्कस्सिया विसोही अणतगुणा। जम्हि जहण्णिया विसोही णिट्ठिदा तदो उवरिमसमए जहण्णिया विसोही अणतगुणा। विदियसमए उक्कस्सिया विसोही अणतगुणा। एव णिव्वग्गणकडयमतोमुहुत्तद्धमेत्त अधापवत्तकरणचरिमसमयो त्ति। तदो अतोमुहुत्तमोसरियूण जम्हि उक्कस्सिया विसोही णिट्ठिदा तत्तो उवरिमसमए उक्कस्सिया विसोही अणतगुणा। एवमुक्कस्सिया विसोही णेदव्वा जाव अधापवत्तकरणचरिमसमयो त्ति। क० पा० चू० पृ० ६२२। जयध० पु० १०, पृ० २४५-२५०। ध० पु० ६ पृ० २१८।

काडकका अत समयसबधी प्रथम खडका जघन्य परिणामतै पहिले समयके अत खडका उत्कृष्ट परिणाम अनतगुणा है। तातै द्वितीय काडकके प्रथम समयके प्रथम खडका जघन्य परिणाम अनतगुणा है। तातै प्रथम काडकका द्वितीय समयके अत खडका परिणाम अनतगुणा है। तातै द्वितीय काडकके द्वितीय समयके प्रथम खडका जघन्य परिणाम अनतगुणा है। ऐसै जैसै सर्प इधरतै उधर उधरतै इधर गमन करे है तैसे जघन्यतै उत्कृष्टका उत्कृष्टतै जघन्यका अनतगुणा क्रम है यावत् अत काडकका अत समयके प्रथम खडका जघन्य परिणाम होइ। बहुरि तातैं अत काडकका प्रथम समयके अत खडका उत्कृष्ट परिणाम अनतगुणा है। तातै समय समय प्रति अत खडके उत्कृष्ट परिणामनिकी पक्ति अनतगुणा क्रम लीए है यावत् अत काडकका अत समयके अत खडका उत्कृष्ट परिणाम होइ। इहाँ इतना जानना—जघन्यतै उत्कृष्ट है सो तौ असख्यात लोकमात्रवार अनतगुणा है। अर उत्कृष्टतै जघन्य है सो एकवार अनतगुणा है। बहुरि सर्वतै जघन्य विशुद्धताके भी अविभाग प्रतिच्छेद जीव राशितै अनतगुणे है, तातैं इहाँ षट्स्थान सभवें हैं॥ ४८॥

विशेष—श्री जयधवला दर्शनमोह उपशमना अधिकारमे विशुद्धिसम्बन्धी अल्पबहुत्वका विचार करते हुए अल्पबहुत्वके स्वस्थान और परस्थान ऐसे दो भेद करके स्वस्थान अल्पबहुत्वका खुलासा इस प्रकार किया है। अध प्रवृत्तकरणके प्रथम समयमे प्रथम खण्डका जघन्य परिणाम सबसे स्तोक है। उससे वहीके दूसरे खण्डका जघन्य परिणाम अनन्तगुणा है। उससे वहीके तीसरे खण्डका जघन्य परिणाम अनन्तगुणा है। उससे वहीके चौथे खण्डका जघन्य परिणाम अनन्तगुणा है। इस प्रकार प्रथम समयके अन्तिम परिणाम खण्डके जघन्य परिणामके प्राप्त होने तक जानना चाहिए। इसी प्रकार प्रथम समयके प्रथम खण्डका उत्कृष्ट परिणाम सबसे स्तोक है। उससे वहीके दूसरे खण्डका उत्कृष्ट परिणाम अनन्तगुणा है। उससे वहीके तीसरे खण्डका उत्कृष्ट परिणाम अनन्तगुणा है। उससे वहीके चौथे खण्डका उत्कृष्ट परिणाम अनन्तगुणा है। इसी प्रकार प्रथम समयके अन्तिम खण्डके अन्तिम उत्कृष्ट परिणामके प्राप्त होने तक जानना चाहिए। इसी प्रकार द्वितीयादि समयोके सब खण्डोसम्बन्धी जघन्य और उत्कृष्ट परिणामोका स्वस्थान अल्पबहुत्व घटित कर लेना चाहिए। यह स्वस्थान अल्पबहुत्व है। अक सदृष्टिके अनुसार प्रथम समयके चारो खण्डोमे १६२ परिणाम पाये जाते हैं, उनमेसे प्रथम खण्डमे एकसे लेकर उनतालीस तक ३९ परिणाम, दूसरे खण्डमे ४० से लेकर ७९ तक ४० परिणाम, तीसरे खण्डमे ८० से लेकर १२० तक ४१ परिणाम और चौथे खण्डमे १२१ से लेकर १६२ तक ४२ परिणाम परिगणित किये गये है। इनमेसे प्रथम खण्डका १ सख्याक परिणाम विशुद्धिको अपेक्षा सबसे स्तोक है, उससे दूसरे खण्डका ४० सख्याक जघन्य परिणाम अनन्तगुणा है, उससे तीसरे खण्डका ८० सख्याक जघन्य परिणाम अनन्तगुणा है और उससे चौथे खण्डका १२१ वाँ जघन्य परिणाम अनन्तगुणा है। उत्कृष्टकी अपेक्षा प्रथम खण्डका ३९ सख्याक उत्कृष्ट परिणाम सबसे स्तोक है, उससे दूसरे खण्डका ७९ सख्याक उत्कृष्ट परिणाम अनन्तगुणा है, उससे तीसरे खण्डका १२० सख्याक उत्कृष्ट परिणाम अनन्तगुणा है और उससे चौथे खण्डका १६२ सख्याक उत्कृष्ट परिणाम अनन्तगुणा है। इसी प्रकार आगेके द्वितीयादि सब समयोमे स्वस्थान अल्पबहुत्व जान लेना चाहिए। यह स्वस्थान अल्पबहुत्वका स्पष्टीकरण है।

परस्थान अल्पबहुत्वकी अपेक्षा विचार इस प्रकार है—प्रथम निर्वर्गणाकाण्डकके अन्तिम समय तक एकसे दूसरे और दूसरेसे तीसरे आदि समयोमे जो जघन्य परिणाम प्राप्त होता है वह

उत्तरोत्तर अनन्तगुणी विशुद्धिको लिये हुए होता है। अक सदृष्टिके अनुसार पहले समयका १ सख्याक जघन्य परिणाम अध प्रवृत्तकरणके अन्य सब परिणामोकी अपेक्षा सबसे स्तोक विशुद्धिको लिये हुए होता है यह स्पष्ट ही है। पहले समयके दूसरे खण्डका ४० सख्याक जो जघन्य परिणाम है वही दूसरे समयके प्रथम खण्डका ४० सख्याक जघन्य परिणाम है, इसलिए यह प्रथम खण्डके १ सख्याक जघन्य परिणामसे अनन्तगुणी विशुद्धिको लिये हुए होता है। प्रथम समयके तीसरे खण्डका ८० सख्याक जो जघन्य परिणाम है वही तीसरे समयके प्रथम खण्डका ८० सख्याक जघन्य परिणाम है, इसलिये यह भी दूसरे समयके ४० सख्याक जघन्य परिणामसे अनन्तगुणी विशुद्धिको लिये हुए होता है। इसीप्रकार प्रथम समयके चौथे खण्डका १२१ सख्याक जो जघन्य परिणाम है वही चौथे समयके प्रथम खण्डका १२१ सख्याक जघन्य परिणाम है, इसलिए यह भी तीसरे समयके ८० सख्याक जघन्य परिणामसे अनन्तगुणी विशुद्धिको लिये हुए होता है। इसप्रकार अन्तर्मुहूर्तप्रमाण प्रथम निर्वर्गणाकाण्डकके अन्तिम समयतक जघन्य विशुद्धिके अल्पबहुत्वका यह क्रम जानना चाहिए। अक सदृष्टिकी अपेक्षा यह निर्वर्गणाकाण्डक चौथे समयमे समाप्त हुआ है, इसलिए चौथे समयसम्बन्धी प्रथम खण्डके १२१ सख्याक जघन्य परिणामतक उक्त अल्पबहुत्वका विचार किया गया है। आगे उक्त जघन्य परिणामसे प्रथम समयका उत्कृष्ट परिणाम अनन्तगुणा होता है, क्योंकि अक सदृष्टिकी अपेक्षा पहले जो अध प्रवृत्तकरणके चतुर्थ समयके प्रथम खण्डकी जघन्य विशुद्धि बतला आये हैं वही अध प्रवृत्तकरणके प्रथम समयके अन्तिम खण्डकी जघन्य विशुद्धि है, और यह उसी अन्तिम खण्डकी उत्कृष्ट विशुद्धि है, इसलिए यह उससे अनन्तगुणी होती है। अक सदृष्टिकी अपेक्षा वह जघन्य विशुद्धि प्रथम समयके अन्तिम खण्डके १२१ सख्याक परिणामकी थी और यह उसी खण्डके १६२ सख्याक परिणामकी है, इसलिये यह उससे अनन्तगुणी बतलाई है। इस प्रथम समयकी उत्कृष्ट विशुद्धिसे द्वितीय निर्वर्गणाकाण्डकके प्रथम समयकी जघन्य विशुद्धि अनन्तगुणी होती है। अक सदृष्टिकी अपेक्षा प्रथम समय सम्बन्धी अन्तिम खण्डके १६२ सख्याक परिणामकी उत्कृष्ट विशुद्धिसे पाँचवें समय सम्बन्धी प्रथम खण्डके १६३ सख्याक परिणामकी जघन्य विशुद्धि अनन्तगुणी है, क्योंकि प्रथम समयकी उत्कृष्ट विशुद्धि द्वितीय समयसम्बन्धी द्विचरम खण्डके अन्तिम परिणामके सदृश होकर ऊर्वकपनेसे (अनन्तभागवृद्धिरूपसे) अवस्थित है और यह जघन्य विशुद्धि दूसरे समयसम्बन्धी अन्तिम खण्डके अष्टाकरूप जघन्य परिणामरूपसे अवस्थित है, इसलिए यह उक्त उत्कृष्ट विशुद्धिसे अनन्तगुणी है। इससे अध प्रवृत्तकरणके द्वितीय समयसम्बन्धी अन्तिम खण्डकी उत्कृष्ट विशुद्धि अनन्तगुणी है, क्योंकि पूर्वकी जघन्य विशुद्धि द्वितीय समयके अन्तिम खण्डकी जघन्य विशुद्धिस्वरूप है, और यह उससे असख्यात लोकप्रमाण षट्स्थानोको उल्लघनकर स्थित हुए दूसरे समयके अन्तिम खण्डकी उत्कृष्ट विशुद्धिस्वरूप है, इसलिये यह उससे अनन्तगुणी हो जाता है। अक सदृष्टिकी अपेक्षा द्वितीय समयके अन्तिम खण्डकी जघन्य विशुद्धि १६३ सख्याक जघन्य परिणामस्वरूप है और द्वितीय समयके अन्तिम खण्डकी यह उत्कृष्ट विशुद्धि २०५ सख्याक परिणामस्वरूप है, इसलिए यह उससे अनन्तगुणी है। इसीप्रकार आगमानुसार आगे भी विचार कर लेना चाहिए। यहाँ उसे समझनेके लिए अक सदृष्टि दी जाती है—



(१) यह १ से लेकर १६ तक सख्या अध प्रवृत्तकरणके समयोकी सूचक है।

(२) ( ) ब्रेकेटके भीतरकी सख्या कहाँसे किस सख्यावाला निर्वर्गणाकाण्डक चालू हुआ है इसकी सूचक है।

(३) १, ४० आदि सख्या उस-उस समयके उस-उस सख्याक जघन्य परिणामकी सूचक है और १६२, २०५ आदि सख्या उस-उस समयके उस-उस सख्याक उत्कृष्ट परिणामकी सूचक है।

(४) पहले गाथा ४६ मे यह बतला आये हैं कि प्रत्येक षट्स्थान पतित वृद्धिमे उसका आदि अष्टाकप्रमाण होता है और अन्त ऊर्वंकस्वरूप होता है। तदनुसार पिछले उत्कृष्ट स्थानसे अगला जघन्य स्थान अनन्तगुण वृद्धिस्वरूप जानना चाहिए और प्रत्येक उत्कृष्ट स्थान अनन्तभाग वृद्धिस्वरूप जानना चाहिए।

पढमे करणे पढमा उड्ढगसेढीय चरिमसमयस्स ।
तिरिय डाणोली असरित्थाणतगुणिय ।। ४९ ।।

स० टी०—अधःप्रवृत्तकरणे प्रथमसमयप्रथमखडजघन्यपरिणामादारभ्य द्विचरमसमयप्रथमखडजघन्य-परिणामपर्यंता ऊर्ध्वगा जघन्यपरिणामश्रेणि, चरमसमयतिर्यक्खडपरिणामश्रेणिश्च उपरि सादृश्याभावादसदृशी अनतगुणितक्रमा च वेदितव्या ।। ४९ ।। एवमध प्रवृत्तकरणपरिणामस्वरूप निरूपितम् ।

स० च—प्रथम करणविषैं समय समयके परिणामनिकी ऊपरि ऊपरि पक्ति कीए अर अत समयकें परिणामनिकी बरोबरि तिर्यक्रूप पक्ति कोए अकुशाकाररचना हो है। सो इनके ऊपरिके परिणामनितैं समानता नाही तातै असदृश हैं। बहुरि ए परिणाम अनतगुणा क्रम लीए विशुद्धतारूप जानना। ऐसैं अध करणका स्वरूप कह्या ।। ४९ ।।

विशेष—अध प्रवृत्तकरणका काल अन्तर्मुहूर्त है। उसका अक सदृष्टिकी अपेक्षा प्रमाण १६ लिया है। इनमेसे प्रारम्भके १५ समयोमे ऊर्ध्वगत श्रेणिकी प्रथम पक्तिमे क्रमसे ३९, ४०, ४१, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९, ५०, ५१, ५२, ५३ परिणाम है तथा १६ वें समयकी तिर्यक् पक्तिमे ५४, ५५, ५६ और ५७ परिणाम हैं। इन सब परिणामोका योग ९१२ होता है जो परस्परमे विसदृश है। अर्थात् अक सदृष्टिकी अपेक्षा अध.प्रवृत्तकरणके कालका प्रमाण १६ कल्पित करके उनमे जो ३०७२ परिणाम बतलाये गये हैं उनमेसे उक्त ९१२ परिणाम अपुनरुक्त होनेसे परस्परमे विसदृश हैं—यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इन परिणामोकी अकुशाकार रचनाका निर्देश हम पहले ही कर आये हैं। इस प्रकार अध प्रवृत्तकरणके परिणामोके स्वरूपका निरूपण किया ॥ ४९ ॥

अथापूर्वकरणलक्षणमाह—

पढम व विदियकरण पडिसमयमसखलोगपरिणामा।
अहियकमा हु विसेसे मुहुत्तअतो हु पडिभागो[1] ॥ ५० ॥

प्रथमं व द्वितीयकरणं प्रतिसमयमसंख्यलोकपरिणामा।
अधिकक्रमा हि विशेषे मुहूर्तांतर्हि प्रतिभागः ॥ ५० ॥

स० टी०—यथाध प्रवृत्तकरणपरिणामा व्याख्यातास्तथापूर्वकरणपरिणामा व्याख्यातव्या। अय तु विशेष—अध प्रवृत्तकरणपरिणामेभ्य अपूर्वकरणपरिणामा असख्येयलोकगुणिता भवति। ते च प्रतिसमय विशेषाधिका गच्छति यावदपूर्वकरणचरमसमयपरिणामान् प्राप्नुवति। विशेष आनेतव्ये आदिधनस्यान्तर्मुहूर्तमात्र प्रतिभागहार स्यात् ॥ ५० ॥

अब अपूर्वकरणका लक्षण कहते हैं—

स० च०—प्रथम अध करणवत् दूसरा अपूर्वकरण है। तहा विशेष—जो असख्यात लोकमात्र अध करणके परिणामनिते अपूर्वकरणके परिणाम असख्यात लोकगुणे हैं। ते समय समय प्रति विशेष जो समान प्रमाणरूप चय ताकरि अधिक हैं। सो प्रथम समयसबधी परिणामनिकौ अन्तर्मूहूर्तका भाग दीए चयका प्रमाण आवे है ॥ ५० ॥

जम्हा उवरिमभावा हेट्ठिमभावेहिं णत्थि सरिसत्तं।
तम्हा विदिय करण अपुव्वकण ति णिद्दिट्ठं[2] ॥ ५१ ॥

यस्मादुपरिभावानामधस्तनभावै नास्ति सदृशत्वम्।
तस्मात् द्वितीय करणमपूर्वकरणमिति निर्दिष्टम् ॥ ५१ ॥

स० टी०—यस्मात्कारणादुपरितनसमयवर्तिपरिणामानामधस्तनसमयवर्तिपरिणामै. सदृशत्व नास्ति

१ एक्केक्कम्मि समए परिणामट्ठाणाणि असखेज्जा लोगा जयध० भा० १२, पृ० २५२। अपुव्वकरणपढमसमए परिणाम-पतिआयामो थोवो। विदियसमए विसेसाहिओ। केत्तियमेत्तो विसेसो ? असखेज्जलोगपरिणामट्ठाणमेत्तो। होतो वि पढमसमयपरिणामपतिमतोमुहुत्तमेत्तखडाणि कादूण तत्थ एयखडमेत्तो। एवमणतरोणिधाए विसेसाहियकमेण णेदव्व जाव चरिमसमयपरिणामपतिआयाओ त्ति। जयध० भा० १२, पृ० २५३।

२ णवरि समए समए अपुव्वाणि चेव परिणामट्ठाणाणि। जयध० भा० १२, पृ० २५३।

तस्मात्कारणात् द्वितीयकरणपरिणाम अपूर्वकरण इति निर्दिष्ट । प्रथमसमयसर्वोत्कृष्टविशुद्धेर्द्वितीयसमयजघन्य विशुद्धिरनन्तगुणा भवतीति पूर्वोत्तरसमयपरिणामयो सादृश्य दूरात्सारितमेव। अध प्रवृत्तकरणचरमसमये अप्राप्ता एव परिणामा अपूर्वकरणप्रथमसमये जायते । तत्राप्राप्ता एव परिणामास्तद्द्वितीयसमये जायते। एवमातच्चरमसमयमपूर्वा एव परिणामा जायते । इत्यन्वर्था अपूर्वकरणसज्ञा ॥ ५१ ॥

स० च—जातै ऊपरि समयसबधी परिणाम है ते नीचले समयसबधी परिणामनिके समान इहाँ न होइ । प्रथम समयको उत्कृष्ट विशुद्धतातै भी द्वितीय समयसबधी जघन्यविशुद्धता भी अनतगुणी है । ऐसैं परिणामनिका अपूर्वपना है तातै दूसरा करण अपूर्वकरण कह्या है ॥ ५१ ॥

विशेष—जिसमे प्रति समय अपूर्व-अपूर्व परिणाम होते है उसे अपूर्वकरण कहते हैं । इसका काल अन्तर्मुहूर्त है जो अध प्रवृत्तकरणके कालके सख्यातवे भागप्रमाण है । इस कालमे कुल परिणाम असख्यात लोकप्रमाण होकर भी प्रत्येक समयके परिणाम भी असख्यात लोकप्रमाण होते हैं । वे सब परिणाम प्रथम समयसे लेकर अन्तिम समयतक उत्तरोत्तर सदृश वृद्धिको लिये हुए है । प्रथम समयके परिणामोमे अन्तर्मुहूर्तका भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आवे उतना प्रथम समयसे लेकर उत्तरोत्तर वृद्धि या चयका प्रमाण है । प्रत्येक समयमे प्राप्त होनेवाले ये सब परिणाम अपूर्व-अपूर्व होते है, इसलिये यहा भिन्न समयवाले जीवोके परिणामोकी तद्भिन्न समयवाले जीवोके परिणामोके साथ अनुकृष्टि नही बनती । किन्तु एक समयवाले जीवोके परिणामोमे सदृशता-विसदृशता बन जाती है । यही कारण है कि इस गुणस्थानमे एक समयवाली ही निर्वगणा स्वीकार की गई है । अब अपूर्वकरणके उक्त स्वरूपको स्पष्ट करनेके लिये यहाँ कल्पित अक सदृष्टि देते हैं—

कुल परिणामोकी सख्या ४०९६, अन्तर्मुहूर्तका प्रमाण ८, चयका प्रमाण १६, नियम यह है कि एक कम पदके आधेको पद और चयसे गुणित करनेपर उत्तरधन प्राप्त होता है । यथा— ८ − १ = ७ − २ = $\frac{7}{2}$ × ८ × १६ = ४४८ । इसे सर्वधन ४०९६ मेसे कम करनेपर ४०९६ − ४४८ = ३६४८ शेष रहते है । इसमे पद ८ का भाग देनेपर ३६४८ − ८ = ४५६ लब्ध प्राप्त होता है । यह अपूर्वकरणके प्रथम समयके कुल परिणामोका योग है । इसमे उत्तरोत्तर एक-एक चय १६ जोडनेपर द्वितीयादि समयोमे प्राप्त होनेवाले परिणामोकी सख्या क्रमसे ४७२, ४८८, ५०४, ५२०, ५३६, ५५२ और ५६८ होती है । यथा—

समय	परिणाम			कुल योग
१	१ से ४५६ तक			४५६
२	४५७ से ४७२ ,,	नये परिणामोका योग		९२८
३	९२९ ,, ४८८ ,,	,,	,,	१४१६
४	१४१७ ,, ५०४ ,,	,,	,,	१९२०
५	१९२१ ,, ५२० ,,	,,	,,	२४४०
६	२४४१ ,, ५३६ ,,	,,	,,	२९७६
७	२९७७ ,, ५५२ ,,	,,	,,	३५२८,
८	३५२९ ,, ५६८ ,,	,,	,,	४०९६

विदियकरणादिसमयादंतिमसमओ त्ति अवरवरसुद्धी।
अहिगदिणा खलु सव्वे होंति अणंतेण गुणियकमा[1] ॥ ५२ ॥
द्वितीयकरणादिसमयादंतिमसमय इति अवरवरशुद्धि।
अहिगतिना खलु सर्वे भवंत्यनंतेन गुणितक्रमा ॥ ५२ ॥

स० टी०—अपूर्वकरणप्रथमसमयादारभ्य आ अंतिमसमयं जघन्योत्कृष्टविशुद्धिपरिणामा अनंतगुणा। तद्यथा—तत्प्रथमसमये जघन्यविशुद्धिपरिणामादुत्कृष्टविशुद्धिपरिणामोऽनंतगुण। तस्मादुपरितनसमयजघन्यविशुद्धिपरिणामोऽनंतगुण। तस्मात्तत्समयोत्कृष्टविशुद्धिपरिणामोऽनंतगुण। एवं सर्वेऽपि जघन्योत्कृष्टविशुद्धिपरिणामा अनंतगुणितक्रमा अहिगत्या गच्छंति यावच्चरमसमयजघन्योत्कृष्टपरिणामो। अत्रानुकृष्टिखंडविकल्पो नास्ति, अधस्तनसमयसर्वोत्कृष्टपरिणामादुपरितनजघन्यपरिणामस्यानंतगुणत्वसंभवात् ॥ ५२ ॥

अपूर्वकरणमें विशुद्धिके तारतम्यका निर्देश—

स० च—दूसरे करणका प्रथम समयतैं लगाय अंत समय पर्यंत अपने जघन्यतैं अपना उत्कृष्ट अर पूर्व समयके उत्कृष्टतैं उत्तर समयका जघन्य परिणाम क्रमतैं अनंतगुणी विशुद्धता लीए सर्पकी चालवत् जानने। इहाँ अनुकृष्टि नाहीं ॥ ५२ ॥

विशेष—प्रथम समयकी जघन्य विशुद्धि सबसे स्तोक है। उसी समयमें प्राप्त होनेवाली उत्कृष्ट विशुद्धि असंख्यात लोकप्रमाण षट्स्थानोंका उल्लंघनकर प्राप्त होती है, इसलिए प्रथम समयकी जघन्य विशुद्धिसे यह उसी समयकी उत्कृष्ट विशुद्धि अनन्तगुणी है। उससे दूसरे समयमें प्राप्त होनेवाली जघन्य विशुद्धि अनन्तगुणी है जो मात्र अनन्तगुणवृद्धिरूप न होकर असंख्यात लोकप्रमाण षट्स्थान पतित विशुद्धिकी वृद्धि होने पर प्राप्त होती है। उससे उसी दूसरे समयमें प्राप्त होनेवाली उत्कृष्ट विशुद्धि अनन्तगुणी है, क्योंकि यह असंख्यात लोकप्रमाण षट्स्थानरूप विशुद्धिको उल्लंघनकर अवस्थित है। इसी प्रकार अंतिम समय तक प्रत्येक समयमें प्राप्त होनेवाली जघन्य और उत्कृष्ट विशुद्धिका यही क्रम जानना चाहिए। इस गुणस्थानमें जघन्यसे उत्कृष्ट, उत्कृष्टसे जघन्य, पुनः जघन्यसे उत्कृष्ट इत्यादि क्रमसे विशुद्धिको सर्पकी चालके समान बतलानेका यही कारण है।

अथापूर्वकरणपरिणामस्य कार्यविशेषज्ञापनार्थमाह—

गुणसेढीगुणसंकमठिदिरसखंडा अपुव्वकरणादो[2]।
गुणसंकमेण सम्मा-मिस्साणं पूरणो त्ति हवे ॥ ५३ ॥
गुणश्रेणीगुणसंक्रमस्थितिरसखंडा अपूर्वकरणात्।
गुणसंक्रमेण सम्यक्-मिश्राणां पूरण इति भवेत् ॥ ५३ ॥

---

१. अपुव्वकरणस्स पढमसमए जहण्णिया विसोही थोवा। तत्थेव उक्कस्सिया विसोही अणंतगुणा। विदियसमए जहण्णिया विसोही अणंतगुणा। समये समये असंखेज्जा लोगा परिणामट्ठाणाणि। एवं णिव्वग्गणा च। चू० सू०, जयध० भा० १२, पृ० २५२ आदि।

२ अपुव्वकरणपढमसमए ट्ठिदिखंडयं जहण्णगं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो, उक्कस्सगं सागरोवमपुधत्तं। ट्ठिदिबंधो अपुव्वो। अणुभागखंडयमप्पसत्थकम्माणमणंता भागा। तस्स पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाणि थोवाणि। अइच्छावणाफद्दयाणि अणंतगुणाणि। णिक्खेवफद्दयाणि अणंतगुणाणि। आगाइदफद्दयाणि अणंतगुणाणि। अपुव्वकरणस्स चेव पढमसमए आउगवज्जाणं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवो अणियट्टिअद्धादो अपुव्वकरणअद्धादो च विसेसाहिओ। जयध० भा० १२, पृ० २६० प्रभृति।

स० टी०—अपूर्वकरणप्रथमसमयादारभ्य गुणसक्रमेण सम्यक्त्वमिश्रप्रकृत्यो पूरणकालचरमसमयपर्यंत गुणश्रेणिविधान गुणसक्रमविधान स्थितिखडनमनुभागखडन च वर्तते ॥ ५३ ॥

स० च—अपूर्वकरणके प्रथम समयतै लगाय यावत् सम्यक्त्वमोहना मिश्रमोहनीका पूरण-काल जो जिस कालविषै गुणसक्रमणकरि मिथ्यात्वकौ सम्यक्त्वमोहनी मिश्रमोहनीरूप परिणमावै है तिस कालका अत समय पर्यंत गुणश्रेणि १ गुणसक्रमण १ स्थितिखडन १ अनुभागखडन १ ए च्यारि आवश्यक हो है ॥ ५३ ॥

विशेष—अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर जो चार आवश्यक कार्य प्रारम्भ होते हैं वे हैं—गुणश्रेणी, गुणसक्रम, स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात। इतना विशेष है कि मिथ्यात्व-का अन्तरकरण करनेके बाद उसकी प्रथम स्थिति आवलि और प्रत्यावलि अर्थात् दो आवलिप्रमाण शेष रहने पर उसका गुणश्रेणि रूपसे द्रव्यका निक्षेप नही होता, क्योकि आवलि और प्रत्यावलिप्रमाण प्रथम स्थितिके शेष रहनेके एक समय पूर्व ही आगाल और प्रत्यागालका होना बन्द हो जाता है। यदि कहा जाय कि प्रत्यावलिमेसे गुणश्रेणिनिक्षेप होनेमे कोई बाधा नही है सो यह कहना भी युक्त नही है, क्योकि इस अवस्थामे उदयावलिके भीतर गुणश्रेणिनिक्षेपका होना असम्भव है। यदि कहा जाय कि प्रत्यावलिमेसे अपकर्षित द्रव्यका उसीमे गुणश्रेणिनिक्षेप हो जायगा सो यह कहना भी युक्त नही है, क्योकि वह स्वय अतिस्थापनारूप होनेसे उसमे अपकर्षित द्रव्यका निक्षेप होना असम्भव है। इतने वक्तव्यसे यह स्पष्ट हुआ कि मिथ्यात्वके द्रव्यका गुणश्रेणिनिक्षेप उसकी प्रथम स्थितिके आवलि और प्रत्यावलिप्रमाण शेष रहनेके पूर्व समय तक ही होता है। अब रहे शेष तीन आवश्यक कार्य सो इनमेसे मिथ्यात्वके द्रव्यके स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात ये दो कार्य विशेष तो मिथ्यात्वके प्रथम स्थितिके अन्तिम समय तक होते रहते है। तथा मिथ्यात्वके द्रव्यका गुणसक्रम प्रथमोपशम सम्यक्त्वके हो जानेके बाद सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके पूरण होनेके अन्तर्मुहूर्त काल तक होता रहता है। यह मिथ्यात्व प्रकृतिकी अपेक्षा विचार है। इतनी विशेषता है कि अनुभागकाण्डकघात अप्रशस्त कर्मोंका ही होता है, क्योकि विशुद्धिके कारण प्रशस्त कर्मोंकी अनुभागवृद्धिको छोडकर उनके अनुभागका घात नही हो सकता।

अब प्रकृतमे स्थितिबन्धापसरण आदिके कालका विचार करते हैं—

ठिदिबधोसरण पुण अधापवत्तादापूरणो त्ति हवे।
ठिदिबधट्ठिदिखंडुक्कीरणकाला समा होंति[1] ॥ ५४ ॥

स्थितिबंधापसरणं पुन अध प्रवृत्तादापूरण इति भवेत्।
स्थितिबंधस्थितिखंडोत्कीरणकालाः समा भवंति ॥

स० टी०—स्थितिबन्धापसरण पुनरध प्रवृत्तकरणप्रथमसमयादारभ्य आगुणसक्रमणपूरणचरमसमय प्रवर्तते यद्यपि प्रायोग्यतालब्धिकाले स्थितिबन्धापसरणप्रारभ कथितस्तथापि तत्र तस्यानवस्थितत्वेन अविवक्षितत्वात् करणपरिणामकार्यस्यावश्यभावेन अवस्थितत्वाच्च प्रवृत्तकरणप्रथमसमयादारभ्य स्थितिबधापसरण विवक्षित स्थितिबन्धापसरणस्थितिकाडकत्कोरणकालौ द्वावप्यतर्मुहूर्तमात्रौ समानावेव ॥ ५४ ॥

१ तम्हि ट्ठिदिखडयद्धा ट्ठिदिबधगद्धा च तुल्ला। क० पा० चू०, जयध० मा० १२, पृ० २६६।

स० च०—बहुरि स्थितिबधापसरण है सो अध प्रवृत्तकरणका प्रथम समयतैं लगाय तिस गुणसक्रमण पूरण होनेका काल पर्यंत हो है। यद्यपि प्रायोग्य लब्धितैं ही स्थितिबधापसरण हो है तथापि प्रायोग्य लब्धिकैं सम्यक्त्व होनेका अनवस्थितपना है, नियम नाही, तातैं ग्रहण न कीया। बहुरि स्थितिबधापसरण काल अर स्थितिकाडकोत्करण काल ए दोऊ समान अतर्मुहूर्त्त-मात्र है॥ ५४॥

विशेष—करणपरिणामोंके कारण उत्तरोत्तर विशुद्धिमे वृद्धि होती जानेके कारण अपूर्वकरणमे लेकर जिस प्रकार एक-एक अन्तर्मुहूर्तकालके भीतर एक-एक स्थितकाण्डकका उत्कीरण नियमसे होने लगता है उसी प्रकार उत्तरोत्तर स्थितिबन्धमे भी अपसरण होने लगता है। इन दोनोका काल समान अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण है। उसमे भी प्रथम स्थितिकाण्डकघात और प्रथम स्थिति-बन्धापसरणमे जितना काल लगता है उससे दूसरे आदि स्थितिकाण्डकघात और स्थितिबन्धाप-सरणोमे उत्तरोत्तर विशेष हीन काल लगता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि स्थितिकाण्डकघात और स्थितिबन्धापसरणोका एक साथ प्रारम्भ होता है और एक साथ समाप्ति होती है। प्रकृतमे उपयोगी विशेष व्याख्यान टीकामे किया ही है।

गुणश्रेणिका स्वरूपनिर्देश—

गुणसेढीदीहत्तमपुव्वदुगादो दु साहियं होदि।
गलिदवसेसे उदयावलिबाहिरदो दु णिक्खेवो ॥५५॥[1]

गुणश्रेणिदीर्घत्वमपूर्वद्विकात् तु साधिकं भवति।
गलितावशेषे उदयावलिबाह्यतस्तु निक्षेप ॥ ५५ ॥

स० टी०—गुणश्रेणिदीर्घत्वमपूर्वकरणानिवृत्तकरणकालाभ्या साधिक भवति २ १ गुणश्रेणिकरणार्थ-

४
२ १
२ ११

मपकृष्टद्रव्यस्य निक्षेपयोग्यस्थित्यायाम इत्यर्थ। अधिकप्रमाण पुनरनिवृत्तिकरणकालसख्यातैकभागमात्र २ १ उदयावलिबाह्यप्रथमसमयादारभ्य गलितावशेषे गुणश्रेण्यायामे अपकृष्टद्रव्यस्य निक्षेपो भवति ॥ ५५ ॥

स० च०—गुणश्रेणिका दीर्घत्व कहिए निषेक निषेकनिका प्रमाणमात्र आयाम सो अपूर्व-करण अनिवृत्तिकरणके कालतैं साधिक है। सो अधिकका प्रमाण अनिवृत्तिकरण कालके सख्या-तवें भागमात्र जानना। सो यहु गुणश्रेणि आयाम गलितावशेष है। समय व्यतीत होतै यहु गुण-

---

१ तम्हि चेवापुव्वकरणस्स पढमसमए आउगवज्जाण गुणसेढिणिक्खेवो वि आढत्तो त्ति भणिद होइ। किमट्ठमाउगस्स गुणसेढिणिक्खेवो णत्थि त्ति चे ? ण, सहावदो चेव, तत्थ गुणसेढिणिक्खेवपवुत्तीए असभवादो। सो वुण गुणसेढिणिक्खेवो केत्तिओ होइ त्ति पुच्छाए अणियट्टिकरणद्धादो अपुव्वकरणद्धादो च विसेसाहियो त्ति णिद्दिट्ठ। एत्थतणअपुव्वाणियट्टिकरणद्धाण समुदिदाण पमाणमतोमुहुत्तमेत्तं होइ। तत्तो विसेसाहिओ एदस्स गुणसेढिणिक्खेवस्सायामो त्ति वुत्त होइ। केत्तियमेत्तो विसेसो ? अणियट्टिअद्धाए सखेज्जदिभागमेत्तो। णवरि गलिदसेसायामेण णिसिंचदि त्ति वत्तव्व। जयध० भा० १२, पृ० २६४-२६५।

श्रेणि आयाम भी घटता होता जाय है। बहुरि उदयावलीतै बाह्य है जातै उदयावलीतै ऊपरि गुणश्रेणि आयामके निषेक है। तिस गुणश्रेणि आयामविषै गुणश्रेणिके अर्थि अपकर्षण कीया द्रव्यका निक्षेपण करिए है ॥ ५५ ॥

अब इहा प्रसग पाइ निक्षेपण अतिस्थापनाका स्वरूपादिक कहिए है। तहा अपकर्षण कीया हूवा वा उत्कर्षण कीया हूवा द्रव्यको जिनि निषेकनिविषै मिलाइए ते निषेक निक्षेपणरूप जानने। जिनि निषेकनिविषै न मिलाइए ते अस्तिस्थापनरूप जानने। सो स्थिति घटाइ उपरिके निषेकनिका द्रव्य नीचले निषेकनिविषै जहा दीजिए तहा अपकर्षण कहिए। बहुरि स्थिति बधाय नीचले निषेकनिका द्रव्यकौ ऊपरिके निषेकनिविषै जहा दीजिए तहा उत्कर्षण कहिए। सो इनकी अपेक्षा निक्षेपण अतिस्थापन निषेकनिका प्रमाण कहिए है ॥५५॥

विशेष—प्रथम समयसे दूसरे समयमे तथा दूसरे समयसे तीसरे समयमे इस प्रकार उत्तरोत्तर गुणश्रेणिनिक्षेपका जितना काल है उसके प्रत्येक समयमे निर्जराके लिये उत्तरोत्तर विवक्षित निषेकोमे अपकर्षित द्रव्यका देना गुणश्रेणिनिक्षेप कहलाता है। यह गुणश्रेणिनिक्षेप गलितावशेष और अवस्थितके भेदसे दो प्रकारका होता है, जिसमें अधस्तन एक-एक निषेकके गलित होते जानेके कारण उत्तरोत्तर गुणश्रेणिनिक्षेपमे एक-एक समय कम होता जाता है उसकी गलितावशेष गुणश्रेणिनिक्षेप सज्ञा है तथा जिसमें अधस्तन एक-एक निषेकके गलित होनेपर ऊपर एक-एक निषेककी वृद्धि होती जाती है उसकी अवस्थित गुणश्रेणिनिक्षेप सज्ञा है। प्रकृतमे गलितावशेष गुणश्रेणिनिक्षेप विवक्षित है। इसका आयाम (दीर्घता) अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके काल से कुछ अधिक है। अधिकका प्रमाण अनिवृत्तिकरणके कालके सख्यातवें भागप्रमाण है। आयुकर्मका गुणश्रेणिनिक्षेप नही होता, शेष सब कर्मोका होता है। उसमें भी जिन प्रवृत्तियोका वर्तमानमें उदय होता है उनका उदय समयसे लेकर निक्षेप होता है और जिन प्रकृतियोका वर्तमानमें उदय नही होता उनका उदयावलिके उपरिम समयसे निक्षेप होता है। प्रकृतमे उदयवाली प्रकृतियोके गुणश्रेणिरूपसे निक्षेपकी विधि इस प्रकार है—

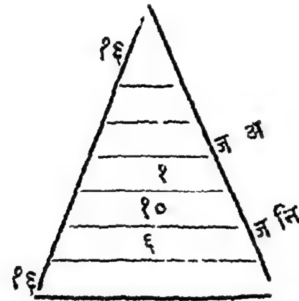
अपूर्वकरणके प्रथम समयमे डेढ़ गुणहानि प्रमाण समयप्रबद्धोको अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे भाजित कर वहाँ लब्ध एक खण्ड प्रमाण द्रव्यका अपकर्षण कर उसमे असख्यात लोकका भाग देनेपर जो एक भाग द्रव्य प्राप्त हो उसे उदयावलिके भीतर गोपुच्छाकाररूपसे निक्षिप्त कर पुन शेष बहुभागप्रमाण द्रव्यको उदयावलिके बाहर निक्षिप्त करता हुआ उदयावलिके बाहर अनन्तर स्थितिमे असख्यात समयप्रबद्धप्रमाण द्रव्यको निक्षिप्त करता है। उससे उपरिम स्थितिमे असख्यातगुणे द्रव्यको निक्षिप्त करता हैं। इस प्रकार अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे विशेष अधिक गुणश्रेणिशीर्षके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर असख्यातगुणित श्रेणिरूपसे निक्षिप्त करता है। पुन गुणश्रेणिशीर्षसे उपरिम अनन्तर स्थितिमे असख्यातगुणा हीन द्रव्य निक्षिप्त करता है। उसके बाद अतिस्थापनावलिके पूर्वकी अन्तिम स्थिति तक उत्तरोत्तर क्रमसे विशेष हीन विशेष हीन द्रव्य का निक्षेप करता है। यह उदयवाली प्रकृतियोकी गुणश्रेणि की अपेक्षा निषेक रचना है। तथा जिन प्रकृतियोका प्रकृतमे उदय न हो उनमे उदयावलिको छोडकर पूर्ववत् गुणश्रेणिनिक्षेप विधि जाननी चाहिए। यहाँ अपूर्वकरणके प्रथम समयमे जैसे गुणश्रेणिनिक्षेपकी विधिका निर्देश किया उसी प्रकार आगे भी द्वितीयादि समयोमे इस विधिको घटित कर लेना चाहिए।

अथ निक्षेपातिस्थापनयो स्वरूपभेदप्रमाणविपयान् कथयति—

णिक्खेवमदित्थावणमवरं समऊणआवलितिभाग ।
तेणूणावलिमेत्तं विदियावलिकादिमणिसेगे[1] ॥५६॥

निक्षेपमतिस्थापनमवरं समयोनमावलित्रिभागम् ।
तेन न्यूनावलिमात्र द्वितीयावलिकादिमनिषेके ॥५६॥

स० टी०—अव्याघातविषये अपकर्षणे द्वितीयावलिप्रथमनिषेके अपकृष्याधो निक्षिप्यमाणे समयो-



नावलित्रिभागसमयाधिको जघन्यनिक्षेपो भवति । तेन न्यूनावलिमात्र जघन्यातिस्थापन भवति । अपकृष्टद्रव्यस्य निक्षेपस्थान निक्षेप , निक्षिप्यतेऽस्मिन्निति निर्वचनात् । तेनातिक्रम्यमाण स्थानमतिस्थापन, अतिस्थाप्यते अतिक्रम्यतेऽस्मिन्निति अतिस्थापन ॥५६॥

अब अव्याघातके विषयमे निक्षेप और अतिस्थापना कहाँ कितनी होती है इसका तीन गाथाओ द्वारा निर्देश करते हैं—

स० च—जहाँ स्थितिकाडकघात न पाइए सो अव्याघात कहिए। तिस विषै प्रथम वर्णन करिए है—द्वितीय आवलीका प्रथम निषेकनिका अपकर्ष करि निक्षेपण करिए तहाँ प्रथम आवलीके निषेकनिविषै समय घाटि आवलीका त्रिभाग एक समय अधिक प्रमाण निषेक तौ निक्षेपरूप है। इनिविषैं सोई द्रव्य दीजिए है। बहुरि अवशेष निषेक अतिस्थापनरूप है। तिनिविषैं सो द्रव्य न दीजिए है। ऐसै यहु जघन्य निक्षेप जघन्य अतिस्थापन जानना। अक सदृष्टिकरि जैसै प्रथमादि सोलह निषेक तौ प्रथमावलीके अर ताके ऊपरि सोलह निषेक द्वितीयावलीके हैं। जहा सतरह्वा निषेकका द्रव्य अपकर्षण करि नीचै दीया तहा सोलहमैं एक घटाए पद्रह ताका त्रिभाग पाच तामैं एक मिलाए छह सो प्रथमादि छह निषेकनिविषैं द्रव्य दीया सो यहु जघन्य निक्षेप है। बहुरि ताके ऊपरि दश निषेकनिविषैं द्रव्य नाही मिलाया सो यहु जघन्य अतिस्थापन है ॥५६॥

---

१ ओकड्डित्ता कध णिक्खिवदि ट्ठिदिं। उदयावलियचरिमसमयअपविट्ठा जा ट्ठिदी सा कथमोकड्डिज्जइ ? तिस्से उदयादि जाव आवलियतिभागो ताव णिक्खेवो, आवलियाए बे-तिभागा अइच्छावणा। क० चू०, जयध० भा० ८, पृ० २४३। कथमावलियाए कदजुम्मसखाए तिभागो घेत्तु सक्किज्जदे ? ण, रूवूण काऊण तिभागीकरणादो। तम्हा समयूणावलियबे-तिभागा अइच्छावणा। समयूणावलियतिभागो रूवाहिओ णिक्खेवो त्ति णिच्छओ कायव्वो। जय ध० भा० ८ पृ० २४४।

एत्तो समऊणावलितिभागमेत्तो तु तं खु णिक्खेवो[1] ।
उवरिं आवलिवज्जिय सगट्ठिदी होदि णिक्खेवो ॥५७॥
अत समयोनावलित्रिभागमात्रस्तु तत्खलु निक्षेप ।
उपरि आवलिर्वाजिता स्वकस्थितिर्भवति निक्षेप ॥५७॥

स० टी०—इत पर द्वितीयावलिद्वितीयनिषेके अपकृष्टे निक्षेप स एव समयोनावलित्रिभाग समयाधिक, अतिस्थापन समयाधिक भवति । तथा द्वितीयावलितृतीयनिषेकेऽप्यपकृष्टे स एव समयोनावलित्रिभाग समयाधिको निक्षेपो भवति । अतिस्थापन तु द्विसमयाधिको भवति । एव समयोत्तरक्रमेण समयोनावलित्रिभागमात्रस्य समयाधिकस्योपरितननिषेकेप्यपकृष्टे स एव समयोनावलित्रिभाग समयाधिको निक्षेपो भवति । अतिस्थापन तु वर्द्धमानावलिमात्र भवति । तदुत्कृष्टातिस्थापनम् । तदुपरि निक्षेपो वर्धते । अतिस्थापन तु आवलिमात्रमवस्थितमेव । एवमुत्तरोत्तरनिषेकेष्वपकृष्टेपु निक्षेपो वर्द्धमान चरमनिषेके अपकृष्टे अथ आवलिमात्रमतिस्थापनम्, तदूनकर्मस्थितिर्निक्षेपो भवति ॥५७॥

स० च—यातै ऊपरि द्वितीयावलीके द्वितीय निषेकका अपकर्षण कीया तहा एक समय अधिक आवलीमात्र याके नीचे निषेक है, तिनिविषै निक्षेप तौ निषेक घाटि आवलीका त्रिभाग एक समय अधिक ही है। अतिस्थापन पूर्वतै एक समय अधिक है। अैसै क्रमतै द्वितीयावलीके तृतीयादि निषेकनिका अपकर्पण होतैं निक्षेप तौ पूर्वोक्त प्रमाण ही अर अतिस्थापन एक एक समय अधिक क्रमतै जानना। तहा समय घाटि आवलीका त्रिभाग एक समय अधिकप्रमाण जे द्वितीयआवलीके निषेक तिनिके ऊपरिवर्ती जे निषेक ताका अपकर्पण किए तहा निक्षेप तौ पूर्वोक्त प्रमाण अर अतिस्थापन आवलीमात्र हो है। सो यहु उत्कृष्ट अतिस्थापन है। अक सदृष्टिकरि जैसैं अठारहवा उगणीसवा वीसवा आदि निषेकनिका द्रव्य अपकर्षणकरि प्रथमादि छह निषेकनिविषैं ही दीजिए है अर ग्यारह बारह तेरह आदि निषेकनिविषैं न दीजिए है। तहा तेईसवा निषेकका द्रव्य अपकषण कीए आदिके छह निषेक तौ निक्षेपरूप हैं। अर सोलह निषेक अतिस्थापन भए सो यहु उत्कृष्ट अतिस्थापन है।

बहुरि इहातै ऊपरिके निषेकनिका द्रव्य अपकर्षण कीए सर्वत्र अतिस्थापन तौ आवलीमात्र ही जानना। अर निक्षेप एक एक समय क्रमतैं बधता जानना। तहा स्थितिके अत निषेकका अपकर्पण होतैं ताके नीचेके आवलीमात्र निषेक तौ अतिस्थापनरूप जानने। तिस विना अवशेष सर्व निषेक निक्षेपरूप जानने। अक सदृष्टिकरि जैसै चौईसवा पचीसवा आदि निषेकनिका अपकर्पण होतै प्रथमादि छह सात आदि एक एक बधता निषेक तौ निक्षेपरूप हो है। अर अतिस्थापनरूप सर्वत्र सोलह ही निषेक हैं। सो यहु क्रम अत निषेकका अपकर्षण पर्यत जानना ॥ ५७ ॥

विशेष—आशय यह है कि जब तक एक आवलि प्रमाण अतिस्थापना नही होती है तब तक तो उत्तरोत्तर अतिस्थापनामे ही एक एक निषेकको वृद्धि होती जाती है निक्षेपका प्रमाण पूर्वोक्त ही

---

१ तदो जा विदिया ट्ठिदी तिस्से वि तत्तिगो चेव णिक्खेवो। अइच्छावणा समयुत्तरा। एवमइच्छावणा समयुत्तरा, णिक्खेवो तत्तिगो चेव उदयावलिबाहिरादो आवलियतिभागतिमट्ठिदि त्ति। तेण पर णिक्खेवो वड्ढइ, अइच्छावणा आवलिया चेव। क० चू०, जयध० भा० ८, पृ॰ [illegible] दि०।

रहता है। किन्तु आगे जहाँ-जहाँ अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण सम्भव तो वहाँ-वहाँ अतिस्थापना तो एक आवलिप्रमाण ही रहती है, मात्र निक्षेप जिस स्थितिका अपकर्षण हुआ उसे न ता उसके नीचे अतिस्थापनावलिको छोडकर शेष स्थितिप्रमाण होता है। इतना विशेष है कि यदि उदय प्रकृतिका अपकर्षण विवक्षित है तो उसके अपकर्षित द्रव्यका निक्षेप उदय समयसे लेकर होगा और यदि अनुदय प्रकृतिका अपकर्षण विवक्षित है तो उसके अपकर्षित द्रव्यका निक्षेप उदयावलिके ऊपरके निषेकोमे ही होगा। इतना विशेष और है कि स्थितिकाण्डकघातके समय अन्तिम फालिका अपकर्षण होते समय यह नियम लागू नही होगा।

उक्कस्सट्ठिदिबंधो समयजुदावलिदुगेण परिहीणो।
ओक्कड्डिदम्मि चरिमे ठिदिम्मि उक्कस्सणिक्खेवो[1] ॥५८॥

उत्कृष्टस्थितिबंध समययुतावलिद्विकेन परिहीन।
उत्कृष्टस्थितौ चरमे स्थितौ उत्कृष्टनिक्षेप. ॥५८॥

स० टी०—चरमनिषेके अपकृष्याधो निक्षिप्यमाणे समययुतावलिद्विकेन परिहीन उत्कृष्टकर्मस्थितिबन्ध सर्वोऽप्युत्कृष्टनिक्षेपो भवति क–४। २ बन्धसमयादारभ्यावलिपर्यंतमपकर्षणरूपोदीरणानुपपत्तेराबाधाकाले अचलावलिरेका त्याज्या। अग्रे चरमनिषेकस्याधोऽतिस्थापनावलिरेका त्याज्या, चरम निषेक एकस्त्याज्य इति समयाधिकावलिद्वयमुत्कृष्टस्थितिबंधे अपनेतव्य। एव गाथासूत्रत्रयेणाव्याघातविषयापकर्षणे जघन्यातिस्थापन, जघन्यनिक्षेप, उत्कृष्टातिस्थापनमुत्कृष्टनिक्षेपश्च व्याख्याता ॥५८॥

स० च०—स्थितिका अन्तनिषेकका द्रव्यकौ अपकर्षणकरि नीचले निषेकनिविषै निक्षेपण करतें तिस अन्त निषेकके नीचै आवलिमात्र निषेक तौ अतिस्थापनरूप है अर समय अधिक दोय आवलीकरि हीन उत्कृष्ट स्थितिमात्र निक्षेप हो है सो यहु उत्कृष्ट निक्षेप जानना। इहा बंध भए पीछै आवलि कालपर्यंत तो उदीरणा होइ नाही तातैं एक आवली तौ आबाधा विषै गई अर एक आवली अतिस्थापनरूप रही अर अंत निषेकका द्रव्य ग्रह्या ही है, तातै उत्कृष्ट स्थितिविषैं दोय आवली एक समय घटाया है। अंकसंदृष्टि करि जैसैं उत्कृष्ट स्थिति हजार समय तहा सोलह समय तौ आबाधाविषैं गये अर नवसै चौरासी निषेक हैं तहा अंत निषेकका द्रव्य अपकर्षण करि प्रथमादि नवसै सतसठि निषेकनिविषै दीया सो यहु उत्कृष्ट निक्षेप है। अर ताके ऊपरि सोलह निषेकनिविषै न दीया सो यहु अतिस्थापनावली है॥ ५८॥

विशेष—स्थितिकाण्डकघातमे अन्तिम फालिके पतनको छोडकर जो अपकर्षण होता है उसकी अव्याघात विषयक अपकर्षण सज्ञा है। समझो किसी जीवने मिथ्यात्वका सत्तर कोडाकोडी सागरोपम उत्कृष्ट स्थितिबन्ध किया। बन्धको प्राप्त नवीन द्रव्य एक आवलि काल तक सकल करणोके अयोग्य होता है इस नियमके अनुसार उसकी एक आवलि काल तक उदीरणा नही हुई। तदनन्तर समयमे अन्तिम निषेकके द्रव्यकी अपकर्षणपूर्वक उदीरणा होनेपर अन्तिम निषेकके नीचे

1 उक्कस्सट्ठिदि बंधिय बंधावलियं बोलाविय अग्गट्ठिदिमोकड्डिऊणावलियमेत्तमइच्छाविय उदयपज्जत्त णिक्खिवमाणस्स समयाहियदोआवलियूणकम्मट्ठिदिमेत्तुक्कस्सणिक्खेवसंभवोपलंभादो। जय० भा० ८, पृ० २५२।

एत्तो समऊणावलितिभागमेत्तो तु त खु णिक्खेवो[1] ।
उवरिं आवलिवज्जिय सगट्ठिदी होदि णिक्खेवो ॥५७॥
अत समयोनावलित्रिभागमात्रस्तु तत्खलु निक्षेप ।
उपरि आवलिवर्जिता स्वकस्थितिर्भवति निक्षेप ॥५७॥

स० टी०—इत पर द्वितीयावलिद्वितीयनिपेके अपकृष्टे निक्षेप स एव समयोनावलित्रिभाग समयाधिक, अतिस्थापन समयाधिक भवति । तथा द्वितीयावलितृतीयनिपेकेऽप्यपकृष्टे स एव समयोनावलित्रिभाग समयाधिको निक्षेपो भवति । अतिस्थापन तु द्विसमयाधिको भवति । एव समयोत्तरक्रमेण समयोनावलित्रिभागमात्रस्य समयाधिकस्योपरितननिपेकेऽप्यपकृष्टे स एव समयोनावलित्रिभाग समयाधिको निक्षेपो भवति । अतिस्थापन तु वर्द्धमानावलिमात्र भवति । तदुत्कृष्टातिस्थापनम् । तदुपरि निक्षेपो वर्धते । अतिस्थापन तु आवलिमात्रमवस्थितमेव । एवमुत्तरोत्तरनिपेकेष्वपकृष्टेषु निक्षेपो वर्द्धमान चरमनिपेके अपकृष्टे अत्र आवलिमात्रमतिस्थापनम्, तदूनकर्मस्थितिर्निक्षेपो भवति ॥५७॥

स० च—यातै ऊपरि द्वितीयावलीके द्वितीय निपेकका अपकर्पण कीया तहा एक समय अधिक आवलीमात्र याके नीचे निपेक है, तिनिविषैं निक्षेप तौ निपेक घाटि आवलीका त्रिभाग एक समय अधिक ही है । अतिस्थापन पूर्वतै एक समय अधिक है । अैसैं क्रमतै द्वितीयावलीके तृतीयादि निषेकनिका अपकर्पण होतैं निक्षेप तौ पूर्वोक्त प्रमाण ही अर अतिस्थापन एक एक समय अधिक क्रमतै जानना । तहा समय घाटि आवलीका त्रिभाग एक समय अधिकप्रमाण जे द्वितीयआवलीके निषेक तिनिके ऊपरिवर्ती जे निपेक ताका अपकर्पण किए तहा निक्षेप तौ पूर्वोक्त प्रमाण अर अतिस्थापन आवलीमात्र हो है । सो यहु उत्कृष्ट अतिस्थापन है । अक सदृष्टिकरि जैसै अठारहवा उगणीसवा वीसवा आदि निपेकनिका द्रव्य अपकर्पणकरि प्रथमादि छह निषेकनिविषै ही दीजिए है अर ग्यारह बारह तेरह आदि निषेकनिविषै न दीजिए है । तहा तेईसवा निषेकका द्रव्य अपकषण कीए आदिके छह निषेक तौ निक्षेपरूप है । अर सोलह निपेक अतिस्थापन भए सो यहु उत्कृष्ट अतिस्थापन है ।

बहुरि इहातै ऊपरिके निषेकनिका द्रव्य अपकर्षण कीए सर्वत्र अतिस्थापन तौ आवलीमात्र ही जानना । अर निक्षेप एक एक समय क्रमतै बधता जानना । तहा स्थितिके अत निषेकका अपकर्षण होतै ताके नीचेके आवलीमात्र निपेक तौ अतिस्थापनरूप जानने । तिस विना अवशेप सर्व निषेक निक्षेपरूप जानने । अक सदृष्टिकरि जैसै चौईसवा पचीसवा आदि निषेकनिका अपकर्षण होतै प्रथमादि छह सात आदि एक एक बधता निषेक तौ निक्षेपरूप हो है । अर अतिस्थापनरूप सर्वत्र सोलह ही निपेक है । सो यहु क्रम अत निषेकका अपकर्षण पर्यंत जानना ॥ ५७ ॥

विशेष—आशय यह है कि जब तक एक आवलि प्रमाण अतिस्थापना नही होती है तब तक तो उत्तरोत्तर अतिस्थापनामे ही एक एक निषेककी वृद्धि होती जाती है निक्षेपका प्रमाण पूर्वोक्त ही

---

१ तदो जा विदिया ट्ठिदी तिस्से वि तत्तिगो चेव णिक्खेवो । अइच्छावणा समयुत्तरा । एवमइच्छावणा समयुत्तरा, णिक्खेवो तत्तिगो चेव उदयावलिबाहिरादो आवलियतिभागतिमट्ठिदि त्ति । तेण पर णिक्खेवो वड्ढइ, अइच्छावणा आवलिया चेव । क० चू०, जयध० भा० ८, पृ २४४ आदि० ।

रहता है। किन्तु आगे जहाँ-जहाँ अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण सम्भव तो वहाँ-वहाँ अतिस्थापना तो एक आवलिप्रमाण ही रहती है, मात्र निक्षेप जिस स्थितिका अपकर्षण हुआ उसे तथा उसके नीचे अतिस्थापनावलिको छोडकर शेष स्थितिप्रमाण होता है। इतना विशेष है कि यदि उदय प्रकृतिका अपकर्षण विवक्षित है तो उसके अपकर्षित द्रव्यका निक्षेप उदय समयसे लेकर होगा और यदि अनुदय प्रकृतिका अपकर्षण विवक्षित है तो उसके अपकर्षित द्रव्यका निक्षेप उदयावलिके ऊपरके निषेकोमे ही होगा। इतना विशेष और है कि स्थितिकाण्डकघातके समय अन्तिम फालिका अपकर्षण होते समय यह नियम लागू नही होगा।

उक्कस्सट्ठिदिबंधो समयजुदावलिदुगेण परिहीणो।
ओक्कड्डिदम्मि चरिमे ठिदिम्मि उक्कस्सणिक्खेवो ॥५८॥

उत्कृष्टस्थितिबंध समययुतावलिद्विकेन परिहीन।
उत्कृष्टस्थितौ चरमे स्थितौ उत्कृष्टनिक्षेप ॥५८॥

स० टी०—चरमनिषेके अपकृष्याधो निक्षिप्यमाणे समययुतावलिद्विकेन परिहीन उत्कृष्टकर्मस्थितिबन्ध[1] सर्वोऽप्युत्कृष्टनिक्षेपो भवति क-४। २ बंधसमयादारभ्यावलिपर्यंतमपकर्षणरूपोदीरणानुपपत्तेराबाधाकाले अचलावलिरेका त्याज्या। अग्रे चरमनिषेकस्याधोऽतिस्थापनावलिरेका त्याज्या, चरमनिषेक एकस्त्याज्य इति समयाधिकावलिद्वयमुत्कृष्टस्थितिबधे अपनेतव्य। एव गाथासूत्रत्रयेणाव्याघातविषयापकर्षणे जघन्यातिस्थापन, जघन्यनिक्षेप, उत्कृष्टातिस्थापनमुत्कृष्टनिक्षेपश्च व्याख्याता ॥५८॥

स० च०—स्थितिका अन्तनिषेकका द्रव्यकौ अपकर्षणकरि नीचले निषेकनिविषै निक्षेपण करतें तिस अन्त निषेकके नीचै आवलिमात्र निषेक तौ अतिस्थापनरूप है अर समय अधिक दोय आवलीकरि हीन उत्कृष्ट स्थितिमात्र निक्षेप हो है सो यहु उत्कृष्ट निक्षेप जानना। इहा बंध भए पीछें आवलि कालपर्यंत तो उदीरणा होइ नाही तातैं एक आवली तौ आबाधा विषै गई अर एक आवली अतिस्थापनरूप रही अर अंत निषेकका द्रव्य ग्रह्या ही है, तातै उत्कृष्ट स्थितिविषैं दोय आवली एक समय घटाया है। अंकसंदृष्टि करि जैसें उत्कृष्ट स्थिति हजार समय तहा सोलह समय तौ आबाधाविषैं गये अर नवसै चौरासी निषेक है तहा अंत निषेकका द्रव्य अपकर्षण करि प्रथमादि नवसैं सतसठि निषेकनिविषैं दीया सो यहु उत्कृष्ट निक्षेप है। अर ताके ऊपरि सोलह निषेकनिविषैं न दीया सो यहु अतिस्थापनावली है॥ ५८॥

विशेष—स्थितिकाण्डकघातमे अन्तिम फालिके पतनको छोडकर जो अपकर्षण होता है उसकी अव्याघात विषयक अपकर्षण सज्ञा है। समझो किसी जीवने मिथ्यात्वका सत्तर कोडाकोडी सागरोपम उत्कृष्ट स्थितिबन्ध किया। बन्धको प्राप्त नवीन द्रव्य एक आवलि काल तक सकल करणोके अयोग्य होता है इस नियमके अनुसार उसकी एक आवलि काल तक उदीरणा नही हुई। तदनन्तर समयमे अन्तिम निषेकके द्रव्यकी अपकर्षणपूर्वक उदीरणा होनेपर अन्तिम निषेकके नीचे

1 उक्कस्सट्ठिदिं बधिय बधावलिय बोलाविय अग्गट्ठिदिमोकड्डिऊणावलियमेत्तमइच्छाविय उदयपज्जंत णिक्खिवमाणस्स समयाहियदोआवलियूणकम्मट्ठिदिमेत्तुक्कस्सणिक्खेवस्स भवोपलभादो। जय० भा० ८, पृ० २५२।

एक आवलिप्रमाण द्रव्यको अतिस्थापित कर उसके नीचे उदय समय तक एक समय दो आवलि कम सत्तर कोडा-कोडी सागरोपमप्रमाण निषेकोंमें उसका निक्षेप करनेपर उक्त प्रमाण निक्षेप प्राप्त होता है। इसी प्रकार अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिके अनुसार सर्वत्र यथासम्भव उत्कृष्ट निक्षेप घटित कर लेना चाहिए ॥ ५८ ॥

व्याघातविषयक उत्कृष्ट अतिस्थापना और उत्कृष्ट निक्षेपका स्पष्टीकरण—

उक्कस्सट्ठिदि बंधिय मुहुत्तअंतेण सुज्झमाणेण ।
इगिकंडएण घादे तम्हि य चरिमस्स फालिस्स ॥५९॥

चरिमणिसेयोक्कट्टे जेट्ठमदित्थावण इद होदि ।
समयजुदंतोकोडाकोडि विणुक्कस्सकम्मठिदी[1] ॥६०॥

उत्कृष्टस्थिति बधयित्वा मुहूर्तान्त शुद्धचता ।
एककाडकेन घाते तस्मिन् च चरमस्य फाले ॥५९॥

चरमनिषेकापकर्षे ज्येष्ठमतिस्थापनमिद भवति ।
समययुतान्त.कोटोकोटि विना उत्कृष्टकर्मस्थिति ॥६०॥

स० टी०—केनचिज्जीवेन कर्मोत्कृष्टस्थिति बद्ध्वा क्षयोपशमलब्धिमहिम्ना विशुध्यता बधावलिमतिवाह्यातर्मुहुर्तेनैककाडकघाते प्रतिसमयमसख्येयगुणितफाल्यपनयने क्रियमाणे तस्मिश्चरमफाल्याश्चरमनिषेके अपकृष्याधोनिक्षिप्यमाणे समययुतात कोटीकोटिरहितकर्मोत्कृष्टस्थितिर्व्याघातविषयापकर्षणे उत्कृष्टातिस्थापन भवति, उपरिमचरमनिषेकसमय अधोनिक्षेपस्थितिरत कोटीकोटी च कर्मोत्कृष्टस्थितौ वर्जनीये । तत समययुतात-कोटीकोटिरहिता कर्मोत्कृष्टस्थितिर्व्याघातविषये उत्कृष्टमतिस्थापनमिति सिद्ध ॥५९–६०॥

स० च०—अब जहाँ स्थितिकाडकघात होइ सो व्याघात कहिए। तहाँ कहिए है—कोई जीव उत्कृष्ट स्थिति बाधि पीछे क्षयोपशम लब्धिकरि विशुद्ध भया तब बधी थी जो स्थिति तीहिविषै आबाधारूप बधावलीको व्यतीत भए पीछे एक अतर्मुहूर्त कालकरि स्थितिकाडकका घात कीया तहाँ जो उत्कृष्ट स्थिति बाधी थी तिसविषै अन्त कोटाकोटी सागरप्रमाण स्थिति अवशेष राखि अन्य सर्व स्थितिका घात तिस काडककरि हो है। तहाँ काडकविषै जेती स्थिति घटाई ताके सर्व निषेकनिका परमाणूनिकौ समय समय प्रति असख्यातगुणा क्रम लीए अवशेष राखी स्थितिविषै अतर्मुहूर्त पर्यंत निक्षेपण करिए है। सो समय समयविषै जो द्रव्य निक्षेपण कीया सोई फालि है। तहा अतकी फालिविषैं स्थितिके अन्त निषेकका जो द्रव्य ताकौ ग्रहि अवशेष राखी स्थितिविषै दीया तहाँ एक समय अधिक अत कोटाकोटी सागरकरि हीन उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण उत्कृष्ट अति-

---

१ बाधादेण अइच्छावणा एक्का, जेणावलिया अदिरित्ता होइ। त जहा—ट्ठिदिघाद करेंतेण खडयमागाइद । तत्थ ज पढमसमए उक्कीरदि पदेसग्ग तस्स पदेसग्गस्स आवलियाए अइच्छावणा । एव जाव दुचरिमसमयअणुक्किरणखडग ति । चरिमसमए जा खडयस्स अग्गट्ठिदी तिस्से अइच्छावणा खडय समयूण । क० चू०, जयध० भाग ८, पृ० २४८-२४९ ।

स्थापन हो है, जातैं इसविषै सो द्रव्य न दीया। इहां उत्कृष्ट स्थितिविषै अन्त कोटाकोटी सागरमात्र स्थिति अवशेष रही तिसविषै द्रव्य दीया सो यहु निक्षेपरूप भया तातैं यहु घटाया अर एक अन्त निषेकका द्रव्य ग्रह्या ही है तातैं एक समय घटाया है। अंक संदृष्टि करि जैसें हजार समयकी स्थितिविषैं काडक घातकरि सौ समयकी स्थिति राखी तहां हजारवां समयसम्बन्धी निषेकका द्रव्यकौ आदिके सौ समयसम्बन्धी निषेकनिविषै दीया तहाँ आठसै निन्याणवै मात्र समय उत्कृष्ट अतिस्थापन हो है॥ ५९-६०॥

विशेष—स्थितिकाण्डकघातमें अन्तिम फालिके पतनके समय जो अपकर्षण होता है उसकी व्याघातविषयक अपकर्षण संज्ञा है। उसकी अपेक्षा निक्षेप अन्त:कोड़ाकोड़ी स्थिति प्रमाण है और अतिस्थापना एक समय कम स्थितिकाण्डकप्रमाण है। जिन स्थितियोंमें अपकर्षित द्रव्य दिया जाता है उनकी निक्षेप संज्ञा है तथा निक्षेपरूप स्थितियोंके ऊपर तथा जिस स्थितिके द्रव्यका अपकर्षण होता है उसके नीचे जिन मध्यकी स्थितियोंमें अपकर्षित द्रव्य नहीं दिया जाता उनकी अतिस्थापना संज्ञा है। स्थितिकाण्डकघातमें उपान्त्य फालिके पतन होने तक तो अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण ही रहती है। परन्तु अन्तिम फालिके पतनके समय वह एक समय कम स्थिति-काण्डकप्रमाण प्राप्त होती है, क्योंकि उत्कृष्ट स्थितिके अन्तिम निषेकके द्रव्यका अपकर्षण विवक्षित है, अतः अन्तिम फालिका स्थितिकाण्डकगत स्थितियोंमें निक्षेप नहीं होता। स्थितिकाण्डकके नीचे जो अन्त:कोड़ाकोड़ी प्रमाणस्थिति निक्षेपरूप है उसीमें अन्तिम फालि सहित उसका निक्षेप होकर स्थितिकाण्डकगत समस्त स्थितिका उस समय समग्ररूपसे घात हो जाता है यह उक्त दोनों गाथाओंका तात्पर्य है। यहाँ उत्कृष्ट स्थितिके अन्तिम निषेकका अपकर्षण किया, इसलिए वह अतिस्थापनारूप नहीं है तथा नीचेकी अन्त:कोड़ाकोड़ी प्रमाणस्थिति निक्षेपरूप है, अतः वह अतिस्थापनारूप नहीं है। अतः एक समय सहित अन्त:कोड़ाकोड़ी प्रमाणस्थितिको छोड़कर शेष सब स्थिति अतिस्थापनारूप जाननी चाहिए।

आगे ६७वीं गाथा तक उत्कर्षणका विचार करते हैं—

सत्तग्गट्ठिदिं बंधे आदिट्ठिदुक्कड्डणे जहण्णेण।
आवलि-असंखभागं तेत्तियमेत्तेव णिक्खिवदि॥६१॥

सत्ताग्रस्थितिबन्धे आदिस्थित्युत्कर्षणे जघन्येन।
आवल्यसंख्यभागं तावन्मात्रे एव निक्षिपति॥६१॥

---

१ वाघादेण कध? जइ सतकम्मादो बंधो समयुत्तरो तिस्से ट्ठिदीए णत्थि उक्कड्डणा। जइ सतकम्मादो बंधो दुसमयुत्तरो तिस्से वि सतकम्मअग्गट्ठिदीए णत्थि उक्कड्डणा। एत्थ आवलियाए असंखेज्जदिभागो जहण्णिया अइच्छावणा। जदि जत्तिया अइच्छावणा तत्तिएण अब्भहिओ सतकम्मादो बंधो तिस्से वि सतकम्मअग्गट्ठिदीए णत्थि उक्कड्डणा। अण्णो आवलियाए असंखेज्जदिभागो जहण्णओ णिक्खेवो। जइ जहण्णियाए अइच्छावणेण जहण्णएण च णिक्खेवेण एत्तियमेत्तेण सतकम्मादो अदिरित्तो बंधो सा सतकम्मअग्गट्ठिदी उक्कड्डिज्जदि। क० चू०, जयध० भाग ८, पृ० २५७-२५९।

सं० टी०—अव्याघातव्याघातविषये कर्मस्थितेरुत्कर्षणे प्राक्तनसत्त्वस्य अग्रस्थितिचरमनिषेके बध्ये तत्कालबध्यमाने समयप्रबद्धे तत्समानस्थितेरुपरि आवल्यसंख्येयभागमतिस्थाप्यातिक्रम्य तावन्मात्रे आवल्यसंख्येयभागमात्रे एव निक्षिपति इति जघन्यातिस्थापनं जघन्यनिक्षेपश्च कथितौ। उत्कर्षणे आभ्यां स्तोकयोरतिस्थापननिक्षेपयोरभावात् ॥६१॥

सं० चं०—अव्याघातविषै वा व्याघातविषै कर्मस्थितिका उत्कर्षण होत विधान कहिए है—पूर्वं जे सत्तारूप निषेक थे तिनिविषै जो अंतका निषेक था ताका द्रव्यकौ उत्कर्षण करनेका समयविषै बंध्या जो समयप्रबद्ध तीहिविषै जो पूर्वं सत्ताका अंत निषेक जिस समय उदय आवने योग्य है तिस समयविषै उदय आवने योग्य जो बंध्या समयप्रबद्धका निषेक तिस निषेकके ऊपरिवर्ती आवलीका असंख्यातवा भागमात्र निषेकनिकौं अतिस्थापनरूप राखि तिनके ऊपरिवर्ती जे तितने ही आवलीके असंख्यातवा भागमात्र निषेक तिनिविषै तिस सत्ताका अंत निषेकका द्रव्यकौ निक्षेपण करिए है। यहु उत्कर्षणविषै जघन्य अतिस्थापन अर जघन्य निक्षेप जानना। अंकसंदृष्टिकरि जैसै पूर्व सत्ताका अंत निषेक जिस समय उदय होइगा तिस समयविषै अब बंध्या समयप्रबद्धका पचासवा निषेक उदय होगा। बहुरि तिस सत्ताका अंत निषेकका द्रव्यकौ ग्रहि आवलीका प्रमाण सोलह ताका असंख्यातवा भाग च्यारि सो पचासवा निषेकके ऊपरि इक्यावनवा आदि च्यारि निषेकनिकौं अतिस्थापनरूप राखि पचावनवा आदि च्यारि निषेकनिविषै निक्षेपण करिए है ॥ ६१ ॥

विशेष—विवक्षित प्राक्तन सत्कर्मसे उसी कर्मका नवीन स्थितिबन्ध अधिक होनेपर बंधके समय उसके निमित्तसे सत्कर्मकी स्थितिको बढाना उत्कर्षण कहलाता है। यह व्याघात और अव्याघातके भेदसे दो प्रकारका है। जहाँ सत्कर्मसे नवीन स्थितिबन्ध एक आवलि और एक आवलिके असंख्यातवें भाग अधिकके भीतर होनेके कारण अतिस्थापना एक आवलिसे कम पायी जाती है वहाँ होनेवाले उत्कर्षणकी व्याघातविषयक उत्कर्षण संज्ञा है। और जहाँपर एक आवलिप्रमाण अतिस्थापनाके साथ निक्षेप कमसे कम आवलिके असंख्यातवें भागके होनेमें कोई व्याघात नहीं पाया जाता है वहाँ होनेवाले उत्कर्षणकी अव्याघातविषयक उत्कर्षण संज्ञा है। यहाँ ६१वीं गाथामें व्याघातविषयक उत्कर्षणका उल्लेख किया गया है। सत्त्वस्थितिके अग्रभागसे आवलिके दो असंख्यातवें भागोंसे एक समय कम भी यदि नवीन स्थितिबन्ध हो तो सत्त्वस्थितिके अग्रनिषेकके यथायोग्य कर्मदलका उत्कर्षण नहीं होता। हाँ यदि सत्त्वस्थितिके अग्रभागसे आवलिके दो असंख्यातवें भागोंप्रमाण नवीन स्थितिबन्ध अधिक हो तो प्रथम आवलिके असंख्यातवें भागको अतिस्थापनारूपसे स्थापितकर द्वितीय आवलिके असंख्यातवें भागमें सत्त्वस्थितिके अग्रनिषेकका उत्कर्षण बन जाता है यह व्याघातविषयक उत्कर्षणका प्रथम भेद है।

उदाहरण—सत्त्व स्थितिका अन्तिम निषेक ५० संख्याक, नवीनबन्धका प्रमाण ५८, आवलिका असंख्यातवा भाग ४।

अतः सत्त्वस्थितिके ५०वें अन्तिम निषेकका उत्कर्षण होकर उसका निक्षेप नवीन बन्धके ५५से ५८ तक चार निषेकोंमें होगा। ५१ से ५४ तकके चार निषेक अतिस्थापनारूप रहेंगे।

तत्तोदित्थावणगं वड्ढदि जावावली तदुक्कस्सं।
उवरीदो णिक्खेओ वरं तु बंधिय ठिदिं जेट्ठं ॥६२॥

वोलिय व धावलिय ओकड्डिय उदयदो दु णिक्खिविय ।
उवरिमसमये विदियावलिपढमुक्कट्टणे जादे ॥६३॥

तक्कालवज्झमाणे वारट्ठदीए अदित्थियाबाह ।
समयजुदावलियावाहूणो उक्कस्सठिदिबंधो ॥६४॥

ततोऽतिस्थापनकं वर्धते यावदावलिस्तदुत्कृष्टम् ।
उपरितो निक्षेपो वरं तु बधयित्वा स्थितिं ज्येष्ठां ॥६२॥

अपलाप्य बधावलिकामपकर्ष्य उदयतस्तु निक्षिप्य ।
उपरितनसमये द्वितीयावलिप्रथमोत्कर्षणे जाते ॥६३॥

तत्कालबध्यमाने वरस्थित्या अतिस्थाप्यावाधा ।
समययुतावलिकाबाधोन. उत्कृष्टस्थितिबन्ध' ॥६४॥

स० टी०—तत जघन्यातिस्थापनात् समयोत्तरक्रमेण अतिस्थापन वर्धते यावदावलिमात्रमतिस्थापन भवति । तस्यातिस्थापनस्योत्कर्प वर उत्कृष्टो निक्षेपश्च उपरि वक्ष्यते । तत्कथ ज्येष्ठामुत्कृष्टा स्थितिं वद्ध्वा तदाबाधाया बधावलिमतिवाह्य चरमनिपेकमपकृष्य उदयनिपेकात्प्रभृति उपरि समयाधिकावलिं मुक्त्वा सर्वत्र निक्षिप्य उपरितनसमये अपकर्पणसमयानतरसमये प्राक्निक्षिप्तद्वितीयावलिप्रथमनिपेकस्योत्कर्पण भवति । तस्मिन्नुत्कर्पणे जाते तत्कालबध्यमाने उत्कृष्टस्थितिके समयप्रबद्धे समयाधिकावलिन्यूनामाबाधामतिक्रम्य प्रथमनिपेकात्प्रभृति उपरि समयाधिकावलिवर्जितोत्कृष्टकर्मस्थितौ उत्कृष्टद्रव्य निक्षिपतीति समयाधिकावलिन्यूना आबाधा उत्कृष्टातिस्थापन । समयाधिकावलियुक्ताबाधान्यूना उत्कृष्टकर्मस्थितिरुत्कृष्टनिक्षेपो भवति । अपकृष्टद्रव्यस्याधो निक्षिप्तस्य यावती शक्तिस्थितिरस्ति तावत्पर्यंत स्थित्युत्कर्पण घटते ॥६२-६४॥

स० च०—तिस पूर्व सत्त्वके अत निपेकतै लगाय ते नीचेके निपेक तिनिका उत्कर्पण होतै निक्षेप तौ पूर्वोक्त प्रमाण ही रहै अर अतिस्थापन क्रमतै एक एक समय बधता होइ सो यावत् आवलीमात्र उत्कृष्ट अतिस्थापन होइ तावत् यहु क्रम जानना । अक सदृष्टिकरि सत्ताका अत निपेकके नीचला उपात निषेक जिस समयविषै उदय होगा तिस समय हाल बध्या समयप्रबद्धका गुणचासवाँ निपेक उदय होगा सो तिस उपात निषेकका द्रव्य उत्कर्पण करि ताकौ पचासवा आदि पाच निषेकनिकौ अतिस्थापनरूप राखि तिनके ऊपरि पचावनमा आदि च्यारि निपेकनिविषै निक्षेपण करिए है । बहुरि ऐसैं ही उपात निपेकतै नीचले निपेकनिका द्रव्य उत्कर्षण करि बध्या समयप्रबद्धका क्रमतैं गुणचासवा अठतालीसवा आदितै लगाय छह सात आदि एक एक बधते निपेक अतिस्थापनरूप राखि पचावनवा आदि च्यारि निपेकनिविपैं निक्षेपण करिए है । तहा हाल

---

१ तदो समयुत्तरे बधे णिक्खेवो तत्तिओ चेव, अइच्छावणा वड्ढदि । एव ताव अइच्छावणा वड्ढइ जाव अइच्छावणा आवलिया जादा त्ति । तेण पर णिक्खेवो वड्ढइ जाव उक्कस्सओ णिक्खेवो त्ति । उक्कस्सओ णिक्खेवो को होइ ? जो उक्कस्सिय ट्ठिदिं वधियूणावलियमदिक्कतो तमुक्कस्सयट्ठिदिमोकड्डियूण उदयावलिय-बाहिराए विदियाए ट्ठिदीए णिक्खिवदि । पुण से काले उदयावलियबाहिरे अणतरट्ठिदिं पावेहिदि त्ति त पदेसग्ग-मुक्कड्डियूण समयाहियाए आवलियाए ऊणियाए अग्गट्ठिदीए णिक्खिवदि । एस उक्कस्सओ णिक्खेवो । क० चू०, जयध० भाग ८, पृ० २५९-२६१ ।

बध्या समयप्रबद्धका अठतीसवा निषेक जिस समयविषै उदय होगा तिस समयविषै उदय आवने योग्य जो पूर्व सत्ताका निषेक ताका द्रव्यकौ उत्कर्षण करतै हाल बध्या समयप्रबद्धका गुणतालीसवा आदि सोलह निषेकनिकौ अतिस्थापनरूप राखै है सो यहु उत्कृष्ट अतिस्थापन है। इहा पर्यंत पचावनवा आदि च्यारि निषेकनिविषै निक्षेपण जानना। बहुरि आवलीमात्र अतिस्थापन भए पीछै ताके नीचे नीचेके निषेकनिका उत्कर्षण करतै अतिस्थापन तौ आवलीमात्र ही रहै है अर निक्षेप क्रमतै एक एक निषेककरि वधता हो है। अक सदृष्टिकरि जैसै हाल वध्या समयप्रबद्धका सैतीसवा निषेक जिस समयविषै उदय होगा तिस समयविषै उदय आवने योग्य सत्ताके निषेककौ उत्कर्षण होतै अठतीसवा आदि सोलह निषेक अतिस्थापनरूप हो हैं। चौवनवा आदि पाच निषेक निक्षेपरूप हो है। बहुरि ताके नीचेके निषेकका उत्कर्षण होतै सैतीसवा आदि सोलह निषेक अतिस्थापनरूप हो हैं तरेपनवा आदि छह निषेक निक्षेपरूप हो है। ऐसै अतिस्थापन तितना ही अर निक्षेप क्रमतै वधता जानना। अर उत्कृष्ट निक्षेप कहा होइ ? सो कहिए है—

कोई जीव पहिलै उत्कृष्ट स्थिति बाधि पीछै ताकी आवाधाविषै एक आवली गमाइ ताके अनतरि तिस समयप्रबद्धका जो अतका निषेक था ताका अपकर्षण कीया तहा ताके द्रव्यकौ अतके एक समय अधिक आवलीमात्र निषेकनिविषै तौ न दीया अवशेष वर्तमान समयविषै उदय योग्य निषेकतैं लगाय सर्व निषेकनिविषै दीया ऐसै पहिलै अपकर्षण क्रिया करी। बहुरि ताके उपरिवर्ती अनतर समयविषै पूर्वै अपकर्षण क्रिया करतै जो द्रव्य उदयावलीका प्रथम निषेकविषै दीया था ताका उत्कर्षण कीया तब ताके द्रव्यकौ तिस उत्कर्षण करनेका समयविषै बध्या जो उत्कृष्ट स्थिति लीए समयप्रबद्ध ताके आबाधाकौ उल्लघि पाइए है जे प्रथमादि निषेक तिनिविषै अतके समय अधिक आवलीमात्र निषेक छोडि अन्य सर्व निषेकनिविषैं निक्षेपण करिए है। इहाँ एक समय अधिक आवलीकरि हीन जो आबाधाकाल तीहि प्रमाण तौ अतिस्थापन जानना। काहेतै ? सो कहिए है—

जिस द्वितीयावलीका प्रथम निषेकका उत्कर्षण कीया सो तौ वर्तमान समयतै लगाइ एक एक समय अधिक आवलीकाल भए उदय आवने योग्य है। अर जिनि निषेकनिविषै निक्षेपण कीया ते वर्तमान समयतै लगाय बधी स्थितिका आबाधा काल भए उदय आवने योग्य हैं सो इनि दोऊनिके बीचि एक समय अधिक आवली करि हीन आबाधाकालमात्र अतराल भया। द्वितीयावलिके प्रथम निषेकका द्रव्यकौ बीचिमै इतने निषेक उल्लघि ऊपरिके निषेकनिविषैं दीया सोई इहा अतिस्थापनका प्रमाण जानना। बहुरि इहा एक समय अधिक आवलीकरि युक्त जो आबाधाकाल तीहि करि हीन जो उत्कृष्ट कर्मस्थिति तीहि प्रमाण उत्कृष्ट निक्षेप जानना। काहेतै ? सो कहिए है—

एक समय अधिक आवलीमात्र तौ अतके निषेकनिविषैं न दीया अर आबाधाकाल विषै निषेक रचना है ही नाही तातै उत्कृष्ट स्थितिविषै इतना घटाया। इहा इतना जानना—अपकर्षण द्रव्यका नीचले निषेकनिविषै निक्षेपण कीया ताका जो उत्कर्षण होइ तौ जेती बाकी शक्तिस्थिति होइ तहा पर्यंत ही उत्कर्षण होइ ऊपरि न होइ। शक्तिस्थिति कहा ? सो कहिए है—

विवक्षित समयप्रबद्धका जो अतका निषेक ताकी तौ सर्व ही स्थिति व्यक्तिस्थिति है।

बहुरि ताके नीचे नीचेके निषेकनिके क्रमतैं एक समय घाटि, दोय समय घाटि आदि स्थिति व्यक्ति-स्थिति है। बहुरि प्रथमादि निषेकनिकै सर्व ही स्थिति शक्तिस्थिति है। सो उत्कर्षण कीया द्रव्यकौं जेती शक्तिस्थिति होइ तहां पर्यंत ही दीजिए है। बहुरि पूर्वै निक्षेप अतिस्थापन कह्या ताका अंक सदृष्टिकरि स्वरूप दिखाएं है—

जैसै पूर्वै समयप्रबद्ध हजार समयकी स्थिति लीए बध्या तामैं सोलह समय व्यतीत भए अन्त निषेकका द्रव्यकौं अपकर्षण करि आबाधाके ऊपरि तिस स्थितिके जे निषेक थे तिनविषै सतरह निषेक अन्तके छोडि अन्य सर्व निषेकनिविषै द्रव्य दीया। बहुरि ताके अनंतर समयविषै जो तिस अंत निषेकका द्रव्य जो उत्कर्षण करनेका समयतै लगाय सतरह्वां समयविषै उदय आवने योग्य ऐसा द्वितीयावलीका प्रथम निषेक तिसविषै दीया था ताका उत्कर्षण कीया तब तीहि समय-विषै हजार समयप्रबद्धप्रमाण स्थितिबंध भया ताकी पचास समय प्रमाण तौ आबाधा है अर नवसै पचास निषेक है तिनि निषेकनिविषै अंतके सतरह निषेक छोडि अन्य सर्व निषेकनिविषै तिस उत्कर्षण कीया द्रव्यकौ निक्षेपण करिए है। ऐसै इहां वर्तमान समयतै लगाय जाका उत्कर्षण कीया सो तौ सतरहवां समयविषैं उदय आवने योग्य था अर जिस बध्या समयप्रबद्धका प्रथम निषेकविषैं दीया सो इकावनवा समयविषैं उदय आवने योग्य भया सो इनिके बीचि अंतराल तेतीस समय भया सोई अतिस्थापन जानना। बहुरि हजार समयकी स्थितिविषै पचास समय आबाधाके सतरह निषेक अंतके घटाएं अवशेष नवसै तेतीस निषेकनिविषै द्रव्य दीया सो यहु उत्कृष्ट निक्षेप जानना।

विशेष—पहले ६१वी गाथाके आशयको स्पष्ट करते हुए व्याघातविषयक जघन्य अतिस्था-पना और जघन्य निक्षेपका स्पष्टीकरण कर आये है। उसके आगे नवीन बन्धके आश्रयसे एक आवलि कालप्रमाण अतिस्थापनाके प्राप्त होने तक एक-एक समयके क्रमसे अतिस्थापनामे वृद्धि होती जाती है, निक्षेपका प्रमाण पूर्वोक्त ही रहता है। इसका विशेष स्पष्टीकरण जयधवला भाग ८ पृ० २५० से २६१ तक के पृष्ठोमे किया गया है। यहाँ प० श्री टोडरमलजीने नवीन बन्धको पूर्ववत् रखकर तथा पूर्व सत्त्वके अन्त निषेकसे उत्तरोत्तर नीचेके निषेकोका आलम्बन कर इस विषयको स्पष्ट किया है। जयधवलाके अनुसार प्रकृत विषयका सोदाहरण स्पष्टीकरण इस प्रकार है—

५९ समयके स्थितिप्रमाण नवीन बन्धमे प्राक्तन सत्तामे स्थित ५० वी अग्र स्थितिका उत्क-र्षण होनेपर ५१ से ५५ तक की नवीन बन्धसम्बन्धी स्थितियाँ अतिस्थापनारूप रहती हैं तथा ५६ से ५९ तककी स्थितियोमे प्राक्तन सत्तामे स्थित स्थितिका निक्षेप होता है। इस प्रकार उत्तरोत्तर नवीन बन्धकी स्थितिमे एक-एक समयकी वृद्धि होनेपर एक आवलि कालके प्राप्त होने तक अतिस्थापना बढती जाती है, निक्षेपका प्रमाण पूर्ववत् ही रहता है। उदाहरणार्थ नवीन स्थितिबन्ध ७० समय प्रमाण होनेपर ५१ से ६६ समय तककी स्थितियाँ अतिस्थापनारूप रहती है तथा ६७ से ७० समय तककी स्थितियोमे प्राक्तन सत्तारूप ५० वी अग्र स्थितिका निक्षेप होता है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि जब तक एक समय कम एक आवलिकालके प्राप्त होने तक अतिस्थापना और आवलिके असख्यातवें भागप्रमाण निक्षेप रहता है तब तक उनकी व्याघातविषयक अतिस्थापना और निक्षेप सज्ञा है। इसके आगे एक आवलिप्रमाण अतिस्थापना-के होनेपर वे अव्याघात विषयक अतिस्थापना और निक्षेप सज्ञाको प्राप्त होते हैं। ये अव्याघात

विषयक जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेप है। इससे आगे प्राक्तन सत्तासे एक आवलि और एक आवलिके असख्यातवें भागसे अधिक नवीन स्थितिवन्ध हो और नवीन वन्धकी आवाधाके भीतर एक समय अधिक एक आवलि प्रवेश कर वहाँसे लेकर ऊपरकी सत्त्व स्थितियोका उत्कर्पण हो तो अतिस्थापना एक आवलि प्रमाण ही रहेगी, मात्र निक्षेपमे वृद्धि होती जावेगी। पर इस प्रकार अव्याघातविषयक उत्कृष्ट अतिस्थापना और उत्कृष्ट निक्षेप नही प्राप्त होगा, इसलिये आगे अव्याघात विषयक उत्कृष्ट अतिस्थापनाके साथ उत्कृष्ट निक्षेप किस प्रकार प्राप्त होता है इसका स्पष्टोकरण करते है। कोई सज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीव उत्कृष्ट सक्लेशवश सत्तर कोडा-कोडी सागरोपमप्रमाण उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कर बन्धावलिके वाद प्रथम समयमे आबाधाके वाहर स्थितियोमे स्थित प्रदेशोका अपकर्षण कर उदयावलिके वाहर निक्षिप्त करता है। यहाँ पर उदया-वलिसे ऊपर दूसरी स्थितिमे अपकर्षण द्वारा निक्षिप्त हुआ द्रव्य विवक्षित है, क्योकि उदयावलिके ऊपर प्रथम स्थितिमे निक्षिप्त हुए द्रव्यका अपकर्षण होनेके दूसरे समयमे उदयावलिमे प्रवेश हो जाता है। फिर दूसरे समयमे उत्कृष्ट सक्लेशके कारण उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला वही जीव इस विवक्षित स्थितिके प्रदेशोका उत्कर्षण कर उन्हे अबाधाके वाहर प्रथम निषेकसे लेकर अग्रस्थिति-से एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थान नीचे उतर कर जो बन्धस्थिति है वहाँ तक निक्षिप्त करता है। यहाँ पर उत्कृष्ट निक्षेप तो एक समय और एक आवलि अधिक उत्कृष्ट आबाधासे न्यून उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण प्राप्त होता है और उत्कृष्ट अतिस्थापना उत्कृष्ट आबाधा-प्रमाण प्राप्त होती है। यह उत्कृष्ट निक्षेप, जिस स्थितिके परमाणुओका यहाँ उत्कर्षण किया गया है उससे ऊपर और आबाधाके भीतर जितनी प्राक्तन सत्ताकी स्थितियाँ है उन सभीका उक्त विधिसे, बन जाता है। मात्र आबाधाके बाहर प्रथम निषेककी स्थितिसे नीचेकी एक आवलिप्रमाण आबाधाके भीतरकी स्थितियोका यह उत्कृष्ट निक्षेप सम्भव नही है। यहाँ अतिस्थापना एक-एक समय घटती जाती है और आबाधाके भीतर एक आवलि नीचे उतर कर उससे अनन्तर पूर्वकी स्थितिमे स्थित परमाणुओका उत्कर्षण करनेपर वह एक आवलिप्रमाण रह जाती है। यहाँ पर उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अग्र स्थितिसे लेकर एक समय अधिक एक आवलि कम शेष बन्धस्थितियोमे ही उत्कर्षणका विधान किया गया है। सो इसका कारण यह है कि नवीन बन्धके बन्धावलिप्रमाण कालके जानेपर ही पूर्व सत्ताके द्रव्यका अपकर्षण कराया गया है, इसलिए पूर्व सत्ताके अपकर्षित द्रव्यका उत्कर्षण होनेके पूर्व एक आवलि काल तो यह कम हो गया है तथा जिस समय अपकर्षण हुआ उस समय उत्कर्षण होना सम्भव नही है, इसलिए उसका उत्कर्षणके पूर्व एक समय यह कम हो गया है। इसलिए एक समय अधिक एक आवलि बाद पूर्व सत्ताके अपकर्षित द्रव्यका नवीन उत्कृष्ट बन्धस्थितिमे उत्कर्षण होनेसे उस उत्कर्षित द्रव्यमे उत्कर्षित होनेकी जितनी शक्ति स्थिति थी वही तक उसका उत्कर्षण हुआ है ऐसा यहाँ समझना चाहिए। विस्तार भयसे अक सदृष्टि द्वारा इसे स्पष्ट नही किया गया है। विशेष स्पष्टीकरण यथासम्भव प० जीने अपनी सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका टीकामे किया ही है।

अइवावलिगदवरठिदिपढमणिसेगे वरस्स बधस्स।
विदियणिसेगप्पहुदिसु णिक्खित्ते जेट्ठणिक्खेओ[1] ॥६५॥

१. जत्तिया उक्कस्सिया कम्मट्ठिदी उक्कस्सियाए आबाहाए सययुत्तरावलियाए च ऊणा तत्तिओ उक्कस्सओ णिक्खेवो। (क० चू०)। उक्कस्सट्ठिदिं बधिय बधावलिय गालिय तदणतरसमए आवाहाबाहिर-

अथवावलिगतवरस्थितिप्रथमनिषेके वरस्य वधस्य ।
द्वितीयनिषेकप्रभृतिषु निक्षिप्ते ज्येष्ठनिक्षेप ॥ ६५ ॥

स० टी०—अथवा आचार्यांतरव्याख्यानमतभेदात् उत्कृष्टस्थितिवधस्य वधावलिमतिवाह्य प्रथमनिपेके उत्कृष्टे तात्कालिकवध्यमानस्योत्कृष्टस्थितिसमयप्रवद्धस्य द्वितीयनिपेकप्रभृतिपु अग्रे अतिस्थापनावलिमुक्त्वा

१– १–

निक्षिप्ते समयाधिकावल्यावाधारहिता उत्कृष्टकमस्थितिरुत्कृष्टनिक्षेपो भवति । ४ । ४ । विवक्षितसमयप्रवद्धस्य

उ नि । क—आ

चरमनिपेकस्य सर्वा स्थितिर्व्यक्तिस्थिति तस्याधो निपेकाणा समयोनद्विसमयोनादिस्थितयो व्यक्तिस्थितय । प्रथमादिनिषेकाणा सर्वा स्थिति शक्तिस्थितिरित्यभिप्राय ॥६५॥

स० च०—अथवा केई आचार्यनिके मतकरि निक्षेपणविषै असे निरूपण है। उत्कृष्ट स्थितिबध बाध्या था ताकी बधावलीकौ गमाइ पीछें ताका प्रथम निपेकका उत्कर्पण करि ताके द्रव्यकौ तिस उत्कर्षण करनेके समयविषै बध्या जो उत्कृष्ट स्थिति लीए समयप्रवद्ध ताका द्वितीय निषेकका आदि दैकरि अतविषै अतिस्थापनावलीमात्र निपेक छोडि सर्व निषेकनिविषै निक्षेपण कीया तहा एक समय अर एक आवली अर बधी स्थितिका आबाधाकाल इन करि हीन उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण उत्कृष्ट निक्षेप हो है। इहा बधी जो उत्कृष्ट स्थिति ताविषै आवाधा कालविषै तौ निषेक रचना नाही अर प्रथम निषेकविषै द्रव्य दीया नाही अर अतविषै अतिस्थापनावलीविषै द्रव्य न दीया तातै पूर्वोक्त प्रमाण उत्कृष्ट निक्षेप जानना। इहा पूर्वोक्त प्रकार अक सदृष्टिकरि कथन जानना ॥ ६५ ॥

विशेष—यहाँ बद्धकर्मके किस निषेककी कितनी शक्तिस्थिति और कितनी व्यक्तिस्थिति होती है इसका स्पष्टीकरण किया गया है। सो यह प्रत्येक कर्मके उत्कृष्ट स्थितिवन्धकी अपेक्षा समझना चाहिए। उसमे भी प्रथमादि निषेकोको शक्तिस्थितिका विचार करते समय उत्कर्षणके नियमानुसार शेष रही शक्तिस्थिति तक ही प्रत्येक निषेकका उत्कर्षण होता है।

उक्कस्सट्ठिदिबंधे आबाहागा ससमयमावलियं ।
ओदरिय णिसेगेसुक्कड्डेसु अवरमावलियं[1] ॥६६॥

ट्ठिदिट्ठिदपदेसग्गमोकड्डिय उदयावलिबाहिरे णिसिंचदि। एत्थ विदियट्ठिदीए ओकड्डिय णिक्खित्तदव्वमहिकथ, पढमसमयणिसित्तस्स तदणत्तरसमए उदयावलियब्भतरपवेसदसणादो। तदो विदियसमए उक्कस्ससकिलेसवसेण उक्कस्सट्ठिदिं बधमाणो विवक्खियपदेसमुक्कड्डतो आबाहाबाहिरपढमणिसेयप्पहुडि ताव णिक्खिवदि जाव समयाहियावलियमेत्तेण अग्गट्ठिदिमपत्तो त्ति। कुदो एव? तत्तो उवरि तस्स विवक्खियकम्मपदेसस्स सत्तिट्ठिदीए असभवादो। तम्हा उक्कस्साबाहाए समयुत्तरावलियाए च ऊणिया कम्मट्ठिदी कम्मणिक्खेवो त्ति सिद्ध। जयध० भा० १२ पृ० २५६।

१ जाओ वज्झति ट्ठिदीओ तासिं ट्ठिदीण पुव्वणिबद्धट्ठिदिमहिकिच्च णिव्वाघादेण उक्कड्डुणाए अइच्छावणा आवलिया। क० चू०, जयध० भा० १२ पृ० २५३।

उत्कृष्टस्थितिबधे आबाधाग्रात्ससमयामावलिकाम् ।
अवतीर्य निषेकेषूत्कर्षेषु अवरमावलिकम् ॥६६॥

स० टी०—उत्कृष्टस्थितिबधे तत्कालबध्यमानसमयप्रबद्धे आबाधाग्रादाबाधात्यसमयात् ससमयावलिकामवतीर्य तत्सामान्यसमयप्रबद्धनिपेकस्योत्कर्पणे आवलिमात्र जघन्यमतिस्थापन भवति । आबाधागतामावलिकामतिक्रम्य उपरि निपेकेपु अतिमातिस्थापनावलि मुक्त्वा सर्वत्र निक्षीपतीत्यर्थ ॥६६॥

स० च०—उत्कृष्ट स्थिति लीएँ जो उत्कर्षण करनेके समयविषै बध्या समयप्रवद्ध ताकी आबाधाकालका जो अग्र कहिए अत समय तीहिसेती लगाय एक समय अधिक आवलीमात्र समय पहलै उदय आवने योग्य असा जो पूर्व सत्ताका निषेक ताका उत्कर्पण करतै आवलीमात्र जघन्य अतिस्थापन हो है, जातैं तिस द्रव्यकौ आबाधाविषै जो एक आवलोमात्र काल रह्या ताकौ अतिक्रम्य कहिए उल्लघिकरि तिस बध्या समयप्रबद्धकै प्रथमादि निषेकनिविषै अतविपै अतिस्थापनावली छोडि निक्षेपण करिए है। अक सदृष्टिकरि जैसै हजार समयकी स्थिति लीए समयप्रबद्ध बध्या ताका पचास समय आबाधा काल ताके अत समयतै लगाय सतरह समय पहलै उदय आवने योग्य असा वर्तमान समयतैं चौतोसवा समयविषै उदय आवने योग्य पूर्व सत्ताका निषेक ताका उत्कर्पण करि तत्काल बध्या समयप्रबद्धका आबाधाकाल व्यतीत भए पीछै प्रथमादि समयविपै उदय आवने योग्य नवसै पचास निषेक तिनिविषै अन्तके सतरह निषेक छोडि प्रथमादि नवसै तेतोस निपेकनिविषै निक्षेपण करिए है। इहा उत्कर्षण कीया निषेकनिके अर दीया प्रथम निषेकके बीचि अतराल सोलह समयका भया सोई जघन्य अतिस्थापना जानना ॥ ६६ ॥

ओदरिय तदो विदीयावलिपढमुक्कड्डणे वर हेट्ठा ।
अइच्छावणमाबाहा समयजुदावलियपरिहीणा ॥६७॥

अवतीर्य ततो द्वितीयावलिप्रथमोत्कर्षणे वरमधस्तना ।
अतिस्थापना आबाधा समययुतावलिकपरिहीना ॥६७॥

स० टी०—ततस्तत अधोऽवतीर्य अन्यस्य सत्त्वसमयप्रबद्धस्य द्वितीयावलिप्रथमनिषेकोत्कर्पणे अध-समययुतावलिपरिहीणा आबाधा उत्कृष्टातिस्थापन भवति । समयाधिकावलिहीनामाबाधामतिक्रम्य उपरि निषेकेपु अग्रे समयाधिकावलि मुक्त्वा निक्षिपतीत्यर्थ ॥६७॥ एव प्रसगायातमपकर्षणोत्कर्षणविपयजघन्योत्कृष्टनिक्षेपातिस्थापनलक्षणप्रमाणविषयानाचार्यान्तराभिप्राय च व्याख्याय अथ प्रकृतगुणश्रेणिनिर्जराविधान प्रक्रमते–

स० च०—तहातै उतरि तिसतै पहिलै उदय आवने योग्य असा अन्य कोई सत्तारूप समयप्रबद्धसम्बन्धो द्वितीयावलीका प्रथम निषेक जो वर्तमान समयतै आवलीकाल भए पीछै उदय आवने योग्य है ताका उत्कर्षण होतै नीचैं एक समय अधिक आवलीकरि होन आबाधाकाल प्रमाण उत्कृष्ट अतिस्थापन हो है। समय अधिक आवलीकरि हीन जो आबाधा ताकौ उल्लघि ऊपरिके जे निषेक तिनिविषै अतके अतिस्थापनावलोमात्र निषेक छोडि अन्य निपेकनिविषैं तिस द्रव्यकौं दोजिए है। इहा पूर्वोक्त प्रकार अक सदृष्टि आदिकरि कथन जानि लेना। असै प्रसग पाइ इहा उत्कर्षण अपकर्षण अपेक्षा निक्षेप अतिस्थापनका विधान कह्या। सो जहा उत्कर्पणकरि वा

१ जयध० भा० १२, पृ० २५६ ।

अपकर्षण करि ऊपरिके वा नीचेके निषेकनिविषैं द्रव्य देना होइ तहा इस कथनके अनुसारि विधान जानना। जिस निषेकका द्रव्य ग्रह्या होइ तिस निषेकके द्रव्यकी इहा निक्षेपरूप निषेक कहे तिनिविषै तौ दीजिए है अर अतिस्थापनरूप निषेक कहे तिनिविषै न दीजिए हैं। बहुरि बहुत निषेकनिका द्रव्य एकै काल ग्रहण करिए तौ तहा भी जुदे जुदे निषेकनिके द्रव्य देनेका वा न देनेका विधान इहा कह्या कथनके अनुसारि जानना। इहा जो व्याख्यान कीया तिसविषैं मदबुद्धीनिके समझावनेके अर्थि अकसदृष्टि आदि कथन कीया है अर लब्धिसारकी सस्कृत टीकाविषै न था तिसविषै कही चूक होइ सो ज्ञानी जन सवारि शुद्ध करियो ॥६७॥

या प्रकार प्रसग पाइ कथनकरि अब गुणश्रेणिका विधान कहिए है—

उदयाणमावलिम्हि य उभयाण बाहरम्मि खिवणट्ठ।
लोयाणमसखेज्जो कमसो उक्कड्डणो हारो[1] ॥६८॥

उदीयमानानामावली चोभयाना बाह्ये क्षेपणार्थम्।
लोकानामसख्येय क्रमश उत्कर्षणो हार. ॥६८॥

स० टी०—गुणश्रेणिनिर्जरार्थमपकृष्टानामुदयवतामेव कर्मणा मिथ्यात्वादीना उदयावल्या निक्षेपणार्थमसख्येयलोकमात्रो भागहारो भवति। चशब्दात्तद्बहुभागमात्रद्रव्यस्योदयावलिबाह्येऽपि निक्षेपो भवति। उदयवतामेवोदयावल्या निक्षेप इति नियम उक्त। उभयेषामुदयवतामनुदयवता च उदयावलिबाह्ये क्षेपणार्थमपकर्षणनामा भागहारो भवति। क्रमश इति वचनात् पल्यासख्यातभागमात्रश्च भागहारो भवतीति व्यज्यते। वक्ष्यमाणभागहारक्रमस्य तथैव दर्शनात् ॥६८॥

स० टी०—जिनि प्रकृतिनिका उदय पाइए है तिनहीके द्रव्यका उदयावलीविषै निक्षेपण हो है। ताके अर्थि असख्यात लोकका भागहार जानना। बहुरि जिनि प्रकृतिनिका उदय पाइए वा जिनिका उदय न पाइए तिनि दोऊनिके द्रव्यका उदयावलीतै बाह्य गुणश्रेणिविषै वा उपरितन स्थितिविषैं निक्षेपण हो है। ताके अर्थि अपकर्षण भागहार जानना। क्रमश इस वचनकरि पल्यका असख्यातवाँ भागका भी भाग प्रकट कीजिए है। सो इस कथनकौ आगै व्यक्तकरि कहै है ॥६८॥

विशेष—यहाँ अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर उदयवाली और अनुदयवाली प्रकृतियोका गुणश्रेणिनिक्षेप किस विधिसे होता है इस विषयका स्पष्टीकरण किया गया है। यहाँ बतलाया है

---

१ अपुव्वकरणपढमसमए दिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धे ओकड्डुक्कड्डुणभागहारेण खडेयूण तत्थेयखडमेत्तदव्वमोकड्डिय तत्थासखेज्जलोगपडिभागिय दव्वमुदयावलिब्भतरे गोपुच्छायारेण णिसिंचिय पुणो सेसबहुभागदव्वमुदयावलिबाहिरे णिक्खिवमाणो उदयावलियबाहिराणतरट्ठिदीए असखेज्जसमयपबद्धमेत्तदव्व णिसिंचदे। तत्तो उवरिमट्ठिदीए असखेज्जगुण देदि। एवमसखेज्जगुणाए सेढीए णिसिंचदि जाव अपुव्वाणियट्टिकरणद्धाहितो विसेसाहियगुणसेढिसीसय ति। पुणो उवरिमाणतरट्ठिदीए असखेज्जगुणहीण देदि। तत्तो पर विसेसहीण णिक्खिवदि जाव चरिमट्ठिदिमधिच्छावणावलियमेत्तेण अपत्तो त्ति। एवमपुव्वकरणविदियादिसमएसु वि गुणसेढिणिक्खेवक्कमो परूवेयव्वो। णवरि गलिदसेसायामेण णिसिंचदि त्ति वत्तव्व। जयध०भाग १२, पृ० २६५। ध० पु० ६ पृ० २२४।

कि उदयवाली प्रकृतियोकी उदयावलिसम्बन्धी निषेकोमे निक्षेप करनेके लिये अपने योग्य द्रव्यमे असख्यात लोकोका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतने द्रव्यका अपकर्षण करना चाहिए। किन्तु जयधवला पु० १२ पृ० २६५ मे इसका विशेष खुलासा करते हुए यह बतलाया है कि अपने योग्य डेढ गुणहानिगुणित समयप्रबद्धमे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आवे उसमे असख्यात लोकोका भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आवे उतने द्रव्यको गोपुच्छाकाररूपसे तो उदयावलिमे निक्षिप्त करना चाहिए। शेष बहुभागप्रमाण द्रव्यको गुणश्रेणि-निक्षेपके विधानानुसार निक्षिप्त करना चाहिए। शेष कथन स्पष्ट ही है। लब्धिसारके अगले कथनसे भी यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है।

ओक्कड्डिदइगिभागे पल्लासखेण भाजिदे तत्थ।
बहुभागमिद दव्व उवरिल्लठिदीसु णिक्खिवदि ॥ ६९ ॥

अपकर्षितैकभागे पल्यासंख्येन भाजिते तत्र।
बहुभागमिद द्रव्यमुपरितनस्थितिषु निक्षिपति ॥ ६९ ॥

स० टी०—सर्वकर्मसत्वमिद स a १२आयुर्द्रव्यस्य स्तोकत्वेन किंचिदून कृत्वा शेषे सप्तभिर्भक्ते मोहनीबद्रव्य भवति। तस्मिन्ननतेन खडिते एकभाग मिथ्यात्वषोडशकषायरूपसर्वघातिद्रव्य भवति। तस्मिन् सप्तदशभिर्भक्ते मिथ्यात्वप्रकृतिद्रव्यमिद स a १२—अस्मिन् गुणश्रेणिनिर्जरार्थमपकर्षणभागहारेण भक्ते तदेक-
७। ख। १७

भागोऽय स a १२—तद्बहुभाग स्वस्थितिरचनायामेव तिष्ठति
७। ख। १७ओ



१—
स a १२—ओ पुनरपकृष्टैक
७। ख १७। ओ

१—
भागपल्यासख्येयभागेन खडिते तद्बहुभागोऽय स। a १२–प इद द्रव्य गुणश्रेण्या उपरितनस्थितिषु
a
७। ख। १७। ओ प
a

निक्षिपति ॥ ६९ ॥

स० च०—अपकर्षण भागहारका भाग दीए तहा एक भागकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभाग उपरितन स्थितिविषै निक्षेपण करै हैं। इहा ऐसा जानना—कर्मके सत्तारूप स्थितिके निषेक तिनिविषै वर्तमान समयतै लगाय आवलीकालविषै उदय आवने योग्य निषेक तिनिविषै जो द्रव्य दीया ताकौ उदयावलीविषै दीया कहिए। बहुरि ताके ऊपरि गुणश्रेणि आयाम प्रमाण जे निषेक तिनिविषै जो द्रव्य मिलाया सो गुणश्रेणिविषै दीया कहिए। बहुरि ताके ऊपरि अतके अतिस्थापनावलीमात्र निषेक छोडि सर्व निषेकनिविषै जो द्रव्य दीया सो उपरितन स्थितिविषै दीया द्रव्य कहिए। अब इहा मिथ्यात्वके उदाहरणकरि विधान कहिए है—

सर्व कर्मका सत्त्वरूप द्रव्य है सो किंचिदून द्वयर्धगुणहानिगुणित समयप्रबद्धप्रमाण है तामै आयुका द्रव्य घटावनेकौं किंचित ऊन करि अवशेषकौं सात मूल प्रकृतिनिका विभागके अर्थि

सातका भाग दीए मोहनीयका द्रव्य होइ। बहुरि ताकौ देशघाती सर्वघातीका भागके अर्थि अनंतका भाग दीए तहां एक भागमात्र सर्वघातिनिका द्रव्य हो है। बहुरि ताके सोलह कषाय एक मिथ्यात्वके विभाग करनेकौं सतरहका भाग दीए मिथ्यात्वका द्रव्य हो है सो याकौं पूर्वै पीठबंधविषै शक्तिप्रमाण लीए जो अपकर्षण नामा भागहार ताका भाग दिए तहां एक भाग विना अवशेष बहुभाग थे ते तौ पूर्वै सत्ताविषै जैसैं अपने निषेक रचनारूप तिष्ठे थे तैसैं ही रहे। बहुरि जो एक भाग रह्या ताकौ पल्यका असंख्यातवा भागका भाग दीए तहां बहुभाग उपरितन स्थितिविषै निक्षेपण करै है॥ ६९॥

विशेष—यहाँ उपरितन स्थितियोमे गुणश्रेणिशीर्षसे आगेकी अतिस्थापनावलिसे पूर्व तककी स्थितियाँ ली गई है। यहाँ इतना विशेष जानना कि जिस निषेक स्थितिमेसे द्रव्यका अपकर्षण किया जाय उससे नीचे एक आवलिप्रमाण निषेकस्थितियाँ अतिस्थापनावलिरूप होती हैं और उससे नीचे तक उस निषेकस्थितिके द्रव्यका निक्षेप होता है।

सेसिगभागे भजिदे असखलोगेण तत्थ बहुभागं।
गुणसेढीए सिंचदि सेसेगं च उदयम्हि॥ ७०॥
शेषैकभागे भजितेऽसंख्यलोकेन तत्र बहुभागम्।
गुणश्रेण्यां सिंचति शेषैक च उदये॥ ७०॥

स० टी०—पल्यासख्यातैकभागोऽय स। ә १२– अस्मिन्नसख्येयलोकेन भाजिते बहुभागद्रव्यमिद—
७। ख। १७। ओ। प

स। ә। १२— १^— = ә गुणश्रेण्या सिंचति गुणश्रेण्यायामे निक्षिपतीत्यर्थ। शेपैकभाग—
७। ख। १७। ओ। प = ә
ә

स। ә। १२— उदये उदयावल्या निक्षिपति। चशब्द परस्परसमुच्चयार्थ॥७०॥
७। ख। १७। ओ। प = ә
ә

स० च०—अवशेष एक भाग रह्या ताकौं असख्यात लोकका भाग देइ तहां बहुभाग गुणश्रेणि आयामविषै देना। अर अवशेष एक भाग उदयावलीविषैं देना॥७०॥

उदयावलिस्स दव्व आवलिभजिदे दु होदि मज्झधणं।
रूऊणद्धाणद्धेणूणेण णिसेयहारेण॥७१॥
मज्झिमधणमवहरिदे पचय पचयं णिसेयहारेण।
गुणिदे आदिणिसेय विसेसहीणे कम तत्तो[1]॥७२॥

---

1 उदयपपडीणमुदयावलिबाहिराट्ठिदट्ठिदोण पदेसग्गमोकड्डुणभागहारेण खडिदेयखड असखेज्जलोगेण भजिदेगभाग घेत्तूण उदए बहुग देदि। विदियसमए विसेसहीण देदि। एव विसेसहीण विसेसहीण देदि जाव उदयावलियचरिमसमओ त्ति। ध० पु० ६, पृ० २२४।

उदयावलेर्द्रव्यमावलिभजिते तु भवति मध्यधनम् ।
रूपोनाद्ध्वानार्धेनोनेन निषेकहारेण ॥७१॥

मध्यमधनमवहृरिते प्रचय प्रचय निषेकहारेण ।
गुणिते आदिनिषेक विशेषहीनं क्रम तत ॥७२॥

स० टी०—तदेकभागमात्रे उदयावलिसबधिद्रव्ये आवल्या भक्ते मध्यमधन भवति स ∂ १२— / ७ । ख । १७ । ओ प ≡ ∂ ८ / ∂

रूपोनाध्वार्द्धेन रूपोनगच्छार्धेन ऊनेन रहितेन निषेकहारेण द्विगुणगुणहान्या तस्मिन् मध्यमधने भाजिते प्रचयो विशेषो भवति । स ∂ १२— / ७ । ख १७ । ओ । प । ≡ ∂ ८ । १६ – ८ / ∂ २ (१^) तस्मिन् प्रचये द्विगुणगुणहान्या गुणिते आदिनिषको भवति स । ∂ । १२–१६ / ७ ख । १७ । ओ । प । ≡ ∂ । ८ । १६–८ / ∂ २ (१^) ततो द्वितीयादिनिषेकेषु विशेषहीनक्रमेण निक्षिप्यते यावच्चरमनिषेक रूपोनावलिमात्रविशेषहीनप्रथमनिषेकमात्रो भवति स ∂ १२–१६–८ (७^) / ७ । ख । १७ । ओ । प ≡ ∂ । ८ । १६—८ / ∂ २ (१^) ॥७१-७२॥

स० च०—तहा उदयावलीविषैं दीया जो द्रव्य ताकौ आवलीके समय प्रमाणका भाग दीए मध्यधन आवै । बहुरि तिस मध्य धनकौ एक घाटि जो आवलीप्रमाण गच्छ ताका आधाकौ निषेकहार जो दोगुणहानि तामैं घटाइ अवशेषका भाग दीए चयका प्रमाण आवै है । बहुरि तिस चयकौ दोगुणहानिकरि गुणै आवलीके प्रथम निषेकविषैं दीया द्रव्यका प्रमाण हो है तातैं द्वितीयादि निषेकनिविषैं दोया द्रव्य क्रमतै एक एक चयकरि घटता प्रमाण लीएं जानना । तहाँ एक घाटि आवलीमात्र चय घटै अत निषेकनिविषैं दीया द्रव्यका प्रमाण हो है । ऐसैं उदयावलीके निषेकनिविषै दीया द्रव्यका विभाग है ॥७१-७२॥

ओकड्डिदम्हि देदि हु असखसमयपबद्धमादिम्हि ।
सखातीतगुणक्कममसखहीण विसेसहीणक्कम ॥७३॥

अपकर्षिते ददाति हि असंख्यसमयप्रबद्धमादौ ।
सख्यातीतगुणक्रममसंख्यहीनं विशेषहीनक्रमम् ॥७३॥

स० टी०—पुनर्गुणश्रेण्यर्थमपकृष्टद्रव्यस्य असख्यातलोकभक्तबहुभागद्रव्यमिद स ∂ १२ – ≡ ∂ (१ ⌒) / ७ । ख । १७ ओ । प ≡ ∂ / ∂

अस्मिन्नन्तर्मुहूर्तमात्रे गुण्यश्रेण्यायामे प्रतिसमयमसख्येयगुणितनिक्षेपाभ्युपगमात्, सख्यातावलिकाल सर्वगुणकार-सयोगरूपेण प्रमाणराशिना भक्ते तदेकभागमसख्यातसमयप्रबद्धमात्र गुणश्रेण्यादिनिषेके ददाति, भागहारभूतपल्य-भागहारस्यासख्येयस्य माहात्म्यादसख्येसमयप्रबद्धमात्र गुणश्रेणिप्रथमनिषेके निक्षिप्यत इत्यर्थ । ततो द्वितीयादि-निषेकेषु गुणश्रेण्यायामचरमनिषेकपर्यंतेषु प्रतिनिषेकमसख्येयगुणित द्रव्य निक्षिप्यते । तत्राकसदृष्ट्या गुणश्रेणि-निषेकास्चत्वार । असख्येयगुणकारसदृष्टिश्चत्वार । एव च प्रथमे निषेके एको गुणकार । द्वितीये चत्वार । तृतीये षोडश । चतुर्थे चतु षष्टि । सर्वगुणकारसयोग पचाशीति । तत उपरितनस्थितिप्रथमनिषेके निक्षिप्तद्रव्य-

१ _^

मसख्येयगुणहीन, कुत ? उपरितनस्थितौ निक्षिप्तद्रव्यमिद स ∂ १२ – प इद नानागुणहानिषु निक्षिप्यत इति

∂

७ । ख । १७ । ओ प

∂

प्रथमगुणहानिप्रथमनिषेके 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यभिप्रायेण द्व्यर्धगुणहान्या भक्त्वा द्विगुणगुणहान्या अध उपरि च गुणयित्वा निक्षिप्यमाणे तद्द्रव्यागमनात् । ततो द्वितीयादिनिषेकेषु विशेषहीनक्रमेण अग्रे अति-स्थापनावलिं मुक्त्वा निक्षिपेत् । एव गुणश्रेणिकरणप्रथमसमयापकृष्टत्रिद्रव्यनिक्षेपसदृष्टिर्मूलग्रन्थे दृष्टव्या ॥७३॥

स० च०—गुणश्रेणिके अर्थि अपकर्षण कीया द्रव्य ताकी प्रथम समयकी एक शलाका यातै दूसरेकी असख्यात गुणी, यातै तीसरेकी असख्यातगुणी अैसैं अत समयपर्यंत असख्यातगुणा क्रम लीए जे शलाका तिनिका जोड देइ ताकौ भाग दीए जो प्रमाण आवै ताकौ अपनी-अपनी शलाका-करि गुणें गुणश्रेणि आयामका प्रथम निषेकविषै दीया द्रव्य असख्यात समयप्रबद्धप्रमाण आवै है। जातै इहा भागहार पल्यके असख्यातवा भागहीका है । बहुरि तातै द्वितीयादि निषेकनिविषै द्रव्य क्रमतै असख्यातगुणा अन्तसमयपर्यत क्रमतैं जानना । अैसै गुणश्रेणि आयामके निषेकनिविषै दीया द्रव्यका विभाग है। बहुरि उपरितन स्थितिविषै दीया द्रव्यकौ 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इस सूत्रकरि साधिक ड्योढ गुणहानिका भाग दीए ताका प्रथम निषेकविषै दीया द्रव्यका प्रमाण हो है। सो गुणश्रेणिका अत निषेकविषै दीया द्रव्यके असख्यातवे भागप्रमाण है। तातै प्रथम गुणहानिका द्वितीयादि निषेकनिविषैं दीया द्रव्य चय घटता क्रम लीए है। उपरि गुण-हानि गुणहानि प्रति निषेकनिका आधा-आधा द्रव्य जानना । अैसै गुणश्रेणि करनेका प्रथम समय-विषै अपकर्षण कीया द्रव्यकौ तीन जायगा दीया ताकी सदृष्टि आगें लिखेंगे तहा देखनी ॥७३॥

पडिसमयमोक्कड्डदि असखगुणियक्कमेण सिंचदि य ।
इदि गुणसेढीकरण आउगवज्जाण कम्माण[1] ॥ ७४ ॥

प्रतिसमयमपकर्षति असंख्यगुणितक्रमेण सिंचति च ।
इति गुणश्रेणीकरणमायुष्कवर्ज्याना कर्मणाम् ॥ ७४ ॥

स० टी०—एव प्रतिसमय च गुणश्रेणिकरणद्वितीयादिसमयेष्वपि गुणश्रेणिकरणकालचरमसमयपर्यंतेषु

---

१ तम्मि चेवापुव्वकरणस्स पढमसमए आउगवज्जाण गुणसेढिणिक्खेवो वि आढत्तो त्ति भणिद होइ । किमट्ठमाउगस्स गुणसेढिणिक्खेवो णत्थि त्ति चे ? ण सहावदो चेव । तत्थ गुणसेढिणिक्खेवपवुत्तीए असभवादो । जयध० भा० १२, पृ० २६४ ।

पूर्वापकृष्टद्रव्यादसख्येयगुण द्रव्यमपकर्षति सिंचति च, पूर्वोक्तविधानेन उदयावल्या गुणश्रेण्यायामे उपरितनस्थितौ च तत्तद्द्रव्य निक्षिपति । इत्यनेन प्रकारेणायुर्वर्जिताना सप्तप्रकृतीना द्रव्यस्य मिथ्यात्वद्रव्यवदेव गुणश्रेणिकरण त्रिद्रव्यनिक्षेपविधान ज्ञातव्य ।। ७४ ।।

स० च—गुणश्रेणि करनेकौ द्वितीयादिक अतपर्यंत समयनिविषै समय समय प्रति असख्यातगुणा क्रम लीए द्रव्यकौ अपकर्षण करै है। बहुरि सिंचति कहिए पूर्वोक्त प्रकार उदयावली आदिविषै ताका निक्षेपण करै है। ऐसैं मिथ्यात्ववत् आयु विना सात कर्मनिका गुणश्रेणिविधान समय समय प्रति हो है सो जानना ।। ७४ ।।

अथ गुणसक्रमविधानार्थमाह—

पडिसमयमसखगुण दव्व संकमदि अप्पसत्थाण ।
बधुज्झियपयडीण बधतसजादिपयडीसु ।। ७५ ।

प्रतिसमयमसंख्यगुण द्रव्यं सक्रामति अप्रशस्ताना ।
बन्धोज्झितप्रकृतीना बध्यमानस्वजातिप्रकृतिषु ।। ७५ ।

स० टी०—गुणसेढी गुणसक्रम इति पूर्वमुद्दिष्टो गुणसक्रम अपूर्वकरणप्रथमसमये नास्ति तथापि स्वयोग्यावसरे भविष्यतस्तस्य स्वरूप पूर्वोद्देशानुसारेणास्मिन प्रकरणे कथ्यते । तद्यथा—अप्रशस्ताना बधोज्झितप्रकृतीना द्रव्य प्रतिसमयमसख्येयगुण बध्यमानस्वजातीयप्रकृतिषु सक्रामति । पूर्वस्वरूप त्यक्त्वान्यस्वरूप गृह्णातीत्यर्थ ।। ७५ ।।

आगै गुणसक्रमणकास्वरूप कहिए है—

स० च—गुणसक्रमण है सो अपूर्वकरणके पहले समयविषै न हो है। अपने योग्य कालविषै हो है तथापि याका स्वरूप इहा कहिए—

जिनका बध न पाइए ऐसी जे अप्रशस्त प्रकृति तिनिका द्रव्य है सो समय समय प्रति असख्यातगुणा क्रम लीए जिनका बध पाइए ऐसी जे स्वजाति प्रकृति तिनिविषैं सक्रमण करै है अपने स्वरूपकौ छोडि तद्रूप परिणमै है ।। ७५ ।।

- विशेष—औपशमिक सम्यग्दर्शनके प्राप्त होनेके प्रथम समयसे लेकर विध्यात सक्रमणके प्राप्त होनेके पूर्व समय तक गुणसक्रमण द्वारा मिथ्यात्वके द्रव्यको सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वरूपसे सक्रमित करता है । इस विषयका विशेष विचार आगे किया ही गया है। यहाँ ७५ वी गाथामे किन प्रकृतियोका गुणसक्रमण होता है, मात्र इतना सामान्य निर्देश किया गया है। तथा अन्य किन प्रकृतियोका किस किस अवस्थामे गुणसक्रमण होता है इसका निर्देश आगे ७६ वी गाथामे किया गया है ।

एवंविहसकमण पढमकसायाण मिच्छमिस्साण ।
सजोजणखवणाए इदरेसिं उभयसेढिम्मि ।। ७६ ।।

एवविध सक्रमणं प्रथमकषायाणा मिथ्यात्व-मिश्रयो· ।
संयोजनक्षपणयोरितरेषामुभयश्रेणौ ।। ७६ ।।

स० टी०—एवविध प्रतिसमयमसख्येयगुण सक्रमण प्रथमकषायाणामनतानुबधिना विसयोजने वर्तते । मिथ्यात्वमिश्रप्रकृत्यो क्षपणाया वर्तते । इतरासा प्रकृतीनामुभयश्रेण्यामुपशमकश्रेण्या क्षपकश्रेण्या च वर्तते ।

यथा असातद्रव्यस्य श्रेण्यां बंधरहितस्य बध्यमाने सातद्रव्ये संक्रमणं, सातबंधकालोऽन्तर्मुहूर्तं २। १ असात-बंधकालस्तु ततस्संख्येयगुणोऽन्तर्मुहूर्तं २ १। ४ मिश्रकाल, प्र फ इ इति त्रैराशिकेन लब्ध

२ १ ५ स ३ १२-२ १ १

सातद्रव्यं वेदनीयद्रव्यस्य संख्यातैकभागमात्रं लब्धं स ३। १२-। १ एतस्मात्संख्येयगुणमसातद्रव्यं स ३। १२

७। ५ ७। ५

-। ४ श्रेण्यां बंधरहितस्यासातद्रव्यस्य बध्यमाने सातद्रव्ये प्रतिसमयसंख्येयगुणं संक्रमणं भवति ॥ ७६ ॥

स० च—ऐसा असंख्यातगुणा क्रम लीए जो संक्रमण ताकौं गुणसंक्रमण कहिए सो अनंता-नुबंधी कषायनिका तौ गुणसंक्रमण ताका विसंयोजनविषै हो है। अर मिथ्यात्व मिश्रमोहनीका गुणसंक्रमण तिनका क्षपणाविषै हो है। अर अन्य प्रकृतियोंका गुणसंक्रमण उपशमक वा क्षपक श्रेणीनिविषै पाइए है। जैसैं श्रेणीविषै बंधरहित जो असाता ताका द्रव्य है सो बध्यमान जो स्वजातीय साता तीहिंविषैं संक्रमण करै है सो कहिए है—

साता निरंतर बंधनेका काल अंतर्मुहूर्त अर असाताका तीहिस्यों संख्यातगुणा सो दोऊनिको मिलाय ताका भाग वेदनीय कर्मके द्रव्यकौ देइ अपने अपने काल करि गुणे सातावेदनीयका द्रव्य वेदनीयका द्रव्यके संख्यातवे भागमात्र आवै है अर असाताका तातैं संख्यातगुणा आवै है सो श्रेणीविषै ऐसै असाताका द्रव्य समय-समय असंख्यातगुणा क्रम लीए सातारूप होइ परिणमै है। तहां गुण-संक्रमण जानना। ऐसैं ही अन्यका यथासंभव जानना ॥ ७६ ॥

अथ स्थितिकांडकघातस्वरूपं निरूपयति—

पढमं अवरवरट्ठिदिखंडं पल्लस्स संखभागं तु।
सायरपुधत्तमेत्तं इदि संखसहस्सखंडाणि[1] ॥ ७७ ॥

प्रथममवरवरस्थितिखंडं पल्यस्य संख्येयभागं तु।
सागरपृथक्त्वमात्रमिति संख्यसहस्रखंडानि ॥ ७७ ॥

सं० टी०—अपूर्वकरणप्रथमसमये क्रियमाणमवरं जघन्यं स्थितिखंडं पल्यसंख्यातैकभागमात्रं प तु पुनर्वर-

७ १

मुत्कृष्टस्थितिखंडं सागरोपमपृथक्त्वमात्रं भवति सा ८ यद्यपि तत्काले आयुर्वर्जितानां सप्तानां कर्मणां स्थिति-रन्तःकोटीकोटिर्भवति तथापि विशुद्धिपरिणामभेदवशात् कस्यचिज्जीवस्य कर्मस्थितिर्जघन्या अल्पान्तःकोटी-

---

१. अपुव्वकरणपढमसमये ट्ठिदिखंडयं जहण्णगं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो, उक्कस्सगं सागरोवम-पुधत्तं। क० चू०। जहण्णेण ताव पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागायामं ट्ठिदिखंडयमागाएदि, दंसणमोहोवसामग-पाओग्गसव्वजहण्णंत्तोकोडाकोडिमेत्तट्ठिदिसंतकम्मेणागदम्मि तदुवलंभादो। उक्कस्सेण पुण सागरोवमपुधत्त-मेत्तायामं पढमट्ठिदिखंडयमाढवेइ, पुव्विल्लजहण्णट्ठिदिसंतकम्मादो संखेज्जगुणट्ठिदिसंतकम्मेण सहागंतूण अपुव्व-करणं पविट्ठस्स पढमसमये तदुवलंभादो। किं पुण कारणं दोण्हं पि विसोहिपरिणामेसु समाणेसु संतेसु घादिद-सेसाणं ट्ठिदिसंतकम्माणं एवं विसरिसभावो त्ति णासंकणिज्जं, संसारपाओग्गाणं हेट्ठिमविसोहीणं सव्वेसु समा-णत्ते णियमाणुवलंभादो। जयध० भा० १२ पृ० २६०। ध० पु० ६, पृ० २२४।

कोटिर्भवति । कस्यचित् पुनरुत्कृष्टा कर्मस्थितिरधिकान कोटीकोटिसागरोपमा भवति । तदनुसारेण स्थिति-

१——
१२—

काडकमपि जघन्यमुत्कृष्ट च सभवतीत्यर्थ । मध्ये काडकविकल्पा असख्येया प ९ ९ स्थितिकालश्च तत
९

१——　　　　　　１——　　　　　　१——
१२—　　　　　　१२—　　　　　　१२—

सख्येयगुणा प ९ ९ एतावत्सु काडकविकल्पेपु प्र० प ९९ यद्येतादत स्थितिविकल्पा सभवति फ प ९ ९
९

तदा एकस्मिन् काडकविकल्पे कियत स्थितिविकल्पा सभवेयु इ ९ इति त्रैराशिकलब्धा एककाडकविकल्पे सख्येया स्थितिविकल्पा लब्ध ९ अकसदृष्टौ काडकविकल्पा पचप्रमाण प्र स्थितिविकल्पा पचदश फल फ
५　　　　　　　　　　　　　　१५

इच्छाकाडकविकल्प एक इ १ लब्धा स्थितिविकल्पास्त्रय लब्ध ३ । एवमपूर्वकरणप्रथमसमय प्रारब्धस्थिति-काडकमादि कृत्वा अतर्मुहूर्ते अतर्मुहूर्ते एकैकस्थितिकाडकोत्करणसमाप्तौ सत्या अपूर्वकरणकाले सख्यातसहस्राणि स्थितिकाडकानि भवति । अपूर्वकरणकालस्य २ ७ ७ सख्यातैकभागमात्र स्थितिकाडकोत्कर्पणकाल , तत एतावति काले प्र २ ९ यद्येक स्थितिखडमुत्कीर्यते फ १ तदा एतावति काले इ २ ९ ७ कियति स्थिति-खडान्युत्कीर्यते ? इति त्रैराशिकेन लब्धानि अपूर्वकरणकाले सख्यातसहस्राणि स्थितिखडानि भवति । लब्ध ९ ० ० ० ॥ ७७ ॥

आगे स्थितिकाडकघातका स्वरूप कहै है—

स० च—अपूर्वकरणका पहिला समयविपै कीया असा स्थितिखड कहिए स्थितिकाडकायाम सो जघन्य तो पल्यका सख्यातवा भागमात्र अर उत्कृष्ट पृथक्त्व सागरप्रमाण है । पृथक्त्व नाम सात वा आठका जानना । एक काडककरि एती स्थिति घटावै है । यद्यपि तहा सत्त्व स्थिति सामान्यतै अत कोटाकोटी है तथापि कोइकैं तौ अत कोटाकोटी पल्यमात्र जघन्य स्थितिसत्व है कोईकै अत कोटाकोटी सागरप्रमाण उत्कृष्ट स्थितिसत्व है तातै स्थितिके अनुसारि काडक भी जघन्य उत्कृष्ट है मध्यविषै काडकके भेद असख्याते है । तिनिमै सख्यातगुणे स्थितिके भेद है । तातै सख्यात स्थितिभेदनिविपै एक काडक भेद पाइए है । अक सदृष्टि करि काडक भेद पाच स्थिति भेद पद्रह तहा त्रैराशिक कीए एक काडक भेदविपै तोन स्थितिभेद पावै । असै एक एक स्थिति काडकका घात अतर्मुहूर्त काल करि हाइ सो असैं स्थितिखड अपूर्वकरणके कालविपै सख्यात हजार हो है जातै अपूर्वकरणके कालके सख्यातवे भागमात्र स्थितिकाडकका काल है ॥ ७७ ॥

विशेष—समझो अपूर्वकरणके प्रथम समयमे ऐसे दो जीवोने प्रवेश किया जिनके विशुद्धिरूप परिणाम समान होते है, फिर भी उनमेसे एक जीव पल्योपमके सख्यातवें भागप्रमाण स्थिति काडक घातके लिए ग्रहण करता है और दूसरा जीव सागरोपमपृथक्त्वप्रमाण स्थितिकाण्डक घातके लिये ग्रहण करता है । ऐसा क्यो होता है, क्योकि जब उनके विशुद्धि परिणाम समान होते है तो उन द्वारा घातके लिये ग्रहण किया गया स्थितिकाण्डक समान होना चाहिए ? इस प्रश्नका समाधान करते हुए जयधवलामे बतलाया है कि अपूर्वकरणके प्रथम समयसे पूर्व जितने विशुद्धि परिणाम होते है वे सब ससारके योग्य होनेसे समान ही होते है ऐसा नियम न होनेसे अपूर्वकरणके प्रथम समयमे स्थितिकाण्डकोमे यह विसदृशता देखी जाती है ।

अथापूर्वकरणप्रथमचरमसमयस्थितिखडादीना अल्पबहुत्व व्याचष्टे—

आउगवज्जाण ठिदिघादो पढमादु चरिमठिदिसत्तो ।
ठिदिबधो य अपुव्वो होदि हु सखेज्जगुणहीणो[1] ॥ ७८ ॥

आयुष्कवर्ज्याना स्थितिघात' प्रथमाच्चरमस्थितिसत्त्व ।
स्थितिबधश्चापूर्वो भवति हि सख्येयगुणहीन ॥ ७८ ॥

स० टी०—अपूर्वकरणस्य प्रथमसमयवर्तिभ्य स्थितिखडस्थितिसत्त्वस्थितिबधेभ्य चरमसमयवर्तिनस्ते सख्येयगुणहीना भवति । सदृष्टि प्रथमसमये काडक प, स्थितिसत्त्व अत कोटीकोटि । स्थितिबध अत कोटीकोटि ।
१ ४

चरमसमये काडक प । स्थितिसत्त्व अत कोटीकोटि । स्थितिबध अत कोटीकोटि । सख्यातसहस्रस्थितिखड-
१ १ ४ ८ । ४

स्थितिबधापसरणवशात् स्थितिसत्त्वस्थितिबधयो सख्यातगुणहीनत्व तदनुसारेण स्थितिकाडकस्यापि सख्यातगुणहीनत्व युक्तमेव ॥ ७८ ॥

आगे स्थितिकाण्डकघातकी विशेषताएँ बतलाते हैं—

स० च—अपूर्वकरणके पहिले समय जे स्थितिखड अर स्थितिसत्त्व अर स्थितिबध पाइए है तिनतैं ताके अत समयविषै ते सख्यातगुणे घाटि हैं। इहा सख्यात हजार स्थितिकाडकघाति करि स्थितिसत्त्वका, अर स्थितिके अनुसारि स्थितिकाडक है तातैं स्थितिकाडकका, सख्यात हजार स्थितिबधापसरण करि स्थितिका अनुसार स्थितिबधका सख्यातगुणा घाटि होना जानना ॥ ७८ ॥

विशेष—अपूर्वकरणके प्रथम समयमे जितना स्थितिसत्त्व है उसके अन्तिम समयमे वह सख्यातगुणा हीन हो जाता है, प्रथम समयमे जितना स्थितिकाण्डकका प्रमाण है अन्तिम समयमे वह भी सख्यातगुणा हीन हो जाता है तथा प्रथम समयमे जितना स्थितिबन्ध होता है अन्तिम समयमे वह भी संख्यातगुणा हीन होने लगता है, यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

अथानुभागकाडकस्वरूपोत्करणकालविषयायामभेदानाह—

एक्केक्कट्ठिदिखडयणिवडणठिदिबधओसरणकाले ।
सखेज्जसहस्साणि य णिवडति रसस्स खडाणि[2] ॥ ७९ ॥

एकैकस्थितिकाडकनिपतनस्थितिबन्धापसरणकाले ।
सख्येयसहस्राणि च निपतन्ति रसस्य खडानि ॥ ७९ ॥

---

१ अपुव्वकरणस्स पढमसमए ट्ठिदिसतकम्मादो चरिमसमए ट्ठिदिसतकम्म सखेज्जगुणहीण । क० चू०, जयध० भा० १२ पृ० २६९ । ट्ठिदिबधो अपुव्वो । क० चू०, जयध० भा० १२ पृ० २६१ । णवरि अपुव्वकरणस्स पढमसमयट्ठिदिसतट्ठिदिबधेहितो अपुव्वकरणस्स चरिमसमयट्ठिदिसत-ट्ठिदिबधाण दोहत्त सखेज्जगुणहीण होदि । ध० पु० ६ पृ० २२९ । णवरि पढमट्ठिदिखडयादो विदियट्ठिदिखडय विसेसहीण सखेज्जदिभागेण । एवमणतराणतरादो विसेसहीण णेदव्व जाव चरिमट्ठिदिखडयेत्ति । जयध० भा० १२ पृ० २६८ । ध० पु० ६, पृ० २२८-२२९ ।

२ तम्हि ट्ठिदिखडयद्धा ट्ठिदिबधगद्धा च तुल्ला । एकम्हि ट्ठिदिखडए अणुभागखडयसहस्साणि घादेदि । क० चू०, जयध० भा० १२ पृ० २६६-२६७ । ध० पु० ६, पृ० २२८ ।

स० टी०—एकैकस्थितिखडनिपतनकाल , एकैकस्थितिबधापसरणकालश्च समानावतर्मुहूर्तमात्रौ । तस्मिन्नतर्मुहूर्ते सख्यातसहस्राण्यनुभागस्य खडानि निपतति । एकस्थितिखडोत्करणस्थितिबधापसरणकालस्य २ १ १ सख्यातैकभागमात्रोऽनुभागखडोत्करणकाल इत्यर्थ २ १ । अनेनानुभागखडकोत्करणकालप्रमाणमुक्त ॥ ७९ ॥

आगै अनुभागकाडकघातकौ कहिए है—

स० च—जाकरि एकबार स्थितिसत्त्व घटाइए असा स्थितिकाडकोत्करणकाल अर जाकरि एकबार स्थितिबध घटाइए सा स्थितिबधापसरण काल ए दोऊ समान हैं अतर्मुहूर्तमात्र है । बहुरि तिस एक विषै जाकरि अनुभागसत्त्व घटाइए असा अनुभागखडोत्करण काल सख्यात हजार हो है जातै तिस कालतै अनुभागखडोत्करण यहु काल सख्यातवे भागमात्र है ॥ ७९ ॥

विशेष—एक स्थितिकाडकघातका तथा एक स्थितिबन्धापसरणका काल समान अन्तर्मुहूर्त है। इनक कालके भीतर हजारो अनुभागकाण्डकोका पतन हो जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

असुहाणं पयडीणं अणंतभागा रसस्स खडाणि ।
सुहपयडीणं णियमा णत्थि त्ति रसस्स खंडाणि[1] ॥ ८० ॥

अशुभाना प्रकृतीनामनन्तभागा रसस्य खण्डानि ।
शुभप्रकृतीना नियमान्नास्तीति रसस्य खण्डानि ॥ ८० ॥

स० टी०—अशुभानामप्रशस्तानामसातादिप्रकृतीना रसस्यानुभागस्य अनतबहुभागमात्राणि खडानि भवति । शुभप्रकृतीनामनुभागस्य खडानि नियमान्न सति इति हेतोरशुभप्रकृतीनामेव विशुद्धया अनुभागखण्ड-

३ १ _^

सभव. । अपूर्वकरणप्रथमसमयानुभागस्यानतबहुभागमात्र प्रथमानुभागखण्ड व ९ ना ख पुनरवशिष्टानतैक-

३ १ _^ ख

भागस्यानतबहुभागमात्र द्वितीयखण्ड व ९ ना ख इत्यादि क्रमेणातर्मुहूर्तेऽतर्मुहूर्ते २ १ एकैकमनुभागखण्ड

ख ख

निपतति । प्रतिसमयमेकैकफाल्यपनयन भवति, अनेन अनुभागकाडकायामशुभाशुभप्रकृतिविषयविभागश्च प्रदर्शित ॥ ८० ॥

स० च—अप्रशस्त जे असातादि प्रकृति तिनका अनुभाग काडकायाम अनत बहुभाग मात्र है । अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै जो पाइए अनुभागसत्व ताकौ अनतका भाग दीए तहा एक काडककरि बहुभाग घटावै । एक भाग अवशेष राखै है । यहु प्रथम खण्ड भया याकौं अनतका भाग दीए दूसरे काडक करि बहुभाग घटाइ एक भाग अवशेष राखै है । असै एक एक अतर्मुहूर्त करि एक एक अनुभागकाडकघात हो है तहाँ एक अनुभागकाडकोत्करणकालविषै समय समय प्रति एक एक फालिका घटावना हो है। बहुरि सातावेदनाय आदि प्रशस्त प्रकृतिनिका अनुभाग-काडकघात नियमतै नाही है ॥८०॥

---

१ अणुभागखडयमप्पसत्थकम्मसाणमणता भागा । क० चू, अणुभागखडयमप्पसत्थाण चेव कम्माण होइ, पसत्थकम्माण विसोहीए अणुभागवड्ढि मोत्तूण तग्घादाणुववत्तीदो । जयध० भा० १२, पृ० २६१ ।

विशेष—प्रत्येक अनुभागकाण्डकके पतन होनेके बाद जो अनुभागसत्त्व शेष रहता है उसके अनन्त बहुभागप्रमाण अनुभागको लेकर उसके अगले अनुभागकाण्डकको रचना होती है जिसका एक स्थितिकाण्डकघातके सख्यात हजारवे भागप्रमाण अन्तर्मुहूर्त कालमे पतन होता है। इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इस प्रकार अनुभागका घात अप्रशस्त प्रकृतियोका ही होता है, प्रशस्त प्रकृतियोका नही।

रसगदपदेसगुणहाणिट्ठाणगफड्ढयाणि थोवाणि।
अइत्थावणणिक्खेवे रसखंडेणतगुणियकमा[1] ॥ ८१ ॥

रसगतप्रदेशगुणहानिस्थानकस्पर्धकानि स्तोकानि।
अतिस्थापननिक्षेपे रसखण्डेऽनन्तगुणितक्रमाणि ॥ ८१ ॥

स० टी०—रसगतान्यनुभागसबधीनि प्रदेशगुणहानिस्थानकस्पर्धकानि कर्मपरमाणुसबध्येकगुणहानिस्थितिस्पर्धकानि स्तोकानि ९। ततः अतिस्थापनास्पर्धकान्यनतगुणानि ९ ख। तत निक्षेपस्पर्धकान्यनतगुणानि ९ ख ख। तत अनुभागकाडकस्पर्धकान्यनतगुणानि ९ ख ख ख। अनेनानुभागकाडकायामाल्पबहुत्व प्रदर्शित ॥ ८१ ॥

स० च—अनुभागको प्राप्त असे कर्म परमाणुसबधी एक गुणहानिविषै स्पर्धकनिका प्रमाण सो स्तोक है। तातै अनतगुणे अतिस्थापनारूप स्पर्धक है। तातै अनतगुणे निक्षेप स्पर्धक है। तातै अनतगुणा अनुभागकाडकायाम है। इहा असा जानना—

कर्मनिके अनुभागविषै स्पर्धक रचना है तहा प्रथमादि स्पर्धक स्तोक अनुभागयुक्त हैं। ऊपरिके स्पर्धक बहुत अनुभागयुक्त हैं। तहा तिनि सर्व स्पर्धकनिकौ अनतका भाग दीए बहुभाग मात्र जे ऊपरिके स्पर्धक तिनके परमाणूनिकौ एक भागमात्र जे नीचले स्पर्धक तिनिविषै केते इक ऊपरिके स्पर्धक छोडि अवशेष नीचले स्पर्धकनिरूप परणमावै है। तहा केते इक परमाणू पहले समय परिणमावैं है, केते इक दूसरे समय परिणमावै है, असै अतर्मुहूर्त कालकरि सर्व परमाणू परिणमाइ तिनि ऊपरिके स्पर्धकनिका अभाव करे है। इहाँ समय समय प्रति जो द्रव्य ग्रह्या ताका तौ नाम फालि है असै अतर्मुहूर्त करि जो कार्य कीया ताका नामकाण्डक है। तिस काडक करि जिनि स्पर्धकनिका अभाव कीया सो काडकायाम है। बहुरि तिनिका द्रव्यकौ जे काडकघात भए पीछै अवशेष स्पर्धक रहे तिनिविषैं, तिन प्रथमादि स्पर्धकनिविषै मिलाया ते तौ निक्षेपरूप हैं अर जिनि ऊपरिके स्पर्धकनिविषै न मिलाया ते अतिस्थापनरूप हैं ॥ ८१ ॥

विशेष—अनुभागगत एक प्रदेशगुणहानिमे जितना अनुभाग होता है उसे अनुभागगत प्रदेश गुणहानिस्थान कहते है। इसमे अनुभागस्पर्धक सबसे स्तोक होकर भी अभव्योसे अनन्तगुणे और सिद्धोके अनन्तवें भागप्रमाण होते हैं। इनसे अतिस्थापनागत अनुभागस्पर्धक अनन्तगुणे होते है। अपकर्षणके समय जो अनुभागस्पर्धक अतिस्थापनारूप रहते है अर्थात् जिन अनुभागस्पर्धकोको उल्लघन कर उनसे नीचेके अनुभागस्पर्धकोमे निक्षेप किया जाता है वे अतिस्थापनारूप अनुभागस्पर्धक अनुभागगत एक प्रदेशगुणहानिसम्बन्धी स्पर्धकोसे अनन्तगुणे होते है ऐसा यहाँ समझना

१ तस्स पदेसगुणहाणिट्ठाणतरफद्दयाणि थोवाणि। अइच्छावणाफद्दयाणि अणतगुणाणि। णिक्खेवफद्दयाणि अणतगुणाणि। आगाइदफद्दयाणि अणतगुणाणि। क० चू०, जयध० भा० १२, पृ० २६१ आदि।

चाहिए, क्योकि इन अतिस्थापनारूप स्पर्धकोमे अनुभागसम्बन्धी अनन्त प्रदेशगुणहानिया पाई जाती है। इनसे जिनमे अपकर्षित द्रव्यका निक्षेप होता है वे निक्षेपगत अनुभागस्पर्धक अनन्तगुणे होते है। इनसे अपकर्षणके लिए काण्डकरूपमे ग्रहण किये गये अनुभागस्पर्धक अनन्तगुणे होते है, क्योकि अपूर्वकरणके प्रथम अनुभागकाण्डकके पतनके समय जो अनुभाग सत्त्व होता है उसमे द्विस्थानीय अनुभागसत्त्वके अनन्तवे भागको छोडकर प्रथम अनुभागकाण्डकघातमे शेष सव अनुभागसत्त्वका ग्रहण हो जाता है। आगेके अनुभागकाण्डकघातोमे भी उत्तरोत्तर शेप रहे अनुभागसत्त्वको ध्यानमे रखकर इसो विधिसे विचार कर लेना चाहिए। तात्पर्य यह है एक एक अनुभागकाण्डकके पतन द्वारा अनन्त बहुभागप्रमाण अनुभागस्पर्धकोका पतन होता जाता है।

पढमापुव्वरसादो चरिमे समये पसत्थइदराणं।
रससत्तमणंतगुणं अणंतगुणहीणयं होदि ॥ ८२ ॥

प्रथमापूर्वरसात् चरमे समये प्रशस्तेतरेषाम्।
रससत्त्वमनन्तगुणमनन्तगुणहीनकं भवति ॥ ८२ ॥

स० टी०—अपूर्वकरणप्रथमसमये प्रशस्तप्रकृतीनामनुभागसत्त्वात् चरमसमये अनुभागसत्त्वमनंतगुणं भवति। प्रतिसमयमनंतगुणविशुद्ध्या प्रशस्तानुभागस्यानंतगुणसत्त्वसम्भवात्। इतरासामप्रशस्तप्रकृतीनां प्रथमसमयानुभागसत्त्वात् चरमसमये तदनुभागसत्त्वमनन्तगुणहीनं भवति, अनुभागकांडकघातमाहात्म्येन तत्सभवात्। एवमपूर्वकरणपरिणामैः क्रियमाणं कार्यं व्याख्यातं ॥ ८२ ॥

स० च—अपूर्वकरणके प्रथम समयसम्बन्धी प्रशस्त अप्रशस्त प्रकृतिनिका अनुभागसत्व जो है तातै ताके अंत समयविर्षे प्रशस्तनिका अनंतगुणा बधता अर अप्रशस्तनिका अनंतगुणा घटता अनुक्रमतै अनुभागसत्त्व हो है। इहा समय समय प्रति अनंतगुणी विशुद्धता होनेतै प्रशस्त प्रकृतिनिका अनंतगुणा अर अनुभागकांडकघातका माहात्म्यकरि अप्रशस्त प्रकृतिनिका अनंतवे भाग अनुभाग अंत समयविषैं संभवै है ॥ ८२ ॥

अथानिवृत्तिकरणपरिणामस्वरूपं तत्कार्यं च प्राह—

बिदियं व तदियकरणं पडिसमयं एक्क एक्क परिणामो।
अण्णं ठिदिरसखंडे अण्णं ठिदिबंधमाणुवई[1] ॥ ८३ ॥

द्वितीयमिव तृतीयकरणं प्रतिसमयमेकः एकः परिणामः।
अन्ये स्थितिरसखंडे अन्यत् स्थितिबंधमाप्नोति ॥ ८३ ॥

स० टी०—तृतीयकरणं अनिवृत्तिकरणं स च द्वितीयकरणं इव व्याख्यातव्यं। यथा अपूर्वकरणे स्थितिखंडादयः कार्यविशेषाः प्रोक्तास्तथात्राप्यनिवृत्तिकरणे ते प्रवक्तव्या इत्यर्थः। अयं तु विशेषः—अस्मिन्ननिवृत्तिकरणकाले प्रतिसमयं नानाजीवपरिणामाः जघन्यमध्यमोत्कृष्टविकल्परहिता एव भवन्ति। यथापूर्वकरणचरमसमये नानाजीवपरिणामाः षट्स्थानवृद्धिगताः परस्परतो जघन्यमध्यमोत्कृष्टभेदभिन्नाः सन्ति न तथा

१ अणियट्टिस्स पढमसमए अण्णं ट्ठिदिखडयं अण्णो ट्ठिदिबधो अण्णमणुभागखडयं। क० चू० जयध० भा० १२, पृ० २७१। ध० पु० ६, पृ० २२९।

अनिवृत्तिकरणप्रथमसमये परस्परतो भिद्यते, तत्र तेषां सर्वेषामपि समानविशुद्धिकत्वात् । अत एव न विद्यते निवृत्ति एकस्मिन् समये परस्परतो भेद एषामित्यनिवृत्तय करणविशुद्धिपरिणामा इति अनिवृत्तिकरणसंज्ञा अन्वर्था । द्वितीयादिसमयेषु विशुद्धेरनंतगुणत्वेऽपि समये समये नानाजीवपरिणामा सदृशा एव । तत्करणप्रथम-समये अन्यदेव स्थितिखंडमन्यदेवानुभागखंडमन्यदेव स्थितिबंधन च प्रारभते, अपूर्वकरणकालचरमस्थिति-खंडानुभागखंडस्थितिबंधाना तच्चरमसमये समाप्तत्वात् ॥ ८३ ॥

आगे अनिवृत्तिकरणके कार्य कहै है—

स० च—दूसरा अपूर्वकरणविषै कहे स्थितिखंडादि कार्यविशेष ते तिस अनिवृत्तिकरण-विषैं भी जानने । विशेष इतना—इहा समान समयवर्ती नाना जीवके एकसा परिणाम है, तातै नाही है निवृत्ति कहिए परस्पर परिणामनिविषै भेद जिनकै ते अनिवृत्तिकरण है, तातै समय समय प्रति एक एक परिणाम ही है । बहुरि इहा और ही प्रमाण लीए स्थितिखंड अनुभागखंड स्थिति-बंधका प्रारम्भ हो है, जातै अपूर्वकरणसम्बन्धी जे स्थितिखंडादिक तिनका ताके अन्त समयविषैं ही समाप्तपना भया ॥ ८३ ॥

अथानिवृत्तिकरणकाले कार्यविशेष प्ररूपयति—

संखेज्जदिमे सेसे दंसणमोहस्स अंतरं कुणई ।
अण्णं ठिदिरसखंडं अण्णं ठिदिबंधणं तत्थ[1] ॥ ८४ ॥

संख्येये शेषे दर्शनमोहस्यांतरं करोति ।
अन्यत् स्थितिरसखंडमन्यत् स्थितिबंधनं तत्र ॥ ८४ ॥

स० टी०—अनिवृत्तिकरणकालमन्तर्मुहूर्तमात्रं २ ७ संख्येयरूपैर्भक्त्वा तद्बहुभागान् २ ७ ४/५ पूर्वोक्त-स्थितिखंडादिविधानेन नीत्वा शेषतदेकभागे २ ७ १/५ दर्शनमोहस्यांतरविवक्षितस्थित्यायामनिषेकभाव करोत्य-निवृत्तिकरणविशुद्धिपरिणामो जीव । तस्मिन्नंतरकरणकालप्रथमसमये अन्यदेव स्थितिखंडमन्यदेव रसखंडमन्यदेव स्थितिबन्धन च प्रारभते, तद्बहुभागचरमसमये प्राक्तनस्थितिखंडादीना परिसमाप्तत्वात् ॥ ८४ ॥

अब अनिवृत्तिकरणमे कार्यविशेषका कथन करते है—

स० च०—ऐसैं स्थितिखंडादिकरि अनिवृत्तिकरणकालका संख्यात भागनिविषै बहुभाग व्यतीत भए, एक भाग अवशेष रहे दर्शनमोहका अंतर करे है । विवक्षित केई निषेकनिका सर्व द्रव्यकौ अन्य निषेकनिविषैं निक्षेपणकरि तिनि निषेकनिका जो अभाव करना सो अन्तरकरण कहिए । तहा ताके कालका प्रथम समयविषैं और ही स्थितिखंड अनुभागखंड स्थितिबंधका प्रारंभ हो है ॥ ८४ ॥

विशेष—प्रकृतमे मिथ्यात्व कर्मको उपशमन विधिका निर्देश किया जा रहा है, इसलिए

---

१ एवं ट्ठिदिखंडयसहस्सेहिं अणियट्टिअद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु अंतरं करेदि । क० चू०, जयध० भा० १२, पृ० २७२ । पढमसम्मत्तमुप्पादेंतो अंतोमुहुत्तमोहट्टदि । जी० चू०, ध० पु० ६ पृ० २२० ।

उसकी अपेक्षा यहाँ अन्तरकरणके स्वरूप पर प्रकाश डाला जाता है। मिथ्यादृष्टि जीवके अनिवृत्तिकरण कालका बहुभाग जाकर एक भाग शेष रहने पर यह अन्तरकरणकी विधिका प्रारम्भ होता है। स्पष्टीकरण इस प्रकार है—यत यह मिथ्यात्व गुणस्थानमें उदयवाली प्रकृति है, अत उसके उदय समयसे लेकर ऊपरके अन्तर्मुहूर्तके कालके जितने समय हो उतने निषेकोको छोडकर उनसे ऊपरके अन्तर्मुहूर्त प्रमाण अन्य निषेकोका उत्कर्षण कर उनका यथासम्भव उन निषेकोसे ऊपरके निषेकोमे और अपकर्षण कर उन निषेकोसे नीचेके निषेकोमे निक्षेप कर उनका पूरी तरहसे अभाव करना अन्तरकरण कहलाता है। यहाँ जिन निषेकोका अभाव किया उनसे नीचेकी स्थितिका नाम प्रथम स्थिति है और ऊपरके निषेकोका नाम द्वितीय स्थिति है। यह जीव जिस समय अन्तरकरण विधिको प्रारम्भ करता है उस समयसे स्थितिकाण्डकघात अनुभागकाण्डक घात और स्थितिबन्ध ये तीनो कार्य विशेष नये प्रारम्भ होते हैं।

अथातरकरणकालपरिमाण प्ररूपयति—

एयट्ठिदिखंडुक्कीरणकाले अतरस्स णिप्पत्ती।
अतोमुहुत्तमेत्त अतरकरणस्स अद्धाण[1] ॥ ८५ ॥

एकस्थितिखंडोत्करणकाले अतरस्य निष्पत्ति।
अतर्मुहूर्तमात्रमतरकरणस्याध्वा ॥ ८५ ॥

स० टी०—एकस्थितिखडोत्करणकाले अतरकरणस्य समाप्तिर्भवति स चातरकरणस्याध्वा काल अतर्मुहूर्तमात्र एव २ ११ । ३
४ । ४

अब अन्तरकरण करनेमे लगनेवाले कालका निर्देश करते हैं—

स० च०—एक स्थितिखडोत्करण कालविषै अन्तरकी निष्पत्ति हो है। एक स्थितिकाडकोत्करणका जितना काल तितने कालकरि अतर करिए है याकौ अतरकरणकाल कहिए है सो यहु अतर्मुहूर्तमात्र है ॥ ८५ ॥

अथान्तरायामप्रमाण तन्निषेकनिक्षेपस्थापन चाख्याति—

गुणसेढीए सीस तत्तो सखगुण उवरिमठिदिं च।
हेट्ठुवरिम्हि य आबाहुज्झिय बधम्हि संछुहदि[2] ॥ ८६ ॥

गुणश्रेण्या शीर्ष तत सख्यगुणा उपरितनस्थिति च।
अधस्तनोपरि चाबाधोज्झित्वा बधे संछुभति ॥ ८६ ॥

स० टी०—गुणश्रेण्यायामकथनकाले अपूर्वानिवृत्तिकरणकालद्वयादधिक यदनिवृत्तिकरणकालसख्यातैकभागमात्रमित्युक्त, तदस्मिन् प्रकरणे गुणश्रेणिशीर्षमित्युच्यते २ ११ । १ । तत सख्येयगुणा उपरितनस्थितिपु
४

---

१ जा तम्हि ट्ठिदिबधगद्धा तत्तिएण कालेण अतर करेमाणो गुणसेढिणिक्खेवस्स अग्गग्गादो सखेज्जदिभाग खडेदि। क० चू०, जयध० भा० १२, पृ० २७३। ध० पु० ६, पृ० २३२।

२ गुणसेढिसीसयादो सखेज्जगुणाओ उवरिमट्ठिदीओ खडेदि, अतरट्ठ तत्थुक्किणपदेसग्ग विदियट्ठिदीए आबाधूणियाए बधे उक्कड्डदि, पढमट्ठिदीए च देदि, अतरट्ठिदीसु हद णियमा ण देदि त्ति। ध० पु० ६, पृ० २३२। जयध० भा० १२, पृ० २७४।

निषेका २ ७ ७ उभयोप्यतरायाम २ ७ ७ सोऽप्यतर्मुहूर्तमात्र एव । शीर्षस्याधो गलितावशेषगुणश्रेण्यायाम
४ ४

अनिवृत्तिकरणकालसख्यातैकभागमात्र । सोऽपि शीर्षात्सख्येयगुण २ ७ ३ । तत्रांतरायामे स्थितानिषेकानु-
४

त्कीर्य प्रतिसमयमसख्येयगुणा फालीर्गृहीत्वा तत्कालबध्यमाने मिथ्यात्वप्रकृतिसमयप्रबद्धे अतरायामस्याबाधा-
वर्जिताध स्थितिषु उपरितनस्थितिषु च निक्षिपति, अतरायामसदृशस्थितिषु न निक्षिपतीत्यर्थ । अनादिमिथ्या-
दृष्टिर्मिथ्यात्वप्रकृतेरेवातर करोति । सादिमिथ्यादृष्टिस्तस्या मिश्रसम्यक्त्वप्रकृत्योरन्तर करोति। तयोन्तरात्कीर्ण-
द्रव्यमपि तत्कालबध्यमानमिथ्यात्वप्रकृतेरध उपरि च निक्षिपति । अनिवृत्तिकरणसख्यातैकभागमात्रस्य शेषस्य
सख्यातैकभागमात्रातरकरणकाल २ ७ ३ उपरि तद्बहुभागमात्रो प्रथमस्थिति २ ७ । ३ । ३ तदुपर्यतर्मु-
४ । ४ ४ । ४ । ८

हूर्तमात्रोऽतरायाम २ ७ ७ ॥ ८६ ॥
४ । ४

अब आगे अन्तरायामका प्रमाण और उसमे निषेक रचनाविधिको बतलाते हैं—

स० च०—गुणश्रेणि-आयामविषै अपूर्व-अनिवृत्तिकरणतै जो अधिक प्रमाण अनिवृत्तिकरण-का सख्यातवा भागमात्र कह्या था ताका नाम इहा गुणश्रेणिशीर्ष है। सो गुणश्रेणिशीर्षके सर्व निषेक अर यातै सख्यातगुणा गुणश्रेणिशीर्षके उपरिवर्ती असे उपरितन स्थितिके सर्व निषेक इनि दोऊनिकौ मिलाए अतरायाम हो है। एते निषेकनिका अभाव करिए है सो भी अतर्मुहूर्तमात्र है। इहा शीर्षके नीचै अनिवृत्तिकरणका अवशेष कालमात्र गलितावशेष गुणश्रेणि-आयाम अनिवृत्ति-करणकालके सख्यातवें भागप्रमाण है सो भी शीर्षतै सख्यातगुणा जानना। तहा अतरायामविषै तिष्ठते जे निषेक तिनिके द्रव्यके समय-समय अनतगुणा क्रम लीए जे फालि तिनिकौ ग्रहण करि तिस समय बधता जो मिथ्यात्व कर्म ताकी स्थितिका आबाधाकाल छोडि अतरायाम समान निषेकनिके नीचै वा ऊपरि जे निषेक तिनिविषै निक्षेपण करै है। अतरायाम समान कालसम्बन्धी जे निषेक तिनविषै नाही निक्षेपण करै है। तहा अनादि मिथ्यादृष्टि जीव तौ मिथ्यात्व ही का अर सादि मिथ्यादृष्टी तीनो दर्शनमोहका अतर करै है। बहुरि अतरकरण करनेके कालका प्रथम समयतै लगाय जो अनिवृत्तिकरणकालका सख्यातवा भागमात्र काल अवशेष रह्या ताकौ सख्यातका भाग दीए तहा एक भागमात्र तौ अतरकरणकाल है अर ताके ऊपरि अवशेष बहुभागमात्र प्रथमस्थितिका काल है। बहुरि ताके ऊपरि जिनि निषेकनिका अभाव कीया सो अतर्मुहूर्तमात्र अतरायाम है ॥८६॥

विशेष—यहाँ जितने समयके निषेकोका अभाव किया जाता है उनकी अन्तरायाम सज्ञा हैं, एक तो यह बात बतलाई गई है और दूसरे अन्तर करते समय उसमे रहनेवाले निषेकोका अन्तरायामसे नीचेके और ऊपरके किन निषेकोमे निक्षेप होता है दूसरी यह बात बतलाई गई है। पहले गुणश्रेणिका काल अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे कुछ अधिक बतला आये है, वह अधिक काल ही गुणश्रेणिशीर्ष कहलाता है। गुणश्रेणिशीर्ष सम्बन्धी स्थितिका काल और उससे सख्यातगुणी स्थितिका काल इन दोनोको मिलाकर जितना काल होता है तत्प्रमाण अन्तरायामका प्रमाण है जो अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होता है। प्रकृतमे इस अन्तरायाममे रहनेवाले निषेकोका अभाव किया जाता है, इसलिए इसकी अन्तरायाम सज्ञा है। अब उस अन्तरायामसम्बन्धी निषेकोका अभाव कर मिथ्यात्वकी किस स्थितिमे निक्षेप करता है इस तथ्यका निर्देश करते हुए प्रकृत गाथामे समुच्चयरूपसे मात्र इतना ही कहा गया है कि नीचे और ऊपर आबाधाको छोडकर बन्धमे

निक्षेप करता है। किन्तु इसका विशेष खुलासा करते हुए श्रीधवलामे बतलाया है कि अन्तरके लिये ग्रहण किये गये प्रदेश पुजका अन्तरायामके कालमे बँधनेवाली मिथ्यात्व प्रकृतिमे अर्थात् आबाधाको छोडकर उसकी द्वितीय स्थितिमे और अन्तरायामसे नीचेकी प्रथम स्थितिमे निक्षेपण करता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रकृतमे उस समय बँधनेवाली मिथ्यात्व प्रकृतिका आबाधाकाल अन्तर्मुहूर्त प्रमाण होकर भी प्रथम स्थिति और अन्तरायामसे बहुत अधिक होता है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि दर्शनमोहनीयके यह उपशमनका कथन अनादि मिथ्यादृष्टिकी अपेक्षा किया जा रहा है। यदि सादि मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तावाला हो तो वह इन दोनो प्रकृतियोका अन्तर करते समय एक आवलिमात्र स्थितिसे मिथ्यात्वके अन्तरके समान अन्तर करता है। शेष सब कथन टीकासे जान लेना चाहिए।

अथान्तरकरणसमाप्त्यनन्तरसमयकर्तव्य प्रतिपादयति—

अतरकदपढमादो पडिसमयमसखगुणिदमुवसमदि।
गुणसकमेण दसणमोहणियं जाव पढमठिदी[1] ॥ ८७ ॥

अन्तरकृतप्रथमत. प्रतिसमयमसख्यगुणितमुपशाम्यति।
गुणसक्रमेण दर्शनमोहनीय यावत् प्रथमस्थिति ॥८७॥

स० टी०—एवमेकस्थितिकाडकोत्करणकालेनातरकरण निष्ठाप्यातरकृतो भवति। अन्तर कृत यस्मिन् येन वासौ अतरकृत, अतरकरणकालचरमसमयस्तस्यानतरसमय प्रथमस्थितिप्रथमसमय तत आरभ्य यावत्प्रथमस्थितिचरमसमयस्तावत्प्रतिसमयमसख्येयगुणितक्रमेण द्वितीयस्थितिस्थितदर्शनमोहनीयद्रव्य गुणसक्रमभागहारेण भक्त्वा लब्धफालीरुपशमयति। यद्यप्यध प्रवृत्तकरणप्रथमसमयादारभ्याय दर्शनमोहस्योपशमक एव तथापि तत्प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशानामस्मिन्नवसरे निरवशेषत उपशमक इत्युच्यते ॥ ८७ ॥

अब अन्तकरणविधिके हो जानेके अनन्तर समयसे होनेवाले कर्तव्यका निर्देश करते है—

स० च०—ऐसै एक स्थितिकाडकोत्करण काल समान कालकरि कीया है अतर जानै ऐसा अन्तरकृत भया तिस कालके अनतरवर्ती जो समय सो प्रथम स्थितिका प्रथम समय है तातैं लगाय ताहीका अत समय पर्यंत समय समय प्रति असख्यातगुणा क्रम लीए जे अतरायामके उपरिवर्ती निषेक तिनरूप जो द्वितीय स्थिति तीहिविषै तिष्ठता जो दर्शनमोह ताके द्रव्यकौ पीठविषै उक्तप्रमाण जो गुणसक्रमण भागहार ताका भाग दीए जो प्रमाण आया तितने द्रव्यका समूहरूप जे फालि तिनकौ उपशमावै है। उदय आदि होनेकौ अयोग्य करना सो उपशम करना जानना। यद्यपि अध करण ही तै यहु जीव दर्शनमोहका उपशमक ही है तथापि तिस दर्शनमोहके प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेशनिका निरवशेषपनै इहा उपशमक कहिए है ॥ ८७ ॥

विशेष—यहाँ अन्तरकरण विधिके बाद जो उपशमन क्रिया होती है उसका निर्देश किया गया है। चूर्णिसूत्रकारने यहाँसे लेकर इसे उपशामक कहा है सो इसका स्पष्टीकरण करते हुए श्री

१ तदो पहुडि उवसामगो त्ति भण्णइ। क० चू०। जइ वि एसो पुव्व पि अधापवत्तकरणपढमसमयप्पहुडि उवसामगो चेव तो वि एत्तो पाए विसेसदो चेव उवसामगो होइ त्ति भणिद होइ। अणियट्टिअद्धाए सखेज्जेसु भागेसु गदेसु सखेज्जदिभागसेसे अतर कादूण तदो दसणमोहणीयस्स पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसाणमुवसामगो होइ त्ति परूवणावलवणादो। जयध० भा० १२ पृ० २७६। ध० पु० ६, पृ० २३२-२३३।

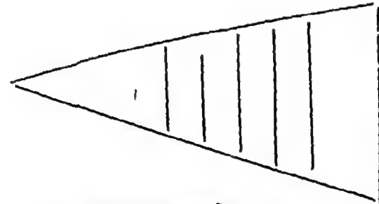
धवलाजीमें बतलाया है कि इस पदको मध्यदीपक करके शिष्योंको प्रतिबोधन करनेके लिये यतिवृषभ आचार्यने उक्त कथन किया है।

अथ दर्शनमोहोपशमनक्रियाया सम्भवद्विशेषनिर्णयार्थमाह—

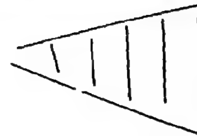
पढमट्ठिदियावलिपडिआवलिसेसेसु णत्थि आगाला।
पडिआगाला मिच्छत्तस्स य गुणसेढिकरणं पि ॥ ८८ ॥

प्रथमस्थितावावलिप्रत्यावलिशेषेषु नास्ति आगाला।
प्रत्यागाला मिथ्यात्वस्य च गुणश्रेणिकरणमपि ॥ ८८ ॥

स० टी०—प्रथमस्थितौ आवलिप्रत्यावलिद्वय उदयावलिद्वितीयावलिद्वय समयाधिक यावदवशिष्यते तावदागालप्रत्यागालौ वर्तेते। गुणश्रेणिकरणमपि वर्तते। आवलिद्वये समयाधिके अवशिष्टे आगालप्रत्यागालगुणश्रेणिकरणानि न सति। दर्शनमोहादन्यकर्मणा गुणश्रेणिरस्त्येव केवल समयाधिकद्वितीयावलिनिषेकानसख्येयलोकेन भक्त्वा तदेकभागस्योदयावल्या समयोनावलित्रिभागमतिस्थाप्यावस्तनत्रिभागे समयाधिके निक्षेपरूपप्रतिसमयोदीरणा वर्तते। द्वितीयस्थितिद्रव्यस्यापकर्षणवशात्प्रथमस्थितावागमनमागाल। प्रथमस्थितिद्रव्यस्योत्कर्षणवशात् द्वितीयस्थितौ गमन प्रत्यागाल इत्युच्यते। एकस्यामेव प्रत्यावल्यामवशिष्टाया प्रतिसमयोदीरणापि नास्ति, तन्निषेकाणा प्रतिसमयवोगलनस्यैव सभवात्। उपशमविधान तु प्रथमस्थितिचरमसमयपर्यंतमस्त्येव।



प्रथमफालिद्रव्य स ३ १२—द्वितीयफालिद्रव्य स ३।१२—३ एव प्रतिसमयमसख्येयफालिद्रव्य चरमफालिद्रव्य—
७।ख १७ गु, ७।ख १७।गु
स ३ १२—।३।२ ९।३।३ चरमफालिद्रव्यस्य
७।ख।१७।गु।४।४।४



असख्ययेयगुणकारा प्रथमस्थितिसमया रूपोना यावतस्तावतो भवतीत्यर्थ ॥ ८८ ॥

अब दर्शनमोहकी उपशमन क्रियामें जो विशेष सम्भव है उसका निर्णय करनेके लिए कहते हैं—

स० च—प्रथम स्थितिविषैं आवली प्रत्यावली कहिए उदयावली अर द्वितीयावली एक समय अधिक अवशेष रहै तहाँ आगाल प्रत्यागाल अर मिथ्यात्वकी गुणश्रेणी न हो है। दर्शनमोह विना और

१ पढमट्ठिदीदो वि विदियट्ठिदीदो वि आगाल-पडिआगालो ताव जाव आवलि-पडिआवलियाओ सेसाओ त्ति। आवलियपडिआवलियासु सेसासु तदो प्पहुडि मिच्छत्तस्स गुणसेढी णत्थि। सेसाण कम्माण गुणसेढी अत्थि। आवलियाए सेसाए मिच्छत्तस्स घादो णत्थि। क० चू०, जयध० भा० १२, पृ० २७६-२७७। ध० पु० ६, पृ० २३३।

निक्षेप करता है। किन्तु इसका विशेष खुलासा करते हुए श्रीधवलामे बतलाया है कि अन्तरके लिये ग्रहण किये गये प्रदेश पुजका अन्तरायामके कालमे बँधनेवाली मिथ्यात्व प्रकृतिमे अर्थात् आबाधाको छोडकर उसकी द्वितीय स्थितिमे और अन्तरायामसे नीचेकी प्रथम स्थितिमे निक्षेपण करता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रकृतमे उस समय बँधनेवाली मिथ्यात्व प्रकृतिका आबाधाकाल अन्तमुहूर्त प्रमाण होकर भी प्रथम स्थिति और अन्तरायामसे बहुत अधिक होता है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि दर्शनमोहनीयके यह उपशमनका कथन अनादि मिथ्यादृष्टिकी अपेक्षा किया जा रहा है। यदि सादि मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तावाला हो तो वह इन दोनो प्रकृतियोका अन्तर करते समय एक आवलिमात्र स्थितिसे मिथ्यात्वके अन्तरके समान अन्तर करता है। शेप सब कथन टीकासे जान लेना चाहिए।

अथान्तरकरणसमाप्त्यनन्तरसमयकर्तव्य प्रतिपादयति—

अतरकदपढमादो पडिसमयमसखगुणिदमुवसमदि।
गुणसक्कमेण दसणमोहणियं जाव पढमठिदी[1] ॥ ८७ ॥

अन्तरकृतप्रथमत. प्रतिसमयमसख्यगुणितमुपशाम्यति।
गुणसक्रमेण दर्शनमोहनीय यावत् प्रथमस्थिति ॥८७॥

स० टी०—एवमेकस्थितिकाडकोत्करणकालेनातरकरण निष्ठाप्यातरकृतो भवति। अन्तर कृत यस्मिन् येन वासौ अतरकृत, अतरकरणकालचरमसमयस्तस्यानतरसमय प्रथमस्थितिप्रथमसमय तत आरभ्य यावत्प्रथमस्थितिचरमसमयस्तावत्प्रतिसमयमसख्येयगुणितक्रमेण द्वितीयस्थितिस्थिततद्दर्शनमोहनीयद्रव्य गुणसक्रमभागहारेण भक्त्वा लब्धफालीरुपशमयति। यद्यप्यध प्रवृत्तकरणप्रथमसमयादारभ्याय दर्शनमोहस्योपशमक एव तथापि तत्प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशानामस्मिन्नवसरे निरवशेषत उपशमक इत्युच्यते ॥ ८७ ॥

अब अन्तकरणविधिके हो जानेके अनन्तर समयसे होनेवाले कर्तव्यका निर्देश करते हैं—

स० च०—ऐसै एक स्थितिकाडकोत्करण काल समान कालकरि कीया है अतर जानै ऐसा अन्तरकृत भया तिस कालके अनतरवर्ती जो समय सो प्रथम स्थितिका प्रथम समय है तातैं लगाय ताहीका अत समय पर्यंत समय समय प्रति असख्यातगुणा क्रम लीए जे अतरायामके उपरिवर्ती निषेक तिनरूप जो द्वितीय स्थिति तीहिविषै तिष्ठता जो दर्शनमोह ताके द्रव्यकौ पोठविषै उक्तप्रमाण जो गुणसक्रमण भागहार ताका भाग दीए जो प्रमाण आया तितने द्रव्यका समूहरूप जे फालि तिनकौ उपशमावै है। उदय आदि होनेकौ अयोग्य करना सो उपशम करना जानना। यद्यपि अध करण ही तैं यहु जीव दर्शनमोहका उपशमक ही है तथापि तिस दर्शनमोहके प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेशनिका निरवशेषपनै इहा उपशमक कहिए है ॥ ८७ ॥

विशेष—यहाँ अन्तरकरण विधिके बाद जो उपशमन क्रिया होती है उसका निर्देश किया गया है। चूर्णिसूत्रकारने यहाँसे लेकर इसे उपशामक कहा है सो इसका स्पष्टीकरण करते हुए श्री

१ तदो पहुडि उवसामगो त्ति भण्णइ। क० चू०। जइ वि एसो पुव्व पि अधापवत्तकरणपढमसमयप्पहुडि उवसामगो चेव तो वि एत्तो पाए विसेसदो चेव उवसामगो होइ त्ति भणिद होइ। अणियट्टिअद्धाए सखेज्जेसु भागेसु गदेसु सखेज्जदिभागमेसे अतर कादूण तदो दसणमोहणीयस्स पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसाणमुवसामगो होइ त्ति परूवणावलवणादो। जयध० भा० १२ पृ० २७६। ध० पु० ६, पृ० २३२-२३३।

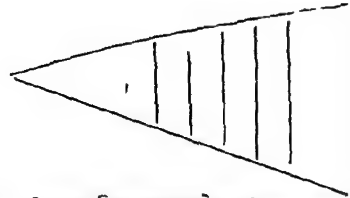
धवलाजीमें बतलाया है कि इस पदको मध्यदीपक करके शिष्योंको प्रतिबोधन करनेके लिये यति-वृषभ आचार्यने उक्त कथन किया है।

अथ दर्शनमोहोपशमनक्रियाया सम्भवद्विशेषनिर्णयार्थमाह—

पढमट्ठिदियावलिपडिआवलिसेसेसु णत्थि आगाला।
पडिआगाला मिच्छत्तस्स य गुणसेढिकरणं पि ॥ ८८ ॥

प्रथमस्थितावावलिप्रत्यावलिशेषेषु नास्ति आगाला।
प्रत्यागाला मिथ्यात्वस्य च गुणश्रेणिकरणमपि ॥ ८८ ॥

स० टी०—प्रथमस्थितौ आवलिप्रत्यावलिद्वय उदयावलिद्वितीयावलिद्वय समयाधिक यावदवशिष्यते तावदागालप्रत्यागालौ वर्तेते। गुणश्रेणिकरणमपि वर्तते। आवलिद्वये समयाधिके अवशिष्टे आगालप्रत्यागाल-गुणश्रेणिकरणानि न सति। दर्शनमोहादन्यकर्मणा गुणश्रेणिरस्त्येव केवल समयाधिकद्वितीयावलिनिषेकान-सख्येयलोकेन भक्त्वा तदेकभागस्योदयावल्या समयोनावलिद्वित्रिभागमात्रस्याप्यागरतनाद्विभागे समयाधिके निक्षेपरूपप्रतिसमयोदीरणा वर्तते। द्वितीयस्थितिद्रव्यस्यापकर्षणवशात्प्रथमस्थितावागमनमागाल। प्रथमस्थिति-द्रव्यस्योत्कर्षणवशात् द्वितीयस्थितौ गमन प्रत्यागाल इत्युच्यते। एकस्यामेव प्रत्यावल्यामवशिष्टाया प्रति-समयोदीरणापि नास्ति, तन्निषेकाणा प्रतिसमयधोगलनस्यैव सभवात्। उपशमविधान तु प्रथमस्थितिचरमसमय-पर्यंतमस्त्येव।

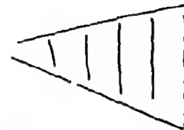


प्रथमफालिद्रव्य स ∂ १२—द्वितीयफालिद्रव्य स ∂।१२ – ∂ एव प्रतिसमयमसख्येयफालिद्रव्य चरमफालिद्रव्य—

७। ख १७ गु ७। ख १७। गु

स ∂ १२ –। ∂।२ ∂।३।३ चरमफालिद्रव्यस्य

७। ख। १७। गु।४।४।४



असख्ययेयगुण-कारा प्रथमस्थितिसमया रूपोना यावतस्तावतो भवतीत्यर्थ ॥ ८८ ॥

अब दर्शनमोहकी उपशमन क्रियामें जो विशेष सम्भव है उसका निर्णय करनेके लिए कहते हैं—

स० च—प्रथम स्थितिविषैं आवली प्रत्यावली कहिए उदयावली अर द्वितीयावली एक समय अधिक अवशेष रहैं तहाँ आगाल प्रत्यागाल अर मिथ्यात्वकी गुणश्रेणी न हो है। दर्शनमोह विना और

---

१ पढमट्ठिदीदो वि विदियट्ठिदीदो वि आगाल-पडिआगालो ताव जाव आवलि-पडिआवलियाओ सेसाओ त्ति। आवलियपडिआवलियासु सेसासु तदो प्पहुडि मिच्छत्तस्स गुणसेढी णत्थि। सेसाण कम्माण गुणसेढी अत्थि। आवलियाए सेसाए मिच्छत्तस्स घादो णत्थि। क० चू०, जयध० भा० १२, पृ० २७६-२७७। ध० पु० ६, पृ० २३३।

कर्मनिकी गुणश्रेणी होय ही है। तहाँ मिथ्यात्वकी उदयावलीविषै निक्षेपण करनेरूप केवल उदीरणा ही पाइए है सो कहिए है—

समय अधिक द्वितीयावलीके निषेकनिके द्रव्यको असंख्यात लोकका भाग दीएँ जो प्रमाण आवै तितने द्रव्यकौ उदयावलीके निषेकनिविषै अंतके समय घाटि आवलीके दोय तीसरा भागमात्र निषेक अतिस्थापन करि नीचेके एक समय अधिक आवलीके त्रिभागमात्र निषेकनिविषै निक्षेपण करै है। ऐसै समय समय प्रति उदीरणा पाइए है। द्वितीय स्थितिके निषेकनिके द्रव्यकौ अपकर्षण करि प्रथम स्थितिके निषेकनिविषै प्राप्त करना ताका नाम आगाल है। अर प्रथम स्थिति निषेकनिके द्रव्यकौ उत्कर्षण करि द्वितीय स्थितिके निषेकनिविषै प्राप्त करना ताका नाम प्रत्यागाल है। बहुरि तिस प्रथम स्थिति विषै एक प्रत्यावली ही अवशेष रहैं उदीरणा भी न हो है। तिस प्रत्यावलीके निषेकनिका समय समय प्रति अधोगलन ही है। एक एक समय व्यतीत होतैं एक एक समय निर्जरै है बहुरि उपशमविधान प्रथम स्थितिका अंत पर्यंत है। तहाँ दर्शनमोहके द्रव्यकौ गुणसंक्रम भागहारका भाग दीएँ प्रथम स्थितिका प्रथम समयविषै उपशम करने योग्य जो प्रथम फालि ताका द्रव्य हो है तातै असंख्यातगुणा द्वितीय समयसम्बन्धी द्वितीय फालिका द्रव्य हो है ऐसै क्रमतै एक घाटि प्रथम स्थितिका समयप्रमाण वार असंख्यातका गुणकार भएँ अंत फालिका द्रव्य हो है ॥ ८८ ॥

विशेष—प्रथम स्थितिके द्रव्यका उत्कर्षण कर द्वितीय स्थितिमे देना आगाल है और द्वितीय स्थितिके द्रव्यका अपकर्षण कर प्रथम स्थितिमे देना प्रत्यागाल है ये दोनो कार्य आवलि और प्रत्यावलिप्रमाण प्रथम स्थितिके शेष रहनेके पूर्व समय तक ही होते है। यही तक मिथ्यात्वका द्रव्यका गुणश्रेणिनिक्षेप भी होता है। जब मिथ्यात्वकी प्रथम स्थिति आवलि और प्रत्यावलिप्रमाण शेष रह जाती है तब वहाँसे लेकर ये तीनो कार्य बन्द हो जाते है। मात्र अन्य कर्मोका गुणश्रेणिनिक्षेप होता रहता है। मिथ्यात्वकी प्रथम स्थितिके आवलि और प्रत्यावलि प्रमाण शेष रहने पर उसके द्रव्यका गुणश्रेणिनिक्षप न होनेका कारण यह है कि वहाँसे लेकर द्वितीयावलिके अपकर्षित द्रव्यका उदयावलिमे ही यथानियम निक्षेप होता है। इसलिए वहाँसे लेकर मिथ्यात्वके गुणश्रेणिनिक्षेपका भी निषेध किया है।

अथ प्रथमोपशमसम्यक्त्वाद्यग्रहणकाल तत्कार्यविशेष च प्रतिरूपयति—

अंतरपढमं पत्ते उपसमणामो हु तत्थ मिच्छत्तं ।
ठिदिरसखंडेण विणा उवट्ठाइदूण कुणदि तिधा ॥८९॥

अंतरप्रथमं प्राप्ते उपशमनाम हि तत्र मिथ्यात्वम् ।
स्थितिरसखंडेन विना उपस्थापयित्वा करोति त्रिधा ॥८९॥

---

१ चरिमसमयमिच्छाइट्ठी से काले उवसंतदंसणमोहणीओ। ताधे चेव तिण्णि कम्मंसा उप्पादिदा। क० चू०। अणियट्टिकरणपरिणामेहिं पेलिज्जमाणस्स दंसणमोहणीयस्स जंतेण दलिज्जमाणकोद्दवरासिस्सेव तिण्हं भेदाणमुप्पत्तीए विरोहाभावादो। जयध० भा० १२, पृ० २८०-२८१। ओहट्टेदूण मिच्छत्तं तिण्णि भागं करेदि सम्मत्तं मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तं। षट्‌ख० चू०। ण च उवसमसम्मत्तकालब्भंतरे अणंताणुबंधीविसंजोयण-किरियाए विणा मिच्छत्तस्स ट्ठिदिघादो वा अणुभागघादो व अत्थि, तधोवदेसाभावा। ध० पु० ६, पृ० २३४।

स० टी०—अंतरायामप्रथमसमये प्राप्ते सति दर्शनमोहस्यानंतानुबंधिचतुष्टयस्यापि प्रकृतिस्थित्यनुभाग-प्रदेशानां निरवशेषोपशमनादौपशमिकं तत्त्वार्थश्रद्धानरूपसम्यग्दर्शनं प्रतिपद्यमानो जीवः प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिर्नामा भवति। स तत्रांतरायामप्रथमसमये द्वितीयस्थितौ स्थितं मिथ्यात्वप्रकृतिद्रव्यं स्थित्यनुभागकांडकघातं विना अपवर्त्य गुणसंक्रमभागहारेण भक्त्वा त्रिधा करोति मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वप्रकृतिरूपेण परिणमयतीत्यर्थः ॥८९॥

अब प्रथमोपशमसम्यक्त्वके ग्रहण करनेके कालका और उसमें होनेवाले कार्यविशेषका कथन करते हैं—

स० च०—ऐसे अनिवृत्तिकरण काल समाप्त भए ताके अनंतरि अंतरायामका प्रथम समयकौं प्राप्त होतैं दर्शनमोह अर अनंतानुबंधीचतुष्क इनिके प्रकृति प्रदेश स्थिति अनुभागनिका समस्तपनैं उदय होने अयोग्यरूप उपशम होनेतैं औपशमिक तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप सम्यग्दर्शनकौं पाइ जीव औप-शमिकसम्यग्दृष्टी हो है। तहां प्रथम समयविषैं द्वितीय स्थितिविषैं तिष्ठता मिथ्यात्वरूप द्रव्यकौं स्थिति-कांडक अनुभागकांडकका घात विना गुणसंक्रमणका भाग देइ तीन प्रकार परिणमावै है ॥ ८९ ॥

विशेष—प्रथम स्थितिको समाप्त कर इस जीवके अन्तरायाममें प्रवेश करने पर दर्शनमोह-नीयकी उपशम संज्ञा हो जाती है। करण परिणामोंके द्वारा निःशक्त किये गये दर्शनमोहनीयके उदयरूप पर्यायके बिना अवस्थित रहनेका नाम उपशम है। यहाँ सर्वोपशम सम्भव नहीं है, क्योंकि दर्शनमोहनीयका उपशम हो जाने पर भी उसका संक्रमण और अपकर्षण पाया जाता है। अतः यहाँसे दर्शनमोहनीयका उपशम करनेवाले जीवकी उपशम सम्यग्दृष्टि संज्ञा हो जाती है। यहींसे लेकर यह जीव मिथ्यात्व प्रकृतिको तीन भागोंमें विभक्त करता है। प्रथम भागका नाम वही रहता है। दूसरे और तीसरे भागको क्रमसे सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृतिमिथ्यात्व कहते हैं। अनन्तानुबन्धी कर्मका उदय प्रारम्भके दो गुणस्थानोंमें ही होता है ऐसा एकान्त नियम है, अतः इस गुणस्थानमें अनुदय रहनेसे उसके द्रव्यको भी उदयमें नहीं दिया जा सकता, इसलिये प्रथमोपशम सम्यक्त्वमें उसका उपशम स्वीकार किया गया है। अनन्तानुबन्धीका अन्तरकरण उपशम नहीं होता।

यहाँ संस्कृत टीकामें दर्शनमोहनीय और अनन्तानुबन्धी चतुष्कका प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंकी अपेक्षा निरवशेष अर्थात् सब प्रकारसे उपशम कहा है सो इसका यही तात्पर्य है कि इन सातों प्रकृतियोंके प्रकृति आदि चारों प्रकृतमें उदयके अयोग्य रहते हैं। संक्रमण और अपकर्षण होनेमें कोई बाधा नहीं, क्योंकि यहीं मिथ्यात्व प्रकृति तीन भागोंमें विभक्त होती है तथा अनन्तानु-बन्धीका अपनी सजातीय प्रकृतिरूपसे संक्रमण हो सकता है तथा अनुदयरूप प्रकृति होनेसे उसका उदयावलिके बाहर उपरितन निषेक तक अपकर्षण भी हो सकता है।

स्थिति और अनुभागकी अपेक्षा मिथ्यात्वके द्रव्यका तीनरूप विभाग किस प्रकार होता है इसका निर्देश—

मिच्छत्तमिस्ससम्मसरूवेण य तत्तिधा य दव्वादो।
सत्तीदो य असंखाणंतेण य होंति भजियकमा[1] ॥ ९० ॥

मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वरूपेण च तत्त्रिधा च द्रव्यतः।
शक्तितश्च असंख्यानंतेन च भवंति भजितक्रमाः ॥ ९० ॥

१ पढमसमयउवसंतदंसणमोहणीओ मिच्छत्तादो सम्मामिच्छत्ते बहुगं पदेसग्गं देदि। सम्मत्ते असंखेज्ज-गुणहीणं देदि। क० चू०, जयध० भा० १२, पृ० २८२। मिच्छत्ताणुभागादो सम्मामिच्छत्ताणुभागो अणंत-गुणहीणो, तत्तो सम्मत्ताणुभागो अणंतगुणहीणो त्ति पाहुडसुत्ते णिद्दिट्ठत्तादो। ध० पु० ६, पृ० २३५।

स० टी—गुणसंक्रमभागहारेण तन्मिथ्यात्वद्रव्य अपवर्त्य विभज्य मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वप्रकृतिरूपेण परिणममान द्रव्यतोऽसख्येयभागक्रमेण शक्तितोऽनुभागतोऽनतभागक्रमेण च परिणमति । तथाहि—

मिथ्यात्वद्रव्यमिद स a १२—गुणसक्रमभागहारेण भक्त्वा वहुभागमात्रद्रव्य मिथ्यात्वप्रकृतिरूपेण
७ । ख । १७

१ ——
तिष्ठति— स a १२ — गु तदेकभागमात्रद्रव्यमिद स । a । १२ — a अत्राधिकरूप पृथक्स्थाप्यावशिष्ट
७ । ख । १७ । गु

स । a । १२—। a । ७ । ख । १७ । गु a
७ । ख । १७ । गु a१ —

इद सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिरूपेण परिणत पृथक्स्थापितैकरूपमिद स । a । १२ — । १ सम्यक्त्वप्रकृतिरूपेण परि-
७ । ख । १७ । गु

णत । अत कारणादेता प्रकृतयो द्रव्यतोऽसख्येयभाजितक्रमा इति सूत्रे सूचित । अनुभागत मिथ्यात्वद्रव्यानुभाग —
३ ३
व । ९ । ना सख्यातानुभागकाडकावशिष्टत्वात् । अस्यानतैकभागमात्रो मिश्रप्रकृत्यनुभाग व । ९ । ना अस-
ख ३ ख ख
ख्यातैकभागमात्र सम्यक्त्वप्रकृत्यनुभाग व ९ । ना इदमनुभागाल्पवहुत्वमपि सूत्रसूचितमेव ॥ ९० ॥-
ख ख ख

स० च०—मिथ्यात्व मिश्र सम्यक्त्वमोहनीरूपकरि तीन प्रकार हो है सो क्रमतै द्रव्य अपेक्षा असख्यातवा भागमात्र अनुभाग अपेक्षा अनतवा भागमात्र जानने । सोई कहिए है—मिथ्यात्वका परमाणुरूप जो द्रव्य ताकौ गुणसक्रम भागहारका भाग देइ एक अधिक असख्यातकरि गुणिए । इतना द्रव्य विना समस्त द्रव्य मिथ्यात्वरूप ही रह्या । अर गुणसक्रम भागहारकरि भाजित मिथ्यात्व द्रव्यकौ असख्यात करि गुणिए इतना द्रव्य मिश्रमोहरूप परिणान्या । अर गुणसक्रम भागहारकरि भाजित मिथ्यात्व द्रव्यकौ एक करि गुणिए इतना द्रव्य सम्यक्त्वमोहरूप परिणम्या तातै द्रव्य अपेक्षा असख्यातवा भागका क्रम आया । बहुरि अनुभाग अपेक्षा सख्यात अनुभाग काडकनिके घातकरि जो मिथ्यात्वका अनुभाग पूर्व अनुभागके अनतवा भागमात्र अवशेष ताके अनतवें भाग मिश्रमोहका अनुभाग हैं । बहुरि याके अनतवे भागि सम्यक्त्वमोहका अनुभाग है ऐसै अनुभाग अपेक्षा अनतवा भागका क्रम आया ॥ ९० ॥

विशेष—प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि जीव उसके प्राप्त होनेके प्रथम समयमे सत्तामे स्थित मिथ्यात्वके द्रव्यके तीन टुकडे कर मिथ्यात्वके द्रव्यमेसे जितने प्रदेशपुजको सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिको देता है, उससे सख्यातगुणा हीन द्रव्य सम्यक् प्रकृतिको देता है । यहाँ उक्त दोनो प्रकृतियोके द्रव्यको लानेके लिये गुणसक्रम भागहारका प्रमाण पल्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण है । इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वके गुणसक्रम भागहारसे सम्यक् प्रकृतिका गुणसक्रम भागहार असख्यातगुणा है । इस प्रकार इस अल्पवहुत्व विधिसे अन्तर्मुहूर्त कालतक मिथ्यात्वके द्रव्यसे सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृतिको पूरता है । इतनी विशेषता है कि प्रथम समयमे इन दोनो प्रकृतियोको जितना द्रव्य दिया जाता है, द्वितीयादि समयोमे उनसे उत्तरोत्तर असख्यातगुणे असख्यातगुणे द्रव्यको देता है । इस प्रकार यह क्रम गुणसक्रमके अन्तर्मुहूर्त काल तक चालू रहता है । अनुभागकी अपेक्षा प्रथम समयमे मिथ्यात्वका जितना अनुभाग होता है उसका अनन्तवाँ भागप्रमाण सम्यग्मिथ्यात्वको

प्राप्त होता है और उसका भी अनन्तवाँ भागप्रमाण अनुभाग सम्यक्प्रकृतिको प्राप्त होता है। इसी प्रकार द्वितीयादि समयोमे भी जानना चाहिए।

कहाँ तक गुणसक्रम होता है और आगे कहाँसे विध्यातसक्रम होता है इसका निर्देश—

पढमादो गुणसंकमचरिमो त्ति य सम्ममिस्ससम्मिस्से ।
अहिगदिणाऽसखगुणो विज्झादो सकमो तत्तो[1] ॥९१॥

प्रथमात् गुणसक्रमचरम इति च सम्यग्मिश्रसमिश्रे ।
अहिगतिनासख्यगुणो विध्यात. सक्रम. तत· ॥९१॥

स० टी०—अनन्तरप्रथमसमयादारभ्य द्वितीयादिपु समयेपु अन्तर्मुहूर्तमात्रगुणसक्रमकालचरमसमयपर्यंतेपु प्रतिसमयमहिगत्या असख्येयगुण मिथ्यात्वद्रव्य सम्यक्त्वमिश्रप्रकृतिरूपेण परिणमति । तद्यथा—

प्रथमसमये सम्यक्त्वप्रकृतिद्रव्य स्तोक स ∂ । १२ – १ ततोऽसख्येयगुणमिश्रप्रकृतिद्रव्य स ∂ । १२ – ∂
७ । ख । १७ । गु ७ । ख । १७ । गु

ततो द्वितीयसमये सम्यक्त्वप्रकृतिद्रव्यमसख्येयगुण स ∂ । १२ – ∂ ∂ प्रथमसमयगृहीतद्रव्यात् द्वितीयसमयगृहीत-
७ । ख । १७ । गु

द्रव्यस्य द्विरसख्येयगुणत्वात् । ततो मिश्रप्रकृतिद्रव्यमसख्येयगुण स ∂ । १२ – ∂ ∂ ∂ ततस्तृतीयसमये
७ । ख । १७ । गु

सम्यक्त्वप्रकृतिद्रव्यमसख्येयगुण स ∂ । १२ ∂ ∂ ∂ ∂ द्वितीयसमयगृहीतद्रव्यात्तृतीयसमयगृहीतद्रव्यस्य द्वि-
७ । ख । १७ । गु

रसख्येयगुणत्वात् । ततो मिश्रप्रकृतिद्रव्यमसख्येयगुण स ∂ । १२ – ∂ ∂ ∂ ∂ ∂ एव प्रतिसमय द्विरसख्येय-
७ । ख । १७ । गु

गुणितक्रमेण अहिगत्या गत्वा गुणसक्रमकालचरमसमये सम्यक्त्वप्रकृतिद्रव्यस्य व्येक पद चयाभ्यस्त तत्साद्यतधनमिति सूत्रेणानीता असख्येयगुणकारशलाका द्विरूपोनसख्यातावलिसमयमात्रा द्विगुणद्विरूपाधिका भवति
२———

स ∂ १२ – ∂ । २ ९ – २ २ मिश्रप्रकृतिद्रव्यस्यासख्येयगुणकार तत्सूत्रानीता रूपोनसख्यातावलिसमयमात्रा
७ । ख । १७ । गु

द्विगुणरूपाधिका भवति— १ —— स ∂ । १२ – ∂ । २ ९ । २तत पर गुणसक्रमकालचरमसमयात्पर
१^—

विध्यातसक्रमभागहारेण मिथ्यात्व- ७ । ख । १७ । गु द्रव्यमपवर्त्यातिहूर्तपर्यंत सम्यक्त्वमिश्रप्रकृत्यो सक्रमयति तदा विध्यातविशुद्धिकार्यत्वात् विध्यातसक्रम इत्युच्यते । विध्यातशब्दस्य मन्दार्थत्वेन मन्दविशुद्धिकार्यस्य अगुलासख्यातभागमात्रविध्यातसक्रमभागहारलब्धद्रव्याल्पत्वस्य सुघटत्वात् ॥ ९१ ॥

---

1 तत्तो परमगुलस्स असखेज्जदिभागपडिभागेण सकमेदि सो विज्झादसकमो णाम। क० चू०, जयध० भा० १२, पृ० २८४ । ध० पु० ६, प० २३६ ।

स० च०—अनिवृत्तिकरणके अनतरि गुणसक्रम कालका प्रथम समयतै लगाय अत समय पर्यंत समय समय सर्पका चालवत् असख्यातगुणा क्रम लीए मिथ्यात्वका द्रव्य है सो सम्यक्त्व मिश्रप्रकृतिरूप परिणमै है सोई कहिए है—

पहिले समय सम्यक्त्व प्रकृतिका द्रव्य स्तोक है। तातै असख्यातगुणा मिश्रप्रकृतिका द्रव्य है। तातै असख्यातगुणा दूसरे समय सम्यक्त्व प्रकृतिका द्रव्य है। तातै असख्यातगुणा मिश्रका द्रव्य है। तातै असख्यातगुणा तीसरे समय सम्यक्त्व प्रकृतिका द्रव्य है। तातै असख्यातगुणा मिश्रका द्रव्य है ऐसै सर्पकी चालवत् सम्यक्त्व मोहनीतै मिश्रमोहनीरूप मिश्रमोहनीतै सम्यक्त्वमोहनीरूप परिणया द्रव्य असख्यातगुणा क्रमतै अन्त समयपर्यंत जानना। तहा अत समयविषै गुणसक्रमकाल सख्यात आवलीमात्र है तातै दोय घटाइ ताकौ दूणाकरि तामै दोय मिलाइए इतनीबार सम्यक्त्व-मोहनीकै असख्यातका गुणकार हो है। सख्यात आवलीमै एक घटाइ ताकौ दूणा करि तामै एक मिलाइए इतनीबार मिश्रमोहनीकै असख्यातका गुणकार हो है। बहुरि गुणसक्रम कालका अत समय-पर्यंत मिथ्यात्व विना अन्य कर्मनिकी गुणश्रेणि स्थितिकाडकघात अनुभागकाडकघात पाइए है। ताके अनतरि तिस गुणसक्रम भए पीछै अवशेष रह्या मिथ्यात्व द्रव्य ताकौ विध्यातसक्रम नामा भागहारका भाग दीए जो प्रमाण आवै तितने द्रव्यकौ सम्यक्त्वमोहनी मिश्रमोहनीरूप परिणमावै है। विध्यात शब्दका अर्थ मद है सो इहा विशुद्धता मद भई है तातै सूच्यगुलका असख्यातवा भागप्रमाण जो विध्यातसक्रम ताका भाग दीए स्तोक द्रव्य आया तिसहीकौ तिनिरूप परिण-मावै है ॥ ९१ ॥

अथानुभागकाण्डकोत्करणकालप्रभृतीना पचविशते पदानामल्पबहुत्वप्ररूपणा प्रक्रमते—

बिदियकरणादिमादो गुणसकमपूरणस्स कालो त्ति।
वोच्छ रसखडुकीरणकालादीणमप्पबहु[1] ॥ ९२ ॥

द्वितीयकरणादिमात् गुणसक्रमपूरणस्य काल इति।
वक्ष्ये रसखडोत्करणकालादीनामल्प बहु ॥ ९२ ॥

स० टी०—अपूर्वकरणप्रथमसमयादारभ्य गुणसक्रमणपूरणपर्यंत क्रियमाणानुभागकाडकोत्करणकालादी-नामल्पबहुत्व वक्ष्यामीति प्रतिज्ञावाक्यमिदम् ॥ ९२ ॥

स० च०—अपूर्वकरणका प्रथम समयतै लगाय गुणसक्रमण कालका पूर्णपना पर्यंत सभवते अनुभागकाडकोत्करण कालादिक तिनिका अल्पबहुत्व कहस्यो ॥ ९२ ॥

अतिमरसखडुक्कीरणकालादो दु पढमओ अहिओ।
तत्तो संखेज्जगुणो चरिमट्ठिदिखडहदिकालो[2] ॥ ९३ ॥

---

१ जाव गुणसक्रमो ताव मिच्छत्तवज्जाण कम्माण ठिदिघादो अणुभागघादो गुणसेढी च। एदिस्से परूवणाए णिट्ठिदाए इमो दडओ पणुवीसपडिगो। क० चू०, जयध० भा० १२, पृ० २८५-२८६। ध० पु० ६, पृ० २३६।

२ सव्वत्थोवा उवमामगरस ज चरिमअणुभागखडय तस्स उक्कीरणद्धा। अपुव्वकरणस्स पढमस्स अणुभागखडयस्स उक्कीरणकालो विसेसाहिओ। चरिमट्ठिदिखडयउक्कीरणकालो तम्हि चेव ट्ठिदिवधकालो च दो वि तुल्ला सखेज्जगुणा। क० चू०, जयध० भा० १२, पृ० २८६-२८७।

अतिमरसखडोत्करणकालतस्तु प्रथमो अधिक ।
तत. सख्यातगुण चरमस्थितिखडहृतिकाल. ॥ ९३ ॥

स० टी०—दर्शनमोहस्य प्रथमस्थितिसमाप्तिसमकालभावि (सपूर्णं भवतीत्यर्थ) शेषकर्मणा गुणसक्रम-चरमसमयसमकालभावि यदनुभागकाडक तदत्यानुभागकाडकमित्युच्यते । तस्योत्करणकालोऽतर्मुहूर्तमात्रो वक्ष्य-माणपदेभ्य सर्वेभ्य स्तोक २ ॰१ । १ पद १ तस्मादपूर्वकरणप्रथमसमयादारब्धानुभागकाडकोत्करणकालो विशे-षाधिक २ ॰१ ५ । विशेषप्रमाण पूर्वकालसख्यातैकभागमात्र २ ॰१ १० । पदे २ । तस्मात् प्रथमानुभागकाडकोत्करण-
४ ४
कालात् चरमस्थितिखडोत्करणकाल चरमस्थितिबधकालश्च द्वौ समौ सख्येय ४ गुणौ २ ॰१ । ५ । ४ एक-
४
स्थितिकाडकोत्करणकाले सख्यातसहस्रानुभागखडसभवात्, पदानि ४ ।। ९३ ।।

अब अनुभागकाण्डकोत्करणकाल आदि पच्चीस पदोका अल्पबहुत्व बतलाते है—

स० च०—दर्शनमोहका तौ प्रथम स्थितिका अतविषै सभवता, अन्य कर्मनिका गुणसक्रम कालका अत समयविषै सभवता, ऐसा जो अनुभागकाडक ताके घात करनेका जो अतर्मुहूर्तमात्र काल सो अतका अनुभागखडोत्करण काल है सो आगें जे कहिए है तिनितै स्तोक है । १ । यातै याहीका सख्यातवा भागमात्र विशेषकरि अधिक अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै जाका आरभ भया ऐसा अनुभागकाडकोत्करणका काल है । २ । यातै सख्यातगुणा अतका स्थितिकाडकोत्करण काल । ३ । अर स्थितिबधापसरण काल ए दोऊ परस्पर समान है ४ ॥ ९३ ॥

विशेष—अन्तिम स्थितिकाण्डकोत्करण काल और अन्तिम स्थितिबन्धकालसे प्रकृतमे मिथ्यात्वकी अपेक्षा उसकी प्रथम स्थितिके समाप्त होते समयके उक्त दोनोको ग्रहण करना चाहिए तथा आयुकर्मको छोडकर ज्ञानावरणादि शेष कर्मोकी अपेक्षा गुणसक्रमकालके समाप्त होते समयके उक्त दोनोको ग्रहण करना चाहिए । ये दोनो प्रथम अनुभागकाण्डकोत्करणके कालसे सख्यात-गुणे हैं ।

तत्तो पढमो अहिओ पूरणगुणसेढिसीसपढमठिदी ।
संखेण य गुणियकमा उवसमगद्धा विसेसहिया[1] ॥९४॥

ततः प्रथम अधिक पूरणगुणश्रेणिशीर्षप्रथमस्थिति ।
सख्येन च गुणितक्रमा उपशमकाद्धा विशेषाधिकाः ॥९४॥

---

१ अतरकरणद्धा तम्हि चेव ट्ठिदिबधगद्धा च दो वि तुल्लाओ विसेसाहियाओ । अपुव्वकरणे ट्ठिदि-खडयउक्कीरणद्धा ट्ठिदिबधगद्धा च दो वि तुल्लाओ विसेसाहियाओ । उवसामगो जाव गुणसकमेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि पूरेदि सो कालो सखेज्जगुणो । पढमसमय-उवसामगस्स गुणसेढिसीसय सखेज्जगुण । पढम-ट्ठिदी सखेज्जगुणा । उवसामगद्धा विसेसहिया । वे आवलियाओ समयूणाओ । क० चू०, जयध० भा० १२, पृ० २८७-२९० ।

स० टी०—ततश्चरमस्थितिकाडकोत्करणकालादतरकरणकालस्तदात्वस्थितिबधकालश्चान्योन्य समानौ विशेषाधिकौ २ ७ । ५ । ४ । ५ विशेष पूर्वकालस्य सख्येयभाग । पदानि ६ । तत प्रथम अपूर्वकरण-
४ । ४
प्रथमसमयारब्धस्थितिखडोत्करणकालस्तदात्वस्थितिबधकालश्च द्वौ समौ विशेषाधिकौ २ ७ । ५ । ४ । ५ । ५
४ ४ ४
विशेष पूर्वस्य सख्यातैकभाग । पदानि ८ । ततो गुणपूरणकाल सख्येयगुण २ । ७ । ५ । ४ । ५ । ५ । ४
४ । ४ । ४
पदानि ९ । ततो गुणश्रेणिशीर्प सख्येयगुण २ ७ । ५ । ४ । ५ । ५ । ४ । ४ । पदानि १० । तत प्रथम-
४ । ४ । ४
स्थित्यायाम सख्येयगुण — २ ७ । ५ । ४ । ५ । ५ । ४ । ४ । ४ । पदानि ११ । ततो दर्शनमोहोपशमनकालो
४ । ४ । ४
विशेषाधिक —२ ७ । ५ । ४ । ५ । ५ । ४ । ४ । ४ । ४ विशेष समयोनद्व्यावलिमात्र । पदानि १२ ॥९४॥
४ । ४ । ४

स० च०—तातै ताहीका सख्यातवा भागमात्र विशेषकरि अधिक अतरकरणकाल अर तहाँ अतरकरण करतै हो सभवता स्थितिबधापसरण काल ए दोऊ परस्पर समान है ।६। तातै ताहोका सख्यातवा भागमात्र विशेषकरि अधिक अपूर्वकरणके पहिले समय जिनिका प्रारभ भया असे स्थिति-काडकोत्करण काल अर स्थितिबधापसरण काल ए नोऊ परस्पर समान है ॥८॥ तातै सख्यात-गुणा गुणसक्रमपूरण करनेका काल है ॥९॥ तातैं सख्यातगुणा गुणश्रेणिशीर्ष है ॥१०॥ तातैं सख्यातगुणा प्रथम स्थितिका आयाम है ॥११॥ तातै समय घाटि दोय आवलीमात्र विशेषकरि अधिक दर्शनमोहके उपशमावनेका काल है ॥१२॥

विशेष—इस अल्पबहुत्वमे दसवाँ स्थान गुणश्रेणिशीर्ष है सो इससे अन्तर सम्बन्धी अन्तिम फालिका पतन होते समय गुणश्रेणिनिक्षेपके अग्राग्रसे सख्यातवे भागका खडन कर जो फालिके साथ निजीर्ण होनेवाला गुणश्रेणिशीर्ष है उसका ग्रहण करना चाहिए। तथा प्रथम जो उपशामक कालको एक समय कम दो आवलि कालप्रमाण अधिक बतलाया है सो उसका कारण यह है कि अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीव जो मिथ्यात्वका नया बन्ध करता है उसका एक समय ता प्रथम स्थितिके साथ ही गल जाता है, इसलिए प्रथम स्थितिके इस अन्तिम समयको छोडकर उप-शमसम्यग्दृष्टिके कालके भीतर एक समय कम दो आवलिप्रमाण काल ऊपर जाने तक उस नवक-बन्धकी उपशमना समाप्त होती है, यही कारण है कि प्रथम स्थितिसे उपशमनाका काल उक्त परिमाणमे विशेष अधिक कहा है।

अणियट्टीसखगुणो णियट्टीगुणसेढियायद सिद्ध ।
उवसतद्धा अतर अवरवराबाह सखगुणियकमा[1] ॥९५॥

---

१ अणियट्टिअद्धा सखेज्जगुणा । अपुव्वकरणद्धा सखेज्जगुणा । गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ । उवसत-अद्धा सखेज्जगुणा । अतर सखेज्जगुण । जहण्णिया आवाहा सखेज्जगुणा । उक्कस्सिया आवाहा सखेज्जगुणा । क० चू०, जयध० भा० १२, पृ० २९०-२९३ ।

अनिवृत्तिसंख्यगुणं निवृत्तिगुणश्रेण्यायतं सिद्धम् ।
उपशांताद्धा अंतरमवरवराबाधा संख्यगुणितक्रमा ॥९५॥

सं० टी०—ततो दर्शनमोहोपशमनकालादनिवृत्तिकरणकालः संख्येयगुणः २ १ । ५ । ४ । ५ । ५ । ४ । ४ । ४ ।
४ । ४ । ४ । ४ । ४ अयमपवर्त्य गुणित एतावान् २ १ । पदानि १३ । ततः अपूर्वकरणकालः संख्येयगुणः २ । १ १ पदानि । १४ । ततो गुणश्रेण्यायामो विशेषाधिकः २ १ १ । ४ विशेषोऽनिवृत्तिकरणकालस्तत्संख्येय- ४ भागश्च । निवृत्तिगुणश्रेण्यायतं सिद्धमित्यनेन करणत्रयावतारे 'उवरीदो गुणिदकमा कमेण संखेज्जरूवेणे' त्यनिवृत्तिकरणकालादपूर्वकरणकालस्य संख्येयगुणत्वं सिद्धं । गुणसेढीदीहत्तमपुव्वदुगादो दु साहियं होदीत्यत्र गुणश्रेण्यायामस्यापूर्वकरणकालाद्विशेषाधिकत्वं सिद्धमित्यनुवादः कृतः । पदानि १५ । ततः उपशमसम्यग्दर्शन-कालः संख्येयगुणः २ १ १ । ४ । ४ । पदानि १६ । ततोंतरायामः संख्येयगुणः २ १ १ । ४ । ४ । ४ । ४ ४ पदानि १७ । तस्मान्मिथ्यात्वस्य जघन्याबाधा संख्येयगुणा – २ १ १ । ४ । ४ । ४ । ४ । सा प्रथमस्थितिचरम- ४ समये बध्यमानजघन्यस्थितेर्भवति । शेषकर्मणां गुणसंक्रमकालचरमसमये पदानि १८ । ततो मिथ्यात्वस्यो-त्कृष्टाबाधा संख्येयगुणा २ १ १ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । सा चापूर्वकरणप्रथमसमयस्थितिबन्धस्य ग्राह्या । ४ पदानि १९ ॥ ९५ ॥

सं० चं०—तातैं संख्यातगुणा अनिवृत्तिकरणका काल है ॥१३॥ तातैं संख्यातगुणा अपूर्वकरणका काल है ॥१४॥ तातैं अनिवृत्तिकरणका काल अर याका संख्यातवां भागमात्र विशेषकरि अधिक गुणश्रेणी आयाम है ॥१५॥ तातैं संख्यातगुणा औपशमिक सम्यक्त्वका काल है ॥१६॥ तातैं संख्यातगुणा अंतरायाम है ॥१७॥ तातैं संख्यातगुणा जघन्य आबाधा है सो मिथ्यात्वकी तौ पृथक्त्वका काल है सो प्रथम स्थितिका अंत समयविषैं अर अन्य कर्मनिकी गुण-संक्रमण कालका अंत समयविषै जो स्थिति बंधै ताकी आबाधा जाननी ॥१८॥ तातैं संख्यातगुणो उत्कृष्ट आबाधा है सो अपूर्वकरणका प्रथम समयविषैं संभवता जो स्थितिबंध ताकी आबाधा ग्रहण करनी ॥१९॥९५॥

पढमापुव्वजहण्णट्ठिदिखंडमसंखसंगुणं तस्स ।
अवरवरट्ठिदिबंधा तट्ठिदिसत्ता य संखगुणियकमा[1] [2] ॥९६॥
प्रथमापूर्वजघन्यस्थितिखंडमसंख्यसंगुणं तस्य ।
अवरवरस्थितिबंधस्तत्स्थितिसत्त्वं च संख्यगुणितक्रमं ॥९६॥

सं० टी०—प्रथमस्थितौ एकस्थितिखंडोत्करणकाले अंतर्मुहूर्ते अपूर्णे अवशिष्टे यच्चरमस्थितिखण्डं पल्यसंख्यातैकभागमात्रमारब्धं तज्जघन्यस्थितिखंडमुच्यते । तच्च तस्मादुत्कृष्टाबाधाकालतोऽसंख्येयगुणं

१ "वरमवरट्ठिदिसत्ता एदे य संखगुणियकमा ॥" इत्यपि पाठः ।

२ जहण्णयं ट्ठिदिखंडयमसंखेज्जगुणं । उक्कस्सयं ट्ठिदिखंडयं संखेज्जगुणं । जहण्णगो ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो । उक्कस्सगो ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो । जहण्णयं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं । उक्कस्सयं ट्ठिदिसंत-कम्मं संखेज्जगुणं । एवं पणुवीसदिपडिगो दंडगो सम्मत्तो । क० चू०, जयध० भा० १२, पृ० २९३-२९६ ।

२ । पदानि २० । तत अपूर्वकरणप्रथमसमयोत्कृष्टस्थितिखंड सख्येयगुण सागरोपमपृथक्त्वमात्र सा ७ । पदानि
१ ८
२१ । तत प्रथमस्थितिचरमसमये मिथ्यात्वस्य जघन्यस्थितिबन्ध सख्येयगुणोऽत कोटीकोटिसागरोपमप्रमित सा अ को २ । पदानि २२ । तस्मादपूर्वकरणप्रथमसमयोत्कृष्टस्थितिबन्ध सख्येयगुण सा अ को २ । पदानि २३ ।
४ ४ ४ ४ । ४
तत प्रथमस्थितिचरमसमये मिथ्यात्वस्य जघन्यस्थितिसत्व सख्येयगुण सा अ को २ । पदानि २४। ततोऽपूर्वकरण-
४
प्रथमसमये उत्कृष्टस्थितिसत्त्व सख्येयगुण सा अ को २ । पदानि २५ । इति दर्शनमोहोपशमकस्याल्पबहुत्वपदानि पचविंशति कथितानि ।। ९६ ।।

स० च०—तातैं असख्यातगुणा जघन्य स्थितिकाडकायाम है सो प्रथम स्थितिविषै एक स्थितिकाडकोत्करण काल अवशेष रहैं जो अतका स्थितिखड पल्यका असख्यातवा भागप्रमाण प्रारभ कीया सो ग्रहणा ।।२०।। तातै सख्यातगुणा अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै सभवता उत्कृष्ट स्थितिकाडकायाम पृथक्त्व सागरप्रमाण है ।।२१।। तातै सख्यातगुणा अपूर्वकरणका प्रथम समय विषैं प्रथम स्थितिका अत समयविपै सभवता मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिविपै बध है ।।२२।। तातै सख्यातगुणा अपूर्वकरणका प्रथम समयविषैं सभवता उत्कृष्ट स्थितिवध है ।।२३।। तातै सख्यातगुणा प्रथम स्थितिका अत समयविषै सभवता मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिसत्त्व है ।।२४।। तातैं सख्यातगुणा अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै सभवता उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व है ।।२५।। इहा जघन्य स्थितिवधादि च्यारि पदनिका प्रमाण सामान्यपनै अत कोटाकोटी सागरप्रमाण है। ऐसै पचीस जायगा अल्पबहुत्व कह्या ।।९६।।

विशेष—इस अल्पबहुत्वमे २०वाँ अल्पबहुत्व जघन्य स्थितिकाण्डकोत्करण काल है, सो इससे मिथ्यात्व कर्मकी अपेक्षा प्रथम स्थितिमे स्तोक काल शेष रहने पर जो मिथ्यात्वसम्बन्धी अन्तिम स्थितिकाण्डकके पतनमे काल लगता है उसका ग्रहण करना चाहिए। तथा अन्य कर्मोकी अपेक्षा गुणसक्रम कालके स्तोक शेष रहने पर जो उनके अन्तिम स्थितिकाण्डकके पतनमे काल लगता है उसका ग्रहण करना चाहिए। इसी प्रकार जो २२ वाँ अल्पबहुत्व जघन्य स्थितिबन्ध है, सो इससे मिथ्यात्वकर्मका जो अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयमे जघन्य स्थितिबन्ध होता है उसका ग्रहण करना चाहिए तथा शेप कर्मोका गुणसक्रमके अन्तिम समयमे जो जघन्य स्थितिबन्ध होता है उसका ग्रहण करना चाहिए। इसी प्रकार २४ वें जघन्य स्थितिसत्त्वरूप अल्पबहुत्वका विचार करते समय मिथ्यात्वका मिथ्यादृष्टिके अन्तिम समय सम्बन्धी स्थितिसत्त्वको ग्रहण करना चाहिए तथा शेष कर्मोका गुणसक्रमकालके अन्तिम समयमे होनेवाले स्थितिसत्त्वको ग्रहण करना चाहिए।

अथ प्रथमोपशमसम्यक्त्वग्रहणसमयस्थितिसत्त्वमाह—

अतोकोडाकोडी जाहे सखेज्जसायरसहस्से ।
णूणा कम्माण ठिदी ताहे उवसमगुण गहइ ।।९७।।

अत कोटोकोटिर्यदा सख्येयसागरसहस्रेण ।
न्यूना कर्मणा स्थितिः तदा उपशमगुण गृह्णाति ।।९७।।

स० टी०—जाहे-यस्मिन् काले प्रथमोपशमसम्यक्त्व गृह्णाति ताहे-तस्मिन् समये कर्मणा स्थितिसत्त्व सख्येयसागरोपमसहस्रोनात कोटीकोटिमात्र भवति सा अ को २ । अथवा यस्मिन् काले अन्तरायामप्रथम-
४
समये कर्मणा स्थितिसत्त्व सख्येयसागरोपमसहस्रोनात कोटीकोटिमात्र भवति तस्मिन् काले प्रथमोपशमसम्यक्त्व-गुण गृह्णाति ।। ९७ ।।

अब प्रथमोपशमसम्यक्त्वके ग्रहणके समय जो स्थितिसत्त्व रहता है उसका कथन करते हैं—

स० च०—जिस अन्तरायामका प्रथम समयविषैं सख्यात हजार सागर करि हीन अत कोटाकोटीमात्र स्थितिसत्त्व होइ तिस समयविषै उपशमसम्यक्त्वगुणकौ ग्रहण करै है ।।९७।।

विशेष—तात्पर्य यह है कि अपूर्वकरणके प्रथम समयमे जितना स्थितिसत्त्व होता है उससे तीनो करण परिणामोके द्वारा सख्यात हजार सागरोपम घटकर स्थितिसत्त्व प्रथमोपशम सम्यक्त्वके प्रथम समयमे शेष रहता है।

अथ देशसकलसयमाभ्या सह प्रथमोपशमसम्यक्त्व गृह्णत कर्मस्थितिसत्त्वविशेषमाह—

तट्ठाणे ठिदिसत्तो आदिमसम्मेण देससयलजमं ।
पडिवज्जमाणगस्स वि सखेज्जगुणेण हीणकमो ।।९८।।

तत्स्थाने स्थितिसत्त्व आदिमसम्यक्त्वेन देशसकलयम ।
प्रतिपद्यमानस्य सख्येयगुणेन हीनक्रम ।।९८।।

स० टी०—तट्ठाणे अतरायामप्रथमसमये प्रथमोपशमसम्यक्त्वेन सह देशसयम प्रतिपद्यमानस्य पूर्वस्मादवस्थितिसत्त्वात् सख्येयगुणहीन स्थितिसत्त्व भवति सा अ को २ सम्यक्त्वकरणविशुद्धे सकाशाद्देशसयमकरण-
४ । ४
विशुद्धिविशेषस्यानतगुणत्वेन तत्कार्यस्य स्थितिखडायामस्य सख्येयगुणत्वोपलभात् खडितावशिष्टस्थितिसत्त्वस्य सख्येयगुणहीनत्व युक्तमिति पुनस्तेनैव प्रथमोपशमसम्यक्त्वेन सह सकलसयम प्रतिपद्यमानस्य कर्मणा स्थितिसत्त्व पूर्वस्मात्सख्येयगुणहीन भवति—सा अ को २ । देशसयमहेतुविशुद्धे सकाशात् सकलसयमहेतुविशुद्धेरनत-
४ । ४ । ४
गुणत्वेन तत्कार्यस्य स्थितिखडस्य सख्येयगुणत्वात् खडितावशिष्टस्थितिसत्त्व तत सख्येयगुणहीन सुघटमेवेति ।। ९८ ।।

अब देशसयम और सकलसयमके साथ प्रथमोपशमसम्यक्त्वको ग्रहण करनेवालेके जितना स्थितिसत्त्व होता है उसका कथन करते हैं—

स० च०—तिस ही अन्तरायामका प्रथम समयरूप स्थानविषैं जो देशसयम सहित प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं ग्रहै तौ ताकै स्थितिसत्त्व पूर्वोक्ततैं सख्यातगुणा घाटि हो है अर जो सकलसयमसहित प्रथम सम्यक्त्वकौं ग्रहै प्राप्त होइ ताकै स्थितिसत्त्व तिसतै भी सख्यातगुणा घाटि हो है। जातैं अनतगुणी विशुद्धताके विशेषतैं स्थितिखडायाम सख्यातगुणा हो है। तिनि करि घटाई हुई अवशेष स्थिति सख्यातवे भाग सभवै है ।।९८।।

१ ध० पु० ६ पृ० २६८ ।

विशेष—प्रथम सम्यक्त्वके अभिमुख हुए मिथ्यादृष्टि जीवके जो तीन करण परिणाम होते है उनकी अपेक्षा प्रथमोपशम सम्यक्त्वके साथ सयमासयमको ग्रहण करनेवाले जीवके तीनो करण परिणाम अनन्तगुणी विशुद्धिको लिये हुए होते है, इसलिये केवल प्रथमोपशमसम्यक्त्वको ग्रहण करनेवाले जीवके आयुकर्मके अतिरिक्त शेष कर्मोका जितना स्थितिसत्त्व होता है उससे प्रथमोपशमसम्यक्त्व सहित सयमासयमको ग्रहण करनेवाले जीवके उक्त कर्मोका स्थितिसत्त्व सख्यातगुणा हीन होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। सकलसयमकी अपेक्षा भी इसी विधिसे विचार कर लेना चाहिए।

अथ दर्शनमोहोपशमनकाले सभवद्विशेषमाह—

उवसामगो य सव्वो णिव्वाघादो तहा णिरासाणो।
उवसते भजियव्वो णिरासणो चेव खीणम्हि[1] ॥९९॥

उपशामकश्च सर्व. निर्व्याघातस्तथा निरासान'।
उपशाते भजितव्यो निरासानश्चैव क्षीणे ॥९९॥

स० टी०—सर्व सोपसर्गो निरुपसर्गो वा दर्शनमोहोपशमको निर्व्याघात विच्छेदमरणलक्षणव्याघातरहित एव तथा निरासादनश्च। तदुपशमनकाले अनतानुबध्युदयाभावेन सासादनगुणप्राप्तेरभावात्। उपशाते दर्शनमोहे अतरायामे वर्तमान प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टि सासादनगुणप्राप्त्या भक्तव्यो विकल्पनीय। कस्यचित्प्रथमोपशमसम्यक्त्वकाले एकसमयादिषडावलिकातावशेषे सासादनगुणत्वसभवात्। उपशमसम्यक्त्वकाले क्षीणे समाप्ते सति निरासादन एव तदा नियमेन मिथ्यात्वाद्यन्यतमोदयसभवात् ॥ ९९ ॥

अब दर्शनमोहके उपशमनके समय जो विशेषता सम्भव है उसका कथन करते है—

स० च०—सर्व ही दर्शनमोहका उपशम करनेवाला जोव निर्व्याघात कहिए विच्छेद वा मरण करि रहित है अर निरासादक कहिए सासादनकौ प्राप्त न हो है। बहुरि उपशम भए पीछै उपशमसम्यक्त्वी होइ तब भजनीय है—कोई जीव सासादनकौ प्राप्त न हो है कोई जीव सासादन हो है। बहुरि क्षीणे कहिए उपशम सम्यक्त्वका काल समाप्त भए पीछै सासादन न होई। तहा नियमतैं दर्शनमोहकी तीनि प्रकृतिनिविषैं एकका उदय होय ॥९९॥

अथ सासादनस्वरूप कालप्रमाण चाह—

उवसमसम्मत्तद्धा छावलिमेत्ता दु समयमेत्तो त्ति।
अवसिट्ठे आसाणो अणअण्णदरुदयदो होदि[2] ॥१००॥

उपशमसम्यक्त्वाद्धा षडावलिमात्रस्तु समयमात्र इति।
अवशिष्टे आसादन अनान्यतमोदयतो भवति ॥१००॥

स० टी०—उपशमसम्यक्त्वस्य काले एकसमयादिषडावलिकाते अवशिष्टे अनतानुबधिनामन्यतमोदयेन उपशमसम्यक्त्व विराध्य मिथ्यात्वमप्राप्य सासादनो नाम भवति, न सम्यग्दृष्टिर्नापि मिथ्यादृष्टि किंतु सासादनोऽनुभयरूप। अस्य काल जघन्येनैकसमय। उत्कर्षेण षडावलिका इत्यर्थ ॥ १०० ॥

---

१ कसाय०, गा० १००।

२ उवसमसम्मत्तद्धाए छावलियावसेसाए तदो प्पहुडि सासणगुणपडिवत्तीए सेसु वि जीवेसु सभवदसणादो। जयध० भा० १२, पृ० ३०३।

अब सासादन गुणस्थानके स्वरूप और उसके कालप्रमाणका कथन करते हैं—

स० च०—उपशम सम्यक्त्वका कालविषै उत्कृष्ट छह आवलि जघन्य एक समय अवशेष रहै अनतानुबधी क्रोधादिविषै एक कोई उदय होनेतैं सम्यक्त्वकौ विराधि मिथ्यात्वकौ प्राप्त न होइ बीचिमे सासादन हो है ॥१००॥

अथ सिंहावलोकनन्यायेनोपशमसम्यक्त्वप्रारभसामग्रीमाह—

सायारे पट्ठवगो णिट्ठवगो मज्झिमो य भजणिज्जो।
जोगे अण्णदरम्हि दु जहण्णए तेउलेस्साए[1] ॥१०१॥

साकारे प्रस्थापको निष्ठापक मध्यमश्च भजनीय ।
योगे अन्यतरस्मिन् तु जघन्यके तेजोलेश्याया ॥१०१॥

स० टी०—साकारे सविकल्पे उपयोगे ज्ञानोपयोगे वर्तमानो जीव प्रथमोपशमसम्यक्त्वप्रारभको भवति। तन्निष्ठापको मध्यमश्च भजनीयो विकल्पनीय, साकारे वा अनाकारे वा उपयोगे वर्तत इत्यर्थ । अन्यतरस्मिन् योगे मनोवाक्काययोगानामेकस्मिन् योगे वर्तमान प्रथमोपशमप्रारभको भवति । तथा—यद्यपि तिर्यग्मनुष्यो वा मदविशुद्धिस्तथापि तेजोलेश्याया जघन्याशे वर्तमान एव प्रथमोपशमसम्यक्त्वारभको भवति । नरकगतौ नियताशुभलेश्यात्वेऽपि कषायाणा मन्दानुभागोदयवशेन तत्त्वार्थश्रद्धानानुगुणकारणपरिणामरूपविशुद्धि-विशेषसभवस्याविरोधात् । देवगतौ सर्वोऽपि शुभलेश्य एव प्रथमोपशमसम्यक्त्वप्रारभको भवति ॥ १०१ ॥

अब सिंहावलोकनन्यायसे उपशमसम्यक्त्वकी प्रारम्भिक सामग्रीका कथन करते हैं—

स० च०—साकार जो ज्ञानोपयोग ताकौं होतैं ही जीवकै प्रथमोशम सम्यक्त्वका प्रारभ हो है। अर ताका निष्ठापक कहिए सम्पूरण करनेवाला अर मध्य अवस्थावर्ती जीव भजनीय है। साकार अथवा अनाकार उपयोग युक्त होइ। भावार्थ यहु—कै दर्शनोपयोगी होइ कै ज्ञानोपयोगी होइ। बहुरि तीन योगनिविषैं कोई एक योगविषै वर्तमान प्रथम सम्यक्त्वका प्रारभ हो है। बहुरि तिर्यंच मनुष्य है सो मद विशुद्धतायुक्त है तौ भी तेजो लेश्याका जघन्य अश ही विषैं वर्तमान जीव प्रथम सम्यक्त्वका प्रारभक हो है। अशुभलेश्याविषैं न हो है। बहुरि यद्यपि नरकविषै नियम-तैं अशुभलेश्या है तथापि तहा जो लेश्या पाइए है तिस लेश्याका मद उदय होतैं प्रथम सम्यक्त्व का प्रारभक हो है। बहुरि देवकैं नियमतैं शुभलेश्या है, तहा वर्तमान जीव ताका प्रारभक हो है॥१०१॥

विशेष—जो मन्द विशुद्धिवाला तिर्यञ्च और मनुष्य प्रथमोपशम सम्यक्त्वका उपार्जन करता है उसके कमसे कम पीतलेश्याका जघन्य अश अवश्य होता है। केवल पीतलेश्याके जघन्य अशके रहते हुए ही वह प्रथमोपशम सम्यक्त्वका उपार्जन करता है यह 'जहण्णए तेउलेस्साए' इस पदका अर्थ नही है। शेष कथन सुगम है।

---

1 सागारे पट्ठवगो णिट्ठवगो मज्झिमो य भजियव्वो। जोगे अण्णदरम्मि जहण्णगो तेउलेस्साए। कसाय, गा० ८९, जयध० भा० १२, पृ० ३०६ (अवलोकनीय)।

अथ प्रथमोपशमसम्यक्त्वकालात्परमुदयोग्यकर्मविशेषमाह—

अंतोमुहुत्तमद्धं सव्वोवसमेण होदि उवसंतो ।
तेण परमुदओ खलु तिण्णेक्कदरस्स कम्मस्स[1] ॥१०२॥

अंतर्मुहूर्तमद्धा सर्वोपशमेन भवति उपशांत ।
तेन परं उदयः खलु त्रिष्वेकतरस्य कर्मण ॥१०२॥

स० टी०—अंतर्मुहूर्तमध्वानं अंतर्मुहूर्तकालपर्यंतं सर्वेषां दर्शनमोहस्य प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशानामुपशमेन उदयायोग्यभावेन जीवः उपशांतः उपशमसम्यग्दृष्टिर्भवति । तेण परं तस्मादुपशमसम्यक्त्वकालात्परं तिसृणां दर्शनमोहप्रकृतीनामेकतमस्य कर्मणः उदयो भवत्येव ॥ १०२ ॥

अब प्रथमोपशमसम्यक्त्वके कालके बाद उदय योग्य कर्मविशेषका कथन करते हैं।—

स० च०—अंतर्मुहूर्त कालपर्यंत सर्व दर्शनमोहका उपशमकरि उपशम सम्यग्दृष्टि हो है। तातैं पीछैं तीन दर्शनमोहकी प्रकृतिनिविषै एक कोईका उदय नियमतैं होइ, उपशम सम्यक्त्वके ऊपरि ताका उदय है ॥१०२॥

अथ दर्शनमोहांतरपूरणविधानांतरमाह—

उवसमसम्मत्तुवरिं दंसणमोहं तुरंत पूरेदि ।
उदयल्लिस्सुदयादो सेसाणं उदयबाहिरदो ॥१०३॥

उपशमसम्यक्त्वोपरि दर्शनमोहं त्वरितं पूरयति ।
उदीयमानस्योदयतः शेषाणामुदयबाह्यतः ॥१०३॥

स० टी०—प्रथमोपशमसम्यक्त्वस्योपरि तत्कालचरमसमयस्योपर्यनंतरसमये दर्शनमोहस्य द्वितीयस्थितिद्रव्यमपकृष्य उदयवतोऽतरमुदयावलिप्रथमनिषेकादारभ्य उदयहीनस्य उदयावलिबाह्यप्रथमनिषेकादारभ्य निक्षिप्य पूरयति ॥

अब दर्शनमोहके अन्तरको पूरण करनेकी विधि कहते है—

स० च०—उपशम सम्यक्त्वके ऊपरि ताका अंत समयके अनंतरि दर्शनमोहकी अंतरायामके ऊपरिवर्त्ती जो द्वितीय स्थिति ताके निषेकनिका द्रव्यकौं अपकर्षण करि अंतरकौ पूरै है। भावार्थ यहु—उपशम सम्यक्त्वका कालतैं संख्यातगुणा जो अंतरायामके ऊपरिवर्त्ती जो द्वितीय अन्तरायाम तीहिंविषै उपशम सम्यक्त्वका काल प्रमाण निषेकरूप तौ अभावरूप रहे ते उपशम सम्यक्त्वकालविषै व्यतीत भए। बहुरि अवशेष अंतरायामके निषेक रहे ते अभावरूप थे तिनिविषैं द्वितीय स्थितिका द्रव्य निक्षेपण करि बहुरि तिनिका सद्भाव करै है। तहां जिस प्रकृतिका उदय पाइए ताका तौ उदयावलिके प्रथम निषेकतैं लगाय अर उदय हीन प्रकृतिनिका उदयावलीतैं बाह्य निषेकतैं लगाय तिस अपकर्षण कीया द्रव्यकौ अंतरायामविषैं वा द्वितीय स्थितिविषैं निक्षेपण करै है ॥१०३॥

---

१ कसाय० गा० १०३ ।

ओक्कट्टिदइगिभाग समपट्टीए विसेसहीणकम ।
सेसासखाभागे विसेसहीणेण खिवदि सव्वत्थ ॥१०४॥

अपकर्षितैकभाग समपट्ट्या विशेषहीनक्रमम् ।
शेषासंख्यभागे विशेषहीनेन क्षिपति सर्वत्र ॥१०४॥

स० टी०—प्रथमोपशमसम्यक्त्वकाल परिसमाप्त्यानतरसमये तिसृणा दर्शनमोहप्रकृतीना मध्ये या प्रकृति-रुदययोग्या भवति तत्प्रति द्रव्य द्वितीयस्थितौ स्थितमपकृष्य उदयावल्या तद्बाह्यातरायामे द्वितीयस्थितौ च निक्षिपति । उदयायोग्ययो शेषप्रकृत्योर्द्रव्यमपकृष्य उदयावलिबाह्यातरायामद्वितीयस्थित्योरेव निक्षिपति । तद्यथा—

तत्र उदयोग्य सम्यक्त्वप्रकृतिद्रव्य स ƨ । १२—इदमपकर्पणभागहारेण खण्डयित्वा एकभाग स ƨ । १२—
७ । ख १७ गु ७ । ख १७ । गु ओ
गृहीत्वा असख्येयलोकेन खण्डयित्वा तदेकभाग स ƨ । १२— उदयावल्या 'उदयावलिस्स दव्व आवलि-
७ । ख । १७ । गु । ओ । ≡ ƨ
भजिदे दु, इत्यादि पूर्वोक्तविधानेन विशेषहीनक्रमेण निक्षिपेत् । अवशिष्टासख्यातलोकखडितवहुभाग—

१ ^
स ƨ । १२ - ≡ ƨ गुणकारस्यैकरूपहीनतामविवक्षित्वा अपवर्तित स ƨ । १२ अस्माद-
७ । ख । १७ । गु । ओ । ≡ ƨ १ ^ ७ । ख । १७ । गु । ओ
पकृष्टबहुभागमात्र नानागुणहानिमात्रद्वितीयस्थितिद्रव्यमिद स ƨ । १२ — ओ गुणकारस्यैकरूपहीनत्वमविव-
७ । ख । १७ । गु ओ
क्षित्वा अपवर्त्य 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यनेनानीत तत्प्रथमनिपेकद्रव्यमिद स ƨ १२ — 'पदहत-
७ । ख । १७ । गु १२
मुखमादिधनमि' त्यनेन सख्यातावलिमात्रेणातरायामेन गुणित समपट्टिकाद्रव्य स ƨ । १२—२ ᑫ पुनर्द्वितीय-
७ । ख । १७ । गु । १२
स्थितिप्रथमगुणहानिप्रथमनिपेकद्रव्य द्विगुणित तदधस्तनगुणहानिप्रथमनिपेकद्रव्य भवति स । ƨ १२ — । २
७ । ख । १७ । गु । १२
अस्मिन् द्विगुणगुणहान्या भक्ते प्रचयो भवति—स ƨ । १२ — २ सैकपदाहतपददलचयहतमुत्तरधनमित्यनेनानीत
७ । ख । १७ । गु १२ । १६

१—
स ƨ । १२ — २ । २ ᑫ । २ ᑫ । चयधन पूर्वानीतादिधने साधिक कृत्वा स ƨ । १२ — २ ᑫ एतावद्द्रव्य
७ । ख । १७ । गु । १२ — १६ । २ ७ । ख । १७ । गु । १२
स ƨ । १२ — अपकृष्टावशिष्टद्रव्याद् गृहीत्वातरायामप्रथमसमये गच्छमात्रचयैरधिक
७ । ख । १७ । गु । ओ
द्वितीयस्थितिप्रथमनिपेकमात्र च द्रव्य निक्षिप्य द्वितीयादिसमयेपु विशेपहीनक्रमेण निक्षिपेत् । अतरायामचरम-समये एकचयाधिक निक्षिपेत् । अपकृष्टावशिष्टद्रव्य किंचिदूनमपवर्तित—
स । ƨ । १२ — अस्मात्पुनरपि सविशेषसमपट्टिकाद्रव्यमिद गृहीत्वा स ƨ । १२ — २ ᑫ पूर्व-
७ । ख १७ । गु । ओ ७ । ख । १७ । गु । ओ । १२

अथ प्रथमोपशमसम्यक्त्वकालात्परमुदयोग्यकर्मविशेपमाह—

अंतोमुहुत्तमद्ध सव्वोवसमेण होदि उवसंतो ।
तेण परमुदओ खलु तिण्णेक्कदरस्स कम्मस्स[1] ॥१०२॥

अंतर्मुहूर्तमद्धा सर्वोपशमेन भवति उपशांत ।
तेन परं उदयः खलु त्रिष्वेकतरस्य कर्मण ॥१०२॥

स० टी०—अतर्मुहूर्तमध्वान अतर्मुहूर्तकालपर्यंत सर्वेपा दर्शनमोहस्य प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशाना-मुपशमेन उदयायोग्यभावेन जीव उपशात उपशमसम्यग्दृष्टिर्भवति । तेण पर तस्मादुपशमसम्यक्त्वकालात्पर तिसृणा दर्शनमोहप्रकृतीनामेकतमस्य कर्मण उदयो भवत्येव ॥ १०२ ॥

अब प्रथमोपशमसम्यक्त्वके कालके वाद उदय योग्य कर्मविशेषका कथन करते हैं ।—

स० च०—अतर्मुहूर्त कालपर्यंत सर्व दर्शनमोहका उपशमकरि उपशम सम्यग्दृष्टि हो है । तातै पीछैं तीन दर्शनमोहकी प्रकृतिनिविषै एक कोईका उदय नियमतैं होइ, उपशम सम्यक्त्वके ऊपरि ताका उदय है ॥१०२॥

अथ दर्शनमोहांतरपूरणविधानांतरमाह—

उवसमसम्मत्तुवरिं दंसणमोहं तुरत पूरेदि ।
उदयल्लिस्सुदयादो सेसाण उदयबाहिरदो ॥१०३॥

उपशमसम्यक्त्वोपरि दर्शनमोह त्वरित पूरयति ।
उदीयमानस्योदयत शे मुदयबाह्यत ॥१०३॥

स० टी०—प्रथमोपशमसम्यक्त्वस्योपरि तत्कालचरमसमयस्योपर्यनतरसमये दर्शनमोहस्य द्वितीय-स्थितिद्रव्यमपकृष्य उदयवतोऽतरमुदयावलिप्रथमनिपेकादारभ्य उदयहीनस्य उदयावलिवाह्यप्रथमनिषेकादारभ्य निक्षिप्य पूरयति ॥

अब दर्शनमोहके अन्तरको पूरण करनेकी विधि कहते हैं—

स० च०—उपशम सम्यक्त्वके ऊपरि ताका अत समयके अनतरि दर्शनमोहकी अतरायाम-के ऊपरिवर्त्ती जो द्वितीय स्थिति ताके निषेकनिका द्रव्यको अपकर्षण करि अतरको पूरै है। भावार्थ यहु—उपशम सम्यक्त्वका कालतै सख्यातगुणा जो अतरायामके ऊपरिवर्त्ती जो द्वितीय अन्तरायाम तीहिविषैं उपशम सम्यक्त्वका काल प्रमाण निषेकरूप तौ अभावरूप रहे ते उपशम सम्यक्त्वकालविषै व्यतीत भए। बहुरि अवशेष अतरायामके निषेक रहे ते अभावरूप थे तिनिविषैं द्वितीय स्थितिका द्रव्य निक्षेपण करि बहुरि तिनिका सद्भाव करै है। तहा जिस प्रकृतिका उदय पाइए ताका तौ उदयावलिके प्रथम निषेकतैं लगाय अर उदय हीन प्रकृतिनिका उदयावलीतै बाह्य निषेकतैं लगाय तिस अपकर्षण कीया द्रव्यको अतरायामविषैं वा द्वितीय स्थितिविषैं निक्षेपण करै है ॥१०३॥

---

१ कसाय० गा० १०३ ।

ओक्कट्टिदइगिभाग समपट्टीए विसेसहीणकम ।
सेसासखाभागे विसेसहीणेण खिवदि सव्वत्थ ॥१०४॥

अपकर्षितैकभाग समपट्ट्या विशेषहीनक्रमम् ।
शेषासंख्यभागे विशेषहीनेन क्षिपति सर्वत्र ॥१०४॥

स० टी०—प्रथमोपशमसम्यक्त्वकालपरिसमाप्त्यानतरसमये तिसृणा दर्शनमोहप्रकृतीना मध्ये या प्रकृतिरुदययोग्या भवति तत्प्रति द्रव्य द्वितीयस्थितौ स्थितमपकृष्य उदयावल्या तद्बाह्यातरायामे द्वितीयस्थितौ च निक्षिपति । उदयायोग्ययो शेषप्रकृत्योर्द्रव्यमपकृष्य उदयावलिबाह्यातरायामद्वितीयस्थित्योरेव निक्षिपति । तद्यथा—

तत्र उदयोग्य सम्यक्त्वप्रकृतिद्रव्य स ∂ । १२— इदमपकर्षणभागहारेण खण्डयित्वा एकभाग स ∂ । १२—
७ । ख १७ गु ७ । ख १७ । गु ओ

गृहीत्वा असख्येयलोकेन खण्डयित्वा तदेकभाग स ∂ । १२— उदयावल्या 'उदयावलिस्स दव्व आवलि-
७ । ख । १७ । गु । ओ । ≡ ∂

भजिदे दु, इत्यादि पूर्वोक्तविधानेन विशेषहीनक्रमेण निक्षिपेत् । अवशिष्टासख्यातलोकखडितबहुभाग—

१^
स ∂ । १२— ≡ ∂ गुणकारस्यैकरूपहीनतामविवक्षित्वा अपवर्तित स ∂ । १२ अस्माद-
७ । ख । १७ । गु । ओ । ≡ ∂ १^ ७ । ख । १७ । गु । ओ

पकृष्टबहुभागमात्र नानागुणहानिमात्रद्वितीयस्थितिद्रव्यमिद स ∂ । १२ —ओ गुणकारस्यैकरूपहीनत्वमविव-
७ । ख । १७ । गु ओ

क्षित्वा अपवर्त्य 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यनेनानीत तत्प्रथमनिषेकद्रव्यमिद स ∂ १२ — 'पदहत-
७ । ख । १७ । गु १२

मुखमादिधनमि' त्यनेन सख्यातावलिमात्रेणातरायामेन गुणित समपट्टिकाद्रव्य स ∂ । १२—२ ⑨ पुनर्द्वितीय-
७ । ख । १७ । गु । १२

स्थितिप्रथमगुणहानिप्रथमनिषेकद्रव्य द्विगुणित तदधस्तनगुणहानिप्रथमनिषेकद्रव्य भवति स । ∂ १२—। २
७ । ख । १७ । गु । १२

अस्मिन् द्विगुणगुणहान्या भक्ते प्रचयो भवति—स ∂ । १२ — २ सैकपदाहतपददलचयहतमुत्तरधनमित्यनेनानीत
७ । ख । १७ । गु १२ । १६

१—
स ∂ । १२ — २ । २ ⑨ । २ ⑨ । चयधन पूर्वानीतादिधने साधिक कृत्वा स ∂ । १२ — २ ⑨ एतावद्द्रव्य
७ । ख । १७ । गु । १२ — १६ । २ ७ । ख । १७ । गु । १२

स ∂ । १२— अपकृष्टावशिष्टद्रव्याद् गृहीत्वातरायामप्रथमसमये गच्छमात्रचयैरधिक
७ । ख । १७ । गु । ओ

द्वितीयस्थितिप्रथमनिषेकमात्र द्रव्य निक्षिप्य द्वितीयादिसमयेषु विशेषहीनक्रमेण निक्षिपेत् । अतरायामचरमसमये एकचयाधिक निक्षिपेत् । अपकृष्टावशिष्टद्रव्य किंचिदूनमपवर्तित—
स । ∂ । १२— अस्मात्पुनरपि सविशेषसमपट्टिकाद्रव्यमिद गृहीत्वा स ∂ । १२ — २ ⑨ पूर्व-
७ । ख १७ । गु । ओ ७ । ख । १७ । गु । ओ । १२

वदतरायामे निक्षिप्य अवशिष्टापकृष्टद्रव्यमिद स ᘔ । १२ — दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा, इत्यनेन
७ । ख । १७ । गृ ओ
द्वितीयस्थितिप्रथमनिषेकादारभ्य सर्वत्र विशेषहीनक्रमेण उपर्यतिस्थापनावलिं मुक्त्वा निक्षिपेत् । उदयायोग्ययोर्मिश्र-मिथ्यात्वप्रकृत्योर्द्रव्यमपकृष्टैकभागमुदयावलिबाह्यांतरायामे द्वितीयस्थितौ च पूर्ववन्निक्षिपेत् । मिश्रस्यांतरायामाघस्तनावल्या कुतो न दीयते ? इति चेत् न तत्र प्रागपि निषेकसद्भावात् मिथ्यात्वोदयात्तद्द्रव्यमुदयावलिप्रथमसमयादारभ्य निक्षिपेत् । अनुदययो शेषयोर्द्रव्यमुदयावल्या न निक्षिपेत् । सर्वत्र एकगोपुच्छाकारेण विशेषहीननिक्षेपाभ्युपगमात् ॥ १०४ ॥

स० च०—तहां उदयवान सम्यक्त्वमोहनी होइ तौ ताका द्रव्यकौं अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहां बहुभाग तौ जैसैं थे तैसैं रहे। बहुरि एक भागकौं असंख्यात लोकका भाग देइ तहां एक भाग तौ उदयावलीविषै देना सो 'उदयावलिस्स दव्व' इत्यादि सूत्रकरि जैसै पूर्वैं विधान कह्या है तैसै उदयावलीके निषेकनिविषै चय घटता क्रमकरि निक्षेपण करना। बहुरि अपकर्षण कीया द्रव्यविषै अवशेष बहुभागमात्र रह्या ताका नाम अपकृष्टावशिष्ट द्रव्य है। सो तिसविषै अंतरायामके निषेकनिका अभाव था तिनिका सद्भाव करनेकौं कितना इक द्रव्य तौ तहां देना। सो कितना देना ताका जाननेकौ विधान कहिए है—नाना गुणहानिविषै तिष्ठता ऐसा जो सम्यक्त्वमोहनीकी द्वितीय स्थितिका द्रव्य ताकौं अपकर्षण भागहारका भाग देइ एक भाग जुदा कीए अवशेष बहुभागमात्र जो द्रव्य रह्या ताकौं 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इस सूत्रकरि साधिक ड्योढ गुणहानिप्रमाणका भाग दीए तिस द्वितीय स्थितिका प्रथम निषेक होइ सो याके समान अंतरायामके सर्व निषेक चय रहित स्थापि जोडैं आदि धन होइ सो 'पदहतमुखमादिधन' इस सूत्र करि अंतरायाम प्रमाण गच्छकरि तिस प्रथम निषेककौ गुणै अंतरायामके निषेकनिका आदि धन भया। बहुरि द्वितीय स्थितिके नीचै अंतरायामके निषेक हैं तातै द्वितीय स्थितिका आदि निषेकतै चय बधता क्रमरूप अंतरायामकौ निषेक कहिए सो चयका प्रमाण ल्याइए है—द्वितीय स्थितिकी प्रथम गुणहानि ताका प्रथम निषेक ताके नीचैवर्ती जो अंतरायामसम्बन्धी गुणहानि ताका प्रथम निषेक दूणा प्रमाण लीए चय कहिए। याकौ दो गुणहानिका भाग दीए अंतरायामविषै चयका प्रमाण आवै है। सो 'सैकपदाहतपददलचयहतमुत्तरधन, इस सूत्रकरि इहां गच्छ अंतरायाममात्र सो एक अधिक गच्छकरि आदि गच्छका आधाकौ गुणि बहुरि चयकरि गुणै उत्तरधन हो है। सो ऐसैं आदि धन उत्तरधनकौं मिलाए जो प्रमाण भया तितना द्रव्य तिस अपकृष्टावशिष्ट द्रव्यतैं ग्रहिकरि अंतरायामविषैं देना। तहां द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकतैं गच्छमात्र चयनिकरि अधिक द्रव्य तौ अंतरायामका प्रथम निषेकविषैं देना। इहां गच्छका प्रमाण अंतरायाम अर चयका प्रमाण पूर्वोक्त जानना। बहुरि द्वितीयादि निषेकनिविषैं एक एक चय घटता क्रम लीए देना। अंत निषेकनिविषैं एक एक चय अधिक देना। ऐसै दीए जैसैं क्रम लीए चहिए तैसै अंतरायामके निषेकनिका अभाव भया था तिनिका सद्भाव भया। अब अपकृष्टावशिष्ट द्रव्यविषै इतना द्रव्य दीए किंचित् ऊन भया तिस अवशेष द्रव्यकौ अंतरायाम वा द्वितीय स्थितिविषैं देना। तहां अंतरायामविषैं तौ पूर्वैं जैसैं आदि धन उत्तर धन मिलाइ द्रव्य प्रमाण ल्यावनेका विधान कह्या था तैसै प्रमाण ल्याइ तितने द्रव्यकौ अंतरायामके निषेकनिविषैं देना। याकौ दीए पीछैं जो अवशेष रह्या ताकौं 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यादि विधानकरि द्वितीय स्थितिके नाना गुणहानिसम्बन्धी जे निषेक तिनविषै अंतके अतिस्थापनावलीमात्र निषेक छोडि सर्वत्र देना। ऐसैं तौ उदय योग्य सम्यक्त्वमोहनीका

विधान कह्या। बहुरि उदयकौ अयोग्य जे मिश्र मिथ्यात्व प्रकृतिनिका द्रव्यकौ अपकर्षण भागहार-का भाग देइ तहा एक भाग उदयावलीतैं बाह्य जो अतरायाम तीहिंविर्षं अर द्वितीय स्थितिविर्षैं पूर्ववत् निक्षेपण करना। उदयावलीविषै निक्षेपण न करना। अैसै ही जो मिश्रमोहनी अथवा मिथ्यात्वमोहनी उदय योग्य होइ, अवशेष दोय उदय योग्य न होइ तौ तहा यथासम्भव विधान जानना। सर्वत्र जैसै गायका पूछ क्रमतैं मोटाई करि हीन हो है तैसै चय घटता क्रम पाइए है तातै तहा एक गोपुच्छाकार कहिए ॥१०४॥

अथ सम्यक्त्वप्रकृत्युदयकार्यं प्ररूपयति—

सम्मुदये चलमलिणमगाढ सद्दहदि तच्चाय अत्थ।
सद्दहदि असब्भावं अजाणमाणो गुरुणियोगा ॥१०५॥

सुत्तादो त सम्म दरसिज्जत जदा ण सद्दहदि।
सो चेव हवदि मिच्छाइट्ठी जीवो तदो पहुदी[1] ॥१०६॥

सम्यक्त्वोदये चलमलिनमगाढ श्रद्दधाति तत्त्वमर्थम्।
श्रद्दधाति असद्भावमजानन् गुरुनियोगात् ॥१०५॥
सूत्रतस्त सम्यक् दर्शयत यदा न श्रद्दधाति।
स चैव भवति मिथ्यादृष्टिर्जीव. ततः प्रभृति ॥१०६॥

स० टी०—सम्यक्त्वप्रकृतेरुदये सति जीवस्तत्त्वार्थ चलनमलिनमगाढ च यथा भवति तथा श्रद्दधाति, तत्त्वार्थश्रद्धानस्य चलत्वमलिनत्वागाढत्वानि सम्यक्त्वप्रकृत्युदयकार्याणीत्यर्थ। अथ वेदकसम्यग्दृष्टि स्वय विशेषमजानानो गुरोर्वचनाकौशलदुष्टाभिप्रायगृहीतविस्मरणादिनिबधनान्नियोगादन्यथा व्याख्यानासद्भाव तत्त्वार्थेष्वसद्रूपमपि श्रद्दधाति तथापि सर्वज्ञाज्ञाश्रद्धानात्सम्यग्दृष्टिरेवासौ। पुन कदाचिदाचार्यान्तरेण गणधरादि-सूत्र प्रदर्श्य व्याख्यायमान सम्यग्रूप यदा न श्रद्दधाति तत प्रभृति स एव जीवो मिथ्यादृष्टिर्भवति, आप्तसूत्रार्था-श्रद्धानात् ॥ १०५-१०६ ॥

अब सम्यक्त्वप्रकृतिके उदयके कार्यकी प्ररूपणा करते हैं—

स० च०—उपशमसम्यक्त्वका काल पूर्ण भए पीछै नियमतै तीनोविषै एक दर्शनमोहकी प्रकृतिका उदय होइ तहा सम्यक्त्वमोहनीका उदय होतैं जीव वेदक सम्यग्दृष्टी हो है। सो चल मलिन अगाढरूप तत्वार्थको श्रद्धहै है। सम्यक्त्वमोहनीके उदयतै श्रद्धानविषैं चलपनौ हो है वा मल-लागै है वा शिथिल भाव हो है। बहुरि सो जीव आप विशेष न जानता अज्ञात गुरुके निमित्ततै असत् श्रद्धान भी करै है। परन्तु यह सर्वज्ञ आज्ञा अैसै ही है अैसै जानि श्रद्धान करै है, तातै सम्यग्दृष्टी है। अर जो कदाचित कोई ज्ञात गुरु सूत्रतैं सम्यक् स्वरूप दिखावै अर हठादिकतै श्रद्धान न करै तो तिस कालतैं लगाय सो मिथ्यादृष्टी हो है ॥१०५-१०६॥

---

१ सम्माइट्ठी सद्दहदि पवयण णियमसा दु उवइट्ठ। सद्दहदि असब्भाव अजाणमाणो गुरुणियोगा। मिच्छाइट्ठी णियमा उवइट्ठ पवयण ण सद्दहदि। सद्दहदि असब्भाव उवइट्ठ वा अणुवइट्ठ। कसाय० गा० १०७-१०८।

विशेष--श्री जयधवला भाग १२, पृ० ३२१ मे मात्र वेदकसम्यग्दृष्टीका ग्रहण न कर सामान्य सम्यग्दृष्टी पद आया है। उसके अनुसार चाहे वेदकसम्यग्दृष्टि हो या उपशमसम्यग्दृष्टि, यदि गुरु नियोगसे वह अन्यथा श्रद्धा करता है और सूत्रसे सम्यक् अर्थके बतलानेपर भी वह हठाग्रही बना रहता है तो सक्लेशविशेषके बढ जानेके कारण वह उस समयसे मिथ्यादृष्टि हो जाता है। यहा किसका कितना काल है इस दृष्टिसे विचार नही किया है। किन्तु उक्त दोनो सम्यक्त्वोमे यह सभव है इस दृष्टिसे वहा सामान्य सम्यग्दृष्टि पदका प्रयोग जान पडता है।

अथ मिश्रप्रकृत्युदयकार्यं व्याचष्टे—

मिस्सुदये सम्मिस्स दहिगुडमिस्स व तच्चमियरेण।
सद्दहदि एक्कसमये मरणे मिच्छो व अयदो वा ॥१०७॥

मिश्रोदये समिश्र दधिगुडमिश्र वा तत्त्वमितरेण।
श्रद्दधात्येकसमये मरणे मिथ्यो वा असयतो वा ॥१०७॥

स० टी०—मिश्रस्य सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतेरुदये सति जीवस्तत्त्वमितरेणातत्त्वेन समिश्रमेकस्मिन् समये पूर्वगृहीतमिथ्यादेवतादिश्रद्धानमत्यजन् अर्हन् देवतेत्यपि श्रद्दधाति। मिश्र परस्परप्रदेशानुप्रविष्ट दधिगुड यथा रसातरपरिणाम लोके दृश्यते तथा मरणे सोऽन्तर्मुहूर्तमात्रे अवशिष्टे मिथ्यादृष्टिर्वा भवत्यसयतसम्यग्दृष्टिर्वा भवति ॥ १०७ ॥

अब मिश्रप्रकृतिके उदयके कार्यकी प्ररूपणा करते है—

स० च०—मिश्र जो सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति ताका उदय होतैं जीव मिश्र गुणस्थानवर्त्ती होइ सो एक समयविषै तत्व अर इतर अतत्व इनिकौ मिश्ररूप श्रद्दहै है। जैसै दही गुड मिल्या हूवा और ही रसातरकौ प्राप्त हो है तैसै इहा सत्य असत्य श्रद्धान मिल्या हूवा जानना। इहा मरण होनेतैं अतर्मुहूर्त पहिलैं ही नियमतै मिथ्यादृष्टी वा असयत हो है। मिश्र विषै मरण नाही है ॥१०७॥

अथ मिथ्यात्वप्रकृत्युदयकार्यं प्ररूपयति—

मिच्छत्त वेदतो जीवो विवरीयदसणं होदि।
णय धम्म रोचेदि हु महुर खु रस जहा जुरिदो ॥१०८॥

मिथ्यात्वं वेदयन् जीवो विपरीतदर्शनो भवति।
न च धर्मं रोचते हि मधुरं खलु रसं यथा ज्वरित ॥१०८॥

स० टी०—मिथ्यात्वप्रकृतेरुदयमनुभवन् जीवो विपरीतदर्शन अतत्त्वश्रद्धानो मिथ्यादृष्टिर्भवति। स च धम वस्तुस्वभावमनेकात दयामूल वा रत्नत्रयात्मक मोक्षमार्ग न रोचते नेच्छति। अस्मिन्नर्थे उपमानमाह—यथा ज्वरित· पित्तज्वराक्रातो मधुररस स्फुट न रोचते ॥ १०८ ॥

अब मिथ्यात्वप्रकृतिके उदयका कार्य कहते है—

स० च०—मिथ्यात्व प्रकृतिके उदयकौ जीव अनुभवता मिथ्यादृष्टी होइ सो विपरीत श्रद्धानी होइ। जैसैं ज्वरवालेकौ मीठा न रुचै तैसै ताकौ धर्म जो अनेकात वस्तुका स्वभाव वा रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग सो रुचै नाही अैसै जानना ॥१०८॥

मिच्छाइट्ठी जीवो उवइट्ठं पवयणं ण सद्दहदि ।
सद्दहदि असब्भावं उवइट्ठं वा अणुवइट्ठं ॥१०९॥
मिथ्यादृष्टिर्जीवः उपदिष्टं प्रवचनं न श्रद्दधाति ।
श्रद्दधात्यसद्भावमुपदिष्टं वा अनुपदिष्टम् ॥१०९॥

स० टी०—यो मिथ्यादृष्टिर्जीवः उपदिष्टं प्रवचनं परमागमं न श्रद्दधाति नाभ्युपगच्छति किंतूपदिष्ट-मनुपदिष्टं वा असद्भावमतत्त्वार्थं श्रद्दधाति ॥ १०९ ॥

एवं प्रथमोपशमसम्यक्त्वप्ररूपणः प्रथमोऽधिकारः ॥

स० च०—मिथ्यादृष्टी जीव जिनेश्वर करि उपदेश्या वचनकौं नाहीं श्रद्धान करै है। बहुरि अन्यकरि उपदेश्या वा न उपदेश्या असद्भाव जो अतत्त्व ताकौ श्रद्धान करै है ॥१०९॥

इति प्रथमोपशमसम्यक्त्वप्ररूपण समाप्त भया ॥ १ ॥



[क्षा]यिकसम्यक्त्वप्ररूपणाअधि[का]रः ॥ २ ॥

जयत्यर्हद्विधूतागसूर्युपाध्यायसाधव ।
लोकेऽस्मिन् भव्यलोकाना शरणोत्तममगल ॥ १ ॥

अथ क्षायिकसम्यग्दर्शनोत्पत्तिसामग्री प्ररूपयति—

दसणमोहक्खवणापट्ठवगो कम्मभूमिजो मणुसो ।
तित्थयरपायमूले केवलिसुदकेवलीमूले[1] ॥ ११० ॥

दर्शनमोहक्षपणाप्रस्थापकः कर्मभूमिजो मनुष्यः ।
तीर्थंकरपादमूले केवलिश्रुतिकेवलिमूले ॥ ११० ॥

स० टी०—यो मनुष्य पचदशकर्मभूमिसमुत्पन्न पर्याप्त तीर्थंकरपादमूले इतरकेवलिश्रुतकेवलिनो-पादमूले वा सन्निहित स एव दर्शनमोहस्य क्षपणप्रस्थापको भवति । प्रस्थापक प्रारभक इत्यर्थ । अन्यत्र दर्शनमोहक्षपणाकारणविशुद्धिविशेषाघटनात् । अध प्रवृत्तकरणप्रथमसमयादारम्य मिथ्यात्वमिश्रप्रकृत्यो द्रव्य-मपवर्त्य सम्यक्त्वप्रकृतौ सक्रम्यते यावत्तावदतर्मुहूर्तकाल दर्शनमोहक्षपणाप्रस्थापक इत्युच्यते ॥ ११० ॥

अथ क्षायिक सम्यक्त्व प्ररूपणा लिखिए है—

स० च—जो मनुष्य कर्मभूमिविषैं उपज्या तीर्थंकर वा अन्य केवली वा श्रुतकेवलीके पाद-मूलविषैं तिष्ठता होइ सोई दर्शनमोहकी क्षपणाका प्रस्थापक कहिए प्रारभक हो है जातैं अन्यत्र ऐसा विशुद्ध ज्ञान न हो है । अध करणका प्रथम समयस्यो लगाय यावत् मिथ्यात्व मिश्रमोहनीका द्रव्य सम्यक्त्वप्रकृतिरूप होइ सक्रमण करै तावत् अतर्मुहूर्तकाल पर्यंत दर्शनमोहकी क्षपणाका प्रारभक कहिए ॥ ११० ॥

विशेष—यहाँ कर्मभूमिज मनुष्यको दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रस्थापक बतलाया गया है सो उससे, जो जीव दु षमा, अतिदु षमा, सुषमसुषमा और सुषमा इन चार कालोमे उत्पन्न हुए मनुष्य हैं वे दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ न कर शेष दो कालोमे उत्पन्न हुए मनुष्य ही दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ करते हैं, ऐसा आशय यहाँ ग्रहण करना चाहिए । सुषम-दु षमा कालमे उत्पन्न हुए मनुष्य दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ कैसे करते हैं इस शकाका समाधान करते हुए धवला पु० ६ पृ० २४७ मे बतलाया है कि वर्धनकुमार आदि जीव एकेन्द्रियोमेसे आकर मनुष्य हुए थे और उन्होने उसी भवमे दर्शनमोहनीयकी क्षपणा की थी । इससे विदित होता है कि सुषम-दु षमा कालमे उत्पन्न हुए मनुष्य भी दर्शनमोहनीयकी क्षपणा का प्रारम्भ करते हैं ।

१ दणशमोहपट्ठवगो कम्भभूसिजादो दु । णियमा मणुसगदीए णिट्ठवगो चावि सव्वत्थ ॥ क० पा० गा० ११०, जयध० भा० १३, पृ० २ । ध० पु० ६, पृ० २४५ । दसणमोहणीय कम्म खवेदमाढवेंतो कम्हि आढवेदि ? अड्ढाइज्जदीव-ममुद्देसु पण्णारसकम्मभूमीसु जम्हि जिणा केवली तित्थयरा तम्हि आढवेदि त्ति । जी० चू० ८, सू० ११, पृ० २४३ ।

णिट्ठवगो तट्ठाणे विमाणभोगावणीसु धम्मे य ।
किदकरणिज्जो चदुसु वि गदीसु उप्पज्जदे जम्हा[1] ॥ १११ ॥

निष्ठापकः तत्स्थाने विमानभोगावनिषु धर्मे च ।
कृतकृत्यः चतुर्ष्वपि गतिषु उत्पद्यते यस्मात् ॥ १११ ॥

स० टी०—दर्शनमोहक्षपणाया निष्ठापक मिथ्यात्वसम्यग्मिथ्यात्वद्रव्यस्य सम्यक्त्वप्रकृतिरूपेण सक्रमणानतरसमयादारभ्य क्षायिकसम्यक्त्वग्रहणप्रथमसमयात्प्राक् निष्ठापको भवतीत्यर्थ । स च तत्स्थाने दर्शनमोहक्षपणाप्रारभभवे विमानेपु सौधर्मादिपु कल्पेपु कल्पातीतेपु च भोगभूमितिर्यग्मनुष्येपु च घर्माया नरकपृथिव्या च भवति । कुत ? यस्मात् कारणात् कृतकृत्यवेदक पूर्वं बद्धायुष्कश्चतसृष्वपि गतिपु उत्पद्यते तस्मात्कारणात्तत्रोत्पन्नो दर्शनमोहक्षपण निष्ठापयतीत्यर्थ ॥ १११ ॥

स० च०—तिस प्रारभक कालके अनतर समयवर्ती समयतै लगाय क्षायिक सम्यक्त्व ग्रहण समयतैं पहिले निष्ठापक हो है । सो जहाँ प्रारभ कीया था तहाँ ही वा सौधर्मादिक कल्प वा कल्पातीतविषैं वा भोगभूमिया मनुष्य तिर्यंचविषै वा घर्मा नाम नरक पृथ्वीविषै भी निष्ठापक हो है, जातै बद्धायु कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि मरि च्यारथो गतिविषै उपजै है तहा निष्ठापन करै सो कथन आगै होयगा ॥ १११ ॥

विशेष—मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका क्षय कर कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि होनेके वाद यह जीव दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका निष्ठापक कहलाता है । वह पहले जिस गतिकी आयुका बन्ध करता है उसके अनुसार उस गतिमे जन्म लेकर भी दर्शनमोहनीयकी क्षपणाको पूरा करता है ।

अथ पूर्वमनतानुबधिविसयोजना प्ररूपयति—

पुव्व तियरणविहिणा अण खु अणियट्टिकरणचरिमम्हि ।
उदयावलिबाहिरग ठिदिं विसजोजदे णियमा[2] ॥ ११२ ॥

पूर्वं त्रिकरणविधिना अनत खलु अनिवृत्तिकरणचरमे ।
उदयावलिबाह्य स्थितिं विसंयोजयति नियमात् ॥ ११२ ॥

स० टी०—पूर्वमादौ त्रिकरणविधिना अनतानुबधिन क्रोधमानमायालोभान् उदयावलिं मुक्त्वा तद्बाह्योपरितनस्थितिस्थितान् सर्वान् विसयोजयन् अनिवृत्तिकरणचरमसमये निरवशेप विसयोजयति द्वादशकषायनोकषायस्वरूपेण सक्रामयति । तथाहि—

असयतसम्यग्दृष्टिर्देशसयत प्रमत्तसयत अप्रमत्तसयतो वा वेदकसम्यक्त्व अध प्रवृत्तकरणकाल प्रथमोपशमसम्यक्त्वग्रहणकालोक्तविधिना प्रतिसमयमनतगुणविशुद्धया वर्धमान परिसमाप्य तदनतरसमये गुणश्रेणिगुणसक्रमस्थितिकाडकानुभागकाडकघातानपूर्वकरणपरिणामै प्रवर्तयति । तत्र प्रथमसम्यक्त्वोत्पत्तौ गुणश्रेणिद्रव्याद्देशसयतगुणश्रेणिद्रव्यमसख्येयगुण । तस्मात्सकलसयतगुणश्रेणिद्रव्यमसख्येयगुण । तस्मादसख्येयगुणद्रव्यमपकृष्याय-

१ णिट्ठवगो पुण चदुसु वि गदीसु णिट्ठवेदि । जी० चू० ८, सू० १२, ध० पु० ६, पृ० २४७ ।

२ तत्थ ताव दसणमोहणीय खवेंतो पढममणताणुबधिचउक्क विसजोएदि । अधापवत्तापुव्व-अणियट्टिकरणाणि काऊण । ध० पु० ६, पृ० २४८ । जयध० भा० १३, पृ० १२ ।

मनतानुबधिविसयोजको गुणश्रेणि करोति। गुणश्रेण्यायाम पूर्ववदेवापूर्वानिवृत्तिकरणकालद्वयात्साधिकोऽपि सयलगुणश्रेण्यायामात् सख्येयगुणहीन, समय प्रति गलितावशेषश्च। अनुभागकाडकायाम पूर्वस्मादनतगुण। स्थितिकाडकायामश्च पूर्वस्मात्सख्येयगुण, गुणसक्रमद्रव्य च पूर्वस्मादसख्येयगुण। गुणसक्रमस्तु अनतानुबधिनामेव नान्येषा कर्मणा। एव सख्यातसहस्रै स्थितिखडै स्थितिबधैरनुभागखडैश्चापूर्वकरणकाल परिसमाप्य तदनतरसमये अनिवृत्तिकरण प्रविशयति ॥ ११२ ॥

अब सर्वप्रथम अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसयोजनाका कथन करते है—

स० च०—दर्शनमोहक्षपणाके पहले तीन करण करि अनतानुबधी क्रोध मान माया लोभनिके उदयावलीतैं बाह्य जे सर्व निषेक तिनकौ विसयोजन करता अनिवृत्तिकरणका अत समयविषैं नियमतै विसयोजन करै है, बारह कषाय नव नोकषायरूप परिणमावै है। सोइ कहिए है—

असयत वा देशसयत वा प्रमत्त वा अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती वेदकसम्यग्दृष्टि जीव सो पहिलै अध करण करै ताका विधान प्रथमोपशम सम्यक्त्व ग्रहणविषै कह्या तैसै जानना। तहा समय-समय अनतगुणी विशुद्धताकरि बधता ताकौ समाप्त करि अपूर्वकरण कौ प्राप्त होइ तहा गुणश्रेणि गुणसक्रमण स्थितिकाडकघात अनुभागकाडकघात ए च्यारि कार्य होइ तहा प्रथम सम्यक्त्वकी उत्पत्तिसबधी गुणश्रेणिका द्रव्यतैं देशसयतका अर तातैं सकलसयतका अर तातै इस अनतानुबधी विसयोजनका गुणश्रेणिके अर्थि अपकर्षण कीया द्रव्य क्रमतै असख्यातगुणा है अर तिनके गुणश्रेणि आयामका प्रमाण क्रमतै सख्यातगुणा घाटि है। सो अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरणके कालतै साधिक गलितावशेषरूप जानना। बहुरि इहा अनुभागकाडक-आयाम पूर्वतै अनतगुणा है। बहुरि स्थिति-काडक-आयाम पूर्वतैं सख्यातगुणा है। बहुरि गुणसक्रमण द्रव्य है सो पूर्वतै असख्यातगुणा है। इहा गुणसक्रमण अनतानुबधीनिका ही है औरनिका नाही है ऐसा जानना। ऐसैं सख्यात हजार स्थितिखड वा स्थितिबध वा अनुभागखडनिकरि अपूर्वकरणकौ समाप्तकरि अनिवृत्तिकरणकौ प्राप्त हो है॥ ११२॥

विशेष—जो वेदकसम्यग्दृष्टि कर्मभूमिज मनुष्य केवली और श्रुतकेवलीके पादमूलमे दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ करता है वह इससे पूर्व अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसयोजना करता है। किन्तु यह चतुर्थादि गुणस्थानोमे उदयवाली प्रकृति नही है, इसलिये उदयावलिको छोडकर शेष समस्त सत्त्वकी बारह कषाय और नौ नोकषायरूपसे विसयोजना करता है। तथा उदयावलिमे प्रविष्ट हुए द्रव्यका स्तिवुक सक्रम द्वारा उदयवाली प्रकृतिमे सक्रमण करता है। विशेष स्पष्टीकरण मूल सस्कृत व हिन्दी टीकामे किया ही है। इतना और जानना चाहिए कि जो वेदक सम्यग्दृष्टि जीव नरकसे निकल कर तीर्थंकर होते हैं वे स्वय मुनिपद अगीकार कर जिनपदसज्ञाके अधिकारी हो जाते हैं, अत वे किसी अन्य केवली या श्रुतकेवलीके पादमूलमे उपस्थित हुए विना स्वय दर्शनमोहनीयकी क्षपणा कर लेते हैं।

अथानिवृत्तिकरणकाले क्रियमाण कार्यविशेषमाह—

अणियट्टीअद्धाए अणस्स चत्तारि होंति पव्वाणि।
सायरलक्खपुधत्त पल्ल दूरावकिट्टि उच्छिट्ठ[1] ॥ ११३ ॥

---

१ जयध. भा० १३, पृ० २०० । ध पु० ६, पृ० २५१ ।

अनिवृत्त्यद्धाया अनतस्य चत्वारि भवति पर्वाणि।
सागरलक्षपृथक्त्व पल्य दूरापकृष्टिरुच्छिष्टम् ॥ ११३ ॥

स० टी०—अनिवृत्तिकरणप्रथमसमये अनतानुबधिना स्थितिसत्त्व सागरोपमलक्षपृथक्त्व जात । अपूर्वकरणकृतस्थितिखडबाहुल्येनात कोटीकोटिसागरोपमसत्त्वस्य सख्यातगुणहान्या तदा तत्प्रमाणसभवात् । शेषकर्मणा स्थितिसत्त्वमत कोटीकोटिसागरोपमप्रमाणमेव । इदमनतानुबधिना प्रथम स्थितिसत्त्वस्य पर्व । पुन स्थितिखडसहस्रेषु पल्यसख्यातैकभागमात्रायामेषु गतेषु अनिवृत्तिकरणकालस्य सख्यातैकभागेऽवशिष्टे अनतानुबधिना स्थितिसत्त्वमसज्ञिस्थितिबधसम सागरोपमसहस्रप्रमित भवति । पुन पल्यसख्यातैकभागमात्रायामेषु स्थितिखडसहस्रेषु गतेषु चतुरिंद्रियस्थितिबन्धसम सागरोपमशतमात्र भवति । पुनस्तावदायामेषु स्थितिखडसहस्रेषु गतेषु त्रीदियस्थितिबन्धसम पचाशत्सागरोपमप्रमित तेपा स्थितिसत्त्व भवति । पुनस्तावदायामेषु स्थितिखडसहस्रेषु गतेषु द्वीद्रियस्थितिबन्धसम पचविंशतिसागरोपममात्र तेपा स्थितिसत्त्व । पुनस्तावदायामेषु स्थितिखडसहस्रेषु गतेषु एकेंद्रियस्थितिबन्धसममेकसागरोपमप्रमित तेपा स्थितिसत्त्व भवति । पुनस्तावदायामेषु स्थितिखडसहस्रेषु गतेषु पल्यमात्रमनतानुबधिना स्थितिसत्त्व भवति। इद द्वितीय पर्व । पुन पल्यसख्यातबहुभागमात्रायामेषु स्थितिखडसहस्रेषु गतेषु दूरापकृष्टिसज्ञ तेपा स्थितिसत्त्व भवति तच्च पल्यसख्यातैकभागमात्र प

५ । ५ । ५ । ५

इद तृतीय पर्व । पुन पल्यासख्यातबहुभागमात्रायामेषु स्थितिखडसहस्रेषु गतेषु अनन्तानुबधिना स्थितिसत्त्वमावलिमात्रमवशिष्यते तदुच्छिष्टावलिसज्ञ । इद चतुर्थ पर्व । एवमनतानुबन्धिना स्थितिसत्त्वे सागरोपमलक्षणपृथक्त्व पल्य दूरापकृष्टिरुच्छिष्टावलिरिति चत्वारि पर्वाणि भवति ॥ ११३ ॥

अब अनिवृत्तिकरणके कालमे किये जानेवाले कार्यविशेषोका कथन करते हैं—

स० च०—अनिवृत्तिकरणका कालविषैं अनतानुबधीका जो स्थितिसत्व ताके च्यारि पर्व हो हैं। स्थिति घटनेकी मर्यादा करि च्यारि विभाग हो हैं। तहा पहले समय पृथक्त्वलक्ष सागरप्रमाण स्थितिसत्व हो है जातैं अत कोटाकोटी स्थितिसत्व था।सो अपूर्वकरणविषैं स्थितिखंडनिकरि घटाए इतना अवशेष रहै है। अनतानुबधी बिना अन्य कर्मनिका स्थितिसत्व इहा अत्त कोटाकोटी सागर ही जानना। यहु प्रथम पर्व भया। बहुरि पीछै सख्यात हजार स्थितिखड भए क्रमतैं असज्ञी पचेंद्री चौंद्री तेंद्री बेंद्री एकेंद्री बध समान हजार सागर अर सौ सागर अर पचास सागर अर एक सागर स्थितिसत्व हो है। बहुरि सख्यात हजार स्थितिखड भए पल्यमात्र स्थितिसत्व हो है। इहा इन स्थितिखडनिका आयाम जो एक एक स्थितिखडविषै स्थितिसत्व घटनेका प्रमाण सो पल्यका सख्यातवा भागमात्र जानना। यहु दूसरा पर्व भया। बहुरि पल्यकौ सख्यतका भाग दीजिए तहा एक भाग बिना बहुभागमात्र आयाम करि युक्त ऐसा हजारो स्थितिखड भए दूरापकृष्टि है नाम जाका ऐसा पल्यका सख्यातवा भागमात्र स्थितिसत्व हो है। यहु तीसरा पर्व भया। बहुरि पल्यकौ असख्यातका भाग दीए तहा एक भाग बिना बहुभाग मात्र आयाम धरैं ऐसैं हजारो स्थितिखड भए उच्छिष्टावली है नाम जाका ऐसा आवली मात्र स्थितिसत्व अवशेष रहै है। यहु चौथा पर्व भया। ऐसैं ए च्यारि पर्व जानने ॥ ११३ ॥

विशेष—इस प्रकरणमे श्रीधवला और जयधवलामे ऐसा स्पष्ट उल्लेख नही किया है कि अनिवृत्तिकरणके प्रारम्भमे अनन्तानुबन्धियोका स्थितिसत्त्व कितना रहता है, परन्तु उक्त गाथामे यह स्पष्ट बतलाया गया है कि अनिवृत्तिकरणके प्रारम्भमे उक्त प्रकृतियोका स्थितिसत्त्व सागरोप-

मलक्षपृथक्त्वप्रमाण पाया जाता है। इससे ज्ञात होता है कि उक्त प्रकृतियोका यह स्थितिसत्त्व प्रथम स्थितिकाण्डकके पतनके पूर्व प्रथम समयसे लेकर उक्त काण्डकके पतनके अन्तिम समय तक पाया जाता है। इसको प्रकृतमे प्रथम पर्व कहा गया है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

आगे प्रथमादि तीन पर्वोमे क्रमसे स्थितिकाण्डकायामका प्रमाण वतलाते है—

पल्लस्स सखभागो सखा भागा असखगा भागा।
ठिदिखडा होंति कमे अणस्स पव्वादु पव्वो त्ति[1] ॥ ११४ ॥

पल्यस्य सख्यभाग संख्या भागा असंख्यका भागा।
स्थितिखडा भवति क्रमेण अनतस्य पर्वात् पर्वान्त ॥ ११४ ॥

स० टी०—अनतानुबधिना स्थितिसत्त्वस्य प्रथमपर्वण आरभ्य द्वितीयपर्वपर्यत पल्यसख्यातैकभाग स्थितिखडायामो भवति। द्वितीयपर्वण आरभ्य तृतीयपर्वपर्यंत पल्यसख्यातबहुभागमात्र स्थितिखडायाम। तृतीयपर्वण आरभ्य चतुर्थपपर्वर्यत पल्यासख्यातबहुभागमात्र स्थितिखडायाम ॥ ११४ ॥

स० च०—अनतानुबधीका स्थितिसत्त्वके पहले पर्वतै दूसरे पर्वपर्यत अर दूसरेतै तीसरे पर्यंत अर तीसरेतैं चौथे पर्यंत जे स्थितिकाडक हो हैं तिनिका आयाम क्रमतै पल्यका सख्यातवा भाग अर पल्यका सख्यात बहुभाग अर पल्यका असख्यात बहुभागमात्र है सो कथन कीया ही है ॥ ११४ ॥

आगे दो गाथाओ द्वारा उन्ही पर्वोका क्रमसे खुलासा करते हुए उनमें विशेषताका निर्देश करते है—

अणियट्टीसखेज्जाभागेसु गदेसु अणगठिदिसत्तो।
उदधिसहस्स तत्तो वियले य सम तु पल्लादी ॥ ११५ ॥

अनिवृत्तिसख्यातभागेषु गतेषु अनतगस्थितिसत्त्व।
उदधिसहस्रं ततो विकले च सम तु पल्यादि ॥ ११५ ॥

स० टी०—अनिवृत्तिकरणकालस्य प्रथमसमयादारम्भ सख्यातवहुभागेपु गतेपु अनतानुवधिना स्थितिसत्त्व क्वचित्सागरोपमसहस्र। ततो विकलत्रयैकेंद्रियस्थितिवधसम। तत पल्यादि भवति। आदिशब्दात् दूरापकृष्टिरुच्छिष्टावलिश्च गृह्यते प्रतिपर्व सख्यातसहस्रस्थितिखडवशात् तत्स्थितिहानिसभवात् ॥ ११५ ॥

स० च—अनिवृत्तिकरणके कालकौं सख्यातका भाग दीजिए तहा बहुभाग द्रव्य व्यतीत भए एक भाग अवशेष रहैं अनतानुवधीका स्थितिसत्व कही हजार सागरमात्र, पीछै विकलेंद्रीका वध समान, पीछै पल्य अर आदि शब्दतैं दूरापकृष्टि अर आवली मात्र हो है ॥ ११५ ॥

उवहिसहस्स तु सय पण्ण पणवीसमेक्कय चेव।
वियलचउक्के एगे मिच्छुक्कस्सट्ठिदी होदि ॥ ११६ ॥

उदधिसहस्र तु शतं पचाशत् पचविंशतिरेक चैव।
विकलचतुष्के एकस्मिन् मिथ्योत्कृष्टस्थितिर्भवति ॥ ११६ ॥

---

1 ध० पु० ६, पृ० २५१–२५२। जयध० भा० १३, पृ० २००।

स० टी०—असंज्ञिपंचेंद्रियश्चतुरिंद्रियस्त्रीद्रियो द्वींद्रियश्च विकलचतुष्क, तस्मिन्नेकेंद्रिये च यथाक्रम सहस्रशतपंचाशत्पंचविंशत्येकसागरोपमप्रमितो मिथ्यात्वोत्कृष्टो स्थितिबधो भवति। एवमनतानुबंधिना द्रव्य स a। १२ — गुणश्रेण्या अपकृष्टमधो निक्षिप्य स्थितिकाडकद्रव्य प्र फ इ लब्ध का ९ प्र
७। ख। १७ प का प ९ का
९ १ १

फ स a १२ – इ का ९ ल म a। १२ – गुणसंक्रमभागहारेण भक्त्वा लब्धफाली प्रतिसमयमसंख्येय-
७। ख १७ ७। ख। १७। ९
गुणा द्वादशकषायनोकषायेषु संक्रमय्य अनिवृत्तिकरणचरमसमये चरमकाडकफालिद्रव्यमुच्छिष्टावलिमात्रनिषेक-वर्जित विसयोजयति। उच्छिष्टावलिद्रव्य च प्रतिसमयमेकैकनिषेकरूपेणावलिकाले विसयोज्यते ॥ ११६ ॥

स० च०—विकलचतुष्क कहिए असज्ञी पचेद्री चौद्री तेंद्री वेंद्री अर एकेंद्री इनिकै मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबध क्रमतै हजार अर सौ अर पचास अर पचीस अर एक सागरप्रमाण हो है। इन समान स्थितिसत्व अनतानुबधीका ही हो है। सा कथन कीया ही है। बहुरि अनतानुबधीका द्रव्य ताकौ गुणश्रेणिकरि जो नीचले निषेकनिविषै प्राप्त कीया अर स्थितिकाडककरि घटाई हुई स्थितिके निषेक अवशेष स्थितिके निषेकनिविषै प्राप्त कीए बहुरि गुणसक्रमकरि तिस द्रव्यकी गुणसक्रमण भागहारका भाग दीए जो प्रमाण तिस प्रमाणमात्र द्रव्यका समूहरूप प्रथम फालि है अर तातै समय समय प्रति असख्यातगुणा द्रव्यरूप द्वितीयादि फालि है तिनकौ विसयोजन करै ऐसै अनिवृत्ति-करणका अत समयविषै उच्छिष्टावलीमात्र निषेक रहित अत काडकका अत फालिका द्रव्यकौ विसयोजन करै। बहुरि उच्छिष्टावलीमात्र निषेकनिका द्रव्यकौ एक एक समयविषै एक एक निषेकनिकौ विसयोजन करै है। इनिकै परमाणूनिकौ बारह कषाय नव नोकषायरूप परिणमाय अभाव करनेका नाम विसयोजन है। ऐसै अनतानुबधीके विसयोजनका विधान कह्या ॥ ११६ ॥

विशेष—अनिवृत्तिकरणमे अनन्तानुबन्धीचतुष्कके स्थितिसत्त्वकी उत्तरोत्तर हानि होते हुए अन्तमे उच्छिष्टावलिप्रमाण स्थिति किस क्रमसे रह जाती है इसका स्पष्ट निर्देश तो मूलमे और उसकी टीकामे किया ही है। यहाँ इतना विशेष जानना कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अन्तरकरण नही होता, क्योकि दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयकी उपशमनाके समय तथा चारित्रमोह-नीयकी क्षपणाके समय ही अन्तरकरण क्रिया सम्भव है, अन्यत्र नही।

अथ विसयोजितानतानुबधिकषायचतुष्टयस्योत्तरकालकर्तव्यमाह—

अंतोमुहुत्तकाल थिस्समियं पुणो वि तिकरण करिय।
अणियट्टीए मिच्छ मिस्स सम्म कमेण णासेइ ॥ ११७ ॥

अंतर्मुहूर्तकाल विश्रम्य पुनरपि त्रिकरण कृत्वा।
अनिवृत्तौ मिथ्यात्व मिश्र सम्यक्त्व क्रमेण नाशयति ॥ ११७ ॥

स० टी०—पूर्वोक्तक्रमेण विसयोजितानुबधिक्रोधमानमायालोभकषायो जीवोऽन्तर्मुहूर्तकाल विश्रम्य क्रिया-तरमकृत्वा स्वस्थानस्थितो भूत्वेत्यर्थ, पुनरपि त्रिकरणान् कृत्वा अनिवृत्तिकरणकाले मिथ्यात्वप्रकृति मिश्रप्रकृति सम्यक्त्वप्रकृति च क्रमेण नाशयति, वक्ष्यमाणप्रकारेण क्षपयतीत्यर्थ। तथाहि—

१ तदो अणत्ताणुवधी विसजोइदे अतोमुहुत्तमधापवत्तो जादो। क० चू०, जयध० भा० १३ पृ० २०१।

अनतानुवधिविसयोजनानतरमन्तर्मुहूर्तकालपर्यंत विशुद्धयतिशयाभावादसयतसम्यग्दृष्टिर्वा देशसयतो वा प्रमत्तसयतो वा अप्रमत्तसयतो वा स्वस्थानस्थितो भूत्वा पुनर्दर्शनमोहक्षपणाभिमुख सन् प्रतिसमयमनतगुणवृद्धया विशुद्धिमापूर्य दर्शनमोहोपशमनोक्तप्रकारेणाध प्रवृत्तकरण कृत्वा अपूर्वकरणप्रथमसमये गुणश्रेणिनिर्जिरा कर्तुं प्रारभते। अनतानुबधिविसयोजकस्य गुणश्रेणिकरणार्थमपकृष्टद्रव्यादसख्येयगुण द्रव्यमपकृष्ट्या तद्गुणश्रेण्यायामात्सख्येयगुणहीनगुणश्रेण्यायामे तात्कालिकापूर्वानिवृत्तिकरणकालद्वयात्साधिके निक्षिपति। सम्यक्त्वोत्पत्त्यादिकरणत्रयकालादुत्तरोत्तरकरणत्रयकालस्य सख्यातगुणहीनत्वात् तदा अन्यदेव स्थितिखडमन्यदेव स्थितिबधन पल्यसख्यातैकभागहीन प्रारभते मिथ्यात्वमिश्रद्रव्ययोर्गुणसक्रम च करोति। अपूर्वकरणप्रथमसमये जघन्य स्थितिसत्त्वमत कोटीकोटिसागरोपमप्रमित पूर्वस्मात् सख्येयगुणहीन। तत्रैवोत्कृष्ट स्थितिसत्त्व जघन्यात्सख्येयगुण। तथाहि—

[1]एको जीव पूर्वमुपशमश्रेणिमारुह्य तत्र कर्मणा स्थितिसत्त्व बहुश खडयित्वा ततोऽवतीर्याविलबितमेव दर्शनमोहक्षपणाया प्रवृत्तस्तस्य कर्मस्थितिसत्त्व जघन्य भवति। तस्तूपशमश्रेणिमनारुह्य दर्शनमोहक्षपणाया प्रवृत्तस्तस्य कर्मस्थितिसत्त्व तस्मात्सख्येयगुण भवति। तत्र जघन्यस्थितिसत्त्वस्य स्थितिकाडकायाम पल्यसख्यातभागमात्र। उत्कृष्टस्थितिसत्त्वस्य स्थितिकाडकायाम सागरोपमपृथक्त्वमात्र[2], स्थितिकाडकाना स्थित्यनुसारित्वेन प्रवृत्ते। एवविधै. सख्यातसहस्रस्थितिकाडकघातै तत सख्येयगुणानुभागकाडकघातै. प्रतिसमयमसख्येयगुणद्रव्यगुणश्रेणिनिर्जरया गुणसक्रमविधानेन वापूर्वकरणचरमसमय प्राप्त, तत्र कर्मणा स्थितिसत्त्व तत्प्रथमसमयस्थितिसत्त्वात् सख्येयगुणहीन भवति। दर्शनमोहोपशमने प्रतिपादितो विशेष सर्वोप्यत्रानुक्तोऽपि द्रष्टव्य ॥ ११७ ॥

अब विसयोजनाको प्राप्त अनन्तानुबन्धीके विशेष कार्यका कथन करते हैं—

स० च०—अनतानुबधीका विसयोजन कीए पीछैं अतर्मुहूर्तकाल विश्राम करि अन्य क्रिया न करि तहाँ पीछैं बहुरि तीन करणनि करि अनिवृत्तिकरणका कालविषैं मिथ्यात्व मिश्र सम्यक्त्वमोहनीकौ क्रमतै नष्ट करै है। सोई कहिए है—

दर्शनमोहकी क्षपणाके सन्मुख होत सता जीव समय समय अनतगुणी विशुद्धता युक्त होइ। दर्शनमोहका उपशमनविषैं जैसैं विधान कह्या तैसै अध प्रवृत्तकरणकरि पीछैं अपूर्वकरणकौ प्राप्त भया। तहाँ प्रथम समय ही गुणश्रेणिका प्रारभ भया। याके अर्थि अपकर्षण कीया द्रव्य है सो अनतानुबधी विसयोजनवालेका गुणश्रेणि द्रव्यतैं असख्यातगुणा है अर गुणश्रेणि-आयाम इहा ताके गुणश्रेणि-आयामतै सख्यातगुणा घाटि है अपूर्वानिवृत्तिकरण कालतै साधिक जानना। जातैं सम्यक्त्वोत्पत्तिविषैं जे तीन करण हो हैं तिनतै उत्तरोत्तर तीन करणनिका काल सख्यातगुणा घाटि है। तहाँ पर्व स्थितिखडादिक तै घटता अन्य ही स्थितिखड वा अनुभागखडका प्रारभ हो है अर अन्य ही स्थितिबध पल्यका सख्यातवा भाग घटता प्रारभ हो है। बहुरि मिथ्यात्व अर मिश्रमोहनीके द्रव्यका गुणसक्रमण करै है। सम्यक्त्वमोहनीरूप परिणमावै है। बहुरि अपूर्वकरणका समयविषैं पूर्वतै सख्यातगुणा घाटि ऐसा अत कोटाकोटी सागरप्रमाण जघन्य स्थितिसत्व है। यातैं उत्कृष्ट

१ क० चू०, जयध० भा० १३, पृ० २५–३०।

२ अपुव्वकरणस्स पढमसमए जहण्णगेण कम्मेण उवट्ठिदस्स ट्ठिदिखडम पलिदोवमस्स सखेज्जदिभागो, उक्कस्सेण उवट्ठिदस्स सागरोवमपुधत्त। क० चू०, जयध० भा० १३, पृ० ३१।

स्थितिसत्व सख्यातगुणा है। जातैं कोई जीव उपशमश्रेणि चढि तहा बहुत स्थितिखडनकरि तहातै ऊपरि पीछै शीघ्र ही दर्शनमोहकी क्षपणाका प्रारभ करै है ताकै जघन्य स्थितिसत्व हो है। अन्य कोई जीव श्रेणी न चढ्या होइ ताकै उत्कृष्ट स्थितिसत्व है। तहाँ जघन्य स्थितिसत्वका स्थितिकाड-कायाम पल्यके सख्यातवे भागमात्र है। उत्कृष्ट स्थितिसत्वका पृथक्त्वसागरप्रमाण है। जातै स्थितिके अनुसारि स्थितिकाडक हो है। ऐसै सख्यात हजार स्थितिकाडक घातनिकरि अर तातै सख्यातगुणे अनुभागकाडक घातनिकरि अर समय समय असख्यातगुणा द्रव्यकी गुणश्रेणीनिर्जरा करि अर गुण-सक्रम विधानकरि अपूर्वकरणके अत समयकौ प्राप्त भया तहाँ कर्मनिका स्थिति-अनुभागसत्व प्रथम समयके तिस स्थितिसत्वतै सख्यातगुणा घाटि हो है। और भी दर्शनमोहका उपशम विधानविषै जो प्ररूपण कीया है सो इहा भी यथासभव जानना ॥ ११७ ॥

विशेष—दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवोकी सत्त्वस्थितिमे सदृशता और विसदृशता किस प्रकार सम्भव है इसका चूर्णिसूत्रोके आधारसे श्री जयधवला भाग १३ पृ० २५ से ३० तक विशेष खुलासा किया गया है। यथा—

(१) कोई एक जीव मध्यकालमे मिश्रगुणस्थानको प्राप्त कर उसके पूर्व और अनन्तर सब मिलाकर दो छ्यासठ सागरोपमकाल तक वेदकसम्यक्त्वके साथ रहनेके बाद दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ करता है और दूसरा जीव दो छ्यासठ सागरोपमकाल तक परिभ्रमण किये बिना ही वेदकसम्यग्दर्शनपूर्वक दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ करता है। इस प्रकार दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ करनेवाले इन दोनो जीवोकी सत्त्वस्थितिमे अपूर्वकरणके प्रथम समयमे विसदृशता पाई जाती है, क्योकि प्रथम जीवके स्थितिसत्कर्मसे दूसरे जीवका स्थितिसत्कर्म दो छ्यासठ सागरोपमकालके समय प्रमाण निषेकोकी अपेक्षा विशेष अधिक होता है। इस विधिसे एक समय अधिक आदिसे लेकर दो छ्यासठ सागरोपमप्रमाणकालके भीतर जितने सत्त्वस्थितिविकल्प सम्भव हो वे सब यहाँ ग्रहण कर लेने चाहिए। और इसीलिए अपूर्व-करणमे यथासम्भव स्थितिकाण्डकायाममे भी विसदृशता बन जाती है।

(२) अथवा एक जीव अन्तर्मुहूर्त पहले उपशमश्रेणि पर चढा और दूसरा जीव अन्तर्मुहूर्त बाद उपशमश्रेणि पर चढा। अनन्तर उन दोनोने एक साथ दर्शनमोहनीयकी क्षपणा की। तो इस प्रकार भी अपूर्वकरणके प्रथम समयमे उन दोनोके स्थितिसत्कर्ममे विषमता बन जानेसे स्थिति-काण्डकायाममे भी विसदृशता बन जाती है, क्योकि प्रकृतमे प्रथम जीवके स्थितिसत्कर्मसे दूसरे जीवका स्थितिसत्कर्म अन्तर्मुहूर्त निषेकप्रमाण अधिक देखा जाता है।

यह तो एक जीवके स्थितिसत्कर्मसे दूसरे जीवका स्थितिसत्कर्म विशेष अधिक कैसे होता है इसका विचार है। आगे एक जीवके स्थितिसत्कर्मसे दूसरे जीवका स्थितिसत्कर्म सख्यातगुणा कैसे होता है इसका खुलासा करते है—

(३) एक जीव कषायोका उपशम करनेके बाद उतर कर दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करता है और दूसरा जीव उपशमश्रेणि पर आरोहण न कर दर्शनमोहनीयको क्षपणा करता है तो अपूर्व-करणके प्रथम समयमे इस दूसरे जीवके स्थितिसत्कर्मसे प्रथम जीवका स्थितिसत्कर्म सख्यातगुणा होता है, क्योकि इस दूसरे जीवने उपशमश्रेणिपर चढकर स्थितिसत्कर्मका घात कर उसे सख्यातवें भागप्रमाण नही किया है। इसलिए इस दूसरे जीवका स्थितिकाण्डकायाम प्रथम जोवके स्थितिकाण्डकायामसे सख्यातगुणा होता है।

अथानिवृत्तिकरण प्रविष्टस्य कार्यविशेषमाह—

अणियट्टिकरणपढमे दसणमोहस्स सेसगाण ठिदी।
सायरलक्खपुधत्त कोडीलक्खगपुधत्त च[1] ॥ ११८॥

अनिवृत्तिकरणप्रथमे दर्शनमोहस्य शेषकाना स्थिति।
सागरलक्षपृथक्त्व कोटिलक्षकपृथक्त्व च ॥ ११८॥

स० टी०—अनिवृत्तिकरणप्रथमसमये दर्शनमोहस्य स्थितिसत्त्व सागरोपमलक्षपृथक्त्व। इद प्रथम पर्व। पृथक्त्वशब्दोऽत्र बहुत्ववाची, अत कोटीत्यर्थ। शेषकर्मणा स्थितिसत्त्व कोटीलक्षपृथक्त्व अत कोटीकोटीत्यर्थ, अपूर्वकरणकृतसख्यातसहस्रस्थितिकाडकघातवशादेवविधस्थितिसत्त्वसभवात्। अत्र सर्वेषा जीवाना विशुद्धिपरिणामसादृश्येन जघन्योत्कृष्टविकल्प बिना स्थितिसत्त्वमेकादृशमेव भवति। अत पर दर्शनमोहस्य पल्यस्थितिपर्यंत पल्यसख्यातैकभागमात्र स्थितिकाडक भवति ॥ ११८॥

अब अनिवृत्तिकरणमे प्रविष्ट हुए जीवके कार्यविशेषको कहते हैं—

स० च०—अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयविषै दर्शनमोहका तौ स्थितिसत्व पृथक्त्व लक्ष सागरप्रमाण है। इहाँ पृथक्त्व नाम बहुतका है सो कोटिके नीचैं अैसा अत कोटी प्रमाण जानना। बहुरि अवशेष कर्मनिका स्थितिसत्व पृथक्त्व लक्ष कोटि सागरप्रमाण है सो कोडाकोडीके नीचै अैसा अत कोटाकोटी जानना। अपूर्वकरणविषै सख्यात हजार स्थितिकाडकघात कीए पीछै इतना अवशेष स्थितिसत्व रहै है। इहा सर्व जीवनिके परिणाम समान हैं तातै स्थितिसत्वविषै जघन्य उत्कृष्ट भेद नाही है। बहुरि यातैं परै दर्शनमोहकी स्थिति पल्यप्रमाण रहै तहाँ पर्यंत स्थितिकाडकायामका प्रमाण पल्यके सख्यातवे भागमात्र जानना ॥ ११८॥

अथानिवृत्तिकरणकाले क्रियमाण कार्यविशेषमाह—

अमणंठिदिसत्तादो पुधत्तमेत्ते पुधत्तमेत्ते य।
ठिदिखडेय हवति हु चउ ति वि एयक्ख पल्लठिदी[2] ॥ ११९॥

अमन स्थितिसत्त्वत पृथक्त्वमात्र पृथक्त्वमात्र च।
स्थितिकाडके भवति हि चतुस्त्रि द्वि एकाक्षे पल्यस्थिति ॥ ११९॥

स० टी०—सागरोपमलक्षपृथक्त्वमात्राद्दर्शनमोहस्य अनिवृत्तिकरणप्रथमसमयभाविन स्थितिसत्त्वात् सख्यातसहस्रस्थितिकाडकघातवशेनासज्ञिस्थितिबधसम सागरोपमसहस्रमात्र स्थितिसत्त्व भवति। ततो बहुषु स्थितिकाडकेषु गतेषु चतुरिन्द्रियस्थितिबन्धसम सागरोपमशतमात्र स्थितिसत्त्व भवति। ततो बहुषु स्थितिखडेषु

१ अणियट्टिकरणस्स पढमसमए दसणमोहणीयस्स ट्ठिदिसतकम्म कोडिसदसहस्सपुधत्तमतो कोडीए। सेसाण कम्माण ट्ठिदिसतकम्म कोडिसदसहस्सपुधत्तमतो कोडाकोडीए। क० चू०, जयध० भा० १३ पृ० ४१। ध० पु० ६, पृ० २५४।

२ तदो ट्ठिदिखडयसहस्सेहि अणियट्टिअद्धाए सखेज्जेसु भागेसु गदेसु असण्णिट्ठिदिबधेण दसणमोहणीयस्स ट्ठिदिसतकम्म समग। तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तेण चउरिंदियबधेण ट्ठिदिसतकम्म समग। तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तेण तीइदियबधेण ट्ठिदिसतकम्म समग। तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तेण बीइदियबधेण ट्ठिदिसतकम्म समग। तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तेण एइदियबधेण ट्ठिदिसतकम्म समग। तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तेण पलिदोवमट्ठिदिग जाद दसणमोहणीयट्ठिदिसतकम्म। क० चू०, जयध० भा० १३, पृ० ४१–४३।

पतितेषु त्रीद्रियस्थितिबंधसमं पचाशत्सागरोपमप्रमितं स्थितिसत्त्वं भवति। ततो बहुषु स्थितिखण्डेषु गतेषु द्वीद्रियस्थितिबन्धसमं पचविंशतिसागरोपममात्रं स्थितिसत्त्वं भवति। ततो बहुषु स्थितिखडेषु पतितेषु एकेंद्रियस्थितिबधसमं एकसागरोपमप्रमितं स्थितिसत्त्वं भवति। ततो बहुषु स्थितिखडेषु पतितेषु पल्यमात्रं स्थितिसत्त्वं भवति। इदं द्वितीयं पर्व ॥ ११९ ॥

अनिवृत्तिकरणके कालमें किये जानेवाले कार्यविशेषोंको कहते हैं—

स० च०—दर्शनमोहकी पृथक्त्व लक्ष सागरप्रमाण स्थिति प्रथम समयविषै संभवै है तातै परैं संख्यात हजार कांडक भए असंज्ञीका बंध समान हजार सागर स्थितिसत्व रहै है। ताके पीछै बहुत २ स्थितिकांडक भए क्रमतै चौंद्री तेंद्री बेंद्री एकेंद्रीका स्थितिबंधके समान सौ सागर पचास सागर पचीस सागर एक सागर स्थितिसत्व हो है। पीछै बहुत स्थितिखंड भए पल्यप्रमाण स्थितिसत्व हो है। ऐसै यहु दूसरा पर्व भया ॥ ११९॥

पल्लट्ठिदिदो उवरिं संखेज्जसहस्समेत्तठिदिखंडे।
दूरावकिट्टिसण्णिदठिदिसत्तं होदि णियमेण ॥ १२० ॥

पल्यस्थितित उपरि संख्येयसहस्रमात्रस्थितिखंडे।
दूरापकृष्टिसंज्ञितं स्थितिसत्त्वं भवति नियमेन ॥ १२० ॥

स० टी०—तस्मात्पल्यमात्रस्थितिसत्त्वादुपर्युपरि पल्यसंख्यातबहुभागमात्रायामेषु संख्यातसहस्रस्थितिकांडकेषु निपतितेषु दूरापकृष्टिसंज्ञं स्थितिसत्त्वं नियमेन भवति। का दूरापकृष्टिर्नामेति चेदुच्यते—पल्ये उत्कृष्टसंख्यातेन भक्ते यल्लब्धं तस्मादेकैकहान्या जघन्यपरिमितासंख्यातेन भक्ते पल्ये यल्लब्धं तस्मादेकोत्तरवृद्धया यावतो विकल्पास्तावन्तो दूरापकृष्टिभेदा, तेषु कश्चिदेव विकल्पो जिनदृष्टभावोऽस्मिन्नवसरे दूरापकृष्टिसंज्ञितो वेदितव्यः। इदं तृतीयं पर्व ॥ १२० ॥

स० च०—तातैं ऊपरि पल्यकौं संख्यातका भाग दीए तहां बहुभागमात्र आयाम धरैं ऐसे संख्यात हजार स्थितिखंड भए दूरापकृष्टिनामा स्थितिसत्व नियमकरि हो है। पल्यकौं उत्कृष्ट संख्यातका भाग दीए जो प्रमाण आवै तातैं एक एक घटता क्रमकरि पल्यकौं जघन्य परीतासंख्यातका भाग दीए जो प्रमाण आवै तहां पर्यंत दूरापकृष्टिके सर्व भेद जानने। तिनिविषै इहां कोई संभवता भेद जानना। यहु तीसरा पर्व भया ॥ १२० ॥

विशेष—दूरापकृष्टि किसे कहते हैं इस प्रश्नका समाधान करते हुए श्री जयधवलामें बतलाया है कि पल्योपमप्रमाण स्थितिसत्कर्मसे अत्यन्त दूर उतरकर सबसे जघन्य पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण जो स्थितिसत्कर्म शेष रहता है उसकी दूरापकृष्टि संज्ञा है, क्योंकि पल्यो-

---

१ का दूरावकिट्टी णाम ? वुच्चदे—जत्तो ट्ठिदिसतकम्मावसेसादो सखेज्जे भागे घेतूण ट्ठिदिखंडए घादिज्जमाणे घादिदसेसं णियमा पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपमाणं होदूण चिट्ठदि तं सव्वपच्छिमं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागपमाणं ट्ठिदिसतकम्मं दूरावकिट्टि त्ति भण्णदे। जयध० भा० १३, पृ० ४५।

२ पलिदोवमे आलुत्ते तदो पलिदोवमस्स संखेज्जा भागा आगाइदा। तदो सेसस्स संखेज्जा भागा आगाइदा। एवं ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु गदेसु दूरावकिट्टी पलिदोवमस्स संखेज्जे भागे ट्ठिदिसतकम्मे सेसे तदो सेसस्स असंखेज्जा भागा आगाइदा। क० चू० जयध० भा० १३, पृ० ४३–४४।

पमप्रमाण स्थितिसत्कर्मसे नीचे अत्यन्त दूर तक अपकर्षित की गई होनेसे और अत्यन्त कृश-अल्प होनेसे यह स्थिति दूरापकृष्टि कहलाती है। अथवा इसका स्थितिकाण्डक अत्यन्त दूर तक अपकर्षित किया जाता है, इसलिये इसका नाम दूरापकृष्टि है। यहाँ से लेकर असख्यात बहुभागोको ग्रहण कर स्थितिकाण्डकघात किया जाता है, इसलिये भी यह दूरापकृष्टि कहलाती है; यह उक्त कथनका तात्पर्य है। वह दूरापकृष्टि एक विकल्पवाली है या अनेक विकल्पवाली है ? इस विषयमे कितने ही आचार्य कहते हैं कि वह एक विकल्पवाली है, क्योकि वह पल्योपमके भेदरहित सबसे जघन्य सख्यातवें भागप्रमाण है, और वह निर्विकल्प पल्योपमका सख्यातवाँ भाग, पल्योपमको जघन्य परीतासख्यातसे भाजित कर वहाँ जो भाग प्राप्त हो उसमे एक मिलाने पर जितना प्रमाण हो तत्प्रमाण है, क्योकि इसमेसे एक भी स्थित्तिविशेषकी हानि होनेपर पल्योपमक असख्यातवें भागप्रमाण विकल्पकी उत्पत्ति होती है। किन्तु वीरसेनस्वामीका निर्णय है कि वह अनेक विकल्पवाली है। इसका विशेष खुलासा जयधवला भाग १३, पृ० ४६–४७ मे किया गया है।

पल्लस्स संखभाग तस्स पमाण तदो असखेज्ज।
भागपमाणे खडे संखेज्जसहस्सगेसु तीदेसु ॥ १२१ ॥
सम्मस्स असंखाण समयपबद्धाणुदीरणा होदि।
तत्तो उवरिं तु पुणो बहुखडे मिच्छउच्छिट्ठ[1] ॥ १२२ ॥

पल्यस्य सख्यभाग तत असंख्येयं।
भागप्रमाणे खडे सख्येयसहस्रकेषु अतीतेषु ॥ १२१ ॥
सम्यक्त्वस्यासंख्यानां समयप्रबद्धानामुदीरणा भवति।
तत उपरि तु पुन बहुखडे मिथ्योच्छिष्टम् ॥ १२२ ॥

स० टी०—नस्य दूरापकृष्टिस्थितिसत्त्वस्य प्रमाण पल्यसख्यातैकभागमात्र भवति प
५।५।५।५

ततो दूरापकृष्टिस्थितिसत्त्वात्पल्यासख्यातबहुभागमात्रायामेषु स्थितिकाडेषु सख्यातसहस्रेष्वतीतेषु सम्यक्त्वप्रकृतेरपकृष्टद्रव्यस्य असख्यातसमयप्रबद्धमात्रमुदीरणाद्रव्यमुदयावल्या निक्षिप्यते। तथाहि—

सम्यक्त्वप्रकृतिद्रव्यमिद स ∂ । १२ — अस्मादपकृष्ट पल्यासख्यातभागेन खण्डयित्वा तद्बहुभागद्रव्य
७।ख।१७।गु
१ ^

उपरितनस्थितौ देय स ∂ । १२ — प शेषैकभाग पुन पल्यासख्यातभागेन भक्त्वा तद्बहुभागद्रव्य गुणश्रेण्या
∂
७।ख।१७।गु ओ प
∂

१ एव पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागिगेसु बहुएसु ट्ठिदिखडयसहस्सेसु गदेसु तदो सम्मत्तस्स असखेज्जाण समयपवद्धाणमुदीरणा। तदो बहुसु ट्ठिदिखडएसु गदेसु मिच्छत्तस्स आवलियवाहिर सव्वमागाइद। क० चू०, जयध० भा० १३, पृ० ४८। ध० पु० ६, पृ० २५६।

१ ^ १ ^   १ ^
प १
देय—स ə । १२ — प प   शेपैकभागद्रव्यमुदयावल्या देय स ə । १२ — ə पल्यभाग-
ə ə   ७ । ख । १७ । गु ओ प प
७ । ख । १७ । गु । ओ प । प   ə ə
ə ə

हारभूतासख्यातस्य बाहुल्येन पल्यद्वये अपकर्पणभागहारे वा अपवर्ततेप्यसख्यातगुणकारमभवात्, इत पर सर्वत्र पल्यासख्यातभागखडितमेव उदयावल्या दीयते। ततो मिथ्यात्वप्रकृते पल्यासख्यातवहुभागमात्रायामेपु वहुपु गतेपु स्थितिकाडकेपु चरमकाडकचरमफालिपतनसमये मिथ्यात्वस्य उच्छिष्टावलिमात्रा निपेका अवशिष्यते। अन्यत्काडकद्रव्य सर्वं सम्यग्मिथ्यात्वसम्यक्त्वप्रकृतिरूपेण परिणतमित्यर्थ । आवलिमात्रनिपेकाश्च समय प्रति द्विसमयोना गलति ।। १२१–१२२ ।।

स० च०—तिस दूरापकृष्टि नामा स्थितिसत्वका प्रमाण पल्यके सख्यातवे भागमात्र जानना। तातैं परै पल्यकौ असख्यातका भाग दीए तहा बहुभागमात्र आयाम धरै अैसे सख्यात हजार स्थितिकाडक भए सम्यक्त्वमोहनीका द्रव्यकौ अपकर्षण कीया तिसविषै असख्यात समय-प्रबद्धमात्र उदोरणा द्रव्यकौ उदयावलीविषैं दीजिए है। सोई कहिए है—

सम्यक्त्वमोहनीका द्रव्यकौं अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहा बहुभाग तौ जैसै थे तैसैं ही रहैं अवशेष एक भागकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभाग उपरितन स्थिति-विषैं देना। अवशेष एक भागकौं बहुरि पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहाबहुभाग गुणश्रेणि-आयामविषै देना अर एक भाग उदयावलीविषैं देना। सो इहा उदयावलीविषै दीया द्रव्यकौ उदीरणा द्रव्य जानना सो पूर्वं तौ उदयावलीविषैं द्रव्य देनेके अर्थि असख्यात लोकका भाग देनेतै द्रव्यका प्रमाण स्तोक आवै था, इहातै लगाय परैं सर्वत्र पल्यका असख्यातवा भागका भाग देना सो भागहार घटता होनेतैं द्रव्यका प्रमाण एक भागविषैं भी असख्यात समयप्रबद्धप्रमाण आवै है अैसा जानना। बहुरि तातैं मिथ्यात्व प्रकृतिके पल्यकौ असख्यातका भाग दीए तहा बहुभागमात्र आयाम धरै अैसे बहुत स्थितिखड भए इस मिथ्यात्व प्रकृतिके अन्त काडककी अन्त फालिपतनका समयविषैं मिथ्यात्वके उच्छिष्टावलीमात्र निषेक अवशेष रहे है। अन्य सर्व मिथ्यात्वप्रकृतिका द्रव्य है सो मिश्रमोहनी वा सम्यक्त्वमोहनीरूप परिणमै है। जे आवलीमात्र निषेक रहैं है ते समय समय प्रति एक एक निषेकरूप होइ यावत् दो समय अवशेष रहै तावत् क्रमतैं निर्जरै है ॥ १२१—१२२ ॥

विशेष—दूरापकृष्टिसे नीचे असख्यात गुणहानिगर्भित सख्यात हजार स्थितिकाण्डकघात होनेपर भी जब तक मिथ्यात्वका अन्तिम स्थितिकाण्डक प्राप्त नही होता, इस अन्तरालमे सम्य-क्त्वके असख्यात समयप्रबद्धोकी उदीरणा प्रारम्भ हो जाती है। यहाँसे पूर्व सर्वत्र असख्यात लोक-प्रमाण प्रतिभागके अनुसार उदययोग्य सब कर्मोकी उदीरणा होती रही। परन्तु यहाँसे पल्योपमके असख्यातवे भागप्रमाण प्रतिभागके अनुसार सम्यक्त्वकी उदीरणा प्रवृत्त हुई यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अपकर्षित होनेवाले सकल द्रव्यमे पल्योपमके असख्यातवे भागका भाग देने पर जो लब्ध आवे उतने द्रव्यको उदयावलिके बाहर गुणश्रेणिमे निक्षिप्त करता है तथा गुणश्रेणिके भी असख्यातवे भागमात्र द्रव्यकी, जो कि असख्यात समयप्रबद्धप्रमाण होता है, समय समयमे उदी-रणा करता है। पुन इसके आगे हजारो स्थितिकाण्डकोके व्यतीत होनेपर मिथ्यात्वकी उच्छि-

ष्टावलिको छोडकर उसके शेष समस्त स्थितिसत्कर्मको घातके लिए ग्रहण करता है, यह उक्त दोनो गाथाओका तात्पर्य है। वेदकसम्यग्दृष्टि जीव ही क्रमसे मिथ्यात्व आदि तीनो प्रकृतियोका क्षय कर क्षायिकसम्यग्दृष्टि बनता है, अत जो जीव मिथ्यात्व प्रकृतिकी क्षपणा करते समय मिथ्यात्व प्रकृतिके सख्यात हजार स्थितिकाण्डकोका घात करते हुए उसकी उच्छिष्टावलिमात्र स्थिति शेष रखनेके सन्मुख होता है तब उसके मध्य कालमे प्रति समय सम्यक्त्व प्रकृतिके असख्यात समयप्रबद्धोकी उदीरणा कैसे होती है इसी तथ्यका स्पष्टीकरण प्रकृतमे करते हुए यह बतलाया गया है कि सम्यक्त्वप्रकृतिके द्रव्यमे जितने द्रव्यका अपकर्षण होता है उसमेसे बहुभागप्रमाण द्रव्यका तो गुणश्रेणिके ऊपरके निषेकोमे निक्षेप करता है। जो शेष एक भाग रहता है उसमेसे बहुभागप्रमाण द्रव्यका गुणश्रेणिमे निक्षेप करता है तथा शेष एक भागप्रमाण द्रव्यको उदयावलिमे देता है। यहाँ जो शेष एक भागप्रमाण द्रव्य उदयावलिमे दिया गया है वह भी असख्यात समयप्रबद्धप्रमाण है, यह उक्त कथनका तात्पर्य है। प्रकृतमे सर्वत्र पल्यका असख्यातवाँ भागप्रमाण भागहार जानना चाहिए। शेष कथन स्पष्ट ही है।

जत्थ असखेज्जाण समयपबद्धाणुदीरणा तत्तो।
पल्लासखेज्जदिमो हारो णासखलोगमिदो[1] ॥ १२३ ॥

यत्रासंख्येयानां समयप्रबद्धानामुदीरणा तत.।
पल्यासंख्येय. हारो नासख्यलोकमित. ॥ १२३ ॥

स० टी०—यस्मिन्नवसरे असख्येयाना समयप्रबद्धाना उदीरणा उपरितनस्थितिस्थितानामुदयावलिप्रवेशो भवति तत्समयादारभ्य उत्तरकाले पल्यासख्यातभागमात्र एव उदयावलिनिक्षेपार्थ भागहारो नासख्यातलोकप्रमित. ॥ १२३ ।

स० च०—जिस अवसर विषै असख्यात समयप्रबद्धकी उदीरणा होइ ऊपरिके निषेकनिका द्रव्य उदयावलीविषैं प्राप्त होइ तिस समयतैं लगाय उत्तर कालविषै उदयावलीविषैं द्रव्य देनेके अर्थि भागहार पल्यका असख्यातवा भागमात्र ही जानना। पूर्ववत् असख्यात लोकमात्र न जानना ॥१२३॥

मिच्छुच्छिट्ठादुवरिं पल्लासखेज्जभागिगे खडे।
संखेज्जे समतीदे मिस्सुच्छिट्ठ हवे णियमा[2] ॥ १२४ ॥

मिथ्योच्छिष्टादुपरि पल्यासंख्येयभागगे खडे।
सख्येये समतीते मिश्रोच्छिष्टं भवेत् नियमात् ॥ १२४ ॥

स० टी०—यस्मिन् समये मिथ्यात्वप्रकृतेरुच्छिष्टावलिमात्रमवशिष्यते शेपा सर्वापि स्थितिर्बहुभि स्थितिकाडकै खडिता भवति, तस्मात्समयादारभ्य सम्यग्मिथ्यात्वसम्यक्त्वप्रकृत्यो स्थितौ पल्यासख्यातभागबहुभागायामेपु सख्यातसहस्रस्थितिकाडकेपु गतेपु चरमकाडकचरमफालिपतनसमये मिश्रप्रकृतेरुच्छिष्टावलिमात्रमवशिष्यते ॥ १२४ ॥

१ एत्तो पुव्व व सव्वत्थेव असखेज्जलोगपडिभागेण, सव्वकम्माणमुदीरणा। एण्हि पुण सम्मत्तस्स पलिदोवमस्सासखेज्जदिभागपडिभागेणुदीरणा पयट्टा त्ति ज वुत्त होइ। जयध० भा० १३, पृ० ४९।

२ एव सखेज्जेहिं ट्ठिदिखडएहि गदेहि सम्मामिच्छत्तमावलियबाहिर सव्वमागाइद। क० चू०, जयध० भा० १३, पृ० ५३। ध० पु० ६, पृ० २५८।

स० च०—मिथ्यात्वकी उच्छिष्टावलीमात्र स्थिति अवशेष रहनेके समयतें लगाय मिश्र-मोहनीकी स्थितिविषै पल्यकौ असंख्यातका भाग दीए तहाँ बहुभागमात्र आयाम धरैं असे संख्यात हजार स्थितिकांडक भए तहाँ अंतकांडककी अंतफालिका पतनविषै मिश्रमोहनीके निषेक उच्छिष्टा-वलीमात्र अवशेष रहै हैं ॥ १२४ ॥

विशेष—पहले मिथ्यात्वकी उच्छिष्टावलिको छोड़कर जिस विधिसे उसकी क्षपणाका विधान कर आये हैं उसी विधिसे सम्यग्मिथ्यात्वकी क्षपणाका विधान जानना चाहिए। यह प्रकृतमें उदय प्रकृति न होनेसे अन्तमें इसको भी उच्छिष्टावलिको छोड़कर शेषकी क्षपणा स्थितिकाण्डकघातके क्रमसे हो जाती है। तथा उच्छिष्टावलिप्रमाण निषेकोंका स्तिवुकसंक्रमद्वारा सम्यक्त्वप्रकृतिमें संक्रमण होकर अभाव हो जाता है। मिथ्यात्वकी उच्छिष्टावलिका भी इसी विधिसे अभाव होता है।

मिस्सुच्छिट्ठे समये पल्लासंखेज्जभागिगे खंडे।
चरिमे पडिदे चेट्ठदि सम्मस्सडवस्सठिदिसत्तो॥ १२५ ॥

मिश्रोच्छिष्टे समये पल्यासंख्येयभागगे खंडे।
चरमे पतिते चेष्टते सम्यक्त्वस्याष्टवर्षस्थितिसत्त्वम् ॥ १२५ ॥

स० टी०—यस्मिन् समये मिश्रप्रकृतेश्चरमकांडकचरमफालिपतने आवलिमात्रस्थितिरवशिष्यते तस्मिन्नेव समये सम्यक्त्वप्रकृतिस्थितौ पल्यासंख्यातभागबहुभागमात्रायामेषु संख्यातसहस्रस्थितिकांडकेषु गतेषु चरमकांडक-चरमफालिपतने अष्टवर्षमात्रस्थितिसत्त्वमवशिष्य तिष्ठति ॥ १२५ ॥

स० च०—जिस समय मिश्रमोहनीकी उच्छिष्टावलीमात्र स्थिति रहै है तिसही समयविषैं सम्यक्त्वमोहनीकी स्थितिविषै पल्यकौ असंख्यातका भाग दीए तहाँ बहुभागमात्र आयाम धरैं असे संख्यात हजार स्थितिखंड व्यतीत होनेतैं इहाँ तिस सम्यक्त्वमोहनीका अष्ट वर्षप्रमाण स्थितिसत्व अवशेष रहै। भावार्थ यहु—मिश्रमोहनीकी उच्छिष्टावलीमात्र स्थिति रहनेका अर सम्यक्त्वमोहनीकी आठ वर्षमात्र स्थिति रहनेका एक ही काल है॥ १२५॥

विशेष—जिस समय सम्यग्मिथ्यात्वकी उच्छिष्टावलिप्रमाण स्थिति शेष रहती है उस समय सम्यक्त्वकी सत्त्वस्थिति कितनी शेष रहती है इस प्रश्नका समाधान करते हुए चूर्णिसूत्रोंमें बतलाया गया है कि इस विषयमें दो उपदेश पाये जाते हैं—अप्रवाह्यमान उपदेशके अनुसार सम्यक्त्वकी संख्यात हजार वर्षप्रमाण सत्त्वस्थिति शेष रहती है और प्रवाह्यमान उपदेशके अनुसार आठ वर्ष प्रमाण सत्त्वस्थिति शेष रहती है। जो सर्व आचार्यसम्मत है तथा जो आर्यमंक्षु और नागहस्ति महावाचकोंके मुखकमलसे निकला है वह प्रकृतमें प्रवाह्यमान उपदेश है और इसके अतिरिक्त दूसरा अप्रवाह्यमान उपदेश है। आगे प्रवाह्यमान उपदेशके अनुसार व्याख्यान किया गया है इतना प्रकृतमें स्पष्ट समझना चाहिए।

---

१ ताधे सम्मत्तस्स दोण्णि उवदेसा। के वि भणंति—संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ट्ठिदाणि त्ति। पवाइज्ज-तेण उवदेसेण अट्ठवस्साणि सम्मत्तस्स सेसाणि, सेसाओ ट्ठिदीओ आगाइदाओ त्ति। क० चू०, जयध० भा० १३, पृ० ५४।

मिच्छस्स चरमफालिं मिस्से मिस्सस्स चरिमफालिं तु ।
सछुहदि हु सम्मत्ते ताहे तेसिं च वरदव्वं[1] ॥ १२६ ॥

मिथ्यात्वस्य चरमफालिं मिश्रे मिश्रस्य चरमफालिं तु ।
सक्रमति हि सम्यक्त्वे तस्मिन् तेषां च वरद्रव्यं ॥ १२६ ॥

स० टी०—मिथ्यात्वप्रकृतिस्थितौ पल्यसख्यातभागबहुभागमात्रायामेषु सख्यातसहस्रस्थितिकाडकेषु गतेषु चरमकाडकचरमफालिं सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतौ निक्षिपति । सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिस्थितौ पल्यसख्यातभागबहुभागमात्रायामेषु सख्यातसहस्रस्थितिकाडकेषु गतेषु चरमकाडकचरमफालिं सम्यक्त्वप्रकृतौ निक्षिपति । तस्मिन् चरमफालिपतनसमये तयोर्मिश्रसम्यक्त्वप्रकृत्योर्द्रव्यमुत्कृष्टं भवति ॥ १२६ ॥

स० च०—मिथ्यात्वप्रकृतिका अत काडककी अन्त फालि है सो जिस समयविषैं मिश्रमोहनीविषै सक्रमण होइ तिस समयविषैं मिश्रमोहनीका द्रव्य उत्कृष्ट हो है । अर मिश्रमोहनी अत काडककी अत फालिका द्रव्य जिस समय सम्यक्त्वमोहनीविषै सक्रमण होइ तिस समयविषै सम्यक्त्वमोहनीका द्रव्य उत्कृष्ट हो है ॥ १२६ ॥

विशेष—प्रकृतमे मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अन्तिम स्थितिकाण्डकी अन्तिम फालिका पतन किसका किसमे होता है यह नियम करते हुए ही यह बतलाया गया है कि मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिका पतन सम्यग्मिथ्यात्वमे और सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिका पतन सम्यक्त्वप्रकृतिमे होता है । पहले ऐसा नियम नही था, इसलिये यहाँ यह नियम किया गया है ।

जदि होदि गुणिदकम्मो दव्वमणुक्कस्समण्णहा तेसिं[2] ।
अवरठिदी मिच्छदुगे उच्छिट्ठे समयदुगसेसे[3] ॥ १२७ ॥

यदि भवति गुणितकर्मा द्रव्यमनुत्कृष्टमन्यथा तेषाम् ।
अवरस्थितिर्मिथ्यात्वद्विके उच्छिष्टसमयद्विकशेषे ॥ १२७ ॥

---

१ तदो ट्ठिदिखडए णिट्ठायमाणे णिट्ठिदे मिच्छत्तस्स जहण्णओ ट्ठिदिसकमो, उक्कस्सओ पदेससकमो । ताधे सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सग पदेससतकम्म । क० चू० । ताधे चेव सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सय पदेससतकम्ममुवजायदे, मिच्छत्तदव्वस्स सव्वस्सेव किंचूणदिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धपमाणस्स तस्सरूवेण परिणदत्तादो। जयध० भा० १३, पृ० ५१ । एदम्मि ट्ठिदिखडए णिट्ठिदे ताधे जहण्णगो सम्मामिच्छत्तस्स ट्ठिदिसकमो, उक्कस्सओ पदेससकमो, सम्मत्तस्स उक्कस्सपदेससतकम्म । क० चू० । ताधे चेव सम्मत्तस्स उक्कस्सय पदेससतकम्म होइ, सम्मामिच्छत्तुक्कस्ससकमपडिग्गहवसेण तदुवलद्धीदो । जयध० भा० १३, पृ० ५५ ।

२ णवरि जइ एसो गुणिदकम्मसियणेरइयपच्छायदो समयाविरोहेण सव्वलहुमागतूण दसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिदो तो उक्कस्सओ मिच्छत्तस्स पदेससकमो होइ । अण्णहा वुण अजहण्णाणुक्कस्सओ पदेससकमो त्ति वत्तव्व । सुत्ते पुण गुणिदकम्मसियविवक्खाए उक्कस्सओ पदेससकमो णिद्दिट्ठो त्ति ण किंचि विरुद्ध । ताधे चेव सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सय पदेससतकम्ममुवजायदे । मिच्छत्तस्स सव्वस्सेव किंचूणविड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धपमाणस्स तस्सरूवेण परिणदत्तादो । जयध० भा० १३, पृ० ५१ तथा ५५ ।

३ तदो आवलियाए दुसमयूणाए गदाए मिच्छत्तस्स जहण्णय ट्ठिदिसतकम्म । क० चू० जयध० भा० १३, पृ० ५२ । एत्तो दुसमयूणाए गलिदाए सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णय ट्ठिदिसतकम्ममेयट्ठिदी दुसमयकालमेत्त होइ त्ति अणुत्त हि जाणिज्जदे, मिच्छत्तपरूवणाए चेव गयत्थत्तादो । जयध० भा० १३, पृ० ५५ ।

स० टी०—अथ दर्शनमोहक्षपक आत्मा यदि गुणितकर्माश उत्कृष्टयोगादिसामग्रीवशेन उत्कृष्टकर्मसचयवान् भवति तदा तयोर्द्रव्यमुत्कृष्ट भवतीति सबध, अन्यथा यद्युत्कृष्टसचयवान्न भवति तदा तयोर्द्रव्यमनुत्कृष्ट भवति। मिथ्यात्वसम्यग्मिथ्यात्वप्रकृत्योरुच्छिष्टावल्या समयद्विके शेपे सति जघन्यस्थितिर्भवति। उदयावलिचरमनिपेको भवतीत्यर्थ ॥

स० च०—यहु दर्शनमोहका क्षय करनेवाला जीव जो गुणितकर्मांश कहिए उत्कृष्ट कर्मसचय युक्त होइ तौ ताके तिनि दोऊ प्रकृतिनिका द्रव्य तिस समयविपैं उत्कृष्ट हो है अर जो वह जीव उत्कृष्ट कर्मका सचययुक्त न होइ तौ ताकै तिनिका द्रव्य तहा अनुत्कृष्ट हो है। वहुरि मिथ्यात्व अर मिश्रमोहनीकी स्थिति उच्छिष्टावलीमात्र रही सो क्रमतैं एक एक समय विपैं एक एक निषेक गलि तहा दोय समय अवशेष रहैं जघन्य स्थिति हो है। भावार्थ यहु—तहा उदयावलीका अत निषेकमात्र स्थितिसत्व हो है॥ १२७॥

विशेष—जो निरन्तर गुणितकर्मांशिक विधिसे कर्मस्थितिके काल तक मिथ्यात्वका बन्ध कर सातवे नरकमे दूसरी बार यथाविधि उत्पन्न होकर भवस्थितिके अन्तिम समयमे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट सचय कर क्रमसे तिर्यञ्च पर्यायमे उत्पन्न हुआ और वहाँसे यथाविधि अतिशीघ्र कर्मभूमिज मनुष्य होकर क्रमसे वेदकसम्यक्त्वपूर्वक दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करने लगा उसके क्रमसे मिथ्यात्वके अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिके सम्यग्मिथ्यात्वमे और सम्यग्मिथ्यात्वके अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिके सम्यक्त्वमे उत्कृष्ट प्रदेशसक्रम होनेपर सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वका यथाक्रम उत्कृष्ट प्रदेशसचय होता है। शेष कथन सुगम है।

मिश्रद्विककी अन्तिम फालिके कितने द्रव्यका गुणश्रेणिमे किस क्रमसे निक्षेप होता है इसका निर्देश—

मिस्सदुगचरिमफाली किंचूणदिवड्ढसमयपबद्धपमा।
गुणसेढिं करिय तदो असखभागेण पुव्वं व[1]॥ १२८॥

मिश्रद्विकचरमफालि किंचिदूनद्वयर्धसमयप्रबद्धप्रमा।
गुणश्रेणिं कृत्वा तत असख्यभागेन पूर्वं वा॥ १२८॥

स० टी०—मिश्रसम्यक्त्वप्रकृत्योश्चरमफालिद्वयद्रव्य किंचिन्न्यूनद्वयर्धगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धप्रमाण वा। तथाहि सम्यग्मिथ्यात्वद्रव्यमिद स a । १२ ~ a / ७ । ख । १७ । गु अस्मिन् मिथ्यात्वद्रव्ये स a । १२ ~ गु १ ^ / ७ । ख । १७ । गु a १— a सख्यात-

1 तक्कालभाविसगचरिमफालिदव्वेण सह सम्मामिच्छत्तचरिमफालिं घेत्तूण अट्ठवस्समेत्तसम्मत्तट्ठिदिसतकम्मस्सुवरि णिक्खिवमाणो उदये थोव पदेसग्ग देदि। से काले असखेज्जगुण देदि। एव जावगुणसेढिसीसय ताव असखेज्जगुण देदि। तदो उवरिमाणतराए ट्ठिदीए असखेज्जगुण चेव देदि। किं कारण? सम्मामिच्छत्तचरिमफालिदव्व किंचूणदिवड्ढगुणहाणिगुणिदसमयपवद्धमेत्तमोकड्डुणभागहारादो असखेज्जगुणेण पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागेण खडेदूण तत्थेयखडमेत्तमेव दव्व गुणसेढीए णिक्खिय। जयध० भा० १३, पृ० ६४। ध० पु० ६, पृ० २५९।

सहस्रस्थिति काडकगुणसक्रमविधानेनोच्छिष्टावलिमात्रनिषेकान् वर्जयित्वा निक्षिप्ते सम्यग्मिथ्यात्वद्रव्यमियद्भवति — स ᗅ । १२ — अत्रापि सख्यातसहस्रस्थितिकाडकगुणसक्रमविधानेन चरमकाडकचरमफालिं विहाय इतरकाडकद्रव्य
७ । ख १७
सर्वं सर्वद्रव्यासख्यातैकभागमात्र स । ᗅ १२— सम्यक्त्वप्रकृतिद्रव्ये स ᗅ । १२—
७ । ख । १७ । ᗅ ७ । ख । १७ । गु
स्वस्याष्टवर्षस्थितेरुपरि चरमकाडकचरमफालिद्रव्य मुक्त्वा इतरसर्वकाडकद्रव्यमपि गुणसक्रमकालद्विचरमसमय-
पर्यंत निक्षिप्य तच्चरमसमये मिश्रचरमफालिद्रव्य स ᗅ । १२ — ᗅ, सम्यक्त्वचरमफालिद्रव्य स ᗅ । १२ — ᗅ
७ । ख १७ ᗅ ७ । ख । १७ गु ᗅ
एतद्द्रव्यद्वये मिलिते एव स ᗅ १२ — । इद सर्वं मनस्यवधार्याचार्यै "मिस्सदुमचरिमफाली किंचूणदिवड्ढसमय-
७ । ख । १७
पवद्धपमा" इत्युक्त । अस्माच्चरमफालिद्वयद्रव्यात्पल्यसख्यातैकभाग स ᗅ । १२ — गृहीत्वा सम्यक्त्वप्रकृते-
७ । ख १७ प
ᗅ
रवशिष्टाष्टवर्षमात्रस्थितौ उदयावलिप्रथमसमयादारम्य प्रागारब्धगलितावशेषगुणश्रेणिशीर्षपर्यंत प्रतिनिषेक-मसख्यातगुणितक्रमेण निक्षिप्य तदनतरोपरितनैकसमयेऽप्यसख्यातगुण । इत प्रभृत्यवस्थितगुणश्रेणिप्रतिज्ञानात्पुन-
स्तद्बहुभागद्रव्यमिद स ᗅ । १२ — प ॥ १२८ ॥
ᗅ
७ । ख । १७ । प
ᗅ

स० च०—मिश्रमोहनी अर सम्यक्त्वमोहनीकी जे अतकी दोय फालि तिनिका द्रव्य किंचित् ऊन द्व्यर्धगुणहानिगुणित समयप्रबद्धप्रमाण है सोई कहिए है—

मिश्रमोहनीका जो द्रव्य ताविषैं उच्छिष्टावली विना अन्य सर्व मिथ्यात्व प्रकृतिके द्रव्यकौं सख्यात हजार स्थितिकाडक अर गुणसक्रम विधानकरि निक्षेपण कीया तहा जो मिश्रमोहनीका द्रव्य भया तहा भी सख्यात हजार स्थितिकाडक अर गुणसक्रमण विधान करि जो अत काडककी अन्त फालिका द्रव्य भया सो तौ जुदा राख्या अर इसके अन्य काडक द्रव्य सर्व द्रव्यके असख्यातवें भागमात्र हैं ताका सम्यक्त्व मोहनीविषैं निक्षेपण कीया अर सम्यक्त्वमोहनीका द्रव्य अपना आठ वर्षकी स्थितिके उपरिवर्ती जो अन्त काडककी अत फालिका द्रव्य ताकौं छोडि और सर्व काडक-निका द्रव्यकौ भी सक्रमणकालका द्विचरम समयपर्यंत तहा अष्ट वर्षमात्र अवशेष स्थितिविषै निक्षे-पण करि तिस सक्रमण कालका अत समयविषैं मिश्रमोहनीकी अर सम्यक्त्वमोहनीकी अतकी जे दोय फालि तिनिका द्रव्य मिलाए किंचित् ऊन द्व्यर्ध गुणहानिगुणित समयप्रबद्धप्रमाण द्रव्य हो है। भावार्थ यहु—मिश्रमोहनीका गुणसक्रम करि यावत् सम्यक्त्वमोहनीरूप परिणमै तावत् गुण-सक्रम काल कहिए ताका अत समयविषैं मिश्रमोहनीका उच्छिष्टावलीमात्र सम्यक्त्वमोहनीका अष्ट वर्षमात्र निषेक विना अन्य सर्व द्रव्य तिनिकी अत दोय फालिनिका जानना सो किंचिदून द्व्यर्द्ध गुणहानिगुणित समयप्रबद्धप्रमाण है। सो अष्ट वर्ष स्थिति अवशेषकरणके समयविषैं इनि दोय फालिनिके पतन करनेके अर्थि तिनिके द्रव्यकौं पल्यका असख्यातवा भागका भाग दोए तहा एक

भागकौ उदयादि अवस्थित गुणश्रेणि आयामविषै देना सो उदयावलीका प्रथम समयतैं लगाय पूर्वै जो गलितावशेष गुणश्रेणि आयामका प्रारभ कीया था तामैं व्यतीत भए पीछै जो अवशेष गुणश्रेणि आयाम रह्या ताका अत पर्यंत अर एक समय उपरितन स्थितिका तिनिविषैं देना।

भावार्थ—इहाँतै पहलैं तौ उदयावलीतैं बाह्य गुणश्रेणि आयाम था अब इहाँतैं लगाय उदय रूप वर्तमान समयतैं लगाय ही गुणश्रेण्यायाम भया तातै याकौ उदयादि कहिए है। अर पूर्वै तौ समय व्यतीत होतै गुणश्रेणि आयाम घटता होता जाता था अब एक समय व्यतीत होते उपरितन स्थितिका एक समय मिलाय गुणश्रेणि आयामका प्रमाण समय व्यतीत होतै भी जेताका तेता रहै। तातैं अवस्थित कहिए, तातै याका नाम उदयादि अवस्थिति गुणश्रेण्यायाम है ताके निषेकनिविषैं सो द्रव्य असख्यातगुणा क्रम लीए दीजिए है ऐसै तिन दोऊ फालिनिके द्रव्यकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ एक भाग तौ गुणश्रेणिविषै दीया॥ १२८॥

विशेष—जिस समय मिश्रप्रकृतिका उच्छिष्टावलिको छोडकर अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिका सम्यक्त्वप्रकृतिकी आठ वर्षप्रमाण स्थितिमे पतन होता है उसी समय सम्यक्त्व-प्रकृतिकी आठ वर्षप्रमाण सत्त्वस्थितिको छोडकर उपरितन सत्त्वस्थितिस्वरूप अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिका सम्यक्त्वकी आठ वर्षप्रमाण सत्त्वस्थितिमे पतन होता है। उसमे भी इन दोनो फालियोके द्रव्यमे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे असख्यातगुणे ऐसे पल्योपमके असख्यातवें भागका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उसे पहलेके समान गुणश्रेणि करके गुणसक्रमविधिसे निक्षिप्त करना चाहिए। अर्थात् उदय स्थितिमे सबसे स्तोक द्रव्यको निक्षिप्त करे। उससे उपरितन स्थितिमे असख्यातगुणे द्रव्यको निक्षिप्त करे। इस विधिसे गुणश्रेणि शीर्षके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर असख्यातगुणे द्रव्यको निक्षिप्त करे। इन दोनो फालियोमे सचित द्रव्य डेढ गुणहानि-गुणित समयप्रबद्धप्रमाण है, इसे टीकामे स्पष्ट किया ही है।

गुणश्रेणिसे ऊपरके निषेकोमे अवशिष्ट द्रव्यके निक्षेपकी विधिका निर्देश—

सेस विसेसहीण अडवस्सुवरिमठिदीए सछुद्धे।
चरमाउलिं व सरिसी रयणा सजायदे एत्तो[1]॥ १२९॥

शेषं विशेषहीनमष्टवर्षस्योपरिमस्थित्या सक्षुब्धे।
चरमावलिरिव सदृशी रचना सजायतेऽत्र॥ १२९॥

स० टी०—सेस विसेसहीणमित्यादि गुणश्रेण्यायामातर्मुहूर्तकालन्यूनाष्टवर्षमात्रोपरितनस्थितौ 'अद्धाणेण सव्वधणे खडिदे इत्यादि' विधानेनानीत प्रथमनिषेकद्रव्य स ∂ । १२–१६ १ –^ इदमुपरितन-
– ७ । ख १७ । व ८–१६–व ८
२

1 पुणो सेसबहुभागदव्वस्सतोमुहुत्तूणट्ठवस्सेहिं खडियेयखडस्स णिरुद्धगोपुच्छायारेण णिक्खेवदसणादो। तम्हा एत्तो पहुडि सम्मत्तस्स उदयादि अवट्ठिदगुणसेढिणिक्खेवो होइ त्ति घेत्तव्वो। एव गुणसेढिसीसयादो एव णिक्खित्ते अणतरोवरिमाए वि एक्किस्से ट्ठिदीए असखेज्जगुण पदेसग्ग णिक्खवियूण उवरि सव्वत्थ अणतरोवणिधाए विसेसहीण चेव देदि। जाव अट्ठवस्साण चरिमसमओ त्ति। जयध० भा० १३, पृ० ६५।

प्रथमस्थितिप्रथमसमये निक्षिपेत् । पुनर्द्वितीयादिसमयेष्वष्टवर्षचरमसमयपर्यंत एतादृशविशेषहीनक्रमेण निक्षिपेत् । एव निक्षिप्ते गुणश्रेणिचरमसमयद्रव्यात्तदनतरोपरितनस्थितिप्रथमसमयद्रव्यमसख्यातगुणित भवति, पल्यासख्यात-बहुभागद्रव्यस्य तत्र निक्षेपात् ॥१२९॥

स० च०—अवशेष बहुभागनिके द्रव्यकौ गुणश्रेणि आयाममात्र अतर्मुहूर्त घाटि अष्ट वर्ष-प्रमाण जो उपरितन स्थिति ताके निषेकनिविषै 'अद्धाणेण सव्वधणे खंडिदे' इत्यादि विधानकरि प्रथम निषेकनिविषै द्रव्य निक्षेपण करै अर तातै द्वितीयादि निषेकनिविषै समान प्रमाणरूप चय घटता क्रमकरि निक्षेपण करै है ऐसै ही दीए गुणश्रेणिके अत निषेकका द्रव्यतै उपरितन स्थितिके प्रथम निषेकका द्रव्य असख्यातगुणा हो है । जातै इहा बहुभागका निक्षेपण करै है अर स्थितिका प्रमाण स्तोक है ॥ १२९ ॥

विशेष—पहले गुणश्रेणिमे कितने द्रव्यका निक्षेप होता है इसका विधान कर आये हैं। आगे गुणश्रेणिके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण कालको छोडकर जो अन्तर्मुहूर्त कम आठ वर्षप्रमाण सम्यक्त्व-स्थितिसत्त्व शेष रहता है उसमे शेष बहुभागप्रमाण द्रव्यका किस विधिसे निक्षेप होता है उसका इस गाथासूत्रमे निर्देश किया गया है। आशय यह है कि यहाँसे लेकर प्रति समय गुणश्रेणिशीर्षके उपरितन निषेकमे जितना द्रव्य निक्षिप्त होता है उससे असख्यातगुणा द्रव्य इससे उपरितन स्थितिमे निक्षिप्त होता है मात्र इससे आगेकी सब स्थितियोमे उत्तरोत्तर एक-एक चय घटते हुए क्रमसे द्रव्यका निक्षेप होता है। इससे यह ज्ञात होता है कि यहाँसे लेकर उदयादि अवस्थित गुणश्रेणि-की रचना प्रारम्भ हो जाती है।

सम्यक्त्वका आठ वर्षप्रमाण स्थितिसत्त्व होनेसे लेकर गुणश्रेणि और स्थितिकाण्डकके प्रमाणका निर्देश—

अडवस्सादो उवरिं उदयादिअवट्ठिद च गुणसेढी ।
अतोमुहुत्तिय ठिदिखड च य होदि सम्मस्स[1] ॥ १३० ॥

अष्टवर्षातुपरि उदयाद्यवस्थित च गुणश्रेणी ।
अंतर्मुहूर्तिकं स्थितिखड च च भवति सम्यक्त्वस्य ॥ १३० ॥

स० टी०—सम्यक्त्वप्रकृतेरष्टवर्षमात्रस्थितिकरणसमयादूर्ध्वमपि न केवलमष्टवर्षमात्रस्थितिकरणसमय एवोदयाद्यवस्थितिगुणश्रेणिरित्यर्थ , सम्यक्त्वप्रकृतेरन्तर्मुहूर्तायाम स्थितिखड भवति ॥ १३० ॥

स० च०—सम्यक्त्वमोहनीकी अष्ट वर्ष स्थिति करनेके समयतैं लगाय उपरि सर्वं समयनि-विषैं उदयादि अवस्थिति गुणश्रेणि आयाम है। बहुरि सम्यक्त्वमोहनीकी स्थितिविषैं स्थिति-खड अतर्मुहूर्तमात्र आयाम धरै है। इहातै अब एक एक स्थिति काडककरि अतर्मुहूर्त अतर्मुहूर्त स्थिति घटाइए है ॥ १३० ॥

---

१ एत्तो पाए अतोमुहुत्तिय ट्ठिदिखडय। क० चू०, जयध० भा० १३ पृ० ५९। तम्हा एत्तो पहुडि सम्मत्तस्स उदयादिअवट्ठिदगुणसेढिणिक्खेवो होइ त्ति घेत्तव्वो। जयध० भा० १३, पृ० ६४।

अनुभागके अपवर्तनका निर्देश—

विदियावलिस्स पढमे पढमस्सते च आदिमणिसेये ।
तिट्ठाणेणतगुणेणूणकमोवट्टणं चरमे ॥ १३१ ॥

द्वितीयावले प्रथमे प्रथमस्याते चादिमनिषेके ।
त्रिस्थानेऽनतगुणेनोनक्रमापवर्तन चरमे ॥ १३१ ॥

स० टी०—यस्मिन् समये सम्यक्त्वप्रकृतेरष्टवर्षमात्रस्थितिमवशेपयन् चरमकांडकचरमफालिद्वय पातयति तस्मिन्नेव समये सम्यक्त्वप्रकृत्यनुभागसत्त्वमतीतानतरसमयनिषेकानुभागसत्त्वादनतगुणहीनमवशिष्यते । तद्यथा—

सम्यक्त्वप्रकृतेश्चरमकांडकद्विचरमफालिद्वयपतनपर्यंत लतादारुसमस्थानानुभागसत्त्व कांडकघातवशेनानतगुणहीनमायात । पुनश्चरमफालिद्वयपतनसमये अनतगुणहान्यापकृष्टा लतासमानैकस्थान सम्यक्त्वप्रकृत्यनुभागसत्त्वमजनिष्ट इत प्रभृत्यतर्मुहूर्तकालसाध्योऽनुभागकांडकघातो नास्ति किंतु प्रतिसमयमनतगुणहान्यानुभागापवर्तन प्रवर्तते । अतीतानतरसमयनिषेकानुभागसत्त्वा ९ ना दिदानीमष्टवर्षावशेषकरणप्रथमसमये उदया-

१ ^

वल्युपरितनावलिप्रथमनिषेकानुभागसत्त्वमनतगुणहीन ९ ना इदमवशिष्ट । शेषा बहुभागा ९ ना ख अपवर्तिता
ख ख

खंडिता । तदानीतनशुद्धिविशेषमाहात्म्याद्विनाशिता इत्यर्थं । तथा तस्मिन्नेव समये द्वितीयावलिप्रथमनिषेकानुभागसत्त्वादुदयावलिचरमनिषेकानुभागसत्त्वमनतगुणहीनमवशिष्यते ९ । ना शेषास्तद्बहुभागा अपवर्तिता
१ ^ ख ख
९ ना ख ख तथा तस्मिन्नेव समये उदयावलिचरमनिषेकानुभागसत्त्वात्तत्प्रथमनिषेकानुभागसत्त्वमनतगुणहीन-
ख ख

१ ^
मवशिष्यते ९ ना शेषास्तद्बहुभागा अपवर्तिता —९ ना ख ख ख एवमनतगुणहीनमनुभागापवर्तनमष्ट-
ख ख ख ख ख ख

वर्षद्वितीयादिसमयेष्वपि प्रतिसमयमनतगुणक्रमेणाष्टवर्षस्थितौ चरमे चयाधिकावलिं यावन्न प्राप्नोति तावज्ज्ञातव्य । उच्छिष्टचरमावल्या तु अतीतानतरसमयनिषेकानुभागसत्त्वादुदयावलिप्रथमनिषेकानुभागसत्त्वमनतगुणहीन, तस्मात्तदनतरसमये उदयनिषेकानुभागसत्त्वमनतगुणहीन । एव प्रतिसमयमनतगुणहीनक्रमेणोच्छिष्टावलिचरमसमयपर्यंतमनुभागापवर्तन ज्ञातव्य ॥ १३१ ॥

स० स०—जिस समयविषै सम्यक्त्वमोहनीकी अष्ट वर्ष स्थिति अवशेष राखी अर मिश्र-

---

१ जाधे अट्ठवासट्ठिदिग सतकम्म सम्मत्तस्स ताधे पाए सम्मत्तस्स अणुभागस्स अणुसमय-ओवट्टणा । एसो ताव एक्को किरियापरिवत्तो । क० चू० । त पुण अणुसमयमोवट्टणमेवमणुमतव्व—अणतरहेट्ठिमसमयाणुभागसतकम्मादो सपहियसमये अणुभागसतकम्ममुदयावलियबाहिरमणतगुणहीण, एण्हिमुदयावलिबाहिराणुभागसतकम्मादो उदयावलियब्भतरमणुप्पविसमाणमणतगुणहीण । तत्तो वि उदयसमय पविसमाणमणतगुणहीण । एव समये समये जाव सययाहियावलिअक्खीणदसणमोहो त्ति । तत्तो परमावलियमेत्तकालमुदय पविसमाणाणुभागस्स अणुसमयोवट्टणा त्ति । जयध० भा० १३, पृ० ६३ ।

मोहनी सम्यक्त्वमोहनीका अत काडककी दोय फालिका पतन भया तिस ही समयविषै सम्यक्त्व मोहनीका अनुभाग पूर्व समयके अनुभागतै अनतगुणा घटता अवशेष रहै है। सोई कहिए है—

सम्यक्त्वमोहनीका अत काडककी द्विचरम फालि पतन समय जो अष्ट वर्ष स्थिति करनेका समयतै पूर्व समय तहाँ पर्यंत तौ लता दारुरूप द्विस्थानगत अनुभाग है सो अनुभागकाडकघाततैं अनतगुणा घटता भया। बहुरि यहु चरम फालि पतन समय जो अष्ट वर्ष स्थिति करनेका समय तिस विषै अनतगुणा घटता होइ लतासमान एक स्थानकौ प्राप्त अनुभाग भया। इहातै लगाय जो पूर्वै अतर्मुहूर्त कालकरि अनुभाग काडकाघात होता था ताका अभाव भया अर समय समय प्रति अनतगुणा घटता क्रम लीए अनुभागका अपवर्तन होने लगा तहा अनतरवर्ती अष्ट वर्ष करनेके समयतै जो पूर्व समय तीहिविषै निषेकनिका जो अनुभागसत्व था तातै अनतगुणा घटता अष्ट वर्ष स्थिति करनेका समयविषे उदयावलीके उपरिवर्ती जो उपरितनावली ताके प्रथम निषेकनिका अनुभाग सत्व अवशेष रहै है। अवशेष अनत बहुभागका विशुद्धताविशेषतै अपवर्तन भया, नाश भया। बहुरि तिस ही समयविषै उदयावलीके अत निषेकका अनुभागसत्व तिस अपने उपरिवर्ती उपरितनावलीका प्रथम निषेकका अनुभागसत्त्वतै अनतगुणा घटता रहै हे। अवशेषका नाश हो है। बहुरि तातै अनतगुणा घटता उदयावलीके प्रथम निषेकका अनुभागसत्व रहै है। अवशेषका नाश हो है। बहुरि तातै अनतगुणा घटता अष्ट वर्ष करनेके समयतै लगाय अनतरवर्ती आगामी समयविषैं अनतगुणा घटता अनुभागसत्व हो है अैसै समय समय प्रति अनतगुणा घटता अनुक्रमकरि उच्छिष्टावलीका अत समय पर्यंत अनुभागका अपवर्तन जानना ॥ १३१ ॥

विशेष—जहाँ सम्यक्त्वका आठ वर्षप्रमाण स्थितिसत्त्व होता है वहाँसे लेकर उसके अनुभागका प्रत्येक समयमे अपवर्तन होने लगता है। क्रम यह है कि अनन्तर पूर्व समयमे जो द्विस्थानीय अनुभागसत्त्व था उससे वर्तमान समयमे उदयावलिसे उपरितन स्थितिमे अनन्तगुणा हीन एकस्थानीय अनुभाग सत्त्व हो जाता है। उससे उदयावलिके अन्तिम निषेकमे अनन्तगुणा हीन एकस्थानीय अनुभागसत्त्व हो जाता है और इसी क्रमसे उत्तरोत्तर कम होता हुआ उदय स्थितिमे अनन्तगुणा हीन एकस्थानीय अनुभागसत्त्व हो जाता है। आशय यह है कि सम्यक्त्वका आठ वर्षप्रमाण स्थितिसत्त्व रहनेके पूर्व प्रत्येक अनुभागकाण्डकका अन्तर्मुहूर्त—अन्तर्मुहूर्त कालमे घात करता था। अब प्रत्येक समयमे सम्यक्त्वके अनुभागका अनन्तगुणी हानिरूपसे अपवर्तन करता है। उसमे भी पहले जो लता-दारुरूप द्विस्थानीय अनुभागसत्त्व था उसका प्रत्येक समयमे लतारूप एकस्थानीय अनुभागरूपसे अपवर्तन करने लगता है। इसी तथ्यको समग्ररूपसे इस प्रकार जानना चाहिए कि अनन्तर पूर्व समयमें जो अनुभागसत्त्व था उससे वर्तमान समयमे उदयावलिके वाहर स्थित अनुभागसत्त्व प्रति समय अनन्तगुणा हीन होने लगता है। तथा इस उदयावलिके वाहर स्थित अनुभागसत्कर्मसे उदयावलिमे अनुप्रविशमान अनुभागसत्कर्म अनन्तगुणा हीन होता है और उससे भी उदय समयमे प्रविशमान अनुभागसत्त्व अनन्तगुणा हीन होता है। यह क्रम दर्शनमोहनीयके क्षय होनेमे एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहने तक जानना चाहिए। उसके वाद आवलिमात्र काल तक उदयमे प्रविशमान अनुभागसत्त्वकी अनुसमय अपवर्तना होती है।

आठ वर्षकी स्थितिके बाद कहाँ तक किस विधिसे द्रव्यका निक्षेप होता है इसका खुलासा—

अडवस्से उवरिमि वि दुचरिमखडस्स चरिमफालि त्ति ।
सखातीदगुणक्कमविसेपहीणक्कम देदि ॥ १३२ ॥
अष्टवर्षात् उपरि अपि द्विचरमखडस्य चरमफालीति ।
सख्यातीतगुणक्रम विशेषहीनक्रम ददाति ॥ १३२ ॥

स० टी०—मिश्रद्विकचरमफालिद्रव्य सम्यक्त्वप्रकृतिस्थितेरष्टवर्षमात्रावशेषकरणसमये उदयसमयाद्यव-स्थितिगुणश्रेण्यायामे प्रतिसमयमसख्यातगुणितक्रमेणातर्मुहूर्तोनाष्टवर्षमात्रोपरितनस्थितौ च विशेषहीनक्रमेण निक्षिप्त तथोपर्यपि प्रथमकाडकप्रथमफालिपतनसमयात्प्रभृति द्विचरमकाडकचरमफालिपतनसमयपर्यंत उदयाद्यव-स्थितिगुणश्रेण्यायामे प्रतिनिषेकमसख्यातगुणितक्रमेणातर्मुहूर्तोनाष्टवर्षमात्रोपरितनस्थितौ विशेषोनक्रमेणाप-कृष्टद्रव्य फालिद्रव्य च निक्षेप्तव्य ॥ १३२ ॥

स० च०—जैसै अष्ट वर्ष स्थिति करनेके समयविषै मिश्रमोहनी सम्यक्त्वमोहनीकी अत दोय फालिनिके द्रव्यकौ उदयादि अवस्थिति गुणश्रेणि आयामविषै अर तातै उपरिवर्ती उपरितन स्थितिविषै देनेका विधान पूर्वै कह्या तैसै ही तिस अष्ट वर्ष स्थिति करनेके समयतै ऊपर भी जे समय तिनिविषै अतर्मुहूर्त आयाम धरै काडक प्रारभ भए तिनिविषै प्रथम काडककी प्रथम फालिका पतनरूप जो प्रथम समय तातै लगाय द्विचरम काडककी अत फालिका पतन समयपर्यंत गुणश्रेणि आदिके अर्थि अपकर्षण कीया द्रव्य ताका अर स्थिति घटावनेका अर्थि ग्रह्या स्थितिकाडककी फालिका द्रव्य ताकी उदयादि अवस्थित गुणश्रेणि आयामविषै असख्यातगुणा क्रम लीए अर अत-र्मुहूर्त घाटि अष्ट वर्षप्रमाण उपरितन स्थितिविषै चय घटता क्रम लीए निक्षेपण हो है ॥ १३२ ॥

विशेष—सम्यक्त्वका आठ वर्षप्रमाण स्थितिसत्त्व होनेके समयसे लेकर द्विचरम स्थिति-काण्डकके पतनके अन्तिम समय तक प्रत्येक स्थितिकाण्डकके द्रव्यका फालिक्रमसे किस प्रकार अधस्तन स्थितियोमे निक्षेप होता है इसी तथ्यको इस गाथामे स्पष्ट किया गया है। खुलासा इस प्रकार है—सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिके साथ सम्यक्त्वके पल्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिके द्रव्यको सम्यक्त्वकी आठ वर्षप्रमाण सत्त्वकर्मस्थितिके ऊपर निक्षिप्त करता हुआ यह जीव उदयमे सबसे स्तोक कर्मपुञ्जको निक्षिप्त करता है। उससे अनन्तर दूसरी स्थितिमे असख्यातगुणे प्रदेश पुञ्जको निक्षिप्त करता है। इस प्रकार पहलेके गुण-श्रेणिशीर्षके प्राप्त होने तक प्रत्येक स्थितिमे उत्तरोत्तर असंख्यातगुणे प्रदेशपुञ्जको निक्षिप्त करता है। उसके बाद गुणश्रेणिशीर्षसे उपरिम स्थितिमे असख्यातगुणे प्रदेशपुजको निक्षिप्त करता है। तदनन्तर शेष रहे बहुभागप्रमाण द्रव्यको अन्तर्मुहूर्त कम आठ वर्षोंके समयोसे खण्डित कर उस सब द्रव्यको उन सब समयोमे एक-एक चय कम करते हुए निक्षिप्त करता है। यहाँसे लेकर अव-स्थित गुणश्रेणि प्रारम्भ हो जाती है, इसलिए प्रति समय एक उदय समयके गलनेके साथ गुणश्रेणि शीर्षमे एक समयकी वृद्धि हो जाती है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

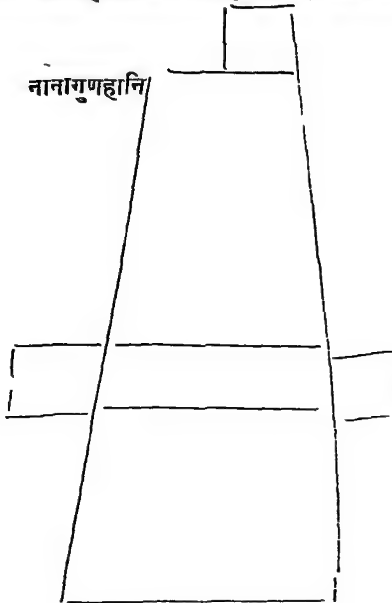
१ ताधे पाए ओवट्टिज्जमाणासु ट्ठिदीसु उदये थोव पदेसग्ग दिज्जदे। से काले असखेज्जगुण जाव गुणसेढिसीसय ताव असखेज्जगुण। तदो उवरिमाणतरट्ठिदीए वि असखेज्जगुण देदि। तदो विसेसहीण। क० चू०, जयघ० भा० १३, पृ० ६४। एव जाव दुचरिमट्ठिदिखडय ति। क० चू०, जयघ० भा० १३, पृ० ७०।

अब इहां स्पष्ट अर्थ जाननेके अर्थि अष्ट वर्ष करनेका समयतै पहले समयविषै वा अष्ट वर्ष करनेके समयविषै आगामी समयनिविषै संभवता विधान कहिए है—

अडवस्से संपहिय पुव्विल्लादो असंखसंगुणियं ।
उवरिं पुण संपहियं असंखसंखं च भागं तु ॥ १३३ ॥

अष्टवर्षे साम्प्रतिकं पूर्वस्मात् असंख्यसंगुणितं ।
उपरि पुनः साम्प्रतिकं असंख्यसंख्यं च भागं तु ॥ १३३ ॥

स० टी०—सम्यक्त्वप्रकृतेरष्टवर्षविशेषकरणसमयात्प्राक्तनानंतरसमये मिश्रसम्यक्त्वप्रकृतिद्विचरमफालिपतनयोग्ये सम्यक्त्वप्रकृतिद्रव्यमिदं स ∂ । १२—यद्यपि गुणसंक्रमकालप्रथमसमयादारभ्य तत्कालचरमसमयपर्यंत
७ । ख । १७ । गु
प्रतिसमयमसंख्यातगुणितक्रमेण गुणसंक्रमद्रव्यमायाति स ∂ । १२ – ∂ तथापि गुणसंक्रमसामान्यविवक्षया
७ । ख । १७ गु
सम्यक्त्वप्रकृतिसत्त्वद्रव्यं लिखितं स ∂ । १२ – इदं 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यनेन विधानेन उदय-
७ । ख । १७ गु
प्रथमनिषेकादारभ्य विशेषहीनक्रमेण नानागुणहानिषु विद्यते•इति तथान्यासीकुर्यात्—



चरमफालि

१ ^
स ∂ । ११ – १६ । व ८
७ । ख १७ । गु । १२ । १६
०
०
०
स ∂ । १२ – १६ – २ ⑦
७ । ख । १७ । गु । १२ १६
१
स ∂ । १२ – १६ – २ ⑦
७ । ख । १७ गु । १२ । १६
०
०
०
स ∂ । १२ – १६ – १
७ । ख । १७ । गु १२ १६
स ∂ । १२ – १६
७ । ख । १७ । गु १२ । १६   १ ^

अस्मिन् सत्त्वद्रव्ये तत्कालापकृष्टद्रव्यमिदं स ∂ । १२ – पल्यासंख्यातभागेन खंडयित्वा तद्बहुभागं स ∂ । १२ – प
७ ख १७ गु ओ   ∂
∂   ७ ख १७ गु ओ प
                                                                          ∂ ∂

उपरितनस्थितौ 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे' इत्यादिविधानेनापकृष्टमप्याद्योऽतिस्थापनावलिं मुक्त्वा विशेषहीनक्रमेण दद्यात्। पुनस्तदेकभाग स ३ । १२ − / ७ ख १७ गु ओ प / ३ ३ पल्यासख्यातभागेन खडयित्वा बहुभाग स ३ । १२ − प / ३ / ७ ख १७ गु ओ प प / ३ ३ ३ गुणश्रेण्या दद्यात्। अवशिष्टैकभाग स ३ । १२ − / ७ ख १७ गु ओ प प / ३ ३ ३ उदयावल्या दद्यात्। तन्निक्षेपन्यासोय—

स ३ । १२ − १६ − व ८ / ७ । ख १७ । गु । ओ । १२ । १६ / ० ३ / ०

स ३ । १२ − ६४ / ७ । ख । १७ । गु । ओ । प ८५ / ० ३ ३ / ० गुणश्रेणि

स ३ । १२ − १६ / ७ । ख । १७ । गु । ओ । १२ − १६ / ३

उपरितनस्थिति स ३ । १२— / स । ख । १७ गु । ओ प ८५ / ३ ३

स ३ । १२ − १६ − ४ / ७ ख १७ गु ओ प प ४ १६ − ४ / ० ३ ३ ३ २ / ० उदयावलि

ख ३ । १२ − १६ / ७ । ख १७ गु ओ प प ४ । १६ − ४ / ३ ३ ३ २

अनेन गुणश्रेणिद्रव्येण सहित सम्यक्त्वप्रकृतिसत्त्वद्रव्य दृश्यमित्युच्यते, सर्वत्र तत्कालापकृष्टद्रव्यमुदयप्रथमसमयात्प्रभृति निक्षिप्यमाण दीयमान तेन सहित सर्वसत्त्वद्रव्य दृश्यमानमिति राद्धान्तवचनात्। एव निक्षिप्ते दृश्यमानन्यासोऽय। तद्यथा—

उदयावल्या दत्तद्रव्य प्राक्तनसत्त्वद्रव्यस्यासख्यातैकभागमात्रमिति तेन सत्त्वद्रव्य साधिक भवति। इदानी गुणश्रेण्या दत्तद्रव्य प्राक्तनसत्त्वद्रव्यादसख्यातगुण गुणश्रेणिद्रव्यस्यापकर्षणभागहारसद्भावात् सत्त्वद्रव्यासख्यातैकभागमात्रत्वदर्शनात्। कथ ततोऽसख्यातगुणित गुणश्रेणिद्रव्यमिति चेत्[1] पल्ये प्रविष्टासख्यातभागहारबाहुल्यसामर्थ्यादिति ब्रूम। अत कारणात् गुणश्रेण्यायाममात्रसत्त्वनिषेकानिदानी गुणश्रेण्या निक्षिप्यमाननिषेकेभ्यधिक कुर्यात्। पुनरुपरितनस्थितौ गुणश्रेणिकरणेन निक्षिप्त द्रव्य तत्स्थितौ प्राक्तनसत्त्वद्रव्यस्यासख्यातैकभागमिति सत्त्वद्रव्ये इदानी निक्षिप्तद्रव्यमधिक कुर्यात्। सत्त्वद्रव्यमपेक्ष्यापकृष्टद्रव्यस्यापकर्षणभागहारसद्भावात्। इदानी निक्षिप्तद्रव्य तदसख्यातभागमात्र सिद्ध। अत्र ऋणधनयोर्विवरणमुच्यते—

उपरितनस्थितौ प्राक्तनसत्त्वप्रथमनिषेक ऋणमिद स ३ । १२ − २ ९ / ७ । ख १७ गु १२ । १६ । तदा निक्षिप्य द्रव्यमात्र धनमिद—स ३ । १२ − १६ । / ७ । ख १७ गु ओ १२ । १६ / ३ तत्कालापकर्षणभागहारेण ऋणद्रव्य समच्छेदीकृत्य द्व्यर्धगुणहानिमात्रसमय-

प्रवद्धस्य गुणकारभूतासख्यातरूपाणि घनद्रव्यस्य गुणकारभूतद्विगुणगुणहान्यामपनयेत् । अवशिष्टघनमिद—स ∂ । १२ – १७ – ∂ प्राक्तनोपरितनस्थितिसत्त्वप्रथमनिषेकेऽधिक कुर्यात् । एव कृते उपरितनस्थितिदृश्य-
७ । ख १७ गु ओ १२ १६
∂ ।

प्रथमनिषेक ईदृक् भवति स ∂ । १२ – १६ एवमुपरितनस्थितौ द्वितीयादिसत्त्वनिषेकेपु तत्कालाप-
७ ख । १७ । गु । १२ । १६

क्रुप्टनिक्षेपद्वितीयादिनिषेकान् ऋणघनविवरणावशिष्टान् प्रतिक्षिपेत् । एव प्रक्षिप्ते द्वितीयादिदृश्यनिषेका प्रथमादिदृश्यनिषेकेभ्य एकैकचयहीना अवतिष्ठन्ते । एव कृते मिश्रद्विकचरमफालिपतनयोग्ये गुणसक्रमकालचरमसमये सम्यक्त्वप्रकृतिसर्वदृश्यद्रव्यन्यासोय—

। १^
स ∂ । १२ – १६ – व ८ –
७ । ख १७ । गु । १२ । १६ उपरितन
०
०
। ०
स ∂ । १२ – १६
७ ख १७ गु १२ १६

।
स ∂ । १२ – ६४
७ ख १७ गु ओ प ८५
० ∂ ∂ गुणश्रेणि
०
। ०
स ∂ । १२ – १
७ । ख १७ गु ओ प ८५
∂ ∂

। १^
स ∂ १२ – १६ – ४
७ ख १७ गु १२ १६
०
० उदयावलि
। ०
स ∂ । १२ – १६
७ ख १७ गु १२ १६

तदनतरसमये मिश्रसम्यक्त्वप्रकृतिचरमफालिद्वयद्रव्यमष्टवर्षसमयावस्थितिनिपेकप्रमाणेन प्रागुक्तसम्यक्त्वप्रकृतिसत्त्वेन—स ∂ । १२ – एतावता न्यूनद्व्यर्धगुणहानिमात्रप्रथमसमयप्रवद्धप्रमाण । मिस्सग इत्यादि-
७ । ख १७ गु

गाथाव्याख्यानोक्तविधानेन उदयाद्यवस्थितिगुणश्रेण्यामुपरिनतस्थितौ चातर्मुहूर्तोनाष्टवर्पप्रमिताया निक्षिपेत् । पुनस्तदनतरसमये सर्वस्मात्सम्यक्त्वप्रकृतिद्रव्यादस्मादपकृष्टैकभाग स ∂ १२ – १ पल्यासख्यातैकभागेन खड-
७ । ख १७ गु ओ

यित्वा तदेकभागमुदयप्रथमसमयादारभ्यातीतानतरचरमफालिगुणश्रेणिशीर्षपर्यत प्रति निपेकमसख्यातगुणितक्रमेण निक्षिप्य तदुपरितनस्थितिप्रथमनिपेकेप्यसख्यातगुणितमेव निक्षिपेत् । मिश्रद्विचरमफालिपतनसमयादारभ्य सम्यक्त्वप्रकृतिद्विचरमकाडकचरमफालिपतनपर्यंतमुदयाद्यवस्थितिगुणश्रेणिप्रतिज्ञानात् । शेपवहुभाग स ∂ । १२ – प
१^
∂
७ ख १७ गु ओ प
∂

उपरितनस्थितौ 'अद्धाणेण सव्वधणे खण्डिदे' इत्यादिविधानेन विशेषहीनक्रमेण निक्षिपेत्। तस्मिन्नेव समये प्रथमकाण्डकप्रथमफालिद्रव्यस्याध प्रवृत्तभागहारभक्तस्यैकभागहारमात्र स ∂ । १२— इदमपकृष्टद्रव्यस्या
७ । ख १ ७ ७ ७ छे
∂ ∂

स ∂ । १२—सख्यातैकभागमात्रमिति मत्वापकृष्टद्रव्यैधिक कृत्वा निक्षिप्तमिति न पृथग्लिख्येत। एव
७ । ख १७ ७ छे
∂ ∂ ∂

सम्यक्त्वप्रकृत्यष्टवर्षमात्रावशेषतृतीयादिसमयेष्वपि प्रथमकाण्डकद्विचरमफालिपतनसमयपर्यन्तं प्रतिसमयम-सख्यातगुणितक्रमेणापकृष्टद्रव्य फालिद्रव्य च तत्कालोदयसमयादारभ्य प्राक्तनानन्तरोपरितनस्थितिप्रथमनिषेक-पर्यन्तमवस्थितगुणश्रेणिविधानेन तदुपरितनस्थितौ च विशेषहीनक्रमेण निक्षिपेत्।

१

पुन प्रथमकाण्डकचरमफालिद्रव्यमिदम्—स ∂ १२—∂ । अस्योत्पत्तिक्रमोऽयम्—अन्तर्मुहूर्तमात्रा-
७ । ख १७ ७ ∂

यामेन यद्येक स्थितिकाण्डकमाकार्यते लाछ्यते तदाष्टवर्षमात्रायामे कियन्ति स्थितिकाण्डकानि लाछ्यते इति प्र २ ७ । फ १ । इ व ८ । त्रराशिकेन स्थितिकाण्डकानि ७ एतावद्भि काण्डकै यद्येतावद् द्रव्य निक्षिप्यते तदा एककाण्डकेन कियन्निक्षिप्यते इति—प फ इ, लब्धैककाण्डकद्रव्य स ∂ । १२—अस्मात्-
७ स ∂ २२—का ७ । ख १७ । ७
का ७ ख १७ १

प्रथमादिद्विचरमफालिपर्यन्तमथाप्रवृत्तहारेण प्रतिसमयमसख्यातगुणितक्रमेण गृहीत्वा निक्षिप्तद्रव्य काण्डकद्रव्य-स्यासख्यातैकभागमात्र स ∂ । १२ —अस्मिन् काण्डकद्रव्यादपनीतेऽवशिष्टबहुभागमात्र चरमफालिद्रव्य-
७ । ख १७ ७ ∂

मुत्पद्यते। एव सर्वकाण्डकेषु चरमफालिद्रव्यानयन ज्ञातव्यम्।

तच्च प्रथमकाण्डकचरमफालिद्रव्य पल्यासख्यातभागेन खण्डयित्वा तदेकभागमुदयप्रथमसमयादारभ्य द्विचरमफालिपतनसमयनिक्षिप्तद्रव्योपरितनस्थितिप्रथमनिषेकपर्यन्तमसख्यातगुणितक्रमेण निक्षिप्य शेषबहुभाग-द्रव्य तदुपरितनस्थितिनिषेकेषु विशेषहीनक्रमेण निक्षिपेत्। एव भवति 'अडवस्से सपहिय' इत्यादि सम्यक्त्व-प्रकृतिस्थितेरष्टवर्षविशेषकरणसमये पतितमिश्रद्विकचरमफालिद्रव्य स ∂ १२ — इद पुव्विल्लादोऽसख-
७ । ख १७

सगुणिय प्राक्तनानन्तरसमये द्विचरमफालिपर्यन्तमागतगुणसक्रमद्रव्येण स ∂ । १२ — सहितात्सम्यक्त्व-
७ । ख १७ गु०
∂

प्रकृतिसत्त्वद्रव्यात् स ∂ । १२—असख्यातगुणित यथायोग्यगुणसक्रमभागहारभक्तात्तद्भागहाररहितस्या-
७ । ख १७ गु०

सख्यातगुणितत्वसम्भवात्। 'उवरिं पुण सपहिय' अष्टवर्षद्वितीयसमयादारभ्य प्रथमकाण्डकद्विचरमफालिपतन-पर्यन्तमपकृष्टद्रव्यमष्टवर्षप्रथमसमयद्रव्यादसख्यातगुणहीन तत्रापकर्षणभागहारसम्भवात्। चरमफालिद्रव्य तु अष्टवर्षप्रथमसमयद्रव्यात्सख्यातैकभागमात्र काण्डकसख्यया सख्यातप्रमितसर्वद्रव्यस्य विभक्तत्वात्॥ १३३॥

स० च०—अष्टवर्ष स्थिति करनेके समयतै पहिले समय विषै अनन्तरवर्ती पूर्व समयविषै मिश्रमोहनी अर सम्यक्त्व मोहनीकी द्विचरम फालिका पतन हो है। तिस समयविषैं गुणसक्रम-कालका प्रथम समयतै लगाय असख्यात गुणा क्रम लीए गुणसक्रमण द्रव्य होतै जो सम्यक्त्व मोहनीका सत्त्व द्रव्य पाइए है सो 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यादि विधान करि तहा स्थितिविषैं सम्भवती जो नानागुणहानि तिनके निषेकनिविषैं पाइए है। तिस समयविषै जो तिस द्रव्यकौं अपकर्षण भागहारका भाग देइ एक भागमात्र द्रव्य अपकर्षण कीया ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ बहुभाग तौ उपरितन स्थितिविष निक्षेपण करिए है तहा जिसका द्रव्य अपकर्षण कीया तिस निषेकका द्रव्यकौ तिस निषेकके नीचै अतिस्थापनावली छोडि 'दिवड्ढ गुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यादि विधानकरि देना। बहुरि अवशेष एक भागकौ पल्यका अस-ख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभाग गुणश्रेणि आयामविषै देना अर एक भाग उदयावलीविषै देना। इहा अपकर्षणादि भए पीछै जो विवक्षितविषै सत्तारूप पूर्वै द्रव्य पाइए सो तौ सत्त्व द्रव्य कहिए। अर अपकर्षणादि कीया हूवा जो नवीन द्रव्य तहा मिलाया सो दीयमान द्रव्य काहिए। इन दोऊनिकौं मिलै जो देखनेमै आया द्रव्यका प्रमाण सो दृश्यमान द्रव्य कहिए। सो यहा उदयावलीविषै तौ दीयमान द्रव्य पूर्व सत्त्व द्रव्यके असख्यातवे भागमात्र है ताकरि साधिक सत्त्व द्रव्यमात्र दृश्यमान द्रव्य तहा जानना अर गुणश्रेण्यायामविषै दीयमान द्रव्य पूर्व सत्त्व द्रव्यतै असख्यातगुणा है। यद्यपि इहा गुणश्रेणिविषै दीया द्रव्य सर्व सत्त्वद्रव्यके असख्यातवे भागमात्र है तथापि निषेक इहा थोरे हैं तातै असख्यातगुणा पाइए है। तिस विषै पूर्व सत्त्वद्रव्य साधिक कीए तहा दृश्यमान द्रव्य होइ अर उपरितन स्थितिविषै दीयमान द्रव्य पूर्व सत्त्वद्रव्यके असख्यातवें भागमात्र है। ताकरि अधिक सत्त्व द्रव्य कीए तहाँ दृश्यमान द्रव्य हो है। तहाँ उपरितन स्थितिके जे प्रथमादि निषेक तिनिविषै अपकर्षण करि जेता द्रव्य घटाया सो तौ ऋण जानना। बहुरि जो इहाँ निक्षेपण कीया द्रव्य सो धन जानना सो धनविषै ऋण घटाइ अवशेषकौ पूर्व सत्त्व विषै मिलाए द्वितीयादि निषेक है ते प्रथमादि निषेकनितै एक एक चय करि घटता क्रमतै होइ ऐसै करतै मिश्र सम्यक्त्व मोहनीकी द्विचरम फालिका जाविषै पतन होइ तिस गुण सक्रमकालका अन्त समयविषै सम्यक्त्व मोहनीके दृश्य द्रव्यका प्रमाण आवै है। बहुरि ताके अनन्तरवर्ती अष्टवर्ष स्थिति करनेका समय तिसविषै मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनीकी अन्त दोय फालिका द्रव्य सो अष्टवर्षके जेते समय तितने सम्यक्त्व मोहनीके निषेकनिका द्रव्य प्रमाणकरि हीन ऐसे किंचिदून द्व्यर्ध गुणहानिमात्र है ताकौ 'मिस्सदुगे' इत्यादि गाथा व्याख्यानविषै जैसै पूर्वै वर्णन कीया है तैसै उदयादि अवस्थित गुणश्रेणि आयाम वा उपरितन स्थितिविषै द्रव्य देनेका विधान जानना। बहुरि ताके अनन्तरवर्ती जो अष्ट वर्ष स्थिति करनेका द्वितीय समय तिसविषै सर्व सम्यक्त्व मोहनीका द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहाँ एक भाग ग्रहि ताकौ पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग देइ तहाँ एक भाग तौ उदयरूप प्रथम समयतै लगाय अष्टवर्ष करनेके समय जो गुणश्रेणि आयाम था ताका शीर्ष पर्यंत अर एक समय व्यतीत भया सो एक समय उपरितन स्थितिका मिलाए जो उदयादि अवस्थिति गुणश्रेणि आयाम ताके निषेक-निविषै असख्यातगुणा क्रमकरि निक्षेपण करना। अर अवशेष बहुभागनिका द्रव्यकौ ताके उपरिवर्ती अवशेष रहा जो उपरितन स्थिति ताके निषेकनिविषै 'अद्धाणेण सव्वधणे खडिदे' इत्यादि विधानतै चय घटता क्रमकरि निक्षेपण करना। बहुरि इस ही समयविषै अन्तर्मुहूर्तमात्र

जो स्थितिकाडकायाम ताके निषेकनिका जो द्रव्य ताकौ पीठ बन्धविषै उक्त प्रमाण लीए जो अध प्रवृत्त भागहार ताका भाग देइ एक भागका प्रमाणमात्र जो प्रथम फालिका द्रव्य सो अपकृष्टका द्रव्यके असख्यातवे भागमात्र है ताकौ अपकृष्ट द्रव्यविषै अधिक जानना। पूर्वं अपकृष्ट द्रव्य दीया ताकी साथि फालि द्रव्य भी दीया सो सर्व द्रव्यको अपकर्पण भागहार दीए प्रमाण आया था ताका नाम अपकृष्ट द्रव्य जानना। अर स्थिति काडकायाममात्र निषेकनिका जो द्रव्य ताकौ काडक द्रव्य कहिए ताकौ इहा अध प्रवृत्तका भाग दीए जो प्रमाण आया ताका नाम फालि द्रव्य है। बहुरि ऐसैं ही सम्यक्त्व मोहनीकी अष्टवर्ष स्थिति करनेका तीसरा समयतै लगाय प्रथम काडककी द्विचरम फालिका पतन समय पर्यंत समय समय असख्यात गुणा क्रम लीए जो अपकृष्ट द्रव्य वा फालि द्रव्य ताकौ एक समय व्यतीत भए एक एक समय उपरितन स्थितिका मिलाए भया जो उदयादि अवस्थिति गुणश्रेणि आयाम ताविषै असख्यात गुणा क्रमकरि अर तातै उपरितन स्थितिविषै चय घटता क्रमकरि देना। बहुरि काडककालका अन्त समयविषै अत फालिका पतन हो है। ताके द्रव्यका प्रमाण ल्याइए है—जो अन्तर्मुहूर्त आयाम लीए एक काडक होइ तो अष्टवर्ष स्थितिविषै केते काडक होइ? ऐसै त्रैराशिक कीए काड-कनिका प्रमाण सख्यात आया बहुरि जो इन सर्व काडकनि करि सम्यक्त्व मोहनीका सर्व द्रव्य निक्षेपण करिए तौ एक काडकविषै केता करिए ऐसै त्रैराशिक करि काडक द्रव्यका प्रमाण सम्यक्त्व मोहनीका द्रव्यके सख्यातवे भागमात्र आवै है। बहुरि याकौ अध प्रवृत्त भागहारका भाग दीए प्रथम फालिका द्रव्य होइ तातै असख्यात भाग गुणा क्रम लीए द्विचरम फालिनिका द्रव्य होइ। सो इन सर्व फालिनिका द्रव्य काडक द्रव्यके असख्यातवे भागमात्र भया। ताकौ तिस काडकद्रव्यविषै घटाए अवशेष अत फालिका द्रव्य जानना। ऐसै सर्व काडकनिविषै अत फालिके द्रव्यका प्रमाण ल्यावनेका विधान जानना। सो याका उदयादि अवस्थिति गुणश्रेणि आयामविषै असख्यात गुणा क्रमकरि अर उपरितन स्थितिविषै चय घटता क्रमकरि निक्षेपण करना ऐसै विधान जानि इस गाथाका अर्थ ऐसे जानना। जो 'अडवस्से सपहिय' कहिए अष्टवर्ष स्थिति अवशेष करनेका समयविषै जो मिश्र सम्यक्त्व मोहनीकी अन्त दोय फालिनिका द्रव्य है सो 'पुव्विल्लादो असखसगुणिय' कहिए यातै पूर्व समय सबधी द्विचरम फालिका अत पर्यंत जो गुण सक्रम द्रव्य सहित जो सम्यक्त्व मोहनीका सत्व द्रव्य तातै असख्यात गुणा है। जातै तहा यथायोग्य गुण सक्रमका भागहार सभवै है। इहा अत दोय फालिनिका द्रव्यविषै सो नाही है तातै असख्यात गुणापना जानना। बहुरि 'उवरिं पुण सपहिय' कहिए ऊपरि अष्टवर्ष करनेका द्वितीय समयतै लगाय अष्टवर्ष करनेका प्रथम समयसबधी जो दोय फालिनिका द्रव्य तातै 'असख सख च भाग तु' कहिए प्रथम काडककी द्विचरम फालि पर्यंत तौ असख्यातवे भागमात्र ही दीयमान द्रव्य है। जातै तहा अपकर्षण भागहार सर्व द्रव्यकौ दीए अपकृष्ट द्रव्य हो है। अर अत फालिका द्रव्य सख्यातवें भागमात्र है। जातै सर्व द्रव्यकौं काडक प्रमाणमात्र सख्यातका भाग देइ किंचिदून कीए अतफालिका द्रव्य हो ॥ १३३ ॥

ठिदिखडाणुक्कीरण दुचरिमसमओ त्ति चरिमसमये च।
ओक्कड्डिदफालिगददव्वाणि णिसिंचदे जम्हा ॥ १३४ ॥

स्थितिखण्डानुत्कीरण द्विचरमसमय इति चरमसमये च।
अपकर्षितफालिगतद्रव्याणि निसिंचति यस्मात् ॥ १३ ॥

स० टी०—अष्टवर्षप्रथमसमयद्रव्याद् द्वितीयादिसमयेषु स्थितिकाण्डकोत्करणकालद्विचरमसमयपर्यन्तेषु अपकृष्टद्रव्यस्यासंख्यातगुणहीनत्वे चरमकाण्डकप्रथमफालिद्रव्यस्य संख्यातगुणहीनत्वे च कारणोपन्यासार्थं सूत्रमिदमागतं। तथाहि—

सम्यक्त्वप्रकृतेरष्टवर्षमात्रस्थितेरन्तर्मुहूर्तमात्रायामस्थितिकाण्डकानि अष्टवर्षकरणद्वितीयसमये प्रारब्धानि। तेषां प्रथमादिद्विचरमकाण्डकपर्यन्तानां स्थितिकाण्डकानां प्रत्येकमुत्करणकालः यथायोग्यान्तर्मुहूर्तमात्रः। तत्प्रथमसमयादारभ्य तद्द्विचरमसमयपर्यन्तं फालिद्रव्यसहितमपकृष्टद्रव्यं निक्षिप्यते। तच्च सम्यक्त्वप्रकृतिसत्त्वद्रव्यादपकर्षणभागहारवशात् असंख्यातगुणहीनं जातम्। स्थितिकाण्डकोत्करणकालचरमसमये चरमफालिद्रव्यं सर्वद्रव्यस्य संख्यातैकभागमात्रं दीयते इति हेतोः 'उवरिं पुण संपहिय असंख-संखं च भागं तु' इत्यनन्तरातीतगाथापश्चार्धकथितोऽर्थः सिद्धः ॥ १३४ ॥

स० च०—सम्यक्त्वमोहनीयकी अष्टवर्षप्रमाण स्थितिके अन्तर्मुहूर्तमात्र आयाम लीए स्थितिकाण्डक अष्टवर्ष करनेके दूसरे समयविषै प्रारम्भ लीए तिनिका स्थितिकाण्डकोत्करण काल यथासम्भव अन्तर्मुहूर्तमात्र है। जिस कालके प्रथम समयतै लगाय द्विचरम समय पर्यन्त फालिद्रव्य सहित अपकृष्ट द्रव्य निक्षेप करिए है सो सम्यक्त्वमोहनीके सत्त्व द्रव्यतै असंख्यातगुणा घटता है, जातै तहां अपकर्षण भागहार सम्भवै है। बहुरि ताका अंत समयविषै जो अंतफालिका द्रव्य दीजिए है सो सर्वद्रव्यके संख्यातवें भागमात्र है। यातै पूर्व कह्या 'उवरिं पुण संपहिय असंख-संखं च भागं तु' ताका अर्थ सिद्ध भया॥ १३४॥

अडवस्से संपहिय गुणसेढीसीसयं असंखगुणं।
पुव्विल्लादो णियमा उवरिं विसेसाहियं दिस्सं॥ १३५ ॥

अष्टवर्षे सांप्रतिकं गुणश्रेणिशीर्षकं असंख्यगुणं।
पूर्वस्मात् नियमात् उपरि विशेषाधिकं दृश्यम्॥ १३५॥

स०टी०—अष्टवर्षकरणप्रथमसमये निक्षिप्तमिश्रद्विकफालिद्रव्यस्योपरितनस्थितिप्रथमनिषेकद्रव्यं दृश्यं स ∂ १२ - १६ / ७। ख। १७। व ८ - १६ - व ८ - (१२/२) इदम् अस्मिन् प्रस्तावे गुणशीर्षमुच्यते। तस्याधस्तनाद् गुणश्रेणिचरमनिषेकाद् रूपोनपल्यासंख्यातगुणकारेण गुणितत्वात् गुणस्य गुणकारस्य श्रेणि पंक्तिः गुणश्रेणिः तस्याः शीर्षमग्रमवसानमिति व्युत्पत्त्याश्रयेणोपरितनस्थितिप्रथमनिषेकस्य गुणश्रेणिशीर्षत्वसिद्धेः। इदं पूर्वस्मात् मिश्रद्वयद्विचरमफालिपतनसमयगुणश्रेणिशीर्षदृश्यद्रव्यात् स ∂ । १२ - ६४ / ७। ख। १७ प ८५ / ∂ असंख्यातगुणमेव नान्यथा। उपर्यष्टवर्षसमयगुणश्रेणिशीर्षदृश्यद्रव्यं पूर्वस्मात् अष्टवर्षप्रथमसमयगुणश्रेणिशीर्षदृश्यद्रव्याद् विशेषाधिकमेव नासंख्यातगुणम्। तथाहि—

अष्टवर्षप्रथमसमयगुणश्रेणिशीर्षदृश्यद्रव्यमिदम् स ∂ । १२ - १६ / ७। ख। १७। व ८ - १६ व ८ - (१२/२) अस्य द्वितीयसमये आगतं घन-

मिदम् स ∂ । १२— ६४ अष्टवर्षोपरितनस्थितिद्वितीयनिषेकदृश्यद्रव्यमिदम् स ∂ । १२ - १६ - १
७ ख १७ ओ प ८५ १^ᐢ
∂ ७।ख।१७।व८–१६–व८ –
२

तस्य ऋणमेकविशेषमात्रमिदम्—स ∂ १२ – १६ १^ᐢ । द्वितीयसमये गुणश्रेणिशीर्षद्रव्यमिदम्—
७ । ख । १७ ओ व ८ – १६ – ८
२

स ∂ । १२ – १६ १^ᐢ । अस्मात् प्राक्तनअवयवमात्रऋणमसंख्यातगुणहीनं द्विगुणगुणहानिमात्र-
७ ख । १७ । ओ व ८ – व १६ – ८
२

गुणकाराभावात् । द्वितीयसमयगुणश्रेणिचरमनिषेकद्रव्यम् स ∂ । १२ – ६४ । इद वासंख्यातगुणहीनं रूपोन-
७ ख । १७ ओ प ८५
∂

पल्यासंख्यातमात्रगुणकाराभावात् । एतदेकचयमात्रऋणद्रव्यं द्वितीयसमयगुणश्रेणिचरमनिषेकद्रव्यं च तद्गुणश्रेणिशीर्षद्रव्ये किंचिन्न्यूनं कृत्वा द्विगुणहान्या अपकर्षणभागहारमपवर्त्य अवशिष्टासंख्यातरूपाणि—
स ∂ १२ – ∂ १^ᐢ अष्टवर्षप्रथमसमयगुणश्रेणिशीर्षसमाने तदनन्तरोपरितननिषेके निक्षिपेत् ।
७ ।ख १७ व ८ – १६ – व ८ –
२

एवं कृते अष्टवर्षप्रथमसमयगुणश्रेणिशीर्षदृश्यद्रव्यात् तद्द्वितीयगुणश्रेणिशीर्षदृश्यद्रव्यं साधिकमेव भवति—
स ∂ १२ – १६ १^ᐢ एवं तृतीयादिसमयेषु गुणश्रेणिशीर्षद्रव्याणि पूर्व-पूर्वगुणश्रेणिशीर्षद्रव्यात
७ । ख १७ व ८ – १६ – व ८
२

साधिकमेव, नान्यथा ॥ १३५ ॥

स० च०—गुणश्रेणिआयामका अन्तका निषेक ताकौ इहां गुणश्रेणिशीर्ष कहिए, जातैं गुण जो असंख्यातका गुणकार ताकी श्रेणि कहिए पंक्ति ताका शीष कहिए अग्रभाग सो गुणश्रेणि-शीर्ष कहिए। तहाँ अष्टवर्ष करनेके समयविषैं गुणश्रेणिका शीर्ष जो अवस्थित गुणश्रेण्यायाम-विषैं उपरितन स्थितिका एक निषेक मिलाया था सो जानना। ताके पूर्व सत्त्वद्रव्यकौ अर निक्षेपण कीया द्रव्यकौ मिलाए दृश्यमान द्रव्यका जो प्रमाण है सो याके अनन्तर पूर्व समय-संबंधी गुणश्रेणिशीर्षका दृश्यमान द्रव्य तौ ऊपरि अष्टवर्ष करनेका द्वितीयादि समयसबन्धी गुणश्रेणिशीर्षका द्रव्य क्रमतैं पूर्व पूर्व गुणश्रेणिशीर्षका द्रव्यतैं विशेष करि अधिक है, असंख्यातगुणा नाहीं है। ताका स्वरूप संदृष्ट्यादिककरि संस्कृत टीकातैं व संदृष्टि वर्णनविषैं जानना ॥ १३५ ॥

अडवस्से य ठिदीदो चरिमेदरफालिपदिददव्वं खु ।
संखासंखगुणूणं तेणुवरिमदिस्समाणमहियं सीसे ॥ १३६ ॥

अष्टवर्षे च स्थितितश्चरिमेतरफालिपतितद्रव्यं खलु ।
संख्यासंख्यगुणोनं तेनोपरिमदृश्यमानमधिकं शीर्षे ॥ १३६ ॥

स० टी०—पूर्व-पूर्वगुणश्रेणिशीर्षदृश्यद्रव्यादुत्तरोत्तरसमयगुणश्रेणिशीर्षदृश्यद्रव्यं विशेषाधिकमित्यत्रो-पपत्तिदर्शनार्थमिदमाह । तद्यथा—

अष्टवर्षप्रथमसमये उदयादिचरमस्थितिपर्यंतं ये निषेकाः सन्ति तेष्वेकैकनिषेकं प्रेक्ष्य प्रथमकाण्डक-

चरमफालिद्रव्यस्योदयादिचरमस्थितिपर्यंत निक्षेप्यनिषेका प्रत्येक सख्यातगुणहीना दीयते। अष्टवर्षद्वितीय-समयादिप्रथमकाडकद्विचरमफालिपतनसमयपर्यंतमपकृष्टद्रव्यस्य ये निषेकास्ते पुन प्रत्येकमसख्यातगुणहीना निक्षिप्यते। तत कारणात्तत्र तत्र विवक्षितसमये अपकृष्टद्रव्यस्य गुणश्रेणिशीर्षद्रव्य तदधस्तननिषेकद्रव्याद-सख्येयगुण धनमागच्छति इति गुणश्रेणिशीर्षनिषेके दृश्य विशेषाधिकमिति भाव ॥ १३६ ॥

स० च०—अष्टवर्ष करनेका प्रथम समयविषै मिश्र सम्यक्त्वमोहनीकी अत दोय फालीनिका द्रव्य दीया सता उदयरूप प्रथम समयतै लगाय स्थितिका अन्त समयपर्यन्त सबधी निषेक जे सत्ता-रूप पाइए है तिनिविषै प्रथमकाडककी अत फालिका द्रव्यकौ काडककालका अत समयविषै जो निक्षेपण कीया तिसका प्रमाण एक एक निषेकविषै पूर्वसत्तारूप द्रव्यका प्रमाणतै सख्यातगुणा घटता जानना। अर अष्टवर्ष स्थिति करनेका द्वितीय समयतै लगाय प्रथम काडककी द्विचरम फालिका पतन समय पर्यत समयनिविषै जो अपकर्षण कीया द्रव्यकौ तिनि निषेकनिविषै निक्षेपण कीया तिसका प्रमाण एक-एक निषेकनिविषै पूर्वसत्तारूप द्रव्यका प्रमाणतै असख्यातगुणा घटता जानना। जातै विवक्षित समयविषै अपकर्षण कीया द्रव्य जो गुणश्रेणिशीर्यविषै दीया सो ताके नीचेके निषेकविषै दीया अपकृष्ट द्रव्यतै असख्यातगुणा धन आव है। बहुरि सर्व सत्तारूप द्रव्य अर निक्षेपण कीया द्रव्यकौ मिलाए जो दृश्यमान द्रव्य भया सो पूर्व-पूर्व समयसबधी गुणश्रेणि-शीर्षका द्रव्यतै उत्तर-उत्तर समयसबधी गुणश्रेणिशीषका द्रव्य किछू विशेष करि ही अधिक है, गुणकाररूप नाही है ॥ १३६ ॥

जदि गोउच्छविसेस रिण हवे तो वि धणपमाणादो।
जम्हा असखगुणूण ण गणिज्जदि त तदो एत्थ ॥ १३७ ॥

यदि गोपुच्छविशेषं ऋण भवेत् तथापि धनप्रमाणात्।
यस्मादसंख्यगुणोन न गण्यते तत्ततोऽत्र ॥ १३७ ॥

स० टी०—अनन्तरोक्तविधानेन गुणश्रेणिशीषनिषेके दृश्यद्रव्य तदधस्तनगुणश्रेणिशीर्षद्रव्याद्विशेषा-धिकमित्यत्र एकचयमात्र ऋणमस्तीत्याशक्य तत्परिहारार्थमिद सूत्रमाह। यद्यपि अष्टवर्षद्वितीयसमयेऽपकृष्ट-द्रव्यस्य गुणश्रेणिशीर्षनिक्षिप्तनिषेकद्रव्यादष्टवर्षप्रथमसमयगुणश्रेणिशीर्षस्योपरितनानन्तरनिषेकगतऋणम-सख्येयगुणहीन यस्मात्कारणात्तेन कारणेनोपरितनगुणश्रेणिशीर्षदृश्यमान साधिकमेवेति निर्णेतव्यम्। धनादृणस्यासख्यातगुणहीनत्वेनागणत्वात्। यावच्च य एतदृशो वर्तते तावत् गोपुच्छविशेष इत्युच्यते, क्रमहान्य-पेक्षया गोपुच्छ इव गोपुच्छ इति गौणशब्दाश्रयणात् ॥ १३७ ॥

स० च०—जैसे गौका पूछ क्रमतै घटता हो है तैसे चय घटताक्रम जहा होइ तहा गोपुच्छ कहिए। अर यावत् समान चय होइ तावत् गोपुच्छ विशेष कहिए। सो नीचले गुणश्रेणि-निषेकका सत्त्व द्रव्यतै ऊपरिके गुणश्रेणिशीर्षका सत्त्वद्रव्यविषै गोपुच्छ विशेषमात्र यद्यपि ऋण है। भावार्थ—यहु निषेकनिविषै चय घटता क्रमतै है तातै पूर्व समयसबधी गुणश्रेणिशीर्षका सत्त्व द्रव्यतै उत्तर समयसम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्षका सत्त्व द्रव्यविषै चयप्रमाण द्रव्य घटता चहिए ताकौ न घटाया अर विशेष अधिक अधिक कह्या सो कारण कहा ? ऐसै प्रश्न कीए उत्तर कहै है—जु यद्यपि ऐसै हैं तथापि बहु मिलाया हुआ जो अपकृष्ट द्रव्य तातै यहु चयप्रमाण घटता द्रव्य है सो असख्यातगुणा घटता है, सो इहा घटावने योग्य ऋणको मिलावने योग्य धनतै असख्यातवे भाग जानि स्तोकपनेतै गिण्या नाही। पूर्व गुणश्रेणिशीर्षका दृश्य द्रव्यतै उत्तर गुणश्रेणिशीर्षका द्रव्य विशेष अधिक ही कह्या ॥ १३७ ॥

तत्तक्काले दिस्स वज्जिय गुणसेढिसीसयं एक्कं ।
उवरिमठिदीसु वट्टदि विसेसहीणक्कमेणेव ॥ १३८ ॥

तत्तत्काले दृश्य वर्जयित्वा गुणश्रेणिशीर्षकमेकम् ।
उपरिमस्थितिषु वर्तते विशेषहीनक्रमेणैव ॥ १३८ ॥

स० टी०—एवमुक्तप्रकारेण सम्यक्त्वप्रकृतिद्रव्य यदा यदा अपकृष्ट्या उदयादिस्वस्थितिचरमसमयपर्यन्तनिषेकेषु निक्षिप्यते तस्मिन् तस्मिन् समये गुणश्रेणिशीर्षद्रव्य दृश्यमेकैक वर्जयित्वा तदुपरितनसर्वनिषेकेषु तत्तत्कालभाविदृश्ये विशेषहीनक्रमेणैव वर्तते, तत्र प्रकारान्तरासम्भवात् । एवमष्टवर्षमात्रसम्यक्त्वप्रकृतिस्थिते प्रथमकाण्डकविधानेनैव द्विचरमकाण्डकचरमफालिपर्यन्त अपकृष्टफालिद्रव्ययोर्निक्षेपक्रमो दृश्यक्रमश्चाव्यामोहेन ज्ञातव्य ॥ १ ८ ॥

स० च०—ऐसैं कहे विधान तैं जिस जिस विवक्षित समयविषै सम्यक्त्वमोहनीका द्रव्यको अपकर्षण करि उदयादि स्थितिका अतपर्यंत निषेकनिविषै निक्षेपण करै है तिस तिस समयविषै गुणश्रेणिशीर्षरूप भया जो एक एक निषेक ताकौ छोडि ताके उपरिवर्ती जे उपरितन स्थितिके सर्व निषेक तिनिविषैं तत्काल सभवना जो दृश्यमान द्रव्य सो विशेष घटता अनुक्रम लीए ही जानना । जातै तहा दीया द्रव्य वा पूर्वद्रव्य चयघटताक्रम लीए ही है । या प्रकार अष्ट वर्षमात्र सम्यक्त्वमोहनीकी स्थितिविषै जैसैं प्रथमकाडकका विधान कह्या तैसै ही द्वितीय काडकादि द्विचरम काडककी अतफालिपर्यंत अपकृष्टि द्रव्य अर फालि द्रव्य तिनिके निक्षेप करनेका अनुक्रम अर भया जो दृश्यमान द्रव्य ताका अनुक्रम जानना । ऐसै अष्ट वर्षस्थिति अवशेष करनेका समयतैं लगाय सम्यक्त्वमोहनीका अतकाडकतै पहिला जो द्विचरमकाडक ताकी अतफालिका पतन समयपर्यंत क्षपणाविधान कहि अब अतकाडकका विधान कहिए है—

गुणसेढिसखभागा तत्तो संखगुण उवरिमठिदीओ ।
सम्मत्तचरिमखडो दुचरिमखडादु सखगुण ॥ १३९ ॥

गुणश्रेणिसख्यभागा तत सख्यगुण उपरितनस्थितय ।
सम्यक्त्वचरमखडो द्विचरमखडात् सख्यगुण ॥ १३९ ॥

स० टी०—अष्टवर्षप्रथमसमयादारम्भ सम्यक्त्वप्रकृतेर्द्विचरमकाण्डकचरमफालिपतनसमयपर्यन्त क्षपणविधानमभिधाय इदानी तच्चरमकाण्डकप्रमाणमल्पबहुत्वपुरस्सर प्रतिपादयितुमिदमाह । या अष्टवर्षप्रथमसमयादारभ्योदयाद्यवस्थितायामा अद्य यावत् गुणश्रेणिकृता तस्यासख्यातबहुभागै २ १ । ३/४ अपूर्वकरणप्रथमसमयादारभ्याष्टवर्षातीतानन्तरसमयपर्यन्त या गलितावशेषायामा गुणश्रेणि कृता तस्या अपूर्वानिवृत्तिकरणकालद्वयादधिकशीर्षस्य २ १/४ सख्यातैकभागेन २ १/४।४ अवस्थितिगुणश्रेणिशीर्षस्योपरितनस्थितौ द्विचरमकाण्टकम्याद्य यावन्तो निषेका अवशिष्टास्तैश्चावस्थितिगुणश्रेणिबहुभागसख्यातगुणै २ १ ४४४ परिमित सम्यक्त्वप्रकृतिचरमकाण्डकमिदानी लाञ्छितम् । पुरातनगलितावशेषगुणश्रेण्यधिकशीर्षसख्यातैकभागादारभ्योपरितनस्थित्यवशिष्टचरमनिषेकपर्यन्त चरमकाण्डकप्रमाणमित्यर्थ । इद द्विचरमकाण्डकायामप्रमाणात्

२ ७ ४ । ४ सख्यातगुणित सदपि तद्योग्यान्तर्मुहूर्तप्रमाणमेवेति ग्राह्यम् । तथा सति तच्चरमकाण्डकप्रमाण-
१—

मियद् भवति २ ७ । ८ । ४ । ४ । चरमकाण्डकामध अवशिष्टप्रमाण च २ ७ । ८ इदमवस्थितिगुण-
४

श्रेण्यायामसख्यातकभागमात्र भवदपि गलितावशेषगुणश्रेण्यधिकशीर्षसख्यातबहुभागमात्रेण कृतकृत्यवेदककालेन काण्डकोत्करणकालप्रमितेनानिवृत्तिकरणकालगलितावशेषेण च २ ७ । निष्पन्नप्रमाण २ ७ । ४ अपवर्तिते
४ । ४ ४ । ४

एव २ ७ ॥ १३९ ॥

स० च०—अष्ट वर्ष स्थिति करनेका प्रथम समयतै लगाय इहा द्विचरम काडकका अत पर्यंत जो अवस्थिति गुणश्रेणि आयाम है ताकौ सख्यात भाग दीए तहा बहुभागनिका जो प्रमाण अर अपूर्वकरणका प्रथम समयतै लगाय आठ वर्ष स्थिति करनेका समयतै पूर्व समय पर्यंत जो गलितावशेष गुणश्रेणि आयाम था ताविषै जो अनिवृत्तिकरण कालका सख्यातवा भागमात्र जो गुणश्रेणि शीर्ष कह्या ताकौ सख्यातका भाग दीए एक भागका जो प्रमाण अर अवस्थिति गुण-श्रेणिका अत निषेकरूप जो शीर्ष ताके ऊपरिवर्ती निषेकरूप जो उपरितन स्थिति तीहि विषै द्विचरम काडक विषै जिनि निषेकनिका अभाव कीया तिनिके नीचै जे निषेक अवस्थिति गुणश्रेणि आयामका बहुभागतै सख्यातगुणे अवशेष रहे। ऐसै अवस्थिति गुणश्रेणि आयामका सख्यातवा भाग अर गलितावशेष गुणश्रेणिका सख्यातवा भाग अर उपरितन स्थितिके अवशेषनिषेक इन तीनोकौ जोडैं जो प्रमाण होइ सोई अतकाडकायामका प्रमाण है। भावार्थ यहु—गलितावशेष गुणश्रेणि आयामका सख्यातवा भागतैं लगाय उपरितन स्थितिके जे निषेक अवशेष रहे तिनिका अतपर्यंत अत काडकायामका प्रमाण है। सो यहु द्विचरमकाडकायामका प्रमाण तौ सख्यातगुणा है तौ भी यथायोग्य अतर्मुहूर्तमात्र हो है। बहुरि तिस अतकाडक करि घात कीए पीछै जो नीचै अवशेष स्थिति रहै ताका प्रमाण अवस्थिति गुणश्रेणि आयामके सख्यातवें भागमात्र है सो पूर्वै जो गलितावशेष गुणश्रेणि आयामविषैं अनिवृत्तिकरण कालका सख्यातवे भागमात्र जो गुणश्रेणि शीर्ष कह्या था ताकौ सख्यातका भाग दीए बहुभागमात्र तौ कृतकृत्य वेदक काल अर व्यतीत भए पीछै अवशेष रह्या जो अनिवृत्तिकरणका काल तीहिं प्रमाण अतकाडकोत्करण काल इनि दोऊनिकौ मिलाए तिस अवशेष स्थितिका प्रमाण हो है ॥ १३९ ॥

सम्मत्तचरिमखंडे दुचरिमफालि त्ति तिण्णि पव्वाओ ।
सपहियपुव्वगुणसेढीसीसे सीसे य चरिमम्हि ॥ १४० ॥

सम्यक्त्वचर डे द्विचरमफालीति त्रीणि पर्वाणि ।
साम्प्रतिकपूर्वगुणश्रेणिशीर्षे शीर्षे च चरमे ॥ १४० ॥

स० टी०—सम्यक्त्वप्रकृतिचरमखण्डप्रथमफालिपतनसमयादारभ्य तद्द्विचरमफालिपतनसमयपर्यन्त तत्काण्डकोत्करणकाले फालिद्रव्यस्यापकृष्टद्रव्यस्य च निक्षेपविशेषविधानार्थमिद सूत्रमाह—नेमिचन्द्रसिद्धान्त-चक्रवर्ती । तद्यथा—

तत्र सम्यक्त्वप्रकृतिचरमकाण्डकप्रथमफालिपतनसमये या उदयाद्यवशिष्टस्थितिचरमनिषेकपर्यन्ता-यामा गलितावशेषमात्री गुणश्रेण्यारब्धा तच्छीर्षपर्यन्तमेकं पर्व, तत पर पूर्वावस्थितगुणश्रेणिशीर्षपर्यन्तमेकं पर्व, तत परमुपरितनस्थितिचरमनिषेकपर्यन्तमेकं पर्व इति द्रव्यनिक्षेपे पर्वत्रय रचयितव्यम्। अत्राय विशेष — फालिद्रव्यनिक्षेपे प्रथममेकमेव पर्व । अपकृष्टद्रव्यनिक्षेपे तु त्रीण्यपि पर्वाणि भवन्तीति ज्ञातव्यम् ॥ १४० ॥

स० च०—सम्यक्त्व मोहनीका अतका काण्डक ताकी प्रथम फालिका पतन समयतै लगाय द्विचरम फालिका पतन समय पर्यन्त द्रव्य निक्षेपण करनेविषै तीन पर्व जानने। पर्व नाम विभागका है। सो विभाग करि तीन जायगा द्रव्य देना। तहा अतकोत्करण कालका प्रथम समयविषै जाका आरभ भया ऐसा जो उदयरूप प्रथम समयतै लगाय अवशेष स्थितिका अतनिषेक पर्यंत इहा जाका प्रारभ भया ऐसा जो गुणश्रेणि आयाम ताका शीर्षपर्यंत तो एक पर्व जानना। वहुरि तातै पूर्वै जो अवस्थित गुणश्रेणि आयाम ताका शीर्ष पर्यंत दूसरा पर्व जानना। वहुरि तातै उपरिवर्ती जो उपरितन स्थिति ताका प्रथम समयतै लगाय अत समय पर्यंत तीसरा पर्व जानना। तहा काडक द्रव्यविषै ग्रहण कीया जो फालिद्रव्य ताका निक्षेपण तौ पहले ही पर्वविषै हो है। अर सर्व द्रव्य विषै अपकर्षण कीया जो अपकृष्ट द्रव्य ताका निक्षेपण तीनौ पर्वविषै हो है ऐसा जानना ॥ १४० ॥

तत्थ असंखेज्जगुणं असखगुणहीणय विसेसूणं ।
संखातीदगुणूणं विसेसहीणं च दत्तिकमो ॥ १४१ ॥

ओक्कट्टिदबहुभागे पढमे सेसेक्कभाग-बहुभागे ।
बिदिये पव्वे वि सेसिगभागं तदिये जहा देदि ॥ १४२ ॥

तत्रासंख्येयगुणं असख्यगुणहीनक विशेषोनम् ।
सख्यातीतगुणोनं विशेषहीनं च दत्तिक्रम. ॥ १४१ ॥

अपकर्षितबहुभागे प्रथमे शेषैकभागबहुभागे ।
द्वितीये पर्वेऽपि शेषैकभाग तृतीये यथा ददाति ॥ १४२ ॥

स० टी०—प्राक् रचितपर्वे द्रव्यनिक्षेपक्रमविशेषप्रतिपादनार्थं गाथाद्वयमाह—तत्र साम्प्रतिकगुण-श्रेणिशीर्षपर्यन्ते प्रथमे पर्वणि द्रव्यमसख्येयगुण दीयते। तथाहि—सम्यक्त्वप्रकृतिचरमकाण्डकद्रव्य किंचिन्न्यून-द्वयर्धगुणहानिगुणितसमयप्रबद्धमात्र स ∂ । १२—, प्रागलितनिषेकै सर्वद्रव्यासख्यातैकभागमात्रैर्न्यूनत्वात्
७ ख १७

स ∂ । १२—तत्कालोचितापकर्षभागहारेण विभक्तादेकभाग स ∂ । १२—पल्यासख्यातभागेन खण्डयित्वा
७ । ख । १७ ७ । ख । १७ ओ

१० ∂
तद्बहुभाग स ∂ । १२—प प्रथमे पर्वणि उदयनिषेकादारभ्य गुणश्रेणिशीर्षपर्यन्तमसख्यातक्रमेण प्रक्षेप-
∂
७ । ख । १७ ओ प
∂ ∂

करणविधिना निक्षिपेत्। पुनरपकृष्टद्रव्यासख्यातैकभाग पुनरपि पल्यासख्यातभागेन खण्डयित्वा तद्बहुभाग

द्वितीये पर्वणि प्रथमपर्वायामात् सख्यातगुणितायामे 'अद्धाणेण सव्वधणे' इत्यादिविधानेन स्वचरमनिपेकपर्यन्त विशेषहीनक्रमेण निक्षिपेत् । पुनरवशिष्टैकभाग तृतीयस्मिन् पर्वणि उपरितनस्थितिमयादारभ्य तच्चरम-निपेकपर्यन्त द्वितीयपर्वायामसख्यातगुणत्वात् द्विचरमकाण्डकायामात् २ ७ । ४ । ४ सख्यातगुणितायामे २ ७ । ४ । ४ । ४ 'अद्धाणेण सव्वधणे' इत्यादिविधानेन विशेषहीनक्रमेण तत्तदपकृष्टनिपेकस्याधस्तादति-स्थापनावलि मुक्त्वा निक्षिपेत् । अत्र साम्प्रतगुणश्रेणिशीर्पनिक्षिप्तद्रव्यात् काण्डकप्रथमनिषेके निक्षिप्त-द्रव्यमसख्यातगुणहीन तदपकृष्टद्रव्यासख्यातबहुभागस्य प्रथमपर्वणि निक्षेपात् तदेकभागस्य च द्वितीयपर्वणि निक्षेपात् । तथा द्वितीयपर्वचरमनिपेके निक्षिप्तद्रव्यात् तृतीयपर्वनिपेके निक्षिप्तद्रव्यमसख्यातगुणहीन एकभागासख्यातबहुभागस्य द्वितीयपर्वणि निक्षेपात् शेपैकभागस्य च तृतीयपर्वणि निक्षेपात् । एव चरमकाण्डकप्रथमफालिपतनसमयादारभ्य तद्द्विचरमफालिपतनसमयपर्यन्त द्रव्यनिक्षेपक्रमो विशेषेण ज्ञातव्य ॥ १४१-१४२ ॥

स० च०—तहाँ प्रथमपर्वविषै द्रव्य असख्यातगुणा दीजिए है सो कहिए है—सम्यक्त्व-मोहनीका सर्वद्रव्यविषैं पूर्वनिषेकनिकरि सर्वद्रव्यके असख्यातवे भागमात्र द्रव्य घटाए अवशेष किंचिदून द्व्यर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्धमात्र अतकाण्डकका द्रव्य है । ताको अपकर्षण भाग-हारका भाग देइ तहा एक भागग्रहि ताकौ पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग देइ तहा बहुभाग तौ प्रथम पर्व विषै 'प्रक्षेपयोगोद्धृत्त' इत्यादि विधानतैं असख्यातगुणा क्रमकरि देना । बहुरि अवशेष एक भागकौ पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग देइ तहा बहुभाग दूसरा पर्व विषैं 'अद्धाणेण-सव्वधणे' इत्यादि विधानतै चय घटता क्रमकरि देना । प्रथम पर्वतैं दूसरा पर्वका आमाम सख्यात-गुणा जानना । बहुरि अवशेष एकभाग तीसरा पर्व विषै 'अद्धाणेण सव्वधणे' इत्यादि विधानतै चय घटता क्रमकरि अपकर्षण कीया निषेकनिके नीचै अतिस्थापनावलि छोडि नीचै निक्षेपण करना । द्वितीय पर्वतै सख्यातगुणा द्विचरमकाडकका आयाम है तातै भी तीसरे पर्वका आयाम सख्यातगुणा है । निषेकनिके प्रमाणका नाम इहा आयाम जानना । इहा अब जाका प्रारम्भ भया ऐसा जो गुणश्रेणिका आयामरूप प्रथम पर्व ताका शीर्ष जो अन्त निषेक ताविषै जो द्रव्य निक्षेपण किया तातै काडकका प्रथम निषेकतै जो दूसरे पर्वका प्रथम निषेक तीहिंविषै निक्षेपण कीया द्रव्य असख्यातगुणा घाटि है । बहुरि द्वितीय पर्वका अन्त निषेकविषै जो द्रव्य निक्षेपण कीया तातैं तृतीय पर्वका प्रथम निषेकविषै निक्षेपण कीया द्रव्य असख्यातगुणा घाटि है । जातै पूर्व कथनके अनुसारि ऐसैं ही सम्भवै है । ऐसैं ही अन्त काडककी प्रथम फालिका पतनरूप जो अन्त काडकोत्करण कालका प्रथम समयतै लगाय द्विचरम फालिका पतनरूप जो अन्त काड-कोत्करण कालका उपान्त समय तहा पर्यंत द्रव्य निक्षेपण करनेका विधान जानना ॥१४१-१४२॥

उदयादिगलिदसेसा चरिमे खडे हवेज्ज गुणसेढी ।
फाडेदि चरिमफालिं अणियट्टीकरणचरिमम्हि ॥ १४३ ॥

उदयादिगलितशेषा चरमे खंडे भवेत् गुणश्रेणी ।
पातयति चरमफालिमनिवृत्तिकरणचरमे ॥ १४३ ॥

स० टी०—साप्रतगुणश्रेणिस्वरूपनिर्देशपूर्वक चरमफालिपातनकालनिर्देशार्थमिद सूत्रमाह—सम्यक्त्व-चरमकाण्डकप्रथमफालिपातनसमयादारम्य विधीयमाना गुणश्रेणी तच्चरमफालिपातनपर्यत उदयसमयादिगलिता-वशेषायामा वेदितव्या । पूर्वोक्तविधानेन द्विचरमफालिपातने एकसमयावशेष काण्डकोत्करणकाल , अनिवृत्ति-

करणकालश्च परिसमाप्त । पुनरवशिष्टेऽनिवृत्तिकरणकालचरसमये सम्यक्त्वप्रकृतिचरमकाण्डकचरमफालि पातयति ॥ १४३ ॥

स० च०—सम्यक्त्वमोहनीका अन्त काडककी प्रथम फालिका पतन समयतै लगाय द्विचरम फालिका पतन समय पर्यन्त उदयादि गलितावशेष गुणश्रेणि आयाम जानना। उदयादि वर्तमान समयतै लगाय इहा गुणश्रेणि आयाम पाइए है तातै उदयादि कहिए अर एक-एक समय व्यतीत होतै एक-एक समय गुणश्रेणि आयामविषै घटता जाय है तातै गलितावशेप कह्या है। ऐसैं उदयादि गलितावशेष गुणश्रेणि आयाम जानना। वहुरि पूर्वोक्त विधानकरि अन्त काडककी द्विचरम फालिका पतन होतै काडकोत्करण कालका अनिवृत्तिकरण कालविपै एक समय अवशेप रह्या अनिवृत्तिकरणका अन्त समयविषै अन्त काडककी अन्तिम फालिका पतन हो है ॥ १४३ ॥

चरिम फालिं देदि दु पढमे पव्वे असखगुणियकमा।
अंतिमसमयम्हि पुणो पल्लासखेज्जमूलाणि ॥ १४४ ॥

चरम फालिं ददाति तु प्रथम पर्वे असख्यगुणितक्रमेण[1]।
अंतिमसमये पुन. पल्यासख्येयमूलानि ॥ १४४ ॥

स० टी०—सम्यक्त्वप्रकृतिचरमकाण्डकचरमफालिनिक्षेपक्रमप्रदर्शनार्थमाह—गलितावशिष्टे कृतकृत्यवेदककालप्रमिते साप्रतगुणश्रेण्यायामे अनिवृत्तिकरणकालचरमसमये सम्यक्त्वप्रकृतिचरमकाण्डकचरमफालिद्रव्यमुत्कीर्य निक्षिपति। तथाहि—

तच्चरमफालिद्रव्य किंचिन्न्यूनद्वयर्धगुणहानिगुणितसमयप्रबद्धमात्र स ∂ । १२ / ७ । ख । १७ —सर्वद्रव्यस्याधोगलितनिषेकै कृतकृत्यकालान्तर्मुहूर्तमात्रनिषेकैश्च न्यूनत्वात्। तच्चरमफालिद्रव्यमसख्यातगुणितपल्यप्रथममूलभागहारेण मू ∂ अनेन खडयित्वा तदेकभाग स ∂ । १२ / ७ । ख । १७ मू ∂ —उदयसमयात्प्रभृति साप्रतगुणश्रेणिद्विचरमसमयपर्यन्त प्रक्षेपविधिना प्रतिनिषेकमसख्यातगुणितक्रमेण निक्षिपेत्। अत्राय विशेष —

द्वितीयनिषेके निक्षपगुणकारात् तृतीयनिपेकनिक्षेपगुणकार असख्यातगुणितगुणकारगुणित । एव १ᘯ द्विचरमनिषेकपर्यन्त गुणकारक्रमो ज्ञातव्य । अवशिष्टवहुभागद्रव्य स ∂ । १२ / ७ । ख । १७ — मू ∂ / मू ∂ इद साप्र.गुणश्रेणिचरमनिषेके निक्षिपेत्। इद सर्व मनसिकृत्य साप्रतगुणश्रेण्या उदयनिषेकात्प्रभृति द्विचरमनिषेकपर्यन्त प्रथमपर्वेत्युक्त। चरमनिषेके द्वितीय पर्वेत्युक्तम् ॥ १४४ ॥

स० च०—इहा अनिवृत्तिकरणका अन्त समयविषै व्यतीत भए पीछै अवशेष रह्या सो ऐसा गलितावशेष गुणश्रेणि आयाम सो कृतकृत्य वेदककालका प्रमाण है। ताका द्विचरम समय पर्यंत तौ प्रथम पर्व अर ताका अन्त समय सो दूसरा पर्व जानना। तहा सम्यक्त्वमोहनीका सर्वद्रव्यविपै व्यतीत भए निषेक अर अवशेष रहे कृतकृत्य कालमात्र निषेक तिनिका द्रव्य घटाए

---

१ गुणगारो वि दुचरिमाए ट्ठिदीए पदेसग्गादो चरिमाए ट्ठिदीए पदेसग्गस्स असखेज्जाणि पलिदोवमपढमवग्गमूलाणि। क० चू०, 'जयध० पु० १३, पृ० ७९।

अवशेष किंचिदून द्व्यर्ध गुणहानि गुणित समय प्रवद्धप्रमाण अन्त काडकका अन्त फालिका द्रव्य है। ताकौ असख्यात गुणा जो पल्यका प्रथम वर्गमूल ताका भाग देइ तहा एक भाग तौ प्रथम पर्वविषै 'प्रक्षेपयोगोद्धृत' इत्यादि विधानतै असख्यातगुणा क्रमकरि देना। इतना विशेष— जो इहा असख्यातका गणकार समानरूप नाही। प्रथम निषेकतै जिस असख्यात करि गुणें दूसरा निषेक पर्यन्त क्रमतै गुणकार होइ तिसतै असख्यातगुणा असख्यातकरि दूसरा निषेकका गुणे तीसरा निषेक होइ ऐसैं द्विचरम निषेक पर्यन्त क्रमतै गुणकार असख्यातगुणा जानना। बहुरि एक भाग ऐसै दीए अवशेष बहुभागमात्र द्रव्य गुणश्रेणिका अन्त निषेकनिविषै निक्षेपण करै है ॥ १४४ ॥

चरिमे फालिं दिण्णे कदकरणिज्जे त्ति वेदगो होदि।
सो वा मरण पावइ चउगइगमण च तट्ठाणे ॥ १४५ ॥

देवेसु देवमणुए सुरणरतिरिए चउग्गईसु पि।
कदकरणिज्जुप्पत्ती कमेण अंतोमुहुत्तेण[1] ॥ १४६ ॥

चरमे फालिं दत्ते कृतकरणीयेति वेदको भवति।
स वा मरण प्राप्नोति चतुर्गतिगमन च तत्स्थाने ॥ १४५ ॥

देवेषु देवमनुष्ये सुरनरतिरश्चि चतुर्गतिष्वपि।
कृतकरणीयोत्पत्ति क्रमेण अन्तर्मुहूर्तेन ॥ १४६ ॥

म० टी०—कृतकृत्यवेदकसम्यक्त्वप्रारम्भसमयनिर्देशपूर्वक तदवस्थाविशेषप्ररूपणार्थमिद मूत्रद्वयमाह—

प्रागुक्तविधानेन अनिवृत्तिकरणचरमसमये सम्यक्त्वप्रकृतिचरमकाण्डकचरमफालिद्रव्ये अधोनिक्षिप्ते सति तदनन्तरोपरितनसमयात्प्रभृति पुरातनगलितावशेषगुणश्रेण्यधिकशीर्षसख्यातभागमात्रेऽन्तर्मुहूर्तकाले २ १ । ३
४ । ४
कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टिरिति जीव सज्ञायते, दर्शनमोहक्षपणयोग्यस्थितिकाण्डकादिकरणीयस्यानिवृत्तिकरणकाल-चरमसमये एव निष्ठितत्वात्। कृत निष्ठित कृत्य करणीय यस्य स कृतकृत्य इति निरुक्तिसभवात्। स एव कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टिर्भुज्यमानायुष क्षयवशाद्यदि मरण नाप्नोति तदा सम्यक्त्वग्रहणात्पूर्वं वद्धनारकाद्यायुर्वशवर्तित्वेन चतसृषु गतिषु गच्छति। तथाहि—

तस्मिन्नेव कृतकृत्यवेदकसम्यक्त्वकाले चतुर्भागीकृते प्रथमसमयादारभ्यान्तर्मुहूर्तमात्रे प्रथम भागे २ १ । ३ मृतो देवेष्वेवोत्पद्यते नान्यगतिस्तेषु तत्काले इतरगतित्रयगमनकारणसक्लेशपरिणामाभावात्।
४ । ४ । ४
तदनन्तरद्वितीये चतुर्थे भागे अतर्मुहूर्तमात्रे २ १ । ३ मृतो देवमनुष्यगत्योरेवोत्पद्यते नान्यगतिद्वये, तत्काले
४ । ४ । ४
तद्गतिद्वयगमननिबधनसक्लेशपरिणामानुपपत्ते। तदनन्तरतृतीये चतुर्थभागेऽन्तर्मुहूर्तमात्रे २ १ ३
४ । ४ । ४

---

१ पढमसमयकदकरणिज्जो जदि मरदि देवेसु उववज्जदि णियमा। जइ णेरइएसु वा तिरिक्ख-जोणिएसु वा मणुसेसु वा उववज्जदि णियमा अतोमुहुत्तकदकरणिज्जो। क० चू० जयध० पु० १३, पृ० ८६-८७।

मृतो देवमनुष्यतिर्यग्गतिष्वेवोत्पद्यते न नारकतौ तत्काले नारकगतिगमनहेतुसक्लेशपरिणामाभवात् । तदनन्तरचरमचतुर्थभागे मृत कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टिश्चसुष्वपि देवमनुष्यतिर्यग्नारकगतिपूत्पद्यते तत्काले तद्गतिगमननिबन्धनसक्लेशपरिणामोपलम्भात् ॥ १४५–१४६ ॥

स० च० ऐसैं अनिवृत्ति करणके अन्त समयविषै सम्यक्त्व मोहनीका अन्त काण्डककी अन्त फालिका द्रव्यकौ नीचले निषेकनिविषै निक्षेपण किए पीछे अनन्तर समयतैं लगाय अनिवृत्ति करण कालका सख्यातवा भागमात्र अन्तमुंहूर्त्त काल पर्यन्त जो पुरातन गलितावशेष गुणश्रेणि आयामका शीर्ष ताकौ सख्यातका भाग दीये तहा बहुभागमात्र अन्तमुंहूर्त काल पर्यन्त कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टी हो है जातैं दर्शनमोहकी क्षपणा योग्य स्थिति काण्डकादि कार्य सो अनिवृत्तिकरणका अन्त समय विषै ही समाप्त भया, तातैं कीया है करने योग्य कार्य जाने ऐसा कृतकृत्य नाम पावै है सो जीव भुज्यमान आयुके नाशतैं मरण पावै तौ सम्यक्त्व ग्रहणतैं पहलैं जो बाध्या था आयु ताके वशतैं च्यारचौ गतिनिविषै उपजै है। तहा कृतकृत्य वेदकके कालका च्यारि भाग एक एक अन्तमुंहूर्तमात्र करिए। तहा प्रथमभागविषै मूवा तौ देव ही विषै दूसरा भागविषै मूवा देव वा मनुष्यविषै, तीसरा भागविषै मूवा देव मनुष्य तिर्यञ्चविषै चौथा भाग विषै मूवा च्यारचो गति विषै उपजै है। जातैं तहा तिनहीविषै उपजने योग्य परिणाम हो हैं। ऐसैं क्रमकरि कृतकृत्य वेदककी उत्पत्ति जाननी ॥ १४६ ॥

विशेष—कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि प्रथम समयसे लेकर प्रथम अन्तर्मुहूर्तके भीतर यदि मरता हैं तो वह नियमसे सौधर्मादि देवोमे ही उत्पन्न होता है, क्योकि इस कालके भीतर शेषगतियोमे उत्पत्तिके कारणभूत लेश्याका परिवर्तन नही पाया जाता। प्रथम अन्तमुंहूर्तके बाद यदि मरता है तो वह नारकियो, तिर्यञ्चो और मनुष्योमे भी उत्पन्न होता है। श्रीजयधवलामे कृतकृत्यवेदकके मरणके विषयमे मात्र इतना ही उल्लेख दृष्टिगोचर होता है। इसमे जो विशेषता है उसका उल्लेख गाथा १४५-१४६ की टीकासे जानना चाहिए।

करणपढमादु जावय किदकिच्चुवरिं मुहुत्तअतो त्ति।
ण सुहाण परावत्ती सा धि कओदावर तु वरिं ॥ १४७ ॥

करणप्रथमात् यावत् कृतकृत्योपरि मुहूर्तान्त इति।
न शुभाना परावृत्ति सा हि कपोतावर तु उपरि ॥ १४७ ॥

स० टी०—अध प्रवृत्तकरणप्रथमसमयादारभ्य कृतकृत्यवेदककालचरमसमयपर्यन्त लेश्यापरावृत्तिसभवासभवप्ररूपणार्थमिद सूत्रमाह। अध प्रवृत्तकरणप्रथमसमये दर्शनमोहक्षपणाप्रारम्भकस्य तेज पद्मशुक्ललेश्याना शुभाना मध्ये यया लेश्यया क्षपणा प्रारब्धा तल्लेश्योत्कृष्टाश प्रतिसमयमनन्तगुणविशुद्धिक्रमेणानिवृत्तिकरणचरमसमये परिपूर्णो भवति। पुनस्तदनन्तरकृतकृत्यवेदककालस्याभ्यन्तरे प्रथमभागे यदि म्रियते तदा तत्रापि तल्लेश्यापरावृत्तिर्नास्ति तस्य देवेष्वेवोत्पादात्। यदि द्वितीयभागे म्रियते तदा तस्य भोगभूमिजमनुष्यगतावुत्पत्तिसभवात् प्रागारब्धशुभलेश्याया उत्कृष्टमध्यमजघन्याशाना सक्रमक्रमेण हान्या मरणकाले कपोतलेश्या-

१ चरिमे ट्ठिदिखडए णिट्ठिदे कदकरणिज्जो त्ति भण्णदे। ताधे मरण वि होज्ज। लेस्सापरिणाम पि परणामेज्ज। काउ-तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साणमण्णदरस्स। क० चू०, जयध० पु० १३, पृ० ८१-८२। जइ तेउ-पम्म-सुक्के वि अतोमुहुत्तकदकरणिज्जो। क० चू०, जयध० पु० १३, पृ० ८८।

जघन्यांशो भवति। अथ पुनस्तृतीयभागे यदि म्रियते तदा तस्यापि भोगभूमिजमनुष्यतिर्यग्गत्योरेव जन्म-सभवात् प्रागुक्तप्रकारेण कपोतलेश्याजघन्यांशो भवति। अथ पुनश्चतुर्थभागे यदि म्रियते तदा तस्यापि बद्ध-नरकायुष प्रथमपृथिव्यामेवोत्पत्तिघटनात् पूर्ववत्कपोतलेश्याजघन्यांशो भवति। तद्भागमृतमनुष्यतिरश्चो पूर्ववद्देवगत्यामुत्पद्यमानस्य सर्वेषु मृतस्य लेश्यापरावृत्तिर्नास्ति। इद कृतकृत्यवेदककाले मरणापेक्षया भणित तत्काले मरणरहितस्य पुन प्रादुर्भूतक्षायिकसम्यक्त्वस्य पूर्व चतुर्गतिषु बद्धायुष मरणकाले गत्यनुसारेण लेश्यापरावृत्तिरुक्तप्रकारेण ज्ञातव्या ॥ १४७ ॥

स० च०—अध करणका प्रथम समयविषै दर्शनमोहक्षपणाका प्रारम्भक जीवकै पीत पद्म शुक्ल लेश्या जो होइ सो समय समय अनन्तगुणी विशुद्धताका क्रमकरि अनिवृत्तिकरणका अन्त समय-विषै तिस लेश्याका उत्कृष्ट अश सम्पूर्ण होइ। बहुरि ताके अनन्तरि कृतकृत्य वेदक कालविषै प्रथम भागविषै मरै तौ लेश्या पलटै ही नाही, जातै इहा मरि देवहीविषै उपजना है। बहुरि जो दूसरा तीसरा चौथा भागविषै मरै तौ शुभलेश्याकी क्रमतै हानि होइकरि मरण समय कपोत लेश्याका जघन्य अश होइ। जाते द्वितीय भागविषै मरि भोगभूमिया मनुष्य भी हो है। तीसरा भागविषै मरि भोगभूमिया मनुष्य वा तिर्यञ्च भी हो है। चौथा भागविषै मरि जाकै नरकायु बन्ध्या सो जीव प्रथम नारक पृथ्वीविषै भी उपजै है। बहुरि देव गतिविषै ही उपजना होइ तौ ताकैं च्यारयो ही भागनिविषै लेश्याकी पलटनि न हो है। ऐसै वेदक कालविषै मरण होइ तीहिं अपेक्षा कथन किया। बहुरि जो तहा मरण न होइ अर पूर्वै च्यारयो गतिविषै कोई गति सम्बन्धी आयु बान्ध्या है ताकै क्षायिक सम्यक्त्व भए पीछैं मरण समय गतिके अनुसारि लेश्यानिकी पलटन जाननी ॥ १४७ ॥

विशेष—जयधवला टीकामे बतलाया है कि दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवके अध करणके प्रथम समयमे पीत, पद्म और शुक्लोमेसे जो लेश्या होती है, कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि होनेके पूर्व एकमात्र वही लेश्या रहती है। कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि होनेके बाद भी अन्तर्मुहूर्त कालतक वही लेश्या रहती है, क्योकि कृतकृत्यभावको प्राप्त होनेवाले कर्मभूमिज मनुष्यके जिस लेश्यामे क्षपणाका प्रारम्भ किया उसीका उत्कृष्ट अश होता है। पुन उसके मध्यम अशमे अन्तर्मुहूर्तकालतक अवस्थित रहकर अन्तर्मुहूर्तकालतक उसके जघन्य अशरूपसे परिणमता हैं। इसके बाद ही लेश्या बदलना सम्भव है। इस सूत्रका दूसरा व्याख्यान इस प्रकार उपलब्ध होता है कि अध प्रवृत्तकरणके प्रारम्भमे तो कोई भी लेश्या होती है, परन्तु दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके समाप्त होनेपर कृतकृत्यभावसे परिणमन करनेवाले जीवके नियमसे शुक्ललेश्या ही होती है, क्योकि विशुद्धिकी उत्कृष्टताको प्राप्त हुए उक्त जीवके शुक्ललेश्याके होनेमे कोई विरोध नही है। अनन्तर उसका विनाश होनेसे आगमानुसार यदि पीत, और पद्मलेश्यारूपसे परिवर्तन होता है तो जबतक कृतकृत्य हुए अन्तर्मुहूर्तकाल व्यतीत नही हो जाता तबतक उक्त दोनो लेश्यारूपसे परिवर्तन नही होता। आचार्य यतिवृषभने कृतकृत्य सम्यग्दृष्टिके लेश्यापरिवर्तनका उल्लेख करते हुए यह भी कहा है कि इस जीवके जो लेश्यापरिवर्तन होता है वह कापोत, पीत, पद्म और शुक्ललेश्यारूप परिवर्तन होता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि इसके कृष्ण और नील लेश्या तो कदाचित् भी नही होती। यदि उक्त जीवके सक्लेशकी बहुलता भी हो तो भी कापोत लेश्याके जघन्य अशको छोडकर अन्य अशरूप न तो कापोत लेश्या ही होती है और न नील और कृष्ण लेश्या ही होती है।

अणुसमओवट्टणय कदकिज्जतो त्ति पुव्वकिरियादो ।
वट्टदि उदीरणं वा असखसमयप्पवद्धाण[1] ॥ १४८ ॥

अनुसमयोपवर्तन कृतकरणीय इति पूर्वक्रियात ।
वर्तते उदीरणा वा असख्यसमयप्रवद्धानाम् ॥ १४८ ॥

स० टी०—कृतकृत्यवेदककाले सभवत्क्रियाविशेपप्रतिपादनार्थमाह—दर्शनमोहनीयानुभागस्यानिवृत्तिकरणकालसख्यातैकभागे यथा काण्डकघात सहृत्य अनन्तगुणहान्या प्रतिसमयमपवर्तन प्रारब्ध तथात्रापि कृतकृत्यवेदककालचरमसमयपर्यतमप्रतिघात वर्तत एव। पूर्वस्य करणपरिणामविशुद्धिविशेपस्य सस्कारशेपसभवात्। तथा तत्रैव कृतकृत्यवेदककाले असख्यातगुणितक्रमेण वर्तते ॥ १४८ ॥

स० च०—अनिवृत्तिकरण कालका सख्यातवा भाग अवशेष रहे जैसे दर्शनमोहके अनुभागका काडक घातकौ मेटि समय समय अनतगुणा घटता क्रम लीयें अनुभागका अपवर्तन कह्या था सो ही इस कृतकृत्य वेदक कालका अतसमय पर्यन्त पाइए है, जात करण परिणामनिकी विशुद्धताका सस्कारका अवशेष इहा सभवै है। वहुरि तिस कृतकृत्य वेदकका कालविषै यावत् एक समय अधिक उच्छिष्टावली अवशेष रहै तावत् समय समय असख्यातगुणा क्रम लीये असख्यात समयप्रबद्धनिकी उदीरणा पाइए है ॥ १४८ ॥ ताका विधान कहै हैं—

विशेष—कषायप्राभृतचूर्णिके अनुसार यहाँ इतना विशेष समझना चाहिए कि कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि जीव चाहे सक्लेश परिणामको प्राप्त हो, चाहे विशुद्धिरूप परिणामको प्राप्त हो तो भी उसके एक समय अधिक एक आवलिकाल शेष रहने तक प्रत्येक समयमे असख्यातगुणित श्रेणिरूपसे असख्यात समयप्रवद्धप्रमाण उदीरणा होती रहती है।

उदयबहिं ओक्कड्डिय असखगुणसमुदयआवलिम्हि खिवे ।
उवरिं विसेसहीणं कदकिज्जो जाव अइत्थवण ॥ १४९ ॥
जदि सकिलेसजुत्तो विसुद्धिसहिदो अतो वि पडिसमय ।
दव्वमसखेज्जगुण ओक्कड्डदि णत्थि गुणसेढी ॥ १५० ॥
जदि वि असखेज्जाणं समयपबद्धाणुदीरणा तो वि ।
उदयगुणसेढिठिदीए असखभागो हु पडिसमयं ॥ १५१ ॥

उदयबहिरपकर्षित असंख्यगुण उदयावलौ क्षिपेत् ।
उपरि विशेषहीन कृतकृत्यो यावदतिस्थापनम् ॥ १४९ ॥
यदि सक्लेशयुक्तो विशुद्धिसहितो अतोऽपि प्रतिसमयम् ।
द्रव्यमसंख्येयगुणमपकर्षति नास्ति गुणश्रेणी ॥ १५० ॥
यद्यपि असख्येयाना समयप्रवद्धानामुदीरणा तथापि ।
उदयगुणश्रेणिस्थितेरसंख्यभागो हि प्रतिसमय ॥ १५१ ॥

---

१ उदीरणा पुण सकिलिट्ठस्सदु वा विसुज्झदु वा तो वि असखेज्जसमयपवद्धा असखेज्जगुणाए सेढीए जाव समयाहिया आवलिया सेसा त्ति। क० चू०, जयध० पु० १३, पृ० ८९।

स० टी०—उदीरणाद्रव्यस्य प्रमाण तन्निक्षेपविधान च प्रदर्शयितु सूत्रत्रयमाह—अत्र कृतकृत्यवेदककालमात्रस्थितिषु प्रविष्टस्य किंचिन्न्यूनद्व्यर्धगुणहानिगुणितसमयप्रवद्धमात्रस्यापकर्षणभागहारेण खण्डितस्यैकभागमुदयावलिबाह्यनिषेकेभ्यो गृहीत्वा पुन पल्यासख्यातभागेन खण्डयित्वा तदेकभागमुदयप्रथमसमयादारम्य तच्चरमसमयपर्यंत प्रतिनिषेकमसख्यातगुणितक्रमेण प्रक्षेपयोगेत्यादिना विधिना निक्षिपेत् । पुनस्तद्बहुभागद्रव्यमुदयावलिन्यूनोपरितनस्थितावन्तर्मुहूर्तप्रमाणायामुपरि समयाधिकामतिस्थापनावलिं वर्जयित्वा अद्धाणेण सव्वधणे' इत्यादिविधिना विशेषहीनक्रमेण निक्षिपेत् । एव द्वितीयादिसमयेष्वपि । यद्यपि विशुद्धिसक्लेशपरावृत्तिवशेन कृतकृत्यवेदकस्य शुभाशुभलेश्यापरिणामसक्रमो भवति तथापि प्राक्तनकरणत्रयविशुद्धिसस्कारवशात् प्रतिसमयमसख्यातगुणितक्रमेण द्रव्यमपकृष्य उदीरणा कुरुते कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि । गुणश्रेण्यायाम विना केवलमुदयावल्यामेव किंचिद्द्रव्य प्रवेश्यावशिष्टस्योपरितनस्थितौ निक्षेपणमुदीरणा, इदमेव मनस्यवधार्याचार्यैं णत्थि गुणसेढी इत्युदीरणलक्षणमुदीरितम् । एव प्रतिसमयमसख्यातगुणितक्रमेण द्रव्यमपकृष्य निक्षेपे समयाधिकावल्युपरितननिषेकादपकृष्टद्रव्यस्य बहुवारमसख्यातगुणितस्य तदानीतनोदयनिषेकाद्धीनाधिकभावशङ्काया परिहार उच्यते—यद्यप्यसख्येयसमयप्रवद्धानामुदीरणा चरमपूर्वपूर्वोदीरणाद्रव्यादसख्यातगुणितद्रव्या तथापि चरमफालिगुणश्रेण्यायातोदयनिषेकद्रव्यादसख्यातैकभागमात्रमेवोदीरणाद्रव्यमुदयनिषेके दीयमानमकर्षणभागहारेण खडितसर्वद्रव्यस्य पल्यासख्यातभागेन भक्तस्यैकभागमात्रत्वात् उदयनिषेकस्य च सर्वद्रव्यस्यासख्यातपल्यप्रथममूलभक्तस्यैकभागमात्रत्वात् । किं पुन कृतकृत्यवेदकप्रथमादिसमयेषु उदीरणाद्रव्य तत्र तत्रोदयावलिनिषेकेषु दीयमान तत्तदुयावलिनिषेकसत्त्वद्रव्यादसख्यातगुणहीनमित्युच्यते । कृतकृत्यवेदककालस्य समयाधिकावलिमात्रेऽवशिष्टे सर्वाग्रनिषेकात्पूर्वपूर्वापकृष्टद्रव्यादसख्यातगुणितद्रव्यमपकृष्य ममयोनावल्या द्वित्रिभागसमयाधिकावलिमात्रेऽवशिष्टे सर्वाग्रनिषेकात्पूर्वपूर्वापकृष्टद्रव्यादसख्यातगुणितद्रव्यमपकृष्य समयोनावल्या द्वित्रिभागमपि सस्थाप्य तदधस्तने तत्त्रिभागे रूपाधिके उदयसमयात्प्रभृति इदानीमपकृष्टद्रव्यस्य पल्यासख्यातभागभक्तस्यैकभाग तद्योग्यासख्यातसमयपर्यन्तमसख्यातगुणितक्रमेण दत्त्वावशिष्टबहुभागद्रव्य तथावलित्रिभागसमयेषु अतिस्थापनाधस्तनसमय मुक्त्वा सर्वत्र विशेषहीनक्रमेण निक्षिपेत् । एषैवोत्कृष्टोदीरणा । एवमनुभागस्यानुसमयमनन्तगुणितापवर्तनेन कर्मप्रदेशाना प्रतिसमयमसख्यातगुणितोदीरणया च कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि सम्यक्त्वप्रकृतिस्थितिमन्तर्मुहूर्तायामामुच्छिष्टावलिं मुक्त्वा सर्वा प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशविनाशपूर्वक उदयमुखेन गालयित्वा तदनन्तरसमये उदीरणारहित केवलमनुभागसमयापवर्तनेनैव प्राक्तनापवर्तनक्रमविलक्षणेनोदयप्रथमसमयात्प्रभृति प्रतिसमयमनन्तगुणितक्रमेण प्रवर्तमानेन प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशविनाशपूर्वक प्रतिसमयमेकैकनिषेक गालयित्वा तदनन्तरसमये क्षायिकसम्यग्दृष्टिर्जायते जीव ॥ १४९–१५१ ॥

स० च०—कृतकृत्य वेदक कालमात्र सम्यक्त्वमोहनीके निषेक रहै तिनिका द्रव्य किंचिदून द्व्यर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण है ताकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहा एक भाग प्रमाण द्रव्यकौं जे उदयावलीतैं बाह्य उपरिवर्ती निषेक हैं सो तिनतैं ग्रहिकरि ताकौ पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग देइ तहा एक भाग तौ उदयावलीविषैं 'प्रक्षेपयोगोद्धत' इत्यादि विधान करि प्रथम समयतैं लगाय अन्त निषेकपर्यंत असख्यात गुणा क्रम लीए दीजिए है। बहुरि अवशेष बहुभागमात्र द्रव्य तिस उदयावलीतैं उपरिवर्ती जो अवशेष अन्तर्मुहूर्तमात्र उपरितन स्थिति तहा अन्तविषैं समय अधिक अतिस्थापनावली छोडि सर्व निषेकनिविषैं 'अद्धाणेण सव्वधणे' इत्यादि विधानकरि विशेष हीन क्रम लीए निक्षेपण करै। ऐसैं उपरितन स्थितिका द्रव्य जो उदयावलीविषैं दीजिए है ताका नाम उदीरणा है ॥ १४९ ॥

स० च०—यद्यपि कृतकृत्य वेदक मम्यग्दृष्टी लेश्याकी पटलनितैं सक्लेश सयुक्त होइ वा

विशुद्धता सहित होइ तथापि पूर्व भए थे करणरूप परिणाम तिनिकी विशुद्धताका जो संस्कार ताके वशतै समय समय प्रति असंख्यातगुणा द्रव्यकौ अपकर्षणकरि उदीरणा करै है। गुणश्रेणि आयाम विना किंचित् द्रव्यकौ उदयावलीविषै देइ अवशेषकौं उपरितन स्थितिविषै दीया तातै इहां गुणश्रेणि नाहीं है ॥ १५० ॥

स० च०—यद्यपि असंख्यात समयप्रबद्धनिकी उदीरणा पूर्व-पूर्व समयसम्बन्धी उदीरणा द्रव्यतै असंख्यागुणा क्रम लीए है तथापि अन्तकांडककी अन्तफालिका द्रव्यकौ गुणे गुणश्रेणि आयामविषै दीया था तिस गुणश्रेणिरूप जो उदय आया निषेक ताका द्रव्यतै यहु उदीरणा द्रव्य असंख्यातवां भागमात्र ही है। जातै यहु उदीरणा द्रव्य तौ सर्वद्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहां एक भागकौ पल्यका असंख्यातवाँ भागका भाग दीए एक भागमात्र है अर जो तिस गुणश्रेणिका निषेक उदयरूप है ताका द्रव्य सर्व द्रव्यकौ असंख्यातगुणा पल्यवर्गमूलका भाग दीए एक भागमात्र है तातै कृतकृत्य वेदकका प्रथमादि समयसम्बन्धी निषेकनिविषै इहां उदयावलीविषैं दीया द्रव्य उदीरणा द्रव्य सो पूर्वै पाइए है जो सत्तारूप द्रव्य तातै असंख्यातगुणा घाटि है। बहुरि कृतकृत्य वेदक कालविषै एकसमय अधिक आवली अवशेष रहैं पूर्वै अपकर्षण कीया द्रव्यतै असंख्यातगुणा द्रव्यकौ स्थितिका अंतनिषेक जो उदयावलीतै उपरिवर्ती एक निषेक तातै अपकर्षणकरि ताके नीचै एक समय घाटि आवलीका दोय तीसरा भाग प्रमाण निषेकनिकौ अतिस्थानपनरूप राखि ताके नीचै एक समय अधिक आवलीका त्रिभागमात्र निषेकनिविषै द्रव्य दीजिए है तहां तिस अपकर्षण कीया हूवा द्रव्यकौ पल्यका असंख्यातवा भागका भाग देइ तहां एक भागमात्र द्रव्यकौ उदय समयतै लगाय यथायोग्य असंख्यात समयसम्बन्धी निषेकनिविषै असंख्यातगुणा क्रमकरि दीजिए है। तहां तिस अपकर्षण कीया हूवा द्रव्यकौ पल्यका असंख्यातवा भागका भाग देइ तहां एक भागमात्र द्रव्य तौ उदय समयतै लगाय यथायोग्य असंख्यात समयसम्बन्धी निषेकनिविषै असंख्यातगुणा क्रमकरि दीजिए है अर अवशेष बहुभागमात्र द्रव्यकौ अतिस्थापना ताका जो नीचेका समय ताकौ छोडि ताके नीचै अवशेष आवलीका त्रिभागमात्र निषेकनिविषै विशेष घटता क्रमकरि निक्षेपण करिए है। यहु ही उत्कृष्ट उदीरणा है। यातै अधिक उदीरणाका द्रव्य नाहीं। ऐसैं अनुभागका तौ अनुसमय अपवर्तनकरि अर कर्म परमाणूनिकी उदीरणा करि यहु कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टी, रही थी जो सम्यक्त्व मोहनीकी अंतर्मुहूर्त स्थिति तामैं उच्छिष्टावली विना सर्व स्थिति है सो प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेशनिका सर्वथा नाश लीए जो एक एक निषेकका एक एक समयविषै उदयरूप होइ निर्जरना ताकार नष्ट हो है, बहुरि ताका अनन्तर समयविषै उच्छिष्टावलीमात्र स्थिति अवशेष रहै उदीरणाका भी अभाव भया, केवल अनुभागका अपवर्तन है सो पूर्वै अनुभाग अपवर्तन कह्या था तातै याका अन्य लक्षण है, उदयरूप प्रथम समयतै लगाय समय समय अनन्तगुणा क्रमकरि वर्तै है ताकरि प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेशनिका सर्वथा नाश पूर्वक समय समय प्रति उच्छिष्टावलीके एक एक निषेककौ गालि निर्जरारूप करि ताका अनन्तर समयविषै जीव क्षायिक सम्यग्दृष्टी हो है ॥ १५१ ॥

विदियकरणादिमादो कदकरणिज्जस्स पढमसमओ त्ति ।
वोच्छं रसखंडुक्कीरणकालादीणमप्पबहुं[1] ॥ १५२ ॥

---

[1] दंसणमोहणीयक्खवगस्स पढमसमए अपुव्वकरणमादिं कादूण जाव पढमसमयकदकरणिज्जो त्ति

द्वितीयकरणादिमात् कृतकृत्यस्य प्रथमसमय इति ।
वक्ष्ये रसखडोत्करणकालादीनामल्पबहुत्वम् ॥ १५२ ॥

स० टी०—अपूर्वकरणप्रथमसमयादारभ्य कृतकृत्यवेदकप्रथमसमयपर्यन्तमनुभागखण्डोत्करणकालादीना उत्कृष्टस्थितिसत्त्वपर्यन्ताना त्रयस्त्रिंशतामल्पबहुत्वपदानि वक्ष्यामीति प्रतिज्ञासूत्रमिदम् ॥ १५२ ॥

स० च०—दूसरा जो अपूर्वकरण ताका प्रथम समयतै लगाय कृतकृत्य वेदकका प्रथम समय पर्यंत अनुभाग काण्डकोत्करण कालादिक तिनिका अल्पबहुत्वके तेतीस स्थान कहौंगा ॥ १५२ ॥

रसठिदिखडुक्कीरणअद्धा अवरं वर च अवरवर ।
सव्वत्थोव अहिय संखेज्जगुण विसेसहिय[1] ॥ १५३ ॥
रसस्थितिखडोत्करणाद्धा अवर वरं च अवरवर ।
सर्वस्तोक अधिकं सख्येयगुण विशेषाधिकम् ॥ १५३ ॥
कदकरणसम्मखवणाणियट्टिअपुव्वद्ध सखगुणिदकमं ।
तत्तो गुणसेढिस्स य णिक्खेओ साहियो होदि[2] ॥ १५४ ॥
कृतकरणसम्यग्क्षपणानिवृत्यपूर्वाद्धा संख्यगुणितक्रम ।
ततो गुणश्रेण्याश्च निक्षेप साधिको भवति ॥ १५४ ॥
सम्मदुरिमे चरिमे अडवस्सस्सादिमे च ठिदिखडा ।
अवरवराबाहा वि य अडवस्स संखगुणियकमा[3] ॥ १५५ ॥
द्विचरमे चरमे अष्टवर्षस्यादिमे च स्थितिखडानि ।
अवरवराबाधापि च अष्टवर्ष सख्यातगुणितक्रमाणि ॥ १५५ ॥
सम्मे असखवस्सिय चरिमट्ठिदिखडओ असंखगुणो ।
मिस्से चरिमे खडियमहिय अडवस्समेत्तेण[4] ॥ १५६ ॥

एदम्हि अतरे अणुभागखडय-ट्ठिदिखडयउक्कीरणद्धाण जहण्णुक्कस्सियाण ट्ठिदिखडय-ट्ठिदिबध-ट्ठिदिसतकम्माण जहण्णुक्कस्सियाण आबाहाण च जहण्णुक्कस्सियाणमण्णेसिं च पदाणमप्पाबहुअ वतइ॰सामो । क० चु०, जयध० भा० १३, पृ० ९० ।

१ सव्वत्थोवा जहण्णिया अणुभागखडयउक्कीरणद्धा । उक्कस्सिया अणुभागखडयउक्कीरणद्धा विसेसाहिग्रा । ट्ठिदिखडयउक्कीरणद्धा ट्ठिदिबधगद्धा च जहण्णियाओ दो वि तुल्लाओ सखेज्जगुणाओ । ताओ उक्कस्सियाओ दो वि तुल्लाओ विसेसाहियाओ । वही, पृ० ९१-९२ ।

२ कदकरणिज्जस्स अद्धा सखेज्जगुणा । सम्मत्तक्खवणद्धा सखेज्जगुणा । अणियट्टिअद्धा सखेज्जगुणा । अपुव्वकरणद्धा सखेज्जगुणा गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ । वही, पृ० ९२-९३ ।

३ सम्मत्तस्स दुचरिमट्ठिदिखडय सखेज्जगुण । तस्सेव चरिमट्ठिदिखडय सखेज्जगुण । अट्ठवस्सट्ठिदिगे सतकम्मे सेसे ज पढम ट्ठिदिखडय त सखेज्जगुण । जहण्णिया आबाहा सखेज्जगुणा । उक्कस्सिया आबाहा सखेज्जगुणा । अणुसमयोवट्टमाणस्स अट्ठवस्साणि ट्ठिदिसतकम्म सखेज्जगुण । वही, पृ० ९४-९५ ।

४ सम्मत्तस्स असखेज्जवस्सिय चरिमट्ठिदिखडय असखेज्जगुण । सम्मामिच्छत्तस्स चरिम्मसखेज्जवस्सिय ट्ठिदिखडय विसेसाहिय । वही, पृ० ९५ ।

सम्येऽसंख्यवर्षे चरमस्थितिखंडकोऽसख्यगुण ।
मिश्रे चरमे खडितमधिकमष्टवर्षमात्रेण ॥ १५६ ॥

मिच्छे खवदे सम्मदुगाण ताणं च मिच्छसतं हि ।
पढमतिमठिदिखडा असखगुणिदा हु दुट्ठाणे[1] ॥ १५७ ॥

मिथ्ये क्षपिते सम्यग्द्विकाना तेषा च मिथ्यसत्त्व हि ।
प्रथमातिमस्थितिखडान्यसख्यगुणितानि हि द्विस्थाने ॥ १५७ ॥

मिच्छतिमठिदिखडो पल्लासखेज्जभागमेत्तेण ।
हेट्ठिमठिदिप्पमाणेणब्भहियो होदि णियमेण ॥ १५८ ॥

मिथ्यातिमस्थितिखड पल्यासख्येयभागमात्रेण ।
अधस्तनस्थितिप्रमाणेनाभ्यधिकं भवति नियमेन ॥ १५८ ॥

दूरावकिट्टिपढम ठिदिखंडं सखसगुण तिण्ण ।
दूरावकिट्टिहेदूठिदिखंड सखसगुणियं[3] ॥ १५९ ॥

दूरापकृष्टिप्रथम स्थितिखड सख्यसंगुण त्रय ।
दूरापकृष्टिहेतु स्थितिखड सख्यसगुणित ॥ १५९ ॥

पलिदोवमसतादो विदियो पल्लस्स हेदुगो जादु ।
अवरो अपुव्वपढमे ठिदिखडो सखगुणिदकमा[4] ॥ १६० ॥

पलिदोपमसत्त्वतो द्वितीयं पल्यस्य हेतुक यत्तु ।
अवरमपूर्वप्रथमे स्थितिखंडं संख्यगुणितक्रम ॥ १६० ॥

पलिदोवमसतादो पढमो ठिदिखडओ दु सखगुणो ।
पलिदोवमठिदिसत होदि विसेसाहिय तत्तो[5] ॥ १६१ ॥

पल्योपमसत्त्वत प्रथमं स्थितिखडक तु संख्यगुण ।
पल्योपमस्थितिसत्त्वं भवति विशेषाधिकं तत ॥ १६१ ॥

---

१ मिच्छत्ते खविदे सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताण पढमट्ठिदिखडयमसखेज्जगुण । मिच्छत्तसतकम्मियस्स सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताण चरिमट्ठिदिखडयमसखेज्जगुण । वही, ९५-९६ ।

२ मिच्छत्तस्स चरिमट्ठिदिखडय विसेसाहिय । वही पृ० ९६ ।

३ असखेज्जगुणहाणिट्ठिदिखडयाण पढमट्ठिदिखडय मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तमसखेज्जगुण । सखेज्जगुणहाणिट्ठिदिखडयाण चरिमट्ठिदिखडय ज त सखेज्जगुण । वही पृ० ९७ ।

४ अपुव्वकरणे पढमट्ठिदिखडय सखेज्जगुण । वही, पृ० ९८ ।

५ अपुव्वकरणे पढमट्ठिदिखडय सखेज्जगुण । पलिदोवममेत्ते ट्ठिदिसतकम्मे जादे तदो पढम ठिदिखडय सखेज्जगुण । वही पृ० ९८-९९ ।

विदियकरणस्स पढमे ठिदिखडविसेसय तु तदियस्स ।
करणस्स पढमसमये दसणमोहस्स ठिदिसत[1] ॥ १६२ ॥

द्वितीयकरणस्य प्रथमे स्थितिखंडविशेषक तु तृतीयस्य ।
करणस्य प्रथमसमये दर्शनमोहस्य स्थितिसत्त्वम् ॥ १६२ ॥

दंसणमोहूणाणं बधो सतो य अवर वरगो य ।
संखेये गुणियकमा तेत्तीसा एत्थ पदसखा[2] ॥ १६३ ॥

दर्शनमोहोनाना बंघ सत्त्वं च अवरं वरकं च ।
संख्येयगुणि त्रायस्त्रिंशदत्र पदसंख्या ॥ १६३ ॥

स० टी०—एकादशगाथासूत्रै तान्येवाल्पबहुत्वपदानि प्रतिपाद्यन्ते । तद्यथा—दर्शनमोहस्य जघन्यानुभागखडोत्करणकाल सम्यक्त्वप्रकृत्यष्टवर्षस्थितिकरणसमयात्प्राक्तनानन्तरावस्थाया सभवन् वक्ष्यमाणद्वात्रिंशत्पदेभ्य स्तोकोऽल्प इत्यर्थ । ज्ञानावरणाद्यायुर्वजितशेषकर्मणा जघन्यानुभागखडोत्करणकालोऽनिवृत्तिकरणचरमभागे सभवन् सर्वत स्तोकमिति सामान्येन जघन्यानुभागखडोत्करणकाल सख्यातावलिमात्रोऽपि उत्तरपदापेक्षयाल्प इत्युच्यते । एक पद १ । तस्मादपूर्वकरणप्रथमसमये प्रारभ्यमाणोत्कृष्टानुभागखडोत्करणकालो विशेषाधिक २ १ ५, विशेषप्रमाण जघन्यानुभागखडोत्करणकालसख्यातैभागमात्र द्वितीय पद २ ।
४

तस्मादनिवृत्तिकरणचरमभागे सभवन् जघन्यस्थितिकाडकोत्करणकाल सख्यातगुण २ १ । ५ । ४ तृतीय
४

पद ३ । तस्मादपूर्वकरणप्रथमसमये घटमान उत्कृष्टस्थितिखण्डोत्करणकालो विशेषाधिक २ १ ५ ४ ५
४

चतुर्थं पद ४ । तस्मात्कृतकृत्यवेदककाल सख्यातगुण २ १ । ५ । ४ । ५ । ४ ददमपवर्त्य लिखिते एव
४

२ १ १ पचम पद ५ । अस्मात्सम्यक्त्वप्रकृतिक्षपणकाल अष्टवर्षकरणप्रथमसमयादारभ्य कृतकृत्यवेदकचरमसमयपर्यंतमुपपद्यमान सख्यातगुण २ १ १ । ४ षष्ठ पद ६ । अस्मादनिवृत्तिकरणकाल सख्यातगुण २ १ १ । ४ । ४ सप्तम पद ७ । तस्मादपूर्वकरणकाल सख्यातगुण २ १ १ । ४ । ४ । ४ अष्टम पद ८ । अमुष्मादपूर्वकरणप्रथमसमये प्रारब्धगुणश्रेण्यायामो विशेषाधिक २ १ १ । ४ । ४ । ४ । ४ विशेषप्रमाणमनिवृत्तिकरणकालस्तत्सख्यातभागश्च ९ । तस्मात्सम्यक्त्वप्रकृतेर्द्विचरमस्थितिकाडकायाम सख्यातगुण २ १ १ । ४ । ४ । ४ । ४ गुणिते एव २ १ दशम पद १० । अस्मात्सम्यक्त्वप्रकृतिचरमस्थितिकाडकायाम सख्यातगुण २ १ ४ एकादश पद ११ । एतस्मादष्टवर्षप्रथमसमये सम्यक्त्वप्रकृतिस्थितिकाडकायाम सख्यात-

---

१ अपुव्वकरणे पढमस्स उक्कस्सट्ठिदिखडयस्स विसेसो सखेज्जगुणो । दसणमोहणीयस्स अणियट्टिपढमसमय पविट्ठस्स ट्ठिदिसतकम्म सखेज्जगुण । वही, पृ० ९९ ।

२ दसणमोहणीयवज्जाण कम्माण जहण्णओ ट्ठिदिबधो सखेज्जगुणो । तेंसि चेव उक्कस्सओ ट्ठिदिबधो सखेज्जगुणो । जहण्णय दसणमोहणीयवज्जाण जहण्णय ट्ठिदिसतकम्म सखेज्जगुण । तेंसि चेव उक्कस्सिय ट्ठिदिसतकम्म सखेज्जगुण । वही । वही पृ० ९९-१००

गुण २ ११४।४ द्वादश पद १२। तस्मात्कृतकृत्यवेदकप्रथमसमये संभवज्ज्ञानावरणादिकर्मस्थितिबंधस्य जघन्यावाधाकाल संख्यातगुण २ ११४।४।४ त्रयोदश पद १३। अस्मादपूर्वकरणप्रथमसमयसंभवज्ज्ञानावरणादिकर्मस्थितिबन्धस्योत्कृष्टावाधाकाल संख्यातगुण—२ ११।४।४।४।४ एतावत्पर्यंत प्रागुक्त-सर्वायामा प्रत्येकमंतर्मुहूर्तमात्रा एव। चतुर्दश पद १४। अमुष्मात्सम्यक्त्वप्रकृते क्षपितस्थित्यवशेषोऽष्टवर्षायाम संख्यातगुण व ८। अन्तर्मुहूर्ताद्दिनमासवर्षप्रमितसंख्यातगुणकारस्य दर्शनात् पंचदश पद १५। अमुष्मात्सम्यक्त्वप्रकृतेरष्टवर्षावशेषकरणनिमित्तपल्यासंख्यातैकभागमात्रचरमस्थितिकांडकायामोऽसंख्यातगुण प — व ८ षोडश पद १६। तस्मात्सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतेश्चरमकांडकायामो विशेषाधिक प विशेषप्रमाण

 a a a a a a

चोच्छिष्टावल्योनाष्टवर्षमात्र, सप्तदश पद १७। तस्मान्मिथ्यात्वे चरमस्थितिकांडकफालिद्रव्यं मिश्रप्रकृतौ

१०

संक्रम्य क्षपिते तदनंतरसमये प्रारब्धे मिश्रसम्यक्त्वप्रकृत्योः प्रथमस्थितिकांडकायामोऽसंख्यातगुण प a

a a a

अष्टादश पद १८। तस्मान्मिथ्यात्वद्रव्यसत्त्वे चरमकांडकावशेषमात्रे सति तत्काललांछितमिश्रसम्यक्त्वप्रकृति-

१०

चरमस्थितिकांडकायामोऽसंख्यातगुण प a। एकान्नविंश पद १९। एतस्मान्मिथ्यात्वद्रव्यचरमकांडकायामो

a a

विशेषाधिक प विशेषप्रमाण च मिथ्यात्वसत्त्वकाले मिश्रसम्यक्त्वप्रकृत्योश्चरमकाण्डकावशिष्टाधस्तनस्थितिमात्र

a

विंश पद २०। तस्माद्दर्शनमोहत्रयस्य दूरापकृष्टिमात्रावशेषस्थितौ प्रविष्टपल्यासंख्यातबहुभागमात्रप्रथमस्थिति-

१०

काण्डकायामोऽसंख्यातगुण प a एकविंश पद २१।

५।५।५।५।a

अमुष्माद्दूरापकृष्टिस्थित्यवशेषहेतुभूतपल्यसंख्यातबहुभागमात्रस्थितिकाण्डकायाम संख्यातगुण प ४

५।५।५।

द्वाविंश पद २२। तस्मात्पल्यमात्रावशिष्टस्थितौ प्रविष्टद्वितीयस्थितिकाण्डकायाम संख्यातगुण प ४ त्रयो-

५५

विंश पद २३। तस्मात्पल्यमात्रावशेषकरणनिमित्तपल्यसंख्यातैकभागमात्रस्थितिकाण्डकायाम संख्यातगुण प

११

पल्यप्रविष्टकाण्डकभागहारात्पल्यहेतुकांडकभागहारस्य संख्यातगुणहीनत्वात्। चतुर्विंश पद २४। एतस्मादपूर्वकरणप्रथमसमय प्रारब्धजघन्यस्थितिकाण्डकायाम संख्यातगुण प पंचविंश पद २५। अस्मात्पल्यमात्रा-

१

वशेषस्थितौ प्रविष्टपल्यसंख्यातबहुभागमात्रप्रथमकाण्डकायाम संख्यातगुण प ४ षड्विंश पद २६।

५

अमुष्मात्पल्यमात्रावशेषस्थितिसत्त्व विशेषाधिक प विशेषप्रमाण च पल्यसंख्यातैकभागमात्र। सप्तविंश पद २७। तस्मादपूर्वकरणप्रथमसमये जघन्योत्कृष्टकाण्डकयोर्विशेष पल्यसंख्यातभागन्यूनसागरोपमपृथक्त्वमात्र संख्यात-

गुण सा ७ – प अष्टाविंश पद । २८ । एतस्मादनिवृत्तिकरणप्रथमसमये दर्शनमोहस्य स्थितिसत्त्व सख्यात-
८ १
गुण स ७ ल एकान्नत्रिंश पद । २९ । तस्माद्दर्शनमोहवर्जिताना ज्ञानावरणादिशेषकर्मणा जघन्यस्थितिबन्ध
८
कृतकृत्यवेदकप्रथमसमयसम्भवी सख्यातगुण सा अ को २ । त्रिंश पद ३० । तस्मादपूर्वकरणप्रथमसमये
४ । ४ । ४
तेषामेव कर्मणामुत्कृष्टस्थितिबन्ध सख्यातगुण सा अ को २ एकत्रिंश पद ३१ । तस्मात्तेषामेव कर्मणा-
४ । ४
मनिवृत्तिकरणचरमभागे सम्भवि जघन्यस्थितिसत्त्व सख्यातगुण सा अ को २ । द्वात्रिंश पद ३२ । तस्मात्ते-
४
षामेव कर्मणामपूर्वकरणप्रथमसमये सम्भवदुत्कृष्टस्थितिसत्त्व सख्येयगुण सा अ को २ त्रयस्त्रिंश पद । ३३ ।
एव दर्शनमोहक्षपणावसरे सभवदल्पबहुत्वपदानि त्रयस्त्रिंशत्सख्यानि प्रवचनानुसारेण व्याख्यातानि ॥ १५३ ॥

स० च०—सम्यक्त्वमोहनीका तौ अष्टवर्ष स्थिति करनेके समयतैं पहले समयनिविषै सम्भवता अर आयु विना अन्य कर्मनिका अनिवृत्तिकरण कालका अन्त भागविषै सम्भवता ऐसा जो जघन्य अनुभाग खण्डोत्करणकाल सो सख्यात आवलीमात्र हैं तौ भी वक्ष्यमाण सर्वस्थाननितैं स्तोक है ॥ १ ॥ तातैं याका सख्यातवा भागमात्र विशेषकरि अधिक अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै जाका प्रारम्भ भया ऐसा उत्कृष्ट अनुभाग खडोत्करणका काल है ॥ २ ॥ तातैं सख्यातगुणा अनिवृत्तिकरणका अन्त भागविषै सम्भवता ऐसा जघन्य स्थिति काडकोत्करणकाल है ॥ ३ ॥ तातैं याका सख्यातवा भागमात्र विशेषकरि अधिक अपूर्वकरणका आदिविषै सभवता ऐसा उत्कृष्ट स्थिति काडकोत्करणका काल है ॥ १५३ ॥

स० च०—तातैं सख्यातगुणा कृतकृत्यवेदकका काल है ॥ ५ ॥ तातैं सख्यातगुणा अष्टवर्ष करनेका समयतैं लगाय कृतकृत्य वेदकका अन्त समय पर्यन्त सम्यक्त्वमोहनीका क्षपणाका काल है ॥ ६ ॥ तातैं सख्यातगुणा अनिवृत्तिकरणका काल है ॥ ७ ॥ तातैं सख्यातगुणा अपूर्वकरणका काल है ॥ ८ ॥ तातैं अनिवृत्तिकरणकाल अर याका सख्यातवा भागमात्र विशेषकरि अधिक अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै जाका प्रारम्भ भया ऐसा गुणश्रेणि आयाम है ॥ १५४ ॥

स० च०—तातैं सख्यातगुणा सम्यक्त्वमोहनीका द्विचरम स्थितिकाडकका आयाम है ॥ १० ॥ तातैं सख्यातगुणा सम्यक्त्वमोहनीकी अन्त स्थितिकाडकका आयाम है ॥ ११ ॥ तातैं सख्यातगुणा सम्यक्त्वमोहनोका अष्टवर्ष स्थितिका प्रथम स्थितिकाडक आयाम है ॥ १२ ॥ तातैं सख्यातगुणा कृतकृत्यवेदकका प्रथम समयविषै सभवता जो ज्ञानावरणादिक कर्मनिका स्थितिबन्ध ताका जघन्य आबाधा काल है ॥ १३ ॥ तातैं सख्यातगुणा अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै सम्भवता स्थितिबन्धका उत्कृष्ट आबाधा काल है ॥ १४ ॥ इहा पर्यन्त ए सर्वकाल प्रत्येक यथासम्भव अन्तर्मुहूर्तमात्र ही जानने । तातैं सख्यातगुणी सम्यक्त्वमोहनीकी अष्टवर्ष प्रमाण स्थिति है ॥ १५५ ॥

स० च०—तातैं असख्यातगुणा सम्यक्त्वमोहनीकी आठवर्षमात्र स्थिति करनेके अर्थि-पल्यका असख्यातवा भागमात्र अन्तका स्थितिकाडक आयाम है ॥ १६ ॥ तातैं उच्छिष्टावली

घाटि अष्टवर्षमात्र विशेषकरि अधिक मिश्रमोहनीका अन्तका स्थितिकाडक आयाम है ॥ १७ ॥ तातै असख्यातगुणा अन्त स्थितिकाडककी अन्तफालिका द्रव्यकौ मिश्रमोहनीविषं सक्रमणकरि मिथ्यात्वका क्षय करनेका समयतै अनन्तरवर्ती समयविषं सम्भवता मिश्रमोहनी वा सम्यक्त्व-मोहनीका प्रथम स्थितिकाडक आयाम है ॥ १८ ॥ तातै असख्यातगुणा मिथ्यात्वका सत्त्व द्रव्य अन्तकाडक प्रमाण अवशेष जहा रहै तिस कालविषं सम्भवता मिश्रमोहनी वा सम्यक्त्वमोहनी-का अन्तकाडकका आयाम है ॥ १९ ॥ १५६-१५७ ॥

स० च०—तातै मिथ्यात्वका सत्त्व जिस कालविषै पाइये तिस विषै मिश्र सम्यक्त्व-मोहनीका अन्तकाडकका घात भए पीछे अवशेष रही जो तिन दोऊनिकी नीचेकी स्थिति पल्यका असख्यातवा भागमात्र ताकरि अधिक मिथ्यात्वका अन्तकाडकका आयाम है ॥ २० ॥ १५८ ॥

स० च०—तातै असख्यातगुणा दर्शनमोहत्रिककी दूरापकृष्टि नामा स्थितिविषै प्राप्त भया ऐसा पल्यका असख्यात बहुभागमात्र स्थितिकाडक आयाम है ॥ २१ ॥ तातै सख्यातगुणा दूरापकृष्टि स्थितिकौ कारण ऐसा पल्यका सख्यात बहुभागमात्र स्थितिकाडक आयाम सख्यात-गुणा है ॥ २२ ॥ १५९ ॥

स० च०—तातै सख्यातगुणा पल्यमात्र अवशेष स्थिति होतै पाइए ऐसा द्वितीय स्थिति-काडकका आयाम है ॥ २३ ॥ तातै सख्यातगुणा पल्यमात्र स्थितिकौ कारणभूत ऐसा पल्यका सख्यातवा भागमात्र स्थितिकाडक आयाम है ॥ २४ ॥ तातै सख्यातगुणा अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै जाका प्रारम्भ भया जो जघन्य स्थितिकाडक ताका आयाम है ॥ २५ ॥ १६० ॥

स० च०—तातै सख्यातगुणा पल्यमात्र अवशेष स्थितिविषैं प्राप्त ऐसा पल्यका सख्यात-बहुभागमात्र प्रथम काडकका आयाम है ॥ २६ ॥ तातै पल्यका सख्यातवा भागमात्र विशेषकरि अधिक पल्यमात्र स्थितिसत्त्व है ॥ २७ ॥ १६१ ॥

स० च०—तातै सख्यातगुणा अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै जघन्य अर उत्कृष्ट काडकनि-विषैं बीचिके विशेषका प्रमाण पल्यका सख्यातवा भागकरि हीन पृथक्त्व सागर प्रमाण है ॥ २८ ॥ तातै सख्यातगुणा अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयविषै सम्भवता दर्शनमोहका स्थिति सत्त्व है ॥२९॥ तातै सख्यातगुणा कृतकृत्य वेदकका प्रथम समयविषै सभवता दर्शनमोह विना अन्य कर्मनिका जघन्य स्थितिबध है ॥ ३० ॥ तातै सख्यातगुणा अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै सभवता तिनही कर्मनिका उत्कृष्ट स्थितिबध है ॥ ३१ ॥ तातै सख्यातगुणा अनिवृत्तिकरणका अत भागविषै सभवता तिनही कर्मनिका जघन्य स्थितिसत्त्व है ॥ ३२ ॥ तातै सख्यातगुणा अपूर्व करणका प्रथम समयविषै सभवता तिनही कर्मनिका उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व है ॥ ३३ ॥ ऐसैं दर्शन मोहकी क्षपणाका अवसरविषैं सभवते अल्पबहुत्वके तेतीस स्थान हैं ॥ १६२-१६३ ॥

विशेष—जयधवला टीकाके अनुसार अब उक्त अल्पबहुत्वका स्पष्टीकरण करते है—अनु-भागकाण्डकका जघन्य उत्कीरण काल सबसे स्तोक होता है, क्योकि अल्पबहुत्वके प्रसगसे आगे कहे जानेवाले सब पदोके कालसे अनुभागकाण्डकका जघन्य उत्कीरणकाल सबसे अल्प है। यहाँ दर्शन-मोहनीयका आठ वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्म रहने पर जो पूर्वका अनुभागकाण्डक है उसका सबसे जघन्य उत्कीरणकाल ग्रहण करना चाहिये। परन्तु ज्ञानावरणादि शेष कर्मोंकी अपेक्षा कृतकृत्य होनेके प्रथम समयमे जो पहलेका अनुभागकाण्डक है उसका अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयमे

सबसे जघन्य उत्कीरण काल ग्रहण करना चाहिये ॥ १ ॥ उससे अनुभागकाण्डकका उत्कृष्ट उत्कीरणकाल विशेष अधिक है, क्योंकि अपूर्वकरणके प्रथम समयसे होनेवाले सब कर्मोसम्बन्धी अनुभागकाण्डकका उत्कीरण काल यहाँ ग्रहण किया गया है ॥ २ ॥ उससे स्थितिकाण्डकका जघन्य उत्कीरणकाल और जघन्य स्थितिबन्धकाल ये दोनो परस्पर समान होकर भी सख्यातगुणे हैं। ये सम्यक्त्वके अन्तिम स्थितिकाण्डक उत्कीरणकालके प्राप्त होने पर वही शेष कर्मोके स्थिति-काण्डक उत्कीरणकाल और स्थितिबन्धकालको लेना चाहिये ॥ ३ ॥ उससे इनका उत्कृष्ट काल विशेष अधिक है, क्योकि इन सभीका उत्कृष्ट अपूर्वकरणके प्रथम समयमे प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ उनसे कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टिका काल सख्यातगुणा है, क्योकि इस कालके भीतर सख्यात हजार स्थितिबन्धोका अपसरण देखा जाता है ॥ ५ ॥ उससे सम्यक्त्वका क्षपण होनेका काल सख्यातगुणा है, क्योकि मिथ्यात्व और सम्यड्मिथ्यात्वकी क्षपणा होनेके बाद सम्यक्त्वकी आठ वर्षप्रमाण स्थितिके क्षपण होनेमे इतना काल लगता है ॥ ६ ॥ उससे अनिवृत्तिकरणका काल सख्यातगुणा है, क्योकि अनिवृत्तिकरणके कालके सख्यात बहुभाग जानेपर तथा उसके एक भाग रहने पर सम्यक्त्वकी क्षपणाका प्रारम्भ होता है ॥ ७ ॥ उससे अपूर्वकरणका काल सख्यातगुणा है, क्योकि ऐसा स्वभावसे ही है ॥ ८ ॥ उससे गुणश्रेणिनिक्षेप विशेष अधिक है, क्योकि इसमे कुछ अधिक अनिवृत्तिकरणका काल सम्मिलित है। यह इसलिये है कि अपूर्वकरणके प्रथम समयमे प्रारम्भ हुई गुणश्रेणिरचना अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे कुछ अधिक होती है ॥ ९ ॥

उससे सम्यक्त्वका द्विचरम स्थितिकाडक सख्यातगुणा है। यह अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होता है, फिर भी गुणश्रेणिनिक्षेपके कालसे यह सख्यातगुणा होता है ॥ १० ॥ उससे सम्यक्त्वका अन्तिम स्थितिकाडक सख्यातगुणा है। यह यद्यपि अन्तर्मुहूर्तमात्र है, फिर भी पिछले पदसे सख्यातगुणा है इस विषयमे पहले ही स्पष्टीकरण कर आये हैं ॥ ११ ॥ उससे सम्यक्त्वकी आठ वर्षप्रमाण स्थिति शेष रहनेपर जो स्थितिकाडक होता है वह सख्यातगुणा है। यहाँ गुणकार सख्यात समय है ॥ १२ ॥ उससे जघन्य आबाधा सख्यातगुणी है। यहाँ कृतकृत्यवेदकके प्रथम समयमे बन्धको प्राप्त होनेवाले ज्ञानावरणादि कर्मोकी आबाधा ली गई है ॥ १३ ॥ उससे उत्कृष्ट आबाधा सख्यातगुणी है। यहाँ अपूर्वकरणके प्रथम समयमे बन्धको प्राप्त ज्ञानावरणादि कर्मोकी आबाधा ली गई है ॥ १४ ॥ उससे प्रत्येक समयमे अनुभागकी अपवर्तना करनेवाले जीवके सम्यक्त्वका प्रथम समयमे प्राप्त आठ वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्म सख्यातगुणा है, क्योकि आठ वर्षमे अन्तर्मुहूर्त ही प्राप्त होते हैं ॥ १५ ॥ उससे सम्यक्त्वका असख्यात वर्षप्रमाण अन्तिम स्थितिकाडक असख्यातगुणा है क्योकि यह पल्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण है ॥ १६ ॥ उससे सम्यग्मिथ्यात्व-का असख्यात वर्षप्रमाण अन्तिम स्थितिकाण्डक विशेष अधिक है। यहाँ विशेषका प्रमाण एक आवलि कम आठ वर्ष है ॥ १७ ॥ उससे मिथ्यात्वका क्षय होनेपर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व-का प्रथम स्थितिकाण्डक प्राप्त होता है वह असख्यातगुणा है। कारण यह है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जो अन्तिम स्थितिकाण्डक है उससे द्विचरम स्थितिकाण्डक असख्यातगुणा है। उससे त्रिचरम और चतुचरम आदि स्थितिकाण्डक उत्तरोत्तर असख्यातगुणे है। इस प्रकार सख्यात हजार स्थितिकाण्डक प्रमाण स्थान पीछे जाकर मिथ्यात्वके क्षय होनपर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जो स्थितिकाण्डक प्राप्त होता है वह इन दोनोका प्रथम स्थितिकाण्डक है। इस कारण वह असख्यातगुणा है यह सिद्ध होता है ॥ १८ ॥ उससे मिथ्यात्वकी सत्तावाले जीवके

सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अन्तिम स्थितिकाण्डक असख्यातगुणा है। कारण कि पूर्वमे कहे गये स्थितिकाण्डकसे यह उसमे पहलेका स्थितिकाण्डक है ॥ १९ ॥ उससे मिथ्यात्वका अन्तिम स्थितिकाण्डक विशेष अधिक है। कारण कि इस स्थितिकाण्डकमे मिथ्यात्वका उदयावलि बाह्य पूरा द्रव्य लिया गया है। परन्तु सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उस समय अधस्तन स्थितियोको छोडकर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण उपरिम बहुभागप्रमाण स्थितियोका ग्रहण हुआ है। इस कारण अधस्तन असख्यातवे भाग स्थितियाँ मिथ्यात्वके स्थितिकाण्डकमे सम्मिलित होनेसे वह विशेष अधिक हो गया है ॥ २० ॥

उससे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके असख्यात गुणहानिवाले स्थितिकाण्डकोमेसे प्रथम स्थितिकाण्डक असख्यातगुणा है। कारण कि पूर्वके स्थितिकाण्डकसे सख्यात हजार स्थितिकाडक असख्यातगुणित क्रमसे पीछे जाकर दूरापकृष्टिसज्ञक स्थितिके असख्यात बहुभागको ग्रहणकर यह स्थितिकाण्डक बनता है ॥ २१ ॥ उससे सख्यात हजार स्थितिकाण्डकोमे जो अन्तिम स्थितिकाण्डक है वह सख्यातगुणा है। कारण कि इसमे दूरापकृष्टिप्रमाण स्थितिको छोडकर उपरिम सख्यात बहुभागप्रमाण स्थितिको ग्रहणकर यह काण्डक बना है ॥ २२ ॥ उससे पल्योपमप्रमाण स्थिति सत्कर्मके रहते हुए दूसरा स्थितिकाण्डक सख्यातगुणा है। कारण कि पूर्वके स्थितिकाण्डकसे पश्चादानुपूर्वीके अनुसार सख्यात गुणवृद्धिरूप सख्यात हजार स्थितिकाण्डक पीछे जाकर यह काण्डक उपलब्ध होता है ॥ २३ ॥ उससे जिस स्थितिकाण्डकके समाप्त होनेपर दर्शनमोहनीयका पल्योपमप्रमाण स्थितिसत्कर्म शेष रहता है वह स्थितिकाण्डक सख्यातगुणा है। यद्यपि यह पल्योपमके सख्यातवे भागप्रमाण है, किन्तु पूर्वके स्थितिकाण्डकसे उक्त-सूत्रके अनुसार इसे सख्यातगुणा ही जानना चाहिए। यहाँ गुणकार तत्प्रायोग्य सख्यात है ॥ २४ ॥ उससे अपूर्वकरणमे प्रथम स्थितिकाण्डक सख्यातगुणा है। कारण कि अपूर्वकरणके प्रथम समयमे प्राप्त हुए स्थितिकाण्डकसे विशेष हीन क्रमसे जो कि तत्प्रायोग्य सख्यात अकप्रमाण स्थितिकाण्डक गुणहानिगर्भ सख्यात हजार स्थितिकाण्डकोके व्यतीत होनेपर पूर्वका स्थितिकाण्डक उत्पन्न हुआ है। और इस स्थितिकाण्डकके पूर्व स्थितिकाण्डकसम्बन्धी गुणहानियाँ असिद्ध भी नही हैं, क्योकि अपूर्वकरणके भीतर प्रथम स्थितिकाण्डकसे सख्यातगुणाहीन भी स्थितिकाण्डक होता है। इसलिए पूर्वके स्थितिकाण्डकसे यह स्थितिकाण्डक सख्यातगुणा होता है यह सिद्ध हुआ ॥ २५ ॥

उससे पल्योपमप्रमाण स्थितिके अवशिष्ट रहनेपर होनेवाला प्रथम स्थितिकाण्डक सख्यातगुणा है। कारण कि अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण दोनोमे पल्योपमप्रमाण स्थितिके अवशिष्ट रहनेके पूर्वतक स्थितिकाण्डक पल्योपमके सख्यातवें भागप्रमाण होता है। किन्तु अनिवृत्तिकरणमे पल्योपमप्रमाण स्थितिके अवशिष्ट रहनेपर जो प्रथम स्थितिकाण्डक होता है वह पल्योपमके सख्यात बहुभागप्रमाण होता है। इसलिए पूर्वपदसे यह पद सख्यातगुणा कहा है ॥ २६ ॥ उससे पल्योपमप्रमाण स्थितिसत्त्व विशेष अधिक है, क्योकि पूर्वोक्त प्रथम स्थितिकाण्डकसे जो पल्योपम-का एक भागप्रमाण स्थितिसत्त्व शेष रहा, यह पद उतना अधिक हैं, इसलिए पूर्वोक्त पदसे यह पद विशेष अधिक कहा है ॥ २७ ॥ उससे अपूर्वकरणमे प्रथम उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका विशेष सख्यातगुणा है, क्योकि यह पृथक्त्व सागरोपमप्रमाण है। तात्पर्य यह है कि अपूर्वकरणमे जो जघन्य स्थितिकाण्डक होता है उससे यह स्थितिकाण्डक इतना बडा है। वहाँ जघन्य स्थिति-

काण्डक पल्योपमके सख्यातवें भागप्रमाण होता है, इसलिए पूर्वोक्तपदसे यह पद सख्यातगुणा सिद्ध हुआ ॥ २८ ॥ उससे अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमे प्रविष्ट हुए जीवके दर्शनमोहनीयका स्थितिसत्त्व सख्यातगुणा है । कारण कि वहाँपर दर्शनमोहनीयकी स्थिति सौ सागरोपम पृथक्त्व-प्रमाण पाई जाती है, इसलिए पूर्वपदसे यह पद सख्यातगुणा हो जाता है ॥ २९ ॥ उससे दर्शन-मोहनीयको छोडकर शेष कर्मोका जघन्य स्थितिबन्ध सख्यातगुणा है, क्योकि कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमे जो उक्त कर्मोका स्थितिबन्ध होता है वह अन्त कोडाकोडीप्रमाण होता है जो पूर्वोक्तपदसे सख्यातगुणा होता है, इसलिए पूर्व पदसे यह पद सख्यातगुणा कहा गया है ॥ ३० ॥ उससे उन्ही कर्मोका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सख्यातगुणा है, क्योकि इसमे अपूर्वकरणके प्रथम समयमे होनेवाला स्थितिबन्ध ग्रहण किया गया है, इसलिए पूर्वपदसे यह पद सख्यातगुणा है यह स्वाभाविक ही है ॥ ३१ ॥ उससे दर्शनमोहनीयको छोडकर शेष कर्मोका जघन्य स्थिति-सत्त्व सख्यातगुणा है, क्योकि चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके सिवाय अन्यत्र सम्यग्दृष्टिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे भी जघन्य स्थितिसत्त्व इसी प्रकार प्राप्त होता है यह नियम है, इसलिए पूर्वपदसे इस पदको सख्यातगुणा कहा है ॥ ३२ ॥ उससे उन्ही कर्मोका उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व सख्यातगुणा है, क्योकि अपूर्वकरणके प्रथम समयमे उक्त कर्मो का उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व अन्त कोडाकोडीप्रमाण पाये जानेका नियम इसलिए है कि अभी उसका घात नही हुआ है, इसीलिए पूर्वोक्त पदसे इस पदको सख्यातगुणा कहा है ॥ ३३ ॥ यह उक्त तेतीस पदोका अल्पबहुत्व है ।

सत्तण्हं पयडीणं खयादु खइय तु होदि सम्मत्त ।
मेरु व णिप्पकप सुणिम्मलं अक्खयमणंत ॥ १६४ ॥

सप्ताना प्रकृतीना क्षयात् क्षायिकं तु भवति सम्य ।
मेरुरिव निष्प्रकपं सुनिर्मलमक्षयमनंतम् ॥ १६४ ॥

दंसणमोहे खविदे सिज्झदि तत्थेव तदियतुरियभवे ।
णादिक्कदि तुरियभवे ण विणस्सदि सेससम्मेव ॥ १६५ ॥

दर्शनमोहे क्षपिते सिद्धचति तृतीयतुर्यभवे ।
नातिक्रामति तुर्यभवं न विनश्यति शेषसम्यगिव ॥ १६५ ॥

सत्तण्ह पयडीण खयादु अवर तु खइयलद्धी दु ।
उक्कस्सखइयलद्धी घाइचउक्कखएण हवे ॥ १६६ ॥

सप्ताना प्रकृतीनां क्षयादवरा तु क्षायिकलब्धिस्तु ।
उत्कृष्टक्षायिकलब्धिर्घातिचतुष्कक्षयेण भवेत् ॥ १६६ ॥

[1]उवणेउ मंगल वो भवियजणा जिणवरस्स कमकमलजुयं ।
जसकुलिसकलससत्थियससंकसंखकुसादिलक्खणभरिय ॥ १६७ ॥

---

१ रायचन्द्रजैनशास्त्रमालीयमुद्रितपुस्तके तथा सम्यग्ज्ञानचन्द्रिकाया च टीकाया सम्मे असगवस्सिय इत्यादिषट्पञ्चाशदधिकशततमा 'उवणेउ मगल वो' इत्यादि सप्तपष्टयधिकशततमा च गाथा नोपलब्धे ।

उपनयतु मगलं वो भविकजनान् जिनवरस्य क्रमकमलयुगं ।
झषकुलिशकलशशविथकशशाकशंखाकुशादिलक्षणभरित ॥ १६७ ॥

स० टी०—सत्तह्णमित्यादिगाथात्रयस्यार्थं सुगम, किन्तु निष्प्रकम्प निश्चल सुनिर्मल अतिशयेन शङ्कादिमलरहित अक्षय गाढ अहीनशक्तिकत्वेन शिथिलत्वाभावात् । अनन्त—अपर्यवसान तुर्यभव भोगभूमि-भवापेक्षया । जघन्यक्षायिकलब्धसयतसम्यग्दृष्टौ उत्कृष्टक्षायिकलब्धि परमात्मनि भवति ॥ १६८—१६७ ॥ एव दर्शनमोहक्षपणाटिप्पण ।

स० च०—अनतानुबधी चतुष्क दर्शनमोहत्रिक इन सात प्रकृतिनिका क्षयतै क्षायिक सम्यक्त्व हो है सो निष्कप कहिए निश्चल है । सुनिर्मल कहिए शकादि मलकरि रहित है । अक्षय कहिए शिथिलताके अभावतै गाढा है । अनन्त कहिए अत रहित है ॥ १६४ ॥

स० च०—दर्शनमोहका क्षय होतै तिस ही भवविषै वा तीसरा भवविषै वा मनुष्य तिर्यचका पूर्वै आयु बाध्या होइ तौ भोगभूमि अपेक्षा चौथा भवविषै सिद्ध पद पावै । चौथा भवकौ उलघै नाही । बहुरि औपशमिक क्षायोपशमिक सम्यक्त्ववत् यहु नाशकौ प्राप्त न हो है ॥ १६५ ॥

स० च०—सात प्रकृतिनिके क्षयतै असयत सम्यग्दृष्टीकै क्षायिक सम्यक्त्ववत् जघन्य क्षायिक लब्धि हो है । बहुरि च्यारि घातिया कर्मनिके क्षयतै परमात्माकै केवलज्ञानादिरूप क्षायिक लब्धि हो है ॥ १६६ ॥

विशेष—१६७ नवरकी गाथा भाषाटीकामे नही है । उसका अर्थ यह है कि—मत्स्य, वज्र कलश, शख आदि नाना शुभलक्षणोसे सुशोभित जिनेंद्र भगवान्के चरण कमल भव्य लोगोको मगल प्रदान करे ॥

इति क्षायिकसम्यक्त्वप्ररूपणं समाप्त ॥



चारित्रलब्धि- धि ार: ॥ ३ ॥

तस्मिन् देशचारित्रलब्धिः

अथ दर्शनमोहक्षपणाविधानप्ररूपणानन्तर देशसकलसयमलब्धिप्ररूपणार्थमिद सूत्रमाह—

दुविहा चरित्तलद्धी देसे सयले य देसचारित्तं[1] ।
मिच्छो अयदो सयलं ते वि व देसो य लब्भेई ॥ १६८ ॥

द्विधा चारित्रलब्धि देशे सकले च देशचारित्रम् ।
मिथ्योऽयतः सकलं तावपि च देशश्च लभते ॥ १६८ ॥

स० टी०—चारित्रस्य लब्धि प्राप्तिः चारित्रमेव वा लब्धि, सा द्विविधा देशेन साकल्येन च । तत्र देशचारित्र मिथ्यादृष्टिरसयतसम्यग्दृष्टिश्च लभते । सकलचारित्र तौ च देशसयतश्च लभन्ते ॥ १६८ ॥

अब देशसयमलब्धि और सकलसयमलब्धिका कथन करनेके लिए उक्त सूत्रका अर्थ कहते हैं—

स० च०—चारित्रकी लब्धि कहिए प्राप्ति सो चारित्र देश सकल भेदतैं दोय प्रकार है। तहा देश चारित्रकौं मिथ्यादृष्टी वा असयतसम्यग्दृष्टि प्राप्त हो है। अर सकलचारित्रकौं ते दोऊ अर देशसयत प्राप्त हो है ॥ १६८ ॥

विशेष—चारित्रलब्धिके दो भेद है—देशचारित्र और सकलचारित्र। इनका क्रमसे सयमासयमलब्धि और सयमलब्धि भी नाम है। कषायप्राभृतमे इन दोनोका निरूपण करनेवाली मात्र एक गाथा[2] आई है। गाथाका भाव यह है—सयमासयमलब्धि और चारित्रलब्धि इनकी उत्तरोत्तर वृद्धि अथवा वृद्धि-हानि तथा पूर्वबद्ध कर्मोकी उपशामना किस प्रकार होती है यह जानने योग्य है। इस गाथाकी व्याख्या करते हुए जयधवलामे सयमासयमलब्धिका स्वरूप इस प्रकार बतलाया है—देशचारित्रका घात करनेवाले अप्रत्याख्यानावरण कषायोके उदयाभावसे हिंसादि दोषोके एकदेश विरतिस्वरूप अणुव्रतोको प्राप्त होनेवाले जीवके जो विशुद्धिरूप परिणाम होता है उसे देशचारित्र या सयमासयमलब्धि कहते हैं। अप्रत्याख्यानावरण कषाय देशसयमकी प्रतिबन्धक है, अत देशसयमके कालमे उसकी अनुदयलक्षण उपशामना रहती है। प्रत्याख्यानावरण, सज्वलन और नौ नोकषायोका उदय होने पर भी वहाँ उनका उदय सर्वघाति न होनेसे उनका उदय रहते हुए भी देशसयमके होनेमे कोई बाधा नही आती। कषायप्राभृतकी उक्त गाथाके तीसरे पादमे 'वड्ढावड्ढी' पद आया है। जयधवलामे उसके दो अर्थ किये हैं। प्रथम अर्थ है कि

---

१ का सजमासजमलद्धी णाम हिंसादिदोसाणमेकदेसविरहलक्खणाणि अणुव्वयाणि देसचारित्तघादीणमपच्चक्खणकसायाणमुदयाभावेण पडिवज्जमाणस्स जीवस्स जो विसुद्धपरिणामो सो सजमासजमलद्धि त्ति भण्णदे। जयध०, पु० १३, पृ० १०७।

२ लद्धी सजमासजमस्स वड्ढी तहा चरित्तस्स । वड्ढावड्ढी उवसामणा य तह पुव्वबद्धाण ।

सयमासंयमलब्धि और सयमलब्धिके प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्तकाल तक प्रति समय अनन्त-गुणित श्रेणिरूपसे विशुद्धिरूप परिणामोमे वृद्धि होती रहती है। दूसरा अर्थ यह है कि 'वड्ढावड्ढी' पदका पदच्छेद करने पर वड्ढि और अवड्ढि ऐसे दो पद निष्पन्न होते हैं। जिसमे आये हुए 'अवड्ढि' पदसे यह अर्थ फलित होता है कि जब जीव सयमलब्धि और सयमासयम लब्धिसे गिरनेके सन्मुख होता है तब सक्लेशरूप परिणामोके कारण प्रति समय विशुद्धिरूप परिणामोकी अनन्त-गुणी हानि होने लगती है। वड्ढी शब्दका अर्थ पूर्ववत् है। इस सम्बन्धमे अन्य स्पष्टीकरण यथा-वसर आगे करेंगे।

तत्र मिथ्यादृष्टर्देशसयमलब्धौ सामग्रीमाह—

अतोमुहुत्तकाले देसवदी होहिदि त्ति मिच्छो हु।
सोसरणो[1] सुज्झतो करण पि करेदि सगजोग्ग ॥ १६९ ॥

अन्तर्मुहूर्तकाले देशव्रती भविष्यतीति मिथ्यो हि।
सापसरण शुध्यन् करणान्यपि करोति स्वकयोग्यम् ॥ १६९ ॥

स० टी०—यस्मात्परमन्तमुहूर्तकाल नीत्वा मिथ्यादृष्टिर्देशव्रती भविष्यति तस्मिन् काले सुविशुद्ध-मिथ्यादृष्टि प्रतिसमयमनन्तगुणविशुद्धया वर्धमान आयुर्वर्जितकर्मणा वन्धसत्त्वयोरन्त कोटीकोटिमात्रावशेष-करणेन स्थित्यपसरणमशुभकर्मणामनन्तैकभागमात्रावशेषकरणेनानुभागापसरण च कुर्वन् स्वयोग्य करणपरिणाम कुरुते ॥ १६९ ॥

मिथ्यादृष्टिके देशसयमकी प्राप्तिके पूर्व जो सामग्री होती है उसका स्पष्टीकरण—

स० च०—अतर्मुहूर्त काल पीछै जो देशव्रती होसी सो मिथ्यादृष्टि जीव समय समय अनतगुणी विशुद्धताकरि वर्धमान होतौ आयु विना सात कर्मनिका बध वा सत्व अत कोटा-कोटीमात्र अवशेष करनेकरि तौ स्थिति बधापसरणकौ करता अपने योग्य अर अशुभ कर्मनिका अनुभाग अनतवा भागमात्र करनेकरि अनुभागबधापसरणकौ करता अपने करण योग्य परिणामकौ करै है ॥ १६९ ॥

विशेष—जो मिथ्यादृष्टि जीव अन्तर्मुहूर्तकालके भीतर सयमासयमको प्राप्त करता है वह जैसे अशुभकर्मों के अनुभागबन्धको द्विस्थानीय करता है वैसे ही उन कर्मों के सत्त्वको भी द्विस्थानीय करता है इतना यहाँ अशुभकर्मो के विषयमे विशेष समझना चाहिए।

तत्र मिथ्यादृष्टेर्देशसयमलब्धौ सम्यक्त्वविभागेन करणपरिणामविभागप्रदर्शनार्थमिदमाह—

मिच्छो देसचरित्तं उवसमसम्मेण गिण्हमाणो हु।
सम्मत्तुप्पत्तिं वा तिकरणचरिमम्हि गेण्हदि हु[2] ॥ १७० ॥

१ सजमासजममतोमुहुत्तेण लभिहिदि त्ति तदो प्पहुडि सव्वो जीवो आउगवज्जाण ट्ठिदिबध ट्ठिदि-सतकम्म च अतोकोडाकोडीए करेदि, सुभाण कम्माणमणुभागबधमणुभागसतकम्म च चउट्ठाणिय करेदि, असुभाण कम्माणमणुभागबधमणुभागसतकम्म च दुट्ठाणिय करेदि।

कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १२४।

२ उवसमसम्मत्तेण सह सजमासजम पडिवज्जमाणस्स तिण्ह पि करणाण सभवो अत्थि। जयध०, पु० १३, पृ० ११३।

चारित्रलब्धि- धि ार: ॥ ३ ॥

तस्मिन् देशचारित्रलब्धिः

अथ दर्शनमोहक्षपणाविधानप्ररूपणानन्तर देशसकलसयमलब्धिप्ररूपणार्थमिद सूत्रमाह—

दुविहा चरित्तलद्धी देसे सयले य देसचारित्त[1] ।
मिच्छो अयदो सयलं ते वि व देसो य लब्भेई ॥ १६८ ॥

द्विधा चारित्रलब्धि देशे सकले च देशचारित्रम् ।
मिथ्योऽयतः सकलं तावपि च देशश्च लभते ॥ १६८ ॥

स० टी०—चारित्रस्य लब्धि प्राप्तिः चारित्रमेव वा लब्धि , सा द्विविधा देशेन साकल्येन च । तत्र देशचारित्र मिथ्यादृष्टिरसयतसम्यग्दृष्टिश्च लभते । सकलचारित्र तौ च देशसयतश्च लभन्ते ॥ १६८ ॥

अब देशसयमलब्धि और सकलसयमलब्धिका कथन करनेके लिए उक्त सूत्रका अर्थ कहते हैं—

स० च०—चारित्रकी लब्धि कहिए प्राप्ति सो चारित्र देश सकल भेदतैं दोय प्रकार है। तहा देश चारित्रकौ मिथ्यादृष्टी वा असयतसम्यग्दृष्टि प्राप्त हो है। अर सकलचारित्रकौ ते दोऊ अर देशसयत प्राप्त हो है ॥ १६८ ॥

विशेष—चारित्रलब्धिके दो भेद है—देशचारित्र और सकलचारित्र। इनका क्रमसे सयमासयमलब्धि और सयमलब्धि भी नाम है। कषायप्राभृतमे इन दोनोका निरूपण करनेवाली मात्र एक गाथा[2] आई है। गाथाका भाव यह है—सयमासयमलब्धि और चारित्रलब्धि इनकी उत्तरोत्तर वृद्धि अथवा वृद्धि-हानि तथा पूर्वबद्ध कर्मोंकी उपशामना किस प्रकार होती है यह जानने योग्य है। इस गाथाकी व्याख्या करते हुए जयधवलामे सयमासयमलब्धिका स्वरूप इस प्रकार बतलाया है—देशचारित्रका घात करनेवाले अप्रत्याख्यानावरण कषायोके उदयाभावसे हिंसादि दोषोके एकदेश विरतिस्वरूप अणुव्रतोको प्राप्त होनेवाले जीवके जो विशुद्धिरूप परिणाम होता है उसे देशचारित्र या सयमासयमलब्धि कहते है। अप्रत्याख्यानावरण कषाय देशसयमकी प्रतिबन्धक है, अत देशसयमके कालमे उसकी अनुदयलक्षण उपशामना रहती है। प्रत्याख्यानावरण, सज्वलन और नौ नोकषायोका उदय होने पर भी वहाँ उनका उदय सर्वघाति न होनेसे उनका उदय रहते हुए भी देशसयमके होनेमे कोई बाधा नही आती। कषायप्राभृतकी उक्त गाथाके तीसरे पादमे 'वड्ढावड्ढी' पद आया है। जयधवलामे उसके दो अर्थ किये है। प्रथम अर्थ है कि

---

१ का सजमासजमलद्धी णाम हिंसादिदोसाणमेकदेसविरहलक्खणाणि अणुव्वयाणि देसचारित्तघादीणमपच्चक्खणकसायाणमुदयाभावेण पडिवज्जमाणस्स जीवस्स जो विसुद्धपरिणामो सो सजमासजमलद्धि त्ति भण्णदे। जयध०, पु० १३, पृ० १०७।

२ लद्धी सजमासजमस्स वड्ढी तहा चरित्तस्स। वड्ढावड्ढी उवसामणा य तह पुव्वबद्धाण।

सयमासंयमलब्धि और सयमलब्धिके प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्तकाल तक प्रति समय अनन्त-गुणित श्रेणिरूपसे विशुद्धिरूप परिणामोमे वृद्धि होती रहती है। दूसरा अर्थ यह है कि 'वड्ढावड्ढी' पदका पदच्छेद करने पर वड्ढि और अवड्ढि ऐसे दो पद निष्पन्न होते हैं। जिसमे आये हुए 'अवड्ढि' पदसे यह अर्थ फलित होता है कि जब जीव सयमलब्धि और सयमासयम लब्धिसे गिरनेके सन्मुख होता है तब सक्लेशरूप परिणामोके कारण प्रति समय विशुद्धिरूप परिणामोकी अनन्त-गुणी हानि होने लगती है। वड्ढी शब्दका अर्थ पूर्ववत् है। इस सम्बन्धमे अन्य स्पष्टीकरण यथा-वसर आगे करेंगे।

तत्र मिथ्यादृष्टेर्देशसयमलब्धौ सामग्रीमाह—

अंतोमुहुत्तकाले देसवदी होहिदि त्ति मिच्छो हु।
सोसरणो[1] सुज्झतो करणं पि करेदि सगजोग्ग ॥ १६९ ॥

अन्तर्मुहूर्तकाले देशव्रती भविष्यतीति मिथ्यो हि।
सापसरण शुध्यन् करणान्यपि करोति स्वकयोग्यम् ॥ १६९ ॥

स० टी०—यस्मात्परमन्तमुहूर्तकाल नीत्वा मिथ्यादृष्टिर्देशव्रती भविष्यति तस्मिन् काले सुविशुद्ध-मिथ्यादृष्टि प्रतिसमयमनन्तगुणविशुद्धया वर्धमान आयुर्वर्जितकर्मणा वन्धसत्त्वयोरन्त कोटीकोटिमात्रावशेष-करणेन स्थित्यपसरणमशुभकर्मणामनन्तैकभागमात्रावशेषकरणेनानुभागापसरण च कुर्वन् स्वयोग्य करणपरिणाम कुरुते ॥ १६९ ॥

मिथ्यादृष्टिके देशसयमकी प्राप्तिके पूर्व जो सामग्री होती है उसका स्पष्टीकरण—

स० च०—अतर्मुहूर्त काल पीछै जो देशव्रती होसी सो मिथ्यादृष्टि जीव समय समय अनतगुणी विशुद्धताकरि वर्धमान होतौ आयु विना सात कर्मनिका बध वा सत्व अत कोटा-कोटीमात्र अवशेष करनेकरि तौ स्थिति बधापसरणकौ करता अपने योग्य अर अशुभ कर्मनिका अनुभाग अनतवा भागमात्र करनेकरि अनुभागबधापसरणकौं करता अपने करण योग्य परिणामकौ करै है ॥ १६९ ॥

विशेष—जो मिथ्यादृष्टि जीव अन्तर्मुहूर्तकालके भीतर सयमासयमको प्राप्त करता है वह जैसे अशुभकर्मो के अनुभागबन्धको द्विस्थानीय करता है वैसे ही उन कर्मो के सत्त्वको भी द्विस्थानीय करता है इतना यहाँ अशुभकर्मो के विषयमे विशेष समझना चाहिए।

तत्र मिथ्यादृष्टेर्देशसयमलब्धौ सम्यक्त्वविभागेन करणपरिणामविभागप्रदर्शनार्थमिदमाह—

मिच्छो देसचरित्तं उवसमसम्मेण गिण्हमाणो हु।
सम्मत्तुप्पत्तिं वा तिकरणचरिमम्हि गेण्हदि हु[2] ॥ १७० ॥

---

१ सजमासजममतोमुहुत्तेण लभिहिदि त्ति तदो प्पहुडि सव्वो जीवो आउगवज्जाण ट्ठिदिवध ट्ठिदि-सतकम्म च अ तोकोडाकोडीए करेदि, सुभाण कम्माणमणुभागवधमणुभागसतकम्म च चउट्ठाणिय करेदि, असुभाण कम्माणमणुभागवधमणुभागसतकम्म च दुट्ठाणिय करेदि। कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १२४।

२ उवसमसम्मत्तेण सह सजमासजम पडिवज्जमाणस्स तिण्ह पि करणाण सभवो अत्थि। जयध०, पु० १३, पृ० ११३।

मिथ्यो देशचारित्रं उपशमसम्येन गृह्णन् हि।
सम्यक्त्वोत्पत्तिमिव त्रिकरणचरमे गृह्णाति हि ॥ १७० ॥

स० टी०—यदानादिमिथ्यादृष्टिर्वा सादिमिथ्यादृष्टिर्वा जीव औपशमिकसम्यक्त्वेन सह देशचारित्र गृह्णान दर्शनमोहोपशमविधानेन प्रागुक्तप्रकारेण सम्यक्त्वोत्पत्तौ त्रिकरणचरमसमये देशचारित्र गृह्णाति । यथा दर्शनमोहोपशमने प्रकृतिवन्धापसरण स्थितिवन्धापसरण प्रतिसमयमनन्तगुणविशुद्धिवृद्धि अप्रशस्तप्रकृतीना प्रतिसमयमनन्तगुणहान्यानुभागवन्ध अध प्रवृत्तादिकरणपरिणामा स्थितिकाण्डकघातादयश्च ये कार्यविशेषा ते सर्वेऽपि औपशमिकसम्यक्त्वचारित्रयोर्युगपद्ग्रहणेऽन्यून वक्तव्या विशेषाभावादित्यभिप्राय ॥ १७० ॥

उपशम सम्यक्त्वके साथ देशसयमको ग्रहण करनेवाला जीव क्या कार्य करता है इसका निर्देश—

स० चं०—अनादि वा सादि मिथ्यादृष्टी जीव उपशम सम्यक्त्व सहित देश चारित्रकौ ग्रहै है सो दर्शनमोहका उपशम विधान जैसैं पूर्वैं वर्णन कीया है तैसै ही विधान करि तीन करणनिका अत समयविषै देशचारित्रकौ ग्रहै है । प्रकृतिवधापसरण स्थितिवधापसरण आदि जे कार्य विशेष तहा कहे है ते सर्व हो हैं विशेष किछू नाही ॥ १७० ॥

अथ सादिमिथ्यादृष्टेर्वेदकसम्यक्त्वेन सह देशचारित्रग्रहणे सभवद्विशेषप्रतिपादनार्थमिद गाथाद्वयमाह—

मिच्छो देसचरित्तं वेदगसम्मेण गेण्हमाणो हु ।
दुकरणचरिमे गेण्हदि गुणसेढी णत्थि तक्करणे[1] ॥ १७१ ॥

सम्मत्तुप्पत्तिं वा थोवबहुत्तं च होदि करणाण ।
ठिदिखडसहस्सगदे अपुव्वकरण समप्पदि हु[2] ॥ १७२ ॥

मिथ्यो देशचारित्रं वेदकसम्येन गृह्णन् हि।
द्विकरणचरमे गृह्णाति गुणश्रेणी नास्ति तत्करणे ॥ १७१ ॥
सम्यक्त्वोत्पत्तिमिव स्तोकबहुत्वं च भवति करणानाम् ।
स्थितिखंडसहस्रगतं अपूर्वकरणं समाप्यते हि ॥ १७२ ॥

स० टी०—वेदकसम्यक्त्वयोग्य सादिमिथ्यादृष्टिर्जीवो वेदकसम्यक्त्वेन सह देशचारित्र गृह्णान अध-प्रवृत्तापूर्वकरणपरिणामद्वय प्रतिपद्यमानो गुणश्रेणिवर्जितानि स्थितिखण्डादीनि सर्वाण्यपि कार्याणि कुर्वन् अपूर्वकरणचरमसमये वेदकसम्यक्त्व देशचारित्र च युगपद् गृह्णाति तत्रानिवृत्तिकरणपरिणाम विनापि वेदक-सम्यक्त्वदेशचारित्रप्राप्तिसभवात् । अध प्रवृत्तकरणकालात् सख्यातगुणहीनोऽपूर्वकरणकाल इत्यनयो करण-परिणामयो काल स्तोकबहुत्वमन्यान्यपि कार्याणि यथा सम्यक्त्वोत्पत्तौ प्रतिपादितानि तथात्रापि वेदित-

१ गुणसेढी च णत्थि । कसाय० चू०, पृ० १२१ । किं कारण ? ण ताव सम्मत्तुप्पत्तिणिवधणगुण-सेढीए एत्थ सभवो, पढमसम्मत्तग्गहणादो अण्णत्थ तदणुवणभादो । ण सजमासजमपरिणामणिवधणगुणसेढीए वि अत्थि सभवो, अलद्धप्पसरूवस्स सजमासजमगुणस्स गुणसेढिणिज्जराए वावारविरोहादो । जयध०, पृ० १३, पृ० १२१ ।

२ एव ट्ठिदिखडयसहस्सेसु गदेसु अपुव्वकरणद्धा समत्ता भवदि कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १२२ ।

व्यानीत्यर्थ । एवमपूर्वकरणकालाभ्यन्तरे सख्यातसहस्रेपु स्थितिखण्डेपु गतेपु अपूर्वकरणकाल परिसमाप्यते । एवमसयतसम्यग्दृष्टिरप्यध प्रवृत्तापूर्वकरणद्वयकालचरमसमये देशचारित्र प्रतिपद्यते तस्य गुणश्रेणिविनावशिष्ट-सर्वकार्याणि अपूर्वकरणचरमसमयपर्यन्तमविशेषेण ज्ञातव्यानि । मिथ्यादृष्टिग्रहणमुपलक्षण तेन व्याख्यानतो विशेपप्रतिपत्तिरिति न्यायमवलम्ब्यासयतवेदकसम्यग्दृष्टेरपि देशचारित्रग्रहणक्रमो दर्शित । सिद्धान्तेऽपि तथैव व्याख्यानात । अत्रापूर्वकरणकाले कुतो गुणश्रेण्यभाव ? इति चेत्—उपशमसम्यक्त्वाभावात्तन्निबन्धनगुणश्रेण्य-भाव । देशसयमस्याद्याप्यग्रहणात् तन्निमित्तकगुणश्रेणेरप्यभाव वेदकसम्यक्त्वस्य च गुणश्रेणिहेतुत्वाभावात् इति ब्रूमहे । अनिवृत्तिकरणपरिणाम विना कथ देशचारित्रप्राप्तिरित्यपि नाशङ्कनीय, कर्मणा सर्वोपशमनविधाने निर्मूलक्षयविधाने चानिवृत्तिकरणपरिणामस्य व्यापारो न क्षयोपशमविधाने इति प्रवचने प्रतिपादितत्वात् ॥ १७१–१७२ ॥

सादि मिथ्यादृष्टि जीवके वेदक सम्यक्त्वके साथ देशसयमको ग्रहण करते समय जो विशेषता होती है उसका निर्देश—

स० च०—सादि मिथ्यादृष्टी जीव वेदक सम्यक्त्व सहित देशचारित्रको ग्रहण करै ताकैं अध करण अपूर्वकरण ए दोय ही करण होइ । तिनविषै गुणश्रेणि निर्जरा न हो है, अन्य स्थिति खण्डादिक सर्व कार्य हो है सो अपूर्वकरणका अन्त समयविषै युगपत् वेदक सम्यक्त्व अर देश चारित्रको ग्रहै है । जातै अनिवृत्तिकरण विना ही इनकी प्राप्ति सम्भवै है । तहाँ प्रथमोपशम सम्यक्त्वका उत्पत्तिवत् करणनिका अल्पबहुत्व है तातै इहाँ अध करणकालतै अपूर्वकरणका काल सख्यातवें भाग प्रमाण है । बहुरि अपूर्वकरणका कालविषै सख्यात हजार स्थितिखण्ड भए अपूर्वकरणका काल समाप्त हो है । ऐसै ही असयत वेदक सम्यग्दृष्टि भी दोय करणका अन्त समयविषै देशचारित्रको प्राप्त हो है । मिथ्यादृष्टि ही का व्याख्यानतै सिद्धान्तके अनुसारि असयतका भी ग्रहण करना । इहाँ उपशम सम्यक्त्वका तौ अभाव तातै तिस सम्बन्धी गुणश्रेणि नाही अर देशसयतका अब ताईं ग्रहण भया नाही तातै इहा अपूर्वकरणविषै गुणश्रेणिका अभाव कह्या है । बहुरि कर्मनिका उपशम वा क्षय विधान ही विषैं अनिवृत्तिकरण हो है । क्षयोपशम-विषै होता नाही तातै अनिवृत्तिकरण न कह्या ऐसा जानना ॥ १७१–१७२ ॥

अथ देशसयमकालप्राप्तितदानीतनगुणश्रेणिकरणप्रतिपादनार्थमाह—

से काले देसवदी असखसमयप्पबद्धमाहरियं ।
उदयावलिस्स बाहिं गुणसेढीमवट्ठिद कुणदि[1],[2] ॥ १७३ ॥

तस्मिन् काले देशव्रती असंख्यसमयप्रबद्धमाहृत्य ।
उदयावलेर्बाह्य गुणश्रेणीमवस्थिता करोति ॥ १७३ ॥

स० टी०—अपूर्वकरणचरमसमयादनन्तरसमये जीवो देशव्रती भूत्वा आयुर्वर्जितकर्मणा सत्त्वद्रव्यात्—

१ तदो से काले पढमसमयसजदासजदो जादो । कसाय० चू० जयध० पु० १३, पृ० १२२ । पुव्विल्लमसजमपज्जाय छड्डिदूण देससजमपज्जाएण एसो जीवो करणादिलद्धिवसेण परिणदो त्ति भणिद होइ । जयध० पु० १३, पृ० १३३ ।

२ असखेज्जे समयपबद्धे ओकड्डियूण गुणसेढीए उदयावलियबाहिरे रचेदि । गुणसेढिणिक्खेवो अवट्ठिदगुणसेढी तत्तिगो चेव । कसाय० चू० जयध० पु० १३, पृ० १२४–१२५ ।

मिथ्यो देशचारित्रं उपशमसम्येन गृह्लन् हि।
सम्यक्त्वोत्पत्तिमिव त्रिकरणचरमे गृह्लाति हि ॥ १७० ॥

स० टी०—यदानादिमिथ्यादृष्टिर्वा सादिमिथ्यादृष्टिर्वा जीव औपशमिकसम्यक्त्वेन सह देशचारित्र गृह्लान दर्शनमोहोपशमविधानेन प्रागुक्तप्रकारेण सम्यक्त्वोत्पत्तौ त्रिकरणचरमसमये देशचारित्र गृह्लाति । यथा दर्शनमोहोपशमने प्रकृतिवन्धापसरण स्थितिवन्धापसरण प्रतिसमयमनन्तगुणविशुद्धिवृद्धि अप्रशस्तप्रकृतीना प्रतिसमयमनन्तगुणहान्यानुभागवन्ध अध प्रवृत्तादिकरणपरिणामा स्थितिकाण्डकघातादयश्च ये कार्यविशेषा ते सर्वेऽपि औपशमिकसम्यक्त्वचारित्रयोर्युगपद्ग्रहणेऽन्यून वक्तव्या विशेषाभावादित्यभिप्राय ॥ १७० ॥

उपशम सम्यक्त्वके साथ देशसयमको ग्रहण करनेवाला जीव क्या कार्य करता है इसका निर्देश—

स० च०—अनादि वा सादि मिथ्यादृष्टी जीव उपशम सम्यक्त्व सहित देश चारित्रकौं ग्रहै है सो दर्शनमोहका उपशम विधान जैसैं पूर्वै वर्णन कीया है तैसै ही विधान करि तीन करणनिका अत समयविषै देशचारित्रकौ ग्रहै है। प्रकृतिबधापसरण स्थितिबधापसरण आदि जे कार्य विशेष तहा कहे है ते सर्व हो हैं विशेष किछू नाही ॥ १७० ॥

अथ सादिमिथ्यादृष्टेर्वेदकसम्यक्त्वेन सह देशचारित्रग्रहणे सभवद्विशेषप्रतिपादनार्थमिद गाथाद्वयमाह—

मिच्छो देसचरित्त वेदगसम्मेण गेण्हमाणो हु ।
दुकरणचरिमे गेण्हदि गुणसेढी णत्थि तक्करणे[1] ॥ १७१ ॥

सम्मत्तुप्पत्तिं वा थोवबहुत्तं च होंदि करणाण ।
ठिदिखडसहस्सगदे अपुव्वकरण समप्पदि हु[2] ॥ १७२ ॥

मिथ्यो देशचारित्रं वेदकसम्येन गृह्लन् हि।
द्विकरणचरमे गृह्लाति गुणश्रेणी नास्ति तत्करणे ॥ १७१ ॥
सम्यक्त्वोत्पत्तिमिव स्तोकबहुत्वं च भवति करणानाम् ।
स्थितिखंडसहस्रगतं अपूर्वकरणं समाप्यते हि ॥ १७२ ॥

स० टी०—वेदकसम्यक्त्वयोग्य सादिमिथ्यादृष्टिर्जीवो वेदकसम्यक्त्वेन सह देशचारित्र गृह्लान अध-प्रवृत्तापूर्वकरणपरिणामद्वय प्रतिपद्यमानो गुणश्रेणिवर्जितानि स्थितिखण्डादीनि सर्वाण्यपि कार्याणि कुर्वन् अपूर्वकरणचरमसमये वेदकसम्यक्त्व देशचारित्र च युगपद् गृह्लाति तत्रानिवृत्तिकरणपरिणाम विनापि वेदक-सम्यक्त्वदेशचारित्रप्राप्तिसभवात् । अध प्रवृत्तकरणकालात् सख्यातगुणहीनोऽपूर्वकरणकाल इत्यनयो करण-परिणामयो काल स्तोकबहुत्वमन्यान्यपि कार्याणि यथा सम्यक्त्वोत्पत्तौ प्रतिपादितानि तथात्रापि वेदित-

१ गुणसेढी च णत्थि । कसाय० चू०, पृ० १२१ । किं कारण ? ण ताव सम्मत्तुप्पत्तिणिबधणगुण-सेढीए एत्थ सभवो, पढमसम्मत्तग्गहणादो अण्णत्थ तदणुवलभादो । ण सजमासजमपरिणामणिबधणगुणसेढीए वि एत्थि सभवो, अलद्धप्पसरूवस्स सजमासजमगुणस्स गुणसेढिणिज्जराए वावारविरोहादो । जयध०, पृ० १३, पृ० १२१ ।

२ एव ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु गदेसु अपुव्वकरणद्धा समत्ताभवदि कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १२२ ।

व्यानीत्यर्थ । एवमपूर्वकरणकालाभ्यन्तरे सख्यातसहस्रेषु स्थितिखण्डेषु गतेषु अपूर्वकरणकाल परिसमाप्यते । एवमसयतसम्यग्दृष्टिरप्यध प्रवृत्तापूर्वकरणद्वयकालचरमसमये देशचारित्र प्रतिपद्यते तस्य गुणश्रेणिविनावशिष्ट-सर्वकार्याणि अपूर्वकरणचरमसमयपर्यन्तमविशेषेण ज्ञातव्यानि । मिथ्यादृष्टिग्रहणमुपलक्षण तेन व्याख्यानतो विशेषप्रतिपत्तिरिति न्यायमवलम्ब्यासयतवेदकसम्यग्दृष्टेरपि देशचारित्रग्रहणक्रमो दर्शित । सिद्धान्तेऽपि तथैव व्याख्यानात् । अत्रापूर्वकरणकाले कुतो गुणश्रेण्यभाव ? इति चेत्—उपशमसम्यक्त्वाभावात्तन्निबन्धनगुणश्रेण्य-भाव । देशसयमस्याद्याप्यग्रहणात् तन्निमित्तकगुणश्रेणेरप्यभाव वेदकसम्यक्त्वस्य च गुणश्रेणिहेतुत्वाभावात् इति ब्रूमहे । अनिवृत्तिकरणपरिणाम विना कथ देशचारित्रप्राप्तिरित्यपि नाशङ्कनीय, कर्मणा सर्वोपशमनविधाने निर्मूलक्षयविधाने चानिवृत्तिकरणपरिणामस्य व्यापारो न क्षयोपशमविधाने इति प्रवचने प्रतिपादितत्वात् ॥ १७१–१७२ ॥

सादि मिथ्यादृष्टि जीवके वेदक सम्यक्त्वके साथ देशसयमको ग्रहण करते समय जो विशेषता होती है उसका निर्देश—

स० च०—सादि मिथ्यादृष्टी जीव वेदक सम्यक्त्व सहित देशचारित्रकौ ग्रहण करै ताकै अध करण अपूर्वकरण ए दोय ही करण होइ । तिनविषै गुणश्रेणि निर्जरा न हो है, अन्य स्थिति खण्डादिक सर्व कार्य हो हैं सो अपूर्वकरणका अन्त समयविषै युगपत् वेदक सम्यक्त्व अर देश चारित्रकौ ग्रहै है । जातै अनिवृत्तिकरण विना ही इनकी प्राप्ति सम्भवै है । तहाँ प्रथमोपशम सम्यक्त्वका उत्पत्तिवत् करणनिका अल्पबहुत्व है तातै इहाँ अध करणकालतै अपूर्वकरणका काल सख्यातवें भाग प्रमाण है । बहुरि अपूर्वकरणका कालविषै सख्यात हजार स्थितिखण्ड भए अपूर्वकरणका काल समाप्त हो है । ऐसै ही असयत वेदक सम्यग्दृष्टि भी दोय करणका अन्त समयविषै देशचारित्रको प्राप्त हो है । मिथ्यादृष्टि ही का व्याख्यानतै सिद्धान्तके अनुसारि असयतका भी ग्रहण करना । इहाँ उपशम सम्यक्त्वका तौ अभाव तातैं तिस सम्बन्धी गुणश्रेणि नाही अर देशसयतका अब ताईं ग्रहण भया नाही तातै इहा अपूर्वकरणविषै गुणश्रेणिका अभाव कह्या है । वहुरि कर्मनिका उपशम वा क्षय विधान ही विषैं अनिवृत्तिकरण हो है । क्षयोपशम-विषै होता नाही तातै अनिवृत्तिकरण न कह्या ऐसा जानना ॥ १७१–१७२ ॥

अथ देशसयमकालप्राप्तितदानीतनगुणश्रेणिकरणप्रतिपादनार्थमाह—

से काले[1] देसवदी असखसमयप्पबद्धमाहरियं ।
उदयावलिस्स वाहिं गुणसेढीमवट्ठिद कुणदि[2] ॥ १७३ ॥

तस्मिन् काले देशव्रती असंख्यसमयप्रबद्धमाहृत्य ।
उदयावलेर्बाह्य गुणश्रेणीमवस्थितां करोति ॥ १७३ ॥

स० टी०—अपूर्वकरणचरमसमयादनन्तरसमये जीवो देशव्रती भूत्वा आयुर्वर्जितकर्मणा सत्त्वद्रव्यात्—

---

१ तदो से काले पढमसमयसजदासजदो जादो । कसाय० चू० जयध० पु० १३, पृ० १२२ । पुव्विल्लमसजमपज्जाय छड्डिऊण देससजमपज्जाएण एसो जीवो करणादिलद्धिवसेण परिणदो त्ति भणिद होइ । जयध० पु० १३, पृ० १३३ ।

२ असखेज्जे समयपबद्धे ओकड्डियूण गुणसेढीए उदयावलियवाहिरे रचेदि । गुणसेढिणिक्खेवो अवट्ठिदगुणसेढी तत्तिगो चेव । कसाय० चू० जयध० पु० १३, पृ० १२४–१२५ ।

मिथ्यो देशचारित्रं उपशमसम्येन गृह्णन् हि ।
सम्यक्त्वोत्पत्तिमिव त्रिकरणचरमे गृह्णाति हि ॥ १७० ॥

स० टी०—यदानादिमिथ्यादृष्टिर्वा सादिमिथ्यादृष्टिर्वा जीव औपशमिकसम्यक्त्वेन सह देशचारित्र गृह्णान दर्शनमोहोपशमविधानेन प्रागुक्तप्रकारेण सम्यक्त्वोत्पत्तौ त्रिकरणचरमसमये देशचारित्र गृह्णाति । यथा दर्शनमोहोपशमने प्रकृतिवन्धापसरण स्थितिबन्धापसरण प्रतिसमयमनन्तगुणविशुद्धिवृद्धि अप्रशस्तप्रकृतीना प्रतिसमयमनन्तगुणहान्यानुभागवन्ध अध प्रवृत्तादिकरणपरिणामा स्थितिकाण्डकघातादयश्च ये कार्यविशेषा ते सर्वेऽपि औपशमिकसम्यक्त्वचारित्रयोर्युगपद्ग्रहणेऽन्यून वक्तव्या विशेषाभावादित्यभिप्राय ॥ १७० ॥

उपशम सम्यक्त्वके साथ देशसयमको ग्रहण करनेवाला जीव क्या कार्य करता है इसका निर्देश—

स० च०—अनादि वा सादि मिथ्यादृष्टी जीव उपशम सम्यक्त्व सहित देश चारित्रकौं ग्रहै है सो दर्शनमोहका उपशम विधान जैसै पूर्वै वर्णन कीया है तैसै ही विधान करि तीन करणनिका अत समयविषै देशचारित्रकौ ग्रहै है । प्रकृतिबधापसरण स्थितिबधापसरण आदि जे कार्य विशेप तहा कहे है ते सर्व हो हैं विशेष किछू नाही ॥ १७० ॥

अथ सादिमिथ्यादृष्टेर्वेदकसम्यक्त्वेन सह देशचारित्रग्रहणे सभवद्विशेषप्रतिपादनार्थमिद गाथाद्वयमाह—

मिच्छो देसचरित्त वेदगसम्मेण गेण्हमाणो हु ।
दुकरणचरिमे गेण्हदि गुणसेढी णत्थि तक्करणे[1] ॥ १७१ ॥

सम्मत्तुप्पत्तिं वा थोवबहुत्तं च होदि करणाण ।
ठिदिखडसहस्सगदे अपुव्वकरण समप्पदि हु[2] ॥ १७२ ॥

मिथ्यो देशचारित्रं वेदकसम्येन गृह्णन् हि ।
द्विकरणचरमे गृह्णाति गुणश्रेणी नास्ति तत्करणे ॥ १७१ ॥
सम्यक्त्वोत्पत्तिमिव स्तोकबहुत्व च भवति करणानाम् ।
स्थितिखंडसहस्रगतं अपूर्वकरणं समाप्यते हि ॥ १७२ ॥

स० टी०—वेदकसम्यक्त्वयोग्य सादिमिथ्यादृष्टिर्जीवो वेदकसम्यक्त्वेन सह देशचारित्र गृह्णान अध-प्रवृत्तापूर्वकरणपरिणामद्वय प्रतिपद्यमानो गुणश्रेणिवर्जितानि स्थितिखण्डादीनि सर्वाण्यपि कार्याणि कुर्वन् अपूर्वकरणचरमसमये वेदकसम्यक्त्व देशचारित्र च युगपद् गृह्णाति तत्रानिवृत्तिकरणपरिणाम विनापि वेदक-सम्यक्त्वदेशचारित्रप्राप्तिसभवात् । अध प्रवृत्तकरणकालात् सख्यातगुणहीनोऽपूर्वकरणकाल इत्यनयो करण-परिणामयो काल स्तोकबहुत्वमन्यान्यपि कार्याणि यथा सम्यक्त्वोत्पत्तौ प्रतिपादितानि तथात्रापि वेदित-

१ गुणसेढी च णत्थि । कसाय० चू०, पृ० १२१ । कि कारण ? ण ताव सम्मत्तुप्पत्तिणिबधणगुण-सेढीए एत्थ सभवो, पढमसम्मत्तग्गहणादो अण्णत्थ तदणुवलभादो । ण सजमासजमपरिणामणिबधणगुणसेढीए वि अत्थि सभवो, अलद्धप्पसरूवस्स सजमासजमगुणस्स गुणसेढिणिज्जराए वावारविरोहादो । जयध०, पु० १३, पृ० १२१ ।

२ एत्थ ट्ठिदिखडयसहस्सेसु गदेसु अपुव्वकरणद्धा समत्ता भवदि कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १२२ ।

व्यानीत्यर्थः । एवमपूर्वकरणकालाभ्यन्तरे सख्यातसहस्रेषु स्थितिखण्डेषु गतेषु अपूर्वकरणकालः परिसमाप्यते । एवमसंयतसम्यग्दृष्टिरप्यधःप्रवृत्तापूर्वकरणद्वयकालचरमसमये देशचारित्रं प्रतिपद्यते तस्य गुणश्रेणिविनार्वाशिष्ट- सर्वकार्याणि अपूर्वकरणचरमसमयपर्यन्तमविशेषेण ज्ञातव्यानि । मिथ्यादृष्टिग्रहणमुपलक्षणं तेन व्याख्यानतो विशेषप्रतिपत्तिरिति न्यायमवलम्ब्यासंयतवेदकसम्यग्दृष्टेरपि देशचारित्रग्रहणक्रमो दर्शितः । सिद्धान्तेऽपि तथैव व्याख्यानात् । अत्रापूर्वकरणकाले कुतो गुणश्रेण्यभावः ? इति चेत्—उपशमसम्यक्त्वाभावात्तन्निबन्धनगुणश्रेण्य- भावः । देशसंयमस्याद्याप्यग्रहणात् तन्निमित्तकगुणश्रेणेरप्यभावः वेदकसम्यक्त्वस्य च गुणश्रेणिहेतुत्वाभावात् इति ब्रूमहे । अनिवृत्तिकरणपरिणामं विना कथं देशचारित्रप्राप्तिरित्यपि नाशङ्कनीयं, कर्मणा सर्वोपशमनविधाने निर्मूलक्षयविधाने चानिवृत्तिकरणपरिणामस्य व्यापारो न क्षयोपशमविधाने इति प्रवचने प्रतिपादि तत्वात् ॥ १७१–१७२ ॥

सादि मिथ्यादृष्टि जीवके वेदक सम्यक्त्वके साथ देशसयमको ग्रहण करते समय जो विशे- षता होती है उसका निर्देश—

स० च०—सादि मिथ्यादृष्टी जीव वेदक सम्यक्त्व सहित देशचारित्रको ग्रहण करै ताकैं अधःकरण अपूर्वकरण ए दोय ही करण होइ । तिनविषै गुणश्रेणि निर्जरा न हो है, अन्य स्थिति खण्डादिक सर्व कार्य हो हैं सो अपूर्वकरणका अन्त समयविषै युगपत् वेदक सम्यक्त्व अर देश चारित्रकौं ग्रहै है । जातै अनिवृत्तिकरण विना ही इनकी प्राप्ति सम्भवै है । तहाँ प्रथमोपशम सम्यक्त्वका उत्पत्तिवत् करणनिका अल्पबहुत्व है तातै इहाँ अधःकरणकालतै अपूर्वकरणका काल सख्यातवें भाग प्रमाण है । बहुरि अपूर्वकरणका कालविषै सख्यात हजार स्थितिखण्ड भए अपूर्वकरणका काल समाप्त हो है । ऐसै ही असयत वेदक सम्यग्दृष्टि भी दोय करणका अन्त समयविषै देशचारित्रको प्राप्त हो है । मिथ्यादृष्टि ही का व्याख्यानतै सिद्धान्तके अनुसारि असयतका भी ग्रहण करना । इहाँ उपशम सम्यक्त्वका तौ अभाव तातैं तिस सम्बन्धी गुणश्रेणि नाही अर देशसयतका अब ताईं ग्रहण भया नाही तातै इहा अपूर्वकरणविषै गुणश्रेणिका अभाव कह्या है । बहुरि कर्मनिका उपशम वा क्षय विधान ही विषैं अनिवृत्तिकरण हो है । क्षयोपशम- विषै होता नाही तातै अनिवृत्तिकरण न कह्या ऐसा जानना ॥ १७१–१७२ ॥

अथ देशसयमकालप्राप्तितदानीतनगुणश्रेणिकरणप्रतिपादनार्थमाह—

से काले देसवदी असखसमयप्पबद्धमाहरियं ।
उदयावलिस्स बाहिं गुणसेढीमवट्ठिद कुणदि[2] ॥ १७३ ॥

तस्मिन् काले देशव्रती असंख्यसमयप्रबद्धमाहृत्य ।
उदयावलेर्बाह्यं गुणश्रेणीमवस्थिता करोति ॥ १७३ ॥

स० टी०—अपूर्वकरणचरमसमयादनन्तरसमये जीवो देशव्रती भूत्वा आयुर्वर्जितकर्मणा सत्त्वद्रव्यात्—

---

१ तदो से काले पढमसमयसजदासजदो जादो । कसाय० चू० जयध० पु० १३, पृ० १२२ । पुव्विल्लमसजमपज्जाय छड्डिपूण देससजमपज्जाएण एसो जीवो करणादिलद्धिवसेण परिणदो त्ति भणिद होइ । जयध० पु० १३, पृ० १३३ ।

२ असखेज्जे समयपबद्धे ओकड्डियूण गुणसेढीए उदयावलियबाहिरे रचेदि । गुणसेढिणिक्खेवो अवट्ठिदगुणसेढी तत्तिगो चेव । कसाय० चू० जयध० पु० १३, पृ० १२४–१२५ ।

स ऌ । १२ — असख्यातैकभागमपकृष्य स ऌ । १२ — इद पल्यासख्यातभागेन खण्डयित्वा बहुभागद्रव्य-
७ ७ ओ

मुपरितनस्थितौ निक्षिपेत् । पुनस्तदेकभागसख्यातलोकेन भक्त्वा तदेकभागमुदयावल्या दत्वा तद्बहुभाग-मसख्यातसमयप्रवद्धमात्र गुणश्रेण्यायामे निक्षिपेत् । अय च गुणश्रेण्यायाम देशसयमप्रथमसमयादारभ्य द्वितीयादिसमयेष्ववस्थित एव न गलितावशेषमात्र । एतद्गुणश्रेण्यायामप्रमाण प्रथमोपशमसम्यक्त्वोत्पत्तिगुणश्रेण्यायामेन सख्यातगुणहीन २ ११ ॥ १७३ ॥

देशसयमकी प्राप्तिके प्रथम समयसे कार्य विशेषका निर्देश—

स० च०—अपूर्वकरणका अन्त समयके अनन्तरवर्ती समयविषै जीव देशव्रती होइ करि अपने देशव्रतका कालविषै आयु विना अन्य कर्मनिका सत्त्वद्रव्य ताकौ अपकर्षण भागहारमात्र असख्यातका भाग देइ एकभागविषै असख्यात समय प्रबद्धप्रमाण द्रव्यकौ ग्रहि करि ताकौ पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग देइ बहुभाग उपरितन स्थितिविषै देना अवशेष एक भागकौ असख्यात लोकका भाग देइ एक भाग उदयावलीविषै देना अरु बहुभाग असख्यात समयप्रबद्धमात्र है सो गुणश्रेणि आयामविषै देना। सो यहु गुणश्रेणि आयाम अवस्थित है गलितावशेष नाही है अर प्रथमोपशम सम्यक्त्वसम्बन्धी गुणश्रेणि आयामतै सख्यातगुणा घटता है। ऐसै देशव्रती होइ उदयावलीतैं वाह्य अवस्थिति गुणश्रेणि करै है ॥ १७३ ॥

विशेष—गुणश्रेणि दो प्रकारकी होती है—एक गलितशेष गुणश्रेणि और दूसरी अवस्थित गुणश्रेणि। गलितशेष गुणश्रेणि तत्प्रायोग्य अन्तमुंहूर्तके जितने समय होते हैं तत्प्रमाण आयामवाली होती है सो उदयावलिके एक एक निषेकके गलने पर उसके प्रमाणमेसे एक एक समयकी कमी होती जाती है। अवस्थित गुणश्रेणि भी यद्यपि अन्तमुंहूर्तकालप्रमाण आयामवाली होती है। परन्तु उसमेसे उदयावलिके एक निषेकके गलने पर गुणश्रेणिशीर्षमे एक निषेकको वृद्धि होती जाती है। इसलिये इसका प्रमाण सदा स्थिर रहनेसे इसे अवस्थित गुणश्रेणि कहते है। सयमासयमकी उत्पत्तिकालमे तो गुणश्रेणि रचना नही होती। पर सयमासयमकी प्राप्तिके प्रथम समयसे ही अवस्थित गुणश्रेणिका क्रम प्रारम्भ हो जाता है। इतना अवश्य है कि इसके उदयावलिके निषेकोको छोडकर ऊपरके अन्तमुंहूर्तकाल प्रमाण निषेकोमे ही गुणश्रेणि रचना होती है।

अथ देशसयमस्यावस्थाविशेषतत्कार्यविभागप्रदर्शनार्थमाह—

दव्व असखगुणियक्कमेण एयतवड्ढिकालो त्ति।
वहुठिदिखडे तीदे अधापवत्तो हवे देसो ॥ १७४ ॥

द्रव्यमसख्यगुणितक्रमेण एकातवृद्धिकाल इति।
बहुस्थितिखण्डेऽतीते अधाप्रवृत्तो भवेद्देश ॥ १७४ ॥

स० टी०—अथ देशसयत प्रतिसमयमनन्तगुणविशुद्धिवृद्धया वर्धमानोऽन्तर्मुहूर्तपर्यन्त द्रव्यमसख्यात-

---

१ सुत्तो पुण करणपरिणमेसु उवसहरिदेसु ट्ठिदिखडयादीणमेत्य सभवो त्ति णासका कायव्वा, करणपरिणामाभावे वि सत्थाणसंकिलेसजमासजमपरिणामपाहम्मेण ठिदिघादाणमेत्य पवुत्तीए विरोहाभावादो। जयध० पु० १३ पृ० १२८।

गुणितक्रमेणापकृष्यावस्थितिगुणश्रेण्यायामे निक्षिपन् स्थितिकाण्डकादिकार्यं कुर्वन् एकान्तवृद्धिदेशसयत-इत्युच्यते। एकान्तवृद्धिकालादन्तर्मुहूर्तमात्रात्पर वृद्धि विना अवस्थितया विशुद्धया परिणत स्वस्थानदेश-सयत अथाप्रवृत्तदेशसयत इत्युच्यते। तस्याथाप्रवृत्तदेशसयतस्य कालो जघन्येनान्तर्मुहूर्तं। उत्कर्षेण देशोन-पूर्वकोटिवर्षाणि ॥ १७४ ॥

पूर्वोक्त आवश्यक कार्यविशेषका विशेष खुलासा—

स० च०—देशसयतका प्रथम समयतै लगाय अन्तर्मुहूर्त पर्यंत समय समय अनन्तगुणा विशुद्धताकरि बधै है सो याकौ एकान्तवृद्धि कहिए सो याका कालविषै समय समय असख्यात-गुणा क्रमकरि द्रव्यकौ अपकर्षण करि अवस्थिति गुणश्रेणि आयामविषै निक्षेपण करै है। तहा एकान्तवृद्धिका कालविषै स्थितिकाण्डकादि कार्य हो है। बहुरि बहुत स्थिति खण्ड भए एकान्त वृद्धिका काल समाप्त होनेके अनन्तरि विशुद्धताकी वृद्धि रहित होइ स्वस्थान देशसयत होइ याकौं अथाप्रवृत्त देशसयत भी कहिए। ताका काल जघन्य अन्तर्मुहूर्त अर उत्कृष्ट देशोन कोडि पूर्ववर्षप्रमाण है ॥ १७४ ॥

विशेष—देशसयतके दो भेद है—एकान्त वृद्धिदेशसयत और अथाप्रवृत्त या यथाप्रवृत्त देशसयत। एकान्त वृद्धि सयतका काल अन्तर्मुहूर्त है। यह देशसयतके प्राप्त होनेके प्रथम समयसे अन्तर्मुहूर्तकाल तक होता है। इस कालके भीतर समय-समय परिणामोकी विशुद्धि अनन्तगुणी बढती जाती है। इस कारण इस कालके भीतर करण परिणामोके विना भी स्थिति-काण्डकघात और अनुभाग काण्डकघात क्रिया चालू रहती है। इतना अवश्य है कि एकान्त वृद्धि का काल समाप्त होने पर स्थिति-अनुभागकाण्डकघातकी क्रिया नही होती। मात्र गुणश्रेणि-निर्जरा सब काल होती रहती है।

तस्मिन्नथाप्रवृत्तदेशसयतकाले सभवत्कार्यविशेषप्रतिपादनार्थमिदमाह—

ठिदिरसघादो णत्थि हु अधापवत्ताभिधाणदेसस्स।
पडिउट्ठिदे मुहुत्त संतेण हि तस्स करणदुगा[1] ॥ १७५ ॥

स्थितिरसघातो नास्ति हि अधाप्रवृत्ताभिधानदेशस्य।
प्रतिपतिते मुहूर्तं सयतेन हि तस्य करणद्विकम् ॥ १७५ ॥

स० टी०—अथाप्रवृत्तदेशसयतकाले स्थितिखण्डनमनुभागखण्डन वा नास्ति। एकान्तवृद्धिदेशसयत-चरमसमये खण्डितावशेषयावन्मात्रस्थित्यनुभागानि कर्माणि तावन्मात्राण्येव अथाप्रवृत्तदेशसयतकाले अवतिष्ठन्त इत्यर्थ। य पुनस्तीव्रसक्लेशकारणवहिरङ्गद्रव्यादिनिरपेक्ष केवलान्तरङ्गकर्मोदयजनितसक्लेशपरिणामवशेन देशसयमात्प्रच्युत्यासयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान प्राप्यात्यल्पान्तर्मुहूर्तं तत्र स्थित्वा शीघ्रमेव देशसयम गृह्णाति तस्यापि स्थित्यनुभागकाण्डकघातो नास्ति करणद्वयपरिणाम विनैव देशसयमग्रहणात्। य पुनस्तीव्रविराधनाकारण-वहिरङ्गद्रव्यादिसन्निधाने देशसयम सम्यक्त्व च विराध्य मिथ्यात्व गत्वा दीर्घमन्तर्मुहूर्तं सख्यातासख्यात-

1 अधापवत्तसजदासजदस्स ठिदिघादो वा अणुभागघादो वा णत्थि। जदि सजमासजमादो परिणाम-पच्चयेण णिग्गदो, पुणो वि परिणामपच्चएण अतोमुहुत्तेण आणीदो सजमासजमपडिवज्जइ, तस्स वि णत्थि ट्ठिदिघादो वा अणुभागघादो वा। कसाय० चू० जयध पु० १३, पृ० १२७।

वर्षाणि वा वेदकयोग्यकालप्रमितानि स्थित्वा पुनरपि लब्धिवशेन वेदकसम्यक्त्व सयमासयम च युगपत्प्रतिपद्यते तस्याध प्रवृत्तापूर्वकरणद्वयपरिणामसभवात् स्थित्यनुभागकाण्डकघातोऽस्ति ॥ १७५ ॥

अथाप्रवृत्त सयतासयतके कालमे होनेवाले कार्यविशेषका खुलासा—

स० च०—अथाप्रवृत्त देशसयतका कालविषै स्थित्ति खण्डन वा अनुभाग खण्डन न हो है। जो एकान्त वृद्धि देशसयतका अन्त समयविषै घात्त कीए पीछै अवशेष स्थिति अनुभाग रह्या सोई तहाँ रहै है। बहुरि जो जीव तीव्र सक्लेशका कारण बाह्य निमित्त विना केवल अन्तरङ्ग-कर्मका उदयकरि निपज्या सक्लेश करि देशसयततैं भ्रष्ट होइ करि असयत्त सम्यग्दृष्टी होइ तहाँ स्तोक अन्तर्मुहूर्त कालमात्र रहि शीघ्र ही देशसयमको ग्रहै ताकै भी स्थिति अनुभाग काण्डकका घात्त न हो है जातै दोय करण कीए बिना ही देशसयमकौ ग्रहै है। बहुरि जो जीव बाह्य कारणतैं सम्यक्त्व वा देशसयमतै भ्रष्ट होइ करि मिथ्यादृष्टी होइ तहाँ बडा अन्तर्मुहूर्त वा सख्यात असख्यात्तवर्ष पर्यन्त रहि बहुरि-वेदक सम्यक्त्व सहित देशसयमकौ ग्रहै ताकै अधः-प्रवृत्त अपूर्वकरण हो है। तातैं स्थिति-अनुभागकाण्डक घात भी हो है ॥ १७५ ॥

अथाप्रवृत्तदेशसयतस्य गुणश्रेणिद्रव्यप्रमाणार्थमिदमाह—

देसो समये समये सुज्झतो सकिलिस्समाणो य ।
चउवड्ढिहाणिदव्वादवट्ठिद कुणदि गुणसेढिं[1] ॥ १७६ ॥

देश समये समये शुध्यन् संक्लिश्यन् च।
चतुर्वृद्धिहानिद्रव्यादवस्थितां करोति गुणश्रेणीम् ॥ १७६ ॥

स० टी०—अध प्रवृत्तदेशसयत समय समय प्रति विशुद्धयन् वा सक्लिश्यमानो वा चतुर्वृद्धिहानिद्रव्यादवस्थितिगुणश्रेणि करोत्येव। तथाहि—

विवक्षितस्य यस्य कस्यापि कर्मण सत्त्वद्रव्य स ∂ । १२— अस्मादयमथाप्रवृत्तदेशसयतो तदा
७

सक्लेशपरिणाम गत्वा पुनर्विशुद्धिमापूरयति तदा तद्विशुद्धिपरिणामानुसारेण कदाचिदसख्यातभागाधिक
१— १__

स ∂ । १२ —∂ कदाचित् सख्यातभागाधिक स ∂ । १२ – ⑨ कदाचित्सख्यातगुणित स ∂ १२ – ⑨
७ । ओ ∂ ७ । ओ ⑨ ७ ओ

कदाचिदसख्यातगुण च—स ∂ । १२ – ∂ द्रव्यमकृष्य गुणश्रेणि, यदा तु विशुद्धिहान्या सक्लेशपरिणाम
७ । ओ

१‿
गच्छति तदा तत्सक्लेशपरिणामानुसारेण कदाचिदसख्यातभागहीन स ∂ । १२ – ∂ कदाचित्सख्यातभागहीन
७ । ७ ∂

---

1 जाव सजदासजदो ताव गुणसेढिं समये समये करेदि। विसुज्झतो वि असखेज्जगुण वा सखेज्जगुण वा सखेज्जभागुत्तर वा असखेज्जभागुत्तर वा करेदि। सकिलिस्सतो एव चेव गुणहीण वा विसेसहीण वा करेदि। कसाय० च०, जयध० पु० १३, पृ० १२९–१३०।

१ ८
स ३ । १२ – ? कदाचित्सख्यातगुणहीन स ३ । १२ – कदाचिदसख्यातगुणहीन स ३ । १२ – वा
७ ओ ? ७ ओ ? ७ । ओ ३

द्रव्यमपकृष्य गुणश्रेणिनिक्षेप करोति। विशुद्धिसक्लेशपरिणामपरावृत्तिवशेनैवविधद्रव्यापकर्षणसभवात्। एव स्वस्थानदेशसयतो जघन्येनान्तर्मुहूर्तपर्यन्तमुत्कर्षेण देशोनपूर्वकोटिपर्यन्त च गुणश्रेण्यायामे द्रव्य निक्षिपतीत्यर्थ ॥ १७६ ॥

अथाप्रवृत्त सयतासयतके गुणश्रेणिद्रव्यकी प्ररूपणा—

स० च०—अथाप्रवृत्त देशसयत जीव सो कदाचित् विशुद्ध होइ कदाचित् सक्लेशी होइ तहाँ विवक्षित्त कर्मका पूर्व समयविषै जो द्रव्य अपकर्षण कीया तातै अनन्तर समयविषै विशुद्धताकी वृद्धिके अनुसारि कदाचित् असख्यातवे भाग बँधता कदाचित् सख्यातवाँ भाग बँधता, कदाचित् सख्यातगुणा कदाचित् असख्यातगुणा द्रव्यकौ अपकर्षण करि गुणश्रेणिविषै निक्षेपण करै है। बहुरि विशुद्धताकी हानिके अनुसारि कदाचित् असख्यातवे भाग घटता, कदाचित् सख्यातवे भाग घटता, कदाचित् सख्यातगुणा घटता, कदाचित् असख्यातगुणा घटता द्रव्यकौ अपकर्षणकरि गुणश्रेणिविषै निक्षेपण करै है। ऐसै अधाप्रवृत्त देशसयतका सर्वकालविषै समय समय यथासम्भव चतु स्थान पतित वृद्धि हानि लीए गुणश्रेणि विधान पाइए है ॥ १७६ ॥

विशेष—देशसयतका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है और उत्कृष्ट काल आठ वर्ष अन्तर्मुहूर्त कम एक कोटिवर्ष प्रमाण है। इसलिये इस कालके भीतर परिणामोमे स्वभावत सक्लेश और विशुद्धिका क्रम चलता रहता है। तदनुसार गुणश्रेणिमे निक्षिप्त होनेवाले द्रव्यमे भी फेर-फार होता रहता है। इसी तथ्यको इस गाथामे स्पष्ट करके बतलाया है। यद्यपि वृद्धियाँ छह और हानियाँ छह मानी गई है, पर यहाँ अनन्त भागवृद्धि और अनन्त गुणवृद्धि तथा अनन्त भागहानि और अनन्त गुणहानि इस प्रकार दो वृद्धि और दो हानि सम्भव न होनेसे परिणामोके विशुद्धिकालमे यथासम्भव चार वृद्धियाँ होती हैं और सक्लेशकालमे यथासम्भव चार हानियाँ होती है। इनके विषयमे विशेष स्पष्टीकरण टीकामे किया ही है।

देशसयतस्यानुभागखण्डोत्करणकालादीनामल्पबहुत्वप्रतिपादनप्रतिज्ञाप्रदर्शनार्थमिदमाह—

विदियकरणादु जावय देसस्सेयतवड्ढिचरिमेत्ति।
अप्पाबहुगं वोच्छं रसखडद्धाणपहुदीण[1] ॥ १७७ ॥

द्वितीयकरणात् यावत् देशस्यैकातवृद्धिचरमे इति।
अल्पबहुत्वं वक्ष्ये रसखडाध्वानप्राभृतीनाम् ॥ १७७ ॥

स० टी०—अपूर्वकरणप्रथमसमयादारम्य एकान्तवृद्धिदेशसयतपर्यंत सभवता जघन्यानुभागखण्डोत्करणकालादीनामष्टादशपदानामल्पबहुत्व प्रवक्ष्यामीति प्रतिज्ञार्थ ॥ १७७ ॥

---

१ तदो एदिस्से परूवणाए समत्ताए सजमासजम पडिवज्जमाणस्स पढमसमयअपुव्वकरणादो जाव सजदासजदो एयताणुवड्ढीए चरित्ताचरित्तलद्धीए वड्ढदि एदम्हि काले ट्ठिदिबध–ट्ठिदिसतकम्म–ट्ठिदिखडयाण जहण्णुक्कस्सयाणमावाहाण जहण्णुक्कस्सियाणमुक्कीरणद्धाण जहण्णुक्कस्सियाण अण्णेसि च पदाणमप्पाबहुअ वत्तइस्सामो। कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १३२।

देशसयतके अनुभागकाण्डकोत्करणकाल आदिके अल्पवहुत्वका निर्देश—

स० च०—अपूर्वकरणतै लगाय एकान्त वृद्धि देशसयतका अन्त पर्यन्त सम्भवतै जे जघन्य अनुभागखण्डोत्करणकालादिकरूप अठारह स्थान तिनिका अल्पवहुत्व कहौंगा ॥ १७७ ॥

अथ तान्येवाल्पबहुत्वपदानि प्ररूपयितु गाथापट्कमाह—

अतिमरसखडुक्कीरणकालादो दु पढमओ अहिओ ।
चरिमट्ठिदिखडुक्कीरणकालो सखगुणिदो हु[1] ॥ १७८ ॥

अन्तिमरसखडोत्करणकालतस्तु प्रथमोऽधिक ।
चरमस्थितिखडोत्करणकाल सख्यगुणितो हि ॥ १७८ ॥

पढमट्ठिदिखडुक्कीरणकालो साहियो हवे तत्तो ।
एयतवड्ढिकाले अपुव्वकालो य सखगुणियमकमा[2] ॥ १७९ ॥

प्रथमस्थितिखडोत्करणकाल साधिको भवेत् तत ।
एकातवृद्धिकाले अपूर्वकालश्च सख्यगुणितक्रम ॥ १७९ ॥

अवरा मिच्छतियद्धा अविरद तह देससजमद्धा य ।
छप्पि समा संखगुणा तत्तो देसस्स गुणसेढी[3] ॥ १८० ॥

अवरा मिथ्यात्रिकाद्धा अविरता तथा देशसयमाद्धा च ।
षडपि समा सख्यगुणा ततो देशस्य गुणश्रेणी ॥ १८० ॥

चरिमाबाहा तत्तो पढमाबाहा य संखगुणियकमा ।
तत्तो असखगुणियो चरिमट्ठिदिखडओ णियमा[4] ॥ १८१ ॥

चरमाबाधा तत प्रथमाबाधा च सख्यगुणितक्रमा ।
तत असख्यगुणित चरमस्थितिखडको नियमात् ॥ १८१ ॥

---

१ सव्वत्थोवा जहण्णिया अणुभागखडयउक्कीरणद्धा । उक्कस्सिया अणुभागखडयउक्कीरणद्धा विसेसाहिया । जहण्णिया ट्ठिदिखडयउक्कीरणद्धा जहण्णिया ट्ठिदिबधगद्धा च दो वि तुल्लाओ सखेज्जगुणाओ । कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १३३ ।

२ उकस्सियाओ विसेसाहियाओ । पढमसमयसजदासजदप्पहुडि ज एयताणुवड्ढीए वड्ढदि चरित्ताचरित्तपज्जत्तयेहिं एसो वड्ढिकालो सखेज्जगुणो । अपुव्वकरणद्धा सखेज्जगुणा । कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १३३-१३४ ।

३ जहण्णिया सजमासजमद्धा सम्मत्तद्धा मिच्छत्तद्धा सजमद्धा असजमद्धा सम्मामिच्छत्तद्धा च एदाओ छप्पि अद्धाओ तुल्लाओ सखेज्जगुणाओ । गुणसेढी सखेज्जगुणा । कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १३४ ।

४ जहण्णिया आबाहा सखेज्जगुणा । उक्कस्सिया आबाहा सखेज्जगुणा । जहण्णय ट्ठिदिखडयमसखेज्जगुण । कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १३५ ।

देशसयतके अनुभागकाण्डकोत्करणकाल आदिके अल्पबहुत्वका निर्देश—

स० च०—अपूर्वकरणतै लगाय एकान्त वृद्धि देशसयतका अन्त पर्यन्त सम्भवते जे जघन्य अनुभागखण्डोत्करणकालादिकरूप अठारह स्थान तिनिका अल्पबहुत्व कहौंगा ॥ १७७ ॥

अथ तान्येवाल्पबहुत्वपदानि प्ररूपयितु गाथाषट्कमाह—

अतिमरसखडुक्कीरणकालादो दु पढमओ अहिओ ।
चरिमट्ठिदिखडुक्कीरणकालो सखगुणिदो हु[1] ॥ १७८ ॥

अन्तिमरसखडोत्करणकालतस्तु प्रथमोऽधिक ।
चरमस्थितिखडोत्करणकाल सख्यगुणितो हि ॥ १७८ ॥

पढमट्ठिदिखडुक्कीरणकालो साहियो हवे तत्तो ।
एयतवड्ढिकाले अपुव्वकालो य सखगुणियमकमा[2] ॥ १७९ ॥

प्रथमस्थितिखडोत्करणकाल साधिको भवेत् तत. ।
एकातवृद्धिकाले अपूर्वकालश्च सख्यगुणितक्रम. ॥ १७९ ॥

अवरा मिच्छतियद्धा अविरद तह देससजमद्धा य ।
छप्पि समा संखगुणा तत्तो देसस्स गुणसेढी[3] ॥ १८० ॥

अवरा मिथ्यात्रिकाद्धा अविरता तथा देशसयमाद्धा च ।
षडपि समा. सख्यगुणा ततो देशस्य गुणश्रेणी ॥ १८० ॥

चरिमाबाहा तत्तो पढमाबाहा य संख्यगुणियकमा ।
तत्तो असखगुणियो चरिमट्ठिदिखडओ णियमा[4] ॥ १८१ ॥

चरमाबाधा तत प्रथमाबाधा च सख्यगुणितक्रमा ।
तत असख्यगुणित. चरमस्थितिखडको नियमात् ॥ १८१ ॥

---

१ सव्वत्थोवा जहण्णिया अणुभागखडयउक्कीरणद्धा । उक्कस्सिया अणुभागखडयउक्कीरणद्धा विसेसाहिया । जहण्णिया ट्ठिदिखडयउक्कीरणद्धा जहण्णिया ट्ठिदिबधगद्धा च दो वि तुल्लाओ सखेज्जगुणाओ । कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १३३ ।

२ उकस्सियाओ विसेसाहियाओ । पढमसमयसजदासजदप्पहुडि ज एयताणुवड्ढीए वड्ढदि चरित्ताचरित्तपज्जत्तयेहिं एसो वड्ढिकालो सखेज्जगुणो । अपुव्वकरणद्धा सखेज्जगुणा । कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १३३-१३४ ।

३ जहण्णिया सजमासजमद्धा सम्मत्तद्धा मिच्छत्तद्धा सजमद्धा असजमद्धा सम्मामिच्छत्तद्धा च एदाओ छप्पि अद्धाओ तुल्लाओ सखेज्जगुणाओ । गुणसेढी सखेज्जगुणा । कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १३४ ।

४ जहण्णिया आबाहा सखेज्जगुणा । उक्कस्सिया आबाहा सखेज्जगुणा । जहण्णय ट्ठिदिखडयमसखेज्जगुण । कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १३५ ।

पल्लस्स सखभागं चरिमट्ठिदिखंडयं हवे जम्हा ।
तम्हा असंगुणिय चरिमट्ठिदिखंडयं होइ ॥ १८२ ॥

पल्यस्य संख्यभागं चरमस्थितिखंडकं भवेत् यस्मात् ।
तस्मादसंख्यगुणितं चरमं स्थितिखंडकं भवति ॥ १८२ ॥

पढमे अवरो पल्लो पढमुक्कस्स च चरिमठिदिबंधो ।
पढमो चरिम पढमट्ठिदिसत सखगुणियकमा[1] ॥ १८३ ॥

प्रथमे अवरः पल्य प्रथमोत्कृष्ट च चरमस्थितिबंध ।
प्रथम चरम प्रथमस्थितिसत्त्वं संख्यगुणितक्रमाणि ॥ १८३ ॥

स० टी०—सर्वत स्तोको देशसयतस्य एकान्तवृद्धिचरमसमये सभवज्जघन्यानुभागखडोत्करणकाल २ १ । १ तस्मादपूर्वकरणप्रथमसमये सभव्युत्कृष्टानुभागखण्डोत्करणकालो विशेषाधिक २ १ । ५ । २ / ४ एतस्माद्देशसयतस्यैकान्तवृद्धिचरमसमयसभविजघन्यस्थितिखण्डोत्करणकाल सख्येयगुण २ १ ५ । ४ ॥ ३ / ४ तस्मादपूर्वकरणप्रथमसमयसभवदुत्कृष्टस्थितिखण्डोत्करणकालो विशेषाधिक २ १ । ५ । ४ । ५ ॥ ४ / ४ । ४ अस्माद्देशसयमग्रहणप्रथमसमयादारभ्य तद्विशुद्धेरेकान्तवृद्धिकाल सख्येयगुण २ १ १ ॥ ५ एतस्माद्देशसयतस्यापूर्वकरणकाल सख्येयगुण २ ११ । ४ ॥ ६ । अस्मान्मिथ्यात्वस्य सम्यग्मिथ्यात्वस्य सम्यक्त्वप्रकृतिपरिणामस्यासयमस्य देशसयमस्य सकलसयमस्य च जघन्यकाल सख्येयगुण, परस्पर तु षण्णा समान २ १ १ । ४ । ४ ॥ ७ । अस्मादपूर्वकरणप्रथमसमये प्रारब्धो देशसयतस्य गुणश्रेण्यायाम सख्यातगुण २ ११ । ४ । ४ । ४ ॥ ८ एतस्मादेकान्तवृद्धिचरमसमयसभविजघन्यस्थितिबन्धाबाधाकाल सख्येयगुण २ १ १ १ ॥ ९ । एतस्मादपूर्वकरणप्रथमसमयसभव्युत्कृष्टस्थितिबन्धाबाधाकाल सख्येयगुण — २ १११ ४ ॥ १० । एते प्रागुक्ता सर्वेऽपि काला अन्तर्मुहूर्तमात्रा । तस्मादेकान्तवृद्धिचरमसमयसभव्यजघन्यस्थितिखण्डायामोऽसख्यातगुण प / ११ ॥ ११ । प्राक्तनकालस्यान्तर्मुहूर्तमात्रत्वेन चरमस्थितिखण्डायामस्य च पल्यसख्यातभागमात्रत्वेन तस्मादसख्यातगुणितत्वसभवात् । तस्मादपूर्वकरणप्रथमसमयसभविजन्यस्थितिखण्डायाम सख्येयगुण प / १ ॥ १२ । अस्मात्पल्य सख्येयगुण प ॥ १३ । अस्मादपूर्वकरणप्रथमसमयसभव्युत्कृष्टस्थितिखण्डायाम सख्यातगुण सा ७ / ८ ॥ १४ । तस्मादेकान्तवृद्धिचरमसमयसभविजघन्यस्थिति-

---

१ अपुव्वकरणस्स पढम जहण्णय ट्ठिदिखडय सखेज्जगुण । पलिदोवम सखेज्जगुण । उक्कस्सय ट्ठिदिखडय सखेज्जगुण । जहण्णाओ ट्ठिदिबधो सखेज्जगुणो । उक्कस्सओ ट्ठिदिबधो सखेज्जगुणो । जहण्णय ट्ठिदिसतकम्म सखेज्जगुण । उक्कस्सय ट्ठिदिसतकम्म सखेज्जगुण ।

कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १३५-१३७ ।

बन्ध सख्येयगुणा सा अ को २ ॥ १५ । तस्मादपूर्वकरणप्रथमसमयसभव्युत्कृष्टस्थितिवन्ध सख्येयगुण
४ । ४ । ४

सा अ को २ ॥ १६ । अस्मादेकान्तवृद्धिचरमसमयसभविजघन्यस्थित्तिसत्त्व सख्येयगुण सा अ को २ ॥ १७ ।
४ । ४ ४

एतस्मादपूर्वकरणप्रथमसमयसभवदुत्कृष्टस्थियिसत्त्व सख्येयगुण सा अ को २ ॥ १८ ॥ १७८–१८३ ॥

स० च०—सर्वतैं स्तोक तौ देशसयतका एकान्तवृद्धि कालका अतविपैं सभवता जघन्य अनुभाग खण्डोत्करण काल है । १ । तातै किछू विशेषकरि अधिक अपूर्व करणका प्रथम समविपै सभवता उत्कृष्ट अनुभाग खण्डोत्करण काल है । २ । तातै सख्यातगुणा देशसयतका एकातवृद्धि कालका अतसमयविषै सम्भवता जघन्य स्थितिकाडकोत्करण काल है । ३ ॥ १७८ ॥

स० च०—तातै किछू विशेषकरि अधिक अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै सभवता उत्कृष्ट स्थितिखण्डोत्करण काल है । ४ । तातैं सख्यातगुणा एकातवृद्धिकाल है । ५ । तातैं सख्यात-गुणा अपूर्वकरणका काल है । ६ ॥१७९ ॥

स० च०—तातै सख्यातगुणा मिथ्यात्व अर सम्यग्मिथ्यात्व अर सम्यक्त्वमोहनी इन तीनोका उदयकाल अर असयम अर देशसयम अर सकल सयम इन छहौका जघन्य काल परस्पर समान है ॥ ७ ॥ तातै सख्यातगुणा अपूर्वकरणका प्रथम समयविषैं जाका आरम्भ भया ऐसा देशसयमसम्बन्धी गुणश्रेणि आयाम है । ८ ॥ १८० ॥

स० च०—तातै सख्यातगुणा एकान्तवृद्धिका अन्तसमयविषैं सम्भवते स्थितिबन्धका जघन्य आबाधाकाल है । ९ । तातै सख्यातगुणा अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै सम्भवते स्थितिबन्धका उत्कृष्ट आबाधाकाल है । १० । इहा पर्यन्त ए कहे सर्वकाल ते प्रत्येक अन्तर्मुहूर्तमात्र ही जानने । तातैं असख्यातगुणा एकान्तवृद्धिका अन्तसमयविषै सम्भवता जघन्य स्थितिकाण्डक आयाम है । ११ ॥ १८१ ॥

स० च०—यहु कह्या अन्तविषै सन्भवता जघन्य स्थित्तिकाण्डकायाम सो पल्यका सख्यातवाँ भागमात्र है । तातै पूर्वोक्त अन्तर्मुहूर्तकालतै यहु अन्त खण्ड असंख्यातगुणा कह्या है ॥ १८२ ॥

स० च० – तातै सख्यातगुणा अपूर्वकरणका प्रथम समयविषैं मम्भवता जघन्य स्थिति-काण्डक आयाम है । १२ । तातै सख्यातगुणा पल्य है । १३ । तातै सख्यातगुणा अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै सम्भवता पृथक्त्व सागरप्रमाण उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकायाम है । १४ । तातै सख्यातगुणा एकान्तवृद्धिका अन्त समयविषै सम्भवता ऐसा जघन्य स्थितिबन्ध है । १५ । तातै सख्यातगुणा अपूर्वकरणका प्रथम समयविषैं सम्भवता ऐसा जघन्य उत्कृष्ट स्थितिबन्ध है । १६ । तातै सख्यातगुणा एकान्तवृद्धिका अन्त समयविषैं सम्भवता ऐसा जघन्य स्थितिसत्त्व है । १७ । तातै सख्यातगुणा अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै सम्भवता ऐसा उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व है । १८ । ॥ १८३ ॥ ऐसैं कालका अल्पवहुत्वके स्थिति कहि देशसयमविषैं परिणामनिकी विशुद्धतारूप लब्धि ताका अल्पबहुत्व कहिए है—

एवमल्पबहुत्वपदानि व्याख्याय देशसयमस्य जघन्योत्कृष्टलब्ध्यवसर तदल्पबहुत्व च प्रतिपादयितुमाह—

अवरवरदेसलद्धी से काले मिच्छसजमुवचण्णे।
अवरादु अणतगुणा उक्कस्सा देसलद्धी दु[1] ॥ १८४ ॥

अवरवरदेशलब्धि स्वकाले मिथ्यसयममुपपन्ने।
अवरादनतगुणा उत्कृष्टा देशलब्धिस्तु ॥ १८४ ॥

स० टी०—यो जीव देशसयमघातिकर्मोदयवशाद्देशसयमात्प्रतिपतन् तत्कालचरमसमये मिथ्यात्वाभिमुखो वर्तते तस्य तत्कालचरमसमयवर्तिनो मनुष्यस्य सर्वजघन्या देशसयमलब्धिर्भवति। य पुनरनन्तगुणविशुद्धिवृद्धया देशसयमपरमप्रकर्षं प्राप्य तदनन्तरसमये सकलसयम प्राप्स्यति तस्य मनुष्योत्कृष्टदेशसयमलब्धिर्भवति। एवमुक्तजघन्यदेशसयमाविभागप्रतिच्छेदेभ्य उत्कृष्टदेशसयमाविभागप्रतिच्छेदा अनन्तानन्तगुणा। तद्गुणकार अनन्तानन्तगुणितसर्वजीवराशिप्रमाण १६ ख ॥ १८४ ॥

देशसयमकी जघन्य और उत्कृष्ट लब्धिके साथ उनके अल्पबहुत्वका स्पष्टीकरण—

स० च०—जो जीव देशसयमका घाती जो कर्म ताके उदयके वशतै देशसयमतै पडता जो मिथ्यात्वके सन्मुख भया मनुष्य ताके तिस देशसयमका अन्त समयविषै जघन्य देशसयमलब्धि है। बहुरि अनन्तगुणी विशुद्धताकरि देशसयमके उत्कृष्टपनाकौ पाइ अनन्तर समयविषै सकल सयमकौ प्राप्त होसी ऐसा मनुष्यकै उत्कृष्ट देशसयमलब्धि हो है। बहुरि जघन्य देशसयमके अविभाग प्रतिच्छेदनितै अनन्तानन्तगुणा जीवराशि प्रमाणमात्र गुणकार करि गुणित उत्कृष्ट देशसयमके अविभागप्रतिच्छेद है ॥ १८४ ॥

अथ जघन्यदेशसयमाविभागप्रतिच्छेदप्रमाणप्रदर्शनार्थमिदमाह—

अवरे देसट्ठाणे होंति अणंताणि फड्ढयाणि तदो।
छट्ठाणगदा सव्वे लोयाणमसंखछट्ठाणा[2] ॥ १८५ ॥

अवरे देशस्थाने भवत्यनन्तानि स्पर्धकानि ततः।
षट्स्थानगतानि सर्वाणि लोकानामसंख्यषट्स्थानानि ॥ १८५ ॥

स० टी०—सर्वजघन्ये प्रागुक्ते देशसयमस्थाने अनन्तानन्तानि स्पर्धकान्यविभागप्रतिच्छेदा सर्वोत्कृष्टदेशसयमाविभागप्रतिच्छेदेभ्योऽनन्तगुणहीना सन्ति। ते च जघन्यदेशसयमाविभागप्रतिच्छेदा अनन्तानन्तगुणितसर्वजीवराशिप्रमाणा इति सिद्धान्तप्रतिपादिता द्रष्टव्या। तस्मात्सर्वजघन्यदेशसयमस्थानात्सर्वाणि सर्वोत्कृष्टपर्यन्तदेशसयमलब्धिस्थानानि षट्स्थानपतितविशुद्धिवृद्धया वर्धमानानि असख्यातलोकगुणितानि भवन्ति एकवारषट्स्थानपतितानि देशसयमलब्धिस्थानानि यद्येतावन्ति $\frac{१}{२ ∂}-\frac{१}{२ ∂}-\frac{१}{२ ∂}-\frac{१}{२ ∂}-\frac{१}{२ ∂}$— तदा असख्यात-

---

१ उक्कस्सिया लद्धी कस्स ? सजदासजदस्स सव्वविसुद्धस्स से काले सजमग्गाहयस्स। जहण्णिया लद्धी कस्स ? तप्पाओग्गसकिलिट्ठस्स से काले मिच्छत्त गाहदि त्ति। जहण्णिया सजमासजमलद्धी थोवा। उक्कस्सिया सजमासजमलद्धी अणतगुणा। कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १३९-१४१।

२ जहण्णय लद्धिट्ठाणमणताणि फद्दयाणि। तदो विदियलद्धिट्ठाणमणतभागुत्तर। एव छट्ठाणपदिदलद्धिट्ठाणाणि असखेज्जलोगा। कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १४३-१४६।

लोकमात्र ≡ a वारेषु कियन्ति इति त्रैराशिकेन सिद्धानि प्रतिपर्वासख्यातलोकभागमात्राणि। सर्वेषु पर्वसु मिलित्वाप्यसख्यातलोकमात्राण्येव षट्स्थानपतितानि देशसयमलब्धिस्थानानीत्यर्थ ॥ १८५ ॥

जघन्य देशसयमके अविभागप्रतिच्छेदोका कथन—

स० च०—सर्वतै जघन्य पूर्वोक्त देशसयमका स्थान ताविषै स्पर्धक कहिए अविभाग प्रतिच्छेद अनन्तानन्त पाइए हैं। ते उत्कृष्ट देशसयमके अविभाग प्रतिच्छेदनितै अनन्तानन्त गुणे घाटि हैं तौ भी सर्व जीवराशितै अनन्तगुणे है। बहुरि इस जघन्य स्थानतै लगाय असख्यात लोकमात्र देशसयम लब्धिके स्थान है। एक जीवकै एक कालविषै सम्भवै ताका नाम स्थान जानना। ते षट्स्थानपतित वृद्धि लीए है सो इनिका अनुक्रम गोम्मट्टसारका ज्ञानमार्गणा अधिकारविषै पर्याप्त समास श्रुतज्ञानका स्थान वर्णनविषै जैसै कीया है तैसैं जानना सो एक अधिक सूच्यगुलकौ पाँचवार माडि परस्पर गुणै जो प्रमाण होइ तितने स्थाननिविषै जो एकबार षट्स्थानपतित वृद्धि पूर्ण होइ तौ देशसयतके असख्यात लोकप्रमाण सर्वस्थाननिविषै केती वार होइ ऐसै त्रैराशिक कीए देशसयतके स्थाननिविषै प्रतिपातादि पर्व कहे तिनिविषै वा मिलिकरि सर्वस्थाननिविषै असख्यात लोकमात्रवार षट्स्थानपतित वृद्धि सम्भवै है ॥ १८५ ॥

अथ देशसयमप्रकारस्वरूप पर्वान्तरप्रमाण च प्ररूपयितुमिदमाह—

तत्थ य पडिवायगया पडिवच्चगया त्ति अणुभयगया त्ति।
उवरुवरिलद्धिठाणा लोयाणमसंखछट्ठाणा[1] ॥ १८६ ॥

तत्र च प्रतिपातगता प्रति ता इति अनुभयगता इति।
उपर्युपरि लब्धिस्थानानि लोकानामसंख्यषट्स्थानानि ॥ १८६ ॥

स० टी०—तत्र तेषु सयमलब्धिस्थानेषु मध्ये कानिचित्प्रतिपातगतानि कतिचित् प्रतिपद्यमानगतानि कियतिचिदनुभयगतानीति त्रिप्रकाराणि सर्वाण्यपि देशसयमलब्धिस्थानानि भवन्ति। प्रतिपातस्थानानामुपर्यसख्यातलोकमात्राणि षट्स्थानपतितानि देशसयमलब्धिस्थानानि अन्तरयित्वा प्रतिपद्यमानस्थानानि भवन्ति। तेषामुपर्यसख्यातलोकमात्राणि षट्स्थानानि अन्तरयित्वा अनुभयस्थानानि भवति तत्र प्रतिपातस्थानान्यसख्यातलोकमात्राण्यपि सर्वत स्तोकानि ≡ a तेभ्योऽसख्येयलाकगुणानि प्रतिपद्यमानस्थानानि ≡ a ≡ a तेभ्योऽसख्यातलोकगुणान्यनुभयस्थानानि ≡ a ≡ a ≡ a इति विशेषो ज्ञातव्य ॥ १८६ ॥

देशसयमके भेदो व उनमे अन्तरका कथन—

स० च०—तहाँ देशसयमके जघन्य स्थान तीन प्रकार हैं—प्रतिपातगत १ प्रतिपद्यमानगत १ अनुभयगत १ तहाँ देशसयमतै भ्रष्ट होतै अन्त समयविषै सम्भवते जे स्थान ते प्रतिपातगत हैं बहुरि देशसयमके प्राप्त होतैं प्रथम समयविषै सम्भवते जे स्थान ते प्रतिपद्यमानगत है। इन विना अन्य समयनिविषै सम्भवने जे स्थान ते अनुभय गत है। ते उपरि उपरि हैं। सोई कहिए है—

---

१ जहण्णए लद्धिट्ठाणे सजमासजम ण पडिवज्जदि। तदो असखेज्जे लोगे अइच्छिदूण जहण्णय पडिवज्जमाणस्स पाओग्ग लद्धिट्ठाणमणतगुण। कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १४६-१४७।

एत्थ पडिवादट्ठाणद्धाण थोव। पडिवज्जमाणट्ठाणद्धाणमसखेज्जगुण। अपडिवादापडिवज्जमाणट्ठाणद्धाणमसखेज्जगुण। गुणगारो पुण असखेज्जा लोगा। जयध० पु० १३, पृ० १४९।

देशसयमका जो जघन्य स्थान सभवते थोरी विशुद्धतायुक्त सो तौ नीचै ही नीचै लिख्या। ताके ऊपरि तातै अनन्तवाँ भागमात्र अधिक विशुद्धतायुक्त द्वितीय स्थान लिख्या ऐसै क्रमतै उपरि उपरि उत्कृष्ट स्थानपर्यन्त रचना भई। तहाँ जघन्य स्थान आदि केते इक नीचेके स्थान ते तौ प्रतिपातरूप जानने। बहुरि तिनके ऊपरि जिनका कोई स्वामी नाही ऐसे असख्यात लोकमात्र स्थान षट्स्थानपतित वृद्धि लीये अन्तरालविषै होइ तिनके ऊपरि प्रतिपद्यमान स्थान पाइए है। बहुरि तिनके ऊपरि असख्यात लोकमात्र स्थान पट्स्थान पतित वृद्धि लीये अन्तरालविषै होइ तब तिनके ऊपर अनुभयगत्त स्थान पाइए है। तहाँ प्रतिपातस्थान थोरे है, तेऊ असख्यात्त लोक-मात्र हैं अर तिनतै असख्यात लोकगुणे प्रतिपद्यमान स्थान है। अर तिनतै असख्यात लोकगुणे अनुभय स्थान हैं॥ १८६॥

अथ मनुष्यतिर्यग्जीवदेशसयमलब्धिस्थानाना प्रतिपातादिभेदभिन्नाना जघन्योत्कृष्टस्थानावसर प्ररुपयितु-मिदमाह—

णरतिरिये तिरियणरे अवर अवरं वर वर तिसु वि।
लोयाणमसखेज्जा छट्ठाणा हौंति तम्मज्झे॥ १८७॥

नरतिरश्चि तिर्यग्नरे अवर अवरं वरं वरं त्रिष्वपि।
लोकानामसख्येयानि षट्स्थानानि भवति तन्मध्ये॥ १८७॥

स० टी०—देशसयमस्य सर्वजघन्य प्रतिपातस्थान मनुष्ये सभवति। तत परमसख्यातलोकमात्राणि पट्स्थानपतितानि मनुष्यसबन्धीन्येव देशसयमलब्धिस्थानान्युल्लङ्घ्य तिर्यग्जीवसवन्धिजघन्यप्रतिपातस्थान भवति। तत पर नरतिर्यग्जीवसाधारणान्यसख्यातलोकमात्राणि देशसयमलब्धिस्थानान्यतिक्रम्य तिर्यग्जीवस्यो-त्कृष्टप्रतिपातस्थान जायते। तत परमसख्यातलोकमात्राणि देशसयमलब्धिस्थानानि नीत्वा मनुष्यस्योत्कृष्ट प्रतिपातस्थानमुत्पद्यते। तत परमसख्यातलोकमात्राणि देशसयमलब्धिस्थानानि तत्परिणामयोग्यस्वामिनाम-भावादन्तरयित्वा मनुष्यस्य जघन्य प्रतिपद्यमानस्थान भवति। तत पर मनुष्यसभवीन्येवासख्यातलोकमात्राणि देशसयमलब्धिस्थानानि नीत्वा तिर्यग्जीवस्य जघन्य प्रतिपद्यमानस्थान भवति। तत परमसख्यातलोक-मात्राणि नरतिर्यग्जीवसाधारणानि देशसयमलब्धिस्थानानि गमयित्वा तिर्यग्जीवस्योत्कृष्ट प्रतिपद्यमानस्थान जायते। तत परमसख्यातलोकमात्राणि मनुष्यसबन्धीन्येव देशसयमलब्धिस्थानान्युल्लङ्घ्य मनुष्यस्योत्कृष्ट भवति। तत परमसख्यातलोकमात्राणि पट्स्थानपतितानि देशसयमलब्धिस्थानानि पूर्ववदन्तरयित्वा मनुष्यस्य जघन्यमनुभयस्थान जायते। तत परमसख्यातलोकमात्राणि मनुष्यसबन्धीन्येव देशसयमलब्धिस्थानानि नीत्वा तिर्यग्जीवस्य जघन्यमनुभयस्थानमुत्पद्यते। तत पर नरतिर्यग्जीवसाधारणान्यसख्येयलोकमात्राणि देशसयमलब्धिस्थानानि नीत्वा तिर्यग्जीवस्योत्कृष्टमनुभयस्थानमुत्पद्यते। तत पर नरसबन्धीन्येवासख्यात-लोकमात्राणि पट्स्थानपतितानि देशसयमलब्धिस्थानान्यतिस्थाप्य मनुष्यस्योत्कृष्टमनुभयस्थानमुत्पद्यते। यथासख्येन नरतिरश्चोस्तिर्यग्नरयोश्च जघन्य जघन्यमुत्कृष्टमुत्कृष्ट च त्रिष्वपि प्रतिपातप्रतिपद्यमानानुभय-स्थानेषु सभवति। तेषा नरजघन्यतिर्यग्जघन्यादीना मध्येऽन्तराले षट्स्थानपतितान्यसख्यातलोकमात्राणि देशसयमलब्धिस्थाननि भवन्तीति गाथासूत्रव्याख्यान निरवद्यम्॥ १८७॥

देशसयमके जघन्य और उत्कृष्टरूपसे उक्त भेद किसके कौन होते है इसका खुलासा—

स० च०—देशसयमका सर्वतैं जघन्य प्रतिपात स्थान मनुष्यकै हो हैं। तातै ऊपरि षट्-

स्थानपतित वृद्धि लीए असख्यात लोकमात्र प्रतिपातस्थान ऐसे है जे मनुष्य ही कै होइ तातै परै तिर्यंचकै सम्भवता जघन्य प्रतिपातस्थान होइ। तातै ऊपरि मनुष्य वा तिर्यंच दोऊनिकै सम्भवै ऐसे असख्यात लोकप्रमाणस्थान होइ उपरि तिर्यंचका उत्कृष्ट प्रतिपातस्थान है। तातै परें मनुष्य ही कै सम्भवै ऐसे असख्यात लोकमात्र स्थान होइ उपरितन स्थित मनुष्यका उत्कृष्ट प्रतिपातस्थान है। ताके उपरि असख्यात लोकमात्रस्थान ऐसे है जिनका कोऊ स्वामी नाही ते किसी जीवकैं न होइ, तिनका अन्तराल करि तातै परै मनुष्यका जघन्य प्रतिपद्यमान स्थान है तातै परै मनुष्यकै होइ ऐसे असख्यात लोकमात्रस्थान होइ परै तिर्यंचका जघन्य प्रतिपद्यमान स्थान है। तातै परै मनुष्य वा तिर्यंचकै सम्भवते ऐसे असख्यात लोकमात्र स्थान होइ ऊपरि तिर्यंचका उत्कृष्ट प्रतिपद्यमान स्थान है तातै उपरि मनुष्यहीकैं सम्भवते असख्यात लोकमात्र स्थान होइ उपरि मनुष्यका उत्कृष्ट प्रतिपद्यमानस्थान है तातै परै असख्यात लोकमात्र स्थान ऐसे हैं जिनका कोऊ स्वामी नाही, तिनिका अन्तरालकरि परै मनुष्यका जघन्य अनुभयस्थान हो है। तातैं परै मनुष्यहीकै सम्भवते असख्यातलोकमात्र स्थान होइ उपरि तिर्यंचका जघन्य अनुभय स्थान है। तातै परै मनुष्य वा तिर्यंचकै सम्भवते असख्यातलोकमात्र स्थान होइ उपरि तिर्यंचका उत्कृष्ट अनुभय स्थान है। तातै परै मनुष्यहीकै सम्भवते असख्यातलोकमात्र स्थान होइ उपरि मनुष्यका उत्कृष्ट अनुभय स्थान हो है। ऐसै क्रमतै मनुष्य तिर्यंचका जघन्य अर जघन्य उत्कृष्ट अर उत्कृष्ट प्रत्येक प्रतिपात प्रतिपद्यमान अनुभय स्थानविषै सम्भवै है ते जानने। अर बीचिमे अन्तराल स्थान जानने ते स्थान असख्यातलोकमात्र षट्स्थानपतित वृद्धि युक्त हैं। ऐसै गाथाका अर्थ समझना ॥ १८७ ॥

अथ प्रतिपातादीना लक्षण तत्स्वामिभेद च प्रदर्शयितुमिदमाह—

पडिवाददुगवरवर मिच्छे अयदे अणुभयगजहण्ण ।
मिच्छचरविदियसमये तत्तिरियवर तु सट्ठाणे[1] ॥ १८८ ॥

प्रतिपातद्विकावरवर मिथ्ये अयते अनुभयगजघन्यं ।
मिथ्याचरद्वितीयसमये तत्तिर्यग्वर तु स्वस्थाने ॥ १८८ ॥

स० टी०—प्रतिपातो वहिरन्तरङ्गकारणवशेन सयमात्प्रच्यव । स च सक्लिष्टस्य तत्कालचरमसमये

---

१ तिव्व-मददाए अप्पाबहुअ। सव्वमदाणुभाग जहण्णय सजमासजमस्स लद्धिट्ठाण। मणुसस्स पडिवदमाणयस्स जहण्णय लद्धिट्ठाण तत्तिय चेव। तिरिक्खजोणियस्स पडिवदमाणयस्स जहण्णय लद्धिट्ठाणमणतगुण। तिरिक्खजोणियस्स पडिवदमाणयस्स उक्कस्सय लद्धिट्ठाणमणतगुण। मणुससजदासजदस्स पडिवदमाणगस्स उक्कस्सय लद्धिट्ठाणमणतगुण। मणुसस्स पडिवज्जमाणगस्स जहण्णय लद्धिट्ठाणमणतगुण। तिरिक्खजोणियस्स पडिवज्जमाणगस्स जहण्णय लद्धिट्ठाणमणतगुण। तिरिक्खजोणियस्स पडिवज्जमाणयस्स उक्कसय लद्धिट्ठाणमणतगुण। मणुस्सस्स पडिवज्जमाणगस्स उक्कस्सय लद्धिट्ठाणमणतगुण। मणुसस्स अपडिवज्जमाण अपडिवदमाणयस्स जहण्णय लद्धिट्ठाणमणतगुण। तिरिक्खजोणियस्स अपडिवज्जमाण-अपडिवदमाणयस्स जहण्णय लद्धिट्ठाणमणतगुण। तिरिक्खजोणियस्स अपडिवज्जमाण-अपडिवदमाणगस्स उक्कस्सय लद्धिट्ठाणमणतगुण। मणुसस्स अपडिवज्जमाण-अपडिवदमाणयस्स उक्कस्सय लद्धिट्ठाणमणतगुण। कसाय० चु०, जयध० पु० १३ पृ० १४९–१५३।

विशुद्धिहान्या सर्वजघन्यदेशसंयमशक्तिकस्य मनुष्यस्य तदनन्तरसमये मिथ्यात्वं प्रतिपत्स्यमानस्य भवति । तत्र सम्यक्त्वदेशसंयमयोर्विनाशसंभवात् । तथा तिर्यग्जीवस्य जघन्यं प्रतिपातस्थानं सम्यक्त्वदेशसंयमाभ्यां प्रच्युत्य मिथ्यात्वं गमिष्यतो देशसंयमकालचरमसमये संभवति । एतच्च मनुष्यजघन्यप्रतिपातस्थानादनन्तगुणविशुद्धिकं ज्ञेयम् । असंख्यातलोकवारषट्स्थानपतितविशुद्धिवृद्ध्या वर्धमानत्वात् । तथा तिर्यग्जीवस्य स्वयोग्यसंक्लेशवशेन देशसंयमात्प्रच्यवमानस्य तत्कालचरमसमये उत्कृष्टं प्रतिपातस्थानमसंयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानं प्राप्स्यतो भवति । इदमपि तिर्यग्जघन्यप्रतिपातस्थानादनन्तगुणविशुद्धिकं प्राग्वज्ज्ञेयम् । तथा मनुष्यस्य देशसंयमात्प्रच्युत्य स्वयोग्यसंक्लेशवशेनानन्तरं वेदकासंयतगुणस्थानं गमिष्यत उत्कृष्टं प्रतिपातस्थानं भवति । इदमपि तिर्यगुत्कृष्टप्रतिपातस्थानादनन्तगुणविशुद्धिकं प्राग्वद् ज्ञेयम् ।

मनुष्यजघन्यप्रतिपातस्थानादारभ्य तिर्यग्जीवस्यानुत्कृष्टप्रतिपातस्थानपर्यंतं संभवन्ति प्रतिपातस्थानानि मिथ्यात्वाभिमुखस्यैव देशसंयमकालचरमसमये दृष्टव्यानि तिर्यगुत्कृष्टप्रतिपातस्थानादारभ्य मनुष्योत्कृष्टप्रतिपातस्थानपर्यन्तं सन्ति प्रतिपातस्थानानि असंयतसम्यक्त्वाभिमुखस्य स्वकालचरमसमये घटन्त इत्यर्थविशेषो ग्राह्यः । तिर्यगुत्कृष्टप्रतिपातस्थानान्मनुष्योत्कृष्टप्रतिपातस्थानं पूर्ववदनन्तगुणविशुद्धिकं ज्ञातव्यम् ।

तथा मनुष्यस्य पूर्वं मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा पश्चात्सम्यक्त्वेन सह देशसंयमं प्रतिपद्यमानस्य तत्प्रथमसमये संभवज्जघन्यप्रतिपद्यमानस्थानं मनुष्योत्कृष्टप्रतिपातस्थानादनन्तगुणविशुद्धिकं अन्तरेऽसंख्यातलोकमात्राणि षट्स्थानान्युल्लङ्घ्य समुत्पादात् तथा तिर्यग्जीवस्य मिथ्यादृष्टिचरस्य सम्यक्त्वदेशसंयमौ युगपत् प्रतिपद्यमानस्य तत्प्रथमसमये वर्तमानं जघन्यं प्रतिपद्यमानस्थानं मनुष्यजघन्यप्रतिपद्यमानादनन्तगुणविशुद्धिकं प्रतिपत्तव्यम् । तथा तिर्यग्जीवस्य प्रागसंयतसम्यग्दृष्टिर्भूत्वा पश्चाद्देशसंयमं प्रतिपद्यमानस्य तत्प्रथमसमये संभवदुत्कृष्टप्रतिपद्यमानस्थानं तिर्यग्जघन्यप्रतिपद्यमानस्थानात्प्राग्वदनन्तगुणविशुद्धिकं बोद्धव्यम् । तथा मनुष्यस्यासंयतसम्यग्दृष्टिचरस्य देशसंयमं प्रतिपद्यमानस्य तत्प्रथमसमये घटमानमुत्कृष्टं प्रतिपद्यमानस्थानं तिर्यगुत्कृष्टप्रतिपद्यमानस्थानात् पूर्ववदनन्तगुणविशुद्धिकं निश्चेतव्यम् । मनुष्यजघन्यप्रतिपद्यमानात्प्रभृति तिर्यगनुत्कृष्टप्रतिपद्यमानस्थानपर्यन्तं संभवन्ति प्रतिपद्यमानस्थानानि मिथ्यादृष्टिचरस्येति ग्राह्यम् । तिर्यगुत्कृष्टप्रतिपद्यमानस्थानादारभ्य मनुष्योत्कृष्टप्रतिपद्यमानस्थानपर्यन्तं विद्यमानानि स्थानानि असंयतसम्यग्दृष्टिचरस्य भवन्तीति ज्ञातव्यम् ।

तथा मनुष्यस्य मिथ्यादृष्टिचरस्य सम्यक्त्वेन सह देशसंयतं प्रतिपद्य द्वितीयसमये वर्तमानस्य जघन्यमनुभयस्थानं मनुष्योत्कृष्टप्रतिपद्यमानस्थानादनंतगुणविशुद्धिकं अन्तरेऽसंख्यातलोकमात्रषट्स्थानपतितविशुद्धिवृद्ध्या वर्धमानत्वात् । तथा तिर्यग्जीवस्य मिथ्यादृष्टिचरस्य सम्यक्त्वेन सार्धं देशसंयमं प्रतिपद्य द्वितीयसमये वर्तमानस्य जघन्यमनुभयस्थानं मनुष्यजघन्यानुभयस्थानात्पूर्ववदनन्तगुणविशुद्धिकम् । तथा तिर्यग्जीवस्यासंयतसम्यग्दृष्टिचरस्य देशसंयमं प्रतिपद्य एकान्तवृद्धिचरमसमये स्वगतियोग्यसर्वविशुद्धिविशिष्टस्योत्कृष्टमनुभयस्थानं तिर्यग्जघन्यानुभयस्थानात्प्राग्वदनन्तगुणं तथा मनुष्यस्यासंयतसम्यग्दृष्टिचरस्य देशसंयमं प्रतिपद्य एकान्तवृद्धिचरमसमये सर्वविशुद्धिविशिष्टस्य सकलसंयमाभिमुखस्योत्कृष्टमनुभयस्थानं तिर्यगुत्कृष्टानुभयस्थानात्प्राग्वदनन्तगुणविशुद्धिकं ग्राह्यम् । मनुष्यजघन्यानुभयस्थानादारभ्यतिर्यगनुत्कृष्टानुभयस्थानपर्यन्तं संभवन्ति स्थानानि मिथ्यादृष्टिचरस्येति ग्राह्यम् । तिर्यगुत्कृष्टानुभयस्थानादारभ्य मनुष्योत्कृष्टानुभयस्थानपर्यन्तं दृश्यमानानि स्थानानि असंयतसम्यग्दृष्टिचरस्येति ।

प्रतिपातद्विकस्य प्रतिपातप्रतिपद्यमानयोः अवरं मिथ्यात्वे पततः मिथ्यादृष्टिचरस्य संभवति वरमुत्कृष्टं देशसंयमलब्धिस्थानादसंयते पतिष्यतः असंयतचरस्य च संभवति । अनुभयजघन्यं मिथ्यादृष्टिचरस्य देशसंयमग्रहणद्वितीयसमये वर्तमानस्य भवति । अनुभयोत्कृष्टं तु असंयतचरस्य एकान्तवृद्धिचरमसमये मनुष्यस्य सकल-

सयमाभिमुखस्य तिर्यग्जीवस्य च एकान्तवृद्धिचरमसमयरूपस्वकीयस्थाने एव स्थितस्य सभवतीति सूच्यते। एवं गाथासूत्रव्याख्यानमुक्तम् ॥ १८८ ॥

इति देशसयमलब्धिविधानाधिकार समास ॥

उक्त भेदोका स्वरूप और उनमेसे किसका कौन स्वामी है इसका स्पष्ट निर्देश—

स० च०—प्रतिपात नाम सयमतैं भ्रष्ट होनेका है सो सक्लेश परिणामनितैं सयमतै भ्रष्ट होतैं देशसयतका अन्त समयविषै प्रतिपातस्थान हो है। अर प्राप्त भयाका नाम प्रतिपद्यमान स्थान है। सो देशसयतका प्रथम समयविषै प्रतिपद्यमान स्थान हो है। अर दोऊरहितका नाम अनुभय है। सो देशसयतके इनि बिना अन्य समयनिविषै अनुभयस्थान हो है। तहा मिथ्यात्वकौ सन्मुख मनुष्यकै जघन्य प्रतिपातस्थान हो है अर मिथ्यात्वकौ सन्मुख तिर्यंचकै जघन्य प्रतिपात-स्थान हो है। अर असयतकौ सन्मुख तिर्यंचकै उत्कृष्ट प्रतिपातस्थान हो है। अर असयतकौ सन्मुख मनुष्यकै उत्कृष्ट प्रतिपातस्थान हो है। अर मिथ्यात्वतै चढ्या तिर्यंचकै जघन्य प्रति-पद्यमानस्थान हो है। अर मिथ्यादृष्टितै भया देशसयतका दूसरा समयविषै मनुष्यकै जघन्य अनुभयस्थान हो है। अर मिथ्यादृष्टितैं भया देशसयतका दूसरा समयविषै तिर्यंचकै जघन्य अनुभयस्थान हो है। अर असयततै भया देशसयतकै एकान्तवृद्धिका अन्त समयविषै तिर्यंचकै उत्कृष्ट अनुभयस्थान हो है। अर असयततै भया देशसयतकै एकान्तवृद्धिका अन्त समयविषै सकलसयमकौ सन्मुख मनुष्यकै उत्कृष्टस्थान हो है।

ए बारह स्थानक कहे तिनविषै पूर्व-पूर्व स्थानकी विशुद्धतातै उत्तर-उत्तर स्थानविषै असख्यातलोकबार भई जो षट्स्थानपतितवृद्धि ताकरि वर्धमान ऐसी अनन्तगुणी विशुद्धता क्रमतै जाननी। बहुरि इतना जानना—

प्रतिपातस्थाननिविषैं मनुष्यका जघन्यतै लगाय तिर्यंचका अनुत्कृष्ट स्थान पर्यंत जे स्थान हैं ते तौ मिथ्यात्वकौ सन्मुख जीवहीकै होइ। अर तिर्यंचका उत्कृष्टतै लगाय मनुष्यका उत्कृष्ट पर्यंत जे स्थान हैं ते असयतका सन्मुख जीवकै ही हो हैं। बहुरि प्रतिपद्यमान स्थाननिविषै मनुष्यका जघन्यतै लगाय तिर्यंचका अनुत्कृष्टपर्यन्त जे स्थान हैं ते तौ मिथ्यादृष्टितै देशसयत भया ताहीकै होइ अर तिर्यचका उत्कृष्टतै लगाय मनुष्यका उत्कृष्टपर्यन्त जे स्थान हैं ते असयततै देशसयत भया ताकै होइ। बहुरि अनुभय स्थानविषै मनुष्यका जघन्यतै लगाय तिर्यंचका अनुत्कृष्ट पर्यन्त जे स्थान है ते तौ मिथ्यादृष्टितै भया देशसयतहीकैं होइ। अर तिर्यंचका उत्कृष्टतै लगाय मनुष्यका उत्कृष्ट पर्यन्त जे स्थान है ते असयततै भया देशसयतहीकैं होइ ॥ १८८ ॥

विशेष—सयमासयमसे गिरने, सयमासयमको प्राप्त करने और इन दोनो से अतिरिक्त गिरने और सयमासयमको प्राप्त करनेके अतिरिक्त स्वस्थानमे अवस्थित रहनेकी अपेक्षा सयमा-सयम तीन प्रकारका है। अधिकारी भेदसे ये तीनो स्थान छह प्रकारके हो जाते है क्योकि मनुष्य और तिर्यग्योनि जीव इन स्थानोको प्राप्त करते है। उसमे भी ये जघन्य और उत्कृष्ट रूप दोनो प्रकारके होते हैं। इस प्रकार कुल बारह भेदरूप सयमसयमलब्धि है। उक्त अल्पबहुत्व द्वारा उसीका निर्देश किया गया है। चूर्णिसूत्रमे ये स्थान तेरह निर्दिष्ट किये हैं। सो पहला स्थान ओघसे कहकर वह स्थान गिरकर मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले सयतासयत मनुष्यके सम्भव है,

इसलिये चूर्णिसूत्रमे मनुष्यके जघन्य प्रतिपातस्थानका निर्देश करते हुए ओघ कर उसीको दुहराया है। इतना यहाँ स्पष्टीकरणके रूपमे विशेष जानना चाहिये कि जहाँ तिर्यञ्चोके बाद मनुष्योके प्रतिपातस्थान समाप्त होते है वहाँसे लेकर मनुष्योके जघन्य प्रतिपद्यमान स्थानोके प्राप्त होनेके मध्य असख्यात लोकप्रमाण अन्तर जानना चाहिए। इसी प्रकार मनुष्योके उत्कृष्ट प्रतिपद्यमान-स्थान और उन्हीके जघन्य अप्रतिपद्यमान-अप्रतिपतमान स्थानके मध्य असख्यात लोकप्रमाण अन्तर जानना चाहिए। अन्तरका अर्थ है कि यहाँ जो अन्तर कहा है वह सयमासयमलब्धिसे रहित है। प्रतिपातस्थान सयमासयमसे गिरनेके अन्तिम समयमे होते है। प्रतिपद्यमानस्थान सयमासयमको प्राप्त करनेके प्रथम समयमे प्राप्त होते है तथा अप्रतिपद्यमान-अप्रतिपतमान स्थान उक्त दोनो प्रकारके स्थानोके मध्य सयमासयममे अवस्थित रहते हुए रहते है। वैसे सब विशेषताओका निर्देश सस्कृत और हिन्दी टीकामे किया ही है। स्पष्टीकरणकी दृष्टिसे कुछ विशेषताओ-का निर्देश यहाँ किया है।

अन्तमे सयमासयमलब्धिको समाप्त करते हुए चूर्णिसूत्रोके अनुसार जयधवलामे जिन तथ्योका निर्देश किया गया है उनकी यहाँ मीमासा कर लेना आवश्यक है। यथा—१ सयतासयत जीव अप्रत्याख्यानकषायको नही वेदता, क्योकि उसके अप्रत्याख्यानकषायकी उदयशक्तिका अत्यन्त परिक्षय होता है। इससे सयमासयमलब्धि औदयिक नही है यह सिद्ध होता है। २ प्रत्याख्यानावरणीय कषायका उदय होते हुए भी वे सयमासयमको आवृत नही करते। उनका उदय सयमासयमका कुछ भी उपघात नही करता यह इसका तात्पर्य है, क्योकि वे सकलसयमके प्रतिबन्धक होनेसे देशसयममे उनका व्यापार नही स्वीकार किया गया है। ३ शेष चार सज्वलन और नौ नोकषाय उदीर्ण होकर वे देशसयमको देशघाति करते है। इसलिए देशसयमको क्षायोपशमिक स्वीकार किया गया है, क्योकि वे सयमासयमको देशघाति करते हैं इसका अर्थ है कि वे सयमासयमको क्षायोपशमिक करते हैं। उनके उदयको देशघाति नही माना जाय तो सयमासयमकी उत्पत्तिका विरोध हो जायगा। इसलिए चार सज्वलन और नौ नोकषायोके सर्वघाति स्पर्धकोका उदयाभावी क्षय होनेसे और उन्हीके देशघाति स्पर्धकोका उदय होनेसे सयमासयम क्षायोपशमिक स्वीकार किया गया है। ४ सयमासयम जीव अप्रत्याख्यानावरणका तो वेदन करता नही। प्रत्याख्यानावरणका वेदन करता हुआ भी वह सयमासयमका न तो उपघात ही करता है और न अनुग्रह ही करता है। इसलिए प्रत्याख्यानावरणका वेदन करता हुआ भी वह यदि चार सज्वलन और नौ नोकषायका वेदन न क तो सयमासयमलब्धि क्षायिक हो जायगी। अर्थात् जैसे क्षायिकलब्धि एक प्रकारकी होती है वैसे सयमासयमलब्धि भी एक प्रकारकी हो जायगी। पर ऐसा सम्भव नही है, इसलिए वहाँ चार सज्वलन और नौ नोकषायोका उदय देशघाति होता है, अत सयमासयमलब्धि क्षायोपशमिक होती है ऐसा स्वीकार किया गया है। और क्षयोपशमके असख्यात लोकप्रमाण भेद हैं, इसलिए सयमासयमलब्धि भी असख्यात लोकप्रमाण स्वीकार की गई है।

इसप्रकार देशसयमलब्धि समाप्त हुई।

अथ सकलसंयमलब्धिः ॥ ॥

अथ सकलचारित्रप्ररूपणमुपक्रममाण इद सूत्रमाह—

सयलचरित्त तिविह खयउवसमि उवसम च खइय च ।
सम्मत्तुप्पत्तिं वा उवसमसम्मेण गिण्हदो पढम[1] ॥ १८९ ॥

सकलचारित्र त्रिविध क्षायोपशमिक औपशमिकं च क्षायिकं च ।
सम्यक्त्वोत्पत्तिमिव उपशमसम्येन गृह्णत प्रथमम् ॥ १८९ ॥

स० टी०—सकलचारित्र त्रिविध क्षायोपशमिकमुपशमज क्षायिक चेति । तत्र प्रथम क्षायोपशमिक-चारित्रमुपशमजसम्यक्त्वेन सह गृह्णतो जीवस्य प्रथमोपशमसम्यक्त्वोत्पत्तौ यथा प्रक्रिया प्रागुक्ता यथा अत्रापि निरवशेष वक्तव्या ॥ १८९ ॥

अथ सकल चारित्रकौ प्ररूपै है—

स० च०—सकल चारित्र तीन प्रकार है—क्षायोपशमिक १ औपशमिक २ क्षायिक । १ । तहा पहला क्षायोपशम्कि चारित्र सातवे वा छठे गुणस्थानविषैं पाइए है । ताकौ जो जीव उपशम सम्यक्त्वसहित ग्रहण करै है सो मिथ्यात्वतै ग्रहण करै है ताका तौ सर्व विधान प्रथमोशम सम्यक्त्वकी उत्पत्तिविषै कह्या है सो जानना । क्षायोपशमिक चारित्रकौ ग्रहता जोव पहलैं अप्रमत्त गुणस्थानकौं प्राप्त हो है ॥ १८९ ॥

विशेष—सकल सावद्यके विरतिस्वरूप पाँच महाव्रत, पाँच समिति और तीन गुप्तियोको प्राप्त होनेवाले मनुष्यके जो विशुद्धिरूप परिणाम होता है उसे सयमलब्धि या सकलसयम कहते हैं। अनन्तानुबन्धी आदि बारह कषायोकी उदयाभावलक्षण उपशमनाके होनेपर यह उत्पन्न होता है । यद्यपि यहाँ चार सज्वलन और नौ नोकषायोका उदय है । परन्तु वहाँ उनके सर्वधाति-स्पर्धकोका उदय न रहनेसे उनका भी देशोपशम पाया जाता है । स्थिति उपशमना दो प्रकारसे सम्भव है—एक तो अनुदयवाली पूर्वोक्त प्रकृतियोकी स्थितियोका उदयरूप न होना स्थिति उपशमना है । दूसरे सभी कर्मोंकी अन्त कोडाकोडीसे उपरिम स्थितियोका उदयरूप न होना स्थिति उपशमना है । पूर्वोक्त बारह कषायोके अनुभागका उदयरूप न होना अनुभाग उपशमना है । तथा उदयरूप कषायोके सर्वघाति स्पर्धकोका उदय न होना अनुभाग उपशमना है । ज्ञाना-वरणादिकर्मों के भी त्रिस्थानीय और चतु स्थानीय अनुभागके परित्यागपूर्वक द्विस्थानीय अनु-भागकी प्राप्ति अनुभाग उपशमना है । अनुदयरूप उन्ही पूर्वोक्त कषायोके प्रदेशोका उदय नही होना प्रदेश उपशामना है । ये सब विशेषताएँ सयमासयमलब्धिके प्राप्त होते समय भी रहती

---

१ का सजमलद्धी णाम ? पचमहव्वय-पचसमिदि-तिण्णिगुत्तीओ सयलसावज्जविरइलक्खणाओ पडि-वज्जमाणस्स जो विसोहिपरिणामो सो सजमलद्धि त्ति विण्णायदे, खओवसमियचरित्तलद्धीए सजमलद्धिववएसा-लवणादो । ओवसमिय-खइयसजमलद्धीओ एत्थ किण्ण गहिदाओ ? ण, चारित्तमोहोवसामणाए तक्खवणाए च तासि पवधेण परूवणोवलभादो । जयध० पु० १०७ ।

है। अन्तर केवल इतना है कि सयमासयमलब्धिके कालमे प्रत्याख्यानावरण कषायका निरन्तर उदय रहा आता है। यहाँ सयमलब्धिमे चार सज्वलन और नौ नोकपायोके सर्वघाती स्पर्धकोका उदयाभावरूप क्षय और उपशम बना रहता है, इसलिए यह भी सयमासयमलब्धिके समान क्षायोपशमभावरूप है ऐसा यहाँ समझना चाहिए। सयमलब्धि उपशमरूप सयमलब्धि और क्षायिकरूप सयमलब्धि भी होती है, पर उनकी प्रकृतमे विवक्षा नही है।

अथ वेदकयोग्यमिथ्यादृष्टयादीना सकलसयम गृह्णता प्रक्रियाविशेषप्रदर्शनार्थमिदमाह—

वेदगजोगो मिच्छो अविरददेसो य दोण्णिकरणेण।
देसवद वा गिण्हदि गुणसेढी णत्थि तक्करणे ॥ १९० ॥

वेदकयोगो मिथ्यो अविरतदेशश्च द्विकरणेन।
देशव्रतमिव गृह्णाति गुणश्रेणी नास्ति तत्करणे ॥ १९० ॥

स० टी०—वेदकसम्यक्त्वग्रहणयोग्यो मिथ्यादृष्टिर्वा वेदकसम्यग्दृष्टिरविरतो वा देशव्रती वा देशव्रतग्रहणवदध प्रवृत्तापूर्वकरणद्वयपरिणामैरेव सकलसयम गृह्णाति। तत्करणद्वयेऽपि गुणश्रेणी नास्ति सकलसयमग्रहणप्रथमसमयादारभ्य गुणश्रेण्यस्ति ॥ १९० ॥

स० चं०—वेदक सम्यक्त्वसहित क्षायोपशम चारित्रकौ मिथ्यादृष्टि वा अविरत वा देशसयत जीव है सो देशव्रतग्रहणवत् अध प्रवृत्त वा अपूर्वकरण इन दोय ही करणकरि ग्रहै है। तहा करणविषै गुणश्रेणि नाही है। सकल सयमका ग्रहण समयतै लगाय गुणश्रेणि हो है ॥ १९० ॥

इत पर देशसयमवदेवात्रापि प्रक्रिया भवतीत्यतिदेशार्थमिदमाह—

एत्तो उवरिं विरदे देसो वा होदि अप्पबहुगो त्ति।
देसो त्ति य तट्ठाणे विरदो त्ति य होदि वत्तव्व ॥ १९१ ॥

अत उपरि विरते देश इव भवति अल्पबहुकत्वमिति।
देश इति तत्स्थाने विरत इति च भवति वक्तव्यम् ॥ १९१ ॥

स० टी०—इत परमल्पबहुत्वपर्यन्त देशसयते यादृशी प्रक्रिया तादृश्येवात्रापि सकलसयते भवतीति ग्राह्यम्। अय तु विशेष —यत्र यत्र देशसयत इत्युच्यते तत्र तत्र स्थाने विरत इति वक्तव्य भवति। तद्यथा—

अध प्रवृत्तकरणादीना कालाल्पबहुत्व सम्यक्त्वोत्पत्तिवत् स्थितिखण्डसहस्रेषु गतेष्वपूर्वकरणकाल समाप्यते तदनन्तरसमये सकलसयत सन् असख्यातसमयप्रबद्धद्रव्यमपकृष्यावस्थितिगुणश्रेणिं पूर्ववत्करोति। एव प्रतिसमयमसख्यातगुणक्रमेण द्रव्यमपकृष्य एकान्तवृद्धिचरमसमयपर्यन्तमवस्थितगुणश्रेणिं करोति। तत्काले बहुषु स्थितिकाण्डकसहस्रेषु गतेषु तदनन्तरसमयादारभ्य स्वस्थानसकलसयतो भवति। तत्र तत्र स्वस्थानसकलसयतकाले स्थित्यनुभागकाण्डकघातो नास्ति गुणश्रेणी पुनरवस्थितायामा सकलसयमनिबन्धना प्रवर्तत एव। तदा सक्लेशस्तोकवशेन सकलसयमात्प्रच्युत्यासयतगुणस्थान गत्वा तत्र कर्मस्थितिमवर्धयित्वा शीघ्रान्तर्मुहूर्तेन पुन सयम प्रतिपद्यमानस्याध प्रवृत्तापूर्वकरणपरिणाम स्थित्यनुभागखण्डन च नास्ति। यस्तीव्रसक्ले-

शेन सकलसंयमात्प्रच्युत्य मिथ्यात्वं गत्वा तत्र दीर्घमन्तर्मुहूर्तं वा चिरकालं वा स्थित्वा स्थित्यनुभागौ वर्धयित्वा पुनर्वेदकसम्यक्त्वेन सह सकलसंयमं गृह्णाति तस्याध:प्रवृत्तापूर्वकरणद्वयं स्थित्यनुभागखण्डनं च विद्यत एव। तदा विशुद्धिसंक्लेशपरावृत्तिवशेन स्वस्थानसकलसंयतः असंख्यातभागाधिकं संख्यातभागाधिकं संख्यातगुणमसंख्यातगुणं वा असंख्यातभागहीनं संख्यातभागहीनं संख्यातगुणहीनमसंख्यातगुणहीनं वा द्रव्यमपकृष्यावस्थितायामां गुणश्रेणिं करोत्येव। जघन्यानुभागखण्डोत्करणकालः सर्वतः स्तोकमित्यादिषु देशपदस्थाने विरतपदं निक्षिप्याल्पबहुत्वपदान्यष्टादशापि पूर्ववद् व्याख्येयानि ॥ १९१ ॥

देशसंयमके समान सकलसंयममें प्रक्रियाका निर्देश—

सं० चं०—इहाँतैं ऊपरि अल्पबहुत्व पर्यन्त जैसैं पूर्वैं देशविरतविषैं व्याख्यान किया है तैसैं सर्व व्याख्यान इहां जानिये है। विशेष इतना—वहाँ जहाँ देशविरत कह्या है इहां तहां सकल विरत कहना सो कहिए है—अधःप्रवृत्त करणादिकके कालका अल्पबहुत्व अर प्रथमोपशम सम्यक्त्ववत् जो हजारों स्थितिखण्ड भए अपूर्वकरणकौं समाप्तकरि अनन्तर समयविषैं सकल संयमविषैं संयमकौं ग्रहै तहां प्रथम समयतैं लगाय एकान्तवृद्धिका अन्त समय पर्यन्त समय-समय असंख्यातगुणा ऐसा असंख्यात समयप्रबद्ध प्रमाण द्रव्यकौं ग्रहि अवस्थिति गुणश्रेणि करै है। तहां बहुत स्थितिकाण्डक भए एकान्तवृद्धिका अन्त समय पीछैं अनन्तर समयतैं लगाय स्वस्थान सकलसंयमी हो है। तहां स्थिति अनुभागकाण्डकका घात नाहीं है। गुणश्रेणि है ही। जो जीव सकलसंयमतैं भ्रष्ट होइ शीघ्र ही सकलसंयमकौं प्राप्त होइ ताकैं करण वा स्थितिकाण्डकादि न हो है। अर जो सकलसंयमतैं भ्रष्ट होइ मिथ्यात्वकौं प्राप्त होइ तहां बड़ा अन्तर्मुहूर्त वा बहुत काल रहि स्थिति अनुभाग बँधाय बहुरि वेदक सम्यक्त्वसहित सकलसंयमकौं ग्रहै है ताकैं दोय करण वा स्थितिकाण्डक घातादि हो है। बहुरि स्वस्थान सकलसंयम विशुद्धताकी वृद्धि हानितैं चतुःस्थान पतित वृद्धि हानि लीए द्रव्यकौं अपकर्षण करि समय-समय गुणश्रेणि करै है। बहुरि जघन्य अनुभाग खण्डोत्करण कालादिक अठारह स्थाननिविषैं पूर्वोक्तवत् तहां अल्प बहुत्व जानना ॥ १९१ ॥

विशेष—गाथा १९१ में यह सूचना की गई है कि देशविरत जीवके प्ररूपणामें जो प्रक्रिया की गई है वही सब संयतजीवके विषयमें भी जाननी चाहिए। मात्र उसमें जहाँ-जहाँ देशविरत शब्दका प्रयोग किया गया है वहाँ-वहाँ संयतपदका प्रयोग करना चाहिए। यह उक्त सूत्रकथनका अर्थ है। हाँ, जयधवलामें इस सम्बन्धमें कुछ विशेष सूचनाएँ की गई हैं। उनका निर्देश हम यहाँ कर देना चाहते हैं—

१ जो वेदकसम्यग्दृष्टिजीव संयमके अभिमुख होता है उसके अधःकरण और अपूर्वकरण ये दो ही करण होते हैं। उसमें अधःकरणके अन्तमें सर्वप्रथम उपशम सम्यक्त्वके सन्मुख हुए जीवके सम्बन्धमें जिन चार गाथाओंका उल्लेख कर आये हैं उनको लक्ष्यमें रखकर व्याख्यान करना चाहिए। इतना अवश्य है कि यहाँ उनका व्याख्यान संयमके सन्मुख हुए वेदकसम्यग्दृष्टिको लक्ष्यमें रख करना चाहिए। विशेष व्याख्यान जयधवला (पु० १३, पृ० १५९-१६३) से जान लेना चाहिए।

२ संयमको प्राप्त होनेवाले उक्त जीवके अधःकरण और अपूर्वकरणमात्र ये दो करण होते हैं। इनका व्याख्यान संयमासंयमकी प्राप्तिके समय जैसा कर आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी करना

चाहिए। इस प्रकार अपूर्वकरणकी क्रियाको समाप्त कर तदनन्तर समयमे यह जीव सयत हो जाता है। तथा सयत होनेके प्रथम समयसे लेकर उसके अन्तर्मुहूर्त काल तक प्रति समय अनन्त-गुणी विशुद्धिको लिये हुए चारित्रलब्धिमे वृद्धि होती जाती है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त कालतक चारित्रलब्धिमे निरन्तर वृद्धि होती जानेसे उस सयमको एकान्तानुवृद्धि सयम कहते है। तथा उस समय यह जीव अपूर्वकरण इस सज्ञावाला स्वीकार किया जाता है। कारण कि जिस प्रकार अपूर्वकरणमे प्रति समय अनन्तगुणी विशुद्धि होनेसे उसकी अपूर्वकरण सज्ञा है उसी प्रकार यहाँ भी प्रति समय अनन्तगुणी विशुद्धि प्राप्त होनेसे उसे अपूर्वकरण कहा गया है। सयमको प्राप्त करनेके सन्मुख हुए जीवके जो विशुद्धि होती है वही यहाँ होती है ऐसा उसका अर्थ नही है। किन्तु अपूर्वकरणके समान यहाँ भी प्रति समय अपूर्व-अपूर्व विशुद्धिकी प्राप्ति होती है, इसलिए ही यहाँ एकान्तानुवृद्धि सयतको अपूर्वकरण सज्ञक सयत कहा गया है।

४ गुणश्रेणिकी दृष्टिसे विचार करनेपर सयमकी प्राप्तिके पूर्व तो गुणश्रेणि रचना नही होती। मात्र सयम प्राप्तिके प्रथम समयसे लेकर सयमके निमित्तसे अवस्थित गुणश्रेणि रचना प्रारम्भ हो जाती है। जो एकान्तानुवृद्धि सयमके अन्ततक असख्यातगुणित क्रमसे होती रहती है। उसके बाद स्वस्थानपतित अधःप्रवृत्तसज्ञावाले उसके विशुद्धि और सक्लेशके कारण चारित्र-लब्धिमे कदाचित् वृद्धि होती है, कदाचित हानि होती है और कदाचित् वह अवस्थित रहती है। तदनुसार यहाँ चार वृद्धियाँ और हानियाँ सम्भव हैं। चार वृद्धियाँ ये है—असख्यात भागवृद्धि, सख्यात भागवृद्धि, सख्यातगुणवृद्धि और असख्यातगुणवृद्धि। चार हानियाँ ये हैं—असख्यातभाग-हानि, सख्यात भागहानि, सख्यात गुणहानि और असख्यातगुणहानि। प्रति समय विशुद्धिके समय कोई एक वृद्धि होती है और सक्लेशके समय कोई एक हानि होती है। नियम यह है कि पूर्व समयमे जो सयमविशुद्धि है उससे अगले समयमे उसमे कितनी वृद्धि या हानि हुई है या वह अवस्थित रही है। तदनुसार प्रति समय गुणश्रेणिमे रचनामे भी वृद्धि, हानि होती रहती है।

५ इतना विवेचन करनेके बाद जयधवलामे अपूर्वकरणसे लेकर अध प्रवृत्तकालके भीतर जघन्य अनुभाग उत्कीरणकालसे लेकर उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मतकके पदोका अल्पबहुत्व चूर्णिसूत्रके अनुसार निर्दिष्ट किया गया है जिसे जलधवला (पु० १३, पृ० १६८-१७०) से जान लेना चाहिए। विशेष प्रयोजन न होनेसे उसका हमने यहाँ उल्लेख नही किया है।

६ जो जीव बहुत सक्लेशरूप परिणामोके बिना परिणामवश सयमसे च्युत हो असयत-पनेको प्राप्त कर स्थितिसत्कर्ममे वृद्धि किये बिना पुन अन्तर्मुहूर्तमे विशुद्ध होता हुआ सयमको प्राप्त होता है उसके न तो अपूर्वकरणरूप परिणाम होते हैं और नही स्थिति-अनुभागकाण्डकघात ही होते है, क्योकि पहले घातकर जो स्थिति और अनुभाग शेष रहा था वह उसके तदवस्थ बना रहता है।

७ किन्तु जो सयत सक्लेशकी बहुलतावश मिथ्यात्व सहित असयत होकर अन्तर्मुहूर्तके बाद या लम्बे कालके बाद पुन सयमको प्राप्त करता है उसके पूर्वोक्त दोनो करण तथा स्थिति-अनुभागकाण्डकघात अवश्य होते हैं, क्योकि इसने मिथ्यात्व अवस्थामे जो स्थिति और अनुभागको बढाया है उनका घात किये बिना पुन सयमको ग्रहण करना इसके बन नही सकता है।

८ आगे सयत जीवका सत्प्ररूपणा आदि आठ अनुयोगद्वारोके माध्यमसे कथन करनेका निर्देश किया गया है। जिसे जयधवला (पु० १३, पृ० १७१-१७४) से जान लेना चाहिए।

अथ सर्वजघन्यसकलसयमविशुद्धचविभागप्रतिच्छेदप्रमाणप्रदर्शनपूर्वक तत्सर्वस्थानसख्यान प्ररूपयितुमिदमाह—

अवरे विरदट्ठाणे होंति अणंताणि फड्डयाणि तदो ।
छट्ठाणगया सव्वे लोयाणमसंखछट्ठाणा ॥ १९२ ॥

अवरे विरतस्थाने भवन्त्यनन्तानि स्पर्धकानि तत ।
षट्स्थानगतानि सर्वाणि लोकानामसख्यषट्स्थानानि ॥ १९२ ॥

स० टी०—सकलसयमस्य सर्वजघन्यस्थाने स्पर्धकान्यविभागप्रतिच्छेदा जीवराश्यनन्तगुणप्रमिता सन्ति । तत पर सर्वोत्कृष्टस्थानपर्यन्त षट्स्थानपतितवृद्धीनि सकलसयमलब्धिस्थानानि सर्वाण्यपि असख्यातलोकमात्राणि भवन्ति ॥ १९२ ॥

जघन्य सयतके विशुद्धके अधिभाग प्रतिच्छेदोकी सख्याका निर्देश—

स० च०—सकल सयमका जघन्य स्थाननिविषै अनतानत स्पर्धक कहिए अविभाग प्रतिच्छेद हैं ते जीवराशितै अनत गुणे जानने । तातै गोम्मटसारका ज्ञानाधिकारविषै पर्याय समासके स्थाननिका अनुक्रम जैसै कह्या है तैसै षट्स्थानपतित वृद्धि लीए असख्यात लोकमात्र स्थान हैं तिनविषै असख्यात लोकमात्रबार षट्स्थानपतित वृद्धि सभवै है ॥ १९२ ॥

सकलसयमस्य प्रतिपातादिभेद दर्शयितुमिदमाह—

तत्थ य पडिवादगया पडिवज्जगया त्ति अणुभयगया त्ति ।
उवरुवरि लद्धिठाणा लोयाणमसखछट्ठाणा[1] ॥ १९३ ॥

तत्र च प्रतिपातगता प्रतिपद्यगता इति अनुभयगता इति ।
उपर्युपरि लब्धिस्थानानि लोकानामसंख्यषट्स्थानानि ॥ १९३ ॥

स० टी०—तत्र प्रतिपातगतानि प्रतिपद्यमानगतान्यनुभयगतानीति त्रिविधानि सकलसयमलब्धिस्थानानि प्रत्येकमसख्यातलोकमात्राण्युपर्युपरि तिष्ठन्ति ॥ १९३ ॥

सकलसयमके भेदोका निर्देश तथा सयमके प्रतिपात आदि स्थानोका उल्लेख तथा उनमे तारतम्यका कथन—

स० च०—तहा प्रतिपातगत १ प्रतिपद्यमानगत २ अनुभयगत ३ ऐसैं उपरि तीन प्रकार स्थान हैं। भावार्थ यहु—नीचै ही नीचै तौ जघन्यस्थान लिख्या ताके ऊपरि अनन्तभागवृद्धिरूप द्वितीय स्थान लिख्या ताके ऊपरि अनन्तभाग वृद्धिरूप तृतीय स्थान लिख्या। ऐसैं पर्याय समास

---

१ एत्तो जाणि ट्ठाणाणि ताणि तिविहाणि । त जहा—पडिवादट्ठाणणि उप्पादट्ठाणाणि लद्धिट्ठाणाणि । पडिवादट्ठाणं णाम जहा—जम्हि ट्ठाणे मिच्छत्त वा असजमसम्मत्त वा सजमासजम वा गच्छइ त पडिवादट्ठाण । उप्पादयट्ठाण णाम जहा—जम्हि ट्ठाणे सजम पडिवज्जइ तमुप्पादयट्ठाण । सव्वाणि चेव चरित्तट्ठाणाणि लद्धिट्ठाणाणि । एदेसिं लद्धिट्ठाणाणमप्पाबहुअ । त जहा—सव्वत्थोवाणि पडिवादट्ठाणाणि । उप्पादयट्ठाणाणि असखेज्जगुणाणि । लद्धिट्ठाणणि असखेजगुणाणि ।
कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १७५-१७९ ।

श्रुतज्ञानके स्थानवत् स्थाननिकी अनुक्रमतैं ऊपरि ऊपरि रचना करनी। इहाँ अनन्तभागादिक वृद्धि विशुद्धताकी अपेक्षा जाननी तहाँ नीचेके स्थान प्रतिपातगत है। प्रतिपद्यमान तिनके ऊपरि हैं। अनुभयगत तिनके भी ऊपरिवर्ती है। ते प्रत्येक असंख्यातलोकमात्र है। तहाँ असंख्यात-लोकमात्रबार षट्स्थानपतित वृद्धि सम्भवै है ॥ १९३ ॥

तेषु प्रतिपातस्थानभेदं प्रदर्शयितुमिदमाह—

पडिवादगया मिच्छे अयदे देसे य होंति उवरुवरिं।
पत्तेयमसंखमिदा लोयाणमसंखछट्ठाणा[1] ॥ १९४ ॥

प्रतिपातगतानि मिथ्ये अयते देशे च भवंति उपर्युपरि।
प्रत्येकमसंख्यमितानि लोकानामसंख्यषट्स्थानानि ॥ १९४ ॥

सं० टी०—मिथ्यात्वे प्रतिपाताभिमुखं सकलसंयमलब्धिस्थानं चरमसमये तीव्रसंक्लेशवशात्सर्वजघन्यं भवति। ततः परमसंख्यातलोकमात्राणि षट्स्थानानि गत्वा तद्योग्यसंक्लेशवशेन मिथ्यात्वप्रतिपाताभिमुखं सकलसंयमलब्धिस्थानमुत्कृष्टं तच्चरमसमये भवति। ततः परमसंख्यातलोकमात्राणि षट्स्थानान्यन्तरयित्वाऽ-संयमप्रतिपाताभिमुखं जघन्यं सकलसंयमलब्धिस्थानं चरमसमये तद्योग्यसंक्लेशवशेन भवति। ततः परम-संख्यातलोकमात्राणि षट्स्थानानि गत्वा असंयमप्रतिपाताभिमुखसकलसंयमलब्धिस्थानमुत्कृष्टं तच्चरसमये तद्योग्यसंक्लेशवशाद् भवति। ततः परमसंख्यातलोकमात्राणि षट्स्थानान्यतीत्य तद्योग्यसंक्लेशाद्देशसंयमप्रति-पाताभिमुखं जघन्यं सकलसंयमलब्धिस्थानं तच्चरसमये भवति। ततः परमसंख्यातलोकमात्राणि षट्स्थानानि गत्वा तद्योग्यसंक्लेशवशेन देशसंयमप्रतिपाताभिमुखमुत्कृष्टं सकलसंयमलब्धिस्थानं तच्चरसमये भवति। एवं प्रतिपातस्थानानि तद्विषयस्वामिभेदात्त्रिविधानि। तत्र त्रीणि जघन्यानि तीव्रसंक्लेशाविष्टस्य भवन्ति। त्रीण्यु-त्कृष्टानि तद्योग्यमन्दसंक्लेशाविष्टस्य भवन्ति ॥ १९४ ॥

प्रतिपातस्थानोंका कथन—

स० चं०—तहाँ प्रतिपातगत स्थान सकलसंयमतैं भ्रष्ट होते ताका अन्तसमयविषैं पाइए हैं। तहाँ जघन्यतैं लगाय असंख्यातलोकमात्र स्थान तौ मिथ्यात्वकौं जो सन्मुख होइ तिनकैं होइ। तिनके ऊपरि असंख्यातलोकमात्र स्थान जे जीव असंयतकौ सन्मुख होइ तिनके हो हैं। तिनके ऊपरि असंख्यातलोकमात्र स्थान जे जीव देशसंयतकौ सन्मुख होइ तिनके हो है। ऐसैं प्रतिपात स्थान तीन प्रकार हैं। तहाँ तीनों जायगा जघन्य स्थान तो यथायोग्य तीव्र संक्लेश-वालाकैं अर उत्कृष्ट स्थान मन्द संक्लेशवालाकै हो हैं। बहुरि एक एक विषै असंख्यातलोकमात्र षट्स्थान सम्भवै है ॥ १९४ ॥

विशेष—संयमस्थान तीन प्रकारके है—प्रतिपातस्थान, उत्पादकस्थान और लब्धिस्थान।

---

१ तिव्व-मंददाए सव्वमंदाणुभागं मिच्छत्तं गच्छमाणस्स जहण्णयं संजमट्ठाणं। तस्सेवुक्कस्सयं संजमट्ठाणमणंतगुणं। असंदसम्मत्तं गच्छमाणस्स जहण्णयं संजमट्ठाणमणंतगुणं। तस्सेवुक्कस्सयं संजमट्ठाण-मणंतगुणं। संजमासंजमं गच्छमाणस्स जहण्णयं संजमट्ठाणमणंतगुणं। तस्सेवुक्कस्सयं संजमट्ठाणमणंतगुणं। क० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १८२-१८३।

अथ सर्वजघन्यसकलसयमविशुद्धयविभागप्रतिच्छेदप्रमाणप्रदर्शनपूर्वक तत्सर्वस्थानसख्यान प्ररूपयितु-मिदमाह—

अवरे विरदट्ठाणे होंति अणंताणि फड्ढयाणि तदो ।
छट्ठाणगया सव्वे लोयाणमसंखछट्ठाणा ॥ १९२ ॥

अवरे विरतस्थाने भवन्त्यनन्तानि स्पर्धकानि तत ।
षट्स्थानगतानि सर्वाणि लोकानामसख्यषट्स्थानानि ॥ १९२ ॥

स० टी०—सकलसयमस्य सर्वजघन्यस्थाने स्पर्धकान्यविभागप्रतिच्छेदा जीवराश्यनन्तगुणप्रमिता सन्ति । तत पर सर्वोत्कृष्टस्थानपर्यन्त षट्स्थानपतितवृद्धीनि सकलसयमलब्धिस्थानानि सर्वाण्यपि असख्यात-लोकमात्राणि भवन्ति ॥ १९२ ॥

जघन्य सयतके विशुद्धके अधिभाग प्रतिच्छेदोकी सख्याका निर्देश—

सं० च०—सकल सयमका जघन्य स्थाननिविषै अनतानत स्पर्धक कहिए अविभाग प्रति-च्छेद हैं ते जीवराशितै अनत गुणे जानने । तातै गोम्मटसारका ज्ञानाधिकारविषै पर्याय समासके स्थाननिका अनुक्रम जैसै कह्या है तैसै षट्स्थानपतित वृद्धि लीए असख्यात लोकमात्र स्थान है तिनविषै असख्यात लोकमात्रबार षट्स्थानपतित वृद्धि सभवै है ॥ १९२ ॥

सकलसयमस्य प्रतिपातादिभेद दर्शयितुमिदमाह—

तत्थ य पडिवादगया पडिवज्जगया त्ति अणुभयगया त्ति ।
उवरुवरि लद्धिठाणा लोयाणमसखछट्ठाणा[1] ॥ १९३ ॥

तत्र च प्रतिपातगता प्रतिपद्यगता इति अनुभयगता इति ।
उपर्युपरि लब्धिस्थानानि लोकानामसंख्यषट्स्थानानि ॥ १९३ ॥

स० टी०—तत्र प्रतिपातगतानि प्रतिपद्यमानगतान्यनुभयगतानीति त्रिविधानि सकलसयमलब्धिस्था-नानि प्रत्येकमसख्यातलोकमात्राण्युपर्युपरि तिष्ठन्ति ॥ १९३ ॥

सकलसयमके भेदोका निर्देश तथा सयमके प्रतिपात आदि स्थानोका उल्लेख तथा उनमे तारतम्यका कथन—

स० च०—तहा प्रतिपातगत १ प्रतिपद्यमानगत २ अनुभयगत ३ ऐसै उपरि तीन प्रकार स्थान हैं। भावार्थ यहु—नीचै ही नीचै तौ जघन्यस्थान लिख्या ताके ऊपरि अनन्तभागवृद्धिरूप द्वितीय स्थान लिख्या ताके ऊपरि अनन्तभाग वृद्धिरूप तृतीय स्थान लिख्या। ऐसै पर्याय समास

---

१ एत्तो जाणि ट्ठाणाणि ताणि तिविहाणि । त जहा—पडिवादट्ठाणणि उप्पादट्ठाणाणि लद्धिट्ठा-णाणि । पडिवादट्ठाण णाम जहा—जम्हि ट्ठाणे मिच्छत्त वा असजमसम्मत्त वा सजमासजम वा गच्छइ त पडिवादट्ठाण । उप्पादयट्ठाण णाम जहा—जम्हि ट्ठाणे सजम पडिवज्जइ तमुप्पादयट्ठाण । सव्वाणि चेव चरित्तट्ठाणाणि लद्धिट्ठाणाणि । एदेसिं लद्धिट्ठाणाणमप्पाबहुअ । त जहा—सव्वत्थोवाणि पडिवादट्ठा-णाणि । उप्पादयट्ठाणाणि असखेज्जगुणाणि । लद्धिट्ठाणाणि असखेजगुणाणि ।

कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १७५-१७९ ।

श्रुतज्ञानके स्थानवत् स्थाननिकी अनुक्रमतें ऊपरि ऊपरि रचना करनी। इहां अनन्तभागादिक वृद्धि विशुद्धताकी अपेक्षा जाननी तहाँ नीचेके स्थान प्रतिपातगत हैं। प्रतिपद्यमान तिनके ऊपरि हैं। अनुभयगत तिनके भी ऊपरिवर्ती हैं। ते प्रत्येक असंख्यातलोकमात्र हैं। तहाँ असंख्यातलोकमात्रबार षट्स्थानपतित वृद्धि सम्भवै है॥ १९३॥

तेषु प्रतिपातस्थानभेदं प्रदर्शयितुमिदमाह—

पडिवादगया मिच्छे अयदे देसे य होंति उवरुवरिं।
पत्तेयमसंखमिदा लोयाणमसंखछट्ठाणा॥ १९४॥

प्रतिपातगतानि मिथ्ये अयते देशे च भवंति उपर्युपरि।
प्रत्येकमसंख्यमितानि लोकानामसंख्यषट्स्थानानि॥ १९४॥

स० टी०—मिथ्यात्वे प्रतिपाताभिमुखं सकलसंयमलब्धिस्थानं चरमसमये तीव्रसंक्लेशवशात्सर्वजघन्यं भवति। ततः परमसंख्यातलोकमात्राणि षट्स्थानानि गत्वा तद्योग्यसंक्लेशवशेन मिथ्यात्वप्रतिपाताभिमुखं सकलसंयमलब्धिस्थानमुत्कृष्टं तच्चरमसमये भवति। ततः परमसंख्यातलोकमात्राणि षट्स्थानान्यन्तरयित्वाऽसंयमप्रतिपाताभिमुखं जघन्यं सकलसंयमलब्धिस्थानं चरमसमये तद्योग्यसंक्लेशवशेन भवति। ततः परमसंख्यातलोकमात्राणि षट्स्थानानि गत्वा असंयमप्रतिपाताभिमुखसकलसंयमलब्धिस्थानमुत्कृष्टं तच्चरसमये तद्योग्यसंक्लेशवशाद् भवति। ततः परमसंख्यातलोकमात्राणि षट्स्थानान्यतीत्य तद्योग्यसंक्लेशाद्देशसंयमप्रतिपाताभिमुखं जघन्यं सकलसंयमलब्धिस्थानं तच्चरसमये भवति। ततः परमसंख्यातलोकमात्राणि षट्स्थानानि गत्वा तद्योग्यसंक्लेशवशेन देशसंयमप्रतिपाताभिमुखमुत्कृष्टं सकलसंयमलब्धिस्थानं तच्चरसमये भवति। एवं प्रतिपातस्थानानि तद्विषयस्वामिभेदात्त्रिविधानि। तत्र त्रीणि जघन्यानि तीव्रसंक्लेशाविष्टस्य भवन्ति। त्रीण्युत्कृष्टानि तद्योग्यमन्दसंक्लेशाविष्टस्य भवन्ति॥ १९४॥

प्रतिपातस्थानोंका कथन—

स० च०—तहाँ प्रतिपातगत स्थान सकलसंयमतें भ्रष्ट होते ताका अन्तसमयविषै पाइए है। तहाँ जघन्यतैं लगाय असंख्यातलोकमात्र स्थान तौ मिथ्यात्वकौ जो सन्मुख होइ तिनकै होइ। तिनके ऊपरि असंख्यातलोकमात्र स्थान जे जीव असंयतकौ सन्मुख होइ तिनकै हो है। तिनके ऊपरि असंख्यातलोकमात्र स्थान जे जीव देशसंयतकौ सन्मुख होइ तिनके हो है। ऐसैं प्रतिपात स्थान तीन प्रकार हैं। तहाँ तीनो जायगा जघन्य स्थान तो यथायोग्य तीव्र संक्लेशवालाकै अर उत्कृष्ट स्थान मन्द संक्लेशवालाकै हो हैं। बहुरि एक एक विषै असंख्यातलोकमात्र षट्स्थान सम्भवै है॥ १९४॥

विशेष—संयमस्थान तीन प्रकारके हैं—प्रतिपातस्थान, उत्पादकस्थान और लब्धिस्थान।

---

१ तिव्व-मंददाए सव्वसंदाणुभागं मिच्छत्तं गच्छमाणस्स जहण्णयं संजमट्ठाणं। तस्सेवुक्कस्सयं संजमट्ठाणमणंतगुणं। असंदसम्मत्तं गच्छमाणस्स जहण्णयं संजमट्ठाणमणंतगुणं। तस्सेवुक्कस्सयं संजमट्ठाणमणंतगुणं। संजमासंजमं गच्छमाणस्स जहण्णयं संजमट्ठाणमणंतगुणं। तस्सेवुक्कस्सयं संजमट्ठाणमणंतगुणं। क० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १८२-१८३।

सयमके जिस स्थानके प्राप्त होने पर जीव पतन कर मिथ्यात्व, असयमसम्यक्त्व और सयमासयमको प्राप्त करता है उसे प्रतिपातस्थान कहते है, जिस स्थानमे जीव सयमको प्राप्त करता है उसे उत्पादकस्थान कहते है तथा सभी सयमस्थानोको लब्धिस्थान कहते हैं। लब्धिसारमे जिन्हे अनुभय सयमस्थान कहा गया है उनसे सयमलब्धिस्थानोमे यह अन्तर है कि इनमे सयमसम्बन्धी प्रतिपात आदि सभी सयमस्थानोको ग्रहण किया गया है। तथा वहाँ सयम लब्धिस्थानोको प्रतिपातस्थान और उत्पादक स्थानोसे भिन्न अप्रतिपात-अनुत्पादकस्थानरूपसे भी स्वीकार किया गया है। इस प्रकार जयधवलामे सयमलब्धिस्थानोके दोनो अर्थ स्वीकार किये गये हैं। लब्धिसारमे इन तीनो स्थानोमेसे प्रत्येकको असख्यात लोकप्रमाण षट्स्थान पतित बतलाया गया है। अल्पबहुत्वका निर्देश करते हुए वहाँ लिखा है कि प्रतिपातस्थान असख्यात लोकप्रमाण होकर भी सबसे थोडे हैं। उनसे उत्पादकस्थान असख्यात गुणा हैं। यहाँ गुणकारका प्रमाण असख्यात लोक है। उनसे लब्धिस्थान असख्यातगुणे है। यहाँ गुणकार असख्यात लोकप्रमाण है। दूसरे प्रकारसे अल्पबहुत्वका निर्देश करते हुए लिखा है—प्रतिपातस्थान सबसे थोडे हैं उनसे प्रतिपद्यमानस्थान असख्यातगुणे है। उनसे अप्रतिपात-अप्रतिपद्यमानस्थान असख्यातगुणे है। तथा उनसे लब्धिस्थान असख्यातगुणे है। तीव्रमन्दताकी दृष्टिसे लिखा है—मिथ्यात्वको प्राप्त करनेवाले सयतका तत्प्रायोग्य सक्लेशके कारण जघन्य सयमस्थान सबसे मन्द अनुभागवाला होता है। इससे उसीका उत्कृष्ट सयमस्थान अनन्तगुणा है, क्योकि यह पूर्वके सयमस्थानसे असख्यात लोकप्रमाण-षट्स्थानोको उल्लघन कर उत्पन्न हुआ है। इसी प्रकार असयमसम्यक्त्व और सयमासयमको गिरकर प्राप्त होनेवाले सयतका जघन्य और उत्कृष्ट सयमस्थान अनन्तगुणा है। उससे सयमको प्राप्त होनेवाले कर्मभूमिक मनुष्यका जघन्य सयमस्थान क्रमश अनन्तगुणा है। उससे सयमको प्राप्त होनेवाले अकर्मभूमिक मनुष्यका जघन्य सयमस्थान क्रमश अनन्तगुणा है। उससे इसीका उत्कृष्ट सयमस्थान अनन्तगुणा है। उससे कर्मभूमिकका उत्कृष्ट सयमस्थान अनन्तगुणा है। जयधवलाके अनुसार यहाँ भरत और ऐरावत क्षेत्रमे विनीत सज्ञावाला जो मध्यम खण्ड है उसमे उत्पन्न होनेवाले मनुष्य कर्मभूमिक लेने चाहिए। तथा शेष पाँच खण्डोमे उत्पन्न होनेवाले मनुष्य अकर्मभूमिक ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योकि उन पाँच खण्डोमे धर्म-कर्मकी प्रवृत्तिका अभाव है।

कर्मभूमिक मनुष्योमे उक्त उत्कृष्ट सयमस्थानसे सामायिक-छेदोपस्थापना सयमके सन्मुख हुए परिहारशुद्धिसयमका जघन्य सयमस्थान अनन्तगुणा है। यह सामायिक-छेदोपस्थापनासयमके जघन्य प्रतिपातस्थान और प्रतिपद्यमानस्थानसे असख्यात लोकप्रमाण षट्स्थान सयमस्थान आगे जाकर वहाँ प्राप्त होनेवाले सयमलब्धिस्थानके समान होकर उत्पन्न होता है। इससे उसीका उत्कृष्ट सयमस्थान अनन्तगुणा है। उससे सामायिक-छेदोपस्थापनासयमका उत्कृष्ट सयमस्थान अनन्तगुणा है। उससे सूक्ष्मसाम्परायिकसयमका जघन्य और उत्कृष्ट सयमस्थान क्रमश अनन्तगुणे हैं। उससे वीतराग सयमका अजघन्य-अनुत्कृष्ट चारित्रलब्धिस्थान अनन्तगुणा है। यह एक ही प्रकारका है, क्योकि यहाँ कषायका सर्वथा अभाव है, इसलिए चाहे उपशान्तकषाय जीव हो, चाहे क्षीणकषाय आदि गुणस्थानोवाला जीव हो इन सबके कषायका सर्वथा अभाव होनेसे इन स्थानोकी चारित्रलब्धिमे किसी प्रकारका भेद नही पाया जाता।

अथ प्रतिपद्यमानसकलसयमलब्धिस्थानस्वामिभेदावधारणार्थमिदमाह—

तत्तो पडिवज्जगया अज्जमिलेच्छे मिलेच्छअज्जे य।
कमसो अवर अवर वर वर होदि सख वा॥ १९५॥

तत प्रतिपद्यगता आर्यम्लेच्छे म्लेच्छार्ये च।
क्रमशोऽवरमवर वर वरं भवति संख्य वा॥ १९५॥

स० टी०—तस्माद् देशसयमप्रतिपाताभिमुखोत्कृष्टप्रतिपातस्थानादसख्येयलोकमात्राणि षट्स्थानान्यन्तरयित्वा मिथ्यादृष्टिचरस्यार्यखण्डजमनुष्यस्य सकलसयमग्रहणप्रथमसमये वर्तमान जघन्य सकलसयमलब्धिस्थान भवति। तत परमसख्येयलोकमात्राणि षट्स्थानान्यतिकम्य म्लेच्छभूमिजमनुष्यस्य मिथ्यादृष्टिचरस्य सयमग्रहणप्रथमसमये वर्तमान जघन्य सयमलब्धिस्थान भवति। तत परमसख्येयलोकमात्राणि षट्स्थानानि गत्वा म्लेच्छभूमिजमनुष्यस्य देशसयतचरस्य सयमग्रहणप्रथमसमये उत्कृष्ट सयमलब्धिस्थान भवति। तत परमसख्येयलोकमात्राणि षट्स्थानानि गत्वा आर्यखण्डजमनुष्यस्य देशसयतचरस्य सयमग्रहणप्रथमसमये वर्तमानमुत्कृष्ट सकलसयमलब्धिस्थान भवति। एतान्यार्यम्लेच्छमनुष्यविषयाणि सकलसयमग्रहणप्रथमसमये वर्तमानानि सयमलब्धिस्थानानि प्रतिपद्यमानस्थानानीत्युच्यन्ते। अत्रार्यम्लेच्छमध्यमस्थानानि मिथ्यादृष्टिचरस्य वा असयतसम्यग्दृष्टिचरस्य वा देशसयतचरस्य वा तदनुरूपविशुद्धया सकलसयम प्रतिपद्यमानस्य सम्भवन्ति। विधिनिषेधयोर्नियमावचने सम्भवप्रतिपत्तिरिति न्यायसिद्धत्वात्। अत्र जघन्यद्वय यथायोग्यतीव्रसक्लेशाविष्टस्य, उत्कृष्टद्वय तु मन्दसक्लेशाविष्टस्येति ग्राह्य। म्लेच्छभूमिजमनुष्याणा सकलसयमग्रहण कथ सभवतीति नाशकितव्य दिग्विजयकाले चक्रवर्तिना सह आर्यखण्डमागताना म्लेच्छराजाना चक्रवर्त्यादिभि सह जातवैवाहिकसम्बन्धाना सयमप्रतिपत्तेरविरोधात्। अथवा तत्कन्यकाना चक्रवर्त्यादिपरिणीताना गर्भेपूत्पन्नस्य मातृपक्षापेक्षया म्लेच्छव्यपदेशभाज सयमसभवात् तथाजातीयकाना दीक्षार्हत्वे प्रतिषेधाभावात्॥ १९५॥

प्रतिपद्यमानस्थानोका कथन—

स० च०—प्रतिपात स्थाननिके ऊपरि असख्यातलोकमात्र स्थान ऐसे हो है जिनिका कोऊ स्वामी नाही तिनिका अन्तरालकरि प्रतिपाद्यमान स्थान हो है। सो सकलसयमकी प्राप्तिका प्रथम समयविषै जे सम्भवै ते प्रतिपद्यमान स्थान जानना। तहाँ प्रथम आर्यखण्डका मनुष्य मिथ्यादृष्टितै सकलसयमी भया ताकै जघन्य स्थान हो है। बहुरि ताके ऊपरि असख्यातलोकमात्र षट्स्थान जाय म्लेच्छखण्डका मनुष्य मिथ्यादृष्टितै सकलसयमी भया ताका जघन्यस्थान हो है। ताके ऊपरि असख्यातलोकमात्र षट्स्थान जाइ म्लेच्छखण्डका मनुष्य देशसयततै सकलसयमी भया ताका उत्कृष्ट स्थान हो है। बहुरि तातै असख्यातलोकमात्र षट्स्थान जाइ आर्यखण्डका मनुष्य देशसयततै सकलसयमी भया ताका उत्कृष्टस्थान हो है। इहाँ असख्यातलोकमात्र षट्स्थान जाइ कह्या तहाँ असख्यात लोकमात्र षट्स्थान पतित वृद्धि जाननी। बहुरि इहा आर्य-म्लेच्छके जघन्य अर मध्यके-बीचिके जे स्थान हैं ते मिथ्यादृष्टितै वा असयततै वा सयतासंयततै सकलसयमी भए तिनके यथासम्भव जानने। जातै किछू नियम कह्या नाही।

१ कम्मभूमियस्स पडिवज्जमाणयस्स जहण्णय सजमट्ठाणमणतगुण। अकम्मभूमियस्स पडिवज्जमाणयस्स जहण्णय सजमट्ठाणमणतगुण। तस्सेवुक्कस्सय पडिवज्जमाणयस्स सजमट्ठाणमणतगुण। कम्मभूमियस्स पडिवज्जमाणयस्स उक्कस्सय सजमट्ठाणमणतगुण। क० चु० जयध० पु० १३, पृ० १८३–१८५।

बहुरि इहाँ कोऊ कहै कि म्लेच्छ खण्डका उपज्या मनुष्यकै सकलसयम इहा कह्या सो कैसै सम्भवै ? ताका समाधान—जो म्लेच्छ मनुष्य चक्रवर्तीका साथि आर्यखण्डविषै आवै अर तिनसेती चक्रवर्ती आदिककै विवाहादि सम्बन्ध पाइए है तिनकै दीक्षाका ग्रहण सम्भवै है। अथवा म्लेच्छकी कन्या जे चक्रवर्ती आदि परणे तिनके जे पुत्र होइ तिनकौ माता पक्षकरि म्लेच्छ कहिए, तिनकै दीक्षा ग्रहण सम्भवै है ।। १९५ ।।

अनुभयस्थानप्रतिपादनार्थमाह—

तत्तोणुभयट्ठाणे सामाइयछेदजुगलपरिहारे ।
पडिबद्धा परिणामा असंखलोगप्पमा होंति[1] ।। १९६ ।।

ततोनुभयस्थाने सामायिकछेदयुगलपरिहारे ।
प्रतिबद्धा. परिणामा असख्यलोकप्रमा भवति ।। १९६ ।।

स० टी०—तस्मादार्यखण्डमनुष्यस्य प्रतिपद्यमानोत्कृष्टसयमलब्धिस्थानादसख्येयलोकमात्राणि षट्स्थानान्यतरयित्वा सामायिकछेदोपस्थापनसयमद्वयसबधिजघन्यमनुभयस्थान मिथ्यादृष्टिचरस्य सयमग्रहणद्वितीयसमये भवति । तत परमसख्येयलोकमात्राणि षट्स्थानानि गत्वा परिहारविशुद्धिसयमसम्बन्धिजघन्यमयमस्थान परिहारविशुद्धिसयमात्प्रच्युत्य तच्चरमसमये वर्तमानस्य सामायिकछेदोपस्थापनसयमयो पतिष्यतो भवति । तत परमसख्येयलोकमात्राणि षट्स्थानानि गत्वा परिहारविशुद्धिसयमस्योत्कृष्ट सयमलब्धिस्थान सर्वविशुद्धस्य भवति । तत परमसख्येयलोकमात्राणि षट्स्थानानि गत्वा सामायिकछेदोपस्थापनसयमयोरुत्कृष्टमनुभयस्थानमनिवृत्तिकरणक्षपकस्य चरमसमये भवति । एव मिथ्यात्वप्रतिपाताभिमुखसर्वजघन्यस्थानादारभ्यानुभयोत्कृष्टसयमलब्धिस्थानपर्यंत यावन्ति सयमलब्धिस्थानानि तावन्ति सर्वाण्यपि सामायिकछेदोपस्थापनसयमद्वयसम्बन्धीनीति ज्ञातव्य । तानि चोत्तरमनन्तगुणविशुद्धीनि । तत्र प्रतिपातस्थानान्यसख्यातलोकमात्राणि सर्वत स्तोकानि $\frac{\equiv a}{९।९}$ तेभ्य प्रतिपद्यमानस्थानान्यसख्येयलोकगुणितानि $\frac{\equiv a\ ८}{९।९}$ तेभ्योऽनुभयस्थानान्यसख्यातलोकगुणितानि $\frac{\equiv a\ ८}{९}$ सर्वाण्यपि सयमलब्धिस्थानानि मिलित्वासख्येयलोकमात्राणि $\equiv a$ भागहारभूतासख्यातलोकस्य सदृष्टि ९ ।। १९६ ।।

अनुभयसयमस्थानोका कथन—

स० च०—तिस उत्कृष्ट प्रतिपद्यमान स्थानके ऊपरि असख्यातलोकमात्रस्थान ऐसै हैं जिनिका कोऊ स्वामी नाही । तिनका अन्तरालकरि उपरि अनुभयस्थान है सो पूर्वोक्त दोऊ विना अन्य समयनिविषै जे सम्भवै ते अनुभयस्थान हैं। तहाँ प्रथम मिथ्यादृष्टितै सकलसयमी भया ताकै दूसरा समयविषै सामायिक छेदोपस्थापना सम्बन्धी जघन्य स्थान हो है। ताके ऊपरि असख्यातलोकमात्र षट्स्थान जाइ परिहार विशुद्धिका जघन्य स्थान हो है। सो यहु स्थान तिस परिहार

---

१ परिहारशुद्धिसजदस्स जहण्णय सजमट्ठाणमणतगुण । तस्सेव उक्कस्सय सजमट्ठाणमणतगुण । सामाइय-छेदोवट्ठावणियाणमुक्कस्सय सजमट्ठाणमणतगुण । सुहुमसापराइयसुद्धिसजदस्स जहण्णय सजमट्ठाणमणतगुण तस्सेवुक्कस्सय सजमट्ठाणमणतगुण । क० चु०, जयध० पु० १३ पृ० १८५-१८६ ।

विशुद्धि संयमतैं छूटि सामायिक छेदोपस्थापनकौं सन्मुख होतैं ताका अन्त समयविषैं हो है। इहाँ इस संयमतैं छूटि सकलसंयमी ही रह्या तातैं याकौं सकलसंयमकी अपेक्षा अनुभयस्थान कह्या, प्रतिपातस्थान न कह्या। बहुरि ताके ऊपरि असंख्यातलोकमात्र षट्स्थान जाइ परिहार विशुद्धिका उत्कृष्ट स्थान हो है बहुरि ताके ऊपरि असंख्यातलोकमात्र षट्स्थान जाइ सामायिक छेदोपस्थापनका उत्कृष्ट स्थान हो है। सो यहु क्षपक अनिवृत्तिकरणका अन्तसमयविषैं सम्भवै है ऐसा जानना। ऐसैं जघन्यतैं लगाय उत्कृष्ट पर्यन्त कहे जे अनुभयस्थान ते सर्व सामायिक छेदोपस्थापनसम्बन्धी सम्भवै हैं। परिहारविशुद्धिसम्बन्धी स्थान कहे ते सामायिक छेदोपस्थापनविषैं भी अर तहाँ भी सम्भवै है। ऐसा जानना। बहुरि ऐसे ए स्थान कहे तिनिविषैं प्रतिपातस्थान थोरे हैं तेऊ असंख्यातलोकमात्र हैं। तिनितैं असंख्यातलोकगुणे प्रतिपद्यमानस्थान है। तिनतैं असंख्यात लोकगुणे अनुभयस्थान है। इनि सबनिकौं मिलाए भी असंख्यातलोक प्रमाण ही सकलसंयमके स्थान हो हैं जातैं असंख्यातके भेद बहुत है॥ १९६॥

अथ सूक्ष्मसांपराययथाख्यातचारित्रप्ररूपणार्थमिदमाह—

तत्तो य सुहुमसंजम पडिवज्जय संखसमयमेत्ता हु।
तत्तो दु जहाखादं एयविहं संजमे होदि[1]॥ १९७॥

ततश्च सूक्ष्मसंयमं प्रतिवर्ज्य संख्यसमयमात्रा हि।
ततस्तु यथाख्यातमेकविधं संयमे भवति॥ १९७॥

सं० टी०—तस्मादनिवृत्तिकरणक्षपणचरमसमयसंभविसामायिकछेदोपस्थापनद्वयोत्कृष्टस्थानादसंख्येयलोकमात्राणि षट्स्थानान्यान्तरयित्वा उपशमश्रेण्यामवरोहणे अनिवृत्तिकरणाभिमुखं सूक्ष्मसाम्परायसंयमस्य जघन्यं स्थानं तच्चरसमये भवति। ततः परमसंख्यातसमयमात्रस्थानानि गत्वा सूक्ष्मसाम्परायक्षपकचरमसमये सूक्ष्मसाम्परायसंयमस्योत्कृष्टं स्थानं भवति। तस्मादसंख्येयलोकमात्राणि षट्स्थानान्यन्तरयित्वा यथाख्यातचारित्रमेकमिदं सर्वस्थानेभ्योऽनन्तविशुद्धिकं सकलसंयमोत्कृष्टमुपशान्तकषायक्षीणकषायसयोगकेवल्ययोगकेवलिस्वामिकं भवति, सकलचारित्रमोहनीयप्रकृतीनां प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशरूपाणां सर्वोपशमात्सर्वक्षयाच्च समुद्भूतत्वात्तस्य जघन्यमध्यमोत्कृष्टस्थानविकल्पा न सन्तीत्येकविधत्वं प्रवचने प्रतिपादितं॥ १९७॥

सूक्ष्मसंपराय और यथाख्यातसंयममें संयमस्थानोंका कथन—

सं० च०—तिस सामायिक छेदोपस्थापनका स्थानतैं उपरि असंख्यातलोकमात्र स्थाननिका अन्तरालकरि उपशमश्रेणितैं उतरतैं अनिवृत्तिकरणके सन्मुख जीवकैं अपना अन्त समयविषैं सम्भवता ऐसा सूक्ष्मसांपरायका जघन्यस्थान हो है। ताके ऊपरि असंख्यात समयमात्र स्थान जाइ क्षपक सूक्ष्म सांपरायका अन्तसमयविषैं सम्भवता सूक्ष्मसांपरायका उत्कृष्टस्थान हो है। तातैं उपरि असंख्यातलोकमात्र स्थाननिका अन्तरालकरि यथाख्यात चारित्रका एकस्थान हो है। सो यहु सबनितैं अनन्तगुणी विशुद्धता लीए उपशान्तकषाय क्षीणकषाय सयोगी अयोगीकैं हो है। यामैं सर्वकषायनिका सर्वथा उपशम वा क्षय है तातैं जघन्य मध्य उत्कृष्ट भेद ही नाहीं॥ १९७॥

---

१ बीयकसायस्स अजहण्णमणुक्कस्सय चरिमलद्धिट्ठाणमणंतगुण।

क० चू०, जयध० पु० १३, पृ० १८७।

अथ सामायिकादिसयमाना प्रतिपातस्थानादिलक्षणस्थानसख्यान्तरस्थानसख्यास्वामिविषयविभागप्रदर्शनार्थं गाथासप्तकमाह—

पडचरिमे गहणादीसमये पडिवाददुगमणुभयं तु ।
तम्मज्झे उवरिमगुणगहणाहिमुहे य देस वा ॥ १९८ ॥

पतनचरमे ग्रहणादिसमये प्रतिपातादिद्विकमनुभयं तु ।
तन्मध्ये उपरिगुणग्रहणाभिमुखे च देशमिव ॥ १९८ ॥

पडिवादादीतिदयं उवरुवरिमसंखलोगगुणिदकमा ।
अतरछ पमाण असखलोगा हु देस वा ॥ १९९ ॥

प्रतिपातादित्रितय उपर्युपरितनमसंख्यलोकगुणितक्रमं ।
अतरषट्कप्रमाणमसख्यलोका हि देशमिव ॥ १९९ ॥

मिच्छयददेसभिण्णे पडिवादट्ठाणगे वर अवर ।
तप्पाउग्गकिलिट्ठे तिव्वकिलिट्ठे कमे चरिमे ॥ २०० ॥

मिथ्यायतदेशभिन्ने प्रतिपातस्थानके रम् ।
तत्प्रायोग्यक्लिष्टे तीव्रक्लिष्टे क्रमेण चरमे ॥ २०० ॥

पडिवज्जजहण्णदुग मिच्छे उक्कस्सजुगलमवि देसे ।
उवरिं सामइयदुगं तम्मज्झे होंति परिहारा ॥ २०१ ॥

प्रतिपद्यजघन्यद्विकं मिथ्ये उत्कृष्टयुगलमपि देशे ।
उपरि सामायिकद्विकं तन्मध्ये भवंति परिहाराणि ॥ २०१ ॥

परिहारस्स जहण्णं सामयियदुगे पडत चरिमम्हि ।
तज्जेट्ठ सट्ठाणे सव्वविसुद्धस्स तस्सेव ॥ २०२ ॥

परिहारस्य जघन्यं यिकद्विके पतत चरमे ।
तज्ज्येष्ठं स्वस्थाने सर्वविशुद्धस्य तस्यैव ॥ २०२ ॥

सामयियदुगजहण्णं ओघं अणियट्टिखवगचरिमम्हि ।
चरिमणियट्टिस्सुवरिं पडत सुहुमस्स सुहुमवर ॥ २०३ ॥

सामायिकद्विकजघन्यमोघं अनिवृत्तिक्षपक ।
चरमानिवृत्तेरुपरि पतत सू सूक्ष्मवरम् ॥ २०३ ॥

खवगसुहुमस्स चरिमे वर जहाखादमोघजेट्ठ तं ।
पडिवाददुगा सव्वे सामाइयछेदपडिवद्धा ॥ २०४ ॥

क्षपकसूक्ष्मस्य चरमे वरं यथाख्यातमोघज्येष्ठं तत् ।
प्रतिपातद्विक सर्वाणि सामायिकच्छेदप्रतिबद्धानि ॥ २०४ ॥

स० टी०—प्रतिपातप्रतिपद्यमानस्थानद्विकं यथासंख्यं पतच्चरमसमये संयमग्रहणप्रथमसमये च भवति। अनुभयस्थानं तयोः प्रतिपातस्थानप्रतिपद्यमानस्थानयोर्मध्ये उपरितनगुणस्थानाभिमुखे च भवति। एतत्सर्वं यथा देशसंयमे सविस्तरं प्रतिपादितं तथात्रापि ग्राह्यम्। प्रतिपातादित्रितयं स्वस्वजघन्यस्थानात् स्वस्वोत्कृष्टस्थान-पर्यन्तमुपर्युपर्यसंख्यातलोकगुणितक्रमाण्यन्तरेषु षट्स्वपि प्रत्येकमसंख्यातलोकमात्राणि षट्स्थानानि देशसंयम-वज्ज्ञातव्यानि। तत्र प्रतिपातस्थानेषु मिथ्यात्वासंयमदेशसंयमाभिमुखभेदभिन्नेषु जघन्यानि तीव्रसंक्लिष्टस्य चरमसमये भवन्ति। उत्कृष्टानि तत्प्रायोग्यमन्दसंक्लिष्टस्य भवन्ति। तथा प्रतिपद्यमानजघन्यस्थानद्वयमार्य-म्लेच्छस्वामिकं मिथ्यादृष्टिचरस्य भवति, तदुत्कृष्टस्थानयुगलमपि देशसंयतचरस्य भवति प्रतिपद्यमानस्थाना-नामुपर्यनुभयस्थानानि सामायिकच्छेदोपस्थापनसंयमद्वयसंबन्धीनि भवन्ति। तत्संयमद्वयस्य जघन्योत्कृष्टस्थान-योर्द्वयोर्मध्ये परिहारविशुद्धिसंयमस्थानानि भवन्ति। परिहारविशुद्धिसंयमस्य जघन्यस्थानं संक्लेशवशात्सा-मायिकच्छेदोपस्थापनद्वये पतिष्यतस्तच्चरमसमये भवति। तस्य परिहारविशुद्धिसंयमस्योत्कृष्टस्थानं स्वस्मिन्नेव सर्वविशुद्धस्याप्रमत्तस्यैकान्तवृद्धिचरमसमये भवति। सामायिकच्छेदोपस्थापनद्वयस्य मिथ्यात्वाभिमुखं जघन्य-स्थानमोघजघन्यस्थानं सर्वसंयमसामान्यजघन्यस्थानं भवतीत्यर्थः। तयोरुत्कृष्टस्थानमनिवृत्तिकरणक्षपकचरम-समये भवति। सूक्ष्मसाम्परायसंयमस्य जघन्यस्थानमुपशमश्रेण्यामवरोहणेऽनिवृत्तकरणस्योपरि पतिष्यतः सूक्ष्म-साम्परायोपशमकस्य चरमसमये भवति। तस्योत्कृष्टस्थानं क्षीणकषायगुणस्थानाभिमुखस्य सूक्ष्मसाम्पराय-क्षपकस्य चरमसमये भवति। यथाख्यातचारित्रं सर्वसंयमसामान्योत्कृष्टं तस्य जघन्यादिविकल्पाभावात्। प्रतिपातप्रतिपद्यमानस्थानानि सर्वाण्यपि सामायिकच्छेदोपस्थापनसंयमद्वयप्रतिबद्धान्येव नेतरसंयमसंबन्धीनि अनुभयस्थानानि पुनः सामायिकादिसर्वसंयमसंबन्धीनि संभवति। मिथ्यादृष्ट्यसंयतदेशसंयतानां सकलसंयमग्रहण-काले सामायिकच्छेदोपस्थापनसंयमयोरेव प्रथमतः प्रतिपत्तिनियमात्। संयमसामान्यापेक्षया प्रतिपद्यमानस्थानानि संयमग्रहणप्रथमसमयवर्तीनि सामायिकच्छेदोपस्थापनप्रतिबद्धान्येव। तथा सामायिकच्छेदोपस्थापनसंयमाभ्यां प्रच्यवमानस्यैव मिथ्यात्वासंयमदेशसंयमेषु प्रतिपातः संभवति, न परिहारविशुद्ध्यादिसंयमेभ्यः प्रच्यवमानस्य तत्प्रतिपातः परिहारविशुद्धिसूक्ष्मसाम्परायसंयमाभ्यां प्रच्यवमानस्य सामायिकद्विके यथाख्यातचारित्रात्प्रच्यव-मानस्य सूक्ष्मसाम्परायसंयमेऽपि च प्रतिपातस्य सिद्धान्ते प्रतिपादितत्वात्।

ननु भवक्षयादुपशमश्रेण्यां मृतस्य सूक्ष्मसाम्पराययथाख्यातचारित्रयोर्देवासंयते प्रतिपातोऽस्ति, अतः कथमसंयतप्रतिपाताभावः ? इति चेत् वयमिमे ब्रूमहे—संयमघातिकषायोदयवशोत्पन्नसंक्लेशवशेन गुण-स्थानाद्वा क्षयेण वाधस्तनगुणस्थानेषु प्रतिपातस्यात्र विवक्षितत्वात्। भवक्षयहेतुकः प्रतिपातः पुनरत्राविवक्षितः। तत्प्रतिपातविवक्षायां पुनर्देवासंयमाभिमुखतैव, न मिथ्यात्वदेशसंयमाभिमुखता, बद्धदेवायुष एव सकलसंयमिनः संयमकाले मृतस्य देवगतिं मुक्त्वान्यत्र गतावनुत्पादात्। देवगतौ च मिथ्यादृष्टिष्वनुत्पादात् देशसंयमस्य तत्रा-भावाच्च। तदेवं सामायिकादिपञ्चप्रकारसकलसंयमलब्धिस्वरूपं प्रासङ्गिकं मुख्यतस्तु प्रमत्ताप्रमत्तगुणस्थान-वर्तिक्षायोपशमिकसकलसंयमलब्धिस्वरूपं च सविस्तरं प्ररूपितम् ॥ १९९–२०४ ॥

उन परिणाम आदि स्थानोंका विशेष कथन—

स० च०—संयमतैं पडतैं अंत समयविषै अर संयमकौं ग्रहतैं प्रथम समयविषै क्रमतैं प्रति-पात अर प्रतिपद्यमान ए दोय स्थान हैं। बहुरि इनके बीचि वा ऊपरिके गुणस्थानकौं सन्मुख होतैं अनुभय स्थान हो है सो देश संयतवत् इहां भी जानना ॥ १९८ ॥

स० च०—प्रतिपात आदि तीन प्रकार स्थान अपने अपने जघन्यतैं उत्कृष्ट पर्यंत उपरि उपरि असंख्यातलोक गुणा क्रम लीए हैं। तिनके छहौं विषैं प्रत्येक असंख्यात लोकमात्र वार षट्स्थानवृद्धि देशसंयतवत् जाननी ॥ १९९ ॥

अथ सामायिकादिसयमाना प्रतिपातस्थानादिलक्षणस्थानसख्यान्तरस्थानसख्यास्वामिविपयविभागप्रदर्शनार्थगाथासप्तकमाह—

पडचरिमे गहणादीसमये पडिवाददुगमणुभयं तु ।
तम्मज्झे उवरिमगुणगहणाहिमुहे य देस वा ॥ १९८ ॥

पतनचरमे ग्रहणादिसमये प्रतिपातादिद्विकमनुभयं तु ।
तन्मध्ये उपरिगुणग्रहणाभिमुखे च देशमिव ॥ १९८ ॥

पडिवादादीतिदयं उवरुवरिमसखलोगगुणिदकमा ।
अतरछक्कपमाण असंखलोगा हु देस वा ॥ १९९ ॥

प्रतिपातादित्रितय उपर्युपरितनमसंख्यलोकगुणितक्रमं ।
अतरषट्कप्रमाणमसख्यलोका हि देशमिव ॥ १९९ ॥

मिच्छयददेसभिण्णे पडिवादट्ठाणगे वर अवरं ।
तप्पाउग्गकिलिट्ठे तिव्वकिलिट्ठे कमे चरिमे ॥ २०० ॥

मिथ्यायतदेशभिन्ने प्रतिपातस्थानके वरमवरम् ।
तत्प्रायोग्यक्लिष्टे तीव्रक्लिष्टे क्रमेण चरमे ॥ २०० ॥

पडिवज्जजहण्णदुग मिच्छे उक्कस्सजुगलमवि देसे ।
उवरिं सामइयदुगं तम्मज्झे होंति परिहारा ॥ २०१ ॥

प्रतिपद्यजघन्यद्विकं मिथ्ये उत्कृष्टयुगलमपि देशे ।
उपरि सामायिकद्विकं तन्मध्ये भवंति परिहाराणि ॥ २०१ ॥

परिहारस्स जहण्ण सामयियदुगे पडत चरिमम्हि ।
तज्जेट्ठ सट्ठाणे सव्वविसुद्धस्स तस्सेव ॥ २०२ ॥

परिहारस्य जघन्यं सामायिकद्विके पततः चरमे ।
तज्ज्येष्ठं स्वस्थाने सर्वविशुद्धस्य तस्यैव ॥ २०२ ॥

सामयियदुगजहण्णं ओघं अणियट्टिखवगचरिमम्हि ।
चरिमणियट्टिस्सुवरिं पडत सुहुमस्स सुहुमवर ॥ २०३ ॥

सामायिकद्विकजघन्यमोघ अनिवृत्तिक्षपकचरमे ।
चरमानिवृत्तेरुपरि पतत सूक्ष्मस्य सूक्ष्मवरम् ॥ २०३ ॥

खवगसुहुमस्स चरिमे वरं जहाखादमोघजेट्ठ त ।
पडिवाददुगा सव्वे सामाइयछेदपडिबद्धा ॥ २०४ ॥

क्षपकसूक्ष्मस्य चरमे वरं यथाख्यातमोघज्येष्ठं तत् ।
प्रतिपातद्विकं सर्वाणि सामायिकच्छेदप्रतिबद्धानि ॥ २०४ ॥

स० टी०—प्रतिपातप्रतिपद्यमानस्थानद्विक यथासख्य पतच्चरमसमये सयमग्रहणप्रथमसमये च भवति । अनुभयस्थान तयो प्रतिपातस्थानप्रतिपद्यमानस्थानयोर्मध्ये उपरितनगुणस्थानाभिमुखे च भवति । एतत्सर्वं यथा देशसयमे सविस्तर प्रतिपादित तथात्रापि ग्राह्यम् । प्रतिपातादित्रितय स्वस्वजघन्यस्थानात् स्वस्वोत्कृष्टस्थान-पर्यन्तमुपर्युपर्यसख्यातलोकगुणितक्रमाण्यन्तरेषु षट्स्वपि प्रत्येकमसख्यातलोकमात्राणि षट्स्थानानि देशसयम-वज्ज्ञातव्यानि । तत्र प्रतिपातस्थानेषु मिथ्यात्वासयमदेशसयमाभिमुखभेदभिन्नेषु जघन्यानि तीव्रसक्लिष्टस्य चरमसमये भवन्ति । उत्कृष्टानि तत्प्रायोग्यमन्दसक्लिष्टस्य भवन्ति । तथा प्रतिपद्यमानजघन्यस्थानद्वयमार्य-म्लेच्छस्वामिक मिथ्यादृष्टिचरस्य भवति, तदुत्कृष्टस्थानयुगलमपि देशसयतचरस्य भवति प्रतिपद्यमानस्थाना-नामुपर्यनुभयस्थानानि सामायिकच्छेदोपस्थापनसयमद्वयसबन्धीनि भवन्ति । तत्सयमद्वयस्य जघन्योत्कृष्टस्थान-योर्द्वयोर्मध्ये परिहारविशुद्धिसयमस्थानानि भवन्ति । परिहारविशुद्धिसयमस्य जघन्यस्थान सक्लेशवशात्सा-मायिकच्छेदोपस्थापनद्वये पतिष्यतस्तच्चरमसमये भवति । तस्य परिहारविशुद्धिसयमस्योत्कृष्टस्थान स्वस्मिन्नेव सर्वविशुद्धस्याप्रमत्तस्यैकान्तवृद्धिचरमसमये भवति । सामायिकच्छेदोपस्थापनद्वयस्य मिथ्यात्वाभिमुख जघन्य-स्थानमोघजघन्यस्थान सर्वसयमसामान्यजघन्यस्थान भवतीत्यर्थ । तयोरुत्कृष्टस्थानमनिवृत्तिकरणक्षपकचरम समये भवति । सूक्ष्मसाम्परायसयमस्य जघन्यस्थानमुपशमश्रेण्यामवरोहणेऽनिवृत्तकरणस्योपरि पतिष्यत सूक्ष्म-साम्परायोपशमकस्य चरमसमये भवति । तस्योत्कृष्टस्थान क्षीणकषायगुणस्थानाभिमुखस्य सूक्ष्मसाम्पराय-क्षपकस्य चरमसमये भवति । यथाख्यातचारित्र सर्वसयमसामान्योत्कृष्ट तस्य जघन्यादिविकल्पाभावात् । प्रतिपातप्रतिपद्यमानस्थानानि सर्वाण्यपि सामायिकच्छेदोपस्थापनसंयमद्वयप्रतिबद्धान्येव नेतरसयमसबन्धीनि अनुभयस्थानानि पुन सामायिकादिसर्वसयमसबन्धीनि सभवति । मिथ्यादृष्ट्यसयतदेशसयताना सकलसयमग्रहण-काले सामायिकच्छेदोपस्थापनसयमयोरेव प्रथमत प्रतिपत्तिनियमात् । सयमसामान्यापेक्षया प्रतिपद्यमानस्थानानि सयमग्रहणप्रथमसमयवर्तीनि सामायिकच्छेदोपस्थापनप्रतिबद्धान्येव । तथा सामायिकच्छेदोपस्थापनसयमाभ्या प्रच्यवमानस्यैव मिथ्यात्वासयमदेशसयमेषु प्रतिपात सभवति, न परिहारविशुद्धयादिसयमेभ्य प्रच्यवमानस्य तत्प्रतिपात परिहारविशुद्धिसूक्ष्मसाम्परायसयमाभ्या प्रच्यवमानस्य सामायिकद्विके यथाख्यातचारित्रात्प्रच्यव-मानस्य सूक्ष्मसाम्परायसयमेपि च प्रतिपातस्य सिद्धान्ते प्रतिपादितत्वात् ।

ननु भवक्षयादुपशमश्रेण्या मृतस्य सूक्ष्मसाम्परायथाख्यातचारित्रयोर्देवासयते प्रतिपातोऽस्ति, अत कथमसयतप्रतिपाताभाव ? इति चेत् वयमिमे ब्रूमहे—सयमघातिकषायोदयवशोत्पन्नसक्लेशवशेन गुण-स्थानाद्वा क्षयेण वाधस्तनगुणस्थानेषु प्रतिपातस्यात्र विवक्षितत्वात् । भवक्षयहेतुक प्रतिपात पुनरत्राविवक्षित । तत्प्रतिपातविवक्षाया पुनर्देवासयमाभिमुखतैव, न मिथ्यात्वदेशसयमाभिमुखता, बद्धदेवायुष एव सकलसयमिन सयमकाले मृतस्य देवगतिं मुक्त्वान्यत्र गतावनुत्पादात् । देवगतौ च मिथ्यादृष्टिष्वनुत्पादात् देशसयमस्य तत्रा-भावाच्च । तदेव सामायिकादिपञ्चप्रकारसकलसयमलब्धिस्वरूप प्रासङ्गिक मुख्यतस्तु प्रमत्ताप्रमत्तगुणस्थान-वर्तिक्षायोपशमिकसकलसयमलब्धिस्वरूप च सविस्तर प्ररूपितम् ॥ १९९–२०४ ॥

उन परिणाम आदि स्थानोका विशेष कथन—

स० च०—सयमतैं पडतै अत समयविषै अर सयमकौ ग्रहतै प्रथम समयविषैं क्रमतैं प्रति-पात अर प्रतिपद्यमान ए दोय स्थान हैं । बहुरि इनके बीचि वा ऊपरिके गुणस्थानको सन्मुख होतै अनुभय स्थान हो है सो देश सयतवत् इहा भी जानना ॥ १९८ ॥

स० च०—प्रतिपात आदि तीन प्रकार स्थान अपने अपने जघन्यतैं उत्कृष्ट पर्यंत उपरि उपरि असख्यातलोक गुणा क्रम लीए है । तिनके छहौ विषैं प्रत्येक असख्यात लोकमात्र वार षट्स्थानवृद्धि देशसयतवत जाननी ॥ १९९ ॥

स० च०—तहा प्रतिपातस्थान मिथ्यात्व असयत देशसयतकौ सन्मुख होनेकी अपेक्षा तीन भेद लीए है। तहा जघन्य स्थान तौ तीव्र सक्लेशवालाकै सयमका अत समयविषै हो है अर उत्कृष्ट स्थान यथायोग्य मदसक्लेशवालेकै हो है ।। २०० ।।

स० चं०—प्रतिपाद्यमानस्थान आर्य म्लेच्छकी अपेक्षा दोय प्रकार, सो तिनका जघन्य तौ मिथ्यादृष्टितै सयमी भया ताकै हो है। उत्कृष्ट देशसयततै सयमी भया ताकै हो है। तिनके ऊपरि अनुभय स्थान हैं ते सामायिक छेदोपस्थापनासबधी है। तिनिका जघन्य उत्कृष्टके बीचि परिहारविशुद्धिके स्थान है ।। २०१ ।।

स० च०—परिहारविशुद्धिका जघन्य स्थान तौ सामायिक छेदोपस्थापनाविषै पडता जीवकै ताका अत समयविषै हो है। अर ताका उत्कृष्ट स्थान सर्वतैं विशुद्ध अप्रमत्त गुण स्थानवर्ती तिस ही जीवकै एकात वृद्धिका अत समयविषैं हो है ।। २०२ ।।

स० च०—सामायिक छेदोपस्थापनाका•जघन्य स्थान मिथ्यात्वकौ सन्मुख जीवकैं संयमका अतसमयविषै हो है बहुरि जो जघन्य सयमका स्थान सो ही है। ताका उत्कृष्ट स्थान अनिवृत्तिकरण क्षपकश्रेणिवाला ताका अत समयविषैं हो है। बहुरि उपशमश्रेणिविषै पडतैं सूक्ष्मसाम्परायका अन्त समयविषैं अनिवृत्तिकरणकौ सन्मुख होतै सूक्ष्मसापरायका अतसमयविषै जघन्य स्थान हो है ।। २०३ ।।

स० च०—क्षपक सूक्ष्मसापरायका क्षीणकषायके सन्मुख भया ताका अत समयविषै सूक्ष्मसापरायका उत्कृष्ट स्थान हो है। बहुरि यथाख्यात चारित्र सर्व सामान्य चारित्रका उत्कृष्ट स्थान अभेद रूप है। बहुरि प्रतिपात प्रतिपद्यमानके जे स्थान कहे ते सर्व ही सामायिक छेदोपस्थापनसबधी ही जानने। जातैं सकल सयमतैं भ्रष्ट होतैं अत समयविषै अर सकल सयमकौ ग्रहतै प्रथम समयविषैं सामायिक छेदोपस्थापन सयम ही हो है। अन्य परिहार विशुद्धि आदि न हो है। इहां कोऊ कहै—

उपशमश्रेणिविषैं भरणकी अपेक्षा सूक्ष्मसापराय यथाख्याततैं पडि देव पर्याय सबधी असयतविषैं पडना हो है तहा प्रतिपातका अभाव कैसै कहिए ? ताका समाधान—यहा सयमका घात कषायनिके उदयतैं वा गुणस्थानके कालका क्षय होनेतै जो पडना होइ ताहीकी विवक्षा है। पर्याय नाशतै पडना होइ ताकी विवक्षा नाही। जो यहु विवक्षा होइ तौ ताका प्रतिपातविषै देवसबधी असयतहीके सन्मुखपना सभवै है, जातैं सकल सयमहीविषैं जो मूवा ताकै अन्य गति वा मिथ्यात्व देश सयतपना सभवै नाही है। ऐसैं प्रसग पाइ सामायिक आदि पचप्रकार सकलचारित्रके स्थान कहे। मुख्यपने प्रमत्त अप्रमत्त गुणस्थानविषै सभवता जौ क्षायोपशमिक सकल चारित्र ताका प्ररूपण कीया ।। २०४ ।।

विशेष—यहाँ छह अन्तरोका निर्देश इस प्रकार किया है—प्रतिपातमान सयमके जघन्यलब्धिस्थानके पूर्व पहला अन्तर होता है। सर्वसंक्लेशरूप परिणाम होनेसे यह मिथ्यात्वको प्राप्त होता है। तत्प्रायोग्य सक्लेश परिणाम होनेसे सयतके उत्कृष्ट प्रतिपातस्थान होता है। यह भी मिथ्यात्वगुणस्थानमे गिरता है। इसके वाद दूसरा अन्तर प्राप्त होता है। इसी प्रकार जो सयत गिरकर असयतगुणस्थानको प्राप्त होता है उसके ऐसा होनेपर तीसरा अन्तर प्राप्त होता है। इसी प्रकार जो सयत गिरकर संयमासयमको प्राप्त होता है उसके ऐसा होनेपर चौथा अन्तर

प्राप्त होता है। इसीप्रकार जो कर्मभूमिज मनुष्य देशसयमसे सयमको प्राप्त करता है उसके ऐसा होने पर पाँचवा अन्तर प्राप्त होता है। तथा सामायिक-छेदोपस्थापना सयम और अनिवृत्तिकरणके अभिमुख हुए सूक्ष्मसाम्पराय सयतके मध्य छठा अन्तर प्राप्त होता है। यह छह अन्तरोंका विधान है। इस सम्बन्धमे अन्य सब विशेषताओको सस्कृत और हिन्दी टीकासे जान लेना चाहिये। वहाँ अन्य सब विशेषताओका स्पष्ट निर्देश किया ही है। जो प्रतिपातको प्राप्त हुआ उपसमश्रेणीवाला जीव मरकर अविरतसम्यक्त्व गुणस्थानको प्राप्त होता है उसको यहाँ नही लिया गया है इतना यहाँ विशेष जानना चाहिये।

इति क्षायोपशमिकसकलचारित्रप्ररूपण समाप्त ॥

अथ चारित्रोपशामनाधिकारः ॥ ॥

अथ चारित्रमोहोपशमन परममगलपूर्वक प्रतिजानीते—

उवसमियसकल (?) उपशमितसकलदोषानुपशान्तकपायवीतरागान्तानुपशमकान् प्रणम्य कषायोपशमन वक्ष्यामीति । अथ चारित्रमोहोपशमनाभिमुखस्य स्वरूपमाह—

उवसमचरियाहिमुहा„वेदगसम्मो अणं विजोयित्ता ।
अतोमुहुत्तकाल अधापवत्तोऽपमत्तो य ॥ २०५ ॥

उप रित्राभिमुखो वेदकसम्यक् अनं वियोज्य ।
अन्तर्मुहूर्तकालं अधाप्रवृत्तोऽप्रमत्तश्च ॥ २०५ ॥

स० टी०—उपशमचारित्राभिमुखो वेदकसम्यग्दृष्टिर्जीव प्रथममनन्तानुबन्धिचतुष्टय प्रागुक्तविधिना विसयोज्यान्तर्मुहूर्तकालपर्यन्तमथाप्रवृत्ताप्रमत्ताभिधान स्वस्थानाप्रमत्त प्रमत्ताप्रमत्तपरावृत्तिसहस्राणि कुर्वन विश्राम्यति । तत पर दर्शनमोहत्रय क्षपयित्वा क्षायिकसम्यग्दृष्टि सन् कश्चिज्जीवश्चारित्रमोहमुपशमयितु प्रारभते । तस्य दर्शनमोहक्षपणा विधिना प्रागुक्तेनेति नेह पुनरुच्यते । य पूर्नद्वितीयोपशमसम्यक्त्वेनोपशम-श्रेणिमारोहति तस्य दर्शनमोहोपशमविधानप्रतिपादनार्थमिदमाह ॥ २०५ ॥

अब उपशमचारित्रका विधान करते हैं—

अथ उपशान्त कीए हैं सकल दोष जिनि ऐसे उपशान्त कषाय वीतराग तिनहि प्रणाम करि उपशम चारित्रका विधान कहिए है—

स० च०—उपशमचारित्रके सन्मुख भया वेदक सम्यग्दृष्टि जीव सो पहिलैं पूर्वोक्त विधानतैं अनन्तानुबन्धीका विसयोजन करि अन्तर्मुहूर्तकाल पर्यन्त अध प्रवृत्त अप्रमत्त कहिए स्वस्थान अप्रमत्त हो है । तहाँ प्रमत्त अप्रमत्तविषैं हजारोवार गमनागमन करि पीछैं अप्रमत्तविषैं विश्राम करै है । तहाँ पीछैं कोई जीव तीन दर्शन मोहकी खिपाइ क्षायिक सम्यग्दृष्टी होइ चारित्र मोहके उपशमनका प्रारम्भ करै ताकैं तौ क्षायिक सम्यक्त्व होनेका विधान पूर्वैं कह्या है सो जानना । बहुरि कोई जीव द्वितीयोपशम सम्यक्त्व सहित उपशम श्रेणि चढै ताके दर्शनमोहके उपशमनका विधान कहिए है ॥ २०५ ॥

तत्तो तियरणविहिणा दसणमोह समं खु उवसमदि ।
सम्मत्तुप्पत्तिं वा अण्ण च गुणसेढिकरणविही ॥ २०६ ॥

तत त्रिकरणविधिना दर्शनमोह समं खलु उप ति ।
सम्यक्त्वोत्पत्तिमिव अन्यं च गुणश्रेणिकरणविधि ॥ २०६ ॥

स० टी०—ततः स्वस्थानाप्रमत्तोऽन्तर्मुहूर्तमात्र विश्रम्य पुनर्विशुद्धिमापूरयन् करणत्रय विधाय दर्शन-मोह युगपदेवोपशमयति । तत्रापूर्वकरणप्रथमसमयादारम्य स्थित्यनुभागकाण्डकघातो गुणश्रेणिनिर्जरा च गुण-सक्रमण विना अन्यत्सर्व विधानक प्रथमोपशमसम्यक्त्वोत्पत्तौ यथा प्ररूपित तथात्रापि द्रष्टव्यम् । अनन्तानुबन्धि-विसयोजनेऽपि पूर्ववदेव स्थितिखण्डनादिविधान ज्ञातव्यम् ॥ २०६ ॥

स्वस्थान अप्रमत्तके कार्यविशेषका निरूपण—

स० च०—स्वस्थान अप्रमत्तविषै अन्तर्मुहूर्त विश्रामकरि तहाँ पीछै तीन करणविधिकरि युगपत् दर्शनमोहकौ उपशमावै है। तहाँ अपूर्वकरणका प्रथम समयतै लगाय प्रथमोपशम सम्यक्त्व-वत् गुणसक्रमण विना अन्य स्थिति अनुभागकाण्डकका घात वा गुणश्रेणिनिर्जरा आदि सर्व-विधान जानना। अनन्तानुबन्धीका विसयोजन याकै हो है ताविषै भी सर्वस्थिति खण्डनादि पूर्वोक्तवत् जानना ॥ २०६ ॥

उक्तार्थमनूद्य तद्विशेषणार्थमिदमाह—

दंसणमोहुवसमणं तक्खवण वा हु होदि णवरिं तु।
गुणसकमो ण विज्जदि विज्झद वाधापवत्त'[1] च ॥ २०७ ॥

दर्शनमोहोपशमनं तत्क्षपणं वा हि भवति नवरि तु।
गुणसंक्रमो न विद्यते विध्यात वा अधःप्रवृत्तं च ॥ २०७ ॥

स० टी०—चारित्रमोहोपशमाभिमुखस्य दर्शनमोहोपशमन वा तत्क्षपण वा भवति नियमाभावात्। अय तु विशेष —दर्शनमोहोपशमनविधाने गुणसक्रमो नास्ति, केवल विध्यातसक्रमो वा अथाप्रवृत्तसक्रमो वा सभवति ॥ २०७ ॥

उपशमश्रेणिपर चढनेकी योग्यताका निर्देश—

स० च०—चारित्रमोहके उपशमावनेकौ सन्मुख भया जीवकै दर्शनमोहका उपशम होइ वा ताकी क्षपणा होइ। तहा उपशमविधानविषै केवल गुणसक्रमण नाही है। विध्यात सक्रमण है सो विशेष आगे कहेगे ॥ २०७ ॥

विशेष—क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव या द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टि जीव चारित्रमोहनीयकी उपशमना करनेके सन्मुख होता है। क्षायिक सम्यग्दर्शनके उत्पन्न होनेका विधान पहले ही कर आये हैं। द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शनकी उत्पत्तिका निर्देश यहाँ किया जा रहा है। प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि या वेदक सम्यग्दृष्टि जीव उपशम श्रेणिपर नही चढते। जो वेदक सम्यग्दृष्टि जीव उपशमश्रेणिपर आरोहण करता है वह पहले अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसयोजना कर अनन्तर दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृत्तियोका उपशम करनेके बाद ही उपशमश्रेणिपर चढनेका अधिकारी होता है। इस जोवके दर्शनमोहनीयकी उपशमना करते समय गुणसक्रम नही होता। उसके स्थानपर विध्यातसक्रम और यथासम्भव अध.प्रवृत्तसक्रम होते हैं। अध प्रवृत्तसक्रम अप्रशस्त-कर्मोका होता है। विशेष व्याख्यान आगे किया ही है।

तत्र तदानीतनस्थितिसत्त्वविशेषनिर्ज्ञानार्थमिदमाह—

ठिदिसत्तमपुव्वदुगे सखगुणूण तु पढमदो चरिमं[2]।
उवसामण अणियट्टीसखाभागासु तीदासु ॥ २०८ ॥

---

१ णवरि एत्थ गुणसकमो णत्थि विज्झदो चेव, अप्पसत्थकम्माण अधापवत्तो वा।
धवला० पु० ६, पृ० २८९।

२ अपुव्वकरणस्स पढमसमये ट्ठिदिसतकम्म त चरिससमए सखेज्जगुणहीण। कसाय० चू०, जयध०

स्थितिसत्त्वमपूर्वद्विके संख्यगुणोनं तु प्रथमत चरमम् ।
उपशामनमनिवृत्तिसंख्यभागेष्वतीतेषु ॥ २०८ ॥

स० टी०—अपूर्वकरणस्य प्रथमसमयकर्मस्थितिसत्त्वात्काण्डकघातमाहात्म्येन तच्चरमसमये कर्मस्थितिसत्त्व सख्यातगुणहीन भवति । एवपनिवृत्तिकरणेऽपि स्थितिसत्त्व ज्ञातव्यम् ॥ २०८ ॥

उस समय स्थितिसत्त्व विशेषका विचार—

स० च०—अपूर्वकरण वा अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयसम्बन्धी स्थिति सत्त्वतै अन्तसमयविषै स्थितिसत्त्व है सो काण्डक घात करनेतै सख्यातगुणा घाटि हो है ॥ २०८ ॥

विशेष—अपूर्वकरके प्रथम समयमे जो स्थितिसत्त्व होता है। उसमेसे हजारो स्थितिकाण्डकोका घात होनेसे उसके अन्तमे सख्यातगुणाहीन स्थितिसत्त्व शेष रहता है। इसी प्रकार अनिवृत्तिकरणके प्रथमसमयमे जो स्थितिसत्त्व शेष रहता है उसमेसे हजारो स्थितिकाण्डकका घात होनेसे उसके अन्तमे सख्यातगुणाहीन स्थितिसत्त्व शेष रहता है। तथा यह जीव अनिवृत्तिकरणके कालमेसे सख्यात बहुभागको व्यतीत करके जब उसका एकभाग शेष रहता है तब दर्शनमोहनीयत्रिककी उपशामनाका कार्य प्रारम्भ करता है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि अपूर्वकरणके प्रथमसमयसे ही गुणश्रेणि रचना, स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात ये कार्य प्रारम्भ हो जाते हैं। यहाँ गुणश्रेणिका आयाम अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे कुछ अधिक होता है। और वह गलितशेष होती है।

अथानिवृत्तिकरणकालस्य सख्येयबहुभागेषु गतेषु अवशिष्टैकभागे विधीयमान क्रियान्तर प्रदर्शयितुमिदमाह—

सम्मस्स असंखेज्जा समयपबद्धाणुदीरणा होदि ।
तत्तो मुहुत्तअंते दंसणमोहंतरं कुणइ ॥ २०९ ॥

सम्यस्य असख्येयानां समयप्रबद्धानामुदीरणा भवति ।
ततो मुहूर्तान्ते दर्शनमोहान्तरं करोति ॥ २०९ ॥

स० टी०—अपूर्वकरणप्रथमसमय आरब्धा या गुणश्रेणि साधिकापूर्वानिवृत्तिकरणकालायामा गलितावशेषप्रमाणानिवृत्तिकरणकालबहुभागपर्यन्त प्रवर्तते । तत्रापकृष्टद्रव्यस्य पल्यासख्यातभागखण्डितस्य बहुभागद्रव्यमुपरितनस्थितौ निक्षिप्त । तदेकभागस्य पुनरसख्यातलोकखण्डितस्य बहुभागद्रव्य गुणश्रेण्यायामे निक्षिप्तम् । तदेकभागद्रव्यमुदयावल्या निक्षिप्तम् । एव निक्षिप्ते उदये समयप्रवद्धस्यासख्यातैकभागमात्रमेव द्रव्य पतति । इदानी पुनरनिवृत्तिकरणकालसख्यातैकभागमात्रेऽवशिष्टे सम्यक्त्वप्रकृतिद्रव्यादपकृष्टद्रव्यस्य पल्यासख्यातभागखण्डितस्य बहुभागमुपरितनस्थितौ निक्षिप्य तदेकभाग पुनरपि पल्यासख्यातभागेन खण्डयित्वा बहुभाग गुण-

पु० १३, पृ० २०४ । अपुव्वकरणस्स पढमसमयट्ठिदिसतकम्मादो तस्सेव चरिमसमयट्ठिदिसतकम्म सखेज्जगुणहीण । पढमसमयअणियट्टिकरणस्स ट्ठिदिसतकम्मादो चरिमसमयट्ठिदिसतकम्म सखेज्जगुणहीण । धवला० पु० ६, पृ० २८९ ।

१ दसणमोहणीयउवसामणा-अणियट्टिअद्धाए सखेज्जेसु भागेसु गदेसु सम्मत्तस्स असखेज्जाण समयपबद्धाणमुदीरणा । तदो अंतोमुहुत्तेण दसणमोहणीयस्स अतर करेदि । कसाय० चू०, पु० १३, पृ० २०५ ।

श्रेण्यायामे निक्षिप्य तदेकभाग पुनरुदयावल्या निक्षिपति। अत कारणात्सम्यक्त्वप्रकृतिद्रव्यस्यासंख्येया समयप्रबद्धा उदयनिषेके निक्षिप्योदीर्यन्ते। पल्यस्य भागहारभूतासंख्येयस्यपबाहुल्यमाहात्म्यात् यत्रासंख्येयसमयप्रबद्धोदीरणाकरण कथ्यते तत्र पल्यासंख्यातभाग एवापकृष्टद्रव्यस्य भागहारो नासंख्यातलोक इति वचनात्। अत परमन्तर्मुहूर्तकाले गते दर्शमोहस्यान्तर करोति ॥ २०९ ॥

अपूर्वकरण आदिमे कार्यविशेषका निर्देश—

बहुरि अनिवृत्तिकरण कालकौ सख्यातका भाग दीजिए तहा बहुभाग व्यतीत भए अवशेप एकभाग रहै है तहा कार्य हो है सो कहै है—

स० चं०—अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै जो साधिक अपूर्व अनिवृत्तिका कालमात्र आयाम धरे गलितावशेष गुणश्रेणिका आरम्भ कीया था सो अनिवृत्तिकरणका बहुभाग पर्यन्त प्रवर्तै है। तहा अपकर्षण कीया द्रव्यकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ बहुभाग उपरितन स्थितिविषै दीजिए है। अवशेष एक भागकौ असख्यातलोकका भाग देइ बहुभाग गुणश्रेणि आयामविषैं एकभाग उदयावलीविषै दीजिए है। सो इहा उदयावलीविषै दीया द्रव्य समयप्रबद्धके असख्यातवे भागमात्र आवै है। अनिवृत्तिकरणकालका सख्यातवाँ भाग अवशेष रहैं सम्यक्त्व-मोहनीका द्रव्यकौ अपकर्षण करि याकौ पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग देइ बहुभाग उपरितन स्थितिविषैं देना। अवशेष एक भागकौ पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग देइ तहा बहुभाग गुणश्रेणि आयामविषै दीजिए है। एकभाग उदयावलीविषै दीजिए है। सो इहा उदयावलीविषै दीया जो उदीरणा द्रव्य सो असख्यात समयप्रबद्ध प्रमाण आवै हैं जातै ऐसा कह्या है जहाँ असख्यात समयप्रबद्धकी उदीरणा होइ तहा भागहार पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र है। असख्यात लोकप्रमाण नाही है। बहुरि यातै परे अन्तर्मुहूर्तकाल व्यतीत भए दर्शनमोहका अन्तर करै है॥ २०९॥

विशेष—जो दर्शनमोहनीयकी उपशमना कर रहा है उसके सम्यक्त्वके असख्यात समय-प्रबद्धोकी उदीरणा होती है। इस सम्बन्धमे चूर्णिसूत्रमे बतलाया है कि दर्शनमोहनीय उपशामना-सम्बन्धी अनिवृत्तिकरणकालके सख्यात बहुभाग जानेपर सम्यक्त्वके असख्यात समयप्रबद्धोकी उदीरणा होती है। जयधवलामे इस विषयपर प्रकाश डालते हुए लिखा हैं कि पहले असख्यात-लोकप्रमाण प्रतिभागके अनुसार सब कर्मोकी उदीरणा होती थी, किन्तु इस स्थानपर परिणामोके माहात्म्यवश सम्यक्त्वके असख्यात समयप्रबद्धोकी उदीरणा होने लगती है। इसी तथ्यको लब्धिसारकी टीकामे स्पष्ट किया गया है। बात यह है कि अपूर्वकरणके प्रथम समयसे जो गुणश्रेणि रचना होती है। वहाँ अपकर्षितद्रव्यमे पल्योपमके असख्यातवें भागका भाग देनेपर बहुभागप्रमाण द्रव्य गुणश्रेणिसे उपरितन स्थितियोमे निक्षिप्त होता है। जो एकभाग शेष रहता है उसमे असख्यातलोकप्रमाण समयोका भाग देनेपर गुणश्रेणिआयाममे निक्षिप्त होता है। और शेष एकभाग उदयावलिमे निक्षिप्त होता है। इस प्रकार जबतक निक्षिप्त होता है तबतक उदयमे समयप्रबद्धका असख्यात एकभागप्रमाणद्रव्य ही पतित होता है। किन्तु अनिवृत्तिकरणका सख्यातवाँ भागकाल शेष रहनेपर सम्यक्त्व प्रकृतिके अपकृष्टद्रव्यमे पल्योपमके असख्यातवें भागका भाग देनेपर बहुभागप्रमाणद्रव्य उपरितन स्थितियोमे निक्षिप्त होता है। अवशिष्ट रहे एकभागमे पल्योपमके असख्यातवें भागका भाग देनेपर बहुभागप्रमाणद्रव्य गुणश्रेणि-आयाममे

निक्षिप्त होता है तथा शेष शेष एकभागप्रमाणद्रव्य उदयावलिमे निक्षिप्त होता है। इस कारण सम्यक्त्वप्रकृतिकी उदयस्थितिमे असख्यातसमयप्रबद्ध निक्षिप्त होकर उनकी उदीरणा होती है, क्योकि यहाँ भागहार अल्प है, इसलिए प्रति समय इतने द्रव्यकी उदीरणा होने लगती है। इसके अन्तमुंहूर्तके बाद अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न होती है।

अथान्तरकरणप्रदर्शनार्थमाह—

अंतोमुहुत्तमेत्त आवलिमेत्त च सम्मतियठाण ।
मोत्तूण य पढमट्ठिदिं दंसणमोहंतरं कुणइ[1] ॥ २१० ॥

अन्तर्मुहूर्तमात्रं आवलि ंच क नम् ।
मुक्त्वा च प्रथमस्थितिं दर्शनमोहान्तरं करोति ॥ २१० ॥

स० टी०—उदयावल्या सम्यक्त्वप्रकृतेरन्तमुंहूर्तमात्रीमनुदययोरितरयोर्मिथ्यात्वमिश्रप्रकृत्योश्च आवलीमात्री प्रथमस्थितिं मुक्त्वा उपर्यन्तमुंहूर्तनिषेकाणामन्तरभावमन्तमुंहूर्तेन कालेन करोति। सम्यक्त्वप्रकृतेर्गुणश्रेणिशीर्षं तत सख्यातगुणितानुपरितनस्थितिनिषेकाश्च गृहीत्वा अन्तर करोति, मिथ्यात्वमिश्रयोर्गलितावशेषगुणश्रेण्यायाम सर्वं, तत सख्यातगुणितानुपरितनस्थितिनिषेकाश्च गृहीत्वा अन्तर करोतीत्यर्थ। उपरि तिसृणा प्रकृतीना द्वितीयस्थितिप्रथमनिषेका सदृशा एव। अध प्रथमस्थित्यग्रनिषेका विसदृशा इति ग्राह्यम् ॥ २१० ॥

अन्तरकरणके विषयमे विशेष निर्देश—

स० च०—नीचेके वा ऊपरिके निषेक छोडि बीचिके केते इक निषेकनिका द्रव्यकौ अन्य निषेकनिविषैं निक्षेपण करि तिनि निषेकनिका अभाव करना सो अतर करना कहिए है सो जाका उदय पाइए ऐसी जो सम्यक्त्व मोहनी ताकी तौ अतमुंहूर्तमात्र अर उदय रहित मिश्र वा मिथ्यात्व तिनिकी आवलीमात्र जो प्रथम स्थिति तीहिं प्रमाण नीचें निषेकनिकौ छोडि ताके ऊपरि जे अतमुंहूर्त कालप्रमाण निषेक तिनिका अतर कहिए अभाव करै है तहा सम्यक्त्वमोहनीका अनिवृत्तिकरण कालका सख्यातवा भागमात्र गुणश्रेणिशीर्षं अर तातैं सख्यातगुणे उपरिवर्ती उपरितन स्थितिके निषेक तिनिका अतर करै है। अर मिथ्यात्व-मिश्रमोहनीका गले पीछे अवशेष रह्या जो सर्व गुणश्रेणी आयाम अर तातैं सख्यातगुणे उपरितन स्थितिके निषेक तिनका अतर करै है। सो जितने निषेकनिका अतर कीया ताके प्रमाणका नाम अतरायाम है। तिस अतरायामके नीचैं जे निषेक छोडे तिस प्रमाण प्रथम स्थिति है अर अतरायामके उपरिवर्ती जे निषेक तिसका नाम द्वितीय स्थिति है। तहा द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेक तौ तीनो ही प्रकृतिनिके समान है जातैं सो प्रथम निषेक अतरायामके अनतरि पाइए। अर प्रथम स्थितिका अत निषेक समान नाही है जातै प्रथम स्थितिका प्रमाण हीनाधिक है॥ २१० ॥

---

१ एत्थ सम्मत्तस्स पढमट्ठिदिमतोमुहुत्तमेत्त ठवेयूण सेसाणमुदयावलिपमाण मोत्तूणतर करेदि त्ति वत्तव्व। जयध० पु० १३, पृ० २०५।

अथान्तरद्रव्यस्य निक्षेपप्रकारप्रदर्शनार्थं गाथाचतुष्टयमाह—

सम्मत्तपयडिपढमट्ठिदिम्मि सछुहदि दंसणतियाण ।
उक्कीरय तु दव्व बधाभावादु मिच्छस्स[1] ॥ २११ ॥

सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थितौ संपातयति दर्शनत्रयाणाम् ।
उत्कीर्णं तु द्रव्य बन्धाभावात् मिथ्यस्य ॥ २११ ॥

स० टी०—दर्शनमोहत्रयस्यान्तरे उत्कीर्णं द्रव्यमुदयवत्या सम्यक्त्वप्रकृते प्रथमस्थितावेव निक्षिपति न द्वितीयस्थितौ यत्र नूतनबन्धोऽस्ति तत्र उत्कृष्य द्वितीयस्थितावपि निक्षिपति। अत्र पुनरप्रमत्तगुणस्थाने दर्शनमोहस्य बन्धाभावात् द्वितीयस्थितौ न निक्षिपतीत्यर्थ ॥ २११ ॥

अपकर्षित द्रव्यकी निक्षेपण विधिका विचार—

स० च०—तहा जिनि निषेकनिका अभाव कीजिए है तिन तीनो दर्शनमोहकी प्रकृतिके निषेकनिके द्रव्यकौ उदयरूप जो सम्यक्त्वमोहनी ताकी प्रथम स्थितिविषै ही निक्षेपण करै है। जातै जहा नवीन बध हो है तहा उत्कर्षण करि द्वितीय स्थितिविषै भी निक्षेपण हो है। सो इहा सातवे गुणस्थानविषै दर्शनमोहका बध है नाही, तातै द्वितीय स्थितिविषै निक्षेपण नाही करै है ॥ २११ ॥

बिदियट्ठिदिस्स दव्व ओक्कड्डिय देदि सम्मपढम्ममि ।
बिदियट्ठिदिम्हि तस्स अणुक्कीरिज्जंतमाणम्हि[2] ॥ २१२ ॥

द्वितीयस्थितेर्द्रव्यमपकर्ष्य ददाति सम्यक्त्वप्रथमे ।
द्वितीयस्थितौ तस्यानुत्कीर्यमाणे ॥ २१२ ॥

स० टी०—गुणश्रेणिनिर्जरार्थमुदयावलिबाह्यप्रथमसमयादारभ्य सर्वत्रापकृष्टद्रव्य पल्यासख्यातभागेन खण्डयित्वा बहुभागमन्तरायाम मुक्त्वा स्वस्वोपरितनद्वितीयस्थितौ निक्षिप्य शेषैकभाग पल्यासख्यातैकभागेन खण्डयित्वा बहुभाग सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थितौ गुणश्रेण्यायामे निक्षिप्य तदेकभागमुदयावल्या निक्षिपति। एवमन्तरस्य द्वितीयादिफालिद्रव्य दर्शनमोहत्रयसम्बन्धि प्रतिसमयमसख्यातगुणितक्रमेण गृहीत्वा सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थितावेव निक्षिपति। अन्तरे उपरि चापकृष्टद्रव्यमपि प्रतिसमयमसख्यातगुणितक्रमेण गृहीत्वा सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थितौ अन्तरस्योपरिस्वस्वद्वितीयस्थितौ चाग्रेऽतिस्थापनावलिं मुक्त्वा निक्षिपति ॥ २१२ ॥

निक्षेपण विधिका विशेष विचार—

स० च०—इहाँ अन्तरकरणकालका प्रथमादि समयनिविषैं गुणश्रेणि निर्जराके अथि

---

१ अतरट्ठिदीसु उक्कीरज्जमाण पदेसग्ग बधाभावेणविदियट्ठिदीए ण सछुहदि, सव्वमाणेदूण सम्मत्तस्स पढमट्ठिदीए णिक्खिवदि।

२ सम्मत्तस्स विदियट्ठिदिपदेसग्गमोकड्डियूण अप्पणो पढमट्ठिदीए गुणसेढिसरूवेण णिक्खिवदि। एव सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताण पि विदियट्ठिदिपदेसग्गमोकड्डियूण सम्मत्तपढमट्ठिदिम्मि गुणसेढीए णिक्खिवदि। सत्थाणे वि अधिच्छावणावलिय मोत्तूण समयाविरोहेण णिक्खिवदि। अप्पणो अतरट्ठिदीसु ण णिक्खिवदि। जयध०, पु० १३, पृ० २०६।

उदयावलीतैं बाह्य निषेकनिका अपकर्षण कीया जो द्रव्य ताकौ पल्यका असंख्यातवाँ भागका भाग देइ बहुभाग तौ अन्तरायामकौ छाडि ताके उपरिवर्ती जो उपरितन द्वितीय स्थिति ताविषै निक्षेपण करि अवशेष एक भागकौ पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग देइ बहुभागकौं सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थितिरूप इहाँ गुणश्रेणि आयाम ताविषै निक्षेपण करै है। अवशेष एकभाग उदयावली-विषै निक्षेपण करै है। ऐसै अन्तर करनेका कालका प्रथम समयविषैं फालिद्रव्यका अर अपकृष्ट द्रव्यका निक्षेपण करिए है। तहाँ जिन निषेकनिका अन्तर कीजिए है तिनका द्रव्य अन्य निषेक-निविषै अन्तर करनेका काल अन्तर्मुहूर्त है ताकरि निक्षेपण करिए है। तहाँ तिनिका द्रव्य तिस कालके प्रथम समयविषैं जेता निक्षेपण कीजिए सो प्रथम फालिका द्रव्य, दूसरे समय जेता निक्षेपण करिए सो दूसरी फालिका द्रव्य ऐसैं क्रमतैं अन्तसमयविषै अवशेष रह्या तिनका द्रव्यकौं निक्षेपण करिए है सो अन्तफालिका द्रव्य जानना। बहुरि जो गुणश्रेणिके अर्थि अपकर्षण कीया द्रव्य सो अपकृष्ट द्रव्य कहिए है। सो प्रथम समय सम्बन्धी फालिद्रव्य वा अपकृष्ट द्रव्यतैं द्वितीयादि समय सम्बन्धी फालिद्रव्यका वा अपकृष्ट द्रव्यका प्रमाण समय-प्रति असख्यातगुणा है। ताके निक्षेपण करनेका विधान जैसैं प्रथम समयविषैं कह्या तैसैं ही जानना ॥ २१२ ॥

विशेष—सम्यग्दृष्टिके मिथ्यात्वका बन्ध नही होता, इसलिये अन्तरसम्बन्धी स्थितियोमे से उत्कीरण किये जानेवाले प्रदेशपुजको द्वितीय स्थिति (अन्तरायामके ऊपरकी स्थिति)मे निक्षिप्त न कर समस्त द्रव्यको सम्यक्त्वकी प्रथम स्थिति (अन्तरायामसे नीचेकी स्थिति)मे निक्षिप्त करता है। तथा सम्यक्त्वकी दूसरी स्थितिके प्रदेशपुजको अपकर्षित कर अपनी प्रथम स्थितिमे गुणश्रेणि-रूपसे निक्षिप्त करता है। इसी प्रकार मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भी द्वितीय स्थितिके प्रदेशपुजको अपकर्षित कर सम्यक्त्वकी प्रथम स्थितिमे गुणश्रेणिरूपसे निक्षिप्त करता है। तथा अभिस्थापनावलिको छोडकर आगमके अनुसार निक्षिप्त करता है, अपनी अन्तरसम्बन्धी स्थितियो-मे निक्षिप्त नही करता यह उक्त गाथाका तात्पर्य है।

सम्मत्तपयडिपढमट्ठिदीसु सरिसाण मिच्छमिस्साणं।
ठिदिदव्व सम्मस्स य सरिसणिसेयम्हि संकमदि[1] ॥ २१३ ॥

सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थितिषु सदृशाना मिथ्यमिश्राणाम्।
स्थितिद्रव्य सम्यस्य च सदृशनिषेके सक्रामति ॥ २१३ ॥

स० टी०—मिथ्यात्वमिश्रयोरुदयावलिबाह्यान्तरायामे सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थितिसदृशस्थितयो ये निषेकास्तानुत्कीर्य स्वसमानस्थितिषु सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थितिनिषेकेष्वेव निक्षिपति न तेषा निक्षेपविभागो-ऽस्ति यदुपरिस्थितान्तरायामा निषेका फालिगता सर्वेऽपि पूर्वोक्तविधानेनैव सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थितौ गुण-श्रेण्यामुदयावल्या च विभज्य निक्षिपतीत्यर्थ ॥ २१३ ॥

निक्षेपणके विषयमे विशेष खुलासा—

स० च०—मिथ्यात्व अर मिश्रमोहनीकी प्रथम स्थितिके ऊपरि जो अन्तरायामके निषेक सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थितिके समानवर्ती पर्यन्त पाइए है तिनिका द्रव्यकौं अपने अपने

---

१ समत्तपढमट्ठिदीए सरिस होदूणुदयावलिबाहिरे ज ट्ठिद मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्तपदेसग्ग त सम्मत्तस्सुवरि समट्ठिदीए सकामेदि। जयध० पु० १३, पृ० २०६।

समानवर्ती जे सम्यक्त्वमोहनीके निषेक तिनविषैंही निक्षेपण करै है। तहाँ द्रव्य देनेका विधान नाही है। भावार्थ ऐसा—जो मिथ्यात्व मिश्रमोहनीकी प्रथम स्थिति तो आवलीमात्र है अर सम्यक्त्वमोहनीकी अन्तमुहूर्तमात्र है ताकौं छोडि ऊपरिके निषेकनिका अन्तर करिए है। तहाँ मिथ्यात्व मिश्रमोहनीकी प्रथम स्थितिके ऊपरि जो अन्तरायामका पहिला निषेक था ताका द्रव्यकौ सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थितिविषै जो आवलीतैं ऊपरि पहिला निषेक है तीहिंविषै निक्षेपण कीया। ऐसैं ही ताके अन्तरायामके दूसरा निषेकका द्रव्यकौं सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थितिविषैं आवलीतैं ऊपरि दूसरा निषेक है तीहिविषै निक्षेपण कीया ऐसैं सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थितिका अन्तनिषेकके समान जो मिथ्यात्व मिश्रके अन्तरायामका निषेक तीहि पर्यन्त जे निषेक तिनिका निक्षेपण अपने सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थितिके निषेकनिविषै जानना तहाँ द्रव्य विभाग नाही है। बहुरि तिसके ऊपरि तीनो ही दर्शनमोहके अन्तरायामके निषेकनिका द्रव्य पूर्वोक्त प्रकार फालि रूपकरि सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थितिविषै गुणश्रेणिविषै उदयावलीविषै विभाग करि निक्षेपण करिए है ॥ २१३ ॥

जावतरस्स दुचरिमफालिं पावे इमो कमो ताव।
चरिमतिदसणदव्व छुहेदि सम्मस्स पढमम्हि[1] ॥ २१४ ॥

यावदन्तरस्य द्विचरमफालिं प्राप्नोति अय क्रमस्तावत्।
चरमत्रिदर्शनद्रव्य क्षेपयति सम्यस्य प्रथमे ॥ २१४ ॥

स० टी०—एव फालिद्रव्यस्यापकृष्टद्रव्यस्य च यावदन्तरद्विचरमफालिं प्राप्नोति तावदयमेव निक्षेपक्रम । पुनर्दर्शनमोहत्रयस्य चरमफालिद्रव्य तत्रापकृष्टद्रव्य च सर्वं सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थितावेव निक्षिपति न पूर्ववदपकृष्टबहुभागस्य द्वितीयस्थितौ निक्षेप कर्तव्य इति भाव ॥ २१४ ॥

फालिद्रव्योकी निक्षेपण विधिका विचार—

स० च०—यावत् अन्तरकरणकालका द्विचरम समयवर्ती जो अन्तकी द्विचरम फालि सो प्राप्त होइ तहाँ फालि द्रव्य अर अपकृष्ट द्रव्य ताके निक्षेपण करनेका यहु ही पूर्वोक्त अनुक्रम जानना। बहुरि अन्तरकरणकालका अन्त समयसम्बन्धी जो दर्शनमोहत्रिककी अन्तफालिका द्रव्य है सो अर तहाँ अपकृष्ट द्रव्य सो भी सर्व सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थिति ही विषै निक्षेपण करिए है। भावार्थ यहु—पूर्वै जैसैं अपकर्षण कीया द्रव्यविषैं बहुभाग उपरितन स्थितिविषै देने कहे थे तैसैं इहा अपकर्षण कीया द्रव्यका बहुभाग द्वितीय स्थितिविषैं निक्षेपण न करना ॥ २१४ ॥

अथ दर्शनमोहगुणश्रेण्यवसानकथनार्थमिदमाह—

विदियट्ठिदिस्स दव्व पढमट्ठिदिमेदि जाव आवलिया।
पडिआवलिया चिट्ठदि सम्मत्तादिमठिदी ताव[2] ॥ २१५ ॥

---

१ जाव अतरदुचरिमफाली ताव एसो चेव कमो। चरिमफालीए णिवदमाणाए जहा पुव्व मिच्छत्तसम्मामिच्छत्ताणमतरद्ठिदिदव्वमोकड्डणासकमेण अइच्छावणावलिय मोत्तूण सत्थाणे वि देदि तहा सपहि ण सछुहदि। किंतु तेसिमतरचरिमफालिदव्व सम्मत्तपढमट्ठिदीए चेव गुणसेढीए णिक्खिवदि त्ति वत्तव्व।

जयध० पु० १३, पृ० २०६।

२ विदियट्ठिदिदव्व पि ताव पढमट्ठिदीए आगच्छदि जाव आवलिय-पडिआवलियाओ सेसाओ

द्वितीयस्थितेर्द्रव्यं प्रथमस्थितिमेति या लिका।
प्रत्यावलिका तिष्ठति सम्यक्त्वादिमस्थिति तावत् ॥ २१५ ॥

स० टी०—यावत्सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थिति आवलिप्रत्यावलिमात्रावशेषा भवति तावद्द्वितीयस्थितिद्रव्यमपकर्षणवशेन प्रथमस्थितिमागच्छति तावत्पर्यन्त दर्शनमोहस्य गुणश्रेणि प्रवर्तते। सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थितौद्वयावलिमात्रावशिष्टाया तस्य गुणश्रेणिर्नास्तीत्यर्थ । ज्ञानावरणादिशेषकर्मणा चारित्रपरिणामनिबन्धना गुणश्रेणी प्रवर्तत इति ग्राह्यम् । प्रथमस्थिते समयाधिकावल्यवशेषपर्यन्त सम्यक्त्वप्रकृतेरुदीरणा वर्तते। तत सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थितेश्चरसमयेऽनिवृत्तिकरणकाल समाप्तो भवति। तदनन्तरमन्तरप्रथमसमये द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टि भवति जीव ॥ २१५ ॥

दर्शनमोहनीयसम्बन्धी गुणश्रेणिकी पर्यवसानविधि—

स० च०--सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थितिविषैं उदय आवली अर प्रति आवली ए दोय आवली अवशेष रहैं तहा पर्यन्त द्वितीय स्थितिका द्रव्यकौ अपकर्षणका वशतै प्रथम स्थितिविषै निक्षेपण करिए है। तहा ही पर्यन्त दर्शनमोहकी गुणश्रेणि प्रवर्तै है। सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थितिविषैं दोय आवली अवशेष रहैं दर्शनमोहकी गुणश्रेणि नाही हो है, अन्य कर्मनिकी सकलचारित्रसम्बन्धी गुणश्रेणि तहा भी प्रवर्तै है। बहुरि सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थितिविषै एक समय अधिक आवली अवशेष रहै तहाँ पर्यन्त सम्यक्त्वमोहनीको उदीरणा प्रवर्तै है। ऊपरिके निषेकनिका द्रव्यकौ उदयावलीविषैं दीजिए है। बहुरि तिस प्रथम स्थितिका अन्तसमयविषैं अनिवृत्तिकरणकाल समाप्त हो है ॥ २१५ ॥

अथ दर्शनमोहद्रव्यस्य सक्रमप्रतिपादनार्थमाह—

सम्मादिठिदिज्झीणे मिच्छदव्वादु सम्मसमिस्से।
गुणसकमो ण णियमा विज्झादो सकमो होदि[1] ॥ २१६ ॥

सम्यगादिस्थितिक्षीणे मिथ्यद्रव्यात् समिश्रे।
गुणसक्रमो न नियमात् विध्यात सक्रमो भवति ॥ २१६ ॥

स० टी०—सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थितौ निरवशेष गलिताया सजातद्वितीयोपशमसम्यक्त्वस्य जीवस्य मिथ्यात्वद्रव्यात् गुणसक्रमेण विना सूच्यगुलासख्यातभागमात्रविध्यातसक्रमेण भक्तैकभागमात्र द्रव्य गृहीत्वा सम्यक्त्वसम्यग्मिथ्यात्वप्रकृत्यो प्रतिसमय विशेषहीनक्रमेण निक्षिपति ॥ २१६ ॥

त्ति। तत्तो परमागाल-पडिआगालवोच्छेदो। तत्तो पाए सम्मत्तस्स गुणसेढिविण्णासो णत्थि। पडिआवलियादो चेव उदीरणा। आवलियाए समयाहियाए सेसाए सम्मत्तस्स जहण्णिया ट्ठिदिउदीरणा। तदा पढमट्ठिदीए चरिमसमये अणियट्टिकरणद्धा समत्ता। से काले पढमसम्मत्तमुप्पाइय सम्मइट्ठी जायदे।

जयध० पु० १३, पृ० २०६।

१ सम्मत्तस्स पढमट्ठिदीए झीणाए ज त मिच्छत्तस्स पदेसग्ग सम्मत्तसम्मामिच्छत्तेसु गुणसकमेण सकमदि जहा पढमदाए समत्तमुप्पाएतस्स तहा एत्थ णत्थि गुणसकमो, इमस्स विज्झादसकमो चेव।

कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० २०७।

प्रकृतमें संक्रमसम्बन्धी ऊहापोह—

स० च०—सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थितिका क्षय होतें ताके अनन्तरि अन्तरायामका प्रथम समय प्राप्त होइ तीहिंविषैं द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टी हो है। तहां गुणसंक्रमण तौ नियमतें इहां है नाहीं तातैं मिथ्यात्वके द्रव्यकौं सूच्यंगुलका असंख्यातवां भागमात्र जो विध्यात संक्रमण भागहार ताका भाग देइ तहां एक भागमात्र मिथ्यात्वके द्रव्यकौ मिश्रसम्यक्त्वमोहनीविषैं निक्षेपण करै है। बहुरि तातैं द्वितीयादि समयनिविषैं विशेष घटता क्रम लीए निक्षेपण करै है ॥ २१६ ॥

अथ द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टिविशुद्धेरेकान्तवृद्धिकालप्रमाणं दर्शयितुमिदमाह—

सम्मत्तुप्पत्तीए गुणसंकमपूरणस्स कालादो।
संखेज्जगुणं कालं विसोहिवड्ढीहिं वड्ढदि हु[1] ॥ २१७ ॥

सम्यक्त्वोत्पत्तौ गुणसंक्रमपूरणस्य कालात्।
संख्येयगुणं कालं विशुद्धिवृद्धिभिः वर्धते हि ॥ २१७ ॥

स० टी०—प्रथमोपशमसम्यक्त्वोत्पत्तौ गुणसंक्रमपूरणकालो यावदन्तर्मुहूर्तमात्रः पूर्वं प्ररूपितः तत्संख्येयभागगुणं कालमयं द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टिः प्रतिसमयमनन्तगुणितक्रमेण विशुद्ध्या वर्धते। अयं च विशुद्ध्येकान्तवृद्धिकालोऽन्तर्मुहूर्तमात्र एव ॥ २१७ ॥

अन्तर्मुहूर्ततक निरन्तर विशुद्धिकी वृद्धिका निर्देश—

स० च०—प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी उत्पत्तिविषैं पूर्वै गुणसंक्रम पूरणकाल अन्तर्मुहूर्तमात्र कह्या था तातैं संख्यातगुणा काल पर्यन्त यहु द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टी प्रथम समयतैं लगाय समय समय प्रति अनन्तगुणी विशुद्धताकरि बधै है। ऐसैं इहां एकान्तविशुद्धताकी वृद्धिका काल अन्तर्मुहूर्तमात्र जानना ॥ २१७ ॥

एकान्तवृद्धिकालात्परं तस्यामवस्थाविशेषं प्ररूपयितुमिदमाह—

तेण परं हायदि वा वड्ढदि तव्वड्ढिदो विसुद्धीहिं।
उवसंतदंसणतियो होदि पमत्तापमत्तेसु[2] ॥ २१८ ॥

तेन परं हीयते वा वर्धते तद्वृद्धितो विशुद्धिभिः।
उपशान्तदर्शनत्रिकः भवति प्रमत्ताप्रमत्तयोः ॥ २१८ ॥

स० टी०—तस्मादेकान्तवृद्धिकालात्परं द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टिः संक्लेशपरिणामवशात् विशुद्ध्या हीयते वा संक्लेशहान्या विशुद्ध्या वर्धते वा अयं च व्यवस्थाया कियन्तमपि कालं हानिवृद्धिं विना अवस्थितो वा भवति। एवमुपशमितदर्शनमोहत्रयो जीवः संक्लेशविशुद्धिपरावृत्तिवशेन बहुवारं प्रमत्ताप्रमत्तगुणस्थानयोः परावर्तते ॥ २१८ ॥

---

१ पढमदाए सम्मत्तमुप्पादयमाणस्स जो गुणसंकमेण पूरणकालो तदो संखेज्जगुणं कालमिमो उवसंतदंसणमोहणीओ विसोहीए वड्ढदि। वही, पृ० २०८।

२ तेण परं हायदि वा वड्ढदि वा अवट्ठायदि वा। तदो चेव वा ताव उवसंतदंसणमोहणिज्जो असाद-अरदि-सोग-अजसगित्तिआदीसु बंधपरावत्तिसहस्साणि कादूण। वही, पृ० २०८।

द्वितीयस्थितेर्द्रव्यं प्रथमस्थितिमेति या लिका।
प्रत्यावलिका तिष्ठति सम्यक्त्वादिमस्थिति तावत् ॥ २१५ ॥

स० टी०—यावत्सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थिति आवलिप्रत्यावलिमात्रावशेषा भवति तावद्द्वितीयस्थिति-द्रव्यमपकर्षणवशेन प्रथमस्थितिमागच्छति तावत्पर्यन्तं दर्शनमोहस्य गुणश्रेणि प्रवर्तते। सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथम-स्थितौद्व्यावलिमात्रावशिष्टाया तस्य गुणश्रेणिर्नास्तीत्यर्थ। ज्ञानावरणादिशेषकर्मणा चारित्रपरिणामनिबन्धना गुणश्रेणी प्रवर्तत इति ग्राह्यम्। प्रथमस्थिते समयाधिकावल्यवशेषपर्यन्त सम्यक्त्वप्रकृतेरुदीरणा वर्तते। तत सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थितेश्चरसमयेऽनिवृत्तिकरणकाल समाप्तो भवति। तदनन्तरमन्तरप्रथमसमये द्वितीयो-पशमसम्यग्दृष्टि भवति जीव ॥ २१५ ॥

दर्शनमोहनीयसम्बन्धी गुणश्रेणिकी पर्यवसानविधि—

स० च०—सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थितिविषैं उदय आवली अर प्रति आवली ए दोय आवली अवशेष रहै तहा पर्यन्त द्वितीय स्थितिका द्रव्यकौ अपकर्षणका वशतै प्रथम स्थितिविषै निक्षेपण करिए है। तहा ही पर्यन्त दर्शनमोहकी गुणश्रेणि प्रवर्तै है। सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थितिविषैं दोय आवली अवशेष रहै दर्शनमोहकी गुणश्रेणि नाही हो है, अन्य कर्मनिकी सकल-चारित्रसम्बन्धी गुणश्रेणि तहा भी प्रवर्तै है। बहुरि सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थितिविषै एक समय अधिक आवली अवशेष रहै तहाँ पर्यन्त सम्यक्त्वमोहनीकी उदीरणा प्रवर्तै है। ऊपरिके निषेकनिका द्रव्यकौ उदयावलीविषै दीजिए है। बहुरि तिस प्रथम स्थितिका अन्तसमयविषैं अनि-वृत्तिकरणकाल समाप्त हो है ॥ २१५ ॥

अथ दर्शनमोहद्रव्यस्य सक्रमप्रतिपादनार्थमाह—

सम्मादिठिदिज्झीणे मिच्छदव्वादु सम्मसमिस्से।
गुणसकमो ण णियमा विज्झादो सकमो होदि[1] ॥ २१६ ॥

सम्यगादिस्थितिक्षीणे मिथ्यद्रव्यात् सम्यसमिश्रे।
गुणसक्रमो न नियमात् विध्यात सक्रमो भवति ॥ २१६ ॥

स० टी०—सम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थितौ निरवशेष गलिताया सजातद्वितीयोपशमसम्यक्त्वस्य जीवस्य मिथ्यात्वद्रव्यात् गुणसक्रमेण विना सूच्यगुलासख्यातभागमात्रविध्यातसक्रमेण भक्तैकभागमात्र द्रव्य गृहीत्वा सम्यक्त्वसम्यग्मिथ्यात्वप्रकृत्यो प्रतिसमय विशेषहीनक्रमेण निक्षिपति ॥ २१६ ॥

त्ति। तत्तो परमागाल-पडिआगालवोच्छेदो। तत्तो पाए सम्मत्तस्स गुणसेढिविण्णासो णत्थि। पडिआवलियादो चेव उदीरणा। आवलियाए समयाहियाए सेसाए सम्मत्तस्स जहण्णिया ट्ठिदिउदीरणा। तदा पढमट्ठिदीए चरिमसमये अणियट्टिकरणद्धा समत्ता। से काले पढमसम्मत्तमुप्पाइय सम्मइट्ठी जायदे।

जयध० पु० १३, पृ० २०६।

१ सम्मत्तस्स पढमट्ठिदीए झीणाए ज त मिच्छत्तस्स पदेसग्ग सम्मत्तसम्मामिच्छत्तेसु गुणसकमेण सकमदि जहा पढमदाए समत्तमुप्पाएतस्स तहा एत्थ णत्थि गुणसकमो, इमस्स विज्झादसकमो चेव।

कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० २०७।

प्रकृतमे सक्रमसम्बन्धी ऊहापोह—

स० च०—सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थितिका क्षय होतै ताके अनन्तरि अन्तरायामका प्रथम समय प्राप्त होइ तीहिंविषैं द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टी हो है। तहां गुणसक्रमण तो नियमतै इहा है नाही तातैं मिथ्यात्वके द्रव्यको सूच्यगुलका असख्यातवां भागमात्र जो विध्यात सक्रमण भागहार ताका भाग देइ तहा एक भागमात्र मिथ्यात्वके द्रव्यको मिश्रसम्यक्त्वमोहनीविषै निक्षेपण करै है। वहुरि तातैं द्वितीयादि समयनिविषैं विशेष घटता क्रम लीए निक्षेपण करै है ॥ २१६ ॥

अथ द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टिविशुद्धेरेकान्तवृद्धिकालप्रमाण दर्शयितुमिदमाह—

सम्मत्तुप्पत्तीए गुणसकमपूरणस्स कालादो।
सखेज्जगुण काल विसोहिवड्ढीहिं वड्ढदि हु ॥ २१७ ॥

सम्यक्त्वोत्पत्तौ गुणसक्रमपूरणस्य कालात्।
सख्येयगुण कालं विशुद्धिवृद्धिभि वर्धते हि ॥ २१७ ॥

स० टी०—प्रथमोपशमसम्यक्त्वोत्पत्तौ गुणसक्रमपूरणकालो यावदन्तर्मुहूर्तमात्र पूर्व प्ररूपित तत्सख्येयभागगुण कालमय द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टि प्रतिसमयमनन्तगुणितक्रमेण विशुद्धया वर्धते। अय च विशुद्धयेकान्तवृद्धिकालोऽन्तर्मुहूर्तमात्र एव ॥ २१७ ॥

अन्तर्मुहूर्तक निरन्तर विशुद्धिकी वृद्धिका निर्देश—

स० च०—प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी उत्पत्तिविषैं पूर्वै गुणसक्रम पूरणकाल अन्तर्मुहूर्तमात्र कह्या था तातैं सख्यातगुणा काल पर्यन्त यहु द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टी प्रथम समयतै लगाय समय समय प्रति अनन्तगुणी विशुद्धताकरि वधै है। ऐसैं इहा एकान्तविशुद्धताकी वृद्धिका काल अन्तर्मुहूर्तमात्र जानना ॥ २१७ ॥

एकान्तवृद्धिकालात्पर तस्यामवस्थाविशेष प्ररूपयितुमिदमाह—

तेण पर हायदि वा वड्ढदि तव्वड्ढिदो विसुद्धीहिं।
उवसतदंसणतियो होदि पमत्तापमत्तेसु[2] ॥ २१८ ॥

तेन पर हीयते वा वर्धते तद्वृद्धितो विशुद्धिभि।
उपशान्तदर्शनत्रिक भवति प्रमत्ताप्रमत्तयो ॥ २१८ ॥

स० टी०—तस्मादेकान्तवृद्धिकालात्पर द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टि सक्लेशपरिणामवशात् विशुद्धया हीयते वा सक्लेशहान्या विशुद्धया वर्धते वा अय च व्यवस्थाया कियन्तमपि काल हानिवृद्धि विना अवस्थितो वा भवति। एवमुपशमितदर्शनमोहत्रयो जीव सक्लेशविशुद्धिपरावृत्तिवशेन बहुवार प्रमत्ताप्रमत्तगुणस्थानयो परावर्तते ॥ २१८ ॥

---

१ पढमदाए सम्मत्तमुप्पादयमाणस्स जो गुणसकमेण पूरणकालो तदो सखेज्जगुण कालमिमो उवसतदसणमोहणीओ विसोहीए वड्ढदि। वही, पृ० २०८।

२ तेण पर हायदि वा वड्ढदि वा अवट्ठायदि वा। तदो चेव वा ताव उवसतदसणमोहणिज्जो असाद-अरदि-सोग-अजसगित्तिआदीसु वधपरावत्तिसहस्साणि कादूण। वही, पृ० २०८।

तदनन्तर विशुद्धिमे हानि-वृद्धिका निर्देश--

स० च०—तिस एकान्त वृद्धिकालतै पीछै विशुद्धताकरि घटै वा बधै वा हानि वृद्धि विना जैसाका तैसा रहै किछू नियम नाही। ऐसैं उपशमाए है तीन दर्शनमोह जानै ऐसा जीव बहुत बार प्रमत्त अप्रमत्तनिविषै उलटनिकरि प्राप्त हो है ॥ २१८ ॥

अथ द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टेरुपशमश्रेण्यारोहणावसर प्रदर्शयितुमिदमाह—

एव पमत्तमियरपरावत्तिसहस्सय तु कादूण।
इगवीसमोहणीय उवसमदि ण अण्णपयडीसु[1] ॥ २१९ ॥

एव प्रमत्तमितरं परावृत्तिसहस्रक तु कृत्वा।
एकविंशमोहनीयं उपशमयति न अन्यप्रकृतीषु ॥ २१९ ॥

स० टी०—एव पूर्वोक्तप्रकारेणाय द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टिर्वा क्षायिकसम्यग्दृष्टिर्वा प्रमत्ताप्रमत्तपरावृत्तिसहस्राणि कृत्वा द्वादशकषायनवनोकषायभेदभिन्नमेकविंशतिप्रकृतिक चारित्रमोहनीयमेवोपशमयितुमुपक्रमते नान्यकर्मप्रकृतीस्तासामुपशमकरणाभावात् ॥ २१९ ॥

तदनन्तर उपशमश्रेणिमे होनेवाले मुख्य कार्यका निर्देश—

स० च०—ऐसै अप्रमत्ततै प्रमत्तविषै प्रमत्ततै अप्रमत्तविषै हजारो बार पलटनिकरि अनन्तानुबन्धीचतुष्क विना अवशेष इकईस चारित्रमोहकी प्रकृतिके उपशमावनेका उद्यम करै है। अन्य प्रकृतिनिका उपशम होता नाही जातै तिनकै उपशम करना ही है ॥ २१९ ॥

विशेष—उक्त विधिसे यह जीव द्वितीयोपशमसम्यक्त्वको प्राप्त कर विशुद्धि और सक्लेशवश हजारो बार प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानोमे परावर्तन कर और क्रमश सातिशय अप्रमत्तसयत होकर उपशमश्रेणि पर आरोहण कर चारित्रमोहनीयकी अप्रत्याख्यातावरण चतुष्क आदि २१ प्रकृतियोका उपशमन करता है। यहाँ अन्य प्रकृतियोका उपशमन नही होता, क्योकि मोहनीयकर्मके अतिरिक्त अन्य कर्मोको तीन करणपूर्वक उपशमविधिका निषेध है। उसमे यह जीव सर्वप्रथम अध करणको प्राप्त करता है। इसके अन्तमे कार्यविशेष आदिको सूचित करनेवाली चार गाथाओमे निर्दिष्ट सभी बातोका खुलासा जयधवला पृ० २१४-२२२ मे किया ही है सो उसे वहाँसे जान लेना चाहिये। यहाँ मुख्यतया उपशमश्रेणिमे होनेवाले उपयोग और वेदके विषयके विषयमे विचार करना है। जयधवलामे उपयोगके प्रसगसे दो उपदेशोका निर्देश किया है। प्रथम उपदेशके अनुसार श्रुतज्ञानोपयोगी जीव उपशमश्रेणिपर चढता है—यह बतलाया है तथा दूसरे उपदेशके अनुसार श्रुतज्ञान मतिज्ञान तथा चक्षु-अचक्षुदर्शनोपयोगवाला जीव उपशमश्रेणि पर चढता है। किन्तु यह विवक्षाभेदसे कहा गया है। जैसे आगममे सामायिक और छेदोपस्थापना सयमको मिला कर कथन किया जाता है वैसे ही इन दोनो ज्ञानोके विषयमे भी जानना चाहिये। इतना ही नही, आगममे श्रुतज्ञानपूर्वक श्रुतज्ञानके होने पर पिछले श्रुतज्ञानको उपचारसे मतिज्ञान भी स्वीकार किया गया है। इसलिये जिन आचार्योने श्रुतज्ञानके अतिरिक्त मतिज्ञान तथा चक्षु-अचक्षु दर्शनोपयोगसे उपशम श्रेणिपर आरोहण करना स्वीकार किया है, सम्भवत उन्होने इसी तथ्यको ध्यानमे रखकर उक्त निर्देश किया होगा। इस सम्बन्धमे पहले हम जयधवलाके

१ तदो कसाए उवसामेंतु कच्चे अधापवत्तकरणस्स परिणाम परिणमइ। वही पृ० २१०।

इसी प्रकरणमे लिख आये है, इसलिये वहाँसे जान लेना। अब रही वेदकी बात सो वस्तुतः वेद तो भावनिक्षेपका विषयभूत भाववेद एक ही प्रकारका है। और इसीलिये मूल सिद्धान्त ग्रन्थोमे एक मात्र यही वेद स्वीकार किया गया है। लौकिक परिपाटीको ध्यानमे रख कर नाम साम्यकी दृष्टिसे उत्तर कालमे ही वेदके भाववेद और द्रव्यवेद ऐसे दो भेद स्वीकार कर लिये गये हैं।

एवं कृतपरिकरस्याप्रमत्तसंयतस्योपशमश्रेण्यारोहणे क्रियाविशेषविषयानधिकारानुद्देष्टुमिदमाह—

तिकरणबंधोसरणं कमकरणं देसघादिकरणं च।
अंतरकरणं उवसमकरणं उवसामणे होंति ॥ २२० ॥

त्रिकरणं बंधापसरणं क्रमकरणं देशघातिकरणं च।
अन्तरकरणमुपशमकरणं उपशामने भवन्ति ॥ २२० ॥

सं० टी०—चारित्रमोहोपशमने कर्तव्ये अधःप्रवृत्तकरणमपूर्वकरणमनिवृत्तिकरणं स्थितिबन्धापसरणं क्रमकरणं देशघातिकरणमन्तरकरणमुपशमकरणं चेत्यष्टाधिकारा भवन्ति। तेष्वधःप्रवृत्तकरणं सातिशयाप्रमत्तसंयतः कुरुते तत्करणस्य लक्षणं तत्र क्रियमाणकार्याणि च यथा प्रथमोपशमसम्यक्त्वाभिमुखसातिशयमिथ्यादृष्टेर्भणितानि तथैवात्रापि भणितव्यानि। अथ तु विशेषः—संयमयोग्यप्रकृतिबन्धोदयौ, अनन्तानुबन्धिचतुष्कनरकतिर्यगायुर्वर्जितसर्वप्रकृतिसत्त्वं चावसरे वक्तव्यम् ॥ २२०॥

उपशमश्रेणिमे होनेवाले सभी कार्योका निर्देश—

सं० चं०—अधःकरण १ अपूर्वकरण २ अनिवृत्तिकरण ३ ए तीन करण अर स्थितिबन्धापसरण ४ क्रमकरण ५ देशघातिकरण ६ अन्तरकरण ७ उपशमकरण ८ ऐसै आठ अधिकार चारित्रमोहके उपशम विधानविषै पाइए है। तहां अधःकरणकौं सातिशय अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती मुनि करै है। ताका लक्षण वा ताका कीया कार्य जैसे प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं सन्मुख होतै कहे हैं तैसै इहां भी जानना। विशेष इतना—इहाँ संयमीकै सम्भवै ऐसी प्रकृतिनिका बन्ध-उदय कहना। अर अनन्तानुबन्धीचतुष्क नरक तिर्यंच आयु विना अन्य प्रकृतिनिका सत्त्व कहना ॥ २२० ॥

अथापूर्वकरणकार्यविशेषप्रतिपादनार्थमिदं गाथाद्वयमाह—

विदियकरणादिसमये उवसंततिदंसणे जहण्णेण।
पल्लस्स संखभागं उक्कस्सं सायरपुधत्तं[1] ॥ २२१ ॥

द्वितीयकरणादिसमये उपशान्तत्रिदर्शने जघन्येन।
पल्यस्य संख्यभागं उत्कृष्टं सागरपृथक्त्वम् ॥ २२१ ॥

सं० टी०—अपूर्वकरणस्य प्रथमसमये वर्तमानस्य द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टेर्जघन्यं स्थितिकाण्डकं पल्यसंख्यातभागमात्रं, उत्कृष्टं सागरोपमपृथक्त्वप्रमाणम् ॥ २२१ ॥

---

१ एदेण उवसंतदंसणमोहणीयस्स कसायउवसामगस्स अपुव्वकरणपढमसमए ट्ठिदिखंडयपमाणं जहण्णेण पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो, उक्कस्सेण सागरोवमपुधत्तमेत्तमिदि अणुत्तं पि अवगम्मदे।

जयध० पु० १३, पृ० २२३।

अपूर्वकरणमे स्थितिकाण्डकका प्रमाण निर्देश—

स० च०—दूसरा अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टीकै जघन्य स्थितिकाण्डक आयाम पल्यका सख्यातवाँ भागमात्र है। उत्कृष्ट पृथक्त्व सागरप्रमाण है ॥ २२१ ॥

ठिदिखडय तु खइये वरावर पल्लसंखभागो दु ।
ठिदिबधोसरण पुण वरावरं तत्तियं होदि[1] ॥ २२२ ॥

स्थितिखडक तु क्षायिके वरावर पल्यसंख्यभागस्तु ।
स्थितिबंधापसरणं पुन· वरावरं तावत्कं भवति ॥ २२२ ॥

स० टी०—तस्मिन्नेवापूर्वकरणप्रथमसमये वर्तमानस्य चारित्रमोहोपशमकस्य क्षायिकसम्यग्दृष्टेर्जघन्य-मुत्कृष्ट च स्थितिकाण्डक पल्यसख्यातभागमात्रमेव तथापि जघन्यादुत्कृष्ट सख्यातगुणित दर्शनमोहक्षपणकाले विशुद्धिविशेषेण कर्मस्थितेर्बहुश खण्डितत्वात्, स्थित्यनुसारेण च काण्डकाल्पबहुत्वस्य न्याय्यत्वात्। स्थिति-बन्धापसरण पुनरुपशमसम्यग्दृष्टे क्षायिकसम्यग्दृष्टेश्च पल्यसख्यातभागमात्रमेव। तत्रापि जघन्यादुत्कृष्ट सख्यातगुणितमपि पल्यसख्यातभागमात्रमेव ॥ २२२ ॥

क्षायिकसम्यग्दृष्टिकी अपेक्षा स्थितिकाण्डकका प्रमाण निर्देश—

स० च०—तहा ही अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै क्षायिक सम्यग्दृष्टिकैं जघन्य वा उत्कृष्ट स्थिति काडक आयाम पल्यके सख्यातवे भागमात्र है। जातैं दर्शनमोहकी क्षपणाका कालविषै बहुत स्थिति घटाई है। अर स्थितिके अनुसारि काडक हो है तथापि जघन्य तै उत्कृष्ट सख्यातगुणा है। बहुरि उपशम वा क्षायिक सम्यग्दृष्टीकै स्थितिबधापसरण पल्यका सख्यातवा भागमात्र है तथापि जघन्यतै उत्कृष्ट सख्यातगुणा है ॥ २२२ ॥

अथानुभागकाण्डकादिनिर्देशार्थमिदमाह—

असुहाण रसखडमणतभागा ण खडमियराण ।
अंतोकोडाकोडी सत्तं वंधं च तट्ठाणे[2] ॥ २२३ ॥

अशुभानां रसखंडमनंतभागा न खंडमितरेषाम् ।
अन्त कोटीकोटि सत्त्वं बन्धश्च तत्स्थाने ॥ २२३ ॥

स० टी०—अशुभाना प्रकृतीनामनुभागस्यानन्तबहुभागमात्रमनुभागकाण्डकमपूर्वकरणप्रथमसमये प्रारभ्यते न पुन शुभाना प्रकृतीना, विशुद्धचा शुभप्रकृत्यनुभागस्य खण्डनायोगात्। तत्र प्रथमादिनिषेकाणामनु-भागविभाग किंचित्प्रदर्श्यते। तद्यथा—

आयुर्वजितसप्तकर्मणा मध्ये विवक्षितैककर्मण सत्त्वद्रव्यमिद स ∃ । १२ — अस्मिन्नानागुणहानिगत-
७

---

१ जो खीणदसणमोहणिज्जो कसायउवसामगो तस्स खीणदसणमोहणिज्जस्स कसायउवसामणाए अपुव्वकरणे पढमट्ठिदिखडय णियमा पलिदोवणमस्स सखेज्जदिभागो।

कसाय० चू०, जयध० पु० १३, पृ० २२२।

२ असुभाण कम्मणमणता भागा अणुभागखडय। ट्ठिदिसतकम्ममतोकोडाकोडीए ट्ठिदिबधो वि अतोकोडाकोडीए। वही, पु० २२४।

सर्वनिषेकेषु विभज्य दीयमाने 'साहियदिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यायात प्रथमनिषेकद्रव्यमिद स ∂ । १२ — । अस्मिन्ननुभागविषयानन्तनानागुणहानिगतवर्गणासु विभज्य दीयमाने 'साहियदिवड्ढगुण-

।

७ । १२

हाणिभाजिदे पढमा' इत्यनन्तात्मकसाधिकद्वचर्धगुणहान्या भक्ते आयात प्रथमवर्गणाद्रव्यमिद स ∂ । १२— ।

। ।

७ । १२ । ख ३

२

इतो द्वितीयादिवर्गणासु द्रव्य विशेषहीनक्रमेण दीयते । एव द्वितीयादिगुणहानिष्वर्धार्धक्रमेण प्रथमादिवर्गणाद्रव्यमवतिष्ठते । तत्र चरमगुणहानिचरमस्पर्धकचरमवर्गणाद्रव्यमानीयते । तद्यथा—

प्रथमगुणहानिप्रथमवर्गणाद्रव्ये अन्योन्याभ्यस्तराश्यर्धेन भक्ते चरमगुणहानिप्रथमवर्गणाद्रव्यमागच्छति रूपोननानागुणहानिमात्रद्विकाना भागहारत्वेनान्योन्याभ्यस्तराश्यर्धोत्पत्ते स ∂ । १२ – । अस्मिन् रूपोनगुण-

। ।

७ । १२ । ख । ३ अ

१— २ २

हानिमात्रचयेष्वपनीतेषु चरमगुणहानिचरमवर्गणाद्रव्यमायाति स ∂ । १२ – गु । एव द्वितीयादिनिषेकद्रव्येष्व-

। ।

७ । १२ ख ३ अ गु २

२ २

प्यनुभागविभागेन तिर्यग्रचनाया प्रथमगुणहानिप्रथमवर्गणाप्रभृतिचरमगुणहानिचरमवर्गणापर्यन्त वर्गणाद्रव्य-

१—

मानेतव्यम् । कर्मस्थितिचरमगुणहानिचरमनिषेकद्रव्यमिद स ∂ १२ – गु । अस्मिन्ननुभागसम्बन्ध्यनन्तनाना-

।

७ । १२ । प गु २

व २

गुणहानिवर्गणासु विभज्य दीयमाने 'साहियदिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यनुभागस्यानन्तात्मकद्वचर्ध-गुणहान्या भक्ते अनुभागस्य प्रथमगुणहानिप्रथमवर्गणाद्रव्यमागच्छति स ∂ । १२ – । एव द्वितीयादि-

। ।

७ । १२ । ख । ३ प

२ व

गुणहानिष्वनुभागसम्बन्धिनीषु तिर्यग्रचितासु वर्गणाद्रव्यमर्धार्धक्रमेणागच्छति । अनुभागस्य प्रथमगुणहानि-प्रथमवर्गणाद्रव्ये अनन्तात्मकान्योन्याभ्यस्तराश्यर्धेन भक्ते अनुभागस्य चरमगुणहानिप्रथमवर्गणाद्रव्यमागच्छति पूर्ववत् स ∂ । १२ — अस्मिन् रूपोनगुणहानिमात्रचयेष्वपनीतेषु अनुभागस्य चरमगुणहानिचरम-

। ।

७ । १२ प । ख । ३ अ

व २ २

१–
वर्गणाद्रव्य भवति स ∂ । १२ – गु । इत्थ सर्वनिषेकसत्त्वानुभागावस्थितिर्ज्ञातव्या । अत्र
। ।
७ । १२ प ख ३ अ गु २
व २ २

१ᴖ
तात्कालिकानुभागसत्त्व ९ ना अनन्तेन खण्डयित्वा तद्बहुभागमात्रकाण्डक ९ ना ख । पुनस्तदेकभागमनन्तेन
ख

१ᴖ
खण्डयित्वा एकभागमात्रप्रतिस्थाप्य ९ ना बहुभागमात्रानुभागे ९ ना ख पूर्वखण्डितानुभागकर्मपरमाणुद्रव्य निक्षि-
ख ख ख ख
पति, अवशिष्टानुभागरूपेण तद्द्रव्य परिणमयतीत्यर्थ । अपूर्वकरणप्रथमसमये आयुर्वर्जितकर्मणा स्थितिसत्त्व स्थितिवन्धश्च अन्त कोटीकोटिसागरोपमप्रमित एव सा अ को २ । स्थितिबन्धात् स्थितिसत्त्व सख्यातगुण
४
सा अ को २ अयमेव विशेष ॥ २२३ ॥

अनुभागकाण्डक आदिके प्रमाणका निर्देश—

स० च०—अशुभ प्रकृतिनिका जो पूर्वे अनुभाग था ताकौ अनतका भाग दीए तहा एक अनुभाग काडकविषै बहुभागमात्र अनुभागका खडन हो है, एक भागमात्र अवशेष रहै है। विशुद्धताकरि शुभ प्रकृतिनिका अनुभाग खडन न हो है ऐसा जानना। इहा प्रथमादि निषेकनिका अनुभाग दिखाइए है—

तहा द्रव्य स्थिति गुणहानि नाना गुणहानि दोगुणहानि अन्योन्याभ्यस्तका प्रमाण पहले जानना। सो इनिका कर्मनिकी स्थिति अपेक्षा तौ गोम्मटसारका योगमार्गणा अधिकारविषै वा कर्मस्थिति रचना अधिकारविषै वर्णन कीया है सो जानना। अर अनुभाग अपेक्षा तिन सब द्रव्यादिकनिका प्रत्येक प्रमाण यथायोग्य अनत है। सो आयु विना सात कर्मनिविषै विवक्षित कर्मके परमाणूका प्रमाणरूप जो द्रव्य ताकौ स्थिति सबधी साधिक ड्योढ गुणहानिका भाग दीए प्रथम गुणहानिका प्रथम निषेकका प्रमाण आवै है। याकौ अनुभागसबधी साधिक ड्योढ गुणहानिका भाग दीए प्रथम निषेकनिविषै प्रथम गुणहानिका जो प्रथम स्पर्धक ताकी प्रथम वर्गणाके परमाणूनिका प्रमाण आवै है। सबतै थोरे जिस परमाणूविषै अनुभागके अविभाग प्रतिच्छेद पाइए ताका नाम जघन्य वर्ग है सो ऐसे जेती परमाणू होइ तिनके समूहका नाम वर्गणा है। बहुरि यातै द्वितीयादि वर्गणानिविषै एक एक चय घटता क्रमकरि परमाणूनिका प्रमाण है। बहुरि द्वितीयादि गुणहानिनिविषै पूर्व गुणहानि सम्बन्धी वर्गणातै आधा आधा क्रम लीए वर्गणाद्रव्यका प्रमाण है। ऐसै प्रथम गुणहानिका प्रथम वर्गणा द्रव्यकौं अनुभाग सम्बन्धी अन्योन्याभ्यस्त राशितै आधा प्रमाणका भाग दीए अन्त गुणहानिकी प्रथम वर्गणाका द्रव्य हो है। यामै क्रमतै एक एक चय घटनेतै एक घाटि गुणहानिमात्र चय घटै अन्त गुणहानिकी अन्त वर्गणाका द्रव्य हो है। इहा ऐसा जानना—

प्रथम गुणहानिकी प्रथम वर्गणातै लगाय यावत् वर्गनिविषै एक एक अविभाग प्रतिच्छेद

बधनेका क्रम होइ तहा पर्यन्त तिनि वर्गणानिके समूहका नाम प्रथम स्पर्धक है। तातै ऊपरि प्रथम स्पर्धककी वर्गणाके वर्गनितै द्वितीय तृतीय चतुर्थादिक स्पर्धककी प्रथम वर्गणानिका वर्गनिविषैं क्रमतै दूणे तिगुणे चौगुणे अविभाग प्रतिच्छेद होइ। उपरि द्वितीयादि वर्ग एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद बँधता क्रम लीए जानने। ऐसा अनुक्रम अन्त गुणहानिका अन्त स्पर्धककी अन्त वर्गणा पर्यन्त जानना। ऐसै प्रथम निषेकविषै विभाग दीया। बहुरि स्थितिके द्वितीयादि निषेक क्रमतै चय घटता क्रम लीए हैं। गुणहानि गुणहानि प्रति आधा-आधा क्रम लीए हैं तिन सबनिविषै ऐसा ही अनुभाग अपेक्षा क्रम जानना। इहाँ स्थितिकी अन्त गुणहानिका अन्त निषेकविषै जो द्रव्यका प्रमाण तहाँ भी पूर्वोक्त प्रकार प्रथम गुणहानिका प्रथम वर्गणा द्रव्यका प्रमाण ल्यावना। बहुरि क्रमतैं पूर्वोक्त प्रकार अन्त गुणहानिकी अन्त वर्गणाका द्रव्य ल्यावना। ऐसैं जो अनुभाग पाइए है ताकौ अनन्तका भाग दीए तहाँ बहुभागमात्र अनुभागकाण्डक है। अवशेष जो एक भागमात्र रह्या ताकौ अनन्तका भाग देइ तहाँ एक भागकौ अतिस्थापनरूप राखि अवशेष बहुभागरूप जिनि परमाणूनिका अनुभाग खण्डन किया था तिन परमाणूनिकौ परिणमावै है। इहाँ ऐसा जानना—

अनुभागके स्पर्धक कहे थे तिनकौ अनन्तका भाग दीए तहाँ बहुभागमात्र स्पर्धकनिके परमाणू है। तिनकौ अवशेष रहे एकभागमात्र स्पर्धक तिनिका अनन्तवाँ भागमात्र स्पर्धकनिके ऊपरिके छोडि नीचेके जे बहुभागमात्र स्पर्धक तिनिविषै निक्षेपण करै है। ऐसी क्रिया एक अनुभागकाण्डकका कालविषै हो है। बहुरि तिसही अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै स्थितिबन्ध अर स्थितिसत्त्व अन्त कोटाकोटी सागरप्रमाण है। तहाँ विशेष इतना स्थितिबन्धतै स्थितिसत्त्व सख्यातगुणा है ॥ २२३ ॥

अथापूर्वकरणप्रथमसमये गुणश्रेणिनिर्जरार्थनिरूपणार्थमिदमाह—

उदयावलिस्स बाहिं गलिदवसेसा अपुव्वअणियट्टी।
सुहुमद्धादो अहिया गुणसेढी होदि तट्ठाणे ॥ २२४ ॥[1]

उदयावलेर्बाह्यं गलितावशेषा अपूर्वानिवृत्ते।
सूक्ष्माद्धातो अधिका गुणश्रेणी भवति तत्स्थाने ॥ २२४ ॥

स० टी०—उदयावलिबाह्यप्रथमसमयादारभ्य अपूर्वानिवृत्तिकरणसूक्ष्मसाम्परायगुणस्थानकालेभ्य उपशान्तकषायकालसख्यातैकभागमात्रेणाभ्यधिकायामा गुणश्रेण्यपूर्वकरणप्रथमसमये गलितावशेषप्रमाणा प्रारब्धा। सा च आयुर्वर्जितसप्तकर्मणामुदयावलिबाह्यद्रव्यमपकृष्य प्रागुक्तविधानेन निक्षेपस्वरूपा। नपुंसकवेदादिप्रकृतीना गुणसक्रमोऽप्यत्रैव प्रारब्ध। बन्धवरप्रकृतीना गुणसक्रमो नास्ति। एव द्वितीयादिसमयेष्वपि स्थितिकाण्डकादिविधान पूर्वोक्तक्रमेणैव ज्ञातव्य ॥ २२४ ॥

गुणश्रेणिके विषयमे स्पष्टीकरण—

स० च०—तिस अपूर्वकरण प्रथम समयविषै उदयावलीतै बाह्यगलितावशेष गुणश्रेणिका आरम्भ भया। तिस गुणश्रेणि आयामका प्रमाण अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसाम्पराय इनके

१ गुणसेढी च अतोमुहुत्तमेत्ता णिक्खित्ता। वही पृ० २२४।

मिलाये कालतैं उपशान्तकषायके कालका सख्यातवाँ भागमात्र अधिक जानना। तहाँ आयु विना सातकर्मनिके उदयावलीतै बाह्य निषेकनिका द्रव्यकौ अपकर्षण करि पूर्वोक्त प्रकार उदयावलीविषै अर तातै ऊपरि गुणश्रेणि आयामविषै अर तातै उपरितन स्थितिविषै दीजिए है। बहुरि नपुसक वेदादिकका गुणसक्रम लीए भी इहाँ ही प्रारम्भ भया। जिनिका बन्ध पाइए है तिनिका गुण-सक्रम है नाही। बहुरि ऐसै ही अपूर्वकरणके द्वितीयादि समयनिविषै भी स्थितिकाण्डकादि विधान जानना ॥ २२४ ॥

विशेष—उपशमश्रेणिपर आरोहण करनेवाला जीव अपूर्वकरणके प्रथमसमयमे उपरिम शेष स्थितियोके प्रदेश पुजका अपकर्षण कर उदयावलिके बाहर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण गुणश्रेणिरचना करता है, जो अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसाम्परायके कालसे कुछ अधिक है। जय-धवलामे इस आयामको अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे कुछ अधिक बतलाया है सो जानकर समझ लेना चाहिए। यहाँपर नही बँधनेवाली अप्रशस्त नपुसकवेद आदि प्रकृतियोके गुणसक्रमको भी प्रारम्भ करता है। इसी प्रकार अपूर्वकरणके दूसरे समयमे भी जानना चाहिए। तब प्रथम समयमे प्रारम्भ हुआ वही स्थितिकाण्डक, वही स्थितिबन्ध और वही अनुभागकाण्डक भी होता है। इतना विशेष है कि यहाँ स्थित गुणश्रेणि गलितावशेष होती है। इस प्रकार हजारो अनुभागकाण्डकघातोके समाप्त होनेपर यहीपर उनके साथ प्रथम स्थितिकाण्डक, स्थितिबन्धकाल और अन्य अनुभागकाण्डक समाप्त होता है।

अथापूर्वकरणे बन्धोदयव्युच्छित्तिविभागप्रदर्शनार्थमिदमाह—

पढमे छट्ठे चरिमे बधे दुग तीस चदुर वोच्छिण्णा।
छण्णोकसायउदयो अपुव्वचरिमम्हि वोच्छिण्णा[1] ॥ २२५ ॥

प्रथमे षट्के चरमे बधे द्विक त्रिशत् गो व्युच्छिन्ना।
षण्णोकषायोदया अपूर्वचरमे व्युच्छिना ॥ २२५ ॥

स० टी०—अपूर्वकरणकालस्य सप्तभागेषु प्रथमभागे द्वयोर्निद्राप्रचलयोर्बन्धो व्युच्छिन्न। षष्ठे भागे तीर्थकरत्वादीना त्रिशत्प्रकृतीना बन्धो व्युच्छिन्न। सप्तमभागचरमसमये हास्यादिचतु प्रकृतीना बन्धो व्युच्छिन्न। हास्यादिषण्णोकषायाणामुदय अपूर्वकरणचरमसमये व्युच्छिन्न ॥ २२५ ॥

अपूर्वकरणमे बन्धव्युच्छित्तिको प्राप्त हुई प्रकृतियोकी सख्याका निर्देश—

स० च०—अपूर्वकरणके कालका सात भाग तहाँ प्रथम भागविषै निद्रा प्रचला दोय अर छठा भागविषै तीर्थंकर आदि तीस अर सातवाँ भागविषै हास्यादि च्यारि ऐसै छत्तीस प्रकृति

---

१ तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तगदे णिद्दा-पयलाण बधवोच्छेदो। तदो अतोमुहुत्ते गदे परभवियणामा-गोदाण बधवोच्छेदो। तदो अतोमुहुत्ते गदे परभवियणामागोदाण बधनोच्छेदो। अपुव्वकरणपविट्ठस्स जम्हि णिद्दापयलाओ वोच्छिण्णाओ सो कालो थोवो। परभवियणामाण वोच्छिण्णकालो सखेज्जगुणो। अपुव्वकरणद्धा विसेसाहिया। तदो अपुवकरणद्धाए चरिमसमए ट्ठिदिखडयमणुभागखडय ट्ठिदिबधो च समग णिट्ठिदाणि। एदम्हि चेव समए हस्स-रइ-भय-दुगुछाण बधवोच्छेदो। हस्स-रइ-अरइ-सोग-भय-दुगुच्छाण एदेसिं छण्ह कम्माणमुदयवोच्छेदो च। वही पृ० २२५–२२८।

बन्धतै व्युच्छित्ति भई । बहुरि अपूर्वकरणका अन्त समयविषै छह हास्यादि नोकपाय उदयतै व्युच्छित्ति भई ॥ २२५ ॥

विशेष—जब अपूर्वकरणमे हजारो स्थितिकाण्डकघात हो जाते है तव इस जीवके सर्वप्रथम निद्रा-प्रचलाकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। अपूर्वकरण गुणस्थानमे प्रविष्ट हुए सयत जीवके जिस कालमे निद्रा और प्रचलाकी बन्धव्युच्छित्ति होती है वह काल सबसे थोडा है, जो अपूर्वकरणके कालके सातवें भागप्रमाण है। उससे अन्तर्मुहुर्तकाल जानेपर परभवसम्बन्धी गोत्र सज्ञावाली नामकी प्रकृतियोकी वन्धव्युच्छित्ति होती है। यहाँ नामकर्मकी जिन प्रकृतियोकी वन्धव्युच्छित्ति होती है वे ये है—देवगति, पचेन्द्रियजाति, वैक्रियिक-आहारक-तैजस-कार्मणशरीर, समचतुरस्रसस्थान, वैक्रियिक-आहारकशरोर आगोपाग, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्तविहायोगति, त्रस, वादर, पर्याप्ति, प्रत्येकशरीर, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थंकर इस प्रकार अधिकसे अधिक इन तीस प्रकृत्तियोका और कमसे कम आहारकशरीर, आहारक आगोपाग और तीर्थंकरके विना २७ प्रकृतियोकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। तथा अकेले तीर्थंकरके विना २९ की और आहारकद्विकके विना २८ की वन्धव्युच्छित्ति होतो है, क्योकि इन तीन प्रकृतियोके वन्धका नियम नही है। यहाँ यह शका होती है कि नामकर्मको प्रकृतियोमे यश.कीर्ति भी सम्मिलित है, इसलिए चूर्णिसूत्रमे सामान्यसे नामकर्मकी प्रकृतियोकी बन्धव्युच्छित्तिका उल्लेख होनेसे यश-कीर्तिकी बन्धव्युच्छित्तिका भी प्रसग प्राप्त होता है? उसका समाधान यह है कि उसे छोडकर शेष प्रकृतियोकी यहाँ बन्धव्युच्छित्ति होती है। कारण कि उसकी वन्धव्युच्छित्ति सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयमे होती है। इन सब प्रकृतियोके बन्धव्युच्छित्तिके कालके अल्पबहुत्वका निर्देश करते हुए यहाँ बतलाया है कि अपूर्वकरण गुणस्थानमे प्रविष्ट हुए जीवके जिस स्थानमे निद्रा प्रचलाकी बन्धव्युच्छित्ति होती है वहाँतकका काल सबसे थोडा है जो अपूर्वकरणके पूरे कालके सख्यातवे भागप्रमाण है। उससे परभवसम्बन्धी नामकर्मकी प्रकृतियोकी बन्धव्युच्छित्तिका काल सख्यातगुणा है जो अपूर्वकरणके कालके छह-सात भागप्रमाण है। तदनन्तर अपूर्वकरणके अन्तिम समयमे हास्य, रति, भय और जुगुप्साकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। सर्वत्र स्थितिकाण्डकघात आदिका विधान सुगम है। यही पर छह नोकषायोकी उदयव्युच्छित्ति होती है।

अथानिवृत्तिकरणे क्रियमाणव्यापारान्तरप्ररूपणार्थमिदमाह—

अणियट्टिस्स य पढमे अण्णट्ठिदिखडपहुदिमारभइ ।
उवसामणा णिधत्ती णिकाचणा तत्थ वोच्छिण्णा ॥ २२६ ॥

अनिवृत्ते च प्रथमे अन्यस्थितिखडप्रभृतिमारभते ।
उपशमनं निधत्ति निकाचना तत्र व्युच्छिन्ना ॥ २२६ ॥

---

१ तदो से काले पठमसमयअणियट्टी जादो। पढमसमयअणियट्टिस्स ट्ठिदिखडय पलिदोवमस्स सखेज्जदिभागो। अपुव्वो ट्ठिदिबधो पलिदोवमस्स सखेज्जदिभागेण हीणो। अणुभागखडय सेसस्स अणता भागा। गुणसेढी असखेज्जगुणाए सेढीए सेसे णिक्खेवो। तिस्से चेव अणियट्टिअद्धाए पढमसमये अप्पसत्थ-उवसामणाकरण णिधत्तीकरण णिकाचणाकरण च वोच्छिण्णाणि। वही पृ० २२९–२३१।

स० टी०—अनिवृत्तिकरणप्रथमसमये अन्यान्येव स्थितिखण्डस्थितिबन्धापसरणानुभागखण्डान्यपूर्वकरणचरमसमयसम्भवविलक्षणानि प्रारभते। चारित्रमोहोपशमकस्तत्रैव सर्वकर्मणामुपशमनिधत्तिनिकाचनकरणानिविनष्टानि। अपुव्वकरणेत्ति दसकरणा इति व्युच्छित्तिनियमकथनादनिवृत्तिकरणप्रथमसमयादारम्य सर्वकर्माण्युदये सक्रमोदययोरुत्कर्पणापकर्षणसक्रमोदयेपु च निक्षेप्तु शक्यानि जातानीत्यर्थ ॥ २२६ ॥

अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमे होनेवाले कार्योका निर्देश—

स० च०—अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयविषै अपूर्वकरणका अन्त समय सम्बन्धीतैं और ही प्रमाण धरैं स्थितिखण्ड स्थितिबन्धापसरण अनुभागखण्ड प्रारम्भिए है। वहुरि तहाँ ही सर्वकर्मनिका उपशम निघत्ति निकाचन इनि तीनि करणनिकी व्युच्छित्ति भई। उदयविषै प्राप्त करनेकौ अयोग्य सो उपशम कहिए। अर सक्रमण उदयविषै प्राप्त करनेकौ अयोग्य सो निधत्ति कहिए। उत्कर्षण अपकर्षण सक्रमण उदयविषै प्राप्त करनेकौ अयोग्य सो निकाचना कहिए सो इहा सर्वकर्मनिकौ उदयादिविषै निक्षेपण करनेकौ समर्थपना पाइए है ऐसा जानना ॥ २२६ ॥

विशेष—प्रकृत गाथाकी टीकामे गोम्मटसार कर्मकाण्डकी 'सकमकरणूणा' इत्यादि गाथा ४४१ का 'अपुव्वकरणेत्ति दसकरणा' इस प्रकार अन्तिम पाद उद्धृत किया है। सो ठीक ही है कि अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमे अप्रशस्त उपशमकरण, निधत्तीकरण और निकाचनकरणकी व्युच्छित्ति हो जाती है। जो कर्म अपकर्षण, उत्कर्षण और परप्रकृतिसक्रमके योग्य होकर भी उदोरणाके अयोग्य होकर उदयस्थितिमे अपकर्षित होनेके अयोग्य होता है उसकी अप्रशस्त उपशमकरण सज्ञा है। जो कर्म अपकर्षण और उत्कर्षणके योग्य होकर भी उदय और परप्रकृतिसक्रमरूप न हो उन्हे निधत्तीकरण कहते है तथा जो कर्म इन चारोके अयोग्य होकर तदवस्थ रहते है उनको निकाचनकरण कहते है। ये तीन उक्त करण है। इनकी यहाँ व्युच्छित्ति हो जानेसे जो कर्म इन तीनो करणरूप थे उन कर्मोका अब अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयसे उदीरणा उत्कर्षण, अपकर्षण और परप्रकृतिसक्रम होने लगता है। शेष कथन सुगम है।

अथ तस्मिन्नेवानिवृत्तिकरणप्रथमसमये कर्मणा स्थितिसत्त्वबन्धप्रमाणनिर्देशार्थमिदमाह—

अतोकोडाकोडी अतोकोडी य सत्त बध च।
सत्तण्ह पयडीणं अणियट्टीकरणपढमम्हि[1] ॥ २२७ ॥

अन्त कोटीकोटि अन्त कोटिश्च सत्त्व बधश्च।
सप्ताना प्रकृतीनां अनिवृत्तिकरण ॥ २२७ ॥

स० टी०—अनिवृत्तिकरणप्रथमसमये आयुर्वजितसप्तकर्मणा स्थितिसत्त्वमन्त कोटीकोटिप्रमित सा अ को २ स्थितिबन्धश्चान्त कोटिप्रमित सा अ को १। अपूर्वकरणकालकृतस्थितिखण्डस्थितिबन्धापसरण-
४
सख्यातसहस्रमाहात्म्यात् ॥ २२७ ॥

---

१ आउगवज्जाण कम्माण ट्ठिदिसतकम्ममतोकोडाकोडीए। ट्ठिदिबधोघ अतोकोडाकोडीए तदसहस्सपुधत्त बधो। वही पृ० २३१–१३२।

अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयमे वन्ध और सत्त्वके प्रमाणका निर्देश—

स० च०—अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयविषै आयु विना सात प्रकृतिनिका स्थितिसत्त्व यथायोग्य अन्त कोटाकोटी सागरमात्र है। अर स्थितिबन्ध अन्त कोटीमात्र है। अपूर्वकरणविषै घटाए इतना अवशेष रहै है॥ २२७॥

अथ तस्मिन्नेवानिवृत्तिकरणकाले स्थितिबन्धापसरणक्रमेण स्थितिबन्धक्रम प्रदर्शयितु गाथात्रयमाह—

ठिदिबंधसहस्सगदे संखेज्जा बादरे गदा भागा।
तत्थ असण्णिस्स ठिदीसरिस ट्ठिदिबंधणं होदि॥ २२८॥

स्थितिबन्धसहस्रगते संख्येया बादरे गता भागा।
तत्र असज्ञिनः स्थितिसदृशं स्थितिबन्धनं भवति॥ २२८॥

स० टी०—अनिवृत्तिकरणप्रथमसमयादारम्यान्तर्मुहूर्तमन्तर्मुहूर्त प्रति पल्यसख्यातभागमात्रस्थिति-बन्धापसरणक्रमेण सख्यातसहस्रस्थितिबन्धेपु गतेपु तत्करणकालस्य सख्यातबहुभागा यदा गच्छन्ति तदा असज्ञि-स्थितिबन्धसदृशस्थितिबन्धो भवति। सहस्रसागरोपमप्रतिभागेन नामगोत्रयोर्द्विसप्तमभागप्रमित ज्ञानदर्शना-वरणान्तरायसातवेदनीयाना स्थितिबन्ध सागरोपमसहस्रत्रिसप्तमभागप्रमित। चारित्रमोहस्य स्थितिबन्ध सागरोपमसहस्रचतु सप्तमभागप्रमितो भवतीत्यर्थ। एव वैशतिकत्रैशत्कचत्वारिंशत्ककर्मणा प्रतिभागक्रम उत्तरत्रापि ज्ञातव्य॥ २२८॥

वही स्थितिबन्धापसरणसे कम-कम होनेवाले वन्धका निर्देश—

स० च०—अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयतैं लगाय एक एक अन्तर्मुहूर्तविषै पल्यका सख्यातवाँ भागमात्र स्थितिबन्ध घटैं ऐसैं स्थितिबन्धापसरणका क्रमकरि हजारो स्थितिबन्ध भए अनिवृत्तिकरणकालका सख्यात भागनिविषैं बहुभाग व्यतीत भए एकभाग अवशेष रहै असज्ञीका स्थितिबन्ध समान स्थितिबन्ध हो है। सो असज्ञीकैं सत्तर कोडाकोडी सागर उत्कृष्ट स्थितिका धारक दर्शनमोहका हजार सागर स्थितिबन्ध है तिसका प्रतिभाग करि हजार सागरकौ सातका भाग देइ तहा एकभागतैं दूणा बीसियनिका तिगुणा तीसयनिका चौगुणा चारित्रमोहका स्थितिबन्ध हो है। जिनकी बीस कोडाकोडीकी उत्कृष्ट स्थिति ऐसे नामगोत्र तिनकौ बीसिय कहिए। जिनकी तीस कोडाकोडीकी उत्कृष्ट स्थिति ऐसे ज्ञानावरण दर्शनावरण अन्तराय वेदनीय तिनकौं तीसीय कहिए। जाकी चालीस कोडाकोडी सागरकी उत्कृष्ट स्थिति ऐसा चारित्रमोह ताकौं चालीसिय कहिए। ऐसी सज्ञा आगें भी जानि लेनी॥ २२८॥

ठिदिबंधपुधत्तगदे पत्तेयं चदुर तिय बि एएदि।
ठिदिबंधसम होदि हु ठिदिबंधमणुक्कमेणेव[2]॥ २२९॥

---

१ तदो ट्ठिदिखडयसहस्सेसु गदेसु ट्ठिदिबंधो सदसहस्सपुधत्त। तदो अणयट्टिअद्धाए सखेज्जेसु भागेसु गदेसु असण्णिट्ठिदिबंधेण समगो ट्ठिदिबंधो। वही पृ० २३२।

२ तदो ट्ठिदिबंधपुधत्ते गदे चउरिंदियबंधसमगो ट्ठिदिबंधो। एव तीइदिय-बीइंदियट्ठिदिबंध-समगो ट्ठिदिबंधो। एइंदियट्ठिदिबन्धसमगो ट्ठिदिबंधो। वही पृ० २३३।

स्थितिबन्धपृथक्त्वगते प्रत्येकं चतुस्त्रिद्विएकेति ।
स्थितिबन्धसमो भवति हि स्थितिबन्धोऽनुक्रमेणैव ।। २२९ ।।

स० टी०—तत पर सख्यातसहस्रस्थितिबन्धेषु गतेषु चतुरिन्द्रियस्थितिबन्धसदृशस्थितिबन्धो भवति नामगोत्रादिकर्मणा सागरोपमशतस्य द्विसप्तमत्रिसप्तमचतु सप्तमभागप्रमितस्थितिबन्धो भवतीत्यर्थ । तत पर सख्यातसहस्रस्थितिबन्धेषु गतेषु त्रीन्द्रियस्थितिबन्धसदृशस्थितिबन्धो भवति । प्रागुक्तवैशतिकादीना कर्मणा पञ्चाशत्सागरोपमद्विसप्तमत्रिसप्तमचतु सप्तमभागप्रमित । इत पर सख्यातसहस्रस्थितिबन्धेषु गतेषु द्वीन्द्रियस्थितिबन्धसदृशस्थितिबन्धो भवति । पूर्वोक्तत्रिस्थानकर्मणा पञ्चविंशतिसागरोपमद्विसप्तमत्रिसप्तमचतु सप्तमभागप्रमित स्थितिबन्धो भवतीत्यभिप्राय । तत पर सख्यातसहस्रस्थितिबन्धेषु गतेषु एकेन्द्रियस्थितिबन्धसदृश स्थितिबन्धो भवति । वीसियतीसियचालिसीयसकेतिताना कर्मणामेकसागरोपमद्विसप्तमत्रिसप्तमचतु सप्तमभागप्रमित स्थितिबन्धो भवतीति निर्णय । पृथक्त्वशब्दस्य बहुत्ववाचित्वेन प्रत्येक सख्यातसहस्रस्थितिबन्धेषु गतेष्विति व्याख्यायते ।। २२९ ।।

स० च०—तातै परँ पृथक्त्व कहिए सख्यात हजार स्थितिबन्ध भए सौ सागरकौ सातका भाग देइ तहाँ एक भागतैं दूणा बीसियका तिगुणा तीसियका चौगुणा चालीसियका ऐसा चौंद्री समान स्थितिबन्ध हो है। बहुरि तातै परैं सख्यात हजार स्थितिबन्ध भए पचास सागरकौ सातका भाग देइ तहा एकभागतै दूणा बीसियका तिगुणा तिसियका चौगुणा चालीसियका ऐसा तेंद्री समान स्थितिबन्ध हो है। बहुरि तातै परं सख्यात हजार स्थितिबन्ध भए पचीस सागरकौ सातका भाग देइ तहा एकभागतैं दूणा वीसियका तिगुणा तीसियका चौगुणा चालीसियका ऐसा वेंद्रीका समान स्थितिबन्ध हो है। तातैं परैं सख्यात हजार स्थितिबन्ध भए एक सागरकौ सातका भाग देइ तहा एक भागतै दूणा बीसियका तिगुणा तीसियका चौगुणा चालीसियका ऐसा एकेन्द्रीका समान स्थितिबन्ध हो है।। २२९ ।।

एइंदियट्ठिदीदो सखसहस्से गदे दु ठिदिबंधो ।
पल्लेक्कदिवड्ढदुगे ठिदिबंधो वीसियतियाणं[1] ।। २३० ।।

एकेन्द्रियस्थितित संख्यसहस्रे गते तु स्थितिबन्ध ।
पल्यैकद्व्यर्धद्विके स्थितिबन्धो विंशतित्रिकरणाम् ।। २३० ।।

स० टी०—तत पर सख्यातसहस्रस्थितिबन्धेषु गतेषु नामगोत्रयो पल्यमात्र, त्रिघातिवेदनीयाना सार्धपल्यमात्र चारित्रमोहस्य पल्यद्वयप्रमित स्थितिबन्धो भवति। असज्ञादिषु सर्वत्र सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमस्थितिबन्धस्य मिथ्यात्वस्य यदि सहस्रसागरोपमस्थितिं बध्नाति जीवस्तदा विंशतिसागरोपमकोटीकोटिस्थितिबन्धयोर्नामगोत्रयो कियती स्थितिं बध्नातीति त्रैराशिकेन फलगुणितेच्छाप्रमाणेन भक्त्वा अपवर्तितसहस्रसागरोपमद्विसप्तमभागप्रमितो नामगोत्रयो स्थितिबन्धो लभ्यते। एव त्रिंशत्कोटीकोटिसागरोपमस्थितिबन्धाना त्रिशतिसातवेदनीयाना सहस्रसागरोपमत्रिसप्तमभागप्रमितश्चत्वारिंशत्कोटीकोटिसागरोपमस्थिति-

१ तदो ट्ठिदिबंधपुधत्तेण णामा-गोदाण पलिदोवमट्ठिदिगो ट्ठिदिबंधो णाणावरणीय-दसणावरणीय-वेदणीय-अतराइयाण च दिवड्ढपलिदोवममेत्तट्ठिदिगो बंधो। मोहणीयस्स वेपलिदोवमट्ठिदिगो बंधो।
वही पृ० २३४।

बन्धस्य चारित्रमोहस्य सहस्रसागरोपमचतु सप्तमभागप्रमितश्च स्थितिबन्ध असंज्ञिजीवे आनेतव्य । अन उत्तरत्रापि चतुरिन्द्रियादिषु अनेनैव त्रैराशिकविधानेन तत्र तत्र स्थितिबन्धप्रमाणमानेतव्यम् ।। २३० ।।

स० च०—तिस एकेन्द्री समान स्थितिबन्धतै परै सख्यात हजार स्थितिबन्ध भए बीसियका एक पल्य तीसियका ड्योढ पल्य चालीसियका दोय पल्यप्रमाण स्थितिबन्ध हो है। इहा असज्ञीकै सत्तर कोडाकोडी सागर स्थितिका धारक दर्शनमोहका हजार सागर बन्ध होइ तौ बीस कोडाकोडी स्थितिका धारक नाम गोत्रनिका केता होइ। ऐसैं त्रैराशिक कीए हजार सागरका दोय सातवां भाग आवै है। ऐसैं औरनिविषै भी त्रैराशिक विधान जानना ॥ २३० ॥

अथ पल्यमात्रपल्यसख्यातभागमात्रसख्यातवर्षसहस्रमात्रस्थितिबन्धाना त्रयाणामुत्पत्ते प्राक्स्थितिबन्धापसरणप्रमाणनिर्देशार्थमिदमाह—

पल्लस्स संखभागं संखगुणूणं असंखगुणहीण ।
बंधोसरणं पल्लं पल्लसख ति संखवस्स ति ॥ २३१ ॥

पल्यस्य संख्यभाग संख्यगुणोनमसंख्यगुणहीनम् ।
बन्धापसरणं पल्यं पल्यासंख्यमिति सख्यवर्षामिति ॥ २३१ ॥

स० टी०—अन्त कोटीकोटिमात्रस्थितिबन्धात्प्रभृतिपल्योत्पत्तिपर्यन्त पल्यसख्यातैकभागमात्र स्थितिबन्धापसरण भवति, पल्यमात्रस्थितिबन्धात्प्रभृति पल्यसख्यातबहुभागमात्र स्थितिबन्धापसरण भवति । पल्यस्थितेरनन्तर दूरापकृष्टिस्थितिपर्यन्त सख्यातगुणहीना पल्यसख्यातैकभागमात्री स्थिति बध्नातीत्यर्थ । दूरापकृष्टिस्थिते प्रभृति सख्यातवर्षसहस्रमात्रस्थितिबन्धोत्पत्तिपर्यन्त पल्यासख्यातबहुभागमात्र स्थितिबन्धापसरण भवति । दूरापकृष्टेरनन्तर सख्यातसहस्रमात्रस्थितिबन्धपर्यन्त असख्यातगुणहीना पल्यासख्यातैकभागमात्री स्थिति बध्नातीत्यर्थ । सखगुणूणमसखगुणमित्यत्र गुणशब्दस्य बहुभागवाचित्वात् ।। २३१ ।।

बन्धापसरणबन्धके विषयमे विशेष खुलासा—

स० च०—अन्त कोटाकोटी स्थितिबन्धतैं लगाय यावत् पल्यमात्र स्थितिबन्ध भया तावत् स्थितिबन्धापसरणका प्रमाण पल्यके सख्यातवे भागमात्र है। बहुरि पल्यमात्र स्थितिबन्धतै लगाय दूरापकृष्टि स्थिति होइ तहा पल्यकौ सख्यातका भाग देइ बहुभागमात्र स्थितिबन्धापसरण हो है। पल्यस्थितिके अनन्तरि दूरापकृष्टि स्थितिपर्यन्त क्रमतै सख्यातगुणा घाटि ऐसा पल्यका सख्यातवाँ भागमात्र स्थितिबन्ध हो है। ऐसा अर्थ जानना। बहुरि दूरापकृष्टि स्थितितैं लगाय यावत् सख्यात हजार वर्षमात्र स्थितिबन्ध होइ तहा पल्यकौ असख्यातका भाग दीजिए बहुभागमात्र स्थितिबन्धापसरण है। दूरापकृष्टितैं लगाय सख्यात हजार वर्षमात्र स्थितिपर्यन्त क्रमतै असख्यातगुणी घाटि ऐसे पल्यके असख्यातवे भागमात्र स्थितिबन्ध हो है। ऐसा जानना। एक स्थितिबन्धापसरणकालविषै जितना स्थितिबन्ध घट्या सो तौ स्थिति बन्धापसरण जानना अर ताकौ घटतैं जितना स्थितिबन्ध होइ तहा स्थितिबन्ध जानना ॥ २३१ ॥

विशेष—प्रकृत गाथामे मुख्यतासे कहाँ कितना स्थितिबन्धापसरण होता है इसका विचार किया है। उपशमश्रेणिमे अपूर्वकरणके प्रथम समयसे स्थितिबन्धापसरणका प्रमाण पल्यके सख्यातवें भागमात्र है। जबतक स्थिति घटकर पल्यप्रमाण नही प्राप्त होती तबतक यह क्रम चालू रहता

स्थितिबन्धपृथक्त्वगते प्रत्येकं चतुस्त्रिद्विएकेति ।
स्थितिबन्धसमो भवति हि स्थितिबन्धोऽनुक्रमेणैव ॥ २२९ ॥

स० टी०—तत पर सख्यातसहस्रस्थितिवन्धेषु गतेषु चतुरिन्द्रियस्थितिवन्धसदृशस्थितिवन्धो भवति नामगोत्रादिकर्मणा सागरोपमशतस्य द्विसप्तमत्रिसप्तमचतु सप्तमभागप्रमितस्थितिवन्धो भवतीत्यर्थ । तत पर सख्यातसहस्रस्थितिवन्धेषु गतेपु त्रीन्द्रियस्थितिबन्धसदृशस्थितिवन्धो भवति । प्रागुक्तवैशतिकादीना कर्मणा पञ्चशत्सागरोपमद्विसप्तमत्रिसप्तमचतु सप्तमभागप्रमित । इत पर सख्यातसहस्रस्थितिवन्धेषु गतेपु द्वीन्द्रिय-स्थितिबन्धसदृशस्थितिवन्धो भवति । पूर्वोक्तत्रिस्थानकर्मणा पञ्चविंशतिसागरोपमद्विसप्तमत्रिसप्तमचतु सप्तम-भागप्रमित स्थितिबन्धो भवतीत्यभिप्राय । तत पर सख्यातसहस्रस्थितिवन्धेषु गतेपु एकेन्द्रियस्थितिवन्धसदृश स्थितिबन्धो भवति । वीसियतीसियचालिसीयसकेतिताना कर्मणामेकसागरोपमद्विसप्तमत्रिसप्तमचतु सप्तम-भागप्रमित स्थितिबन्धो भवतीति निर्णय । पृथक्त्वशब्दस्य बहुत्ववाचित्वेन प्रत्येक सख्यातसहस्रस्थितिवन्धेषु गतेष्विति व्याख्यायते ॥ २२९ ॥

स० च०—तातै परै पृथक्त्व कहिए सख्यात हजार स्थितिबन्ध भए सौ सागरकौ सातका भाग देइ तहाँ एक भागतैं दूणा बीसियका तिगुणा तीसियका चौगुणा चालीसियका ऐसा चौद्री समान स्थितिबन्ध हो है। बहुरि तातैं परैं सख्यात हजार स्थितिबन्ध भए पचास सागरकौ सातका भाग देइ तहा एकभागतै दूणा बीसियका तिगुणा तिसियका चौगुणा चालीसियका ऐसा तेंद्री समान स्थितिबन्ध हो है। बहुरि तातैं परै सख्यात हजार स्थितिबन्ध भए पचीस सागरकौ सातका भाग देइ तहा एकभागतैं दूणा वीसियका तिगुणा तीसियका चौगुणा चालीसियका ऐसा वेंद्रीका समान स्थितिबन्ध हो है। तातैं परै सख्यात हजार स्थितिबन्ध भए एक सागरकौ सातका भाग देइ तहा एक भागतै दूणा बीसियका तिगुणा तीसियका चौगुणा चालीसियका ऐसा एकेन्द्रीका समान स्थितिबन्ध हो है ॥ २२९ ॥

एइंदियट्ठिदीदो सखसहस्से गदे दु ठिदिबंधो ।
पल्लेक्कदिवड्ढदुगे ठिदिबंधो वीसियतियाण[1] ॥ २३० ॥

एकेन्द्रियस्थितित· संख्यसहस्रे गते तु स्थितिबन्ध ।
पल्यैकद्व्यर्धद्विके स्थितिबन्धो विंशतित्रिकरणाम् ॥ २३० ॥

स० टी०—तत पर सख्यातसहस्रस्थितिबन्धेषु गतेषु नामगोत्रयो पल्यमात्र, त्रिघातिवेदनीयाना सार्धपल्यमात्र चारित्रमोहस्य पल्यद्वयप्रमित स्थितिबन्धो भवति। असज्ञादिषु सर्वत्र सप्ततिकोटीकोटिसागरो-पमस्थितिबन्धस्य मिथ्यात्वस्य यदि सहस्रसागरोपमस्थिति बध्नाति जीवस्तदा विंशतिसागरोपमकोटीकोटि-स्थितिबन्धयोर्नामगोत्रयो कियती स्थिति बध्नातीति त्रैराशिकेन फलगुणितेच्छाप्रमाणेन भक्त्वा अपवर्तित-सहस्रसागरोपमद्विसप्तमभागप्रमितो नामगोत्रयो स्थितिबन्धो लभ्यते । एव त्रिंशत्कोटीकोटिसागरोपमस्थिति-बन्धाना त्रिंशतिसातवेदनीयाना सहस्रसागरोपमत्रिसप्तमभागप्रमितश्चत्वारिंशत्कोटीकोटिसागरोपमस्थिति-

---

१ तदो ट्ठिदिबधपुधत्तेण णामा-गोदाण पलिदोवमट्ठिदिगो ट्ठिदिबधो णाणावरणीय-दसणावरणीय-वेदणीय-अतराइयाण च दिवड्ढपलिदोवममेत्तट्ठिदिगो बधो । मोहणीयस्स वेपलिदोवमट्ठिदिगो वधो ।
वही पृ० २३४ ।

बन्धस्य चारित्रमोहस्य सहस्रभागरोपमचतुःसप्तमभागप्रमितस्य स्थितिबन्धं असंज्ञिजीवे आनेतव्यं । अन उत्तरत्रापि चतुरिन्द्रियादिषु अनेनैव त्रैराशिकविधानेन तत्र तत्र स्थितिबन्धप्रमाणमानेतव्यम ॥ २३० ॥

स० च०—तिस एकेन्द्री समान स्थितिबन्धतै परै संख्यात हजार स्थितिबन्ध भए बीसियका एक पल्य तीसियका ड्योढ पल्य चालीसियका दोय पल्यप्रमाण स्थितिबन्ध हो है। इहा असंज्ञीकैं सत्तर कोडाकोडी सागर स्थितिका धारक दर्शनमोहका हजार सागर बन्ध होइ तौ बीस कोडाकोडी स्थितिका धारक नाम गोत्रनिका केता होइ। ऐसैं त्रैराशिक कीए हजार सागरका दोय सातवाँ भाग आवै है। ऐसैं औरनिविषै भी त्रैराशिक विधान जानना ॥ २३० ॥

अथ पल्यमात्रपल्यसंख्यातभागमात्रसंख्यातवर्षसहस्रमात्रस्थितिबन्धानां त्रयाणामुत्पत्तेः प्राक् स्थितिबन्धापसरणप्रमाणनिर्देशार्थमिदमाह—

पल्लस्स संखभागं संखगुणूणं असंखगुणहीणं ।
बंधोसरणं पल्लं पल्लसंखं ति संखवस्सं ति ॥ २३१ ॥

पल्यस्य संख्यभागं संख्यगुणोनमसंख्यगुणहीनम् ।
बन्धापसरणं पल्यं पल्यासंख्यमिति संख्यवर्षमिति ॥ २३१ ॥

स० टी०—अन्तःकोटीकोटिमात्रस्थितिबन्धात्प्रभृतिपल्योत्पत्तिपर्यन्तं पल्यसंख्यातैकभागमात्रं स्थितिबन्धापसरणं भवति, पल्यमात्रस्थितिबन्धात्प्रभृति पल्यसंख्यातबहुभागमात्रं स्थितिबन्धापसरणं भवति । पल्यस्थितेरनन्तरं दूरापकृष्टिस्थितिपर्यन्तं संख्यातगुणहीनां पल्यसंख्यातैकभागमात्रीं स्थितिं बध्नातीत्यर्थः । दूरापकृष्टिस्थितेः प्रभृति संख्यातवर्षसहस्रमात्रस्थितिबन्धोत्पत्तिपर्यन्तं पल्यासंख्यातबहुभागमात्रं स्थितिबन्धापसरणं भवति । दूरापकृष्टेरनन्तरं संख्यातसहस्रमात्रस्थितिबन्धपर्यन्तं असंख्यातगुणहीनां पल्यासंख्यातैकभागमात्रीं स्थितिं बध्नातीत्यर्थः । संखगुणूणमसंखगुणमित्यत्र गुणशब्दस्य बहुभागवाचित्वात् ॥ २३१ ॥

बन्धापसरणबन्धके विषयमे विशेष खुलासा—

स० च०—अन्तःकोटाकोटी स्थितिबन्धतैं लगाय यावत् पल्यमात्र स्थितिबन्ध भया तावत् स्थितिबन्धापसरणका प्रमाण पल्यके संख्यातवें भागमात्र है। बहुरि पल्यमात्र स्थितिबन्धतैं लगाय दूरापकृष्टि स्थिति होइ तहा पल्यकौं संख्यातका भाग देइ बहुभागमात्र स्थितिबन्धापसरण हो है। पल्यस्थितिके अनन्तरि दूरापकृष्टि स्थितिपर्यन्त क्रमतैं संख्यातगुणा घाटि ऐसा पल्यका संख्यातवाँ भागमात्र स्थितिबन्ध हो है। ऐसा अर्थ जानना। बहुरि दूरापकृष्टि स्थितितैं लगाय यावत् संख्यात हजार वर्षमात्र स्थितिबन्ध होइ तहा पल्यकौं असंख्यातका भाग दीजिए बहुभागमात्र स्थितिबन्धापसरण है। दूरापकृष्टितै लगाय संख्यात हजार वर्षमात्र स्थितिपर्यन्त क्रमतैं असंख्यातगुणी घाटि ऐसे पल्यके असंख्यातवें भागमात्र स्थितिबन्ध हो है। ऐसा जानना। एक स्थितिबन्धापसरणकालविषैं जितना स्थितिबन्ध घटया सो तौ स्थिति बन्धापसरण जानना अर ताकौं घटतैं जितना स्थितिबन्ध होइ तहा स्थितिबन्ध जानना ॥ २३१ ॥

विशेष—प्रकृत गाथामे मुख्यतासे कहाँ कितना स्थितिबन्धापसरण होता है इसका विचार किया है। उपशमश्रेणिमे अपूर्वकरणके प्रथम समयसे स्थितिबन्धापसरणका प्रमाण पल्यके संख्यातवे भागमात्र है। जबतक स्थिति घटकर पल्यप्रमाण नही प्राप्त होती तबतक यह क्रम चालू रहता

है। उसके बाद दूरापकृष्टिप्रमाण स्थितिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर शेष रही स्थितिका सख्यात बहुभागप्रमाण स्थितिबन्धापसरण होता है। उसके बाद सख्यात वर्षप्रमाण स्थितिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर शेष रही स्थितिका असख्यात बहुभागप्रमाण स्थितिबन्धापसरण होता है यह उक्त गाथाका तात्पर्य है।

अथ स्थितिबन्धक्रमकरणकाले स्थितिबन्धाना प्रमाणप्रदर्शनार्थमिदमाह—

एव पल्ले जादे वीसीया तीसिया य मोहो य।
पल्लासख च कमे बधेण य वीसियतियाओ[1] ॥ २३२ ॥

एवं पल्ये जाते वीसिया तीसिया च मोहश्च।
पल्यासंख्य च क्रमे बन्धेन च वीसियत्रिका ॥ २३२ ॥

स० टी०—एवमुक्तप्रकारेण वीसियतीसियमोहनीयपल्यजातस्थितिबन्धात्पर क्रमेण सख्यातसहस्र-स्थितिबन्धापसरणै क्रमकरणकालावसाने पल्यासख्यातैकभागमात्र स्थितिबन्धो भवति। तद्यथा—

वीसियतीसियमोहाना पल्यद्वयर्धपल्यद्वयमात्रस्थितिबन्धेभ्य पर सख्यातसहस्रेषु नामगोत्रयो पल्य-सख्यातबहुभागमात्रेषु तीसियमोहयो पल्यसख्यातैकभागमात्रेषु च स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु वीसियादीना यथासख्य पल्यसख्यातैकभागमात्रपल्यमात्रत्रिभागाधिकपल्यमात्रा स्थितिबन्धा एकस्मिन् काले जायन्ते। तत सख्यातसहस्रेषु वीसियतीसिययो पल्यसख्यातबहुभागमात्रेषु मोहस्य पल्यसख्यातैकभागमात्रेषु च स्थितिबन्धा-पसरणेषु गतेषु वीसियादीना यथासख्य पल्यसख्यातैकभागमात्रपल्यमात्रस्थितिबन्धा जायन्ते। वीसियस्थिति-बन्धात् तीसियपस्थितिबन्ध सख्येयगुण इति विशेषो ज्ञेय। तत पर सख्यातसहस्रेषु त्रयाणामपि पल्य-सख्यातबहुभागमात्रेषु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु नामगोत्रयोर्दूरापकृष्टिसज्ञश्चरम पल्यसख्यातैकभागमात्र, तीसियमोहयो यथायोग्यपल्यसख्यातैकभागमात्रावस्थितिबन्धा जायन्ते। तीसियस्थितिबन्धात् चालीसियस्थिति-बन्ध सख्यातगुण इत्यय विशेषो द्रष्टव्य। तत पर सख्यातसहस्रेषु वीसियस्य पल्यासख्यातबहुभागमात्रेषु तीसियमोहयो पल्यसख्यातबहुभागमात्रेषु च स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु नामगोत्रयो पल्यासख्यातैकभागमात्र तीसियस्य दूरापकृष्टिसज्ञश्चरम पल्यसख्यातैकभागमात्र मोहस्य यथायोग्यपल्यसख्यातैकभागमात्र स्थिति-बन्धा जायन्ते। तीसियबन्धात् चालीसियबन्ध सख्यातगुण इत्यय विशेषो ज्ञातव्य। तत पर सख्यात-सहस्रेषु वीसियतीसिययो पल्यासख्यातबहुभागमात्रेषु मोहस्य पल्यसख्यातबहुभागमात्रेषु च स्थितिबन्धापसर-णेषु गतेषु वीसियतीसिययो पल्यासख्यातैकभागमात्रो मोहस्य दूरापकृष्टिसज्ञश्चरम पल्यसख्यातैकभागमात्रश्च स्थितिबन्धा युगपज्जायन्ते। वीसियबन्धात्तीसियबन्धोऽसख्यातगुण इति विशेष। तत पर सख्यातसहस्रेषु त्रयाणामपि पल्यासख्यातबहुभागमात्रेषु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु वीसियादीना त्रयाणामपि पल्यासख्यातैक-भागमात्रा स्थितिबन्धा सभवन्ति। वीसियबन्धात्तीसियबन्धोऽसख्येयगुण। तत मोहस्थितिबन्धोऽसख्यात-गुण इत्यय विशेषो ज्ञेय ॥ २३२ ॥

स्थितिबन्धके विषयमे विशेष निर्देश—

स० च०—तिस पल्यस्थितितैं परै वीसीय तीसिय मोहनीयका स्थितिबन्ध है सो क्रम-करणकालका अन्तविषै पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र है। सोई कहिए है—

१ वही पृ० २४०।

बीसियादिकनिका पल्य ड्योढ पल्य दोय पल्य स्थितिवन्धके परै बीसयनिका तौ पल्यका सख्यात बहुभागमात्र अर तीसीय मोहका पल्यका सख्यातवां भागमात्र आयाम धरै ऐसे सख्यात हजार स्थितिवन्धापसरण गए वीसीयनिका पल्यके सख्यातवें भागमात्र तीसयनिका पल्यमात्र मोहका त्रिभाग अधिक पल्यमात्र स्थितिवन्ध एक कालविषै हो है। बहुरि तातै परै बीसीय तीसीयनिका पल्यका सख्यात बहुभागमात्र मोहका पल्यका सख्यातवां भागमात्र आयाम धरै ऐसे सख्यात हजार स्थितिवन्धापसरण गए वीसिय तीसीयनिका पल्यके सख्यातवें भागमात्र-मोहका पल्यमात्र स्थितिवन्ध हो है। इहा विशेष इतना वीसियकै तैं तीसियका स्थितिबन्ध सख्यातगुणा हो है। बहुरि तातै परै तीनोहीकै पल्यका सख्यात बहुभागमात्र आयाम धरै ऐसे सख्यात हजार स्थितिवन्धापसरण गए नाम गोत्रका दूरापकृष्टि है नाम जाका ऐसा पल्यका सख्यातवां भागमात्र अर तीसीय मोहका यथायोग्य पल्यका सख्यातवां भागमात्र स्थितिवन्ध भया। इहाँ विशेष इतना तीसीयकेतै मोहका स्थितिवन्ध सख्यातगुणा है। बहुरि तातै परै वीसीय-का पल्यका असख्यातबहुभागमात्र अर तीसीय मोहका पल्यका सख्यातवहुभागमात्र प्रमाण धरै ऐसे—सख्यात हजार स्थितिवन्धापसरण गए वीसियनिका पल्यका असख्यातवां भागमात्र तीसयनिका दूरापकृष्टि है नाम जाका ऐसा पल्यका सख्यातवां भागमात्र अर मोहका यथायोग्य पल्यका सख्यातवा भागमात्र स्थितिवन्ध युगपत् हो है। इहा तीसीयकेतै चालीसियका स्थितिवन्ध सख्यातगुणा जानना। बहुरि तातै परै वीसीय तीसीयनिका पल्यका असख्यात बहुभागमात्र मोहका पल्यका सख्यात बहुभागमात्र प्रमाण धरै ऐसे सख्यात हजार स्थितिवन्धापसरण गए वीसीय तीसीयनिका पल्यके असख्यातवें भागमात्र मोहका दूरापकृष्टि है नाम जाका ऐसा अन्तका पल्यका सख्यातवा भागमात्र स्थितिबन्ध हो है। इहा वीसीयकेतै तीसीयका स्थितिवन्ध असख्यातगुणा जानना। बहुरि तातैं परै तीन्योहीका पल्यका असख्यात बहुभागमात्र प्रमाण लीए ऐसे सख्यात हजार स्थितिबन्धापसरण गए तीनोहीका पल्यके असख्यातवे भागमात्र स्थितिवन्ध हो है। इहा वीसीयकेतैं तीसीयका तीसीयकेतैं मोहका स्थितिवन्ध असख्यातगुणा जानना। इहा पर्यन्त तौ ऐसै अनुक्रमतै बन्ध हो है। आगें अन्य अनुक्रम हो है सो दिखाइए है ॥ २३२ ॥

अथात पर वीसियादीना क्रमव्यत्यासप्रदर्शनार्थमिदमाह—

मोहगपल्लासखट्ठिदिबधसहस्सगेसु तीदेसु ।
मोहो तीसिय हेट्ठा असखगुणहीणय होदि[1] ॥ २३३ ॥

मोहगपल्यासख्यस्थितिबन्धसहस्रकेष्वतीतेषु ।
मोह तीसिय अधस्तना असंख्यगुणहीनक भवति ॥ २३३ ॥

स० टी०—वीसियादीना त्रयाणामपि पल्यासख्यातैकभागमात्रस्थितिवन्धात्पर सख्यातसहस्रेपु पल्या-सख्यातबहुभागमात्रेषु स्थितिवन्धापसरणेषु गतेषु वीसियमोहतीसियाना स्वस्वप्राक्तनानन्तरस्थितिवन्धेभ्य असख्येयगुणहीना पल्यासख्यातैकभागमात्रा स्थितिबन्धा जायन्ते। तत्र सर्वत स्तोक वीसियस्थितिबन्ध। ततोऽसयेयगुणो मोहस्थितिवन्धस्तस्मादसख्येयगुणस्तीसियस्थितिबन्ध । इदानीतनविशुद्धिविशेषकृतस्थितिवन्धा-

---

१ तदो जो एसो ट्ठिदिबधो णामा-गोदाण थोवो। मोहणीयस्स ट्ठिदिबधो असखेज्जगुणो। इद-रेसिं पि चदुण्ह कम्माण ट्ठिदिबधो तुल्लो असंखेज्जगुणो। वही पृ० २४४।

है। उसके बाद दूरापकृष्टिप्रमाण स्थितिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर शेष रही स्थितिका सख्यात बहुभागप्रमाण स्थितिबन्धापसरण होता है। उसके बाद सख्यात वर्षप्रमाण स्थितिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर शेष रही स्थितिका असख्यात बहुभागप्रमाण स्थितिबन्धापसरण होता है यह उक्त गाथाका तात्पर्य है।

अथ स्थितिबन्धक्रमकरणकाले स्थितिबन्धाना प्रमाणप्रदर्शनार्थमिदमाह—

एवं पल्ले जादे बीसीया तीसिया य मोहो य।
पल्लासंख च कमे बधेण य वीसियतियाओ[1] ॥ २३२ ॥

एवं पल्ये जाते बीसिया तीसिया च मोहश्च।
पल्यासंख्य च क्रमे बन्धेन च वीसियत्रिकाः॥ २३२॥

स० टी०—एवमुक्तप्रकारेण वीसियतीसियमोहनीयपल्यजातस्थितिबन्धात्पर क्रमेण सख्यातसहस्रस्थितिबन्धापसरणै क्रमकरणकालावसाने पल्यासख्यातैकभागमात्र स्थितिबन्धो भवति। तद्यथा—

वीसियतीसियमोहाना पल्यद्वचर्धपल्यद्वयमात्रस्थितिबन्धेभ्य पर सख्यातसहस्रेषु नामगोत्रयो पल्यसख्यातबहुभागमात्रेषु तीसियमोहयो पल्यसख्यातैकभागमात्रेषु च स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु बीसियादीना यथासख्य पल्यसख्यातैकभागमात्रपल्यमात्रत्रिभागाधिकपल्यमात्रा स्थितिबन्धा एकस्मिन् काले जायन्ते। तत सख्यातसहस्रेषु वीसियतीसिययो पल्यसख्यातबहुभागमात्रेषु मोहस्य पल्यसख्यातैकभागमात्रेषु च स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु वीसियादीना यथासख्य पल्यसख्यातैकभागमात्रपल्यमात्रस्थितिबन्धा जायन्ते। वीसियस्थितिबन्धात् तीसियपस्थितिबन्ध सख्येयगुण इति विशेषो ज्ञेय। तत पर सख्यातसहस्रेषु त्रयाणामपि पल्यसख्यातबहुभागमात्रेषु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु नामगोत्रयोर्दूरापकृष्टिसज्ञश्चरम पल्यसख्यातैकभागमात्र, तीसियमोहयो यथायोग्यपल्यसख्यातैकभागमात्रावस्थितिबन्धा जायन्ते। तीसियस्थितिबन्धात् चालीसियस्थितिबन्ध सख्यातगुण इत्यय विशेषो द्रष्टव्य। तत पर सख्यातसहस्रेषु वीसियस्य पल्यासख्यातबहुभागमात्रेषु तीसियमोहयो पल्यसख्यातबहुभागमात्रेषु च स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु नामगोत्रयो पल्यासख्यातैकभागमात्र तीसियस्य दूरापकृष्टिसज्ञश्चरम• पल्यसख्यातैकभागमात्र मोहस्य यथायोग्यपल्यसख्यातैकभागमात्र स्थितिबन्धा जायन्ते। तीसियबन्धात् चालीसियबन्ध सख्यातगुण इत्यय विशेषो ज्ञातव्य। तत• पर सख्यातसहस्रेषु वीसियतीसिययो पल्यासख्यातबहुभागमात्रेषु मोहस्य पल्यसख्यातबहुभागमात्रेषु च स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु वीसियतीसिययो पल्यासख्यातैकभागमात्रो मोहस्य दूरापकृष्टिसज्ञश्चरम पल्यसख्यातैकभागमात्रश्च स्थितिबन्धा युगपज्जायन्ते। वीसियबन्धात्तीसियबन्धोऽसख्यातगुण इति विशेष। तत पर सख्यातसहस्रेषु त्रयाणामपि पल्यासख्यातबहुभागमात्रेषु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु वीसियादीना त्रयाणामपि पल्यासख्यातैकभागमात्रा स्थितिबन्धा सभवन्ति। वीसियबन्धात्तीसियबन्धोऽसख्येयगुण। तत मोहस्थितिबन्धोऽसख्यातगुण इत्यय विशेषो ज्ञेय॥ २३२॥

स्थितिबन्धके विषयमे विशेष निर्देश—

स० च०—तिस पल्यस्थितितैं परै वीसीय तीसिय मोहनीयका स्थितिबन्ध है सो क्रमकरणकालका अन्तविषै पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र है। सोई कहिए है—

---

१ वही पृ० २४०।

वीसियादिकनिका पल्य ड्योढ पल्य दोय पल्य स्थितिबन्धके परै वीसयनिका तो पल्यका सख्यात बहुभागमात्र अर तीसीय मोहका पल्यका सख्यातवां भागमात्र आयाम धरै ऐसे सख्यात हजार स्थितिबन्धापसरण गए वीसीयनिका पल्यके सख्यातवें भागमात्र तीसयनिका पल्यमात्र मोहका त्रिभाग अधिक पल्यमात्र स्थितिबन्ध एक कालविषै हो है। बहुरि तातै परै वीसीय तीसीयनिका पल्यका सख्यात बहुभागमात्र मोहका पल्यका सख्यातवां भागमात्र आयाम धरै ऐसे सख्यात हजार स्थितिबन्धापसरण गए वीसिय तीसीयनिका पल्यके सख्यातवें भागमात्र-मोहका पल्यमात्र स्थितिबन्ध हो है। इहा विशेष इतना वीसियकै तै तीसियका स्थितिबन्ध सख्यातगुणा हो है। बहुरि तातै परै तीनोहीकै पल्यका सख्यात बहुभागमात्र आयाम धरै ऐसे सख्यात हजार स्थितिबन्धापसरण गए नाम गोत्रका दूरापकृष्टि है नाम जाका ऐसा पल्यका सख्यातवाँ भागमात्र अर तीसीय मोहका यथायोग्य पल्यका सख्यातवां भागमात्र स्थितिबन्ध भया। इहाँ विशेष इतना तीसीयकेतै मोहका स्थितिबन्ध सख्यातगुणा है। बहुरि तातै परै वीसीय-का पल्यका असख्यातबहुभागमात्र अर तीसीय मोहका पल्यका सख्यातबहुभागमात्र प्रमाण धरै ऐसे—सख्यात हजार स्थितिबन्धापसरण गए वीसियनिका पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र तीसयनिका दूरापकृष्टि है नाम जाका ऐसा पल्यका सख्यातवाँ भागमात्र अर मोहका यथायोग्य पल्यका सख्यातवा भागमात्र स्थितिबन्ध युगपत् हो है। इहा तीसीयकेतै चालीसियका स्थितिबन्ध सख्यातगुणा जानना। बहुरि तातै परै वीसीय तीसीयनिका पल्यका असख्यात बहुभागमात्र मोहका पल्यका सख्यात बहुभागमात्र प्रमाण धरै ऐसे सख्यात हजार स्थितिबन्धापसरण गए वीसीय तीसीयनिका पल्यके असख्यातवें भागमात्र मोहका दूरापकृष्टि है नाम जाका ऐसा अन्तका पल्यका सख्यातवा भागमात्र स्थितिबन्ध हो है। इहा वीसीयकेतै तीसीयका स्थितिबन्ध असख्यातगुणा जानना। बहुरि तातै परै तीन्योहीका पल्यका असख्यात बहुभागमात्र प्रमाण लीए ऐसे सख्यात हजार स्थितिबन्धापसरण गए तीनोहीका पल्यके असख्यातवे भागमात्र स्थितिबन्ध हो है। इहा वीसीयकेतै तीसीयका तीसीयकेतै मोहका स्थितिबन्ध असख्यातगुणा जानना। इहा पर्यन्त तौ ऐसै अनुक्रमतै बन्ध हो है। आगे अन्य अनुक्रम हो है सो दिखाइए है॥ २३२॥

अथात पर वीसियादीना क्रमव्यत्यासप्रदर्शनार्थमिदमाह—

मोहगपल्लासखट्ठिदिबधसहस्सगेसु तीदेसु।
मोहो तीसिय हेट्ठा असखगुणहीणय होदि[1] ॥ २३३ ॥

मोहगपल्यासख्यस्थितिबन्धसहस्रकेष्वतीतेषु।
मोह तीसिय अधस्तना असंख्यगुणहीनक भवति॥ २३३॥

स० टी०—वीसियादीना त्रयाणामपि पल्यासख्यातैकभागमात्रस्थितिबन्धात्पर सख्यातसहस्रेषु पल्यासख्यातबहुभागमात्रेषु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु वीसियमोहतीसियाना स्वस्वप्राक्तनानन्तरस्थितिबन्धेभ्य असख्येयगुणहीना पल्यासख्यातैकभागमात्रा स्थितिबन्धा जायन्ते। तत्र सर्वत स्तोक वीसियस्थितिबन्ध। ततोऽसख्येयगुणो मोहस्थितिबन्धस्तस्मादसख्येयगुणस्तीसियस्थितिबन्ध। इदानीतनविशुद्धिविशेषकृतस्थितिबन्धा-

१ तदो जो एसो ट्ठिदिबधो णामा-गोदाण थोवो। मोहणीयस्स ट्ठिदिबधो असखेज्जगुणो। इद-रेसि पि चदुण्ह कम्माण ट्ठिदिबधो तुल्लो असखेज्जगुणो। वही पृ० २४४।

पसरणमाहात्म्यात् पूर्वक्रम परित्यज्य तीसियस्थितिबन्धस्याधो मोहस्थितिबन्धोऽसख्येयगुणहीनो जात इति क्रमव्यत्ययोऽत्र ज्ञातव्य ॥ २३३ ॥

वीसियादिकके क्रमपरिवर्तनका निर्देश—

स० च०—तिस पल्यके असख्यातवे भागमात्र स्थितिबन्धत पर पल्यका असख्यात वहुभागमात्र आयाम धरै ऐसे सख्यात हजार स्थितिबन्ध गए पूर्वस्थितिबन्धतैं असख्यातगुणा घटता ऐसा पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र स्थितिबन्ध तीनोका हो है। तहा स्तोक तौ वीसीयनिका तातै असंख्यातगुणा मोहका तातैं असख्यातगुणा तीसीयनिका स्थितिबन्ध जानना। इहा विशुद्धताविशेषतै तीसीयनितै मोहका घटता स्थितिबन्धरूप क्रम भया ॥ २३३ ॥

अथ क्रमान्तरज्ञापनार्थमिदमाह—

तेत्तियमेत्ते बंधे समतीदे वीसियाण हेट्ठा बि।
एक्कसराहो मोहो असखगुणहीणय होदि[1] ॥ २३४ ॥

तावन्मात्रे बन्धे समतीते वीसियानां अधस्तनापि।
एकसदृश मोहोऽसख्यगुणहीनको भवति ॥ २३४ ॥

स० टी०—तत पर सख्यातसहस्रेषु पल्यासख्यातबहुभागमात्रेपु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेपु मोहवीसियतीसियाना स्थितिबन्धा पल्यासख्यातैकभागमात्रा जायन्ते। तत्र सर्वत· स्तोक मोहस्थितिबन्ध। ततोऽसख्येयगुणो वीसियस्थितिबन्ध। ततोऽसख्येयगुणस्तीसियस्थितिबन्ध। अद्यतनविशुद्धिविशेषजनितस्थितिबन्धापसरणमाहात्म्याद्वीसियस्थितिबन्धस्याधोऽसख्येयगुणहीनो मोहस्थितिबन्धो जायत इति पूवक्रमादयमन्य एव क्रमो जात इति ज्ञेयम् ॥२३४॥

पुन क्रमान्तरका निर्देश—

स० च०—तातै परैं पल्यका असख्यात बहुभागमात्र आयाम धरै ऐसे सख्यात हजार स्थितिबन्ध गए तीनोका पल्यका असख्यातवा भागमात्र स्थितिबन्ध हो है। इहा स्तोक मोहका तातैं असख्यातगुणा तीसियनिका स्थितिबन्ध जानना। इहा विशुद्धता विशेषतै वीसियनिकातै भी मोहका घटता स्थितिबध रूप क्रम भया ॥२३४॥

पुनरपि क्रमान्तरज्ञापनार्थमिदमाह—

तेत्तियमेत्ते बधे समतीदे वेयणीयहेट्ठादु।
तीसियघादितियाओ असखगुणहीणया होंति[2] ॥ २३५ ॥

---

१ तदो अण्णो ट्ठिदिवन्धो एक्कसराहेण मोहणीयस्स थोवो। णामा-गोदाणमसखेज्जगुणो। इदरेसिं चदुण्ह पि कम्माण तुल्लो असखेज्जगुणो। वही पृ २४४।

२ तदो अण्णो ट्ठिदिवन्धो। एक्कसराहेण मोहणीयस्स ट्ठिदिवन्धो थोवो। णामा-गोदाण पि कम्माण ट्ठिदिवन्धो नुल्लो असखेज्जगुणो। णाणावरणीय-दसणावरणीय-अतराइयाण तिण्ह पि कम्माण ट्ठिदिवन्धो तुल्लो असखेज्जगुणो। वेदणीयस्स ट्ठिदिवन्धो असखेज्जगुणो। वही पृ० २४५।

तावन्मात्रे बन्धे समतीते वेदनीयाधस्तनात् ।
तीसियघातित्रिका असख्यगुणहीनका भवन्ति ॥ २३५ ॥

स० टी०—तत सख्यातसहस्रेषु पल्यासख्यातबहुभागमात्रेषु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु मोहतीसिय-वीसियवेदनीयाना पल्यासख्यातैकभागमात्रा स्थितिबन्धा जायन्ते । तत्र सर्वत स्तोक मोहस्थितिबन्ध ततोऽसख्येयगुणो वीसियस्थितिबन्ध ततोऽसख्येयगुणो घातित्रयस्थितिबन्ध ततोऽसख्येयगुणो वेदनीयस्थितिबन्ध । अत्रापि विशुद्धिमाहात्म्यात्सातवेदनीयस्थितिबन्धस्याधोऽसख्येयगुणहीनो घातित्रयस्थितिबन्धो ज्ञातव्य इति क्रमान्तर ज्ञेयम् ॥२३५॥

दूसरे क्रमका निर्देश—

स० च०—तातै परै पल्यका असख्यात बहुभागमात्र आयाम धरैं ऐसे सख्यात हजार स्थितिबन्धापसरण गए तीनोका पल्यका असख्यातवा भागमात्र स्थितिबन्ध हो है। तहा स्तोक मोहका तातै असख्यातगुणा वीसीयनिका तातै असख्यातगुणा तीसीयनिविषै तीन घातियनिका तातै असख्यातगुणा वेदनीयका स्थितिबन्ध हो हे। इहा विशुद्धता विशेषतै सातावेदनीयतै तीन घातिया कर्मनिका स्थितिबन्ध घटता भया ॥२३५॥

पुनरपि क्रमभेदप्रदर्शनार्थमिदमाह—

तेत्तियमेत्ते वंधे समतीदे वीसियाण हेट्ठादु ।
तीसियघादितियाओ असखगुणहीणया होंति ॥ २३६ ॥

तावन्मात्रे बन्धे समतीते वीसियानामधस्तात् ।
तीसियघातित्रिका असख्यगुणहीनका भवन्ति ॥ २३६ ॥

स० टी०—तत पर सख्यातसहस्रेषु पल्यासख्यातबहुभागमात्रेषु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु मोहतीसियवीसियवेदनीयाना स्थितिबन्धा पल्यासख्यातैकभागमात्रा जायन्ते। तत्र सर्वत स्तोक मोहस्थितिबन्ध, ततोऽसख्येयगुणस्तीसियस्थितिबन्ध । ततोऽसख्येयगुणो वीसियस्थितिबन्ध तत स्वचतुर्थभागेनाधिको वेदनीयस्थितिबन्ध । वीसियस्थितीनामीदृशे स्थितिबन्धे प तीसियस्थितीना कीदृश इति त्रैराशिकसिद्धोऽय प ३ वेदनीय-
a ५   a ५ २
स्थितिबन्ध, अत्रापि विशुद्धिविशेषस्थितिबन्धनस्थितिबन्धासरणवशाद्वेदनीयस्थितिबन्धस्याध सख्यातभागहीनो वीसियस्थितिबन्धो जात । तस्याधोऽसख्येयगुणहीनो घातित्रयस्थितिबन्धो जातस्तस्याप्यधोऽसख्येयगुणहीनो मोहस्थितिबन्धो जात इतीदृश क्रमभेदो ज्ञातव्य ॥२३६॥

क्रमविशेषका कथन—

स० च०—तातै परैं पल्यका असख्यात बहुभागमात्र आयाम धरै सख्यात हजार स्थितिबन्ध गए मोहादिकका पल्यका असख्यातवा भागमात्र स्थितिबन्ध हो है। तहा स्तोक मोहका तातै असख्यातगुणा तीसियनिका तातै असख्यातगुणा बीसीयनिका तातै ड्योढा वेदनीयका स्थितिबन्ध जानना। इहाँ विशुद्धताविशेषतैं ऐसा क्रम भया ॥२३६॥

---

१ तिण्हपि कम्माण ट्ठिदिबन्धस्स वेदणीयस्स ट्ठिदिबन्धादो आसरन्तस्स णत्थि वियप्पो सखेज्जगुणहीणो वा विसेसहीणो वा एक्कसराहेण असखेज्जगुणहीणो। वही पृ० २४६।

अथ इदमेव क्रमकरणमुपसहरन्निदमाह—

तक्काले वेयणिय णामागोदादु साहियं होदि ।
इदि मोहतीसवीसियवेयणियाण कमो जादो ।। २३७ ।।

तत्काले वेदनीयं नामगोत्रतः साधिक भवति ।
इति मोहतीसवीसियवेदेनीयानां क्रमो जात ।।२३७।।

स० टी०—तस्मिन् मोहतीसियवीसियवेदनीयाना स्थितिबन्धक्रमकरणकाले वेदनीयस्थितिबन्धो नामगोत्रस्यितिबन्धात्साधिको भवति । अत परमनेनैव क्रमेणान्तर्मुहूर्तपर्यंत सख्यातसहस्रेषु पल्यासख्यातबहुभागमात्रेषु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु मोहतीसियवीसियवेदनीयाना स्वस्वयोग्यपल्यासख्यातैकभागमात्रा स्थितिबन्धा क्रमकरणावसाने जायन्ते । पूर्वसूचितसख्यातवषसहस्रमात्रस्थितिबन्धोऽत्रावसरे न सभवति । अन्तरकरणात्परमेव तस्य सभव इति क्रमकरणावसाने प्रतिपादित । सर्वेषा कर्मणा स्थितिसत्त्व सख्यातसहस्रमात्रस्थितिकाण्डकघातसद्भावेऽप्यन्त कोटीकोटिप्रमाणमेवोपशमश्रेण्या दीर्घस्थितिकाण्डकघातासभवात् । एवमनुभागकाण्डकघातगुणश्रेणिनिर्जरादिविधानमप्यस्मिन्नवसरे प्रवर्तत एवेति ज्ञातव्यम् ।।२३७।।

क्रमकरणका उपसहार—

स० च०—तीहिं क्रमकरण कालविषै नाम गोत्रकेतैं वेदनीयका साधिक बन्ध भया सो इस ही अनुक्रम लीए अतर्मुहूर्त पर्यंत पल्यका असख्यात बहुभागमात्र आयाम धरै सख्यात हजार स्थितिबन्धापसरण भए क्रमकरण कालका अन्त समयविषैं अपने अपने योग्य पल्यका असख्यातवा भागमात्र बन्ध हो है । सख्यात हजार वर्षमात्र स्थितिबन्ध इहा न हो है । अन्तरकरणतैं परै होगा । बहुरि सर्व कर्मनिका स्थितिसत्त्व इहा सख्यात हजार स्थितिकाडक घात होतैं भी अत कोटाकोटी सागर प्रमाण ही रहै है, जातैं उपशम श्रेणिविषैं स्थितिकाडक आयाम दीर्घ नाही है । स्तोक प्रमाण लीए हैं ।।२३७।।

अथ क्रमकरणावसाने सभवक्रियान्तरप्रदर्शनार्थमाह—

तीदे बंधसहस्से पल्लासखेज्जय तु ठिदिबंधो ।
तत्थ असखेज्जाण उदीरणा समयपबद्धाण[1] ।। २३८ ।।

अतीते बन्धसहस्रे पल्यासंख्येय तु स्थितिबन्धः ।
तत्र असख्येयानां उदीरणा समयप्रबद्धानाम् ।।२३८।।

स० टी०—मोहतीसियवीसियवेदनीयाना स्थितिबन्धक्रमप्रारम्भात्पर सख्यातसहस्रेपु स्थितिबन्धापसर-

---

१ तदो अण्णो ट्ठिदिबधो । एक्कसगहेण मोहणीयस्स ट्ठिदिबधो थोवो । णाणावरणीय-दसणावरणीय अतराइयाण तिण्ह पि कम्माण ट्ठिदिबधो तुल्लो असखेज्जगुणो । णामा-गोदाण ट्ठिदिबधो असखेज्जगुणो । वेदणीयस्स ट्ठिदिबधो विसेसाहिओ । वही पृ० २४७ ।

२ एदेण अप्पाबहुअविहिणा सखेज्जाणि ट्ठिदिबधसहस्साणि कादूण जाणि पुण कम्माणि बज्झति ताणि पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो । तदो असखेज्जाण समयपबद्धाणमुदीरणा । वही पृ० २४८-२४९ ।

णेषु अतीतेषु यदा क्रमकरणावसाने मोहादीनां पल्यासंख्यातैकभागमात्रः स्थितिबन्धो जातः तदाऽसंख्येयसमयप्रबद्धानामुदीरणा भवति। इतः पूर्वमपकृष्टद्रव्यस्य पल्यासंख्यातभागखण्डितस्य बहुभागद्रव्यमुपरितनस्थितौ निक्षिप्य तदेकभागं पुनरसंख्यातलोकेन खण्डयित्वा तद्बहुभागद्रव्यं गुणश्रेण्यायामे निक्षिप्य तदेकभागमुदयावल्यां निक्षिपतीति समयप्रबद्धासंख्यातैकभागमात्रमेवोदीरणाद्रव्यम्। इदानीं पुनरसंख्यातलोकभागहारं त्यक्त्वा पल्यासंख्यातभागेन खण्डितैकभागमुदयावल्यां निक्षिपतीति असंख्येयसमयप्रबद्धमात्रमुदीरणाद्रव्यमित्यर्थः ।२३८॥

क्रमकरणके अन्तमे उदीरणा विशेषका निर्देश—

स० च०—क्रमकरण प्रारम्भका समयतैं लगाय संख्यात हजार स्थितिबन्धापसरण गएँ जहाँ क्रमकरणका अन्तविषै मोहादिकनिका पल्यका असंख्यातवा भागमात्र स्थितिबन्ध भया तहाँ असंख्यात समयप्रबद्धनिकी उदीरणा हो है। इहाँतै पहिले गुणश्रेणिके अर्थि अपकर्षण कीया द्रव्यकौ पल्यका असंख्यातवाँ भागका भाग देइ तहाँ बहुभाग उपरितन स्थितिविषै निक्षेपण करि अवशेष एक भागकौ असंख्यात लोकका भाग देइ बहुभाग गुणश्रेणि आयामविषै एक भाग उदयावलीविषै निक्षेपण होतै तहाँ उदयावलीविषै दीया ऐसा जो उदीरणा द्रव्य सो समयप्रबद्धके असंख्यातवे भागमात्र आवै है। बहुरि इहाँतैं लगाय अपकर्षण कीया द्रव्यकौ पल्यका असंख्यातवाँ भागका भाग देइ तहाँ बहुभाग उपरितन स्थितिविषैं निक्षेपणकरि अवशेष एक भागकौ पल्यका असंख्यातवाँ भागका भाग देइ बहुभाग गुणश्रेणि आयामविषै एक भाग उदयावलीविषै दीजिए है। सो इहाँ उदयावलीविषै दीया ऐसा जो उदीरणा द्रव्य सो असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण आवै है ॥२३८॥

ठिदिबंधसहस्सगदे मणदाणा तत्तिये वि ओहिदुगं।
लाभं व पुणो वि सुदं अचक्खु भोगं पुणो चक्खु[1] ॥ २३९ ॥
पुणरवि मदि-परिभोगं पुणरवि विरियं कमेण अणुभागो।
बंधेण देशघादी पल्लासंखं तु ठिदिबंधे[2] ॥ २४० ॥

स्थितिबन्धसहस्रगते मनोदाने तावन्मात्रेऽपि अवधिद्विकम्।
लाभो वा पुनरपि श्रुतं अचक्षुर्भोगं पुनश्चक्षुः ॥ २३९ ॥
पुनरपि मतिपरिभोगं पुनरपि वीर्यं क्रमेण अनुभागः।
बन्धेन देशघाति पल्यासंख्ये तु स्थितिबन्धे ॥ २४० ॥

स० टी०—असंख्यातसमयप्रबद्धोदीरणाप्रारम्भात्परं संख्यातसहस्रेषु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु मनःपर्ययज्ञानावरणीयदानान्तराययोः सर्वघातिस्थानानुभागबन्धं परित्यज्य देशघातिस्पर्धकरूपद्विस्थानानुभाग

1. तदो संखेज्जेसु ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु मणपज्जवणाणावरणीय-दाणंतराइयाणमणुभागो बंधेण देसघादी होइ। तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधेसु गदेसु ओहिणाणावरणीय-ओहिदंसणावरणीयं लाभंतराइयं च बंधेण देसघादिं करेदि। तदो संखेज्जेसु ठिदिबंधेसु गदेसु सुदणाणावरणीयं अचक्खुदंसणावरणीयं भोगंतराइयं च बंधेण देसघादिं करेदि। तदो संखेज्जेसु ठिबंधेसु गदेसु चक्खुदंसणावरणीयं बंधेण देसघादिं करेदि। वही पृ० २४९ से २५१।

2. तदो संखेज्जेसु ठिदिबंधेसु गदेसु आभिणिबोहियणाणावरणीयं परिभोगंतराइयं च बंधेण देसघादिं करेदि। तदो संखेज्जेसु ठिदिबंधेसु गदेसु वीरियंतराइयं बंधेण देसघादिं करेदि। वही पृ० २५१।

बध्नाति । तत पर सख्यातसहस्रेषु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु अवधिज्ञानावरणावधिदर्शनावरणलाभान्तरायाणा देशघातिस्पर्धकद्विस्थानानुभाग बध्नाति । तत पर सख्यातसहस्रेषु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु श्रुतज्ञानावरणाचक्षुर्दर्शनावरणभोगान्तरायाणा देशघातिस्पर्धकद्विस्थानानुभाग बध्नाति । तत पर सख्यातसहस्रेषु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु चक्षुर्दर्शनावरणस्य देशघातिस्पर्धकद्विस्थानानुभाग बध्नाति । तत पर सख्यातसहस्रेषु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु मतिज्ञानावरणोपभोगान्तराययोर्देशघातिस्पर्धकद्विस्थानानुभाग बध्नाति । तत पर सख्यातसहस्रेषु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु वीर्यान्तरायस्य देशघातिस्पर्धकद्विस्थानानुभाग बध्नाति । अस्माद्देशघातिकरणप्रारम्भात्प्रागवस्थाया ससारावस्थाया च सर्वघातिस्पर्धकानुभागमेव बध्नातीत्यर्थ । चतु सज्वलनपुवेदाना देशघातिस्पर्धकानुभागबन्ध कुतो न कथित इति नाशकितव्यम्, सयमासयमग्रहणात्प्रभृति तेषा देशघातिस्पर्धकद्विस्थानानुभागबन्धस्यैव प्रतिसमयमनन्तगुणहान्या वर्तमानत्वात् सत्कर्मानुभाग पुन सर्वघातिस्पर्धकद्विस्थानरूप एव प्रवर्तते, तस्य देशघातिकरणाभावात् । एव देशघातिकरणपर्यवसानेऽपि मोहतीसियवीसियवेदनीयाना स्थितिबन्ध स्वस्वयोग्यपल्यासख्यातभागमात्रो भवति ॥ २३९–२४० ॥

स० च०—क्रमकरण कहिए अब देशघातीकरण कहै है सो पूर्वें प्रकृतिनिका सर्वघाती स्पर्धकरूप अनुभाग बाध्या था अब देशघाती करणतै लगाय दारुलता समान द्विस्थानगत देशघाती स्पर्धकरूप ही अनुभागकौ बाधै है। तहा असख्यात समयप्रबद्ध उदीरणाका प्रारम्भतै परै सख्यात हजार स्थितिबन्धापसरण गए मन पर्यय ज्ञानावरण दानातरायका देशघाती बन्ध हो है। तातै परै तितने तितने ही स्थितिबन्धापसरण गए क्रमतै अवधिज्ञानावरण अवधिदर्शनावरण लाभान्तरायनिका अर श्रुतज्ञानावरण अचक्षुदर्शनावरण भोगान्तरायका चक्षुर्दर्शनावरणका अर मतिज्ञानावरण उपभोगान्तरायका अर वीर्यान्तरायका देशघाती बन्ध हो है। इहा प्रश्न—

जो सज्वलनचतुष्क पुरुषवेदनिका देशघातिकरण इहा क्यो न कह्या ? ताका समाधान—जो तिनिका अनुभागबन्ध सयमासयमका ग्रहण समयतै लगाय समय-समय अनन्तगुणा घटता-क्रम लीए द्विस्थानगत हो है तातै इहा कीया न कह्या। बहुरि तिनिका सत्तारूप अनुभाग-सर्वघाती वर्तै ही है। बहुरि देशघातीकरणका अन्तविषै भी मोहादिकनिका स्थितिबन्ध अपने योग्य पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र ही है ॥ २३९–२४० ॥

अथान्तरकरणनिरूपणार्थं गाथाचतुष्टयमाह—

तो देसघातिकरणादुवरिं तु गदेसु तत्तियपदेसु ।
इगिवीसमोहणीयाणंतरकरणं करेदीदि[1] ॥ २४१ ॥

अतो देशघातिकरणादुपरि तु गतेषु तावत्कपदेषु ।
एकविंशमोहनीयानामन्तरकरण करोतीति ॥ २४१ ॥

स० टी०—ततो देशघातिकरणस्योपरि सख्यातसहस्रेषु स्थितिबन्धापसरणेषु गतेष्वनन्तानुबन्धिवर्जितद्वादशकषायाणा नवनोकषायाणा च चारित्रमोहप्रकृतीना मिलित्वैकविंशतेरन्तरकरण करोत्यनिवृत्तिकरणगुणस्थानवर्त्युपशामक ॥ २४१ ॥

---

१ तदो देशघादिकरणादो सखेज्जेसु ठिदिबधसहस्सेसु गदेसु अतरकरण करेदि । बारसण्ह कसायाण णवण्ह णोकसायवेदणीयाण च, णत्थि अण्णस्स कम्मस्स अतरकरण । वही पृ० २५२-२५३ ।

स० च०—तिस देशघाति करणतैं उपरि संख्यात हजार स्थितिबन्ध गए, इक्कीस मोह-नीयकी प्रकृतिनिका अन्तरकरण करै है। ऊपरिके वा नीचेके निषेक छोड बीचिके विवक्षित केते इकनिका अभाव करना सो अन्तरकरण जानना ॥ २४१ ॥

संजलणाणं एक्कं वेदाणेक्कं उदेदि तं दोण्हं।
सेसाणं पढमट्ठिदिं ठवेदि अंतोमुहुत्त आवलियं ॥ २४२ ॥

सज्वलनानामेकं वेदानामेकं उदेति तत् द्वयोः।
शेषाणां प्रथमस्थितिं स्थापयति अंतर्मुहूर्तमावलिकाम् ॥ २४२ ॥

स० टी०—सज्वलनक्रोधमानमायालोभाना मध्ये एकतम कषाय स्त्रीपुनपुंसकवेदाना मैकतमो वेद उदेति। एकतमकषायवेदोदयेन श्रेणिमारोहति सयत इत्यर्थ । ततस्तयोरुदयमानयो कषायवेदयो प्रथम-स्थितिमन्तर्मुहूर्तमात्री शेषाणामुदयरहिताना कषायवेदाना प्रथमस्थितिमवलीमात्री स्थापयत्यन्तरकरण-प्रारम्भक । तावन्मात्रनिषेकान् मुक्त्वा तदुपरितननिषेकाणामन्तर करोतीत्यर्थ ॥ २४२ ॥

स० च०—सज्वलन क्रोध मान माया लोभविषै कोई एकका अर स्त्री पुरुष नपुसक वेद-निविषै कोई एकका उदय सहित श्रेणी चढै तिन उदयरूप दोय प्रकृतिनिकी तौ प्रथमस्थिति अन्तर्मुहूर्त्त स्थापै है। अर अवशेष उगणीस प्रकृतिनिकी प्रथम स्थिति आवलीमात्र स्थापै है। इस प्रथम स्थितिप्रमाण निषेकनिकौ नीचै छोडि ऊपरिके निषेकनिका अन्तर करै है ऐसा अर्थ जानना ॥ २४२ ॥

उवरि समं उक्कीरइ हेट्ठा वि समं तु मज्झिमपमाणं।
तदुपरि पढमठिदीदो संखेज्जगुणं हवे णियमा[2] ॥ २४३ ॥

उपरि समं उत्कीर्यते अधस्तनापि सम तु मध्यमप्रमाणं।
तदुपरि प्रथमस्थितित सख्येयगुण भवेत् नियमात् ॥ २४३ ॥

स० टी०—अन्तरायामस्याग्रनिषेका उदयानुदयप्रकृतीना सदृशा एवोत्कीर्यन्ते, अन्तरोपरितनद्वितीय-स्थितिप्रथमनिषेकाणा सदृशत्वात्। अन्तरायामस्याधस्तनचरमनिषेका उदयरहितप्रकृतीनामन्योन्य सदृशा एव। उदयवत्प्रकृत्योश्च परस्पर सदृशा एव। उदयमानानुदयप्रकृत्योस्तु विसदृशा अन्तर्मुहूर्तावलिमात्रप्रथमस्थिति-वैषम्यवशात्। एव विधान्तरायामप्रमाण च ताभ्या द्वाभ्यामन्तर्मुहूर्तावलिमात्रीभ्या प्रथमस्थितिभ्या सख्यात-गुणितमेव भवति। उदयमानप्रकृत्योर्गुणश्रेणिशीर्षनिषेकान् तत सख्येयगुणोपरितनस्थितिनिषेकाश्चान्तर्मुहूर्त-मात्रान् गृहीत्वान्तर करोतीत्यर्थ ॥२४३॥

स० च०—अन्तरायामका अन्त निषेकतै उपरिवर्ती जे निषेक ते उदयरूप वा अनुदय रूप सर्व प्रकृतिनिका समान है तातै अन्तरायामके उपरि द्वितीय स्थितिका प्रथम निषेक सव

---

१ ज संजलण वेदयदि, ज च वेद वेदयदि एदेसिं दोण्हं कम्माण पढमट्ठिदीओ अतोमुहुत्तगाओ ठवेदूण अतरकरण करेदि। पढमठिदीदो संखेज्जगुणाओ ठिदीओ आगाइदाओ अंतरट्ठं। सेसाणमेक्कार-सण्हं कसायाणमट्ठण्हं च णोकसायवेदणीयाणमुदयावलियं मोत्तूण अंतर करेदि। वही पृ० २५३-२५४।

२ उवरि समठिदिअंतर, हेट्ठा विसमठिदिअंतर। वही पृ० २५४।

प्रकृतिनिका तहाँ एक कालवर्ती होनेतैं समान है। बहुरि अन्तरायामका प्रथम निषेकके नीचैं जो निषेक सो उदय प्रकृतिनिका परस्पर समान है। वा अनुदय प्रकृतिनिका परस्पर समान है अर उदय अनुदय प्रकृतिनिका समान नाही। जातैं इनके प्रथम स्थितिविषैं समान नाही। जो प्रथम स्थितिका अन्तका निषेक सोई अन्तरायामका नीचेका निषेक है। बहुरि अन्तर्मुहूर्त वा आवलीमात्र जो उदय अनुदय प्रकृतिनिका प्रथम स्थिति तातैं सख्यातगुणा ऐसा अन्तर्मुहूर्तमात्र अन्तरायाम है। इतने निषेकनिका अभाव करिए है। तहाँ उदयमान प्रकृतिनिकैं तौ गुणश्रेणि शीषके निषेक अर तिनतैं सख्यात गुणे उपरितन स्थितिके निषेक तिनकौं ग्रहि अन्तर करै है। अर अनुदय प्रकृतिनिका अवशेष इहाँ पाइए जो गुणश्रेणी आयाम अर तिनतैं सख्यातगुणे उपरितन स्थितिके निषेक तिनकौ ग्रहकरि अन्तर करै है ॥२४३॥

अतरपढमे अण्णो ठिदिबधो ठिदिरसाण खंडो य।
एयट्ठिदिखंडुक्कीरणकाले अतरसमत्ती[1] ॥ २४४ ॥

अन्तरप्रथमे अन्य स्थितिबन्ध स्थितिरसयो. खण्डश्च।
एकस्थितिखण्डोत्करणकाले अन्तरसमाप्ति ॥२४४॥

स० टी—अन्तरकरणप्रथमसमये अन्य एव स्थितिबन्ध प्राक्तनस्थितिबन्धादसख्यातगुणहीन, स्थितिखण्ड चान्यदेव प्राक्तनस्थितिखण्डाद्विशेषहीन अन्यदेवानुभागखण्ड च प्राक्तनानुभागखण्डादनन्तगुणहीन प्रारम्यते। एवविधैकस्थितिखण्डोत्करणकालसमेनान्तर्मुहूर्तेनान्तरसमाप्तिर्भवति। तत्समाप्तौ च प्रकृतसमस्थितिखण्डोत्करण सख्यातसहस्रानुभागखण्डोत्करणानि च युगपत् समाप्यन्त इत्यर्थ ॥ २४४।

स० च०—अन्तर करणका प्रथम समयविषैं पूर्व स्थितिबन्धतैं असख्यातगुणा घटता ऐसा और ही स्थितिबध अर पूर्व स्थितिकाडकतैं किछू घटता ऐसा और ही स्थिति काडक अर पूर्व अनुभागकाडकतैं अनन्तगुणा घटता ऐसा और ही अनुभागकाडकका प्रारम्भ हो है। तहाँ एक स्थितिकाडकोत्करणका जेता काल तितने कालकरि अन्तरकरण करिए है। ताको समाप्ति होतैं एक स्थितिकाडक घात भया। तीहिविषैं सख्यात हजार अनुभागकाडकनिका घात भया ऐसा अर्थ जानना ॥२४४॥

अथान्तरोत्कीर्णद्रव्यनिक्षेपनिरूपणार्थं गाथात्रयमाह—

अतरहेदुक्कीरिददव्व तं अतरम्हि ण य देदि।
बधताणतरज बधाण विदियगे देदि[2] ॥ २४५ ॥

---

१ जाधे अतरमुक्कीरदि ताधे अण्णो ट्ठिदिबधो पवद्धो अण्ण ट्ठिदिखडयमण्णमणुभागखडय च गेण्हदि। अणुभागखडयमहस्सेसु गदेसु अण्णमणुभागखडय ते चेव ट्ठिदिखडय सो चेव ट्ठिदिबधो अन्तरस्स उक्कीरणद्धा च समग पुण्णाणि। वही पृ० २५५-२५६।

२ जे पुण कम्मना वज्झमाणा चेव केवल, ण वेदिज्जमाणा जहा परोदयेण विवक्खाए पुरिसवेदो अण्णदरसजलणो वा, तेमिमतरट्ठिदीसु उक्कीरिज्जमाणस्स पदेसागस्स अप्पणो विदियट्ठिदीए उक्कड्डणावसेण सचारो। मोदयाण वज्झमाणाण पढमठिदीसु अणुदयाण वज्झमाणाण विदियठिदीए च सचारो ण विरुद्धो त्ति। जयध० पु० १३, पृ० १६०।

अन्तरहेतूत्कीरितद्रव्य तदन्तरे न च ददाति ।
वध्यमानानामन्तरज बन्धाना द्वितीयके ददाति ॥२४५॥

स० टी०—अन्तरनिमित्तमन्तरायामे उत्कीर्णं द्रव्यमन्तरायामस्थितिषु नैव निक्षिपति । पुन तेषु वध्यमानप्रकृतीना स्त्रीनपुसकवेदयोरन्यतरोदयेन सज्वलनकषायाणामन्यतमोदयेन च श्रेणिमारूढस्य पुवेदचतुःसज्वलनानामन्तरायामे उत्कीर्णं द्रव्य तात्कालिके स्वबन्धे आबाधा मुक्त्वा द्वितीयस्थितिप्रथमनिषेकादारभ्य चरमपर्यन्त यथायोग्यमुत्कर्षणवशेन निक्षिपति । उदीयमानेतर (वेद) कषाययो प्रथमस्थितौ चापकर्षणवशेन निक्षिपतीत्यय विशेष सिद्धान्तानुसारेण ज्ञातव्य ॥ २४५ ॥

स० च०—अतरके निमित्त उत्कीर्ण कीया द्रव्यकौ अतरायामविषै न दे है। भावार्थ—अतरायामके निषेकनिका द्रव्यकौ तहा अभावकरि कोई अतरायामरूप निषेकनिविषै ही न मिलाइए है। तौ कहा मिलाइए है सो कहै हैं—

जिनका उदय न पाइए केवल बन्ध ही पाइए है ऐसी जे स्त्री वा नपुसक वेद अर एक कोई कषाय सहित श्रेणी चढनेवालेकै पुरुषवेद अर तीन सज्वलन कषाय ए च्यारि प्रकृति तिनका द्रव्यकौ उत्कर्षणकरि तौ तत्काल जो अपना तिसही प्रकृतिका जो बन्ध भया ताकी आबाधाकौ छोडि ताहीका द्वितीय स्थितिकौ प्रथम निषेकतै लगाय यथायोग्य अत पर्यन्त निक्षेपण करै है अर अपकर्षणकरि उदयरूप जो अन्य कषाय ताकी प्रथम स्थितिविषै निक्षेपण करै है ॥२४५॥

उदयिल्लाणतरज सगपढमे देदि बंधविदिये च[1] ।
उभयाणतरदव्व पढमे विदिये च संछुहदि[2] ॥ २४६ ॥

औदयिकानामन्तरज स्वकप्रथमे ददाति बन्धद्वितीये च ।
उभयानामन्तरद्रव्य प्रथमे द्वितीये च सक्षिपति ॥२४६॥

स० टी०—केवलमुदयमानयो स्त्रीनपुसकवेदयोरन्तरायामे उत्कीर्णं द्रव्य स्वस्वप्रथमस्थितावपकृष्य निक्षिपति । बध्यमानेतर (वेद) कषायाणा द्वितीयस्थितौ चाप्कृष्य सक्रामयतीत्यय विशेषोऽपि राद्धान्तोक्त सप्रधार्य । पुनर्बन्धोदयवतो पुवेदान्यतमकषाययोरन्तरायामे उत्कीर्णं द्रव्यमपकृष्योदयमानप्रकृतिप्रथमस्थितौ निक्षिपति बध्यमानप्रकृतिद्वितीयस्थितौ चोत्कृष्य निक्षिपति। अत्रापि परप्रकृतिप्रथमद्वितीययो स्थित्योरपकर्षणोत्कर्षणवशेन सक्रमयतीत्ययमपि विशेष कृतान्तसिद्धो बोद्धव्य ॥ २४६ ॥

स० च०—जिनका बन्ध न पाइए केवल उदय ही पाइए ऐसा स्त्रीवेद वा नपुसकवेद

---

१ जे कम्मसा ण बज्झति वेदिज्जति च तेसिमुक्कीरमाणय पदेसग्ग अप्पणो पढमट्ठिदीए च देदि। बज्झमाणीण पयडीणमणुक्कीरमाणीसु च ट्ठिदीसु देदि। क, चु, जयध, पु० १३, पृ० २४८। जे पुण कम्मसा ण बज्झति वेदिज्जति च, जहा इत्थिवेदो णवुसयवेदो वा तेसिमतरट्ठिदिपदेसग्ग घेत्तूण अप्पप्पणो पढमट्ठिदीए च ओकड्डणासकमेण देदि, उदइल्लाण सजलणाण पढमट्ठिदीए च ओकड्डण-परपयडिसकमेहि समयाविरोहेण णिक्खिवदि, विदयट्ठिदीए च बधम्मि उक्कड्डियूण णिक्खवदि। जयध, पु, १३, पृ० २६०।

२ अतर करेमाणस्स जे कम्मसा बज्झति वेदिज्जति तेसिं कम्माणमतरट्ठिदीओ उक्कीरेंतो तासि ट्ठिदीण पदेसग्ग बधपयडीण पढमट्ठिदीए च देदि विदियट्ठिदीए च देदि। क, चु, जयध, पु १३, पृ० २५६।

प्रकृतिनिका तहाँ एक कालवर्ती होनेतै समान है। बहुरि अन्तरायामका प्रथम निषेकके नीचैं जो निषेक सो उदय प्रकृतिनिका परस्पर समान है। वा अनुदय प्रकृतिनिका परस्पर समान है अर उदय अनुदय प्रकृतिनिका समान नाही। जातै इनके प्रथम स्थितिविषै समान नाही। जो प्रथम स्थितिका अन्तका निषेक सोई अन्तरायामका नीचेका निषेक है। बहुरि अन्तर्मुहूर्त वा आवलीमात्र जो उदय अनुदय प्रकृतिनिका प्रथम स्थिति तातै सख्यातगुणा ऐसा अन्तर्मुहूर्तमात्र अन्तरायाम है। इतने निषेकनिका अभाव करिए है। तहाँ उदयमान प्रकृतिनिकै तौ गुणश्रेणि शीषके निषेक अर तिनतै सख्यात गुणे उपरितन स्थितिके निषेक तिनकी ग्रहि अन्तर करै है। अर अनुदय प्रकृतिनिका अवशेष इहाँ पाइए जो गुणश्रेणी आयाम अर तिनतै सख्यातगुणे उपरितन स्थितिके निषेक तिनकी ग्रहकरि अन्तर करै है ॥२४३॥

अतरपढमे अण्णो ठिदिबधो ठिदिरसाण खंडो य।
एयट्ठिदिख डुक्कीरणकाले अतरसमत्ती[1] ॥ २४४ ॥

अन्तरप्रथमे अन्य स्थितिबन्ध स्थितिरसयो. खण्डश्च।
एकस्थितिखण्डोत्करणकाले अन्तरसमाप्ति ॥२४४॥

स० टी—अन्तरकरणप्रथमसमये अन्य एव स्थितिबन्ध प्राक्तनस्थितिबन्धादसख्यातगुणहीन, स्थिति-खण्ड चान्यदेव प्राक्तनस्थितिखण्डाद्विशेषहीन अन्यदेवानुभागखण्ड च प्राक्तनानुभागखण्डादनन्तगुणहीन प्रारभ्यते। एवविधैकस्थितिखण्डोत्करणकालसमेनान्तर्मुहूर्तेनान्तरसमाप्तिर्भवति। तत्समाप्तौ च प्रकृतसमस्थितिखण्डोत्करण सख्यातसहस्रानुभागखण्डोत्करणानि च युगपत् समाप्यन्त इत्यर्थ ॥ २४४।

स० च०—अन्तर करणका प्रथम समयविषै पूर्व स्थितिबन्धतै असख्यातगुणा घटता ऐसा और ही स्थितिबध अर पूर्व स्थितिकाडकतै किछू घटता ऐसा और ही स्थिति काडक अर पूर्व अनुभागकाडकतै अनन्तगुणा घटता ऐसा और ही अनुभागकाडकका प्रारम्भ हो है। तहाँ एक स्थितिकाडकोत्करणका जेता काल तितने कालकरि अन्तरकरण करिए है। ताको समाप्ति होतैं एक स्थितिकाडक घात भया। तीहिंविषै सख्यात हजार अनुभागकाडकनिका घात भया ऐसा अर्थ जानना ॥२४४॥

अथान्तरोत्कीर्णद्रव्यनिक्षेपनिरूपणार्थं गाथात्रयमाह—

अंतरहेदुक्कीरिददव्व तं अतरम्हि ण य देदि।
बधताणतरज बधाण विदियगे देदि[2] ॥ २४५ ॥

---

१ जाधे अतरमुक्कीरदि ताधे अण्णो ट्ठिदिबधो पबद्धो अण्ण ट्ठिदिखडयमण्णमणुभागखडय च गेण्हदि। अणुभागखडयसहस्सेसु गदेसु अण्णमणुभागखडय ते चेव ट्ठिदिखडय सो चेव ट्ठिदिबधो अन्तरस्स उक्कीरणद्धा च समग पुण्णाणि। वही पृ० २५५-२५६।

२ जे पुण कम्मसा बज्झमाणा चेव केवल, ण वेदिज्जमाणा जहा परोदयेण विवक्खाए पुरिसवेदो अण्णदरसजलणो वा, तेसिमतरट्ठिदीसु उक्कीरिज्जमाणस्स पदेसागस्स अप्पणो विदियट्ठिदीए उक्कड्डणावसेण सचारो। सोदयाण बज्झमाणाण पढमठिदीसु अणुदयाण बज्झमाणाण विदियठिदीए च सचारो ण विरुद्धो त्ति। जयध० पु० १३, पृ० १६०।

अन्तरहेतूत्कीरितद्रव्य तदन्तरे न च ददाति ।
बध्यमानानामन्तरज बन्धाना द्वितीयके ददाति ॥२४५॥

स० टी०—अन्तरनिमित्तमन्तरायामे उत्कीर्णं द्रव्यमन्तरायामस्थितिषु नैव निक्षिपति । पुन केवलबध्यमानप्रकृतीना स्त्रीनपुसकवेदयोरन्यतरोदयेन सज्वलनकषायाणामन्यतमोदयेन च श्रेणिमारूढस्य पुंवेदशेषत्रिसज्वलनानामन्तरायामे उत्कीर्णं द्रव्य तात्कालिके स्वबन्धे आबाधा मुक्त्वा द्वितीयस्थितिप्रथमनिषेकादारभ्य चरमपर्यंन्त यथायोग्यमुत्कर्षणवशेन निक्षिपति । उदीयमानेतर (वेद) कषाययो प्रथमस्थितौ चापकर्षणवशेन निक्षिपतीत्यय विशेष सिद्धान्तानुसारेण ज्ञातव्य ॥ २४५ ॥

स० च०—अतरके निमित्त उत्कीर्ण कीया द्रव्यको अतरायामविषै न दे है । भावार्थ—अतरायामके निषेकनिका द्रव्यको तहा अभावकरि कोई अतरायामरूप निषेकनिविषै ही न मिलाइए है । तौ कहा मिलाइए है सो कहै है—

जिनका उदय न पाइए केवल बन्ध ही पाइए है ऐसी जे स्त्री वा नपुसक वेद अर एक कोई कषाय सहित श्रेणी चढनेवालेकै पुरुषवेद अर तीन सज्वलन कषाय ए च्यारि प्रकृति तिनका द्रव्यकौ उत्कर्षणकरि तौ तत्काल जो अपना तिसही प्रकृतिका जो बन्ध भया ताकी आबाधाकौ छोडि ताहीका द्वितीय स्थितिकौ प्रथम निषेकतै लगाय यथायोग्य अत पर्यन्त निक्षेपण करै है अर अपकर्षणकरि उदयरूप जो अन्य कषाय ताकी प्रथम स्थितिविषै निक्षेपण करै है ॥२४५॥

उदयिल्लाणतरज सगपढमे देदि बधविदिये च[1] ।
उभयाणतरदव्व पढमे विदिये च संछुहदि[2] ॥ २४६ ॥

औदयिकानामन्तरज स्वकप्रथमे ददाति बन्धद्वितीये च ।
उभयानामन्तरद्रव्य प्रथमे द्वितीये च सक्षिपति ॥२४६॥

स० टी०—केवलमुदयमानयो स्त्रीनपुसकवेदयोरन्तरायामे उत्कीर्णं द्रव्य स्वस्वप्रथमस्थितावपकृष्य निक्षिपति । बध्यमानेतर (वेद) कषायाणा द्वितीयस्थितौ चात्कृष्य सक्रामयतीत्यय विशेषोऽपि राद्धान्तोक्त सप्रधार्य । पुनर्बन्धोदयवतो पुवेदान्यतमकषाययोरन्तरायामे उत्कीर्णं द्रव्यमपकृष्योदयमानप्रकृतिप्रथमस्थितौ निक्षिपति बध्यमानप्रकृतिद्वितीयस्थितौ चोत्कृष्य निक्षिपति । अत्रापि परप्रकृतिप्रथमद्वितीययो स्थित्योरपकर्षणोत्कर्षणवशेन सक्रमयतीत्ययमपि विशेष कृतान्तसिद्धो बोद्धव्य ॥ २४६ ॥

स० च०—जिनका बन्ध न पाइए केवल उदय ही पाइए ऐसा स्त्रीवेद वा नपुसकवेद

---

१ जे कम्मसा ण बज्झति वेदिज्जति च तेसिमुक्कीरमाणय पदेसग्ग अप्पणो पढमट्ठिदीए च देदि । बज्झमाणीण पयडीणमणुक्कीरमाणीसु च ट्ठिदीसु देदि । क, चु, जयध, पु० १३, पृ० २४८ । जे पुण कम्मसा ण बज्झति वेदिज्जति च, जहा इत्थिवेदो णवुसयवेदो वा तेसिमतरठिठदिपदेसग्ग घेत्तूण अप्पणपणो पढमट्ठिदीए च ओकड्डणासकमेण देदि, उदइल्लाण सजलणाण पढमट्ठिदीए च ओकड्डण-परपयडिसकमेहि समयाविरोहेण णिक्खिवदि, विदयट्ठिदीए च बधम्मि उक्कड्डियूण णिक्खवदि । जयध, पु, १३, पृ० २६० ।

२ अतर करेमाणस्स जे कम्मसा बज्झति वेदिज्जति तेसि कम्माणमतरट्ठिदीओ उक्कीरितो तासि ट्ठिदीण पदेसग्ग बधपयडीण पढमट्ठिदीए च देदि विदियट्ठिदीए च देदि । क, चु, जयध, पु १३, पृ० २५६ ।

प्रकृतिनिका तहाँ एक कालवर्ती होनेतैं समान है। बहुरि अन्तरायामका प्रथम निषेकके नीचैं जो निषेक सो उदय प्रकृतिनिका परस्पर समान है। वा अनुदय प्रकृतिनिका परस्पर समान है अर उदय अनुदय प्रकृतिनिका समान नाहीं। जातै इनके प्रथम स्थितिविषै समान नाहीं। जो प्रथम स्थितिका अन्तका निषेक सोई अन्तरायामका नीचेका निषेक है। बहुरि अन्तर्मुहूर्त वा आवलीमात्र जो उदय अनुदय प्रकृतिनिका प्रथम स्थिति तातै संख्यातगुणा ऐसा अन्तर्मुहूर्तमात्र अन्तरायाम है। इतने निषेकनिका अभाव करिए है। तहाँ उदयमान प्रकृतिनिकै तौ गुणश्रेणि शीर्षके निषेक अर तिनतैं संख्यात गुणे उपरितन स्थितिके निषेक तिनकौ ग्रहि अन्तर करै है। अर अनुदय प्रकृतिनिका अवशेष इहाँ पाइए जो गुणश्रेणी आयाम अर तिनतै संख्यातगुणे उपरितन स्थितिके निषेक तिनकौ ग्रहकरि अन्तर करै है ॥२४३॥

अंतरपढमे अण्णो ठिदिबंधो ठिदिरसाण खंडो य।
एयट्ठिदिखंडुक्कीरणकाले अंतरसमत्ती[1] ॥ २४४ ॥

अन्तरप्रथमे अन्य स्थितिबन्ध स्थितिरसयो खण्डश्च।
एकस्थितिखण्डोत्करणकाले अन्तरसमाप्ति ॥२४४॥

स० टी—अन्तरकरणप्रथमसमये अन्य एव स्थितिबन्ध प्राक्तनस्थितिबन्धादसंख्यातगुणहीन, स्थिति-खण्ड चान्यदेव प्राक्तनस्थितिखण्डाद्विशेषहीन अन्यदेवानुभागखण्ड च प्राक्तनानुभागखण्डादनन्तगुणहीन प्रारभ्यते। एवविधैकस्थितिखण्डोत्करणकालसमेनान्तर्मुहूर्तेनान्तरसमाप्तिर्भवति। तत्समाप्तौ च प्रकृतसमस्थितिखण्डोत्करण संख्यातसहस्रानुभागखण्डोत्करणानि च युगपत् समाप्यन्त इत्यर्थ ॥ २४४।

स० च०—अन्तर करणका प्रथम समयविषै पूर्व स्थितिबन्धतैं असंख्यातगुणा घटता ऐसा और ही स्थितिबंध अर पूर्व स्थितिकांडकतै किछू घटता ऐसा और ही स्थिति कांडक अर पूर्व अनुभागकांडकतै अनन्तगुणा घटता ऐसा और ही अनुभागकांडकका प्रारम्भ हो है। तहाँ एक स्थितिकांडकोत्करणका जेता काल तितने कालकरि अन्तरकरण करिए है। ताको समाप्ति होतैं एक स्थितिकांडक घात भया। तीहिंविषै संख्यात हजार अनुभागकांडकनिका घात भया ऐसा अर्थ जानना ॥२४४॥

अथान्तरोत्कीर्णद्रव्यनिक्षेपनिरूपणार्थं गाथात्रयमाह—

अंतरहेदुक्कीरिददव्वं तं अंतरम्हि ण य देदि।
बंधंताणंतरजं बंधाणं बिदियगे देदि[2] ॥ २४५ ॥

---

१ जाधे अंतरमुक्कीरदि ताधे अण्णो ट्ठिदिबंधो पबद्धो अण्णं ट्ठिदिखंडयमण्णमणुभागखंडयं च गेण्हदि। अणुभागखंडयसहस्सेसु गदेसु अण्णमणुभागखंडयं ते चेव ट्ठिदिखंडयं सो चेव ट्ठिदिबंधो अंतरस्स उक्कीरणद्धा च समगं पुण्णाणि। वही पृ० २५५-२५६।

२ जे पुण कम्मंसा बज्झमाणा चेव केवलं, ण वेदिज्जमाणा जहा परोदयेण विवक्खाए पुरिसवेदो अण्णदरसंजलणो वा, तेसिमंतरट्ठिदीसु उक्कीरिज्जमाणस्स पदेसग्गस्स अप्पणो बिदियट्ठिदीए उक्कड्डणावसेण संचारो। सोदयाणं बज्झमाणाणं पढमट्ठिदीसु अणुदयाणं बज्झमाणाणं बिदियट्ठिदीए च संचारो ण विरुद्धो त्ति। जयध० पु० १३, पृ० १६०।

अन्तरहेतूत्कीरितद्रव्य तदन्तरे न च ददाति ।
बध्यमानानामन्तरज बन्धाना द्वितीयके ददाति ॥२४५॥

स० टी०—अन्तरनिमित्तमन्तरायामे उत्कीर्णं द्रव्यमन्तरायामस्थितिपु नैव निक्षिपति । पुन केवलबध्यमानप्रकृतीना स्त्रीनपुसकवेदयोरन्यतरोदयेन सज्वलनकपायाणामन्यतमोदयेन च श्रेणिमारूढस्य पुवेदशेपसज्वलनानामन्तरायामे उत्कीर्णं द्रव्य तात्कालिके स्वबन्धे आवाधा मुक्त्वा द्वितीयस्थितिप्रथमनिषेकादारभ्य चरमपर्यन्त यथायोग्यमुत्कर्पणवशेन निक्षिपति । उदीयमानेतर (वेद) कपाययो प्रथमस्थितौ चापकर्पणवशेन निक्षिपतीत्यय विशेप सिद्धान्तानुसारेण ज्ञातव्य ॥ २४५ ॥

स० च०—अतरके निमित्त उत्कीर्ण कीया द्रव्यकौ अतरायामविषै न दे है । भावार्थ—अतरायामके निषेकनिका द्रव्यकौ तहा अभावकरि कोई अतरायामरूप निषेकनिविषै ही न मिलाइए है । तौ कहा मिलाइए है सो कहै है—

जिनका उदय न पाइए केवल बन्ध ही पाइए है ऐसी जे स्त्री वा नपु सक वेद अर एक कोई कषाय सहित श्रेणी चढनेवालेकै पुरुषवेद अर तीन सज्वलन कषाय ए च्यारि प्रकृति तिनका द्रव्यकौ उत्कर्षणकरि तौ तत्काल जो अपना तिसही प्रकृतिका जो बन्ध भया ताकी आवाधाकौ छोडि ताहीका द्वितीय स्थितिकौ प्रथम निषेकतै लगाय यथायोग्य अत पर्यन्त निक्षेपण करै है अर अपकर्षणकरि उदयरूप जो अन्य कषाय ताकी प्रथम स्थितिविषै निक्षेपण करै है ॥२४५॥

उदयिल्लाणतरज सगपढमे देदि बंधविदिये च[1] ।
उभयाणतरदव्व पढमे विदिये च संछुहदि[2] ॥ २४६ ॥
औदयिकानामन्तरजं स्वकप्रथमे ददाति बन्धद्वितीये च ।
उभयानामन्तरद्रव्य प्रथमे द्वितीये च सक्षिपति ॥२४६॥

स० टी०—केवलमुदयमानयो स्त्रीनपुसकवेदयोरन्तरायामे उत्कीर्णं द्रव्य स्वस्वप्रथमस्थितावपकृष्य निक्षिपति । बध्यमानेतर (वेद) कपायाणा द्वितीयस्थितौ चोत्कृष्य सक्रामयतीत्यय विशेपोऽपि राद्धान्तोक्त सप्रधार्य । पुनर्बन्धोदयवतो पुवेदान्यतमकषाययोरन्तरायामे उत्कीर्णं द्रव्यमपकृष्योदयमानप्रकृतिप्रथमस्थितौ निक्षिपति बध्यमानप्रकृतिद्वितीयस्थितौ चोत्कृष्य निक्षिपति । अत्रापि परप्रकृतिप्रथमद्वितीययो स्थित्योरपकर्षणोत्कर्षणवशेन सक्रमयतीत्ययमपि विशेष कृतान्तसिद्धो बोद्धव्य ॥ २४६ ॥

स० च०—जिनका बन्ध न पाइए केवल उदय ही पाइए ऐसा स्त्रीवेद वा नपु सकवेद

---

१ जे कम्मसा ण वज्झति वेदिज्जति च तेसिमुक्कीरमाणय पदेसग्ग अप्पणो पढमट्ठिदीए च देदि । वज्झमाणीण पयडीणमणुक्कीरमाणीसु च ट्ठिदीसु देदि । क, चु, जयध, पु० १३, पृ० २४८ । जे पुण कम्मसा ण वज्झति वेदिज्जति च, जहा इत्थिवेदो णवुसयवेदो वा तेसिमतरठिठदिपदेसग्ग घेत्तूण अप्पप्पणो पढमट्ठिदीए च ओकड्डणासकमेण देदि, उदइल्लाण सजलणाण पढमट्ठिदीए च ओकड्डण-परपयडिसकमेहि समयाविरोहेण णिक्खिवदि, विदयट्ठिदीए च बंधम्मि उक्कड्डियूण णिक्खवदि । जयध, पु, १३, पृ० २६० ।

२ अतर करेमाणस्स जे कम्मसा वज्झति वेदिज्जति तेसिं कम्माणमतरट्ठिदीओ उक्कीरितो तासि ट्ठिदीण पदेसग्ग बंधपयडीण पढमट्ठिदीए च देदि विदियट्ठिदीए च देदि । क, चु, जयध, पु १३, पृ० २५६ ।

तिनका अन्तरसम्बन्धी द्रव्यकौ अपकर्षण करि अपनी प्रथम स्थितिविषै निक्षेपण करै है। अर उत्कर्षण करि तहाँ बँधै है जे अन्य कषाय तिनकी द्वितीय स्थितिविषै निक्षेपण करै है। (बहुरि अपकर्षण करि उदयरूप अन्य क्रोधादि कषायकी प्रथम स्थितिविषै संक्रमण हो है। तिस उदय प्रकृतिरूप परिणमै है इतना भी सिद्धान्तोक्त विशेष जानना। बहुरि जिनिका बन्ध भी अर उदय भी पाइये ऐसा पुरुषवेद वा कोई एक कषाय तिनके अन्तरसम्बन्धी द्रव्यकौ अपकर्षण करि उदयरूप प्रकृतिनिकी प्रथम स्थितिविषै निक्षेपण करै है। अर उत्कर्षण करि तहाँ बँधै है जे प्रकृति तिनकी द्वितीय स्थितिविषै निक्षेपण करै है। इहाँ भी अन्य प्रकृतिकी प्रथम द्वितीय स्थितिविषै उत्कर्षण अपकर्षणका वशकरि अन्य प्रकृति परिणमनरूप संक्रमण हो है ऐसा विशेष जानना।

अणुभयगाणंतरजं बंधंताणं च बिदियगे देदि[1]।
एवं अंतरकरणं सिज्झदि अंतोमुहुत्तेण ॥ २४७ ॥

अनुभयकानामन्तरजं बध्यमानानां च द्वितीयके ददाति।
एवमन्तरकरणं सिद्धयति अन्तर्मुहूर्तेन ॥ २४७ ॥

स० टी०—बन्धोदयरहितानां मध्यमाष्टकषायहास्यादिषण्णोकषायाणामन्तरायामे उत्कीर्णं द्रव्यं तात्कालिकोदयमात्रप्रकृतिप्रथमस्थितावपकृष्य संक्रमयति। बध्यमानप्रकृतिद्वितीयस्थितौ चोत्कृष्य संक्रमयति। सर्वत्र बन्धरहितानामन्तरद्रव्यं स्वद्वितीयस्थितौ न निक्षिपति। उदयरहितानामन्तरद्रव्यं स्वप्रथमस्थितौ न निक्षिपति इति विशेषो निर्णेतव्यः। एवमन्तर्मुहूर्तकालेनान्तरकरणं सिध्यति। अत्रान्तरकरणप्रारम्भसमयादारभ्य प्रथमस्थित्यन्तरायामौ व्यवस्थितप्रमाणौ द्रष्टव्यौ। उदयावल्या एकस्मिन् समये गलिते गुणश्रेणिसमयस्यैकस्योदयावल्यां प्रवेशात्। तदैवान्तरायामसमयस्यैकस्य गुणश्रेण्यायामे प्रवेशात्। तदैव च द्वितीयस्थितिनिषेकस्यैकस्यान्तरायामे प्रवेशात्। एवं द्वितीयस्थितिरेव हीयते प्रथमस्थित्यान्तरायामौ तदवस्थावेवेति निश्चेतव्यम् ॥ २४७ ॥

स० च०—बन्ध उदय रहित जे अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान कषाय अर हास्यादि छह नोकषाय तिनका अन्तरसम्बन्धी द्रव्यका अपकर्षण करि तिस काल उदयरूप जे अन्य प्रकृति तिनकी प्रथम स्थितिविषै संक्रमण हो है तद्रूप परिणमै है। अर उत्कर्षण करि तिस काल विषै बँधै है जे अन्य प्रकृति तिनकी द्वितीय स्थितिविषै संक्रमण हो है तद्रूप परिणमै है ऐसै प्रकृतिनिका जिन निषेकनिका अभावकरि अन्तर कीया तिनके द्रव्यकौ निक्षेपण करै है। इहाँ इतना जानना—बन्ध रहित प्रकृतिनिका द्रव्यकौ तौ अपनी द्वितीय स्थितिविषै अर उदय रहित प्रकृतिनिका द्रव्यकौ अपनी प्रथम स्थितिविषै नाहीं निक्षेपण करै है। बहुरि प्रथम स्थिति तौ अन्तरायामके नीचै है तातै तहाँ देनेविषै स्थिति घटै है। तातै तहाँ अपकर्षण कह्या। अर द्वितीय स्थिति अन्तरायामके उपरिवर्ती है तातै तहाँ द्रव्य दीए स्थिति बधै है तहा उत्कर्षण कह्या। ऐसै अंतर्मुहूर्त कालकरि अन्तर करनेकी समाप्तता हो है। इहा अन्तर करणका प्रथम समयतै लगाय प्रथम स्थिति अर अन्तरायामका प्रमाण जेताका तेता रहै है। जब उदयावलीका एक समय

१ जे कम्मंसा ण बज्झंति ण वेदिज्जंति तेसिमुक्कीरमाणं पदेसग्गं बज्झमाणीणं पयडीणमणुक्कीरमाणीसु ट्ठिदीसु देदि। क० चु० जयध० पु० १३, पृ० २५९।

व्यतीत होइ तब गुणश्रेणिका एक समय उदयावलीविषैं मिलैं। अर तब ही गुणश्रेणिविषैं अन्तरायामका एक समय मिलै अर तब ही अन्तरायामविषै द्वितीय स्थितिका एक निषेक मिलै। द्वितीय स्थिति घटै है। प्रथम स्थिति अर अतरायाम जेताका तेता रहै है ऐसा जानना ॥२४७॥

विशेष—(१) जयधवलामे जिन प्रकृतियोका अन्तरकरण होता है उनकी अन्तरसम्बन्धी स्थितियोका कहाँ किस प्रकार निक्षेप होता है इसका विशेष खुलासा इस प्रकार किया है। अन्तर करनेवाला जो जीव जिन कर्मोको बाँधता है और वेदता है उन कर्मोकी अन्तरको प्राप्त होनेवाली स्थितियोमेसे उत्कीर्ण होनेवाले प्रदेशपुंजको अपनी प्रथम स्थितिमे निक्षिप्त करता है और आबाधाको छोडकर द्वितीय स्थितिमे भी निक्षिप्त करता है, किन्तु अन्तर सम्बन्धी स्थितियोमे निक्षिप्त नही करता, क्योकि उनके कर्मपुंजमेसे वे स्थितियाँ रिक्त होनेवाली हैं, इसलिए उनमे निक्षिप्त नही करता। इस विषयमे कुछ आचार्य ऐसा व्याख्यान करते हैं कि जब तक अन्तरसम्बन्धी द्विचरम फालिका अस्तित्व रहता है तब तक स्वस्थानमे भी अपकर्षणसम्बन्धी अतिस्थापनावलिको छोडकर अन्तरसम्बन्धी स्थितियोमे भी निक्षिप्त करता है। उनके व्याख्यानके अनुसार भी सर्वत्र यह कथन करना चाहिये।

(२) जो कर्म बँधते नही और वेदे नही जाते वे आठ कषाय और छह नोकषाय हैं। सो उनकी अन्तर स्थितियोमेसे उत्कीर्ण होनेवाले प्रदेशपुंजको अपनी स्थितियामे नही देता है। किन्तु बँधनेवाली प्रकृतियोकी द्वितीय स्थितिमे उत्कर्षण द्वारा बन्धके प्रथम समय निक्षिप्त करता है तथा बँधनेवाली और नही बँधनेवाली जिन प्रकृतियोकी प्रथम स्थिति है उनमे भी यथासम्भव अपकर्षण और परप्रकृति संक्रम द्वारा निक्षिप्त करता है, परन्तु स्वस्थानमे निक्षिप्त नही करता।

(३) जो कर्मपुंज बँधते नही किन्तु वेदे जाते है। जैसे स्त्रीवेद और नपुंसकवेद। उनकी अन्तरसम्बन्धी स्थितियोको अपनी-अपनी प्रथम स्थितिमे अपकर्षण करके निक्षिप्त करता है तथा जिन संज्वलन प्रकृतियोका उदय हो उनकी प्रथम स्थितिमे आगमानुसार अपकर्षण और परप्रकृति संक्रमण द्वारा निक्षिप्त करता है तथा बन्धकी अपेक्षा उत्कर्षण करके द्वितीय स्थितिमे भी निक्षिप्त करता है।

(४) जिन कर्मोको मात्र बाँधता है, वेदता नही। जैसे परोदयकी विवक्षामे पुरुषवेद और अन्यतर संज्वलन। इनका केवल बन्ध होता है, उदय नही होता। उनकी अन्तर स्थितियोमेसे उत्कीर्ण होनेवाले प्रदेशपुंजको उत्कर्षण द्वारा अपनी द्वितीय स्थितिमे निक्षिप्त करता है तथा उदयवाली बन्धको प्राप्त होनेवाली प्रकृतियो की प्रथम और द्वितीय स्थितिमे निक्षिप्त करता है तथा जिनका उदय नही होता, किन्तु बन्ध होता है उनकी दूसरी स्थितिमे निक्षिप्त करता है।

अथान्तरकरणनिष्पत्त्यनन्तरसमये संभवक्रियाविशेषप्रदर्शनार्थं गाथाद्वयमाह—

सत्तकरणाणि यंतरकदपढमे होंति मोहणीयस्स।
इगिठाणियबंधुदओ ठिदिबंधो संखवस्स च ॥ २४८ ॥
आणुपुव्वीसंकमणं लोहस्स असंकमं च संढस्स।
पढमोवसामकरणं छावलितीदेसुदीरणदा[1] ॥ २४९ ॥

---

[1] ताधे चेव मोहणीयस्स आणुपुव्वीसंकमो, लोभस्स असंकमो, मोहणीयस्स एक्कट्ठाणिओ बंधो, णवुंसयवेदस्स पढमसमयउवसामगो, छसु आवलियासु गदासु उदीरणा, मोहणीयस्स एगट्ठाणिओ उदओ, मोहणीयस्स संखेज्जवस्सट्ठिदिओ बंधो, एदाणि सत्तविहाणि करणाणि अन्तरकदपढमसमए होंति। वही पृ० २३३।

सप्तकरणानि अन्तरकृतप्रथमे भवन्ति मोहनीयस्य ।
एकस्थानको बन्धोदय स्थितिबन्ध सख्यवर्षं च ॥२४८॥
आनुपूर्वीसक्रमण लोभस्यासक्रम च षण्ढस्य ।
प्रथमोपशमकरण षडावल्यतीतेषूदीरणता ॥२४९॥

स० टी०—अन्तरकृतस्य निष्ठितान्तरकरणस्य प्रथमे अनन्तरसमये सप्तकरणानि युगपदेव प्रारभ्यन्ते । तत्र पूर्वमन्तरसमाप्तिपर्यन्त चारित्रमोहस्य द्विस्थानानुभागबन्ध प्रवृत्त, इदानी लतासमानैकस्थानानुभागबन्धस्तस्य प्रवर्तते इत्येक करणम् । १ । तथा मोहनीयस्य द्विस्थानानुभागोदय पूर्वमन्तरकरणचरमसमयपर्यन्तमायात इदानी पुनस्तस्य लतासमानैकस्थानानुभागोदय एव प्रवर्तत इत्यपर करणम् । २ । तथा पूर्वमन्तरकरणकालसमाप्तिपर्यन्तमसख्येयवर्षमात्रो मोहस्य स्थितिबन्ध प्रवृत्त, इदानी पुनरपसरणमाहात्म्यात्सख्येयवर्षमात्रस्तस्य स्थितिबन्ध प्रारब्ध इत्यन्यत्करणम् । ३ । तथा पूर्वमन्तरकरणकालपरिसमाप्तिपर्यंन्त चारित्रमोहस्य नपुसकवेदादिप्रकृतीना यत्र तत्रापि द्रव्यसक्रम प्रवृत्त इदानी पुनर्वक्ष्यमाण्यात्प्रतिनियतानुपूर्व्या तद्द्रव्य सक्रामति । तद्यथा—

स्त्रीनपुसकवेदप्रकृत्योर्द्रव्य नियमेन पुवेद एव सक्रामति । पुवेदहास्यादिषण्णोकपायाप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानक्रोधद्वयद्रव्य नियमेन सज्वलनक्रोधे एव सक्रामति । सज्वलनक्रोधाप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानमानद्वयद्रव्य नियमेन सज्वलनमाने एव सक्रामति । सज्वलनमानाप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानमायाद्वयद्रव्य नियमेन सज्वलनमायाद्रव्ये एव सक्रामति । सज्वलनमायाप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानलोभद्वयद्रव्य सज्वलनलोभे एव नियमत सक्रामति इत्यानुपूर्व्या सक्रमो नामैक करणम् । ४ । तथा पूर्वमन्तरकरणसमाप्तिपर्यन्त सज्वलनलोभस्य शेषसज्वलनपुवेदेषु यथासभव सक्रम प्रवृत्त, इदानी पुन सज्वलनलोभस्य कुत्रापि सक्रमो नास्त्येवेत्यपर करणम् । ५ । तथा इदानी प्रथम नपुसकवेदस्यैवोपशमनक्रिया प्रारभ्यते तदुपशमनानन्तरमेवेतरप्रकृतीनामुपशमनविधानात् इत्येतदेक करणम् । ६ । तथा पूर्वमन्तरकरणसमाप्तिपर्यन्त प्रतिसमयबध्यमानसमयप्रबद्धो अचलावल्यतिक्रमे उदीरयितु शक्य प्रवृत्त इदानी पुनर्बध्यमानाना मोहस्य वा ज्ञानावरणादिकर्मणा वा समयप्रबद्धो बन्धप्रथमसमयादारभ्य षट्स्वावलीषु गतास्वेवोदीरयितु शक्यो नैकसमयोनास्वपीत्यन्यत्करणम् । ७ । अधुनातननूतनबन्धस्य तथाविधस्वभावसभवात् ॥२४८–२४९॥

स० च०—अन्तर कीए पीछै ताके अनतरि प्रथम समयविषै सात करणनिका युगपत् प्रारम्भ हो है । तहाँ पूर्वै अन्तर करनेकी समाप्ति पर्यंत मोहका दारुलता समान द्विस्थानगत बध अर उदय था अर अब लता समान एक स्थानगत बध उदय होने लागे सो दोय करण तौ ए भए । बहुरि पूर्वै मोहका स्थितिबध असख्यात वर्षका होता था अब सख्यात वर्षमात्र होने लगा सो एक करण यहु भया । बहुरि पूर्वै चारित्रमोहका परस्पर प्रकृतिनिका जहाँ तहाँ सक्रमण होता था अब आनुपूर्वी सक्रमण होने लगा सो इसविषै ऐसा नियम भया—जो स्त्री नपुसक वेदका तौ पुरुष वेद ही विषै अर पुरुषवेद छह हास्यादिक अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान क्रोधका सज्वलन क्रोध ही विषै अर सज्वलन क्रोध अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान मानका सज्वलन मान ही विषै अर सज्वलन मान अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान मायाका सज्वलन माया ही विषै अर सज्वलन माया अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान लोभका सज्वलन लोभ ही विषै सक्रमण हो है अन्यथा न होइ सो एक करण यहु भया । बहुरि पूर्वै सज्वलन लोभका सज्वलन क्रोधादिविषै वा पुरुषवेदविषै सक्रमण होता था अब याका सक्रमण कही न होइ सो एक करण यहु भया । बहुरि अब नपुसक वेदकी उपशम-

क्रियाका प्रारम्भ भया सो एक करण यहु भया। वहुरि पूर्वै वन्ध भएँ पीछै एक आवली काल व्यतीत भएँ उदीरणा करनेकी समर्थता थी अव जो वन्ध हो हे ताकी वध समयतैं छह आवली व्यतीत भएँ ही उदीरणा करनेकी समर्थता हो है। सो एक करण यहु भया ।।२८८-२४९।।

विशेष—यह जीव अन्तरकरण समाप्तिके कालसे ले कर जो सात करण प्रारम्भ करता है उनका खुलासा इस प्रकार है। (१) उनमेसे प्रथम करण मोहनीयकर्मका आनुपूर्वीसक्रम है। खुलासा इस प्रकार है—स्त्रीवेद और नपुसकवेदके प्रदेशपुजको यहाँसे लेकर पुरुषवेदमे सक्रमित करता है। पुरुषवेद, छह नोकषाय तथा प्रत्याख्यानावरण और अप्रत्याख्यानावरणक्रोधको क्रोध सज्वलनमे सक्रमित करना है, अन्य किसीमे नही। क्रोध सज्वलन, और दोनो प्रकारके मानको मान सज्वलनमे, मान सज्वलन और दोनो प्रकारकी मायाको मायासज्वलनमे तथा माया सज्वलन और दोनो प्रकारके लोभको लोभसज्वलनमे सक्रमित करता है। यह आनुपूर्वी सक्रम है।

(२) लोभका असक्रम यह दूसरा करण है। अन्तरकरणके वाद लोभ सज्वलनका सक्रम नही होता यह इसका तात्पर्य है।

(३) मोहनीयका एक स्थानीय बन्ध होता है यह तीसरा करण है। यद्यपि इससे पूर्व मोहनीयका द्विस्थानीय बन्ध होता था। किन्तु अन्तरकरणके वाद वह एक स्थानीय होने लगता है।

(४) नपुसकवेदका प्रथम समय उपशामक यह चौथा करण है, क्योकि प्रथम ही आयुक्त करणके द्वारा नपुसकवेदकी यहाँसे उपशमन क्रिया प्रारम्भ हो जाती है।

(५) छह आवलियोके जानेपर उदीरणा यह पाँचवाँ करण है। साधारणत बन्धावलिके बाद उदीरणा होने लगती है। परन्तु यहाँ पर उसके विरुद्ध यह कहा गया है कि छह आवलियोके जानेपर उदीरणा होती है सो ऐसा स्वभाव ही है। वैसे कल्पित उदाहरण द्वारा कषाय प्राभृत चूर्णिमे इसे स्पष्ट किया गया है। परन्तु वह उदाहरण मात्र समझानेके लिये ही दिया गया है तो उसे जयधवला पृ० २६७ आदिसे जान लेना चाहिये।

(६) मोहनीयकर्मका एकस्थानीय उदय होने लगता है। इसका तात्पर्य यह है कि अन्तरकरणके पहले मोहनीयका जो देशघाति द्विस्थानीय उदय होता रहा वह अन्तरकरणके बाद एक स्थानीय होने लगता है।

(७) अन्तरकरणके बाद मोहनीय कर्मका स्थितिबन्ध सख्यात वर्ष-प्रमाण होने लगता है यह सातवाँ करण है। आशय यह है कि अन्तरकरणके पहले मोहनीयका असख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध होता था, वह अन्तरकरणके बाद घटकर सख्यात वर्षप्रमाण हो जाता है जो उत्तरोत्तर घटकर दसवें गुणस्थानके अन्तिम समयमे अन्तर्मुहूर्तमात्र रह जाता है। इतना विशेष समझना चाहिये कि अन्तरकरणके बाद शेष कर्मोका स्थितिबन्ध असख्यात वष प्रमाण होनेमे कोई वाधा नही है।

इस प्रकार ये सात करण हैं जो अन्तरकरणके बाद नियमसे होते है।

अथ चारित्रमोहोपशमनप्रक्रमप्रदर्शनार्थमिदमाह—

अतरपढमादु कम्मे एक्केक्क सत्त चदुसु तिय पयडिं ।
समसुच सामदि णवक समऊणावलिदुगं वज्ज ॥ २५० ॥

अन्तरप्रथमात् क्रमेण एकैक सप्त चतुर्षु त्रयी प्रकृतिम् ।
समुच्य शमयति नवक समयोनावलिद्विक वर्ज्यम् ॥ १५० ॥

स० टी०—अन्तरकरणसमाप्त्यनन्तरसमयादारभ्य क्रमेणान्तर्मुहूर्तेनान्तर्मुहूर्तेन कालेन एकामेका सप्त चतुर्ष्वन्तर्मुहूर्तेषु त्रयी त्रयी प्रकृति समयोनद्वयावलिमात्रनवकबन्धसमयप्रबद्धान् वर्जयित्वाऽयमनिवृत्तिकरण-विशुद्धसयत उपशमयति कषायत्रय वा परेणान्तर्मुहूर्तेन युगपदुपशमयतीति विशेषो ग्राह्य । ता एवोपशम्य-माना प्रकृतीरुद्दिशति ॥२५०॥

स० च०—अन्तर कीए पीछै प्रथम समयतै लगाय क्रमतै एक एक अन्तर्मुहूर्तकाल करि तौ एक एक सात प्रकृतिनिकौ अर च्यारि अन्तर्मुहूर्तविषै क्रमतै तीन-तीन प्रकृतिनिकौ उपशमावै है। तहाँ समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्धकौ नाही उपशमावै है सो याका स्वरूप आगै कहेंगे सो जानना ॥२५०॥

एय णउसयवेदं इत्थीवेद तहेव एय च ।
सत्तेव णोकसाया कोहादितियं तु पयडीओ[1] ॥ २५१ ॥

एको नपुसकवेद स्त्रीवेद तथैव एक च ।
सप्तैव नोकषाया क्रोधादित्रय तु प्रकृतय ॥ २५१ ॥

स० टी०—एको नपुसकवेदस्तथवैक स्त्रीवेद सप्त नोकपाया हास्यादय पट् पुवेदश्चेति क्रोधत्रय मानत्रय मायात्रय लोभत्रय चेत्युपशम्यमाना प्रकृतय क्रमेण ज्ञातव्या ॥२५१॥

स० च०—एक नपुसक वेद एक स्त्रीवेद तैसै ही सात नोकषाय अर तीन क्रोध तीन मान तीन माया तीन लोभ ऐसै क्रमतै उपशम होनेरूप इकईस प्रकृति हैं ॥२५१॥

विशेष—अन्तरकरणके पश्चात् मोहनीय कर्मकी शेष २१ प्रकृतियोका किस क्रमसे और कितने कालमे उपशमन अर्थात् सर्वोपशमन करता है इस तथ्यका इस गाथामे निर्देश किया गया है। विशेष स्पष्टीकरण आचार्य स्वय आगे करेंगे ही।

---

१ अतरादो पढमसमयकदादो प ए णवुसयवेदस्स आउत्तकरणउवसामओ णवुसयवेदे उवसते से काले इत्थिवेदस्स उवसामगो । इत्थिवेदे उवसते से काले मे काले सत्तण्ह णोकसायाण उवसामगो । पढम-समयअवेदो तिविह कोहमुवसामेइ । जाधे कोधस्स बधोदया वोच्छिण्णा ताधे पाए माणस्स तिविहस्स उवसा-मगो । ताधे पाये तिविहाए मायाए उवसामगो । ताधे चेव जाओ दो आवलियाओ समयूणाओ एत्तियमेत्ता लोहसजलणस्स समयवद्धा अणुवसता । किट्टीओ सव्वाओ चेव अणुवसताओ, तव्वदिरित्त लोहसजलणस्स पदेसग्ग उवसत । दुविहो लोहो सव्वो चेव उवसतो णवकवधुच्छिट्ठावलियवज्ज । क० चू०, जयध० पु० १३, पृ० २७२ से ३१८ ।

अथ प्रथमोद्दिष्टस्य नपुसकवेदस्योपशमनविधान प्रदर्शयितुमिदमाह—

अतरकदपढमादो पडिसमयमसखगुणविहाणकमे-
णुवसामेदि हु सढ उवसंत जाण ण च अण्ण ॥ २५२ ॥

अन्तरकृतप्रथमत प्रतिसमयमसख्यगुणविधानक्रमे- ।
णोपशाम्यति हि षण्ढ उपशान्त जानीहि न चान्यम् ॥ २५२ ॥

स० टी०—अन्तरनिष्ठापनानन्तरसमयात्प्रभृति प्रतिसमयमसख्यातगुणितक्रमेण नपुसकवेदद्रव्य गुणसक्रमभागहारासख्यातभागेन खण्डयित्वा एक खण्डमुपशमयति यावन्नपुसकवेदोपशमसमाप्तिर्भवति तावदन्तर्मुहूर्तकालपर्यन्त कामप्यन्या प्रकृति नोपशमयति । कर्मण प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशानामुदीरणाशतैरप्युदयायोग्यतया सदवस्थाकारणमुपशमन सर्वत्र ज्ञेयम् । तत्र नपुसकवेदस्य प्रथमसमये उपशमनफालिद्रव्यमिद स a । १२– । ४२ / ७ । १० । ४८ । गु a

द्वितीयसमये ततोऽसख्येयगुणमुपशमनफालिद्रव्यमिद स a । १२– । ४२ / ७ । १० । ४८ । गु a a । तृतीयसमये ततोऽसख्येयगुणमुपशमनफालिद्रव्यमिद स a । १२– । ४२ / ७ । १० । ४८ गु a a a । एवमन्तर्मुहूर्तमात्रोपशमनकालचरमसमयमसख्यातगुणितक्रमेण नपुसकवेदमुपशमयतीत्यर्थ ॥२५२॥

नपुसकवेदके उपशमनाविधिका निर्देश—

स० च०—अन्तर करनेके अनतरि प्रथम समयतै लगाय समय समय प्रति नपु सकवेदका उपशम हो है। तहाँ नपु सकवेदके द्रव्यकौ गुणसक्रम भागहारका असख्यातवा भागमात्रभागहारका भाग देइ तहाँ एक भागमात्र द्रव्यकौ प्रथम समयविषै उपशमावै है। ऐसै नपु सकवेदका उपशम कालकी समाप्ति पर्यन्त असख्यातगुणा क्रम लीए द्रव्य उपशमावै है। सो समय समय प्रति जो द्रव्य उपशमाया ताहीका नाम उपशमन फालिका द्रव्य जानना ॥२५२॥

विशेष—नपुसकवेदका उपशम करते समय विवक्षित प्रकृतियोकी उदय उदीरणा होती रहती है। जैसे जो जीव क्रोध सज्वलन और पुरुषवेदके उदयमे श्रेणि आरोहण करता है उसके इन दो प्रकृतियोकी उदय और उदीरणा होती है। अन्य वेद और कोई एक कषायके उदयसे श्रेणिपर चढनेवालेके उनकी उदय-उदीरणा होती है। गाथा २५३ मे इष्टकी उदय-उदीरणा होती है उसका यही आशय है। तथा नपु सकवेदको उपशमाते समय जो उसका अन्य प्रकृतियोमे सक्रम होता है वह गुणसक्रम होनेसे प्रत्येक समयमे असख्यातगुणे कर्म पुजका सक्रम होता है। और प्रति समय सक्रमको प्राप्त होनेवाले कर्मपुञ्जसे असख्यातगुणे कर्मपुञ्जको उपशमाता है। जब नपु सकवेदका उपशम करता है तब शेष कर्मो की उपशम क्रिया नही होती।

१ सेसाण कम्माण ण किंचि उवसामेदि । ज पढमसमये पदेसग्गमुवसामेदि त थोवै । ज विदियसमये उवसामेदि तमसखेज्जगुण । एवमसखेज्जगुणाए सेढीए उवसामेदि जाव उवसत । वही पृ० २७२-२७३ ।

अथोदीरणादिद्रव्याल्पबहुत्वप्रदर्शनार्थमिदमाह —

सढादिमउवसमगे इट्ठस्स उदीरणा य उदओ य ।
सढादो संकमिद उवसमियमसखगुणियकमा[1] ॥ २५३ ॥

षण्ढादिमोपशामके इष्टस्योदीरणा च उदयश्च ।
षण्ढात् संक्रमितमुपशमितमसख्यगुणितक्रम ॥ २५३ ॥

स० टी०—नपुसकवेदोपशमकस्य प्रथमसमये विवक्षितस्योदयप्राप्तस्य पुवेदस्योदीरणा द्रव्यमिद— स a । १२– । २ / ७ १० । ४८ । ओ प प / a a a तत्कालापकृष्टस्य पल्यासख्यातैकभागेन भक्तस्य बहुभागमुपरितनस्थितौ दत्वा तदेकभाग पुन पल्यासख्यातभागेन खण्डयित्वा बहुभाग गुणश्रेण्या निक्षिप्य तदेकभागस्यैवोदयनिक्षेपणात् । तस्मादुदीरणाद्रव्यात्तदात्वे पुवेदस्यैवोदयमान द्रव्यमसख्यातगुण स a । १२– । २ / ७ । १० । ४८ । ओ प ८५ / a a गुणश्रेण्या प्राग्निक्षिप्तपल्यासख्यातबहुभागमात्रत्वात् । तस्मादुदयद्रव्यान्नपुसकवेदस्य सक्रमणद्रव्यमसख्यातगुण स a । १२– । ४२ / ७ । १० । ४८ गु तद्भागहारादसख्यातगुणहीनेन गुणसक्रमभागहारेण खण्डितैकभागमात्रत्वात् तदात्वे नपुसकवेदस्योपशमनफालिद्रव्यमसख्यातगुण—स a । १२– । ४२ / ७ । १० । ४८ । गु / a तद्भागहारादसख्यातगुणहीनेन भागहारेण खण्डितैकभागमात्रत्वात् । एव द्वितीयादिसमयेषु चरमसमयपर्यन्तेषूदीरणाद्रव्यचतुष्टयाल्पबहुत्व नेतव्यम् ॥२५३॥

उदीरणादिरूप द्रव्यके अल्पबहुत्वका निर्देश—

स० च०—नपुसकवेदके उपशमकका प्रथम समयविषै विवक्षित उदयकौ प्राप्त भया जो पुरुषवेद ताका सर्व द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहा एक भागकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ बहुभाग उपरितन स्थितिविषै दीया । अवशेष एक भागकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ बहुभाग गुणश्रेणिविषै, एक भाग उदयावलीविषै दीया सो उदयावलीविषै जो दीया सो यहु उदीरणा द्रव्य जेता है तातै तिसही पुरुषवेदका उदय द्रव्य असख्यातगुणा है । जातै पूर्वे गुणश्रेणिका द्रव्य इस निषेकनिविषै दीया था सो पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग दीएँ बहुभागमात्र है । बहुरि तिसतैं नपुसकवेदका द्रव्य सक्रमण करि पुरुष वेदरूप भया सो असख्यातगुणा है, जातैं तिस भागहारतैं गुणसक्रम भागहारका प्रमाण असख्यातगुणा घटता है । बहुरि तातै नपुसकवेदको उपशम फालिका द्रव्य असख्यातगुणा है, जातै तहाँ भागहार तिस भागहारके असख्यातवे भागमात्र है । ऐसैं ही द्वितीयादि समयनिविषै भी अल्पबहुत्व जानना ॥२५३॥

---

१ णवु सयवेदस्स पढमसमयउवसाभगस्स जस्स वा तस्स वा कम्मस्स पदेसग्गस्स उदीरणा । उदयो असखेज्जगुणो । णवु सयवेदस्स पदेसग्गमण्णपयडिसकमिज्जमाणयमसखेज्जगुण । उवसामिज्जमाणयमसखेज्जगुण । एव जाव चरिमसमय उवसते त्ति । वही पृ० २७२ से २७४ ।

अस्मिन्नवसरे स्थितिखण्डादिसंभवासंभवप्रदर्शनार्थं गाथाद्वयमाह—

अंतरकरणादुवरिं ठिदिरसखंडाण मोहणीयस्स ।
ठिदिबंधोसरणं पुण संखेज्जगुणेण हीणकमं ॥ २५४ ॥

अन्तरकरणादुपरि स्थितिरसखण्डानां मोहनीयस्य ।
स्थितिबंधापसरणं पुनः संख्यगुणेन हीनक्रमं ॥ २५४ ॥

स० टी०—अन्तरकरणस्योपरि नपुंसकवेदोपशमनप्रथमसमयादारभ्य मोहनीयस्य स्थितिखण्डनमनुभागखण्डनं च नास्ति उपशम्यमानकर्मस्थितेः काण्डकघातो नास्तीति परमगुरूपदेशात् । तर्ह्यनुपशम्यमानमोहप्रकृतीनां स्थितिकाण्डकघातो भवेदिति नाशङ्कितव्यं उपशमनकाले मोहप्रकृतीनां सर्वासामपि स्थितिः सदृश्येवेति च परमागमसम्प्रदायस्य परमगुरुपर्वक्रमायातस्य सद्भावात् स्थित्यनुसारित्वादनुभागस्यापि खण्डनं विना तादृगवस्थं सिद्धमेव । मोहनीयस्य स्थितिबंधापसरणं पुनः संख्यातगुणहीनक्रमेण वर्तते । अन्तरकरणसमाप्त्यनन्तरं संख्यातसहस्रवर्षमात्रस्थितिबन्धसंभवात् तदनुसारेण स्थितिबन्धापसरणस्य तत्संख्यातबहुभागमात्रस्थितिबन्धं प्रति संख्यातगुणहीनत्वोपपत्तेः ॥ २५४ ॥

स्थितिकाण्डकघातादिमें क्या सम्भव है, क्या नहीं इसका निर्देश—

स० च०—अन्तरकरणतैं उपरि नपुंसकवेद उपशमावनेका प्रथम समयतैं लगाय मोहनीयका स्थितिकांडकघात अर अनुभागकांडकघात नाहीं है जातैं उपशमरूप होती जो कर्मकी स्थिति ताकैं कांडकघात न हो है । इहाँ कोऊ कहैगा कि—उपशमरूप न होती नपुंसकवेद विना अन्य प्रकृतिनिका तौ कांडकघात होता होयगा सो न हो है जातैं इहाँ सर्व मोह प्रकृतिनिकी स्थिति समान है अर स्थिति अनुसारि अनुभागका भी कांडकघात विना अवस्थितपना ही है । बहुरि मोहनीयका स्थितिबंधापसरणका आयाम संख्यातगुणा घटता क्रम लीए वर्तैं है ॥२५४॥

विशेष—अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न होनेके बाद मोहनीयकी किसी भी 'प्रकृतिका स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डक घात नहीं होता । इसका विशेष स्पष्टीकरण करते हुए जयधवलामें जो कुछ लिखा है उसका भाव यह है कि यदि अन्तरकरण क्रिया होनेके बाद नपुंसकवेद या चारित्रमोहसम्बन्धी अन्य प्रकृतिका स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात स्वीकार किया जाय तो उस-उस प्रकृतिकी उपशमानेकी क्रिया सम्पन्न होनेके पूर्व उस प्रकृतिके जिन प्रदेशपुंजोंको नहीं उपशमाया गया है उसके साथ जो प्रदेशपुंज उपशमाये जा चुके हैं उनके भी स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघातका प्रसंग प्राप्त होता है । किन्तु उपशमाये गये प्रदेश पुंजका न तो स्थितिकाण्डकघात ही सम्भव है और न अनुभागकाण्डकघात ही सम्भव है, क्योंकि उनका प्रशस्त उपशामना द्वारा उपशम हुआ है । (२) उक्त तथ्यके समर्थनमें दूसरा तर्क यह दिया गया है कि यदि उपशमाई जानेवाली प्रकृतिको छोड़ कर उस समय नहीं उपशमायी जानेवाली मोह प्रकृतियोंका स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात स्वीकार किया जाता है तो उपशमश्रेणिमें बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी स्थितियोंमें विषमता हो जायगी जो युक्त नहीं है, क्योंकि इन कर्मोंकी उपशान्त अवस्थामें स्थिति सदृश रहती है ऐसा गुरु परम्परासे उपदेश चला आ रहा है । (३) साथ ही आगम प्रमाणसे भी इसका समर्थन करते हुए लिखा है

१ जाधे पाए मोहणीयस्स बंधो संखेज्जवस्सट्ठिदिगो जादो ताधे पाए ट्ठिदिबंधे पुण्णे-पुण्णे संखेज्जगुणहीणो ट्ठिदिबंधो । वही पृ० २७५ ।

कि माया वेदकके कार्योका उल्लेख करते हुए जो चूर्णिसूत्र आये है उनमे जहाँ मोहनीय कर्मको छोड कर शेष कर्मो का स्थितिवन्धके साथ स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात स्वीकार किया है वहाँ माया सज्वलन और लोभ सज्वलनका मात्र स्थितिवन्ध तो स्वीकार किया है पर स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात नही स्वीकार किया है। इस प्रकार उक्त तर्क और प्रमाणसे स्पष्ट ज्ञात होता है कि अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न होनेके वाद मोहनीयकी किसी भी प्रकृतिका स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात नही होता।

जत्तो पाये होदि हु ठिदिवघो सखवस्समेत्त तु।
तत्तो सखगुणूण वंधोसरण तु पयडीण ॥ २५५ ॥

यत प्रायेण भवति हि स्थितिवन्ध सख्यवर्षमात्र तु।
तत सख्यगुणोन बन्धापसरणं तु प्रकृतीनाम् ॥ २५५ ॥

स० टी०—यत कारणात्सख्यातसहस्रवर्पमात्र स्थितिवन्ध प्रायण भवति तत कारणात् सख्यातगुणोन स्थितिवन्वापसरण वध्यमानप्रकृतीना भवतीति सूत्रोक्तत्वात्—

स्थितिवन्ध	व १ ० ० ० ११	व ० ० ० ११ ५	व १ ० ० ० ११ ५५
स्थितिवन्धापसरणप्रमाण	व १ ० ० ० ११ ४ ५	व १ ० ० ० ११ ४ ५ । ५	व १ ० ० ० ११ ४ ५ । ५ । ५

मोहनीयवर्ज्यानाणानावरणादिशेषकर्मणास्थितिवन्ध अन्तरकरणचरमसमयस्थितिवन्धादसख्यातगुणहीन पल्यासख्यातवहुभागमात्रस्यापसरणात्। तत्र तीसियाना स्थितिवन्ध पल्यासख्यातैकभागमात्रोऽपि सर्वत स्तोक प (aa) अस्मादसख्येयगुणो वीसियाना स्थितिवन्ध प (a) अस्मादर्धेनाधिको वेदनीयस्य स्थितिवन्ध प ३ (a २) ॥ २५५ ॥

स० च०—जातैं इहा मोहका स्थितिवन्ध सख्यात हजार वर्षमात्र हो है तातैं पूर्व स्थितिबन्धापसरणतैं इहा स्थिति बन्धापसरण सख्यातगुणा घटता सम्भवै है। बहुरि ज्ञानावरणादिकनिका स्थितिबन्ध अतर करनेका अत समयसम्बन्धी स्थितिबन्धतैं असख्यातगुणा घटता है जातैं इनके स्थितिबधापसरणका प्रमाण पल्यकौ असख्यातका भाग दीए वहुभागमात्र है। तहा तीसीयनिका स्थितिबध पल्यका असख्यातवा भागमात्र है। औरनितैं स्तोक है। तातैं असख्यातगुणा वीसीयनिका है। तातैं ड्योढा वेदनीयका है ॥ २५५ ॥

अथोपरि भविष्यत्स्थितिवन्धापसरणप्रमाणावधारणार्थमाह——

वस्साण वत्तीसादुवरिं अतोमुहुत्तपरिमाण।
ठिदिबघाणोसरण अवरट्ठिदिबधणं जाव[1] ॥ २५६ ॥

---

[1] तस्समए पुरिसवेदस्स ठिदिवधो सोलसवस्साणि। सजलणाण ठिदिवधो वत्तीसवस्साणि। सेसाण पुण कम्माण ठिदिवधो सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। वही पृ० २८९।

वर्षाणां द्वात्रिंशदुपरि अन्तर्मुहूर्तपरिमाणम् ।
स्थितिबन्धानामपसरणमवरस्थितिबन्धनं यावत् ॥ २५६ ॥

स० टी०—द्वात्रिंशद्वर्षमात्रस्थितिबन्धस्योपरि अन्तर्मुहूर्तपरिमाणं स्थितिबन्धापसरणं सर्वजघन्यस्थिति बन्धपर्यंतं भवतीति ज्ञातव्यम् ॥ २५६ ॥

आगे स्थितिबन्धापसरणके प्रमाणका निर्देश—

स च—बत्तीस वर्षका स्थितिबंध जहां होइ तहांतै लगाय जहां जघन्य स्थितिबंध होइ तहां पर्यंत तिस बंधापसरणका प्रमाण अंतर्मुहूर्तमात्र जानना ॥ २५६ ॥

अथ स्थितिबन्धापसरणविषयनिर्देशार्थमिदमाह—

ठिदिबंधाणोसरणं एयं समयप्पबद्धमहिकिच्चा ।
उत्तं णाणादो पुण ण च उत्तं अणुववत्तीदो[1] ॥ २५७ ॥

स्थितिबन्धानामपसरणमेकं समयप्रबद्धमधिकृत्य ।
उक्तं नानातः पुनः न च उक्तमनुपपत्तितः ॥ २५७ ॥

स० टी०—विवक्षितापसरणेनापसृत्य विवक्षितबन्धप्रथमसमये बध्यमानमेकं समयप्रबद्धमधिकृत्य विवक्षितं स्थितिबन्धापसरणमुक्तं न पुनरन्तर्मुहूर्तकाले द्वितीयादिसमयेषु बध्यमानसमयप्रबद्धानां प्रत्येकं स्थितिबन्धापसरणमन्तर्मुहूर्तकालपर्यन्तं समस्थितिबन्धाभ्युपगमने नानासमयप्रबद्धानधिकृत्य स्थितिबन्धपसरणानुपपत्तेः । अनेनान्तर्मुहूर्तकालपर्यंतमेकैनैकस्थितिबन्धापसरणेन प्राक्तनस्थितिबन्धादपसृत्य समस्थितीनेव समयप्रबद्धान् बध्नातीत्ययमर्थो ज्ञाप्यते ॥ २५७ ॥

स्थितिबन्धापसरणविशेषका निर्देश—

स० च—स्थितिबंधापसरण है सो विवक्षित स्थितिबंधका प्रथम समयविषै जेता स्थितिबंधका प्रमाण हो है तितनाही अंतर्मुहूर्त कालपर्यन्त बंधते समयप्रबद्धनिके स्थितिबंधका प्रमाण हो है। समय समय प्रति नाना समयप्रबद्धनिके स्थितिबंधापसरण होनेकरि समय समय स्थितिबंध घटनेकी अनुपपत्ति कहिए अप्राप्ति है ॥ २५७ ॥

विशेष—बन्धावलिके व्यतीत होनेपर अपगतवेदी जीव अपने प्रथम समयमें जितने द्रव्यका संक्रम करता है उत्तरोत्तर अधःप्रवृत्त भागहारसे भाजितकर द्वितीय समयोंमें विशेष हीन विशेष हीन द्रव्यको संक्रमित करता है। यह जो अल्पबहुत्व है वह विवक्षित एक समयप्रबद्धके द्रव्यका संक्रम स्वीकार करनेपर ही घटित होता है, क्योंकि संक्रममें नाना समय प्रबद्धोंका संक्रम स्वीकार करनेपर योगमें वृद्धि और हानि होनेकी अपेक्षा उक्त अल्पबहुत्वरूप संक्रम नहीं घटित होता। इसलिये प्रकृतमें एक समयप्रबद्धकी अपेक्षा ही पूर्वोक्त अल्पबहुत्व समझना चाहिये। योगकी चार वृद्धि और चार हानि प्रसिद्ध ही है।

अथ नपुंसकवेदोपशमनान्तरकालभाविक्रियान्तरप्रदर्शनार्थमाह—

एवं संखेज्जेसु ठ्ठिदिबंधसहस्सगेसु तीदेसु ।
संढुवसमदे तत्तो इत्थिं च तहेव उवसमदि ॥ २५८ ॥

---

1 एस कमो एयसमयपबद्धस्स चेव। वही पृ० २८९।

कि माया वेदकके कार्योंका उल्लेख करते हुए जो चूर्णिसूत्र आये है उनमे जहाँ मोहनीय कर्मको छोड कर शेष कर्मो का स्थितिबन्धके साथ स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात स्वीकार किया है वहाँ माया सज्वलन और लोभ सज्वलनका मात्र स्थितिबन्ध तो स्वीकार किया है पर स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात नही स्वीकार किया है। इस प्रकार उक्त तर्क और प्रमाणसे स्पष्ट ज्ञात होता है कि अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न होनेके वाद मोहनीयकी किसी भी प्रकृतिका स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात नही होता।

जत्तो पाये होदि हु ठिदिबंघो सखवस्समेत्त तु।
तत्तो संखगुणूण बंधोसरण तु पयडीणं ॥ २५५ ॥

यत प्रायेण भवति हि स्थितिबन्ध सख्यवर्षमात्र॰ तु।
तत सख्यगुणोन बन्धापसरण तु प्रकृतीनाम् ॥ २५५ ॥

स॰ टी॰—यत कारणात्सख्यातसहस्रवर्षमात्र स्थितिबन्ध प्रायण भवति तत कारणात् सख्यातगुणोन स्थितिबन्धापसरण वध्यमानप्रकृतीना भवतीति सूत्रोक्तत्वात्—

स्थितिबन्ध	व १ ० ० ० १	व ० ० ० १ ५	व १ ० ० ० १ ५५
स्थितिबन्धापसरणप्रमाण	व १ ० ० ० १ ४ ५	व १ ० ० ० १ ४ ५ । ५	व १ ० ० ० १ ४ ५ । ५ । ५

मोहनीयवर्ज्यानाणानावरणादिशेषकर्मणास्थितिबन्ध अन्तरकरणचरमसमयस्थितिबन्धादसख्यातगुणहीन पल्यासख्यातबहुभागमात्रस्यापसरणात्। तत्र तीसियाना स्थितिबन्ध पल्यासख्यातैकभागमात्रोऽपि सर्वत स्तोक प अस्मादसख्येयगुणो वीसियाना स्थितिबन्ध प अस्मादर्धेनाधिको वेदनीयस्य स्थितिबन्ध
aa a
प ३ ॥ २५५ ॥
a २

स॰ च॰—जातै इहा मोहका स्थितिबन्ध सख्यात हजार वर्षमात्र हो है तातैं पूर्व स्थितिबन्धापसरणतैं इहा स्थिति बन्धापसरण सख्यातगुणा घटता सम्भवै है। बहुरि ज्ञानावरणादिकनिका स्थितिबन्ध अतर करनेका अत समयसम्बन्धी स्थितिबन्धतै असख्यातगुणा घटता है जातै इनके स्थितिबधापसरणका प्रमाण पल्यकौ असख्यातका भाग दीए बहुभागमात्र है। तहा तीसीयनिका स्थितिबध पल्यका असख्यातवा भागमात्र है। औरनितैं स्तोक है। तातैं असख्यातगुणा वीसीयनिका है। तातैं ड्योढा वेदनीयका है ॥ २५५ ॥

अथोपरि भविष्यत्स्थितिबन्धापसरणप्रमाणावधारणार्थमाह—

वस्साण वत्तीसादुवरिं अतोमुहुत्तपरिमाण।
ठिदिबंधाणोसरणं अवरट्ठिदिबंधणं जाव[1] ॥ २५६ ॥

---

१ तस्समए पुरिसवेदस्स ठिदिबधो सोलसवस्साणि। सजलणाण ठिदिबधो वत्तीसवस्साणि। सेसाण पुण कम्माण ठिदिबधो सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। वही पृ॰ २८९।

वर्षाणा द्वात्रिंशदुपरि अन्तर्मुहूर्तंपरिमाणम्।
स्थितिबन्धानामपसरणमवरस्थितिबन्धनं यावत् ॥ २५६ ॥

स० टी०—द्वात्रिंशद्वर्षमात्रस्थितिवन्धस्योपरि अन्तर्मुहूर्तपरिमाण स्थितिवन्धापसरण सर्वजघन्यस्थिति वन्धपर्यंत भवतीति ज्ञातव्यम् ॥ २५६ ॥

आगे स्थितिबन्धापसरणके प्रमाणका निर्देश—

स च—बत्तीस वर्षका स्थितिबध जहा होइ तहातै लगाय जहा जघन्य स्थितिबध होइ तहा पर्यंत तिस बधापसरणका प्रमाण अतर्मुहूर्तमात्र जानना ॥ २५६ ॥

अथ स्थितिबन्धापसरणविषयनिर्देशार्थमिदमाह—

ठिदिबधाणोसरण एय समयप्पबद्धमहिकिच्चा।
उत्त णाणादो पुण ण च उत्त अणुववत्तीदो[1] ॥ २५७ ॥

स्थितिबन्धानामपसरणमेकं समयप्रबद्धमधिकृत्य।
उक्तं नानात. पुन न च उक्तमनुपपत्तित ॥ २५७ ॥

स० टी०—विवक्षितापसरणेनापसृत्य विवक्षितबन्धप्रथमसमये बध्यमानमेक समयप्रबद्धमधिकृत्य विवक्षित स्थितिबन्धापसरणमुक्त न पुनरन्तर्मुहूर्तकाले द्वितीयादिसमयेषु बध्यमानसमयप्रबद्धाना प्रत्येक स्थितिबन्धापसरणमन्तर्मुहूर्तकालपर्यन्त समस्थितिवन्धाभ्युपगमने नानासमयप्रबद्धानधिकृत्य स्थितिबन्धपसरणानुपपत्ते। अनेनान्तर्मुहूर्तंकालपर्यंतमेकेनैकस्थितिबन्धापसरणेन प्राक्तनस्थितिबन्धादपसृत्य समस्थितीनेव समयप्रबद्धान् बध्नातीत्ययमर्थो ज्ञाप्यते ॥ २५७ ॥

स्थितिबन्धापसरणविशेषका निर्देश—

स० च—स्थितिबधापसरण है सो विवक्षित स्थितिबधका प्रथम समयविषे जेता स्थितिबधका प्रमाण हो है तितनाही अतर्मुहूर्त कालपर्यन्त बधते समयप्रबद्धनिके स्थितिबधका प्रमाण हो है। समय समय प्रति नाना समयप्रबद्धनिके स्थितिबधापसरण होनेकरि समय समय स्थितिबध घटनेकी अनुपपत्ति कहिए अप्राप्ति है ॥ २५७ ॥

विशेष—बन्धावलिके व्यतीत होनेपर अपगतवेदी जीव अपने प्रथम समयमे जितने द्रव्यका सक्रम करता है उत्तरोत्तर अध प्रवृत्त भागहारसे भाजितकर द्वितीय समयोमे विशेष हीन विशेष हीन द्रव्यको सक्रमित करता है। यह जो अल्पबहुत्व है वह विवक्षित एक समयप्रबद्धके द्रव्यका सक्रम स्वीकार करनेपर ही घटित होता है, क्योकि सक्रममे नाना समय प्रबद्धोका सक्रम स्वीकार करनेपर योगमे वृद्धि और हानि होनेकी अपेक्षा उक्त अल्पबहुत्वरूप सक्रम नही घटित होता। इसलिये प्रकृतमे एक समयप्रबद्धकी अपेक्षा ही पूर्वोक्त अल्पबहुत्व समझना चाहिये। योगकी चार वृद्धि और चार हानि प्रसिद्ध ही है।

अथ नपुसकवेदोपशमनान्तरकालभाविक्रियान्तरप्रदर्शनार्थमाह—

एवं संखेज्जेसु ठ्ठिदिबधसहस्सगेसु तीदेसु।
संढुवसमदे तत्तो इत्थि च तहेव उवसमदि ॥ २५८ ॥

1 एस कमो एयसमयपबद्धस्स चेव। वही पृ० २८९।

नामद्विके वेदनीयस्थितिबन्ध सख्यवर्षको भवति ।
एवं सप्तकषाया उपशान्ता शेषभागान्ते ॥ २६१ ॥

स० टी०—सप्तनोकषायोपशमनकालसख्यातबहुभागावशेषावसरे सर्वत स्तोक सख्यातसहस्रवर्षमात्रो मोहस्थितिवन्ध । तत सख्येयगुण सख्यातसहस्रवर्षमात्रो घातित्रयस्थितिवन्ध । तत सख्यातगुण सख्यातसहस्रवर्षमात्रो वोसियस्थितिवन्ध । तत साधिक सख्यातसहस्रवर्षमात्रो वेदनीयस्थितिवन्धश्च भवति । एव नपुसकवेदोपशमनप्रकारेणैव सप्त नोकपाया सख्यातसहस्रस्थितिवन्धेषु गतेषु अवशेषबहुभागचरमसमये उपशमिता भवन्ति ॥ २६१ ॥

सात नोकषायोकी उपशमनाके समय कार्यविशेषका निर्देश—

स० च०—सर्व ही कर्मनिका स्थितिवन्ध सख्यात हजार वर्षप्रमाण हो है। तहाँ स्तोक मोहका तातै सख्यातगुणा तीन घातियानिका तातै संख्यातगुणा नामगोत्रका तातैं किछू अधिक वेदनीयका जानना। ऐसै नपुसकवेदका उपशमवत् सात नोकषाय हैं ते उपशमनका अवशेष बहुभाग रहे थे तिनिका अन्त समयविषै उपशमाना हो है ॥ २६१ ॥

अत्र सभवद्विशेषप्रदर्शनार्थमिदमाह—

णवरि य पुवेदस्स य णवक समऊणदोण्णिआवलिय ।
मुच्चा सेस सव्व उवसंत होदि तच्चरिमे[1] ॥ २६२ ॥

नवरि च पुंवेदस्य च नवक समयोनद्व्यावलिकाम् ।
मुक्त्वा शेष सर्वमुपशान्त भवति तच्चरमे ॥ २६२ ॥

स० टी०—पुवेदनवकबन्धस्य समयोनद्व्यावलिमात्रसमयप्रवद्धान् वर्जयित्वा शेष पुवेदद्रव्य सर्वमपि तदुपशमनकालचरमसमये उपशमित भवतीत्यय विशेषो द्रष्टव्य । पुवेदसत्त्वद्रव्योपशमनकालचरमसमये समयोनद्व्यावलिमात्रनवकबन्धसमयप्रबद्धानामुपशमनवर्जितमवस्थान कथमिति चेदुच्यते, तद्यथा—

पुवेदोपशमनकालाभ्यन्तरे आवलिद्वयेऽवशिष्टे द्विचरमावलिप्रथमसमये बद्धस्य समयप्रबद्धस्य वन्धप्रथमसमयादारभ्य बन्धावलिचरमसमयपर्यन्तमुपशमन नास्ति । सर्वत्र नवकबन्धस्याचलावलिव्यतिक्रमे सत्येवोपशमनापकर्षणादिक्रियासम्भवो न वन्धावल्यामिति परागमसम्प्रदायाद्वन्धावल्या व्यतिक्रान्ताया तदनन्तरचरमोपशमनावल्या प्रथयसमयादारभ्य समय समय प्रत्येकैकफाल्युपशमनविधानेन उपशमनावलिचरमसमये चरमफालिद्रव्य सर्वसक्रमेणोपशमित द्विचरमावलिद्वितीयसमये[2] वद्धसमयप्रबद्धस्योपशमनकालचरमावलिप्रथमसमयपर्यन्तमुपशमन नास्ति । तत पर समय प्रत्येकैकफालिद्रव्योपशमनविधानेनोपशमनावलिचरमसमये चरमफालिद्रव्य वर्जयित्वा शेप सर्वमुपशमित । पुनर्द्विचरमावलितृतीयसमये वद्धसमयप्रवद्धस्योपशमनचरमावलिद्वितीयसमयपर्यन्तमुपशमन नास्ति । तत पर समय प्रत्येकैकफाल्युपशमनविधानेन चरमफालिद्विचरमफालिद्वय वर्जयित्वा शेषसर्वमुपशमितम् । एवमनेन क्रमेण गत्वा द्विचरमावलिचरमसमये वद्धसमयप्रवद्धस्योपशमनचरमावलिद्विचरमसमयपर्यन्तमुपशमन नास्ति । तत पर चरमसमये एकफालिद्रव्यमुपशमितम्, अवशिष्ट सर्वद्रव्यमनुपशमितमास्ते, तत उपशमनकालचरमावल्या बद्धसमयप्रवद्धानामावलिमात्राणामुपशमनचरमावलिचरयसमये किंचिदपि द्रव्य नोपशमित तेपामद्यापि वन्धावलिव्यतिक्रमाभावात् । पुनरुपरितनोच्छिष्टावल्या पुवेदस्य बन्ध एव नास्ति,

---

१ णवरि पुरिसवेदस्स वे आवलिया वधा समयूणा अणुवसता । वही पृ० २८४।

२ मुद्रितप्रतौ 'द्विचरमफालिद्विचरमसमये' इति पाठ ।

उदयोऽपि नास्ति । एव पुवेदोपशमनकालचरमसमये द्विचरमावलिद्वितीयादिसमयवद्धसमयप्रवद्धा ममयोनावलिमात्राश्चरमावलिवद्धसमयप्रवद्धा मम्पूर्णावलिमात्रास्ते सर्वेऽपि मिलित्वा समयोनद्वयावलिमात्रा ममयप्रवद्धा अनुपशमिता अवतिष्ठन्ते द्विचरमावलिप्रथमसमयवद्धसमयप्रवद्धस्य पुवेदोपशमनकालचरमावलिचरमसमये सर्वात्मनोपशमितत्वात् । द्वितीयादिसमयवद्धसमयप्रवद्धाना किञ्चिन्न्यूनत्वेऽपि एकदेशविकृतमनन्यवद्भवतीति न्यायेन मर्वेऽपि पुवेदनवकवन्धसमयप्रवद्धा समयोनद्वयावलिमात्रा पुवेदोपशमनकालचरमसमये उपशमनवर्जिता सन्तीति श्रीमन्माधवचन्द्रत्रैविद्यदेवाना तात्पर्यव्याख्यानम् ॥ २६२ ॥

०
उच्छिष्टावलि ० १
० १ २
० १ २ ३
० १ २ ३ ४
० १ २ ३ ४ ४
० १ २ ३ ४ ४ ४

० १ २ ३ ४ ४ ४ ४
उपशमनावलि १ २ ३ ४ ४ ४ ४
२ ३ ४ ४ ४ ४
३ ४ ४ ४ ४

४ ४ ४ ४
बधावलि ४ ४ ४
४ ४
४

पुरुषवेदके नवकबन्धकी उपशमनविधि—

स० च०—इतना विशेष है जो तिस अन्तसमयविषै पुरुषवेदका एक समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्धनिकौ छोडि अवशेष सर्व उपशमावै है। नवीन जे समयप्रबद्ध बँधे ते नवक समयप्रबद्ध कहिए सो बन्ध समयतै लगाय आवलीकालकौ बन्धावली कहिए तिस बन्धावलीविषै सो बध्या द्रव्य उपशम होने योग्य नाही। अर एक समयप्रबद्धके उपशमावनेकी समय समय सम्बन्धी आवलीमात्र फालि इहा हो है तातै समय घाटि दोय आवलीमात्र समयप्रबद्ध उपशमै नाही। कैसैं ? सो कहिए है—

उपशमकालका अन्तविषै दोय आवली तिनका नाम इहाँ द्विचरमावली अर चरमावली है। सो द्विचरमावलीका प्रथम समयविषै जो समयप्रबद्ध बध्या था सो बन्धाबली व्यतीत भएं चरमावलीका प्रथम समयतै लगाय समय समय प्रति एक एक फालिका उपशमन करि चरमावलीका अन्तसमयविषै सर्व उपशम्या। बहुरि द्विचरमावलीका द्वितीय समयविषै जो समयप्रबद्ध बध्या था सो बन्धावली व्यतीत भए चरमावलीका द्वितीय समयतै लगाय चरम आवलीका अन्तसमय पर्यंन्त अन्य फाली तौ उपशमै अर एक अन्त फाली नाही उपशमी। बहुरि ऐसैं ही द्विचरमावलीका तृतीयादि समयनिविषै बँधे समयप्रबद्ध ते बन्धावली व्यतीत भए चरमावलीका

तृतीयादि समयतैं लगाय अन्तसमयपर्यन्त समयनिविषै अन्य फाली तौ उपशमैं अर क्रमतैं दोय तीन च्यारि आदि फाली उपशमी नाही। तहाँ ऐसैं क्रमतैं द्विचरमावलीका अन्तसमयविषै वन्ध्या समयप्रबद्धकी चरमावलीका अन्तसमयविषै एक फाली उपशमी अवशेष उपशमी नाही ऐसैं तौ द्विचरमावलीविषैं बँधे समयप्रबद्धनिकी फाली न उपशमी। वहुरि चरमावलीके प्रथमादि सर्व समयनिविषै बँधे समयप्रबद्धनिके किछू भी द्रव्यका उपशम भया नाही। जातैं तिनकी बन्धावली व्यतीत नाही भई। वहुरि तातैं उपरिवर्ती उच्छिष्टावलीविषै पुरुषवेदका बन्ध भी अर उदय भी है नाही। ऐसैं पुरुषवेदकौ उपशमकालका अन्तसमयविषै द्विचमावरलीके तौ एक समय घाटि आवलीमात्र अर चरमावलीके सम्पूर्ण आवलीमात्र मिलि एक समय घाटि दोय आवलीमात्र समयप्रबद्ध उपशमैं नाही। इहाँ अशकौ अशीवत् कहिए इस न्यायकरि उपशमी नाही जे समय-प्रबद्धकी फाली तिनका भी नाम समयप्रबद्ध ही कह्या है ऐसा जानना॥ २६२॥

विशेष—पुरुषवेदका उपशम करनेवाला जीव छह नोकपायोके साथ ही उसका उपशम करता है। मात्र इसके उदय और बन्धकी व्युच्छित्ति एक साथ होनेसे छह नोकषायोके साथ इसके उपशमन होनेपर भी एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवकवन्धरूप समयप्रबद्ध बच जाते हैं जिनका उपशमन बादमे होता है। खुलासा इस प्रकार है—ऐसा नियम है कि नये कर्मका बन्ध होनेपर एक आवलिकालतक वह तदवस्थ रहता है। इस नियमके अनुसार पुरुषवेदके उपशम होनेकी अन्तिम उपशमनावलिके प्रथम समयमे पुरुषवेदका एक कम दो आवलिप्रमाण नवक समयप्रबद्ध अनुपशान्त रहता है, क्योकि पुरुपवेदकी उपान्त्य उपशमनावलिमे पुरुषवेदके आवलि-प्रमाण नवक समयप्रबन्धोमेसे प्रथम समयप्रबद्धकी एक-एक फालिका अन्तिम उपशमनावलिके प्रत्येक समयमे उपशम होकर तदनन्तर उच्छिष्टावलिके प्रथम समयमे वह पूरा उपशान्त रहता है। यह तो उपान्त्य उपशमनावलिके प्रथम समयमे बँधे हुए समयप्रबद्धके उपशमनकी व्यवस्था है। उपान्त्य उपशमनावलिके दूसरे समयमे बँधे हुए समयप्रबद्धका अन्तिम उपशमनावलिके द्वितीय समयसे उपशमन प्रारम्भ होकर अन्तिम एक फालिको छोडकर शेष समस्त द्रव्य उपशान्त हो जाता है। इसी प्रकार उपान्त्य उपशमनावलिके तीसरे समयमे बँधे हुए समयप्रबद्धका अन्तिम उपशमनावलिके दूसरे समयसे उपशमन प्रारम्भ होकर अन्तिम दो फालियोको छोडकर उसके अन्तिम समयमे शेष समस्त द्रव्य उपशान्त हो जाता है। इसी प्रकार उपान्त्य उपशमनावलिके अन्तिम समयतक बँधे हुए समयप्रबद्धका विचार कर लेना चाहिए। साथ ही इतना विशेष जानना चाहिए कि अन्तिम उपशमनावलिके प्रत्येक समयमे बँधे हुए प्रत्येक समयप्रबद्धकी उसी आवलिके भीतर उपशमनक्रिया नही होती, इसलिए एक तो अन्तिम उपशमनावलिके अन्तिम समयके बाद प्रथम समयमे उपान्त्य उपशमनावलिसम्बन्धी एकसमयप्रबद्धकम एक आवलि-प्रमाण समयप्रबद्ध अनुपशान्त रहते हैं। दूसरे अन्तिम उपशमनावलिसम्बन्धी समस्त समयप्रबद्ध अनुपशान्त रहते हैं। इस प्रकार पुरुषवेदसे उपशमश्रेणिपर चढे हुए जीवके उसके अन्तिम समयमे एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवकसमयप्रबद्ध अनुपशान्त रहते हैं यह सूत्रगाथामे कहा गया है। और यह इसलिए वन जाता है कि पुरुषवेदके बन्ध और उदयकी व्युच्छित्ति तो एक साथ होती ही है। साथ उक्त नवक समयप्रवद्धोको छोडकर शेष पुरुषवेद सम्बन्धी पूरे द्रव्यकी उपशमनाका भी वही अन्तिम समय है। मूलमे अक सदृष्टि दी ही है। उसमे आवलिके लिए तथा एक समयप्रवद्धकी समस्त फालियोके लिए ४ अक कल्पित किये गये है। '०' शून्य पूरे समय-

प्रबद्धके उपशम होनेको सूचित करनेके लिए कल्पित किया गया है। सदृष्टिमे उपान्त्य उपशमनावलिको बन्धावलि, अन्तिम उपशमनावलिको उपशमनावलि और उसके बादकी आवलिको उच्छिष्टावलि कहा गया है।

अथ पुंवेदोपशमनकालचरमसमये स्थितिबन्धप्रमाणप्ररूपणार्थमिदमाह—

तच्चरिमे पुबंधो सोलसवस्साणि संजलणगाणं।
तद्दुगाणि सेसाणं संखेज्जसहस्सवस्साणि[1] ॥ २६३ ॥

तच्चरमे पुबंधः षोडशवर्षाणि सज्वलनकानाम्।
तद्द्विकानि शेषाणा सख्यसहस्रवर्षाणि ॥ २६३ ॥

स० टी०—तस्य पवेदोपशमनकालस्य सवेदानिवृत्तिकरणस्य चरमसमये षोडशवर्षमात्र पुंवेदस्थितिबन्ध। सज्वलनचतुष्टयस्य स्थितिबधो द्वात्रिंशद्वर्षप्रमित। घातिचतुष्टयस्य सख्यातसहस्रवर्षमात्र स्थितिबन्ध। तत सख्येयगुणो नामगोत्रयो सख्यातसहस्रवर्षमात्र स्थितिबन्ध। तत साधिको वेदनीयस्य सख्यातसहस्रवर्षमात्र स्थितिबन्ध ॥ २६३ ॥

पुरुषवेदके उपशमनाकालके अन्तिम समयमे स्थितिबन्धका विधान—

स० च०—तिस पुरुषवेदका उपशमनकाल पर्यन्त सवेद अनिवृत्तिकरण है ताका अन्तसमयविषै पुरुषवेदका सोलह वर्षमात्र सज्वलनचतुष्कका बत्तीस वर्षमात्र औरनिका सख्यात हजार वर्षमात्र तहाँ स्तोक तीन घातियानिका तातै सख्यातगुणा नामगोत्रका तातै साधिक वेदनीयका स्थितिबन्ध हो है ॥ २६३ ॥

अथ पुंवेदस्य प्रथमस्थितौ आवलिद्वयावशेषाया सभवत्क्रियान्तरप्रतिपादनार्थमिदमाह—

पुरिसस्स य पढमठिदी आवलिदोसुवरिदासु आगाला।
पडिआगाला छिण्णा पडियावलियादुदीरणदा[2] ॥ २६४ ॥

पुरुषस्य च प्रथमस्थिति आवलिद्वयोरुपरतयोरागाला।
प्रत्यागाला छिन्ना प्रत्यावलिकात उदीरणता ॥ २६४ ॥

स० टी०—पुंवेदस्य प्रथमस्थिति क्रमेण गलित्वा यदा द्व्यावलिमात्रावशेषा भवति तदा आगालप्रत्यागालौ व्युच्छिन्नौ। आवलिद्वयावशेषप्रथमसमयात्प्रभृति गुणश्रेणिनिर्जरापि व्युच्छिन्ना किन्तु तदैवोदयावलिबाह्योपरितनावलिद्रव्यस्योदयावल्यामुदीरणापि पूर्वोक्तलक्षणा प्रारब्धा ॥ २६४ ॥

प्रकृतमे अन्य कार्योंका निर्देश—

स० च०—पुरुषवेदकी अन्तरायामके नीचैं कही थी जो प्रथमस्थिति तीहिंविषै दोय आवली अवशेष रहैं आगाल प्रत्यागालका व्युच्छेद भया। बहुरि दोय आवली अवशेष रहैं तहाँ

---

1. तस्समए पुरिसवेदस्स ट्ठिदिबधो सोलस वस्साणि। सेसाण कम्माण ट्ठिदिबधो सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। वही पृ० २८५।

2. पुरिसवेदस्स पढमट्ठिदीए जाधे वे आवलियाओ सेसाओ ताधे आगाल-पडिआगालो वोच्छिण्णो। वही पृ० २८५।

प्रथम समयतैं लगाय पुरुषवेदकी गुणश्रेणि निर्जराका व्युच्छेद भया तहाँ उदयावलीतैं वाह्य ऊपरि निषेकनिविषै तिष्ठता द्रव्यकौ उदयावलीविषै दीजिए है। ऐसी उदीरणा ही पाइए है। इनिका लक्षण पूर्वोक्त जानने ॥ २६४ ॥

विशेष—पुरुषवेदकी कितनी स्थिति शेष रहने तक आगाल और प्रत्यागाल होते है इसका समाधान जयधवलामे दो प्रकारसे किया गया है। प्रथम समाधानके अनुसार तो यह बतलाया गया है कि पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिमे एक समय अधिक दो आवलियाँ शेप रहने तक आगाल और प्रत्यागाल होते है। पूरी दो आवलिप्रमाण स्थितिके शेष रहनेपर उन दोनोकी व्युच्छित्ति हो जाती है किन्तु दूसरी व्याख्याके अनुसार दो आवलिप्रमाण प्रथम स्थितिके शेष रहने तक आगाल और प्रत्यागाल होते रहते है। किन्तु एक समय कम दो आवलिप्रमाण प्रथमस्थितिके शेष रहनेपर वे दोनो व्युच्छिन्न हो जाते हैं। इसपर प्रश्न होता है कि यदि ऐसा है तो सूत्रमे यह क्यो कहा कि जब पुरुषवेदकी प्रथम स्थिति दो आवलिप्रमाण शेष रहती है तव आगाल और प्रत्यागाल व्युच्छिन्न हो जाते हैं सो इसका समाधान यह कहकर किया है कि यह कथन उत्पादानुच्छेदनयका आश्रय लेकर किया गया है, क्योकि उत्पादानुच्छेदके अनुसार विवक्षित वस्तुके सद्भावका जो अन्तिम समय है उस समयमे ही उसके अभावका प्रतिपादन किया जाता है। जैसे मिथ्यात्वगुणस्थानमे उसके जिन १६ प्रकृतियोका बन्ध होता है, इस नयके अनुसार वही उनकी बन्धव्युच्छित्ति कही जाती है। प्रथमस्थितिमे स्थित द्रव्यका उत्कर्षण कर द्वितीय स्थितिमे निक्षेप करना आगाल है और द्वितीय स्थितिमे स्थित द्रव्यका अपकर्षणकर प्रथम स्थितिमे निक्षिप्त करना प्रत्यागाल है। यही प्रत्यावलिमेसे प्रतिसमय असख्यात समयप्रबद्धोकी उदीरणा होती है।

अन्तरकरणसमाप्त्यनन्तरसमयादारभ्य सक्रमविशेषप्ररूपणार्थमिदमाह—

अतरकदादु छण्णोकसायदव्व ण पुरिसगे देदि।
एदि हु सजलणस्स य कोधे अणुपुव्विसकमदो[1] ॥ २६५ ॥

अतरकृतात् षण्णोकषायद्रव्यं न पुरुषके ददाति।
एति हि सञ्ज्वलनस्य च क्रोधे आनुपूर्विसंक्रमत ॥ २६५ ॥

स० टी०—अन्तरकृतादन्तरकरणसमाप्तिसमयात्पर हास्यादिषण्णोकषायद्रव्य पुवेदे न सक्रमत्येव अपि तु सज्वलनक्रोधे एव सक्रमति पूर्वोद्दिष्टानुपूर्वीसक्रमानतिक्रमात् ॥ २६५ ॥

अन्तरकरणके बाद—

स० च०—अन्तर करनेतैं पीछै हास्यादि छह नोकषायनिका द्रव्य है सो पुरुषवेदविषै सक्रमण नाही करै है सज्वलन क्रोधविषै ही सक्रमण करै हैं जातैं इहाँ आनुपूर्वी सक्रमण पाइए है ॥ २६५ ॥

---

१ अतरकदादो पाए छण्णोकसायाण पदेसग्ग ण सछुहदि पुरिसवेदे, कोहसजलणे सछुहदि। वही पृ० २६७।

अथ पुंवेदनवकबन्धद्रव्यस्योपशमनविधानप्ररूपणार्थमिदमाह—

पुरिसस्स उत्तणवकं असंखगुणियक्कमेण उवसमदि ।
संकमदि हु हीणकमेणधापवत्तेण हारेण[1] ॥ २६६ ॥

पुरुषस्य उक्तनवकं असंख्यगुणितक्रमेण उपशमयति ।
संक्रमति हि हीनक्रमेणाधःप्रवृत्तेन हारेण ॥ २६६ ॥

१०
स० टी०—पुंवेदस्य प्रागुक्तनवकद्रव्यं समयोनद्वचावलिमात्रसमयप्रबद्धप्रमितं स ∂ । ४२ पुंवेदानि-
७ । २
वृत्तिचरमसमये अनुपशमितं सदवतिष्ठते । पुनरपगतवेदप्रथमसमये पुंवेदोपशमनकालद्विचरमावलिद्वितीयसमय-बद्धसमयप्रबद्धस्य सर्वात्मनोपशमितत्वात् द्विसमयोनद्वचावलिमात्रसमयप्रबद्धरूपं पुंवेदनवकबन्धसत्त्वमनुपशमितमास्ते । तस्मिन्नपगतवेदप्रथमसमये व्यतिक्रान्तबन्धावलिकसमयप्रबद्धस्य यावदुपशमितं द्रव्यं स ∂ तद-
७ । २ । गु
नन्तरद्वितीयसमये ततोऽसंख्येयगुणं द्रव्यमुपशमयति स ∂ एवं चरमफालिपर्यन्तसंख्यातगुणितक्रमेणोप-
७ २ । गु
∂
शमनद्रव्यं ज्ञातव्यम् । एवमितरेषामपि समयप्रबद्धानां स्वस्वबन्धावलिव्यतिक्रान्तसमयादारभ्य प्रतिसमयमसंख्यातगुणितक्रमेणोपशमनफालिद्रव्यं नेतव्यम् । एवमपगतवेदप्रथमसमयादारभ्य समयोनद्वचावलिमात्रकाले सर्वं पुंवेदनवकबन्धमुपशमितं भवतीति ज्ञातव्यम् । एको नवकबन्धसमयप्रबद्धः एकावलिमात्रकाले उपशमितो भवति । अत एवावलिसमयमात्राणि एकसमयफालिद्रव्याणि कृतानि तान्यङ्कसंदृष्टया तावन्ति । ४ । तथा पुंवेदनवकबन्ध-स्यैकसमयप्रबद्धद्रव्यं स ∂ अपगतवेदप्रथमसमये अथाप्रवृत्तभागहारेण खण्डयित्वा तदेकभागद्रव्यं संज्वलनक्रोध-
७ । २
द्रव्ये संक्रमयति स ∂ अवशिष्टबहुभागद्रव्यं पुनरप्यथाप्रवृत्तभागहारेण खण्डयित्वा तदेकभागद्रव्यं द्वितीयसमये
७ । २ । अ
१०
संक्रमयति स ∂ अ अवशिष्टं तद्बहुभागद्रव्यं पुनरप्यथाप्रवृत्तभागहारेण खण्डयित्वा तदेकभागं तृतीयसमये
७ । २ । अ अ
१० १
संक्रमयति स । ∂ अ अ एवमनेन क्रमेण समयोनद्वचावलिचरमसमयपर्यन्तं विशेषहीनं द्रव्यं संक्रमयति ।
७ । २ । अ अ अ
तथा पुनः पुंवेदनवकबन्धस्यापरं समयप्रबद्धद्रव्यं प्रतिसमयमसंख्यातभागहीनक्रमेण संक्रमयति, पुनरन्यत्समय-प्रबद्धद्रव्यं प्रतिसमयं संख्यातभागहीनक्रमेण, पुनरन्यत्समयप्रबद्धद्रव्यं संख्यातगुणहीनक्रमेण संक्रमयति, पुनरपरं

---

१ जो पढमसमयअवेदो तस्स पढमसमयअवेदस्स संत पुरिसवेदस्स दोआवलियबन्धा दुसमयूणा अणुवसंता । जो दोआवलियबन्धा दुसमयूणा अणुवसंता तेसिं पदेसग्गमसंखेज्जगुणाए सेढीए उवसामिज्जदि । परपयडीए पुण अधापवत्तसंकमेण संकामिज्जदि । एस कमो एयसमयपबद्धस्स चेव । वही पृ० २८७ से २८९ ।

सम्भव है। यह एक प्रश्न है। समाधान यह है कि बन्धकी व्युच्छित्ति हो जानपर भी पुरुषवेद और तीन सज्वलन आदिके नवक बन्धका अध प्रवृत्त सक्रम होता है ऐसा स्वीकार किया गया हैं। सक्रम विधिका खुलासा इस प्रकार है—पहले समयमे विवक्षित समयप्रबद्धमेसे जितने द्रव्यका सक्रम और उपशम हुआ उतने द्रव्यको उस समयप्रबद्धमेंसे कम कर दूसरे समयमे जो बहुभाग-प्रमाण द्रव्य शेप बचा उसमे अध प्रवृत्तसक्रमका भाग देनेपर जो एकभाग प्राप्त होता है उसका उस दूसरे समयमे सक्रम करता है। इसी प्रकार तृतीयादि समयोमे भी जान लेना चाहिए। यह सक्रम प्रकृतमे एकसमयप्रबद्धकी अपेक्षा स्वीकार किया गया है, नाना समयप्रबद्धोकी अपेक्षा नही, इसलिए यहाँ योगके अनुसार चार वृद्धि और चार हानि सम्भव न होकर उत्तरोत्तर विशेषहीन होकर ही सक्रम होता है ऐसा स्वीकार किया गया है।

अथापगतवेदस्य प्रथमसमये स्थितिबन्धप्रमाणप्रदर्शनार्थमिदमाह—

पढमावेदे सजलणाण अतोमुहुत्तपरिहीण।
बस्साण बत्तीस सखसहस्सियरगाण ठिदिबधो[1] ॥ २६७ ॥

प्रथमावेदे सज्वलनाना अन्तर्मुहूर्तपरिहीनम्।
वर्षाणा द्वात्रिंशत् सख्यसहस्रमितरेषा स्थितिबन्ध ॥ २६७ ॥

स० टी०—प्रथमसमयवर्तिन्यपगतवेदे सज्वलनक्रोधादिचतुष्टयस्य स्थितिबन्धोऽन्तर्मुहूर्तहीनो द्वात्रिंशद्वर्षप्रमित। सवेदचरमसमयवर्तिन प्राक्तनस्थितिबन्धात्सपूर्णद्वात्रिंशद्वर्षमात्र दन्तर्मुहूर्तस्थितिबन्धापसरणवशेनापगतवेदप्रथमसमये एवविधस्थितिबन्धस्य युक्तत्वात्। शेपकर्मणा तीसियवीसियवेदनीयाना प्राक्तनस्थितिबन्धात्सख्यातगुणहीन स्थितिबन्ध सख्यातसहस्रवर्षमात्र एव पूर्वोक्ताल्पबहुत्वविधानेन ज्ञातव्य ॥ २६७ ॥

अपगतवेदीके प्रथमसमयमे स्थितिबन्धसम्बन्धी विधान—

स० च०—अपगतवेदका प्रथम समयविषै सज्वलन चतुष्कका तौ अन्तर्मुहूर्त घाटि बत्तीस वर्षमात्र स्थितिबन्ध है जातै बत्तीस वर्ष स्थिति थी तामै एक बार स्थितिबन्धापसरण करि अन्तर्मुहूर्त घटया। बहुरि अन्य कर्मनिका पूर्वस्थिति बन्धतै सख्यातगुणा घटता पूर्वोक्त प्रकार हीनाधिक क्रम लीए सख्यात हजार वर्षमात्र स्थितिबन्ध हो है ॥ २६७ ॥

अथापगतवेदस्य सभवत्क्रियान्तरप्रदर्शनार्थं गाथाद्वयमाह—

पढमावेदो तिविह कोहे उवसमदि पुव्वपढमठिदी।
समयाहियआवलिय जाव य तक्कालठिदिबधो[1] ॥ २६८ ॥

---

१ पढमसमयअवेदस्स सजलणाण ट्ठिदिबधो बत्तीस वरसाणि अतोमुहुत्तूणाणि। सेसाण कम्माण ट्ठिदिबधो सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। वही पृ० २८९।

१ पढमसमयअवेदो तिविह कोहमुवसामेइ। सा चेव पोराणिया पढमट्ठिदी हवदि (पृ २९०)। एदेण कमेण जावे आवलिय-पडिआवलियाओ सेसाओ कोधसजलणस्स तावे विदियट्ठिदीदो पढमट्ठिदीदो आगाल-पडिआगालाओ वोच्छिण्णो। पडिआवलियादो चेव उदीरणा कोहसजलणस्स। वही पृ० २९१। आगाल-पडिआगालवोच्छेदे तदो पहुडि कोहसजलणस्स णत्थि गुणसेढिणिक्खेवो। तदो पडिआवलिादो चेव पदेसग्गमोकड्डियूणासखेज्जे समयपबद्धे उदीरेदि। जयध० पु० १३ पृ० २९२। पडि आवलियाए एकम्हि समए सेसे कोहसजलणस्स जहण्णिया ट्ठिदिउदीरणा। वही पृ० २९२।

प्रत्यावलिमेसे ही प्रदेशपुंजका अपकर्षण कर वह जीव असख्यात समयप्रबद्धोकी उदीरणा करता है।

तस्य क्रोधत्रयस्योपशमनकालचरमसमये सज्वलनक्रोधप्रथमस्थितौ समयाधिकावलिमात्रावशेपकर्मणा स्थितिबन्ध ईदृशो भवतीति वक्ष्यते—

संजलणचउक्काण मासचउक्क तु सेसपयडीण ।
वस्साण संखेज्जसहस्साणि हवंति णियमेण[1] ॥ २६९ ॥

सज्वलनचतुष्काणा मासचतुष्क तु शेषप्रकृतीनाम् ।
वर्षाणा संख्येयसहस्राणि भवति नियमेन ॥ २६९ ॥

स० टी०—सज्वलनक्रोधादिचतुष्टयस्यापगतवेदप्रथमसमयादारभ्यान्तर्मुहूर्तमात्रस्थितिबन्धापसरणेषु सख्यातसहस्रेषु गतेषु क्रोधत्रयोपशमनकालचरमसमये स्थितिबन्धश्चतुर्मासमात्र । शेपकर्मणा तीसियवीसिय-वेदनीयाना प्राक्तनस्थितिबन्धात्सख्यातगुणहीनोऽपि सख्यातसहस्रवर्षमात्र एव पूर्वोक्ताल्पबहुत्वक्रमेण प्रवर्तते ॥ २६९ ॥

सज्वलन क्रोध आदिके स्थिति बन्धके प्रमाण निर्देश—

स० च०—अपगतका प्रथम समयतैं लगाय अतर्मुहूर्तमात्र आयाम धरे ऐसे सख्यात हजार स्थितिबध भए क्रोधत्रिकका उपशम कालका अतसमयविषै सज्वलन चतुष्कका स्थितिबध च्यारि मासमात्र हो है। बहुरि तिस ही अतसमयविषै और कर्मनिका पूर्वस्थितिबधतै सख्यातगुणा घट्या ऐसा सख्यात हजार वर्षमात्र पूर्वोक्त प्रकार हीनाधिकपना लीए स्थितिबध हो है ॥ २६९ ॥

अथ क्रोधद्रव्यस्य सक्रमविशेषप्रदर्शनार्थमिदमाह—

कोहदुग सजलणगकोहे संछुहदि जाव पढमठिदी ।
आवलितिय तु उवरिं सछुहदि हु माणसंजलणे[2] ॥ २७० ॥

क्रोधद्विक सज्वलनक्रोधे संक्रामति यावत् प्रथमस्थिति ।
आवलित्रिकं तु उपरि संक्रामति हि मानसज्वलने ॥ २७० ॥

स० टी०—अपगतवेदे प्रथमसमयादारभ्य सज्वलनक्रोधप्रथमस्थितिरावलित्रयावशेषा यावत्तावद्भ-वति। तावदप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानक्रोधद्वयद्रव्य गुणसक्रमेण गृहीत्वा सज्वलनक्रोधे सक्रमयति। तत्र प्रथमा सक्रमावलि, द्वितीया उपशमनावलि, तृतीया उच्छिष्टावलिरिति व्यपदिश्यते। तत पर तद्द्रव्य सक्रमणावलिचरमसमयपर्यन्त सज्वलनमाने सक्रमयति ॥ २७० ॥

क्रोधके द्रव्यके सक्रमण विशेषका विधान—

स० च०—अपगत वेदका प्रथम समयतैं लगाय सज्वलन क्रोधकी प्रथम स्थितिविषै तीन

---

१ चदुण्ह सजलणाण ठिदिबधो चत्तारि मासा। सेसाण कम्माण ट्ठिदिबधो सखेज्जाणि वस्स-सहस्साणि। वही पृ० २९२।

२ कोहसजलणे दुविहो कोहो ताव सछुहदि जाव कोहसजलणस्स पढमट्ठिदीए तिण्णि आवलियाओ सेसाओ त्ति तिसु आवलियासु समयूणासु सेसासु तत्तो पाए दुविहो कोहो कोहसजलणण सकमदि। वही पृ० २९३-२९४।

प्रथमावेदस्त्रिविध क्रोध उपशमयति पूर्वप्रथमस्थिति ।
समयाधिकावलिका यावच्च तत्कालस्थितिवन्ध ॥ २६८ ॥

स० टी०—प्रथमसमयवर्त्यपगतवेदानिवृत्तिकरणविशुद्धिसंयत तत्कालसमयप्रबद्धसमयादारभ्य पुंवेदनवकबन्धेन सहाप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्वलनक्रोधत्रयमुपशमयति । तत्र संज्वलनक्रोधस्योदयमानस्य पूर्वमन्तरकरणप्रारम्भे स्थापितान्तर्मुहूर्तमात्री प्रथमस्थिति पुंवेदप्रथमस्थितौ विशेषाधिका संवेदानीमपि गलितावशेषप्रमाणा समयाधिकावलिमात्रावशेषा यावत्तावत्प्रवर्तते । उच्छिष्टावल्या प्रथमस्थितिव्यपदेशासम्भवात । उपरि मानादीना यथाभिनवा प्रथमस्थिति करिष्यति तथा सज्वलनक्रोधस्य नूतनप्रथमस्थितिकरणानुपपत्तेश्च । संज्वलनक्रोधस्य प्रथमस्थितौ यदा आवलिप्रत्यावलिद्वयमवशिष्यते तदा आगालप्रत्यागालो व्युच्छिन्नौ । तदैव संज्वलनक्रोधस्य गुणश्रेणिनिर्जरापि व्युच्छिन्ना केवल प्रागुक्तक्रमेण प्रत्यावलिद्रव्यस्योदीरणा भवति ॥ २६८ ॥

अपगतवेदीके अन्य कार्योंका निर्देश —

स० च०—प्रथम समयवर्ती अपगतवेदी सयमी सो अपगतवेदका प्रथम समयतैं लगाय पुरुषवेदका नवक समयप्रवद्ध सहित अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान सज्वलन इनि तीनो क्रोधनिकौं उपशमावै है। तहाँ उदयरूप जो सज्वलन क्रोध ताकी प्रथम स्थिति पूर्वे जो अन्तरकरणका प्रारम्भविषै अन्तर्मुहूर्तमात्र प्रथम स्थिति स्थापी थी ताका प्रमाण पुरुषवेदकी प्रथम स्थितितैं साधिक था तिसविषै व्यतीत भए पीछै जो अवशेष रह्या तामें एकसमय अधिक आवलीमात्र अवशेष रहैं तहातैं पहिलै इहाँ सज्वलनक्रोधकी प्रथम स्थिति जाननी । जातैं उच्छिष्टावली अवशेष रहै प्रथम स्थिति नाम न पावै है। बहुरि जैसै मानादिककी नवीन प्रथमस्थितिका स्थापन करेंगे तैसै क्रोधकी प्रथमस्थिति नवीन न हो है जातैं सज्वलन क्रोधका ही उदय चल्या आवै है, तातै अन्तरकरणविषै स्थापी जो प्रथम स्थिति ताका ही इहाँ ग्रहण किया सो इस प्रथम स्थितिविषै आवली प्रत्यावली ए दोय अवशेष रहैं आगाल प्रत्यागालका अर सज्वलन क्रोधकी गुणश्रेणि निर्जराका व्युच्छेद हो हैं। द्वितीयावलीका द्रव्यकौ उदयावलीविषै देनेरूप केवल उदीरणा ही पाइए है ॥ २६८ ॥

विशेष—पुरुषवेदके पुराने सत्कर्मके उपशान्त होने पर उसके नवक बन्धको क्रमसे उपशमाता हुआ ही अपगतवेदी जीव प्रत्याख्यान, अप्रत्याख्यान और सज्वलनरूप तीन क्रोधोकी उपशमविधिका प्रारम्भ करता है। इस जीवने पहले जो अन्तरकरण क्रिया करते हुए क्रोध सज्वलनकी प्रथम स्थिति पुरुष वेदकी प्रथम स्थितिसे साधिक स्थापित की थी, वह प्रथम स्थिति अपगत वेदके प्रथम समयमे गलित होकर जितनी शेष बची वही शेष बची प्रथम स्थिति यहाँ प्रवृत्त रहती है। जिस प्रकार आगे मानादिककी उपशामना करते समय अपूर्व प्रथम स्थिति स्थापित की जाती है उस प्रकार यहाँ पर तीन क्रोधके उपशमानेके लिये अपूर्व प्रथम स्थिति नही स्थापित की जाती। किन्तु पहले जो प्रथम स्थिति रची थी वही पुरानी प्रथम स्थिति तीन क्रोधोके उपशमाने तक चालू रहती है। इस क्रमसे जब क्रोध सज्वलनकी प्रथम स्थिति उदयावलि और प्रति उदयावलिप्रमाण शेष रहती है तब आगाल-प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति हो जाती है। यह कथन यहाँ उत्पादानुच्छेदकी अपेक्षा किया है। क्योकि यहाँ पर दो आवलियोसे एक समय कम दो आवलियाँ ली गई हैं। आगाल-प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति हो जाने पर क्रोधसज्वलनका गुणश्रेणि निक्षेप नही होता, क्योकि सबसे जघन्य गुणश्रेणि आयाम एक आवलिप्रमाण है, उससे कम नही। इसलिये

प्रत्यावलिमेसे ही प्रदेशपुंजका अपकर्षण कर वह जीव असख्यात समयप्रवद्धोकी उदीरणा करता है।

तस्य क्रोधत्रयस्योपशमनकालचरमसमये सज्वलनक्रोधप्रथमस्थितौ समयाधिकावलिमात्रावशेपकर्मणा स्थितिवन्ध ईदृशो भवतीति वक्ष्यते—

संजलणचउक्काणं मासचउक्क तु सेसपयडीण ।
वस्साण सखेज्जसहस्साणि हवंति णियमेण[1] ॥ २६९ ॥

सज्वलनचतुष्काणां मासचतुष्क तु शेषप्रकृतीनाम् ।
वर्षाणा सख्येयसहस्राणि भवति नियमेन ॥ २६९ ॥

स० टी०—सज्वलनक्रोधादिचतुष्टयस्यापगतवेदप्रथमसमयादारभ्यान्तर्मुहूर्तमात्रस्थितिवन्धापसरणेपु सख्यातसहस्रेषु गतेषु क्रोधत्रयोपशमनकालचरमसमये स्थितिवन्धश्चतुर्मासमात्र । शेपकर्मणा तीसियवीसिय-वेदनीयाना प्राक्तनस्थितिबन्धात्सख्यातगुणहीनोऽपि सख्यातसहस्रवर्षमात्र एव पूर्वोक्तालपवहुत्वक्रमेण प्रवर्तते ॥ २६९ ॥

सज्वलन क्रोध आदिके स्थिति बन्धके प्रमाण निर्देश—

स० च०—अपगतका प्रथम समयतैं लगाय अतमुंहूर्तमात्र आयाम धरे ऐसे सख्यात हजार स्थितिबध भए क्रोधत्रिकका उपशम कालका अतसमयविषै सज्वलन चतुष्कका स्थितिबध च्यारि मासमात्र हो है। बहुरि तिस ही अतसमयविषै और कर्मनिका पूर्वस्थितिबधतैं सख्यातगुणा घट्या ऐसा सख्यात हजार वर्षमात्र पूर्वोक्त प्रकार हीनाधिकपना लीए स्थितिबध हो है ॥ २६९ ॥

अथ क्रोधद्रव्यस्य सक्रमविशेषप्रदर्शनार्थमिदमाह—

कोहदुग सजलणगकोहे सछुहदि जाव पढमठिदी ।
आवलितिय तु उवरिं संछुहदि हु माणसजलणे[2] ॥ २७० ॥

क्रोधद्विक सज्वलनक्रोधे सक्रामति यावत् प्रथमस्थिति ।
आवलित्रिकं तु उपरि संक्रामति हि मानसज्वलने ॥ २७० ॥

स० टी०—अपगतवेदे प्रथमसमयादारभ्य सज्वलनक्रोधप्रथमस्थितिरावलित्रयावशेषा यावत्तावद्भवति। तावदप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानक्रोधद्वयद्रव्य गुणसक्रमेण गृहीत्वा सज्वलनक्रोधे सक्रमयति। तत्र प्रथमा सक्रमावलि, द्वितीया उपशमनावलि, तृतीया उच्छिष्टावलिरिति व्यपदिश्यते। तत पर तद्द्रव्य सक्रमणावलिचरमसमयपर्यन्त सज्वलनमाने सक्रमयति ॥ २७० ॥

क्रोधके द्रव्यके सक्रमण विशेषका विधान—

स० च०—अपगत वेदका प्रथम समयतैं लगाय सज्वलन क्रोधकी प्रथम स्थितिविषै तीन

---

१ चदुण्ह सजलणाण ठिदिवधो चत्तारि मासा। सेसाण कम्माण ट्ठिदिवधो सखेज्जाणि वस्स-सहस्साणि। वही पृ० २९२।

२ कोहसजलणे दुविहो कोहो ताव सछुहदि जाव कोहसजलणस्स पढमट्ठिदीए तिण्णि आवलियाओ सेसाओ त्ति तिसु आवलियासु समयूणासु सेसासु तत्तो पाए दुविहो कोहो कोहसजलणण सकमदि। वही पृ० २९३-२९४।

आवली अवशेष रहै तावत् अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान क्रोधादिकका द्रव्यकौं गुणसंक्रम भागहार करि ग्रहि सज्वलन क्रोधविषै सक्रम कराइए है। बहुरि सक्रमावली १ उपशमावली २ उच्छिष्टावली ३ ए तीन आवली रही तिनविषै सक्रमावलीका अतसमय पर्यंत तिन दोऊनिका द्रव्य सज्वलन मानविषै सक्रमण हो है ॥ २७० ॥

विशेष—क्रोधसज्वलनकी प्रथम स्थिति तीन आवलि प्राप्त होने तक ही अप्रत्याख्यानक्रोध और प्रत्याख्यान क्रोधका क्रोधसज्वलनमे सक्रम होता है। उसमे एक समय कम होने पर उक्त दोनो क्रोधोका मानसज्वलनमे सक्रम होने लगता है। इस प्रकार जब क्रोधसज्वलनकी प्रथम स्थिति उच्छिष्टावलिमात्र शेष रहती है तब क्रोधसज्वलनकी बन्धव्युच्छित्ति और उदय व्युच्छित्ति हो जाती है। ऐसा होने पर भी चूर्णिसूत्रमे जो यह कहा है कि जब क्रोध सज्वलनकी प्रथम स्थितिमे एक समय कम एक आवलि काल शेष रहता है तब क्रोधसज्वलनके बन्ध-उदयकी व्युच्छित्ति हो जाती है सो यहाँ पूरी उच्छिष्टावलि न कह कर एक समय कम उच्छिष्टावलि इसलिये कही, क्योकि जिस समय क्रोधकी उदयव्युच्छित्ति होती है उसी समय उदयव्युच्छित्तिके कारण प्रथम-निषेकस्थितिके मानसज्वलनके उदयमे स्तिवुक सक्रमके द्वारा सक्रमित हो जाने पर उच्छिष्टा-वलिमे एक समय कम हो जाता है

अथ उपशमनावलिचरमसमये सभवत्क्रियाविशेषप्ररूपणार्थमिदमाह—

कोहस्स पढमठिदी आवलिसेसे तिकोहमुवसंत।
ण य णवकं तत्थंतिमबंधुदया होंति कोहस्स[1] ॥ २७१ ॥
क्रोधस्य प्रथमस्थितौ आवलिशेषं त्रिक्रोधमुपशान्तं।
न च नवकं तत्रान्तिमबन्धोदया भवन्ति क्रोधस्य ॥ २७१ ॥

स० टी०—सज्वलनक्रोधस्य प्रथमस्थितौ उच्छिष्टावलिमात्रावशेषायामुपशमनावलिचरमसमये क्रोध-त्रयद्रव्यं समयोनद्व्यावलिमात्रसमयप्रबद्धनवकबन्धं मुक्त्वा पूर्वोक्तविधानेन चरमफालिरूपेण निरवशेषं स्वस्थाने एवोपशमयति। तस्मिन्नेवोपशमनावलिचरमसमये सज्वलनक्रोधस्य बन्धोदयौ युगपदेव व्युच्छिन्नौ। तस्मिन्नेव समये सज्वलनक्रोधस्योच्छिष्टावलिप्रथमनिषेकः सज्वलनमाने थिउक्कसक्रमेण सक्रम्योदयमागमिष्यति अत कारणात् सज्वलनक्रोधप्रथमस्थितौ समयोनोच्छिष्टावलिरवशिष्टेति ग्राह्यम्। एवं क्रोधत्रयमुपशमितम् ॥ २७१ ॥

उपशमनावलिके अन्तिम समयमे होनेवाले क्रियाविशेषका निर्देश—

स० च०—सज्वलन क्रोधकी प्रथम स्थितिविषै उच्छिष्टावली अवशेष रहैं उपशमनावलीका अंतसमयविषै समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्ध विना पूर्वोक्त प्रकार चरम फालिरूप करि समस्त सज्वलन क्रोधका द्रव्य अपने रूप ही रहता उपशम भया। तहां ही सज्वलन क्रोधका बध वा उदयका व्युच्छेद भया। तिस ही समयविषै उच्छिष्टावलीका प्रथम निषेक है सो सज्वलन मानविषै वक्ष्यमाण लक्षणरूप जो थिउक्क सक्रमण ताकरि सक्रमणरूप होइ उदयकौ प्राप्त होसी। यातै सज्वलन क्रोधकी प्रथम स्थिति विषै समय घाटि उच्छिष्टावली अवशेष रही कहिए है। ऐसैं क्रोधत्रिकका उपशम भया ॥ २७१ ॥

---

१ पढिमावलिया उदयावलियं पविसमाणा पविट्ठा। ताधे चेव कोहसजलणे दोआवलियबधे दुसमयूणे मोत्तूण सेसा तिविहकोधपदेसा उवसामिज्जमाणा उवसता। वही पृ० २९३।

विशेष—भाव यह है कि जिस समय उपशमनावलि समाप्त होकर उच्छिष्टावलि प्रारम्भ होती है उसी समय तीनो प्रकारके क्रोधके उपशम होनेके साथ नवक समयप्रबद्धोको छोडकर क्रोधसज्वलनके बन्ध और उदय व्युच्छिन्न होते है। यहाँ जो तीनो प्रकारके उपशमनावलिके अन्तमे उपशम होनेका विधान किया है सो उसका तात्पर्य यह है कि तीनो प्रकारके क्रोधोका प्रशस्त उपशमनविधिके द्वारा उनके पूरे द्रव्यका स्वस्थानमे ही उपशम हो जाता है, जिनका उपशम होनेके प्रथम समयसे असख्यात गुणित श्रेणिरूपसे उपशम होता है और उपशमनावलिके अन्तमे उनका पूरा द्रव्य उपशमित हो जाता है। यत उपशमनावलिका अन्त होकर जिस समय उसका अभाव है वही उच्छिष्टावलिके प्रारम्भ होनेका प्रथम समय है, इसलिए उपशमनावलिके अन्तिम समयकी अपेक्षा विचार करने पर उस समय नवक समयप्रबद्ध एक समय कम दोआवलि प्रमाण शेष बचता है और उच्छिष्टावलिके प्रथम समयकी अपेक्षा विचार करने पर वह दो समय कम दो आवलिप्रमाण शेष बचता है ऐसा यहाँ समझना चाहिये। विशेष व्याख्यान पुरुषवेदके प्रसगसे कर ही आये है।

अथ मानत्रयोपशमनविधानप्रदर्शनार्थं गाथापञ्चकमाह—

से काले माणस्स य पढमट्ठिदिकारवेदगो होदि।
पढमट्ठिदिम्मि दव्व असंखगुणियक्कमे देदि ॥ २७२ ॥
तस्मिन् काले मानस्य च प्रथमस्थितिकारवेदको भवति।
प्रथमस्थितौ द्रव्य असंख्यगुणितक्रमेण ददाति ॥ २७२ ॥

स० टी०—क्रोधत्रयोपशमनानन्तरसमये अयमनिवृत्तिकरणसयत सज्वलनमानस्यान्तर्मुहूर्तमात्रप्रथमस्थिते कारको वेदकश्च भवति तद्यथा—सज्वलनमानस्य द्वितीयस्थितौ स्थितिसत्त्वद्रव्यादस्मात् स ƏI। १२–
७। ८
अपकर्षणभागहारखण्डितैकभाग गृहीत्वा पुन पल्यासख्यातभागेन खडयित्वा तदेकभागमुदयावलिप्रथमसमयादारभ्य इदानी क्रियमाणप्रथमस्थितिचरमसमयपर्यन्त प्रक्षेपयोगेत्यादिना प्रतिनिषेकमसख्यातगुणितक्रमेण निक्षिपति। पुन पल्यासख्यातबहुभाग द्वितीयस्थितौ 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यनेन विशेषहीनक्रमेण उपर्यतिस्थापनावलि मुक्त्वा निक्षिपति। पुनर्द्वितीयादिसमयेष्वपि प्रथमसमयादपकृष्टद्रव्यासख्येयगुणितक्रमेण द्रव्यमपकृष्य प्रागुक्तप्रकारेण प्रथमद्वितीयस्थित्योर्निक्षिपति। प्रतिसमय प्रथमस्थितिप्रथमनिषेकमेकैकमुदयमानमनुभवति च ॥ २७२ ॥

स० च०—तीनो क्रोधका उपशम होनेके अनन्तरि समयविषै यहु सयमी सज्वलन मानकी अन्तर्मुहूर्तमात्र प्रथम स्थितिका कारक कहिए कर्ता अर वेदक कहिए उदयका भोक्ता हो है सो कहिए है—

सज्वलन मानकी प्रथम स्थितिके ऊपरिवर्ती जो द्वितीय स्थितिका द्रव्य ताकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहाँ एक भागकौं ग्रहि ताकौ पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग देइ एक भागकौं उदयावलीका प्रथम समयतै लगाय इहाँ करी जो प्रथम स्थिति ताका अन्तसमय पर्यन्त

---

१ माणसजलणस्स पढमसमयवेदगो पढमट्ठिदिकारओ च। पढमट्ठिदिं करेमाणो उदये पदेसग्ग थोव देदि, से काले असखेज्जगुण। एवमसखेज्जगुणाए सेढीए जाव पढमट्ठिदिचरिमसमयो त्ति। पृ० २९५-२९६।

सम्बन्धी जे निषेक तिनविषै 'प्रक्षेपयोगोद्धृतमिश्रपिंड' इत्यादि विधानतै असंख्यातगुणा क्रम लीए निक्षेपण करिए है। अवशेष बहुभागका द्वितीय स्थितिविषै अन्तके अतिस्थापनावलीमात्र निषेक छोडि अन्य सर्व निषेकनिविषै 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यादि विधानतैं विशेष घटता क्रम लीए निक्षेपण करिए है। बहुरि द्वितीयादि समयनिविषै प्रथम समयविषै अपकर्षण कीया द्रव्यतै असंख्यातगुणा क्रम लीए द्रव्यकौ ग्रहि पूर्वोक्त प्रकार निक्षेपण करै है। बहुरि समय-समय उदय आया प्रथम स्थितिका एक-एक निषेककौ भोगवै है ॥ २७२ ॥

विशेष—जिस समय तीनो क्रोधोंका उपशम होता है उसके अनन्तर समयमें प्रथम स्थिति करनेके साथ उसी समय उसका वेदक भी होता है। तात्पर्य यह है कि इससे पहले मान सज्वलनकी प्रथम स्थिति गलकर समाप्त हो जाती है, क्योकि उपशमश्रेणिमे क्रोधवेदक जीव क्रोधकी प्रथम स्थितिको छोडकर शेष तीन कषायोकी प्रथम स्थिति एक आवलिप्रमाण करता है जो इस समय नही पाई जाती, इसलिए वह मान सज्वलनकी द्वितीय स्थितिमसे प्रति समय असख्यात कर्मपुजका अपकर्षण कर उसका उदय समयसे निक्षेप करता है, इसीलिए ही यहाँ इस जीवको प्रथम स्थितिका कारक और वेदक कहा है।

पढमट्ठिदिसीसादो विदियादिम्हि य असखगुणहीण।
तत्तो विसेसहीण जाव अइच्छावणमपत्त[1] ॥ २७३ ॥

प्रथमस्थितिशीर्षत द्वितीयादौ च असख्यगुणहीनम्।
ततो विशेषहीन यावत् अतिस्थापनमप्राप्तम् ॥ २७३ ॥

स० टी०—प्रथमस्थितिचरमसमयनिक्षिप्तद्रव्यात द्वितीयस्थितिप्रथमनिषेके निक्षिप्तद्रव्यमसख्यातगुणहीन, प्रथमस्थितिशीर्षद्रव्यस्य पल्यभागहारभूतासख्यातरूपबाहुल्यविशेषादसख्यातसमयप्रवद्धमात्रत्वात्। द्वितीयस्थितिप्रथमनिषेकनिक्षिप्तद्रव्यस्य च द्वयर्धगुणहान्यपकर्षणभागहारभक्तत्वेनैकसमयप्रवद्धासख्येयभागमात्रत्वात्। ततो द्वितीयस्थिते प्रथमनिषेकद्रव्यादुपरितननिषेकेषु विशेषहीनक्रमेणातिस्थापनावलेरधोनिक्षिप्तद्रव्य विशेषतोऽसख्येयगुणहीनमेव। सज्वलनमानस्य प्रथमस्थितिकरणवेदनप्रथमसमयादारभ्य मानत्रयस्य द्वितीयस्थितिद्रव्य प्रतिसमयमसख्यातगुणितक्रमेणोपशमयति। तदैव सज्वलनक्रोधस्य समयोनोच्छिष्टावलिमात्रनिषेकद्रव्यमपि सज्वलनमानस्योदयावल्या समस्थितिनिषेकेषु प्रतिसमयमेकैकनिषेकक्रमेण सक्रम्य उदयमागमिष्यति। सज्वलनक्रोधोच्छिष्टावलिनिषेका मानोदयावलिनिषेकेषु सक्रम्य अनन्तरसमयेषूदयमागच्छन्तीति तात्पर्यम्। अयमेव थिउक्कसक्रम इति भण्यते ॥ २७३ ॥

स० च०—प्रथम स्थितिका शीर्ष जो अन्तसमय तीहिंविषै निक्षेपण कीया जो द्रव्य तातै द्वितीय स्थितिका प्रथम निषेकविषै निक्षेपण कीया द्रव्य असख्यातगुणा घटता है। तातै प्रथमस्थितिका शीर्षविषै तौ भागहार पल्य ताका भागहार असख्यात है। तातै असख्यात समयप्रबद्धमात्र द्रव्य निक्षेपण करै है। अर द्वितीय स्थितिका प्रथम निषेकविषै भागहार द्वयर्ध गुणहानि है। तातै समयप्रबद्धका असख्यातवाँ भागमात्र द्रव्य निक्षेपण हो है। बहुरि द्वितीय स्थितिका प्रथम निषेकतै उपरि निषेकनिविषै विशेष घटता क्रम लीए यावत् अतिस्थापनावली प्राप्त न होइ तावत् द्रव्यका निक्षेपण हो है। बहुरि सज्वलन मानकी प्रथम स्थितिका प्रथम समयतै लगाय

१ विदियट्ठिदीए जा आदिट्ठिदी तिस्से असखेज्जगुणहीण, तदो विसेसहीण चेव। वही पृ० २९६।

तीन मानका द्वितीय स्थितिविषै तिष्ठता द्रव्यकों समय-समय असख्यातगुणा क्रम लीए उपशमावै है। तहाँ ही सज्वलन क्रोधके समय घाटि उच्छिष्टावलीमात्र निषेक ते अपनी समान स्थिति लीए जे सज्वलन मानको उदयावलीके निषेक तिनविषै समय-समय एक-एक निषेकका अनुक्रम करि सक्रमणरूप होइ ताके अनन्तरवर्ती समयविषै उदय हो है। इस प्रकार सक्रम होइ ताहीका नाम थिउक्क सक्रम कहिए है ॥ २७३ ॥

विशेष—यहाँ पुरुषवेदसे उपशमश्रेणिपर चढनेवाला जीव जब मान सज्वलनकी प्रथम-स्थिति करता है उस समयसे अपकर्षित द्रव्यका निक्षेप किस विधिसे होता है इसे स्पष्ट करनेके लिए प्रसग प्राप्त यह गाथा कही गई है। गाथामे केवल यह कहा गया है कि प्रथम स्थितिके शीर्षसे द्वितीय स्थितिमे असख्यातगुणहीन द्रव्यका निक्षेप करता है। तथा उसके आगे अति-स्थापनावलिके पूर्वतक विशेषहीन द्रव्यका निक्षेप करता है। आशय यह है कि जिस समय यह जीव मानसज्वलनकी प्रथम स्थिति करता है उस समय उदयस्थितिमे सबसे कम प्रदेशपुजका निक्षेप करता है। उसके बादकी स्थितिसे लेकर गुणश्रेणिशीर्षके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर असख्यातगुणे-असख्यातगुणे द्रव्यका निक्षेप करता है। उसके बाद द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकमे प्रथमस्थितिके शीर्षसे असख्यातगुणे हीन द्रव्यका निक्षेप करता है। तथा उसके बाद अति-स्थापनावलिके प्राप्त होनेके पूर्वतक विशेषहीन-विशेषहीन द्रव्यका निक्षेप करता है। यह क्रम प्रति समय चालू रहता है यहाँ प्रथम स्थिति एक आवलि अधिक अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होती है। इसे समझकर इस निक्षेप विधिको जानना चाहिए। प्रति समय प्रथम स्थितिमे और द्वितीय स्थितिमे कितने द्रव्यका निक्षेप होता है इसे टीकासे जान लेना चाहिए। तथा मायासज्वलनके सम्बन्धमे भी मानसज्वलनके समान कथन कर लेना चाहिए। विशेषता न होनेसे हम खुलासा नही करेंगे।

माणस्स य पढमठिदी सेसे समयाहिया तु आवलियं।
तियसजलणगबंधो दुमास सेसाण कोह आलावो[1] ॥ २७४ ॥

मानस्य च प्रथमस्थिति शेषे समयाधिका तु आवलिकाम्।
त्रिकसंज्वलनकबन्धो द्विमासं शेषाणा क्रोधआलाप ॥ २७४ ॥

स० टी०—सज्वलनमानस्य प्रथमस्थितौ समयाधिकावल्यामवशिष्टाया उपशमनादिविधानै सख्यात-सहस्रस्थितिबन्धापसरणेषु गतेषु मानोपशमनकालचरमसमये सज्वलनमानमायालोभाना स्थितिबधो मासद्वयप्र-मितो भवति। शेषकर्मणा स्थितिबन्ध सख्यातगुणहीनोऽपि क्रोधालापवत्तीसियादीना पूर्वोक्ताल्पबहुत्वयुक्त सख्यातसहस्रवर्षमात्र एव ॥ २७४ ॥

स० च०—सज्वलन मानकी प्रथम स्थितिविषै समय अधिक आवली अवशेष रहै सख्यात हजार स्थिति बन्धापसरण होनेतै मानके उपशमकालका अन्तसमयविषै सज्वलन मान माया लोभका स्थितिबन्ध दोय मास हो है। अर और कर्मनिका पूर्व स्थितिबन्धतै सख्यातगुणा घटता है तथापि पूर्वोक्तवत् अल्पबहुत्व लिए सख्यात हजार वर्षमात्र स्थितिबन्ध हो है ॥ २७४ ॥

---

१ ताधे माण-माया-लोभसजलणाण दुमासट्ठिदिगो बधो। सेसाण कम्माण ट्ठिदिबधो सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। वही पृ० २९९।

मायाद्विक सज्वलनगमायाया सक्रामति यावत् प्रथमस्थिति ।
आवलित्रिक तु उपरि सक्रामति हि लोभसज्वलने ॥ २७९ ॥

स० टी०—मायासज्वलनप्रथमस्थिते आवलित्रय यावदवशिष्यते तावदप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानमाया-द्वयद्रव्य मायासज्वलने एव सक्रामति । तत पर सक्रमणावल्या सज्वलनलोभे सक्रामति ॥ २७९ ॥

स० च० – सज्वलन मायाका प्रथमस्थितिविषै यावत् तीन आवली अवशेष रहै तावत् अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान मायाद्विकका द्रव्य सज्वलन मायाविषै ही सक्रमण करै है । तातैं परैं सक्रमणावलिविषै तिनिका द्रव्य सज्वलन लोभविषै सक्रमण करे है ॥ २७९ ॥

मायाए पढमठिदी आवलिसेसे त्ति मायमुवसंत ।
ण य णवकं तत्थंतिम बंधुदया होंति मायाए ॥ २८० ॥
मायाया प्रथमस्थितौ आवलिशेषे इति मायमुपशान्तम् ।
न च नवक तत्रान्तिमे बन्धोदयौ भवत मायाया ॥ २८० ॥

स० टी०—सज्वलनमायाप्रथमस्थितौ आवलिमात्रावशिष्टायामुपशमनावलिचरमसमये मायात्रय समयोनद्वयावलिमात्रनवकबन्धसमयप्रबद्धान् मुक्त्वा अन्यत्सर्वं सर्वात्मनोपशमित भवति । तस्मिन्नेव समये उच्छिष्टावलिप्रथमनिषेक सज्वलनलोभोदयावलिप्रथमनिषेके थिउक्कसक्रमेण सक्रामति । तस्मिन्नेव समये मायासज्वलनस्य बन्धोदयौ व्युच्छिन्नौ ॥ २८० ॥

मायाकी प्रथम स्थिति आवलिमात्र शेष रहनेपर कार्यविशेषका निर्देश—

स० च०—मायाकी प्रथम स्थितिविषै आवली अवशेष रहै उपशमनावलीका अन्त समय विषै समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्ध विना अन्य सर्वमायाका द्रव्य उपशम्या । ताही समयविषै उच्छिष्टावलीका प्रथम निषेक है सो सज्वलनलोभका उदयावलीका प्रथम निषेक-विषै थिउक्क सक्रमणकरि सक्रमै है । तिस ही समयविषै सज्वलन मायाका बन्ध वा उदयकी व्युच्छित्ति भई ॥ २८० ॥

अथ लोभत्रयोपशमनविधानप्ररूपणार्थं गाथाद्वयमाह—

से काले लोहस्स य पढमट्ठिदिकारवेदगो होदि ।
ते पुण बादरलोहो माण वा होदि णिक्खेओ[२] ॥ २८१ ॥
स्वे काले लोभस्य च प्रथमस्थितिकारवेदको भवति ।
तत् पुन बादरलोभ मानो वा भवति निक्षेप ॥ २८१ ॥

स० टी०—मायात्रयोपशमनानन्तरसमये लोभत्रयोपशमन प्रारभमाण सज्वलनलोभस्य प्रथमस्थिते कारको वेदकश्च भवति । स पुनरनिवृत्तिकरणो (बादर) बादरलोभोदयमनुभवन् बादरसाम्पराय इत्युच्यते । अत्र सज्वलनलोभद्रव्यादपकृष्य प्रथमस्थितौ निक्षेप सज्वलनमानप्रथमस्थितिनिक्षेपवत्कर्तव्य । तस्मिन्नेव समये मायासज्वलनस्य समयोनद्वयावलिमात्रनवकबन्धसमयप्रबद्धान् पूर्वोक्तविधानेनोपशमयति समयोनोच्छिष्टा-वलिमात्रनिषेकाश्च प्राग्वत्स्थितोक्तसक्रमेण सज्वलनलोभे सक्रमयति ॥ २८१ ॥

---

१ समयाहियाए आवलियाए सेसाए मायाए चरिमसमय उवसामगो मोत्तूण दोआवलियबधे समयूणे । वही पृ० ३०३ । तदो से काले मायासजलणस्स बधोदया वोच्छिण्णा । वही पृ० ३०४ ।

१ ताधे चेव लोभसजलणमोकड्डियूण लोभस्स पढमट्ठिदिं करेदि । वही पृ० ३०४ ।

लोभसज्वलनकी प्रथमस्थिति करनेका निर्देश—

स० च०—मायाका उपशमनेके अनन्तरि सज्वलनलोभकी प्रथमस्थितिका कारक अर वेदक हो है। सो अनिवृत्तिकरण जीव है सो वादर कहिए स्थूल जो लोभ ताकौ अनुभवता वादर सापराय कहिए है। इहाँ सज्वलनलोभका द्रव्यका अपकर्पण करि प्रथम स्थितिविपै निक्षेपण कीजिए है। ताका विधान मानका प्रथमस्थितिविपै जैसै निक्षेपण कीया था तैसै जानना। तिस ही समय सज्वलन मायाके समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रवद्धनिकौ पूर्वोक्त प्रकारकरि उपशमावै है। अर समय घाटि उच्छिष्टावलीमात्र मायाके निषेकनिका सज्वलन लोभविषै थिउक्क सक्रमण हो है ॥ २८१ ॥

पढमट्ठिदिअद्धंते लोहस्स य होदि दिणपुधत्त तु।
वस्ससहस्सपुधत्तं सेसाण होदि ठिदिवंधो[1] ॥ २८२ ॥

प्रथमस्थित्यर्धान्ते लोभस्य च भवति दिनपृथक्त्वं तु।
वर्षसहस्रपृथक्त्व शेषाणा भवति स्थितिबन्ध ॥ २८२ ॥

स० टी०—मायात्रयोपशमनानन्तरसमयादारभ्य सज्वलनवादरलोभवेदककालोऽनिवृत्तिकरणचरमसमयपर्यन्तो भवति। तत पर सूक्ष्मसाम्परायचरमसमयपर्यन्त सज्वलनसूक्ष्मलोभवेदककालो भवति। उभयोऽपि मिलित्वा लोभवेदकाद्धेति उच्यते। स च लोभवेदककालोऽन्तर्मुहूर्तमात्र तस्य सदृष्टि २ ७। इद सख्यातेन

खण्डयित्वा तद्बहुभाग २ ९ ७ (ऊपर १॰, नीचे ९) त्रिषु स्थानेपु विभज्य स्थापयेत्—२ ९ ९ (ऊपर १॰, नीचे ७ ३) २ ९ ९ (ऊपर १॰, नीचे ९ ३) २ ७ ९ (ऊपर १॰, नीचे ९ ३)।

पुनस्तदेकभाग सख्यातेन खण्डयित्वा वहुभाग प्रथमस्थाने दद्यात २ ९ ९ (ऊपर १॰, नीचे ९ ९) पुनरवशिष्टैकभाग अपरेण सख्यातेन खडयित्वा तद्बहुभाग द्वितीयस्थाने दद्यात् २ ९ ९ (ऊपर १॰)। तदेकभाग तृतीयस्थाने दद्यात् स्थानत्रयसदृष्टि —

१॰ — २ ९ ७ — ७ । ३
१॰ ९ ७ ९ — २ ७ ९ — ९ । ३
१॰ — २ ९ ९ — ७ । ३

१॰ — २ ७ ७ — ७ ७
१॰ — २ ७ ७ — ७ ७ ७
२ ७ — ७ ७ ७

अत्र प्रथमभागसज्वलनवादरलोभवेदकाद्धा प्रथमार्ध। द्वितीयो भाग सूक्ष्मकृष्टिकरणकाल। तृतीयो भाग सूक्ष्मकृष्टिवेदक काल। स एव सूक्ष्मसाम्परायकाल। अत्र प्रथमद्वितीयभागयोर्मेलने लोभवेदकाद्धा द्वित्रिभागमात्र भाधिक प्रथमस्थितिप्रमाण भवति २ ७ २ (नीचे ३) तद्यथा—

---

[1] तदो अद्धस्स चरिमसमए लोभसजलणस्स ट्ठिदिवधो दिवसपुधत्त। सेसाण कम्माण ट्ठिदिवधो वस्ससहस्सपुधत्त। चू० सू०, जयध० पु० १३, पृ० ३०६।

मायाद्विक सज्वलनगमायाया सक्रामति यावत् प्रथमस्थिति ।
आवलित्रिक तु उपरि सक्रामति हि लोभसज्वलने ॥ २७९ ॥

स० टी०—मायासज्वलनप्रथमस्थितौ आवलित्रय यावदवशिष्यते तावदप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानमाया-द्वयद्रव्य मायासज्वलने एव सक्रामति । तत पर सक्रमणावल्या सज्वलनलोभे सक्रामति ॥ २७९ ॥

स० च०- सज्वलन मायाका प्रथमस्थितिविषै यावत् तीन आवली अवशेष रहै तावत् अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान मायाद्विकका द्रव्य सज्वलन मायाविषै ही सक्रमण करै है । तातै परै सक्रमणावलिविषै तिनिका द्रव्य सज्वलन लोभविषै सक्रमण करै है ॥ २७९ ॥

मायाए पढमठिदी आवलिसेसे त्ति मायमुवसतं ।
ण य णवक तत्थतिम बधुदया होति मायाए ॥ २८० ॥
मायाया प्रथमस्थितौ आवलिशेषे इति मायमुपशान्तम् ।
न च नवक तत्रान्तिमे वन्धोदयौ भवत मायाया ॥ २८० ॥

स० टी०—सज्वलनमायाप्रथमस्थितौ आवलिमात्रावशिष्टायामुपशमनावलिचरमसमये मायात्रय समयोनद्व्यावलिमात्रनवकवन्धसमयप्रबद्धान् मुक्त्वा अन्यत्सर्वं सर्वात्मनोपशमित भवति । तस्मिन्नेव समये उच्छिष्टावलिप्रथमनिषेक सज्वलनलोभोदयावलिप्रथमनिषेके थिउक्कसक्रमेण सक्रामति । तस्मिन्नेव समये मायासज्वलनस्य वन्धोदयौ व्युच्छिन्नौ ॥ २८० ॥

मायाकी प्रथम स्थिति आवलिमात्र शेष रहनेपर कार्यविशेषका निर्देश—

स० च०—मायाकी प्रथम स्थितिविषै आवली अवशेष रहैं उपशमनावलीका अन्त समय विषै समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्ध विना अन्य सर्वमायाका द्रव्य उपशम्या। ताही समयविषै उच्छिष्टावलीका प्रथम निषेक है सो सज्वलनलोभका उदयावलीका प्रथम निषेक-विषै थिउक्क सक्रमणकरि सक्रमै है। तिस ही समयविषै सज्वलन मायाका वन्ध वा उदयकी व्युच्छित्ति भई ॥ २८० ॥

अथ लोभत्रयोपशमनविधानप्ररूपणार्थं गाथाद्वयमाह—

से काले लोहस्स य पढमट्ठिदिकारवेदगो होदि ।
ते पुण बादरलोहो माण वा होदि णिक्खेओ[२] ॥ २८१ ॥
स्वे काले लोभस्य च प्रथमस्थितिकारवेदको भवति ।
तत् पुन बादरलोभ मानो वा भवति निक्षेप ॥ २८१ ॥

स० टी०—मायात्रयोपशमनानन्तरसमये लोभत्रयोपशमन प्रारभमाण सज्वलनलोभस्य प्रथमस्थिते कारको वेदकश्च भवति । स पुनरनिवृत्तिकरणो (बादर) बादरलोभोदयमनुभवन् बादरसाम्पराय इत्युच्यते । अत्र सज्वलनलोभद्रव्यादपकृष्य प्रथमस्थितौ निक्षेप सज्वलनमानप्रथमस्थितिनिक्षेपवत्कर्तव्य । तस्मिन्नेव समये मायासज्वलनस्य समयोनद्व्यावलिमात्रनवकवन्धसमयप्रबद्धान् पूर्वोक्तविधानेनोपशमयति समयोनोच्छिष्टा-वलिमात्रनिषेकाश्च प्राग्वत्स्थितोक्तसक्रमेण सज्वलनलोभे सक्रमयति ॥ २८१ ॥

१ समयाहियाए आवलियाए सेसाए मायाए चरिमसमय उवसामगो मोत्तूण दोआवलियबधे समयूणे। वही पृ० ३०३ । तदो से काले मायासजलणस्स बधोदया वोच्छिण्णा । वही पृ० ३०४ ।

१ ताधे चेव लोभसजलणमोकड्डियूण लोभस्स पढमट्ठिदिं करेदि । वही पृ० ३०४।

लोभसज्वलनकी प्रथमस्थिति करनेका निर्देश—

स० च०—मायाका उपशमनेके अनन्तरि सज्वलनलोभकी प्रथमस्थितिका कारक अर वेदक हो है। सो अनिवृत्तिकरण जीव है सो वादर कहिए स्थूल जो लोभ ताकौं अनुभवता वादर सापराय कहिए है। इहाँ सज्वलनलोभका द्रव्यका अपकर्षण करि प्रथम स्थितिविषै निक्षेपण कीजिए है। ताका विधान मानका प्रथमस्थितिविषै जैसै निक्षेपण कीया था तैसै जानना। तिस ही समय सज्वलन मायाके समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रवद्धनिकौं पूर्वोक्त प्रकारकरि उपशमावै है। अर समय घाटि उच्छिष्टावलीमात्र मायाके निषेकनिका सज्वलन लोभविषै थिउक्क सक्रमण हो है॥ २८१॥

पढमट्ठिदिअद्धते लोहस्स य होदि दिणपुधत्तं तु।
वस्ससहस्सपुधत्तं सेसाण होदि ठिदिबंधो[1]॥ २८२॥

प्रथमस्थित्यर्धान्ते लोभस्य च भवति दिनपृथक्त्वं तु।
वर्षसहस्रपृथक्त्वं शेषाणा भवति स्थितिबन्धः॥ २८२॥

स० टी०—मायात्रयोपशमनानन्तरसमयादारभ्य सज्वलनवादरलोभवेदककालोऽनिवृत्तिकरणचरमसमयपर्यन्तो भवति। तत पर सूक्ष्मसाम्परायचरमसमयपर्यन्त सज्वलनसूक्ष्मलोभवेदककालो भवति। उभयोऽपि मिलित्वा लोभवेदकाद्धेति उच्यते। स च लोभवेदककालोऽन्तर्मुहूर्तमात्र तस्य सदृष्टि २ ७। इद सख्यातेन खण्डयित्वा तद्बहुभाग २ ७ ७ (१०) / ९ त्रिषु स्थानेषु विभज्य स्थापयेत्—२ ७ ९ (१०) / ७ ३ २ ७ ९ (१०) / ९ ३ २ ७ ९ (१०) / ९ ३। पुनस्तदेकभाग सख्यातेन खण्डयित्वा बहुभाग प्रथमस्थाने दद्यात २ ९ ९ (१०) / ९ ९ पुनरवशिष्टैकभाग अपरेण सख्यातेन खडयित्वा तद्बहुभाग द्वितीयस्थाने दद्यात् २ ९ ९ (१०)। तदेकभाग तृतीयस्थाने दद्यात् स्थानत्रयसदृष्टि—

२ ९ ७ (१०) / ७ । ३	२ ७ ९ (१०) ९ ७ ९ / ९ । ३	२ ९ ९ (१०) / ७ । ३
२ ७ ७ (१०) / ७ ७	२ ७ ७ (१०) / ७ ७ ७	२ ७ / ७ ७ ७

अत्र प्रथमभागसज्वलनवादरलोभवेदकाद्धा प्रथमार्ध। द्वितीयो भाग सूक्ष्मकृष्टिकरणकाल। तृतीयो भाग सूक्ष्मकृष्टिवेदक काल। स एव सूक्ष्मसाम्परायकाल। अत्र प्रथमद्वितीयभागयोर्मेलने लोभवेदकाद्धा द्वित्रिभागमात्र साधिक प्रथमस्थितिप्रमाण भवति २ ७ २ / ३ (।) तद्यथा—

---

१ तदो अद्धस्स चरिमसमए लोभसजलणस्स ट्ठिदिबधो दिवसपुधत्त। सेसाण कम्माण ट्ठिदिबधो वस्ससहस्सपुधत्त। चू० सू०, जयध० पु० १३, पृ० ३०६।

१०

प्रथमद्वितीयभागयो तावद्बहुभाग मिलितमिद २ ७ ७ २ अर्बतावदृण २ ७ । ७ । २ प्रक्षिप्याप-
१० ७ । ३ ७ । ३

वर्तिते एव २ ७ । २ द्वितीयभागविशेपधने २ ७ ७ एतावदृण २ ७ । प्रक्षिप्यापवर्त्य २ ७ प्रथम-
३ ७ ७ ७ ७ । ७ । ७ ७ ७

भागविशेपधने प्रक्षिप्यावर्तिते एव २ ७ । अस्मिन् त्रिभि समच्छेदीकृते २ ७ । ३ द्वितीयऋणेन साधिक
। ७ ७ ७ ७ । ३

प्रथमऋण २ ७ । ७ । २ विशोध्यावशिष्ट धन पूर्वानीतप्रथमद्वितीयभागद्वयबहुभागद्रव्ये लोभवेदकाद्धा
७ । २ ।

।

द्वित्रिभागमात्रे प्रक्षिपेत् २ ७ । २ । इयमावल्यधिकसज्वलनवादरलोभप्रथमस्थितिर्भवति । एतस्या प्रथमार्धो
३

लोभवेदककालस्य साधिकत्रिभागमात्रो भवति । तथाहि—

१०

प्रथमभागवहुभागद्रव्ये २ ७ ७ एतावदृण २ ७ । ७ प्रक्षिप्यापवर्तिते लोभवेदकाद्धा-
७ । ३ ७ । ३

१०

त्रिभागो भवति २ ७ । पुन प्रथमभागविशेपधने २ ७ ७ एतावदृण २ ७ । १ प्रक्षिप्यावर्तिते २ ७
३ ७ ७ । ७ ७ ७

अस्मिन् त्रिभि समच्छेदीकृते द्वितीयऋणेन साधिक प्रथमऋण २ ७ । ७ विशोध्यावशिष्ट २ ७ । २ —
। ७ । ३ ७ । ३

प्रागानीतलोभवेदकाद्धात्रिभागे प्रक्षिपेत् २ ७ । १ । एवकृते लोभवेदकाद्धा साधिकत्रिभागमात्र वादरसज्व-
३

लनलोभप्रथमस्थितिप्रथमार्द्धो भवति। तच्चरसमये सज्वलनलोभस्य स्थितिवन्धो दिनपृथक्त्व शेषकर्मणा स्थितिवन्ध पूर्वोक्ताल्पवहुत्वेन वर्षसहस्रपृथक्त्वमात्र. ।। २८२ ।।

स० च०—माया उपशमनका अनन्तर समयतैं लगाय अनिवृत्तिकरणका अन्त समय पर्यन्त वादर लोभका वेदक काल है। तातैं परैं सूक्ष्मसाम्परायका अन्त समय पर्यन्त सूक्ष्मलोभका वेदक काल है। दोऊ मिलाए लोभका वेदककाल हो है। सो लोभ वेदककाल अन्तर्मुहूर्तमात्र है। ताकौ सख्यातका भाग देइ तहाँ एकभाग बिना बहुभागकौं तीनका भाग देइ एक-एक समान भाग तीन स्थानविषै स्थापना। बहुरि अवशेष एकभागकौ सख्यातका भाग देइ तहाँ बहुभागकौ प्रथम समान भागविषै मिलाएं वादर लोभ वेदकककालका प्रथम अर्ध हो है। वहुरि अवशेष एक-भागकौ सख्यातका भाग देइ तहाँ बहुभाग दूसरा समान भागमै मिलाएँ वादर लोभ वेदककाल-का द्वितीय अर्ध हो है सो यहु सूक्ष्म कृष्टि करनेका काल है। इनि दोउनिकौ मिलाए लोभ वेदक-कालका दोय तीसरा भाग किछू अधिक प्रमाण वादर लोभ वेदककाल है। यातैं आवली अधिक बादर लोभकी प्रथमस्थिति है। वहुरि लोभ वेदककालका तीसरा भाग किछू अधिक प्रमाण

वादर लोभ वेदककालका प्रथम अर्ध है सो अर्थ सदृष्टिकरि प्रगट जानिए है। वहुरि जो एकभाग अवशेष रह्या था ताकौ तीसरा समान भागविषै मिलाए सूक्ष्मकृष्टिका वेदककाल है सोई सूक्ष्म साम्पराय गुणस्थानका काल जानना। इहाँ वादर लोभ वेदककालका प्रथम अर्धका अन्तसमय-विषै स्थितिबन्ध सज्वलन लोभका तौ पृथक्त्व दिन प्रमाण अर औरनिका पूर्वोक्त क्रम लीए पृथक्त्व हजार वर्ष प्रमाण है॥ २८२॥

अथ सज्वलनलोभानुभागसत्त्वस्य कृष्टिकरणप्ररूपणार्थमिदमाह—

विदियद्धे लोभावरफड्डयहेट्ठा करेदि रसकिट्टिं।
इगिफड्डयवग्गणगदसखाणमणतभागमिदं॥ २८३॥

द्वितीयार्धे लोभावरस्पर्धकाधस्तना करोति रसकृष्टिम्।
एकस्पर्धकवर्गणागत संख्यानामनन्तभागमिदम्॥ २८३॥

स० टी०—सज्वलनलोभप्रथमस्थितेः प्रथमार्धं पूर्वोक्तविधानेन गालयित्वा तद्द्वितीयार्धप्रथमसमये सज्वलनलोभानुभागसत्त्वस्य जघन्यस्पर्धकादिवर्गणाविभागप्रतिच्छेदा प्रतिपरमाणु जीवराशेरनन्तगुणा सन्ति १६ ख। एतेषा वर्ग इति सज्ञा व। एवविधसर्वजघन्यशक्तियुक्ताना सदृशधनाना कार्मणपरमाणूना प्रथमपुञ्ज आदिवर्गणा भवति। तद्यथा—

लोभसज्वलनसर्वसत्त्वद्रव्यमिद स ∂ १२ — अस्मिन्ननुभागसम्वन्धिसाधिकद्व्यर्धगुणहान्या भक्ते
७।८

आदिवर्गणा भवति स ∂ १२ — तस्या द्विगुणगुणहान्या भक्ताया विशेषो भवति स ∂ १२ —
। ।
७।८।ख ख ३ ७।८।ख ख ३ ख ख २
२ २

अथ लघुसदृष्टिनिमित्त व वि इति स्थाप्यते। अस्मिन्ननुभागसम्बन्धिद्विगुणगुणहान्या गुणिते आदिवर्गणा जायते व वि ख ख २। अत्र लघुसदृष्टचर्थं गुणहानेरष्टाङ्क सस्थाप्य ८ द्वाभ्यां गुणयित्वा ८।२ तेन षोडशाङ्केन विशेषे गुणिते आदिवर्गणान्यास एवविधो भवति व वि १६। इद लघुसदृष्टिनिमित्त व वि इति स्थापयित्वा
।
पुनरनुभागसम्वन्धिसाधिकद्व्यर्धगुणहान्या गुणिते सज्वलनलोभसर्वसत्त्वमागच्छति व १२। अस्माद् द्वितीयार्ध-प्रथमसमये द्रव्यमपकृष्य सज्वलनलोभजघन्यस्पर्धकलतासमानादिवर्गणाविभागप्रतिच्छेदेभ्य अधस्तादनन्तगुण-हीनाविभागप्रतिच्छेदतया एकस्पर्धकवर्गणाशलाकानन्तैकभागप्रमिता ४ अनुभागसूक्ष्मकृष्टी करोति। उपशम-
ख
श्रेण्या वादरकृष्टिविधानासम्भवात्। अन्तर्मुहूर्तकालनिर्वर्त्यमानानुभागकाण्डकघात विना इदानी प्रतिसमय सर्वजघन्यशक्त्यनन्तैकभागप्रमितत्वेन कृष्टिघात कर्तुं प्रारभत इत्यर्थः॥ २८३॥

सज्वलनलोभकी कृष्टिकरण विधिका निर्देश—

स० च०—सज्वलन लोभकी प्रथमस्थितिका प्रथम अर्धको पूर्वोक्त प्रकार व्यतीतकरि

---

१ से काले विदियतिभागस्स पढमसमये लोभसजलणाणुभागसतकम्मस्स ज जहण्णफद्दय तस्स हेट्ठदो अणुभागकिट्टीओ करेदि। तासिं पमाणमेयफद्दयवग्गणाणमणतभागो। वही पृ० ३०७-३०८।

द्वितीयार्धका प्रथम समयविषै सज्वलन लोभका अनुभाग सत्त्वविषै अपकर्षण करि सूक्ष्म कृष्टि करिए है। सो विधान कहिए है—

सज्वलन लोभका अनुभागका सत्त्वविषै जघन्य अनुभाग शक्ति सहित जो परमाणू ताविषै अनुभागके अविभाग प्रतिच्छेद जीवराशितै अनंत गुणे हैं। सो याकौ जघन्य वर्ग कहिए। इतने इतने अविभाग प्रतिच्छेद सहित जेते कर्म परमाणूरूप वर्ग पाइए तिनके समूहका नाम प्रथम वर्गणा है सो सज्वलन लोभके सत्तारूप सर्व परमाणू तिनकौ अनुभाग सम्बन्धी किछू अधिक ड्योढ गुणहानिका भाग दीए जो प्रमाण आवै तितने प्रथम वर्गणाविषै परमाणू हैं। याकौ अनुभाग सम्बन्धी दो गुणहानिका भाग दीए विशेषका प्रमाण आवै है। विशेषकौ दोगुणहानिकरि गुणे प्रथम वर्गणाविषै परमाणूनिका प्रमाण आवै है। इस प्रथम वर्गणाकौ साधिक ड्योढ गुणहानिकरि गुणें सज्वलन लोभका सर्व सत्त्व द्रव्यका प्रमाण हो है। सो यातै द्रव्यकौ अपकर्षणकरि अनुभागकौ सूक्ष्म कृष्टि करै है। सो जघन्य स्पर्धककी लता समान प्रथम वर्गणाविषै अविभाग प्रतिच्छेद है तिनकौ नीचैं तितने भी अनन्त गुणा घाटि अनुभागके अविभाग प्रतिच्छेदरूप सूक्ष्म कृष्टि हो है। तिन सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रमाण जो एक स्पर्धकविषै वर्गणानिका प्रमाण ताके अनन्तवे भागमात्र जानना। पहलैं अन्तर्मुहूर्तकालकरि निपजै ऐसा अनुभाग काडक घात होता था तीहिंविना अब समय समय कृष्टि घात करनेका प्रारम्भ करै है ऐसा अर्थ जानना ॥ २८३ ॥

विशेष——प्रकृतमे लोभकषायका जितना वेदककाल है उसमेसे अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समय तक यह जीव बादरलोभका वेदन करता है। बादरलोभ स्पर्धकगत होता है। उसके सूक्ष्म करनेकी प्रक्रियाका नाम ही सूक्ष्मकृष्टिकरण कहलाता है। उपशमश्रेणिमे स्पर्धकगत लोभका बादर कृष्टिकरण न होकर सीधा सूक्ष्मकृष्टिकरण होता है। अब देखना यह है कि अनिवृत्तिकरणके किस कालमे यह सूक्ष्मकरण क्रिया सम्पन्न होती है। इसीका निर्देश करते हुए प्रकृतमे यह बतलाया गया है कि बादरलोभका जितना वेदनकाल है उसके प्रथमार्धमे मात्र स्पर्धकगत लोभका ही वेदन होता है और द्वितीयार्धमे स्पर्धकगतलोभका वेदन करते हुए जघन्य स्पर्धकगतलोभके द्वारा कृष्टीकरणकी क्रिया सम्पन्न होती है। आशय यह है कि,लोभसज्वलनका जो जघन्य स्पर्धकगत अनुभाग है उसे अपकर्षण द्वारा अनन्तगुणाहीन करके सूक्ष्मकृष्टियोकी रचना करता है। यहाँ अनुभागका काण्डकघात न होकर प्रतिसमय उसकी उक्त विधिसे अपवर्तना होती है।

अथ द्वितीयार्धप्रथमसमये कृष्ट्यर्थमपकृष्टद्रव्यस्य निक्षेपविधानार्थमिदमाह —

ओक्कड्डिदइगिभाग पल्लासखेज्जखडिदिगिभाग।
देदि सुहुमासु किट्टिसु फड्डयगे सेसबहुभाग[1] ॥ २८४ ॥

अपकर्षितैकभागं पल्यासंख्येयखडितैकभागम्।
ददाति सूक्ष्मासु कृष्टिषु स्पर्धके शेषबहुभागम् ॥ २८४ ॥

---

१ ओकड्डिदसयलदव्वस्सासखेज्जभागमेत्तमेव दव्वमपुव्वकिट्टीसु समयाविरोहेण णिसिंचिय सेसबहुभागाणमुवरिमपुव्वकिट्टीसु फद्दएसु च जहापविभाग विहजिदूण णिसेयविण्णासकरणादो।
जयध० पु० १३, पृ० ३०८-३०९।

स० टी०—सज्वलनलोभसर्वसत्त्वमिद व १२ अपकर्षणभागहारेण खण्डयित्वा तदेकभाग गृहीत्वा पुन पल्यासख्यातभागेन खण्डयित्वा बहुभाग पृथक् सस्थाप्य व १२ प तदेकभाग अद्धाणेण सव्वधणे खण्डिदेत्यादि सूत्राभिप्रायेण एकस्पर्धकवर्गणानन्तैकभागमात्रकृष्टयायामेन खण्डयित्वा पुना रूपोनकृष्टयायामार्धन्यूनद्विगुणगुणहान्या विभज्य द्विगुणगुणहान्या गुणिते आदिवर्गणाप्रमाण द्रव्य प्रथमकृष्टौ निक्षिपति व १२ । १६ इयमेव प्रथमसमये क्रियमाणकृष्टीना जघन्या कृष्टि । तच्छक्तिप्रमाण पुन पूर्वस्पर्धकसर्वजघन्यवर्गस्य प्रथमसमयकृष्टयायाममात्रवारानन्तरूपखण्डितस्यैकभागमात्र व पुन प्रथमकृष्टिद्रव्ये एकचयेन व १२ अनेन हीने द्वितीयकृष्टिद्रव्य भवति व १२ । १६—१ एव तच्छक्तिप्रमाण पुन प्रथमकृष्टिशक्तेरनन्तगुण भवति व ख १ एव तृतीयादिकृष्टिषु निक्षिप्यमाणद्रव्य एकैकचयहीन सद्गत्वा रूपोनकृष्टयायाममात्रचयन्यूनप्रथमकृष्टिद्रव्यप्रमित चरमकृष्टिद्रव्य भवति व १२ १६—४ तृतीयादिकृष्टिद्रव्याणामविभागप्रतिच्छेदा रूपोनकृष्टिगच्छसख्यातवारानन्तगुणितजघन्यकृष्टयनुभागप्रतिच्छेदप्रमिता गच्छन्ति एव गत्वा चरमकृष्टयविभागप्रतिच्छेदा रूपोनकृष्टयायाममात्रवारानन्तगुणितप्रथमकृष्टयविभागप्रतिच्छेदमात्रा भवन्ति व ख ४ ख ४ ख ख

अपवर्तिते पूर्वस्पर्धकसर्वजघन्यवर्गानन्तेकभागप्रमिता व एता संज्वलनलोभद्रव्यस्य प्रथमसमयसूक्ष्मकृष्टय पुन

। १० ख

पृथक्संस्थापितबहुभागद्रव्य व १२ प पूर्वस्पर्धकनानागुणहानिषु निक्षिप्यते। तद्यथा—

a

ओ प

a

तद्बहुभागद्रव्यमनुभागसबन्धिद्व्यर्धगुणहान्या विभज्य एकभाग प्रथमगुणहानिजघन्यस्पर्धकादिवर्गणाया

। १०

निक्षिप्यते व १२ प १६ पुनर्द्वितीयादिवर्गणासु द्वितीयगुणहानिप्रथमवर्गणापर्यन्तासु एकैकोत्तरचयहीन द्रव्य

a

।

ओ प १२ । १६

a

निक्षिप्यते। पुनर्द्वितीयादिगुणहानीना द्वितीयवर्गणास्वपि पूर्वगुणहानिचयार्द्धार्द्धमात्रै एकाद्येकोत्तरचयैर्हीन द्रव्य निक्षिप्य चरमगुणहानिचरमस्पर्धकचरमवर्गणाया तद्गुणहानिचयै रूपोनगुणहानिमात्रैर्हीन द्रव्य निक्षिप्यते। एव निक्षिप्ते अपकृष्टद्रव्यस्य पल्यासख्यातभागभक्तस्य बहुभागद्रव्य समाप्त भवति। सूक्ष्मचरमकृष्टिनिक्षिप्त द्रव्यात् पूर्वस्पर्धकरूपसत्त्वद्रव्यस्य प्रथमगुणहानिजघन्यस्पर्धकादिवर्गणाया निक्षिप्तद्रव्यमनन्तगुणहीन। अनुभागसबधि द्व्यर्धगुणहानिभागहारमाहात्म्यात्। कृष्टिशब्दस्यार्थ उच्यते—कर्शन कृष्टि कर्मपरमाणुशक्तेस्तनूकरणमित्यर्थ। कृश तनूकरणे इति धात्वर्थमाश्रित्य प्रतिपादनात्। अथवा कृश्यते तनूक्रियते इति कृष्टि प्रतिसमय पूर्वस्पर्धकजघन्यवर्गणाशक्तेरनन्तगुणहीनशक्तिवर्गणाकृष्टिरिति भावार्थ ॥२८४॥

सज्वलन लोभकी कृष्टियोकी निक्षेपणविधि—

स० चं०—सज्वलन लोभका सर्व सत्त्वरूप द्रव्य ताकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहा एक भागमात्र द्रव्यकौ बहुरि पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभागकौ जुदा राखि एक भागमात्र द्रव्यकौं सूक्ष्म कृष्टिरूप परिणमावै है। तहा "अद्धाणेण सव्वधणे खडिदे" इत्यादि विधानतैं तिस एक भागमात्र द्रव्यकौ कृष्टिनिका प्रमाणरूप जो कृष्टचायाम ताका भाग दीए मध्यधन आवै है। याकौ एक घाटि कृष्टचायामका आधाकरि हीन जो दो गुणहानि ताका भाग दीए चयका प्रमाण आवै है। याकौं दो गुणहानिकरि गुणें आदि वर्गणाका द्रव्य हो है। सो इतने द्रव्यकौ तौ प्रथम कृष्टिविषै निक्षेपण करै है याकरि प्रथम कृष्टि निपजाइए है। यहु ही प्रथम समयविषै कीनी कृष्टिनिविषै जघन्य कृष्टि है। बहुरि यातैं द्वितीयादि कृष्टिनिविषै एक एक चय प्रमाण घटता द्रव्य निक्षेपण करै है। ऐसैं एक घाटि कृष्टचायाममात्र चयकरि हीन प्रथम कृष्टिमात्र द्रव्यकौ अन्त कृष्टिविषै निक्षेपण करै है। अब इनिविषै शक्तिका प्रमाण कहिए है—

पूर्व स्पर्धकनिका जघन्य वर्गविषै जो अनुभागके अविभाग प्रतिच्छेदनिका प्रमाण है ताकौ कृष्ट्यायामका जो प्रमाण तितनीवार अनन्तका भाग दीए जो प्रमाण आवै तितने प्रथम कृष्टिविषै अनुभागके अविभाग प्रतिच्छेद हैं। बहुरि द्वितीयादि कृष्टिविषै क्रमतैं अनन्तगुणे है। सो एक

घाटि कृष्टयायाममात्र वार अनन्तकरि गुणे अन्त कृष्टिविपै ते अविभाग प्रतिच्छेद पूर्व स्पर्धकका जघन्य वर्गके अनन्तवा भागमात्र है। ऐसे प्रथम समयविपै कीनी सूक्ष्म कृष्टि हो है। बहुरि जे अपकर्षण कीए द्रव्यविषै बहुभाग जुदे स्थापे थे तिनके द्रव्यकौ पूर्व सत्तारूप पाइए ऐसे जे पूर्व स्पर्धक तिन सम्बन्धी नानागुणहानिविपै निक्षेपण करै है। तहा "दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यादि विधानतै तिस बहुभाग द्रव्यकौ अनुभागसम्बन्धी साधिक ड्योढ गुणहानिका भाग दीए जो द्रव्य आवै ताकौ प्रथम गुणहानिका प्रथम वर्गणाविपै निक्षेपण करै है। बहुरि द्वितीयादि वर्गणानिविपै एक चय घटता क्रम लीए निक्षेपण करै है। द्वितीयादि गुणहानिनिकी वर्गणानिविपै क्रमतै पूर्व गुणहानितै आधा आधा द्रव्य निक्षेपण करै है। ऐसे सूक्ष्मकृष्टिकरण कालका प्रथम समयविषै अपकर्षण कीया द्रव्यका निक्षेपण करै है। इहा अन्तकृष्टिविषै निक्षेपण कीया द्रव्य तातै स्पर्धककी जघन्य वर्गणाविषै निक्षेपण कीया द्रव्य अनन्तगुणा घाटि जानना। अब कृष्टि शब्दका अर्थ कहिए है—

कृश तनू करणे इस धातुकरि 'कर्षण कृष्टि' जो कर्म परमाणूनिकी अनुभागशक्तिका घटावना ताका नाम कृष्टि है। अथवा 'कृश्यत इति कृष्टि' समय समय प्रति पूर्व स्पर्धककी जघन्य वर्गणातै भी अनन्तगुणा घटता अनुभागरूप जो वर्गणा ताका नाम कृष्टि है॥ २८४॥

अथ कृष्टिकरणकालद्वितीयादिसमयेषु अपकृष्टद्रव्यप्रमाणादिविधानार्थमिदमाह—

पडिसमयमसखगुणा दव्वादु असखगुणविहीणकमे।
पुव्वगहेट्ठा हेट्ठा करेदि किट्टिं स चरिमो त्ति॥ २८५॥

प्रतिसमयसंख्यगुणा द्रव्यात् असख्यगुणविहीनक्रमेण।
पूर्वगाधस्तनां अधस्तनां करोति कृष्टिं स चरमे इति॥ २८५॥

स० टी०—कृष्टिकरणकाले द्वितीयसमयादारभ्य तच्चरमसमयपर्यन्त प्रतिसमय पूर्वपूर्वसमयापकृष्ट-द्रव्यादसख्यातगुण द्रव्य सज्वलनलोभपूर्वस्पर्धकसर्वसत्त्वद्रव्यादपकृष्य प्रथमादिसमयकृतकृष्टयायामादसख्येयगुण-हीनायामक्रमेण द्वितीयादिसमयेषु पूर्वपूर्वकृष्टयनुभागादधोनन्तगुणहीनशक्त्यात्मिका अपूर्वा कृष्टी करोति।

तत्र कृष्टिकरणकालस्य द्वितीयसमये प्रथमसमयापकृष्टपद्रव्यात् व १२ / ओ अस्मादसख्येयगुण द्रव्य व १२ ᑐ / ओ

सज्वलनलोभपूर्वस्पर्धकसर्वसत्त्वद्रव्यादपकृष्य पुन पल्यासख्यातभागेन खण्डयित्वा तद्बहुभाग व १२ ᑐ प १०_ / ओ प ᑐ ᑐ

१ ज पढमसमए पदेसग्ग किट्टीओ करेंतेण किट्टीसु णिक्खित्त त थोव, से काले असखेज्जगुण। एव जाव चरिमसमयो त्ति असखेज्जगुण। पढमसमए जहण्णियाए किट्टीए पदेसग्ग बहुग, विदियाए पदेसग्ग विसेसहीण। एव जाव चरिमाए किट्टीए पदेसग्ग त विसेसहीण।

—चू०सू०, जयध० पु० १३, पृ० ३०९-३१०।

पूर्वस्पर्धकनिक्षेपसवन्धीति पृथक् संस्थाप्य तदेकभागद्रव्यमिदं व १२ a / ओ प a गृहीत्वा, अत्र किंचिद्द्रव्यं प्रथमसमयकृतजघन्यकृष्टेरधोऽनन्तगुणहीनशक्तिकापूर्वकृष्टिरूपेण निक्षिपति अवशिष्टं च द्रव्यं प्रथमसमयकृतपूर्वकृष्टिशक्तिसमानशक्तिककृष्टिरूपेण निक्षिपति ॥२८५॥

द्वितीयादि समयोमे निक्षेपणका निर्देश—

स० च—कृष्टिकरण कालका द्वितीय समयतै लगाय अन्त समय पर्यन्त पूर्व समयविषै जितना द्रव्य अपकर्षण कीया तातै असख्यातगुणा द्रव्यकौ सज्वलन लोभका पूर्व स्पर्धकरूप सर्व सत्त्व द्रव्यतै ग्रहिकरि अपूर्व करै है सो पूर्व समयनिविषै भई ते पूर्व कृष्टि कहिए। विवक्षित समयविषै नवीन कृष्टि भई ते अपूर्व कृष्टि कहिए। सो पूर्व पूर्व समयविषै कीनि कृष्टिनिका प्रमाणतै उत्तर उत्तर समयविषै करी कृष्टिनिका प्रमाण क्रमतै असख्यात गुणा घटता है। अर अनुभाग अनन्तगुणा घटता है। तहा कृष्टिकरण कालका दूसरा समयनिविषै जो प्रथम समयविषै जो द्रव्य अपकर्षण कीया था तातै असख्यातगुणा द्रव्यकौ सज्वलन लोभका सर्व सत्त्व द्रव्यतै अपकर्षण करि ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभाग तौ पूर्व स्पर्धकनिविषै निक्षेपण करने। अवशेष एक भागविषै कितना एक द्रव्यकौ प्रथम समयविषै करी जो जघन्य कृष्टि ताके नीचै अनन्तगुणा घटता अनुभाग लीए अपूर्वकृष्टिनिरूप परिणमावै है। अवशेष द्रव्यकौ प्रथम समयविषै कीनि कृष्टि तिनिरूप परिणमावै है ॥ २८५ ॥

अथ द्वितीयसमयापकृष्टद्रव्यस्य चतुर्द्रव्यविभागादिप्रदर्शनार्थं गाथाद्वयमाह—

हेट्ठासीसे उभयगदव्वविसेसे य हेट्ठकिट्टिम्मि।
मज्झिमखंडे दव्वं विभज्ज विदियादिसमयेसु ॥२८६॥

अधस्तनशीर्षे उभयगद्रव्यविशेषे च अधस्तनकृष्टौ।
मध्यमखण्डे द्रव्यं विभज्य द्वितीयादिसमयेषु ॥२८६॥

स० टी०—कृष्टिकरणकालस्य द्वितीयसमये अपकृष्टकृष्टिद्रव्यं अधस्तनशीर्षविशेषेषु उभयद्रव्यविशेषेष्वधस्तनकृष्टिषु मध्यमखण्डेषु चतुर्धा विभज्य निक्षिपति। तद्यथा—

प्रथमसमयादपकृष्टकृष्टिद्रव्यविशेषोऽयं व १२ / ओ प ४ १६ – ४ / a ख ख२ १ ० इयमेवादिं चोत्तरं च कृत्वा रूपोनप्रथमसमयकृष्टचायामं गच्छं कृत्वा पदमेगेण विहीणमित्यादिना सकलनसूत्रेणानीतं चयधनमिदं व १२ ४ ४ / ओ प ४ १६ – ४ ख २ ख / a ख ख२ (१ ० / १ ०) एतदधस्तनशीर्षविशेषेषु निक्षिप्यमाणं द्वितीयसमयापकृष्टद्रव्याद् गृहीत्वा संस्थाप्य।

---

१ विदियसमए जहण्णियाए किट्टीए पदेसग्गमसखेज्जगुण। विदिए विसेसहीण। एवं जाव ओधुक्कस्सियाए वि विसेसहीण। जहा विदियसमए तहा सेसेसु समएसु। वही पृ० ३१२-३१४।

प्रथमसमयकृतपूर्वकृष्टिषु जघन्यकृष्टिद्रव्यमिद व १२ १६ । १ ८ एतत्प्रमाण द्रव्य द्वितीयसमयकृता-
ओ प ४ १६ – ४
ƏEख ख२

पूर्वकृष्टिषु प्रतिकृष्टि निक्षिप्यमाण समपट्टिकारूपापूर्वकृ ष्टयायामेनासख्यातापकर्षणभागहारखडितपूर्वकृष्टया-

यामैकभागमात्रेण त्रैराशिकयुक्त्या गुणितमधस्तनापूर्वकृष्टिसर्वद्रव्यमिद व १२ १६ । ४ १८ अत्रैकस्या कृष्टौ
ओ प ४ १६ – ४ ख ओ Ə
Əख ख२

प्र १ एतावति द्रव्ये निक्षिप्ते फ व १२ १६ । १८ एतावतीष्वपूर्वकृष्टिषु इ ४ निक्षिप्यमाण कियदिति
ख ओ Ə
ओ प ४ १६ – ४
Əख ख२

त्रैराशिकमिद, एवमानीताधस्तनापूर्वकृष्टिद्रव्य द्वितीयसमयपाकृष्टकृष्टिद्रव्याद् गृहीत्वा पृथक् सस्थाप्यम् । पुन

प्रथमद्वितीयसमययोरपकृष्टद्रव्ये द्वे व १२ । व १२ Ə । मेलयित्वा व १२ Ə । १ ८ प्रथमद्वितीयसमयकृतकृष्टया-
ओ प ओ प ओ प
Ə Ə Ə

यामद्वयेन मिलितेनानेन ४ । अद्धाणेण सव्वधणे खडिदेत्यादिविधानेनोभयसमयद्रव्य खडयित्वा रूपोनपूर्वापूर्व-
ख

कृष्टयायामार्धन्यूनद्विगुणगुणहान्या भक्ते उभयद्रव्यविशेषो भवति व १२ Ə । १ ८ इममेवादिमुत्तर च कृत्वा
ओ प ४ १६ – ४ । १ ८
Əख ख२

पूर्वापूर्वकृष्टयायामद्वयमात्र गच्छ कृत्वा पदमेगेण विहीणमित्यादिसूत्रेणानीतमुभयद्रव्यविशेषसमस्तधन—

। १ ८ १ ८
व १२ Ə । । द्वितीयसमयापकृष्टद्रव्याद् गृहीत्वा पृथक्सस्थाप्य । एतैरधस्तनशीर्षविशेषाध-
। १ ८ ४ ४
ओ प ४ १६ – ४ ख २ ख
Əख ख२

धस्तनकृष्टयुभयविशेषद्रव्यैस्त्रिभिर्हीन द्वितीयसमयापकृष्टकृष्टिद्रव्यमिद व १२ Ə ≡ । मध्यमखडसमपट्टिकाद्रव्य
ओ प
Ə

भवति । अस्मिन् द्रव्ये पूर्वापूर्वकृष्टयायामद्वयमात्रेषु ४ । मध्यखडेषु एतावति द्रव्येऽपि निक्षिप्ते व १२ Ə ≡ ।
ख ओ प
Ə

एकस्मिन् खडे कियदिति त्रैराशिकसिद्धेन पूर्वापूर्वकृष्टिद्वयायामेन भक्ते एककखडसबधिद्रव्यमागच्छति

व १२ ∃ ≡ अस्मिन् सर्वेषा मध्यमखण्डाना सदृशत्वात् पूर्वापूर्वकृष्टिद्रव्यायामेन गुणिते समस्तमध्यमखण्डद्रव्यद्रय
ओ प ४
∃ ख

भवति व १२ ∃ ≡ ४ इदमन्यत्र सस्थाप्यम् ॥२८६॥
ख
ओ प ४
∃ ख

कृष्टिगत द्रव्योके विभागका निर्देश—

स०च०—कृष्टिकरण कालका दूसरा समयविषै अपकर्षण कीया द्रव्य ताकी अधस्तन शीर्ष विशेषनिविषै उभय द्रव्य विशेषनिविषै अधस्तन कृष्टिनिविषै मध्यम खडनिविषै च्यारि प्रकार विभागकरि निक्षेपण करै है। सोई कहिए है—

पूर्व समयविषै कीनी जे कृष्टि तिनिविषैं प्रथम कृष्टिविषै तौ बहुत परमाणू है। अर द्वितीयादिकृष्टिनिविषैं एक एक चय घटता क्रम लीए है। तहाँ पूर्व कृष्टिविषै सभवता चयका प्रमाण ल्याय द्वितीय कृष्टिविषैं एक चय अर तृतीय कृष्टिविषै दोय चय ऐसैं क्रमतैं एक एक बधता चयप्रमाण परमाणू तिन द्वितीयादि कृष्टिनिविषैं मिलाएँ सर्व कृष्टि हैं ते प्रथम कृष्टिके समान होइ सो ऐसै जेता द्रव्य दीया ताका नाम अधस्तन कृष्टि द्रव्य है। याकौ दीए सर्व पूर्व कृष्टि प्रथम कृष्टिके समान हो है। सो इस द्रव्यका प्रमाण ल्याइए है—

पूर्व समयविषै जो कृष्टिविषै द्रव्य दीया ताकौ पूर्व समयविषै कीना जे कृष्टि तिनका प्रमाणमात्र जो गच्छ ताका भाग दीएँ मध्यधन आवै है। ताकौ एक घाटि गच्छका आधा प्रमाण करि हीन जो दोगुणहानि ताका भाग दीएँ चय जो एक विशेष ताका प्रमाण आवै है। तहाँ एक चयकौं आदि विषै स्थापना जातैं द्वितीय कृष्टिविषै एक चय देना है। बहुरि एक चय उत्तर स्थापना जातै तृतीयादि कृष्टिनिविषैं एक एक चय बँधता देना है। बहुरि एक घाटि पूर्व कृष्टि प्रमाण गच्छ स्थापना जातैं प्रथम कृष्टिविषै चय नाही मिलावना है। ऐसैं स्थापि "पदमेगेण विहीणं" इत्यादि श्रेणि व्यवहाररूप गणित सूत्रकरि एक घाटि गच्छकौं दोयका भाग देइ ताकौ उत्तर जो एक चय ताकरि गुणि तामैं प्रभव जो आदि एक चय ताकौं मिलाय बहुरि गच्छकरि गुणै चय धन आवै है। अक सदृष्टिकरि जैसैं एक घाटि कृष्टिप्रमाण गच्छ सात तामैं एक घटाएँ छह ताकौं दोयका भाग दीए तीन ताकौ चयका प्रमाण सोलह करि गुणे अठतालीस यामै प्रभव जो एक चय सोलह ताकौ मिलाए चौसठि याकौं गच्छ सातकरि गुणैं च्यारिसै अठतालीस चय धन होइ। तैसैं विधानतैं जो प्रमाण आवै तितना अधस्तन शीर्ष विशेष द्रव्य जानना। बहुरि जो पूर्व कृष्टिनिविषैं प्रथम कृष्टि ताका प्रमाण था ताँहीके समान प्रमाण लीए जे विवक्षित समय-विषै अपूर्व कृष्टि करी तिनिविषै जो समान प्रमाण लीए समपट्टिकारूप द्रव्य देना। ताका नाम

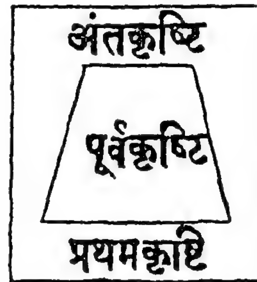
अधस्तन कृष्टि द्रव्य है। इस द्रव्यकौ दीए अपूर्व कृष्टि हैं ते प्रथम पूर्व कृष्टिके समान हो हैं याका प्रमाण ल्याइए है—

पूर्वोक्त पूर्व कृष्टिसबधी चय ताकौ दो गुणहानिकरि गुणे पूर्व कृष्टिनिविषैं प्रथम कृष्टिके द्रव्यका प्रमाण आवै है। सो एक कृष्टिका इतना द्रव्य होइ तौ सर्व पूर्व कृष्टिनिका केता होइ ऐसैं त्रैराशिककरि तिस प्रथम पूर्व कृष्टिका द्रव्यका सर्व अपूर्व कृष्टिनिका प्रमाणकरि गुणें अधस्तन कृष्टि द्रव्यका प्रमाण हो है। इहा प्रथम समयविषैं कीनी कृष्टिनिका प्रमाणकौं असख्यातगुणा अपकर्षण भागहारका भाग दीए द्वितीय समयविषैं कीनी कृष्टिनिका प्रमाण हो है ऐसा जानना। बहुरि पूर्वोक्त अधस्तन शीर्षविशेष द्रव्य अर अधस्तन कृष्टि द्रव्य दीए सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टि समान प्रमाण लीए भईं, तहा अपूर्व कृष्टिकी प्रथम कृष्टितैं लगाय उपरि उपरि अपूर्व कृष्टि स्थापि तिनके ऊपरि प्रथमादि पूर्व कृष्टि स्थापनी ऐसैं स्थापि तिनका चय घटता क्रमरूप एक गोपुच्छ करनेके अर्थि सर्वकृष्टिसबंधी सभवता चयका प्रमाण ल्याइ अतकी पूर्व कृष्टिविषैं एक चय ताके नीचै उपात पूर्व कृष्टिविषैं दोय चय ऐसैं क्रमतैं एक एक चय बधता प्रथम अपूर्व कृष्टि पर्यंत द्रव्य देना। याका नाम उभय द्रव्य विशेष द्रव्य है। याकौ दीए सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिनिका चय घटता क्रमरूप एक गोपुच्छ हो है याका प्रमाण ल्याइए है—

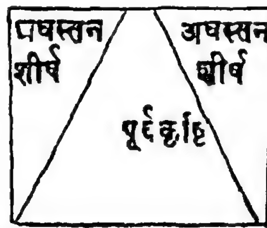
पूर्व समयनिविषैं जो कृष्टिनिविषैं दीया द्रव्य था अर इस विवक्षित समयविषैं जो कृष्टिनिविषैं देने योग्य द्रव्य है इन दोऊनिकौ मिलाएँ जो द्रव्यका प्रमाण भया ताकौ पूर्व कृष्टिनिका अर अपूर्व कृष्टिनिका प्रमाण मिलाएँ जो गच्छ होइ ताका भाग दीएँ मध्यधन आवै है। ताकौ एक घाटि गच्छका आधा प्रमाण करि हीन जो दोगुणहानि ताका भाग दीएँ इहाँ चय जो एक विशेष ताका प्रमाण हो है। सो एक चय आदि स्थापि अर एक चय उत्तर स्थापि अर अपूर्व कृष्टि प्रमाण गच्छ स्थापि 'पदमेगेण विहीण' इत्यादि सूत्रके अनुसारि एक घाटि गच्छका आधाकौ चयकरि गुणि तामैं चय मिलाय ताकौ गच्छकरि गुणैं सर्व उभय द्रव्य विशेष द्रव्य हो है। बहुरि जो विवक्षित समयविषैं कृष्टिरूप परिणमावने योग्य द्रव्य अपकर्षण कीया तीहिविषैं पूर्वोक्त अधस्तन शीर्षविशेष द्रव्य अर अधस्तन कृष्टि द्रव्य अर उभय द्रव्यविशेष द्रव्य घटाएं अवशेष द्रव्य रह्या ताकौ सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिनिविषैं समान भागकरि देना। याका नाम मध्यम खड द्रव्य है। बहुरि याकौ दीएँ तिस अपकर्षण द्रव्यकी तौ समानता हो है अर सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिनिविषैं चय घटता क्रमरूप ज्यूं का त्यूं रहै है। याका प्रमाण ल्याइए है—

विवक्षित समयविषैं अपकर्षण कीया द्रव्यकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए एक भागमात्र द्रव्य कृष्टिनिविषैं देने योग्य है। तीहिविषैं पूर्वोक्त तीन प्रकार द्रव्य घटाए किंचिदून भया सो इतना द्रव्य सर्व कृष्टिनिविषैं दीजिए तौ एक कृष्टिविषैं केता दीजिए ऐसैं त्रैराशिककरि तिस द्रव्यकौ पूर्व अपूर्वकृष्टिनिके प्रमाणका भाग दीए एक कृष्टिविषैं देने योग्य एक खडका प्रमाण हो है। याकौ सर्वकृष्टि प्रमाणकरि गुणैं सर्व मध्यमखड द्रव्यका प्रमाण हो है। याप्रकार इहा विवक्षित द्वितीय समयविषैं कृष्टिरूप होने योग्य द्रव्यविषैं बुद्धिकल्पनातैं ते अधस्तनशीर्ष विशेष आदि च्यारि प्रकार द्रव्य जुदे स्थापे। ऐसैं ही इहा तृतीयादि समयनिविषैं कृष्टिरूप होने योग्य द्रव्यविषैं विधान जानना। वा आगैं क्षपक श्रेणीका वर्णनविषैं अपूर्व स्पर्धकनिका बादरकृष्टिनिका वा सूक्ष्मकृष्टिनिका वर्णन करतैं ऐसे विधान कहेंगे तहाँ ऐसा ही अर्थ समझना। विशेष होइ सो

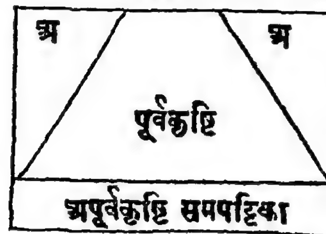
विशेष जानि लेना। इहा सदृष्टिकार चय घटता क्रमलीए पूर्वकृष्टिनिकी रचना ऐसो—



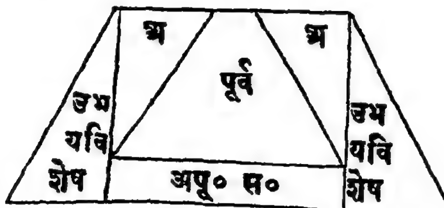
बहुरि यामैं अधस्तनशीर्ष द्रव्य मिलाए समानरूप पूर्वकृष्टिनिकी रचना ऐसी—



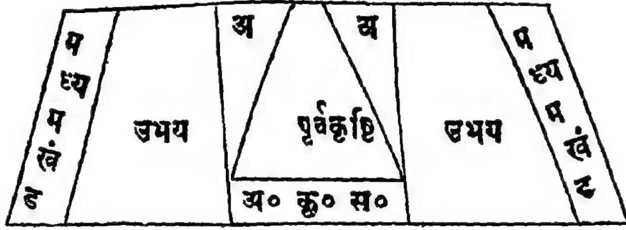
बहुरि इनके नीचै अधस्तन कृष्टि द्रव्यकरि अपूर्वकृष्टिकी समपट्टिका रचना कीए ऐसी—



इहां उभय द्रव्य विशेष द्रव्य निक्षेपण कीए एक गोपुच्छकी ऐसी हो है।



यामैं मध्यम खंड द्रव्य मिलाए ऐसी रचना हो है।



या प्रकार द्रव्य देनेका विधान जानना। यद्यपि द्रव्य तौ युगपत् जेता देने योग्य है तितना दीजिए है तथापि समझनेके अर्थि जुदा जुदा विभाग करि वर्णन किया है ॥२८६॥

हेट्ठासीस थोव उभएविसेसे तदा असखगुण।
हेट्ठा अणतगुणिद मज्झिमखड असंखगुण ॥२८७॥

अधस्तनशीर्षं स्तोकं उभयविशेषे ततोऽसंख्यगुण।
अधस्तनमनंतगुणितं मध्यमखंड असख्यगुण ॥२८७॥

स० टी०—एतेषु चतुर्षु द्रव्येषु मध्ये सर्वत स्तोकमधस्तनशीर्षविशेषसमस्तधन व १२ / ओ प ख ख ४ / a गुण-कारभागहारभूतयो पूर्वकृष्टचायामयो सदृशापवर्तनात् रूपोनपूर्वकृष्टचायामचतुर्गुणगुणहान्योश्च यथासभवमपवर्तितत्वात्। एवमन्यत्राप्यपवर्तन यथायोग्य ज्ञातव्यम। एतस्मादधस्तनशीर्षद्रव्यादुभयद्रव्यविशेषसमस्त-धनमसख्येयगुण व १२ a / ओ प ख ख ४ / a अस्मादधस्तनापूर्वकृष्टिसमस्तद्रव्यमनतगुण व १२ / ओ प ओ a / a अस्मान्मध्यमखडसमस्तधनम-सख्येयगुण व १२ a ≡ / ओ प / a यथोक्तचतुर्द्रव्याणा पूर्वापूर्वकृष्टिषु निक्षेपप्रदर्शनार्थमिदमाह ॥२८७॥

स० च०—ए कहे च्यारि द्रव्य तिनविषै अधस्तन शीर्ष विशेष द्रव्य सर्वतैं स्तोक है। यातैं उभय द्रव्यविशेष असख्यातगुणा है। यातैं अधस्तन कृष्टि द्रव्य अनतगुणा है। यातैं मध्यम खड द्रव्य असख्यातगुणा है ऐसा जानना ॥२८७॥

अवरे बहुगं देदि हु विसेसहीणक्कमेण चरिमो त्ति।
तत्तो णंतगुणूणं विसेसहीणं तु फड्ढयगे ॥२८८॥

अवरस्मिन् बहुक ददाति हि विशेषहीनक्रमेण चरमे इति ।
ततोऽनतगुणोन विशेषहीन तु स्पर्धके ॥२८८॥

स० टी०—द्वितीयसमयकृतापूर्वाकृष्टीना मध्ये जघन्यकृष्टौ वहुद्रव्य ददाति । पुनर्द्वितीयापूर्वकृष्ट्यादिषु पूर्वकृष्टिचरमकृष्टिपर्यंतासु कृष्टिपु विशेपहीनक्रमेण द्रव्य निक्षिपति । तस्मात्पूर्वचरमकृष्टिनिक्षिप्त-द्रव्यात्पूर्वस्पर्धकादिवर्गणाया निक्षिप्तद्रव्यमनतगुणहीन । तत परे द्वितीयादिवर्गणासु नानागुणहानिसर्वधिनीपु चरमगुणहानिचरमवर्गणापयतासु तत्तद्गुणहानिगतविशेपहानक्रमेण द्रव्य ददाति । अत्र द्वितीयसमयापकृष्टकृष्टि-सर्वधिद्रव्यस्य व १२ ∂ प्रथमद्वितीयसमयकृतपूर्वापूर्वकृष्टिपु निक्षेपविधानविशेपोऽस्ति । त श्रीमाधवचद्रत्रैविद्य-

ओ प

∂

देवपरमोपदेशानुसारेण वय व्याख्यास्याम । तद्यथा—

द्वितीयसमयकृतापूर्वकृष्टीना मध्ये जघन्यकृष्टावधस्तनशीपविशेपद्रव्य मुक्त्वा अवशिष्टद्रव्यत्रये

अधस्तनकृष्टिद्रव्यात् व १२ १६ ४ (ओ प ४ १६ – ४ ख ओ ∂ / ∂ ख ख २) अस्मादेककृष्टिद्रव्य व १२ १६ ४ (ओ प ४ १६ – ४ ख ओ ∂ ४ / ∂ ख ख २ ख ओ ∂) मध्यखडद्रव्यात्—

व १२ ∂ ≡ ४ (ओ प ४ / ∂ ख ख) अस्मादेकखडद्रव्य व १२ ∂ ≡ (ओ प ४ / ∂ ख) उभयद्रव्यविशेषादस्मात् व १२ ∂ (१– १– / १ ४ ४ / ओ प ४ १६ – ४ ख ख २ / ∂ ख ख २)

पूर्वापूर्वकृष्टयायामद्वयमात्रविशेषाश्च गृहीत्वा व १२ ∂ (१ / १ ४ / ओ प ४ १६–४ ख / ∂ ख ख २) । निक्षपति, अतएव जघन्यकृष्टौ निक्षिप्त

द्रव्य बहुकमित्युक्तम् । पुनरधस्तनकृष्टिद्रव्यादेककृष्टिद्रव्य मध्यमखण्डद्रव्यादेकखण्डद्रव्यमुभयद्रव्यविशेषद्रव्याद्रूपोन पूर्वापूर्वाकृटचायाममात्रविशेषाश्च गृहीत्वा द्वितीयसमयकृतापूर्वकृष्टीना द्वितीयकृष्टौ निक्षपति । अतएव जघन्य-कृष्टिनिक्षिप्तद्रव्यादिकमेकेनोभयद्रव्यविशेषेण हीतमित्युक्तम् । पुनरधस्तनकृष्टिद्रव्यादेककृष्टिद्रव्य मध्यमखण्ड-द्रव्यादेकखण्डद्रव्यमुभयद्रव्यविशेषद्रव्याद् द्विरूपोनपूर्वापूर्वकृष्टयायाममात्रविशेषाश्च गृहीत्वा द्वितीयसमय-कृतापूर्वकृष्टीना तृतीयकृष्टौ निक्षपति । इदमपि द्वितीयकृष्टिनिक्षिप्तद्रव्याद्विशेषहीन भवति । एव चतुर्थादिषु द्वितीयसमयकृतापूर्वकृष्टिचरमकृष्टिपर्यन्तास्वपूर्वकृष्टिष्वधस्तनकृष्टिद्रव्यादेकैककृष्टिद्रव्य मध्यमखण्डद्रव्यादेकैक-खण्डद्रव्यमुभयद्रव्यविशेषद्रव्यादधोऽतीतकृष्टयायामन्यूनपूर्वापूर्वकृष्टयायाममात्रविशेषाश्च गृहीत्वा तत्र तत्र निक्षपति । तत्राधस्तनकृष्टिद्रव्यादेककृष्टिद्रव्य मध्यमखण्डद्रव्यादेकखण्डद्रव्यमुभयद्रव्यविशेषद्रव्याद्रूपोनापूर्वकृष्ट-यायामन्यूनपूर्वापूर्वकृष्टयायाममात्रविशेषाश्च गृहीत्वा द्वितीयसमयकृतापूर्वकृष्टीना चरमकृष्टौ निक्षपति । एव निक्षिप्तेऽधस्तनकृष्टिद्रव्य सर्व समाप्तम् । एव त्रिद्रव्यन्यास कथित । पुनर्मध्यमखण्डद्रव्यादेकखण्डद्रव्यमुभय-

द्रव्यविशेषद्रव्यादपूर्वकृष्ट्यायाममात्रन्यूनपूर्वापूर्वकृष्टयायाममात्रविशेपाश्च गृहीत्वा प्रथमसमयकृतपूर्वकृष्टीना जघन्यकृष्टौ निक्षपति। इदमपूर्वकृष्टीना चरमकृष्टिनिक्षिप्तद्रव्यादसख्येयभागेनानन्तभागेन च हीन द्वितीयसमयापकृष्टकृष्टिद्रव्यादसख्येयभागमात्रेणाधस्तनकृष्टयेककृष्टिद्रव्येण मर्वद्रव्यादनन्तैकभागमात्रेणैकेनोभयद्रव्यविशेषेण च हीनत्वात्। एव पूर्वकृष्टिप्रथमकृष्टौ द्विद्रव्यासो जात। पुनरधस्तनशीर्षविशेपद्रव्यादेकविशेप मध्यमखण्डद्रव्यादेकखण्डद्रव्यमुभयद्रव्यविशेषद्रव्यादतीतकृष्टयायामन्यूनपूर्वापूर्वकृष्टयायाममात्रविशेपाश्च गृहीत्वा प्रथमसमयकृतपूर्णकृष्टीना द्वितीयकृष्टौ निक्षपति। इद पूर्णकृष्टिप्रथमकृष्टिनिक्षिप्तद्रव्यात्कियता

।

न्यूनमिति चेत् उभयद्रव्यविशेषस्यासख्येयभागमात्रेणाधस्तनशीर्षविशेषेण व १२ न्यूनोभयद्रव्यविशेषेणैकेन

१ ०

२ प ४ १६–४

ठ ख ख २

। १ – १ ०

व १२ ठ ४ हीन पूर्वकृष्टिद्वितीयादिकृष्टिष्वधस्तनशीर्षविशेपद्रव्यस्य निक्षेपसम्भवात्। पुनरधस्तनशीर्ष-

। ख १ ०

ओ प ४ १६ –४

ठ ख ख २

विशेषद्रव्याद् द्वौ विशेषौ मध्यमखण्डद्रव्यादेकखण्डद्रव्यमुभयद्रव्यविशेपद्रव्यादतीतकृष्टयायामन्यूनपूर्वापूर्वकृष्टयायाममात्रविशेषाश्च गृहीत्वा प्रथमसमयकृतपूर्वकृष्टीना तृतीयकृष्टौ निक्षपति। अत्रापि पूर्ववद्धनर्णविवरण ज्ञातव्यम्। एव पूर्णकृष्टीना चतुर्थकृष्टयादिपु चरमकृष्टिपर्यन्तासु पूर्णकृष्टिषु प्रतिकृष्टयधस्तनशीर्षविशेषद्रव्यादतीतपूर्णकृष्टयायाममात्रविशेषान् मध्यमखण्डद्रव्यादेकैकखण्डद्रव्यमुभयद्रव्यविशेषद्रव्यादतीतकृष्टयायामन्यूनसर्वकृष्टयायाममात्रविशेषाश्च गृहीत्वा निक्षपति। पूर्णकृष्टीना चरमकृष्टौ अधस्तनशीर्षविशेषद्रव्यादवशिष्टान् रूपोनपूर्णकृष्टयायाममात्रविशेषान् मध्यमखण्डद्रव्यादवशिष्टमेकखण्डद्रव्य उभयद्रव्यविशेषद्रव्यादवशिष्टमेकविशेप च गृहीत्वा निक्षिपति। एव निक्षिप्तद्रव्यत्रय समाप्त भवति। इति द्रव्यन्यासो जात। एव निक्षिप्ते सति प्रथमसमयकृतपूर्वकृष्टिद्रव्येण सह द्रव्यमेकगोपुच्छाकारेणावतिष्ठते। तद्यथा—

प्रथमसमयकृतपूर्णकृष्टिद्रव्ये अस्मिन्नधस्तनशीर्पविशेपद्रव्ये अधस्तनकृष्टिद्रव्ये च युक्ते पूर्वापूर्णकृष्टिमात्रायास समपट्टिकाधनमित्थ भवति—

।　　　　।
व १२ १६　　४
　　　१ ०　ख
ओ प ४ १६ – ४
ठ ख　　ख २

४ ख ओ ठ	४ ख

नपुरुभयद्रव्यविशेषद्रव्याद-

। १ – १ – ।
स्मात् व १२ ठ ४ ४
　　। ख ख २

गुणकारभूतासख्यातोपरिस्थिताधिकरूपप्रमाण प्रथमसमयकृतकृष्टिद्रव्य-

　　　　　१ ०
ओ प ४　१६ – ४
ठ ख　　　ख२

अवरस्मिन् बहुकं ददाति हि विशेषहीनक्रमेण चरमे इति।
ततोऽनंतगुणोनं विशेषहीनं तु स्पर्धके ॥२८८॥

स० टी०—द्वितीयसमयकृतापूर्वकृष्टीनां मध्ये जघन्यकृष्टौ बहुद्रव्यं ददाति। पुनर्द्वितीयापूर्वकृष्ट्यादिषु पूर्वकृष्टिचरमकृष्टिपर्यंतासु कृष्टिषु विशेषहीनक्रमेण द्रव्यं निक्षिपति। तस्मात्पूर्वचरमकृष्टिनिक्षिप्त-द्रव्यात्पूर्वस्पर्धकादिवर्गणायां निक्षिप्तद्रव्यमनंतगुणहीनं। ततः परं द्वितीयादिवर्गणासु नानागुणहानिमात्रधनीषु चरमगुणहानिचरमवर्गणापर्यंतासु तत्तद्गुणहानिगतविशेषहीनक्रमेण द्रव्यं ददाति। अत्र द्वितीयसमयापकृष्टकृष्टि-

सर्वधिद्रव्यस्य व १२ ∂ / ओ प / ∂ प्रथमद्वितीयसमयकृतपूर्वापूर्वकृष्टिषु निक्षेपविधानविशेषोऽस्ति। तं श्रीमाधवचन्द्रत्रैविद्य-देवपरमोपदेशानुसारेण वयं व्याख्यास्यामः। तद्यथा—

द्वितीयसमयकृतापूर्वकृष्टीनां मध्ये जघन्यकृष्टावधस्तनशीर्षविशेषद्रव्यं मुक्त्वा अवशिष्टद्रव्यत्रये अधस्तनकृष्टिद्रव्यात् व १२ १६ ४ १ ∩ / ओ प ४ १६ − ४ ख ओ ∂ / ∂ ख ख २ अस्मादेककृष्टिद्रव्यं व १२ १६ ४ १∩ / ओ प ४ १६ − ४ ख ओ ∂ ४ / ∂ ख ख २ ख ओ ∂ मध्यखंडद्रव्यात्—

व १२ ∂ ≡ ४ / ओ प ४ / ∂ ख अस्मादेकखंडद्रव्यं व १२ ∂ ≡ / ओ प ४ / ∂ ख उभयद्रव्यविशेषादस्मात् व १२ ∂ १ − १ − १∩ ४ ४ / ओ प ४ १६ − ४ ख ख २ / ∂ ख ख २

पूर्वापूर्वकृष्टयायामद्वयमात्रविशेषांश्च गृहीत्वा व १२ ∂ १ − १ ∩ ४ / ओ प ४ १६−४ ख / ∂ ख ख २। निक्षिपति, अतएव जघन्यकृष्टौ निक्षिप्त द्रव्यं बहुकमित्युक्तम्। पुनरधस्तनकृष्टिद्रव्यादेककृष्टिद्रव्यं मध्यमखण्डद्रव्यादेकखण्डद्रव्यमुभयद्रव्यविशेषद्रव्याद्रूपोन पूर्वापूर्वकृष्टयायाममात्रविशेषांश्च गृहीत्वा द्वितीयसमयकृतापूर्वकृष्टीनां द्वितीयकृष्टौ निक्षिपति। अतएव जघन्य-कृष्टिनिक्षिप्तद्रव्यादिकमेकेनोभयद्रव्यविशेषेण हीनमित्युक्तम्। पुनरधस्तनकृष्टिद्रव्यादेककृष्टिद्रव्यं मध्यमखण्ड-द्रव्यादेकखण्डद्रव्यमुभयद्रव्यविशेषद्रव्याद् द्विरूपोनपूर्वापूर्वकृष्टयायाममात्रविशेषांश्च गृहीत्वा द्वितीयसमय-कृतापूर्वकृष्टीनां तृतीयकृष्टौ निक्षिपति। इदमपि द्वितीयकृष्टिनिक्षिप्तद्रव्याद्विशेषहीनं भवति। एवं चतुर्थादिषु द्वितीयसमयकृतापूर्वकृष्टिचरमकृष्टिपर्यन्तास्वपूर्वकृष्टिष्वधस्तनकृष्टिद्रव्यादेकैककृष्टिद्रव्यं मध्यमखण्डद्रव्यादेकैक-खण्डद्रव्यमुभयद्रव्यविशेषद्रव्यादधोऽतीतकृष्टयायामन्यूनपूर्वापूर्वकृष्टयायाममात्रविशेषांश्च गृहीत्वा तत्र तत्र निक्षिपति। तत्राधस्तनकृष्टिद्रव्यादेककृष्टिद्रव्यं मध्यमखण्डद्रव्यादेकखण्डद्रव्यमुभयद्रव्यविशेषद्रव्याद्रूपोनापूर्वकृष्ट-यायामन्यूनपूर्वापूर्वकृष्टयायाममात्रविशेषांश्च गृहीत्वा द्वितीयसमयकृतापूर्वकृष्टीनां चरमकृष्टौ निक्षिपति। एवं निक्षिप्तेऽधस्तनकृष्टिद्रव्यं सर्वं समाप्तम्। एवं त्रिद्रव्यन्यासः कथितः। पुनर्मध्यमखण्डद्रव्यादेकखण्डद्रव्यमुभय-

द्रव्यविशेषद्रव्यादपूर्वकृष्टचायाममात्रन्यूनपूर्वापूर्वकृष्टचायाममात्रविशेषाश्च गृहीत्वा प्रथमसमयकृतपूर्वकृष्टीना जघन्यकृष्टौ निक्षपति। इदमपूर्वकृष्टीना चरमकृष्टिनिक्षिप्तद्रव्यादसख्येयभागेनानन्तभागेन च हीन द्वितीयसमयापकृष्टकृष्टिद्रव्यादसख्येयभागमात्रेणाधस्तनकृष्टयेककृष्टिद्रव्येण सर्वद्रव्यादनन्तैकभागमात्रेणैकेनोभयद्रव्यविशेषेण च हीनत्वात। एव पूर्वकृष्टिप्रथमकृष्टौ द्विद्रव्यासो जात। पुनरधस्तनशीर्पविशेषद्रव्यादेकविशेष मध्यमखण्डद्रव्यादेकखण्डद्रव्यमुभयद्रव्यविशेपद्रव्यादतीतकृष्टचायामन्यूनपूर्वापूर्वकृष्टचायाममात्रविशेषाश्च गृहीत्वा प्रथमसमयकृतपूर्वकृष्टीना द्वितीयकृष्टौ निक्षपति। इद पूर्वकृष्टिप्रथमकृष्टिनिक्षिप्तद्रव्यात्कियता

न्यूनमिति चेत् उभयद्रव्यविशेपस्यासख्येयभागमात्रेणाधस्तनशीर्पविशेषेण व १२ । न्यूनोभयद्रव्यविशेषेणैकेन

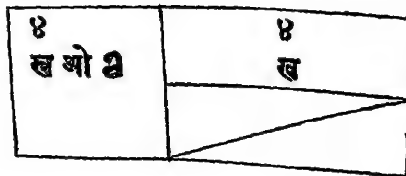
१० (?)
२ प ४ १६-४
a ख ख २

। १ - १ ०
व १२ a ४ हीन पूर्वकृष्टिद्वितीयादिकृष्टिष्वधस्तनशीर्षविशेषद्रव्यस्य निक्षेपसम्भवात्। पुनरधस्तनशीर्ष-
। ख १ ०
ओ प ४ १६ - ४
a ख ख २

विशेषद्रव्याद् द्वौ विशेषौ मध्यमखण्डद्रव्यादेकखण्डद्रव्यमुभयद्रव्यविशेषद्रव्यादतीतकृष्टचायामन्यूनपूर्वापूर्वकृष्टचायाममात्रविशेषाश्च गृहीत्वा प्रथमसमयकृतपूर्वकृष्टीता तृतीयकृष्टौ निक्षपति। अत्रापि पूर्ववद्धनर्णविवरण ज्ञातव्यम्। एव पूर्वकृष्टीना चतुर्थकृष्टयादिषु चरमकृष्टिपर्यन्तासु पूर्वकृष्टिषु प्रतिकृष्टयधस्तनशीर्षविशेषद्रव्यादनीतपूर्वकृष्टचायाममात्रविशेषान् मध्यमखण्डद्रव्यादेकैकखण्डद्रव्यमुभयद्रव्यविशेषद्रव्यादतीतकृष्टचायामन्यूनसर्वकृष्टचायाममात्रविशेषाश्च गृहीत्वा निक्षपति। पूर्वकृष्टीना चरमकृष्टौ अधस्तनशीर्षविशेषद्रव्यादवशिष्टान् रूपोनपूर्वकृष्टचायाममात्रविशेषान् मध्यमखण्डद्रव्यादवशिष्टमेकखण्डद्रव्य उभयद्रव्यविशेषद्रव्यादवशिष्टमेकविशेप च गृहीत्वा निक्षिपति। एव निक्षिप्तद्रव्यत्रय समाप्त भवति। इति द्रव्यन्यासो जात। एव निक्षिप्ते सति प्रथमसमयकृतपूर्वकृष्टिद्रव्येण सह द्रव्यमेकगोपुच्छाकारेणावतिष्ठते। तद्यथा—

प्रथमसमयकृतपूर्वकृष्टिद्रव्ये अस्मिन्नधस्तनशीर्पविशेषद्रव्ये अधस्तनकृष्टिद्रव्ये च युक्ते पूर्वापूर्वकृष्टिमात्रायास समपट्टिकाधनमित्थ भवति—

। ।
व १२ १६ ४
१ ० ख
ओ प ४ १६ - ४
a ख ख २



नपुरुभयद्रव्यविशेषद्रव्याद-

। १ - १ - ।
स्मात् व १२ a ४ ४
। ख ख २
१०
ओ प ४ १६ - ४
a ख ख२

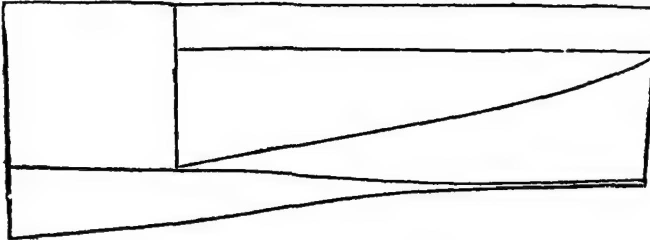
गुणकारभूतासख्यातोपरिस्थिताधिकरूपप्रमाण प्रथमसमयकृतकृष्टिद्रव्य-

१ –
। । ।
सम्बन्धिविशेषद्रव्यमात्र गृहीत्वा व १२ ४ ४ पूर्वापूर्वकृष्टचायामद्वयाधस्तनसर्वजघन्यकृष्टौ सर्व-
। ख ख२ १०
ओ प ४ १६ – ४
ꣃ ख ख २

। ।
कृष्टचायाममात्रविशेषान्निक्षिपति व १२ ४ द्वितीयादिकृष्टिष्वेकैकविशेषहीनक्रमेण निक्षिप्य
। १०
ओ प ४ ख । १६४
ꣃ ख ख २

।
सर्वचरमकृष्टावेकविशेषमात्र व १२ निक्षिपति । एव निक्षिप्ते अधस्तनशीर्षविशेषमात्रद्रव्या-
। १०
ओ व ४ १६ – ४
ꣃ ख ख २

धस्तनकृष्टिद्रव्योभयविशेषद्रव्यगुणकारभूतासख्यातोपरिस्यैकरूपसम्बन्धिविशेषद्रव्यैस्त्रिभि साधिक प्रथमसमय-कृतकृष्टिद्रव्यमित पूर्वापूर्वकृष्टचायामसहितमेकगोपुच्छद्रव्ये भवति



प्रथमकृष्टि
। ।।।
व १२ १ । १६ १०
। ० ० ० ० ०
ओ प ४ १६ – ४
ꣃ ख ख २

चरमकृष्टि
। ।।। १०
व १२ १ १६ – ४
। ख
। १०
ओ प ४ १६ – ४
ꣃ ख ख २

। ।
पुनर्मध्यखण्डमर्वद्रव्यमात्रे समपट्टिकाद्रव्ये व १२ ꣃ ≡ ४ द्वितीयसमयकृतकृष्टिद्रव्यसम्बन्धिविशेषद्रव्यम्
।
ओ प ४ ख
ꣃ ख

| १—|
व १२ ३ ४ ४ सर्वजघन्यकृष्टौ सर्वकृष्ट्यायाममात्रविशेषान्निक्षिप्य द्वितीयादिकृष्टिष्वेकैक-
ओ प | ख ख २ १८
३ ४ | १६ — ४
ख ख २

विशेषहीनक्रमेण निक्षिप्य सर्वचरमकृष्टाववशिष्टैकविशेषमात्र व १२ | १ — निक्षिपति। एवं निक्षिप्ते
ओ प ४ १६—४
३ ख ख२

द्वितीयसमयकृतकृष्टिद्रव्यं अधस्तनशीर्षाधस्तनकृष्ट्युभयविशेषगुणकारभूतासंख्यातोपरिग्यैकरूपसम्बन्धिविशेष-द्रव्यैस्त्रिभिर्न्यूनं पूर्वापूर्वकृष्ट्यायामसहितैकगोपुच्छाकारं भवति—

| १८
व १२ ३ ≡ १६ | १८ ०००००
ओ प ४ १६—४
३ ख ख२

| १८
व १२ ३ ≡ १६ — ४ | १८ ख
ओ प ४ १६ — ४
३ ख ख२

अस्मिन् प्राक्तनगोपुच्छद्रव्यस्योपरि स्थापिते प्रथम-द्वितीयसमयकृतकृष्टिद्रव्यं सर्वमप्येकगोपुच्छाकारं दृश्यं भवति। पूर्वाचार्यैः सर्वत्र तथैव सम्मतत्वात्। तन्न्यास —

॥२८८॥

स० च०—दूसरे समयविषै कीनी जे अपूर्वकृष्टि तिनविषै जो जघन्य कृष्टि है तिसविषै तौ बहुत द्रव्य दीजिए है। बहुरि द्वितीय अपूर्व कृष्टितैं लगाय अपूर्व कृष्टिकी अंत कृष्टि पर्यंत क्रमतै चय घटता क्रमकरि निक्षेपण करै है। बहुरि तातैं पूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै निक्षेपण कीया द्रव्य अनंतगुणा घटता है। तातैं परै ताकी द्वितीयादि वर्गणा जे नाना गुणहानि सम्बन्धी अंतगुणहानिकी अंतवर्गणा पर्यंत हैं तिनविषै अपनी अपनी गुणहानिविषै सम्भवता चय घटता क्रमकरि निक्षेपण करै है। सो इहाँ याकौ विशेष करि दिखाइए है—

तहाँ द्वितीय समयविषै अपकर्षण कीया द्रव्यविषै जो कृष्टि सम्बन्धी द्रव्य है ताकौ पूर्व अपूर्व कृष्टिनिविषै निक्षेपण करनेका विधान श्रीमाधवचंद्र गुरुके अनुसारतैं कहैं हैं—द्वितीय

समयविषै कीनी जे अपूर्व कृष्टि तिनविषै अधस्तन शीर्ष विशेषका द्रव्य तौ न दीजिए है अर अवशेष तीन द्रव्य निक्षेपण करिए है। तहां अधस्तन कृष्टि द्रव्यतै एक कृष्टिका द्रव्यकौ अर मध्यम खडका द्रव्यतै एक खडका द्रव्यकौ अर उभय विशेष द्रव्यतै पूर्व अपूर्व कृष्टिनिका प्रमाणको मिलाए जो प्रमाण होइ तितनेमात्र चयनिका द्रव्यकौ ग्रहि करि जघन्य कृष्टि विषै निक्षेपण यरै है। तातै जघन्य कृष्टिविषै दीया द्रव्य वहुत जानना। वहुरि तातैं ऊपरि अधस्तन कृष्टि द्रव्यतै एक एक कृष्टि द्रव्यकौ अर मध्यम खण्ड द्रव्यतै एक एक खण्ड द्रव्यकौ उभय विशेष द्रव्यतै पूर्व अपूर्व कृष्टिनिका प्रमाणतैं क्रमकरि एक एक घटता प्रमाणमात्र चयनिके द्रव्यकौ ग्रहि करि अनुक्रमतै द्वितीयादि अपूर्व कृष्टिनिविषै निक्षेपण करै है। तहाँ अतकृष्टिविषै एक कृष्टि द्रव्यकौ अर एक मध्यम खण्ड द्रव्यकौ अर एक अधिक पूर्व कृष्टिका प्रमाणमात्र चयनिके द्रव्यकौ निक्षेपण कीजिए है। इहाँ प्रथमादि कृष्टितै द्वितीयादि कृष्टिविषै दीया द्रव्य एक एक उभय द्रव्य विशेष-मात्र घटता जानना। इहाँ अधस्तन कृष्टिका द्रव्य समाप्त भया। ऐसै तीन द्रव्यका स्थापन कह्या। या प्रकार इतने इतने द्रव्यकरि इहाँ अपूर्व कृष्टि निपजी।

बहुरि प्रथम समयविषै करी ऐसी अपूर्व कृष्टि तिनिविषै जो जघन्य कृष्टि तीहिंविषै दोय ही द्रव्यका निक्षेपण हो है। तहाँ मध्यम खण्ड द्रव्यतै एक खण्डके द्रव्यकौ उभय विशेष द्रव्यतैं पूर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र चयनिके द्रव्यकौ ग्रहि निक्षेपण कीजिए है। यहुँ अपूर्व कृष्टिनिका अत कृष्टिविषै निक्षेपण कीया जो द्रव्य तातै असख्यातवा भाग अर अनतवा भाग करि हीन जानना, जातै द्वितीय समयविषै अपकर्षण कीया द्रव्यतै असख्यातवे भागमात्र तौ अधस्तन कृष्टिके एक कृष्टिका द्रव्य अर सर्व द्रव्यके अनन्तवे भागमात्र जो उभय विशेषका एक चय इनकरि घटता द्रव्य इहाँ निक्षेपण कीया है। बहुरि द्वितीयादि पूर्व कृष्टिनिविषै अधस्तन शीर्ष विशेष सहित तीन द्रव्यका निक्षेपण हो है। तहाँ द्वितीय पूर्व कृष्टिविषै अधस्तन शीर्ष विशेषतै एक चयके द्रव्यकौ मध्यम खण्ड द्रव्यतै एक खण्डके द्रव्यकौ उभय विशेष द्रव्यतैं एक घाटि पूर्व कृष्टि प्रमाणमात्र चयनिके द्रव्यकौं ग्रहि निक्षेपण करै हैं। बहुरि तृतीयादि पूर्व कृष्टिनिविषै अधस्तन शीर्ष विशेषतै दोय तीन आदि क्रमतैं एक एक बंधता चयनिके द्रव्यकौ अर मध्यम खण्डतै एक एक खण्डके द्रव्यकौ उभय विशेष द्रव्यतैं दोय तीन आदि घटता पूर्व कृष्टि प्रमाणमात्र चयनिके द्रव्यकौ ग्रहि करि क्रमतै निक्षेपण करै है। तहाँ पूर्व कृष्टिनिकी अत कृष्टिविषै अधस्तन शीर्ष विशेष द्रव्यतै एक घाटि पूर्व कृष्टि प्रमाणमात्र चयनिके द्रव्यकौ मध्यम खण्ड द्रव्यतैं एक खण्ड द्रव्यकौं उभय विशेष द्रव्यतै एक चयके द्रव्यकौं ग्रहि करि निक्षेपण करै है। इहाँ प्रथमादि कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै द्वितीयादि कृष्टिविषै दीया द्रव्य क्रमतैं उभय द्रव्य विशेषके अनतवे भागमात्र जो अधस्तन शीर्षविशेष ताकरि हीन उभय द्रव्यविशेषमात्र जानना। ऐसै पूर्व कृष्टि थी तिनविषै इतना द्रव्य और मिलाया या प्रकार दोया द्रव्यका निक्षेपण कीए प्रथम द्वितीय समयविषै कीनी जे कृष्टि तिनिका द्रव्य सर्व ही एक गोपुच्छाकार हो है। जैसै गायका पूछ क्रमतै घटता हो हैं तैसैं क्रमतै घटता द्रव्य प्रमाण लीए हो है। सो अर्थ सदृष्टि आदि करि विचारै यहु प्रकट जानिए है। सो सस्कृतटीकातै जानना। वहुरि वहु भागमात्र जो पूर्व स्पर्धक तिनिविषै देने योग्य द्रव्य था ताकौ 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यादि विधानतै प्रथमादि वर्गणानिविषै चय घटता क्रमकरि दीजिए है। इहाँ अत कृष्टिविषै दीया द्रव्य क्रमतै प्रथम वर्गणा द्रव्य अनतवें भागमात्र है जातै इहाँ भागहार द्व्यर्ध गुणहानि है। या प्रकार इस गाथाका अर्थ जानना ॥२८८॥

विशेप —यहाँ २८४, गाथासे लेकर २८८ तककी गाथामे जिन बातोको निर्देश किया है— उनमेसे कतिपय बातोका खुलासा इस प्रकार है—

१ अपकर्षित द्रव्यमेसे कितना भाग कृष्टियोको प्राप्त होता है और कितना भाग स्पर्धक-रूप रहता है।

२ पिछले समयमे जो सूक्ष्म कृष्टियाँ की जाती है उनको पूर्वकृष्टि कहा गया है और उत्तरोत्तर वर्तमान समयमे जो सूक्ष्म कृष्टियाँ की जाती है उन्हे अपूर्वकृष्टि कहा गया है।

३ बादर लोभसे सूक्ष्मलोभमे बहुत ही कम फलदान शक्ति रह जाती है। इसीलिए स्पर्धकगत अनुभागसे कृष्टिगत अनुभागकी नीचे रचना करता है यह कहा गया है।

४ प्रथम समयसे जितने द्रव्यका अपकर्षण करता है उससे दूसरे समयमे पूर्व और अपूर्व कृष्टियोमे सिंचन करनेके लिए असख्यातगुणे द्रव्यका अपकर्षण करता है। उसमे प्रथम समयकी अन्तिम कृष्टिमे जितने प्रदेश पुजका निक्षेपण होता है उससे दूसरे समयकी प्रथम जघन्य कृष्टिमे असख्यातगुणे द्रव्यका निक्षेपण होता है। आगे अन्तिम अपूर्व कृष्टितक उत्तरोत्तर विशेपहीन-विशेषहीन द्रव्यका निक्षेपण होता है। उसके बाद प्रथम समयमे रची गई कृष्टियोमे जो जघन्य कृष्टि है उसमे विशेषहीन द्रव्य देता है। इसके आगे ओघ उत्कृष्ट कृष्टिकी अपेक्षा प्रथम समयमे रची गई कृष्टियोमे अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक सर्वत्र अनन्तवाँ भागप्रमाण विशेप हीन द्रव्य देता है। पुन उससे जघन्य स्पर्धककी आदि वर्गणामे अनन्तगुणाहीन प्रदेश विन्यास करता है। पुन उससे उत्कृष्ट स्पर्धकसे नीचे जघन्य अतिस्थापनाप्रमाण स्पर्धक छोडकर स्थित हुए वहाँके स्पर्धककी उत्कृट वर्गणाके प्राप्त होनेतक अनन्तवाँ भागप्रमाण विशेषहीन प्रदेश विन्यास करता है।

५ यहाँ जिस प्रकार दूसरे समयमे प्रदेश विन्यासका क्रम बतलाया है उसी प्रकार शेष समयोमे भी जानना चाहिए।

६ यह दीयमान द्रव्यकी श्रेणिप्ररूपणा है। दृश्यमान द्रव्यकी श्रेणिप्ररूपणा करनेपर प्रथम कृष्टिमे दृश्यमान द्रव्य बहुत है। उससे दूसरी कृष्टिमे अनन्तवे भागप्रमाण विशेषहीन है। इसी प्रकार अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक विशेषहीन-विशेषहीन जानना चाहिए।

अथ निक्षेपद्रव्यस्य पूर्वापूर्वकृष्टिसधिगतविशेष प्ररूपयति—

णवरि असखाणतिमभागूण पुव्वकिट्टिसधीसु।
हेट्ठिमखडपमाणेणेव विसेसेण हीणादो ॥२८९॥

नवरि असख्यातानन्तिमभागोन पूर्वकृष्टिसधिषु।
अधस्तनखडप्रमाणेनैव विशेषेण हीनात् ॥२८९॥

स० टी०—अय तु विशेप द्वितीयादिसमयेपु कृष्टिद्रव्यनिक्षेपे पूर्वापूर्वकृष्टिसधिषु अपूर्वकृष्टीना चरमकृष्टिनिक्षिप्तद्रव्यात् पूर्वकृष्टिप्रथमकृष्टिनिक्षिप्तद्रव्यमसख्येयभागेनानतभागेन च न्यून—

१ ० (top of third term)
। १ —   । १ —   ।
व १२ ∂ । १६ ००० व १२ ∂ १६ — ४ एकाधस्तनकृष्टिद्रव्येणैकोभयद्रव्यविशेषेण च हीनत्वात्। अय-
।   १ ०   ।   १ ० ख
ओ प ४ १६ — ४   ओ प ४ १६ — ४
∂ ख   ख २   ∂ ख   ख २

मर्थ प्राक् सप्रपच व्याख्यात इति नेह प्रतन्यते ॥२८९॥

अब निक्षेप द्रव्यके पूर्व और अपूर्व सन्धिगत विशेषको वतलाते हैं—

स० च०—इतना विशेष जो पूर्व अपूर्व कृष्टिकी सधिनिविपै अपूर्वकृष्टिको अतकृष्टिविपै निक्षेपण कोया द्रव्यतै पूर्व कृष्टिकी प्रथम कृष्टिविषै निक्षेपण कीया द्रव्य है सो असख्यातवाँ भागकरि वा अनतवाँ भागकरि घटता है। जातै एक अधस्तन कृष्टिका द्रव्य अर एक उभय द्रव्यका विशष ताकरि हीन हो है। सो कथन पूर्वै किया हो है ॥२८९॥

अथ कृष्टीना शक्त्यल्पबहुत्वप्रदर्शनार्थमाह—

अवरादो चरिमेत्ति य अणतगुणिदक्कमादु सत्तीदो ।
इदि किट्टीकरणद्धा बादरलोहस्स विदियद्ध ॥२९०॥

अवरस्मात् चरम इति च अनतगुणित तु शक्तित ।
इति कृष्टिकरणाद्धा बादरलोभस्य द्वितीयार्धम् ॥२९०॥

स० टी०—अपूर्वकृष्टिजघन्यकृष्टचविभागप्रतिच्छेदेभ्य व ख ४ / ख द्वितीयादिकृष्टय पूवकृष्टिचरमकृष्टिपर्यता अनतानतगुणितशक्तयो गच्छति। तत्र तच्चरमकृष्टौ रूपोनपूर्वापूर्वकृष्टचायाममात्रवरानतगुणकारैर्गुणितमविभागप्रतिच्छेदप्रमाण व ख ४ १ख / ख ४ ख अपवर्तिते एव भवति व / ख। एव तृतीयादिसमयेपु कृष्टिकरणकालचरमसमयपर्यंतेषु असख्यातगुणितक्रमेण द्रव्यमपकृष्य पूर्वापूर्वकृष्टिषु प्रागुक्तविधानेन द्रव्यनिक्षेप करोति इत्युक्तप्रकारेण सूक्ष्मकृष्टिकरणे सति बादरलोभवेदककालस्य द्वितीयार्धमात्रसूक्ष्मकृष्टिकरणकालो गच्छति। यथा क्षपकश्रेण्या पूर्वापूर्वस्पर्धकद्रव्य सर्वमपि गृहीत्वा कृष्टी करोति तथोपशमश्रेण्या, किंतु पूर्वस्पर्धकद्रव्यात् कृष्टिकरणकालयोग्यमसख्यातैकभागमात्र द्रव्यमपकृष्य सूक्ष्मकृष्टी करोति। शेषबहुभागमात्रस्पर्धकद्रव्य स्वस्थाने एवोपशमयतीत्यर्थविशेषो ज्ञातव्य ॥२९०॥

अब कृष्टियोके शक्तिसम्बन्धी अल्पबहुत्वका कथन—

स० च०—अपूर्व कृष्टिकी जघन्य कृष्टिके अनुभागके अविभाग प्रतिच्छेद है। तिनतै द्वितीयादि पूर्व कृष्टिकी अत कृष्टि पर्यंतके अविभाग प्रतिच्छेद क्रमतैं अनत-अनत गुणे है। तहाँ पूर्व कृष्टिकी अतकृष्टिविषै एक घाटि पूर्व अपूर्वकृष्टिका जो प्रमाण तितनीबार अनतका गुणकार हो है। ऐसै द्वितीय समयविषै विधान कीया। बहुरि जैसै द्वितीय समयविषै विधान कह्या तैसै ही कृष्टिकरण कालके तृतीयादि अतसमयपर्यंतनिविषै क्रमतै असख्यातगुणा द्रव्यकौ अपकर्षण करि पूर्वोक्त प्रकार निक्षेपण करै है। इस प्रकार बादर लोभ वेदक कालका द्वितीय अर्धमात्ररूप सूक्ष्म

---

१ तिव्वमददाए जहण्णिया किट्टी थोवा। विदिया किट्टी अणतगुणा। तदिया अणतगुणा। एवमणतगुणाए सेढीए गच्छदि जाव चरिमकिट्टि त्ति। एसो विदियतिभागो किट्टीकरणद्धा णाम। वही पृ ३१४-३१५।

कृष्टि करनेका काल व्यतीत हो है। जैसैं क्षपक श्रेणीविषैं पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिका सर्व ही द्रव्यकौं अपकर्षण करि कृष्टि करै है। तैसै उपशम श्रेणिविषैं भी कृष्टि करै है। विशेष इतना—

इहाँ पूर्व स्पर्धकके द्रव्यतैं असख्यातवाँ भागमात्र ही द्रव्यकौ ग्रहि सूक्ष्म कृष्टि करै है। अवशेष द्रव्य अपने स्वरूपरूप ही रहता सता उपशमै है ॥२९०॥

विशेष—उपशमश्रेणिमे सज्वलन लोभकी की गई कृष्टियोकी शक्तिविशेषका विचार करते हुए श्री जयधवलामे बतलाया है कि 'जघन्य कृष्टिमे सबसे स्तोक शक्ति होती है' इसका आशय है कि कृष्टिकी अपेक्षा सदृश धन (शक्ति) वाले परमाणुको छोडकर वहाँ एक परमाणुके अविभाग प्रतिच्छेदोको ग्रहण कर एक कृष्टि होती है। यह सबसे स्तोक है। तथा इससे दूसरी कृष्टि अनन्तगुणी होती है। सो यहाँ भी एक परमाणुमे जितने अविभाग प्रतिच्छेद हो उनका समूह लेना चाहिये। इस प्रकार एक-एक परमाणुको ही ग्रहणकर अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर अनन्तगुणित क्रमसे अविभाग प्रतिच्छेद जानने चाहिये। अथवा 'जघन्य कृष्टि स्तोक शक्तिवाली होती है।' इस पदका यह अर्थ करना चाहिये कि जघन्य कृष्टिमे सदृशधन (शक्ति) वाले परमाणु होते है। वे सब मिलकर जघन्य कृष्टि कहलाते है। वह सबसे स्तोक होती है। इससे दूसरी कृष्टि अनन्तगुणी होती है। यहाँ भी सदृश धन (शक्ति) वाले परमाणुओकी एक कृष्टि ग्रहण की गई है। इसी प्रकार अन्तिम कृष्टि के प्राप्त होने तक जानना चाहिये। इन्हे कृष्टि इसलिये कहा गया है, क्योकि इनमे अविभाग प्रतिच्छेदोकी उत्तरोत्तर क्रमवृद्धि नही पाई जाती। यहाँ अन्तिम कृष्टिका शक्तिकी अपेक्षा जितना प्रमाण है उससे जघन्य स्पर्धकको प्रथम वर्गणा अनन्तगुणी है, द्वितीयादि वर्गणाओका इसी क्रमसे विचार कर लेना चाहिये।

इस प्रसगमे इतना विशेष जानना चाहिये कि जिस प्रकार क्षपक श्रेणिमे पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोका अपवर्तन होकर मात्र कृष्टियोकी ही रचना करता है वैसा उपशमश्रेणिमे नही करता, किन्तु सभी पूर्व स्पर्धको के जहाँके तहाँ रहते हुए उन सब स्पर्धकोमेसे असख्यातवें भाग प्रमाण द्रव्यका अपवर्तन कर एक स्पर्धकको वर्गणाओके अनन्तवे भागप्रमाण कृष्टियोकी रचना करता है।

अथ कृष्टीकरणकाले स्थितिबधप्रमाणप्ररूपणार्थं गाथात्रयमाह—

विदियद्धा सखेज्जाभागेसु गदेसु लोभठिदिबधो।
अंतोमुहुत्तमेत्त दिवसपुधत्त तिघादीणं[1] ॥२९१॥

द्वितीयाद्धा सख्येयभागेषु गतेषु लोभस्थितिबंध।
अन्तर्मुहूर्तमात्रं दिवसपृथक्त्व त्रिघातिनाम् ॥२९१॥

स० टी०—सज्वलनलोभप्रथमस्थितेर्द्वितीयार्धमात्रकृष्टिकरणकालस्य सख्यातबहुभागेषु गतेषु तद्बहुभागचरमसमये सज्वलनलोभस्यातर्मुहूर्तमात्रस्थितिबध १ ७ ७ घातित्रयस्य स्थितिबधो दिवसपृथक्त्वमात्र
८

दि ७ ॥२९१॥

१ किट्टीकरणद्धासखेज्जेसु भागेसु गदेसु लोभसजलणस्स अतोमुहुत्तट्ठिदिगो बधो। तिण्ह घादिकम्माण ट्ठिदिबधो दिवसपुधत्त। वही पृ० ३१५–३१६।

कृष्टिकरणके कालमे स्थिति बन्धका विचार—

स० च०—सज्वलन लोभको प्रथम स्थितिका द्वितीय अर्धमात्र जो कृष्टि करण काल ताकौ सख्यातका भाग दीएँ तहाँ बहुभाग व्यतीत होतै अतसमयविषै सज्वलन लोभका अतमुंहूर्तमात्र अर तीन घातियानिका पृथक्त्व दिनमात्र स्थिति बध हो है ॥२९१॥

किट्टीकरणद्धाए जाव दुचरिम तु होदि ठिदिबंधो ।
वस्साण सखेज्जसहस्साणि अघादिठिदिबधो[1] ॥२९२॥

कृष्टिकरणाद्धाया यावत् द्विचरम तु भवति स्थितिबध ।
वर्षाणा सख्येयसहस्राणि अघातिस्थितिबध ॥२९२॥

स० टी०—कृष्टिकरणकालस्य द्विचरमसमय यावदघातित्रयस्य पूर्ववत्सख्यातसहस्रवर्षमात्र एव स्थितिबध । एवमुक्ता सज्वलनलोभादीना स्थितिबधा कृष्टिकरणकालद्विचरमसमयपर्यंत समबधा एव गच्छति ॥२९२॥

स० च०—कृष्टि करण कालका यावत् द्विचरम समय प्राप्त होइ तावत् तीन अघातिया कर्मनिका स्थितिबध यथासम्भव सख्यात हजार वर्षमात्र है । बहुरि सज्वलन लोभादिकनिका भी स्थिति बध है सो तिस द्विचरम समय पर्यंत पूर्वोक्त प्रमाण लीएँ समानरूप ही जानना ॥२९२॥

किट्टीयद्धाचरिमे लोभस्सतोमुहुत्तिय बंधो ।
दिवसतो घादीण वेवस्सतो अघादीण[2] ॥२९३॥

कृष्टयद्धाचरमे लोभस्यातर्मुहूर्तक बंध ।
दिवसात घातिना द्विवर्षांतोऽघातिनाम् ॥२९३॥

स० टी०—कृष्टिकरणकालस्य चरमसमये सज्वलनलोभस्य स्थितिबध अनतरातीतस्थितिबधात्सख्यातगुणहीनोऽप्यतर्मुहूर्तमात्र एव २ १ घातित्रयस्यानतरातीतस्थितिबधात्सख्यातगुणहीनोप्येकदिवसस्यातरे एव न समो नाप्याधिक इत्यर्थ तीत दि १ – । अघातित्रयस्यानतरातीतबधात्सख्यातगुणहीनोऽपि वर्षद्वयस्यातरे एव न समो नाप्याधिक इत्यर्थ वी व २ – वे व २ – ३ । एते उपशमकानिवृत्तिकरणचरमसमयस्थितिबधा
२
क्षपकानिवृत्तिकरणचरमसमयलोभादिस्थितिबधेभ्यो द्विगुणप्रमाणा इति ग्राह्यम् ॥२९३॥

स० च०—कृष्टि करणकालका अतसमयविषै पूर्व स्थितिबधतैं सख्यातगुणा घाटि सज्वलन लोभका अतमुंहूर्तमात्र अर तीन घातियानिका दिवसात कहिए एक दिन किछू घाटि अर तीन अघातियानिका द्विवर्षात कहिए दोय वर्ष किछू घाटि स्थिति बध हो है। ए उपशमक अनिवृत्ति-

---

१ जाव किट्टीकरणद्धाए दुचरिमो ट्ठिदिबधो ताव णामा-गोद-वेदणीयाण सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ट्ठिदिबधो । वही पृ० ३१६ ।

२ किट्टीकरणद्धाए चरिमो ट्ठिदिबधो लोहसजलणस्स अतोमुहुत्तिओ । णाणावरण-दसणावरण-अतराइयाणमहोरत्तस्सतो । णामा-गोद-वेदणीयाण वेण्ह वस्साणमतो । वही पृ० ३१६-३१७ ।

करणके अंतसमयविषै स्थितिबंध कहे ते क्षपक अनिवृत्ति करणके अंत समयके स्थितिबंधतै दूणे हैं ॥२९३॥

विशेष—गाथा का प्रथम पाद 'किट्टीयद्धाचरिमे' पाठ है। उसका प्रकृतमे 'बादरसाम्पराय-के अन्तिम समयमे' ऐसा अर्थ समझना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

अथ संक्रमकालावधिनिर्देशार्थमाह—

विदियद्धा परिसेसे समऊणावलितियेसु लोभदुग।
सट्ठाणे उवसमदि हु ण देदि संजलणलोहम्मि[1] ॥२९४॥

द्वितीयार्धे परिशेषे समयोनावलित्रिकेषु लोभद्विकम्।
स्वस्थाने उपशाम्यति हि न ददाति संज्वलनलोभे ॥२९४॥

सं० टी०—संज्वलनलोभप्रथमस्थितिद्वितीयार्द्धे समयोनावलित्रयेऽवशिष्टे अप्रत्याख्यानप्रत्याख्यान-लोभद्वयद्रव्यं संज्वलनलोभे न संक्रामति। संक्रमणावलिप्रथमसमये एतत्संक्रमणस्य विश्रान्तत्वात्, किंतु तल्लो-भद्वयद्रव्यं स्वस्वस्थाने एवोपशाम्यति। संक्रमणावलौ गतायां प्रथमस्थित्यावलिद्वयेऽवशिष्टे आगालप्रत्यागालौ व्युच्छिन्नौ प्रत्यावलिचरमसमयपर्यंतमुदीरणा वर्तते ॥२९४॥

संक्रमणकालसम्बन्धी अवधिका विचार—

स० चं०—संज्वलन लोभकी प्रथम स्थितिका द्वितीयार्धविषै समय घाटि तीन आवली अवशेष रहैं अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान लोभ है सो संज्वलन लोभविषै संक्रमण नाही करै है जातैं संक्रमणावलीका प्रथम समयविषै ही इस संक्रमणका विधान भया। तौ कहा है? तिनि दोऊ लोभनिका द्रव्य है सो स्वस्थाने कहिए अपने रूप ही विषै होता संता उपशमै है। बहुरि संक्रमणा-वली व्यतीत भए तहां दोय आवली अवशेष रहैं आगाल प्रत्यागालकी भी व्युच्छित्ति भई। बहुरि प्रत्यावली जो द्वितीयावली ताका अंतसमय पर्यंत उदीरणा वर्तै है। इनिका स्वरूप पूर्वै कह्या है तैसैं जानना ॥२९४॥

विशेष—कृष्टिकरणके कालमे एक समय कम तीन आवलि कालके शेष रहने पर अप्रत्या-ख्यान और प्रत्याख्यान लोभका संज्वलनलोभमे संक्रम नही होता क्योंकि इस समय संक्रमणावलि और उपशमनावलिका पूर्ण होना असम्भव है। इसलिये इनकी स्वस्थानमे ही उपशमनक्रिया होती है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये कि जब संज्वलन लोभकी प्रथम स्थितिमे दो आवलि काल शेष रह जाता है तब आगाल और प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति हो जाती है। तथा प्रत्यावलिके अन्तिम समयमे लोभसंज्वलनकी जघन्य उदीरणा होती है।

अथ लोभत्रयोपशमनावधिनिर्ज्ञानार्थमाह—

बादरलोभादिठिदी आवलिसेसे तिलोहमुवसंत।
णवकं किट्टिं मुच्चा सो चरिमो थूलसंपराओ य[2] ॥२९५॥

---

1 तिस्से किट्टीकरणद्धाए तिसु आवलियासु समयूणासु सेसासु दुविहो लोहो लोहसंजलणे ण संका-मिज्जदि सत्थाणे चेव उवसामिज्जदि। वही पृ० ३१७।

2 ताधे चेव जाओ दो आवलियाओ समयूणाओ एत्तियमेत्ता लोहसंजलणस्स समयपबद्धा अणुवसंता, किट्टीओ सव्वाओ चेव अणुवसंताओ, तव्वदिरित्तं लोहसंजलणस्स पदेसग्गं उवसंतं, दुविहो लोहो सव्वो चेव उवसंतो णवकबंधुच्छिट्ठावलियवज्जं। एसो चेव चरिमसमयबादरसांपराइयो। वही पृ० ३१८-३१९।

बादरलोभादिस्थितौ आवलिशेषे त्रिलोभमुपशातं ।
नवकं कृष्टि मुक्त्वा स चरम स्थूलसापरायो य ॥२९५॥

स० टी०—सज्वलनबादरलोभस्य प्रथमस्थितौ उच्छिष्टावलिमात्रेऽवशिष्टे उपशमनावलिचरमसमये लोभत्रयद्रव्य सर्वमप्युपशमित भवति तत्र सूक्ष्मकृष्टिगतद्रव्य समयोनद्व्यावलिमात्रसमयप्रवद्धनवकवधद्रव्य उच्छिष्टावलिमात्रनिषेकद्रव्य च नोपशमयति । एतद्द्रव्यत्रय मुक्त्वा लोभत्रयस्य सर्वमपि सत्त्वद्रव्यमुपशमितमित्यर्थ । म एव कृष्टिकरणकालचरमसमये वर्तमानोऽनिवृत्तिकरणश्चरमसमयबादरसापराय इत्युच्यते ॥२९५॥

लोभत्रयकी उपशमनविधिका निर्देश—

स० च०—बादर लोभकी प्रथम स्थितिविषै उच्छिष्टावलीमात्र अवशेष रहैं उपशमनावलीका अतसमयविषै तीनो लोभका सर्व द्रव्य उपशमरूप भया है। तहाँ विशेष जो सूक्ष्म कृष्टिकौ प्राप्त भया द्रव्य अर समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्धनिका द्रव्य अर उच्छिष्टावलीमात्र निषेकनिका द्रव्य नाही उपशम्या है, अवशेष उपशम्या है। ऐसैं कृष्टि करण कालका अत समयवर्ती जीवकौ चरम समयवर्ती अनिवृत्ति बादर सापराय कहिए। या प्रकार अनिवृत्ति करणका स्वरूप कह्या ॥२९५॥

विशेष—जब प्रत्यावलिमे एक समय शेष रहता है उसी समय लोभ संज्वलनका स्पर्धकगत सभी प्रदेश पुज तथा पूराका पूरा अप्रत्याख्यान और प्रत्याख्यानरूप दोनो प्रकारका लोभ उपशान्त हो जाता है। मात्र एक समय कम दो आवलि-प्रमाण नवक समयप्रबद्ध द्रव्य, उच्छिष्टावलिमात्र निषेक द्रव्य और सूक्ष्म कृष्टिगत द्रव्य उपशान्त नही होता। उसमेसे सूक्ष्म कृष्टिगत द्रव्यको सूक्ष्म साम्परायमे उपशमाता है। इस प्रकार कृष्टिकरणके अन्तिम समय तक बादर साम्पराय गुणस्थान वर्तता है।

अथ सूक्ष्मसापरायगुणस्थाने क्रियमाणकार्यविशेषप्रतिपादनार्थमाह—

से काले किट्टिस्स य पढमट्ठिदिकारवेदगो होदि ।
लोहगपढमठिदीदो अद्धं किंचूणय गत्थ[1] ॥२९६॥

स्वे काले कृष्टेश्च प्रथमस्थितिकारवेदको भवति ।
लोभगप्रथमस्थितित अर्धं किंचिदूनकं गत्वा ॥२९६॥

स० टी०—अनिवृत्तिकरणकालसमाप्त्यनतरसमये प्रथमसमयवर्तिसूक्ष्मसापराय अतर्मुहूर्तमात्रस्थिति-

। । १०
स्थितसकलसूक्ष्मकृष्टिद्रव्यादस्मात् स ə १२–ə २ १ अपकर्षणभागहारखडितैव भागमात्रद्रव्य गृहीत्वा
७।८ ।ओप
ə

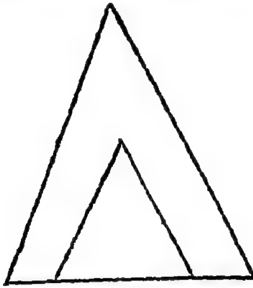
१ से काले पढमसमयसुहुमसापराइयो जादो। तेण पढमसमयसुहुमसापराइएण अण्णा पढमट्ठिदी कदा। जा पढमसमयलोभवेदगस्स पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए इमा सुहुमसापराइयस्स पढमट्ठिदी दुभागो दोऊणाओ। वही पृ० ३१८–३२०।

स ❘ १२ – ❘ ❘ १ इद पुन पल्यासंख्यातैकभागेन खण्डयित्वा तद्बहुभागमुपरितनस्थितौ निक्षिपेत्
७।८ ओ प ओ

स ❘ १२ – ❘ २ ❘ प पुनस्तदेकभागमिमं स ❘ १२ – ❘ २ ❘ गृहीत्वा बादरलोभवेदककालात्किंचिन्न्यून-
७।८ ओ प ओ प ७।८ ओ प ओ प

तृतीयभागमात्रो २ ❘ । १ – मन्तर्मुहूर्तायामां प्रथमस्थितिं कुर्वाणः प्रक्षेपयोगेत्यादिना प्रथमनिषेकादारभ्य
३

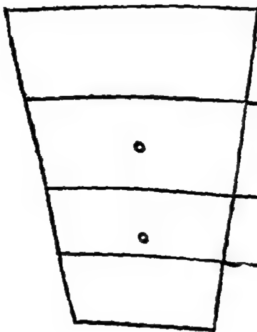
प्रतिनिषेकमसंख्यातगुणितक्रमेणोदयाद्यवस्थितिगुणश्रेण्यायामे निक्षिपति पुनः पल्यासंख्यातबहुभागमन्तर्मुहूर्ताया-मायामुपरितनस्थितौ अद्धाणेण सव्वधणेत्यादिना विशेषहीनक्रमेण निक्षिपेत् तन्न्यासोऽयं—



स ❘ १२ – ❘ २ ❘ १६ – २ ❘ – ४
७।८। ओ प ओ २ ❘ – ४ । १६ – २ ❘ – ४
२

म ❘ १२ – ❘ २ ❘ १६
७।८। ओ प ओ २ ❘ – ४ । १६ – २ ❘ – ४
२

स ❘ १२ – ❘ २ ❘ ६४
७।८। ओ प ओ प ८५



स ❘ १२ – ❘ २ ❘ । १
७।८। ओ प ओ प ८५

द्वितीयादिसमयेष्वपि सूक्ष्मसापरायचरमसमयपर्यंतमसख्यातगुणितकृष्टिद्रव्यमपकृष्य उक्तविधाने प्रथमस्थितौ द्वितीयस्थितौ च निक्षिपति। एव बादरलोभप्रथमस्थिते किंचिन्न्यूनद्वितीयार्धमात्री सूक्ष्मकृष्टीना प्रथमस्थिति २ ७ १/३ — करोतीत्यर्थ। ज्ञानावरणादिकर्मणा अपूर्वकरणप्रथमसमयारब्धा गलितावशेषा सूक्ष्मसापरायकालाद्विशेषाधिकायामा पूर्ववदेव प्रवतते। तस्मिन्नेव सूक्ष्मसापरायप्रथमसमये उदयागत सूक्ष्मकृष्टिद्रव्य वदयति ॥२९६॥

सूक्ष्म-साम्परायमे किये जाने वाले कार्य विशेषका निर्देश—

स० च०—अनिवृत्तिकरणके अनतरि प्रथम समयवर्ती जो सूक्ष्मसापराय है सो अतर्मुहूर्त्तमात्र स्थिति लिएँ समस्त सूक्ष्म कृष्टिका द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहा एक भाग मात्र द्रव्य ग्रहि ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ एक भागकौ सूक्ष्म लोभकी प्रथम स्थितिविषै निक्षेपण करै है। सो याका प्रमाण बादर लोभ वेदक कालतै किछू घाटि तीसरा भागमात्र है। सो सूक्ष्म सापरायका काल सोई सूक्ष्म कृष्टिका प्रथम स्थितिका प्रमाण जानना। सो यहु (होय) उदयादि अवस्थित गुणश्रेणि आयाम है। याके निषेकनिविषै 'प्रक्षेपयोगोद्धतमिश्रपिंड' इत्यादि विधानतै असख्यातगुणा क्रम लीएँ द्रव्य दीजिए है। बहुरि अवशेष बहुभागमात्र द्रव्यकौं द्वितीय स्थितिविषै निक्षेपण करै है। सो यहु तिस प्रथम स्थितिके उपरिवर्ती है। याका प्रमाण अतर्मुहूर्त्तमात्र है। यहु ही इहा उपरितन स्थिति है। याके निषेकनिविषै "अद्धाणेण सव्वधणे खडिदे" इत्यादि विधानतैं चय घटता क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। ऐसै बादर लोभकी प्रथम स्थितिका द्वितीय अर्धतै किंचित् न्यूनमात्र सूक्ष्म कृष्टिनिकी प्रथम स्थिति करै है। बहुरि ज्ञानावरण आदि कर्मनिकी अपूर्वकरणका प्रथम समयतै लगाय गलितावशेष गुणश्रेणि आयाम पूर्ववत् प्रवर्तै है। सो ताका इहा प्रमाण किंचित् अधिक सूक्ष्मसापराय कालमात्र है। बहुरि तिस ही सूक्ष्मसापरायका प्रथम समयविषै सूक्ष्मकृष्टिका उदयकौं वेदै है—भोगवै है ॥२९६॥

विशेष—श्री जयधवलामे बतलाया है कि जब यह जीव सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानको प्राप्त होता है तब उसके प्रथम समयमे द्वितीय स्थितिमेसे कृष्टिगत द्रव्यमे अपकर्षण भागहारका भाग देने पर जो लब्ध आवे उसे ग्रहणकर उस द्वारा प्रथम स्थिति करता है। इसका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त है। नियम यह है कि क्रोधकषायके उदयसे उपशमश्रेणिपर चढकर जो जीव लोभवेदक कालको प्राप्त होता है ऐसे बादरसाम्परायिकके जो लोभवेदककालके साधिक दो बटे तीन भाग प्रमाण प्रथम स्थिति होती है उसका कुछ कम दो भाग प्रमाण सूक्ष्मसाम्परायिक जीवके प्रथम स्थिति होती है। जितनी यह प्रथम स्थिति है उतना ही सूक्ष्मसाम्परायिकका काल है। यह उदयादि अवस्थित गुणश्रेणि है। परन्तु ज्ञानावरणादि कर्मोकी गुणश्रेणि गलितावशेष है जिसका काल सूक्ष्मसाम्परायिकके कालसे कुछ अधिक है, क्योकि इन कर्मोकी अपूर्वकरणके प्रथम समयमे जो गुणश्रेणि रचना प्रारम्भ हुई थी, यहाँ वह इतनी ही अवशिष्ट रहती है।

अथ सूक्ष्मसापरायप्रथमसमये निषेकगतसूक्ष्मकृष्टीना उदयानुदयविभागप्रदर्शनार्थमिदमाह—

पढमे चरिमे समये कदकिट्टीणग्गदो दु आदीदो।
मुच्चा असखभाग उदेदि सुहुमादिमे सव्वे ॥२९७॥

---

१ पढमसमयसुहुमसापराइयो किट्टीणमसखेज्जे भागे वेदयदि। जाओ अपढम-अचरिमेसु समएसु

प्रथमे चरमे समये कृतकृष्टीनामग्रस्तस्तु आदित ।
मुक्त्वा असख्यभाग उदेति सूक्ष्मादिमे सर्वे ॥२९७॥

स० टी०—सूक्ष्मकृष्टिकरणकालस्य प्रथमसमय कृताना सूक्ष्मकृष्टीना पल्यासख्यातैकभागमात्रकृष्टय स्वस्वरूपेण नोदयमागच्छन्ति शेपास्ते बहुभागा द्वितीयादिद्विचरमपर्यन्तेषु समयेषु कृतकृष्टय चरमसमयकृतकृष्टीना पल्यासख्यातबहुभागमात्रकृष्टयश्च स्वस्वशक्तियुक्ता एवोदयमागच्छन्ति । चरमसमयकृतकृष्टीना पल्यासख्यातैकभागमात्रकृष्टयस्तु स्वस्वशक्तिरूपेण नादयमागच्छति । या उदयमनागता प्रथमसमयकृतकृष्टीना चरमकृष्टेरारभ्य पल्यासख्यातैकभागप्रमिता कृष्टयस्ता स्वस्वरूप परित्यज्य स्वस्वशक्तेरनन्तगुणहीनशक्तिरूपतया परिणम्योदयमागच्छन्ति । याश्चानुदयप्राप्ताश्चरमसमयकृतकृष्टीना जघन्यकृष्टेरारभ्य पल्यासख्यातैकभागप्रमाणा कृष्टय ताश्च स्वस्वरूप परित्यज्य स्वस्वशक्तेरनन्तगुणशक्त्यात्मतया परिणम्य मध्यमकृष्टिस्वरूपेणोदयमागच्छन्तीति तात्पर्यम् । तत्र सकलकृष्टिप्रमाणमिद ४ पल्यासख्यातैकभागेन खण्डयित्वा तद्बहुभागमात्र्य
(। / ख)

सूक्ष्मकृष्टय ४ प (१० / ख ३ / प / ३) स्वस्वशक्तिरूपेणैवोदयमागच्छन्ति । शेपैकभाग पुन पल्यासख्यातैकभागेन खडयित्वा

तदेकभाग पृथक् सस्थाप्य ४ (। / ख प प / ३ ३) तद्बहुभाग ४ (। / ख प / ३) प ३ (१० / प / ३) द्वाभ्या खण्डयित्वा एकार्धप्रमिता ४ प प ३ २ (। / ख ३ ३ / १०) चरमसमयकृतानुदयकृष्टयो भवन्ति । पुनरवशिष्टार्धे प्राक्पृथक्सस्थापितपल्यासख्यातैकभागे प्रक्षिप्ते प्रथमसमयकृतानुदयकृष्टिप्रमाण भवत्तत्र सर्वत स्तोकाश्चरमसमयकृतानुदयकृष्टय ४ २ (। / ख प ५ / ३) ततो विशेषाधिका प्रथमसमयकृतानुदयकृष्टय ४ ३ (। / ख प ५ / ३) ततोऽसख्येयगुणा प्रथमसमयोदयागतकृष्टय ४ प (। / ख प / ३ / १० / ३) प्रथमचरमसमय-

अपुव्वाओ किट्टीओ कदाओ ताओ सव्वाओ पढमसमए उदिण्णाओ । जाओ पढमसमये कदाओ किट्टीओ तासिमग्गग्गादो असखेज्जदिभाग मोत्तूण । जाओ चरिमसमए कदाओ किट्टीओ तासि च जहण्णकिट्टिप्पहुडि असखेज्जदिभाग मोत्तूण सेसाओ सव्वाओ किट्टीओ उदिण्णाओ । तासि ताधे चेव सव्वासु, किट्टीसु, पदेसग्गमुवसामेदि गुणसेढीए । वही पृ० ३२०-३२३ ।

कृतानुदयकृष्टीनामधिकागमननिमित्तपल्यासख्यातभागहारस्य लघुसदृष्टचर्थं पञ्चाङ्क स्थापित । तत्र प्रथम-चरमसमयकृतानुदयकृष्टिषु विभजनक्रमोऽर्थसदृष्युक्तप्रकारेण कर्तव्य ॥२९७॥

सूक्ष्मसाम्परायके प्रथम समयमे किन कृष्टियोका उदय होता है इसका निर्देश—

स० च०—सूक्ष्म कृष्टि करनेके कालका प्रथम समयविषै अर अतसमयविषै कीनी जे कृष्टि तिनकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीएँ एक भागमात्र कृष्टि है ते अपने स्वरूप करि उदय न हो हैं। अन्य कृष्टिरूप परिणमि उदय हो है। बहुरि अवशेष पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीएँ बहु भागमात्र प्रथम समय अत समयविषै कीनी कृष्टि अर द्वितीयादि चरम समयविषै कीनी सर्व कृष्टि ते अपने स्वरूप ही करि उदय हो है। प्रथम समयविषै जे कीनी कृष्टि तिनिविषै तौ अत कृष्टितै लगाय पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीएँ एक भागमात्र कृष्टि उदयकौं प्राप्त नाही ते अपने स्वरूपकौ छोडि अपनी अनुभाग शक्तितै अनतगुणी घाटि शक्तिरूप परिणमि उदय आवै है। बहुरि अत समयविषै कीनी जे कृष्टि तिनविषै जघन्य कृष्टितै लगाय पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीएं एक भागमात्र कृष्टि उदय हो हैं। ते अपने स्वरूपकौ छोडि अपनी शक्तितै अनतगुणी शक्तिरूप परिणमि मध्यम कृष्टिरूप होइ उदय आवै है। ऐसा तात्पर्य है। तहाँ समस्त कृष्टिनिका जो प्रमाण ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीएँ बहुभागमात्र कृष्टि तौ अपने स्वरूप ही करि उदय हो है। अवशेष एक भागकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहाँ एक भागकौं जुदा स्थापि बहुभागके दोय खड करने। तहाँ एक खड प्रमाण तौ अत समयसम्बन्धी अनुदय कृष्टि है। अर एक खडविषै जुदा राख्या एक भाग मिलाएँ जो प्रमाण होइ तितनी प्रथम समय सम्बन्धी अनुदय कृष्टि है। ऐसैं कृष्टिकरण कालका अत समयविषै कीनी अनुदय कृष्टि स्तोक हैं, तातैं ताका प्रथम समयविषै कीनी अनुदय कृष्टि किछू अधिक है। तातैं सूक्ष्म सापरायका प्रथम समयविषै उदय आई कृष्टि असख्यातगुणी है। इहाँ ऐसा अर्थ जानना—कृष्टिकरणका प्रथम समयविषै कीनी कृष्टि ऊपरि लिखी तहाँ ऊपरि अत कृष्टि लिखि ताके नीचै उपात आदि कृष्टि क्रमतैं लिखि नीचैं-नीचैं जघन्य कृष्टि लिखनी। बहुरि ताके नीचै नीचै द्वितीयादि समयनिविषै कीनी कृष्टि भी याही प्रकार लिखनी। बहुरि लिखि नीचै ही नीचैं अत समयविषै कीनी कृष्टि लिखि तहाँ भी अत कृष्टि ऊपरि लिखि नीचैं उपात आदि कृष्टि लिखि नीचै ही नीचैं जघन्य कृष्टि लिखनी। ऐसैं अत समयविषै कीनी कृष्टिकी जघन्य कृष्टितै लगाय प्रथम समयविषै कीनी कृष्टिकी अत कृष्टि पर्यंत कष्टि लिखी। तिनिविषै ऊपरि ऊपरि क्रमतै द्रव्य तौ एक एक चय प्रमाण घटता है। अर अनुभाग अनतगुणा है। सो सूक्ष्मसापरायका प्रथम समयविषै ऐसैं कृष्टिरूप परमाणू थी तिनविषै इहा जेता प्रमाण कह्या तितनी ऊपरली वा नीचली कृष्टिनिके परमाणूनिकौ बीचिकी कृष्टिरूप परिणमावै है। अक सदृष्टिकरि जैसै सर्व कृष्टिनिका प्रमाण एक हजार ताकौ पल्यका असख्यातवाँ भागका प्रमाण पाँच ताका भाग दीएँ बहुभागमात्र आठसै बीचिकी कृष्टि हैं ते तौ अपने रूप ही उदय हो है। एक भाग दोयसै ताकौ पाँचका भाग दीएँ चालीस जुदा स्थापि अवशेष एकसौ साठिके दोय भाग कीएँ एक भागमात्र असी तौ अत समयविषै कीनी कृष्टिकी जघन्य कृष्टितैं लगाय जे नीचेकी कृष्टि हैं ते अनुदयरूप हैं। इनके परमाणू अनुभाग वधनेतैं बीचकी कृष्टिरूप परिणमि उदय हो है। बहुरि एक भागविषै जुदा राख्या चालीस मिलाएँ एकसौ वीस सो इतनी प्रथम समयविषै कीनी कृष्टिकी अतकृष्टितै लगाय उपरि

कृष्टि हैं ते अनुदय रूप हैं। इनके परमाणू अनुभाग घटनेतैं वीचिकी कृष्टिरूप परिणमि उदय हो है। ऐसैं ही यथार्थ कथन समझना ॥२९७॥

विशेष--सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानमे कहाँ किन कृष्टियोका वेदन होता है इसे स्पष्ट करते हुए श्री जयधवलामे बतलाया है--

(१) सूक्ष्मसाम्परायके प्रथम समयमे उपशामक जीव नीचे और ऊपरकी असख्यातवें भाग प्रमाण कृष्टियोको छोडकर शेष सब कृष्टियोका प्रथम समयमे वेदन करता है। सब कृष्टियोमेसे प्रदेशपुजके असख्यातवे भागका अपकर्षण कर वेदन करता हुआ मध्यम कृष्टिरूपसे वेदन करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसी विषयको स्पष्ट करते हुए आगे बतलाया है--

(२) किट्टीकरणके कालके भीतर प्रथम समय और अन्तिम समयको छोडकर शेप समयोमे जिन कृष्टियोको किया है वे सभी सूक्ष्मसाम्परायके प्रथम समयमे उदीर्ण हो जाती है यह सब सदृशधनको लक्ष्यमे रखकर कहा है, अन्यथा उन सभीका प्रथम समयमे पूरी तरहसे उदीर्ण होनेका प्रसग आता है, परन्तु ऐसा नही है, क्योकि उनमे अपकर्षण भागहारका भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त होता है उतने ही सदृश धनवाले परमाणुपुजका अपकर्षण होकर उदय देखा जाता है।

(३) तथा कृष्टिकरणके प्रथम समयमे जो कृष्टियाँ की गईं उनमेसे उपरिम असख्यातवें भाग प्रमाण कृष्टियाँ सूक्ष्मसाम्परायके प्रथम समयमे उदीर्ण हो जाती है। किन्तु यह कथन सदृश धनको लक्ष्यमे रखकर किया है, क्योकि एक समयमे उनके सब कृष्टियोकी उदीरणा होना सम्भव नही है। इसलिये प्रथम समयमे जितनी कृष्टियाँ की गईं उनमे पल्योपमके असख्यातवें भागका भाग देकर जो एक भाग लब्ध आवे उतनी कृष्टियाँ सूक्ष्मसाम्परायके प्रथम समयमे उदीर्ण होती है।

(४) तथा अन्तिम कृष्टिकरणके अन्तिम समयमे जो कृष्टियाँ की गईं उनमे पल्योपमके असख्यातवे भागका भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आवे तत्प्रमाण जघन्य कृष्टिसे लेकर अधस्तन असख्यातवे भागप्रमाण कृष्टियोको छोडकर शेष सभी कृष्टियाँ सूक्ष्मसाम्परायके प्रथम समयमे उदीर्ण होती है। इससे सिद्ध हुआ कि सूक्ष्मसाम्पराय सयत जीव अपने प्रथम समयमे सभी कृष्टियोके असख्यात बहुभागप्रमाण कृष्टियोका वेदन करता है। इतनी विशेषता है कि कृष्टि-करणके प्रथम समयमे जो कृष्टियाँ की जाती हैं उनमेसे नही वेदे जानेवाले उपरिम असख्यातवे भागके भीतरकी कृष्टियाँ अपकर्षण द्वारा अनन्तगुणी हीन होकर मध्यम कृष्टिरूपसे वेदी जाती है। तथा कृष्टिकरणके अन्तिम समयमे रची गई कृष्टियोमेसे जघन्य कृष्टिसे लेकर नही वेदे जाने-वाले अधस्तन असख्यातवें भागके भीतरकी कृष्टियाँ अनन्तगुणी हीन होकर मध्यम कृष्टिरूपसे वेदी जाती हैं।

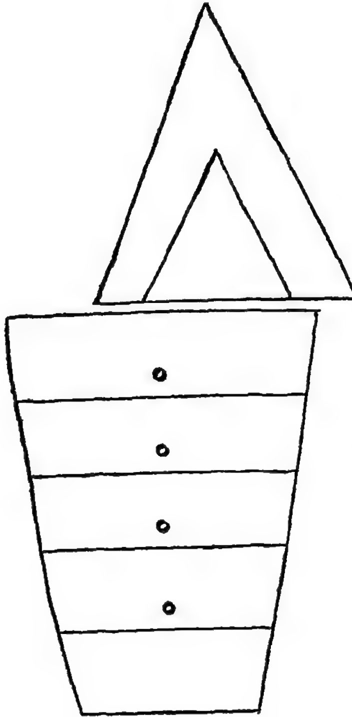
(५) सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानके दूसरे समयमे जो कृष्टियाँ प्रथम समयमे उदीर्ण हुई उनके सबसे उपरिम भागमे स्थित कृष्टिसे लेकर नीचे असख्यातवें भागको छोडकर अधस्तन बहुभाग प्रमाण कृष्टियोका वेदन करता है। तथा नीचे प्रथम समयमे अनुदीर्ण हुई कृष्टियोके अपूर्व असख्यातवें भागप्रमाण कृष्टियोका वेदन करता है। प्रथम समयमे जितनी कृष्टियोका वेदन होता है उनसे दूसरे समयमे वेदी जानेवाली कृष्टियाँ असख्यातवें भागप्रमाण हीन हैं। इसी प्रकार तीसरे समयसे लेकर सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समय तक जानना चाहिये। हिन्दी टीकामे इसी तथ्यको अक सदृष्टिद्वारा स्पष्ट किया ही है।

अथ सूक्ष्मसापरायस्य द्वितीयादिसमयेषु उदयानुदयकृष्टिविभागप्रदर्शनार्थमाह—

विदियादिसु समयेसु हि छडदि पल्लाअसखभाग तु ।
आफुंददि हु अपुव्वा हेट्ठा तु असखभाग तु[1] ॥२९८॥

द्वितीयादिषु समयेषु हि त्यजति पल्यासंख्यभाग तु ।
आस्पृशति हि अपूर्वा अधस्तनास्तु असंख्यभाग तु ॥२९८॥

स० टी०—सूक्ष्मसापरायस्य द्वितीयसमये प्रथमसमयोदयकृष्टीनामग्र-



। अनुदय ४ २ कृष्टि ख प ५ a	। १ ० उदय ४ प कृष्टि ख प a a
। अनुदय ४ ३ कृष्टि ख प ५ a	। १ ० उदय ४ प कृष्टि ख प a a

कृष्टेरारभ्य प्रथमसमयोपरितनानुदयकृष्टिपल्यासख्यातैकभागमात्री कृष्टी । ४ ३ / ख प ५ प / a a मुञ्चति, तावत्य कृष्टयो नोदयमागच्छन्तीत्यर्थ । प्रतिसमयमुदयकृष्टीनामनन्तगुणहीनशक्तिकत्वान्यथानुपपत्ते । पुन प्रतिसमयाधस्त-

---

१ विदियसमए उदिण्णाण किट्टीणमग्गग्गादो असखेज्जदिभाग मुचदि, हेट्ठदो अपुव्वमसखेज्जदि-पडिभागमाफुददि । एव जाव चरिमसमयसुहुमसापराइयो त्ति । वही पृ० ३२४ ।

।
नानुदयकृष्टिपल्यासख्यातैकभागमात्रापूर्वकृष्टी ४ २ आस्पृशति अवष्टभ्य गृह्णातीत्यर्थ, तावन्मात्र्य
ख प ५ प
३ ३

कृष्टय उदयमागच्छन्तीत्युक्त भवति। अत्र द्वितीयसमये उदयकृष्टय प्रथमसमयोदयकृष्टिभ्यो विशेषहीना

। ।
अवष्टभ्य गृहीता कृष्टीरेता —४ २ उक्तकृष्टिष्वेतासु ४ ३ विशोध्यावशिष्टेन प्रथमसमयानुदय-
ख प ५ प ख प ५ प
३ ३ ३ ३

।
कृष्टिपल्यासख्यातैकभागमात्रेण ४ १ विशेषेण हीना द्वितीयसमयोदयकृष्टय इत्यर्थ। एव तृतीयादि-
ख प ५ प
३ ३

समयेषु सूक्ष्मसापरायचरमसमयपर्यन्तेषु पूर्वपूर्वहानिविशेषपल्यासख्यातैकभागमात्रविशेषेण हीना कृष्टय प्रतिसमयमुदयमागच्छन्तीति ज्ञातव्यम् ॥२९८॥

द्वितीयादि समयोंमें कृष्टि सम्बन्धी निर्देश—

स० च०—सूक्ष्मसापरायका द्वितीय समयविषै जे प्रथम समयविषै उदयरूप कृष्टि है तिनकी अत कृष्टितैं लगाय कृष्टिनिकौं छोडे है। उदयकौ प्राप्त न करै है। तिनका प्रमाण प्रथम समयविषै हीन शक्तिरूप होने योग्य जे ऊपरिकी कृष्टि अनुदयरूप कही थी तिनके प्रमाणकौं पल्यका असख्यातका भाग दीएँ एक भागमात्र जानना। इतनी नवीन ऊपरिकी कृष्टि इहाँ उदय रूप न हो हैं। ए कृष्टि अनतगुणा घटता अनुभागरूप परिणमि अन्य नीचली कृष्टिरूप परिणमि उदय आवै हैं। और प्रकार समय समय उदय कृष्टिनिका अनन्तगुणी शक्तिनिका घटना न बनै है। बहुरि प्रथम समयविषै अनतगुणा शक्ति रूप परिणमने योग्य जे अधस्तन अनुदयरूप कृष्टि हैं तिनकौं पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग दीएँ तहाँ एक भाग प्रमाण नीचैंकी नवीन कृष्टि जे प्रथम समयविषै उदय न थी ते उदयरूप हो है। ऐसैं होतैं प्रथम समयविषै उदयरूप कृष्टिनिका प्रमाणतैं द्वितीय समयविषै उदयरूप कृष्टिनिका प्रमाण किछू विशेषकरि घटता जानना। इहाँ नवीन उदयरूप करी कृष्टिनिका प्रमाणकौं नवीन अनुदयरूप करी कृष्टिनिका प्रमाणविषै घटाएँ अवशेष प्रमाण प्रथम समयविषै अनुकृष्टिकौं पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीएँ एक भागमात्र हैं। सो इतना प्रथम समयकी उदय कृष्टिका प्रमाणतैं द्वितीय समयकी उदय कृष्टिका प्रमाण घटता जानना। इहाँ ऐसा अर्थ जानना—

इस सूक्ष्मसापरायका द्वितीय समयविषै जे प्रथम समयविषै अनुदयरूप कृष्टि कही थी तिनविषै अत कृष्टितैं लगाय इहाँ जेता प्रमाण कह्या तितनी कृष्टि उदयरूप न हो हैं। ते अनत गुणी घटती जे मध्यम कृष्टि तिनरूप परिणमि उदय हो हैं। बहुरि तिस प्रथम समयविषै जे नीचेकी अनुदय कृष्टि कही थी तिनविषैं अत कृष्टितैं लगाय इहाँ जेता प्रमाण कह्या तितनी कृष्टि उदय रूप हो हैं। अकसदृष्टिकरि जैसैं प्रथम समयविषै उदय कृष्टि आठसै थी तिनविषै प्रथम समयविषै

ऊपरिकी अनुदय कृष्टिका प्रमाण एकसौ बीस था ताकौ पाँचका भाग दीएँ चौईस पाय सा अवशेष रही कृष्टिकी अत कृष्टितैं लगाय इतनी कृष्टि तौ इहा नवीन उदयरूप न हो हैं। अर तिस प्रथम समयविषै नीचेकी असी कृष्टि उदय रूप न थी तिनकौ पाँचका भाग दीएँ सोलह पाए सो इतनी नीचेकी अनुदय कृष्टि की अत कृष्टितैं लगाय इहाँ उदय रूप भई ऐसैं चौईसमे सोलह घटाएँ आठ रहे सो इतनी कृष्टि प्रथम समयतैं दूसरा समयविषैं घाटि उदय हो है तातैं दूसरे समय सातसै बाणवैं कृष्टिका उदय जानना। ऐसैं ही यथार्थ कथन समझना। इहाँ बहुत अनुभाग युक्त जे ऊपरिकी कृष्टि तिनिका अभाव करनेतैं अर स्तोक अनुभाग युक्त जे नीचेकी कृष्टि तिनका सद्भाव करनेतैं प्रथम समयविषैं उदय आया अनुभागतैं द्वितीय समयविषैं उदय आया अनुभाग का घटना हो है ऐसा जानना। ऐसैं ही सूक्ष्म सापरायका तृतीय आदि अतसमय पर्यंत विशेष घटता क्रम लीएँ कृष्टिनिका उदय क्रमतैं जानना। विशेषका प्रमाण जेतो पूर्व समयविषै घटी थी ताकौ पल्यका असख्याततवाँ भागका भाग दीएँ एक भागमात्र जानना ॥२९८॥

अथ सूक्ष्मकृष्टिद्रव्योपशमनविधानप्ररूपणार्थमाह—

किट्टिं सुहुमादीदो चरिमो त्ति असखगुणिदसेढीए।
उवसमदि हु तच्चरिमे अवरट्ठिदिबधण छण्हं[1] ॥२९९॥

कृष्टिं सूक्ष्मादित चरम इति असंख्यगुणितश्रेण्या।
उपशमयति हि तच्चरमे अवरस्थितिबधन षण्णाम् ॥२९९॥

स० टी०—सूक्ष्मसापरायस्य प्रथमसमये सकलसूक्ष्मकृष्टिद्रव्यस्य पल्यासख्यातैकभागमात्र—

। । १०
म ∂ १२-∂ २ १ उपशमयति। द्वितीयसमये ततोऽसख्येयगुण द्रव्यमुपशमयति स ∂ १२ - ∂ २ १ ∂
७।८।ओ प प ७।८ ओ प प
∂ ∂ ∂ ∂

। १० १०
एव तृतीयादिममयेष्वमख्यातगुणितक्रमेणोपशमय्य चरमसमये चरमफालिद्रव्य स ∂ १२ ∂ २ १ प उप-
७।८।ओ प प ∂
∂ ∂

शमयति। य च ममयोनद्व्यावलिमात्रसज्वलनलोभनवकबधममयप्रबद्धास्ते च सूक्ष्मसापरायप्रथमसमयादारभ्य समय ममय प्रत्यसख्यातगुणितक्रमेणोपशाम्यते। सूक्ष्मसापरायचरमसमये षण्णामायुर्मोहवर्ज्यानां कर्मणा जघन्यस्थितिबधो भवति ॥२९९॥

कृष्टियोकी उपशमविधिका निर्देश—

स० च०—सूक्ष्मसापरायका प्रथम समयविषै समस्त सूक्ष्म कृष्टिनिका द्रव्यकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए एक भागमात्र जो द्रव्य ताकौं उपशमावै है। दूसरे समय तातैं

1 ताघे चेव सव्वासु किट्टीसु पदेसग्गमुवसामेदि गुणसेढीए। जे दोआवलियबधा दुसमयूणा ते वि उवसामेदि। जा उदयावलिया छुद्दिदा सा त्थिवुक्कमकमेण किट्टीसु विपच्चिहिदि। वही पृ० ३२३–३२४।

असंख्यातगुणा द्रव्यकौं उपशमावै है। ऐसैं तृतीयादि अंत पर्यंत समयनिविषै असंख्यातगुणा क्रम लीएँ द्रव्यकौं उपशमावै है। तहाँ अंत समयविषै एक घाटि सूक्ष्मसांपराय कालका समय प्रमाण मात्रवार असंख्यातका गुणकार कीएँ जो अंत फालिका द्रव्य भया ताकौं उपशमावै है। बहुरि समय घाटि दोय आवलीमात्र संज्वलन लोभके नवक समयप्रबद्ध न उपशमे थे तिनिका द्रव्यकौं सूक्ष्मसांपरायका प्रथम समयतैं लगाय समय समय प्रति असंख्यातगुणा क्रम लीएँ उपशमावै है। बहुरि सूक्ष्मसांपरायका अंत समयविषैं आयु मोह विना छह कर्मनिका जघन्य स्थितिबंध हो है ॥२९९॥

अथ तत्स्थितिबन्धविशेषनिर्णयार्थमाह—

अंतोमुहुत्तमेत्तं घादितियाणं जहण्णठिदिबंधो ।
णामदुग वेयणीये सोलस चउवीस य मुहुत्ता[1] ॥३००॥

अन्तर्मुहूर्तमात्रं घातित्रयाणां जघन्यस्थितिबंधः ।
नामद्विकवेदनीये षोडश चतुर्विंशश्च मुहूर्ताः ॥३००॥

स० टी०—सूक्ष्मसांपरायचरमसमये त्रयाणां घातिकर्मणां ज्ञानदर्शनावरणांतरायाणां जघन्यस्थितिबन्धोऽन्तर्मुहूर्तमात्रः, नामगोत्रयोः षोडशमुहूर्तप्रमितः, सातवेदनीयस्य चतुर्विंशतिमुहूर्तमात्रः स्थितिबन्धो भवति। ये पूर्वमुच्छिष्टावलिमात्रनिषेकाः बादरसंज्वलनलोभस्य स्पर्धकगतास्त्यक्तास्ते च पूर्वोक्तस्थितोक्तसंक्रमविधानेन कृष्टिरूपतया परिणम्योदयमागच्छन्ति ॥३००॥

सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयमें कर्मोंके स्थितिबन्धका निर्देश—

स० च०—तहाँ तीनि घातियानिका अंतर्मुहूर्त, नाम गोत्रका सोलह मुहूर्त, साता वेदनीयका चौबीस मुहूर्तमात्र जघन्य स्थितिबंध हो है। इहाँ उपशम श्रेणीकी अपेक्षा जघन्य स्थितिबंध कह्या है। बहुरि जे पूर्वै बादरलोभके उच्छिष्टावलीमात्र निषेक रहे थे ते पूर्वोक्त थिउक्क संक्रम विधान करि कृष्टिरूप परिणमि उदय आवै हैं ॥३००॥

अथ पूर्वोक्तार्थोपसंहारं गाथाद्वयेनाह—

पुरिसादीणुच्छिट्ठं समऊणावलिगदं तु पच्चिहिदि ।
सोदयपढमट्ठिदिणा कोहादीकिट्टियंताणं[2] ॥३०१॥

पुरुषादीनामुच्छिष्टं समयोनावलिगतं तु पक्ष्यति ।
स्वोदयप्रथमस्थितिना क्रोधादिकृष्टयंतानाम् ॥३०१॥

स० टी०—पुरुषवेदादीनां समयोनावलिमात्रनिषेकद्रव्यमुच्छिष्टावलिमत्र क्रोधादिसूक्ष्मकृष्टिपर्यन्तानां स्वोदयप्रथमस्थितिनिषेकैः सह तद्रूपेण परिणम्य पक्ष्यति—उदेष्यतीत्यर्थः ॥३०१॥

1. चरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स णाणावरण-दंसणावरण-अंतराइयाणमंतोमुहुत्तिओ ट्ठिदिबंधो। णामा-गोदाणं ट्ठिदिबंधो सोलस मुहुत्ता। वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो चउवीस मुहुत्ता। वही पृ० ३२५–३२६।
2. जा उदयावलिया छंडिदा सा त्थिवुक्कसंकमेण किट्टीसु विपच्चिहिदि। वही पृ० ३२४।

ऊपरिकी अनुदय कृष्टिका प्रमाण एकसौ बीस था ताकौ पाँचका भाग दीएँ चौईस पाय सा अवशेष रही कृष्टिकी अत कृष्टितै लगाय इतनी कृष्टि लौ इहा नवीन उदयरूप न हो हैं। अर तिस प्रथम समयविषै नीचेको असी कृष्टि उदय रूप न थी तिनकौ पाँचका भाग दीएँ सोलह पाए सो इतनी नीचेकी अनुदय कृष्टि की अत कृष्टितैं लगाय इहाँ उदय रूप भईं ऐसें चौईसमे सोलह घटाएँ आठ रहे सो इतनी कृष्टि प्रथम समयतै दूसरा समयविषै घाटि उदय हो हैं तातैं दूसरे समय सातसै बाणवै कृष्टिका उदय जानना। ऐसें ही यथार्थ कथन समझना। इहाँ बहुत अनुभाग युक्त जे ऊपरिकी कृष्टि तिनिका अभाव करनेतै अर स्तोक अनुभाग युक्त जे नीचेकी कृष्टि तिनका सद्भाव करनेतै प्रथम समयविषै उदय आया अनुभागतै द्वितीय समयविषै उदय आया अनुभाग का घटना हो है ऐसा जानना। ऐसें ही सूक्ष्म सापरायका तृतीय आदि अतसमय पर्यंत विशेष घटता क्रम लीएँ कृष्टिनिका उदय क्रमतै जानना। विशेषका प्रमाण जेतो पूर्व समयविषै घटी थी ताकौ पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग दीएँ एक भागमात्र जानना ॥२९८॥

अथ सूक्ष्मकृष्टिद्रव्योपशमनविधानप्ररूपणार्थमाह—

किट्टिं सुहुमादीदो चरिमो त्ति असखगुणिदसेढीए।
उवसमदि हु तच्चरिमे अवरट्ठिदिबधण छण्हं[1] ॥२९९॥

कृष्टि सूक्ष्मादित चरम इति असंख्यगुणितश्रेण्या।
उपशमयति हि तच्चरमे अवरस्थितिबधन षण्णाम् ॥२९९॥

स० टी०—सूक्ष्मसापरायस्य प्रथमसमये सकलसूक्ष्मकृष्टिद्रव्यस्य पल्यासख्यातैकभागमात्र—

। । १०
स a १२-a २ १ उपशमयति। द्वितीयसमये ततोऽसख्येयगुण द्रव्यमुपशमयति स a १२ - a २ १ a
७।८।ओ प प ७।८ ओ प प
a a a a

एव तृतीयादिसमयेष्वसख्यातगुणितक्रमेणोपशमय्य चरमसमये चरमफालिद्रव्य स a १२ a २ १ प उप-
७।८।ओ प प a
a a

शमयति। ये च समयोनद्व्यावलिमात्रसज्वलनलोभनवकबधसमयप्रबद्धास्ते च सूक्ष्मसापरायप्रथमसमयादारभ्य समय समय प्रत्यसख्यातगुणितक्रमेणोपशाम्यते। सूक्ष्मसापरायचरमसमये षण्णामायुर्मोहवर्ज्याना कर्मणा जघन्यस्थितिबधो भवति ॥२९९॥

कृष्टियोकी उपशमविधिका निर्देश—

स० च०—सूक्ष्मसापरायका प्रथम समयविषै समस्त सूक्ष्म कृष्टिनिका द्रव्यकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए एक भागमात्र जो द्रव्य ताकौ उपशमावै है। दूसरे समय तातै

१ ताधे चेव सव्वासु किट्टीसु पदेसग्गमुवसामेदि गुणसेढीए। जे दोआवलियबंधा दुसमयूणा ते वि उवसामेदि। जा उदयावलिया छिण्णा सा त्थिवुक्कसंकमेण किट्टीसु विपच्चिहिदि। वही पृ० ३२३-३२४।

असख्यातगुणा द्रव्यकौ उपशमावै है। ऐसै तृतीयादि अत पर्यंत समयनिविषै असख्यातगुणा क्रम लीएँ द्रव्यकौ उपशमावै है। तहाँ अत समयविषै एक घाटि सूक्ष्मसापराय कालका समय प्रमाण मात्रवार असख्यातका गुणकार कीएँ जो अत फालिका द्रव्य भया ताकौं उपशमावै है। बहुरि समय घाटि दोय आवलीमात्र सज्वलन लोभके नवक समयप्रबद्ध न उपशमे थे तिनिका द्रव्यकौं सूक्ष्मसापरायका प्रथम समयतै लगाय समय समय प्रति असख्यातगुणा क्रम लीएँ उपशमावै है। बहुरि सूक्ष्मसापरायका अत समयविषै आयु मोह विना छह कर्मनिका जघन्य स्थितिबध हो है ॥२९९॥

अथ तत्स्थितिबधविशेषनिर्णयार्थमाह—

अतोमुहुत्तमेत्त घादितियाण जहण्णठिदिबधो।
णामदुग वेयणीये सोलस चउवीस य मुहुत्ता[1] ॥३००॥

अन्तर्मुहूर्तमात्रं घातित्रयाणा जघन्यस्थितिबध।
नामद्विकवेदनीये षोडश चतुर्विशश्च मुहूर्ता ॥३००॥

स० टी०—सूक्ष्मसापरायचरमसमये त्रयाणा घातिकर्मणा ज्ञानदर्शनावरणातरायाणा जघन्यस्थितिबन्धोऽन्तर्मुहूर्तमात्र, नामगोत्रयो षोडशमुहूर्तप्रमित, सातवेदनीयस्य चतुर्विशतिमुहूर्तमात्र स्थितिबन्धो भवति। ये पूर्वमुच्छिष्टावलिमात्रनिषेका बादरसज्वलनलोभस्य स्पर्धकगतास्त्यक्तास्ते च पूर्वोक्तस्थितोक्तसक्रमविधानेन कृष्टिरूपतया परिणम्योदयमागच्छन्ति ॥३००॥

सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयमे कर्मोके स्थितिबन्धका निर्देश—

स० च०—तहा तीनि घातियानिका अतर्मुहूर्त, नाम गोत्रका सोलह मुहूर्त, साता वेदनीयका चौबीस मुहूर्तमात्र जघन्य स्थितिबध हो है। इहा उपशम श्रेणीकी अपेक्षा जघन्य स्थितिबध कह्या है। बहुरि जे पूर्वै बादरलोभके उच्छिष्टावलीमात्र निषेक रहे थे ते पूर्वोक्त थिउक्क सक्रम विधान करि कृष्टिरूप परिणमि उदय आवै हैं ॥३००॥

अथ पूर्वोक्तार्थोपसहार गाथाद्वयेनाह—

पुरिसादीणुच्छिट्ठ समऊणावलिगद तु पच्चिहिदि।
सोदयपढमट्ठिदिणा कोहादीकिट्टियताण[2] ॥३०१॥

पुरुषादीनामुच्छिष्ट समयोनावलिगत तु पक्ष्यति।
स्वोदयप्रथमस्थितिना क्रोधादिकृष्टयन्तानाम् ॥३०१॥

स० टी०—पुसवेदादीना समयोनावलिमात्रनिषेकद्रव्यमुच्छिष्टावलिसज्ञ क्रोधादिसूक्ष्मकृष्टिपर्यन्ताना स्वोदयप्रथमस्थितिनिषेकै सह तद्रूपेण परिणम्य पक्ष्यति—उदेष्यतीत्यर्थ ॥३०१॥

---

१ चरिमसमयसुहुमसापराइस्स णाणावरण-दसणावरण-अतराइयाणमतोमुहुत्तिओ ट्ठिदिबधो। णामा-गोदाण ट्ठिदिबधो सोलस मुहुत्ता। वेदणीयस्स ट्ठिदिबधो चउवीस मुहुत्ता। वही पृ० ३२५-३२६।

२ जा उदयावलिया छड्डिदा सा त्थिवक्कमकमेण किट्टीसु विपच्चिहिदि। वही पृ० ३२४।

आगे पूर्वोक्त अर्थका उपसंहार करें हैं—

स० च०—पुरुष वेदादिकनिका समय घाटि आवलीमात्र निषेकनिका द्रव्य उच्छिष्टावलीरूप है सो क्रोधादि सूक्ष्म कृष्टि पर्यंतनिके जे उदयरूप निषेकतै लगाय प्रथम स्थितिके निषेकनिकी साथि तद्रूप परिणमिकरि पक्ष्यति कहिए उदयरूप होसी। पुरुषवेदके उच्छिष्टमात्र निषेक रहे ते तौ सज्वलन क्रोधकी प्रथम स्थितिविषै तद्रूप परिणमि उदय हो हैं। तैसें ही सज्वलन क्रोधका सज्वलन मानविषै इत्यादि क्रमतै बादर लोभका उच्छिष्टावलीके निषेक सूक्ष्म कृष्टिविषै तद्रूप परिणमि उदय हो है। सो पूर्वें वर्णन कीया ही है ॥३०१॥

विशेष—पुरुषवेद, क्रोध, मान, माया और लोभ इनका जो उस-उस स्थानमे एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवकद्रव्य शेष रहता आया है सो वह क्रमसे क्रोध, मान, माया, लोभ और कृष्टिकी प्रथम स्थितिके कालमे समय-समय असख्यातगुणा-असख्यातगुणा उपशमित होता है। उदाहरणार्थ—पुरुषवेदका एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवक समयप्रबद्ध क्रोधकी प्रथम स्थितिके कालमे समय-समयमे उपशमको प्राप्त होता है। ऐसेही आगे भी जानना चाहिये।

पुरिसादो लोहगय णवक समऊण दोण्णि आवलिय।
उवसमदि हु कोहादीकिट्टीअतेसु ठाणेसु[1] ॥३०२॥

पुरुषात् लोभगतं नवक समयोने द्वे आवलिके।
उपशाम्यति हि क्रोधादिकृष्टच तेषु स्थानेषु ॥३०२॥

स० टी०—पुवेदादीना लोभपर्यन्ताना समयोनद्वयावलिमात्रनवकबन्धसमयप्रबद्धद्रव्य क्रोधादिकृष्टिपर्यन्तोपशमनकालेषु प्रतिसमयमसख्यातगुणितक्रमेणोपशमयति। सूक्ष्मकृष्टिप्रथमस्थितौ आवलिद्वये अवशिष्टे आगालप्रत्यागालव्युच्छेदो भवति। समयाधिकावलिमात्रेऽवशिष्टे पूर्ववज्जघन्योदीरणा भवति उच्छिष्टावलिमात्रनिषेकाश्च स्वस्थाने एव कर्मरूपतया परिणम्य गलन्ति ॥३०२॥

स० च०—पुरुषवेद आदि लोभ पर्यंतनिका समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्धनिका द्रव्य है सो क्रोधादिक कृष्टिपर्यंतके प्रथम स्थितिके कालनिविषै समय समय असख्यातगुणा क्रम लीएं उपशमैं है। सो भी पुरुषवेदका नवक समयप्रबद्ध सज्वलन क्रोधकी प्रथम स्थितिका कालविषै उपशमैं है इत्यादि पूर्वें वर्णन कीया ही है। बहुरि सूक्ष्म कृष्टिका प्रथम स्थिति विषै दोय आवली अवशेष रहैं ताकी आगाल प्रत्यागाल क्रियाका व्युच्छेद हो है। अर समय अधिक आवलीमात्र अवशेष रहैं पूर्वोक्तवत् जघन्य उदीरणा हो है। अर उच्छिष्टावलीमात्र निषेक अवशेष रहे ते अपने रूप ही विषै उदयरूप परिणमि निर्जरै है ऐसैं सूक्ष्मसाम्परायका अत समयविषैं सर्व कृष्टि द्रव्यको उपशमाय अनतर समयविषै उपशातकषाय हो है ॥३०२॥

एव सूक्ष्मसापरायचरमसमये सर्वकृष्टिद्रव्यमुपशमय्य तदनन्तरसमये उपशातकषायो भवतीत्याह—

उवसतपढमसमये उवसंत सयलमोहणीय तु।
मोहस्सुदयाभावा सव्वत्थ समाणपरिणामो[2] ॥३०३॥

---

१ जे दोआवलियबद्धा दुसमयूणा ते वि उवसामेदि। वही पृ० ३२४।

२ से काले सव्व मोहणीयमुवसत। तदो पाए अतोमुहुत्तमुवसतकसायवीदरागो। सव्विस्से उवसतद्धाए अवट्ठिदपरिणामो। वही पृ० ३२६–३२७।

उपशातप्रथमसमये उपशात सकलमोहनीय तु ।
मोहस्योदयाभावात् सर्वत्र समानपरिणामः ॥३०३॥

स० टी०—उपशान्तकषायस्य प्रथमसमये सकल चारित्रमोहनीय बन्धोदयमक्रमोदीरणोत्कर्षणापकर्षणादिमर्वेषा करणानामनुद्भूतिवशेन सर्वात्मनोपशमित, उदयादिषु निक्षेप्तुमशक्यमित्यर्थ । तस्योपशान्तकषायस्य प्रथमसमयादारभ्य स्वचरमसमयपर्यन्ते अन्तर्मुहूर्तमात्रे गुणस्थानकाले समान एव प्रतिसमयमवस्थित विशुद्धिपरिणामो भवति । विशुद्धिविकल्पकरणस्य कषायोदयस्य तस्मिन्नत्यन्ताभावात् तत एव प्रतिसमयमेकादृशविशुद्धिरूप यथाख्यातचारित्रमुपशान्तकषाये भवतीति प्रवचने प्रतिपादितम् ॥३०३॥

स०चं०—उपशातकषायका प्रथम समयविषै सकल चारित्र मोहनीय कर्म है सो बध उदय सक्रम उदीरणा उत्कर्षण अपकर्षण आदि सर्व करणनिका न उपजनेतैं सर्वप्रकार उपशम्या। उदयादिविषै निक्षेपण करनेकौं समर्थरूप न रह्या, तिस उपशात कषायका प्रथम समयतैं अत समय पर्यंत अतर्मुहूर्तमात्र अपने गुणस्थानका कालविषै समानरूप विशुद्धि परिणाम है जातैं इहाँ हीनाधिक विशुद्धताकौ कारण कषायनिके उदयका अभाव है । ऐसा यथाख्यात चारित्र है ॥३०३॥

अथोपशान्तकषायकालप्रमाणप्रदर्शनार्थमाह—

अतोमुहुत्तमेत्त उवसतकसायवीयरायद्धा ।
गुणसेढीदीहत्त तस्सद्धा संखभागो दु ॥३०४॥

अन्तर्मुहूर्तमात्रं उपशातकषायवीतरागाद्धा ।
गुणश्रेणीदीर्घत्व तस्याद्धा संख्यभागस्तु ॥३०४॥

स० टी०- उपशान्ता अनुद्भूता कषाया यस्यासौ उपशान्तकषाय । वीतोऽपगतो राग सक्लेशपरिणामो यस्मादसौ वीतराग , उपशान्तकषायश्चासौ वीतरागश्च उपशान्तकषायवीतरागस्तस्याद्धा गुणस्थानकालोऽन्तर्मुहूर्तमात्र एव तत पर कषायाणा नियमेनोदयासम्भवात् । द्रव्यकर्मोदये सति सक्लेशपरिणामलक्षणभावकर्मण सम्भवेन तयो कार्यकारणभावप्रसिद्धे सोऽयमुपशान्तकषाय प्रथमसमये आयुर्मोहनीयवर्जिताना ज्ञानावरणादिकर्मणा द्रव्य सूक्ष्मसापरायचरमसमयापकृष्टगुणश्रेणिद्रव्यादसख्यातगुणितमपकृष्य स्वगुणस्थानकालस्य सख्यातैकभागमात्रे आयामे उदयावलिप्रथमसमयादारभ्य प्रक्षेपयोगेत्यादिगुणश्रेणिविधानेन निक्षिपति ॥३०४॥

उपशान्तकषाय गुणस्थानका काल—

स० च०—उपशात कषाय वीतराग ग्यारहवा गुणस्थानका काल अतर्मुहूर्तमात्र है तातैं परैं नियमकरि द्रव्यकर्मके उदयके निमित्ततैं सक्लेशरूप भावकर्म प्रकट हो है । बहुरि इस कालके सख्यातवें भागमात्र इहाँ उदयादि अवस्थिति गुणश्रेणि आयाम है । इसविषै सूक्ष्मसाम्परायका अत समयविषै जेता द्रव्य अपकर्षण कीया तातैं असख्यातगुणा आयु मोह विना अन्य कर्मनिका द्रव्यकौ अपकर्षण करि 'प्रक्षेपयोगोद्धृतमिश्रपिंड" इत्यादि विधानतैं असख्यातगुणा क्रम लीएँ निक्षेपण करे है ॥३०४॥

विशेष—ग्यारहवें गुणस्थानका नाम उपशान्तकषाय वीतराग है । जिसकी कषाय उपशान्त

---

१ गुणसेढिणिक्खेवो उवसतद्धाए सखेज्जदिभागो । वही पृ० ३२७ ।

आगे पूर्वोक्त अर्थका उपसंहार करैं हैं—

स० च०—पुरुष वेदादिकनिका समय घाटि आवलीमात्र निषेकनिका द्रव्य उच्छिष्टावलीरूप है सो क्रोधादि सूक्ष्म कृष्टि पर्यंतनिके जे उदयरूप निषेकतैं लगाय प्रथम स्थितिके निषेकनिकी साथि तद्रूप परिणमिकरि पक्ष्यति कहिए उदयरूप होसी। पुरुषवेदके उच्छिष्टमात्र निषेक रहे ते तौ सज्वलन क्रोधकी प्रथम स्थितिविषै तद्रूप परिणमि उदय हो है। तैसें ही सज्वलन क्रोधका सज्वलन मानविषै इत्यादि क्रमतैं बादर लोभका उच्छिष्टावलीके निषेक सूक्ष्म कृष्टिविषै तद्रूप परिणमि उदय हो हैं। सो पूर्वैं वर्णन कीया ही है ॥३०१॥

विशेष—पुरुषवेद, क्रोध, मान, माया और लोभ इनका जो उस-उस स्थानमे एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवकद्रव्य शेष रहता आया है सो वह क्रमसे क्रोध, मान, माया, लोभ और कृष्टिकी प्रथम स्थितिके कालमें समय-समय असख्यातगुणा-असख्यातगुणा उपशमित होता है। उदाहरणार्थ—पुरुषवेदका एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवक समयप्रबद्ध क्रोधकी प्रथम स्थितिके कालमे समय-समयमे उपशमको प्राप्त होता है। ऐसेही आगे भी जानना चाहिये।

पुरिसादो लोहगय णवक समऊण दोण्णि आवलिय ।
उवसमदि हू कोहादीकिट्टीअतेसु ठाणेसु[1] ॥३०२॥

पुरुषात् लोभगत नवक समयोने द्वे आवलिके ।
उपशाम्यति हि क्रोधादिकृष्टच तेषु स्थानेषु ॥३०२॥

स० टी०—पुवेदादीना लोभपर्यन्ताना समयोनद्वयावलिमात्रनवकबन्धसमयप्रबद्धद्रव्य क्रोधादिकृष्टिपर्यन्तोपशमनकालेषु प्रतिसमयमसख्यातगुणितक्रमेणोपशमयति। सूक्ष्मकृष्टिप्रथमस्थितौ आवलिद्वये अवशिष्टे आगालप्रत्यागालव्युच्छेदो भवति। समयाधिकावलिमात्रेऽवशिष्टे पूर्ववज्जघन्योदीरणा भवति उच्छिष्टावलिमात्रनिषेकाश्च स्वस्थाने एव कर्मरूपतया परिणम्य गलन्ति ॥३०२॥

स० च०—पुरुषवेद आदि लोभ पर्यंतनिका समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्धनिका द्रव्य है सो क्रोधादिक कृष्टिपर्यंतके प्रथम स्थितिके कालनिविषै समय समय असख्यातगुणा क्रम लीएँ उपशमै है। सो भी पुरुषवेदका नवक समयप्रबद्ध सज्वलन क्रोधकी प्रथम स्थितिका कालविषैं उपशमै है इत्यादि पूर्वैं वर्णन कीया ही है। बहुरि सूक्ष्म कृष्टिका प्रथम स्थिति विषै दोय आवली अवशेष रहै ताकी आगाल प्रत्यागाल क्रियाका व्युच्छेद हो है। अर समय अधिक आवलीमात्र अवशेष रहैं पूर्वोक्तवत् जघन्य उदीरणा हो है। अर उच्छिष्टावलीमात्र निषेक अवशेष रहे ते अपने रूप ही विषै उदयरूप परिणमि निर्जरै हैं ऐसैं सूक्ष्मसाम्परायका अत समयविषैं सर्व कृष्टि द्रव्यकौं उपशमाय अनतर समयविषै उपशातकषाय हो है ॥३०२॥

एव सूक्ष्मसापरायचरमसमये सर्वकृष्टिद्रव्यमुपशमय्य तदनन्तरसमये उपशातकषायो भवतीत्याह—

उवसतपढमसमये उवसंतं सयलमोहणीय तु ।
मोहस्सुदयाभावा सव्वत्थ समाणपरिणामो[2] ॥३०३॥

---

१ जे दोआवलियबधा दुसमयूणा ते वि उवसामेदि। वही पृ० ३२४।

२ से काले सव्व मोहणीयमुवसत। तदो पाए अतोमुहुत्तमुवसतकसायवीदरागो। सव्विस्से उवसतद्धाए अवट्ठिदपरिणामो। वही पृ० ३२६–३२७।

उपशातप्रथमसमये उपशातं सकलमोहनीय तु।
मोहस्योदयाभावात् सर्वत्र समानपरिणाम॰ ॥३०३॥

स० टी०—उपशान्तकषायस्य प्रथमसमये सकल चारित्रमोहनीय बन्धोदयसक्रमोदीरणोत्कर्षणापकर्षणादिभिर्वेषा करणानामनुद्भूतिवशेन सर्वात्मनोपशमित, उदयादिषु निक्षेप्तुमशक्यमित्यर्थ । तस्योपशान्तकषायस्य प्रथमसमयादारभ्य स्वचरमसमयपर्यन्ते अन्तर्मुहूर्तमात्रे गुणस्थानकाले समान एव प्रतिसमयमवस्थित विशुद्धिपरिणामो भवति । विशुद्धिविकल्पकारणस्य कषायोदयस्य तस्मिन्नत्यन्ताभावात् तत एव प्रतिसमयमेकादृशविशुद्धिरूप यथाख्यातचारित्रमुपशान्तकषाये भवतीति प्रवचने प्रतिपादितम् ॥३०३॥

स०चं०—उपशातकषायका प्रथम समयविषैं सकल चारित्र मोहनीय कर्म है सो बध उदय सक्रम उदीरणा उत्कर्षण अपकर्षण आदि सर्व करणनिका न उपजनेतैं सर्वप्रकार उपशम्या। उदयादिविषै निक्षेपण करनेकौ समर्थरूप न रह्या, तिस उपशात कषायका प्रथम समयतैं अत समय पर्यंत अतर्मुहूर्तमात्र अपने गुणस्थानका कालविषै समानरूप विशुद्धि परिणाम है जातैं इहाँ हीनाधिक विशुद्धताकौ कारण कषायनिके उदयका अभाव है। ऐसा यथाख्यात चारित्र है ॥३०३॥

अथोपशान्तकषायकालप्रमाणप्रदर्शनार्थमाह—

अतोमुहुत्तमेत्तं उवसतकसायवीयरायद्धा।
गुणसेढीदीहत्त तस्सद्धा संखभागो दु ॥३०४॥

अन्तर्मुहूर्तमात्र उपशांतकषायवीतरागाद्धा।
गुणश्रेणीदीर्घत्व तस्याद्धा संख्यभागस्तु ॥३०४॥

स० टी०--उपशान्ता अनुद्भूता कषाया यस्यासौ उपशान्तकषाय । वीतोऽपगतो राग सक्लेशपरिणामो यस्मादसौ वीतराग, उपशान्तकषायश्चासौ वीतरागश्च उपशान्तकषायवीतरागस्तस्याद्धा गुणस्थानकालोऽन्तर्मुहूर्तमात्र एव तत पर कषायाणा नियमेनोदयासम्भवात्। द्रव्यकर्मोदये सति सक्लेशपरिणामलक्षणभावकर्मण सम्भवेन तयो कार्यकारणभावप्रसिद्धे सोऽयमुपशान्तकषाय प्रथमसमये आयुर्मोहनीयवर्जिताना ज्ञानावरणादिकर्मणा द्रव्य सूक्ष्मसापरायचरमसमयापकृष्टगुणश्रेणिद्रव्यादसख्यातगुणितमपकृष्य स्वगुणस्थानकालस्य सख्यातैकभागमात्रे आयामे उदयावलिप्रथमसमयादारम्य प्रक्षेपयोगेत्यादिगुणश्रेणिविधानेन निक्षिपति ॥३०४॥

उपशान्तकषाय गुणस्थानका काल—

स० च०—उपशात कषाय वीतराग ग्यारहवा गुणस्थानका काल अतर्मुहूर्तमात्र है तातैं परैं नियमकरि द्रव्यकर्मके उदयके निमित्ततैं सक्लेशरूप भावकर्म प्रकट हो है। बहुरि इस कालके सख्यातवे भागमात्र इहाँ उदयादि अवस्थिति गुणश्रेणि आयाम है। इसविषै सूक्ष्मसाम्परायका अत समयविषै जेता द्रव्य अपकर्षण कीया तातै असख्यातगुणा आयु मोह विना अन्य कर्मनिका द्रव्यकौ अपकर्षण करि 'प्रक्षेपयोगोद्धृतमिश्रपिंड" इत्यादि विधानतैं असख्यातगुणा क्रम लीएँ निक्षेपण करै है ॥३०४॥

विशेष—ग्यारहवें गुणस्थानका नाम उपशान्तकषाय वीतराग है। जिसकी कषाय उपशान्त

---

१ गुणसेढिणिक्खेवो उवसतद्धाए सखेज्जदिभागो। वही पृ० ३२७।

आगे पूर्वोक्त अर्थका उपसहार करैं हैं—

स० च०—पुरुष वेदादिकनिका समय घाटि आवलीमात्र निषेकनिका द्रव्य उच्छिष्टावलीरूप है सो क्रोधादि सूक्ष्म कृष्टि पर्यंतनिके जे उदयरूप निषेकतैं लगाय प्रथम स्थितिके निषेकनिको साथि तद्रूप परिणमिकरि पक्ष्यति कहिए उदयरूप होसी। पुरुषवेदके उच्छिष्टमात्र निषेक रहे ते तौ सज्वलन क्रोधकी प्रथम स्थितिविषै तद्रूप परिणमि उदय हो है। तैसै ही सज्वलन क्रोधका सज्वलन मानविषै इत्यादि क्रमतै बादर लोभका उच्छिष्टावलीके निषेक सूक्ष्म कृष्टिविषै तद्रूप परिणमि उदय हो है। सो पूर्वै वर्णन कीया ही है ॥३०१॥

विशेष—पुरुषवेद, क्रोध, मान, माया और लोभ इनका जो उस-उस स्थानमे एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवकद्रव्य शेष रहता आया है सो वह क्रमसे क्रोध, मान, माया, लोभ और कृष्टिकी प्रथम स्थितिके कालमे समय-समय असख्यातगुणा-असख्यातगुणा उपशमित होता है। उदाहरणार्थ—पुरुषवेदका एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवक समयप्रबद्ध क्रोधकी प्रथम स्थितिके कालमे समय-समयमे उपशमको प्राप्त होता है। ऐसेही आगे भी जानना चाहिये।

पुरिसादो लोहगयं णवक समऊण दोण्णि आवलिय।
उवसमदि हु कोहादीकिट्टीअतेसु ठाणेसु[1] ॥३०२॥

पुरुषात् लोभगतं नवक समयोने द्वे आवलिके।
उपशाम्यति हि क्रोधादिकृष्टच तेषु स्थानेषु ॥३०२॥

स० टी०—पुवेदादोना लोभपर्यन्ताना समयोनद्वयावलिमात्रनवकबन्धसमयप्रवद्धद्रव्य क्रोधादिकृष्टिपर्यन्तोपशमनकालेषु प्रतिसमयमसख्यातगुणितक्रमेणोपशमयति। सूक्ष्मकृष्टिप्रथमस्थितौ आवलिद्वये अवशिष्टे आगालप्रत्यागालव्युच्छेदो भवति। समयाधिकावलिमात्रेऽवशिष्टे पूर्ववज्जघन्योदीरणा भवति उच्छिष्टावलिमात्रनिषेकाश्च स्वस्थाने एव कर्मरूपतया परिणम्य गलन्ति ॥३०२॥

स० च०—पुरुषवेद आदि लोभ पर्यंतनिका समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्धनिका द्रव्य है सो क्रोधादिक कृष्टिपर्यंतके प्रथम स्थितिके कालनिविषै समय समय असख्यातगुणा क्रम लीएँ उपशमै है। सो भी पुरुषवेदका नवक समयप्रबद्ध सज्वलन क्रोधकी प्रथम स्थितिका कालविषैं उपशमै है इत्यादि पूर्वे वर्णन कीया ही है। बहुरि सूक्ष्म कृष्टिका प्रथम स्थिति विषै दोय आवली अवशेष रहै ताकी आगाल प्रत्यागाल क्रियाका व्युच्छेद हो है। अर समय अधिक आवलीमात्र अवशेष रहैं पूर्वोक्तवत् जघन्य उदीरणा हो है। अर उच्छिष्टावलीमात्र निषेक अवशेष रहे ते अपने रूप ही विषै उदयरूप परिणमि निर्जरै हैं ऐसै सूक्ष्मसाम्परायका अत समयविषैं सर्व कृष्टि द्रव्यकौ उपशमाय अनतर समयविषै उपशातकषाय हो है ॥३०२॥

एव सूक्ष्मसापरायचरमसमये सर्वकृष्टिद्रव्यमुपशमय्य तदनन्तरसमये उपशातकषायो भवतीत्याह—

उवसतपढमसमये उवसंतं सयलमोहणीय तु।
मोहस्सुदयाभावा सव्वत्थ समाणपरिणामो[2] ॥३०३॥

---

१ जे दोआवलियवधा दुसमयूणा ते वि उवसामेदि। वही पृ० ३२४।

२ से काले सव्व मोहणीयमुवसत। तदो पाए अतोमुहुत्तमुवसतकसायवीदरागो। सव्विस्से उवसतद्धाए अवट्ठिदपरिणामो। वही पृ० ३२६–३२७।

उपशातप्रथमसमये उपशातं सकलमोहनीय तु ।
मोहस्योदयाभावात् सर्वत्र समानपरिणामः ॥३०३॥

स० टी०—उपशान्तकषायस्य प्रथमसमये सकल चारित्रमोहनीय वन्धोदयसक्रमोदीरणोत्कर्षणापकर्षणादिमर्वेषा करणानामनुद्भूतिवशेन सर्वात्मनोपशमित, उदयादिषु निक्षेप्तुमशक्यमित्यर्थ । तस्योपशान्तकषायस्य प्रथमसमयादारभ्य स्वचरमसमयपर्यन्ते अन्तर्मुहूर्तमात्रे गुणस्थानकाले समान एव प्रतिसमयमवस्थित विशुद्धिपरिणामो भवति । विशुद्धिविकल्पकरणस्य कपायोदयस्य तस्मिन्नत्यन्ताभावात् तत एव प्रतिसमयमेकादृशविशुद्धिरूप यथाख्यातचारित्रमुपशान्तकपाये भवतीति प्रवचने प्रतिपादितम् ॥३०३॥

स०चं०—उपशातकषायका प्रथम समयविषै सकल चारित्र मोहनीय कर्म है सो वध उदय सक्रम उदीरणा उत्कर्षण अपकर्षण आदि सर्व करणनिका न उपजनेतै सर्वप्रकार उपशम्या। उदयादिविषै निक्षेपण करनेकौ समर्थरूप न रह्या, तिस उपशात कपायका प्रथम समयतै अत समय पर्यंत अतर्मुहूर्तमात्र अपने गुणस्थानका कालविषै समानरूप विशुद्धि परिणाम है जातै इहाँ हीनाधिक विशुद्धताकौ कारण कषायनिके उदयका अभाव है। ऐसा यथाख्यात चारित्र है ॥३०३॥

अथोपशान्तकषायकालप्रमाणप्रदर्शनार्थमाह—

अतोमुहुत्तमेत्त उवसतकसायवीयरायद्धा ।
गुणसेढीदीहत्तं तस्सद्धा संखभागो दु ॥३०४॥

अन्तर्मुहूर्तमात्र उपशांतकषायवीतरागाद्धा ।
गुणश्रेणीदीर्घत्व तस्याद्धा सख्यभागस्तु ॥३०४॥

स० टी०--उपशान्ता अनुद्भूता कषाया यस्यासौ उपशान्तकषाय॰। वीतोऽपगतो राग सक्लेशपरिणामो यस्मादसौ वीतराग, उपशान्तकषायश्चासौ वीतरागश्च उपशान्तकपायवीतरागस्तस्याद्धा गुणस्थानकालोऽन्तर्मुहूर्तमात्र एव तत पर कषायाणा नियमेनोदयासम्भवात् । द्रव्यकर्मोदये सति सक्लेशपरिणामलक्षणभावकर्मण सम्भवेन तयो कार्यकारणभावप्रसिद्धे सोऽयमुपशान्तकषाय प्रथमसमये आयुर्मोहनीयवर्जिताना ज्ञानावरणादिकर्मणा द्रव्य सूक्ष्मसापरायचरमसमयापकृष्टगुणश्रेणिद्रव्यादसख्यातगुणितमपकृष्य स्वगुणस्थानकालस्य सख्यातैकभागमात्रे आयामे उदयावलिप्रथमसमयादारभ्य प्रक्षेपयोगेत्यादिगुणश्रेणिविधानेन निक्षिपति ॥३०४॥

उपशान्तकषाय गुणस्थानका काल—

स० च०—उपशात कषाय वीतराग ग्यारहवा गुणस्थानका काल अतर्मुहूर्तमात्र है तातै परै नियमकरि द्रव्यकर्मके उदयके निमित्ततै सक्लेशरूप भावकर्म प्रकट हो है। बहुरि इस कालके सख्यातवे भागमात्र इहाँ उदयादि अवस्थिति गुणश्रेणि आयाम है। इसविषै सूक्ष्मसाम्परायका अत समयविषै जेता द्रव्य अपकर्षण कीया तातै असख्यातगुणा आयु मोह विना अन्य कर्मनिका द्रव्यकौ अपकर्षण करि 'प्रक्षेपयोगोद्धृतमिश्रपिंड" इत्यादि विधानतै असख्यातगुणा क्रम लीएँ निक्षेपण करै है ॥३०४॥

विशेष—ग्यारहवे गुणस्थानका नाम उपशान्तकषाय वीतराग है। जिसकी कषाय उपशान्त

---

१ गुणसेढिणिक्खेवो उवसतद्धाए सखेज्जदिभागो। वही पृ० ३२७।

हो गई है अर्थात् उद्रेकको नही प्राप्त होती है उसे उपशान्तकषाय कहते है तथा जिसके कषायके निमित्तसे शुभाशुभ परिणामका अभाव हो गया है उसे वीतराग कहते हैं। इस प्रकार जो उपशान्तकषाय पूर्वक वीतराग अवस्थाको प्राप्त हुआ है, उसे उपशान्तकषाय वीतराग गुणस्थान-वाला कहते है। यहाँ ज्ञानावरणादि तीन घाति कर्मो का उदय रहने पर भी कषायके निमित्त से होनेवाले परिणामका सर्वथा अभाव है यह इसका तात्पर्य है। जिस जलमे कतकफल डालने-पर जल बिलकुल निर्मल हो जाता है उसमे कर्दम सर्वथा उपशान्त रहता है ऐसा यह वीतराग परिणाम है, क्योकि कर्मबन्धका हेतुभूत शुभाशुभ परिणामका यहाँ अभाव ही रहता है। ऐसा यह उपशान्तकषाय वीतराग गुणस्थान है। इसका काल अन्तर्मुहूर्त है। इसमे जो गुणश्रेणि रचना होती है वह उपशान्तकषाय गुणस्थानके कालके सख्यातवें भागप्रमाण कालवाली होती है। उससे अपूर्वकरणमे की गई गुणश्रेणिका शीर्ष सख्यातगुणा होता है। सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयमे गुणश्रेणिको जितना द्रव्य प्राप्त होता है उससे इसके प्रथम समयमे असख्यातगुणा द्रव्य प्राप्त होता है। आयुकर्ममे तो गुणश्रेणि रचना होती ही नही। मोहनीय कर्मका उपशम हो जानेसे यहाँ मोहनीय कर्मकी गुणश्रेणि रचनाका भी सर्वथा अभाव है। मात्र ज्ञानावरणादि कर्मो की ही गुणश्रेणि रचना होती रहती है। प्रकृतमे उक्त गाथाका यह आशय है।

अमुमेवार्थमभिव्यक्तुमाह—

उदयादिअवट्ठिदगा गुणसेढी दव्वमवि अवट्ठिदग।
पढमगुणसेढिसीसे उदये जेट्ठ पदेसुदय ॥३०५॥

उदयाद्यवस्थितका गुणश्रेणी द्रव्यमपि अवस्थितकं।
प्रथमगुणश्रेणिशीर्षे उदये ज्येष्ठ प्रदेशोदयम् ॥३०५॥

स० टी०—उपशान्तकषायेण प्रथमसमये उदयावलिप्रथमसमयादारभ्य यावन्मात्रायामा गुणश्रेणी विहिता द्वितीयादिसमयेष्वपि तावन्मात्रायामा एव गुणश्रेणिर्विधीयते। उदयावल्यामेकस्मिन् समये गलिते उपरितनस्थितावेकस्मिन् समये गुणश्रेणिद्रव्यनिक्षेपप्रतिज्ञानात्। अत एवोदयाद्यवस्थितगुणश्रेणि प्रतिसमय प्रवर्तत इत्युक्तम्। उपशान्तकषायेण प्रथमसमये ज्ञानावरणादिकर्मद्रव्य यावन्मात्रमपकृष्य गुणश्रेण्यायामे निक्षि त तावन्मात्रमेव प्रतिसमय द्रव्यमपकृष्य निक्षिपति नोनाधिक प्रतिसमयमवस्थितविशुद्धिपरिणामनिबन्धनस्य द्रव्यापकर्षणस्य प्रतिसमय हानिवृद्ध्यभावात्। अत एव द्रव्यमप्यवस्थितमित्युक्तम्। यदा उपशान्तकषायेण प्रथमसमयकृतगुणश्रेणिशीर्षसमय उदयमागच्छति तदा तस्मिन् समये उत्कृष्टप्रदेशोदयो भवति। तद्यथा—

प्रथमसमयापकृष्टगुणश्रेणिद्रव्यस्य चरमनिषेक स ∂ १२ – ६४ / ७। ओ प ८५ ∂ द्वितीयसमयाकृष्टद्रव्यस्य द्विचरम-निषेक—स ∂ १२ – १६ / ७ ओ प ८५ ∂ एव तृतीयसमयादिसाम्प्रतिकगुणश्रेण्यायामचरमसमयपर्यन्तापकृष्टगुणश्रेणिद्रव्याणा

१ सव्विमे उवसतद्धाए गुणसेढिणिक्खेवेण पदेसग्गेण वि अवट्ठिदा। पढमे गुणसेढिसीमये उदिण्ण उक्कस्सओ पदेसुदओ। वही पृ० ३२८।

त्रिचरमादिप्रथमनिपेकपर्यन्ताश्च सर्वे निपेका साम्प्रतिकगुणश्रेण्यायामसमयप्रतिमिता पुञ्जीकृता एकसमयाप-

१८

कृष्टगुणश्रेणिद्रव्यमात्र द्रव्य स ∂ १२ - एतच्च तत्कालावस्थितिसत्त्वगोपुच्छद्रव्येण स ∂ १२ - ९ १६-२८

७ ओ प ७ ९। ओ १२। १६। ४

∂

अनेन साधिकमुदेतीति ।

ननु प्रथमसमयकृतगुणश्रेणिशीर्पस्य उपरितनसमयेष्वपि तत्र तत्रोदयमान द्रव्य एकसमयापकृष्टद्रव्य-मात्रमेव सम्भवति, तत कारणात्कथ प्रथमसमयकृतगुणश्रेणिशीर्पसमये एवोत्कृष्टप्रदेशोदय सम्भवतीति नाशङ्कितव्य, उपरितनसमयेपूदयमागतेष्वेकसमयापकृष्टद्रव्यमात्रस्य समानत्वेऽपि प्रथमसमयकृष्टिद्रव्यमात्रस्य समानत्वेऽपि प्रथमसमयकृतगुणश्रेणीशीर्पसमयसत्त्वगोपुच्छद्रव्यात् उत्तरोत्तरसमयसत्त्वगोपुच्छद्रव्याणा-मेकैकचयहीनत्वेन तत्र तत्रोदयद्रव्यस्य किञ्चिन्न्यूनत्वा ० ० ० दथापूर्वकरणप्रथमादिसमयकृतगलितावशेष-गुणश्रेणीशीर्पसमये साम्प्रतिकगुणश्रेण्यायामाभ्यन्तरवर्तिन्युदयागते तदा बहुभि प्राक्तनगुणश्रेणीनिपेकै तात्कालिकसत्त्वगोपुच्छद्रव्येण चाभ्यधिक बहुतरद्रव्यमुदयमागमिष्यतीत्यपि न मन्तव्य सूक्ष्मसाम्परायचरम-समयपर्यन्तनिक्षिप्तप्राक्तनगुणश्रेणिद्रव्यात्सर्वस्मादपि उपशान्तकपायविशुद्धिमाहात्म्येन साम्प्रतापकृष्टगुणश्रेणि-द्रव्यजघन्यनिपेकस्याप्यसख्येयगुणत्वसम्भवात् । अत कारणादधस्तनोपरितनसमयोदयनिपेकेभ्य प्रथमसमय-कृतगुणश्रेणीशीर्षसमयोदयनिषेकद्रव्य बहुतरमिति सूक्त ॥३०५॥

उक्त अर्थका खुलासा—

स० च०—उपशातकषायका प्रथम समयविषै उदयावलीका प्रथम समयतै लगाय गुण-श्रेणि आयाम जेता प्रमाण लीएँ आरम्भ कीया तितना प्रमाण लीएँ ही द्वितीयादि समयनिविषैं भी गुणश्रेणि आयाम है। जातैं उदयावलीविषै एक समय व्यतीत होतै उपरितन स्थितिका एक समय गुणश्रेणि आयामविषै मिलै है। याहीतै उदयादि अवस्थित्ति गुणश्रेणि आयाम है। बहुरि उपशात कषायका प्रथम समयविषैं जेता द्रव्य अपकर्षणकरि गुणश्रेणिविषै दीया तितना ही समय समय प्रति दीजिए है जातैं इहाँ परिणाम अवस्थित है, ताके निमित्ततै अपकर्पणरूप द्रव्यका भी प्रमाण अवस्थित है। बहुरि प्रथम समयविषैं कीनी जे गुणश्रेणि ताका शीर्ष कहिए अत निषेक सो जिससमय उदय आवै तिस समय उत्कृष्ट कर्म परमाणूनिका उदय जानना जातै तिस समयविषै प्रथम समयविषै करी गुणश्रेणीका तौ अत निषेक अर दूसरा समयविषै करी गुणश्रेणिका द्विचरम निषेक आदि इस समयविषैं करी गुणश्रेणिका प्रथम निषेक पर्यंत सवनिषेक मिलि गुणश्रेणिमात्र द्रव्य भया सो तिस समय सम्बन्धी निषेकविषै एकट्ठा हूवा सो तिस निषेकविषै पूर्वै सत्तारूप तिष्ठै था जो गोपुच्छ द्रव्य तिस करि सहित उदय हो है। बहुरि यातैं ऊपरिके समयनिविषैं भी मिलि-करि गुणश्रेणिमात्र द्रव्य एकठा हो है परन्तु गोपुच्छ द्रव्यविषै एक एक चयमात्र घटता द्रव्य पाइए तातैं तहाँ ही उत्कृष्ट प्रदेशनिका उदयरूप कह्या है। कोऊ कहैगा कि पूर्वै गलितावशेष गुणश्रेणि आयाम था ताका शीर्परूप समय है सो अब करी गुणश्रेणि आयामके अभ्यतरवर्ती है वीचि आय गया है तिस समय बहुत गुणश्रेणिनिके निषेक अर तिस समय सम्बन्धी गोपुच्छ द्रव्य मिलि बहुत घणा द्रव्य उदयरूप हो है तहाँ उत्कृष्ट द्रव्यका उदय क्यो न कहौ ? ताकौ कहिए है—पूर्व गुणश्रेणिविपै निक्षेपण कीया सर्व द्रव्यतै भी इहाँ गुणश्रेणिका जघन्य निषेकविषै भी

निक्षेपण कीया द्रव्य असख्यातगुणा है तातै ऊपरि नीचेके सर्व निषेकनितै इहा प्रथम समयविषै करी गुणश्रेणिका शीर्ष जिस समयविषै उदय होइ तिस समयविषै ही उत्कृष्ट द्रव्यका उदय है ॥३०५॥

विशेष—पहले अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समय तक मोहनीयको छोडकर शेष ज्ञानावरणादि कर्मो का गुणश्रेणि निक्षेप उदयावलिके बाहर गलित शेष होता रहा। किन्तु यहाँ उपशान्तकषाय गुणस्थानमे वह उदय समयसे लेकर होने लगता है। तथा यहाँ अवस्थित परिणाम होनेसे गुणश्रेणि रचना और उसमे प्रति समय होनेवाला प्रदेश पु ज का निक्षेप अवस्थितरूपसे हो होता है। यह क्रम उपशान्तकषायके अन्तिम समय तक चलता रहता है। एक बात और है और वह यह कि उपशान्तकषायके प्रथम समयमे जो गुणश्रेणि शीर्ष-की रचना हुई उसकी अग्र स्थितिका उदय होनेपर ज्ञानावरणादि कर्मोका उत्कृष्ट प्रदेश उदय होता है, क्योकि यहाँ पर अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर संचित हुई गुणश्रेणि गोपुच्छाओका एक साथ उदय देखा जाता है। यद्यपि इसके आगे भी प्रत्येक समयमे उतनी ही गोपुच्छाएँ एक साथ उपलब्ध होती हैं, किन्तु आगे प्रकृत गोपुच्छाओकी अपेक्षा प्रत्येक समयमे उत्तरोत्तर एक-एक गोपुच्छा विशेषकी हानि देखी जाती है, इसलिये उपशान्तकषायके प्रथम समयमे किये गये गुण-श्रेणि शीर्षका जिस समय उदय होता है उसी समय उत्कृष्ट प्रदेश उदय होता है ऐसा समझना चाहिये।

अथोपशान्तकषायेण एकान्नषष्ट्युदयप्रकृत्यनुभागविभागप्रदर्शनार्थं गाथाद्वयमाह—

णामधुवोदयबारस सुभगति गोदेक्क विग्घपणगं च।
केणिद्दाजुयलं चेदे परिणामपच्चया होंति ॥३०६॥

नामध्रुवोदयद्वादश सुभगत्रि गोत्रकं विघ्नपंचक च।
केवलं निद्रायुगलं चैते परिणामप्रत्यया भवंति ॥३०६॥

स० टी०—उपशान्तकषाये नामकर्मणो ध्रुवोदयप्रकृतयस्तैजसकार्मणशरीरवर्णगन्धरसस्पर्शस्थिरा-स्थिरशुभाशुभागुरुलघुनिर्माणनामानो द्वादश, सुभगादेययशस्कीर्तय उच्चैर्गोत्रं पञ्चान्तरायप्रकृतय केवलज्ञाना-वरणीय केवलदर्शनावरणीय निद्रा प्रचला चेति पञ्चविंशतिप्रकृतय परिणामप्रत्यया, आत्मनो विशुद्धि-सक्लेशपरिणामहानिवृद्ध्यनुसारेण एतत्प्रकृत्यनुभागस्य हानिवृद्धिसद्भावात् ॥३०६॥

अब ५९ प्रकृतियोके उदयके विषयमे खुलासा—

स० च०—उपशातकषायविषै जे उदय प्रकृति गुणसठि पाइए है तिसविषै तैजस कार्माण शरीर २ वर्णादि ४ स्थिर १ अस्थिर १ शुभ १ अशुभ १ अगुरुलघु निर्माण २ ए नाम कर्मकी ध्रुवोदयी बारह प्रकृति अर सुभग आदेय यशस्कीर्ति ए तीन अर उच्चगोत्र अर पाच अतराय अर केवलज्ञानावरण केवलदर्शनावरण अर निद्रा प्रचला ए पचीस प्रकृति परिणामप्रत्यय है। इनका उदय होनेके समयविषै आत्माके विशुद्धि सक्लेश परिणाम हानि वृद्धि लीएँ जैसै पाइए तैसैं ही हानि वृद्धि लीएँ इनके अनुभागका तहाँ उदय होइ। वर्तमान परिणामके निमित्ततैं इनका अनुभाग उत्कर्षण अपकर्षणादिरूप होइ उदय हो है ॥३०६॥

तेसिं रसवेदमवट्ठाण भवपच्चया हु सेसाओ ।
चोत्तीसा उवसते तेसिं तिट्ठाण रसवेद[1] ॥३०७॥

तेषा रसवेदमवस्थानं भवप्रत्यया हि शेषा ।
चतुस्त्रिशत् उपशाते तेषा त्रिस्थानं रसवेद ॥३०७॥

स० टी०—तासा पञ्चविशतिप्रकृतीनामनुभागोदय उपशान्तकपाये प्रथमसमयादारम्य तत्कालचरम-समयपर्यन्तमवस्थित एव तत्र यथाख्यातविशुद्धिचारित्रस्य प्रतिसमय हानिवृद्धिभ्या विनावस्थितत्वेन तत्कर्म-प्रकृत्यनुभागोदयस्यापि हानिवृद्धिभ्या विना अवस्थितत्वसिद्धे । शेपा मतिश्रुतावधिमन पर्ययज्ञानावरण-चतुष्टय चक्षुरचक्षुरवधिदर्शनावरणत्रय सातासातवेदनीयद्वय मनुष्यायुर्मनुष्यगतिपञ्चेन्द्रियजात्यौदारिकशरीर-तदङ्गोपागाद्यसहननत्रयषट्सस्थानोपघातपरघातोच्छ्वासविहायोगतिद्वयप्रत्येकत्रसबादरपर्याप्तस्वरद्वयनामप्रकृत-यश्चतुर्विशतिरिति चतुस्त्रिशत्प्रकृतयो भवप्रत्यया ३४ । एतासामनुभागस्य विशुद्धिसक्लेशपरिणामहानिवृद्धि-निरपेक्षतया विवक्षितभवाश्रयेणैव षट्स्थानपतितहानिवृद्धिसम्भवात् । अत कारणादवस्थितविशुद्धिपरिणामेऽ-प्युपशान्तकषाये एतच्चतुस्त्रिशत्प्रकृतीना अनुभागोदयस्त्रिस्थानसभवी भवति कदाचिद्धीयते कदाचिद्वर्धते कदाचिद्धानिवृद्धिभ्या विना एकादृश एवावतिष्ठते इत्यर्थ । एव चारित्रमोहनीयस्यैकविंशतिप्रकृतीनामुप-शमनविधानमुपशान्तकपायगुणस्थानचरमसमयपर्यन्त समाप्तम् ॥३०७॥

स० च०—तिन पचीस प्रकृतिनिके अनुभागका उदय उपशातकषायका प्रथम समयतैं लगाय अत समय पर्यंत अवस्थित समानरूप है जातैं तहाँ परिणाम समान है अर इन प्रकृतिनिके अनुभागका उदय परिणामनिके अनुसारि हैं तातैं इनके अनुभागका उदयविषै हानि वृद्धि नाही है । बहुरि अवशेष ज्ञानावरणकी च्यारि दर्शनावरणकी तीन वेदनीयकी दोय मनुष्य आयु मनुष्य गति पचेंद्री जाति औदारिक शरीर औदारिक अगोपाग आदिके तीन सहनन सस्थान छह उपघात परघात उच्छ्वास विहायोगति दोय प्रत्येक त्रस बादर पर्याप्त स्वरकी दोय ऐसैं चौतीस प्रकृति भवप्रत्यय हैं । आत्माके परिणाम जैसैं होइ तैसैं होइ तिनकी अपेक्षा रहित पर्यायहीका आश्रयकरि इनके अनुभागविषै षट्स्थानरूप हानि वृद्धि पाइए है तातै इनका अनुभागका उदय इहा तीन अवस्था लीए है । कदाचित् हानिरूप हो है कदाचित् वृद्धिरूप हो है कदाचित् अवस्थित जैसाका तैसा रहै है । ऐसैं उपशातकषाय गुणस्थानका अत समय पर्यंत इकईस चारित्र मोहकी प्रकृतिनि-का उपशमन विधान समाप्त भया ॥३०७॥

विशेष—यहाँ गाथा ३०६ और ३०७ मे जो परिणामप्रत्यय और भवप्रत्यय प्रकृतियाँ गिनायी है उनमेसे जितनी परिणामप्रत्यय प्रकृतियाँ हैं उनमेसे कितनी प्रकृतियोका यह जीव अवस्थितवेदक होता है और किन प्रकृतियोका उदय षडगुणी हानि-वृद्धिको लिए हुए होता है। इसका विशेष स्पष्टीकरण चूर्णिसूत्रोके आधारसे जयधवलामे विशेषरूपसे किया गया है जो इस प्रकार है—

१ केवलणाणावरण-केवलदसणावरणीयाणमणुभागुदएण सव्वउवसतद्धाए अवट्ठिदवेदगो । णिद्दापयलाण पि जाव वेदगो ताव अवट्ठिदवेदगो । अतराइयस्स अवट्ठिदवेदगो । सेसाण लद्धिकम्मसाणमणुभागोदयो वड्ढी वा हाणी वा अवट्ठाण वा । णामाणि गोदाणि जाणि परिणामपच्चयाणि तेसिमवट्ठिदवेदगो अणु-भागोदएण । वही पृ० ३३०–३३३ ।

(१) केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरणका अनुभागके उदयकी अपेक्षा यह जीव अवस्थितवेदक होता है, क्योंकि यहाँ अवस्थित परिणाम पाये जाते हैं।

(२) निद्रा और प्रचला प्रकृतियाँ अध्रुवोदयरूप है, इसलिये इनके उदयकाल तक यह जीव अवस्थित वेदक रहता है।

(३) पाँच अन्तराय यद्यपि लब्धिकर्मांश प्रकृतियाँ हैं, फिर भी यहाँ अवस्थित परिणाम होनेसे यह जीव इनका अवस्थित वेदक ही होता है। क्षयोपशमवश यहाँ इनकी छह वृद्धि और छह हानि नही होती।

(४) मतिज्ञानावरण आदि चार ज्ञानावरण और तीन दर्शनावरण ये भी लब्धिकर्मांश प्रकृतियाँ है, क्योकि क्षयोपशमवश इनकी भी लब्धिकर्मांश सज्ञा है। यत इनका क्षमोपशम एक समान नही रहता इसलिये इनका अनुभागोदय छह वृद्धि और छह हानि और अवस्थानको लिये हुए होता है। यद्यपि इनकी परिणामप्रत्यय प्रकृतियोमे गणना होती है तो भी इनके अनुभागोदयमे छह वद्धि, छह हानि और अवस्थान सम्भव है ऐसा आगमका उपदेश है। उदाहरणार्थ—उपशान्त कषायमे यदि अवधि ज्ञानावरणका क्षयोपशम नही है तो उसका अवस्थित उदय होता है, क्योकि वहाँ उसके अनवस्थित उदयका कोई कारण नही उपलब्ध होता। यदि उसका क्षयोपशम है तो उसका अनुभागोदय यथासम्भव छह वृद्धि, छह हानि और अवस्थित होता है, क्योकि देशावधि और परमावधिके असख्यात लोकप्रमाण भेद हैं, इसलिये इनकी अपेक्षा अवधि ज्ञानावरणके अनुभागोदयमे उक्त वृद्धि-हानि और अवस्थान सम्भव है। हाँ जिन जीवोके सर्वावधि ही पाई जाती है वहाँ अवधिज्ञानावरणका यह जीव अवस्थितवेदक होता है। इसीप्रकार मन पर्यय ज्ञानावरणकी अपेक्षा तथा शेष ज्ञानावरण और दर्शनावरणका आगमके अनुसार कथन करना चाहिए।

(५) नामकर्म और गोत्रकर्मकी यहाँ जो परिणामप्रत्यय प्रकृतियाँ है उनका भी उपशान्त-कषाय जीव अवस्थितवेदक होता है। वे प्रकृतियाँ ये हैं—मनुष्यगति, पचेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, छह सस्थानोमेसे कोई एक, औदारिक शरीर आगोपाग, प्रारम्भके तीन सहननोमेसे कोई एक, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, दो विहायोगतियोमेसे कोई एक, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, सुस्वर और दु स्वरमेसे कोई एक, आदेय, यश कीर्ति और निर्माण तथा उच्चगोत्र। ये सब परिणाम प्रत्यय प्रकृतियाँ हैं। अत इनका अवस्थित वेदक होता है। शेष जितनी अघाति कर्म सम्बन्धी साता वेदनीय आदि भवप्रत्यय प्रकृतियाँ है उनकी छह वृद्धि और छह हानिरूप तथा अवस्थितवेदक होता है।

लब्धिसारकी गाथा ३०६ की सस्कृत टीकामे ध्रुवोदयरूप १२ प्रकृतियाँ, शुभग, आदेय, यश कीर्ति, उच्चगोत्र, पाँच अन्तराय, केवलज्ञानावरण, केवलदर्शनावरण, निद्रा और प्रचला इन पच्चीस प्रकृतियोको परिणाम-प्रत्यय मानकर भी आत्माके सक्लेश और विशुद्धिके अनुसार इनके अनुभागके उदयकी छह वृद्धियाँ और छह हानियाँ स्वीकार की गई हैं। जब कि गाथा ३०७ की टीकामे इन २५ प्रकृतियोके अनुभागका अवस्थित उदय भी स्वीकार किया गया है। तथा इनके सिवाय ज्ञानावरणकी चार, दर्शनावरणकी तीन, वेदनीयकी दो, मनुष्यायु, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय

जाति, औदारिक शरीर, औदारिक अंगोपांग, आदिके तीन संहनन, छह संस्थान, उपघात, परघात, उच्छ्वास, दो विहायोगति, प्रत्येक शरीर, त्रस, बादर, पर्याप्त, दो स्वर, ये चौंतीस प्रकृतियाँ भवप्रत्यय हैं। आत्माके संक्लेश और विशुद्धिरूप परिणामोंकी अपेक्षाके बिना इनके अनुभागका उदय कदाचित् हानिरूप होता है, कदाचित् वृद्धिरूप होता है और कदाचित् अवस्थित रहता है। यह लब्धिसारकी संस्कृत टीकाका भाव है जिसकी कषाय प्राभृतके कथनसे किसी भी प्रकार पुष्टि नहीं होती। सो जयधवला, पृ० १३ से समझ लेना चाहिये। यहाँ हम पूर्वमें स्पष्टीकरण कर ही आये हैं।

अथेदानीमुपशान्तकषायस्य प्रतिपातविधिं प्ररूपयन् गाथाद्वयमाह—

उवसंते पडिवडिदे भवक्खये देवपढमसमयम्हि।
उग्घाडिदाणि सव्वा वि करणाणि हवंति णियमेण ॥३०८॥

उपशान्ते प्रतिपतिते भवक्षये देवप्रथमसमये।
उद्घाटितानि सर्वाण्यपि करणानि भवन्ति नियमेन ॥३०८॥

स० टी०—उपशान्तकषायपरिणामस्य द्विविध प्रतिपात भवक्षयहेतु उपशमनकालक्षयनिमित्तकश्चेति। तत्र भवक्षये उपशान्तकषायगुणस्थानकाले प्रथमसमयादारभ्य चरमसमयपर्यन्ते यत्र वा तत्र वा आयु क्षये सति उपशान्तकषायकाले मृत्वा देवासंयतगुणस्थाने प्रतिपतति। एवं प्रतिपतिते तस्मिन्नेवासंयतप्रथमसमये सर्वाण्यपि बन्धनोदीरणासंक्रमणादीनि करणानि नियमेनोद्घाटितानि स्वस्वरूपेण प्रवृत्तानि भवन्ति। यथाख्यातचारित्रविशुद्धिबलेनोपशान्तकषाये उपशमितानां तेषां पुनर्देवासंयते संक्लेशवशेनानुपशमनरूपोद्घाटनसम्भवात् ॥३०८॥

अथ उपशांत कषायतै पडनेका विधान कहैं हैं—

सं० च०—उपशांत कषायतैं पडना दोय प्रकार है भवक्षय हेतु १ उपशम कालक्षयनिमित्तक २। तहा मरण होतैं पर्यायका नाशके निमित्ततै पडना होइ सो भवक्षयहेतु कहिए। अर उपशम कालके क्षयके निमित्ततै पडना होइ सो उपशमकालक्षयनिमित्तक कहिए। तहाँ भव क्षय हेतुविषै कहिए है—

उपशांत कषायके कालविषै प्रथमादि अंत पर्यंत समयनिविषैं जहाँ तहाँ आयुके नाशतै मरिकरि देव पर्यायसम्बन्धी असंयत गुणस्थानविषै पडै तहाँ असंयतका प्रथम समयविषै बंध उदीरणा संक्रमण आदि समस्त करण उघाडै हैं। अपने-अपने स्वरूपकरि प्रगट वर्तै है। जातैं जे उपशांत कषायविषै उपशमे थे ते सर्व असंयतविषैं उपशम रहित भए हैं ॥३०८॥

विशेष—जो जीव ग्यारहवें गुणस्थानसे किसी भी समय आयुके अन्त होनेपर मर कर देव होता है उसके जन्मके प्रथम समय ही नियमसे चौथा गुणस्थान हो जाता है, अत बन्धनकरण आदि आठ करणोंकी व्युच्छित्ति होकर जो चारित्रमोहनीयका सर्वोपशम हुआ था उसका यहाँ अभाव हो जानेसे वे बन्धनकरण आदि सभी करण उद्घाटित हो जाते हैं। तात्पर्य यह है कि जिन कर्मोका देव अविरत सम्यग्दृष्टिके बन्ध सम्भव है उनका बन्ध होने लगता है, विवक्षित कर्मोंमेसे

१ दुविहो पडिवादो भवक्खएण च उवसामणक्खएण च। भवक्खएण पडिदस्स सव्वाणि करणाणि एक्कसमएण उग्घाडिदाणि। ता० मु०, पृ० १८९०-१८९१।

जिनकी उदीरणा सम्भव है उनकी उदीरणा होने लगती है। इसी प्रकार अपकर्षण, उत्कर्षण अप्रशस्त उपशम आदिके विषयमे भी जान लेना चाहिये।

सोदीरणाण दव्व देदि हु उदयावलिम्हि इयरं तु।
उदयावलिबाहिरगे गोपुच्छाए देदि सेढीये[1] ॥३०९॥

सोदीरणाना द्रव्यं ददाति हि उदयावलौ इतरत्तु।
उदयावलिबाह्यके अन्तरे ददाति श्रे ॥३०९॥

स० टी०—भवक्षयादुपशान्तकषायगुणस्थानात्प्रतिपतितदेवासयत प्रथमसमये उदयवतामप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान-सज्वलनक्रोधमानमायालोभानामन्यतमस्य कषायस्य पुवेदहास्यरतीना भयजुगुप्सयोर्यथासम्भवमन्यतरस्य च द्रव्यमपकृष्य स ∂ १२— इद पुनरसख्यातलोकेन खण्डयित्वा एकभागमुदयावल्या दत्त्वा स ∂ १२— / ७ ओ ≡ ∂ तद्बहुभागमुदयावलीवाह्यप्रथमसमयादारभ्यान्तरायामे द्वितीयस्थितौ च 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे' इत्यादिविधानेनविशेषहीनक्रमेण ददाति उदयरहिताना नपुसकवेदादीना मोहप्रकृतीना द्रव्यमपकृष्य स ∂ १२— / ७ ओ उदयावलिबाह्यनिषेकेषु अन्तरायामे द्वितीयस्थितौ च पूर्वोक्तविधानेन विशेषहीनक्रमेण प्रतिनिषेक ददाति। अनेन विधानेन चारित्रमोहस्यान्तर पूरयतीत्यर्थ ॥३०९॥

(Fraction denominators as printed: "७ ओ" under the first "स ∂ १२—"; "७ ओ ≡ ∂" under the second; "७ ओ" under the third.)

स० च०—सो देव असयत जीव प्रथम समयविषै उदयरूप जो अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान सज्वलनरूप जे क्रोधादि च्यारि कषाय तिनविषै कोई एक कषाय अर पुरुषवेद १ हास्य रति २ अर भय जुगुप्साविषै यथासम्भव प्रकृति जे उदयरूप पाइए हैं तिनके द्रव्यकौं अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहाँ एक भागकौ ग्रहण करि ताकौं असख्यातलोकका भाग देइ एक भागकौ उदयावलीविषै दीजिए है अर अवशेष बहुभागकौ उदयावलीतै बाह्य प्रथम निषेकतैं लगाय अवशेष अतरायामविषै वा अतरायामके उपरिवर्ती द्वितीय स्थितिविषै 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यादि विधानतै चय घटता क्रमकरि दीजिए है। बहुरि उदय रहित जे नपु सक वेदादिक मोहकी प्रकृति तिनके द्रव्यकौ अपकर्षणकरि उदयावलीविषै न दीजिए है उदयावलीतै बाह्य अतरायाम वा उपरितन स्थिति ही विषै चय घटता क्रमकरि दीजिए है। इस विधानकरि चारित्र मोहका अतरकौं पूरै है। अतर करनेविषै निषेकनिका अभाव कीया था तिनविषै उपशम काल व्यतीत भए पीछैं जे अवशेष अतररूप निषेक रहैं तिनविषै इहाँ द्रव्यका निक्षेपण करि तिनका सद्भाव करै है। इहाँ गुणश्रेणिका असयतविषै अभाव जानना ॥३०९॥

अथोपशमनाद्धाक्षयनिबन्धन प्रतिपात प्रारम्भमाण इदमाह—

अद्धाखए पडंतो अधापवत्तो त्ति पडदि हु कमेण।
सुज्झंतो आरोहदि पडदि हु सो संकिलिस्संतो[2] ॥३१०॥

---

१ पढमसमएण चेव जाणि उदीरिज्जति कम्माणि ताणि उदयावलिय पवेसिदाणि, जाणि ण उदीरिज्जति ताणि वि ओकड्डियूण आवलियबाहिरे णिक्खित्ताणि। ता० मु०, पृ० १८९१।

२ जो उवसामणक्खएण पडदि तस्स विहासा। केण कारणेण पडिवददि अवट्ठिदपरिणामो सतो। सुणु कारण, जधा अद्धाक्खएण सो लोभे पडिवदिदो होइ। ता० मु०, पृ० १८९१–९२।

अद्धाक्षये पतन् अध प्रवृत्त इति पतति हि क्रमेण ।
शुद्धयन् आरोहति पतति स सक्लिश्यन् ॥३१०॥

स० टी०—आयुषि सत्यद्धाक्षयेऽन्तर्मुहूर्तमात्रोपशान्तकपायगुणस्थानकालावसाने सति प्रतिपतन् स उपशान्तकषाय प्रथम नियमेन सूक्ष्मसाम्परायगुणस्थाने प्रतिपतति । ततोऽनन्तरमनिवृत्तिकरणगुणस्थाने प्रतिपतति । तदन्वपूर्वकरणगुणस्थाने प्रतिपतति । तत पश्चादप्रमत्तगुणस्थाने अध प्रवृत्तकरणपरिणामे प्रतिपतति । एवमध प्रवृत्तकरणपर्यन्तमनेनैव क्रमेण प्रतिपातो नान्यथेति निश्चेतव्य । य पुन शुद्धयन् वर्धमानविशुद्धिपरिणाम उत्तरोत्तरगुणस्थानान्यारोहति स एव कपायोदयवशात् विशुद्धिहान्या सक्लेशमान अधोऽधो गुणस्थानेषु प्रतिपतति न पुनरुपशान्तकषायस्यैव विधारोहणप्रतिपातौ सम्भवतस्तस्य स्वगुणस्थानकाल चरमसमयपर्यन्तमवस्थितपरिणामत्वेन विशुद्धिसक्लेशयोर्हानिवृद्धिपरावृत्त्यसम्भवात । ननूपशान्तकषायस्याव-स्थितविशुद्धिपरिणामत्वात् कथ प्रतिपात सभवतीति नाशङ्कनीय उपशान्तकपायगुणस्थानकालस्यान्तर्मुहू-र्तात्पर नियमेन प्रक्षयादुपशमनकालक्षयहेतुकप्रतिपातस्य सभवाविरोधात् । अत एवाय प्रतिपातोऽद्धाक्षयहेतुक एव न विशुद्धिपरिणामहानिनिबन्धनो नाप्यन्यनिमित्तक इति ॥३१०॥

अद्धाक्षयके कारण उपशान्तकषायसे पतनका निर्देश—

स० च० —आयु विद्यमान होतें अद्धा क्षयविषै अतर्मुहूर्तमात्र उपशात कषायका काल अत भए पडिकरि सूक्ष्मसाम्पराय होइ पीछैं अनिवृत्तिकरण होइ । पीछैं अपूर्वकरण होइ । पीछैं अध - प्रवृत्तकरणरूप अप्रमत्त हो है । ऐसैं अध प्रवृत्तकरणपर्यंत तौ अनुक्रमतैं पडना होइ ही होइ । पीछैं जो विशुद्धता युक्त होइ ऊपरिके गुणस्थानविषै चढै अर सक्लेशता करि युक्त होइ तौ नीचेके गुणस्थाननिविषै पडे किछू नियम नाही । बहुरि या प्रकार सक्लेश विशुद्धताके निमित्तकरि उपशातकषायतैं पडना चढना न हो है । जातैं तहाँ परिणाम अवस्थिति विशुद्धता लीएँ वर्तै है । बहुरि तहाँतैं जो पडना हो है सो तिस गुणस्थानका काल भए पीछैं नियमतैं उपशम कालका क्षय होइ तिसके निमित्ततैं हो है । विशुद्ध परिणामनिकी हानिके निमित्ततैं तहातैं नाही पडै है वा अन्य कोई निमित्ततैं नाही है ऐसा जानना ॥३१०॥

विशेष—ग्यारहवाँ गुणस्थानवाला जीव एक तो भवका अन्त होनेसे गिरता है और दूसरे सर्वोपशमका जो अन्तर्मुहूर्त काल है उसका अन्त होनेसे गिरता है । ग्यारहवे गुणस्थानसे गिरने-का अन्य कोई कारण नही है ऐसा यहाँ स्पष्ट समझना चाहिये । ऐसा जीव ७ वे गुणस्थान तक क्रमसे उतरता है उसके बाद परिणामोके अनुसार गिरना-चढना होता है । इसे टीकामे बतलाया ही है ।

अथ सूक्ष्मसाम्परायगुणस्थाने प्रतिपतितस्य क्रियाविशेषप्रतिपादनार्थं गाथाचतुष्टयमाह—

सुहुमप्पविट्ठसमयेणद्धुवसामणतिलोहगुणसेढी ।
सुहुमद्धादो अहिया अवट्ठिदा मोहगुणसेढी[1] ॥३११॥

सूक्ष्मप्रविष्टसमयेनाध्रुवशमत्रिलोभगुणश्रेणी ।
सूक्ष्माद्धातोऽधिका अवस्थिता मोहगुणश्रेणी ॥३११॥

---

१ पढमसमयसुहुमसापराइएण तिविह लोभमोकड्डियूण सजलणस्स उदयादिगुणसेढी कदा । जा तस्स किट्टीलोभवेदगद्धा तदो विसेसुत्तरकालो गुणसेढिणिक्खेवो । ता० मु०, पृ० १८९२ ।

स० टी०—सूक्ष्मसाम्परायप्रविष्टसमये तद्गुणस्थानप्रथमसमये विनष्टोपशमनकरणाना त्रयाणा अप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसज्वलनलोभाना गुणश्रेणि प्रारभ्यते । तद्गुणश्रेण्यायामश्चारोहकसूक्ष्मसाम्परायगुणस्थानकालादावलिमात्रेणाभ्यधिक २ १ ७ एव मोहनोयस्य गुणश्रेणिरस्मिन्नवसरे अवस्थिततायामैव ग्राह्या ॥३११॥

गिरकर सूक्ष्मसाम्परायमे आये हुए जीवके कार्य विशेषका निर्देश—

स० च०—उपशात कषायतै ऊपरि सूक्ष्मसाम्परायविषै प्रवेश कीया, तहा प्रथम समयविषै नष्ट भया हैं उपशमकरण जिनिका ऐसा जो अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान सज्वलन लोभ तिनकी गुणश्रेणिका आरम्भ हो है । तिस गुणश्रेणि आयामका प्रमाण चढनेवाले सूक्ष्मसाम्परायके कालतै एक आवलीमात्र अधिक है सो इस अवसरविषै मोहकी गुणश्रेणिका आयाम अवस्थितरूप जानना ॥३११॥

उदयाण उदयादो सेसाण उदयबाहिरे देदि ।
छण्ह बाहिरसेसे पुव्वतिगादहियणिक्खेओ[1] **॥३१२॥**

उदयानामुदयत शेषाणा उदयबाह्ये ददाति ।
षण्णा बाह्यशेषे पूर्वत्रिकादधिकनिक्षेप ॥३१२॥

स० टी०—तत्र तावदुदयवत सज्वलनलोभस्य द्वितीयस्थितौ स्थित कृष्टिगत द्रव्यमपकृष्य पल्यासख्यातभागखण्डितैकभागमात्रमुदयसमयादारभ्य गुणश्रेण्यायामचरमसमयपर्यन्तमसख्यातगुणितक्रमेण निक्षिप्य पुनस्तद्वहुभागद्रव्य गुणश्रेणीशीर्षस्योपर्यन्तरायाममुल्लङ्घ्य द्वितीयस्थितौ 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे' इत्यादिना विशेषहीनक्रमेण निक्षिपेत् । उदयरहितयोरप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानलोभयोर्द्वितीयस्थितौ स्थित द्रव्यमपकृष्य उदयावलिबाह्यप्रथमसमयादारभ्य गुणश्रेण्यायामचरमसमयपर्यन्तमसख्यातगुणितक्रमेण तदुपर्यन्तरायाममुल्लङ्घ्य द्वितीयस्थितौ पूर्ववद्विशेषहीनक्रमेण निक्षिपेत् । एवमुत्तरत्राप्युदयानुदयवतोर्गुणहानिश्रेणिनिक्षेपक्रमो वेदितव्य । पुन षण्णामायुर्मोहवर्जिताना ज्ञानावरणादिकर्मणा द्रव्यमपकृष्य पल्यासख्यातभागेन खण्डयित्वा तदेकभाग पुन पल्यासख्यातभागेन खण्डयित्वा तदेकभागमुदयावल्या निक्षिप्य बहुभाग गुणश्रेण्यायामे अवरोहकसूक्ष्मसाम्परायानिवृत्त्यपूर्वकरणकालेभ्यो विशेषाधिकमात्रे गलितावशेषे असख्यातगुणितक्रमेण निक्षिप्य अवशिष्टवहुभागमुपरितनस्थितौ पूर्ववद्विशेषहीनक्रमेण निक्षिपेत् ॥३१२॥

स० च०—तहाँ उदयरूप जो सज्वलन लोभ ताकी द्वितीय स्थितिविषै तिष्ठता द्रव्यकौं अपकर्षण करि ताकौ पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग देइ तहाँ एक भागकौ उदयरूप प्रथम समयतै लगाय गुणश्रेणि आयामका अन्त निषेक पर्यंत असख्यातगुणा क्रम लीएँ निक्षेपण करै है । अर वहुभागमात्र द्रव्यकौं गुणश्रेणि आयामका अन्त निषेकतै ऊपरि पाइए है जो अतरायाम ताकौ छोडि ताके ऊपरि जो द्वितीय स्थिति तीहिंविषै चय घटता क्रमकरि निक्षेपण करे हे । वहुरि

1 दुविहस्स लोहस्स तत्तिओ चेव णिक्खेवो, णवरि उदयावलियाए णत्थि । सेसाणमाउगवज्जाण कम्माण गुणसेढिणिक्खेवो अणियट्टिकरणद्धादो अपुव्वकरणद्धादो च विसेसाहिओ, सेसे सेसे च णिक्खेवो । तिविहस्स लोहस्स तत्तिओ तत्तिओ चेव णिक्खेवो । ताधे चेव तिविहो लोभो एगसमएण पसत्यउवसामणाए अणुवसंतो । ता० मु०, पृ० १८९३ ।

उदय रहित अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान लोभ तिनकी द्वितीय स्थितिविषै तिष्ठता द्रव्यकौ अपकर्षण करि उदयावलीतै बाह्य प्रथम समयतै लगाय गुणश्रेणि आयामका अंत पर्यंत असंख्यातगुणा क्रम लीएँ अर ताके ऊपरि अंतरायामकौ छोडि द्वितीय स्थितिविषै चय घटता क्रमकरि पूर्ववत् निक्षेपण करै। बहुरि आयु मोह विना छह कर्मनिका द्रव्यकौ अपकर्षण करि ताकौ पल्यका असंख्यातवाँ भागका भाग देइ तहाँ एक भागकौ बहुरि पल्यका असंख्यातवाँ भागका भाग देइ तहाँ एक भाग उदयावलीविषै दीजिए है। बहुभाग गुणश्रेणि आयामविषै दीजिए है। सो इनका यहु गुणश्रेणि आयाम उतरनेवाले सूक्ष्मसाम्पराय अनिवृत्तिकरण अपूर्वकरणनिका मिलाया हुआ काल तै किछू अधिक प्रमाण लीएँ गलितावशेषरूप जानना। याविषै असंख्यातगुणा क्रम लीएँ द्रव्य दीजिए है। बहुरि अपकर्षण कीया द्रव्यविषै बहुभाग रहे तिनकौ उपरितन स्थितिविषै चय घटता क्रम लीएँ दीजिए है ॥३१२॥

विशेष—उपशान्तकषायसे गिरकर और सूक्ष्मसाम्परायमे आकर उसके प्रथम समयमे किसकी किस प्रकारकी गुणश्रेणि रचना होती है इसे स्पष्ट करते हुए श्री जयधवलामे बतलाया है कि—

(१) संज्वलन लोभकी उदयादि गुणश्रेणि रचना होती है। सो लोभके वेदक कालप्रमाण जो कृष्टि है सो कुछ अधिक प्रमाणको लिये हुए इसकी गुणश्रेणि रचना होती है। यहाँ कुछ अधिकसे एक आवलिकाल लेना चाहिये। यह अवस्थित गुणश्रेणि है।

(२) दो लोभोकी ही इतने कालप्रमाण गुणश्रेणि रचना होती है। किन्तु उसका निक्षेप उदयावलि बाह्य होता है। यह भी अवस्थित गुणश्रेणि है।

(३) आयुकर्मको छोडकर शेष कर्मो का गुणश्रेणि निक्षेप अनिवृत्तिकरण और अपूर्वकरणके कालसे कुछ अधिक होता है। तथा इनकी गलितशेष गुणश्रेणि रचना होती है। इसलिये प्रति समय एक-एक निषेकके गलित होनेपर जितनी गुणश्रेणि शेष रहती है उसीमे निक्षेप होता है।

(४) ग्यारहवे गुणस्थानसे पतन होनेपर सूक्ष्मसाम्परायके प्रथम समयमे जो तीन लोभोका प्रशस्त उपशामना द्वारा उपशम हुआ था उनकी यहाँ प्रशस्त उपशामना समाप्त हो जाती है, इसलिये यहाँ इनकी अपकर्षण आदि क्रियाके होनेमे कोई बाधा नही आती।

ओदरसुहुमादीए बंधो अंतोमुहुत्त बत्तीस।
अडदाल च मुहुत्ता तिघादिणामदुगवेयणीयाण[1] ॥३१३॥

अवतरसूक्ष्मादिके बंधो अंतर्मुहूर्तं द्वात्रिंशत्।
अष्टचत्वारिंशत् च मुहूर्ता त्रिघातिनामद्विकवेदनीयानाम् ॥३१३॥

स० टी०—उपशान्तकषायगुणस्थानादवतीर्णसूक्ष्मसाम्परायप्रथमसमये घातित्रयस्य स्थितिबन्धोऽन्तर्मुहूर्तमात्र। नामगोत्रयोर्द्वात्रिंशन्मुहूर्तमात्र। वेदनीयस्याष्टचत्वारिंशन्मुहूर्तमात्र। आरोहणे सूक्ष्मसाम्परायस्य चरमसमये स्थितिबन्धात् अवरोहणे तत्प्रथमसमये स्थितिबन्धो द्विगुण इति सिद्धान्ते प्रतिपादितत्वात् एवमवरोहकसूक्ष्मसाम्परायस्य प्रथमसमये क्रियाविशेष प्रतिपादित ॥३१३॥

---

१ ताधे तिण्हं घादिकम्माणमंतोमुहुत्तट्ठिदिगो बंधो, णामा-गोदाण ट्ठिदिबंधो बत्तीसमुहुत्ता, वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो अडतालीसमुहुत्ता। ता० मु०, पृ० १८९३।

स० च०—उतरचा हुआ सूक्ष्मसाम्परायका प्रथम समयविषै तीन घातियानिका अतर्मुहूर्त नाम गोत्रका बत्तीस मुहूर्त वेदनीयका अठतालीस मुहूर्तमात्र स्थितिबध जानना। जातै आरोहक सूक्ष्मसाम्परायका अत समयविषै जो स्थितिबध हो है तातै अवरोहक सूक्ष्मसाम्परायका प्रथम समयविषै दूणा स्थितिबध है। उपशमश्रेणि चढनेवालाका नाम आरोहक कहिए। उतरनेवालाका नाम अवरोहक कहिए अथवा अवतारक कहिए है ऐसी सज्ञा आगै भी जाननी ॥३१३॥

गुणसेढीसत्थेदररसबधो उवसमादु विवरीय।
पढमुदओ किट्टीणमसखाभागा विसेसअहियकमा ॥३१४॥

गुणश्रेणी शस्तेतररसबन्ध उपशमात् विपरीतम्।
प्रथमोदय कृष्टीनामसख्यभागा विशेषाधिकक्रमा ॥३१४॥

स० टी०—अवरोहकसूक्ष्मसाम्परायस्य द्वितीयादिसमयेपु प्रथमसमयापकृष्टद्रव्यादसख्येयगुणहीन-द्रव्यमपकृष्य मोहस्येतरकर्मणा च गुणश्रेणी करोति। गुणश्रेणिनिर्जराकारणस्यावरोहणे विशुद्धिपरिणामस्य प्रतिसमयमनन्तगुणहीनत्वसम्भवात्। सातादिप्रशस्तप्रकृतीना ज्ञानावरणाद्यप्रशस्तप्रकृतीना चानुभागवन्धाद्यथा-सख्यमनन्तगुणहीनोऽनन्तगुणश्च प्रतिसमय वेदितव्य। तत्कारणस्य विशुद्धिसक्लेशस्य चानन्तगुणहानि-वृद्धिसम्भवात्। अत एवोपशमादुपशमश्रेण्यारोहणात्तदवरोहणे विपरीतमित्युक्तम्। स्थितिबन्धस्तु अन्तर्मुहूर्त-पर्यन्त तादृश एव। पुनरन्तर्मुहूर्तेऽन्तमुहूर्ते आरोहकस्थितिवन्धात् द्विगुण वर्धते तच्चरमसमय यावत्। अव-रोहकसूक्ष्मसाम्परायप्रथमसमये उदयनिषेककृष्टीना पल्यासख्यातभागखण्डितबहुभागमात्रो मध्यमकृष्टय

। १ ० /
४ प

उदयमागच्छन्ति। तदेकभागस्य पुनरसख्यातभागा द्विपञ्चमभागमात्र्य कृष्टय आदिकृष्टेरारभ्या-

ख प a
a

।
नुदया ४ २ / ख ५ प a उपरि च तत्त्रिपञ्चभागमात्र्य कृष्टयोऽग्रकृष्टेरारभ्यानुदया ।
४ ३ / ख प ५ a तासामाद्यन्तकृष्टीना स्वस्वरूप परित्यज्य मध्यमकृष्टिस्वरूपेण परिणम्योदयो भवतीत्यर्थ। पुनर्द्वितीयसमये आदिकृष्टीना पल्या-

।
सख्यातैकभागमात्री ४ २ / ख प ५ प a a कृष्टीस्त्यक्त्वाग्रकृष्टीना पल्यासख्यातैकभागमात्री कृष्टी ।
४ ३ / ख प ५ प a a गृहीत्वा

---

१ से काले गुणसेढी असखेज्जगुणहीणा। ट्ठिदिवधो मो चेव। अणुभागवधो अप्पसत्थाणमणतगुणो पमत्थाण कम्मसाणमणतगुणहीणो। लोभ वेदयमाणस्स इमाणि आवासयाणि। त जहा—लोभवेदगद्धाए पढमतिभागे किट्टीणमसखेज्जा भागा उदिण्णा। पढमसमए उदिण्णाओ किट्टीओ थोवाओ, विदियसमए उदिण्णाओ किट्टीओ विसेसाहियाओ। ता० मु०, पृ० १८९४–१८९५।

मध्यमकृष्टय उदयमागच्छन्ति । तत्र ऋणात् $\frac{\overset{|}{\text{४}}\quad \text{२}}{\underset{a\quad a}{\text{ख प ५ प}}}$ अस्माद्धनमिद $\frac{\overset{|}{\text{४}}\quad \text{३}}{\underset{a\quad a}{\text{ख प ५ प}}}$ अभ्यधिकमिति घनार्ण-योर्विवरे शेप $\frac{\overset{|}{\text{४}}\quad \text{१}}{\underset{a\quad a}{\text{ख प ५ प}}}$ प्रमाणेन प्रथमसमयोदयकृष्टिभ्यो द्वितीयसमयोदयकृष्टयो विशेपाधिका $\frac{\overset{|}{\text{४}}\quad \text{प}}{\underset{a}{\text{ख प}}\ a}$ एव तृतीयादिसमयेष्वपि तच्चरमसमयपर्यन्तेपु विशेपाधिका कृष्टय उदयमागच्छन्ति अत एव प्रतिसमयमनन्त-गुणानुभागोदय कृष्टीना ज्ञातव्य । एवमनेन क्रमेण सूक्ष्मसाम्परायकालो गत ॥३१४॥

स० च०—अवरोहक सूक्ष्मसाम्परायका द्वितीयादि समयनिविषै समय-समय प्रति प्रथमादि समय सम्बन्धीतै असख्यातगुणा घाटि क्रम लीएँ द्रव्यकौ अपकर्षण करि गुणश्रेणि करै है। अर प्रशस्त प्रकृतिनिका अनतगुणा घाटि क्रम लीएँ अर अप्रशस्त प्रकृतिनिका अनतगुणा वधता क्रम लीएँ अनुभाग बध हो है। जातै इहा समय-समय विशुद्ध सक्लेशकी अनतगुणी हानि वृद्धि हो है। यातैं उपशमश्रेणी चढनेसे उतरनेविषै विपरीतपना कह्या है। बहुरि स्थितिबध है सो तिस प्रथम समयतै लगाय अतर्मुहूर्त पर्यंत समान ही है। बहुरि अतर्मुहूर्त अतर्मुहूर्तविषै आरोहकके स्थिति-बधतै यथा ठिकाणै अवरोहककैं दूणा स्थितिबध सूक्ष्मसाम्परायका अतसमय पर्यंत जानना। चढतै जिस ठिकाने जो स्थितिबध होता था तातै उतरतै उस ठिकानै आय दूणा स्थितिबध हो है। जैसैं स्थितिबधापसरणकरि चढतैं स्थितिबध घटाइ एक-एक अतर्मुहूर्तविषै समान बध करै था तैसै इहाँ स्थितिबधोत्सरणकरि स्थितिबध बधाइ एक-एक अतर्मुहूर्तविषैं समान बध करै है। बहुरि अवरोहक सूक्ष्मसाम्परायका प्रथम समयविषै उदय आया जे निषेक कृष्टि पाइए है तिनकौ पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग दीजिए तहाँ बहुभागमात्र बीचिकी कृष्टि उदय आवै है। अर अवशेष एक भागकौं पल्यका असख्यातवाँ भागकी सहनानी पाँचका अक ताका भाग दोए तहाँ दोय भागमात्र तो आदि कृष्टितै लगाय जे नीचेकी कृष्टि हैं ते अनुदयरूप हैं अर तीन भागमात्र अत कृष्टितै लगाय जे ऊपरिकी कृष्टि हैं ते अनुदयरूप कृष्टि कही। ते अपने स्वरूपकौ छोडि जे आदि कृष्टितै लगाय नीचली कृष्टि हैं ते तो अनतगुणा अनुभागरूप परिणमि मध्यम कृष्टिरूप होइ उदय आवै हैं। अर अत कृष्टितैं लगाय जे ऊपरिकी कृष्टि है ते अनतवे भागि अनुभागरूप परिणमि मध्यम कृष्टिरूप होइ उदय आवैं है। अक सदृष्टिकरि जैसैं उदय आया निषेकविषै कृष्टि हजार तिनकौ पाँचका भाग दीए बहुभागमात्र आठसै वीचिकी कृष्टि तौ उदयरूप जाननी। अवशेष एक भाग दोयसै ताकौ पाँचका भाग देइ तहाँ एक भाग जुदा राखि अवशेषके दोय भागकरि तहाँ एकभागमात्र असी कृष्टि तौ जघन्य कृष्टितैं लगाय नीचेकी कृष्टि अनुदयरूप है ते अनुभाग वधनेतैं मध्यम कृष्टिरूप होइ परिणमि उदय हो है। बहुरि एक भागविषै जुदा राख्या भाग मिलाएँ एकसौ वीस कृष्टि भईं ते अत कृष्टितै लगाय ऊपरिकी कृष्टि अनुदयरूप हैं ते अनुभाग घटनेतैं मध्यम कृष्टिरूप होइ उदय आवै हैं ऐसा अर्थ जानना।

बहुरि दूसरा समयविषै जे आदि कृष्टि पहले समय उदयरूप न थी तिनकौं पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग दीएँ एक भागमात्र नवीन कृष्टि अनुदयरूप करी अर अतकी कृष्टि जे पहले समय उदयरूप न थी तिनकौं पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग दीएँ एक भागमात्र कृष्टि-

निकौ नवीन उदयरूप करी। इहाँ उदयरूप करी कृष्टिनिका प्रमाण विषैं अणुदयरूप करी कृष्टि-निका प्रमाण घटाए अवशेष जो प्रमाण रहै तितना प्रमाणकरि प्रथम समयसबधी उदय कृष्टिनितै अधिक दूसरा समयविषैं उदयकृष्टि हो है। अकसदृष्टिकरि जैसैं पहले समय उदयकृष्टि आठसै थी इहाँ द्वितीय समयविषै पहलैं उदय ऊपरिकी एकसौ बीस कृष्टि अनुदयरूप थी तिनकौं पाँचका भाग दीएँ चौईस पाए सो इतनी तौ ऊपरिकी कृष्टि नवीन उदय भई अर जे नीचैकी कृष्टि ऐसी अनुदयरूप थी तिनकौ पाँचका भाग दीएँ सोलह पाए, सो इतनी कृष्टि इहाँ नवीन उदयरूप न हो हैं ऐसैं चौबीसमे सोलह घटाए आठ रहे सो इतनी कृष्टि बधनेतैं द्वितीय समयविषै आठसै आठ कृष्टि उदय हो हैं। ऐसैं ही यथार्थ कथन समझना। इहाँ बहु अनुभागयुक्त ऊपरिकी कृष्टिके उदय होनेतैं अर स्तोक अनुभागयुक्त नीचेकी कृष्टि न उदय होनेतैं प्रथम समयतैं द्वितीय समयविषै अनुभागका बधना हो है ऐसा अर्थ जानना। ऐसै ही तृतीयादि अत समय पर्यत समयनिविषै विशेषकरि अधिक कृष्टि उदय हो है। याहीतैं समय-समय प्रति कृष्टिनिका अनतगुणा अनुभागका उदय है। ऐसैं सूक्ष्मसाम्परायका काल व्यतीत भया ॥३१४॥

विशेष—जो जीव उपशान्तकषाय गुणस्थानसे च्युत होकर सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानको प्राप्त होता है उसके सक्लेशमे वृद्धि होनेके कारण अप्रशस्त पाँच ज्ञानावरणादि कर्मोका प्रथमादि समयोसे द्वितीयादि समयोमे अनन्तगुणा अनुभागबन्ध होता है और प्रशस्त कर्म सातावेदनीय और उच्चगोत्रका अनन्तगुणा हीन अनुभागबन्ध होता है। यह व्यवस्था सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समय तक जाननी चाहिये। तथा इस गुणस्थानके कालमे सख्यात हजार स्थितिबन्ध होते हैं। चढते समयसे उतरते समय प्रत्येक स्थितिबन्धकी अपेक्षा यहाँ दूना स्थितिबन्ध जानना चाहिये। इन विशेषताओके अतिरिक्त यहाँ ये आवश्यक होते है—

(१) लोभवेदक काल अर्थात् सूक्ष्म और बादर लोभवेदक कालके प्रथम त्रिभागमे अर्थात् सूक्ष्मसाम्पराय कालके भीतर सभी कृष्टियोमेसे असख्यात बहुभाग प्रमाण कृष्टियोकी उदीरणा होती है। पहले कृष्टिकरणके कालमे जो कृष्टियाँ की गईं थी उनमेसे अधस्तन और उपरिम असख्यातवें भागको छोडकर मध्यम कृष्टिरूपसे असख्यातवाँ भाग तब उदीरित होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

(२) दूसरी विशेषता यह है कि उतरते ससय सूक्ष्मसाम्पराय जीव प्रथम समयमे स्तोक कृष्टियोका वेदन करता है। दूसरे समयमे असख्यातवें भाग अधिक कृष्टियोका वेदन करता है ऐसा सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानके अन्तिम समय तक जानना चाहिये।

(३) खुलासा यह है कि सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानमे चढते समय विशुद्धिके कारण जैसे विशेष हानिरूपसे कृष्टियोका वेदन करता है वैसे ही उतरते समय सक्लेशके कारण असख्यात भागवृद्धिरूपसे कृष्टियोका वेदन करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यह सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समय तक जानना चाहिये। विशेष खुलासा दोनो टीकाओसे कर लेना चाहिये।

अथावरोहकस्यानिवृत्तिकरणबादरसाम्पराये गुणस्थाने क्रियाविशेष प्रदर्शयन् गाथाद्वयमाह—

बादरपढमे किट्टी मोहस्स य आणुपुव्विसकमणं।
णट्ठं ण च उच्छिट्ठ फड्ढयलोह तु वेदयदि[1] ॥३१५॥

१ किट्टीवेदगद्धाए गदाए पढमसमयबादरसापराइयो जादो। ताहे चेव सव्वमोहणीयस्स अणाणु-

बादरप्रथमे कृष्टि मोहस्य च आनुपूर्विसक्रमणम्।
नष्टं न च उच्छिष्ट स्पर्धकलोभ तु वेदयति ॥३१५॥

स० टी०—अनिवृत्तिकरणस्य प्रथमममये सूक्ष्मकृष्टय उच्छिष्टावलिमात्रनिपेकान् वर्जयित्वा मर्वा स्वरूपेण विनष्टा सूक्ष्मकृष्टिशक्तितोऽनन्तगुणशक्तियुक्तस्पर्धकस्वरूपेणैकस्मिन् ममये परिणमिता इत्यर्थ । उच्छिष्टावलिमात्रनिपेककृष्टयस्तु प्रतिसमयमेकैकनिषेकप्रमाणेन उदयमानस्पर्धकनिपेकपु स्थितोक्तसक्रमेण तद्रूपतया परिणम्योदेष्यन्ति । तस्मिन्नेव प्रथमसमये मोहस्यानुपूर्विसक्रमश्च नष्ट । अय तु विशेप –

अप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानलोभद्वयस्य सज्वलनलोभे बध्यमाने यद्यपि सक्रम प्रारब्धस्तथापि तदविवक्षया सज्वलनलोभस्य बध्यमानसजातीयकषायान्तरासम्भवात् आनुपूर्वीसक्रमो व्यक्त्यपेक्षया विनष्ट । शक्त्यपेक्षया सज्वलनलोभद्रव्यस्याप्यनानुपूर्व्या परप्रकृतिसक्रमपरिणाम सञ्जात । सूक्ष्मसाम्पराये तु मोहस्य बन्धाभावात् सक्रमो न सम्भवत्येवेति । तथैव स्पर्धकगत वादरसज्वलनलोभमुदयमानमनुभवन् जीवो बादरसाम्परायानिवृत्तिकरणप्रथमसमये सज्वलनलोभद्रव्यमपकृष्य उदयसमयादारम्य वादरलोभवेदककालसाधिकद्वित्रिभागमात्रे आवल्यभ्यधिके २ ७ २/३ (॥) अवस्थितायामे प्रतिनिपेकमसख्यातगुणितक्रमेण निक्षिपति । प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानलोभद्वयद्रव्यमपकृष्य उदयावलिबाह्ये पूर्वोक्तायामे असख्यातगुणितक्रमेण निक्षिपति । द्वितीयादिसमयेषु पुनरसख्येयगुणहीन द्रव्यमपकृष्यावस्थितायामे गुणश्रेणि करोति ॥३१५॥

स० च०—अवरोहक अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयविषै सूक्ष्मकृष्टि हैं ते उच्छिष्टावलीमात्र निषेक विना अन्य सर्वही स्वरूप करि नष्ट भई सूक्ष्मकृष्टिकी अनुभागशक्तितैं अनतगुणी शक्तियुक्त जो स्पर्धक तिन स्वरूप होइ एकही समयविषै परिणई । बहुरि कृष्टिके उच्छिष्टावलीमात्र निषेक रहे ते समय-समय प्रति एक-एक निषेककरि उदयमान जे स्पर्धकके निषेक तिनविषै थिउक्क सक्रमणकरि तद्रूप परिणमि उदय होसी । बहुरि तिसही प्रथम समयविषै मोहका आनुपूर्वी सक्रम भी नष्ट भया । इतना विशेष—जो अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान लोभका वध्यमान जो सज्वलन लोभ तिसहीविषै सक्रम होनेका प्रारभ भया, तथापि याविषै आनुपूर्वी सक्रमकी विवक्षा नाही । बहुरि सज्वलन लोभकै बध्यमान और कोई स्वजातीय प्रकृति नाही तातैं व्यक्ति अपेक्षा आनुपूर्वी सक्रम नष्ट भया । शक्ति अपेक्षा सज्वलन लोभके आनुपूर्वीकरि अन्य प्रकृतिविषै सक्रम होनेका परिणाम भया है । बहुरि सूक्ष्मसाम्परायविषैं मोहके बधका अभावतैं सक्रम सभवै नाही । बहुरि तथैव स्पर्धकरूप जो बादर लोभ उदय आया ताकौ भोगवता जो अनिवृत्तिकरण वादरसाम्पराय ताका प्रथम समयविषै सज्वलन लोभका द्रव्यकौ अपकर्षण करि उदयरूप समयतै लगाय बादर लोभवेदक कालका साधिक दोय तीसरे भाग आवलीकरि अधिक प्रमाणमात्र जो गुणश्रेणि आयाम तिसविषैं असख्यातगुणा क्रमलीएँ निक्षेपणकरै है । अर प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यान लोभका द्रव्यकौ उदयावलीतै बाह्य पूर्वोक्त गुणश्रेणी आयामविषैं असख्यातगुणा क्रमलीएँ निक्षेपण करै है । बहुरि अनिवृत्तिका द्वितीयादि समयनिविषै असख्यातगुणा घटता क्रमलीएँ द्रव्यकौ अपकर्षणकरि

पुव्विओ सकमो । ताहे चेव दुविहो लोहो लोहसजलणे सछुहदि । ताहे चेव फड्डयगद लोह वेदेदि । किट्टीओ सव्वाओ णट्ठाओ । णवरि जाओ उदयावलियब्भतराओ ताओ त्थिवुक्कसकमेण फड्डएसु विपच्चिहिति । ता० मु०, पृ० १८९५–१८९६ ।

अवस्थित गुणश्रेण्यायामविषै पूर्वोक्तप्रकार निक्षेपण करै है। अन्य कर्मनिकी गलितावशेष गुण-श्रेणी पूर्वे कही है सोई जाननी ॥३१५॥

ओदरबादरपढमे-लोहस्सतोमुहुत्तियो बधो ।
दुदिणतो घादितिय चउवस्सतो अघादितियं[1] ॥३१६॥

अवतरबादरप्रथमे लोभस्यान्तर्मुहूर्तको बन्ध ।
द्विदिनान्तो घातित्रिके चतुर्वर्षान्तोऽघातित्रये ॥३१६॥

स० टी०—अवतारकबादरसाम्परायानिवृत्तिकरणप्रथमसमये सज्वलनलोभस्य स्थितिबन्धोऽन्तर्मुहूर्त-मात्र, स चारोहकतच्चरमसमयस्थितिबन्धाद् द्विगुण । ज्ञानदर्शनावरणान्तरायाणा किञ्चिन्न्यूनदिनद्वयमात्र । नामगोत्रयो किञ्चिन्न्यूनचतुर्वर्षमात्र । वेदनीयस्य तीसियप्रतिभागत्वाद् द्वचर्धगुणितकिञ्चिन्न्यूनचतुर्वर्ष-मात्र । ततोऽन्तर्मुहूर्तमात्रे समबन्धकाले गते पुन सज्वलनलोभस्थितिबन्धो विशेषाधिक २ ♀। २ घाति-त्रयस्य दिनपृथक्त्व दि ७ अघातित्रयस्य सख्यातसहस्रवर्षमात्र १ ० ० ० ♀ एव सख्यातसहस्रेषु स्थिति-
८

बन्धेषु आकृष्योत्कृष्य सवृत्तेषु यदा लोभवेदककाल २ ♀ ३ (?) द्वितीयत्रिभागस्य २ ♀ १ सख्येयभागो
३ ३

गत २ ♀ १ तदा सज्वलनलोभस्य स्थितिबन्धो मुहूर्तमात्रपृथक्त्व । मु ७। घातित्रयस्य वर्षसहस्रपृथक्त्व
♀ ३ ८

व १ ० ० ० ७ अघातित्रयस्य सख्येयसहस्रवर्षमात्र व १ ० ० ० ♀ ♀ एव स्थितिबन्धसहस्रेषु गतेषु लोभ-
८

वेदककाल समाप्तो भवति। अय विशेष –

आरोहकस्य लोभवेदककालादवरोहकस्य लोभवेदककाल किञ्चिन्न्यून इति ज्ञातव्यम्। एव सर्वत्र मायावेदकादिकालेषु अपि आरोहककालादवरोहकस्य किञ्चिन्न्यूनता द्रष्टव्या ॥३१६॥

स० च०—उतरनेवाला बादरसाम्पराय अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयविषै सज्वलन लोभका स्थितिबंध अतर्मुहूर्तमात्र है सो चढनेवाला अनिवृत्तिकरणका अत समयसबधी स्थिति-बधतै दूणा जानना। बहुरि तीन घातियानिका किछू घाटि दोय दिन, नाम गोत्रका किछू घाटि च्यारि दिन, वेदनीयका यातै ड्योढ गुणा स्थितिबध है। बहुरि अतर्मुहूर्त पर्यंत ऐसा समान बध भया पीछै सज्वलन लोभका पूर्वतै किछू अधिक तीन घातियानिका पृथक्त्व दिनमात्र तीन अघाति-यानिका सख्यात हजार वर्षमात्र स्थितिबध भया। बहुरि ऐसैं वृद्धिरूप सख्यात हजार स्थितिबध भएँ लोभ वेदक कालका दूसरा त्रिभागका सख्यातवाँ भाग व्यतीत भया तब सज्वलन लोभका पृथक्त्व मुहूर्त, तीन घातियानिका पृथक्त्व हजार वर्ष, तीन अघातियानिका सख्यात हजारवर्ष प्रमाण स्थितिबध हो है। बहुरि हजारो स्थितिबध गएँ लोभ वेदकका काल समाप्त हो है। आरो-हकके लोभ वेदकका कालतै अवरोहकका लोभ वेदक काल किंचित् न्यून है। ऐसैं ही मायावेदक

---

१ पढमसमयबादरसापराइयस्स लोभसजलणस्स ट्ठिदिबधो अतोमुहुत्तो, तिण्ह घादिकम्माण ट्ठिदिबधो अहोरत्ताणि देसूणाणि, वेदणीय-णामा-गोदाण ट्ठिदिबधो चत्तारि वस्साणि देसूणाणि। ता० मु०, पृ० १८९७।

कालादिकनिविषै किंचित् न्यूनता जाननी । जिस कषायका जेता कालविषै उदयका भोगना होइ तिस प्रमाण ताका वेदक काल जानना ॥३१६॥

अथावरोहकानिवृत्तिकरणबादरसाम्परायस्य मायावेदककाले क्रियाविशेषप्रदर्शनार्थं गाथाद्वयमाह—

ओदरमायापढमे मायातिण्हं च लोभतिण्हं च ।
ओदरमायावेदगकालादहियो दु गुणसेढी[1] ॥३१७॥

अवतरमायाप्रथमे मायात्रयाणां च लोभत्रयाणां च ।
अवतरमायावेदककालादधिका तु गुणश्रेणी ॥३१७॥

स० टी०—लोभवेदककालसमाप्त्यनन्तर मायावेदककालप्रथमसमये अवतारकानिवृत्तिकरण , अप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसज्वलनमायात्रयद्रव्य तत्तद्द्वितीयस्थितेरपकृष्य उदयवतो मायासज्वलनस्य उदयसमयादारभ्यावतारकमायावेदककालादावल्यधिके २ ७ (ऊपर १–) अवस्थितायामे गुणश्रेणिं करोति । उदयरहितस्य मायाद्वयस्य उदयावलिबाह्ये तावन्मात्रायामे २ ७ (ऊपर १–) अवस्थितगुणश्रेणिं करोति । तथा उदयरहिस्य लोभत्रयस्यापि द्वितीयस्थितिद्रव्यमपकृष्य उदयावलिबाह्ये सज्वलनमायावेदककाल २ ७ मात्रे अवस्थितायामे गुणश्रेणिं करोति । ज्ञानावरणादिशेषकर्मणा प्रागुक्तायामे गलितावशेषगुणश्रेणिं करोति । तस्मिन्नेव मायावेदकप्रथमसमये लोभत्रयद्रव्य मायाद्वयद्रव्य च मायासज्वलने सक्रामति तस्य बन्धसम्भवात् । तथा द्विविधमायाद्रव्य त्रिविधलोभद्रव्य च लोभसज्वलने सक्रामति, तस्यापि बन्धसम्भवात् । बन्धरहितेषु न सक्रामनि अनानुपूर्वीसक्रमप्रतिज्ञानादेवविधसस्थुलसक्रमणसम्भव ॥३१७॥

मायावेदकके क्रियाविशेषका निर्देश—

स० च०—लोभ वेदक कालके अनतरि माया वेदक कालका प्रथम समयविषै उतरनेवाला अनिवृत्तिकरण है सो अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान सज्वलन मायाके द्रव्यकौ अपनी अपनी द्वितीय स्थितिविषैतैं अपकर्षणकरि उदयरूप जो सज्वलन नाम माया ताके द्रव्यकौ तौ उदयावलीका प्रथम समयतैं लगाय अर उदय रहित दोय मायाके द्रव्यकौ उदयावलीतैं बाह्य प्रथम समयतैं लगाय आवलीकरि अधिक मायावेदक कालप्रमाण अवस्थिति आयामविषै गुणश्रेणि करै है। बहुरि उदयरहित तीन लोभ तिनका भी द्वितीय स्थितिके द्रव्यकौ अपकर्षण करि उदयावलीतैं बाह्य साधिक मायावेदक कालमात्र अवस्थिति आयामविषै गुणश्रेणि करै है। अर अवशेष छह कर्मनिकी पूर्वोक्त गलितावशेष आयामविषै गुणश्रेणि करै है। बहुरि तिस ही माया वेदककालका प्रथम समयविषै तीन लोभका द्रव्य दोय मायाका द्रव्य है सो सज्वलन मायाविषै सक्रमण करै है। अथवा दोय मायाका द्रव्य तीन लोभका द्रव्य है सो सज्वलन लोभविषै सक्रमण करै है जातैं इहाँ

---

१ से काले माय तिविहमोकड्डियूण मायासजलणस्स उदयादिगुणसेढी कदा, दुविहाए मायाए आवलियबाहिरा गुणसेढी कदा । पढमसमयवेदगस्स गुणसेढिणिक्खेवो तिविहस्स लोहस्स तिविहाए मायाए च तुल्लो मायावेदगद्धादो विसेसाहिओ । सव्वमायावेदगद्धाए तत्तियो तत्तियो चेव णिक्खेवो । सेसाण कम्माण जो पुण पुव्विल्लो णिक्खेवो तस्स सेसे सेसे चेव णिक्खवदि । मायावेदगस्स लोहो तिविहो माया दुविहा मायासजलणे सकमदि, माया तिविहा लोभो चउव्विहो लोभसजलणे सकमदि । ता० मु०, पृ० १८९८–१८९९ ।

अवस्थित गुणश्रेण्यायामविषै पूर्वोक्तप्रकार निक्षेपण करै है। अन्य कर्मनिकी गलितावशेष गुणश्रेणी पूर्वे कही है सोई जाननी ॥३१५॥

ओदरवादरपढमे लोहस्सतोमुहुत्तियो बंधो।
दुदिणतो घादितिय चउवस्सतो अघादितिय ॥३१६॥

अवतरबादरप्रथमे लोभस्यान्तर्मुहूर्तको बन्ध।
द्विदिनान्तो घातित्रिके चतुर्वर्षान्तोऽघातित्रये ॥३१६॥

स० टी०—अवतारकबादरसाम्परायानिवृत्तिकरणप्रथमसमये सज्वलनलोभस्य स्थितिबन्धोऽन्तर्मुहूर्तमात्र, स चारोहकतच्चरमसमयस्थितिबन्धाद् द्विगुण। ज्ञानदर्शनावरणान्तरायाणा किञ्चिन्न्यूनदिनद्वयमात्र। नामगोत्रयो किञ्चिन्न्यूनचतुर्वर्षमात्र। वेदनीयस्य तीसियप्रतिभागत्वाद् द्व्यर्धगुणितकिञ्चिन्न्यूनचतुर्वर्षमात्र। ततोऽन्तर्मुहूर्तमात्रे समबन्धकाले गते पुन सज्वलनलोभस्थितिबन्धो विशेषाधिक २ ११। २ घातित्रयस्य दिनपृथक्त्व दि ७/८ अघातित्रयस्य सख्यातसहस्रवर्षमात्र १००० ११ एव सख्यातसहस्रेषु स्थितिबन्धेषु आकृष्योत्कृष्य सवृत्तेपु यदा लोभवेदककाल २ ११ ३/३ (?) द्वितीयत्रिभागस्य २ ११ १/३ सख्येयभागो गत २ ११ १/११ ३ तदा सज्वलनलोभस्य स्थितिबन्धो मुहूर्तमात्रपृथक्त्व। मु ७। घातित्रयस्य वर्षसहस्रपृथक्त्व व १००० ७/८ अघातित्रयस्य सख्येयसहस्रवर्षमात्र व १००० ११ ११ एव स्थितिबन्धसहस्रेपु गतेषु लोभवेदककाल समाप्तो भवति। अय विशेष—

आरोहकस्य लोभवेदककालादवरोहकस्य लोभवेदककाल किञ्चिन्न्यून इति ज्ञातव्यम्। एव सर्वत्र मायावेदकादिकालेपु अपि आरोहककालादवरोहकस्य किञ्चिन्न्यूनता द्रष्टव्या ॥३१६॥

स० च०—उतरनेवाला बादरसाम्पराय अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयविषै सज्वलन लोभका स्थितिबध अतर्मुहूर्तमात्र है सो चढनेवाला अनिवृत्तिकरणका अत समयसबधी स्थितिबधतै दूणा जानना। बहुरि तीन घातियानिका किछू घाटि दोय दिन, नाम गोत्रका किछू घाटि च्यारि दिन, वेदनीयका यातै ड्योढ गुणा स्थितिबध है। बहुरि अतर्मुहूर्त पर्यंत ऐसा समान बध भया पीछै सज्वलन लोभका पूर्वतै किछू अधिक तीन घातियानिका पृथक्त्व दिनमात्र तीन अघातियानिका सख्यात हजार वर्षमात्र स्थितिबध भया। बहुरि ऐसैं वृद्धिरूप सख्यात हजार स्थितिबध भएँ लोभ वेदक कालका दूसरा त्रिभागका सख्यातवाँ भाग व्यतीत भया तब सज्वलन लोभका पृथक्त्व मुहूर्त, तीन घातियानिका पृथक्त्व हजार वर्ष, तीन अघातियानिका सख्यात हजारवर्ष प्रमाण स्थितिबध हो है। बहुरि हजारो स्थितिबध गएँ लोभ वेदकका काल समाप्त हो है। आरोहकके लोभ वेदकका कालतैं अवरोहकका लोभ वेदक काल किंचित् न्यून है। ऐसैं ही मायावेदक

---

१ पढमसमयबादरसापराइयस्स लोभसजलणस्स ट्ठिदिबधो अतोमुहुत्तो, तिण्ह घादिकम्माण ट्ठिदिबधो अहोरत्ताणि देसूणाणि, वेदणीय-णामा-गोदाण ट्ठिदिबधो चत्तारि वस्साणि देसूणाणि। ता० मु०, पृ० १८९७।

कालादिकनिविषै किंचित् न्यूनता जाननी। जिस कषायका जेता कालविषै उदयका भोगना होइ तिस प्रमाण ताका वेदक काल जानना ॥३१६॥

अथावरोहकानिवृत्तिकरणबादरसाम्परायस्य मायावेदककाले क्रियाविशेषप्रदर्शनार्थं गाथाद्वयमाह—

ओदरमायापढमे मायातिण्हं च लोभतिण्हं च।
ओदरमायावेदगकालादहियो दु गुणसेढी ॥३१७॥

अवतरमायाप्रथमे मायात्रयाणां च लोभत्रयाणां च।
अवतरमायावेदककालादधिका तु गुणश्रेणी ॥३१७॥

स० टी०—लोभवेदककालसमाप्त्यनन्तरं मायावेदककालप्रथमसमये अवतारकानिवृत्तिकरण, अप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसज्वलनमायात्रयद्रव्यं तत्तद्द्वितीयस्थितेरपकृष्य उदयवतो मायासज्वलनस्य उदयसमयादारभ्यावतारकमायावेदककालादावल्यधिके २ ७ (१–) अवस्थितायामे गुणश्रेणिं करोति। उदयरहितस्य मायाद्वयस्य उदयावलिबाह्ये तावन्मात्रायामे २ ७ (१–) अवस्थितगुणश्रेणिं करोति। तथा उदयरहितस्य लोभत्रयस्यापि द्वितीयस्थितिद्रव्यमपकृष्य उदयावलिबाह्ये सज्वलनमायावेदककाल २ ७ मात्रे अवस्थितायामे गुणश्रेणिं करोति। ज्ञानावरणादिशेषकर्मणां प्रागुक्तायामे गलितावशेषगुणश्रेणिं करोति। तस्मिन्नेव मायावेदकप्रथमसमये लोभत्रयद्रव्यं मायाद्वयद्रव्यं च मायासज्वलने सङ्क्रामति तस्य बन्धसम्भवात्। तथा द्विविधमायाद्रव्यं त्रिविधलोभद्रव्यं च लोभसज्वलने सङ्क्रामति, तस्यापि बन्धसम्भवात्। बन्धरहितेषु न सङ्क्रामति अनानुपूर्वीसङ्क्रमप्रतिज्ञानादेवविषसस्थुलसङ्क्रमणसम्भव ॥३१७॥

मायावेदकके क्रियाविशेषका निर्देश—

स० च०—लोभ वेदक कालके अनतरि माया वेदक कालका प्रथम समयविषै उतरनेवाला अनिवृत्तिकरण है सो अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान सज्वलन मायाके द्रव्यकौ अपनी अपनी द्वितीय स्थितिविषैतै अपकर्षणकरि उदयरूप जो सज्वलन नाम माया ताके द्रव्यकौ तौ उदयावलीका प्रथम समयतै लगाय अर उदय रहित दोय मायाके द्रव्यकौ उदयावलीतै बाह्य प्रथम समयतै लगाय आवलीकरि अधिक मायावेदक कालप्रमाण अवस्थिति आयामविषै गुणश्रेणि करै है। बहुरि उदयरहित तीन लोभ तिनका भी द्वितीय स्थितिके द्रव्यकौ अपकर्षण करि उदयावलीतै बाह्य साधिक मायावेदक कालमात्र अवस्थिति आयामविषै गुणश्रेणि करै है। अर अवशेष छह कर्मनिकी पूर्वोक्त गलितावशेष आयामविषै गुणश्रेणि करै है। बहुरि तिस ही माया वेदककालका प्रथम समयविषै तीन लोभका द्रव्य दोय मायाका द्रव्य है सो सज्वलन मायाविषै संक्रमण करै है। अथवा दोय मायाका द्रव्य तीन लोभका द्रव्य है सो सज्वलन लोभविषै संक्रमण करै है जातै इहाँ

१ से काले माय तिविहमोकड्डियूण मायासजलणस्स उदयादिगुणसेढी कदा, दुविहाए मायाए आवलियबाहिरा गुणसेढी कदा। पढमसमयवेदगस्स गुणसेढिणिक्खेवो तिविहस्स लोहस्स तिविहाए मायाए च तुल्लो मायावेदगद्धादो विसेसाहिओ। सव्वमायावेदगद्धाए तत्तियो तत्तियो चेव णिक्खेवो। सेसाण कम्माण जो पुण पुव्विल्लो णिक्खेवो तस्स सेसे सेसे चेव णिक्खिवदि। मायावेदगस्स लोहो तिविहो माया दुविहा मायासजलणे सकमदि, माया तिविहा लोभो चउव्विहो लोभसजलणे सकमदि। ता० मु०, पृ० १८९८–१८९९।

सज्वलन लोभ वा मायाहीका बध है। अर बधविषै ही सक्रमण हो है। आनुपूर्वी सक्रमणके अभावतै ऐसै बध सभवै है ॥३१७॥

ओदरमायापढमे मायालोभे दुमासठिदिबंधो ।
छण्ह पुण वस्साणं सखेज्जसहस्सवस्साणि[1] ॥३१८॥

अवतरमायाप्रथमे मायालोभे द्विमासस्थितिबन्ध ।
षण्णा पुन वर्षाणा सख्येयसहस्रवर्षाणि ॥३१८॥

स० टी०—अवतारकमायावेदकप्रथमसमये सज्वलनमायालोभयो स्थितिबन्धो द्विमासमात्र । घातित्रयस्य सख्यातसहस्रवर्षमात्र, अघातित्रयस्य तत सख्येयगुण । एव स्थितिबन्धसहस्रेषु गतेषु मायावेदककाल समाप्तो भवति ॥३१८॥

स० च०—उतरनेवाला मायावेदक कालका प्रथम समयविषै सज्वलन माया लोभका दोय मास, तीन घातियानिका सख्यात हजार वर्ष तीन अघातियानिका तातै सख्यातगुणा स्थितिबध हो है। ऐसै सख्यात हजार स्थितिबन्ध भए माया वेदककाल समाप्त भया ॥३१८॥

अथ मानवेदकस्य क्रियाविशेष प्ररूपयन् गाथाद्वयमाह—

ओदरगमाणपढमे तेत्तियमाणादियाण पयडीण ।
ओदरगमाणवेदगकालादहियं दु गुणसेढी[2] ॥३१९॥

अवतरकमानप्रथमे तावन्मानादिकाना प्रकृतीनाम् ।
अवतरकमानवेदककालादधिका तु गुणश्रेणी ॥३१९॥

स० टी०— अयमवतारकानिवृत्तिकरणे मायावेदककालपरिसमाप्त्यनन्तरसमये सज्वलनमानद्रव्यमपकृष्य उदयसमयादारभ्य मानवेदककालावलिकाभ्यधिके अवस्थितायामे गुणश्रेणिं करोति । मध्यममानद्वयस्य मायात्रयस्य लोभत्रयस्य च द्रव्यमपकृष्य उदयावलिबाह्य तावन्मात्रायामे अवस्थितगुणश्रेणिं करोति । तस्मिन्नेव मानवेदकप्रथमसमये नवविधकषायद्रव्यमनानुपूर्व्या बध्यमानलोभमायामानेषु सक्रामति ॥३१९॥

स० च०—ताके अनतरि मान वेदककालका प्रथम समयविषै सज्वलन मानका द्रव्यकौं अपकर्षणकरि उदयावलीका प्रथम समयतैं लगाय अर दोय मान तीन माया तीन लोभनिके द्रव्यकौं अपकर्षणकरि उदयावलीतैं बाह्य प्रथम समयतै लगाय आवली अधिक मान वेदक

---

1 पढमसमयमायावेदगस्स दोण्ह सजलणाण दुमासट्ठिदिगो बधो, सेसाण कम्माण ट्ठिदिबधो सखेज्जवस्ससहस्साणि । ता० मु०, पृ० १८९९ ।

2 तदो से काले तिविह माणमोकड्डिदूण माणसजलणस्स उदयादिगुणसेढि करेदि, दुविहस्स माणस्स आवलियबाहिरे गुणसेढि करेदि, णवविहस्स वि कसायस्स गुणसेढिणिक्खेवो जो तस्स पडिवदमाणगस्स माणवेदगद्धा तत्तो विसेसाहिओ णिक्खेवो, मोहणीयवज्जाण कम्माण जो पढमसमयसुहुमसापराइयेण णिक्खेवो णिक्खित्तो तस्स णिक्खेवस्स सेसे णिक्खिवदि । पढमसमयमाणवेदगस्स णवविहो वि कसायो सकमदि । ता० मु०, पृ० १९०० ।

कालका प्रमाण अवस्थित आयामविषै गुणश्रेणि करै है। औरनिकी गलितावशेष गुणश्रेणि आयाम है ही। बहुरि तिस ही समयविषै अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान सज्वलन लोभ माया मानरूप नव कषायनिका द्रव्य है सो इहाँ बध्यमान सज्वलन मान माया लोभनिविषै आनुपूर्वी रहित जहाँ तहाँ सक्रमण करै है ॥३१९॥

ओदरगमाणपढमे चउमासा माणपहुदिठिदिबंधो ।
छण्ह पुण वस्साण सखेज्जसहस्समेत्ताणि[1] ॥३२०॥

अवतरकमानप्रथमे चतुर्मासा मानप्रभृतिस्थितिबन्ध ।
षण्णा पुन वर्षाणा सख्येयसहस्रमात्राणि ॥३२०॥

स० टी०—तस्मिन्नेव मानवेदकप्रथमसमये सज्वलनमानमायालोभाना स्थितिबन्धश्चतुर्मासमात्र । घातित्रयस्य सख्यातसहस्रवर्षमात्र । अघातित्रयस्य तत सख्येयगुण । एव स्थितिबन्धसहस्रेषु गतेषु मानवेदककाल समाप्तो भवति ॥३२०॥

स० च०—तिसही उतरनेवाले मान वेदक कालका प्रथम समयविषैं सज्वलन मान माया लोभनिका चारि मास तीन घातियानिका सख्यात हजार वर्ष तीन अघातियानिका तातैं सख्यातगुणा स्थितिबन्ध हो है। ऐसैं सख्यात हजार स्थितिबन्ध भए मानवेदकका काल समाप्त भया ॥३२०॥

अथानिवृत्तिकरणबादरसाम्परायस्थ सज्वलनक्रोधे प्रतिपातप्ररूपणार्थं गाथाद्वयमाह—

ओदरगकोहपढमे छक्कम्मसमाणया हु गुणसेढी ।
बादरकसायाण पुण एत्तो गलिदावसेस तु[2] ॥३२१॥

अवतरकक्रोधप्रथमे षट्कर्मसमानिका हि गुणश्रेणी ।
बादरकषायाणा पुन इत गलितावशेष तु ॥३२१॥

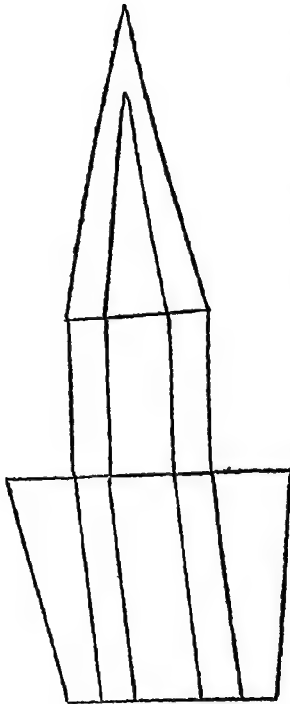
स० टी०—सज्वलनमानवेदककालसमाप्त्यनन्तर सोऽयमवतारकोऽनिवृत्तिकरण सज्वलनक्रोधोदयप्रथमसमये ज्ञानावरणादिषट्कर्मणा प्रागुपक्रान्तेनावतारकानिवृत्त्यपूर्वकरणकालद्वयाद्विशेषाधिकगलितावशेषगुणश्रेण्यायामेन समाने आयामे द्वादशकषायाणा गुणश्रेणि गलितावशेषा करोति। इत पूर्वं मोहनीयस्यावस्थितायामा गुणश्रेणी कृता। इदानी पुनर्गलितावशेषायामा प्रारब्धेत्यय विशेष । यस्य कषायस्योदयेनो-

---

१ ताधे तिण्ह सजलणाण ट्ठिदिबधो चत्तारि मासा पडिपुण्णा, सेसाण कम्माण ट्ठिदिबधो सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। ता० मु०, पृ० १९००

२ से काले तिविह कोहमोकड्डियूण कोहसजलणस्स उदयादिगुणसेढि करेदि। एण्हि गुणसेढिणिक्खेवो केत्तिओ कायव्वो। पढमसमयकोधवेदगस्स बारसण्ह पि कसायाण जो गुणसेढिणिक्खेवो सो सेसाण कम्माण गुणसेढिणिक्खेवेण सरिसो होदि। जहा मोहणीयवज्जाण कम्माण सेसे सेसे गुणसेढि णिक्खिवदि तहा एत्तो पाए बारसण्ह कसायाण सेसे गुणसेढी णिक्खिविदव्वा। पढमसमयकोहवेदगस्स बारसविहस्स वि कमायस्स सकमो होदि। ता० मु०, पृ० १९०१–१९०२।

पशमश्रेणीमारूढो जीव पुनरवतरणे तस्य कषायस्य उदयसमयादारभ्य गलितावशेषगुणश्रेणिरन्तरापूर च क्रियते। तत्रोदयवत सज्वलनक्रोधस्य द्रव्यमपकृष्य स a १२– पल्यासख्यातभागेन खण्डयित्वा तदेक-
७।८।ओ
भाग स a १२– उदयादिगुणश्रेण्यायामे निक्षिपति। पुनर्द्वितीयस्थितौ प्रथमनिषेकद्रव्य स a १२– इद,
७।८।ओ प
a
। ७।८।१२
पदहतमुखमादिधनमित्यनेनान्तर्मुहूर्तमात्रान्तरायामेन गुणयित्वा लब्ध समपट्टिकाधन— स a १२–।२ १
।
७।८।१२
द्वितीयस्थितिप्रथमनिषेके द्विगुणगुणहान्या विभज्य द्वाभ्या गुणिते अधस्तनगुणहानिचयो भवति। सैकपदाह-
१–
तपददलचयहतमुत्तरधनमित्यानीत चयधन स a १२–।२।२ १।२ १ इद प्रागानीते समपट्टिकाधने
।
७।८।१२।१६।२
।
साधिक कुर्यात् स a।१२–।२ १ एतावद्द्रव्यमपकृष्टद्रव्यस्य पल्यासख्यातभागखण्डितबहुभागद्रव्यात् गृहीत्वा
।
७।८।१२
अद्धाणेण सव्वधणे खडिदेत्यादिविधिना विशेषहीनक्रमेणान्तरायामे निक्षिपेत्। अवशिष्टबहुभागद्रव्य
१०
स a १२– प द्वितीयस्थितौ 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यादिविधिना नानागुणहानिषु विशेषहीन-
a
७।८।ओ प
a
क्रमेण तत्तदपकृष्टनिषेकमतिस्थापनावलिमात्रेणाप्राप्य निक्षिपति। एव निक्षिप्ते गुणश्रेणिशीर्षद्रव्यादन्तरायाम-प्रथमसमयनिक्षिप्तद्रव्यमसख्यातगुणहीनम। अन्तरायामचरमसमयनिक्षिप्तद्रव्याद् द्वितीयस्थितिप्रथमसमयनिक्षिप्त-द्रव्यमसख्यातगुणहीन द्रष्टव्यम्। एवमुदयरहिताना शेषैकादशकषायाणा द्रव्यमपकृष्य उदयावलिबाह्यगुण-श्रेण्यायामे अन्तरायामे द्वितीयस्थितौ च द्रव्यत्रयनिक्षेपविधि कर्तव्य।



म ∂ १२ १६ – ८ (ऊपर: १ ०)
७ । ८ । ओ १६ प १६
० ∂ ०
०

म ∂ १२ – १६
७ । ८ । ओ । १२ । १६
०
०
स ∂ १२ – २ ९ । १६

७ । ८ । २ ९ । १६ – २ ९ १६ (ऊपर: १ ०)
० २
०

स ∂ १२ – २ ९ १६ – २ ९ (ऊपर: १ ०)

७ । ८ । २ ९ । १६ – २ ९ १६ (ऊपर: १ ०)
० २
०
स ∂ १२ – ६४
७ । ८ । ओ प ८५
० ∂
०
स ∂ । १२ – १
७ । ८ । ओ प ८५
∂

सज्वलनमानादित्रयद्रव्ये स ∂ १२– ३ । सर्वघातिमध्यमकषायाष्टकद्रव्येण तदनन्तकभागमात्रेण—
७ । ८

म ∂ १२– । ८ साधिकशेषैकादशकषायद्रव्यमित्थ भवति स ∂ १२– । ३ तस्मादपकृष्य गुणश्रेण्यादिपु
७ । ख १७ ७ । ८

निक्षिपतीत्यर्थ । सज्वलनक्रोधोदयप्रथमसमये द्वादशकषायाणा द्रव्य वध्यमानेपु सज्वलनक्रोधादिषु चतुर्षु अनानुपूर्व्या सक्रमति ॥३२१॥

सज्वलन क्रोधमे क्रियाविशेषका विचार—

स० च०—ताके अनतरि उतरनेवाला अनिवृत्तिकरण है सो सज्वलन क्रोधके उदयका प्रथम समयविषै अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान सज्वलन क्रोध मान माया लोभरूप वारह कषायनिको ज्ञानावरणादि छह् कमनिके समान गलितावशेष गुणश्रेणि करै है। याके आयामका प्रमाण उतरनेवालेका अनिवृत्तिकरण अपूर्वकरणके कालतै किछू अधिक है। इहाँतैं पहलै मोहका गुणश्रेणि आयाम अवस्थित था अव गलितावशेष प्रारभ भया। वहुरि इतना जानना—

जिस कषायके उदयकरि उपशमश्रेणी चढ्या होइ वहुरि उतरनेविषै तिस कषायका जिस समय उदय होइ तिस समयतैं लगाय सर्व मोहकी गलितावशेष गुणश्रेणी करिए है। अर

अन्तरका पूरना करिए है सो इहा क्रोधकी विवक्षा है तातैं तिसकी अपेक्षा ही कथन करिए है—

तहाँ उदयवान् जो सज्वलन क्रोध ताके द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहाँ एक भागकौ ग्रहि ताकौ पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग देइ तहाँ एक भाग तौ उदय समयतै लगाय गुणश्रेणि आयामविषै निक्षेपण करै है। वहुरि वहुभागमात्र द्रव्यविपै कितना इक द्रव्यकी अतरायामविषै "अद्धाणेण सव्वधणे खडिदे" इत्यादि विधानतै चय घटता क्रम लीएँ निक्षेपण करि अवशेष द्रव्यकौ तिस क्रोधकी द्वितीय स्थितिविपै 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यादि विधानतै नानागुणहानिविषै अतविषै अतिस्थापनावली छोडि निक्षेपण करै हे। इहाँ अतरायामविपैं कितना द्रव्य दीया ताके जाननेकौं उपाय कहै है—

द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकका जो द्रव्यका प्रमाण ताकौ 'पदहतमुखमादिधन' इस सूत्रकरि अतरायाममात्र गच्छकरि गुणै अतरायामविपै समपट्टिकारूप आदिधन हो है। बहुरि द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेककौ दो गुणहानिका भाग दीएँ द्वितीय स्थितिकी प्रथम गुणहानिविषै चयका प्रमाण आवै है। ताकौ दोयकरि गुणै ताके नीचै जो अन्तरायाम तीहिंविषै चयका प्रमाण आवै है। बहुरि "सैकपदाहतपददलद्वयहतमुत्तरधन" इस सूत्रकरि एक अधिक गच्छकरि गच्छका आधा प्रमाणकौ गुणि बहुरि ताकौ चयका प्रमाण करि गुणे उत्तर धनका प्रमाण आवै है। इहाँ प्रथम स्थानविषै भी चय मिल्या है तातैं ऐसा सूत्र कह्या है सो आदि धन उत्तर धन मिलाएँ जो प्रमाण भया तितना द्रव्य इहाँ अतरायामविषै दीजिए है। इहाँ द्वितीय स्थितिका प्रथम निषेकके नीचै अतरायाम है तातै ताकी अपेक्षातै कथन कीया है सो इतना द्रव्य दीएँ जिनि निषेकनिका अभाव कीया था तिनिका सद्भाव जैसा प्रथम स्थितिके नीचै चय घटता क्रम लीएँ सभवै तैसा हो है। ऐसैं निक्षेपण कीएँ गुणश्रेणि शीर्षकेविषै निक्षेपण कीया द्रव्यतै अतरायामका प्रथम निषेकविषै निक्षेपण कीया द्रव्य असख्यातगुणा घटता है। बहुरि अतरायामका अतनिषेकविषै निक्षेपण कीया द्रव्यतैं द्वितीय स्थितिका प्रथम समयविषै निक्षेपण कीया द्रव्य असख्यातगुणा घटता है ऐसा जानना। बहुरि सज्वलन मानादिक तीन कषायका द्रव्यविषै ताके अनतवे भागमात्र सर्वघाती अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान आठ कषायनिका द्रव्यकौ अधिक कीएँ उदय रहित ग्यारह कषायनिका द्रव्य हो है। तिस द्रव्यतैं अपकर्षण करि उदयावलीतै बाह्य गुणश्रेणि आयामविषै अतरायामविषै द्वितीय स्थितिविषै निक्षेपण पूर्वोक्त प्रकार दीजिए है। बहुरि क्रोध उदयका प्रथम समयविषै बारह कषायनिका द्रव्यकौं तत्काल बध्यमान जे सज्वलन क्रोधादिक च्यारि तिनिविषै आनुपूर्वी विना जहाँ तहाँ सक्रमण करै है ॥३२१॥

विशेष—उपशमश्रेणिसे उतरते समय जब यह जीव क्रोध सज्वलनके वेदनके प्रथम समयमे स्थित होता है तब ज्ञानावरणादि कर्मोके साथ बारह कपायोका गलितशेष गुणश्रेणि निक्षेप होता है तथा जब इस प्रकारका गुणश्रेणि निक्षेप होता है तभी अन्तरको भरा जाता है। उसको भरनेकी प्रक्रिया यह है कि बारह कपायके द्रव्योका अपकर्षण करता हुआ गुणश्रेणि निक्षेपके साथ अन्तरको पूरा करते हुए क्रोध सज्वलनके द्रव्यको उदयमे थोडा देता है उससे ऊपर ज्ञानावरणादि कर्मोके पूर्व निक्षिप्त गुणश्रेणि शीर्षके प्राप्त होने तक असख्यातगुणे द्रव्यका निक्षेप करता है। उससे आगे अन्तरसम्बन्धी अन्तिम स्थितिके प्राप्त होने तक विशेष हीन क्रमसे द्रव्य देता हे। उससे आगे द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकमे असख्यातगुणे द्रव्यका निक्षेप करता है।

उससे आगे अपनी-अपनी अतिस्थापनावलिके प्राप्त होने तक विशेष हीन क्रमसे द्रव्यका निक्षेप करता है। इसी प्रकार शेष कषायोके अन्तरको पूरा करता है। इतनी विशेषता है कि उनके द्रव्यका उदयावलिके बाहर निक्षेप करता है। आगे सात नोकषायो तथा स्त्रीवेद और नपुसकवेदके अपने-अपने अन्तरको पूरा करनेका विधान भी इसी प्रकार करना चाहिये। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये कि जिस कषायके उदयसे श्रेणि चढे उसका अपकर्षण होनेपर क्रोधकपायके समान ही गुणश्रेणिनिक्षेप और अन्तरको भरनेकी विधि कहनी चाहिये।

ओदरगकोहपढमे सजलणाण तु अट्ठमासठिदी।
छण्ह पुण वस्साण सखेज्जसहस्सवस्साणि[1] ॥३२२॥

अवतरकक्रोधप्रथमे संज्वलनाना तु अष्टमासस्थिति।
षण्णा पुन वर्षाणा संख्येयसहस्रवर्षाणि ॥३२२॥

स० टी०—अवतारकानिवृत्तिकरणसज्वलनक्रोधोदयप्रथमसमये सज्वलनचतुष्टयस्य स्थितिवन्धोऽष्टमासमात्र। घातित्रयस्य सख्यातसहस्रवर्षमात्र। तत सख्येयगुणो नामगोत्रयो। तत द्व्यर्धगुणितो वेदनीयस्य ॥३२२॥

स० च०—उतरनेवालेकैं क्रोध उदयका प्रथम समयविषै सज्वलन च्यारि कषायनिका आठ मास, तीन घातियानिका सख्यात हजार वर्ष, नाम गोत्रका तातैं सख्यातगुणा वेदनीयका तातैं ड्योढा स्थितिबध हो है ॥३२२॥

अथावतारकानिवृत्तिकरणस्य पुवेदोदयकाले सम्भवत्क्रियाविशेषान् गाथाचतुष्टयेनाह—

ओदरगपुरिसपढमे सत्तकषाया पणट्ठउवसमणा।
उणवीसकसायाण छक्कम्माण समाणगुणसेढी[2] ॥३२३॥

अवतरकपुरुषप्रथमे सप्तकषाया प्रणष्टोपशमका.।
एकोनविंशकषायाणां षट्कर्मणा समानगुणश्रेणी ॥३२३॥

स० टी०—सज्वलनक्रोधवेदककाले पुवेदोदयप्रथमसमये युगपदेव पुवेदो हास्यादिषण्णोकषायाश्च प्रणष्टोपशमनकरणा सञ्जाता। तदैव द्वादशकषायाणा सप्तनोकषायाणा च ज्ञानावरणादिषट्कर्मगुणश्रेण्यायामसमानेन आयामेन गुणश्रेणिं करोति। तत्रोदयवतो पुवेदसज्वलनक्रोधयो द्रव्यमपकृष्य उदयादिगुणश्रेण्यायामे अन्तरायामे द्वितीयस्थितौ च सज्वलनक्रोधोक्तप्रकारेण द्रव्यनिक्षेप करोति। उदयरहिताना

---

१ ताधे ट्ठिदिवधो चउण्ह सजलणाणमट्ठमासा पडिपुण्णा, सेसाण कम्माण ठिदिवधो सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। ता० मु०, पृ० १९०२।

२ तदो से काले पुरिसवेदगस्स वधगो जादो। ताधे चेव सत्तण्ह कम्माण पदेसग्ग पसत्थउवसामणाए सव्वमणुवसन्त, ताधे चेव सत्तकम्मसे ओकड्डियूण पुरिसवेदस्स उदयादिगुणसेढिसीसय करेदि, छण्ह कम्मसाणमुदयावलियवाहिरे गुणसेढि करेदि, गुणसेढिणिक्खेवो वारसण्ह कसायाण सत्तण्ह णोकसयावेदणीयाण सेसाण च आउगवज्जाण कम्माण गुणसेढिणिक्खेवेण तुल्लो ससे सेसे च णिक्खिवदि।
ता० मु०, पृ० १९०२–१९०३।

शेषकषायनोकषायाणा द्रव्यमपकृष्य उदयावलिवाह्यगुणश्रेण्यायामे अन्तरायामे द्वितीयस्थितौ च पूर्वोक्तप्रकारेण निक्षिपति। तदैव सप्तनोकषायाणामनानुपूर्व्या सक्रमोऽपि पूर्ववज्ज्ञातव्य। तदैव पुवेदस्य वन्धोऽपि प्रारब्ध ॥३२३॥

क्रोध और पुरुषवेद आदिके उदयमे होनेवाले कार्यविशेष—

स० च०—सज्वलन क्रोध वेदक कालविपै पुरुष वेदका उदय होनेका प्रथम समयविषै पुरुषवेद अर छह हास्यादिक ए सात कषाय है ते नष्ट भया है उपशमकरण जिनकी ते ऐसे भए। तब ही बारह कषाय अर सात नोकषायनिकी ज्ञानावरणादि छह कर्मनिके समान आयामविषै गुणश्रेणि करै है। तहाँ उदयरूप पुरुषवेद सज्वलन क्रोधके द्रव्यकौ तौ अपकर्षण करि उदय समयतैं लगाय अर अन्य कषायनिका द्रव्यकौ अपकर्षणकरि उदयावलीतै वाह्य समयतै लगाय पूर्वोक्त प्रकार गुणश्रेणि आयाम अतरायाम द्वितीय स्थितिविषै निक्षेपण करै है। बहुरि तब ही सात नोकषायनिका द्रव्य आनुपूर्वी विना जहाँ तहाँ सक्रमण करै है। वहुरि तव ही पुरुषवेदके बधका प्रारंभ हो है ॥३२३॥

पुंसंजलणिदराणं वस्सा बत्तीसय तु चउसट्ठी।
सखेज्जसहस्साणि य तक्काले होदि ठिदिबंधो[1] ॥३२४॥

पुंसंज्वलनेतरेषा वर्षाणि द्वात्रिंशत् चतुःषष्टिः।
संख्येयसहस्राणि च तत्काले भवति स्थितिबन्ध. ॥३२४॥

स० टी०—अवतारकस्य पुवेदोदयप्रथमसमये पुवेदस्य द्वात्रिंशद्वर्षमात्र स्थितिबन्ध। सज्वलन-चतुष्कस्य च चतुःषष्टिवर्षमात्र। घातित्रयस्य सख्यातसहस्रवर्षमात्र। नामगोत्रयोस्तत सख्येयगुण। वेदनीयस्य ततो द्वयर्धगुण ॥३२४॥

स० च०—उतरनेवालेकैं पुरुषवेद उदयका प्रथम समयविषै पुरुष वेदका बत्तीस वर्ष, सज्वलनचतुष्कका चौसठि वर्ष, तीन घातियानिका सख्यात हजार वर्ष, नाम गोत्रका तातैं सख्यातगुणा, वेदनीयका तातैं ड्योढा स्थितिबध हो है ॥३२४॥

पुरिसे दु अणुवसते इत्थी उवसतगो त्ति अद्धाए।
सखाभागासु गदेससखवस्स अघादिठिदिबघो[2] ॥३२५॥

पुरुषे तु अनुपशान्ते स्त्री उपशान्तका इति अद्धाया।
संख्यभागेषु गतेष्वसंख्यवर्षं अघातिस्थितिबन्धः ॥३२५॥

---

१ ताधे चेव पुरिसवेदस्स ठ्ठिदिवधो बत्तीसवस्साणि, सजलणाण ठ्ठिदिवघो चउसट्ठिवस्साणि, सेसाण कम्माण ट्ठिदिबघो सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। ता० मु०, पृ० १९०३।

२ पुरिसवेदे अणुवसते जाव इत्थिवेदो उवसतो एदिस्से अद्धाए सखेज्जेसु भागेसु गदेसु णामागोद-वेदणीयाणमसखेज्जट्ठिदिगो वघो। ताधे अप्पाबहुअ कायव्व। सव्वत्थोवो मोहणीयस्स ट्ठिदिबघो। तिण्ह घादिकम्माण ठिदिवधो सखेज्जगुणो। णामागोदाण ठिदिबघो असखेज्जगुणो। वेदणीयस्स ट्ठिदिवघो विसेसाहिओ। ता० मु०, पृ० १९०३–१९०४।

स० टी०—पुंवेदोदयकालेऽन्तर्मुहूर्तमात्रे यावत् स्त्रीवेदोपशमन न विनश्यति तावत्काले सख्यातभागेषु गतेषु अघातिकर्मणा स्थितिबन्धोऽसख्यातवर्षमात्र ॥३२५॥

स० च०—पुरुषवेदका उदय कालविषै स्त्रीवेदका उपशम यावत् काल न विनसै ताव-त्कालके सख्यात बहुभाग व्यतीत भएँ एक भाग अवशेष रहैं अघातिया कर्मनिका स्थितिबध असख्यात हजार वर्षमात्र हो है ॥३२५॥

णवरि य णामदुगाण वीसियपडिभागदो हवे बघो ।
तीसियपडिभागेण य बधो पुण वेयणीयस्स ॥३२६॥

नवरि च नामद्विकयो वीसियप्रतिभागतो भवेद् बन्ध ।
तीसियप्रतिभागेन च बन्ध पुन. वेदनीयस्य ॥३२६॥

स० टी०—तत्र नामगोत्रयो पल्यासख्यातैकभागमात्र स्थितिबन्ध । वीसियस्थितिबन्धे एतावति तीसियस्थितिबध कियानिति त्रैराशिकसिद्धो वेदनीयस्थितिबन्धो द्व्यर्धगुणितपल्यासख्यातभागमात्र —
प्र फ इ लब्ध प ३ घातित्रयस्य सख्यातसहस्रवर्षमात्र स्थितिबन्ध । तत सख्येयगुणहीनो मोहनीयस्य
२० प ३० a २
a
सख्यातसहस्रवर्षमात्र स्थितिबन्ध ॥३२६॥

स० च०—तहाँ विशेष जो नाम गोत्रनिका पल्यके असख्यातवे भागमात्र स्थितिबध है। अर वीसियनिका इतना भया तौ तीसीयनिका केता होइ ऐसैं त्रैराशिक कीएँ वेदनीयका ड्योढ गुणा पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र स्थितिबन्ध है। बहुरि तीन घातियानिका सख्यात हजार वर्षमात्र मोहनीयका तातैं सख्यातगुणा घटता सख्यात हजार वर्षमात्र स्थितिबन्ध है ॥३२६॥

अथ स्त्रीवेदोपशमनविनाशप्ररूपणार्थं गाथाद्वयमाह—

थीअणुवसमे पढमे वीसकसायाण होदि गुणसेढी ।
सढुवसमो त्ति मज्झे सखाभागेसु तीदेसु[1] ॥३२७॥

स्त्री अनुपशमे प्रथमे विंशकषायाणा भवति गुणश्रेणी ।
षंढोपशम इति मध्ये संख्यभागेष्वतीतेषु ॥३२७॥

स० टी०—तत सख्यातसहस्रस्थितिबन्धेषु अन्तर्मुहूर्तकाले गतेषु एकस्मिन् समये स्त्रीवेदोपशमो विनष्ट । तत प्रभृति स्त्रीवेदद्रव्य सक्रमापकर्षणादिकरणयोग्य सञ्जातमित्यर्थ । तस्मिन् स्त्रीवेदोपशमन-विनाशप्रथमसमये स्त्रीवेदद्रव्यमपकृष्य तस्योदयरहितत्वादुदयावलिबाह्यगुणश्रेण्यायामे अन्तरायामे द्वितीय-स्थितौ च पूर्वोक्तविधानेन निक्षिपति । अत्र गुणश्रेण्यायाम शेषकर्मणा गलितावशेषगुणश्रेण्यायामसमान । द्वादशकषायसप्तनोकषायाणा द्रव्यमपकृष्य पूर्वोक्तप्रकारेण गलितावशेषगुणश्रेण्यायामे अन्तरायामे द्वितीयस्थितौ

१ एत्तो ट्ठिदिवघसहस्सेसु गदेसु इत्थिवेदमेगसमएण अणुवसत करेदि, ताधे चेव तमोकड्डियूण आवलियवाहिरे गुणसेढि करेदि, इदरेसिं कम्माण जो गुणसेढि णिक्खेवो ततिओ च इत्थिवेदस्स वि सेसे सेसे च णिक्खिवदि । ता० मु०, पृ० १९०४ ।

शेषकषायनोकषायाणा द्रव्यमपकृष्य उदयावलिवाह्यगुणश्रेण्यायामे अन्तरायामे द्वितीयस्थितौ च पूर्वोक्तप्रकारेण निक्षिपति। तदैव सप्तनोकपायाणामनानुपूर्व्या सक्रमोऽपि पूर्ववज्ज्ञातव्य। तदैव पुवेदस्य वन्धोऽपि प्रारब्ध ॥३२३॥

क्रोध और पुरुषवेद आदिके उदयमे होनेवाले कार्यविशेष—

स० च०—सज्वलन क्रोध वेदक कालविषै पुरुष वेदका उदय होनेका प्रथम समयविषै पुरुषवेद अर छह हास्यादिक ए सात कषाय है ते नष्ट भया है उपशमकरण जिनकौ ते ऐसे भए। तब ही बारह कषाय अर सात नोकषायनिकी ज्ञानावरणादि छह कर्मनिके समान आयामविषै गुणश्रेणि करै है। तहाँ उदयरूप पुरुषवेद सज्वलन क्रोधके द्रव्यकौ तौ अपकर्पण करि उदय समयतै लगाय अर अन्य कषायनिका द्रव्यकौ अपकर्षणकरि उदयावलीतै वाह्य समयतै लगाय पूर्वोक्त प्रकार गुणश्रेणि आयाम अतरायाम द्वितीय स्थितिविषै निक्षेपण करै है। बहुरि तब ही सात नोकषायनिका द्रव्य आनुपूर्वी विना जहाँ तहाँ सक्रमण करै है। बहुरि तव ही पुरुषवेदके बधका प्रारंभ हो है ॥३२३॥

पुसजलणिदराणं वस्सा बत्तीसय तु चउसट्ठी।
सखेज्जसहस्साणि य तक्काले होदि ठिदिबंधो[1] ॥३२४॥

पुसंज्वलनेतरेषा वर्षाणि द्वात्रिशत् चतुःषष्टि.।
संख्येयसहस्राणि च तत्काले भवति स्थितिबन्ध ॥३२४॥

स० टी०—अवतारकस्य पुवेदोदयप्रथमसमये पुवेदस्य द्वात्रिशद्वर्षमात्र स्थितिबन्ध। सज्वलनचतुष्कस्य च चतुषष्टिवर्षमात्र। घातित्रयस्य सख्यातसहस्रवर्षमात्र। नामगोत्रयोस्तत सख्येयगुण। वेदनीयस्य ततो द्व्यर्धगुण ॥३२४॥

स० च०—उतरनेवालेकैं पुरुषवेद उदयका प्रथम समयविषै पुरुष वेदका बत्तीस वर्ष, सज्वलनचतुष्कका चौसठि वर्ष, तीन घातियानिका सख्यात हजार वर्ष, नाम गोत्रका तातै सख्यातगुणा, वेदनीयका तातैं ड्योढा स्थितिबध हो है ॥३२४॥

पुरिसे दु अणुवसते इत्थी उवसतगो त्ति अद्धाए।
सखाभागासु गदेससखवस्स अधादिठिदिबधो[2] ॥३२५॥

पुरुषे तु अनुपशान्ते स्त्री उपशान्तका इति अद्धाया।
संख्यभागेषु गतेष्वसंख्यवर्षं अघातिस्थितिबन्धः ॥३२५॥

---

१ ताधे चेव पुरिसवेदस्स ट्ठिदिवधो बत्तीसवस्साणि, सजलणाण ट्ठिदिवधो चउसट्ठिवस्साणि, सेसाण कम्माण ट्ठिदिवधो सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। ता० मु०, पृ० १९०३।

२ पुरिसवेदे अणुवसते जाव इत्थिवेदो उवसतो एदिस्से अद्धाए सखेज्जेसु भागेसु गदेसु णामागोदवेदणीयाणमसखेज्जट्ठिदिगो बधो। ताधे अप्पाबहुअ कायव्व। सव्वत्थोवो मोहणीयस्स ट्ठिदिबधो। तिण्ह घादिकम्माण ठिदिवधो सखेज्जगुणो। णामागोदाण ठिदिबधो असखेज्जगुणो। वेदणीयस्स ट्ठिदिवधो विसेसाहिओ। ता० मु०, पृ० १९०३–१९०४।

स० टी०—पुवेदोदयकालेऽन्तर्मुहूर्तमात्रे यावत् स्त्रीवेदोपशमन न विनश्यति तावत्काले सख्यातभागेपु गतेषु अघातिकर्मणा स्थितिबन्धोऽसख्यातवर्षमात्र ॥३२५॥

स० च०—पुरुषवेदका उदय कालविषै स्त्रीवेदका उपशम यावत् काल न विनसै ताव-त्कालके सख्यात्त बहुभाग व्यतीत भएँ एक भाग अवशेप रहै अघात्तिया कर्मनिका स्थितिबध असख्यात्त हजार वर्षमात्र हो है ॥३२५॥

णवरि य णामदुगाण वीसियपडिभागदो हवे बधो ।
तीसियपडिभागेण य बधो पुण वेयणीयस्स ॥३२६॥

नवरि च नामद्विकयो. वीसियप्रतिभागतो भवेद् बन्ध ।
तीसियप्रतिभागेन च बन्ध पुन वेदनीयस्य ॥३२६॥

स० टी०—तत्र नामगोत्रयो पल्यासख्यातैकभागमात्र स्थितिबन्ध । वीसियस्थितिबन्धे एतावति तीसियस्थितिबध कियानिति त्रैराशिकसिद्धो वेदनीयस्थितिबन्धो द्व्यर्धगुणितपल्यासख्यातभागमात्र —
प्र फ इ लब्ध प ३ घातित्रयस्य सख्यातसहस्रवर्षमात्र स्थितिबन्ध । तत सख्येयगुणहीनो मोहनीयस्य
२० प ३० a २
a
सख्यातसहस्रवर्षमात्र स्थितिबन्ध ॥३२६॥

स० च०—तहाँ विशेष जो नाम गोत्रनिका पल्यके असख्यातवे भागमात्र स्थितिबध है। अर वीसियनिका इतना भया तौ तीसीयनिका केता होइ ऐसैं त्रैराशिक कीएँ वेदनीयका ड्योढ गुणा पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र स्थितिबन्ध है। बहुरि तीन घातियानिका सख्यात हजार वर्षमात्र मोहनीयका तातैं सख्यातगुणा घटता सख्यात हजार वर्षमात्र स्थितिबन्ध है ॥३२६॥

अथ स्त्रीवेदोपशमनविनाशप्ररूपणार्थ गाथाद्वयमाह—

थीअणुवसमे पढमे वीसकसायाण होदि गुणसेढी ।
सढुवसमो त्ति मज्झे सखाभागेसु तीदेसु ॥३२७॥

स्त्री अनुपशमे प्रथमे विंशकषायाणां भवति गुणश्रेणी ।
षढोपशम इति मध्ये संख्यभागेष्वतीतेषु ॥३२७॥

स० टी०—तत सख्यातसहस्रस्थितिबन्धेषु अन्तर्मुहूर्तकाले गतेषु एकस्मिन् समये स्त्रीवेदोपशमो विनष्ट । तत प्रभृति स्त्रीवेदद्रव्य सक्रमापकर्षणादिकरणयोग्य सञ्जातमित्यर्थ । तस्मिन् स्त्रीवेदोपशमन-विनाशप्रथमसमये स्त्रीवेदद्रव्यमपकृष्य तस्योदयरहितत्वादुदयावलिवाह्यगुणश्रेण्यायामे अन्तरायामे द्वितीय-स्थितौ च पूर्वोक्तविधानेन निक्षिपति । अत्र गुणश्रेण्यायाम शेपकर्मणा गलितावशेषगुणश्रेण्यायामसमान । द्वादशकषायसप्तनोकषायाणा द्रव्यमपकृष्य पूर्वोक्तप्रकारेण गलितावशेषगुणश्रेण्यायामे अन्तरायामे द्वितीयस्थितौ

१ एत्तो ट्ठिदिवघसहस्सेसु गदेसु इत्थिवेदमेगसमएण अणुवसत करेदि, ताधे चेव तमोकड्डियूण आवलियवाहिरे गुणसेढि करेदि, इदरेसि कम्माण जो गुणसेढि णिक्खेवो ततिओ च इत्थिवेदस्स वि सेसे सेसे च णिक्खिवदि । ता० मु०, पृ० १९०४ ।

च निक्षिपति । एव विंशतिकषायाणा गुणश्रेणीकरण प्ररूपित । यावन्नपुसकवेदोपशमोऽस्ति तावत्कालस्य सख्यातबहुभागेषु गतेषु तन्मध्ये ॥३२७॥

स० च०—तातै बधनेरूप सख्यात हजार स्थितिबन्ध भएँ अतमुंहूर्त काल गएँ स्त्रीवेदका उपशम नष्ट भया। तहाँतै लगाय स्त्रीवेदका द्रव्य सक्रम अपकर्षणादि करने योग्य भया। तिसका प्रथम समयविषै स्त्रीवेदका द्रव्यकौ अपकर्षणकरि यहु उदय रहित है तातै उदय बाह्यतैं लगाय अन्य कर्मनिका गुणश्रेणि आयामकैं समान गलितावशेष गुणश्रेणि आयामविषै अर अतरायामविषै अर द्वितीय स्थितिविषै निक्षेपण करै है। अर बारह कषाय सात नोकषायनिका द्रव्यकौ अपकर्षणकरि पूर्वोक्त प्रकार निक्षेपण करै है ऐसैं इहाँ बीसकषायनिका गुणश्रेणि हो है। बहुरि तिस ही कालविषै यावत् नपुसकवेदका उपशम पाइए है तावत्कालका सख्यात बहुभाग व्यतीत भएँ कहा ? सो कहैं हैं ॥३२७॥

घादितियाण णियमा असखवस्स तु होदि ठिदिबधो ।
तक्काले दुट्ठाण रसबधो ताण देसघादीण[1] ॥३२८॥

घातित्रयाणा नियमात् असख्यवर्षस्तु भवति स्थितिबन्ध. ।
तत्काले द्विस्थान रसबन्ध तेषा देशघातिनाम् ॥३२८॥

स० टी०—घातित्रयस्य स्थितिबन्ध पल्यासख्यातभाग स चासख्यातवर्षमात्र, नामगोत्रयोस्ततोऽसख्येयगुण पल्यासख्यातभागमात्र । वेदनीयस्य द्वचर्धगुणितस्तावन्मात्र, मोहनीयस्य सख्यातसहस्रवर्षमात्र स्थितिबन्ध । अस्मिन्नेवावसरे तेषा चतुर्ज्ञानावरणीयत्रिदर्शनावरणीयपञ्चान्तरायाणा देशघातिना लतादारुसमानद्विस्थानानुभागबन्धो भवति ॥३२८॥

स० च०—तीन घातियानिका पल्यके असख्यातवें भागमात्र नाम गोत्रका तातै असख्यातगुणा वेदनीयका तातैं ड्योढा मोहका सख्यात हजार वर्षमात्र स्थितिबन्ध हो है। इस ही अवसरविषै च्यारि ज्ञानावरण तीन दर्शनावरण पाँच अतराय इन देशघातियानिका लता अर दारु समान द्विस्थानगत अनुभागबन्ध हो है ॥३२८॥

अथ नपुसकवेदोपशमनविनाश तत्कालसभविक्रियाविशेष च प्ररूपयितु गाथाद्वयमाह—

संढणुवसमे पढमे मोहिगिवीसाण होदि गुणसेढी ।
अतरकदो त्ति मज्झे सखाभागासु तीदासु[2] ॥३२९॥

---

१ इत्थिवेदे अणुवसते जाव णवुसयवेदो उवसतो एदिस्से अद्धाए सखेज्जेसु भागेसु गदेसु णाणावरणदसणावरण-अतराइयाणमसखेज्जवस्सियट्ठिदिबधो जादो । जाधे घादिकम्माणमसखेज्जवस्सट्ठिदिगो बधो ताधे चेव एगसमएण णाणावरणीयचउव्विह दसणावरणीयतिविह पचतराइयाणि एदाणि दुट्ठाणियाणि बधेण जादाणि । ता० मु०, पृ० १९०४–१९०५ ।

२ तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिबधसहस्सेसु गदेसु णवुसयवेद अणुवसत करेदि, ताधे चेव णवुसयवेदमोकड्डिदूण आवलियबाहिरे गुणसेढि णिक्खिवेदि, इदरेसिं कम्माण गुणसेढिणिक्खिवेण सरिसो गुणसेढिणिक्खेवो सेसे सेसे च णिक्खेवो । वही पृ० १९०५ ।

षंढानुपशमे प्रथमे मोहैकविंशाना भवति गुणश्रेणी ।
अंतरकृत इति मध्ये सख्यभागेष्वतीतेषु ॥३२९॥

स० टी०—तत सख्यातसहस्रस्थितिवन्धेषु एकस्मिन् समये नपुसकवेदोपशमो विनष्ट । तत्प्रथमसमये नपुसकवेदद्रव्यमपकृष्य इतरकर्मगलितावशेषगुणश्रेण्यायामसमाने उदयावलिबाह्यगुणश्रेण्यायामे अन्तरायामे द्वितीयस्थितौ च पूर्वोक्तविधानेन निक्षिपति । अवशिष्टविंशतिमोहप्रकृतीना द्रव्यमपकृष्य गलितावशेष गुणश्रेणि प्राग्वत् करोति । नपुसकवेदोपशमविनाशप्रथमसमयादारभ्य आरोहकानिवृत्तिकरणस्यातरकरणनिष्ठापनचरमसमयपर्यन्त योऽन्तर्मुहूर्तकालस्तस्य सख्यातबहुभागेषु तदन्तरे ॥३२९॥

स० च०—तातैं बधता क्रमकरि सख्यात हजार स्थितिवन्ध गएँ नपु सकवेदका उपशम नष्ट भया ताके प्रथम समयविषै नपु सकवेदके द्रव्यकौ अपकर्षणकरि उदयावलीतै बाह्य समयतै लगाय अर अन्य बीस मोह प्रकृतिनिके द्रव्यकौ अपकर्षणकरि पूर्वोक्त प्रकार अन्य कर्मनिके समान गलितावशेष गुणश्रेणि आयामविषै अतरायामविषै द्वितीय स्थितिविषै निक्षेपण करै है। बहुरि नपु सक वेदका उपशम नाश होनेके समयतै लगाय उतरता सता चढनेवाला जिस अवसरविषै अतर करणका समाप्तपना करै तिस अवसर पावने पर्यंत अतर्मुहूर्त्त काल है ताका सख्यात बहुभाग व्यतीत भएँ कहा ? सो कहै है ॥३२९॥

मोहस्स असखेज्जा वस्सपमाणा हवेज्ज ठिदिबधो ।
ताहे तस्स य जाद बध उदय च दुट्ठाणं ॥३३०॥

मोहस्य असंख्येयानि वर्षप्रमाणानि भवेत् स्थितिबन्ध. ।
तस्मिन् तस्य च जातो बन्ध उदयश्च द्विस्थानम् ॥३३०॥

स० टी०— मोहनीयस्यासख्यातवर्षमात्र स्थितिवन्ध । ततोऽसख्येयगुणो घातित्रयस्य स्थितिबन्ध । ततोऽसख्येयगुणो नामगोत्रयो स्थितिबन्ध । ततो विशेषाधिको वेदनीयस्य स्थितिबन्ध । तस्मिन्नेवावसरे मोहनीयस्य द्विस्थानानुभागबन्धोदयौ जातौ ॥३३०॥

स० च०—मोहनीयका असख्यातवर्ष तीन घातियानिका तातै असख्यातगुणा, नाम गोत्रका तातैं असख्यातगुणा, वेदनीयका तातै अधिक स्थितिबन्ध हो है। इस ही अवसरविषै मोहनीयका लता दारुरूप द्विस्थानगत बन्ध वा उदय भया ॥३३०॥

विशेष—उपशमश्रेणि पर चढते हुए जिस स्थानपर पहुँचकर अन्तरकरण करके मोहनीयका सख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध करता है, उतरते समय उस स्थानको प्राप्त करनेके अन्तर्मुहूर्त पूर्व विद्यमान इस जीवके उपशमश्रेणिसे गिरनेके कारण मोहनीयका असख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है, क्योकि चढते समय जितना समय लगता है उतरनेमे विशेष हीन समय लगता है। इसलिये प्रकृतमे उपयुक्त यह अर्थ कहना चाहिय। यथा—चढते समयका सूक्ष्मसाम्पराय काल और उतरते समयका सूक्ष्मसाम्पराय काल इन दोनोको मिलाकर देखनेपर मालूम पडता है कि चढते समयके सूक्ष्मसाम्पराय कालसे उतरते समयका सूक्ष्मसाम्पराय काल अन्तर्मुहूर्त कम है।

---

१ णवुसयवेदे अणुवसते जाव अतरकरणद्धाण ण पावदि एदिस्से अद्धाए सखेज्जेसु भागेसु गदेसु मोहणीयस्स असखेज्जवस्सिओ ट्ठिदिबधो जादो। ताधे चेव दुट्ठाणिया बधोदया। वही पृ० १५०५–१९०६।

इसी प्रकार चढते समय और उतरते समयके सब कालोके विषयमे जानना चाहिये। इससे हमे यह पता लग जाता है कि उतरते समय मोहनीयका असख्यात वर्षप्रमाण स्थितिवन्ध किस स्थानसे प्रारम्भ हो जाता है। शेष कथन सुगम है।

अथावतरणे लोभसक्रमप्रतिघातादिप्ररूपणार्थ गाथात्रयमाह—

लोहस्स असकमण छावलितीदेसुदीरणत्त च।
णियमेण पडताण मोहस्सणुपुव्विसकमण[1] ॥३३१॥

लोभस्य असक्रमण षडावल्यतीतेषूदीरणत्व च।
नियमेन पतता मोहस्यानानुपूर्विसक्रमणम् ॥३३१॥

स० टी०—अवतारकसूक्ष्मसाम्परायप्रथमसमयादारभ्याध सर्वावस्थासु बध्यमानज्ञानावरणादिकर्मणा समयप्रबद्धद्रव्यमारोहके षडावलिका व्यतिक्रम्य उदीयत इति नियम प्रागुक्त, त परित्यज्य इदानी बन्धावली-व्यतिक्रमे उदीयते। अवतारकानिवृत्तिकरणप्रथमसमयादारभ्य लोभस्यासक्रमोऽध सर्वत्रारोहकविपर्ययेण प्रतिहन्यते। सज्वलनलोभस्य मायादिषु सक्रमणशक्तिपरिणतिर्जातेत्यर्थ। तथा मोहस्य नपुसकादिप्रकृतीना आनुपूर्वीसक्रमश्च नष्ट। आरोहणे य आनुपूर्वीसक्रम प्रागुक्तस्त परित्यज्य इदानीमनानुपूर्व्या बध्यमाने सजातीयप्रकृत्यन्तरे यत्र तत्र वा सक्रमो जात इत्यर्थ ॥३३१॥

स० च०—उतरनेवालेकैं सूक्ष्मसाम्परायका प्रथम समयतैं लगाय बधे थे जे कर्म तिनकी छह आवली व्यतीत भएँ उदीरणा होनेका नियम था ताकौ छोडि बन्धावली व्यतीत होतैं ही उदीरणा करिए है बहुरि उतरने वालेकै अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयतैं लगाय लोभका सक्रमण था सो चढनेवालेतैं विपरीत रूपकरि हणिए है। सज्वलन लोभकी मायादिकविषैं सक्रम होनेकी शक्ति भई यहु अर्थ जानना। बहुरि मोहकी सर्व प्रकृतिनिका जो आनुपूर्वी सक्रमका नियम भया था सो नष्ट भया जहाँ तहाँ स्वजातीय कोई चारित्रमोहकी प्रकृतिका कोई चारित्रमोहकी प्रकृति-निविषैं सक्रमण हो है ॥३३१॥

विशेष—जयधवलामे बतलाया है कि प्रकृत विषयको लक्ष्यमे लेकर चूर्णिसूत्रमे जो 'सव्वस्स' पद आया है सो उसका आशय यह है कि उतरते समय सूक्ष्मसाम्परायसे लेकर ही छह आवलि जानेपर उदीरणा होती है यह नियम नही रहता। अन्यथा चूर्णिसूत्रमे 'सव्वस्स' यह विशेषण देनेकी क्या आवश्यकता थी। किन्तु दूसरे आचार्य ऐसा मानते हैं कि उतरनेवाले जीवके जब तक सख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध होता है तब तक छह आवलि जानेपर उदीरणा होती है यही नियम रहता है। किन्तु जहाँसे असख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध होने लगता है वहाँसे यह नियम नही रहता, किन्तु एक बन्धावलिके बाद ही उदीरणा प्रारम्भ हो जाती है। पर जयधवलाकार 'सव्वस्स' पद होनेसे पूर्वोक्त अर्थको ही ठीक मानते है।

विवरीयं पडिहण्णदि विरयादीण च देसघादित्त।
तह य असखेज्जाण उदीरणा समयपबद्धाण[2] ॥३३२॥

---

१ सव्वस पडिवदमाणगस्स छसु आवलियासु गदासु उदीरणा इदि णत्थि णियमो आवलियादिक्कत-मुदीरिज्जदि। अणियट्टिप्पहुडि मोहणीयस्स अणाणुपुव्विसकमो लोभस्स वि सकमो। वही पृ० १९०६।

२ एदेण कमेण सखेज्जेसु ट्ठिदिवधसहस्सेसु गदेसु अणुभागवधेण वीरयतराइय सव्वध

विपरीत प्रतिहन्यते वीर्यादीना च देशघातित्वम् ।
तथा च असख्येयानामुदीरणा समयप्रबद्धानाम् ॥३३२॥

स० टी०—एवमुक्तप्रकारेण स्थितिबन्धसहस्रेपु गतेपु वीर्यान्तरायस्यानुभागबन्धो देशघातिस्वरूप परित्यज्य सर्वघातिस्वरूपो जात । तत स्थितिबन्धपृथक्त्वेषु गतेपु मतिज्ञानावरणीयोपभोगान्तराययोरनुभागबन्धो देशघातिरूप मुक्त्वा सर्वघातिरूपो जात । तत स्थितिबन्धपृथक्त्वेपु गतेपु चक्षुर्दर्शनावरणीयस्यानुभागबन्धो देशघातिरूप मुक्त्वा सर्वघातिरूपो जात । तत स्थितिबन्धपृथक्त्वेपु गतेपु श्रुतज्ञानावरणीयचक्षुर्दर्शनावरणीयभोगान्तरायाणामनुभागबन्धो देशघातिरूप मुक्त्वा सर्वघातिरूपो जात । तत स्थितिबन्धपृथक्त्वेषु गतेषु अवधिज्ञानावरणीयावधिदर्शनावरणीयलाभान्तरायाणामनुभागबन्धो देशघातिरूप त्यक्त्वा सर्वघातिरूपो जात । तत स्थितिबन्धपृथक्त्वेषु गतेषु मन पर्ययज्ञानावरणीयदानान्तराययोरनुभागबन्धो देशघातिरूप त्यक्त्वा सर्वघातिरूपो जात । तत स्थितिबन्धसहस्रेपु असख्यातसमयप्रबद्धोदीरणा प्रतिहन्यते ॥३३२॥

स० च०—ऐसै बधता क्रमरूप हजारौं स्थितिबन्ध गए वीर्यातरायका, तातै परै बहुत स्थिति बन्ध गए मतिज्ञानावरण उपभोगातरायका, तातै परै बहुत स्थिति बन्ध गए चक्षुर्दर्शनावरणका अर तातै परै बहुत स्थितिबन्ध गए श्रुतज्ञानावरणीय अर चक्षुर्दर्शनावरणीय भोगान्तरायका बहुरि तातै परै बहुत स्थितिबन्ध गए अवधिज्ञानावरणीय अवधिदर्शनावरण लाभातरायनिका अर तातै परै बहुत स्थितिबन्ध गए मन पर्ययज्ञानावरण दानातरायका क्रमतै पूर्वोक्त देशघाती बन्ध होता था ताकौ छोडि सर्वघातीरूप अनुभागबन्ध होने लगा तातै परै हजारो स्थिति बन्ध भए असख्यात समयप्रबद्धकी उदीरणा होनेका अभाव भया ॥३३२॥

लोयाणमसखेज्ज समयपबद्धस्स होदि पडिभागो ।
तत्तियमेत्तद्दव्वस्सुदीरणा वट्टदे तत्तो[1] ॥३३३॥

लोकानामसख्येय समयप्रबद्धस्य भवति प्रतिभाग ।
तावन्मात्रद्रव्यस्योदीरणा वर्तते तत ॥३३३॥

स० टी०—गुणश्रेणीकरणार्थमपकृष्टद्रव्यस्यारोहके य पल्यासख्यातमात्रो भागहार प्रागुक्त सोऽद्य यावदायातोऽस्मिन्नवसरे प्रतिहत । इदानीमसख्यातलोकमात्रो भागहारोऽपकृष्टद्रव्यस्य सजात । तत कारणादसख्येयसमयप्रबद्धोदीरणा विना एकसमयप्रबद्धासख्येयभागमात्रोदीरणा सजातेत्यर्थ ॥३३३॥

स० च०—गुणश्रेणि करनेके अर्थि द्रव्य अपकर्षण कीया ताकौं चढनेवाले जीवकै उदयावलीविषै द्रव्य देनेके अर्थि पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र भागहार पूर्वै कह्या था सो इहाँ पर्यंत आया अब इस अवसरविषै नष्ट भया। अब असख्यात लोकका भागहार तहाँ भया। तातैं असख्यात समयप्रबद्धनिकी उदीरणा होती थी ताका नाश होइ अब एक समयप्रबद्धके असख्यातवाँ भागमात्र द्रव्यकी उदीरणा होने लगी ॥३३३॥

(इत्यादि।) तदो ठिदिबधसहस्सेसु गदेसु असखेज्जाण समयपबद्धाणमुदीरणा पडिहम्मदि। वही पृ० ११०७–११०८।

1 जाधे असखेज्जलोगपडिभागे समयपबद्धस्स उदीरणा। वही पृ० ११०८।

अथ स्थितिबधक्रमकरणविपर्ययप्ररूपणार्थं गाथासप्तकमाह—

तक्काले मोहणियं तीसीय वीसिय च वेयणियं ।
मोहं वीसिय तीसिय वेयणियं कम हवे तत्तो[1] ॥३३४॥

तत्काले मोहनीयं तीसिय वीसिय च वेदनीयम् ।
मोह वीसिय तीसिय वेदनीय क्रम भवेत् तत ॥३३४॥

स० टी०—तस्मिन् समयप्रबद्धस्यासख्यातलोकमात्रभागहारप्रवेशकाले सर्वत स्तोक मोहनीयस्य स्थितिबन्ध पल्यासख्यातभागमात्र प ततोऽसख्येयगुणो घातित्रयस्य प ततोऽसख्येयगुणो नामगोत्रयो
a ७ a ६
प ततो विशेपाधिको वेदनीयस्य प ३ तत पर सख्यातसहस्रस्थितिवन्धेषु गतेषु मोहस्य स्थितिबन्ध
a ५ a ५ । २
सर्वत स्तोक पल्यासख्यातभागमात्र प ततो व्युत्क्रमेण नामगोत्रयोरसख्येयगुण प ततो विशेषाधिको
a ६ । a ५
घातित्रयस्य प ३ ततो विशेपाधिको वेदनीयस्य प ३ ॥३३४॥
a ५ । २ a ५ । २

अब क्रमकरणका नाश कहै हैं—

स० च०—तिस असख्यात लोकमात्र भागहार सभवनेका समयविषै मोहका सर्वतै स्तोक पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र तातै असख्यातगुणा तीन घातियानिका तातै असख्यातगुणा नाम गोत्रका तातै साधिक वेदनोयका स्थितिबध हो है। तातै परै सख्यात हजार स्थितिबध गए मोहका स्तोक पल्यके असख्यातवाँ भागमात्र तातै असख्यातगुणा नाम गोत्रका तातै विशेष अधिक तीन घातियानिका तातै विशेष अधिक वेदनीयका स्थितिबध हो है ॥३३४॥

मोह वीसिय तीसिय तो वीसिय मोहतीसयाण कम ।
वीसिय तीसिय मोह अप्पाबहुग तु अविरुद्ध[2] ॥३३५॥

मोह वीसिय तीसिय ततो वीसिय मोहतीसियानां क्रमम् ।
वीसियं तीसिय मोहं अल्पबहुकं तु अविरुद्धम् ॥३३५॥

स० टी०—तत सख्यातसहस्रस्थितिबन्धेषु गतेषु सर्वत स्तोको मोहस्य स्थितिबन्ध प ततोऽ-
a ५
सख्येयगुणो नामगोत्रयो प ततो विशेपाधिको घातित्रयवेदनीययो प ३ तत सख्यातसहस्रस्थिति-
a । ४ a ४ । २
वन्धेषु गतेषु सर्वत स्तोको नामगोत्रयो स्थितिवन्ध पल्यासख्यातैकभागमात्र प ततो मोहनीयस्य विशेषा-
a ४

१ वही पृ० १९०८। २ वही पृ० १९०८।

। ।।
घिक प ततो घातित्रयवेदनीययोर्विशेषाधिक प तत सख्यातमहस्रस्थितिबन्धेषु गतेषु सर्वत स्तोको
ə ५ ə ४
नामगोत्रयो स्थितिबन्ध प ततो विशेषाधिको घातित्रयवेदनीययो प ३ ततोऽधिको मोहनीयस्य
ə ३ ə । ३ । २
प २ एव सिद्धान्ताविरोधेन स्थितिबन्धाल्पबहुत्व ज्ञातव्यम ॥३३५॥
ə ३

स० च० —तातैं असख्यात हजार स्थितिबध गए सर्वतै स्तोक मोहका तातै असख्यातगुणा नाम गोत्रका तातै विशेष अधिक तीन घातिया अर वेदनीयका स्थितिबध हो है। बहुरि तातै सख्यात हजार स्थिति बध गए सर्वतै स्तोक नामगोत्रका पल्यके असख्यातवे भागमात्र तातै विशेष अधिक मोहका तातैं विशेष अधिक तीन घातिया अर वेदनीयका स्थितिबध हो है। बहुरि तातै परैं सख्यात हजार स्थितिबध गए सर्वतै स्तोक नामगोत्रका तातै विशेष अधिक तीन घातिया अर वेदनीयका तातै तीसरा भाग अधिक मोहका स्थितिबध हो है ॥३३५॥

क्रमकरणविणट्ठादो उवरिट्ठिदा विसेसअहियाओ ।
सव्वासिं तण्णट्ठे हेट्ठा सव्वासु अहियकम ॥३३६॥

क्रमकरणविनाशात् उपरि स्थिता विशेषाधिका ।
सर्वासा तदद्धाया अधस्तना सर्वासु अधिकक्रमम् ॥३३६॥

स० टी०—क्रमकरणविनाशस्य व्युत्क्रमणकालस्योपरि तत्कालावसानपल्यासख्यातभागमात्रस्थितिबन्धात्प्रभृत्युत्तरकाले सर्वकर्मप्रकृतीना स्थितिबन्धा विशेषाधिका स्थापिता रचिता इत्यर्थ । क्रमकरणविनाशादधस्तात्तत्कालादिनाऽसख्येयवर्षमात्रस्थितिबन्धात्पूर्व सख्यातवर्षसहस्रस्थितिबन्धपर्यतमायुर्वर्जितसप्तकर्मप्रकृतीना स्थितिबन्धा विशेषाधिका ॥३३६॥

स० च०—क्रम करणका विनाश जिस कालविषै भया तिस कालके ऊपरि तिस कालका अत समयविषै पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र स्थितिबध भया तातैं लगाय पीछैं उत्तर कालविषै सर्व कर्म प्रकृतिनिका जे स्थितिबध है ते पूर्व स्थितिबधतैं उत्तर स्थितिबध विशेष अधिक स्थापे हैं। गुणकाररूप नाही है। बहुरि क्रमकरणका नाशके नीचै तिस क्रमकरणका कालकी आदिविषै असख्यात वर्षमात्र स्थितिबध है तातैं पहिलैं सख्यात हजार वर्षप्रमाण स्थितिबध पर्यंत आयु विना सात कर्मनिका बध हो है। ते भी पूर्व स्थितिबधतैं उत्तर स्थितिबध अधिक क्रम लीए हो है गुणकाररूप नाही है ॥३३६॥

जत्तो पाये होदि हु असखवस्सप्पमाणठिदिबधो ।
तत्तो पाये अण्ण ठिदिबधमसखगुणियकम[1] ॥३३७॥

---

१ जत्तो पाए असखेज्जवस्सट्ठिदिबधो तत्तो पाए पुण्णे पुण्णे ट्ठिदिबधे अण्ण ट्ठिदिबधमसखेज्जगुण बधइ । एदेण कमेण सत्तण्ह पि कम्मपयडीण । वही पृ० १९१० ।

अथ स्थितिबंधक्रमकरणविपर्ययप्ररूपणार्थं गाथासप्तकमाह—

तक्काले मोहणियं तीसीय वीसिय च वेयणियं ।
मोह वीसिय तीसिय वेयणिय कम हवे तत्तो[1] ॥३३४॥

तत्काले मोहनीय तोसिय वीसिय च वेदनीयम् ।
मोह वीसिय तोसिय वेदनीयं क्रम भवेत् तत ॥३३४॥

स० टी०—तस्मिन् समयप्रबद्धस्यासख्यातलोकमात्रभागहारप्रवेशकाले सर्वत स्तोक मोहनीयस्य स्थितिबन्ध पल्यासख्यातभागमात्र प/a७ ततोऽसख्येयगुणो घातित्रयस्य प/a६ ततोऽसख्येयगुणो नामगोत्रयो प/a५ ततो विशेषाधिको वेदनीयस्य प ३/a५।२ तत पर सख्यातसहस्रस्थितिबन्धेषु गतेपु मोहस्य स्थितिबन्ध सर्वत स्तोक पल्यासख्यातभागमात्र प/a६। ततो व्युत्क्रमेण नामगोत्रयोरसख्येयगुण प/a५ ततो विशेषाधिको घातित्रयस्य प ३/a५।२ ततो विशेषाधिको वेदनीयस्य प ३/a५।२ ॥३३४॥

अब क्रमकरणका नाश कहै है—

स० च०—तिस असख्यात लोकमात्र भागहार सभवनेका समयविषै मोहका सर्वतै स्तोक पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र तातै असख्यातगुणा तीन घातियानिका तातै असख्यातगुणा नाम गोत्रका तातै साधिक वेदनीयका स्थितिबध हो है। तातै परै सख्यात हजार स्थितिबध गए मोहका स्तोक पल्यके असख्यातवाँ भागमात्र तातै असख्यातगुणा नाम गोत्रका तातै विशेष अधिक तीन घातियानिका तातै विशेष अधिक वेदनीयका स्थितिबध हो है ॥३३४॥

मोह वीसिय तीसिय तो वीसिय मोहतीसयाण कमं ।
वीसिय तीसिय मोह अप्पाबहुग तु अविरुद्ध[2] ॥३३५॥

मोहं वीसिय तोसिय ततो वीसिय मोहतोसियाना क्रमम् ।
वीसियं तोसिय मोह अल्पबहुक तु अविरुद्धम् ॥३३५॥

स० टी०—तत सख्यातसहस्रस्थितिबन्धेषु गतेपु सर्वत स्तोको मोहस्य स्थितिबन्ध प/a५ ततोऽसख्येयगुणो नामगोत्रयो प/a।४ ततो विशेपाधिको घातित्रयवेदनीययो प ३/a४।२ तत सख्यातसहस्रस्थितिबन्धेपु गतेपु सर्वत स्तोको नामगोत्रयो स्थितिबन्ध पल्यासख्यातैकभागमात्र प/a४ ततो मोहनीयस्य विशेपा-

---

१ वही पृ० १९०८। २ वही पृ० १९०८।

। ।।
घिक प ततो घातित्रयवेदनीययोर्विशेषाधिक प तत सख्यातसहस्रस्थितिबन्धेषु गतेषु सर्वत स्तोको
a ५ a ४
नामगोत्रयो स्थितिवन्ध प ततो विशेषाधिको घातित्रयवेदनीययो प ३ ततोऽधिको मोहनीयस्य
a ३ a । ३ । २
प २ एव सिद्धान्ताविरोधेन स्थितिवन्धाल्पवहुत्व ज्ञातव्यम ।।३३५।।
a ३

स० च० —तातैं असख्यात हजार स्थितिबध गए सर्वतै स्तोक मोहका तातैं असख्यातगुणा नाम गोत्रका तातैं विशेष अधिक तीन घातिया अर वेदनीयका स्थितिबध हो है। वहुरि तातै सख्यात हजार स्थिति बध गए सर्वतै स्तोक नामगोत्रका पल्यके असख्यातवें भागमात्र तातै विशेष अधिक मोहका तातैं विशेष अधिक तीन घातिया अर वेदनीयका स्थितिबध हो है। वहुरि तातै परैं सख्यात हजार स्थितिबध गए सर्वतै स्तोक नामगोत्रका तातै विशेष अधिक तीन घातिया अर वेदनीयका तातै तीसरा भाग अधिक मोहका स्थितिबध हो है ।।३३५।।

कमकरणविणट्ठादो उवरिट्ठिदा विसेसअहियाओ ।
सव्वासिं तण्णद्धे हेट्ठा सव्वासु अहियकम ।।३३६।।

क्रमकरणविनाशात् उपरि स्थिता विशेषाधिका ।
सर्वासा तदद्धायां अधस्तना सर्वासु अधिकक्रमम् ।।३३६।।

स० टी०—क्रमकरणविनाशस्य व्युत्क्रमणकालस्योपरि तत्कालावसानपल्यासख्यातभागमात्रस्थितिबन्धात्प्रभृत्युत्तरकाले सर्वकर्मप्रकृतीना स्थितिबन्धा विशेषाधिका स्थापिता रचिता इत्यर्थं । क्रमकरणविनाशादधस्तात्तत्कालादिनाऽसख्येयवर्षमात्रस्थितिबन्धात्पूर्वं सख्यातवर्षसहस्रस्थितिबन्धपर्यंतमायुर्वजितसप्तकर्मप्रकृतीना स्थितिबन्धा विशेषाधिका ।।३३६।।

स० च०—क्रम करणका विनाश जिस कालविषै भया तिस कालके ऊपरि तिस कालका अत समयविषै पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र स्थितिबध भया तातैं लगाय पीछै उत्तर कालविषै सर्व कर्म प्रकृतिनिका जे स्थितिबध है ते पूर्व स्थितिबधतैं उत्तर स्थितिबध विशेष अधिक स्थापे हैं। गुणकाररूप नाही हैं। बहुरि क्रमकरणका नाशके नीचैं तिस क्रमकरणका कालकी आदिविषै असख्यात वर्षमात्र स्थितिबध है तातैं पहिलै सख्यात हजार वर्षप्रमाण स्थितिबध पर्यंत आयु विना सात कर्मनिका बध हो है। ते भी पूर्व स्थितिबधतैं उत्तर स्थितिबध अधिक क्रम लीए हो हैं गुणकाररूप नाही हैं ।।३३६।।

जत्तो पाये होदि हु असखवस्सप्पमाणठिदिबधो ।
तत्तो पाये अण्ण ठिदिबधमसखगुणियकम[1] ।।३३७।।

---

१ जत्तो पाए असखेज्जवस्सट्ठिदिबधो तत्तो पाए पुण्णे पुण्णे ट्ठिदिबधे अण्ण ट्ठिदिबधमसखेज्जगुण बधइ। एदेण कमेण सत्तण्ह पि कम्मपयडीण। वही पृ० १९१०।

यत प्रभृति भवति हि असंख्यवर्षप्रमाणस्थितिबन्धः।
तत प्रभृति अन्य स्थितिबन्धमसंख्यगुणितक्रमम् ॥३३७॥

स० टी०—यत प्रभृति नामगोत्रादिकर्मप्रकृतीनामसख्यातवर्षमात्रस्थितिवन्ध प्रारब्ध । तत प्रभृति पूर्वपूर्वस्थितिबन्धादुत्तरोत्तरस्थितिबन्धोऽन्योऽसख्येयगुणो भवति यावत्सर्वपश्चिम पल्यासख्यातभागमात्र स्थितिबन्धो जायते ॥३३७॥

स० च०—जहाँतै लगाय नाम गोत्रादिकनिका असख्यात वर्षमात्र स्थितिबधका प्रारभ भया तहाँतै लगाय पहला पहला स्थितिबधतै पिछला पिछला और स्थितिबध भया सो असख्यात-गुणा है यावत् सर्वतै पीछै पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र स्थितिबध होइ तावत् ऐसा ही क्रम जानना ॥३३७॥

एव पल्लासख सख भाग च होइ बधेण ।
तत्तो पाये अण्णं ठिदिबधो सखगुणियकम[1] ॥३३८॥

एवं पल्यासंख्यं सख्यं भाग च भवति बन्धेन ।
तत प्रभृति अन्य स्थितिबन्ध सख्यगुणितक्रमः ॥३३८॥

स० टी०—एव सख्यातसहस्रेषु पल्यासख्यातभागप्रमितेपु स्थितिवन्धेषु सर्वपश्चिमपल्यासख्यात-भागमात्रस्थितिबन्धात्पर युगपदेव सप्तकर्मणा पल्यासख्यातभागमात्र स्थितिबन्धो जात । तत्र वीसियस्थिति-बधात् तीसियस्थितिबन्धो द्वयर्धगुणित चालीसियस्थितिबन्धो द्विगुण इति विशेष पूर्ववद्द्रष्टव्य । आरोह-कस्य क्रमेणोपलभ्यमानो दूरापकृष्टिविषयस्थितिबन्ध कथमवरोहकस्यैकवारमेव सभवतीति नाशङ्कनीय प्रति-पातिपरिणाममाहात्म्येन तत्र तथाभावस्य विरोधाभावात् । इत प्रभृत्यनन्तरस्थितिबन्धोऽन्य सख्यातगुणित सप्तकर्मणा जायते ॥३३८॥

स० च०—ऐसैं यथासभव हीनाधिक प्रमाण लीए पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र स्थिति-बध बधता क्रम लीए सख्यात हजार व्यतीत भए तहाँ सर्वतै पीछै जो पल्यका असख्यातवाँ भाग मात्र स्थितिबध भया तातै परैं एक एक कालविषैं सातो कर्मनिका स्थितिबध पल्यके असख्यातवे भागमात्र हो है। तहाँ विशेष जो वीसीयनिकेतै तीसीयनिका ड्योढा चालीसीयनिका दूणा स्थिति-बध जानना। पल्यका असख्यातवे भागके भेद घने तातै हीनाधिकरूप घने स्थितिबधनिकौ आलापकरि पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र ही कह्या है चढनेवालेकै दूरापकृष्टि नाम स्थितिबध क्रमतै भया था इहाँ उतरनेवालेकै प्रतिपाती परिणामनिकरि एकही बार दूरापकृष्टिनामा स्थिति-बध हो है यातै परैं अननर और स्थितिबध हो है सो सातो कर्मनिका सख्यातगुणा हो है ॥३३८॥

विशेष—जहाँ जब पल्योपमका असख्यातवाँ भागप्रमाण अन्तिम स्थितिबध हुआ तब उसके आगे एक बारमे पल्यके सख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबध होने लगता है। यहाँ शका यह है कि चढते समय तो दूरापकृष्टिसज्ञक पल्योपमके असख्यातवे भागप्रमाण स्थितिवध क्रमसे प्राप्त हुआ था, यहाँ पल्योपमके असख्यातवे भागसे एक बारमे पल्योपमके सख्यातवें भागप्रमाण

---

१ एत्तो पाए पुण्णे पुण्णे ठिदिवधे अण्ण ट्ठिदिवध सखेज्जगुण वधइ । एव सखेज्जाण ट्ठिदिवध-सहस्साणमपुव्वा वड्ढी पलिदोवमस्स सखेज्जदिभागो । वही पृ० १९१० ।

कैसे होने लगता है ? यह एक प्रश्न है। समाधान यह है कि उतरते हुए विशुद्धिरूपपरिणामोमे हानिके कारण ऐसा हुआ है इसमे कोई आश्चर्यकी वात नही है।

मोहस्स य ठिदिबंधो पल्ले जादे तदा दु परिवड्ढी।
पल्लस्स संखभाग इगिविगलासण्णिबंधसमं[1] ॥३३९॥

मोहस्य च स्थितिबंध पल्ये जाते तदा तु परिवृद्धि
पल्यस्य संख्यभाग एकविकलासंज्ञिबन्धसमम् ॥३३९॥

स० टी०—एव सख्यातगुणितवृद्धिक्रमेण सख्यातसहस्रस्थितिबन्धोत्सरणेपु सर्वपश्चिमस्थितिबन्धो नामगोत्रयो पल्यासख्यातैकभागमात्र $\frac{प}{५}$ ततस्तीसियस्थितिबन्धो द्वयर्धगुणित $\frac{प\ ३}{५\ २}$ तत मोहनीयस्थितिबन्धो द्विगुण $\frac{प\ २}{५}$ तदनन्तरस्थितिबन्धो मोहस्य सपूर्णपल्यमात्र । प। अत्र वृद्धिप्रमाण पल्यासख्यातबहुभागमात्र $\frac{प\ ५ - २}{५}$ तीसियस्थितिबन्ध पल्यत्रिचतुर्भागमात्र $\frac{प\ ३}{४}$ अत्र वृद्धिप्रमाण अनन्तराधस्तनस्थितिप्रमाणेन $\frac{प\ ३}{५\ २}$ अनेन साधिकपल्यचतुर्भाग $\frac{प\ १}{४}$ न्यूनपल्यमात्र $\frac{प\ ५}{५\ ४}$ वीसियस्थितिबन्ध पल्यार्धमात्र $\frac{प\ १}{२}$–अत्र वृद्धिप्रमाण अनन्तराधस्तनस्थितिबन्धमात्रेण पल्यासख्यातभागेन $\frac{प}{५}$ न्यूनपल्यार्धमात्र $\frac{प\ १}{२}$ – पूर्वस्थितिबन्धे उत्तरोत्तर-स्थितिबन्धे शोधिते अवशेषमात्र वृद्धिप्रमाण सर्वत्र ज्ञातव्यम् । चालीसियस्थितिबन्धस्य यदि पल्यमात्र स्थिति-बन्धो लभ्यते तदा तीसियस्थितिबन्धस्य कीदृश स्थितिबन्धो भवति—$\frac{प}{४०}\ \frac{फ}{५}\ \frac{इ}{३०}$ इति त्रैराशिकसिद्ध पल्यत्रिचतुर्भागमात्रस्तीसियस्थितिबन्ध । तथा वीसियस्थितिबन्धमिच्छाराशिं कृत्वा त्रैराशिकसिद्धो $\frac{प्र}{४०}\ \frac{फ}{५}\ \frac{इ}{२०}$ वीसियस्थितिबन्ध पल्यार्धमात्र । एव मोहनीयस्य स्थितिबन्धो यदा पल्यमात्रो जात तत परमनन्तरानन्तर-स्थितिबन्धोत्सरणेपु पल्यासख्यातैकभागमात्र वृद्धिप्रमाण द्रष्टव्यम् । तत सख्यातसहस्रेषु स्थितिबन्धोत्सरणेषु गतेषु मोहस्य स्थितिबन्ध एकेन्द्रियस्थितिबन्धसदृश सागरोपमचतु सप्तमभागमात्र $\frac{सा\ ४}{७}$ तीसियस्थितिबन्ध सागरोपमत्रिसप्तभागमात्र $\frac{सा\ ३}{७}$ वीसियस्थितिबन्ध सागरोपमद्विसप्तमभागमात्र $\frac{स\ २}{७}$ एव प्रतिकाण्डक सख्यातसहस्रस्थितिबन्धोत्सरणेषु गतेषु द्वीन्द्रियत्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियासंज्ञिपञ्चेन्द्रियस्थितिबन्धसदृशा मोहनीयस्य स्थितिबन्धा परमागमोक्तप्रतिभागक्रमेण ज्ञातव्या ॥३३९॥

---

१ एत्तो पाये ठिदिबंधे पुण्णे पुण्णे पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागेण वड्ढइ। एदेण कमेण पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागपरिवड्ढीए ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु अप्पणो एइंदियट्ठिदिबंधसमगे ट्ठिदिबंधो जादो। बीइंदिय-तीइंदिय-चउरिंदिय-असण्णि-ट्ठिदिबंधसमगे ट्ठिदिबंधो। वही पृ० १९१२।

स० च०—ऐसैं सख्यातगुणा क्रम लीए सख्यात हजार स्थितिबधोत्सरण भएं सवतैं पीछैं नाम गोत्रका पल्यके असख्यातवे भागमात्र तातैं ड्योढा तीसीयनिका दूना मोहका स्थितिबध होइ। ताके अनतरि मोहका पल्यमात्र तीसीयनिका पल्यका तीन चौथा भागमात्र वीसीयनिका आधा पल्यमात्र स्थितिबध हो है पूर्व पूर्व स्थितिबधके प्रमाणकौ उत्तर स्थितिबधका प्रमाण-विषै घटाए अवशेष रहै सोई पूर्वोक्त स्थितिबधतैं उत्तर स्थितिबधविषै वृद्धिका प्रमाण हो है। सो इहाँ भी साधनकरि जानना। बहुरि चालीसीयनिका स्थितिबध पल्यमात्र होइ तौ तीसीय अथवा बीसीयनिका केता होइ? ऐसैं त्रैराशिककरि तीसीयनिका पल्यका तीन चौथा भागमात्र वीसीय-निका आधापल्यमात्र स्थितिबस सिद्ध हो है। ऐसैं अन्यत्र भी त्रैराशिक जानना जैसैं स्थिति घटा-वनेविषै पूर्वैं स्थिति बधापसरण सज्ञा कही थी तैसें स्थिति बधावनेविषैं इहाँ स्थितिबधोत्सरण सज्ञा जाननी सो एक एक स्थितिबधोत्सरणविषै पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र स्थिति बधै ऐसे प्रत्येक सख्यात हजार स्थितिबध होइ क्रमतैं एकेंद्री बेइद्री तेइद्री चौइद्री असज्ञी पचेद्रीका स्थिति-बधके समान स्थितिबध हो है ॥३३९॥

विशेष—यहाँ मुख्य बात यह लिखनी है कि जब मोहनीय आदि सातो कर्मोका स्थितिबध यथायोग्य किसीका पल्योपमके रूपमे और किसीका अपने-अपने उत्कृष्ट स्थितिबधके अनुपातमे होने लगता है तब वृद्धिसहित स्थितिबधकी परिगणना स्थितिबधके रूपमे की जाती है। पहले शुद्ध वृद्धिकी अपेक्षा स्थितिबधके प्रमाणका निश्चय कराया जाता था। किन्तु यहाँसे लेकर वृद्धिसहित पूरे स्थितिबधका निर्देश किया जा रहा है ऐसा प्रकृतमे समझना चाहिये। प्रकृतमे इसे ही यत्स्थितिबध कहा गया है।

मोहस्स पल्लवधे तीसदुगे तत्तिपादमद्ध च।
दुतिचदुसत्तमभागा वीसतिये एयवियलठिदी ॥३४०॥

मोहस्य पल्यबन्धे त्रिशद्द्विके तत्त्रिपादमर्धं च।
द्वित्रिचतु.सप्तमभागा वीसत्रिके एकविकलस्थिति ॥३४०॥

स० टी०—यदा मोहस्य पल्यमात्रस्थितिबन्धो जातस्तदा तीसियस्थितिवन्ध पल्यत्रिचतुर्भागमात्र। वीसियस्थितिबन्ध पल्यार्धमात्र। पुनरेकेंद्रियस्थितिबन्धसदृशा वीसियतीसियमोहाना स्थितिबन्धा सागरोप-मस्य द्विसप्तमत्रिसप्तमचतु सप्तमभागमात्रा। पुनर्द्वीन्द्रियादिस्थितिबन्धा सदृशा वीसियादिस्थितिबन्धा पञ्च-विंशतिपञ्चाशच्छतसहस्रगुणिता असज्ञिस्थितिबन्धपर्यन्ता अनुमन्तव्या ॥३४०॥

मो प २ a	प २ ५।५।५।५	प २ ५ ५ ५	प २ ५	प १
ती प ३ a २	प ५ ५ ५ ५ ३ २	प ५ ५ ५ ३ २	प ३ ५।२	प ३ ४
वी प a	प ५ ५ ५ ५	प ५ ५ ५	प ५	प १ २

स० च०—जब मोहका स्थितिबध पल्यमात्र भया तब तीसीयनिका पल्यका तीन चौथा भागमात्र वीसीयनिका आधा पल्यमात्र स्थितिबध हो है सोई कहि आए हैं। बहुरि एकेंद्री समान

स्थितिबध भया तहाँ मोहका सागरके च्यारि सातवाँ भागमात्र तीसीयनिका सागरके तीन सातवाँ भागमात्र वीसीयनिका सागरके दोय सातवाँ भागमात्र स्थितिबध जानना। बहुरि वेंद्री तेंद्री चौंद्री असज्ञी समान स्थितिबध जहाँ भया तहाँ क्रमतै एकेंद्री समान बध पचीसगुणा पचासगुणा सौगुणा हजार गुणा क्रमतैं जानना ॥३४०॥

अवतारकानिवृत्तिकरणचरमसमयस्थितिवन्धपरूपणार्थमाह—

तत्तो अणियट्टिस्स य अंतं पत्तो हु तत्थ उदधीण।
लक्खपुधत्त बंधो से काले पुव्वकरणो हु ॥३४१॥

तत अनिवृत्तेश्च अन्तं प्राप्तो हि तत्र उदधीनाम्।
लक्षपृथक्त्व बन्ध स्वे काले अपूर्वकरणो हि ॥३४१॥

स० टी०—ततोऽसज्ञिपञ्चेन्द्रियस्थितिवन्धात्पर सख्यातसहस्रेषु स्थितिवन्धोत्सरणेषु गतेषु अवतारकानिवृत्तिकरणचरमसमय प्राप्त। तस्मिन् वीसियादिस्थितिवन्ध स्वस्वप्रतिभागगुणित सागरोपमलक्षपृथक्त्वमात्रो भवति—मो सा ल ७।४ तीसिय सा ल ७।३ वीसिय सा ल ७।२ तदनन्तरसमये अयमव-
८।७ ८।७ ८।७
तारकोऽपूर्वकरणो जात ॥३४१॥

स० च०—तहाँ पीछै असज्ञी समान बधतैं परै सख्यात हजार स्थितिबधोत्सरण भए उतरनेवाला अनिवृत्तिकरणके अत समयकौ प्राप्त भया। तहाँ मोह तीसीय वीसीयनिका क्रमतै पृथक्त्व लक्ष सागरनिका च्यारि सातवाँ भाग अर तीन सातवाँ भाग अर दोय सातवाँ भागमात्र स्थितिबध हो है। बहुरि ताके अनन्तरि समयविषै उतरनेवाला अपूर्वकरण भया ॥३४१॥

अथापूर्वकरणे सभवद्विशेषमाह—

उवसामणा णिधत्ती णिकाचणुग्घाडिदाणि तत्थेव।
चदुतीसदुगाण च य बधो अद्धापवत्तो य[2] ॥३४२॥

उपशामना निधत्ति निकाचना उद्घटितानि तत्रैव।
चतुस्त्रिंशद्द्विकाना च च बधो अधाप्रवृत्त च ॥३४२॥

स० टी० तस्मिन्नवतारकापूर्वकरणे प्रथमसमयादारभ्य अप्रशस्तोपशमनकरण निधत्तिकरण निकाचनकरण च युगपदेवोद्घाटितानि भवन्ति। तत्कालस्य सप्तभागीकृतस्य प्रथमभागे हास्यरतिभयजुगुप्साना चतु प्रकृतीना बन्धको जात। ततोऽवतीर्य तत्कालद्वितीयभागे तीर्थकरत्वादित्रिंशत्प्रकृतीना वन्धको जात। ततस्तत्कालषष्ठभागचरमसमयादारभ्य निद्राप्रचलयोर्वन्धो भवति

४
३०
०
०
०
२

तत सख्यातसहस्रस्थितिबन्धोत्सार-

१ तदो ट्ठिदिवधसहस्सेसु गदेसु चरिमसमयमणियट्टी जादो। चरिमसमय अणियट्टिस्स ठिदिवधो सागरोवमसदसहस्सपुधत्तमतोकोडाकोडीए। से काले अपुव्वकरणपविट्ठो। वही पृ० १९१२–१९१३।

२ ताधे चेव अप्पसत्थ उवसामणाकरण णिधत्तीकरण णिकाचणाकरण च उग्घाडिदाणि। ताधे चेव

णेषु गतेषु अवतारकापूर्वकरणचरमसमये वीसियादिस्थितिवन्ध स्वस्वप्रतिभागगुणित सागरोपमकोटिलक्ष-पृथक्त्वमात्रो भवति—

मो सा को ल	७ । ४	
	८ । ७	
ती सा को ल	७ । ३	
	८ । ७	
वी सा को ल	७ । २	
	८ । ७	

सर्वकर्मणा गुणश्रेणी गलितावशेषायामा अद्य यावत्प्रवृत्ता तदनन्तरसमये ततो वतीर्यप्रमत्तगुणस्थाने विशुद्धेर-नन्तगुणहानिवशेनाध प्रवृत्तकरणपरिणाम प्राप्नोति ।।३४२।।

स० च०—ताके प्रथम समयतै लगाय अप्रशस्तोपशमकरण अर निधत्तिकरण अर निष्का-चनकरण ए युगपत् उघाडे प्रकट कीए इनिका लक्षण पूर्वे कह्या ही था। बहुरि अपूर्वकरण कालके सात भाग कीए तहाँ प्रथम भागविषै हास्य रति भय जुगुप्सा इन च्यारि प्रकृतिनिका दूसरे भाग विषै तीर्थंकरादि तीस प्रकृतिनिका छठा भागका अत समयतै लगाय निद्रा प्रचलाका बध हो है। बहुरि तातै सख्यात हजार स्थितिबधोत्सरण भए उतरनेवाला अपूर्वकरणका अत समयविषैं मोहतीसीय वीसीयनिका क्रमतै पृथक्त्व लक्ष कोटि सागरनिका च्यारि सातवाँ भाग तीन सातवाँ भाग दोय सातवा भाग मात्र स्थितिबध हो है। सर्व कर्मनिकी गुणश्रेणी गलितावशेष आयाम लीए इहाँ पर्यंत वर्ते है। ताके अनतरि समयविषै उतरि अप्रमत्त गुणस्थान विषैं अध -करण परिणामकौ प्राप्त हो है ।।३४२।।

विशेष—चढते समय अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमे अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्ती-करण और निकाचनाकरण इन तीनोकी व्युच्छित्ति हो गई थी। किन्तु उतरते समय जब जीव अपूर्वकरणमे प्रवेश करता है तब उसके प्रथम समयमे ही ये पुन उद्घाटित हो जाते है। अर्थात् जिन कर्मोकी पहले अप्रशस्त उपशामना की व्युच्छित्ति हो गई थी वे पुन अप्रशस्त उपशामनारूप हो जाते हैं। इसी प्रकार निधत्ती और निकाचनाकी अपेक्षा भी जान लेना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

अथ द्वितीयोपशमसम्यक्त्वकालप्रमाण गाथाद्वयमाह—

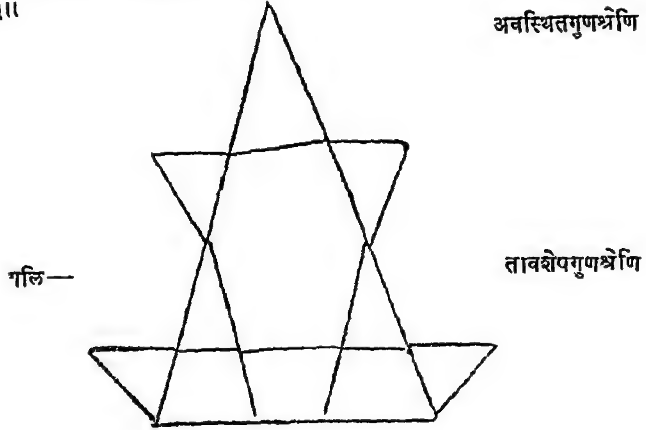
पढमो अधापवत्तो गुणसेढिमवट्ठिद पुराणादो ।
सखगुण तच्चतोमुहुत्तमेत्त करेदी हु[1] ।।३४३।।

प्रथमोऽधाप्रवृत्त गुणश्रेणीमवस्थिता पुराणात् ।
संख्यगुण अंतर्मुहूर्तमात्र करोति हि ।।३४३।।

मोहणीयस्स णवविहवधगो जादो। तदो अपुव्वकरणद्धाए सखेज्जदिभागे गदे तदो परभवियाण वधगो जादो। तदो ट्ठिदिवधसहस्सेहिं गदेहिं अपुव्वकरणद्धाए सखेज्जेसु भागेसु गदेसु णिद्दापयलाओ वधइ। वही पृ० १९१३।

१ मे काले पढमसमय अधापवत्तो जादो। तदो पढमसमयअधापवत्तस्स अण्णो गुणसेढिणिक्खेवो पोराणादो णिक्खेववादो सखेज्जगुणो। जाव चरिमसमयअपुव्वकरणादो त्ति सेमे सेसे णिक्खेवो। जो पढम-

स० टी०—अथावतारकापूर्वकरणचरमसमये अपकृष्टद्रव्यादसंख्येयगुणहीन द्रव्यमपकृष्य अवतारक-सूक्ष्मसाम्परायप्रथमसमयारब्धात् पौराणिकगुणश्रेण्यायामात् संख्यातगुणायाममवस्थितगुणश्रेणिनिक्षेपमवतारका-प्रमत्त अध प्रवृत्तकरणप्रथमसमये करोति। विशुद्धहान्यापकृष्टद्रव्यहानि गुणश्रेण्यायाम संख्येयगुणोऽप्यन्त-र्मुहूर्तमात्र एव नाधिक ॥३४३॥



स० च०—ताका प्रथम समयविषै उतरनेवाला अपूर्वकरणका अंत समयविषै जेता द्रव्य अपकर्षण कीया तातैं असंख्यातगुणा घटता द्रव्यकौ अपकर्षणकरि गुणश्रेणि करै है। सूक्ष्मसाम्प-रायका प्रथम समयविषै जाका प्रारंभ भया ऐसा पुराणा गुणश्रेणिका आयामतैं संख्यातगुणा है तौ भी अंतर्मुहूर्त्तमात्र याका अवस्थित आयाम जानना। इहाँ विशुद्धता की हानि होनेतैं गुणश्रेणि-विषै द्रव्यका प्रमाण घटि गया आयामका प्रमाण बधि गया है ॥३४३॥

अथ पुराणगुणश्रेण्यनुवादार्थमाह—

ओदरसुहुमादीदो अपुव्वचरिमो त्ति गलिदसेसे व।
गुणसेढीणिक्खेवो सट्ठाणे होदि तिट्ठाण ॥३४४॥

अवतरसूक्ष्मादितो अपूर्वचरम इति गलितशेषो वा।
गुणश्रेणीनिक्षेप स्वस्थाने भवति त्रिस्थानम् ॥३४४॥

स० टी०—अवतारकसूक्ष्मसाम्परायप्रथमसमयादारभ्यावतारकापूर्वकरणचरमसमयपर्यंत ज्ञानावरणादि-कर्मणा गुणश्रेण्यायामो गलितावशेषमात्र एव नावस्थित प्रवृत्त। अयं तु विशेष —मोहनीयस्यावतारकसूक्ष्म-साम्परायप्रथमसमयात्प्रभृति कियन्तमपि कालमवस्थितिस्वरूपेण गुणश्रेणिनिक्षेपो भूत्वा तत पर गलितावशेषा-यामेन ज्ञानावरणादिकर्मगुणश्रेण्यायामसदृशो जात इति त्रिषु स्थानेषु वृद्ध्यावस्थितिगुणश्रेण्यायामदर्शनात्। तत्कथम्? अवतारकसूक्ष्मसाम्परायकाले सर्वत्रावस्थितिस्वरूपेण, स्पर्धकगतलोभाकर्षणे एकवारवृद्ध्या बादर-लोभवेदकाद्धापर्यन्तमवस्थितस्वरूपेण, पुनर्मायापकर्षणे द्वितीयवारवृद्ध्या मायावेदककालपर्यन्तमवस्थितस्वरूपेण,

---

समयअधापवत्तकरणे णिक्खेवो सो अंतोमुहुत्तिओ तत्तिओ चेव। वही पृ० १९१३–१९१४।

१ तेण परं सिया वड्ढदि सिया हायदि सिया अवट्ठायदि। वही पृ० १९१५।

तत पर मानापकर्षणे तृतीयवारवृद्धया मानवेदककालपर्यन्तमवस्थितस्वरूपेण, एव त्रिषु स्थलेषु गुणश्रेण्यायाम प्रवृत्त । तत पर क्रोधापकर्षणे चतुर्थवारवृद्धया गुणश्रेण्यायाम , अवतारकापूर्वकरणचरमसमयपर्यन्त गलितावशेषमात्र एवागत । इदानी पुनरधाप्रवृत्तकरणप्रथमसमये ज्ञानावरणादिकर्मणा गुणश्रेण्यायाम पुराणगुणश्रेण्यायामात् सख्यातगुणितोऽवस्थितिस्वरूपोऽन्तर्मुहूर्तपर्यत प्रवर्तत इत्यर्थ । अध प्रवृत्तकरणाद्धामात्रमन्तर्मुहूर्त प्रतिसमयमेकान्तेन विशुद्धचनन्तगुणहान्याऽवतीर्य स्वस्थानाप्रमत्तसयतो भवति । तस्य च सक्लेशविशुद्धिवशेन वृद्धिहान्यवस्थानलक्षण स्थानत्रय गुणश्रेण्यायामस्य सम्भवति ॥३४४॥

स० च०—उतरनेवाला सूक्ष्मसाम्परायका प्रथम समयतैं लगाय अपूर्वकरणका अत समय पर्यंत ज्ञानावरणादिकनिका गुणश्रेणि आयाम है सो गलितावशेष है अवशेष अवस्थित नाही है। इतना विशेष—सूक्ष्मसाम्परायका प्रथम समयतै लगाय केते इक काल मोहका गुणश्रेणि आयाम अवस्थित हो है। पीछै और कर्मनिका गुणश्रेणि आयामके समान मोहका भी गुणश्रेणि आयाम गलितावशेष हो है। जातै तीन स्थाननिविषै बधिकरि अवस्थित गुणश्रेणि आयाम हो है। सो कहिए है—

उतरनेवाला सूक्ष्मसाम्परायका प्रथम समयतै लगाय अवस्थित आयाम ही है। बहुरि स्पर्धकरूप बादर लोभका द्रव्यके अपकर्षणविषै एकवार गुणश्रेणि आयाम बधिकरि बादर लोभ वेदककालपर्यंत अवस्थित रहै है। बहुरि मायाके द्रव्यका अपकर्षणविषै दूसरी बार बधिकरि मायाका वेदककालपर्यंत अवस्थित गुणश्रेणि आयाम रहै है। बहुरि मानके द्रव्यका अपकर्षणविषै तीसरी बार बधिकरि मानका वेदककालपर्यंत अवस्थित गुणश्रेणि आयाम रहै है। ऐसै तीन बार अवस्थित गुणश्रेणि आयाम हो है। बहुरि चौथी बार क्रोधका अपकर्षणविषै बधिकरि अपूर्व करणका अतपर्यंत अन्य कर्मनिके समान मोहका भी गलितावशेष गुणश्रेणि आयाम आया। बहुरि अध प्रवृत्तकरणका प्रथम समयतै लगाय अतर्मुहूर्त पर्यंत पुराना गुणश्रेणि आयामतैं सख्यातगुणा ज्ञानावरणादि कर्मनिका अवस्थित गुणश्रेणि आयाम प्रवर्तै है। अध प्रवृत्तकरणका जेता अतर्मुहूर्त काल है तितना कालविषै समय समय एकातपनै अनतगुणी घाटि विशुद्धताकरि उतरि पीछैं स्वस्थान अप्रमत्त हो है ॥३४४॥

अथ तत्स्थानत्रयविषयविभाग प्रदर्शयति—

सट्ठाणे तावदिय सखगुणूण तु उवरि चडमाणे।
विरदाविरदाहिमुहे सखेज्जगुण तदो तिविह ॥३४५॥

स्वस्थाने तावत्क सख्यगुणोन तु उपरि चटमाने।
विरताविरताभिमुखे सख्येयगुण तत त्रिविधम् ॥३४५॥

स० टी०—प्रमत्ताप्रमत्तगुणस्थानयो स्वस्थानसयतो भूत्वा वृद्धिहानिभ्या विनाऽवस्थित गुणश्रेण्यायाम (गल) करोति। विरताविरतगुणस्थानाभिमुख सन् सक्लेशवशेन प्राक्तनगुणश्रेण्यायामात् सख्यातगुण गुणश्रेण्यायाम करोति। पुन स एव यदि परावृत्त्योपशमकक्षपकश्रेण्यारोहणाभिमुखो भवति तदा विशुद्धिवशेन प्राक्तनगुणश्रेण्यायामात् सख्यातगुणहीन गुणश्रेण्यायाम करोति। एव गुणश्रेण्यायामस्य वृद्धिहान्यवस्थानलक्षण स्थानत्रय व्याख्यातम् ॥३४५॥

स० च०—तहाँ प्रमत्त वा अप्रमत्त गुणस्थानविषै स्वस्थान सयत होइ वृद्धि हानि रहित अवस्थित गुणश्रेणि आयाम करै है। बहुरि सोई जीव जो विरताविरत पचम गुणस्थानकौ सन्मुख होइ तौ सक्लेशताकरि पूर्व गुणश्रेणि आयामतै सख्यातगुणा वँधता गुणश्रेणि आयाम करै है। अर पलटिकरि उपशम वा क्षपकश्रेणी चढनेकौ सन्मुख होइ तो विशुद्धताकरि तिस गुणश्रेणि आयामतै सख्यातगुणा घटता गुणश्रेणि आयाम करै है। ऐसै स्वस्थान सयमीकै गुणश्रेणिकी वृद्धि हानि अवस्थितरूप तीन स्थान कहे ॥३४५॥

अथावतारकाप्रमत्तस्याध प्रवृत्तकरणे सक्रमसभवविशेप प्रदर्शयति—

करणे अधापवत्ते अधापवत्तो दु सकमो जादो।
विज्झादमवधाणे णट्ठो गुणसकमो तत्थ ॥३४६॥

करणे अध प्रवृत्ते अध प्रवृत्तस्तु सक्रमो जात ।
विध्यातमबन्धने नष्टो गुणसंक्रमस्तत्र ॥३४६॥

स० टी०—अवतारकाध प्रवृत्तकरणे बन्धवतामथाप्रवृत्तसक्रमो जात । अबन्धाना विध्यातसक्रम । तत्र गुणसक्रमो विनष्ट एव ॥३४६॥

स० च०—उतरनेवाला अध प्रवृत्त करणविषै जिनि प्रकृतिनिका बध पाइए तिनकै तौ अथाप्रवृत्त नामा सक्रम भया, इनका अन्य प्रकृतिविषै सक्रम होनेविषै अध प्रवृत्त नामा भागहार सभवै है। बहुरि जिनका बन्ध न पाइए तिनकै विध्यातसक्रमण पाइए है। इनका अन्य प्रकृतिविषै सक्रम होनेविषैं विध्यात नामा भागहार सभवै है अर गुणसक्रमका नाश ही भया। इनका स्वरूप पूर्वै कह्या है सो जानना ॥३४६॥

अथ द्वितीयोपशमसम्यक्त्वकालप्रमाण गाथाद्वयमाह—

चडणोदरकालादो पुव्वादो पुव्वगो त्ति संखगुण ।
काल अधापवत्त पालदि सो उवसम सम्मं[1] ॥३४७॥

चटनावतरकालतोऽपूर्वात् अपूर्वक इति सख्यगुणम् ।
कालं अध प्रवृत्त पालयति स उपशम सम्यम् ॥३४७॥

स० टी०—द्वितीयोपशमसम्यक्त्वेनोपशमकश्रेण्यामारूढस्यापूर्वकरणप्रथमसमयादारभ्य ततोऽवतीर्णापूर्वकरणचरमसमयपर्यत यावत्कालस्तत सख्येयगुण कालमन्तर्मुहूर्तप्रमित, अध प्रवृत्तकरणेन स हि द्वितीयोपशमसम्यक्त्वमनुपालयति ॥३४७॥

स० च०—द्वितीयोपशम सम्यक्त्व सहित जीव चढतैं अपूर्वकरणका प्रथम समयतै लगाय उतरतैं अपूर्वकरणका अत समय पर्यंत जितना काल भया तातैंसख्यातगुणा ऐसा अतर्मुहूर्तमात्र द्वितीयोपशम सम्यक्त्वका काल है। सो इस काल पर्यंत अध प्रवृत्तकरण सहित इस द्वितीयोपशम सम्यक्त्वकौ पालै है ॥३४७॥

---

१ उवसामगस्स पढमसमय अपुव्वकरणप्पहुडि जाव पडिवदमाणगस्स चरिमसमयअपुव्वकरणो त्ति तदो एत्तो सखेज्जगुण काल पडिणियत्तो अधापवत्तकरणेण उवसमसम्मत्तद्धमणुपालेदि। वही पृ० १९१५।

तस्सम्मत्तद्धाए असंजमं देससजम वापि ।
गच्छेज्जावलिछक्के सेसे सासणगुण वापि[1] ॥३४८॥

तत्सम्यक्त्वाद्धाया असंयम देशसयम वापि ।
गत्वावलिषट्के शेषे सासनगुणं वापि ॥३४८॥

स० टी०—तस्य द्वितीयोपशमसम्यक्त्वकाले अध प्रवृत्तकरणकाल नीत्वा पुनरप्रत्याख्यानावरणकषायोदयात् असयमपरिणाममपि गच्छेत् । प्रत्याख्यानावरणकषायोदयाद्देशसयममपि वा गच्छेत् । अथवा असयम प्राप्य तत्रान्तर्मुहूर्तं स्थित्वा पश्चाद्देशसयम क्रमेण गच्छेत् । देशसयम प्राप्य तत्रान्तर्मुहूर्तं स्थित्वा पश्चादसयम वा क्रमेण गच्छेत् । एव क्रमेणोभयप्राप्ते प्रवचने कथितत्वात् । अथवा तदुपशमसम्यक्त्वकालस्यावलिकषट्केऽवशिष्टेऽनन्तानुबन्धिकषायान्यतमोदयात्सासादनगुणस्थानमपि गच्छेत् ॥३४८॥

स० च—तिस ही द्वितीयोपशम सम्यक्त्वका कालविषै अध प्रवृत्तकरण कालकौ समाप्तकरि अप्रत्याख्यानके उदयतै असयमकौं प्राप्त होइ तौ चौथे गुणस्थान आवै है । अथवा प्रत्याख्यानके उदयतै देशसयमकौ प्राप्त होइ तौ पाँचवे गुणस्थान आवै । अथवा असयत होइ तहाँ अतर्मुहूर्त्त तिष्ठि देशसयम होइ अथवा देशसयत होइ तहाँ अतर्मुहूर्त्त तिष्ठि असयत होइ अथवा तिस कालविषै छह आवली अवशेष रहैं अनन्तानुवन्धी क्रोधादिविषै किसीका उदयतै सासादनकौ भी प्राप्त होइ ॥३४८॥

अथ द्वितीयोपशमसम्यक्त्वात्सासादनगुणप्राप्तस्य सभवद्विशेषमाह—

जदि मरदि सासणो सो णिरयतिरक्खं णरं ण गच्छेदि ।
णियमा देवं गच्छदि जइवसहमुणिंदवयणेणं[2] ॥३४९॥

यदि म्रियते सासन स निरयतिर्यञ्च नरं न गच्छति ।
नियमात् देव गच्छति यतिवृषभमुनीन्द्रवचनेन ॥३४९॥

स० टी०—यदि स उपशमश्रेणितोऽवतीर्ण सासादन स्वायुःक्षयवशान्म्रियते तदा नरकगतिं तिर्यग्गतिं मनुष्यगतिं च नियमेन न गच्छति किन्तु देवगतिं गच्छति । एवमुपशमश्रेणीतोऽवतीर्णस्य सासादनगुणप्राप्ते । तस्य मरण गतिविशेषश्च कषायप्राभृताख्यद्वितीयसिद्धान्तव्याख्याने यतिवृषभाचार्यस्य वचनप्रामाण्येन भणितम् ॥३४९॥

स० च०—उपशमश्रेणीतैं उतरया जो सासादन जीव सो आयु नाशतै मरै तौ नारक तिर्यंच मनुष्य गतिकौ प्राप्त न होइ नियमतै देवगति हीकौ प्राप्त होइ । ऐसै उपशमश्रेणीतैं उतरया जीवकैं सासादन गुणस्थानकी प्राप्ति वा ताके मरण होनेका विशेष कह्या है सो कषाय प्राभृत नामा दूसरा जयधवल शास्त्रविषै यतिवृषभ नामा आचार्य प्रतिपादन किया है । ताके अनुसारि इहाँ कथन कीया है ॥३४९॥

१ एदिम्से उवसमसमत्तद्धाए अब्भतरदो असजम पि गच्छेज्ज, सजमासजम पि गच्छेज्ज, दो वि गच्छेज्ज । छसु आवलियासु सेसासु आसाण पि गच्छेज्ज । वही पृ० १९१६ ।

२ आसाण पुण गदो जदि मरदि ण सक्को णिरयगदिं तिरिक्खगदिं मणुसगदिं वा गतु णियमा देवगदिं गच्छदि । वही पृ० १९१६ ।

अथ तत्सासादनस्य गतित्रयगमने कारणमाह—

णरतिरियक्खणराउगसत्तो सक्को ण मोहमुवसमिदु ।
तम्हा तिसु वि गदीसु ण तस्स उप्पज्जणं होदि[1] ॥३५०॥

नरकतिर्यग्नरायुष्कसत्त्वः शक्यो न मोहमुपशमयितुम् ।
तस्मात् त्रिष्वपि गतिषु न तस्य उत्पादो भवति ॥३५०॥

स० टी०—नरकतिर्यग्मनुष्यायुः सत्त्वसहितो जीवश्चारित्रमोहनीयमुपशमयितुं न शक्तः तत्सत्त्वेन देशसंयमसकलसंयमयोः प्राप्त्यभावात् । तस्मात्कारणात्तत्सासादनस्य तिसृष्वपि गतिषूत्पादो नास्ति । इदं सर्वं बद्धपरभवायुषः उपशमश्रेणिमारुह्यावतीर्णस्य भणितम् । अबद्धपरभवायुषः तच्छ्रेणिमारुह्यावरूढस्य सासादनस्य मरणमेव न संभवति ॥३५०॥

स० च—नारक तिर्यंच मनुष्य आयुका सत्त्व सहित जीव चारित्रमोह उपशमावनेकौ समर्थ नाही जातैं नरक तिर्यंच मनुष्यायुका सत्व सहित जीवकै देशसंयम वा सकलसंयमकी भी प्राप्तिका अभाव है। तातैं उपशमश्रेणीतैं उतर्या सासादनकैं देव विना अन्य तीन गतिनिमैं उपजना न हो है। बहुरि पूर्वैं आयु जाकै बन्ध्या होइ तिस ही उपशमश्रेणीतैं उतर्या सासादनका मरण हो है। अबद्धायुका न हो है ॥३५०॥

अथोपशमश्रेण्यामवतीर्णस्य सासादनत्वप्राप्त्यभावमाचार्यान्तराभिप्रायेण भणति—

उवसमसेढीदो पुण ओदिण्णो सासणं ण पाउणदि ।
भूदवलिणाहणिम्मलसुत्तस्स फुडोवदेसेण ॥३५१॥

उपशमश्रेणीतः पुनरवतीर्णः सासनं न प्राप्नोति ।
भूतवलिनाथनिर्मलसूत्रस्य स्फुटोपदेशेन ॥३५१॥

स० टी०—उपशमश्रेणीतोऽवतीर्णः सासादनत्वं न प्राप्नोत्येव । तत्प्राप्तिकारणानन्तानुबन्धिकषायोदयस्यासंभवात् पूर्वमेवानन्तानुबन्धिचतुष्टयं द्वादशकषायस्वरूपेण परिणमय्य पश्चादुपशमश्रेणिमारूढस्य तत्सत्त्वाभावात् । इदं सर्वं भूतवलिमुनिनाथप्रोक्ते महाकर्मप्रकृतिप्राभृतार्थप्रथमस्थितिगोचरे प्रथमसिद्धान्ते निर्मलस्य पूर्वापरविरोधादिरहितस्य सूत्रस्य स्फुटोपदेशेनास्माभिर्निश्चितम् ॥३५१॥

स० च०—उपशमश्रेणीतैं उतर्या जीव सासादनकौ प्राप्त न होइ जातैं पूर्वैं अनतानुबन्धीका विसंयोजनकरि उपशमश्रेणी चढ्या है ताकै अनतानुबन्धीका उदय न संभवै है। ऐसैं भूतवलि नामा मुनिनाथ ताका कह्या जो महाकर्मप्रकृति प्राभृत नामा पहला धवल शास्त्र तिसविषै पूर्वापर दोष रहित निर्मल प्रगट उपदेश है ताकरि हम निश्चय कीया है ॥३५१॥

अथोपशमश्रेण्यारूढद्वादशपुरुषप्रक्रियाभेदप्रदर्शनार्थं द्वादशगाथा प्ररूपयति—

पुंकोधोदयचलियस्सेसाह परूवणा हु पुं माणे ।
मायालोभे चलिदस्सत्थि विसेसं तु पत्तेयं[2] ॥३५२॥

---

१ हदि तिसु आउएसु एक्केण वि बद्धेण आउएण ण सक्को कसाये उवसामेदुं । एदेण कारणेण णिरयगदि-तिरिक्खजोणि-मणुस्सगदीओ ण गच्छदि । वही, पृ० १९१६–१९१७ ।

२ एमा सव्वा परूवणा पुरिसवेदस्स कोहेण उवट्ठिदस्स । पुरिसवेदस्स चेव माणेण उवट्ठिदस्स

पुक्रोधोदयचटितस्य शेषा अथ प्ररूपणा हि पुमाने ।
मायालोभे चटितस्यास्ति विशेष तु प्रत्येक ।।३५२।।

भ० टी०—पुवेदसज्वलनक्रोधोदयसहितस्योपशमश्रेणिमारूढस्य पूर्वोक्ता मर्वापि प्ररूपणा भवति । पुवेदसज्वलनमानोदयेन पुवेदमज्वलनमायोदयेन पुवेदमज्वलनलोभोदयेन चोपशमश्रेणिमारुढाना प्रत्येक प्रक्रियाविशेपोऽस्ति ।।३५२।।

आगे उपशमश्रेणी चढनेवाले बारह प्रकार जीव है तिनकी क्रियाविषै विशेष है सो कहैं हैं—

स० च०—पूर्वै कही जो सर्व प्ररूपणा सो पुरुषवेद अर क्रोध कषाय सहित उपशमश्रेणी चढनेवाले जीवकी कही है । बहुरि पुरुषवेद अर सज्वलन मान वा माया वा लोभ सहित उपशम श्रेणी चढनेवालोकैं क्रिया विशेष है ।।३५२।।

तद्यथा—

दोण्ह तिण्ह चउण्ह कोहादीण तु पढमठिदिमित्त ।
माणस्स य मायाए बादरलोहस्स पढमठिदी ।।३५३।।

द्वयो त्रयाणा चतुर्णा क्रोधादीना तु प्रथमस्थितिमात्रम् ।
मानस्य च मायाया बादरलोभस्य प्रथमस्थिति ।।३५३।।

स० टी०—सज्वलनक्रोधमानमायालोभाना मध्ये पुक्रोधोदयेनारुढस्य द्वयो क्रोधमानयोर्यावन्मात्री प्रथमस्थितिस्तावन्मात्रो पुमानोदयेनारूढस्य मानप्रथमस्थितिर्भवति—

मा ३
मा ३
क्रो ३
नो ७
इ
न
क्रो ३
नो ७
इ
न
क्रोधोदय
मानोदय

णाणत्त । वही, पृ० १९१७ ।

२ जाव मत्तणोकसायाणमुवसामणा ताव णत्थि णाणत्त । उवरिमाण वेदन्तो कोहमुवसामेदि । जद्देही कोहेण उवट्ठिदस्स कोहस्स उवसामणद्धा तद्देही चेव माणेण वि उवट्ठिदस्स कोहस्स उवसामणद्धा । इत्यादि । वही, पृ० १९१७–१९१८ ।

तथा पुक्रोधोदयारूढस्य क्रोधमानमायासज्वलनाना त्रयाणा सपिडिता प्रथमस्थितिर्यावन्मात्री पुमायोदयारूढस्य सज्वलनमायाप्रथमस्थितिर्भवति ।

या ३	या ३	या ३
मा ३	मा ३	मा ३
क्रो ३ नो ७ इ न क्रो	क्रो ३ नो ७ इ न मा	क्रो ३ नो ७ इ न या

तथा पुक्रोधोदयारूढस्य सज्वलनक्रोधमानमायालोभाना समुदिता यावन्मात्री पुलोभोदयेनारूढस्य सज्वलनबादरलोभस्य प्रथमस्थितिर्भवति ।

लो ३	लो ३	लो ३	लो ३
या ३	या ३	या ३	या ३
मा ३	मा ३	मा ३	मा ३
क्रो ३ नो ७ इ न क्रो	क्रो ३ नो ७ इ न मा	क्रो ३ नो ७ इ न या	क्रो ३ नो ७ इ न लो

चतुर्णामुदये श्रेण्यारूढाना सर्वेपा सूक्ष्मलोभप्रथमस्थिति समानैव ।

लो १	लो १	लो १	लो १
लो ३	लो २	लो ३	लो ३
मा ३	मा ३	मा ३	मा ३
मा ३ क्रो ३ नो ७ इ न क्रो	मा ३ क्रो ३ नो ७ इ न मा	मा ३ क्रो ३ नो ७ इ न मा	मा ३ क्रो ३ नो ७ इ न लो

तथा नपुसकवेदस्त्रीवेदसप्तनोकषायाणामुपशमनकालश्चतुर्णां समान एव ॥३५३॥

सोई कहिए है—

स० च०—पुरुषवेद अर क्रोधका उदय सहित चढ्या जीवकी क्रोध अर मानकी प्रथम स्थिति मिलाई हुई जेती होइ तितनी मानका उदय सहित चढ्या जीवकैं मानकी प्रथम स्थिति हो है। भावार्थ—जो क्रोध सहित श्रेणी चढनेवालेकैं तौ पहिलैं क्रोधका उदय हो है। पीछैं मानका उदय हो है। अर मानका उदय सहित श्रेणी चढ्याकैं क्रोधका उदय न हो है मानका ही उदय हो है। ताकै तिन दोऊनिका उदय कालके समान याकैं मानका उदय काल है इस वासतैं तिनि दोऊनिकी प्रथम स्थिति समान याकैं मानकी प्रथम स्थिति कही है। ऐसैं ही आगै समझना। बहुरि क्रोधका उदय सहित चढ्या जीवकैं क्रोध अर मान अर मायाकी प्रथम स्थिति मिलाई हुई जेती होइ तितनी मायाका उदय सहित चढ्या जीवकै लोभकी प्रथम स्थिति हो है। इहाँ ऐसा जानना—

क्रोधका उदय सहित श्रेणी चढ्याकैं तौ क्रमतैं च्यारद्यो कषायका उदय हो है। मान सहित चढ्याकैं क्रोध विना तीनका ही उदय हो है। माया सहित चढ्याकैं माया अर लोभका ही उदय है। लोभ सहित चढ्याकैं केवल लोभ हीका उदय हो है तातै पूर्वोक्त प्रकार प्रथम स्थिति कही है। बहुरि च्यारद्योविषै किसी कषायका उदय सहित चढै सर्व ही जीवनिका सूक्ष्म लोभकी प्रथम स्थिति समान है। अर तिनकै नपुसक स्त्रीवेद सात नोकषायनिका उपशमन काल समान है ॥३५३॥

जस्सुदयेणारूढो सेढीं तस्सेव ठविदि पढमठिदिं।
सेसाणावलिमेत्त मोत्तूण करेदि अतर णियमा ॥३५४॥

यस्योदयेनारूढो श्रेणिं तस्यैव स्थापयति प्रथमस्थितिम् ।
शेषाणामावलिमात्र मुक्त्वा करोति अन्तरं नियमात् ॥३५४॥

स० टी०—यस्य वेदस्य कषायस्य वा उदयेन श्रेणीमारूढस्तस्य प्रथमस्थितिमन्तर्मुहूर्तमात्री स्थापयित्वा शेषवेदकषायाणा उदयरहितानामावलिमात्री मुक्त्वा उपयन्तर करोति ॥३५४॥

स० च०—जिस वेद वा कषायका उदय करि जीव श्रेणी चढ्या होइ ताकी तौ अंतर्मुहूर्तमात्र प्रथम स्थिति स्थापै है । तिस प्रथम स्थितिके ऊपरिके निषेकनिका अन्तर करै है बहुरि उदय रहित वेद वा कषायनिकी आवलीमात्र स्थिति छोडि ताके ऊपरके निषेकनिका अन्तर करै है ॥३५४॥

जस्सुदयेणारूढो सेढिं तक्कालपरिसमत्तीए ।
पढमट्ठिदिं करेदि हु अणंतरुवरुदयमोहस्स ॥३५५॥

यस्योदयेनारूढ श्रेणिं तत्कालपरिसमाप्तौ ।
प्रथमस्थितिं करोति हि अनन्तरोपर्युदयमोहस्य ॥३५५॥

स० टी०—यस्य कषायस्योदयेन श्रेणीमारूढ तत्कषायप्रथमस्थितौ समाप्तायां पुनरनन्तरोपरितनोदयवत् कषायस्य प्रथमस्थितिं करोति । तथाहि—

यथा पुंक्रोधोदयेन श्रेणीमारूढ सज्वलनक्रोधप्रथमस्थितावन्तर्मुहूर्तमात्र्या समाप्तायां पुनर्मानसज्वलनस्य प्रथमस्थितिमन्तर्मुहूर्तमात्री करोति । एवमुपर्यपि । तथा पुमानोदयेन श्रेणीमारूढ सज्वलनमानस्थितावन्तर्मुहूर्तमात्र्या समाप्तायां पुन सज्वलनमायाप्रथमस्थितिमन्तर्मुहूर्तमात्री करोति । एवमुपर्यपि । तथा पुमायोदयेन श्रेणिमारूढ सज्वलनमायाप्रथमस्थितावन्तर्मुहूर्तमात्र्या समाप्तायां पुन सज्वलनलोभस्य प्रथमस्थितिमन्तर्मुहूर्तमात्री करोति । एवमुपर्यपि । तथा पुलोभोदयेन श्रेणीमारूढ सज्वलनलोभप्रथमस्थितावन्तर्मुहूर्तमात्र्या निष्ठितायां पुन सूक्ष्मलोभस्य प्रथमस्थितिमन्तर्मुहूर्तमात्री करोति ॥३५५॥

स० च०—जिस कषायका उदय सहित श्रेणी चढ्या है तिस कषायकी प्रथम स्थिति समाप्त भए ताके अनन्तरवर्ती कषायकी प्रथम स्थिति करै है । सोई कहिए है—क्रोध सहित श्रेणी चढ्या जीवकैं क्रोधकी प्रथम स्थितिका काल पूर्ण भए पीछैं मानकी प्रथम स्थिति हो है । ऐसे ही ऊपरि मायादिककी जाननी । बहुरि मान सहित चढ्या जीवक मानकी प्रथम स्थिति समाप्त भए पीछै मायाकी प्रथम स्थिति हो है ऐसैं ही ऊपरि जानना । बहुरि माया सहित चढ्या जीवकैं मायाकी प्रथम स्थिति पूर्ण भए पीछै लोभकी प्रथम स्थिति करै है । ऐसे ही उपरि जाननी । बहुरि लोभ सहित श्रेणी चढ्याकैं लोभकी प्रथम स्थिति भए पीछै सूक्ष्म लोभकी प्रथम स्थिति हो है ॥३५५॥

माणोदएण चडिदो कोहं उवसमदि कोहअद्धाए ।
मायोदएण चडिदो कोहं माणं सगद्धाए ॥३५६॥

मानोदयेन चटित क्रोधं उपशमयति क्रोधाद्धायाम् ।
मायोदयेन चटित क्रोधं मानं स्वकाद्धायाम् ॥३५६॥

लो १	लो १	लो १	लो १
लो २	लो २	लो २	लो २
मा ३	मा ३	मा ३	मा ३
मा ३ क्रो ३ नो ७ इ न क्रो	मा ३ क्रो ३ नो ७ इ न मा	मा ३ क्रो ३ नो ७ इ न मा	मा ३ क्रो ३ नो ७ इ न लो

तथा नपुसकवेदस्त्रीवेदसप्तनोकषायाणामुपशमनकालश्चतुर्णां समान एव ॥३५३॥

सोई कहिए है—

स० च०—पुरुषवेद अर क्रोधका उदय सहित चढ्या जीवकी क्रोध अर मानकी प्रथम स्थिति मिलाई हुई जेती होइ तितनी मानका उदय सहित चढ्या जीवकैं मानकी प्रथम स्थिति हो है। भावार्थ—जो क्रोध सहित श्रेणी चढनेवालेकैं तौ पहिलैं क्रोधका उदय हो है। पीछैं मानका उदय हो है। अर मानका उदय सहित श्रेणी चढ्याकैं क्रोधका उदय न हो है मानका ही उदय हो है। ताकैं तिन दोऊनिका उदय कालके समान याकै मानका उदय काल है इस वासतैं तिनि दोऊनिकी प्रथम स्थिति समान याकैं मानकी प्रथम स्थिति कही है। ऐसैं ही आगै समझना। बहुरि क्रोधका उदय सहित चढ्या जीवकैं क्रोध अर मान अर मायाकी प्रथम स्थिति मिलाई हुई जेती होइ तितनी मायाका उदय सहित चढ्या जीवकैं लोभकी प्रथम स्थिति हो है। इहाँ ऐसा जानना—

क्रोधका उदय सहित श्रेणी चढ्याकै तौ क्रमतै च्यारयो कषायका उदय हो है। मान सहित चढ्याकैं क्रोध विना तीनका ही उदय हो है। माया सहित चढ्याकै माया अर लोभका ही उदय है। लोभ सहित चढ्याकैं केवल लोभ हीका उदय हो है तातै पूर्वोक्त प्रकार प्रथम स्थिति कही है। बहुरि च्यारयोविषै किसी कषायका उदय सहित चढै सर्व ही जीवनिका सूक्ष्म लोभकी प्रथम स्थिति समान है। अर तिनकै नपुसक स्त्रीवेद सात नोकषायनिका उपशमन काल समान है ॥३५३॥

जस्सुदयेणारूढो सेढीं तस्सेव ठविदि पढमठिदिं।
सेसाणावलिमेत्तं मोत्तूण करेदि अतरं णियमा ॥३५४॥

यस्योदयेनारूढो श्रेणिं तस्यैव स्थापयति प्रथमस्थितिम् ।
शेषाणामावलिमात्रं मुक्त्वा करोति अन्तरं नियमात् ॥३५४॥

स० टी०—यस्य वेदस्य कषायस्य वा उदयेन श्रेणीमारूढस्तस्य प्रथमस्थितिमन्तर्मुहूर्तमात्रीं स्थापयित्वा शेषवेदकषायाणां उदयरहितानामावलिमात्रीं मुक्त्वा उपर्यन्तरं करोति ॥३५४॥

स० च०—जिस वेद वा कषायका उदय करि जीव श्रेणी चढ्या होइ ताकी तौ अंतर्मुहूर्तमात्र प्रथम स्थिति स्थापै है। तिस प्रथम स्थितिके ऊपरिके निषेकनिका अन्तर करै है बहुरि उदय रहित वेद वा कषायनिकी आवलीमात्र स्थिति छोडि ताके ऊपरके निषेकनिका अन्तर करै है ॥३५४॥

जस्सुदयेणारूढो सेढिं तक्कालपरिसमत्तीए।
पढमट्ठिदिं करेदि हु अणंतरुवरुदयमोहस्स ॥३५५॥

यस्योदयेनारूढ श्रेणिं तत्कालपरिसमाप्तौ।
प्रथमस्थितिं करोति हि अनन्तरोपर्युदयमोहस्य ॥३५५॥

स० टी०—यस्य कषायस्योदयेन श्रेणीमारूढ तत्कषायप्रथमस्थितौ समाप्तायां पुनरनन्तरोपरितनोदयवत् कषायस्य प्रथमस्थितिं करोति। तथाहि—

यथा पुंक्रोधोदयेन श्रेणीमारूढ संज्वलनक्रोधप्रथमस्थितावन्तर्मुहूर्तमात्र्यां समाप्तायां पुनर्मानसंज्वलनस्य प्रथमस्थितिमन्तर्मुहूर्तमात्रीं करोति। एवमुपर्यपि। तथा पुंमानोदयेन श्रेणीमारूढ संज्वलनमानस्थितावन्तर्मुहूर्तमात्र्यां समाप्तायां पुनः संज्वलनमायाप्रथमस्थितिमन्तर्मुहूर्तमात्रीं करोति। एवमुपर्यपि। तथा पुंमायोदयेन श्रेणिमारूढ संज्वलनमायाप्रथमस्थितावन्तर्मुहूर्तमात्र्यां समाप्तायां पुनः संज्वलनलोभस्य प्रथमस्थितिमन्तर्मुहूर्तमात्रीं करोति। एवमुपर्यपि। तथा पुंलोभोदयेन श्रेणीमारूढ संज्वलनलोभप्रथमस्थितावन्तर्मुहूर्तमात्र्यां निष्ठितायां पुनः सूक्ष्मलोभस्य प्रथमस्थितिमन्तर्मुहूर्तमात्रीं करोति ॥३५५॥

स० च०—जिस कषायका उदय सहित श्रेणी चढ्या है तिस कषायकी प्रथम स्थिति समाप्त भए ताके अनन्तरवर्ती कषायकी प्रथम स्थिति करै है। सोई कहिए है—क्रोध सहित श्रेणी चढ्या जीवकैं क्रोधकी प्रथम स्थितिका काल पूर्ण भए पीछैं मानकी प्रथम स्थिति हो है। ऐसैं ही ऊपरि मायादिककी जाननी। बहुरि मान सहित चढ्या जीवकैं मानकी प्रथम स्थिति समाप्त भए पीछैं मायाकी प्रथम स्थिति हो है ऐसैं ही ऊपरि जानना। बहुरि माया सहित चढ्या जीवकैं मायाकी प्रथम स्थिति पूर्ण भए पीछै लोभकी प्रथम स्थिति करै है। ऐसे ही उपरि जाननी। बहुरि लोभ सहित श्रेणी चढ्याकैं लोभकी प्रथम स्थिति भए पीछैं सूक्ष्म लोभकी प्रथम स्थिति हो है ॥३५५॥

माणोदएण चडिदो कोहं उवसमदि कोहअद्धाए।
मायोदएण चडिदो कोहं माणं सगद्धाए ॥३५६॥

मानोदयेन चटित क्रोधं उपशमयति क्रोधाद्धायाम्।
मायोदयेन चटित क्रोधं मानं स्वकाद्धायाम् ॥३५६॥

स० टी०—पुंक्रोधोदयेनारूढस्य या सज्वलनक्रोधोदयाद्धा तस्यामेव पुंमानोदयेन श्रेण्यारूढ उदयरहितक्रोधत्रयमुपशमयति। तथा पुमायोदयेनारूढ उदयरहित क्रोधत्रय मानत्रय च पुंक्रोधोदयारूढस्य क्रोधप्रथमस्थितौ मानप्रथमस्थितौ चोपशमयति ॥३५६॥

स० च०—क्रोधका उदय सहित चढ्या जीवकै जो क्रोधके उदयका काल है तिस काल विषै ही मानका उदय सहित चढ्या जीव उदय रहित तीन क्रोधानिकौ उपशमावै है। बहुरि तैसै ही मायाका उदय सहित चढ्या जीव उदय रहित तीन क्रोध अर तीन मानका क्रमतै क्रोध सहित चढ्या जीवकै जो क्रोधकी प्रथम स्थिति अर मानकी प्रथम स्थितिका काल है तिस कालविषै ही उपशमावै ॥३५६॥

लोभोदएण चडिदो कोहं माणं च मायमुवसमदि।
अप्पप्पण अद्धाणे ताण पढमट्ठिदी णत्थि ॥३५७॥

लोभोदयेन चटित क्रोध मानं च मायामुपशमयति।
आत्मात्मन अध्वाने तेषा प्रथमस्थितिर्नास्ति ॥३५७॥

स० टी०—पुंलोभोदयेनारूढ उदयरहित क्रोधत्रय मानत्रय मायात्रय च पुंक्रोधोदयारूढस्य यथासख्य क्रोधप्रथमस्थितौ मानप्रथमस्थितौ मायाप्रथमस्थितौ चोपशमयति। तेषा क्रोधमानमायाना प्रथमस्थितिर्नास्त्युदयरहितत्वात् ॥३५७॥

स० च०—लोभका उदय सहित चढ्या जीव है सो उदय रहित तीन क्रोध तीन मान तीन माया तिनकौ क्रोध सहित चढ्या जीवकै जो क्रोधकी अर मानकी अर मायाकी प्रथम स्थितिका काल है तिस कालविषै क्रमतै उपशमावै है। अर याकै तिन क्रोधादिकनि की प्रथम स्थितिका अभाव है जातै लोभ सहित चढ्या जीवकै क्रोधादिकनिका उदय न पाइए है ॥३५७॥

माणोदयचडपडिदो कोहोदयमाणमेत्तमाणुदओ।
माणतियाण सेसे सेससम कुणदि गुणसेढी ॥३५८॥

मानोदयचटपतित क्रोधोदयमानमात्रमानोदय।
मानत्रयाणा शेषे शेषसम करोति गुणश्रेणीम् ॥३५८॥

स० टी०—पुमानोदयेन श्रेणिमारुह्य पतितस्य मानोदयकाल क्रोधोदयारूढस्य क्रोधमानोदयकालप्रमित। स मानोदयारूढपतितस्त्रिविध मानमपकृष्य ज्ञानावरणादिगुणश्रेणेरायामसमान गलितावशेषायामेन गुणश्रेणिं करोति। मायोदयारूढपतितस्य मायोदयकाल क्रोधोदयारूढस्य क्रोधमानमायोदयकालप्रमित। स मायोदयारूढपतितस्त्रिविधमायामपकृष्य ज्ञानावरणादिगुणश्रेण्यायामसमेन गलितावशेषायामेन गुणश्रेणिं करोति। लोभोदयारूढपतितस्य लोभोदयकाल क्रोधोदयारूढस्य क्रोधमानमायालोभोदयकालमात्र। स लोभोदयारूढपतितस्त्रिविधलोभमपकृष्य ज्ञानावरणादिगुणश्रेण्यायामसमेन गलितावशेषायामेन गुणश्रेणिं करोति ॥३५८॥

स० च०—मानका उदय सहित श्रेणी चढ पड्या जो जीव ताकै क्रोध उदय सहित चढ्या जीवकै क्रोध मानका उदय काल मिलाया हुआ जितना होइ तितना मानका उदय काल है। ऐसें

ही माया उदय सहित चढ्या पड्या जीवकैं क्रोध सहित चढ्याकै क्रोध मान मायाकै उदयका जितना काल होइ तितना मायाका उदय काल है। लोभ उदय सहित चढ्या पड्या जीवकैं क्रोध सहित चढ्याकै जितना क्रोध मान माया लोभका उदय काल होइ तितना एक लोभ हीका उदय काल हो है। बहुरि मान माया सहित चढिकरि पडे जीव क्रमतैं मान माया लोभका द्रव्यकौ अपकर्षणकरि ज्ञानावरणादिकनिकी गुणश्रेणि आयामके समान गलितावशेष आयामकरि गुणश्रेणि करै है। भावार्थ यहु—मानका उदय सहित चढि जो जीव पड्या ताकै क्रमतैं लोभ मानका उदय होइ। तहाँ मानका उदय भएँ मोहका गुणश्रेणि आयाम और कर्मनिके समान करै है। जातैं याकैं क्रोधका उदय होना नाहीं। ऐसैं ही माया सहित चड्या पढ्याकैं लोभका उदय आया पीछैं मायाका उदय आए अर लोभका उदय सहित चढि पड्याकैं लोभ हीका उदय है तातैं पहलैं ही अन्य कर्मनिके समान मोहका गलितावशेष गुणश्रेणि आयाम हो है ॥३५८॥

माणादितियाणुदये चडपडिये सगसगुदयसपत्ते।
णवछत्तिकसायाण गलिदवसेस करेदि गुणसेढि ॥३५९॥

मानादित्रयाणामुदये चटपतिते स्वकस्वकोदयसंप्राप्ते।
नवषट्त्रिकषायाणा गलितावशेषा करोति गुणश्रेणिम् ॥३५९॥

स० टी०—मानमायालोभोदयैरारूढपतित स्वस्वकषायोदय सम्प्राप्त यथासङ्ख्य नवषट्त्रिकषायाणा गलितावशेषायामा पूर्वोक्तप्रकारेण गुणश्रेणि करोति ॥३५९॥

स० च०—मान माया लोभका उदय सहित चढ्या पड्या जीव है ते अपनी-अपनी कषायका उदयकौ प्राप्त होत सते क्रमतैं नव कषायनिकी अर छह कषायनिकी अर तीन कषायनिकी पूर्वोक्त प्रकार गलितावशेष आयाम गुणश्रेणि करै हैं। भावार्थ यहु—जैसैं क्रोधका उदय सहित चढि पड्या जीव क्रोधका उदय आएँ बारह कषायनिका पूर्वोक्त प्रकार गलितावशेष आयाम लीएँ गुणश्रेणि करै है तैसै मानका उदय सहित चढि पड्या जीव मानका उदय आएँ क्रोध विना नव कषायनिका करै है। माया सहित चढि पड्या जीव मायाका उदय भएँ लोभ मायारूप छह कषायनिका करै है। लोभ सहित चढि पड्या जीव लोभका उदय आएँ तीन प्रकार लोभ हीका अन्य कर्मनिके समान गलितावशेष गुणश्रेणि आयाम करै है ॥३५९॥

जस्सुदएण य चडिदो तम्हि य उक्कट्टियम्हि पडिऊण।
अतरमाऊरेदि हु एवं पुरिसोदए चडिदो ॥३६०॥

यस्योदयेन च चटित तस्मिश्च अपकर्षिते पतित्वा।
अतरमापूरयति हि एव पुरुषोदये चटित ॥३६०॥

स० टी०—यस्य कषायस्योदयेन श्रेणिमारुह्य पतित तस्मिन् कषायेऽपकृष्टेऽन्तरमापूरयति। एव-मुक्तप्रकारेण पुवेदोदयेन श्रेण्यारुढावरुढो व्याख्यात ॥३६०॥

स० च०—जिस कषायका उदय सहित चढि पड्या होइ तिस ही कषायका द्रव्यका अपकर्षण होत सतैं अतरकौ पूरै है। नष्ट कीए निषेकनिका सद्भाव करै है। भावार्थ यहु—जैसैं क्रोध

सहित चढि पड्या जीव क्रोधका उदय आएँ द्रव्यकौ अपकर्षणकरि अतरकौ पूरै है तैसै मान सहित चढि पड्या जीव मानका उदय आएँ अर माया सहित चढि पड्या जीव मायाका उदय आएँ अर लोभ सहित चढि पड्या जीव लोभका उदय आएँ प्रथम समयविषै द्रव्यकौ अपकर्षणकरि जे अतर करणविषै निषेक नष्ट कीए थे तिनविषै द्रव्यका निक्षेपणकरि तिनका सद्भाव करै है। इस प्रकार पुरुषवेद सहित क्रोधादियुक्त श्रेणि चढने उतरनेवालाका व्याख्यान जानना ॥३६०॥

थीउदयस्स य एव अवगदवेदो हु सत्तकम्मसे।
सममुवसामदि सढस्सुदए चडिदस्स वोच्छामि ॥३६१॥

स्त्री-उदयस्य च एव अपगतवेदो हि सप्तकर्माशान्।
सममुपशमयति षंढस्योदये चटितस्य वक्ष्यामि ॥३६१॥

स० टी०—स्त्रीवेदोदयेन सहितै क्रोधादिकपायोदयै श्रेणिमारूढ, अपगतवेदोदय सन्नेव सप्त-नोकपायान् युगपदुपशमयति । *अवशिष्ट सर्वमुपशमनविधान पुवेदारूढवद्द्रष्टव्य ॥३६१॥*

स० च०—स्त्रीवेदयुक्त क्रोधादिकनिका उदय सहित श्रेणि चढ्या च्यारि प्रकार जीव है सो वेद उदय रहित होत सता पुरुषवेद अर छह हास्यादिकनिका इन सात नोकषायनिकौ युगपत् उपशमावै है। अन्य सर्व विधान पुरुषवेदका उदय सहित श्रेणी चढ्या जीवके समान जानना ॥३६१॥

अथ पढोदयारूढस्य विशेष वक्ष्यामि—

सढुदयतरकरणो संढद्धाणम्हि अणुवसतसे।
इत्थिस्स य अद्धाए सढं इत्थि च समगमुवसमदि ॥३६२॥

षढोदयान्तरकरण षढाद्धाया अनुपशान्ताशे।
स्त्रिय च अद्धाया षंढ स्त्रीं च समकमुपशमयति ॥३६२॥

स० टी०—नपुसकवेदोदयेन सहितै क्रोधादिकपायै श्रेण्यारूढो नपुसकवेदस्यान्तर कुर्वाण प्रथम-स्थितिपुवेदोदयारूढस्य नपुसकस्त्रीवेदोपशमनकालमत्री स्थापयित्वा प्रागेव नपुसकवेदोपशमन प्रारम्य पुवेदारूढ-नपुसकोपशमनकालपर्यन्त गच्छति नाद्यापि नपुसकवेदोपशमन समाप्त। तत स्त्रीवेदोपशमन प्रारम्य द्वावपि वेदावुपशमयन् पुवेदारूढस्य स्त्रीवेद पशमनकालमात्रमन्तर्मुहूर्तं गत्वा ॥३६२॥

अब नपुसक वेदका उदय सहित श्रेणी चढ्याकै विशेष है ताहि कहस्यो—

स० च—नपुसकवेद युक्त क्रोधादिकनिका उदय सहित श्रेणी चढ्या च्यारि प्रकार जीव सो नपुसकवेदका अन्तर करत सता पुरुषवेद सहित चढ्या जीवकै नपुसकवेद स्त्रीवेदकौ उपशम करनेका जितना काल है तावन्मात्र नपुसकवेदकी प्रथम स्थितिकौ स्थापै है। स्थापिकरि पुरुष वेद सहित चढ्या जीवकै नपुसकवेदकै उपशमनकाल जो पाइए है ताका अन्तपर्यन्त कालकौ नपुसक वेदकौ उपशमावता सता प्राप्त भया परि याकै नपुसक वेदका उपशम समाप्त न भया। तहाँ पीछै स्त्रीवेद नपुसकवेद इनि दोऊनिका युगपत् उपशम करने लगा। तहाँ पुरुषवेद सहित

चढ्या जीवकै स्त्रीवेदके उपशम करनेका जो काल तिस कालकौं प्राप्त होइ कहा सोक है है ॥३६२॥

ताहे चरिमसवेदो अवगदवेदो हु सत्तकम्मंसे ।
समगुवसामदि सेसा पुरिसोदयचलिदभंगा हु ॥३६३॥

तस्मिन् चरमसवेदो अवगतवेदो हि समकर्मांशान् ।
सममुपशमयति शेषा पुरुषोदयचलितभङ्गा हि ॥३६३॥

स० टी०—तदा चरमसमयसवेद स्त्रीनपुंसकवेदोपशमन निष्ठापयति । तत परमपगतवेद सप्त-नोकषायान् सममुपशमयति । शेष सर्वं पुंवेदारूढप्रकारेण ज्ञातव्यम् ॥३६३॥

स० च०—तहाँ सवेद अवस्थाका अन्त समयकौं प्राप्त होता सता स्त्रीवेद नपुंसकवेदके उपशमनकौं युगपत् समाप्त करै है। तातै परै अवगतवेदी होत सता पुंवेद अर छह हास्यादिक इन सात नोकषायनिकौं युगपत् उपशमावै है। अन्य सर्व पुरुषवेद सहित श्रेणी चढ्या जीवकै समान विधान जानना ॥३६३॥

अथोपशमश्रेण्यामल्पबहुत्वपदकथनप्रतिज्ञामाह—

पुंकोहस्स य उदए चलपडिदेऽपुव्वदो अपुव्वो त्ति ।
एदिस्से अद्धाणं अप्पाबहुगं तु वोच्छामि ॥३६४॥

पुंक्रोधस्य च उदये चटपतितेऽपूर्वंत अपूर्व इति ।
एतस्य अद्धानामल्पबहुकं तु वक्ष्यामि ॥३६४॥

स० टी०—पुंक्रोधोदयारूढावरूढस्यारोहकापूर्वकरणप्रथमसमयात्प्रभृति अवरोहकापूर्वकरणचरमसमय-पर्यन्ते काले सम्भवाल्पबहुत्वपदानि वक्ष्यामि ॥३६४॥

स० च०—पुरुषवेद अर क्रोध कषायका उदय सहित चढ्या पड्या जीवकैं आरोहक अपूर्व करणका प्रथम समयतैं लगाय अवरोहक अपूर्व करणका अन्त समय पर्यन्त कालविषैं सम्भवते जे अल्पबहुत्वके स्थान तिनकौं कहोगा। इहाँ श्रेणी चढनेवालाका नाम तो आरोहक जानना। उतरनेवालाका नाम अवरोहक जानना। बहुरि जहाँ विशेष अधिक है तहाँ पूर्वतैं किछु अधिक जानना। ऐसी सज्ञा है ॥३६४॥

अथ तान्येवाल्पबहुत्वपदानि व्याख्यातुं सप्तविंशतिगाथा प्ररूपयति—

अवरादो वरमहियं रसखंडुक्कीरणस्स अद्धाणं ।
संखगुणं अवरट्ठिदिखंडस्सुक्कीरणो कालो[1] ॥३६५॥

१ एत्तो पुरिसवेदेण सह कोहेण उवट्ठिदस्स पढमसमयअपुव्वकरणमादिं कादूण जाव पडिवदमाणस्स चरिमसमयअपुव्वकरणो त्ति एदिस्से अद्धाए जाणि कालसजुत्ताणि पदाणि तेसिमप्पाबहुअं वत्तइस्सामो। वही, पृ० १९२५।

२ सव्वत्थोवा जहण्णिया अणुभागखंडयउक्कीरणद्धा। उक्कस्सिया अणुभागखंडयउक्कीरणद्धा विसेसा-हिया। जहण्णिया ट्ठिदिबंधगद्धा ट्ठिदिखंडयउक्कीरणद्धा च तुल्लाओ सखेज्जगुणाओ। वही, पृ० १९२६।

अवरात् वरमधिक रसखडोत्करणस्याध्वानम् ।
सख्यगुण अवरस्थितिखडस्योत्करण काल ॥३६५॥

स० टी०—सर्वत स्तोको जघन्यानुभागकाण्डकोत्करणाद्धा २ १ ज्ञानावरणादिकर्मणामारोहक-सूक्ष्मसाम्परायचरमानुभागकाण्डकोत्करणाद्धा मोहनीयस्यान्तरकरणे क्रियमाणे तत्र चरमानुभागकाण्डकोत्करणाद्धा च जघन्या कथ्यते । १ । तत उत्कृष्टानुभागखण्डोत्करणाद्धा विशेपाधिका २ १ साप्यारोहकापूर्वकरण-प्रथमसमये सर्वकर्मणा भवति । २ । ततो ज्ञानावरणादिकर्मणा जघन्यस्थितिकाण्डकोत्करणकाल सूक्ष्मसाम्पराय चरमसमयसम्भवी अनिवृत्तिकरणचरमसमयसम्भवी मोहनीयस्य जघन्यस्थितिबन्धकालश्च सख्यातगुणौ २ १ ४ परस्पर समानौ । ३ । ॥३६५॥

स० च०—सर्वतै स्तोक जघन्य अनुभागकाडकोत्करणका काल अतर्मुहूर्तमात्र है सो यहु ज्ञानावरणादि कर्मनिका तौ आरोहक सूक्ष्मसाम्परायके अतका अनुभागकाडकोत्करण जानना अर मोहका अतर करत सता अतका अनुभागकाडकोत्करण जानना १ । तातै उत्कृष्ट अनुभाग-काडकोत्करण काल विशेष अधिक है, सो यहु सर्व कर्मनिका आरोहक अपूर्वकरणका प्रथम समय विषै सभवै है २ । तातै सूक्ष्मसाम्परायका अत समयविषै सभवता ऐसा ज्ञानावरणादि कर्मनिका जघन्य स्थितिकाडकोत्करण काल अर अनिवृत्तिकरणका अत समयविषै सभवता ऐसा मोहनीयका जघन्य स्थितिबध पडै सो काल सख्यातगुणे है । अर ते दोऊ परस्पर समान हैं ३ ॥३६५॥

पडणजहण्णट्ठिदिबधद्धा तह अतरस्स करणद्धा ।
जेट्ठट्ठिदिबधठिदीउक्कीरद्धा य अहियकमा[1] ॥३६६॥

पतनजघन्यस्थितिबन्धाद्धा तथा अन्तरस्य करणाद्धा ।
ज्येष्ठस्थितिबन्धस्थित्युत्करणाद्धा च अधिकक्रमा ॥३६६॥

स० टी०—तस्मादवतारकसूक्ष्मसाम्परायप्रथमसमये ज्ञानावरणादिकर्मणा जघन्यस्थितिबन्धकाल अव-तारकानिवृत्तिकरणप्रथमसमये मोहनीयस्य जघन्यस्थितिबधकालश्च विशेपाधिकौ परस्पर समानौ २ १ । ४ । ४ । एतस्मादन्तरकरणकालो विशेपाधिक २ १ । ४ । ननु पूर्वमेकस्थितिकाण्डकोत्करणकालसमान अन्तरकरण-काल इत्युक्तम् । इदानी विशेपाधिक इत्युच्यते, कथने पूर्वापरविरोध इति चेन्न मध्यमस्थितिकाण्डकोत्करण कालेनान्तरकरणकालस्य समानत्ववचनात् । ५ । तस्मादन्तरकरणकालादारोहकापूर्वकरणप्रथमसमयसम्भविनौ उत्कृष्टस्थितिबन्धकाल उत्कृष्टस्थितिकाण्डकोत्करणकालश्च विशेपाधिकौ २ १ ४ परस्पर समानौ ।६। ।३६६।

स० च०—तातैं अवरोहक सूक्ष्मसाम्परायका प्रथम समयविषै सभवता ज्ञानावरणादि

---

१ पडिवदमाणस्स जहण्णिया ट्ठिदिबधगद्धा विसेसाहिया । अतरकरणद्धा विसेसाहिया । उक्कस्सिया ट्ठिदिबधगद्धा ट्ठिदिखडयउक्कीरणद्धा च विसेसाहिया । वही, पृ० १९२६–१९२७ ।

कर्मनिका जघन्य स्थिति बधापसरण काल अर अवरोहक अनिवृत्तिकरणका प्रथम समय विषैं सभवता मोहका जघन्य स्थिति बधापसरणकाल विशेष अधिक है ते दोऊ परस्पर समान हैं ४। तातैं अतरकरण करनेका काल विशेष अधिक है।

इहाँ कोऊ कहै—पूर्वै स्थितिकाडकोत्करण कालके समान अतरकरण काल कह्या था इहाँ अधिक कैसे कहो हो ? ताका समाधान—पूर्वै तहाँ सभवता जो मध्य स्थिति काडकोत्करण काल ताके समान अतरकरण काल कह्या था इहाँ जघन्य स्थितिकाडकोत्करण कालतैं अधिक कह्या है। ५। तातैं आरोहक अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै सभवता ऐसा उत्कृष्ट स्थितिबध काल कहिए जेते काल समानरूप उत्कृष्ट स्थितिबध होइ ऐसा स्थितिबधापसरण काल अर उत्कृष्ट स्थिति काडकोत्करणकाल विशेष अधिक है ते दोऊ परस्पर समान हैं ॥३६६॥

सुहमंतिमगुणसेढी उवसतकसायगस्स गुणसेढी।
पडिवदसुहुमद्धा वि य तिण्णि वि सखेज्जगुणिदकमा[1] ॥३६७॥

सूक्ष्मातिमगुणश्रेणी उपशातकषायकस्य गुणश्रेणी।
प्रतिपतत्सूक्ष्माद्धापि च तिस्रोपि सख्येयगुणितक्रमा ॥३६७॥

स० टी०—तत आरोहकसूक्ष्मसाम्परायचरमसमयसम्भविगलितावशेषो गुणश्रेण्यायाम सख्यातगुण –
। ।।।
२ ᳚ । ४ । ४ । ७, तत उपशान्तकषायस्य प्रथमसमये आरब्धगुणश्रेण्यायाम सख्यातगुण —
। ।।। । ।।।
२ ᳚ । ४ । ४ । ४ । ८, तत प्रतिपतत्सूक्ष्मसाम्परायकाल २ ᳚ ४ । ४ । ४ । ४ । ९ ॥३६७॥

स० च०—तातैं अवरोहक सूक्ष्मसाम्परायका अत समयविषैं सभवता ऐसा गलितावशेष गुणश्रेणी आयाम सख्यातगुणा है। ७। तातैं उपशातकषायका प्रथम समयविषै आरभ्या ऐसा गुणश्रेणि आयाम सख्यातगुणा है। ८। तातैं पडनेवाला सूक्ष्मसाम्परायका काल सख्यातगुणा है। ९ ॥३६७॥

तग्गुणसेढी अहिया चलसुहुमो किट्टिउवसमद्धा य।
सुहुमस्स य पढमठिदी तिण्णि वि सरिसा विसेसाहिया[2] ॥३६८॥

तद्गुणश्रेणी अधिका चलसूक्ष्म कृष्टयुपशमाद्धा च।
सूक्ष्मस्य च प्रथमस्थितिः तिस्रोऽपि सदृशा विशेषाधिका. ॥३६८॥

---

१ चरिमसमयसुहुमसाम्पराइयस्स गुणसेढिणिक्खेवो सखेज्जगुणो। त चेव गुणसेढिसीसय ति भण्णदि। उवसतकसायस्स गुणसेढिणिक्खेवो सखेज्जगुणो। पडिवदमाणयस्स सुहुमसापराइयद्धा सखेज्जगुणा। वही, पृ० १९२७।

२ तस्सेव लोभस्स गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ। उवसामगस्स सुहुमसापराइयद्धा किट्टीणमुवसामणद्धा सुहुमसापराइयस्स पढमट्ठिदी च तिण्णि वि तुल्लाओ विसेसाहियाओ। वही, पृ० १९२७।

म० टी०— तस्मात्प्रतिपतत्सूक्ष्मसापरायस्य सज्वलनलोभगुणश्रेण्यायाम आवलिमात्रेण विशेषाधिक
१ ___
२ ७ । १०, तत आरोहकसूक्ष्मसाम्परायकाल सूक्ष्मकृष्ट्युपशमनकाल सूक्ष्मसाम्परायप्रथमस्थित्यायामश्च
१ ।
विशेषाधिका २ ७ परस्पर समाना । अत्र विशेषप्रमाणमन्तर्मुहूर्तमात्रम ११ । ।।३६८।।

स० च०— तातै पडनेवाला सूक्ष्मसाम्परायकै लोभका गुणश्रेणि आयाम आवलीमात्र विशेष करि अधिक है। १० । तातैं आरोहक सूक्ष्मसाम्परायका काल अर सूक्ष्मकृष्टि उपशमावनेका काल अर सूक्ष्मसाम्परायका प्रथम स्थिति आयाम यथासभव अन्तर्मुहूर्तमात्र विशेषकरि अधिक हैं। ए तीनौ परस्पर समान हैं। ११ ।।३६८।।

किट्टीकरणद्धहिया पडबादरलोभवेदगद्धा हु ।
सखगुणा तस्सेव य तिलोहगुणसेढिणिक्खेओ[1] ।।३६९।।

कृष्टिकरणाद्धाधिका पतद्बादरलोभवेदकाद्धा हि ।
संख्यगुणं तस्यैव च त्रिलोभगुणश्रेणिनिक्षेप ।।३६९।।

१ ।।
स० टी०—तत सूक्ष्मकृष्टिकरणकालो विशेषाधिक २ ७ अय चानिवृत्तिकरणकालस्य किंचिन्न्यून-
त्रिभागमात्र २ ७ १ – । १२ । तत पतद्बादरसाम्परायस्य वादरलोभवेदककाल सख्यातगुण २ ७ २ । १३ ।
३ । ३
तत पतदनिवृत्तिकरणस्य लोभत्रयगुणश्रेणिनिक्षेप आवलिमात्रेणाधिक २ ७ । २ ।१४ ।।३६९।।
३

स० च०—तातैं सूक्ष्मकृष्टि करनेका काल विशेष अधिक है। सो यहु अनिवृत्तिकरण कालका किंचित् न्यून त्रिभागमात्र है। १२ । तातैं पडनेवाले बादर साम्परायके बादर लोभ-वेदकका काल सख्यातगुणा है। १३ । तातैं पडनेवालें अनिवृत्तिकरणके तीन लोभकी गुणश्रेणी का आयाम आवलीमात्र अधिक है। १४ ।।३६९।।

चडबादरलोहस्स य वेदगकालो य तस्स पढमठिदी ।
पडलोहवेदगद्धा तस्सेव य लोहपढमठिदी[2] ।।३७०।।

चटबादरलोभस्य च वेदककालश्च तस्य प्रथमस्थिति ।
पतल्लोभवेदकाद्धा तस्यैव च लोभप्रथमस्थिति ।।३७०।।

---

१ उवसामगस्स किट्टीकरणद्धा विसेसाहिया। पडिवदमाणगस्स वादरसापराइयस्स लोभवेदगद्धा सखेज्जगुणा। तस्सेव लोभस्स तिविहस्स वि तुल्लो गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ। वही, पृ० १९२८।

२ उवसामगस्स वादरसापराइयस्स लोभवेदगद्धा विसेसाहिया। तस्सेव पढमट्ठिदी विसेसाहिया। पडिवदमाणयस्स लोभवेदगद्धा विसेसाहिया। वही, पृ० १९२८।

स० टी०—तस्मादारोहकानिवृत्तिकरणस्य बादरलोभवेदककालोऽन्तर्मुहूर्तमात्रेणाधिक २ ♀ । २ । १५ । ततः आरोहकानिवृत्तिकरणस्य बादरलोभप्रथमस्थित्यायामो विशेषाधिक २ ♀ । २ । १६ । ततः पतद्बादर-लोभवेदककालो विशेषाधिक २ ♀ । १७ । ततोऽवतारकस्य लोभप्रथमस्थित्यायाम आवलिमात्रेणाधिक १ / २ ♀ । १८ ॥३७०॥

स० च०—तातैं आरोहक अनिवृत्तिकरणकैं बादरलोभका वेदककाल अंतर्मुहूर्तकरि अधिक है । १५ । तातैं आरोहक अनिवृत्तिकरणकैं बादर लोभका प्रथम स्थितिका आयाम विशेष अधिक है । १६ । तातैं पडनेवालाकैं बादर लोभका वेदककाल विशेष अधिक है । १७ । तातैं उतरनेवालेकैं लोभकी प्रथम स्थितिका आयाम आवलीमात्र अधिक है । १८ ॥३७०॥

तम्मायावेदद्धा पडिवडछण्हपि खित्तगुणसेढी ।
तम्माणवेदगद्धा तस्स णवण्ह पि गुणसेढी[1] ॥३७१॥

तन्मायावेदकाद्धा प्रतिपतत्षण्णामपि क्षिप्तगुणश्रेणी ।
तन्मानवेदकाद्धा तस्य नवानामपि गुणश्रेणी ॥३७१॥

स० टी०—ततः पतन्मायावेदककालोऽन्तर्मुहूर्तमात्रेणाधिक २ ♀ । १९ । ततः प्रतिपतन्मायावेदकस्य षण्णां कषायाणां गुणश्रेण्यायाम आवलिमात्रेणाधिक । २ ♀ । २० । ततः प्रतिपतन्मानवेदककालोऽन्तर्मुहूर्तेनाधिक २ ♀ २१ । ततस्तस्यैव नवानां कषायाणां गुणश्रेण्यायाम आवलिमात्रेणाधिक १ ♀ २२ ॥३७१॥

स० च०—तातैं पडनेवालेकैं मायावेदक काल अंतर्मुहूर्त करि अधिक है । १९ । तातैं पडनेवाले मायावेदकके छह कषायनिका गुणश्रेणी आयाम आवली करि अधिक है । २० । तातैं पडनेवालेकैं मान वेदककाल अंतर्मुहूर्तकरि अधिक है । २१ । तातैं तिसहीकैं नव कषायनिका गुणश्रेणी आयाम आवलीकरि अधिक है । २२ ॥३७१॥

चडमायावेदद्धा पढमट्ठिदिमायउवसमद्धा य ।
चलमाणवेदगद्धा पढमट्ठिदिमाणउवसमद्धा य[2] ॥३७२॥

---

1 पडिवदमाणगस्स मायावेदगद्धा विसेसाहिया । तस्सेव मायावेदगस्स छण्हं कम्माण गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ । पडिवदमाणगस्स माणवेदगद्धा विसेसाहिया । तस्सेव पडिवदमाणयस्स माणवेदगस्स णवण्हं कम्माण गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ । वही, पृ० १९२९ ।

२. उवसामयस्स मायावेदगद्धा विसेसाहिया । मायाए पठमट्ठिदी विसेसाहिया । मायाए उवसामणद्धा

चटमायावेदाद्धा प्रथमस्थितिमाया उपशमाद्धा च ।
चटमानवेदकाद्धा प्रथमस्थितिमानोपशमाद्धा च ॥३७२॥

म० टी०—तत आरोहकमायावेदककालोऽन्तमुहूर्तेनाधिक २ १ । २३ ततस्तन्मायाप्रथमस्थित्यायाम उच्छिष्टावलिमात्रेणाधिक २ १ २४ । ततो मायोपशमनकाल समयोनावलिमात्रेणाधिक २ १ २५ । तत आरोहकमानवेदककालोऽन्तमुहूर्तमात्रेण विशेषाधिक २ १ २६ । ततस्तत्प्रथमस्थित्यायाम आवलिमात्रेणाधिक २ १ २७ । ततस्तन्मानोपशमनकाल समयोनावलिमात्रेणाधिक २ १ । २८ ॥३७२॥

स० च० तातैं चढनेवालेकैं माया वेदककाल अतमुंहूर्त करि अधिक है । २३ । तातैं तिसकै मायाकी प्रथम स्थितिका आयाम उच्छिष्टावलीकरि अधिक है । २४ । तातैं मायाके उपशमावनेका काल समय घाटि आवलीमात्र अधिक है । २५ । तातैं चढनेवालेकैं मान वेदक काल अतमुंहूर्त करि अधिक है । २६ । तातैं ताकी प्रथम स्थितिका आयाम आवलीमात्र अधिक है ।२७। तातैं ताकै मान उपशमावनेका काल समय घाटि आवली मात्र अधिक है । २८ ॥३७२॥

कोहोवसामणद्धा छप्पुरिसित्थीणउवसमाण च ।
खुद्दभवगहण च य अहियकमा एक्कवीसपदा ॥३७३॥

क्रोधोपशामनाद्धा षट्पुरुषस्त्रीनपुंसोपशामाना च ।
क्षुद्रभवग्रहण च च अधिकक्रमाणि एकविंशपदानि ॥३७३॥

स० टी०—तत क्रोधोपशमनकालोऽन्तर्मुहूर्तमात्रेणाधिक २ १ २९ । तत षण्णोकषायोपशमनकालो विशेषाधिक २ १ ३० । तत पुंवेदोपशमनकाल समयोनद्व्यावलिमात्रेणाधिक २ १ । ३१ । तत स्त्रीवेदोपशमनकालोऽन्तर्मुहूर्तमात्रेणाधिक २ १ ३२ । ततो नपुंसकवेदोपशमनकालोऽन्तर्मुहूर्तमात्रेणाधिक २ १ ३३ । तत क्षुद्रभवग्रहण विशेषाधिक १ । ३४ ॥३७३॥
१८

स० च०—तातैं क्रोधके उपशमावनेका काल अतमुंहूर्तकरि अधिक है ॥२९॥ तातैं छह नोकषायनिके उपशमावनेका काल विशेष अधिक है ॥३०॥ तातैं पुरुषवेदके उपशमावनेका काल समयघाटि दोय आवलीकरि अधिक है ॥३१॥ तातैं स्त्रीवेद उपशमावनेका काल अतमुंहूर्तकरि

विसेसाहिया । उवसामगस्स माणवेदगद्धा विसेसाहिया । माणस्स पढमट्ठिदी विसेसाहिया । माणस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया । वही, पृ० १९२८–१९३० ।

१ कोहस्स उवसामगद्धा विसेसाहिया । छण्णोकसायाणमुवसामणद्धा विसेसाहिया । पुरिसवेदस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया । इत्थिवेदस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया । णवुंसयवेदस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया । खुद्दाभवग्गहण विसेसाहिय । वही, पृ० १९३० ।

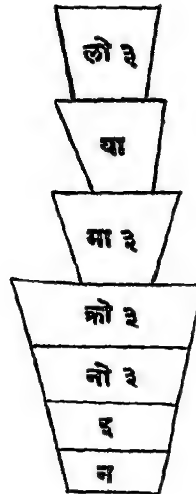
अधिक है ।।३२।। तातै नपुंसकवेद उपशमावनेका काल अंतर्मुहूर्तकरि अधिक है ।।३३।। तातैं क्षुद्रभवका काल विशेष अधिक है सो यहु एक उश्वासके अठारहवें भागमात्र है ३४ ।।३७३।।

उवसतद्धा दुगुणा तत्तो पुरिसस्स कोहपढमठिदी ।
मोहोवसामणद्धा तिण्णि वि अहियक्कमा होंति ।।३७४।।

उपशान्ताद्धा द्विगुणा ततः पुरुषस्य क्रोधप्रथमस्थितिः ।
मोहोपशमनाद्धा त्रीण्यपि अधिकक्रमाणि भवति ।।३७४।।

स० टी०—ततः उपशान्तकषायकालो द्विगुणः १ । २ । ३५ । ततः पुंवेदस्य प्रथमस्थित्यायामो विशेषा-
१८

धिकः २ १ । ३६ । ततः सज्वलनक्रोधप्रथमस्थित्यायामः किंचिन्न्यूनत्रिभागमात्रेणाधिकः २ १ । ३७ । ततो मोहनीयस्योपशमनकालः नपुंसकवेदोपशमनप्रारम्भात् प्रभृति मानमायालोभोपशमनकालैः साधिकः २ १ । ३८ । ।।३७४।।



स० च०—तिस क्षुद्रभवतैं उपशातकषायका काल दूणा है। तातैं पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिका आयाम विशेष अधिक है। ३६। तातैं सज्वलनक्रोधकी प्रथम स्थितिका आयाम किंचित् न्यून त्रिभाग मात्रकरि अधिक है। ३७। तातैं सर्व मोहनीयका उपशमावनेका काल है

१ उवसतद्धा दुगुणा। पुरिसवेदस्स पढमट्ठिदी विसेसाहिया। कोहस्स पढमट्ठिदी विसेसाहिया। मोहणीयस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया। वही, पृ० १९३१।

सौ नपुसक वेदके उपशमावनेका प्रारम्भतै लगाय मान माया लोभका उपशमकालनिकरि साधिक है। ३८ ॥३७४॥

पडणस्स असंखाणं समयपबद्धाणुदीरणाकालो।
सखगुणो चडणस्स य तक्कालो होदि अहिया य[1] ॥३७५॥

पतनस्यासख्याना समयप्रबद्धानामुदीरणाकाल ।
सख्यगुण चटनस्य च तत्कालो भवत्यधिकश्च ॥३७५॥

स० टी०—तत पततोऽसख्यातसमयप्रबद्धोदीरणाकाल सख्येयगुण २ ᳲ ४। ३९। तत आरोहकस्यासख्येयसमयप्रबद्धोदीरणाकालोऽन्तर्मुहूर्तमात्रेण विशेषाधिक २ ᳲ। ४। ४० ॥३७५॥

स० च०—तातैं पडनेवालेकै असख्यात समयप्रबद्धकी उदीरणा होनेका काल सख्यातगुणा है ३९। तातै चढनेवालेकै असख्यात समयप्रबद्धका उदीरणा होनेका काल अतर्मुहूर्तमात्र अधिक है। ४० ॥३७५॥

पडणाणियट्टियद्धा सखगुणा चडणगा विसेसहिया।
पडमाणा पुव्वद्धा संखगुणा चडगणा अहिया[2] ॥३७६॥

पतनानिवृत्त्यद्धा सख्यगुणा चटनका विशेषाधिका।
पतत्यापूर्वाद्धा सख्यगुणा चटनका अधिका ॥३७६॥

स० टी०—पततोऽनिवृत्तिकरणकालस्तत सख्येयगुणा २ ᳲ। ४। ४। ४१। आरोहकानिवृत्तिकरणकालस्ततोऽन्तर्मुहूर्तमात्रेण विशेषाधिक २ ᳲ। ४। ४। ४२। तत पतदपूर्वकरणकाल सख्येयगुण। २ ᳲ ᳲ। ४३। तत आरोहकापूर्वकरणकालोऽन्तर्मुहूर्तमात्रेणाधिक २ ᳲ ᳲ। ४४ ॥३७६॥

स० च०—तातै पडनेवालेकै अनिवृत्तिकरणका काल सख्यातगुणा है। ४१। तातै चडनेवालेकै अनिवृत्तिकरणका काल अतर्मुहूर्तमात्र करि अधिक है। ४२। तातैं पडनेवालेकै अपूर्वकरणका काल सख्यातगुणा है। ४३। तातै चडनेवालेकै अपूर्वकरणका काल अन्तर्मुहूर्तकरि अधिक है। ४४ ॥३७६॥

१ पडिवदमाणगस्स जाव असखेज्जाण समयपवद्धाणमुदीरणा सो कालो सखेज्जगुणो। उवसामगस्स असखेज्जाण समयपवद्धाणमुदीरणाकालो विसेसाहिओ। वही, पृ० १९३२।

२ पडिवदमाणयस्स अणियट्टिअद्धा सखेज्जगुणा। उवसामगस्स अणियट्टिअद्धा विसेसाहिया। पडिवदमाणयस्स अपुव्वकरणद्धा सखेज्जगुणा। उवसामगस्स अपुव्वकरणद्धा विसेसाहिया। वही, पृ० १९३२।

पडिवडवरगुणसेढी चढमाणापुव्वपढमगुणसेढी ।
अहियकमा उवसामगकोहस्स य वेदगद्धा हु¹ ॥३७७॥

प्रतिपतद्वरगुणश्रेणी चटदपूर्वप्रथमगुणश्रेणी ।
अधिकक्रमा उपशामकक्रोधस्य च वेदकाद्धा हि ॥३७७॥

स० टी०—तत प्रतिपतत. सूक्ष्मसाम्परायप्रथमसमये प्रारव्धोत्कृष्टगुणश्रेण्यायामोऽन्तर्मुहूर्तेनाधिक

। २ ७ ।७। ४५ । आरोहकापूर्वकरणप्रथमसमयगुणश्रेण्यायामस्ततोऽन्तर्मुहूर्तेनाधिक ।।। २ ७ ७ । ४६ । तत आरोह-

कस्य क्रोधवेदककाल सख्येयगुण ।।।। २ ७ ७ । ४७ । अध प्रवृत्तप्रथमसमयादारम्य सज्वलनक्रोधवेदकत्वेना-
पूर्वकरणप्रथमसमयारब्धगुणश्रेण्यायामात् क्रोधवेदककालस्य सख्येयगुणत्वसभवात ॥३७७॥

स० च०—तातैं पडनेवालेकै सूक्ष्मसाम्परायका प्रथम समयविषै आरम्या ऐसा उत्कृष्ट गुणश्रेणि आयाम सो अतर्मुहूर्तकरि अधिक है । ४५ । तातै चढनेवालेकै अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै जाका आरभ भया ऐसा उत्कृष्ट गुणश्रेणि आयाम सो अतर्मुहूर्त करि अधिक है । ४६ । तातै चढनेवालेकै क्रोधवेदककाल सख्यातगुणा है, जातै याका आरभ तो अध करणका प्रथम समयतैही है अर गुणश्रेणी आयामका आरभ अपूर्वकरणके प्रथम समयतैं है । तातै असख्यात गुणापना सभवै है । ४७ ॥३७७॥

सजदअधापवत्तगगुणसेढी दसणोवसंतद्धा ।
चारित्ततरिगठिदी दंसणमोहतरठिदीओ ॥३७८॥

सयताध प्रवृत्तकगुणश्रेणी दर्शनोपशान्ताद्धा ।
चारित्रान्तरिकस्थिति दर्शनमोहान्तरस्थिति ॥३७८॥

स० टी०—तत प्रतिपतत स्वस्थानाप्रमत्तसयतस्य प्रथमसमयकृतगुणश्रेण्यायाम सख्येयगुण । ४८ । ततो दर्शनमोहस्योपशान्तावस्थाकाल सख्येयगुण । चारित्रमोहोपशमनात्पूर्व पश्चाच्चाप्रमत्ताद्यसयतकालपर्यत द्वितीयोपशमसम्यक्त्वानुपालनात् । ४९ । ततश्चारित्रमोहान्तरायाम सख्येयगुण । ५० । ततो दर्शनमोहस्यन्तरायाम सख्येयगुण । ५१ ॥३७८॥

स० च०—तातै पडनेवाला अप्रमत्तसयमीकै प्रथम समयविषै कीया गुणश्रेणि आयाम सो सख्यातगुणा है । ४८ । तातै दर्शनमोहका उपशम अवस्थाका काल सख्यातगुणा है जातै

१ पडिवदमाणगस्स उक्कस्सओ गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ । उवसामगस्स अपुव्वकरणस्स पढम समयगुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ । उवसामगस्स कोघवेदगद्धा सखेज्जगुणा । वही, पृ० १९३२ ।

२ अधापवत्तसजदस्स गुणसेढिणिक्खेवो सखेज्जगुणो । दसणमोहणीयस्स उवसतद्धा सखेज्जगुणा । चारित्तमोहणीयमुवसामगो अतर करेंतो जाओ ट्ठिदीओ उक्कीरदि ताओ ट्ठिदीओ सखेज्जगुणाओ । दसण-मोहणीयस्स अतरट्ठिदीओ सखेज्जगुणाओ । वही, पृ० १९३२–१९३३ ।

सौं नपुंसक वेदके उपशमावनेका प्रारम्भतैं लगाय मान माया लोभका उपशमकालनिकरि साधिक है। ३८ ॥३७४॥

पडणस्स असंखाणं समयपबद्धाणुदीरणाकालो ।
संखगुणो चडणस्स य तक्कालो होदि अहिया य[1] ॥३७५॥

पतनस्यासंख्यानां समयप्रबद्धानामुदीरणाकालः ।
संख्यगुणः चटनस्य च तत्कालो भवत्यधिकश्च ॥३७५॥

|||
स० टी०—ततः पततोऽसंख्यातसमयप्रबद्धोदीरणाकालः संख्येयगुणः २ १ ४ । ३९ । ततः आरोह-
||
कस्यासंख्येयसमयप्रबद्धोदीरणाकालोऽन्तर्मुहूर्तमात्रेण विशेषाधिकः २ १ । ४ । ४० ॥३७५॥

स० च०—तातैं पडनेवालेकैं असंख्यात समयप्रबद्धकी उदीरणा होनेका काल संख्यातगुणा है ३९। तातैं चढनेवालेकै असंख्यात समयप्रबद्धका उदीरणा होनेका काल अंतर्मुहूर्तमात्र अधिक है। ४० ॥३७५॥

पडणाणियट्टियद्धा संखगुणा चडणगा विसेसहिया ।
पडमाणा पुव्वद्धा संखगुणा चडगणा अहिया[2] ॥३७६॥

पतनानिवृत्त्यद्धा संख्यगुणा चटनका विशेषाधिका ।
पतत्यापूर्वाद्धा संख्यगुणा चटनका अधिका ॥३७६॥

||| ।
स० टी०—पततोऽनिवृत्तिकरणकालस्ततः संख्येयगुणः २ १ । ४ । ४ । ४१ । आरोहकानिवृत्ति-
||| । ।
करणकालस्ततोऽन्तर्मुहूर्तमात्रेण विशेषाधिकः २ १ । ४ । ४ । ४२ । ततः पतदपूर्वकरणकालः संख्येयगुणः ।
।
२ १ १ । ४३ । ततः आरोहकापूर्वकरणकालोऽन्तर्मुहूर्तमात्रेणाधिकः २ १ १ । ४४ ॥३७६॥

स० च०—तातैं पडनेवालेकैं अनिवृत्तिकरणका काल संख्यातगुणा है। ४१। तातैं चडनेवालेकैं अनिवृत्तिकरणका काल अंतर्मुहूर्तमात्र करि अधिक है। ४२। तातैं पडनेवालेकैं अपूर्वकरणका काल संख्यातगुणा है। ४३। तातैं चडनेवालेकैं अपूर्वकरणका काल अन्तर्मुहूर्तकरि अधिक है। ४४ ॥३७६॥

---

१ पडिवदमाणगस्स जाव असंखेज्जाणं समयपबद्धाणमुदीरणा सो कालो संखेज्जगुणो । उवसामगस्स असंखेज्जाणं समयपबद्धाणमुदीरणाकालो विसेसाहिओ । वही, पृ० १९३२ ।

२ पडिवदमाणयस्स अणियट्टिअद्धा संखेज्जगुणा । उवसामगस्स अणियट्टिअद्धा विसेसाहिया । पडिवदमाणयस्स अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा । उवसामगस्स अपुव्वकरणद्धा विसेसाहिया । वही, पृ० १९३२ ।

पडिवडवरगुणसेढी चडमाणापुव्वपढमगुणसेढी ।
अहियकमा उवसामगकोहस्स य वेदगद्धा हु[1] ॥३७७॥

प्रतिपतद्वरगुणश्रेणी चटदपूर्वप्रथमगुणश्रेणी ।
अधिकक्रमा उपशामकक्रोधस्य च वेदकाद्धा हि ॥३७७॥

स० टी०—तत प्रतिपतत सूक्ष्मसाम्परायप्रथमसमये प्रारब्धोत्कृष्टगुणश्रेण्यायामोऽन्तर्मुहूर्तेनाधिक २ १ ।१। ४५ । आरोहकापूर्वकरणप्रथमसमयगुणश्रेण्यायामस्ततोऽन्तर्मुहूर्तेनाधिक २ १ १ । ४६ । तत आरोहकस्य क्रोधवेदककाल सख्येयगुण २ १ १ । ४७ । अध प्रवृत्तप्रथमसमयादारभ्य सज्वलनक्रोधवेदकत्वेनापूर्वकरणप्रथमसमयारब्धगुणश्रेण्यायामात् क्रोधवेदककालस्य सख्येयगुणत्वसभवात् ॥३७७॥

स० च०—तातै पडनेवालेकै सूक्ष्मसाम्परायका प्रथम समयविषै आरभ्या ऐसा उत्कृष्ट गुणश्रेणि आयाम सो अतमुहूर्तकरि अधिक है । ४५ । तातै चढनेवालेकै अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै जाका आरभ भया ऐसा उत्कृष्ट गुणश्रेणि आयाम सो अतमुहूर्त करि अधिक है । ४६ । तातै चढनेवालेकै क्रोधवेदककाल सख्यातगुणा है, जातै याका आरभ तो अध करणका प्रथम समयतैही है अर गुणश्रेणी आयामका आरभ अपूर्वकरणके प्रथम समयतै है । तातै असख्यात गुणापना सभवै है । ४७ ॥३७७॥

सजदअधापवत्तगगुणसेढी दसणोवसंतद्धा ।
चारित्तंतरिगठिदी दसणमोहतरठिदीओ ॥३७८॥

सयताधःप्रवृत्तकगुणश्रेणी दर्शनोपशान्ताद्धा ।
चारित्रान्तरिकस्थिति दर्शनमोहान्तरस्थिति ॥३७८॥

स० टी०—तत प्रतिपतत स्वस्थानाप्रमत्तसयतस्य प्रथमसमयकृतगुणश्रेण्यायाम सख्येयगुण । ४८ । ततो दर्शनमोहस्योपशान्तावस्थाकाल सख्येयगुण । चारित्रमोहोपशमनात्पूर्वं पश्चाच्चाप्रमत्ताद्यसयतकालपर्यंत द्वितीयोपशमसम्यक्त्वानुपालनात् । ४९ । ततश्चारित्रमोहान्तरायाम सख्येयगुण । ५० । ततो दर्शनमोहस्यन्तरायाम सख्येयगुण । ५१ ॥३७८॥

स० च०—तातै पडनेवाला अप्रमत्तसयमीकै प्रथम समयविषै कीया गुणश्रेणि आयाम सो सख्यातगुणा है । ४८ । तातै दर्शनमोहका उपशम अवस्थाका काल सख्यातगुणा है जातै

---

१ पडिवदमाणगस्स उक्कस्सओ गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ । उवसामगस्स अपुव्वकरणस्स पढमसमयगुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ । उवसामगस्स कोधवेदगद्धा सखेज्जगुणा । वही, पृ० १९३२ ।

२ अधापवत्तसजदस्स गुणसेढिणिक्खेवो सखेज्जगुणो । दसणमोहणीयस्स उवसतद्धा सखेज्जगुणा । चारित्तमोहणीयमुवसामगो अतर करेंतो जाओ ट्ठिदीओ उक्कीरदि ताओ ट्ठिदीओ सखेज्जगुणाओ । दसणमोहणीयस्स अतरट्ठिदीओ सखेज्जगुणाओ । वही, पृ० १९३२–१९३३ ।

चारित्रमोहके उपशमनकालतैं पीछे वा पहलै अप्रमत्तादि असयत पर्यन्त द्वितीयोपशम सम्यक्त्वका सद्भाव करै है। ४९। तातैं चारित्रमोहका अन्तर आयाम सख्यातगुणा है। ५०। तातैं दशन मोहका अन्तर आयाम सख्यातगुणा है। ५१ ॥३७८॥

अवराजेट्ठाबाहा चडपडमोहस्स अवरठिदिबधो ।
चडपडतिघादिअवरट्ठिदिबंधतोमुहुत्तो य[1] ॥३७९॥

अवराज्येष्ठाबाधा चटपतमोहस्य अवरस्थितिबन्ध ।
चटपतत्रिघात्यवरस्थितिबधान्तर्मुहूर्तश्च ॥३७९॥

स० टी०—तत आरोहकसूक्ष्मसाम्परायचरमसमये ज्ञानावरणादिबन्धस्य जघन्याबाधा सख्येयगुणा, मोहनीयस्य पुनरारोहकानिवृत्तिचरमसमये जघन्याबाधा ग्राह्या। ५२। ततोऽवरोहकापूर्वकरणचरमसमये सर्वकर्मणा स्थितिबन्धस्योत्कृष्टाबाधा सख्येयगुणा २१ साऽप्यन्तर्मुहूर्तप्रमिता एव। ५३। तत आरोहकानिवृत्तिकरणचरम(प्रथम)समये मोहजघन्यस्थितिबन्ध सख्येयगुण, सोऽप्यन्तर्मुहूर्तप्रमित एव। ५४। ततोऽवरोहकानिवृत्तिप्रथमसमये मोहजघन्यस्थितिबन्ध सख्येयगुण स चारोहकस्थितिबन्धादवरोहकस्थितिबन्धस्य द्विगुणत्वसभवाद् युक्त एव। ५५। ततश्चारोहकसूक्ष्मसाम्परायप्रथमसमये घातित्रयस्य जघन्यस्थितिबन्ध सख्येयगुण। ५६। ततं ऽपरोहकसूक्ष्मसाम्परायप्रथमसम्ये घातित्रयस्य जघन्यस्थितिबन्ध सख्येयगुण स पूर्वस्माद्द्विगुण एव। ५७। तत उत्कृष्टान्तर्मुहूर्तं सख्येयगुण २१-१। ५८। समयोनमुहूर्तं उत्कृष्टान्तर्मुहूर्तं इति प्रतिपादनात्। अनेनान्तदीपकपदेन इत पूर्वपदाना सर्वेषामन्तर्मुहर्तमात्रत्वमेव सूचितम् ॥३७९॥

स० च०—तातैं चढनेवालेकैं सूक्ष्मसाम्परायका अत समय विषै सभवता ज्ञानावरणादिकका अर अनिवृत्तिकरणका अन्त समयविषैं सभवता मोहका स्थितिबन्धकी जघन्य आबाधा सो सख्यातगुणी है। ५२। तातैं उतरनेवालेकैं अपूर्वकरणका अन्त समय विषैं सभवती सर्व कर्मनिका स्थितिबन्धकी उत्कृष्ट आबाधा सख्यातगुणी है। ५३। तातैं चढनेवालेकैं अनिवृत्ति करणका प्रथम समयविषैं सभवता मोहका जघन्य स्थितिबन्धका प्रमाण सो सख्यातगुणा है। ५४। तातैं उतरनेवालेकैं अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयविषैं सभवता मोहका जघन्य स्थितिबन्धका प्रमाण सख्यातगुणा है। इहाँ सख्यातका प्रमाण दोय जानना। ५५। तातैं चढनेवालेकैं सूक्ष्मसाम्परायका अन्त समयविषैं सभवता ऐसा तीन घातिया कर्मनिका जघन्य स्थितिबन्ध सो सख्यातगुणा है। ५६। तातैं उतरनेवालेकैं सूक्ष्मसाम्परायका प्रथम समयविषैं सभवता तीन घातिया कर्मनिका जघन्य स्थितिबन्ध सो सख्यातगुणा है सो दूणा जानना। ५७। तातैं उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त सख्यातगुणा है सो एक समय घाटि दोय घडी प्रमाण जानना। ५८। इहाँ अत दीपक न्यायकरि पूर्वै जे सर्व काल कहे थे ते सर्व अन्तर्मुहूर्त मात्र ही जानने। जातैं अन्तर्मुहूर्तके भेद बहुत हैं ॥३७९॥

---

१ जहण्णिया आबाहा सखेज्जगुणा। उक्कस्सिया आबाहा सखेज्जगुणा। उवसामगस्स मोहणीयस्स जहण्णादो ट्ठिदिबधो सखेज्जगुणो। पडिवदमाणयस्स मोहणीयस्स जहण्णओ ट्ठिदिबधो सखेज्जगुणो। उवसामगस्स णाणावरण-दसणावरण-अतराइयाण जहण्णट्ठिदिबधो सखेज्जगुणो। एदेसिं चेव कम्माण पडिवदमाणयस्स जहण्णगो ठिदिबधो सखेज्जगुणो। अतोमुहुत्तो सखेज्जगुणो। वही पृ० १९३३–१९३४।

चडमाणस्स य णामागोदजहण्णट्ठिदीण बंधो य ।
तेरसपदासु कमसो संखेण य होंति गुणियकमा[1] ॥३८०॥

चटत: च नामगोत्रजघन्यस्थितीना बन्धश्च ।
त्रयोदशपदेषु क्रमश संख्येन च भवन्ति गुणितक्रमा ॥३८०॥

स० टी०—तत आरोहकस्य नामगोत्रयोर्जघन्यस्थितिबन्ध सख्येयगुण सोऽपि षोडशमुहूर्तमात्र । ५९ । स्वस्वबन्धव्युच्छित्तिचरमसमये ग्राह्य ॥३८०॥

स० च०—तातै चढनेवालेकै नामगोत्रका जघन्य स्थितिबध सख्यात गुणा है सो सोलह मुहूर्त मात्र है ।५९। सो यहु जघन्य बध अपनी अपनी व्युच्छित्तिका अत समय विषै जानना ॥३८०॥

चलतदियअवरबंध पडणामागोदअवरठिदिबंधो ।
पडतदियस्स य अवर तिण्णि पदा होंति अहियकमा[2] ॥३८१॥

चटत्तृतीयावरबन्धं पतन्नामगोत्रावरस्थितिबन्ध ।
पतत्तृतीयस्य च अवरं त्रीणि पदानि भवन्ति अधिकक्रमाणि ॥३८१॥

स० टी०—तत आरोहकस्य वेदनीयजघन्यस्थितिबन्धो विशेषाधिक । सोऽपि चतुर्विंशतिमुहूर्त-मात्र । ६० । तत पततो नामगोत्रस्थितिबन्धो विशेषाधिक । सोऽपि द्वात्रिंशन्मुहूर्तमात्र ६१ । तत पततो वेदनीयजघन्यस्थितिबन्धो विशेषाधिक । सोऽप्यष्टचत्वारिंशन्मुहूर्तमात्र ६२ ॥३८१॥

स० च०—तातैं चढनेवालेकै वेदनीयका जघन्य स्थितिबध विशेष अधिक है सो चौईस मुहूर्तमात्र है । ६० । तातैं पडनेवालेकैं नाम गोत्रका जघन्य स्थितिबध विशेष अधिक है सो बत्तीस मुहूर्तमात्र है । ६१ । तातैं पडनेवालेकै वेदनीयका जघन्य स्थितिबध विशेष अधिक है सो अठ-तालीस मुहूर्तमात्र है । ६२ ॥३८१॥

चडमायमाणकोहो मासादीदुगुण अवरठिदिबंधो ।
पडणे ताण दुगुण सोलसवस्साणि चलणपुरिसस्स[3] ॥३८२॥

चटमायामानक्रोधो मासादिद्विगुणावरस्थितिबन्ध ।
पतने तेषा द्विगुणं षोडशवर्षाणि चटनपुरुषस्य ॥३८२॥

स० टी०—आरोहकस्य सज्वलनमायाजघन्यस्थितिबन्ध पूर्वस्मात्सख्यातगुणो मासप्रमित । मा १ ।

---

१ उवसामगस्स जहण्णगो णामा-गोदाण ठिदिबधो सखेज्जगुणे ।

२ वेदणीयस्स जहण्णगो ठिदिबधो विसेसाहिओ । पडिवदमाणयस्स णामागोदाण जहण्णगो ठिदिबधो विसेसाहिओ । तस्सेव वेदणीयस्स जहण्णगो ट्ठिदिबधो विसेसाहिओ । वही, पृ० १९३४ ।

३ उवसामगस्स मायासजलणस्स जहण्णट्ठिदिबधो मासो । तस्सेव पडिवदमाणगस्स जहण्णओ ट्ठिदिबिन्धो वे मासा । उवसामगस्स कोहसजलणस्स जहण्णगो ट्ठिदिबधो चत्तारि मासा । पडिवदमाणयस्स तस्सेव जहण्णगो ट्ठिदिबधो चत्तारि मासा । उवसामगस्स कोहसजलस्स जहण्णगो ट्ठिदिबधो चत्तारि मासा । पडिवदमाणगस्स तस्सेव जहण्णगो ट्ठिदिबधो अट्ठ मासा । उवसामगस्स पुरिसवेदस्स जहण्णगो ठिदिबधो सोलस वस्साणि । वही, पृ० १९६४ ।

६३ । तस्यैव सज्वलनमानजघन्यस्थितिबन्धो द्विगुग मा० २ । ६४ । तस्यैव क्रोधसज्वलनजघन्यस्थितिबन्धो द्विगुण मा ४ । तेषामेव मायादीना प्रतिपततो जघन्यस्थितिबन्धा आरोहकजघन्यस्थितिबन्धेभ्यो द्विगुणा मा २ । मा ४ । मा ८ । आरोहकस्य पुवेदजघन्यस्थितिबन्ध षोडशवर्षमात्र ॥३८२॥

स० च०—तातै चढनेवालेकैं सज्वलन मायाका जघन्य स्थितिबध सख्यातगुणा है सो एक मास मात्र है । ६३ । तातै तिसहीकै मानका जघन्य स्थितिबध दूणा है । ६४ । तातै तिस हीकैं क्रोधका जघन्य स्थितिबध दूणा है । ६५ । वहुरि उतरनेवालेकै तिन ही मायादिकनिका जघन्य स्थितिबध चढनेवालेतै दूणा है, सो मायाका दोय मास मानका च्यारि मास क्रोधका आठ मासमात्र जानना । बहुरि चढनेवालेकै पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबध सोलह वर्षमात्र है ॥३८२॥

पडणस्स तस्स दुगुण सजलणाण तु तत्थ दुट्ठाणे ।
बत्तीस चउसट्ठी वस्सपमाणेण ठिदिबधो[1] ॥३८३॥

पतनस्य तस्य द्विगुणं सज्वलनाना तु तत्र द्विस्थाने ।
द्वात्रिंशत् चतु षष्टि वर्षप्रमाणेन स्थितिवंध. ॥३८३॥

स० टी०—प्रतिपततस्तद्वन्धो द्विगुण । तत्काले सज्वलनचतुष्टयस्यारोहके स्थितिबन्धो द्वात्रिंशद्वर्षमात्र । अवरोहके तद्बन्धश्चतु षष्टिवर्षमात्र ॥३८३॥

स० च०—पडनेवालेकैं पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबध तातैं दूणा बत्तीस वर्षमात्र है । बहुरि तिस कालविषै सज्वलनचतुष्कका स्थितिबध चढनेवालेकैं बत्तीस वर्ष, उतरनेवालेकै चौसठि वर्षमात्र हो है ॥३८३॥

चडपडणमोहपढम चरिम तु तहा तिघादियादीण ।
सखेज्जवस्सबंधो सखेज्जगुणक्कमो छण्हं[2] ॥३८४॥

चटपतनमोहप्रथमं चरमं तु तथा त्रिघातकादीनाम् ।
संख्येयवर्षबंध· संख्येयगुणक्रम षण्णाम् ॥३८४॥

स० टी०—आरोहकस्यान्तरकरणनिष्पत्त्यन्तरसमये मोहनीयस्य प्रथमस्थितिबन्ध पूर्वस्मात्सख्यातगुण सख्यातसहस्रवर्षप्रमित । अवरोहकस्य तत्प्रणिधिस्थाने मोहचरमस्थितिबन्ध तत सख्येयगुण । सोऽपि सख्यात-

---

१ तस्समये चेव सजलणाण ठिदिबधो वत्तीस वस्साणि । पडिवदमाणगस्स पुरिसवेदस्स जहण्णओ ट्ठिदिबधो वत्तीस वस्साणि । तस्समये चेव सजलणाण ठिदिबधो चउसट्ठिवस्साणि । वही, पृ० १९३४ ।

२ उवसामगस्स पढमो सखेज्जवस्सट्ठिदिगो मोहणीयस्स ट्ठिदिबधो सखेज्जगुणो । पडिवदमाणगस्स चरिमो सखेज्जवस्सट्ठिदिगो मोहणीयस्स ट्ठिदिबधो सखेज्जगुणो । उवसामगस्स णाणावरण-दसणावरण-अतराइयाण पढमो सखेज्जवस्सट्ठिदिगो वधो सखेज्जगुणो । पडिवदमाणयस्स तिण्ह घादिकम्माण चरिमो सखेज्जवस्सट्ठिदिगो वधो सखेज्जगुणो । उवसामगस्स णामा-गोद-वेदणीयाण पढमो सखेज्जवस्सट्ठिदिगो वधो सखेज्जगुणो । पडिवदमाणगस्स णामा-गोद-वेदणीयाण चरिमो सखेज्जवस्सट्ठिदिओ वंधो सखेज्जगुणो । वही, पृ० १९३४–१९३५ ।

वर्षसहस्रप्रमित एव। यथा पूर्वमारोहकस्थितिबन्धादवरोहकस्थितिबन्धस्य द्विगुणत्वनियमस्तथाऽस्मिन्नवसरे तन्नियमो नास्ति, किन्तु यथासम्भवसंख्येयगुणकारो द्रष्टव्य। आरोहकस्य घातित्रयप्रथमस्थितिबन्ध पूर्वस्मात संख्येयगुण। ततोऽवरोधकस्य प्रथम (चरम) स्थितिबन्ध संख्येयगुण। तत आरोहकस्य सप्तनोकषायोपशमनकाले अघातित्रयप्रथमस्थितिबन्ध संख्येयगुण। ततोऽवरोहकस्य तच्चरमस्थितिबन्ध संख्येयगुण ॥३८४॥

स० च०— तातै चढनेवालेकै अतरकरण करनेकी समाप्ति होनेके अनतर समयविषै सभवता ऐसा मोहनीयका प्रथम स्थितिबध सख्यातगुणा है सो सख्यात हजार वर्षमात्र है। तातै उतरनेवालेकै तिस समयकी समान अवस्थाविषै सभवता ऐसा मोहका अत स्थितिबध है सो सख्यातगुणा है। सो भी सख्यात हजार वर्षमात्र है। जैसै पूर्वै चढनेवालेतै उतरनेवालेकै दूणा स्थितिबध कह्या था तैसै अब न जानना। अब यथासम्भव सख्यातगुणा जानना। तातै चढनेवालेकै तीन घातियानिका प्रथम स्थितिबध सख्यातगुणा है। तातै उतरनेवालेकै तिनका तहाँ अत स्थितिबध सख्यातगुणा है। तातै चढनेवालेकै सप्त नोकषायनिका उपशम कालविषै तीन अघातिया कर्मनिका प्रथम स्थितिबध सख्यातगुणा है। तातै उतरनेवालेकै तहाँ अत स्थितिबध सख्यातगुणा है ॥३८४॥

चडपडणमोहचरिमं पढम तु तहा तिघादियादीण।
असखेज्जवस्सबधो संखेज्जगुणक्कमो छण्हं[1] ॥३८५॥

चटपतनमोहचरमं प्रथमं तु तथा त्रिघातकादीनाम्।
असंख्येयवर्षबन्ध संख्येयगुणक्रम षण्णाम् ॥३८५॥

स० टी०—तत आरोहके मोहनीयस्यासंख्यातवर्षप्रमितश्चरमस्थितिबन्धोऽसंख्येयगुण, स च पल्यासंख्यातभागमात्रोऽन्तरकरणप्रारम्भसमये सम्भवति। ततोऽवरोहके मोहनीयस्यसंख्यातवर्षसहस्रमात्र प्रथमस्थितिबन्धोऽसंख्येयगुण। तत आरोहके घातित्रयस्यासंख्यातवर्षसहस्रमात्रचरमस्थितिबन्धोऽसंख्येयगुण। स च स्त्रीवेदोपशमनकाले संख्यातभाग गत्वा सम्भवति। ततोऽवतारके तत्प्रथमस्थितिबन्धोऽसंख्येयगुण। तत आरोहकघातित्रयस्य चरमस्थितिबन्धोऽसंख्येयगुण। स च सप्तनोकषायोपशमनकाले संख्यातभागे गते सम्भवति। ततोऽवतारके तत्प्रथमस्थितिबन्धोऽसंख्येयगुण। एषोऽपि पल्यासंख्यातभागमात्र एव प। अवतारकस्य स्थितिबन्धा प्रागुक्ता सर्वेऽपि आरोहकस्थितिबन्धकालमन्तर्मुहूर्तेनाप्राप्य सम्भवन्ति ॥३८५॥

स० च०—तातै चढनेवालेकै मोहनीयका असख्यात वर्षमात्र अत स्थितिबध है सो असख्यातगुणा है। सो यहु पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र है, अतरकरण करनेका प्रारम्भ समय-

---

१ उवसामगस्स चरिमो असखेज्जवस्सट्ठिदिगो वधो मोहणीयस्स असखेज्जगुणो। पडिवदमाणगस्स पढमो असखेज्जवस्सट्ठिदिगो वधो मोहणीयस्स असखेज्जगुणो। उवसामगस्स घादिकम्माण चरिमो असखेज्जवस्सट्ठिदिगो वधो असखेज्जगुणो। पडिवदमाणयस्स पढमो असखेज्जवस्सट्ठिदिगो वधो घादिकम्माणमसखेज्जगुणो। उवसामगस्स णामा-गोद-वेदणीयाण चरिमो असखेज्जवस्सट्ठिदिगो वंधो असखेज्जगुणो। पडिवदमाणगस्स णामा-गोद-वेदणीयाण पढमो असखेज्जवस्सट्ठिदिगो वधो असखेज्जगुणो।

वही, पृ० १९३५–१९३६।

विषै सभवै है। तातै उतरनेवालेकै मोहका असख्यात वर्षमात्र प्रथम स्थितिबध है सो असख्यातगुणा है। तातै चढनेवालेकै तीन घातियानिका असख्यात वर्षमात्र अत स्थितिबध है सो असख्यातगुणा है। सो यहु स्त्रीवेदका उपशम कालका सख्यातभाग गए हो है। तातै उतरनेवालेकै तीन घातियानिका असख्यात वर्षमात्र पहिला स्थितिबध सो असख्यातगुणा है। तातै चढनेवालेकै तीन घातियानिका अत स्थितिबध असख्यातगुणा है सो सप्त नोकषायनिका उपशम कालविषै सख्यातभाग भए हो है। तातै उतरनेवालेकै तिनहीका प्रथम स्थितिबध है सो असख्यातगुणा है। सो यहु भी पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र है। इहाँ उतरनेवालेकै जे स्थितिबंध कहे हैं ते सर्व ही चढनेवालेका तिस स्थितिबध होनेका कालको अतमुहूर्तकरि अप्राप्ति होइ सम्भवै हैं। चढनेवालेकैं जो प्रथम स्थितिबध होइ उतरनेवालेकै ताके निकटवर्ती अवस्थाकौ पाए अत स्थितिबन्ध होइ, जातै चढनेवाला जिस अवस्थाकौं पहलै पावै तिस अवस्थाकौ उतरनेवाला अतविषै पावै है ॥३८५॥

चडणे णामदुगाण पढमो पलिदोवमस्स सखेज्जो।
भागो ठिदिस्स बधो हेट्ठिल्लादो असखगुणो[1] ॥३८६॥

चटने नामद्विकयो प्रथम पलितोपमस्यासंख्येय ।
भाग स्थितेबध अधस्तनादसख्यगुण ॥३८६॥

स० टी०—तत आरोहके नामगोत्रयो पल्यासख्यातैकभागमात्र प्रथमस्थितिबन्धोऽधस्तनात् घातित्रयस्थितिबन्धादसख्येयगुण प ॥३८६॥
५

स० च०—तातै चढनेवालेकै नाम गोत्रका पल्यके असख्यातवें भागमात्र भया पहला स्थितिबन्ध सो नीचेका घातित्रयका स्थितिबधतै असख्यातगुणा है ॥३८६॥

तीसियचउण्ह पढमो पलिदोत्रमसखभागठिदिबधो ।
मोहस्स वि दोण्णि पदा विसेसअहियक्कमा होंति[2] ॥३८७॥

तीसियचतुर्णां प्रथम पलितोपमासंख्यभागस्थितिबन्ध ।
मोहस्यापि द्वे पदे विशेषाधि भवति ॥३८७॥

स० टी०—तत आरोहके तीसियचतुष्कस्य प्रथमस्थितिबन्धो विशेषाधिक, स च पल्यासख्यातभाग एव प ३ । तत आरोहके मोहस्य चालीसियस्थितिबन्धो विशेषाधिक प २ विशेषप्रमाण तत्त्रिभागमात्र
५ । २ ५
प ३ ॥३८७॥
५ । २ । ३

---

१ उवसामगस्स णामा-गोदाण पलिदोवमस्स सखेज्जदिभागिओ पढमो ठिदिबधो असखेज्जगुणो। वही, पृ० १९३६।

२ णाणावरण-दसणावरण-वेदणीय-अतराइयाण पलिदोवमस्स सखेज्जदिभागिगो पढमो ट्ठिदिबधो विसेसाहिओ। मोहणीयस्स पलिदोवमस्स सखेज्जदिभागिगो पढमो ट्ठिदिबधो विसेसाहिओ। वही, पृ० १९३६

स० च०—तातै चढनेवालेकै तीसिय चतुष्कका पहलै स्थितिबन्ध विशेष अधिक है सो भी पल्यके असख्यातवे भागमात्र है तातै चढनेवालेकै मोहका तहाँ चालीसिय स्थितिबन्ध है सो ताहीका त्रिभागमात्र विशेषकरि अधिक है ॥३८७॥

ठिदिखडय तु चरिम बधोसरणट्ठिदी य पल्लद्ध ।
पल्ल चडपड बादरपढमो चरिमो य ठिदिबधो[1] ॥३८८॥

स्थितिखंडक तु चरम बन्धापसरणस्थिती च पल्यार्धं ।
पल्यं चटपतद्बादरप्रथम चरमश्च स्थितिबन्ध ॥३८८॥

स० टी०—ततश्चरमस्थितिबन्ध सख्येयगुण प स । स च ज्ञानावरणादिकर्मणा सूक्ष्मसाम्पराय-
१ १
चरमसमये मोहस्य चातरकरणकाले सभवति । तत पल्योत्पत्तिनिमित्तपल्यसख्यातभागपर्यन्ता बन्धापसरणे समुत्पन्ना ये स्थितिबन्धा पल्यसख्यातभागप्रमितास्ते सर्वेऽपि सख्यातगुणा प ० ० ० ० ० ० प । पल्या-
१ १ १ १ १
र्थात्पल्यसख्यातभागात् पल्य सख्यातगुण पतत आरोहकानिवृत्तिकरणप्रथमसमये स्थितिबन्ध सख्येयगुण । सोऽपि सागरोपमलक्षणपृथक्त्वमात्र । ततोऽवतारकानिवृत्तिकरणचरमसमये स्थितिबन्ध सख्येयगुण ॥३८८॥

स० च०—तातैं अन्तका स्थितिखड जो स्थितिकाडकायाम सख्यातगुणा है सो ज्ञानावरणादि कर्मनिका तौ सूक्ष्मसाम्परायका अन्त समयविषै अर मोहका अन्तरकरण कालविषै सभवै है, तातै पल्यमात्र स्थितिकी उत्पत्तिके निमित्त पल्यका सख्यातवाँ भाग पर्यन्त स्थितिबन्धापसरणनिकरि उपजे पल्यके सख्यातवे भागप्रमाण स्थितिबन्ध ते सर्वं ही क्रमतैं सख्यातगुणे है। बहुरि पल्यका सख्यातवाँ भागतै पल्यका प्रमाण सख्यातगुणा है तातै चढनेवालेकै अनिवृत्ति करणका प्रथम समयविषै सभवता स्थितिबध सो सख्यातगुणा है सो पृथक्त्व लक्ष सागर प्रमाण है। तातै उतरनेवालेकै अनिवृत्तिकरणका अत समयविषै सभवता स्थितिबध सख्यातगुणा है ॥३८८॥

चडपड अपुव्वपढमो चरिमो ठिदिबधओ य पडणस्स ।
तच्चरिम ठिदिसतं सखेज्जगुणक्कमा अट्ठं ॥३८९॥

चटपतदपूर्वप्रथम चरमस्थितिबधकश्च पतनस्य ।
तच्चरम स्थितिसत्त्व सख्येयगुणक्रम अष्ट ॥३८९॥

---

१ चरिमट्ठिदिखडय सखेज्जगुण । जाओ ठिदीओ परिहाइदूण पलिदोवमट्ठिदिगो बधो जादो ताओ ठिदीओ सखेज्जगुणाओ । पलिदोवम सखेज्जगुण । अणियट्टिस्स पढमसमये ठिदिबधो सखेज्जगुणो । पडिवदमाणगस्स अणियट्टिस्स चरिमसमए ठिदिबधो सखेज्जगुणो । वही, पृ० १९३६–१९३७ ।

२ अपुव्वकरणस्स पढमसमये ठिदिबधो सखेज्जगुणो । पडिवदमाणयस्स अपुव्वकरणस्स चरिमसमए ठिदिबधो सखेज्जगुणो । पडिवदमाणयस्स अपुव्वकरणस्स चरिमसमए ठिदिसतकम्म सखेज्जगुण । वही, पृ० १९३७ ।

स० टी०—तत आरोहकापूर्वकरणप्रथमसमये स्थितिबध सख्येयगुण सा अत को २ सोऽपि
४।४।४।४

सागरोपमात कोटीकोटिप्रमित । तत प्रतिपतदपूर्वकरणचरमसमये स्थितिबध सख्येयगुण सा अत को
४।४।४

२१ अत्र गुणकार द्विरूपमात्र तत्प्रायोग्यसख्यातरूपमात्रो वा ग्राह्य । तत प्रतिपतदपूर्वकरणचरमसमये

स्थितिसत्त्व सख्येयगुण स अत को २ – २ ೨ ॥३८९॥
४।४

स० च०—तातैं चढनेवाले अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै स्थितिबध सख्यातगुणा है। सो अत कोटाकोटी सागरमात्र है। तातै पडनेवाले अपूर्वकरणका अत समयविषै स्थितिबध सख्यातगुणा है। सो दूणा अथवा यथासम्भव सख्यातगुणा जानना। तातै पडनेवालेकैं अपूर्वकरणका अत समयविषैं स्थितिसत्त्व सख्यातगुणा है ॥३८९॥

तप्पढमट्ठिदिसत्त पडिवडअणियट्टिचरिमठिदिसत्त ।
अहियकमा चलबादरपढमट्ठिदिसत्तय तु सखगुण[1] ॥३९०॥

तत्प्रथमस्थितिसत्त्वं प्रतिपतदनिवृत्तिचरमस्थितिसत्त्व ।
अधिकक्रमं चटबादरप्रथमस्थितिसत्त्वक तु संख्यगुणम् ॥३९०॥

स० टी०—तत प्रतिपतदपूर्वकरणप्रथमसमये स्थितिसत्त्व विशेषाधिक सा अत को २ विशेषप्रमाण
४।४

समयोनापूर्वकरणकालमात्र २ ೧ अवतारणे प्रथमसमयस्थितिकरण तेन तावत्समयाना चरमसमयस्थितिसत्त्वेन तत्त्वात्। तत प्रतिपतदनिवृत्तिकरणचरमसमयस्थितिसत्त्वमेकसमयेनाधिक सा अत को २ तत आरोहका-
४।४

निवृत्तिकरणप्रथमसमयस्थितिसत्त्व सख्यातगुण सा अत को २ अस्याद्याप्यनिवृत्तिकरणपरिणामकृतस्थिति-
४

सत्त्वघातसम्भवात् ॥३९०॥

स० च०—तातै पडनेवालेकै अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै स्थितिसत्त्व है सो समय घाटि अपूर्वकरणका कालमात्र विशेषकरि अधिक है जातै उतरनेविषै प्रथम समय स्थिति सत्वतैं अत समयविषै स्थिति सत्त्वकी हीनता तितने समयमात्र ही हो है। तातै पडनेवाले अनिवृत्ति करणका अत समयविषै स्थितिसत्त्व एक समयकरि अधिक है तातै चढनेवाले अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयविषै स्थितिसत्त्व सख्यातगुणा है जातै याकौ अव भी अनिवृत्तिकरणके परिणामनिकरि स्थितिसत्त्वका खडन सभवै है ॥३९०॥

---

१ पडिवदमाणयस्स अपुव्वकरणस्स पढमसमये ठिदिसतकम्म विसेसाहिय । पडिवदमाणयस्स अणियट्टिस्स चरिमसमए ठिदिसतकम्म विसेसाहिय । उवसामगस्स अणियट्टिस्स पढमसमये ठिदिसतकम्म सखेज्जगुण । वही, पृ० १९३७ ।

चडमाणअपुव्वस्स य चरिमट्ठिदिसत्तय विसेसहियं।
तस्सेव य पढमठिदीसत्त सखेज्जसगुणियं[1] ॥३९१॥

चटदपूर्वस्य च चरमस्थितिसत्त्वक विशेषाधिकम्।
तस्यैव च प्रथमस्थितिसत्त्व सख्येयगुणितम् ॥३९१॥

स० टी०—तत आरोहकापूर्वकरणचरमसमये स्थितिसत्त्व विशेषाधिक प / ९ / सा अत को २ / ४ तच्चरमकाण्टक-चरमफालिप्रमाणस्य पल्यसख्यातभागस्य सम्भवात्। तत आरोहकापूर्वकरणप्रथमसमयस्थितिसत्त्व सख्यातगुण सा अ को २ तच्चात कोटीकोटिसागरोपमप्रमित। अपूर्वकरणकाले सम्भविसख्यातसहस्रमात्रस्थितिकाडकघातवशेन तत्प्रथमसमयस्थितिसत्त्वसख्यातबहुभागेपु घातितेपु यत्तच्चरमसमयस्थितिसत्त्व सख्यातैकभागमात्र। तस्मात्तत्प्रथमसमयस्थितिसत्त्वस्य पूर्वस्थितिकाडकघाताभावात् सख्यातगुणत्वसम्भवात् ॥३९१॥

प्रणमामि महावीरं सर्वशातिकर जिन।
प्रशातदुरितानीकं शातये सर्वकर्मणा॥

एव चारित्रमोहोपशमनविधान समाप्त।

स० च०—तातैं चढनेवाले अपूर्वकरणका अत समयविषै स्थितिसत्त्व विशेष अधिक है जातैं तिसके अत काडककी अत फालिका प्रमाण पल्यके सख्यातवें भागमात्र सभवै है सो इतना अधिक जानना। जातैं चढनेवाले अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै स्थितिसत्त्व सख्यातगुणा है। सो अत कोटाकोटीप्रमाण है। जातैं अपूर्वकरणका कालविषै सख्यात हजार स्थितिकाडक हो है तिनकरि ताका प्रथम समयविषै जो स्थिति पाइए ताका सख्यात बहुभागमात्र स्थितिका घात हो है। ताका अत समयविषै एकभागमात्र स्थिति रहै है। अर तिस प्रथम समयवर्ती स्थितिसत्त्वतैं पहलैं स्थितिकाडकका घात है नाही तातैं ताका चरम समयवर्ती स्थितिसत्त्वतैं प्रथम समयवर्ती स्थिति सख्यातगुणा जानना ॥३९१॥ ऐसैं अल्पबहुत्व जानना ॥३९१॥

दोहा—कर्म शातिके अर्थि जिन नमौं शाति करतार।
प्रशमित दुरित समूह सब महावीर जिनसार॥ १ ॥

या प्रकार चारित्रमोहके उपशमावनेका विधान समाप्त भया।

इति लब्धिसार समाप्त।

●

---

१ उवसामगस्स अपुव्वकरणस्स चरिमसमये ठिदिसतकम्म विसेसाहियं। उवसामगस्स अपुव्वकरणस्स पढमसमये ठिदिसतकम्म सखेज्जगुण। वही, पृ० १९३८।

अथ क्षपणासार:

स० च०—इहाँ पर्यन्त गाथा सूत्रनिका व्याख्यान सस्कृत टीकाके अनुसारि कीया जातै इहाँ पर्यन्त गाथानिहीकी टोकाकरिकें सस्कृत टीकाकारने ग्रथ समाप्त कीना है। बहुरि इहातै आगै गाथा सूत्र है तिनिविषै क्षायिकचारित्रका वर्णन है, तिनकी सस्कृत टीका तौ अवलोकनेमै आई नाही, तातै तिनका व्याख्यान अपनी बुद्धि अनुसारि इहाँ कीजिये है। बहुरि भोज नामा राजाका बाहुवलि नामा मत्रीकैं ज्ञान उपजावनेके अर्थि श्रीमाधवचन्द्र नामा आचार्य करि विरचित क्षपणासार ग्रथ है तिसविषै क्षायिकचारित्र हीका विधान वर्णन है सो इहाँ तिस क्षपणासारका अनुसारि लीएँ भी व्याख्यान करिए है। तहाँ प्रथम मगलाचरण करिए है—

श्रीवर धर्म जलधिके नदन रत्नाकरवर्धक सुखकार।
लोकप्रकाशक अतुल विमल प्रभु सततनिकर सेवित्त गुणधार॥
माधववरबलभद्रनमितपदपद्मयुगल धारैं विस्तार।
नेमिचन्द्र जिन नेमिचन्द्र गुरु चन्द्रसमान नमहु सो सार॥ १॥

याके नेमिनाथ तोर्थंकर वा नेमिचन्द्र आचार्य वा चन्द्रमाका विशेषण करने करि तीन अर्थ है तहाँ माधववरबलभद्रनमितपदपद्मयुगलका अर्थ—नेमिचन्द्र जिनकी पक्षविषै तो नारायण वलभद्रकरि अर नेमिचन्द्र गुरुकी पक्ष विषै माधवचन्द्र आचार्य अर कल्याणरूप बाहुबलि मत्री तिनकरि अर चन्द्रमाकी पक्षविषै वसतराज उत्कृष्ट सप्तसेना विषै प्रधान ताकरि नमित है चरण युगल जिनके ऐसे है। अन्य अर्थ सुगम हैं॥ अब इहाँ गाथा सूत्र कहिए है—

तिकरणमुभयोसरणं कमकरणं खवणदेसमतरय।
सकमअपुव्वफड्डयकिट्टीकरणाणुभवण खवणाये॥३९२॥

त्रिकरणमुभयापसरण क्रमकरणं क्षपण देशमंतरकम्।
संक्रम अपूर्वस्पर्धककृष्टिकरणानुभवनानि क्षपणायाम्॥३९२॥

स० च०—अध करण १ अपूर्वकरण १ अनिवृत्तिकरण १ ए तीन करण अर बधापसरण १ सत्त्वापसरण १ ए दोय अपसरण वहुरि क्रमकरण १ अष्ट कषाय सोलह प्रकृतिनिकी क्षपणा १ देशघातिकरण १ अतरकरण १ सक्रमण १ अपूर्वस्पर्धककरण १ कृष्टिकरण १ कृष्टिअनुभवन १ ऐसैं ए चारित्रमोहकी क्षपणाविषै अधिकार जानने। तहाँ पीछैं ज्ञानावरणादि कर्मनिका क्षपणा अधिकार अर योग निरोध अधिकारका वर्णन होगा।

तहाँ प्रथम अध करणका वर्णन करिए है—पहलैं पूर्वोक्त प्रकार तीन करण विधानतैं सात प्रकृतिनिका नाशकरि क्षायिक सम्यग्दृष्टी होइ मोहनीकी इकईस प्रकृतिनिका सत्त्वसहित होइ सो जघन्य तौ अतर्मुहूर्त अर उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त महित आठ वर्षकरि हीन दोय कोटि पूर्व तिनिकरि

अधिक तेतीस सागरकाल क्षायिकसम्यग्दृष्टी ससारमे रहै। तहा किसी कालविषै चारित्र-मोहकी क्षपणाकौं योग्य जे विशुद्ध परिणाम तिनकरि सहित होइ प्रमत्ततै अप्रमत्तविषै अप्रमत्ततै प्रमत्तविषै हजारोवार गमनागमनकरि महामुनि चक्रवर्ती है सो यथाख्यात चारित्ररूप एकछत्र राज्य करनेके अर्थ क्षपकश्रेणीरूप दिग्विजय करनेके सन्मुख होत सता प्रथम मातिशय अप्रमत्त गुणस्थानविषैं अध करणरूप प्रस्थान करै हैं। ताका विशेष जाननेकौ इहाँ प्रश्नोत्तर हो हैं[1]—

सकामणपट्ठवगस्स परिणामो केरिसो।
जोगे कसाये उवजोगे लेस्सा वेदे य को भवे ॥१॥

सक्रामण अर्थात् क्षपणाको प्राप्त होनेवाले चारित्रमोहनीय आदि कर्मोका अन्य प्रकृतियोमे सक्रमण करनेके लिए उद्यत हुए जीवका परिणाम कैसा होता है तथा योग, कपाय, उपयोग, लेश्या और वेद कौन होता है ॥१॥

काणि वा पुव्वबद्धाणि के वा असे णिबधदि।
कदि आवलिय पविसति कदिण्हं वा पवेसगो ॥२॥

पूर्वबद्ध कर्म कौन कौन होते है, वह किन कर्मोका वन्ध करता है, उदयावलिमे कौन कर्म प्रवेश करते हैं और किन कर्मोका प्रवेशक होता है ॥२॥

के अंसे झीयदे पुव्व बधेण उदयेण वा।
अतर वा कहिं किच्चा के के संकामगो कहिं ॥३॥

पहले किन कर्मोकी बन्ध व्युच्छित्ति और उदय व्युच्छित्ति हुई है, अन्तर कहाँ करेगा और चारित्रमोहकी प्रकृत्तियोका सक्रामक कहाँ होगा ॥३॥

किट्ठिदियाणि कम्माणि अणुभागेसु केसु वा।
ओवट्टियूण सेसाणि क ठाणं पडिवज्जदि ॥४॥

किन स्थितिवाले और अनुभागवाले कर्मोका काण्डकघात करके किन स्थानोको प्राप्त करता है ॥४॥

इनि च्यारि सूत्रनि करि प्रश्न कीए। तहाँ प्रश्न—जो चारित्रमोहकी क्षपणाका प्रारभक जीवकैं परिणाम कैसा होइ? ताका उत्तर—अति विशुद्ध होइ[2]?

---

१ मुद्रितप्रतिषु पाठोऽयमुपलभ्यते
कसायखवणो ठाणे परिणामो केरिसो हवे। कसाय उपजोगो को लेस्सा वेदा य को हवे ॥१॥
काणि वा पुव्वबद्धाणि को वा असेण वधदि। कदियावलि पविसति कदिण्ह वा पवेसगो ॥२॥
केत्तिय सेज्झीयदे पुव्व बधेण उदयेण वा। अन्तर वा कहिं किच्चा के के सकामगो कहिं ॥३॥
केट्टिदीयाणि कम्माणि अणुभागेसु केसु वा। उक्कट्टिदूण सेसाणि क ठाण पडिवज्जदि ॥४॥

२ परिणामो विसुद्धो पुव्व पि अतोमुहुत्तप्पहुडि विसुज्झमाणो आगदो अणतगुणाए विसोहीए। क० चु० पृ० १९४२।

बहुरि प्रश्न—योग कैसा होइ ? ताका उत्तर—च्यारि मनोयोगनिविषै कोई एक वा च्यारि वचन योगनिविषै कोई एक वा सात काय योगनिविषै औदारिककाययोग होइ[1]।

बहुरि प्रश्न—कषाय कैसा होइ ? ताका उत्तर—च्यारि सज्वलन विषै कोई एक होइ, सो भी हीयमान होइ वृद्धिरूप न होइ[2]।

विशेष—क्षयकश्रेणिपर आरोहण करते समय अध प्रवृत्तकरण के अन्तिम समयमे परिणाम अति विशुद्ध होता है, क्योकि अन्तर्मुहूर्त पूर्वसे ही उत्तरोत्तर अनन्तगुणी विशुद्धिसे विशुद्ध होता हुआ परिणाम आ रहा है। यहाँ चारो मनोयोग, चारो वचनयोग और औदारिककाययोग इन नौ योगोमेसे एक समयमे कोई एक योग होता है। प्रश्न यह है कि यत क्षपकश्रेणिपर चढनेवाला जीव छद्मस्थ होता हे, इसलिये इसके चारो मनोयोग होवे इसमे आपत्ति नही। परन्तु जब कि उक्त जीव ध्यानमे उपयुक्त है ऐसी अवस्थामे उसके चारो वचनयोग कैसे सम्भव हो सकते हैं, क्योकि सब प्रकारके बाह्य व्यापारसे निवृत्त होने पर ही ध्यान की प्रवृत्ति होना सम्भव है। समाधान यह है कि अवक्तव्यरूपसे वचनयोग वहाँ बन जाता है, इसलिये कोई विरोध नही है। काययोगमे एक औदारिक काययोग ही होता है। चारो कषायोमेसे कोई एक कषाय होती है जो उत्तरोत्तर हीयमान होती है।

बहुरि प्रश्न—उपयोग कैसा होइ ? ताका उत्तर—बहुत मुनिनिकै प्रसिद्ध उपदेशकरि तौ श्रुतज्ञान ही उपयोग है। दर्शन उपयोग नाही है। अन्य आचार्यनिके मतकरि मति श्रुति ज्ञानविषैं एक वा चक्षु अचक्षुदर्शनविषै एक उपयोग है[3]।

विशेष—उपयोगके विपयमे दो सम्प्रदाय प्रचलित हैं। एक सम्प्रदाय यह है कि क्षपकश्रेणि मे ध्यानकी मुख्यता है और ध्यान वह है जिसमे यह जीव बाह्याभ्यन्तर जल्पसे परावृत्त होकर अपने स्वरूपका एकाग्र होकर सचेतन करता है, इसलिये वहाँ मात्र श्रुतोपयोग होता है। किन्तु एक सम्प्रदाय यह है कि श्रुतोपयोग होता है या मत्युपयोग होता है या चक्षुदर्शन-उपयोग होता है या अचक्षुदर्शन उपयोग होता है। सो यह कथन मति-श्रुत उपयोगके योगको ध्यानमे रख लिया गया है ऐसा प्रतीत होता है। मुख्यता श्रुतोपयोगकी ही है।

बहुरि प्रश्न—लेश्या कैसी हो है ? ताका उत्तर—शुक्ल ही हो है[4]।

बहुरि प्रश्न—वेद कैसा हो है ? ताका उत्तर—भाव वेद तीनोविषै कोई एक हो है। द्रव्यवेद पुरुषवेद ही है[5]।

---

१ अण्णदरो मणजोगो अण्णदरो वचिजोगो अण्णदरो ओरालियकायजोगो। वही पृ० १९४२।

२ अण्णदरो कसायो। किं वड्ढमाणो हायमाणो ? णियमा हायमाणो। वही पृ० १९४२।

३ एक्को उवएसो णियमा सुदोवजुत्तो। एक्को उवदेसो सुदेण वा मदीए वा चक्खुदसणेण वा अचक्खुदसणेण वा। वही पृ० १९४३।

४ णियमा सुक्कलेस्सा। णियमा वड्ढमाणलेस्सा। वही पृ० १९४३।

५ अण्णदरो वेदो। वही पृ० १९४४। इत्थि-पुरिस-णवुसयवेदाणमण्णदरो वेदपरिणामो एदस्स होई, तिण्ह पि तेसिमुदएण सेढिममारोहणे पडिसेहाभावादो। णवरि दव्वदो पुरिसवेदो चेव खवगसेढिमारोहदि त्ति वत्तव्व, तत्थ पयारतगमभवादो। जयध०, ता० मु० प० १९४४।

बहुरि प्रश्न--पूर्वबद्ध कर्म हैं ते सत्त्वरूप कैसै हैं ? ताका उत्तर--सातमोहनी अर नरक तिर्यंच देव आयु इन दश विना सर्व प्रकृतिनिका सत्त्व होइ। तहाँ आहारक आहारकांगोपांग तीर्थंकर ए भजनीय हैं। कोईकैं न होइ। बहुरि स्थितिसत्त्व मनुष्यायु विना तिन प्रकृतिनिका अंत-कोटाकोटी सागरप्रमाण है अर तिनविषै प्रशस्त प्रकृतिनिका गुड खंड शर्करा अमृतरूप चतु-स्थानक, अप्रशस्त प्रकृतिनिका दारु लता वा निंब काजीररूप द्विस्थानक अनुभाग सत्त्व है। अर तिनका प्रदेशसत्त्व अजघन्य वा अनुत्कृष्ट संभवै है। जघन्य उत्कृष्ट कर्मपरमाणूनिका समूह इहाँ न पाइए है[1]।

बहुरि प्रश्न--जो नवीन कर्म किसा अंशकरि बंधै है ? ताका उत्तर--ज्ञानावरण पाँच ५ दर्शनावरणकी स्त्यानगृद्धित्रिक विना छह ६ सातावेदनीय १ संज्वलनचतुष्क ४ पुरुषवेद १ हास्य १ रति १ भय १ जुगुप्सा १ उच्चगोत्र १ अंतराय पाँच ५ ऐसें सताईस अर नाम कर्मविषै देवगति १ पचेंद्रीजाति १ वैक्रियिक तेजस कार्माणशरीर ३ समचतुरस्र संस्थान १ वैक्रियिक-अंगोपांग १ प्रशस्त वर्णादिक च्यारि ४ देवगत्यानुपूर्वी १ अगुरुलघु १ उपघात १ परघात १ उच्छ्वास १ प्रशस्त विहायोगति १ त्रस १ बादर १ पर्याप्त १ प्रत्येक १ स्थिर १ शुभ १ सुभग १ सुस्वर १ आदेय १ यशस्कीर्ति १ निर्माण १ ए अठाईस वा कोईकैं तीर्थंकर सहित गुणतीस वा कोईकैं आहारकादिकसहित तीस वा कोईकैं आहारकद्विक तीर्थंकर सहित इकतीस प्रकृति बँधे है। अर तिनि प्रकृतिनिका स्थितिसत्त्वतैं संख्यातगुणा घटता अंत कोटाकोटी सागरप्रमाण स्थितिबन्ध हो है। अर तिनिविषै अप्रशस्त प्रकृतिनिका समय समय अनन्तगुणा घटता क्रम लीएँ द्विस्थानक अर प्रशस्त प्रकृतिनिका समय-समय अनंतगुणा बँधता क्रम लीएँ चतु स्थानिक अनुभाग बन्ध हो है। अर तिनिका अजघन्य अनुत्कृष्ट प्रदेशबन्ध हो है। इहाँ जघन्य वा उत्कृष्ट समयप्रबद्ध नाही बन्धै है। तहाँ विशेष जो प्रचला निद्रा हास्य रति भय जुगुप्सा देवगति देवानुपूर्वी वैक्रियिकद्विक आहारकद्विक प्रथम संस्थान प्रशस्त विहायोगति सुभग सुस्वर आदेय तीर्थंकर इनि प्रकृतिनिका किसी प्रकार करि उत्कृष्ट प्रदेश बन्ध भी हो है[2]।

बहुरि प्रश्न--उदयावली प्रति कर्म कैसे प्रवेश करै है ? ताका उत्तर--मूलप्रकृति तौ सर्व उदयरूप ही होइ खिरै हैं, उत्तर प्रकृति कोई उदयरूप होइ निर्जरै है, कोई विना ही उदय दिये निर्जरै है।[3]

विशेष--उदयावलिमे कौन कर्म प्रवेश करते हैं ? इस प्रश्नका समाधान यह है कि वहाँ जिन कर्मोका सत्त्व है वे चाहे उदयरूप हो चाहे अनुदयरूप हो वे सब उदयावलिमें प्रवेश करते हैं। यहाँ कौन प्रकृतियाँ उदयरूप होकर खिरती है और कौन प्रकृतियाँ स्तिवुक संक्रम होकर खिरती हैं यह पृच्छा नही की गई है। मात्र यहाँ उदयावलिमे कौन प्रकृतियाँ प्रवेश करती है यह पृच्छा की गई है सो इसका उत्तर इतना ही है कि वहाँ सत्त्वरूप मूल और उत्तर जितनी भी प्रकृतियाँ हैं वे सब उदयावलिमें प्रवेश करती है।

---

१ जयध० ता० मु० पृ० १९४४।

२ जयध० ता० मु० पृ० १९४४।

३ मूलपयडीओ सव्वाओ पविसंति। उत्तरपयडीओ वि जाओ अत्थि ताओ पविसंति। ता० मु०, पृ० १९४५।

बहुरि प्रश्न—केते कर्म उदीरणारूप होइ उदयावली प्रति प्रवेश करै हैं ? ताका उत्तर-सातावेदनीय अर मनुष्यायु विना स्वमुखोदयी सर्व ही कर्म उदयावलीविषै प्रवेश करैं हैं उदीरणा-रूप हो हैं।[1]

विशेष—आयुकर्म और वेदनीयकर्मको छोडकर क्षपक वेदे जानेवाले सभी कर्मोका प्रवेशक होता है। यथा —पाँच ज्ञानावरण और चार दर्शनावरणका नियमसे वेदक होता है। निद्रा और प्रचलाका कदाचित् वेदक होता है, क्योकि कदाचित् अव्यक्त उदय होनेमे कोई विरोध नही है, साता और असातामेसे अन्यतरका वेदक होता है। चार सज्वलन, तीन वेद और हास्य-शोक तथा रति-अरति इन दो युगलोमेसे अन्यतरका नियमसे वेदक होता है। भय और जुगुप्साका कदाचित् वेदक होता है। मनुष्यायु, मनुष्यगति, पचेन्द्रियजाति, औदारिक-तैजस-कार्मणशरीर, छह सस्थानोमेसे अन्यतर सस्थान, औदारिक शरीर आगोपाग, वज्रवृषभनाराच सहनन, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, अगुरुलघु आदि चार, दो विहायोगतियोमेसे अन्यतर विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, सुभग-दुर्भग और सुस्वर-दु स्वर इन युगलोमेसे कोई एक-एक, आदेय, यशस्कीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका वेदक होता है। इनके सिवाय अन्य प्रकृतियोका यहाँ उदय सम्भव नही है। इन प्रकृतियोमें सातावेदनीय और मनुष्यायुको छोडकर शेषका उदीरक होता है।

बहुरि प्रश्न—पूर्वै कौन कर्म उदय अर बन्धवरि विनशै है १ ताका उत्तर—स्त्यानगृद्धि-त्रिक ३ असातावेदनीय १ मिथ्यात्व १ कषाय बारह १२ अरति १ शोक १ स्त्रीनपु सकवेद २ आयु चारि ४ परावर्त अशुभ नामकी गुणतीस २९ मनुष्यगति १ औदारिकशरीर वा अगोपाग २ वज्र-वृषभनाराच १ मनुष्यानुपूर्वी १ आतप १ उद्योत १ नीचगोत्र १ इतनी प्रकृतिनिकी बन्धकी व्युच्छित्ति पहलैं भई है।

इहाँ नरक-तिर्यंचगति २ एकेंद्रियादि चारि ४, सस्थान पाँच ५ सहनन पाँच ५ नरक-तिर्यंचानुपूर्वी २ अप्रशस्त विहायोगति १ स्थावर १ सूक्ष्म १ अपर्याप्त १ साधारण १ अस्थिर १ अशुभ १ दुर्भग १ दु स्वर १ अनादेय १ अयशस्कीर्ति १ ए गुणतीस प्रकृति परावर्त अशुभनाम कर्मकी जाननी।[2]

बहुरि स्त्यानगृद्धित्रिक ३ दर्शनमोह ३ कषाय बारह १२ नरक-तिर्यंच-देव आयु ३ नरक-तिर्यच-देव गति वा आनुपूर्वी ६ एकेंद्रियादि जाति चारि, वैक्रियिक-आहारकशरीर वा अगोपाग ४ वज्रवृषभ नाराच विना सहनन पाच ५ मनुष्यानुपूर्वी १ आतप १ उद्योत १ स्थावर १ सूक्ष्म १ साधारण १ अपर्याप्त १ दुर्भग १ अनादेय १ अयशस्कीर्ति १ तीर्थंकर १ नीचगोत्र १ इनके उदयकी व्युच्छित्ति पहलैं भई है, अवशेषनिका इहाँ उदय पाईए है।[3]

बहुरि प्रश्न – अतरकरणको कहाँ करिकैं कौन-कौन कर्मनिका कहाँ सक्रमण करावने-

---

१ णवरि एत्थ पवेसगो त्ति वुत्ते उदीरणासरूवेणुदयावलिय पवेसेमाणो घेत्तव्वो, उदीरणोदएण पयदत्तादो। जयध०, ता० मु० पृ० १९४५।

२ ता० मु०, पृ० १९४५-१९४६।

३ ता० मु० पृ० १९४६-१९४७।

वाला हो है ? ताका उत्तर—अनिवृत्तिकरण कालका सख्यातवाँ भाग गऐं अन्तरकरण अर सक्रमण क्रियाकौ करै है। इस अवसरविषै नाही करै है।[1]

बहुरि प्रश्न—किसी स्थिति विषै वर्तमान कर्म है सो काडकघात करि कैसे स्थितिस्थानकौ प्राप्त हो है ? भावार्थ यहु—स्थितिकाडकघातका प्रश्न कीया, बहुरि किसा अनुभाग विषै वर्तमान कर्म है सो काडकघातकरि अवशेष कैसा स्थानकौ प्राप्त हो है[2]। भावार्थ यहु—अनुभाग काडकघातका प्रश्न कीया। इनि दोऊनिका उत्तर यहु—जो स्थितिकाडकघात अनुभागकाडकघात इस अध करण विषै नाही है अपूर्वकरणविषै हो है। ऐसा यहु चारित्रमोहकी क्षपणाकी सन्मुख भया जीव प्रथम अध प्रवृत्तकरण करै है ॥३९२॥

गुणसेढी गुणसकमठिदिरसखडाण णत्थि पढम्हि ।
पडिसमयमणतगुण विसोहिवड्ढीहिं वड्ढदि हु[3] ॥३९३॥

गुणश्रेणी गुणसंक्रम स्थितिरसखडन नास्ति प्रथमे ।
प्रतिसमयमनंतगुणं विशुद्धिवृद्धिभिः वर्धते हि ॥३९३॥

स० च०—पहलै अध प्रवृत्तकरणविषै गुणश्रेणि १ गुणसक्रम १ स्थितिकाडकघात १ अनुभाग काडकघात १ ए नाही सभवै हैं। सो जीव समय २ प्रति अनन्तगुणा क्रम लीएँ विशुद्धताकी वृद्धिकरि वर्धमान हो है ॥३९३॥

सत्थाणमसत्थाण चउविट्ठाण रसं च बधदि हु ।
पडिसमयमणतेण य गुणभजियकम तु रसबधे ॥३९४॥

शस्तानामशस्तानां चतुरपि स्थानं रस च बध्नाति हि ।
प्रतिसमयमनतेन च गुणभजितक्रम तु रसबधे ॥३९४॥

स० च०—बहुरि सो जीव समय समय प्रति प्रशस्त प्रकृतिनिका अनतगुणा क्रम लीए चतु स्थानक अनुभागबध करै है। अर अप्रशस्त प्रकृतिनिका अनतवा भागका क्रम लीए द्विस्थानिक अनुभागबध करै है ॥३९४॥

पल्लस्स सखभाग मुहुत्तअतेण ओसरदि बधे ।
सखेज्जसहस्साणि य अधापवत्तम्हि ओसरणा[4] ॥३९५॥

पल्यस्य सखभागं मुहूर्तान्तमपसरति बंधे ।
सख्येयसहस्राणि च अध प्रवृत्ते अपसरणा ॥३९५॥

---

१ ण ताव अन्तर करेदि, पुरदो कहिहिदि त्ति अन्तर । ता० मु० पृ० १९४७ ।

२ एदीए गाहाए ट्ठिदिघादो अणुभागघादो च सूचिदो भवदि । ता० मु०, पृ० १९४७ ।

३ तदो इमस्स चरिमसमयअधापवत्तकरणे वट्टमाणस्स णत्थि ट्ठिदिघादो अणुभागघादो वा, से काले दो वि घादा पविसिहिंति । त पुण अप्पसत्थाण कम्माणमणता भागा । ता० मु०, पृ० १९४८ ।

४ पलिदोवमस्स सखेज्जदिभागो ट्ठिदिबधेणोसरिदो । ता० मु०, पृ० १९५१ ।

बहुरि प्रश्न—केते कर्म उदीरणारूप होइ उदयावली प्रति प्रवेश करै है ? ताका उत्तर-सातावेदनीय अर मनुष्यायु विना स्वमुखोदयी सर्व ही कर्म उदयावलीविषै प्रवेश करै है उदीरणा-रूप हो हैं।[1]

विशेष—आयुकर्म और वेदनीयकर्मको छोडकर क्षपक वेदे जानेवाले सभी कर्मोका प्रवेशक होता है। यथा—पाँच ज्ञानावरण और चार दर्शनावरणका नियमसे वेदक होता है। निद्रा और प्रचलाका कदाचित् वेदक होता है, क्योकि कदाचित् अव्यक्त उदय होनेमे कोई विरोध नही है, साता और असातामेंसे अन्यतरका वेदक होता है। चार सज्वलन, तीन वेद और हास्य-शोक तथा रति-अरति इन दो युगलोमेसे अन्यतरका नियमसे वेदक होता है। भय और जुगुप्साका कदाचित् वेदक होता है। मनुष्यायु, मनुष्यगति, पचेन्द्रियजाति, औदारिक-तैजस-कार्मणशरीर, छह् सस्थानोमेसे अन्यतर सस्थान, औदारिक शरीर आगोपाग, वज्रवृषभनाराच सहनन, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, अगुरुलघु आदि चार, दो विहायोगतियोमेसे अन्यतर विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, सुभग-दुर्भग और सुस्वर-दुस्वर इन युगलोमेसे कोई एक-एक, आदेय, यशस्कीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका वेदक होता है। इनके सिवाय अन्य प्रकृतियोका यहाँ उदय सम्भव नही है। इन प्रकृतियोमे सातावेदनीय और मनुष्यायुको छोडकर शेषका उदीरक होता है।

बहुरि प्रश्न—पूर्वै कौन कर्म उदय अर बन्धकरि विनशै है १ ताका उत्तर—स्त्यानगृद्धि-त्रिक ३ असातावेदनीय १ मिथ्यात्व १ कषाय बारह १२ अरति १ शोक १ स्त्रीनपुसकवेद २ आयु चारि ४ परावर्त अशुभ नामकी गुणतीस २९ मनुष्यगति १ औदारिकशरीर वा अगोपाग २ वज्र-वृषभनाराच १ मनुष्यानुपूर्वी १ आतप १ उद्योत १ नीचगोत्र १ इतनी प्रकृतिनिकी बन्धकी व्युच्छित्ति पहलैं भई है।

इहाँ नरक-तिर्यंचगति २ एकेंद्रियादि चारि ४, सस्थान पाँच ५ सहनन पाँच ५ नरक-तिर्यंचानुपूर्वी २ अप्रशस्त विहायोगति १ स्थावर १ सूक्ष्म १ अपर्याप्त १ साधारण १ अस्थिर १ अशुभ १ दुर्भग १ दुस्वर १ अनादेय १ अयशस्कीर्ति १ ए गुणतीस प्रकृति परावर्त अशुभनाम कर्मकी जाननी।[2]

बहुरि स्त्यानगृद्धित्रिक ३ दर्शनमोह ३ कषाय बारह १२ नरक-तिर्यंच-देव आयु ३ नरक-तिर्यच-देव गति वा आनुपूर्वी ६ एकेंद्रियादि जाति चारि, वैक्रियिक-आहारकशरीर वा अगोपाग ४ वज्रवृषभ नाराच विना सहनन पाच ५ मनुष्यानुपूर्वी १ आतप १ उद्योत १ स्थावर १ सूक्ष्म १ साधारण १ अपर्याप्त १ दुर्भग १ अनादेय १ अयशस्कीर्ति १ तीर्थंकर १ नीचगोत्र १ इनके उदयकी व्युच्छित्ति पहलैं भई है, अवशेषनिका इहाँ उदय पाईए है।[3]

बहुरि प्रश्न—अतरकरणकी कहाँ करिकैं कौन-कौन कर्मनिका कहाँ सक्रमण करावने-

---

१ णवरि एत्थ पवेसगो त्ति वुत्ते उदीरणासरूवेणुदयावलिय पवेसेमाणो घेत्तव्वो, उदीरणोदएण पयदत्तादो। जयध०, ता० मु० पृ० १९४५।

२ ता० मु०, पृ० १९४५-१९४६।

३ ता० मु० पृ० १९४६-१९४७।

वाला हो है ? ताका उत्तर—अनिवृत्तिकरण कालका सन्यातवां भाग रहै अन्तरकरण अर सक्रमण क्रियाको करै है। इस अवसरविषै नाही करै है।[1]

बहुरि प्रश्न—किसी स्थिति विषै वर्तमान कर्म है सो काडकघात करि कैसे स्थितिस्थान-कौ प्राप्त हो है ? भावार्थ यहु—स्थितिकाडकघातका प्रश्न कीया, बहुरि किमा अनुभाग विषै वर्तमान कर्म है सो काडकघातकरि अवशेप कैसा स्थानकौ प्राप्त हो है[2]। भावार्थ यहु—अनुभाग काडकघातका प्रश्न कीया। इनि दोऊनिका उत्तर यहु—जो स्थितिकाडकघात अनुभागकाडकघात इस अध करण विषैं नाही है अपूर्वकरणविषै हो है। ऐसा यहु चारित्रमोहकी क्षपणाकी सन्मुख भया जीव प्रथम अध प्रवृत्तकरण करै है ॥३९२॥

गुणसेढी गुणसकमठिदिरसखडाण णत्थि पढम्हि ।
पडिसमयमणतगुण विसोहिवड्ढीहिं वड्ढदि हु[3] ॥३९३॥

गुणश्रेणी गुणसंक्रमं स्थितिरसखडन नास्ति प्रथमे ।
प्रतिसमयमनंतगुण विशुद्धिवृद्धिभि वर्धते हि ॥३९३॥

स० च०—पहलै अध प्रवृत्तकरणविषै गुणश्रेणि १ गुणसक्रम १ स्थितिकाडकघात १ अनुभाग काडकघात १ ए नाही सभवै हैं। सो जीव समय २ प्रति अनन्तगुणा क्रम लीएँ विशुद्धताकी वृद्धिकरि वर्धमान हो है ॥३९३॥

सत्थाणमसत्थाण चउविट्ठाण रसं च बधदि हु ।
पडिसमयमणतेण य गुणभजियकमं तु रसबधे ॥३९४॥

शस्तानामशस्ताना चतुरपि स्थानं रस च बध्नाति हि ।
प्रतिसमयमनतेन च गुणभजितक्रम तु रसबधे ॥३९४॥

स० च०—बहुरि सो जीव समय समय प्रति प्रशस्त प्रकृतिनिका अनतगुणा क्रम लीए चतु स्थानक अनुभागबध करै है। अर अप्रशस्त प्रकृतिनिका अनतवा भागका क्रम लीए द्विस्थानिक अनुभागबध करै है ॥३९४॥

पल्लस्स सखभाग मुहुत्तअतेण ओसरदि बधे ।
संखेज्जसहस्साणि य अधापवत्तम्हि ओसरणा[4] ॥३९५॥

पल्यस्य संखभागं मुहूर्तान्तमपसरति बंधे ।
सख्येयसहस्राणि च अध प्रवृत्ते अपसरणा ॥३९५॥

---

१ ण ताव अन्तर करेदि, पुरदो कहिहिदि त्ति अन्तर। ता० मु० पृ० १९४७।

२ एदीए गाहाए ट्ठिदिघादो अणुभागघादो च सूचिदो भवदि। ता० मु०, पृ० १९४७।

३ तदो इमस्स चरिमसमयअधापवत्तकरणे वट्टमाणस्स णत्थि ट्ठिदिघादो अणुभागघादो वा, से काले दो वि घादा पवित्तिहिंति। त पुण अप्पसत्थाण कम्माणमणता भागा। ता० मु०, पृ० १९४८।

४ पलिदोवमस्स सखेज्जदिभागो ट्ठिदिबधेणोसरिदो। ता० मु०, पृ० १९५१।

स० च०—पूर्व स्थितिबधतै पल्यका सख्यातवा भागमात्र स्थितिवन्ध घटाइ एक अन्तर्मुहूर्त्त काल पर्यंत समय समय समान बध होइ सो यहु एक स्थितिबन्धापसरण भया। ऐसैं सख्यात हजार स्थितिबधापसरण अध प्रवृत्तकरणविषै हो है ॥३९५॥

आदिमकरणद्धाए पढमट्ठिदिबधदो दु चरिमम्हि ।
सखेज्जगुणविहीणो ठिदिबधो होदि णियमेण ॥३९६॥

आद्यकरणाद्धाया प्रथमस्थितिबधतस्तु चरमे ।
सख्येयगुणविहीन स्थितिबधो भवति नियमेन ॥३९६॥

स० च०—ऐसैं स्थितिबधापसरण होनेतै प्रथम अध प्रवृत्तकरण कालविपै प्रथम समय जो स्थितिवध हो है तातैं सख्यातगुणा घटता अत समयविषै स्थितिबध नियमकरि हो है। ऐसैं इस अध करणविषै आवश्यक हो है। जहा अन्य जीवके नीचले समयवर्ती भावनिके समान अन्य जीवकै ऊपरि समयवर्ती भाव होहि सो अध प्रवृत्तकरण ऐसा सार्थक नाम जानना ॥३९६॥

आगैं अपूर्वकरणका वर्णन करिए है—

गुणसेढी गुणसकम ठिदिखडमसत्थगाण रसखड ।
विदियकरणादिसमए अण्ण ठिदिबधमारभई ॥३९७॥

गुणश्रेणी गुणसक्रमं स्थितिखडमशस्तकानां रसखंडम् ।
द्वितीयकरणादिसमये अन्यं स्थितिबन्धमारभते ॥३९७॥

स० च०—दूसरा जो अपूर्वकरण ताका प्रथम समयविषै गुणश्रेणि १ गुणसक्रम १ अर स्थितिखडन १ अर अप्रशस्त प्रकृतिनिका अनुभागखडन हो है। बहुरि अध करणका अत समय-विषै जो स्थितिबध होता था तातैं पल्यका असख्यातवा भागमात्र घटता और ही स्थितिबधकौं प्रारभैं है जातैं इहा एक स्थितिबधापसरण होनेतै इतना स्थितिबन्ध घटाइए है ॥३९७॥

गुणसेढीदीहत्त अपुव्वचउक्कादु साहिय होदि ।
गलिदवसेसे उदयावलिबाहिरदो दु णिक्खेओ[1] ॥३९८॥

गुणश्रेणीदीर्घत्व अपूर्वचतुष्कात् साधिक भवति ।
गलितावशेषे उ   लिबाह्यतस्तु निक्षेप ॥३९८॥

स० च०— इहा गुणश्रेणि आयामका प्रमाण अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसापराय क्षीणकषाय इन च्यारि गुणस्थाननिका मिलाया हूवा कालतैं साधिक है। सो अधिकका प्रमाण क्षीणकषाय कालके सख्यातवे भागमात्र है सो उदयावलीतैं बाह्य गलितावशेषरूप जो यहु गुण-श्रेणि आयाम ताविषै अपकर्षण कीया द्रव्यका निक्षेपण हो है ॥३९८॥

पडिसमय ओकड्डदि असखगुणिदक्कमेण सिंचदि य ।
इदि गुणसेढीकरण पडिसमयमपुव्वपढमादो[1] ॥३९९॥

---

१ गुणसेढी असखेज्जगुणा, सेसे च णिक्खेवो, विसोही च अणतगुणा। ता० मु०, पृ० १९५२ ।

प्रतिसमयमपकर्षति असख्यगुणितक्रमेण सिंचति च।
इति गुणश्रेणीकरण प्रतिसमयमपूर्वप्रथमात् ॥३९९॥

स० च०—प्रथम समयविषै अपकर्षण कीया द्रव्यतै द्वितीयादि समयनिविषै असंख्यातगुणा क्रम लीए समय समय प्रति द्रव्यकौ अपकर्षण करै है। अर सिंचति कहिए उदयावलीविषै गुणश्रेणि आयामविषै उपरितन स्थितिविषै निक्षेपण करै है ऐसै अपूर्वकरणका प्रथम समयतै लगाय समय समय प्रति गुणश्रेणिका करना हो है। ऐसै गुणश्रेणिका स्वरूप कह्या ॥३९९॥

पडिसमयमसखगुण दव्व सकमदि अप्पसत्थाणं।
बधुज्झियपयडीण बधतसजादिपयडीसु ॥४००॥

प्रतिसमयमसंख्यगुण द्रव्य सक्रामति अप्रशस्तानाम्।
बन्धोज्झितप्रकृतीना बध्यमानस्वजातिप्रकृतिषु ॥४००॥

स० च०—अपूर्वकरणका प्रथम समयतै लगाय जिनिका इहा बध न पाइए ऐसी जे अप्रशस्त प्रकृति तिनिका गुणसक्रमण हो है सो समय समय प्रति असख्यातगुणा क्रम लीए तिनि प्रकृतिनिका द्रव्य है सो इहा, जिनिका इहा बध पाइए ऐसी जे स्वजाति प्रकृति तिनविषै सक्रम करै है तद्रूप परिणमै है। जैसै असाता वेदनीयका द्रव्य साता वेदनीयरूप परिणमै है। ऐसैं ही अन्य प्रकृतिनिका जानना ॥४००॥

ओव्वट्टणा जहण्णा आवलियाऊणिया तिभागेण।
एसा ठिदिसु जहण्णा तहाणुभागेसणतेसु[1] ॥४०१॥

अतिस्थापना जघन्या आवलिकोनिका त्रिभागेन।
एषा स्थितिषु जघन्या तथानुभागेष्वनतेषु ॥४०१॥

स० च०—सक्रमणविषै जघन्य अतिस्थापन अपना त्रिभागकरि ऊन आवलीमात्र है सो यहु ही जघन्य स्थिति है। तैसै ही अनत अनुभागनिविषै भी जानना ॥४०१॥

विशेष—इस गाथाका भाव यह है कि कमसे कम त्रिभागसे न्यून एक आवलिको अतिस्थापित करके अपवर्तना होती है। यह स्थितिविषयक जघन्य अतिस्थापना है। तथा अनुभाग विषयक जघन्य अतिस्थापना अनन्त स्पर्धकोसे प्रतिबद्ध है। अर्थात् कमसे कम अनन्त स्पर्धकोको अतिस्थापित करके अपवर्तना होती है। इसका आशय यह है कि उदयावलिसे ऊपर प्रथम स्थिति के कर्म प्रदेशोका अपकर्षण होने पर एक समय कम एक आवलिके एक त्रिभागसे न्यून दो त्रिभाग प्रमाण अतिस्थापना होती है और एक समय अधिक त्रिभाग प्रमाण स्थितियोमे अपकर्षित द्रव्य का निक्षेप होता है। इसके आगे एक आवलि प्रमाण स्थितिके प्राप्त होनेतक अतिस्थापनामे वृद्धि होती जाती है और निक्षेप उक्त प्रमाण ही रहता है। इसके आगे अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण ही रहती है, मात्र निक्षेपमे क्रमश वृद्धि होती जाती है।

---

१ क० पा० गा० १५२।

सकामेदुक्कड्डदि जे असे ते अवट्ठिदा होंति ।
आवलिय से काले तेण पर होंति भजियव्वा ॥४०२॥

संक्रामे तु उत्कृष्यते ये अंशास्ते अवस्थिता भवति ।
आवलिका स्वे काले तेन पर भवति भजितव्या ॥४०२॥

स० च०—सक्रमणविषै जे प्रकृतिनिके परमाणू उत्कर्षणरूप करिए है ते अपने कालविषै आवली पर्यन्त तौ अवस्थित ही रहें। तातै परे भजनीय हो है, अवस्थित भी रहें अर स्थित्यादिक की वृद्धि हानि आदिरूप भी होइ ॥४०२॥

विशेष— जिन कर्मप्रदेशोका सक्रमण अथवा उत्कर्पण करता है वे एक आवलि काल तक तदवस्थ रहते है। उनमे एक आवलि काल तक अन्य कोई क्रिया नही होती। उसके बाद वे कर्म-प्रदेश वृद्धि, हानि और अवस्थानरूपसे भजनीय है। उनमे अपनी-अपनी शक्ति स्थितिके अनुसार अन्य क्रिया हो सकती है यह उक्त गाथा सूत्रका भाव है।

ओक्कड्डदि जे अंसे से काले ते च होंति भजियव्वा ।
वड्ढीए अवट्ठाणे हाणीए सकमे उदए ॥४०३॥

अपकृष्यते ये अशा स्वे काले ते च भवति भजितव्या ।
वृद्धौ अवस्थाने हानौ सक्रमे उदये ॥४०३॥

स० च०—जे प्रकृतिनिके परमाणू अपकर्षण करिए है ते अपने कालविषै भजनीय हो हैं स्थित्यादिककी वृद्धि वा अवस्थान वा हानि अर सक्रमण अर उदय इनरूप होइ भी अर न भी होइ, किछू नियम नाही ॥४०३॥

विशेष— जिन कर्म प्रदेशोका अपकर्षण करता है, तदनन्तर समयमे वृद्धि, अवस्थान, हानि, सक्रम और उदयकी अपेक्षा वे भजनीय हैं। अर्थात् अपकर्षण होनेके बाद अगले समयमे उन कर्मप्रदेशोका उत्कर्षण हो सकता है, अवस्थान हो सकता है, पुन अपकर्पण हो सकता है, सक्रम हो सकता है और उदय भी हो सकता है। अपकर्षणके दूसरे समयमे क्रियान्तर होनेमे कोई बाधा नही है।

एक्क च ठिदिविसेसं तु असखेज्जेसु ठिदिविसेसेसु ।
वड्ढदि हरस्सेदि च तहाणुभागेसुणतेसु ॥४०४॥

एक च स्थितिविशेष तु असख्येयेषु स्थितिविषेषु ।
वर्त्यते रहस्यते वा तथानुभागेष्वनतेषु ॥४०४॥

स० च०— एक स्थितिविशेष जो एक निषेकका द्रव्य सो असख्यात निषेकनिविपै वर्तं है निक्षेपण करिए हैं तैसै ही अनत अनुभागनिविपै भी एक स्पर्धकका द्रव्य अनन्त स्पर्धकनिविपै

१ का० पा०, गा० १५३। २ का० प० गा० १५४। ३ का० पा०, गा० १५६।

निक्षेपण करिए है ऐसा जानना। इन च्यारि गाथानिका अर्थ नीकैं मेरे जाननेमे न आया अर क्षपणासारविषैं भी इनका प्रयोजन किछू लिख्या नाही तातैं बुद्धिमान होइ सो इनका यथासम्भव विशेष अर्थ जानियो। ऐसैं गुणसंक्रमका स्वरूप कह्या ॥४०४॥

विशेष—एक स्थितिविशेषको असंख्यात स्थितिविशेषोंमे बढाता अथवा घटाता है। तथा इसी प्रकार एक अनुभागविशेषको असंख्यात अनुभागविशेषोंमे बढाता अथवा घटाता है। तात्पर्य यह है कि स्थितिसत्कर्मकी अग्रस्थितिमें एक समय अधिक नूतन स्थितिको बाँधनेवाला जीव उस अग्रस्थितिका उत्कर्षण नही करता। दो समय अधिक स्थितिको बाँधनेवाला जीव भी उस अग्रस्थितिका उत्कर्षण नही करता। इसी प्रकार आगे जा कर एक आवलि अधिक नूतन स्थितिको बाँधनेवाला जीव उस अग्रस्थितिका उत्कर्षण नही करता। हाँ यदि सत्कर्मकी अग्रस्थितिसे बँधनेवाली नूतन स्थिति एक आवलि और एक आवलिके असंख्यातवे भाग अधिक हो तो वह जीव सत्कर्मकी अग्रस्थितिका उत्कर्षण कर सकता है। उस समय सत्कर्मकी उस अग्रस्थितिको उत्कर्षित करता हुआ एक आवलिको अतिस्थापित कर आवलिके असंख्यातवे भागमे उस उत्कर्षित द्रव्यका निक्षेप करता है। इस प्रकार निक्षेप एक आवलिके असंख्यातवे भागसे लेकर एक-एक समय अधिक होता हुआ उत्कृष्ट निक्षेपके प्राप्त होनेतक वृद्धिको प्राप्त होता है। जो कषायोकी अपेक्षा चार हजार वर्ष और एक समय अधिक एक आवलिसे न्यून चालीस कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण है। तथा जो आबाधाके ऊपरकी स्थितियाँ हैं, उत्कर्षणको प्राप्त होनेवाली उन स्थितियोकी अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण होती है। और जो आबाधाके नीचे सत्कर्म स्थितियाँ हैं उनमेसे किसीकी एक आवलिप्रमाण अतिस्थापना होती है, किसीकी एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण अतिस्थापना होती है, किसीकी दो समय अधिक और किसीकी तीन समय अधिकसे लेकर उत्कृष्ट अतिस्थापनाके प्राप्त होनेतक अतिस्थापना होती है। जिस कर्मकी जो उत्कृष्ट आबाधा है उसमेसे एक समय अधिक एक आवलिकम उत्कृष्ट आबाधाप्रमाण उत्कृष्ट अतिस्थापना होती है।

पल्लस्स संखभागं वरं पि अवरादु संखगुणिदं तु।
पढमे अपुव्वखवगे ठिदिखंडपमाणयं होदि[1] ॥४०५॥

पल्यस्य संख्यभागं वरमपि अवरात् संख्यगुणितं तु।
प्रथमे अपूर्वक्षपके स्थितिखंडप्रमाणकं भवति ॥४०५॥

स० च०—क्षपक अपूर्वकरणका प्रथम समयविषैं स्थितिखंड कहिए स्थितिकांडकायाम ताका जघन्य वा उत्कृष्ट प्रमाण पल्यके संख्यातवें भागमात्र है तथापि जघन्यतैं उत्कृष्ट संख्यातगुणा है। तहा जो जीव क्षायिक सम्यग्दृष्टी होइ उपशमश्रेणी चढि पीछैं क्षपकश्रेणी चढै ताकै तहा उपशमश्रेणिविषै बहुत स्थितिकांडकघात होनेकरि स्थितिसत्त्व स्तोक रहै है। तातैं ताकैं इहां स्थितिकांडकायाम जघन्य हो है। बहुरि जो जीव उपशमश्रेणी न चढि क्षपकश्रेणी चढै ताकै तिसतैं स्थितिसत्त्व संख्यातगुणा है। ताकै स्थितिकांडकायाम भी संख्यातगुणा हो है, जातैं

---

१ ट्ठिदिखंडयमागाइद पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो। क० पु० चु० पृ० ७४२।
अपुव्वकरणे पढमट्ठिदिखंडयं जहण्णयं थोवं उक्कस्सयं संखेज्जगुणं। ध० पु० ६, पृ० ३४४।

स्थितिके अनुसारि काडकघात हो है ऐसै दूसरा जघन्य काडकतै दूसरा उत्कृष्ट काडक तीसरातै तीसरा इत्यादि सर्वत्र जघन्य काडकतै उत्कृष्ट काडक सख्यातगुणा जानना ॥४०५॥

आउगवज्जाणं ठिदिघादो पढमादु चरिमठिदिसतो ।
ठिदिबधो य अपुव्वे होदि हु सखेज्जगुणहीणो ॥४०६॥

आयुष्कवर्ज्याना स्थितिघात. प्रथमात् चरमस्थितिसत्त्वम् ।
स्थितिबधश्च अपूर्वे भवति हि सख्येयगुणहीन ॥४०६॥

स० च०—आयु विना सात कर्मनिका स्थितिकाडकायाम अर स्थितिसत्त्व अर स्थितिबध ए तीनो अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै जो पाइए है तिनितै ताके अन्त समयविषै सख्यातगुणे घाटि हो हैं ॥४०६॥

अंतोकोडाकोडी अपुव्वपढमम्हि होदि ठिदिबधो ।
बधादो पुण सत्त संखेज्जगुण हवे तत्थ ॥४०७॥

अत कोटीकोटि अपूर्वप्रथमे भवति स्थितिबन्ध ।
बन्धात् पुन सत्त्व सख्येयगुण भवेत् तत्र ॥४०७॥

स० च०—अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै स्थितिबध अन्त कोटाकोटी प्रमाण है सो पृथक्त्व लक्ष कोडि सागरप्रमाण है। बहुरि तहा स्थितिसत्त्व आलाप करि तितना ही है, तथापि स्थिति-बधतै सख्यातगुणा है । ऐसैं स्थितिकाडकका स्वरूप कह्या ॥४०७॥

एक्केक्कट्ठिदिखडयणिवडणठिदिओसरणकाले ।
सखेज्जसहस्साणि य णिवंडति रसस्स खडाणि ॥४०८॥

एकैकस्थितिखंडकनिपतनस्थित्यपसरणकाले ।
सख्येयसहस्राणि च निपतति रसस्य खडानि ॥४०८॥

स० च०—एकस्थितिखडनिपतन कहिए स्थितिकाडकघात जाविषै होइ ऐसा स्थिति-काडकोत्करण काल तीहिं विषै सख्यात हजार अनुभागकाडकनिका निपतन कहिए घात हो है। भावार्थ यहु—अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै स्थितिकाडकका अर अनुभागकाडकका युगपत् प्रारम्भ भया। तहा यथायोग्य काल गए प्रथम अनुभागकाडक पूरा भया अर स्थितिकाडक सोई है। बहुरि अनुभागकाडक दूसरा भया, वहुरि तीसरा भया ऐसै सख्यात हजार अनुभागकाडक भए प्रथम स्थितिकाडकका काल पूर्ण हो है। ऐसै ही द्वितीयादि स्थितिकाडक कालनिविषै क्रम जानना ॥४०८॥

---

१ तदो ट्ठिदिसतकम्म ट्ठिदिबधो च सागरोवमकोडिसदसहस्सपुधत्तमतोकोडीए। बधादो पुण सतकम्म सखेज्जगुण। वही पृ० ७४२। ध० पु० ६, पृ० ३४५।

असुहाणं पयडीण अणंतभागा रसस्स खंडाणि ।
सुहपयडीण णियमा णत्थि त्ति रसस्स खंडाणि ॥४०९॥

अशुभाना प्रकृतीना अनंतभागा रसस्य खडानि ।
शुभप्रकृतीनां नियमात् नास्तीति रसस्य खडानि ॥४०९॥

स० च०—अशुभ प्रकृतीनिका अनन्त बहुभागमात्र अनुभागकाडकका प्रमाण है। पूर्वै जो अनुभाग था ताकौ अनन्तका भाग दीए तहा बहुभागमात्र प्रथम अनुभागकाडकविषै घटाइए है अवशेष एक भागमात्र अनुभाग रहै है। बहुरि ताकौ अनन्तका भाग दीए तहा बहुभाग दूसरा अनुभागकाडकविषै घटाइए है अवशेष एक भाग अनुभाग रहै है। ऐसै अन्त अनुभागकाडक पर्यन्त क्रम जानना। या प्रकार अप्रशस्त प्रकृतिनिका अनुभागखड इहा हो है। बहुरि प्रशस्त प्रकृतिनिका अनुभागखड नियमतै न हो है जातै विशुद्ध परिणामनिकरि शुभप्रकृतिनिके अनुभाग का घटावना सम्भवता नाही। ऐसै अनुभागखडका स्वरूप कह्या ॥४०९॥

पढमे छट्ठे चरिमे भागे दुग तीस चदुर वोछिण्णा ।
बधेण अपुव्वस्स य से काले बादरो होदि ॥४१०॥

प्रथमे षट्के चरमे भागे द्विक त्रिंशत् चतस्रो व्युच्छिन्ना. ।
बन्धेन अपूर्वस्य च स्वे काले बादरो भवति ॥४१०॥

स० च०—पूर्वोक्त प्रकार स्थितिबधापसरणनिकरि घटि घटि सख्यात हजार स्थितिबध भए कहा ? सो कहिए है—

अपूर्वकरणका कालके समान सात भाग करिए तहा प्रथमभागका अत शमयविषै निद्रा प्रचला इनि दोऊनिके बधकी व्युच्छित्ति भई। इहा ही निद्रा प्रचलाका द्रव्य है सो गुणसक्रमण विधान करि इहा बध्यमान स्वजातीय चक्षु अचक्षु अवधि केवलदर्शनावरणीय तिन विषै सक्रमण करै है। बहुरि यातै परै सख्यात हजार स्थितिबन्ध भए ताका छठा भागका अत समयविषै देवगति १ पचेन्द्री जाति १ वैक्रियिक तैजस आहारक कार्माण शरीर ४ समचतुरस्र सस्थान १ वैक्रियिक आहारक अगोपाग २ वर्णादि च्यारि ४ देवानुपूर्वी १ अगुरुलघु १ उपघात १ परघात १ उस्वास १ प्रशस्तविहायोगति १ त्रस १ बादर १ पर्याप्त १ प्रत्येक १ स्थिर १ शुभ १ शुभग १ सुस्वर १ आदेय १ निर्माण १ तीर्थंकर १ इन तीस प्रकृतिके बधकी व्युच्छित्ति हो है। बहुरि यातै सख्यात हजार स्थितिबध भए अपूर्वकरणका अत समयविषैं हास्य १ रति १ भय १ जुगुप्सा १ इन च्यारिनिके बधकी व्युच्छित्ति हो है। अर इहा ही छह नोकषायनिके उदयकी व्युच्छित्ति हो है। जहा उपरि समयसबधी भाव सर्वदा नीचले समय सबधी भावनिके समान न होइ सो कर्म

१ अप्पसत्थाण कम्माणमणुभागस्स अणते भागे खडय गेण्हदि। ध० पु० ६, ३४५।

२ एव ट्ठिदिबधसहस्सेहि गदेहि अपुव्वकरणद्धाए सखेज्जदिभागे गदे तदो णिद्दा-पयलाण बधवोच्छेदो। ताधे चेव ताणि गुणसकमेण सकमति। तदो ट्ठिदिबधसहस्सेसु गदेसु परभवियणामाण बधवोच्छेदो जादो। तदो ट्ठिदिबधसहस्सेसु गदेसु चरिमसमयअपुव्वकरण पत्तो। से काले पढमसमयअणियट्टी जादो। क० चु० पृ० ७४३।

नाश करनेवाला सार्थक नामका धारक अपूर्वकरण जानना। याकौ समाप्त होतैं ताके अनतर समय निज कालविषैं बादर कहिए अनिवृत्तिकरण हो है ॥४१०॥ ताका व्याख्यान करिए है—

अणियट्टिस्स य पढमे अण्ण ठिदिखडपहुदिमारभइ।
उवसामणा णिधत्ती णिकाचणा तत्थ वोछिण्णो ॥४११[1]॥

अनिवृत्तेश्च प्रथमे अन्य स्थितिखडप्रभृतिमारभते।
उपशामना निधत्ति निकाचना तत्र व्युच्छिन्ना ॥४११॥

स० च०—अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयविषै और ही स्थितिखडादिक प्रारभिए है। तहा अपूर्वकरणका अन्त समयवर्तीतैं अन्य ही पल्यका सख्यातवा भागमात्र तौ स्थितिकाडकायाम हो है। अर यातै पीछै अवशेष रह्या जो अनुभाग ताका अनत बहुभागमात्र और ही अनुभागकाडक हो है। अर अपूर्वकरणका अन्त समयसबधी स्थितिबधतै पल्यका सख्यातवा भागमात्र घटता और ही स्थितिबध इहा हो है। बहुरि इहा ही अप्रशस्तोपशम १ निधत्ति १ निकाचना १ इन तीन करणनिकी व्युच्छित्ति भई। अब सर्व ही कर्म उदय सक्रमण उत्कर्षण अपकर्षण करनेकौ योग्य भए ॥४११॥

बादरपढमे पढम ठिदिखड विसरिस तु विदियादि।
ठिदिखंडय समाण सव्वस्स समाणकालम्हि[2] ॥४१२॥

बादरप्रथमे प्रथमं स्थितिखड विसदृश तु द्वितीयादि।
स्थितिखडकं समान सर्वस्य समानकाले ॥४२२॥

स० च०—अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयविषै पहला स्थितिखण्ड है सो तो विसदृश है नाना जीवनिकैं समान नाही है। बहुरि द्वितीयादि स्थितिखड हैं ते समान कालविषै सर्व जीवनिके समान है। अनिवृत्तिकरण माडैं जिनकौं समान काल भया तिनकैं परस्पर द्वितीयादि स्थितिकाडक आयामका समान प्रमाण जानना ॥४१२॥

पल्लस्स सखभाग अवर तु वर तु सखभागहिय।
घादादिमठिदिखडो सेसा सव्वस्स सरिसा हु[3] ॥४१३॥

---

१ पढमसमयअणियट्टिस्म अण्ण ट्ठिदिखडय पलिदोवमस्स सखेज्जदिभागो। अण्णमणुभागखडय सेसस्स अणता भागा। अण्णो ट्ठिदिबधो पलिदोवमस्स सखेज्जदिभागेण हीणो। सव्वकम्माण पि तिण्णि करणणि वोच्छिण्णाणि। जहा—अप्पसत्यउवसामणाकरण णिधत्तीकरण णिकाचणाकरण च। क० चु० पृ० ७४३–७४४।

२ पढम ट्ठिदिखडय विसम जहण्णयादो उक्कस्सय सखेज्जभागुत्तर। पढमे ट्ठिदिखडये हदे सव्वस्स तुल्लकाले अणियट्टिपविट्ठस्स ट्ठिदिसतकम्म तुल्ल ट्ठिदिखडय पि सव्वस्स अणियट्टिपविट्ठस्स विदियट्ठिदिखडयादो विदियट्ठिदिखडय तुल्ल। तदोप्पहुडि तदियादो तदिय तुल्ल। क० चु०, पृ० ७४३।

३

पल्यस्य सख्यभाग अवर तु वर तु सख्यभागमधिकम् ।
घातादिमस्थितिखड शेषा सर्वस्य सदृशा हि ॥४१३॥

स० च०—सो प्रथम स्थितिखड जघन्य तो पल्यका सख्यातवा भागमात्र है। उत्कृष्ट ताका सख्यातवा भाग करि अधिक है। बहुरि द्वितीयादि स्थितिखड सर्व जीवनिकै समान हो हैं। इहा कारण कहिए है—

कोई जीवकै स्थितिसत्त्व स्तोक है। कोईकै तातैं सख्यातवा भाग करि अधिक है तातै स्थितिसत्त्वके अनुसारि स्थितिकाडक भी कोईकै जघन्य कोईकै उत्कृष्ट हो है सो अपूर्वकरणका प्रथम समयतै लगाय अनिवृत्तिकरणविषै यावत् प्रथम खडका घात न होइ तावत् ऐसैं ही सभवै है। बहुरि तिस प्रथम काडकका घात भए पीछै समान समयनिविषै प्राप्त सर्व जीवनिकै स्थिति-सत्त्वकी समानता हो है, तातै द्वितीयादि स्थितिकाडक आयामनिकी भी समानता जाननी ॥४१३॥

उदधिसहस्सपुधत्तं लक्खपुधत्त तु बध सतो य ।
अणियट्टिस्सादीए गुणसेढीपुव्वपरिसेसा ॥४१४॥[1]

उदधिसहस्रपृथक्त्व लक्षपृथक्त्व तु बंध सत्त्व च ।
अनिवृत्तेरादौ गुणश्रेणी पूर्वपरिशेषा ॥४१४॥

स० च०—अपूर्वकरणका प्रथम समयविषै पूर्वै स्थितिबध अन्त कोटाकोटि सागरप्रमाण था सो अपूर्वकरण विषैं भए सख्यात हजार स्थितिबधापसरण तिनकरि घटता होइ पृथक्त्व हजार सागरप्रमाण स्थितिबध भया। बहुरि पूर्वै स्थितिसत्त्व अन्त कोटाकोटि सागरप्रमाण था सो अपूर्व-करण विषै भए सख्यात हजार स्थितिकाडकघात तिनकरि घटता होइ पृथक्त्व लक्षसागरप्रमाण स्थितिसत्त्व भया। बहुरि गुणश्रेणि आयाम इहा अपूर्वकरण काल व्यतीत भए पीछै जो अवशेष रह्या सो इहा जानना। समय समय प्रति असख्यातगुणा क्रम लीए पूर्ववत् गुणश्रेणी अर गुण-सक्रम वर्तै है ॥४१४॥

आगे स्थितिबधापसरणका क्रम कहिए है—

ठिदिबधसहस्सगदे संखेज्जा बादरे गदा भागा ।
तत्थासण्णिस्स ट्ठिदिसरिस ठिदिबधण होदि[2] ॥४१५॥

स्थितिबधसहस्रगते संख्येया बादरे गता भागा ।
तत्रासज्ञिन स्थितिसदृश स्थितिबधन भवति ॥४१५॥

स० च०—ऐसैं प्रथम समय विषै कह्या अनुक्रम लीए एक स्थितिबधापसरण करि स्थिति-

---

१ ट्ठिदिबधो सागरोवमसहस्सपुधत्तमतो सद्सहस्सस्स। ट्ठिदिसतकम्म सागरोवमसदसहस्सपुधत्तमतो कोडीए। गुणसेढिणिक्खेवो जो अपुव्वकरणे णिक्खेवो तस्स सेसे सेसे च भवदि। क० चु० पृ० ७४३-७४४

२ एव सखेज्जेसु ट्ठिदिबधसहस्सेसु गदेसु तदो अण्णो ट्ठिदिबधो असण्णिट्ठिदिबधसमगो जादो। क० चु० पृ० ७४४।

बध घटनेतै एक स्थितिबध होइ। ऐसै सख्यात हजार स्थितिबध भए अनिवृत्तिकरणके कालका सख्यात्त भागनिविषै बहुभाग व्यतीत भए एक भाग अवशेष रह्या तहा असज्ञी पचेन्द्री समान स्थितिबध हो है सो हजार सागरके चारि सातवा भाग मात्र मोहका, तीन सातवा भाग मात्र तीसीयनिका, दोय सातवा भाग मात्र वीसीयनिका स्थितिबध हो है। चालीस तीस बीस कोडा-कोडी सागरस्थितिकी अपेक्षा चारित्रमोहका नाम चालीसीय अर ज्ञानावरणादि च्यारिका नाम तीसीय, नाम गोत्रका नाम वीसीय जानना ॥४१५॥

ठिदिबधसहस्सगदे पत्तेयं चदुरतियविएइदी।
ठिदिबंधसमं होदि हु ठिदिबधमणुक्कमेणेव[1] ॥४१६॥

स्थितिबधसहस्रगते प्रत्येकं चतुस्त्रिद्विएकेंद्री।
स्थितिबंधसमं भवति हि स्थितिबंधमनुक्रमेणैव ॥४१६॥

स० च०—पूर्वोक्त क्रम लीए सख्यात हजार स्थितिबध प्रत्येक भए अनुक्रमतै चौद्री तेंद्री वेंद्री एकेंद्री समान स्थितिबध हो है। तहा चौद्री समान तौ सौ सागरका अर तेंद्री समान पचास सागरका, वेंद्री समान पचीस सागरका, एकेंद्री समान एक सागरका च्यारि सातवा भाग-मात्र तौ मोहका, तीन सातवा भागमात्र तीसीयनिका, दोय सातवा भागमात्र वीसीयनिका स्थिति-बध हो है। तहा एकेंद्री वेंद्री तेंद्री चौंद्री असज्ञीकै सत्तर कोडाकोडी उत्कृष्ट स्थितिका धारक जो मिथ्यात्व ताका क्रमतै एक पचीस पचास सौ हजार सागरका स्थितिबध होइ तौ चालीस तीस बीस कोडाकोडी उत्कृष्ट स्थितिका धारक जो मोह अर ज्ञानावरणादि अर नाम गोत्र तिनका केता बध होइ ऐसैं त्रैराशिक कीए पूर्वोक्त स्थितिबधका प्रमाण आवै है। ऐसैं ही त्रैराशिकका क्रम आगै भी जानना ॥४१६॥

एइंदियट्ठिदीदो सखसहस्से गदे हु ठिदिबधे।
पल्लेक्कदिवड्ढदुगं ठिदिबधो वीसियतियाण[2] ॥४१७॥

एकेंद्रियस्थितित संख्यसहस्रे गते हि स्थितिबधे।
पल्यैकद्वयर्धद्विकं स्थितिबध वीसियत्रिकाणाम् ॥ ४१७ ॥

स० च—एकेंद्रिय समान स्थितिबधतै परै सख्यात हजार स्थितिबध गए वीसीयनिका एक पल्य, तीसीयनिका ड्योढ पल्य, मोहका दोय पल्यमात्र स्थितिबध हो है ॥ ४१७ ॥

तक्काले ठिदिसत लक्खपुधत्तं तु होदि उवहीण।
बधोसरणो वंध ठिदिखड संतमोसरदि[3] ॥४१८॥

---

१ तदो सखेज्जेसु ट्ठिदिवधसहस्सेसु गदेसु चदुरिंदियट्ठिदिवधसमगो ट्ठिदिवधो जादो। एव तीइदिय-समगो वीइदियसमगो एइदियसमगो जादो। क० चु० पृ० ७४४।

२ तदो एइदियट्ठिदिवधसमगादो ट्ठिदिवधादो सखेज्जेसु ट्ठिदिवधसहस्सेसु गदेसु णामा-गोदाण पलिदो-वमट्ठिदिगो वधो जादो। ताधे णाणावरणीयदसणावरणीय-वेदणीय अतराइयाण दिवड्ढपलिदोवमट्ठिदिगो वधो। मोहणीयस्स वेपलिदोवमट्ठिदिगो वधो। क० चु० पृ० ७४४।

३ ताधे ट्ठिदिसतकम्म सागरोवमसदमहस्सपुधत्त।

तत्काले स्थितिसत्त्व लक्षपृथक्त्व तु भवति उदधीनाम् ।
बधापसरण बध स्थितिखड सत्त्वमपसरति ॥४१८॥

स० च—तिस कालविषै कर्मनिका स्थितिमत्त्व पृथक्त्व लक्षसागरप्रमाण हो है सो अनिवृत्तिकरणका प्रथम समयसम्बन्धी स्थितिबधतै सख्यातगुणा घाटि जानना। बहुरि सर्वत्र ऐसा जानना—स्थितिबधापसरणनिकरि स्थितिबध घटै है अर स्थितिकाडकनिकरि स्थितिसत्त्व घटै है॥ ४१८॥

पल्लस्स सखभाग संखगुणूण असखगुणहीण ।
बधोसरणे पल्ल पल्लासख असखवस्सं ति ॥४१९॥

पल्यस्य सख्यभाग संख्यगुणोनमसंख्यगुणहीनम् ।
बधापसरणे पल्य पल्यासख्य असंख्यवर्षमिति ॥४१९॥

स० च—पल्यका सख्यातवा भाग अर पूर्व बधतै सख्यातगुणा घटता अर असख्यातगुणा घटता प्रमाण लीए स्थितिबधापसरणनिकरि पल्यमात्र अर पल्यका असख्यातवा भागमात्र अर असख्यात वर्षमात्र स्थितिबध हो है। भावार्थ--पल्यमात्र स्थितिबध होने पर्यंत तौ पल्यका सख्यातवा भागमात्र स्थितिबधापसरण जानना। तहा पूर्व स्थितिबधतै अनतरि स्थितिबध किछू विशेष घटता हो है। बहुरि तातै परै पल्यका असख्यातवा भागमात्र जो दूरापकृष्टि नामा स्थितिबध ताके होने पर्यंत पल्यकौ सख्यातका भाग दीए तहा एक भाग विना बहुभागमात्र स्थितिबधापसरण जानना। तहा पूर्व स्थितिबधतै अनतर स्थितिबध सख्यातगुणा घटता हो है। बहुरि तातै परै असख्यात हजार वर्षमात्र स्थितिबध होने पर्यंत पल्यकौ असख्यातका भाग दीए तहा एक भाग बिना बहुभागमात्र स्थितिबधापसरण जानना। तहा पूर्व स्थितिबधतै अनतर स्थितिबध असख्यातगुणा घटता हो है। ऐसै एक एक स्थितिबधापसरणविषै स्थितिबंध घटाए अवशेष स्थितिबध रहै है। तहा पूर्व स्थितिबधतै अनतर स्थितिबध किछू विशेष घटता हो है। बहुरि याही प्रकार प्रमाण लीए स्थिति काडकनिकरि स्थितिसत्त्वकौ घटाइ पल्यादिमात्र स्थितिसत्त्वका होना जानना ॥४१९॥

विशेष—अनिवृत्तिकरणमे जहाँ जाकर एकेन्द्रिय जीवोके समान स्थितिबन्ध होता है वहाँसे सख्यात हजार स्थितिबन्धापसरण होनेपर नाम-गोत्रका एक पल्योपम, ज्ञानावरण, दर्शनावरण वेदनीय और अन्तरायका डेढ पल्योपम तथा महोनीयका दो पल्योपम स्थितिबन्ध होने लगता है। अब विचार यह करना है कि अब तक स्थितिबन्धापसरण पल्योपमके सख्यातवे भागप्रमाण था, आगे उत्तरोत्तर स्थितिबन्धापसरण द्वारा स्थितिबन्ध घटता क्रम लिये होने पर स्थितिबन्धापसरणका प्रमाण कितना रहता है इसी तथ्यको इस गाथा द्वारा स्पष्ट किया गया है। आशय यह है कि स्थितिबन्धापसरण द्वारा जिस किसी भी कर्मके पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्धके प्राप्त होने तक प्रत्येक स्थितिबन्धापसरणका प्रमाण पल्योपमके सख्यातवें भागमात्र होता है। आगे जहाँ जाकर जिस किसी-कर्मका स्थितिबन्ध प्रथम बार पल्योपमके असख्यातवे भागप्रमाण प्राप्त होता है वहाँ तक प्रत्येक स्थितिबन्धापसरणका प्रमाण पूर्व-पूर्व स्थितिबन्धसे उत्तरोत्तर सख्यातगुणा घटता क्रम लिये होता है। तथा इससे आगे जहाँ जाकर जिस किसी कर्मका स्थितिबन्ध प्रथम बार असख्यात वर्ष प्रमाण प्राप्त होता है वहाँ तक प्रत्येक स्थितिबन्धापसरणका प्रमाण पूर्व-पूर्व

स्थितिबन्धसे उत्तरोत्तर असख्यातगुणा घटता क्रम लिये होता है। यह स्थितिवन्धापसरणके विषयं मे सामान्य नियम है जो बँधनेवाले सभी कर्मोंपर लागू होता है।

एव पल्ल जादा वीसीया तीसिया य मोहो य[1]।
पल्लासख च कम बधेण य वीसियतियाओ[2] ॥४२०॥

एव पल्य जाते वीसिया तीसिया च मोहश्च।
पल्यासख्य च क्रमेण बधेन च वीसियत्रिका ॥ ४२० ॥

स० च—ऐसै वीसीयनिका पल्यमात्र स्थितिबध भया तहा पर्यंत तौ वीसीयनिकेतै ड्योढा तीसीयनिका अर दूणा मोहका स्थितिबध है। ऐसा ही क्रम जानना। बहुरि ताके अनतरि एक स्थितिबधापसरण होनेकरि वीसीयनिका तौ स्थितिबध सख्यातगुणा घटता भया। पल्यकौं-सख्यातका भाग दीए तहा बहुभाग घटाए एक भागमात्र स्थितिबध रह्या बहुरि अन्य कर्मनिका पल्य-मात्र स्थितिबध न भया है तातै पूर्व बधतै पल्यका सख्यातवा भागमात्र विशेष-करि हीन स्थितिबध भया। तहा वीसीयनिका स्तोक स्थितिबध है। तातै तीसीयनिका सख्यातगुणा है। जातैं इहा वीसीयनिका तौ पल्यके सख्यातवें भाग भया अर तीसीयनिका साधिक पल्यमात्र है। बहु रि तीसीयनिकेतै मोहका विशेष अधिक है। ऐसैं अल्पबहुत्व हुआ। इस क्रमकरि सख्यात हजार स्थितिबध भए तीसीयनिका पल्यमात्र स्थितिबध भया। तहा तातैं तीसरा भाग अधिक मोहका स्थितिबध हो है, जातै तीसीयका पल्यमात्र स्थितिबध होइ तौ चालीसीयका केता होइ असैं त्रैराशिककरि त्रिभाग अधिक पल्यमात्र मोहका स्थितिबध आवै है। बहुरि याके अनतरि तीसीयनिका पल्यका सख्यात बहुभागमात्र एक स्थितिबधापसरणकरि पूर्व स्थितिबधतैं सख्यात-गुणा घटता स्थितिबध हो है। तहा नाम गोत्रका स्तोक तातैं तीसीयनिका सख्यातगुणा तातैं मो-हका सख्यातगुणा स्थितिबध हो है। इहा वा आगैं अल्पबहुत्व यथासम्भव स्थितिबधापसरण होनेतैं सभवै है सो विचारैं प्रगट भासैं है।

बहुरि इस अनुक्रमतैं सख्यात हजार स्थितिबध भए मोहका पल्यमात्र स्थितिबध हो है। तहा अवशेष छह कर्मनिका स्थितिबध पल्यके सख्यातवें भागमात्र हो है। ऐसैं वीसीय तीसीय मोहका पल्यमात्र स्थितिबध होनेका क्रम जानना। बहुरि ताके अनतरि मोहका पल्यका सख्यात बहुभागमात्र एक स्थितिबधापसरण भया तब सातौ ही कर्मनिका स्थितिबध पल्यके सख्यातवें भागमात्र भया। तहा नाम गोत्रका स्तोक तातैं तीसीयनिका सख्यातगुणा तातैं मोहका सख्यात-गुणा स्थितिबध जानना। बहुरि ऐसैं अनुक्रमकरि सख्यात हजार स्थितिबध भए नाम गोत्रका दूरापकृष्टि नामा पल्यका सख्यातवा भागमात्र स्थितिबध हो है। बहुरि ताके अनतरि पल्यका असख्यात बहुभागमात्र एक स्थितिबधापसरण होनेतैं नाम गोत्रका पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र

---

१ जाधे णामा-गोदाण पलिदोवमट्ठिदिगो बंधो ताधे अप्पाबहुअ वत्तइस्साभो। त जहा—णामा-गोदाण ठिदिबघो थोवो, णाणावरणीय-दमणावरणीय-वेदणीय-अतराइयाण ठिदिबघो विसेसाहिओ। मोहणी-यस्स ट्ठिदिबघो विसेसाहिओ। क० चु० पृ० ७४५।

२ तदो सखेज्जेसु ट्ठिदिबधसहस्सेसु गदेसु मोहणीयस्स वि पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो ठिदिबघो जादो। ताधे सव्वेसि पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो ठिदिबधो जादो। क० चु० पृ० ७४७।

स्थितिबंध हो है तहां अन्य कर्मनिका पल्यके संख्यातवें भागमात्र ही स्थितिबंध है जातें इनकैं दूरापकृष्टिका उल्लंघन होनेतें स्थितिबंधापसरण पल्यके संख्यात बहुभागमात्र ही है। तहां नाम गोत्रका स्तोक तातैं तीसीयनिका असंख्यातगुणा तातैं मोहका संख्यातगुणा स्थितिबंध जानना। बहुरि इस क्रमतैं संख्यात हजार स्थितिबंध भए तीसीयनिका स्थितिबंध दूरापकृष्टिकौं उलंघि पल्यके असंख्यातवें भागमात्र भया। तहां नाम गोत्रका स्तोक तातैं तीसीयनिका असंख्यातगुणा तातैं मोहका असंख्यातगुणा स्थितिबंध है। बहुरि इस क्रम लीए संख्यात हजार स्थितिबंध भए मोहका भी पल्यका असंख्यातवां भागमात्र स्थितिबंध भया। तहां सर्व ही कर्मनिका पल्यके असंख्यातवें भागमात्र स्थितिबंध हो है। ऐसैं वीसीय तीसीय चालीसीयनिका पल्यके असंख्यातवें भागमात्र स्थितिबंध क्रमतैं हो है॥ ४२०॥

विशेष—इस गाथा द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि उत्तरोत्तर यथा सम्भव स्थितिबन्धापसरण होनेपर सर्व प्रथम वीसिय प्रकृतियोंका एक पल्योपम प्रमाण स्थितिबन्ध प्राप्त होता है। इसके बाद उत्तरोत्तर यथा सम्भव स्थितिबन्धापसरण होनेपर तीसिय प्रकृतियोंका एक पल्योपम-प्रमाण स्थितिबन्ध प्राप्त होता है। उसके बाद उत्तरोत्तर यथा सम्भव स्थितिबन्धापसरण होने पर मोहनीय कर्मका एक पल्योपम प्रमाण स्थितिबन्ध प्राप्त होता है। इसके आगे उत्तरोत्तर यथा सम्भव स्थितिबन्धापसरण होनेपर वीसियत्रिक अर्थात् वीसिय, तीसिय और मोहनीयका स्थिति-बन्ध क्रमसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। यह उक्त गाथाका संक्षिप्त तात्पर्य है। विशेष खुलासा चूर्णिसूत्रोंके अनुसार इस प्रकार है—नाम-गोत्रका पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्ध प्राप्त होनेके बाद जो अन्य स्थितिबन्ध होता है वह पूर्वके उक्त स्थितिबन्धसे संख्यातगुणा हीन होता है। शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध अपने पूर्वके स्थितिबन्धसे विशेष हीन होता है। उस समय इस प्रकार अल्पबहुत्व प्राप्त होता है—नाम-गोत्रका स्थितिबन्ध सबसे स्तोक होता है, उससे चार कर्मोंका स्थितिबन्ध परस्पर तुल्य होकर संख्यातगुणा होता है। उससे मोहनीय कर्मका स्थितिबन्ध विशेष अधिक होता है।

आगे इस क्रमसे संख्यात हजार स्थितिबन्ध होनेपर ज्ञानावरणादि तीसिय प्रकृतियोंका एक पल्योपमप्रमाण तथा मोहनीयका त्रिभाग अधिक एक पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्ध प्राप्त होता है। इसके बाद तीसिय कर्मोंका उक्त स्थितिबन्ध संख्यातगुणा हीन स्थितिबन्ध प्राप्त होनेपर अल्प बहुत्वका क्रम इस प्रकार प्राप्त होता है—नाम-गोत्रका स्थितिबन्ध सबसे स्तोक होता है। उससे तीसिय कर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यातगुणा होता है।

इस प्रकार इस क्रमसे संख्यात हजार स्थितिबन्ध व्यतीत हो जानेपर जब मोहनीयका पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्ध प्राप्त होता है तब शेष कर्मोंका पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्ध होता है। पुनः इस स्थितिबन्धके सम्पन्न होनेके बाद मोहनीयका पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्ध प्राप्त होता है। इस प्रकार यहाँपर सभी सातों कर्मोंका स्थितिबन्ध पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण होनेपर अल्पबहुत्व इस प्रकार प्राप्त होता है—नाम-गोत्रका स्थितिबन्ध सबसे स्तोक होता है। उससे तीसिय प्रकृतियोंका स्थितिबन्ध संख्यातगुणा होता है तथा उससे मोहनीयका स्थितिबन्ध संख्यातगुणा होता है।

इस प्रकार इस क्रमसे संख्यात हजार स्थितिबन्ध व्यतीत होकर अन्य स्थितिबन्धके प्राप्त

होनेपर जब नाम-गोत्रका पल्योपमके असख्यातवे भागप्रमाण स्थितिबन्ध प्राप्त होता हैं तब शेष कर्मो का पल्योपमके सख्यातवे भागप्रमाण स्थितिबन्ध होता है। उस समय यह अल्पबहुत्व प्राप्त होता है—नाम गोत्रका सबसे थोडा स्थितिबन्ध होता है, उससे तीसिय चार कर्मो का असख्यात-गुणा स्थितिबन्ध होता है, उससे मोहनीयका सख्यातगुणा स्थितिबन्ध होता है।

उसके सख्यात हजार स्थितिबन्ध जानेपर तीन घातिकर्मो और वेदनीयका पल्योपमके असख्यातवे भागप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है। उस समय यह अल्पबहुत्व होता है—नाम-गोत्रका सबसे स्तोक स्थितिबन्ध होता हैं, उससे चार कर्मोका असख्यातगुणा स्थितिबन्ध होता है, उससे मोहनीयका असख्यातगुणा स्थितिबन्ध होता है।

उसके बाद सख्यात हजार स्थितिबन्ध जानेपर मोहनीयका स्थितिबन्ध भी पल्योपमके असख्यातवे भागप्रमाण हो जाता है। उस समय सभी कर्मो का पल्योपमके असख्यातवे भागप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है। इस प्रकार इस गाथामे उक्त अर्थ गर्भित है ऐसा यहाँ समझना चाहिये।

उदधिसहस्सपुधत्त अब्भतरदो दु सदसहस्सस्स।
तक्काले ठिदिसतो आउगवज्जाण कम्माण[1] ॥४२१॥

उदधिसहस्रपृथक्त्व अभ्यतरतस्तु शतसहस्रस्य।
तत्काले स्थितिसत्व आयुर्वजिताना कर्मणाम् ॥४२१॥

स० च—तिस मोहनीयका पल्यका असख्यातवा भागमात्र स्थितिबध होनेके कालविषै आयु विना अन्य कर्मनिका स्थितिसत्त्व पृथक्त्व हजार सागर प्रमाण हो है सो पृथक्त्व हजार शब्दकरि इहा लक्षके माही यथासम्भव प्रमाण जानना। पूर्वे पृथक्त्व लक्ष सागरका स्थितिसत्व था सो काडकघातनिकरि इहा इतना रह्या है ॥ ४२१ ॥

मोहपल्लासखट्ठिदिबधसहस्सगेसु तीदेसु।
मोहो तीसिय हेट्ठा असखगुणहीणय होदि[2] ॥४२२॥

मोहगपल्यासख्यस्थितिबधसहस्रकेष्वतीतेषु।
मोह तीसिय अधस्तना असख्यगुणहीनक भवति ॥४२२॥

स० च—मोहका पल्यके असख्यातवें भागमात्र स्थितिबध भया तिस कालविषै नाम गोत्र का स्तोक तातै तीसीयनिका असख्यातगुणा तातै मोहका असख्यातगुणा स्थितिबध हो है। बहुरि ऐसा अल्पबहुत्व लीए सख्यात हजार स्थितिबध भए नाम गोत्रका स्तोक तातै मोहका असख्यात-गुणा तातैं तीसीयनिका असख्यातगुणा ऐसैं अन्य प्रकार स्थितिबध हो है। इहा विशुद्धताके निमित्ततैं तीसीयनिके नीचैं अति अप्रशस्त जो मोह ताका स्थितिबध असख्यातगुणा घटता भया ॥४२२॥

---

१ ताधे ठिदिसतकम्म सागरोवसहस्सपुधत्तमतोसदसहस्सस्स। क० चु० पृ० ७४७।

२ तदो जम्हि अण्णो ठिदिबधो तम्हि एक्कसराहेण णामा-गोदाण ठिदिबधो थोवो, मोहणीयस्स ठिदिबधो असखेज्जगुणो, चउण्ह कम्माण ठिदिबधो तुल्लो असखेज्जगुणो। क० चु० पृ० ७४७।

तेत्तियमेत्ते बंधे समतीदे वीसियाण हेट्ठादु ।
एक्कसराहे मोहे असंखगुणहीणयं होदि[1] ॥ ४२३ ॥

तावन्मात्रे बंधे समतीते वीसियाना अधस्तात् ।
एकसमये मोहोऽसंख्यगुणहीनको भवति ॥ ४२३ ॥

स० च—बहुरि ऐसा अल्पबहुत्वका क्रम लीए तितने ही संख्यात हजार स्थितिबंध भए एक ही बार अन्य प्रकार स्थितिबंध भया। तहां मोहका स्तोक तातैं नाम गोत्रका असंख्यातगुणा तातैं च्यारयो तीसीयनिका असंख्यातगुणा स्थितिबंध हो है। इहां विशुद्धताके बलतैं अति अप्रशस्त मोहका स्थितिबंध वीसीयनिके नीचैं असंख्यातगुणा घटता भया ॥ ४२३ ॥

तेत्तियमेत्ते बंधे समतीदे वेदणीयहेट्ठादु ।
तीसियघादितियाओ असंखगुणहीणया होंति[2] ॥४२४॥

तावन्मात्रे बंधे समतीते वेदनीयाधस्तात् तु ।
तीसियघातित्रिका असंख्यगुणहीनका भवति ॥ ४२४ ॥

स० च—बहुरि ऐसा क्रम लीए तितने ही संख्यात हजार स्थितिबंध व्यतीत भए और ही प्रकार स्थितिबंध भया। तहां मोहका स्तोक तातैं नाम गोत्रका असंख्यातगुणा तातैं तीन घातियानिका असंख्यातगुणा तातैं वेदनीयका असंख्यातगुणा स्थितिबंध हो है। इहां विशुद्धतातैं तीसीयनिविषै भी वेदनीयतैं नीचैं अप्रशस्त तीन घातिया कर्मनिका असंख्यातगुणा घटता स्थितिबंध भया ॥ ४२४ ॥

तेत्तियमेत्ते बंधे समतीदे वीसियाण हेट्ठा दु ।
तीसियघादितियाओ असंखगुणहीणया होंति ॥४२५॥

तावन्मात्रे बंधे समतीते वीसियानामधस्तात् तु ।
तीसियघातित्रिका असंख्यगुणहीनका भवति ॥ ४२५ ॥

स० च—बहुरि ऐसा क्रम लीए संख्यात हजार स्थितिबंध व्यतीत भए तहां अन्त स्थितिबंधतै अन्य प्रकार स्थितिबंध भया। तहां मोहका स्तोक तातैं तीन घातियानिका असंख्यातगुणा तातैं नाम गोत्रका असंख्यातगुणा तातैं वेदनीयका साधिक स्थितिबंध हो है। इहां विशुद्धताके

---

१ एदेण कमेण संखेज्जाणि ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि। तदो जम्हि अण्णो ठिदिबंधो तम्हि एक्कसराहेण मोहणीयस्स ठिदिबंधो थोवो। णामा-गोदाण ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो, चउण्हं कम्माणं ठिदिबंधो तुल्लो असंखेज्जगुणो। क० चु० पृ० ७४७।

२ एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि। तदो जम्हि अण्णो ठिदिबंधो तम्हि एक्कसराहेण मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो थोवो, णामा-गोदाण ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो, तिण्हं घादिकम्माणं ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो। वेदणीयस्स ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो। क० चु० पृ० ७४७-७४८।

बलतै वीसीयनिके नीचै अति अप्रशस्त तीन घातिया कर्मनिका असख्यातगुणा घटता स्थितिबध हो है ॥ ४२५ ॥

तक्काले वेयणिय णामागोदाउ साहिय होदि ।
इदि मोहतीसवीसियवेयणियाण कमो बधे[1] ॥४२६॥

तत्काले वेदनीय नामगोत्रात् साधिक भवति ।
इति मोहतीसियवीसियवेदनीयाना क्रमो बधे ॥ ४२६ ॥

स० च०—तिस कालविषै वेदनीयका स्थितिबध नाम गोत्रके स्थितिबधतै साधिक है। ताका आधा प्रमाणकरि अधिक हो है, जातै वीसीयनिका स्थितिबधतै तीसीयनिका स्थितिबध ड्योढ गुणा त्रैराशिककरि सिद्ध हो है। ऐसै मोह तीसीय वीसीय वेदनीयका क्रमतै बध भया सोई क्रमकरण जानना। नाम गोत्रतै वेदनीयका ड्योढा स्थितिबधरूप क्रम लीए अल्पबहुत्व होना सोई क्रमकरण कहिए है ॥ ४२६ ॥ आगै स्थितिसत्वापसरण कहिहै है—

बधे मोहादिकमे सजादे तेत्तियेहिं बधेहिं ।
ठिदिसत्तमसण्णिसमं मोहादिकमं तहा सते[2] ॥४२७॥

बधे मोहादिक्रमे सजाते तावद्भिर्बंधै ।
स्थितिसत्त्वमसज्ञिसम मोहादिक्रमं तथा सत्वे ॥ ४२७ ॥

स० च—बहुरि मोहादिका क्रम लीएँ जो क्रमकरणरूप बध भया तातै परै इस ही क्रम लीएँ तितने ही सख्यात हजार स्थितिबन्ध भएँ असज्ञी पचेद्री समान स्थितिसत्त्व हो है। बहुरि तातै परै जैसै मोहादिकका क्रमकरण पर्यंत स्थितिबधका व्याख्यान कीया तैसै ही स्थितिसत्त्वका होना अनुक्रमतै जानना। तहाँ पल्य स्थिति पर्यंत पल्यका सख्यातवाँ भागमात्र तातै दूरापकृष्टि पर्यंत पल्यका सख्यात बहुभागमात्र तातै सख्यात हजार वर्ष स्थितिपर्यंत पल्यका असख्यात बहुभागमात्र आयाम लीएँ जे स्थितिबन्धापसरण तिनकरि स्थितिबधका घटना कह्या था तैसै इहाँ तितने आयाम लीएँ स्थितिकाडकनिकरि स्थितिसत्वका घटना हो है। बहुरि तहाँ सख्यात हजार स्थितिबधका व्यतीत होना कह्या तैसै इहाँ भी कहिए वा तहाँ तितने स्थितिकाडकनिका व्यतीत होना कहिए, जातै स्थितिबधापसरणका अर स्थितिकाडकोत्करणका काल समान है। बहुरि तहाँ स्थितिबध जहाँ कह्या था इहाँ स्थितिसत्व तहाँ कहना। बहुरि अल्पबहुत्व त्रैराशिक आदि विशेष बधापसरणवत् ही इहाँ जानने। सो स्थितिसत्त्वका क्रम कहिए है—

प्रत्येक सख्यात हजार काडक गएँ क्रमतै असज्ञी पचेद्री चौद्री तेंद्री बेंद्री एकेंद्रीनिकै स्थिति-बधके समान कर्मनिका स्थितिसत्व हजार सौ पचास पचीस एक सागर प्रमाण हो है। बहुरि

---

१ तदो अण्णो ट्ठिदिबधो एक्कसराहेण मोहणीयस्स ठिदिबधो थोवो, तिण्ह, घादिकम्माण ठिदिबधो असखेज्जगुणो, णामा-गोदाण ठिदिबधो असखेज्जगुणो, वेदणीयस्स ठिदिबधो विसेसाहिओ। क० चु० पृ० ७४८।

२ एदेण कमेण सखेज्जाणि ठिदिबधसहस्साणि जादाणि। तदो ठिदिसतकम्ममसण्णिठिदिबधेण समं जाद। क० चु० पृ० ७४८।

सख्यात हजार स्थितिकाडक भएँ वीसियनिका पल्य, तीसीयनिका ड्योढ पल्य, मोहका दोय पल्य स्थितिसत्त्व हो हैं। तातै परै पूर्व सत्त्वका सख्यात बहुभागमात्र एक काडक भएँ वीसीयनिका पल्यके सख्यात भागमात्र स्थितिसत्त्व भया तिस कालविषैं वीसीयनिकेतैं तीसीयनिका सख्यातगुणा मोहका विशेष अधिक स्थितिसत्त्व भया। बहुरि इस क्रमतै सख्यात हजार स्थितिकाडक भएँ तीसीयनिका पल्यमात्र मोहका त्रिभाग अधिक पल्यमात्र स्थितिसत्त्व भया। ताके परैं एक काडक भएँ तीसीयनिका भी पल्यके सख्यातवे भागमात्र स्थितिसत्त्व भया। तिस समय वीसीयनिका स्तोक तातैं तीसीयनिका सख्यातगुणा तातैं मोहका सख्यातगुणा स्थितिसत्त्व हो है। बहुरि इस क्रम लीएँ सख्यात हजार स्थितिकाडक भएँ मोहका पल्यमात्र स्थितिसत्त्व हो है। बहुरि एक काडक भएँ मोहका भी पल्यके सख्यातवे भागमात्र स्थितिसत्त्व हो है। तीहिं समय सातौ कर्मनिका स्थितिसत्त्व पल्यके सख्यातवे भागमात्र भया। तहाँ वीसीयनिका स्तोक तीसीयनिका सख्यातगुणा तातै मोहका सख्यातगुणा स्थितिसत्त्व हो है। तातै परै इस क्रम लीएँ सख्यात हजार स्थितिकाडक भए वीसीयनिका स्थितिसत्त्व दूरापकृष्टिकौ उलघि पल्यके असख्यातवें भागमात्र भया तिस समय वीसीयनिका स्तोक तातै तीसीयनिका असस्यातगुणा तातैं मोहका सख्यातगुणा स्थितिसत्त्व हो है। तातैं परै इस क्रम लीए सख्यात हजार स्थितिकाडक तीसीयनिका स्थिति भए सत्त्व दूरापकृष्टिकौ उलघि पल्यके असख्यातवे भागमात्र भया। तव सर्व ही कर्मनिका स्थितिसत्त्व पल्यके असख्यातवे भागमात्र भया। तहा वीसीयनिका स्तोक तातै तीसीयनिका असख्यातगुणा तातै मोहका असख्यातगुणा स्थितिसत्त्व हो है। बहुरि इस क्रमकरि सख्यात हजार स्थितिकाडक भए नाम गोत्रका स्तोक तातैं मोहका असख्यातगुणा स्थितिसत्त्व हो है। बहुरि इस क्रम लीएं सख्यात हजार स्थितिकाडक भए मोहका स्तोक तातै वीसीयनिका असख्यातगुणा तातै तीसीयनिका असख्यातगुणा स्थितिसत्त्व हो है। बहुरि इस क्रम लीए सख्यात हजार स्थितिकाडक भए मोहका स्तोक तातैं वीसीयनिका असख्यातगुणा तातैं तीन घातियानिका असख्यातगुणा तातैं वेदनीयका असख्यात गुणा स्थितिसत्त्व हो है। बहुरि इस क्रम लीए सख्यात हजार स्थितिकाडक भए मोहका स्तोक तातैं तीन घातियानिका असख्यातगुणा तातै नाम गोत्रका असख्यातगुणा तातैं वेदनीयका विशेष अधिक स्थितिसत्त्व हो है। ऐसैं अतविषै नाम गोत्रकातैं वेदनीयका स्थितिसत्त्व साधिक भया तब मोहादिकै क्रम लीए स्थितिसत्त्वका क्रमकरण भया ॥ ४२७ ॥

विशेष—पहले जिस विधिसे स्थितिवन्धापसरणो द्वारा उत्तरोत्तर सातो कर्मोके स्थितिबन्धो के क्रमका निर्देश कर आये हैं वही क्रम स्थितिकाण्डकघात द्वारा स्थितिसत्त्वके विषयमे भी जान लेना चाहिये। टीकामे विशेष प्रकाश डाला ही गया है, इसलिये पृथक्से निर्देश नही किया है।

तीदे बधसहस्से पल्लासखेज्जय तु ठिदिबधे।
तत्थ असखेज्जाण उदीरणा समयबद्धाण[1] ॥४२८॥

अतीते बधसहस्रे पल्यासंख्येयकं तु स्थितिबंधे।
तत्र असंख्येयानां उदीरणा समयबद्धानाम् ॥ ४२८ ॥

स० च—बहुरि इस क्रमकरणतैं परैं सख्यात हजार स्थितिबध व्यतीत भए जो पल्यका

---

१ तदो असखेज्जाण समयपवद्धाणमुदीरणा। क० चु० पृ० ७५१।

असख्यातवा भागमात्र स्थितिबध होइ ताको होत सतै तहा असख्यात समयप्रवद्धनिकी उदीरणा हो है। इहातै पहलै अपकर्षण कीया द्रव्यकौ उदयावलीविषै देनेके अर्थि असख्यात लोकप्रमाण भागहार सभवै था, तहा समयप्रवद्धके असख्यातवा भागमात्र उदीरणा द्रव्य था अब यहा पल्यका असख्यातवा भागप्रमाण भागहार होनेतै असख्यात समयप्रवद्धमात्र उदीरणा द्रव्य भया ॥४२८॥
आगे क्षपणाधिकारका प्रारभ हो है—

ठिदिबधसहस्सगदे अट्ठकसायाण होदि सकमगो।
ठिदिखडपुधत्तेण य तट्ठिदिसत तु आवलियविद्ध[1] ॥४२९॥

स्थितिबंधसहस्रगते अष्टकषायाणा भवति संक्रमक ।
स्थितिखंडपृथक्त्वेन च तत्स्थितिसत्त्वं तु आवलिकविद्ध ॥४२९॥

स० च—असख्यात समयबद्धमात्र उदीरणा होनेतै लगाय सख्यात हजार स्थितिकाडक व्यतीत भए अप्रत्याख्यान क्रोध मान माया लोभरूप आठ कषायनिका सक्रम होइ है। इहा सक्रमणका अर्थ यहु—क्षपणाका प्रारभ हो है। ए अति अप्रशस्त थे तातै पहलै इनकी क्षपणा सभवै है। सो इनका जो द्रव्य सो कितना एक क्षपणाका प्रारभका प्रथम समयविषै कितना एक दूसरा समयविषै ऐसैं समय समय प्रति एक-एक फालिका सक्रमण होते अन्तर्मुहूर्तके जेते समय तितनी फालि करि प्रथम काडकका सक्रमण हो है। ऐसैही द्वितीय काडकका सक्रमण हो है। ऐसै क्रमकरि सख्यात हजार स्थितिकाडकनिकरि आठ कषायनिके द्रव्यका च्यारि सज्वलन कषाय अर पुरुषवेदविषै सक्रमण हो है। ऐसै ए परमुखकरि नष्ट हो है। अन्य प्रकृतिरूप होनेकरि जाका नाश होइ सो परमुख करि नष्ट कहिए। ऐसै मोह राजाकी सेनाके नायक अष्ट कषाय तिनका अत काडकका नाश होतै अवशेष स्थितिसत्व काल अपेक्षा आवली मात्र रहै है। अर निषेक अपेक्षा समय घाटि आवली मात्र रहै है। जातैं अत काडक घातके समयविषै प्रथम निषेकका स्वमुख उदय युक्त जो कोई सज्वलन तीहिविषै सक्रम होइ उदय हो है। बहुरि उदयावलीविषै प्राप्त निषेकका काडकघात न होइ तातैं समय घाटि आवलीमात्र निषेक अत फालिकी साथि नाही विनसै है ॥४२९॥

ठिदिबधपुधत्तगदे सोलसपयडीण होदि संकमगो।
ठिदिखडपुधत्तेण य तट्ठिदिसत तु आवलिपविट्ठं[2] ॥४३०॥

स्थितिबधपृथक्त्वगते षोडशप्रकृतीना भवति सक्रमक ।
स्थितिखडपृथक्त्वेन च तत्स्थितिसत्त्वं तु आवलिप्रविष्टम् ॥४३०॥

---

१ तदो सखेज्जेसु ट्ठिदिखडसहस्सेसु गदेसु अट्ठण्ह कसायाण सकामगो। तदो अट्ठ कसाया ट्ठिदिखडयपुधत्तेण सकामिज्जति। अट्ठण्ह कसायाणमपच्छिमट्ठिदिखडए उक्किण्णे तेसिं सतकम्ममावलियपविट्ठ सेस। क० चु० पृ० ७५१।

२ तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तेण णिद्दाणिद्दा-पयलापयला-थीणगिद्धीण णिरयगदि-तिरिक्खगदिपाओग्गणामाण, सतकम्मस्स सकामगो। तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तेण अपच्छिमे ट्ठिदिखडए उक्किण्णे एदेसिं सोलसण्ह कम्माण ट्ठिदिसतकम्ममावलियब्भतर सेस। क० चु० पृ० ७५१।

सं० च—यातैं ऊपरि पृथक्त्व कहिए सख्यात हजार स्थितिबन्ध व्यतीत भएँ निद्रा-निद्रा १ प्रचला-प्रचला १ स्त्यानगृद्धि १ ए तीन दर्शनावरणकी अर नरक-तिर्यंचगत्ति वा आनुपूर्वी च्यारि ४ एकेंद्रियादि च्यारि जाति ४ आतप १ उद्योत १ स्थावर १ सूक्ष्म १ साधारण १ ए तेरह नामकर्मकी ऐसैं सोलह प्रकृतिनिका संक्रमक हो है। क्षपणा प्रारभका समयतैं लगाय समय-समय प्रति इनके द्रव्यकौं पूर्वोक्त प्रकार एक फालिका सक्रमण होतैं प्रथम काडक होइ ऐसैं सख्यात हजार स्थितिकाडकनिकरि सक्रमण हो है। तहाँ अत काडक घात होतैं अवशेष स्थितिसत्त्व काल अपेक्षा आवलीमात्र निषेक अपेक्षा समय घाटि आवली मात्र रहै है। ऐसैं इनका उदयावलीतैं वाह्य सर्व निषेक द्रव्यनिका द्रव्य है स्वजाती अन्य प्रकृतिनिविषैं सक्रमण होइ क्षयकौं प्राप्त हो है। अपनी जातिकी अन्य प्रकृतिनिकौं स्वजाती कहिए है। जैसैं स्त्यानगृद्धित्रिकको स्वजातो दर्शनावरणकी अन्य प्रकृति हैं ऐसैं अन्य जाननी। बहुरि यहातैं लगाय पृथक्त्व शब्दका अर्थ सख्यात हजार जानना। या प्रकार इहा मोहकी तौ आठका नाश भए तेरहका सत्त्व रह्या अर दर्शनावरणकी तीनका नाश भए छहका सत्त्व रह्या अर नामकी तेरहका नाश भए असी प्रकृति का सत्त्व रह्या। ज्ञानावरण वेदनीय गोत्र अतरायनिविषैं किसी प्रकृतिका नाश न भया ॥४३०॥ आगै देशघाति करण कहिए है—

ठिदिबधपुधत्तगदे मणदाणा तत्तिये वि ओहिदुग।
लाभ च पुणो वि सुद अचक्खुभोग पुणो चक्खु ॥४३१॥
पुणरवि मदिपरिभोग पुणरवि विरय कमेण अणुभागो।
बधेण देसघादी पल्लासख तु ठिदिबधो[1] ॥४३२॥

स्थितिबधपृथक्त्वगते मनोदाने तावत्यपि अवधिद्विकम्।
लाभश्च पुनरपि श्रुत अचक्षुभोग पुन चक्षु ॥४३१॥
पुनरपि मतिपरिभोगं पुनरपि वीर्यं क्रमेण अनुभाग।
बधेन देशघाति पल्यासख्यस्तु स्थितिबध ॥४३२॥

स० च—मन पर्यय आदि बारह प्रकृतिनिका पूर्वैं सर्वघाती द्विस्थानगत अनुभागबध होता था इहातैं परैं देशघाति दारु लतारूप द्विस्थानगत अनुभागबध होने लगा सो देशघातीकरण है। सोई कहिए है—

सोलह प्रकृति सक्रमणतैं परै पृथक्त्व सख्यात हजार स्थितिकाडक भए मन पर्यय ज्ञानावरण अर दानातरायका बहुरि तितने स्थितिकाडक व्यतीत भए अवधिज्ञानावरण अवधिदर्शना-

---

१ तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तेण मणपज्जवणाणावरणीय-दाणतराइयाण च अणुभागो बधेण देसघादी जादो। तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तेण ओहिणाणावरणीय-ओहिदसणावरणीय-लाहतराइयाणमणुभागो बधेण देसघादी जादो। तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तेण सुदणाणावरणीय-अचक्खुदसणावरणीयभोगन्तराइयाणमणुभागो बधेण देसघादी जादो। तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तेण चक्खुदसणावरणीयअणुभागो बधेण देसघादी जादो। तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तेण आभिणिवोहियणाणावरणीयपरिभोगतराइयाणमणुभागो बधेण देसघादी जादो। तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तेण वीरियतराइयस्स अणुभागो बधेण देसघादी जादो। क० चु० पृ० ७५१–७५२।

वरण लाभातरायका बहुरि तितने स्थितिकाडक भए श्रुतज्ञानावरण अचक्षुदर्शनावरण भोगातरायका बहुरि तितने स्थितिकाडक भए चक्षुदर्शनावरणका बहुरि तितने स्थितिकाडक भए मतिज्ञानावरण उपभोगातरायका बहुरि तितने स्थितिकाडक भए वीर्यातरायका अनुभागवध देशघाती हो है। पुरुषवेद सज्वलन कषायका पूर्वं सयतासयत आदि विषै ही देशघाती अनुभागवध भया तातै इहा न कह्या। इस अवसर विषै स्थितिवध यथासभव पल्यका असख्यातवा भागमात्र ही जानना ॥४३१–४३२॥ आगे अतरकरण कहिए है–

ठिदिखडसहस्सगदे चदुसजलणाण णोकसायाण ।
एयट्ठिदिखंडुक्कीरणकाले अतर कुणइ ॥४३३॥[1]

स्थितिखडसहस्रगते चतु सज्वलनाना नोकषायाणा ।
एकस्थितिखडोत्कीरणकाले अतर करोति ॥४३३॥

स० च०—देशघातीकरणतैं परै सख्यात हजार स्थितिकाडक भए च्यारि सज्वलन अर नव नोकषाय इनका अतर करै है। औरनिका अतर न हो है। नीचले ऊपरले निषेकनिकौ छोडि अतमुंहूर्तमात्र वीचिके निषेकनिका अभाव करना सो अतर करना जानना। तहा अतरकरणकालका प्रथम समयविषै पूर्वतै अन्य प्रमाण लीए स्थितिकाडक अनुभाग काडक स्थितिबध हो है। बहुरि एक स्थितिकाडकोत्करणका जितना काल तितने काल करि अतरकौ पूर्ण करै है। इस कालके प्रथमादि समयनिविषै तिन निषेकनिका द्रव्यकौ अन्य निषेकनिविषै निक्षेपण करै हैं ॥४३३॥

सजलणाण एक्क वेदाणेक्क उदेदि तद्दोण्ह ।
सेसाण पढमट्ठिदिं ठवेदि अतोमुहुत्तआवलियं[2] ॥४३४॥

संज्वलनानामेकं वेदानामेकमुदेति तद्द्वयो ।
शेषाणा प्रथमस्थिर्ति स्थापयति अतमुंहूर्तमावलिका ॥४३४॥

स० च०—सज्वलनचतुष्कविषै कोई एक अर तीनो वेदनिविषै कोई एक ऐसै उदयरूप दोय प्रकृतिनिकी तौ अतमुंहूर्तमात्र प्रथम स्थिति स्थापै है। इन विना जिनका उदय न पाइए ऐसी ग्यारह प्रकृतिनिकी आवलीमात्र प्रथम स्थिति स्थापै है। जैसैं पुरुषवेद अर क्रोधका उदय सहित श्रेणी माडी ताकैं इनि दोऊनिकी तौ अतमुंहूर्तमात्र औरनिकी आवलीमात्र प्रथम स्थिति स्थापै है सो वर्तमान समयसबधी निषेकतैं लगाय प्रथम स्थिति प्रमाण निषेकनिकौ नीचै छोडि इनके ऊपरि निषेकनिका अतर करै है ॥४३४॥

---

१ तदो ट्ठिदिखडयसहस्सेसु गदेसु अण्ण ट्ठिदिखडयमण्णमणुभागखडयमण्णो ट्ठिदिवधो अतरट्ठिदीओ च उक्कीरिदु चत्तारि वि एदाणि करणाणि समगमाढत्तो। चउण्ह् सजलणाण णवण्ह णोकसायवेदणीयाणमेदेसिं तेरसण्ह कम्माणमतर। सेसाण कम्माण णत्थि अतर। क० चु० पृ० ७५२।

२ पुरिसवेदस्स च कोहसजलणाण च पढमट्ठिदिमतोमुहुत्तमेत्त मोत्तूणमतर करेदि। सेसाण कम्माणमावलिय मोत्तूण अतर करेदि। क० चु० पृ० ७५२।

विशेष—भाववेदकी अपेक्षा तीनो वेदोमेसे किसी एक वेदसे और चार सज्वलन कषायोमे से किसी एक कषायसे यह जीव क्षपकश्रेणिपर चढनेका अधिकारी है। आगममे भावभेदकी अपेक्षा ही गुणस्थान प्ररूपणा हुई है। कर्मशास्त्रमे बन्ध, उदय और सत्त्वकी प्ररूपणा भी इसी अपेक्षासे की गई है। द्रव्यवेदको आगममे स्थान उत्तरकालीन टीकादि ग्रन्थोमे ही दृष्टिगोचर होता है। वस्तुत जीवस्थानमे जीवोकी मार्गणा, गुणस्थान और जीवसमासरूप जो विविध अवस्थाए होती है उन्हीकी प्ररूपणा की गई है। द्रव्यवेद शरीरसम्बन्धी आगोपागोके अन्तर्गत आता है और आगोपाग पुद्गलविपाकी आगोपाग नामकर्मके उदयको निमित्त कर प्राप्त होता है, इसलिये द्रव्यवेदकी जीव भेदोमे गणना होना सम्भव ही नही है। (१) वेदोका अभाव नौवें गुणस्थानमे हो जाता है, पर आगोपाग शरीरस्थितिके अन्त तक १४वें गुणस्थान तक और आगोपाग नामकर्मके उदयकी अपेक्षा १३वे गुणस्थान तक देखे जाते है। (२) एकेन्द्रिय जीवोके आगोपाग नही होने पर नपुसकवेद होता है। तथा (३) आगममे मनुष्यपदसे पुरुषवेद और नपुसकवेदवाले मनुष्य जीव लिये गये है तथा मनुष्यिनी पदसे स्त्रीवेदके उदयवाले जीव ही लिये गये है और वेदनोकषाय जीवविपाकी कर्म है, वेदमार्गणामे पुद्गलविपाकी आगोपागका ग्रहण नही हुआ है। इन सब हेतुओसे यह स्पष्ट हो जाता है कि आगममे सर्वत्र नोआगम भावनिक्षेपके अन्तर्गत भाववेद ही लिये गये है, द्रव्यवेद नही, क्योकि जीवोको द्रव्यवेदी कहना यह उपचरित कथन है परमार्थरूप नही। शेष कथन सुगम है।

उक्कीरिद दु दव्व सते पढमट्ठिदिम्हि सछुहदि।
बधे वि य आबाधमदिच्छिय उक्कड्डदे णियमा[1] ॥४३५॥

अपकर्षितं तु द्रव्यं सत्त्वे प्रथमस्थितौ संस्थापयति।
बंधेऽपि च आबाधामति गेत्कर्षति नियमात् ॥४३५॥

स० च०—तिनि अतररूप निषेकनिके द्रव्यकौ अतरकरण कालका प्रथम समयविषै ग्रह्या सो प्रथम फालि यातै असख्यातगुणा दूसरे समय ग्रह्या सो द्वितीय फालि ऐसैं असख्यातगुणा क्रम लीए अतर्मुहूर्तमात्र फालिनिकरि सर्व द्रव्य अन्य निषेकनिविषै निक्षेपण करै है। अतररूप निषेकनिविषै नाही निक्षेपण करै है। कहा निक्षेपण करिए सो कहिए है—

बध उदय रहित वा केवल बध सहित उदय रहित जे प्रकृति तिनिकी प्रथम स्थिति समय घाटि आवलीमात्र कही, तिनके द्रव्यकौ अपकर्षण करि उदयरूप अन्य प्रकृतिनिकी प्रथम स्थितिविषैं सक्रमणरूप करि निक्षेपण करै है। अर बध उदय रहित प्रकृतिनिका द्रव्यकौ अपनी द्वितीय स्थितिविषैं नाही निक्षेपण करै है जातै बध विना उत्कर्षण होना सभवै नाही। बहुरि केवल बध सहित प्रकृतिनिका द्रव्यकौ उत्कर्षण करि अपना द्वितीयस्थितिविषै निक्षेपण करै हैं वा बधती जो अन्य प्रकृति ताकी द्वितीय स्थितिविषै सक्रमणरूप करि निक्षेपण करै है। बहुरि जे प्रकृति केवल

---

१ जाओ अतरट्ठिदीओ उक्कीरति तासिं पदेसग्गमुक्कीरमाणियासु ट्ठिदीसु ण दिज्जदि। जासिं पयडीण पढमट्ठिदी अत्थि तिस्से पढमट्ठिदीए जाओ सपहि ट्ठिदीओ उक्कीरति तमुक्कीरमाणग पदेसग्ग सछुहदि। अथ जाओ वज्झति पयडीओ तासिमाबाहामधिच्छियूण जा जहण्णिया णिसेगट्ठिदी तमादिं कादूण वज्झमाणियासु ट्ठिदीसु उक्कड्डिज्जदे। क० चु० पृ० ७५२।

उदय सहित है वा बंध उदय सहित हैं तिनकी प्रथम स्थिति अंतर्मुहूर्तमात्र कही तिनविषैं जे केवल उदय सहित ही है तिनका द्रव्यकौ अपकर्षण करि अपनी प्रथम स्थितिविषैं निक्षेपण करै है। अन्य प्रकृतिनिका भी द्रव्य इनकी प्रथम स्थितिविषै संक्रमणरूप निक्षेपण करिए है। बहुरि इनका द्रव्य है सो उत्कर्षण करि बंधती जे अन्य प्रकृति तिनकी अंतरायामतै संख्यातगुणा जो आबाधा ताकौ छोडि द्वितीय स्थितिविषैं जो जघन्य निषेक तीहिस्यो लगाय बंधती स्थितिके सर्व निषेकनिविषै निक्षेपण करिए है। केवल उदयमान प्रकृतिनिका द्रव्य अपनी द्वितीय स्थिति विषै नाही निक्षेपण करिए है। बहुरि बंध उदय सहित प्रकृतिनके द्रव्यकौ प्रथम स्थितिविषै वा बंधती द्वितीय स्थितिनिविषै निक्षेपण करिए है।

इहां अंतरायामके नीचैं निषेकरूप तौ प्रथम स्थिति अर अंतरायामके उपरिवर्ती निषेकरूप द्वितीय स्थिति जाननी। तहां छह तो नोकषाय अर पुरुषवेद सहित श्रेणी चढ्याकैं तौ अन्य दोय वेद अर स्त्रीवेद सहित श्रेणी चढ्याकै नपुंसकवेद अर नपुंसकवेद सहित श्रेणी चढ्याकैं स्त्रीवेद ए तौ बंध उदयरहित है। बहुरि स्त्री वा नपुंसकवेद सहित श्रेणी चढ्याकै पुरुषवेद है सो अर सबनिकैं जिस कषाय सहित श्रेणी चढ्या तीहि विना तीन संज्वलन कषाय ए उदय रहित केवल बंध सहित है। बहुरि स्त्री वा नपुंसकवेद सहित चढ्या जीवकैं स्त्री वा नपुंसक वेद केवल उदय सहित है बहुरि पुरुष वेद सहित श्रेणी चढ्याकै पुरुषवेद अर सबनिकै जिस कषाय सहित श्रेणी चढ्या सो कषाय ए बंध उदय सहित है। सो इनका अंतररूप निषेकनिका द्रव्यकौ पूर्वोक्त प्रकार सत्त्वविषै अपकर्षण करि तौ प्रथम स्थितिविषैं अर उत्कर्षण कीए आबाधा छोडि बंधरूप स्थितिविषैं निक्षेपण करिए है। इस अंतरकरण कालविषै अनुभागकांडक हजारौं हो हैं। अर स्थितिकांडक अर समान स्थितिबंध अर अंतरकरण इन तीनौका काल समान है तातै युगपत समाप्त हो है ॥४३५॥

विशेष—प्रकृतमें हिन्दी टीकाकार पण्डित प्रवर प० टोडरमलजी सा० ने पर्याप्त प्रकाश डाल ही दिया है। यहाँ इतना बतला देना आवश्यक प्रतीत होता है कि बन्धकी अपेक्षा तीनों वेदोंमें से यहाँ एक पुरुषवेदका ही बन्ध होता हैं, किन्तु जो जिस वेदके उदयसे क्षपकश्रेणि चढता है, मात्र उसीका उदय रहता है। इसलिये पुरुषवेदके उदयसे श्रेणिपर चढे हुए जीवके पुरुषवेदकी अपेक्षा बन्ध और उदय दोनों पाये जाते है। हाँ अन्य दोनों वेदोंमेसे किसी भी वेदकी अपेक्षा श्रेणिपर चढे हुए जीवके पुरुषवेदका मात्र बन्ध ही पाया जाता है। इसी प्रकार यथासम्भव चारों संज्वलन कषायोंकी अपेक्षा भी विचार कर लेना चाहिये। उक्त कषायोंमेंसे किसी भी कषायके उदयसे श्रेणि आरोहण करे तो भी यथास्थान बन्ध चारोंका होता है। इस प्रकार इन सब व्यवस्थाओंको ध्यानमें रखकर यहाँ अन्तरकरणसम्बन्धी अन्य व्यवस्थाएं घटित कर लेनी चाहिये। विशेष स्पष्टीकरण हिन्दी टीकामें किया ही है।

आगैं संक्रमण कहिए है—

सत्त करणाणि अंतरकदपढमे ताणि मोहणीयस्स।
इगिठाणियबंधुदओ तस्सेव य संखवस्सठिदिबंधो ॥४३६॥

तस्साणुपुव्विसंकम लोहस्स असंकमं च संढस्स।
आजुत्तकरणसंकम छावलितीदेसुदीरणदा[1] ॥४३७॥

१ ताधे चेव णवुंसयवेदस्स आजुत्तकरणसंकामगो, मोहणीयस्स संखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो, मोहणी-

सप्तकरणानि अतरकृतप्रथमे तानि मोहनीयस्य ।
एकस्थानिकबंधोदयौ तस्यैव च सख्यवर्षस्थितिबध ॥४३६॥

तस्यानुपूर्विसक्रम लोभस्यासंक्रम च षढस्य ।
आयुक्तकरणसंक्रम षडावल्यतीतेषूदीरणता ॥४३७॥

स० च०—अतर जानै कीया ऐसा अतरकृत जीव ताकैं प्रथम समयविषै सात करणनिका प्रारम्भ भया। ते कहिए हैं—

मोहनीयका बध उदय हैं सो दारुपना छोडि केवल लतारूप एक स्थानगत भए ए दोय करण, बहुरि तीस ही मोहनीयका स्थितिवन्ध पल्यका असख्यातवा भाग प्रमाणतैं घटि सख्यात वर्षमात्र भया .एक यहु करण, बहुरि मोह प्रकृतिनिका पूर्वै जहाँ तहाँ स्वजातीय प्रकृतिनिविषै सक्रमण होता था अब आगै कहिए है तैसै आनुपूर्वी सक्रमण होइ अन्यथा न होइ एक यहु करण, बहुरि पूर्वै लोभका अन्य प्रकृतिनिविषै सक्रमण होता था अब न होइ एक यहु करण, बहुरि नपुसकवेदका आयुत्तकरण सक्रमण भया याकौ अन्य प्रकृतिरूप परिणमाइ नाश करनेका उद्यमी भया एक यहु करण, बहुरि पूर्वै कर्मबन्ध पीछैं आवली व्यतीत भए ही उदीरणा होती थी अब छह आवली व्यतीत भए पीछैं ही उदीरणा होइ यहु एक करण, इन सात करणनिका अतर करने के अनन्तर समयविषै युगपत् प्रारम्भ भया ॥४३६-४३७॥

सछुहदि पुरिसवेदे इत्थीवेद णउसय चेव ।
सत्तेव णोकसाए णियमा कोहम्हि सछुहदि[1] ॥४३८॥
कोह च छुहदि माणे माण मायाए णियमसा छुहदि ।
माय च छुहदि लोहे पडिलोमो सकमो णत्थि[2] ॥४३९॥

संक्रामति पुरुषवेदे स्त्रीवेद नपुसक चैव ।
सप्तैव नोकषायान् नियमात् क्रोधे सक्रामति ॥४३८॥
क्रोधश्च क्रामति माने मानो मायाया नियमेन सक्रामति ।
माया च क्रामति लोभे प्रतिलोम सक्रमो नास्ति ॥४३९॥

स० च०—स्त्रीवेद अर नपुसकवेदका द्रव्य तौ पुरुषवेदविषै सक्रमण करै है। पुरुषवेद छह हास्यादि ऐसैं सात नोकषायनिका द्रव्य सज्वलन क्रोधविषै सक्रमण करै है। क्रोधका द्रव्य मानविषै सक्रमण करै है। मानका द्रव्य मायाविषै सक्रमण करै है। मायाका द्रव्य लोभविषै सक्रमण करै है ऐसैं सक्रमणकरि अन्यरूप परिणमि आप नाशकौं प्राप्त हो है यहु आनुपूर्वी सक्रमण

यस्स एगट्ठाणिया वधोदया, जाणि कम्माणि वज्झति तेसिं छसु आवलियासु गदासु उदीरणा, मोहणीयस्स आणुपुव्वीसकमो, लोहस जलणस्स असकमो एदाणि सत्त करणाणि अतरद्धसमयकदे आरद्धाणि ।

क० चु० पृ० ७५३ ।

१ क० गा० १३८ । २ क० गा० १३९ ।

जानना। प्रतिलोम कहिए अन्यथा प्रकार सक्रमण अब न हो है। इहातै आगै स्थितिबधतै सख्यातगुणा घाटि स्थितिबधापसरणका प्रमाण मोहनीयका भया जातैं सख्यात वर्ष स्थितिबध होनेतै परै स्थितिबन्धापसरण का प्रमाण स्थितिबन्धतै सख्यातगुणा घटता हो है। अर बत्तीस वर्षमात्र स्थितिबन्ध भए पीछै स्थितिबन्धापसरणका प्रमाण अन्तर्मुहूर्तमात्र हो है ऐसी व्याप्ति सर्वत्र जाननी ॥४३ –४३९॥

विशेष—पहले जो सात करणोका निर्देश किया है उनमे एक आनुपूर्वी सक्रमण भी है। उसीके अनुसार यहाँ बतलाया गया है कि नपुसकवेद और स्त्रीवेदका पुरुषवेदमे सक्रम होता है पुरुष वेदसहित सात नोकषायोका क्रोधसज्वलनमे, क्रोधसज्वलनका मानसज्वलनमे, मानसज्वलन का मायासज्वलनमे और मायासज्वलनका लोभसज्वलनमे सक्रम होता है। तथा लोभ-सज्वलनका स्वमुखसे ही क्षय होता है। नपुसकवेद और स्त्रीवेदके सक्रमके समयसे लेकर प्रतिलोम सक्रम नही होता।

ठिदिबघसहस्सगदे सढो सकामिदो हवे पुरिसे।
पडिसमयमसखगुण सकामगचरिमसमओ त्ति[1] ॥४४०॥

स्थितिबधसहस्रगते षढ सक्रामितो भवेत् पुरुषे।
प्रतिसम ख्यगुण सक्रामकचरमसमय इति ॥४४०॥

स० च—अतरकरणके अनतर समयतै लगाय सख्यात हजार स्थितिबध व्यतीत भए नपुसकवेद है सो पुरुषवेदविषै सक्रमित हो है। नपुसकवेदकी क्षपणाका प्रथम समयतै लगाय समय समय प्रति असख्यातगुणा क्रम लीए सक्रमकालका अतसमयविषै नपुसकवेदके द्रव्यका पुरुषवेदविषै सक्रमण हो है। सो ऐसै गुणसक्रमणरूप अनुक्रमतै सख्यात हजार काडक भए अत-समयविषै जो अंत काडककी अत फालि ताकौ सर्व सक्रमणकरि सक्रमावै है। ऐसैं नपुसकवेदको पुरुषवेदरूप परिणमाइ नाशकौं प्राप्त करै है। ऐसा अर्थ स्त्रीवेदकी क्षपणा आदिविषै भी जोडना ॥४४०॥

बघेण होदि उदओ अहिओ उदएण सकमो अहिओ।
गुणसेढी असखेज्जापदेसअग्गेण बोधव्वा[2] ॥४४१॥

बंधेन भवति उदय अधिक उदयेन सक्रमोऽधिक।
गुणश्रेणिरसंख्येयप्रदेशाग्रेण बोद्धव्या ॥४४१॥

स० च—नपुसकवेदका सक्रमण कालविषै पुरुषवेदका बध द्रव्यतैं उदय द्रव्य अधिक है अर उदय द्रव्यकरि सक्रमण द्रव्य अधिक है सो अधिकता असख्यात प्रदेशसमूहकरि गुणश्रेणि कहिए गुणकारकी पक्ति तिसरूप जाननी। भावार्थ–इहा पुरुषवेदका जितने प्रदेशनिका बध हो है तातैं असख्यातगुणा अधिक ताके प्रदेशनिका उदय हो है। अर तातैं असख्यातगुणा अधिक प्रदेशनिका तहा सक्रमण हो है। सोई कहिए है—

---

१ तदो सखेज्जेसु ट्ठिदिखडयसहस्सेसु गदेसु णवुसयवेदो सकामिज्जमाणो सकामिदो। क० चु० पृ० ७५३।

२ क० पा० गा० १४४, क० पृ० ७६९।

प्रदेश शब्दकरि परमाणूरूप द्रव्य जानना सो इहां समयप्रबद्ध बधै है, तीहिंकौ सातका भाग दीए मोहका द्रव्य होइ, ताकौ कषाय नोकषायका भागके अर्थि दोयका भाग दीए पुरुषवेदका द्रव्य होइ सो इतना तौ प्रदेशनिका बध हो है। बहुरि सर्व सत्तारूप पुरुषवेदका द्रव्यविषै गुणश्रेण्यादिकरि दीया द्रव्य सहित इस समयविषै उदय आवने योग्य निषेकका द्रव्य जेता होइ तितने प्रदेशनिका उदय हो है, ते ए बध प्रदेशनितै असख्यातगुणे हैं। बहुरि नपुसकवेदका सर्व द्रव्यकौ गुणसक्रमका भाग दीए जो प्रमाण आवै तितने नपुसकवेदके पुरुषवेदविषै सक्रमण हो है। ते ए उदय प्रदेशनितै असख्यातगुणे जानने। ऐसै अल्पबहुत्व कहनेकरि गुणसक्रमण द्रव्यका प्रमाण जानिए है ॥४४१॥

विशेष—यहाँ बन्ध, उदय और सक्रमके माध्यमसे प्रदेशविषयक अल्पबहुत्वका निर्देश किया गया है। आशय यह है कि प्रकृतमे पुरुषवेद आदि जिस किसी भी कर्मका बन्ध होता है वह प्रत्येक एक समय प्रबद्धमात्र होनेसे उदयमे आनेवाले प्रदेशोकी अपेक्षा सबसे कम है, क्योकि यहाँ विवक्षित कर्मके जितने कर्मपुजका बन्ध होता है उससे उदयमे आनेवाला कर्मपुज असख्यात गुणा होता है, क्योकि आयुकर्मको छोडकर वेद्यमान किसी भी कर्मका उदय गुणश्रेणिगोपुच्छा के माहात्म्यसे असख्यातगुणा होता है। इसी प्रकार उसी कर्मके उदयरूप प्रदेशोकी अपेक्षा सक्रमरूप प्रदेशपुज असख्यातगुणा होता है, क्योकि जिन कर्मोंका गुणसक्रम होता है उन कर्मोंका गुणसक्रम द्रव्य और जिन कर्मोका अध प्रवृत्त सक्रम होता है उनका अध प्रवृत्त सक्रम द्रव्य असख्यात समयप्रबद्ध प्रमाण होनेसे वह उदयमे आनेवाले द्रव्यकी अपेक्षा असख्यातगुणा होता है। यहाँ शका होती है कि जिन कर्मोका गुणसक्रम होता है उनका गुणसंक्रम द्रव्य उसी समयमे उदयमे आनेवाले द्रव्यसे असख्यातगुणा होओ, क्योकि गुणसक्रमभागहारसे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके असख्यातगुणा होनेकी अपेक्षा उदय द्रव्यसे गुणसक्रम भागहारसे सक्रमको प्राप्त हुए द्रव्यके उस प्रकारके होनेमे कोई बाधा नही आती। परन्तु उदयगत गुणश्रेणि गोपुच्छा द्रव्यसे अध प्रवृत्त सक्रमद्रव्य असख्यातगुणा होता है यह व्यवस्था नही बनती, क्योकि सर्वत्र अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे अध प्रवृत्त भागहार असख्यातगुणा देखा जाता है? समाधान यह है कि सर्वत्र अपकर्षित सम्पूर्ण द्रव्य गुणश्रेणि द्वारा ही निक्षिप्त होता है, क्योकि उसके असख्यातवे भाग का ही वहाँ निक्षेप देखा जाता है, इसलिये उस भागहारके माहात्म्यवश उदय द्रव्यसे सक्रमको प्राप्त हुआ द्रव्य असख्यातगुणा बन जाता है।

गुणसेढिअसखेज्जा पदेसअग्गेण सकमो उदओ।
से काले से काले भज्जो बधो पदेसग्गो[1] ॥४४२॥

गुणश्रेण्यसख्येयप्रदेशाग्रेण संक्रम उदय।
स्वे काले स्वे काले योग्यो बध प्रदेशाग्र ॥४४२॥

स० च—अपने कालविषै स्वस्थान अपेक्षा सक्रमतै सक्रम अर उदयतै उदय है सो प्रदेश अपेक्षाकरि असख्यातरूप गुणकारकी पक्ति लीए है। भावार्थ—नपुसकवेद क्षपणा कालविषै प्रथम समयविषै जेते नपुसकवेदके प्रदेशनिका पुरुषवेदविषै सक्रमण हो है, तातै दूसरा समयविषै असख्यातगुणा हो है। तातै तीसरा समयविषै असख्यातगुणा हो है, ऐसै अन्त समय पर्यंत जानना।

1 क० पा० गा० १४९, पृ० ७७२।

बहुरि अपना पुरुषवेदका उदय कालविषै प्रथम समयविषै जितने पुरुषवेदके प्रदेशनिका उदय हो है तातैं दूसरे समय असख्यातगुणा तातैं तीसरे समय असख्यातगुणा ऐसैं अन्त समय पर्यंत जानना। बहुरि अपने पुरुषवेदका बन्धकालविषै प्रदेशरूप बन्ध है सो भजनीय है। जातैं प्रदेशबन्ध है सो योगनिके अनुसारि है तातैं प्रथमादि समयतैं द्वितीयादि समयनिविषै पुरुषवेदका बन्ध कदाचित् सख्यातवे भागि असख्यातवे भागि सख्यातगुणा असख्यातगुणा बन्धता, कदाचित् ऐसैं ही घटता कदाचित् जितनेका तितने अवस्थितरूप पुरुपवेदके प्रदेशबन्ध इहा हो है ॥४४१॥ इन अठाईस गाथानिका अर्थरूप व्याख्यान क्षपणासारविषै नाही लिख्या। इहा मोकू प्रतिभास्या तैसैं लिख्या है।

विशेष—इसका चूर्णिसूत्रो और जयधवला टीका द्वारा इस प्रकार स्पष्टीकरण किया है—विवक्षित्त समयमे प्रदेशोदय अल्प होता है, अनन्तर समयमे असख्यातगुणा होता है। इसी प्रकार सर्वत्र जानना चाहिये। सक्रमकी प्ररूपणा उदयकी प्ररूपणाके समान ही है। मात्र योगोकी चार प्रकारकी हानि, चार प्रकारकी वृद्धि और अवस्थानके कारण प्रदेशबन्ध चार प्रकारकी वृद्धि, चार प्रकार हानि और अवस्थानकी अपेक्षा भजनीय है। यह व्यवस्था केवल पुरुषवेदके विषयमे ही नही है, क्रोधसज्वलन आदिके विषयमे भी जाननी चाहिये। मात्र यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये कि जिन कर्मो का गुणसक्रम होता है उनकी अपेक्षा प्रथमादि समयोके सक्रम द्रव्य से द्वितीयादि समयोका सक्रम द्रव्य उत्तरोत्तर असख्यातगुणा घटित हो जाता है। किन्तु जिन कर्मो का अध प्रवृत्त सक्रम होता है उनका सक्रम द्रव्य उत्तरोत्तर असख्यातगुणा नही घटित होकर कभी विशेष अधिक द्रव्यका सक्रम होता है और कभी विशेष हीन द्रव्यका सक्रम होता है ऐसा यहाँ समझना चाहिये।

इदि संढ सकामिय से काले इत्थिवेदसंकमगो।
अण्ण ठिदिरसखड अण्णं ठिदिबधमारभई[1] ॥४४३॥

इति षढ संक्राम्य स्वे काले स्त्रीवेदसंक्रमक।
अन्यस्थितिरसखडमन्य स्थितिबंधमारभते ॥४४३॥

स० च—ऐसैं नपुसकवेदका सक्रमणकरि अपने कालविषै स्त्रीवेदका सक्रमक कहिए पुरुष-वेदविषै सक्रमणकरि क्षपणा करनेवाला हो है। तहा प्रथम समयविषै पूर्वतै अन्यप्रमाण धरैं स्थितिकाडक अनुभागकाडक स्थितिबन्धकौ प्रारभै हैं ॥४४२॥

थीअद्धासंखेज्जाभागेपगदे तिघादिठिदिबंधो।
वस्साण सखेज्ज थीसकतापगद्धते ॥४४४॥

---

१ तदो से काले इत्थिवेदस्स पढमसमयसकामगो। ताधे अण्ण ट्ठिदिखडयमण्णमणुभागखडयमण्णो ट्ठिदिबधो च आरद्धाणि। क० चु० पृ० ७५३।

२ तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तेण इत्थिवेदक्खवणद्धाए सखेज्जदिभागे गदे णाणावरण-दसणावरण-अतराइयाण तिण्ह घादिकम्माण सखेज्जवस्सट्ठिदिगो बधो। तदो ट्ठिदिखडयपुधत्तेण इत्थिवेदस्स ज ट्ठिदिसतकम्म त सव्वमागाइद सेसाण कम्माण ट्ठिदिसतकम्मस्स असखेज्जा भागा आगाइदा। तम्हि ट्ठिदिखडए पुण्णे इत्थिवेदो सछुब्भमाणो सछुद्धो। क० चु० पृ० ७५३–७५४।

स्त्रीअद्धासख्येयभागेऽपगते त्रिघातिस्थितिबध ।
वर्षाणा सख्येय स्त्रीसक्रमापगतार्धान्ते ॥४४४॥

स० च—तहा सख्यात हजार स्थितिकाडकनिकरि स्त्रीवेद क्षपणा कालका सख्यातवा भाग व्यतीत भए ज्ञानावरण दर्शनावरण अतराय इन तीन घातियानिका स्थितिबन्ध पल्यका असख्यातवा भागमात्र होता था ताकौं समाप्तकरि सख्यात हजार वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध करै है। तातैं परै सख्यात हजार स्थितिकाडक व्यतीत भए स्त्रीवेद क्षपणा कालके अवशेष वहुभाग व्यतीत भए जो घात कीए पीछैं स्त्रीवेदका स्थितिसत्त्व अवशेष पल्यका असख्यातवा भागमात्र रह्या ताकौं अत स्थिति काडकरूप करै है तिस ही काल विपैं अवशेष कर्मनिका स्थितिकाडकका पल्यका असख्यातवा भागमात्र स्थितिसत्त्वके असख्यातवें भागमात्र था सो ताका असख्यात भागमात्र आयाम धरै है, तहा अत काडकको सम्पूर्ण भए स्त्रीवेद भी सक्रमणरूप भया। द्वितीय स्थितिविपै तिष्ठता ऐसा पल्यका असख्यातवा भागमात्र आयाम धरै जो अन्त स्थितिकाडक ताकी अन्त फालिकौं पुरुषवेदविषै सक्रमणकरि स्त्रीवेदकी सत्ताका नाश करै है ॥४४४॥

ताहे सखसहस्स वस्साण मोहणीयठिदिसत ।
से कले सकमगो सत्तण्ह णोकसायाण[1] ॥४४५॥

तस्मिन् (अ) सख्यसहस्रं वर्षाणा मोहनीयस्थितिसत्त्वम् ।
स्वे काले सक्रमक सप्ताना नोकषायाणाम् ॥४४५॥

स० च—तहा स्त्रीवेद क्षपणाकालका अतविषै मोहनीयका स्थितिसत्व असख्यात वर्ष प्रमाण हो है। बहुरि ताके अनतरि अपने कालविषै सात नोकषायनिका सक्रमक कहिए सज्वलन क्रोधरूप परणमाइ नाश करणहारा हो है ॥४४५॥

ताहे मोहो थोवो सखेज्जगुण तिघादिठिदिबधो ।
तत्तो सखगुणियो णामदुग साहिय तु वेयणियं[2] ॥४४६॥

तत्र मोह स्तोक संख्येयगुण त्रिघातिस्थितिबन्ध. ।
ततोऽसंख्येयगुणितो नामद्विक साधिकं तु वेदनीयम् ॥४४६॥

स० च०—तहा प्रथम समयविषै मोहका स्तोक तातैं तीन घातियानिका सख्यातगुणा बहुरि तातैं नाम गोत्रका पल्यका असख्यातवा भागमात्र है तातैं बहुरि असंख्यातगुणा तातैं वेदनीयका त्रैराशिकतैं आधा प्रमाणकरि साधिक स्थितिबध हो है ॥४४६॥

---

१ ताधे चेव मोहणीयस्स ट्ठिदिसतकम्म सखेज्जाणि वस्साणि। से काले सत्तण्ह णोकसायाण पढमसमयसकामगो। क० चु० पृ० ७५४।

२ सत्तण्ह णोकसायाण पढमसमयसकामगस्स ट्ठिदिबधो मोहणीयस्स थोवो। णाणावरण-दसणावरण-अतराइयाण ट्ठिदिबधो सखेज्जगुणो। णामा-गोदाण ट्ठिदिबधो असखेज्जगुणो। वेदणीयस्स ट्ठिदिबधो विसेसाहिओ। क० चु० पृ० ७५४।

ताहे असखगुणियं मोहादु तिघादिपयडिठिदिसत ।
तत्तो असखगुणिय णामदुग साहिय तु वेयणिय[1] ॥४४७॥

तस्मिन् असख्यगुणितं मोहात् त्रिघातिप्रकृतिस्थितिसत्त्वम् ।
ततोऽसंख्यगुणितं नामद्विक साधिक तु वेदनीय ॥४४७॥

स० च—तहा ही प्रथम समयविषै सख्यात वर्षमात्र मोहका स्थितिसत्त्व स्तोक है। तातैं असख्यातगुणा तीन घातियानिका स्थितिसत्त्व पल्यका असख्यातवा भागमात्र है। तातैं असख्यातगुणा नाम गोत्रका स्थितिसत्त्व है। तातैं साधिक वेदनीयका स्थितिसत्त्व है। क्रमकरणके अल्पबहुत्वका अनुक्रम इहा पर्यंत भी प्रवर्तं है। ऐसा जानना ॥४४७॥

सत्तण्ह पढमट्ठिदिखडे पुण्णे दु मोहठिदिसत ।
सखेज्जगुणविहीण सेसाणमसखगुणहीण[2] ॥४४८॥

सप्ताना प्रथमस्थितिखडे पूर्णे तु मोहस्थितिसत्त्व ।
संख्येयगुणविहीनं शेषाणामसख्यगुणहीनम् ॥४४८॥

स० च०—सात नोकषायनिका पहिला स्थितिकाडककौ पूर्ण भए पूर्व स्थिति सत्त्वतैं मोहका तौ स्थितिसत्त्व सख्यातगुणा घटता भया, जातै सख्यात वर्ष स्थितिसत्त्व होनेतैं स्थिति काडक आयाम पूर्वस्थिति सत्त्वका सख्यात बहुभागमात्र है। बहुरि अवशेष कर्मनिका स्थितिसत्त्व पूर्व स्थिति सत्त्वतैं असख्यातगुणा घटता भया, जातै पल्यका असख्यातवा भागमात्र स्थितिसत्त्व होनेतैं स्थितिकाडक आयाम पूर्वस्थिति सत्त्वके असख्यात बहुभागमात्र है ॥४४८॥

सत्तण्ह पढमट्ठिदिखडे पुण्णे ति घादिठिदिबधो ।
सखेज्जगुणविहीण अघादितियाणं असखगुणहीण[3] ॥४४९॥

सप्ताना प्रथमस्थितिखडे पूर्णे इति घातिस्थितिबन्ध ।
संख्येयगुणविहीनो अघातित्रयाणामसख्यगुणहीन ॥४४९॥

स० च०—सात नोकषायनिका प्रथम स्थिति खडकौ सम्पूर्ण होत सतै पूर्व स्थितिबन्धतैं च्यारि घातिया कर्मनिका तौ सख्यातगुणा घटता अर तीन अघातियानिका असख्यातगुणा घटता स्थितिबन्ध हो है, जातै एक स्थितिबन्धापसरणकरि इतनी स्थितिका घटना सभवै है ॥४४९॥

---

१ ताहे ट्ठिदिसतकम्म मोहणीयस्स थोव। तिण्ह घादिकम्माण ट्ठिदिसतकम्ममसखेज्जगुण। णामागोदाण ट्ठिदिसतकम्ममसखेज्जगुण। वेदणीयस्स ट्ठिदिसतकम्म विसेसाहिय। क० चु० पृ० ७५४।

२ पढमट्ठिदिखडए पुण्णे मोहणीयस्स ट्ठिदिसतकम्म सखेज्जगुणहीण। सेसाण ट्ठिदिसतकम्म असखेज्जगुणहीण। क० चु० पृ० ७५४।

३ ट्ठिदिबधो णामा-गोद-वेदणीयाण असखेज्जगुणहीणो। घादिकम्माण ट्ठिदिबधो सखेज्जगुणहीणो। ७५४।

ठिदिबंधपुधत्तगदे संखेज्जदिमं गदं तदद्धाए ।
एत्थ अघादितियाणं ठिदिबंधो संखवस्सं तु ॥४५०॥

स्थितिबन्धपृथक्त्वगते संख्येयं गतं तदद्धायाम् ।
अत्र अघातित्रयाणां स्थितिबन्धः संख्यवर्षस्तु ॥४५०॥

स० च०—तातै परै पृथक्त्व कहिए संख्यात हजार स्थितिबन्ध गए तिस सप्त नोकषाय क्षपण कालका संख्यातवां भाग व्यतीत भया तहां नाम गोत्र वेदनीय इन तीन अघातियानिका स्थितिबन्ध पल्यका असंख्यातवां भागपनाकौं छोडि संख्यात हजार वर्षमात्र हो है ॥४५०॥

ठिदिखंडपुधत्तगदे संखाभागा गदा तदद्धाए ।
घादितियाणं तत्थ य ठिदिसंतं संखवस्सं तु[१] ॥४५१॥

स्थितिखंडपृथक्त्वगते संख्यभागा गता तदद्धाया ।
घातित्रयाणां तत्र च स्थितिसत्त्वं संख्यवर्षं तु ॥४५१॥

स० च०—तातै परै संख्यात हजार स्थितिकांडक गए सात नोकषाय कालका संख्यात बहुभाग व्यतीत भए एक भाग अवशेष रहै तीन घातियानिका स्थितिसत्त्व संख्यात वर्षप्रमाण भया। तातै आगे च्यारि घातियानिका स्थितिबन्ध अर स्थितिसत्त्व एक कांडककाल पर्यन्त समानरूप होइ। बहुरि केई स्थितिबन्ध अर स्थितिसत्त्व पूर्वतै संख्यातगुणे घटते हो है, जातै घातिकर्मनिका स्थितिबन्ध वा स्थितिसत्त्व संख्यात वर्षमात्र होनेतै स्थितिबन्धापसरण वा स्थितिकांडकका प्रमाण पूर्व स्थितिबंध वा स्थितिसत्त्वतै संख्यात बहुभाग मात्र है। बहुरि नाम गोत्र वेदनीयका स्थितिकांडक पूर्ण होतै पूर्व स्थितिसत्त्वतै असंख्यातगुणा घटता स्थितिसत्त्व हो है। अर इनका स्थितिबन्धापसरण पूर्ण होतै पूर्व स्थितिबन्धतै संख्यातगुणा घटता स्थितिबंध हो है ऐसा अनुक्रम सप्त नोकषाय क्षपणाकालका अन्त पर्यन्त जानना ॥४५१॥

विशेष—इस गाथाका पूरा आशय हिन्दी टीकामें पण्डित जी ने दिया ही है। विशेष स्पष्टीकरणकी दृष्टिसे पुनः दे रहे है—तदनन्तर स्थितिकाण्डक पृथक्त्वके व्यतीत होनेके साथ सात नोकषायोंके क्षपणाकालके संख्यात बहुभाग व्यतीत होनेपर ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तरायका संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिसत्त्व हो जाता है। तदनन्तर घातिकर्मोंके स्थितिबन्ध और स्थितिकाण्डकके पुनः पुनः पूर्ण होनेपर स्थितिबन्ध और स्थितिसत्त्व उत्तरोत्तर संख्यात गुणा हीन होता जाता है। तथा नाम, गोत्र और वेदनीयका स्थितिकाण्डक पूर्ण होनेपर असंख्यात गुणा हीन स्थितिसत्त्व होता है। तथा इन्हींके स्थितिबन्धके पूर्ण होनेपर अन्य स्थितिबन्ध संख्यात

---

१ तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्ते गदे सत्तण्हं णोकसायाणं खवणद्धाए संखेज्जदिभागे गदे णामा-गोद-वेदणीयाणं संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधो। क० चु० पृ० ७५४।

२ तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्ते गदे सत्तण्हं णोकसायाणं खवणद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु णाणावरण-दंसणावरण-अंतराइयाणं संखेज्जवस्सट्ठिदिसंतकम्मं जादं। क० चु० पृ० ७५४।

गुणा हीन होता है। इस क्रमसे सात नोकषायोके सक्रामकके अन्तिम स्थितिबन्धके प्राप्त होने तक जानना चाहिये।

पडिसमय असुहाणं रसबंधुदया अणतगुणहीणा ।
बंधो वि य उदयादो तदणतरसमय उदयो थ ॥४५२॥

प्रतिसमयमशुभाना रसबन्धोदयौ अनन्तगुणहीनौ ।
बन्धोपि च उदयात् तदनन्तरसमय उदयोऽथ ॥४५२॥

स० च०—अशुभ प्रकृतिनिका अनुभागबन्ध अर अनुभागका उदय सो समय समय प्रति अनन्तगुणा घटता हो है। प्रथम समयतै दूसरे समय दूसरा समयतै तीसरे समय ऐसै क्रमतै अनुभागका बध अर उदय अनन्तगुणा घटता इहा जानना। बहुरि पूर्व समयसबधी उदयतै उत्तर समयका बध भी अर अनन्तरवर्ती समयका उदय हो है सो अनतगुणा घटता अनुभागरूप जानना ॥४५२॥

बधेण होदि उदओ अहियो उदएण सक्रमो अहियो ।
गुणसेढि अणतगुणा बोधव्वा होदि अणुभागे[1] ॥४५३॥

बन्धेन भवति उदयोऽधिक उदयेन सक्रमोऽधिक ।
गुणश्रेणिरनन्तगुणा बोद्धव्या भवति अनुभागे ॥४५३॥

स० च०—बधकरि तो उदय अधिक कहिए है अर उदयकरि सक्रम अधिक है ऐसैं अनुभाग अनन्तगुणा गुणश्रेणी कहिए गुणकारकी पक्ति जाननी। भावार्थ—विवक्षित एक समय विषैं अनुभागके बधतै अनन्तगुणा अनुभागका तौ उदय है अर तातै अनतगुणा अनुभागका सक्रम हो है ॥४५३॥

विशेष—यह अनुभागसम्बन्धी बन्ध, उदय और सक्रमविषयक अल्पबहुत्वको सूचित करने वाली गाथा है। नियम यह है कि प्रत्येक समयमे घातिकर्मों का जितना अनुभागबन्ध होता है उससे उसी समय उन कर्मोका अनुभागोदय अनन्तगुणा होता है, क्योकि अनुभागोदयमे प्राचीन सत्तामे स्थित कर्मो का अनुभाग विवक्षित है। यद्यपि अशुभ कर्मोके अनुभागकी प्रति समय अनन्तगुणी हानि होती जाती है, फिर भी वह प्रत्येक समयमे प्रत्यग्रबन्धसे अनन्तगुणा होता है। तथा प्रत्येक समयके अनुभागोदयसे अनुभागसक्रम अनन्तगुणा होता है, क्योकि अनुभागसत्त्व प्रति समय अनन्तगुणा हीन होकर उदयको प्राप्त होता है, जबकि प्राचीन सत्त्व तदवस्थ रहकर ही पर प्रकृतिरूपसे सक्रमको प्राप्त होता है। घातिकर्मो की अपेक्षा यह अल्पबहुत्त्व कहा गया है, इसी प्रकार अघातिकर्मो के विषयमे जानकर व्याख्यान करना चाहिये।

गुणसेढि अणतगुणेणूणाए वेदगो दु अणुभागे ।
गणणादिकतसेढी पदेसअग्गेण बोधव्वा[2] ॥४५४॥

---

१ क० सु० १४३, पृ० ७६९। २ क० सु० गा० १४६, पृ० ७७०।

गुणश्रेणिरनन्तगुणेनोना च वेदकस्तु अनुभाग ।
गणनातिक्रातश्रेणी प्रदेशाग्रेण वोद्धव्या ॥४५४॥

स० च०—यद्यपि वेदक कहिए उदयरूप अनुभाग सो समय-समय प्रति अनतगुणा घटतारूप गुणकार पक्ति लीए है तथापि प्रदेश अग्रकरि गणनातिक्रात कहिए असख्यात गुणकारकी पक्तिरूप जानना। भावार्थ—समय-समय प्रति अनुभागका उदय अनतगुणा घटता है तथापि प्रदेश जे कर्मपरमाणू तिनका उदय समय-समय प्रति असख्यातगुणा वधता जानना ॥४५४॥

विशेष—यहाँ अप्रशस्त कर्मों का अनुभागोदय और प्रदेशोदय विवक्षित है। उन कर्मों का प्रति समय अनुभागोदय उत्तरोत्तर अनन्तगुणा हीन होता है और प्रदेशोदय प्रति समय उत्तरोत्तर असख्यातगुणा हीन होता है यह उक्त कथनका आशय है।

बघोदएहि णियमा अणुभागो होदि णतगुणहीणो ।
से काले से काले भज्जो पुण सकमो होदि[1] ॥४५५॥

बन्धोदयाभ्या नियमादनुभागो भवति अनन्तगुणहीन ।
स्वे काले स्वे काले भाज्यः पुन सक्रमो भवति ॥४५५॥

स० च०—अपने कालविषै अनुभाग है सो वध अर उदयकरि तौ समय-समय प्रति अणतगुणा घटता हो है। बहुरि अपने कालविषै सक्रम है सो भजनीय है—घटनेका नियमकरि रहित है ॥४५५॥

विशेष—इस गाथा द्वारा कालकी अपेक्षा बन्ध, उदय और सक्रमके अल्पबहुत्वका निर्देश किया गया है। आशय यह है कि विशुद्धिके माहात्म्यवश प्रत्येक समयमे कर्मों का जो अनुभागबन्ध होता है वह उत्तरोत्तर अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार अनुभागोदय भी प्रत्येक समयमे अनन्तगुणा हीन होता है। किन्तु अनुभाग सक्रम भजनीय है। कारण कि जब तक एक अनुभाग काण्डकका पात होता रहता है तब तक अनुभागसक्रम अवस्थितरूपसे होता है। पुन तदनन्तर दूसरे अनुभाग काण्डकके पतनके समय वह अनन्तगुणा हीन हो जाता है। गाथा ४५६ मे सक्रमको लक्ष्यमे रखकर स्पष्टीकरण किया गया है।

सकमण तदवत्थ जाव दु अणुभागखडयं पददि ।
अण्णाणुभागखंडे आढत्ते णतगुणहीण[2] ॥४५६॥

सक्रमणं तदवस्थं यावत्तु अनुभागखडकं पतति ।
अन्यानुभागखडे आरब्धे अनतगुणहीनम् ॥४५६॥

---

१ क० सु० गा० १४८, पृ० ७७२।

२ सकमो पुण अणतगुणहीणेण भयणिज्जो होइ। किं कारण १ जाव अणुभागखडय ण पादेदि ताव अवट्ठिदो चेव सकमो भवदि। अणुभागखडए पुण पदिदे अणुभागसकमो अणतगुणहीणो जायदि त्ति। जयध० प्रे० का० पृ० ६८५०।

गुणा हीन होता है। इस क्रमसे सात नोकषायोके सक्रामकके अन्तिम स्थितिबन्धके प्राप्त होने तक जानना चाहिये।

पडिसमय असुहाणं रसबंधुदया अणतगुणहीणा ।
बंधो वि य उदयादो तदणतरसमय उदयो थ ॥४५२॥

प्रतिसमयमशुभाना रसबन्धोदयौ अनन्तगुणहीनौ ।
बन्धोपि च उदयात् तदनन्तरसमय उदयोऽथ ॥४५२॥

स० च०—अशुभ प्रकृतिनिका अनुभागबन्ध अर अनुभागका उदय सो समय समय प्रति अनन्तगुणा घटता हो है। प्रथम समयतै दूसरे समय दूसरा समयतै तीसरे समय ऐसै क्रमतै अनुभागका बध अर उदय अनन्तगुणा घटता इहा जानना। बहुरि पूर्व समयसबधी उदयतै उत्तर समयका बध भी अर अनन्तरवर्ती समयका उदय हो है सो अनतगुणा घटता अनुभागरूप जानना ॥४५२॥

बधेण होदि उदओ अहियो उदएण सकमो अहियो ।
गुणसेढि अणतगुणा बोधव्वा होदि अणुभागे[1] ॥४५३॥

बन्धेन भवति उदयोऽधिक उदयेन सक्रमोऽधिक ।
गुणश्रेणिरनन्तगुणा बोद्धव्या भवति अनुभागे ॥४५३॥

स० च०—बधकरि तो उदय अधिक कहिए है अर उदयकरि सक्रम अधिक है ऐसैं अनुभाग अनन्तगुणा गुणश्रेणी कहिए गुणकारकी पक्ति जाननी। भावार्थ—विवक्षित एक समय विषैं अनुभागके बधतैं अनन्तगुणा अनुभागका तौ उदय है अर तातैं अनतगुणा अनुभागका सक्रम हो है ॥४५३॥

विशेष—यह अनुभागसम्बन्धी बन्ध, उदय और सक्रमविषयक अल्पबहुत्वको सूचित करने वाली गाथा है। नियम यह है कि प्रत्येक समयमे घातिकर्मोका जितना अनुभागबन्ध होता है उससे उसी समय उन कर्मोका अनुभागोदय अनन्तगुणा होता है, क्योकि अनुभागोदयमे प्राचीन सत्तामे स्थित कर्मोका अनुभाग विवक्षित है। यद्यपि अशुभ कर्मोके अनुभागकी प्रति समय अनन्तगुणी हानि होती जाती है, फिर भी वह प्रत्येक समयमे प्रत्यग्रबन्धसे अनन्तगुणा होता है। तथा प्रत्येक समयके अनुभागोदयसे अनुभागसक्रम अनन्तगुणा होता है, क्योकि अनुभागसत्त्व प्रति समय अनन्तगुणा हीन होकर उदयको प्राप्त होता है, जबकि प्राचीन सत्त्व तदवस्थ रहकर ही पर प्रकृतिरूपसे सक्रमको प्राप्त होता है। घातिकर्मो की अपेक्षा यह अल्पबहुत्व कहा गया है, इसी प्रकार अघातिकर्मोके विषयमे जानकर व्याख्यान करना चाहिये।

गुणसेढि अणंतगुणेणूणाए वेदगो दु अणुभागे ।
गणणादिकतसेढी पदेसअग्गेण बोधव्वा[2] ॥४५४॥

---

१ क० सु० १४३, पृ० ७६९। २ क० सु० गा० १४६, पृ० ७७०।

गुणश्रेणिरनन्तगुणेनोना च वेदकस्तु अनुभाग ।
गणनातिक्रातश्रेणी प्रदेशाग्रेण बोद्धव्या ॥४५४॥

स० च०—यद्यपि वेदक कहिए उदयरूप अनुभाग सो समय-समय प्रति अनतगुणा घटतारूप गुणकार पक्ति लीए है तथापि प्रदेश अशकरि गणनातिक्रात कहिए असख्यात गुणकारकी पक्तिरूप जानना। भावार्थ—समय-समय प्रति अनुभागका उदय अनतगुणा घटता है तथापि प्रदेश जे कर्मपरमाणू तिनका उदय समय-समय प्रति असख्यातगुणा बधता जानना ॥४५४॥

विशेष—यहाँ अप्रशस्त कर्मो का अनुभागोदय और प्रदेशोदय विवक्षित है। उन कर्मो का प्रति समय अनुभागोदय उत्तरोत्तर अनन्तगुणा हीन होता है और प्रदेशोदय प्रति समय उत्तरोत्तर असख्यातगुणा हीन होता है यह उक्त कथनका आशय है।

बधोदएहि णियमा अणुभागो होदि णतगुणहीणो ।
से काले से काले भज्जो पुण सकमो होदि[1] ॥४५५॥

बन्धोदयाभ्या नियमादनुभागो भवति अनन्तगुणहीन ।
स्वे काले स्वे काले भाज्यः पुन सक्रमो भवति ॥४५५॥

स० च०—अपने कालविषै अनुभाग है सो बध अर उदयकरि तौ समय-समय प्रति अणतगुणा घटता हो है। बहुरि अपने कालविषै सक्रम है सो भजनीय हैं—घटनेका नियमकरि रहित है ॥४५५॥

विशेष—इस गाथा द्वारा कालकी अपेक्षा बन्ध, उदय और सक्रमके अल्पबहुत्वका निर्देश किया गया है। आशय यह है कि विशुद्धिके माहात्म्यवश प्रत्येक समयमे कर्मो का जो अनुभागबन्ध होता है वह उत्तरोत्तर अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार अनुभागोदय भी प्रत्येक समयमे अनन्तगुणा हीन होता है। किन्तु अनुभाग सक्रम भजनीय है। कारण कि जब तक एक अनुभाग काण्डकका पात होता रहता है तब तक अनुभागसक्रम अवस्थितरूपसे होता है। पुन तदनन्तर दूसरे अनुभाग काण्डकके पतनके समय वह अनन्तगुणा हीन हो जाता है। गाथा ४५६ मे सक्रमको लक्ष्यमे रखकर स्पष्टीकरण किया गया है।

संकमण तदवत्थ जाव दु अणुभागखडयं पददि ।
अण्णाणुभागखडे आढत्ते णतगुणहीण[2] ॥४५६॥

सक्रमणं तदवस्थं यावत्तु अनुभागखंडकं पतति ।
अन्यानुभागखडे आरब्धे अनतगुणहीनम् ॥४५६॥

---

1 क० सु० गा० १४८, पृ० ७७२।

2 सकमो पुण अणतगुणहीणेण भयणिज्जो होइ। किं कारण ? जाव अणुभागखडय ण पादेदि ताव अवट्ठिदो चेव सकमो भवदि। अणुभागखडए पुण पदिदे अणुभागसकमो अणतगुणहीणो जायदि त्ति। जयध० प्रे० का० पृ० ६८५०।

स० च०—जिस अनुभागकाडकविषै सक्रमण होइ तिस अनुभागकाडकका घात न होइ निवरै तावत् समय समय प्रति अवस्थित समानरूप ही अनुभागका सक्रमण हो है। बहुरि अन्य नवीन अनुभागकाडकका प्रारम्भ भए पूर्वतै अनन्तगुणा घटता अनुभागका सक्रम हो है ॥४५६॥

इन पाच गाथानिका अर्थरूप व्याख्यान क्षपणासारविषै लिख्या नाही इहा जैसै प्रतिभास्या तैसैअर्थ लिख्या है। बुद्धिमान होइ सो स्पष्ट अर्थ जैसा होइ तैसा जानियो।

सत्तण्ह सकामगचरिमे पुरिसस्स बंधमडवस्सं ।
सोलस सजलणाण सखसहस्साणि सेसाण[1] ॥४५७॥

सप्ताना सक्रामकचरमे पुरुषस्य बधोऽष्टवर्षम् ।
षोडश संज्वलनानां सख्यसहस्राणि शेषाणाम् ॥४५७॥

स० च०—सात नोकषाय सक्रमक कालका अन्त समयविषै पुरुषवेदका अन्त स्थितिबध अष्टवर्ष प्रमाण हो है। बहुरि सज्वलन चतुष्कका सोलह वर्षमात्र अवशेष मोह आयु विना छह कर्मनिका सख्यात हजार वर्षमात्र स्थितिबन्ध हो है ॥४५७॥

ठिदिसंत घादीण सखसहस्साणि होंति वस्साण ।
होंति अघादितियाण वस्साणमसखमेत्ताणि[2] ॥४५८॥

स्थितिसत्त्व घातीना संख्यसहस्राणि भवंति वर्षाणां ।
भवति अघातित्रयाणा वर्षाण ंख्यमात्राणि ॥४५८॥

स० च०—तहा ही स्थितिसत्व है सो च्यारि घातियानिका संख्यात हजार वर्षमात्र अर तीन अघातिनिका असख्यात वर्षप्रमाण जानना ॥४५८॥

पुरिसस्स य पढमट्ठिदि आवलिदोसुवरिदासु आगाला ।
पडिआगाला छिण्णा पडिआवलियादुदीरणदा[3] ॥४५९॥

पुरुषस्य च प्रथमस्थितौ आवलिद्वयोरुपरतयोरागाला ।
प्रत्यागाला छिन्ना प्रत्यावलिकाया उदीरणता ॥४५९॥

स० च०—पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिविषै आवली प्रत्यावली ए दोय उवरै अवशेष रहै आगाल प्रत्यागाल नष्ट भए। द्वितीय स्थितिविषै तिष्ठते परमाणूनिकौ अपकर्ष वशतै प्रथम स्थिति

---

१ सत्तण्ह णोकसायाण सकामयस्स चरिमो ठिदिबधो पुरिसवेदस्स अट्ठ वस्साणि, सजलणाण सोलस वस्साणि, सेसाण कम्माण सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ठिदिबधो। क० चु० पृ० ७५५।

२ ठिदिसतकम्म पुण घादिकम्माण चदुण्ह पि सखेज्जाणि वस्सहस्साणि, णामा-गोद-वेदणियाण-मसखेज्जाणि वस्साणि। क० चु० पृ० ७५५।

३ पुरिसवेदस्स दोआवलियासु पढमट्ठिदीए सेमासु आगालपडिआगालो वोच्छिण्णो, पढमट्ठिदीदो चेव उदीरणा। समयाहियाए आवलियाए सेमाए जहण्णिया ठिदिउदीरणा। क० चु० पृ० ७५५।

विषै प्राप्त करना सो आगाल कहिए। प्रथम स्थितिविषै तिष्ठते परमाणूनिकी उत्कर्षण वशतै द्वितीय स्थितिविषै प्राप्त करना सो प्रत्यागाल कहिए। बहुरि प्रत्यावली जो द्वितीयावलीतै उदीरणा वर्तै है। प्रत्यावलीके निषेकनिका द्रव्य उदयावलीविषै दीजिए है। बहुरि एक समय अधिक प्रत्यावली अवशेष रहै जघन्य स्थितिकी उदीरणा हो है, जातै प्रत्यावलीका प्रथम एक निषेककी उदीरणा हो है उदयावलीविषै ताकौं प्राप्त कीजिए है। बहुरि तीहि समयविषै वेद सहितपनाका अन्त समयविषै हो है, जातै उच्छिष्टावली है नाम जाका ऐसी जो प्रत्यावली ताके निषेकनिका उदय न हो है ॥४५९॥

अतरकदपढमादो कोहे छण्णोकसायय छुहदि ।
पुरिसस्स चरिमसमए पुरिस वि एदेण सव्वयं छुहदि[1] ॥४६०॥

अतरकृतप्रथमात् क्रोधे षण्णोकषायक सक्रामति ।
पुरुषस्य चरमसमये पुरुषमपि एतेन सर्वं सक्रामति ॥४६०॥

स० च—अतरकरण करनेके अनन्तरवर्ती प्रथम समयतै लगाय सक्रमण होता था सो पुरुषवेदके उदय कालका अन्त समयविषै छह नोकषायनिका सर्व सत्त्वको सज्वलन क्रोधविषै सक्रमण करै है। तहा अन्त समयविषै द्वितीय स्थितिविषै प्राप्त सख्यात हजार वर्षमात्र स्थिति सत्वरूप अन्त फालि ताकौ सर्व सक्रमणतै सज्वलन क्रोधविषै निक्षेपणकरि तिन छह नोकषायनिकी सत्ता नाश करै है। बहुरि तिस ही समयविषै पुरुषवेद भी सर्व सज्वलन क्रोधविषै निक्षेपण करै है ॥४६०॥

विशेष—यहाँ कहा गया है कि अन्तरकरण करनेके बाद प्रथम समयसे लेकर छह नोकषायोका क्रोधसज्वलनमे सक्रम होता है आदि। किन्तु चूर्णिसूत्रोमे इसी बातको अन्तरकरण करनेके दूसरे समयसे छह नोकषायोका क्रोध सज्वलनमे सक्रम होता है यह कहा गया है। सो दोनो कथनो का तात्पर्य एक ही है। कारण कि अनुदयरूप प्रकृतियो की उदयावलिका प्रमाण स्तिबुक सक्रमके कारण एक समय कम होता जाता है। इसलिये प्रतिसमय निषेक स्थिति एक कम होती जानेसे दोनो कथनो की एकरूपमे सगति बैठ जाती है।

किछू अवशेष रहै है सो कहिए है—

समऊणदोण्णि आवलिपमाणसमयप्पबद्धणवबधो ।
विदिये ठिदिये अत्थि हु पुरिसस्सुदयावली च तदा[2] ॥४६१॥

समयोनद्वयावलिप्रमाणसमयप्रबद्धनवबध ।
द्वितीयस्या स्थितौ अस्ति हि पुरुषस्योदयावली च तदा ॥४६१॥

स० च—तहा द्वितीय स्थितिविषै तौ समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्ध अर

१ अतरादो दुसमयकदादो पाए छण्णोकसाए कोधे सछुहदि, ण अण्णम्हि कम्हि वि। तदो चरिमसमयसवेदो जादो। ताधे छण्णोकसाया सछुद्धा। क० चु० पृ० ७५५।

२ पुरिसवेदस्स जाओ दो आवलियाओ समयूणाओ एत्तिगा समयपबद्धा विदियठिदीए अत्थि, उदयट्ठिदी च अत्थि। सेस पुरिसवेदस्स सतकम्म सव्व सछुद्ध। क० चु० पृ० ७५५।

प्रथम स्थितिविषै असख्यात समयप्रबद्धमात्र उदयावली कहिए उच्छिष्टावलीके निषेक पुरुषवेदका सत्त्वविषै अवशेष रहैं, अन्य सर्व सख्यात हजार वर्षमात्र स्थिति लीए पुरुषवेदका पुरातन सत्त्व था सो सज्वलन क्रोधविषै सक्रमणरूप कीया। इहा द्वितीय स्थितिविषै समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्ध कैसै अवशेष रहैं ? सो कहिए है—

नवीन बन्ध्या समयप्रबद्धकौ नवक समयप्रबद्ध कहिए सो क्षपणा काल बन्धे पीछैं आवली पर्यंत जो बन्धावली तिसविषै तौ क्षपावना नाही, पीछै समय समयविषै एक-एक फालिकरि आवलीविषैं एक एक समयप्रबद्धकौ खिपावै है, तातै पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिविषै बन्धावली क्षपणावली-उच्छिष्टावली ऐसै तीन आवली अवशेष रहै, बन्धावलीका प्रथम समयविषै जो समयप्रबद्ध बन्ध्या ताकौ बन्धावली गमाइ क्षपणावलीविषैं एक एक फालिकरि सर्व क्षपाया अर बधावलीका द्वितीय तृतीयादि समयनिविषै जे समयप्रबद्ध बधे तिनकी क्रमतै एक दोय तीन आदि फालि अवशेष राखि क्षपणावलीविषै तिनकौ खिपाए। ऐसै बधावलीका अत समयविषै बध्या समयप्रबद्धकी क्षपणावलीका अत समयविषै एक ही फालि खिपाई। समय घाटि आवलीमात्र फालि अवशेष रही। बहुरि क्षपणावलीके प्रथमादि समयनिविषै बन्धे समयप्रबद्ध तिनकी एक हू फालि न खिपाई। बहुरि उच्छिष्टावलीविषै बध है ही नाही। ऐसै इहा एक देशकौ सर्व कहिए इस न्यायपै अवशेष रही फालिनिकौ समयप्रबद्ध सज्ञा कहनेकरि बन्धावलीविषै बन्धे ऐसे एक घाटि आवलीमात्र समयप्रबद्ध अर क्षपणावलीविषै बन्धे सम्पूर्ण आवलीमात्र समयप्रबद्ध मिलि समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्ध अवशेष रहै है। सो अपगतवेद होइ उच्छिष्टावलीका प्रथम समयतै लगाय एक-एक समयविषै एक-एक समयप्रबद्धकौ सज्वलन क्रोधरूप परिणमाइ समय घाटि दोय आवली कालविषै इन नवक समयप्रबद्धनिकौ भी नाश करै है। अब सवेद अनिवृत्तिकरणके अनतरि अपगतवेदी होइ अश्वकर्ण क्रिया सहित अपूर्व स्पर्धककरणका प्रारम्भ करै है। तहा यातै पीछै अवशेष रह्या जो सज्वलनचतुष्कका सत्त्व तिसविषै स्थिति-अनुभाग काडककी प्रवृत्ति जाननी ॥४६१॥

अब अश्वकर्णकरणका स्वरूप कहिये है—

से काले ओवट्टणुवट्टण अस्सकण्ण आदोल ।
करण तियसण्णगय सजलणरसेसु वड्डिहिदि[1] ॥४६२॥

स्वे काले अपवर्तनोद्वर्तन अश्वकर्णमादोलं ।
करण त्रिकसज्ञागतं संज्वलनरसेषु वर्तयति ॥४६२॥

स० च० —अपने कालविषैं अपवर्तनोद्वर्तनकरण १ अश्वकर्णकरण १ आदोलकरण १ ऐसैं तीन सज्ञाकों प्राप्त किया है सो सज्वलनचतुष्कका अनुभागविषै प्राप्त हो है। तहा इहा आरम्या जो प्रथम अनुभागकाडक ताका घात भए पीछैं अवशेष अनुभाग क्रोधतैं लगाय लोभपर्यन्त अनन्तगुणा घटता वा लोभतै लगाय क्रोधपर्यन्त अनन्तगुणा बँधता हो है। तातै अपवर्तनोद्वर्तनकरण सज्ञा कहिए। बहुरि जैसैं घोडेका कान मध्य प्रदेशतैं आदि पर्यन्त क्रमतैं घटता हो है तैसैं प्रथम अनुभागकाडकका घात भए पीछै क्रोध आदि लोभ पर्यन्तका क्रमतै अनुभाग घटता हो हैं, तातैं

१ अस्सकण्णकरणे त्ति वा आदोलकरणे त्ति वा ओवट्टणउव्वट्टणकरणे त्ति वा तिण्णि णामाणि अस्सकण्णकरणस्स। क० चु० पृ० ७८७।

अश्वकर्ण संज्ञा कहिए। बहुरि जैसैं ही वाकै (हिंडोलेके) रज्जु बंधे है सो रज्जुके बीचिका प्रदेश आदितै अन्तपर्यंत क्रमतै घटता हो है तैसैं पूर्ववत् क्रोधतै लोभपर्यन्त अनुभाग घटता हो है तातैं आदोलनकरण संज्ञा कहिए है ॥४६२॥

विशेष—जैसे घोडेका कान मध्यसे लेकर अग्र भागतक उत्तरोत्तर हीयमानरूपसे दिखलाई देता है उसी प्रकार क्रोधसज्वलनसे लेकर लोभसज्वलन तक इनके अनुभाग स्पर्धकोकी उत्तरोत्तर अनन्तगुणे हीनरूपसे रचना है, इसलिए रचना की अपेक्षा इनकी अश्वकर्ण संज्ञा है। अथवा जैसे हिंडोलेकी रस्सियाँ ऊपरसे नीचेतक अन्तरालमे त्रिकोणरूपसे कर्णके आकाररूपसे दिखाई देती हैं उसी प्रकार क्रोधादि सज्वलनोके अनुभागका विन्यास क्रमसे हीनमान दिखलाई देता है, इसलिए अश्वकर्णकरणकी आदोलकरण संज्ञा है। इसी प्रकार इसकी अपवर्तन-उद्वर्तन संज्ञा जाननी चाहिये, क्योकि क्रोधादि सज्वलनोके अनुभागकी रचना हानि-वृद्धिरूपसे अवस्थित है। जिस समय यह जीव पुरुषवेदके प्राचीन सत्कर्मके साथ छह नोकपायोका क्षय कर प्रथम समयवर्ती अपगतवेदी होता है उसी समयसे यह अश्वकर्णकारक होता है यह उक्त कथनका आशय है।

ताहे सजलणाण ठिदिसत सखवस्सयसहस्स।
अंतोमुहुत्तहीणो सोलसवस्साणि ठिदिबंधो[1] ॥४६३॥

तत्र संज्वलनाना स्थितिसत्त्व सख्यवर्षसहस्रम्।
अतर्मुहूर्तहीन षोडशवर्षाणि स्थितिबन्ध ॥४६३॥

स० च०—तहा अश्वकर्णका प्रारम्भ समयविषै सज्वलनचतुष्कका स्थितिसत्त्व सख्यात हजारवर्षमात्र है। बहुरि स्थितिबन्ध अन्तर्मुहूर्त घाटि सोलह वर्षमात्र है। एक स्थितिबन्धापसरणकरि पूर्व स्थितिबन्धतैं अन्तर्मुहूर्तहीन स्थितिबन्ध इहा भया और कर्मनिके बन्धसत्त्वका आलाप पूर्ववत् इहा भी कहना ॥४६३॥

विशेष—यद्यपि पहले ही सात नोकपायोकी क्षपणा करते समय सर्वत्र सज्वलनचतुष्कका स्थितिसत्त्व सख्यात हजार वर्ष था, किन्तु इस अवस्थामे सख्यात हजार स्थितिकाडकोके द्वारा और भी कम होकर पूर्वोक्त स्थितिसत्त्वसे सख्यातगुणा हीन होकर वह सख्यात हजार वर्षप्रमाण शेष रहता है। इसी प्रकार स्थितिबन्ध भी जो पहले सख्यात वर्ष था वह छह नोकषायोकी क्षपणा के समय पूरा सोलह वर्ष होकर अब अन्तर्मुहूर्त कम सोलह वर्षप्रमाण शेष रहता है, क्योकि यहाँसे लेकर स्थितिबन्धापसरणका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त हो जाता है। इतना अवश्य है कि यहाँ पर तीन घातिकर्मोका स्थितिबन्ध और स्थितिसत्त्व सख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है तथा नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मका स्थितिबन्ध सख्यात हजार वर्षप्रमाण और स्थितिसत्त्व असख्यात हजार वर्ष-प्रमाण होता है।

---

1 छसु कम्मेसु सछुद्धेसु से काले पढमसमयअवेदो। ताधे चेव पढमसमय अस्सकण्णकारगो। ताधे ट्ठिदिसतकम्म सजलणाण सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। ठिदिबधो सोलस वस्साणि अतोमुहूतूणाणि।
क० चु० पृ० ७७९-७८०।

रससत आगहिद खडेण सम तु माणगे कोहे ।
मायाए लोभे वि य अहियकमा होंति बधे वि[1] ॥४६४॥

रससत्त्वमागृहीत खडेन सम तु मानके क्रोधे ।
मायाया लोभेऽपि च अधिकक्रम भवति बधेऽपि ॥४६४॥

स० च०—अपगतवेदो होइ जो प्रथम अनुभागकाडक आगृहीत कहिए प्रारम्भ किया तिस सहित इस प्रथम अनुभागकाडकका घात होनेतै पहलै मानविषै क्रोधविषै मायाविषै लोभविषै अनुभागसत्त्व है सो अधिक क्रम लीए है। एक गुणहानिविषै जेते स्पर्धक पाइए तिस प्रमाणकौ नानागुणहानिका प्रमाण करि गुणे मानके स्पर्धक हैं ते स्तोक है, तिनतै क्रोधके विशेष अधिक है, तिनतै मायाके विशेष अधिक हैं, तिनतै लोभके विशेष अधिक है। इहा अपने अपने स्पर्धकनिका प्रमाण स्थापि अनन्तका भाग दीए विशेषका प्रमाण आवै है सो यहु विशेष भी अनन्त स्पर्धकमात्र है, याकरि अधिक अधिक जानने। जैसै अक सदृष्टि करि मानके स्पर्धक पाचसै वारा अर तातै क्रोध माया लौभके क्रमतै तीन तीन अधिक—

कोध	मान	माया	लोभ
५१५	५१२	५१८	५२१

बहुरि इस अश्वकर्णका प्रारम्भ समयविषै जो अनुभागबन्ध हो है तिसविषै भी ऐसै ही अल्पबहुत्वका क्रम जानना। बहुरि यहु अनुभागका कथन अन्तदीपक समान है, तातै याके पहिले गुणस्थाननिविषै जो अनुभागसत्त्व है तिस विषै भी ऐसै ही अल्पबहुत्व है ऐसै जानना ॥४६४॥

विशेष—यहाँ अश्वकर्णकरणका आरम्भ करनेवाले जीवने अनुभागकाडकका घात करनेके लिए जिस अनुभागसत्त्वको ग्रहण किया है वह मानसज्वलनमे सबसे अल्प है। क्रोध, माया और लोभसज्वलनमे उत्तरोत्तर विशेष अधिक है। यहाँ विशेष अधिकका प्रमाण भी अनन्त स्पर्धकस्वरूप है यह इस गाथाका तात्पर्य है। अनुभागबन्धमे भी इसी प्रकार जानना चाहिये। अर्थात् अनुभागबन्धमे जिस अनुभागको बाँधता है उसमे भी इसी विधिसे अल्पबहुत्व घटित होता है।

रसखडफड्ढयाओ कोहादीया हवति अहियकमा ।
अवसेसफड्ढयाओ लोहादि अणतगुणियकमा[2] ॥४६५॥

रसखडस्पर्धकानि क्रोधादिकाना भवति अधिकक्रमाणि ।
अवशेषस्पर्धकानि लोभादे अनतगुणितक्रमाणि ॥४६५॥

स० च०—घात करनेकौ प्रथम अनुभागकाडकरूप ग्रहे जे स्पर्धक ते क्रोधके स्तोक

---

१ अणुभागसतकम्म सह आगाइदेण माणे थोव। कोहे विसेसाहिय। मायाए विसेसाहिय। लोभे विसेसाहिय। बधो वि एवमेव। क० चु० पृ० ७८८।

२ अणुभागखडय पुण जमागाइद तस्स अणुभागखण्डयस्स फद्दयाणि कोधे थोवाणि। माणे फद्दयाणि विसेसाहियाणि। मायाए फद्दयाणि विसेसाहियाणि। लोभे फद्दयाणि विसेसाहियाणि। आगाइदसेसाणि पुण फद्दयाणि लोभे थोवाणि। मायाए अणतगुणाणि। माणे अणतगुणाणि। कोधे अणतगुणाणि। एसा परूपणा पढमसमयअस्सकरणकारयस्स। क० चु० पृ० ७८८।

है। तातै मानके विशेष अधिक है। तातै मायाके विशेष अधिक है। तातै लोभके विशेष अधिक है। इहातै पहले जे अनुभागकाडक भए तिनविषै अनुभागसत्त्वके अनुसारि मानके स्तोक, तातै क्रोध माया लोभके क्रमतै विशेष अधिक स्पर्धक ग्रहण होते थे। अब परिणामनिके विशेषतै विशेष घात पाइ अपने अपने अनुभागसत्त्वकौ अनतका भाग दीए तहाँ बहुभागमात्र अब कीया इस काडक-करि गृहीत जो अनुभाग है सो क्रोधका स्तोक तातै मान माया लोभके क्रमतै विशेष अधिक हो है। अक सदृष्टिकरि इस काडककरि ग्रहे क्रोधके तीनसै सित्यासी, मानके च्यारिसै असी, मायाके पाँचसै दश, लोभके पाँचसै उगणीस, स्पर्धक जानने—

क्रोध	मान	माया	लोभ।
३८७	४८०	५१०	५१९

बहुरि प्रथम अनुभागकाडकका घात भए पीछै अवशेष स्पर्धक रहे ते लोभके स्तोक, तातै मायाके अनन्तगुणे, तातै मानके अनन्तगुणे तातै क्रोधके अनन्तगुणे जानने। अकसदृष्टि करि जैसै प्रथम काडकका घात भए पीछै विशेष रहे स्पर्धक ते लोभके दोय, तातै माया मान क्रोधके क्रमतै चौगुणे चौगुणे जानना।

क्रोध	मान	माया	लोभ
१२८	३२	८	२

इहा आशका—जो काडकविषै विशेष अधिकपना कह्या तौ अवशेष अनुभागविषै अनन्त-गुणापना कैसै सभवै ? ताका समाधान—अक सदृष्टि अपेक्षा कहिए है। मानका अनुभागसत्त्व पाँचसै बारह, तातै क्रोधका तीन अधिक, मायाका छह अधिक, लोभका नव अधिक है। तहाँ अधिक प्रमाणकौ जुदे राखि पाँचसै बारहकौ अनन्तकी सदृष्टि च्यारि ताका भाग देइ तहा एक भाग विना बहुभाग ५१२/४ तीनसै चौरासी, तामै क्रोधविषै तीन अधिक कहे थे ते मिलाए क्रोध-काडक विषै तीनसै सित्यासी स्पर्धकनिका प्रमाण हो है, बहुरि अवशेष एक भागमात्र ५१२/४ एकसौ अठाईस स्पर्धकप्रमाण क्रोधका अवशेष अनुभागसत्त्व हो है। बहुरि इस अवशेष एक भागकौ च्यारिका भाग देइ तहा बहुभाग ५१२/४।४ । ३ छिनवै तिनकौं पहले बहुभाग तीनसै चौरासी कहे थे तिनमे जोडै मानकाडकका प्रमाण च्यारिसै असी ४८० हो है। अवशेष एक भाग ५१२/४।४ मात्र बत्तीस स्पर्धक प्रमाण मान का अवशेष अनुभागसत्त्व हो है। बहुरि यहु अवशेष एक भाग रह्या ताकौ च्यारिका भाग देइ तहाँ बहुभाग ५१२/४।४।४ । ३ चौईस तिनकौ पूर्वै मानकाडक च्यारिसै असी कह्या था तामैं जोडै अर मायाका अधिक प्रमाण छह तिनकौ अधिक कीएँ माया काडकका प्रमाण पाँचसै दश ५१० हो है। अवशेष एक भागमात्र ५१२/४।४।४ आठ स्पर्धकप्रमाण मायाका अवशेष सत्त्व हो है। बहुरि इस अवशेष एक भागकौ च्यारिका भाग देइ तहाँ बहुभाग—५१२/४।४।४।४ । ३ छह तिनकौ अधिक प्रमाण रहित जो मायाकाडक पाँचसै च्यारि तामैं जोडि इहाँ लोभका अधिक

प्रमाण नव तिनकौ अधिक कीए लोभकाडकका प्रमाण पाँचसै उण्णीस ५१९ आवे है। अवशेष एक भागमात्र ५१२ दोग स्पर्धकप्रमाण लोभके अवशेष अनुभागसत्त्वका प्रमाण हो है। ऐसै क्रोध
४।४।४।४
मान माया लोभ काडकका प्रमाण तौ विशेष अधिक क्रम लीएँ हो है। अर अवशेष रह्या अनुभागका प्रमाण अनन्तगुणा क्रम लीएँ हो है। तिनकी रचना ऐसी—

नाम	क्रोध	मान	माया	लोभ
पूर्व अनुभाग	५१५	५१२	५१८	५२१
काडक अनुभाग	३८७	४८०	५१०	५१९
अवशेष अनुभाग	१२८	३२	८	२

इहा काडक अनुभाग अर अवशेष अनुभागके बीचि ड्योढी लीक करी है सो हीनाधिक अनुभाग प्रगट करनेके अर्थि जानना। ऐसै क्रोधादिकविषैं घटता क्रम लीए अनुभाग प्रगट करना सो अश्वकर्णकरण है, ताका वर्णन कीया।

अब अश्वकर्णकरण अवस्थाविषै ही भए अरपूर्वै ससार अवस्थाविषै सभवते थे जे पूर्व स्पर्धक तिनतै अनतगुणा घटता अनुभाग लीए अैसे जे अपूर्व स्पर्धक तिनका स्वरूप कहिए है। सो पहिले पूर्व स्पर्धकनिका स्वरूप जाने विना अपूर्व स्पर्धकनिका ज्ञान न होइ तातै इहाँ पूर्व स्पर्धकनिका किछू स्वरूप कहिए है—

सर्व कर्म परमाणूविषै जाविषै अनुभागके थोरे अविभागप्रतिच्छेद पाइए ऐसी जो परमाणू सो जघन्य वर्ग कहिए। ऐसी ऐसी समान परमाणूनिका पुंज ताका नाम जघन्य वर्गणा है। बहुरि जघन्य वर्गणातै एक अविभागप्रतिच्छेद जिनमे अधिक पाइए ऐसे एक एक वर्गणा परमाणू तिनका पु जकौ द्वितीय वर्गणा कहिए। ऐसै क्रमतै एक एक अविभागप्रतिच्छेद-करि बधती जे वर्ग कहिए वर्गका पु जरूप एक एक वर्गणा यावत् होइ तावत् पर्यंत जेती वर्गणा भई तिन सर्व वर्गणानिका पु जकौ जघन्य स्पर्धक कहिए। बहुरि ताके अनतरि जघन्य वर्गतै दूणा अविभागप्रतिच्छेदयुक्त जे वर्ग तिनका समूहरूप द्वितीय स्पर्धकको प्रथम वर्गणा हो है। बहुरि पूर्ववत् यातै एक एक अविभागप्रतिच्छेद बधती लीए वर्गनिका पु जरूप ताकी द्वितीयादि वर्गणा हो है। बहुरि ऐसै ही जघन्य वर्गतै तिगुणा चौगुणा आदि जेथवा स्पर्धक होइ तितना गुणा अविभागप्रतिच्छेद युक्त वर्गनिका समूहरूप जो वर्गणा होइ सो तो तृतीय चतुर्थ आदि स्पर्धक-निकी प्रथम वर्गणा जाननी। अर ऊपरि एक एक अविभागप्रतिच्छेद अधिक क्रम लीए वर्गनिका समूहरूप अपनी अपनी द्वितीयादि वर्गणा जाननी। इहा सर्व कर्म परमाणूनिका प्रमाणकौ किंचित् अधिक ड्योढगुणहानिका भाग दीए प्रथम वर्गणाके वर्गनिका प्रमाण आवे है। याकौ दोगुण-हानिका भाग दीए विशेषका प्रमाण आवै है सो एक विशेषकरि घटता द्वितीयादि वर्गणानिविषै वर्गनिका प्रमाण हो है। ऐसैं प्रथम गुणहानिविषै क्रम जानना। वहुरि प्रथम गुणहानितै द्वितीयादि गुणहानिनिविषै आधा आधा प्रमाण लीए वर्गणाके वर्गनिका अर विशेषका प्रमाण जानना। ऐसै

कर्म परमाणूनिविषै नाना गुणहानि पाइए है। इहा अनुभाग रचना विषै गुणहानि वा नाना गुणहानिनिका प्रमाण यथासम्भव अनत है। तहा एक एक गुणहानिविषै पूर्वोक्त प्रकार स्पर्धक अनत हैं। एक एक स्पर्धकविषै वर्गणा अनती है। सो एक गुणहानिविषै जो वर्गणानिका प्रमाण सोई गुणहानि आयामका प्रमाण जानना। ऐसी गुणहानि जेती पाइए तिनके प्रमाणका नाम नानागुणहानि है।

अकसदृष्टिकरि सर्व कर्म प्रदेशरूप द्रव्य इकतीससै ३१००, गुणहानिप्रमाण आठ, नानागुणहानि पाच तहा सर्व द्रव्यकौ किंचित् अधिक ड्योढ गुणहानिका भाग दीए प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै वर्ग दोयसै छप्पन है। याकौ दोगुणहानिका भाग दीए विशेष का प्रमाण सोलह सौ इतना इतना घादि द्वितीयादि वर्गणा होइ। बहुरि ऐसै क्रमतै जिस वर्गणाविषै प्रथम गुणहानिका प्रथम वर्गणातै आधा एकसौ अठाईस वर्ग पाइए सो द्वितीय गुणहानिकी प्रथम वर्गणा है। इस चयका प्रमाण भी आधा आठ है। तातै आठ आठ घटते द्वितीयादि वर्गणाके वर्ग जानने। ऐसै गुणहानि गुणहानि प्रति आधा आधा प्रमाण जानना। ऐसी पाच गुणहानि सर्व जाननी। ऐसै ही यथार्थ कथनका अर्थ जानना। तहा जघन्य स्पर्धकतैं लगाय अनत स्पर्धक लता भागरूप है। तिनके ऊपरि अनन्त स्पर्धक दारुभागरूप है। तिनके ऊपरि अनन्त स्पर्धक अस्थिभागरूप हैं। तिनके ऊपरि उत्कृष्ट स्पर्धक पर्यंत अनत स्पर्धक शैल भागरूप हैं। तहा प्रथम स्पर्धक देशघातीका जघन्य स्पर्धक है। तातै लगाय लताभागके सर्व स्पर्धक अर दारु भागके अनतवा भागमात्र स्पर्धक देशघाती हैं। तहा अंतविषै देशघाती उत्कृष्ट स्पर्धक भया। बहुरि ताके ऊपरि सर्व घातीका जघन्य स्पर्धक है। तातै लगाय ऊपरिके सर्व स्पर्धक सर्वघाती है। तहा अत स्पर्धक उत्कृष्ट सर्वघाती जानना। तहा केवल विना च्यारि ज्ञानावरण, तीन दर्शनावरण अर सम्यक्त्व मोहनी, सज्वलनचतुष्क, नोकषाय नव, अतराय पाच इन छबीस प्रकृतिनिकी लता समान स्पर्धककी प्रथम वर्गणा सो एक-एक वर्गके अविभागप्रतिच्छेदनिकी अपेक्षा समान है। बहुरि वेदनीय आयु नाम गोत्र इन अघाति कर्मनिकी भी प्रथम वर्गणा तैसैं ही परस्पर समान है। बहुरि मिथ्यात्व विना केवल ज्ञानावरण केवल दर्शनावरण निद्रा पाँच मिश्रमोहनी सज्वलन विना बारह कषाय इन सर्वघाती वीस प्रकृतिनिके देशघाती स्पर्धक हैं नाही, तातै सर्वघाती जघन्य स्पर्धक वर्गणा तैसैं ही परस्पर समान जाननी। तहाँ पूर्वोक्त देशघाती छब्बीस प्रकृतिनिकी अनुभाग रचना देशघाती जघन्य स्पर्धकतैं लगाय उत्कृष्ट देशघाती स्पर्धक पर्यंत होइ। तहाँ सम्यक्त्वमोहनीका तौ इहा ही उत्कृष्ट अनुभाग होइ निवरया, अवशेष पचीस प्रकृतिनिकी रचना तहाँतै ऊपरि सर्वघाती उत्कृष्ट स्पर्धक पर्यंत जाननी। बहुरि सर्वघाती वीस प्रकृतिनिकी रचना सर्वघातीका जघन्य स्पर्धकतैं लगाय उत्कृष्ट स्पर्धकपर्यंत है। तहा विशेष इतना— सर्वघाती दारुभागके स्पर्धकनिका अनन्त भागमात्र स्पर्धकपर्यन्त मिश्रमोहनीके स्पर्धक जानने। ऊपरि नाही हैं। बहुरि इहाँ पर्यंत मिथ्यात्वके स्पर्धक नाही है। इहाँतैं ऊपरि उत्कृष्ट स्पर्धक पर्यंत मिथ्यात्वके स्पर्धक है। बहुरि च्यारि अघातिया कर्मनिकी भी देशघाती जघन्यतैं लगाय उत्कृष्ट पर्यंत वा सर्वघाती जघन्यतैं लगाय उत्कृष्ट पर्यंत परस्पर समान अनुभाग रचना जाननी। ऐसै ससार अवस्थाविषै सभवते पूर्व स्पर्धक जानने[1] ॥४६५॥

१ तम्मि चेव पढमसमए अपुव्वफद्दयाणि णाम करेदि। तेसिं परूवणं वत्तइस्सामो। त जहा— सव्वस्स अक्खवगस्स सव्वकम्माण देसघादिफद्दयाणमादिवग्गणा तुल्ला। सव्वघादीण पि मोत्तूण भिच्छत्त

प्रमाण नव तिनकौ अधिक कीए लोभकाडकका प्रमाण पाँचसै उण्णीस ५१९ आवै है। अवशेष एक भागमात्र ५१२ दोय स्पर्धकप्रमाण लोभके अवशेष अनुभागसत्त्वका प्रमाण हो है। ऐसैं क्रोध
४।४।४।४
मान माया लोभ काडकका प्रमाण तौ विशेष अधिक क्रम लीएँ हो है। अर अवशेष रह्या अनुभागका प्रमाण अनन्तगुणा क्रम लीएँ हो है। तिनकी रचना ऐसी—

नाम	क्रोध	मान	माया	लोभ
पूर्व अनुभाग	५१५	५१२	५१८	५२१
काडक अनुभाग	३८७	४८०	५१०	५१९
अवशेष अनुभाग	१२८	३२	८	२

इहा काडक अनुभाग अर अवशेष अनुभागके बीचि ड्योढी लीक करी है सो हीनाधिक अनुभाग प्रगट करनेके अर्थि जानना। ऐसै क्रोधादिकविषै घटता क्रम लीए अनुभाग प्रगट करना सो अश्वकर्णकरण है, ताका वर्णन कीया।

अब्र अश्वकर्णकरण अवस्थाविषै ही भए अरपूर्वै ससार अवस्थाविषै सभवते थे जे पूर्व स्पर्धक तिनतैं अनतगुणा घटता अनुभाग लीए अैसे जे अपूर्व स्पर्धक तिनका स्वरूप कहिए है। सो पहिले पूर्व स्पर्धकनिका स्वरूप जाने विना अपूर्व स्पर्धकनिका ज्ञान न होइ तातैं इहाँ पूर्व स्पर्धकनिका किछू स्वरूप कहिए है—

सर्व कर्म परमाणूविषै जाविषै अनुभागके थोरे अविभागप्रतिच्छेद पाइए ऐसी जो परमाणू सो जघन्य वर्ग कहिए। ऐसी ऐसी समान परमाणूनिका पुंज ताका नाम जघन्य वर्गणा है। बहुरि जघन्य वर्गणातै एक अविभागप्रतिच्छेद जिनमे अधिक पाइए ऐसे एक एक वर्गणा परमाणू तिनका पु जकौ द्वितीय वर्गणा कहिए। ऐसैं क्रमतै एक एक अविभागप्रतिच्छेद-करि बधती जे वर्ग कहिए वर्गका पु जरूप एक एक वर्गणा यावत् होइ तावत् पर्यंत जेती वर्गणा भई तिन सर्व वर्गणानिका पु जकौं जघन्य स्पर्धक कहिए। बहुरि ताके अनतरि जघन्य वर्गतैं दूणा अविभागप्रतिच्छेदयुक्त जे वर्ग तिनका समूहरूप द्वितीय स्पर्धककी प्रथम वर्गणा हो है। बहुरि पूर्ववत् यातैं एक एक अविभागप्रतिच्छेद बधती लीए वर्गनिका पु जरूप ताकी द्वितीयादि वर्गणा हो है। बहुरि ऐसैं ही जघन्य वर्गतैं तिगुणा चौगुणा आदि जेथवा स्पर्धक होइ तितना गुणा अविभागप्रतिच्छेद युक्त वर्गनिका समूहरूप जो वर्गणा होइ सो तो तृतीय चतुर्थ आदि स्पर्धक-निकी प्रथम वर्गणा जाननी। अर ऊपरि एक एक अविभागप्रतिच्छेद अधिक क्रम लीए वर्गनिका समूहरूप अपनी अपनी द्वितीयादि वर्गणा जाननी। इहा सर्व कर्म परमाणूनिका प्रमाणकौ किंचित् अधिक ड्योढगुणहानिका भाग दीए प्रथम वर्गणाके वर्गनिका प्रमाण आवे है। याकौ दोगुण-हानिका भाग दीए विशेषका प्रमाण आवे है सो एक विशेषकरि घटता द्वितीयादि वर्गणानिविषै वर्गनिका प्रमाण हो है। ऐसैं प्रथम गुणहानिविषैं क्रम जानना। बहुरि प्रथम गुणहानितैं द्वितीयादि गुणहानिनिविषै आधा आधा प्रमाण लीए वर्गणाके वर्गनिका अर विशेषका प्रमाण जानना। ऐसैं

कर्म परमाणूनिविषै नाना गुणहानि पाइए है। इहा अनुभाग रचना विषै गुणहानि वा नाना गुणहानिनिका प्रमाण यथासम्भव अनत है। तहा एक एक गुणहानिविषै पूर्वोक्त प्रकार स्पर्धक अनत है। एक एक स्पर्धकविषै वर्गणा अनती है। सो एक गुणहानिविषै जो वर्गणानिका प्रमाण सोई गुणहानि आयामका प्रमाण जानना। ऐसी गुणहानि जेती पाइए तिनके प्रमाणका नाम नाना-गुणहानि है।

अकसद्दष्टिकरि सर्व कर्म प्रदेशरूप द्रव्य इकतीससै ३१००, गुणहानिप्रमाण आठ, नानागुणहानि पाच तहा सर्व द्रव्यको किंचित् अधिक ड्योढ गुणहानिका भाग दीए प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै वर्ग दोयसै छप्पन है। याको दोगुणहानिका भाग दीए विशेष का प्रमाण सोलह सो इतना इतना घादि द्वितीयादि वर्गणा होइ। बहुरि ऐसै क्रमतै जिस वर्गणाविषै प्रथम गुणहानिका प्रथम वर्गणातै आधा एकसौ अठाईस वर्ग पाइए सो द्वितीय गुणहानिकी प्रथम वर्गणा है। इस चयका प्रमाण भी आधा आठ है। तातै आठ आठ घटते द्वितीयादि वर्गणाके वर्ग जानने। ऐसै गुणहानि गुणहानि प्रति आधा आधा प्रमाण जानना। ऐसी पाच गुणहानि सर्व जाननी। ऐसै ही यथार्थ कथनका अर्थ जानना। तहा जघन्य स्पर्धकतै लगाय अनत स्पर्धक लता भागरूप है। तिनके ऊपरि अनन्त स्पर्धक दारुभागरूप है। तिनके ऊपरि अनन्त स्पर्धक अस्थिभागरूप है। तिनके ऊपरि उत्कृष्ट स्पर्धक पर्यंत अनत स्पर्धक शैल भागरूप है। तहा प्रथम स्पर्धक देशघातीका जघन्य स्पर्धक है। तातै लगाय लताभागके सर्व स्पर्धक अर दारु भागके अनतवा भागमात्र स्पर्धक देशघाती हैं। तहा अंतविषै देशघाती उत्कृष्ट स्पर्धक भया। वहुरि ताके ऊपरि सर्व घातीका जघन्य स्पर्धक है। तातै लगाय ऊपरिके सर्व स्पर्धक सर्वघाती है। तहा अत स्पर्धक उत्कृष्ट सर्वघाती जानना। तहा केवल विना च्यारि ज्ञानावरण, तीन दर्शनावरण अर सम्यक्त्व मोहनी, सज्वलनचतुष्क, नोकषाय नव, अतराय पाच इन छबीस प्रकृतिनिकी लता समान स्पर्धककी प्रथम वर्गणा सो एक-एक वर्गके अविभागप्रतिच्छेदनिकी अपेक्षा समान है। बहुरि वेदनीय आयु नाम गोत्र इन अघाति कर्मनिकी भी प्रथम वर्गणा तैसैं ही परस्पर समान है। बहुरि मिथ्यात्व विना केवल ज्ञानावरण केवल दर्शनावरण निद्रा पाँच मिश्रमोहनी सज्वलन विना वारह कषाय इन सर्वघाती वीस प्रकृतिनिके देशघाती स्पर्धक हैं नाही, तातै सर्वघाती जघन्य स्पर्धक वर्गणा तैसैं ही परस्पर समान जाननी। तहाँ पूर्वोक्त देशघाती छव्वीस प्रकृतिनिकी अनुभाग रचना देशघाती जघन्य स्पर्धकतैं लगाय उत्कृष्ट देशघाती स्पर्धक पर्यंत होइ। तहाँ सम्यक्त्वमोहनीका तौ इहा ही उत्कष्ट अनुभाग होइ निवरचा, अवशेष पचीस प्रकृतिनिकी रचना तहाँतैं ऊपरि सर्वघाती उत्कृष्ट स्पर्धक पर्यंत जाननी। बहुरि सर्वघाती वीस प्रकृतिनिकी रचना सर्वघातीका जघन्य स्पर्धकतैं लगाय उत्कृष्ट स्पर्धकपर्यंत है। तहा विशेष इतना—सर्वघाती दारुभागके स्पर्धकनिका अनन्त भागमात्र स्पर्धकपर्यन्त मिश्रमोहनीके स्पर्धक जानने। ऊपरि नाही हैं। बहुरि इहाँ पर्यंत मिथ्यात्वके स्पर्धक नाही हैं। इहाँतैं ऊपरि उत्कृष्ट स्पर्धक पर्यंत मिथ्यात्वके स्पर्धक हैं। वहुरि च्यारि अघातिया कर्मनिकी भी देशघाती जघन्यतैं लगाय उत्कृष्ट पर्यंत वा सर्वघाती जघन्यतैं लगाय उत्कृष्ट पर्यंत परस्पर समान अनुभाग रचना जाननी। ऐसैं ससार अवस्थाविषै सभवते पूर्व स्पर्धक जानने[1] ॥४६५॥

१ तम्मि चेव पढमसमए अपुव्वफद्दयाणि णाम करेदि। तेसिं परूवण वत्तइस्सामो। त जहा—सव्वस्स अक्खवगस्स सव्वकम्माण देशघादिफद्दयाणमादिवग्गणा तुल्ला। सव्वघादीण पि मोत्तूण मिच्छत्त

इस गाथा द्वारा दो बातोका निर्देश किया गया है। प्रथम तो प्रकृतमे घात करनेके लिए जो अनुभागकाण्डक ग्रहण किया जाता है उसका चारो सज्वलनोमे अल्पबहुत्व किसप्रकार प्राप्त होता है और दूसरे घात करनेपर जो अनुभाग सत्त्व शेष रहता है उसका अल्प बहुत्व किस क्रम से प्राप्त होता है। बात यह है कि अश्वकर्णकरण के पहले घातके लिये जो अनुभाग काण्डक ग्रहण किये जाते थे वे मान मे सबसे स्तोक होते थे, उनसे क्रोध, माया और लोभ मे उत्तरोत्तर विशेष अधिक होते थे। किन्तु अब अश्वकर्ण क्रिया करते समय काण्डकघातके लिए जो अनुभाग स्पर्धक ग्रहण किये जाते हैं व क्रोधमे सबसे थोडे होने है तथा क्रमसे मान, माया और लोभमे उत्तरोत्तर विशेष अधिक होते हैं। तथा घात करने पर जो अनुभागस्पर्धक सत्त्वरूपमे शेष रहते है वे लोभमे सबसे स्तोक रहते हैं। उनसे माया, मान और क्रोधमे अनन्तगुन शेष रहते हैं। यहाँ जयधवलामे उक्त दोनो गाथाओमे जिस तथ्यको स्पष्ट किया गया है उसे अक सदृष्टि द्वारा इस प्रकार स्पष्ट किया है—

	क्रोध	मान	माया	लोभ
स्पर्धकरूपमे पूर्व सत्त्व	९६	९५	९७	९८
घातके लिए अनुभागकाण्डक प्रमाण	६४	७९	८९	९५
काण्डकधातेक बाद शेष रहे स्पर्धकसत्त्व	३२	१६	८	४

पण्डित जी ने इसी विषयको अपनी टीकामे स्पष्ट किया है, इसलिये यहाँ और अधिक नही लिखा जा रहा है। आशय एक ही है।

अब इहा अश्वकर्णकरणका प्रथम समयविषै भए ऐसे अपूर्व स्पर्धक तिनिका व्याख्यान करिए है—

ताहे सजलणाण देसावरफड्डयस्स हेट्ठादो।
णतगुणूणमपुव्व फड्डयमिह कुणदि हु अणत[1] ॥४६६॥

तस्मिन् सज्वलनाना देशावरस्पर्धकस्य अधस्तनात्।
अनतगुणोनमपूर्व स्पर्धकमिह करोति हि अनंत ॥ ४६६ ॥

स० च०—तहा अश्वकर्णका प्रारभ समय विषै च्यार्यो सज्वलन कषायनिका युगपत् अपूर्व स्पर्धक देशघाती जघन्य स्पर्धकतै नीचै अनतगुणा घटता अनुभागरूप करै है। पूर्व स्पर्धकनिविषै जघन्य स्पर्धककी जो जघन्य वर्गणा थी ताके नीचै घटता अनुभाग लीएँ कोई वर्गणा थी नाही सो अब इहा जघन्य स्पर्धककी जघन्य वर्गणाके नीचै अपूर्व स्पर्धकनिकी वर्गणाकी रचना भई। तहाँ पूर्व स्पर्धकनिकी जघन्य वर्गणातैं भी अपूर्व स्पर्धकनिकी उत्कृष्ट वर्गणाविषै भी अनुभागके अविभागप्रतिच्छेद अनतवा भाग मात्र हो हैं। ऐसैं अपूर्व स्पर्धक हो हैं तिनका प्रमाण अनत जानना ॥ ४६६॥

सेसाण कम्माण सव्वघादीणमादिवग्गणा तुल्ला। एदाणि पुव्वफद्दयाणि णाम क० चु० पृ० ७८९।

१ तदो चदुण्ह सजलणाणमपुव्वफद्दयाइ णाम करेदि। ताणि कध करेदि। लोभस्स तावलोभ सजलणस्स पुव्वफद्दएहिंतो पदेसग्गस्स असखेज्जदिभाग घेत्तूण पढमस्स देसघादिफद्दयस्स हेट्ठा अणतभागे अपुव्वफद्दयाणि णिव्वत्तयदि क० चु० पृ० ७८९।

विशेष—चारो सज्वलनोके पूर्व स्पर्धकोसे सम्बन्ध रखनेवाले प्रदेशपुजके असग्व्यातवे भागको ग्रहण कर प्रथम देशघाति स्पर्धकके नीचे अनन्तवे भागमे अन्य अपूर्व स्पर्धकोको रचता है। अश्वकर्णकरणके पहले सज्वलनके देशघाति जघन्य स्पर्धकका जितना अनुभाग होता है, इस समय उससे भी अनन्तवे भागप्रमाण अनुभाग स्पर्धकोको रचता है, इसलिये इनकी अपूर्व स्पर्धक सज्ञा है।

गणणादेयपदेसगगुणहाणिट्ठाणफड्ढयाण तु।
होदि असखेज्जदिम अवरादु वर अणतगुण[1] ॥४६७॥

गणनादेकप्रदेशकगुणहानिस्थानस्पर्धकाना तु।
भवति असंख्येय अवरतो वरमनतगुणं ॥४६७॥

स० च०—सो अनत कैसा है ? सो कहिए है—गणनाकरिकै प्रदेशगुणहानि कहिए अनुभाग रचना विषै जे वर्गणा तिनविषै प्रदेश जे परमाणु तिनका प्रमाण एक-एक विशेष घटतै सतै जहाँ आधा होइ तहातै पहलै एक गुणहानि कहिए। तिस एक गुणहानिविषै स्पर्धकनिका प्रमाण अभव्य राशितै अनतगुणा वा सिद्धराशिके अनतवे भागमात्र है। ताकौ अपकर्पणभागहारतै असख्यातगुणा जो भागहार ताका भाग दीए एक भागमात्र अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण अनन्त सख्यातमात्र जानना। तहा जघन्य अपूर्व स्पर्धकतै उत्कृष्ट अपूर्व स्पर्धक विषै अनुभागके अविभागप्रतिच्छेद अनतगुणे जानना। सो अनुभागके अल्पबहुत्वका विशेष इहा कहिए है—

अपूर्व स्पर्धकनिविषै प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद जीवराशितै अनतगुणे हैं, तथापि औरनितैं स्तोक हैं। बहुरि याकौ अनतका भाग देइ तहा बहुभाग तिसहीमै मिलाए द्वितीय स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद हो है। ऐसैं ही अत स्पर्धकपर्यंत क्रम जानना। सो यहु अल्पबहुत्व वर्गणानिविषै पाइए है। जे सर्व परमाणूँरूप वर्ग तिन सवनिकै अविभाग-प्रतिच्छेद मिलाय करि कह्या है। बहुरि एक-एक वर्गकी अपेक्षा प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणातै द्वितीय तृतीयादि स्पर्धकनिकी प्रथम वर्गणाविषै दूणे तिगुणे आदि अविभागप्रतिच्छेद जानने। जातैं आदि वर्गतै आदि वर्गके अविभागप्रतिच्छेदका प्रमाण जेथवा स्पर्धक होइ तितनागुणा ही हो है। कषायप्राभृत द्वितीय नाम महाधवलविषै[2] भी ऐसैं ही कह्या है। सोई विशेष करि कहिए है—

स्थितिसम्बन्धी असख्यातप्रमाण लीएँ जो स्पर्धकगुणहानि ताकरि गुणित्त समयप्रबद्धप्रमाण अपना-अपना द्रव्य स्थापि ताकौ अनुभागसम्बन्धी अनत्त प्रमाण लीएँ जो किंचिदून ड्योढ गुणहावि ताका भाग दीएँ प्रथम वर्गणाविषै परमाणूनिका प्रमाण आवै। एक गुणहानिविषैं जेता स्पर्धक-निका प्रमाण सो एक गुणहानि स्पर्धकशलाका कहिए है। एक स्पर्धकविषैं जेता वर्गणानिका प्रमाण सो एक स्पर्धकवर्गणा शलाका कहिए। इन दोऊनिकौं परस्पर गुणैं अनुभागसम्बन्धी गुणहानि आयामका प्रमाण होइ। बहुरि प्रथम वर्गणाकौ गुणहानितै दूणा प्रमाण लीए जो दो

---

१ ताणि पगणणादो अणताणि पदेसगुणहाणिट्ठाणतरफद्दयाणमसखेज्जदिभागो एत्तियमेत्ताणि ताणि अपुव्वफद्दयाणि। क० चु० पृ० ७८९।

२ यहाँ महाधवल पदसे जयधवल विवक्षित है।

गुणहानि ताका भाग दीए विशेषका प्रमाण आवै है। वर्गणा वर्गणा प्रति जितनी परमाणू घटैं ताका नाम इहा विशेष जानना सो विशेषकौ दो गुणहानिकरि गुणे प्रथम वर्गणा होइ। बहुरि एक परमाणु विषै जेते अविभागप्रतिच्छेद पाइए तिनके समूहका नाम वर्ग है, याकरि प्रथम वर्गणाकौ गुणं प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाण हो है। बहुरि यातै दूणे द्वितीय स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद है, यातैं द्वितीय भाग अधिक तृतीय स्पर्धकको प्रथम वर्गणाके है, यातै तृतीय भाग अधिक चतुर्थ स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके, ऐसै क्रमतैं उत्कृष्ट सख्यातवा भाग अधिक पर्यंत तौ सख्यातभागवृद्धि, ताके ऊपरि उत्कृष्ट असख्यातवा भाग अधिक पर्यंत असख्यात भागवृद्धि ताके ऊपरि अतपर्यंत अनत भागवृद्धि हो है। तहा द्विचरम स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनिकौ एक घाटि अपूर्व स्पर्धकप्रमाणका भाग देइ तहा एक भाग तामे जोडै चरम स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाण हो है। सो प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनितैं द्वितीय तृतीयादि स्पर्धकनिकी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद क्रमतैं दोय गुणा तिगुणा आदि होइ अत स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै अपूर्व स्पर्धकप्रमाणकरि गुणित अविभागप्रतिच्छेद हो हैं। सो यहु स्थूलपनं कथन है।

सूक्ष्मपनेकरि जेते विशेष घरैं तिन विशेषनिके जेते वर्ग होइ तिनके अविभागप्रतिच्छेद घटावनेकौ द्वितीयादि स्पर्धकनिकी प्रथम वर्गणानिका स्थूलपनै जो अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाण कह्या तामै किंचित् न्यूनपना जानना। तहा प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणातै द्वितीय वर्गणाविषै एक विशेष, तृतीय वर्गणाविषै दोय विशेष, चतुर्थ वर्गणाविषै तीन विशेष ऐसैं क्रमतैं विशेष घाटि घाटि पाइए है, तातैं सिद्धराशिके अनतवे भागि वा अभव्य राशितै अनतगुणी जो एक स्पर्धक वर्गणाशलाका तितने विशेष प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणातै द्वितीय स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै घटते जानने। सो इन विशेषनिके परमाणूनिका प्रमाणकौ दूणा जघन्य वर्गकरि गुणैं जो प्रमाण होइ तितना द्वितीय स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै ऋण जानना। बहुरि तृतीय स्पर्धककी प्रथम वर्गणानिविषै प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणातैं एक स्पर्धक वर्गणा शलाकामात्र विशेष घटैं तिनके परमाणूनिका प्रमाणकौ तिगुणा जघन्य वर्गकरि गुणै तहा ऋण हो है। ऐसैं क्रमतैं अत स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै एक घाटि अपूर्व स्पर्धक प्रमाणकरि गुणित एक स्पर्धक वर्गणा शलाकामात्र विशेष घटैं तिनके परमाणूनिका प्रमाणकौ अपूर्व स्पर्धकका प्रमाणकरि गुणित जो जघन्य वर्ग ताकरि गुणै तहा ऋण हो है। ऐसै कह्या अपना-अपना ऋण ताकौ पूर्वोक्त अपना-अपना स्थूल प्रमाणमैं घटाएँ सूक्ष्म तारतम्यरूप अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाण आवै है। ऐसैं अव्यवधान कहिए निरतरपनै स्पर्धकनिका अल्पबहुत्व कह्या। बहुरि व्यवधान कहिए सातर तीहिंकरि कहिए है—

प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणातैं अत स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद अनतगुणे है। किंचित् ऊन अपूर्व स्पर्धक प्रमाणकरि गुणित जानने। ऐसैं क्रोध मान माया लोभके अपूर्व स्पर्धकनिविषै अनुभागके अविभागप्रतिच्छेदनिका अल्पबहुत्वका व्याख्यान समान जानना ॥४६७॥

विशेष—प्रथम देशघाति स्पर्धकके नीचे अनन्तवें भागमे जो अन्य अपूर्व स्पर्धक किये जाते हैं वे कितने होते हैं इसीका समाधान करते हुए यहाँ बतलाया है कि पूर्व स्पर्धकोमे जो यथा-विभाग डेढ गुणहानिमात्र समयप्रबद्ध सत्त्वरूपसे अवस्थित हैं इनमे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका

भाग देने पर जो असख्यातवा भाग लब्ध आवे उसे ग्रहण कर उसमे स्थित पूर्वस्पर्धकोके प्रथम देशघाति स्पर्धकके नीचे उसके अनन्तवे भागमे अन्य अपूर्व स्पर्धक वनाता है जो कि अनन्त होकर भी एक गुणहानि स्थानान्तरके असख्यातवे भागप्रमाण ही होते है। पूर्व स्पर्धकोकी आदि वर्गणा एक-एक वर्गणाविशेषसे हीन होती हुई जहाँ जाकर दुगुनी हीन होती है उसे एक प्रदेशगुणहानि-स्थानान्तर कहते है, जो कि अभव्योसे अनन्तगुणे और सिद्धोके अनन्तवे भागमात्र स्पर्धकोको लिए हुए होती है। इस एक प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरके भीतर जितने स्पर्धक होते हैं उनके असख्यातवें भागमात्र ये अपूर्व स्पर्धक होते है ऐसा यहाँ समझना चाहिये। अपकर्पण-उत्कर्पण भागहारसे असख्यातगुणे भागहारके द्वारा एक प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरके भीतर प्राप्त स्पर्धको-के भाजित करनेपर जो प्रमाण लब्ध आवे उतने होते हैं। इस प्रकार जो जघन्य अपूर्व स्पर्धक प्राप्त होते हैं उनसे उत्कृष्ट अपूर्व स्पर्धक अनन्तगुणे होते हैं। यह इस गाथाका भाव है।

पुव्वाण फड्डयाण छेत्तूण असखभागदव्व तु।
कोहादीणमपुव्व फड्डयमिह कुणदि अहियकमो ॥४६८॥

पूर्वान् स्पर्धकान् छित्वा असख्यभागद्रव्यं तु।
क्रोधादीनामपूर्व स्पर्धकमिह करोति अधिकक्रमं ॥४६८॥

स० च—सज्वलन क्रोध मान माया लोभके पूर्व स्पर्धकनिका जो सर्व द्रव्य ताकौ अपकर्षण भागहारमात्र असख्यातका भाग दीए तहा एक भागमात्र द्रव्यकौ ग्रहि इहा अपूर्व स्पर्धक करै है। सोई कहिए है—

स्थितिसम्बधी द्व्यर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्धमात्र मोहनीयका देशघाती द्रव्य है, जातै मोहके सर्वघाती द्रव्यका इहा अभाव है। ताकौ अनुभागसबधी किंचित् अधिक द्व्यर्धगुणहानिका भाग दीए प्रथम वर्गणा होइ, तातैं प्रथम वर्गणाकौ किंचित् अधिक ड्योढ गुणहानिकरि गुणै मोहनीयके सर्व द्रव्यका प्रमाण हो है। ताकौं आवलीका असख्यातबा भागका भाग देइ तहा एक भागकौ जुदा राखि बहुभागनिके समान दोय भाग करिए। तहा एक भाग समान भागविषै जुदा राख्या, एक भाग मिलाए कषायनिका द्रव्य साधिक आधा है। बहुरि एक समान भागमात्र नोकषायनिका द्रव्य किंचिदून आधा है। तहा कषायनिके द्रव्यकौ आवलीका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा एक भाग जुदा राखि बहुभागनिके च्यारि समान भाग करने, बहुरि जुदा राख्या एक भागकौ आवलीका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभागनिकौ प्रथम समान भागविषै जोडै लोभका द्रव्य हो है। बहुरि अवशेष एक भागकौं आवलीका असख्यातवा भागका भाग देइ बहुभाग द्वितीय समान भागविषै जोडै मायाका द्रव्य हो है। बहुरि अवशेष एक भागकौ आवली-का असख्यातवा भागका भाग देइ बहुभाग तृतीय समान भागविषै मिलाए क्रोधका द्रव्य हो है। वहुरि अवशेष एक भागकौ चतुर्थ समान भागविषै मिलाए मानका द्रव्य हो है। बहुरि नोकषाय-

१ पढमसमए जाणि अपुव्वफद्दयाणि णिव्वत्तिदाणि तत्थ कोधस्स थोवाणि, माणस्स अपुव्वफद्दयाणि विसेसाहियाणि, मायाए अपुव्वफद्दयाणि विसेसाहियाणि, लोभस्स अपुव्वफद्दयाणि विसेसाहियाणि। विसेसो अणतभागो। क० चु० पृ० ७९१।

निका सर्व द्रव्य क्रोधरूप सक्रमण भया तातै याकौ क्रोधका द्रव्यविषै मिलाइए ऐसैं सर्व मोहके द्रव्यका साधिक आठवा भागमात्र लोभका द्रव्य भया। किंचिदून आठवा भागमात्र मायाका द्रव्य भया। किंचिदून आठवा भागमात्र मानका द्रव्य भया। किंचिदून पाचगुणा आठवा भागमात्र क्रोधका द्रव्य भया। ऐसैं अपने अपने द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहा एक भागमात्र द्रव्य ग्रहि अपूर्व स्पर्धक करिए है ते क्रोधादिकनिके अपूर्व स्पर्धक अधिक कम लीए है। तहा क्रोध-के अपूर्व स्पर्धक स्तोक है। यातै याकौ अनतका भाग दीए एक भागमात्र अधिक मानके अपूर्व स्पर्धक है। बहुरि यातै याकौ पूर्व भागहारतै एक अधिक भागहारका भाग दीए एक भागमात्र अधिक मायाके अपूर्व स्पधक है। बहुरि यातै याकौ पूर्व भागहारतैं एक अधिक भागहारका भाग दीए तहा एक भागमात्र अधिक लोभके अपूर्व स्पर्धक है।

अक सदृष्टिकरि जैसै क्रोधके अपूर्व स्पर्धक अठारह १८ याकौ छहका भाग दीए तीन पाए तिनकौ तहा अधिक कीए मानके इकईस हो हैं। याकौ पूर्व भागहारतै एक अधिक सात ताका भाग दीए तीन पाए तिनकरि अधिक मायाके चौईस हो है। इनकौ पूर्व भागहारतै एक अधिक आठ तिनिका भाग दीए तीन पाए तिनकरि अधिक लोभके सत्ताईस हो है। ऐसैं यथार्थकरि क्रोधादिकनिके अपूर्व स्पर्धक क्रमतै अधिक अधिक जानने। ऐसैं अपूर्व स्पर्धक करनेके कालके प्रथमादि समयनिविषै अपूर्व स्पर्धक करिए है ॥४६८॥

विशेष—यहाँ क्रोध, मान, माया और लोभके अपूर्व स्पर्धक उत्तरोत्तर विशेष अधिक होते है इसका स्पष्टीकरण करते हुए बतलाया है कि उस विशेषका प्रमाण अपूर्व स्पर्धकोके सख्यातवें भागप्रमाण या असख्यातवें भागप्रमाण न होकर उत्तरोत्तर अनन्तवें भागप्रमाण है। उदा-हरणार्थ—मान लो क्रोधके अपूर्व स्पर्धक १६ और अनन्तका प्रमाण ४ है। तो १६ मे ४ का भाग देने पर लब्ध ४ आये। इन्हें १६ मे जोडने पर २० मानके अपूर्व स्पर्धक हो जाते हैं। आगे १ अधिक ४ का २० मे भाग देने पर २४ मायाके अपूर्व स्पर्धक होते है। पुन १ + १ = २ अधिक ४ का भाग २४ मे देने पर २८ लोभके अपूर्व स्पर्धक होते हैं। जयधवलामे इसी अक सदृष्टिकी अपेक्षा क्रोध, मान, माया और लोभके क्रमश १६, २०, २४ और २८ अपूर्व स्पर्धक बतलाये हैं। पण्डितजीने अपनी टीकामे इसे ही दूसरी अक सदृष्टि कल्पित कर स्पष्ट किया है। दोनोका आशय एक है।

समखड सविसेस णिक्खवियोकड्डिदादु सेसधण।
पक्खेवकरणसिद्ध इगिगोउच्छेण उभयत्थ ॥४६९॥

ड सविशेष निक्षिप्यापकर्षितात् शेषधन।
प्रक्षेपकरणसिद्ध एकगोपुच्छेन उभयत्र ॥४६९॥

---

१ पढमसमए णिव्वत्तिज्जमाणगेसु अपुव्वफद्दएसु पुव्वफद्दएहिंतो ओकड्डियूण पदेसग्गमपुव्वफद्दयाण-मादिवग्गणाए बहुअ देदि। विदियाए वग्गणाए विसेसहीण देदि। एवमणतराणतरेण गतूण चरिमाए अपुव्वफद्दयवग्गणाए विसेसहीण दे[illegible]। तदो [illegible] [illegible]दो [illegible] ६५वग्गणादो पढमस्स पुव्वफद्दयस्स आदि-वग्गणाए असखेज्जगुणहीण दे। [illegible] विसेसहीण देदि। सेसासु सव्वासु पुव्व-फद्दयवग्गणासु विसेसहीण देदि

स० च०—अपकर्षण कीया जो द्रव्य तिसविषैं कितने इक द्रव्य तौ विशेष सहित समखण्डरूप अपूर्व स्पर्धकनिविषै निक्षेपणकरि अवशेष धन है सो ऐसैं एक गोपुच्छकरि उभयत्र कहिए पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिविषे निक्षेपण करना सिद्ध भया। सोई कहिए है—

अपकर्षण कीया जो द्रव्य तिसविषै केता इक द्रव्यकरि तौ अपूर्व स्पर्धक पूर्वै न थे ते नवीन सद्भावरूप करिए है अर अवशेष द्रव्य रहे सो पूर्व स्पर्धक पूर्वै थे अर अपूर्व स्पर्धक न भए तिनविषै निक्षेपण करिए है। तहा अपूर्व स्पर्धक केते द्रव्यकरि करिए है ? सो कहिए है—

पूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाका द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहा एक भागमात्र द्रव्य ग्रहि अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै तिस द्रव्यकरि केते इक वर्ग करिए है। वहुरि ऐसै ही दोय घाटि अपकर्षण भागमात्र पूर्व स्पर्धककी द्वितीयादि वर्गणानिके परमाणूनिकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहा एक भागमात्र द्रव्यकौ ग्रहि अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषैं निक्षेपण करिए है। इनकौ मिलाए वर्गणाके द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए तहा एक भाग विना बहुभागमात्र द्रव्य भया सो वर्गणाका द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग देनेतै अर एक घाटि अपकर्षण भागहारमात्र वर्गणाका द्रव्य ग्रह्या तातै एक घाटि अपकर्षण भागहारकरि गुणनेतैं यहु द्रव्य पूर्व स्पर्धककी वर्गणाका द्रव्यके समान हो है, जातैं पूर्व स्पर्धकनिकी सर्व वर्गणानिके द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहा एक भागमात्र द्रव्य अपकर्षण कीया तव तहा बहुभागमात्र द्रव्य रह्या सो इतना यहु द्रव्य भया, सो इतने द्रव्यकरि तौ अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणा भई। बहुरि ताके ऊपरि इतने इतने द्रव्य ही करि अपूर्व स्पर्धककी अन्य द्वितीयादि वर्गणा भईं सो अपूर्व स्पर्धकनिका जो प्रमाण अर एक स्पर्धकनिविषै जो वर्गणानिका प्रमाण इन दोऊनिकौ परस्पर गुणे जेता प्रमाण होइ तितनी अपूर्व स्पर्धकनिकी वर्गणा हैं सो एक वर्गणाका पूर्वोक्त प्रमाण द्रव्य होइ तौ इतनी वर्गणाका केता द्रव्य होइ ऐसैं त्रैराशिककरि पूर्वोक्त द्रव्यकौ अपूर्व स्पर्धकको वर्गणानिका प्रमाणकरि गुणै अपूर्व स्पर्धककी वर्गणानिके आदि धनका प्रमाण हो हैं। सो यहु तौ पूर्व स्पर्धकको प्रथम वर्गणाके सदृश अपूर्व स्पर्धकनिकी सर्व वर्गणानिकी समान अपेक्षाकरि समपट्टिका द्रव्य भया। अब इनविषै जो विशेष कहिए चय ते जैसैं बधती पाइए है सो कहिए है—

पूर्व स्पर्धकनिविषैं गुणहानि गुणहानिप्रति उपरितैं नीचै दूणा दूणा विशेषका प्रमाण है सो इहा पूर्व स्पर्धककी प्रथम गुणहानिके नीचैं अपूर्व स्पर्धकनिकी रचना भई, तातैं पूर्व स्पर्धकनिकी प्रथम गुणहानिविषै जो विशेषका प्रमाण पूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाकौ दो गुणहानिका भाग दीए हो है, तातैं दूणा अपूर्व स्पर्धकनिविषैं विशेषका प्रमाण जानना सो ऐसा एक विशेष तो अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके नीचैं भई जो अत अपूर्व स्पर्धकको अत वर्गणा तीहिविषैं अधिक हो है। बहुरि ताके नीचै द्विचरम वर्गणाविषै दोय विशेष अधिक हो हैं। ऐसैं क्रमतैं एक एक विशेष अधिक होइ, अपूर्व स्पर्धकनिकी वर्गणाका जेता प्रमाण तितने विशेष प्रथम अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै हो है सो इहा आदि एक उत्तर एक गच्छ अपूर्व स्पर्धक वर्गणामात्र स्थापि "सैकपदाहतपददले" इत्यादि सूत्रकरि जेता सकलनधन होइ तितना उत्तर धन जानना। सो पूर्वोक्त आदि धन अर इस उत्तर धनकौ जोडै जो प्रमाण होइ तितना द्रव्यकौ तिस अपकर्षण कीया द्रव्यतैं ग्रहि करि ऐसैं अपूर्व स्पर्धकनिकी रचना करिए है। पूर्व स्पर्धक तो पर्वै थे, तातैं तिनका सद्भाव होनेकौ

इतना द्रव्य तौ जुदा ही अपूर्व स्पर्धकनिविषै दीया सो जैसै गऊका पूछ क्रमतै मोटाईकी अपेक्षा घटता हो है तैसै इहा चय घटता क्रम होनेतै अपूर्व स्पर्धकनिका एक गोपुच्छ भया। बहुरि ताके ऊपरि पूर्व स्पर्धकनिकी भी रचना चय घटता क्रम लीए हैं। तातै पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिका मिलकरि भी एक गोपुच्छ हो है सो ऐसै एक गोपुच्छ होनेकरि तिस अपकर्षण किया द्रव्यविषै पूर्वोक्त द्रव्य घटाए जो अवशेष द्रव्य रह्या सो पूर्व स्पर्धक वा अपूर्व स्पर्धकनिविषै सर्वत्र विभाग करि देना। तहा अपूर्व स्पर्धककरि वर्गणाप्रमाण एक शलाका स्थापि ताका भाग अपूर्व स्पर्धकवर्गणा प्रमाणकौं दीए अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी तौ एक शलाका भई अर ताहीका भाग ड्योढ गुणहानि गुणित पूर्व स्पर्धक वर्गणाप्रमाणकौ दीए असख्यातगुणा अपकर्षण भागहारका ड्योढगुणा करिए इतनी पूर्व स्पर्धककी वर्गशलाका भई। इहा पूर्व स्पर्धककी एक गुणहानिविषै जो स्पर्धकनिका प्रमाण है ताकौ असख्यातगुणा अपकर्षण भागहारका भाग दीए अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण हो है, तातैं असख्यातगुणा अपकर्षण भागहार कह्या। अर पूर्व स्पर्धकनिविषैं नाना गुणहानि अनती है तथापि द्रव्यकी अपेक्षा ड्योढ गुणहानिगुणित वर्गणामात्र ही है, तातैं ड्योढका गुणकार कीया है ऐसा जानना। सो पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिकी शलाकानिकौ मिलाय ताका भाग तिस अपकर्षण कीया द्रव्यविषैं जो अवशेष द्रव्य रह्या था ताकौ दीए जो प्रमाण आया ताकौ पूर्व स्पर्धकसम्बन्धी बहु शलाकाकरि गुणै पूर्व स्पर्धकनिविषै देने योग्य द्रव्यका विभाग आवै है अर तिसहीकौ अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी एक शलाकाकरि गुणै अपूर्व स्पर्धकनिविषै देने योग्य द्रव्यका विभाग आवै है सो इस अपूर्व स्पर्धकका विभागरूप द्रव्य अर जिस द्रव्यकरि पूर्वै अपूर्व स्पर्धककी रचना करनी कही थी ऐसै चयधन सहित समपट्टिकारूप धन इन दोऊनिकौ मिलाए अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी सर्व द्रव्य भया। सो 'अद्धाणेण सव्वधणे खडिदे 'इत्यादि सूत्रकरि ताकौ अपूर्व स्पर्धकवर्गणा प्रमाण जो गच्छ ताका भाग दीए मध्य धन होइ। याकौ एक घाटि जो गच्छ ताका आधा प्रमाण करि हीन जो दोगुणहानि ताका भाग दीए विशेष होइ सो एक घाटि गच्छका आधा जो प्रमाण होइ तितने विशेष तिस मध्य धनविषै जोडे जो होइ तितना द्रव्य अपूर्व स्पर्धकनिकी आदि वर्गणाविषैं दीजिए है, तातै एक-एक विशेष घटता क्रम लीए द्वितीयादि वर्गणानिविषैं क्रमतै दीजिए है। ऐसै एक घाटि गच्छप्रमाण चयनिकरि हीन द्रव्य अत वर्गणाविषै दीजिए है। ऐसै तौ अपूर्व स्पर्धक नवीन कीए।

वहुरि पूर्व स्पर्धकनिकी रचना तौ पूर्वै थी ही, अब इनविषै इहा पूर्वोक्त बहुशलाकानिका जो विभागरूप द्रव्य कह्या था सो देना। सो 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यादि सूत्रकरि तिस पूर्व स्पर्धकसम्बन्धी विभागरूप द्रव्यकौं साधिक ड्योढ गुणहानिका भाग दीए जेता प्रमाण होइ तितना द्रव्य तो पूर्व स्पर्धकनिकी आदि वर्गणाविषैं निरूपण करिए है। बहुरि याकौ दो गुणहानिका भाग दीएँ विशेषका प्रमाण होइ सो ऊपरि द्वितीयादि वर्गणानिविषै प्रथम गुणहानिपर्यंत एक-एक विशेष घटता क्रम लीए अर गुणहानि गुणहानि प्रति आधा-आधा क्रम लीए द्रव्य निक्षेपण करिए है ॥४६९॥

विशेष—यहाँ एक गोपुच्छाकार रूपसे अपूर्व और पूर्व स्पर्धकोकी रचना कैसे होती है इसका स्पष्टीकरण करते हुए दोनो प्रकारके स्पधकोमे चयक्रमसे उत्तरोत्तर हीन जो द्रव्य प्राप्त होता है उसे अलग करके दो प्रकारके स्पर्धकोकी प्रत्येक वर्गणामे समानरूपसे कितना द्रव्य प्राप्त होता है इसका निर्देश करके पुन जिस क्रमसे विशेष (उत्तर) द्रव्यका उत्तरोत्तर विभाजन होकर

एक गोपुच्छाकाररूपसे अपकर्षित द्रव्यकी रचना किस विधिसे बन जाती है इसे ही यहाँ स्पष्ट किया गया है। खुलासा इस प्रकार है—

अपूर्व स्पर्धकोमे और पूर्व स्पर्धकोमे वर्गणाक्रमसे किस प्रकार द्रव्यका निक्षेपण होता है उसका क्रम यह है कि अश्वकर्णकरणके प्रथम समयमे पूर्व स्पर्धकोमेसे अपकर्षण करके जो अपूर्व स्पर्धकोकी रचना होती है उनमेसे अपूर्व स्पर्धकोकी आदि वर्गणामे बहुत प्रदेश देता है, उसमे दूसरी वर्गणामे विशेष हीन प्रदेश देता है। इस प्रकार अपूर्व स्पर्धकोकी अन्तिम वर्गणा तक विशेषहीन विशेषहीन द्रव्य देता है। और इस प्रकार अपूर्व स्पर्धककी जो अन्तिम वर्गणा प्राप्त होती है उससे पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामे असख्यातगुणा हीन द्रव्य देता है। उसके बाद आगे पूर्व स्पर्धककी सभी वर्गणाओमे विशेषहीन विशेषहीन द्रव्य देता है। विशेष स्पष्टीकरण इस प्रकार है—अपूर्व स्पर्धकोके वर्गणाविशेषोका जितना प्रमाण प्राप्त हो उनसे पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाके द्रव्यको अधिक करके निक्षिप्त करनेपर अपूर्व स्पधककी आदि वर्गणामे कितना द्रव्य प्राप्त होता हैं इसका प्रमाण आ जाता है। ऐसा करनेपर ही पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोकी एक गोपुच्छाकार रूपसे श्रेणिकी उत्पत्ति बन जाती है। इससे आगे दूसरी आदि वर्गणाओमे दो गुणहानि प्रतिभागके अनुसार एक-एक वर्गणाविशेषसे उत्तरोत्तर हीन करते हुए अपूर्व स्पर्धकोकी अन्तिम वर्गणा तक ले जाना चाहिये। ऐसा करने पर अपूर्व स्पर्धकोकी आदि वर्गणामे निक्षिप्त हुए प्रदेशपुजसे उन्हीकी अन्तिम वर्गणामे निक्षिप्त हुआ प्रदेशपुज उतने वर्गणाविशेषोसे हीन होता है आदि वर्गणासे जितने वर्गणाविशेष न्यून होकर अन्तिम वर्गणा प्राप्त हुई है। ऐसा होते हुए भी अन्तिम वर्गणा आदि वर्गणासे असख्यातवें भागप्रमाण हीन होती है ऐसा यहाँ समझना चाहिये, क्योकि वहाँ प्राप्त हुए अपूर्व स्पर्धक एक प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरके असख्यातवे भागप्रमाण होते है, इसलिए अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी वर्गणाओमे अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा अनन्तवे भाग हीन और परम्परोपनिधाकी अपेक्षा आदि वर्गणासे अन्तिम वर्गणामे असख्यातवे भागहीन द्रव्यको निक्षिप्त करता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार अपूर्व स्पर्धको और पूर्व स्पर्धकोमे किस विधिसे द्रव्यका निक्षेप होता है इसकी विधि कही।

ओक्कड्डिद तु देदि अपुव्वादिमवग्गणाए हीणकम ।
पुव्वादिवग्गणाए असखगुणहीणय तु हीणकमा ॥४७०॥

अपकर्षित तु ददाति अपूर्वादिमवर्गणात' हीनक्रम ।
पूर्वागिणादेवग्यामसख्यगुणहीनकं तु हीनक्रम ॥४७०॥

स० च—पूर्वोक्त विधान करिए अपकर्षण कीया जो द्रव्य तिसविषै ते अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाविषै बहुत द्रव्य दीजिए है, तातै ताकी द्वितीयादि अत वर्गणापर्यंत विषै विशेष घटता क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। बहुरि अपूर्व स्पर्धकको अत वर्गणाविषै जो द्रव्य दीया तातै साधिक अपकर्षण भाग जो असख्यात तितना गुणा घटता पूर्व स्पर्धकको प्रथम वर्गणाविषैं द्रव्य दीजिए है। इहा नवीन द्रव्य दीया तिसहीकी विवक्षा जाननी। इस पूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाका पुरातन द्रव्य, वर्गणाके द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए बहुभागमात्र है। तिस सहित नवीन दीया द्रव्य है सो अपूर्व स्पर्धककी अत वर्गणाके द्रव्यतै एक विशेषमात्र ही घटता जानना। जातै अपूर्व स्पर्धकनिका एक गोपुच्छ भया है। बहुरि तिस पूर्व स्पर्धककी प्रथम

इतना द्रव्य तौ जुदा ही अपूर्व स्पर्धकनिविषै दीया सो जैसै गऊका पूछ क्रमतै मोटाईकी अपेक्षा घटता हो है तैसै इहा चय घटता क्रम होनेतै अपूर्व स्पर्धकनिका एक गोपुच्छ भया। बहुरि ताके ऊपरि पूर्व स्पर्धकनिकी भी रचना चय घटता क्रम लीए है। तातै पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिका मिलकरि भी एक गोपुच्छ हो है सो ऐसै एक गोपुच्छ होनेकरि तिस अपकर्षण किया द्रव्यविषै पूर्वोक्त द्रव्य घटाए जो अवशेष द्रव्य रह्या सो पूर्व स्पर्धक वा अपूर्व स्पर्धकनिविषै सर्वत्र विभाग करि देना। तहा अपूर्व स्पर्धककरि वर्गणाप्रमाण एक शलाका स्थापि ताका भाग अपूर्व स्पर्धकवर्गणा प्रमाणकौं दीए अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी तौ एक शलाका भई अर ताहीका भाग ड्योढ गुणहानि गुणित पूर्व स्पर्धक वर्गणाप्रमाणकौ दीए असख्यातगुणा अपकर्षण भागहारका ड्योढगुणा करिए इतनी पूर्व स्पर्धककी वर्गशलाका भई। इहा पूर्व स्पर्धककी एक गुणहानिविषै जो स्पर्धकनिका प्रमाण है ताकौ असख्यातगुणा अपकर्षण भागहारका भाग दीए अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण हो है, तातै असख्यातगुणा अपकर्षण भागहार कह्या। अर पूर्व स्पर्धकनिविषैं नाना गुणहानि अनती है तथापि द्रव्यकी अपेक्षा ड्योढ गुणहानिगुणित वर्गणामात्र ही है, तातै ड्योढका गुणकार कीया है ऐसा जानना। सो पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिकी शलाकानिकौ मिलाय ताका भाग तिस अपकर्षण कीया द्रव्यविषै जो अवशेष द्रव्य रह्या था ताकौ दीए जो प्रमाण आया ताकौ पूर्व स्पर्धकसम्बन्धी बहु शलाकाकरि गुणै पूर्व स्पर्धकनिविषै देने योग्य द्रव्यका विभाग आवै है अर तिसहीकौ अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी एक शलाकाकरि गुणै अपूर्व स्पर्धकनिविषै देने योग्य द्रव्यका विभाग आवै है सो इस अपूर्व स्पर्धकका विभागरूप द्रव्य अर जिस द्रव्यकरि पूर्वौ अपूर्व स्पर्धककी रचना करनी कही थी ऐसैं चयधन सहित समपट्टिकारूप धन इन दोऊनिकौ मिलाए अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी सर्व द्रव्य भया। सो 'अद्धाणेण सव्वधणे खडिदे 'इत्यादि सूत्रकरि ताकौ अपूर्व स्पर्धकवर्गणा प्रमाण जो गच्छ ताका भाग दीए मध्य धन होइ। याकौ एक घाटि जो गच्छ ताका आधा प्रमाण करि हीन जो दोगुणहानि ताका भाग दीए विशेष होइ सो एक घाटि गच्छका आधा जो प्रमाण होइ तितने विशेष तिस मध्य धनविषै जोडे जो होइ तितना द्रव्य अपूर्व स्पर्धकनिकी आदि वर्गणाविषैं दीजिए है, तातै एक-एक विशेष घटता क्रम लीए द्वितीयादि वर्गणानिविषै क्रमतै दीजिए है। ऐसैं एक घाटि गच्छप्रमाण चयनिकरि हीन द्रव्य अत वर्गणाविषै दीजिए है। ऐसै तौ अपूर्व स्पर्धक नवीन कीए।

बहुरि पूर्व स्पर्धकनिकी रचना तौ पूर्वै थी ही, अब इनविषै इहा पूर्वोक्त बहुशलाकानिका जो विभागरूप द्रव्य कह्या था सो देना। सो 'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा' इत्यादि सूत्रकरि तिस पूर्व स्पर्धकसम्बन्धी विभागरूप द्रव्यकौ साधिक ड्योढ गुणहानिका भाग दीए जेता प्रमाण होइ तितना द्रव्य तो पूर्व स्पर्धकनिकी आदि वर्गणाविषै निरूपण करिए है। बहुरि याकौ दो गुणहानिका भाग दीएँ विशेषका प्रमाण होइ सो ऊपरि द्वितीयादि वर्गणानिविषै प्रथम गुणहानि-पर्यंत एक-एक विशेष घटता क्रम लीए अर गुणहानि गुणहानि प्रति आधा-आधा क्रम लीए द्रव्य निक्षेपण करिए है ॥४६९॥

विशेष—यहाँ एक गोपुच्छाकार रूपसे अपूर्व और पूर्व स्पर्धकोकी रचना कैसे होती है इसका स्पष्टीकरण करते हुए दोनो प्रकारके स्पधकोमे चयक्रमसे उत्तरोत्तर हीन जो द्रव्य प्राप्त होता है उसे अलग करके दो प्रकारके स्पर्धकोकी प्रत्येक वर्गणामे समानरूपसे कितना द्रव्य प्राप्त होता है इसका निर्देश करके पुन जिस क्रमसे विशेष (उत्तर) द्रव्यका उत्तरोत्तर विभाजन होकर

एक गोपुच्छाकाररूपसे अपकर्षित द्रव्यकी रचना किस विधिसे वन जाती है इसे ही यहाँ स्पष्ट किया गया है। खुलासा इस प्रकार है—

अपूर्व स्पर्धकोमे और पूर्व स्पर्धकोमे वर्गणाक्रमसे किस प्रकार द्रव्यका निक्षेपण होता है उसका क्रम यह है कि अश्वकर्णकरणके प्रथम समयमे पूर्व स्पर्धकोमेसे अपकर्षण करके जो अपूर्व स्पर्धकोकी रचना होती है उनमेसे अपूर्व स्पर्धकोकी आदि वर्गणामे बहुत प्रदेश देता है, उसमे दूसरी वर्गणामे विशेष हीन प्रदेश देता है। इस प्रकार अपूर्व स्पर्धकोकी अन्तिम वर्गणा तक विशेषहीन विशेषहीन द्रव्य देता है। और इस प्रकार अपूर्व स्पर्धककी जो अन्तिम वर्गणा प्राप्त होती है उससे पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामे असख्यातगुणा हीन द्रव्य देता है। उसके बाद आगे पूर्व स्पर्धककी सभी वर्गणाओमे विशेषहीन विशेषहीन द्रव्य देता है। विशेष स्पष्टीकरण इस प्रकार है—अपूर्व स्पर्धकोके वर्गणाविशेषोका जितना प्रमाण प्राप्त हो उनसे पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाके द्रव्यको अधिक करके निक्षिप्त करनेपर अपूर्व स्पधककी आदि वर्गणामे कितना द्रव्य प्राप्त होता हैं इसका प्रमाण आ जाता है। ऐसा करनेपर ही पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोकी एक गोपुच्छाकार रूपसे श्रेणिकी उत्पत्ति बन जाती है। इससे आगे दूसरी आदि वर्गणाओमे दो गुणहानि प्रति-भागके अनुसार एक-एक वर्गणाविशेषसे उत्तरोत्तर हीन करते हुए अपूर्व स्पर्धकोकी अन्तिम वर्गणा तक ले जाना चाहिये। ऐसा करने पर अपूर्व स्पर्धकोकी आदि वर्गणामे निक्षिप्त हुए प्रदेशपुजसे उन्हीकी अन्तिम वर्गणामे निक्षिप्त हुआ प्रदेशपुज उतने वर्गणाविशेषोसे हीन होता है आदि वर्गणा-से जितने वर्गणाविशेष न्यून होकर अन्तिम वर्गणा प्राप्त हुई है। ऐसा होते हुए भी अन्तिम वर्गणा आदि वर्गणासे असख्यातवे भागप्रमाण हीन होती है ऐसा यहाँ समझना चाहिये, क्योकि वहाँ प्राप्त हुए अपूर्व स्पर्धक एक प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरके असख्यातवे भागप्रमाण होते हैं, इसलिए अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी वर्गणाओमे अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा अनन्तवे भाग हीन और परम्परोपनिधाकी अपेक्षा आदि वर्गणासे अन्तिम वर्गणामे असख्यातवे भागहीन द्रव्यको निक्षिप्त करता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार अपूर्व स्पर्धको और पूर्व स्पर्धकोमे किस विधिसे द्रव्यका निक्षेप होता है इसकी विधि कही।

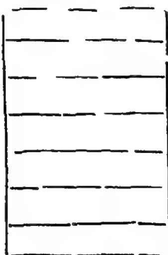
ओक्कड्डिद तु देदि अपुव्वादिमवग्गणाए हीणकम।
पुव्वादिवग्गणाए असखगुणहीणय तु हीणकमा ॥४७०॥

अपकर्षित तु ददाति अपूर्वादिमवर्गणात हीनक्रमं।
पूर्वादिवर्गणायामसख्यगुणहीनक तु हीनक्रम ॥४७०॥

स० च—पूर्वोक्त विधान करिए अपकर्षण कीया जो द्रव्य तिसविषै ते अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाविषै बहुत द्रव्य दीजिए है, तातै ताकी द्वितीयादि अत वर्गणापर्यंत विषै विशेष घटता क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। बहुरि अपूर्व स्पर्धककी अत वर्गणाविषैं जो द्रव्य दीया तातैं साधिक अपकर्षण भाग जो असख्यात तितना गुणा घटता पूर्व स्पर्धकका प्रथम वर्गणा-विषै द्रव्य दीजिए है। इहा नवीन द्रव्य दीया तिसहीकी विवक्षा जाननी। इस पूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाका पुरातन द्रव्य, वर्गणाके द्रव्यको अपकर्षण भागहारका भाग दीए बहुभागमात्र है। तिस सहित नवीन दीया द्रव्य है सो अपूर्व स्पर्धककी अत वर्गणाके द्रव्यतै एक विशेषमात्र ही घटता जानना। जातै अपूर्व स्पर्धकनिका एक गोपुच्छ भया है। बहुरि तिस पूर्व स्पर्धककी प्रथम

वर्गणातै उपरि द्वितीयादि वर्गणानिविषै एक एक चय घटता द्रव्य निक्षेपण करिए है। इस ही कथनके विशेष निर्णय करनेकौ क्षेत्ररूप कल्पनाकरि स्थापि कथन कीजिए है—

पूर्व स्पर्धकनिका सर्व द्रव्य ड्योढ गुणहानिगुणित प्रथम वर्गणामात्र है सो ड्योढ गुणहानिका जेता प्रमाण तितना लवा अर प्रथम वर्गणाका जेता परमाणू तिनका प्रमाण तितना चौडा क्षेत्र ऐसा स्थापना |__|। यामै अपकर्षण कीया द्रव्यकौ जुदा करनेके अर्थि चौडाई विषै अपकर्षणका भागहारका जेता प्रमाण तितने खड करिए तब ऐसा हो है— |__|__|__|__|__|। तहा ऐसै अपकर्षण भागहारका भाग दीए एक भागमात्र चौडा क्षेत्र एक खडका है सो अपकर्षण कीया द्रव्यका स्वरूप जानना। अवशेष बहुभागमात्र चौडा क्षेत्र अवशेष खडनिका रह्या सो अपकर्षण कीए पीछै अवशेष पूर्व स्पर्धकस्वरूप जानने। लबे ते दोऊ ही स्पर्धक गुणहानिमात्र हैं। ते एक खड बहुखढ ऐसै भए |__|__|। बहुरि तहा एक खड ऐसा |__| तीहिंविषै अपकर्षण कीया द्रव्यका विभाग करनेके अर्थि एक गुणहानिका स्पर्धक प्रमाणकौ असख्यातगुणा अपकर्षण भागहारका भाग दीए अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण होइ अर तहा लबाई ड्योढ गुणहानिमात्र थी तातैं असख्यात-गुणा जो अपकर्षण भागहार ताकौ ड्योढगुणा कीए जेता प्रमाण तितना तिस एक खडकी लबाईविषै खड ऐसे



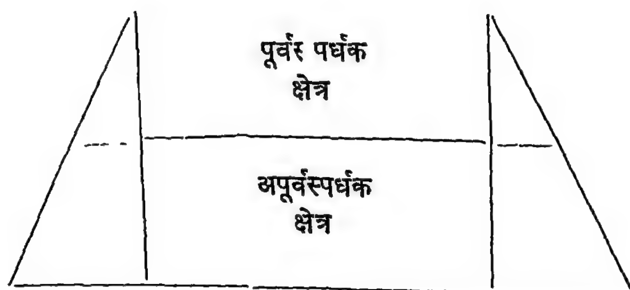
करने। तहा एक खडविषै लबाईका प्रमाण अपूर्व-स्पर्धकनिका प्रमाण मात्र आया, चौडे पूर्वोक्त प्रमाणमात्र है ही। बहुरि इन खडनिविषैं जिस द्रव्यकरि अपूर्व स्पर्धक नवीन बनै तिस द्रव्यस्वरूप साधिक एक घाटि अपकर्षण भागहारमात्र खड ग्रहण करने। इहा अपूर्व स्पर्धक प्रमाण गच्छका एकवार सकलन धनमात्र जे पूर्व स्पर्धक-सबधी विशेषतै दूणा प्रमाण लीए विशेष तिनका अधिकपना साधिक शब्दकरि जानना। सो तिन खडनिकौ ग्रहणकरि पूर्वे जे अवशेष बहुखडमात्र पूर्व स्पर्धकस्वरूप क्षेत्र ऐसा |__| रह्या था ताके नीचै अविरोधपने जोडिए सो जोडने योग्यतै सर्व खडनिकौं चौडाईविषै वरोवरि आगै ऐसे |__|__|__|__|__| स्थापिए तब प्रथम वर्गणाकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए एक खडकी चौडाई है ताकौ इहा ग्रहे हुए खडनिका प्रमाण एक घाटि अपकर्षण भागहारमात्र ताकरि गुणैं चौडाईका प्रमाण हो है सो अवशेष पूर्व स्पर्धकरूप क्षेत्रकी चौडाईके समान हो है। बहुरि इहा ग्रहे हुए खडनिका प्रमाणविषै विशेषनिका साधिकपना कह्या है तातैं तिस पूर्व स्पर्धकस्वरूप क्षेत्रतै चौडाईका प्रमाण क्रमतैं किछू साधिक जानना। अर इहा जोडनेयोग्य खडनिकी लबाई अपूर्व-स्पर्धक प्रमाणमात्र है तातै नीचै जोडया क्षेत्रका लबाईका प्रमाण अपूर्व स्पर्धकप्रमाण मात्र भया सो ऐसैं पूर्व स्पर्धकनिका क्षेत्रके नीचैं तिस द्रव्यकरि अपूर्व स्पर्धककी रचना भई तिस द्रव्यरूप जो ग्रहे खडनिका अपूर्व स्पर्धकरूप क्षेत्र ताकौ जोडैं ऐसा

पूर्वस्पर्धक क्षेत्र
अपूर्वस्पर्धक क्षेत्र

भया। ऐसैं पूर्व

स्पर्धकको प्रथम वर्गणातैं अपूर्व स्पर्धकनिकी वर्गणा अनुक्रमतैं विशेष अधिक जाननी। बहुरि अपकर्षण कीया द्रव्यविषै जितना द्रव्यकरि अपूर्व स्पर्धक बनै तिनरूप क्षेत्र जोडनेका विधान तौ कह्या अब अवशेष रह्या द्रव्य पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिविषैं देना तिसरूप क्षेत्र जोडनेका विधान कहिए है—

असख्यातगुणा अपकर्षण भागहारतैं ड्योढगुणा प्रमाण लीए खड कीए थे तिनविषै साधिक एक घाटि अपकर्षण भागहारमात्र खड ग्रहण कीए पीछै अवशेष जे खड रहे तिन विषैं एक खड ऐसा |__| ताकौ सकल खड कहिए। ताकी चौडाई विषैं असख्यातगुणा अपकर्षणभागहारतैं ड्योढगुणा प्रमाणमात्र खड ऐसे |__|__|__|__|__| करने सो इतने खडनिकौ विकल खड कहिए। तहा एक विकल खडकौ अपूर्व स्पर्धकसबधी क्षेत्रकी चौडाई विषै क्रमतैं जोडना अर अवशेष विकल्प खडनिको तैसै ही पूर्व स्पर्धकसबधी क्षेत्रकी चौडाईविषै अनुक्रम परिपाटी लीए जोडना। याही प्रकार जेते अवशेष सकल खड रहे तिनकौ पूर्व अपूर्व स्पर्धकसबधी क्षेत्रविषैं अविरोधपने चौडाईविषै जानने। ऐसै जोडें ऐसा—



क्षेत्र भया। इहा पूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषैं जोडैं समस्त विकल खड ते मिलिकरि भी एक सकल खडप्रमाण न भए, जाते अपकर्षण भागहारमात्र विकल खडनिकरि हीन हो हैं। ऐसैं पूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषैं दीया किंचिदून एक सकल खड है। अर अपूर्व स्पर्धककी अत वर्गणा विषैं पहिले वा पीछे दीए हुए एक घाटि अपकर्षण भागहारमात्र सकल खड हैं, तातैं अपूर्व स्पर्धककी अत वर्गणाविषैं दीया द्रव्यतैं पूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषैं दीया द्रव्य असख्यातगुणा घटता है। असख्यातका प्रमाण इहा साधिक अपकर्षण भागहारमात्र जानना। ऐसैं पूर्वोक्त कथनकौ क्षेत्र-रूप स्थापि प्रगट कीया ॥४७०॥

विशेष—श्री जयधवलाजीमे प्रकृत विषयको इस प्रकार स्पष्ट किया है—अपूर्व और पूर्व स्पर्धकोकी वर्गणाओमे अपकर्षित द्रव्यका निक्षेप किस विधिसे लेकर समूचे द्रव्यकी एक गोपुच्छा-कार रचना हो जाती है इसका निर्देश हम ४६९ गाथाकी टीकाके अन्तमे ही कर आये हैं। यहाँ सर्व प्रथम यह देखना है कि पूर्व स्पर्धकोकी आदि वर्गणामे जो द्रव्य प्राप्त होता है वह निक्षिप्त-होने वाले द्रव्यके असख्यातवें भागप्रमाण कैसे होता है। आगे इसपर विचार करते हैं। यथा—अपूर्व स्पर्धकोकी अन्तिम वर्गणामें प्राप्त द्रव्य पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणासे एक वर्गणा विशेष मात्र अधिक होता है। साथ ही पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामे प्राप्त हुआ द्रव्य वहाँ पूर्वके

अवस्थित द्रव्यके असख्यातवे भागमात्र ही होता है, क्योकि अपकर्षित हुए समस्त द्रव्यके असख्यात बहुभागप्रमाण द्रव्यके डेढ गुणहानि द्वारा अपवर्तित कर पुन साधिक अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारके द्वारा आदि वर्गणाके भाजित किये जानेपर वहाँ एक खण्डमात्र द्रव्य ही उपलब्ध होता है। अब इसी अर्थको क्षेत्रविन्यास विधिसे स्पष्ट करते हैं—

पूर्व स्पर्धकोकी आदि वर्गणाके प्रमाणसे समस्त द्रव्यके किये जानेपर डेढ गुणहानिप्रमाण आदि वर्गणाएँ प्राप्त होती है, इसलिए उनका क्षेत्र विन्यास इस प्रकार स्थापित करना चाहिये—



आयाम लम्बाई

जितना आदि वर्गणाका विष्कम्भ है उतनी चौडाई लिए यह क्षेत्र है। तथा डेढ गुणहानि प्रमाण लम्बा है। इस प्रकार क्षेत्रकी स्थापना कर पुन अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण विष्कम्भकी ओरसे इस क्षेत्रकी फालियाँ (फाकें) करनी चाहिये।

ऐसा करके वहाँ एक कम अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारप्रमाण फालियोको वही स्थापितकर उनमेसे एक फालिको ग्रहणकर उसे पृथक् स्थापित करनेपर उस निकाली हुई फालिप्रमाण अपूर्व स्पर्धकोको करनेसे वह अपकर्षित समस्त द्रव्य प्रमाण होती है। अर्थात् अपूर्व स्पर्धकोकी रचनाके लिये जितने द्रव्यका अपकर्षण किया गया उसका प्रमाण आ जाता है।

पुन आयामसे अपूर्व स्पर्धकोको लानेके लिये गुणहानिका जो भागहार अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे असख्यातगुणा है, द्वितीय भाग अधिक उससे इस फालिको खण्डित करना चाहिये। इस प्रकार खण्डित्त करनेपर वहाँ एक-एक खण्डका आयाम अपूर्व स्पर्धकके अध्वानप्रमाण होता है। पुन वहाँ एक कम अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण खण्डोके पहलेके क्षेत्रके नीचे आगमके अविरोध पूर्वक जोड देनेपर पूर्व स्पर्धकको आदि वर्गणाके साथ अपूर्व स्पर्धककी समस्त वर्गणाएँ सदृश प्रमाणको लिये हुए उत्पन्न हो जाती हैं।

इतनी विशेषता है कि अपूर्व वर्गणाके अध्वानके सकलनमात्र वर्गणाविशेषोके बिना गोपुच्छाकार नही उत्पन्न होता, इसलिए तत्प्रमाण द्रव्यको भी अवशेष खण्डोसे ग्रहणकर आगमके अविरोध पूर्वक यहाँ मिला देना चाहिये। किन्तु यह सकलन द्रव्य अप्रधान है, क्योकि यह एक खण्डप्रमाण द्रव्यके असख्यातवे भागमात्र है।

पुन एक कम अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण खण्डोसे हीन डेढ भागहारप्रमाण शेष समस्त खण्ड पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोमे विभाजित होकर पतित होते है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये। खुलासा इस प्रकार है—

पुन रूपाधिक द्वितीय भागसे अधिक एक प्रदेश गुणहानिस्थानान्तररूप भागहारका विरलन कर उसपर शेष खण्डोमेसे एक खण्डके प्रमाणको समान खण्ड करके देयरूपसे देनेपर एक-एक विरलनके प्रति अपूर्व स्पर्धकोका आयाम प्राप्त होता है। वहाँ एक विरलनके प्रति प्राप्त फालिको ग्रहणकर उसे अपूर्व स्पर्धकोके समस्त खण्डोके पासमे लाकर स्थापित करना चाहिये। पुन

समस्त विरलन अकोके प्रति प्राप्त बहुत खण्ड पूर्व स्पर्धकोमे पतित होते हैं। इसी प्रकार शेष समस्त खण्डोको भी पूर्व-अपूर्व स्पर्धकोमे विभाजित कर देना चाहिये। इस प्रकार देनेपर पूर्व स्पर्धकोकी आदि वर्गणामे प्राप्त हुए सभी विकल खण्डोको ग्रहणकर एक सकलखण्ड प्रमाण नही होता है, क्योकि कुछ कम एक सकल खडप्रमाण ही वह उपलब्ध होता है।

अब कितना प्रमाणरूप द्रव्य एक सकल खण्डप्रमाणको प्राप्त है ऐसी पृच्छा होनेपर समाधान यह है कि अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण विकल खण्ड यदि हैं तो एक सकल खण्डका प्रमाण प्राप्त होता है। परन्तु इतने प्रमाणरूप द्रव्य है नही, क्योकि अधस्तन भागहारसे उपरिम खण्डसलाकाका गुणकार अपकर्षण-उत्कर्षणप्रमाण अकोसे हीनरूप देखा जाता है। इसलिये पूर्व स्पर्धकोकी आदि वर्गणामे कुछ कम एक खड प्रमाण ही द्रव्य प्राप्त हुआ यह सिद्ध होता है। अपूर्व स्पर्धकोसे कियत्प्रमाण द्रव्य प्राप्त हुआ ऐसी पृच्छा होनेपर कहते हैं कि एक कम अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारप्रमाण सकल खडप्रमाण और कुछ कम एक खडप्रमाण द्रव्य प्राप्त होता है। इसलिए अपूर्ण स्पर्धककी अन्तिम वर्गणामे निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजसे पूर्ण स्पर्धककी आदि वर्गणामे निक्षिप्त हुआ प्रदेशपुंज असख्यातगुणा हीन है। यहाँ गुणकार कितना है ऐसी पृच्छा होनेपर कहते हैं कि साधिक अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण गुणकार है। इस कारणसे प्रथम पूर्ण स्पर्धककी आदि वर्गणामे असख्यातगुणे हीन प्रदेशपुंजको निक्षिप्तकर उससे पूर्ण स्पर्धककी दूसरी वर्गणामे अनन्तवें भागप्रमाण विशेष हीन देता है। तथा इसी प्रकार पूर्ण स्पर्धकोकी शेष समस्त वर्गणाओमे भी अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा विशेष हीन, विशेष हीन ही द्रव्य देता है।

कोहादीणमपुव्व जेट्ठ सरिस तु अवरमसरित्थ।
लोहादिआदिवग्गणअविभागा होंति अहियकमा[1] ॥४७१॥

क्रोधादीनामपूर्वं ज्येष्ठं सदृश तु अवरमसदृशं।
लोभादिआदिवर्गणाअविभागा भवति अधिकक्रमा ॥४७१॥

स० च—क्रोधादिके चारयो कषायनिका अपूर्व स्पर्धकनिकी उत्कृष्ट वर्गणा जो अत स्पर्धककी प्रथम वर्गणा सो अनुभागके अविभागप्रतिच्छेदनिके प्रमाणकी अपेक्षा समान है। बहुरि जघन्य वर्गणा जो प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणा सो असमान है। तहा लोभादिकको जघन्य वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद क्रमकरि अधिक हैं। लोभकी जघन्य वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद तौ स्तोक है, तातैं मायाकीके अधिक है तातैं मानकीके अधिक है तातैं क्रोधकीके अधिक है ॥४७१॥

सगसगफड्ढयएहिं सगजेट्ठे भाजिदे सगीआदि।
मज्झे वि अणताओ वग्गणगाओ समाणाओ[2] ॥४७२॥

स्वकस्वकस्पर्धकैः स्वकज्येष्ठे भाजिते स्वकीयादि।
मध्येऽपि अनता वर्गणा समाना ॥४७२॥

---

१ तेसिं चेव पढमसमए णिव्वत्तिदाणमपुव्वफद्दयाण लोभस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्ग थोव। मायाए आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्ग विसेसाहिय। माणस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्ग विसेसाहिय। कोहस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्ग विसेसाहिय। एव चदुण्ह पि कसायाण जाणि अपुव्वफद्दयाणि तत्थ चरिमस्स अपुव्वफद्दयस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्ग चदुण्ह पि कसायाण तुल्लमणतगुण। क० चु० पृ० ७९१–७९२। २ जयध० प्रे० पृ० ६९२४–६९२८।

स० च—सामान्य आलापकरि अभव्य राशितै अनतगुणा वा सिद्धराशिके अनतवे भागमात्र हीनाधिकरूप जो अपना अपना स्पर्धकनिका जो प्रमाण ताका भाग अपनी अपनी उत्कृष्ट वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाणकौ दीए अपनी अपनी आदि वर्गणाका प्रमाण आवै है।

अकसदृष्टिकरि जैसै च्यारयो कपायनिके समान प्रमाण लीए उत्कृष्ट वर्गणाके अविभाग-प्रतिच्छेद पन्द्रहसौ बारह १५१२, इनकौ लोभ माया मान क्रोधके स्पर्धकनिका प्रमाण क्रमतै सत्ताईस चौबीस इकईस अठारह तिनका भाग दीए लोभकी जघन्य वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद छप्पन ५६, मायाकीके तरेसठि ६३, मानकीके बहत्तरि ७२, क्रोधकीके चौरासी ८४ हो हैं। अथवा अपनी अपनी जघन्य वर्गणानिके अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाणकौ अपनी-अपनी स्पर्धकनिका प्रमाणकरि गुणैं अपनी अपनी उत्कृष्ट वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाण हो है। कैसैं? सो कहिए है—

लोभादिककी प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद समूहतै दूसरे स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके दूणे, तीसरे स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके तिगुणे, चौथे स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके चौगुणे ऐसैं क्रमतै जितने अपने स्पर्धकनिका प्रमाण तितनेगुणे अत स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाण हो है सो च्यारयो कषायनिका समान है। बहुरि मध्यविषै भी अनत वर्गणा च्यारयो कषायनिकी परस्पर समान हो है सो कथन आगै करिए है ॥४७२॥

जे हीणा अवहारे रूवा तेहिं गुणित्तु पुव्वफल।
हीणवहारेणहिये अद्ध (लब्धं) पुव्व फलेणहिय ॥४७३॥

ये हीना अवहारे रूपा तै गुणित पूर्वफल।
हीनावहारेणाधिके अर्धं (लब्धं) पूर्वं फलेनाधिकं ॥४७३॥

स० च—इस गाथाका अर्थरूप व्याख्यान क्षपणसारविषै किछू कीया नाही अर मेरे जाननेमे भी स्पष्ट न आया, तातै इहा न लिख्या है। बुद्धिमान होइ यथार्थ याका अर्थ होइ सो जानियो ॥४७३॥

कोहदुसेसेणवहिदकोहे तक्कडय तु माणतिए।
रूपहिय सगकडयहिदकोहादी समाणसला ॥४७४॥

क्रोधद्विशेषेणावहितक्रोधे तत्काडक तु मानत्रयं।
रूपाधिक स्वककाडकहितक्रोधादि समानशलाका ॥४७४॥

स० च—क्रोधद्विक अवशेष कहिए क्रोधके स्पर्धकनिका प्रमाणकौ मानके स्पर्धकनिका प्रमाणविषै घटाए जो अवशेष रहै ताका भाग क्रोधके स्पर्धकनिका प्रमाणकौ दीए जो प्रमाण आवै ताका नाम क्रोधकाडक है। बहुरि मानत्रिकविषै एक एक अधिक है सो क्रोधकाडकतै एक अधिकका नाम मानकाडक है। यातै एक अधिकका नाम मायाकाडक है। यातै एक अधिकका नाम लोभकाडक है।

अकसदृष्टिकरि जैसै क्रोधके स्पर्धक अठारह, ते मानके इकईस स्पर्धकविषै घटाए अवशेष तीन, ताका भाग क्रोधके अठारह स्पर्धककौं दीए क्रोधकाडकका प्रमाण छह यातै एक एक अधिक मान माया लोभके काडकनिका प्रमाण क्रमतै सात आठ नव रूप जानने। बहुरि अपने अपने काडकनिका भाग अपने अपने स्पर्धकनिका प्रमाणकौं दीए जो नाना काडकनिका प्रमाण

आगै तितनी वर्गणानिके अविभागप्रतिच्छेद च्यारयो कषायनिके परस्पर समान हो है। कैसे ? सो कहिए है—

क्रोधादिककी प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणातैं द्वितीय तृतीयादि स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अविभाग प्रतिच्छेद क्रमतै दूणे तिगुणे इत्यादि होइ अपना अपना काडकका जेता प्रमाण तितना स्थान भए जो स्पर्धक ताकी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद च्यारयो कपायनिके समान हो हैं। बहुरि तहातै ऊपरि प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके जेते अविभागप्रतिच्छेद तितने तितने एक एक स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषे बधते अपने अपने काडकप्रमाण स्थान भए जो स्पर्धक ताकी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद समान हो हैं। या प्रकार अपना अपना काडकमात्र स्पर्धक भए च्यारयो कषायनिकी वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनिकी समानता होतै नाना काडक-प्रमाण वर्गणानिविषै समानता हो है।

अकसदृष्टिकरि जैसें क्रोध मान माया लोभके प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अविभाग-प्रतिच्छेद क्रमतै चौरासो बहत्तरि तरेसठि छप्पन हैं। बहुरि ताके ऊपरि एक एक स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै तितने-तितने बधते अपना काडकमात्र छह सात आठ नव स्पर्धक भए तहा प्रथम वर्गणाके अविभाग प्रतिच्छेद च्यारयो कषायनिके परस्पर समान पाचसै च्यारि है। बहुरि ताके ऊपरि तैसें ही बधती होतै अपने काडकमात्र स्पर्धक भए तहा प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद च्यारयो कषायनिके समान एक हजार आठ हो हैं। बहुरि ताके ऊपरि तैसें ही बधती होतै अपने काडक-मात्र स्थान भए तहा प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद च्यारयो कषायनिके समान पन्द्रहसौ बारह हो हैं ऐसै अपना अपना काडकका भाग अपना अपना स्पर्धक प्रमाणकौ दीए नाना काडक का प्रमाण तीन पाया सो तीन ही स्पर्धकनिकी प्रथम वर्गणा परस्पर समानरूप है और वर्गणानिका समानरूप नाही है।

क्रोध	मान	माया	लाभ
१५१२	१५१२	१५१२	१५१२
०	०	०	०
०	०	०	०
१०९२	१०८०	१०७१	१०६४
१००८	१००८	१००८	१००८
०	०	०	०
०	०	०	०
५८८	५७६	५६७	५६०
५०४	५०४	५०४	५०४
४२०	४३२	४४१	४४८
३३६	३६०	३७८	३९२
२५२	२८८	३१५	३३६
१६८	२१६	२५२	२८०
८४	१४४	१८९	२२४
	७२	१२६	१६८
		६३	११२
			५६

स० च—सामान्य आलापकरि अभव्य राशितै अनतगुणा वा सिद्धराशिके अनतवे भागमात्र हीनाधिकरूप जो अपना अपना स्पर्धकनिका जो प्रमाण ताका भाग अपनी अपनी उत्कृष्ट वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाणकौ दीए अपनो अपनी आदि वर्गणाका प्रमाण आवै है।

अकसदृष्टिकरि जैसैं च्यारचो कषायनिके समान प्रमाण लीए उत्कृष्ट वर्गणाके अविभाग-प्रतिच्छेद पन्द्रहसौ बारह १५१२, इनकौ लोभ माया मान क्रोधके स्पर्धकनिका प्रमाण क्रमतैं सत्ताईस चौबीस इकईस अठारह तिनका भाग दीए लोभको जघन्य वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद छप्पन ५६, मायाकीके तरेसठि ६३, मानकीके बहत्तरि ७२, क्रोधकीके चौरासी ८४ हो है। अथवा अपनी अपनी जघन्य वर्गणानिके अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाणकौ अपनी-अपनी स्पर्धकनिका प्रमाणकरि गुणै अपनी अपनी उत्कृष्ट वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाण हो है। कैसै ? सो कहिए है—

लोभादिककी प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद समूहतै दूसरे स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके दूणे, तीसरे स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके तिगुणे, चौथे स्पर्धककी प्रथम वगणाके चौगुणे ऐसैं क्रमतैं जितने अपने स्पर्धकनिका प्रमाण तितनेगुणे अत स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाण हो है सो च्यारचो कषायनिका समान है। बहुरि मध्यविषै भी अनत वर्गणा च्यारचो कषायनिकी परस्पर समान हो है सो कथन आगैं करिए है ॥४७२॥

जे हीणा अवहारे रूवा तेहिं गुणित्तु पुव्वफल।
हीणवहारेणहिंये अद्ध (लब्धं) पुव्व फलेणहियं ॥४७३॥

ये हीना अवहारे रूपा तैं गुणित पूर्वफल।
हीनावहारेणाधिके अर्धं (लब्धं) पूर्वं फलेनाधिक ॥४७३॥

स० च—इस गाथाका अर्थरूप व्याख्यान क्षपणसारविषै किछू कीया नाही अर मेरे जाननेमे भी स्पष्ट न आया, तातै इहा न लिख्या है। बुद्धिमान होइ यथार्थ याका अर्थ होइ सो जानियो ॥४७३॥

कोहदुसेसेणवहिदकोहे तक्कडय तु माणतिए।
रूपहिय सगकडयहिदकोहादी समाणसला ॥४७४॥

क्रोधद्विशेषेणावहितक्रोधे तत्काडक तु मानत्रय।
रूपाधिक स्वककाडकहितक्रोधादि समानशलाका ॥४७४॥

स० च—क्रोधद्विक अवशेष कहिए क्रोधके स्पर्धकनिका प्रमाणकौ मानके स्पर्धकनिका प्रमाणविषै घटाए जो अवशेष रहै ताका भाग क्रोधके स्पर्धकनिका प्रमाणकौ दीए जो प्रमाण आवै ताका नाम क्रोधकाडक है। बहुरि मानत्रिकविषै एक एक अधिक है सो क्रोधकाडकतै एक अधिकका नाम मानकाडक है। यातै एक अधिकका नाम मायाकाडक है। यातै एक अधिकका नाम लोभकाडक है।

अकसदृष्टिकरि जैसै क्रोधके स्पर्धक अठारह, ते मानके इकईस स्पर्धकविषैं घटाए अवशेष तीन, ताका भाग क्रोधके अठारह स्पर्धककौ दीए क्रोधकाडकका प्रमाण छह यातै एक एक अधिक मान माया लोभके काडकनिका प्रमाण क्रमतै सात आठ नव रूप जानने। बहुरि अपने अपने काडकनिका भाग अपने अपने स्पर्धकनिका प्रमाणकौं दीए जो नाना काडकनिका प्रमाण

तस्मिन् अपूर्वस्पर्धकपूर्वस्यादितोऽनंतिममुदेति ।
बधो हि लतानंतिमभाग इति अपूर्वस्पर्धकत ॥४७६॥

स० च०—तिस अश्वकर्णकरणका प्रथम समयविषै उदय निषेकसम्बन्धी सर्व अपूर्व स्पर्धक अर पूर्व स्पर्धककी आदितै लगाय ताका अनन्तवा भाग उदय हो है। कैसैं ? सो कहिए है—

अपूर्व स्पर्धकरूप परिणया है अनुभाग सत्त्व जाका ऐसा जो कर्म ताका असख्यातवा भाग मात्र प्रदेशनिकौ अपकर्षण करि उदीरणा कर्ता जो जीव ताकै वर्तमान समयविषै उदय आवने योग्य जो उदय निषेक तीहि विषै सर्व ही अनुभागसत्व अपूर्ण स्पर्धकस्वरूप है। तातै ते तौ सर्व ही स्पर्धक उदीरणारूप हैं अर उदय निषेकतै ऊपरिके निषेक तिनके समान अनुभाग शक्ति धरैं जे अपूर्ण स्पर्धक ते उदय न हो है। तातै ते अनुदीर्णरूप है। ऐसैं केई अपूर्ण स्पर्धकनिका उदय अर केई अपूर्व स्पर्धकनिका अनुदय जानना। बहुरि पूर्व स्पर्धकनिविषै भी जे प्रथम स्थितिविषै लता दारुरूप स्पर्धक हैं तिनविषै लता समान अनुभागका अनन्तवा भागमात्र स्पर्धक उदय हो है सो उदीरणारूप है। बहुरि उदय निषेकतै ऊपरिके निषेकनिके समान शक्ति लीए लता भागका अनन्तवा भाग उदय न हो है सो अनुदीर्णरूप है। बहुरि ताके उपरिवर्ती लताभागका अनन्त बहुभागनिविषै बहुभाग अर समस्त दारु भाग है सो उदयकौ न प्राप्त हो है। ऐसैं पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणातै लगाय अनन्तवा भाग उदयरूप हो है। अन्य अनुदयरूप है। ऐसैं अश्वकर्णकरणका प्रथम समयविषै उदय होनेका स्वरूप कह्या। बहुरि इस समयविषै सज्वलनका बन्ध हो है। तहा पूर्वै लता भागके अनन्तवें भागमात्र बन्ध होता था सो अब तातैं अनन्तवे भागमात्र अपूर्व स्पर्धक का प्रथम स्पर्धकतैं लगाय अन्त स्पर्धक पर्यन्त अर पूर्व स्पर्धकनिका लता भागका अनन्तवा भाग पर्यन्त जे स्पर्धक तिनरूप होइ बधरूप स्पर्धक परिणमैं हैं। इहा उदयरूप अनुभागतै बन्धरूप अनुभाग अनन्तगुणा घटता है। ऐसा जानना ॥४७६॥

विशेष—सामान्य नियम यह है कि अश्वकर्णकरणके प्रथम समयमे कितने ही अपूर्व स्पर्धक उदीर्ण रहते हैं और कितने ही अपूर्व स्पर्धक अनुदीर्ण रहते हैं। तथा पूर्व स्पर्धकोमे भी आदिसे लेकर अनन्तवे प्रमाण स्पर्धक उदीर्ण रहते हैं और अनुदीर्ण रहते है तथा इनसे ऊपर अनन्त बहुभागप्रमाण स्पर्धक अनुदीर्ण रहते हैं। विशेष स्पष्टीकरण इस प्रकार है—सज्वलन कषायके अनन्तवें भागप्रमाण जो पूर्व स्पर्धक लता समान अनुभागको लिये हुए हैं तथा उनसे नीचे जो समस्त अपूर्व स्पर्धक हैं उनकी उस रूपसे उदय प्रवृत्ति होती है, उपरिम स्पर्धकस्वरूपसे उदय प्रवृत्ति नही होती। आशय यह है कि उसी समय अपूर्व स्पर्धकरूपसे परिणमन करनेवाले अनुभागसत्कर्मसे प्रदेशपुजके असख्यातवे भागका अपकर्षण कर उदीरणा करनेवाले जीवके उदयस्थितिके भीतर सभी अपूर्व स्पर्धकरूपसे अनुभागसत्कर्म उपलब्ध होता है। इस प्रकार उपलब्ध होनेपर ही अपूर्व स्पर्धक उदीर्ण होते है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपूर्व स्पर्धकरूपसे परिणत हुआ सत्कर्म पूरे रूपसे उदयको प्राप्त नही हुआ है, क्योकि अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी सदृश धनवाले (समान अनुभागवाले) परमाणुओके प्रत्येक स्पर्धकके प्रति स्थित होनेपर उनमेसे कितने ही उदयको प्राप्त होते हैं और शेष तदवस्थ रहते हैं, इसीलिये यह स्वीकार किया गया है कि कितने ही अपूर्व स्पर्धक उदीर्ण होते हैं और कितने ही अनुदीर्ण रहते हैं। जो पूर्व स्पर्धक हैं वे भी आदिसे लेकर अनन्तवें भागप्रमाण उदीर्ण और

ऐसैं इहा अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाण कह्या है सो विवक्षित वर्गणाविषै जो एक परमाणूरूप वर्ग तीहिंविषै जेते अविभागप्रतिच्छेद पाइए ताकी अपेक्षा कथन कीया है। सर्व वर्गनिका समूहरूप वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाण यथा सम्भव जानना ॥४७४॥

ताहे दव्ववहारो पदेसगुणहाणिफड्ढयवहारो।
पल्लस्स पढममूल असखगुणियक्कमा होंति ॥४७५॥

तत्र द्रव्यावहार प्रदेशगुणहानिस्पर्धकावहार.।
पल्यस्य प्रथममूल असख्यगुणितक्रमा भवति ॥४७५॥

स० च०—अश्वकर्णकरणका प्रथम समयविषै अपूव स्पर्धक करनेका द्रव्य ग्रहण करनेके अर्थि सर्व द्रव्यकौ जिस अपकर्षण भागहारका भाग दीया तातैं प्रदेशसबधी एक गुणहानिविषै जो स्पर्धकनिका प्रमाण ताकौ अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण ल्यावनेके अर्थि जाका भाग दीया सो असख्यातगुणा है। तातै पल्यका प्रथम वर्गमूल असख्यातगुणा है। इहा ऐसा प्रयोजन जानना—

जो अपकर्षण भागहारतें असख्यातगुणा वा पल्यका प्रथम वर्गमूलके असख्यातवे भागमात्र जो भागहार ताका भाग अनुभागसम्बन्धी एक गुणहानिकी स्पर्धक शलाकाकौ दीए प्रथम समय विषैं कीए जे अपूर्व स्पर्धक तिनका प्रमाण आवै है ॥४७५॥

विशेष—इस गाथाका आशय यह है कि अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारसे असख्यातगुणे और पल्योपमके प्रथम वर्गमूलसे असख्यातगुणे हीन पल्योपमके असख्यातवे भागसे एक प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरप्रमाण स्पर्धकोके भाजित करने पर जो लब्ध आवे उतने क्रोधादि सज्वलनोके अपूर्व स्पर्धक होते हैं। खुलासा इस प्रकार है—अश्वकर्णकरणको करनेवाला जीव प्रथम समयमे जिस प्रदेशपुजका अपकर्षण करता है उससे विवक्षित कर्मसे समस्त द्रव्यके भाजित करने पर अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारसज्ञावाला जो भागहार प्राप्त होता है वह सबसे स्तोक है। इससे अपूर्व स्पर्धकोकी अपेक्षा प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरका जो भागहार है वह असख्यातगुणा है। किन्तु यह पल्योपमके प्रथम वर्गमूलके असख्यातवे भागप्रमाण है, इसलिये पूर्वोक्त भागहारसे पल्योपमके प्रथम वर्गमूलको असख्यातगुणा कहा है। अत यह सिद्ध हुआ कि पल्योपमके प्रथम वर्गमूलके असख्यातवे भागप्रमाण भागहारके द्वारा एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तरप्रमाण स्पर्धकोके भाजित करनेपर जो लब्ध आवे उतने क्रोधादि सज्वलनोके अपूर्व स्पर्धकोको प्रथम समयमे रचता है।

ताहे अपुव्वफड्ढयपुव्वस्सादीदणतिमभुदेदि।
बधो हु लताणतिमभागो त्ति अपुव्वफड्ढयदो[2] ॥४७६॥

१ पढमसमयअस्सकण्णकरणकारयस्स ज पदेसग्गमोकड्डिज्जदि तेण कम्मस्स अवहारकालो थोवो। अपुव्वफद्दयेहिं पदेसगुणहाणिट्ठाणतरस्स अवहारकालो असखेज्जगुणो। पलिदोवमपढमवग्गमूलमसखेज्जगुण। —क० चु० पृ० ७९२।

२ पढमसमए चेव अपुव्वफद्दयाणि उदिण्णाणि च अणुदिण्णाणि च। अपुव्वफद्दयाण पि आदीदो अणतभागो उदिण्णो च अणुदिण्णो च। उवरि अणता भागा अणुदिण्णा। वधेण णिव्वत्तिज्जति अपुव्वफद्दय पढममादिं कादूण जाव लदासमाणफद्दयाणमणतभागो त्ति। —क० चु० पृ० ७९३—७९४।

तस्मिन् अपूर्वस्पर्धकपूर्वस्यादितोऽनतिममुदेति ।
बधो हि लतानतिमभाग इति अपूर्वस्पर्धकत ॥४७६॥

स० च०—तिस अश्वकर्णकरणका प्रथम समयविषै उदय निषेकसम्बन्धी सर्व अपूर्व स्पर्धक अर पूर्व स्पर्धककी आदितै लगाय ताका अनन्तवा भाग उदय हो है। कैसे ? सो कहिए है—

अपूर्व स्पर्धकरूप परिणया है अनुभाग सत्त्व जाका ऐसा जो कर्म ताका असख्यातवा भाग मात्र प्रदेशनिकौ अपकर्षण करि उदीरणा कर्ता जो जीव ताकै वर्तमान समयविषै उदय आवने योग्य जो उदय निषेक तीहि विषै सर्व ही अनुभागसत्व अपूर्व स्पर्धकस्वरूप है। तातै ते ती सर्व ही स्पर्धक उदीरणारूप है अर उदय निषेकतै ऊपरिके निषेक तिनके समान अनुभाग शक्ति धरैं जे अपूर्व स्पर्धक ते उदय न हो है। तातै ते अनुदीर्णरूप है। ऐसै केई अपूर्व स्पर्धकनिका उदय अर केई अपूर्व स्पर्धकनिका अनुदय जानना। बहुरि पूर्व स्पर्धकनिविषै भी जे प्रथम स्थितिविषै लता दारुरूप स्पर्धक हैं तिनविषै लता समान अनुभागका अनन्तवा भागमात्र स्पर्धक उदय हो है सो उदीरणारूप है। बहुरि उदय निषेकतै ऊपरिके निषेकनिके समान शक्ति लीए लता भागका अनन्तवा भाग उदय न हो है सो अनुदीर्णरूप है। बहुरि ताके उपरिवर्ती लताभागका अनन्त बहुभागनिविषै बहुभाग अर समस्त दारु भाग है सो उदयकौ न प्राप्त हो है। ऐसै पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणातै लगाय अनन्तवा भाग उदयरूप हो है। अन्य अनुदयरूप है। ऐसै अश्वकर्णकरणका प्रथम समयविषै उदय होनेका स्वरूप कह्या। बहुरि इस समयविषै सज्वलनका बन्ध हो है। तहा पूर्वै लता भागके अनन्तवे भागमात्र बन्ध होता था सो अब तातैं अनन्तवे भागमात्र अपूर्व स्पर्धक का प्रथम स्पर्धकतै लगाय अन्त स्पर्धक पर्यन्त अर पूर्व स्पर्धकनिका लता भागका अनन्तवा भाग पर्यन्त जे स्पर्धक तिनरूप होइ बधरूप स्पर्धक परिणमै है। इहा उदयरूप अनुभागतै बन्धरूप अनुभाग अनन्तगुणा घटता है। ऐसा जानना ॥४७६॥

विशेष—सामान्य नियम यह है कि अश्वकर्णकरणके प्रथम समयमे कितने ही अपूर्व स्पर्धक उदीर्ण रहते हैं और कितने ही अपूर्व स्पर्धक अनुदीर्ण रहते है। तथा पूर्व स्पर्धकोमे भी आदिसे लेकर अनन्तवें प्रमाण स्पर्धक उदीर्ण रहते हैं और अनुदीर्ण रहते हैं तथा इनसे ऊपर अनन्त बहुभागप्रमाण स्पर्धक अनुदीर्ण रहते है। विशेष स्पष्टीकरण इस प्रकार है—सज्वलन कषायके अनन्तवे भागप्रमाण जो पूर्व स्पर्धक लता समान अनुभागको लिये हुए है तथा उनसे नीचे जो समस्त अपूर्व स्पर्धक हैं उनकी उस रूपसे उदय प्रवृत्ति होती है, उपरिम स्पर्धकस्वरूपसे उदय प्रवृत्ति नही होती। आशय यह है कि उसी समय अपूर्व स्पर्धकरूपसे परिणमन करनेवाले अनुभागसत्कर्मसे प्रदेशपूजके असख्यातवे भागका अपकर्षण कर उदीरणा करनेवाले जीवके उदयस्थितिके भीतर सभी अपूर्व स्पर्धकरूपसे अनुभाग-सत्कर्म उपलब्ध होता है। इस प्रकार उपलब्ध होनेपर ही अपूर्व स्पर्धक उदीर्ण होते हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपूर्व स्पर्धकरूपसे परिणत हुआ सत्कर्म पूरे रूपसे उदयको प्राप्त नही हुआ है, क्योकि अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी सदृश धनवाले (समान अनुभागवाले) परमाणुओके प्रत्येक स्पर्धकके प्रति स्थित होनेपर उनमेसे कितने ही उदयको प्राप्त होते है और शेष तदवस्थ रहते है, इसीलिये यह स्वीकार किया गया है कि कितने ही अपूर्व स्पर्धक उदीर्ण होते है और कितने ही अनुदीर्ण रहते हैं। जो पूर्व स्पर्धक हैं वे भी आदिसे लेकर अनन्तवें भागप्रमाण उदीर्ण और

अनुदीर्ण होते हैं ऐसा समझना चाहिये। लतासमान पूर्ण स्पर्धकोके अनन्तवे भागसे उपरिम अनन्त बहुभागप्रमाण पूर्व स्पर्धक अनुदीर्ण ही रहते है, क्योकि उनका अपने रूपसे उदयमे प्रवेश नही होता। बन्धके विषयमे ऐसा समझना चाहिये कि लतासमान स्पर्धकोकी पहले जो अनन्तवे भागरूपसे प्रवृत्ति होती थी, अब वह उससे अनन्त गुणहानिरूपसे बहुत घटकर अपूर्व स्पर्धकोके प्रथम स्पर्धकसे लेकर लतासमान स्पर्धकोके अनन्तवे भागके प्राप्त होने तक इनकी स्पर्धकरूपसे प्रवृत्ति होती है। इतनी विशेषता है कि पहले जो उदयरूपसे प्रवृत्त स्पर्धक कह आये है उनसे य बन्धरूप स्पर्धक अनन्तगुणे हीन होते है।

ऐसै यहु कही सो अश्वकर्णकरण कालका प्रथम समयसम्बन्धी प्ररूपणा जाननी

विदियादिसु समयेसु वि पढम व अपुव्वफड्डयाण विही।
णवरि असखगुणूण णिव्वत्तयदि पडिमसय[1] ॥४७७॥

द्वितीयादिषु समयेषु अपि प्रथम व अपूर्वस्पर्धकाना विधि।
नवरि अ सख्यगुणोन निर्वर्तयति तु प्रतिसमयम् ॥४७७॥

स० च०—अश्वकर्णकरणका द्वितीयादि समयनिविषै अपूर्व स्पर्धकनिका विधान ताके प्रथम समयवत् जानना। तहा विशेष है सो कहिए है—इस गाथाविषैं लिखनेवालेने अक्षर केते इक न लिखे तातै आधा गाथाका अर्थ न जानि इहा नाही लिख्या है ॥४७७॥

विशेष—अश्वकर्णकरणके दूसरे समयमे जो स्थितिकाडक अनुभागकाडक और स्थिति-बन्धापसरण प्रथम समयमे प्रवृत्त थे वे ही यहा प्रवृत्त रहते है। मात्र अनुभागबन्ध प्रथम समयके अनुभागबन्धसे अनन्तगुणा हीन होता है, क्योकि प्रत्येक समयमे होनेवाली अनन्तगुणी विशुद्धिके माहात्म्यवश क्षपकश्रेणिमे अप्रशस्त कर्मोका अनुभागबन्ध प्रत्येक समयमे अनन्तगुणा हीन होता जाता है। यहाँ अन्य प्रकार सम्भव नही। तथा प्रति समय विशुद्धिमे उत्तरोत्तर अनन्तगुणी विशुद्धि होने पर गुणश्रेणिरचना भी प्रति समय असख्यातगुणे प्रदेशोको लिए हुए होती है। साथ ही प्रथम समयमे जो एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तरके असख्यातवे भागप्रमाण अपूर्व स्पर्धकोकी रचना की थी, उन्हें पुन समान अनुभागरूपसे रचता है। तथा उनसे नीचे उनसे असख्यातगुणे हीन प्रमाणवाले अन्य अपूर्व स्पर्धकोको भी रचता है यह इस गाथाका तात्पर्य है।

णवफड्डयाण करण पडिसमय एवमेव णवरि तु।
दव्वमसखेज्जगुण फड्डयमाण असखगुणहीण[2] ॥४७८॥

---

१ णवरि य सखगुणूण पडिसमय। मु०। एत्तो विदियसमए त चेव अणुभागखडय, सो चेव ट्ठिदिवधो। अणुभागवधो अणतगुणहीणो। गुणसेढी असखेज्जगुणा। अपुव्वफद्दयाणि जाणि पढमसमए णिव्वत्तिदाणि विदियसमए ताणि च णिव्वत्तयदि, अण्णाणि च अपुव्वाणि तदो असखेज्जगुणहीणाणि। —क० चु० पृ० ७९४।

२ पढमसमए अपुव्वफद्दयाणि णिव्वत्तिदाणि बहुआणि। विदियसमए जाणि अपुव्वाणि अपुव्व-फद्दयाणि कदाणि ताणि असखेज्जगुणहीणाणि। तदियसमए अपुव्वाणि अपुव्वफद्दयाणि कदाणि ताणि असखेज्ज-गुणहीणाणि। एव समए समए जाणि अपुव्वाणि अपुव्वफद्दयाणि कदाणि ताणि असखेज्जगुणहीणाणि। गुणगारो पलिदोवमवग्गमूलस्स असखेज्जदभागो। —क० चु० पृ० ७९५।

नवस्पर्धकाना करणं प्रतिसमय एवमेव नवरि तु ।
द्रव्यमसंख्येयगुण स्पर्धकमान असख्यगुणहीनम् ॥४७८॥

स० च०—ऐसैं ही प्रथम समयवत् समय समय प्रति नवीन स्पर्धकनिकौ करै है। विशेष इतना–तहा द्रव्य तौ क्रमतै असख्यातगुणा बधता अपकर्षण करिए है। अर नवीन स्पर्धक कीए तिनका प्रमाण असख्यातगुणा घटता हो है। सोई कहिए है—

अश्वकर्णकरणका द्वितीय समयविषै जो प्रथम समयविषैं पूर्व स्पर्धकनिके द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ एक भागमात्र द्रव्य अपकर्षण किया था तातैं असख्यातगुणा द्रव्यकौ, पूर्वस्पर्धक अर प्रथम समयविषैं कीए अपूर्वस्पर्धक तिनका जो द्रव्य था तातै अपकर्षण करि, तिस द्रव्यका असख्यातवा भागमात्र द्रव्यकरि तौ इहा नवीन अपूर्व स्पर्धक करिए है। ते प्रथम समयविषै कीए अपूर्व स्पर्धक तिनकी प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके नीचै घटता अनुभाग लीए करिए है।

तिस प्रथम वर्गणातैं एक एक वर्गणा प्रति एक एक विशेषमात्र द्रव्यकी अधिकता द्वितीय समयसबधी नवीन अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणापर्यंत जाननी। तहा पूर्वोक्त प्रकार समपट्टिका धन चयधन जोडै जेता द्रव्य होइ तितने द्रव्यकरि तौ इहा नवीन स्पर्धक बनै। बहुरि अपकर्षण कीया द्रव्य विषै इतना द्रव्य घटाए जो अवशेष द्रव्य रह्या ताकौ द्वितीय समयविषैं कीने नवीन अपूर्व स्पर्धक अर प्रथम समयविषै कीने अपूर्व स्पर्धक अर पूर्व स्पर्धक तिनि का एक गोपुच्छ भया तिसविषै चय घटता क्रमकरि सर्वत्र देना। बहुरि प्रथम समयविषै कीए अपूर्व स्पर्धक तिनिके प्रमाणतैं द्वितीय समयविषैं कीए नवीन अपूर्व स्पर्धक तिनका प्रमाण असख्यातगुणा घटता जानना। बहुरि अश्वकर्णकरणका तृतीय समयविषैं जो द्वितीय समयविषैं द्रव्य अपकर्षण कीया तातै असख्यातगुणा द्रव्य पूर्व स्पर्धक अर प्रथम द्वितीय समयविषै कीए अपूर्व स्पर्धक तिनके द्रव्यतै अपकर्षण करिए है ताके असख्यातवा भागमात्र द्रव्यकरि तौ द्वितीय समयविषै कीए स्पर्धक तिनके नीचैं इहा नवीन अपूर्व स्पर्धक करिए है अर अवशेष द्रव्यकौ तृतीय द्वितीय प्रथम समय-सबधी अपूर्व स्पर्धकनिका अर पूर्व स्पर्धकनिका एक गोपुच्छ भया ताविषै क्रमकरि निक्षेपण करिए है। इहा द्वितीय समयविषै कीए नवीन अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाणतै तृतीय समयविषै कीए नवीन अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण असख्यातगुणा घटता जानना। ऐसैं ही अपूर्व स्पर्धककरण कालका अत समय पर्यंत समय समय प्रति असख्यातगुणा द्रव्यकौ अपकर्षण करै है अर नवीन अपूर्व स्पर्धक नीचैं नीचै हो हैं तिनका प्रमाण असख्यातगुणा घटता हो हैं। अन्य विशेप जैसैं प्रथम समयविषैं कह्या है तैसैं जानना ॥४७८॥

विशेष—प्रत्येक समयमे जो नये अपूर्व स्पर्धक किये जाते है वे उत्तरोत्तर असख्यातगुणे हीन होते हैं। इतने हीन कैसे होते हैं इसका स्पष्टीकरण करते हुए बतलाया है कि वर्गमूलके पल्यो-पमके असख्यातवें भागप्रमाण गुणकार है, इससे दूसरे समयमे जो अपूर्व स्पर्धक किये जाते है उन्हें गुणित करनेपर पहले समयमे किये जानेवाले अपूर्व स्पर्धकोका प्रमाण प्राप्त होता है, अत सिद्ध हुआ कि प्रथम समयमे किये जानेवाले अपूर्व स्पर्धकोसे दूसरे समयमे किये जानेवाले अपूर्व स्पर्धक असख्यातगुणे हीन होते है। यहाँ पल्योपमके असख्यातवें भागसे पल्योपमके वर्गमूलका असख्यातवाँ भाग लिया गया है। इसी प्रकार आगे भी तृतीयादि समयोमे किये जानेवाले अपूर्व

स्पर्धक उत्तरोत्तर असख्यातगुणे हीन होते हैं ऐसा यहाँ समझना चाहिये। किन्तु उत्तरोत्तर जो नूतन अपूर्व स्पर्धक किये जाते हैं उनमे गुणश्रेणि रचनाको देखते हुए निक्षिप्त होनेवाला द्रव्य उत्तरोत्तर असख्यातगुणा होता है यह स्पष्ट ही है।

पढमादिसु दिज्जकम तक्कालजफड्डयाण चरिमो त्ति।
हीणकम से काले असखगुणहीणय तु हीणकम[1] ॥४७९॥

प्रथमादिषु देयक्रम तत्कालजस्पर्धकाना चरम इति।
हीनक्रमं स्वे काले असंख्यगुणहीनक तु हीनक्रमम् ॥४७९॥

स० च०—अपकर्षण कीया द्रव्यकौं जैसै दीया तैसैं जो अनुक्रम सो देय क्रम कहिए सो ऐसैं हैं—

अपूर्व स्पर्धककरण कालका प्रथमादि समयनिविषै तिस काल कीए स्पर्धकनिका अतपर्यंत तौ विशेष हीन क्रम लीए अर ताके अनतरि असख्यातगुणा घटता ताके ऊपरि विशेष हीन क्रम लीए जानना। सो कहिए है—

प्रथम समयविषै अपकर्षण कीया द्रव्य तिसविषै तिस समय कीए अपूर्व स्पर्धक तिनकी प्रथम वर्गणाविषै बहुत द्रव्य दीजिए है। तातै तिनकी द्वितीय वर्गणा आदि अतवर्गणा पर्यंत चय घटता क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। बहुरि अपूर्व स्पर्धककी अत वर्गणाविषै दीया द्रव्यतै पूर्व स्पर्धकनिकी प्रथम वर्गणाविषै असख्यातगुणा घटता द्रव्य दीजिए है। तातै ताके ऊपरि तिनकी अत वर्गणा पर्यंत चय घटता क्रमकरि दीजिये है। बहुरि द्वितीय समयविषै अपकर्षण कीया द्रव्य तिसविषै तिस समय कीए नवीन अपूर्व स्पर्धक तिनकी प्रथम वर्गणा विषैं बहुत द्रव्य अर द्वितीयादि अत वर्गणा पर्यंत चय घटता क्रमकरि द्रव्य दीजिए है। बहुरि तिसकी अत वर्गणाके द्रव्यतै प्रथम समयविषैं कीए अपूर्व स्पर्धकनिकी प्रथम वर्गणाविषैं असख्यातगुणा घटता द्रव्य दीजिए है। तातै ताके ऊपरि तिनकी अत वर्गणा पर्यंत वा ताके ऊपरि पूर्व स्पर्धकनिकी प्रथमादि अत वर्गणा पर्यंत चय घटता क्रमकरि दीजिए है। बहुरि तृतीय समयविषै नवीन बने अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै बहुत द्रव्य, ा के उपरि तिनकी अत वर्गणा पर्यंत चय घटता क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। ताके ऊपरि द्वितीय समयविषै कीए अपूर्व स्पर्धकनिकी प्रथम वर्गणाविषै असख्यातगुणा घटता द्रव्य दीजिए है। ताके उपरि तिनकी अत वर्गणा पर्यंत वा प्रथम समयविषै कीए अपूर्व स्पर्धककी प्रथमादि अत वर्गणा पर्यंत वा पूर्व स्पर्धकनिकी प्रथमादि अत वर्गणा पर्यंत चय घटता क्रम लीए

---

१ पढमसमए णिव्वत्तिज्जमाणगेसु पुव्वफद्दयहितो ओकड्डियूण पदेसग्गमपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए वहुअ देदि। विदियाए वग्गणाए विसेसहीण देदि। एवमणतराणतरेण गतूण चरिमाए अपुव्वफद्दयवग्गणाए विसेसहीण देदि। तदो चरिमादो अपुव्वफद्दयवग्गणादो पढमस्स पुव्वफद्दयस्स आदिवग्गणाए असखेज्ज-गुणहीण देदि। तदो विदियफद्दयवग्गणाए विसेसहीण देदि। सेसासु सव्वासु पुव्वफद्दयवग्गणासु विसेसहीण देदि।—क० चु० पृ० ७९२-७९३। विदियसमए अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए पदेसग्ग वहुअ देदि। विदिय-समए विसेसहीण। एवमणतरोपणिधाए विसेसहीण दिज्जदि। ताव जाव जाणि विदियसमए अपुव्वाणि अपुव्वफद्दयाणि कदाणि। तदो चरिमादो वग्गादो पढमसमए जाणि अपुव्वफद्दयाणि कदाणि तेसिमादिवग्गणाए दिज्जदि पदेसग्गमसखेज्जगुणहीण। आदि—क० चु० पृ० ७९४।

द्रव्य दीजिए है। ऐसैं ही चतुर्थादि समयनिविषै भी जानना। इहा विवक्षित समयविषै जे अपूर्व स्पर्धक बनैं ते तौ अपकर्षण कीया द्रव्यविषै केते इक द्रव्यतै बनैं अर तिनके ऊपरि जे स्पर्धक हैं ते पूर्वै थे ही। बहुरि तिन सबनिविषै अवशेष द्रव्य विभाग करि दीया तातै निज कालविषै बने अपूर्व स्पर्धककी अत वर्गणाविषै दीया द्रव्यतै अनतर वर्गणाविषै असख्यातगुणा घटता द्रव्य दीया कह्या, अन्यत्र चय घटता क्रम लीए कह्या है ॥४७९॥

पढमादिसु दिस्सकम तक्कालजफड्ढयाण चरिमो त्ति।
हीणकम से काले हीण हीण कम तत्तो[1] ॥४८०॥

प्रथमादिषु दृश्यक्रम तत्कालजस्पर्धकाना चरम इति।
हीनक्रम स्वे काले हीन हीन क्रम तत ॥४८०॥

स० च०—अपूर्वस्पर्धक करणकालका प्रथमादि समयनिविषै दृश्य कहिए देखनेमे आवै ऐसा परमाणूनिका प्रमाण ताका अनुक्रम सो दृश्यक्रम कहिए। सो कैसै है ? सो कहिए है—

तहाँ तिस विवक्षित समयविषै बने अपूर्व स्पर्धक तिनका तो जो देय द्रव्य सो ही दृश्य द्रव्य है। जातै तिस समय अपकर्षण कीया द्रव्य हीतै तिनकी रचना भई है। सो तिनकी प्रथम वर्गणातै लगाय अत वर्गणापर्यंत विशेष घटता क्रम लीए दृश्य द्रव्य है। बहुरि तिस अत वर्गणाके द्रव्यतै ताके ऊपरि जो वर्गणा तिसका भी दृश्य द्रव्य एक चयमात्र घटता है जातै दीया द्रव्य तौ तिस अत वर्गणा द्रव्यतै असख्यातगुणा घटता है तथापि दीया द्रव्य अर पूर्वै वाका सत्तारूप पुरातन द्रव्य दोऊ मिलि तिसतै एक चयमात्र घटता दृश्य द्रव्य हो है। बहुरि ताके उपरि पूर्व-स्पर्धककी अत वर्गणा पर्यंत दीया द्रव्य अर पूर्व द्रव्य मिलि क्रमतै चय प्रमाण करि घटता दृश्य द्रव्य जानना। ऐसैं विवक्षित समयविषै कीए अपूर्वस्पर्धक तिनकी प्रथम वर्गणातै लगाय पूर्व-स्पर्धकनिकी अत वर्गणा पर्यंत एक गोपुच्छ भया तातै तहाँ चय घटता क्रम लीए ही दृश्य द्रव्य जानना।

ऐसैं अश्वकर्णकरणकालका प्रथमादि समयनिविषै यावत् प्रथम अनुभाग काडकका घात न होइ तावत् स्थितिकाडक अनुभाग काडक स्थितिबध अनुभाग सत्त्व तौ तिन समयनिविषै समान रूप है। अर अप्रशस्तकर्मनिका अनुभागबध समय-समय अनतगुणा घटता है। अर गुणश्रेणि विषै समय-समय असख्यातगुणा द्रव्यकौ अपकर्षणकरि दीजिए है। अर अतीत समयसबधी स्पर्धकनिके नीचै अपूर्व शक्ति लीए नवीन अपूर्व स्पर्धक समय-समय प्रति करिए है ॥४८०॥

ऐसैं प्रथम अनुभाग काडकका घात भए कहा हो है ? सो कहैं है—

पढमाणुभागखडे पडिदे अणुभागसतकम्म तु।
लोभादणतगुणिद उवरिं पि अणतगुणिदकम[2] ॥४८१॥

---

१ तम्हि चेव पढमसमए ज दिस्सदि पदेसग्ग तमपुव्वफद्दयाण पढमसमए वग्गणाए वहुअ। पुव्व-फद्दयआदिवग्गणाए विसेसहीण। जहा लोहस्स तहा मायाए माणस्स कोहस्स च।—क० चु० पृ० ७९३। विदिय-समए अपुव्वफद्दएसु वा पुव्वफद्दएसु वा एक्केक्किस्से वग्गणाए ज दिस्सदि पदेसग्ग तमपुव्वफद्दयआदि-वग्गणाए वहुअ। सेसासु अणतरोपणिधाए सव्वासु विसेसहीण।—क० चु० पृ० ७९४–७९५।

२ तदो से काले अणुभागसतकम्मे णाणत्त। त जहा—लोभे अणुभागसतकम्म थोव। मायाए अणु-

प्रथमानुभागखडे पतिते अनुभागसत्त्वकर्म तु ।
लोभादनतगुणितमुपर्यपि अनतगुणितक्रमं ॥४८१॥

स० च० —ऐसैं प्रथम अनुभागखण्डका पतन होतैं लोभतैं अनतगुणा क्रम लीए अनुभाग सत्त्वरूप कर्म हो है । तहाँ लोभका स्तोक, तातैं मायाका अनतगुणा, तातैं मानका अनतगुणा, तातैं क्रोधका अनतगुणा अनुभाग सत्त्व हो है ऐसा जानना, जातैं तहां अश्वकर्ण क्रियाकरि प्रथम अनुभागकाडकका घात भए पीछैं अवशेष अनुभाग सत्त्व हो है । बहुरि यातैं उपरिवर्ती अश्वकर्ण कालके सर्व समयनिकेविषै भी ऐसैं ही अल्पबहुत्वका क्रम लीए अनुभाग सत्त्व जानना ॥४८१॥

आदोलस्स य पढमे णिव्वत्तिदअपुव्वफड्ढयाणि बहू ।
पडिसमय पलिदोवममूलासखेज्जभागभजियकमा[1] ॥४८२॥

आदोलस्य च प्रथमे निर्वर्तितापूर्वस्पर्धकानि बहूनि ।
प्रतिसमयं पलिदोपममूलासख्येयभागभजितक्रम ॥४८२॥

स० च०—आदोल कहिए अश्वकर्ण ताका प्रथम समयविषै जे अपूर्व स्पर्धक कीए ते बहुत है । पीछे समय समय प्रति पल्यके वर्गमूलका असख्यातवा भागकरि भाजित क्रम लीए जानने । प्रथम समयविषै कीए अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाणकौ पल्यके वर्गमूलका असख्यातवा भागका भाग दीए द्वितीय समयविषै नवीन कीए अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण हो है । याकौ पल्य वर्गमूलका असख्यातवा भागका भाग दीए तृतीय समयविषै कीए नवीन अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण हो है । ऐसैं ही अपूर्व स्पर्धककरण कालका अत समय पर्यंत क्रम जानना ॥४८२॥

आदोलस्स य चरिमे अपुव्वादिमवग्गणाविभागादो ।
दोचढिमादीणादी चढिदव्वा मेत्तणतगुणा[2] ॥४८३॥

आदोलस्य च चरमेऽपूर्वादिमवर्गणाविभागात् ।
द्विचटितादीनामादि चटितव्या मात्रानतगुणा ॥४८३॥

स० च०—ऐसैं क्रमतैं अपूर्व स्पर्धक होतैं अपूर्व स्पर्धक सहित अश्वकर्ण कालका अत समयविषै सर्व अपूर्व स्पर्धक भए । तहा प्रथम समय स्पर्धकको आदि वर्गणाविषै अनुभागके अविभाग-प्रतिच्छेद स्तोक हैं । तातैं दूसरे स्पर्धककी आदि वर्गणाविषै दूणे, तीसरे स्पर्धककी आदि वर्गणाविषै तिगुणे ऐसैं जेथवा स्पर्धक होइ तिसकी आदि वर्गणाविषै तितनेगुणे होइ सो अनतगुणा पर्यंत चढना । अत स्पर्धककी आदि वर्गणाविषै अनतगुणे हो है ऐसा जानना । इहा विवक्षित वर्गणाकी

भागसतकम्ममणतगुण । माणस्स अणुभागसतकम्ममणतगुण । कोहस्स अणुभागसतकम्ममणतगुण ।
—क० चु० पृ० ७९५ ।

१ क० चु० पृ० ७९६ ।

२ चरिमसमए लोभस्स अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए अविभागपलिच्छेदग्ग थोव । विदियस्स अपुव्वफद्दयस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्ग दुगुण । तदियस्स अपुव्वफद्दयस्स आदिवग्गणाए अविभाग-पलिच्छेदग्ग तिगुण । एव मायाए माणस्स कोहस्स च । —क० चु० पृ० ७९६ ।

एक-एक परमाणूविषै पाइए हैं जे अविभागप्रतिच्छेद तिनिकी अपेक्षा अल्पबहुत्व कह्या है। सर्व परमाणू अपेक्षा किंचित् ऊन दूणा तिगुणा क्रम जानना। ऐसैं पूर्वे ही यतिवृषभ आचार्यकरि प्रतिपादन कीया है। च्यार्यो कषायनिविषै ऐसैं ही क्रम जानना ॥४८३॥

आदोलस्स य पढमे रसखंडे पाडिदे अपुव्वादो।
कोहादी अहियकमा पदेसगुणहाणिफड्ढया तत्तो ॥४८४॥
होदि असंखेज्जगुणं इगिफड्ढयवग्गणा अणंतगुणा।
तत्तो अणंतगुणिदा कोहस्स अपुव्वफड्ढयाणं च ॥४८५॥
माणादीणहियकमा लोभगपुव्वं च वग्गणा तेसिं।
कोहो त्ति य अट्ठ पदा अणंतगुणिदक्कमा होंति ॥४८६॥

आदोलस्य च प्रथमे रसखंडे पातिते अपूर्वात्।
क्रोधात् अधिकक्रमाः प्रदेशगुणहानिस्पर्धकास्ततः ॥४८४॥
भवति असंख्येयगुणं एकस्पर्धकवर्गणा अनंतगुणा।
ततः अनंतगुणितं क्रोधस्य अपूर्वस्पर्धकानां च ॥४८५॥
मानादीनामधिकक्रमं लोभगपूर्वं च वर्गणा तेषां।
क्रोध इति च अष्ट पदानि अनंतगुणितक्रमाणि भवंति ॥४८६॥

स० च०—अश्वकर्णका प्रथम समय अनुभागकांडकका घात होत संतै भए ऐसे क्रोधके अपूर्व स्पर्धक स्तोक हैं। तातैं मानके अपूर्व स्पर्धक विशेष अधिक है। तातैं मायाके अपूर्व स्पर्धक विशेष अधिक है। तातैं लोभके अपूर्व स्पर्धक विशेष अधिक हैं। बहुरि तातैं प्रदेशसम्बन्धी एक गुणहानिविषै स्पर्धकनिका प्रमाण असंख्यातगुणा है, जातैं याकौ असंख्यातका भाग दीए अपूर्व-स्पर्धकनिका प्रमाण आवै है। तातैं अपूर्वस्पर्धकनिका प्रमाणकौ असंख्यात करि गुणैं याका प्रमाण भया कह्या। बहुरि तातैं एक स्पर्धकविषै पाइए जे वर्गणा तिनका प्रमाण अनंतगुणा है, जातैं पूर्व वा अपूर्व स्पर्धकविषै वर्गणा अभव्य राशितैं अनन्तगुणी वा सिद्धराशिके अनन्तवें भागमात्र पाइए है। तातैं अनन्तका गुणकार संभवै है। बहुरि तिनतैं क्रोधके सर्व अपूर्व स्पर्धक-निकी वर्गणाका प्रमाण अनन्तगुणा है, जातैं एक स्पर्धककी वर्गणाका प्रमाण कह्या ताकौ क्रोधके अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण प्रदेशसम्बन्धी गुणहानिविषै स्पर्धकनिके प्रमाणके असंख्यातवा भागमात्र प्रमाणकरि गुणैं यहु हो है। बहुरि तातैं मानके सर्व अपूर्व स्पर्धकनिकी वर्गणा विशेष अधिक हैं। तिनतैं मायाके सर्व अपूर्व स्पर्धकनिकी वर्गणा विशेष अधिक है। तातैं लोभके सर्व अपूर्व स्पर्धकनिकी वर्गणा विशेष अधिक है। इहां इनके अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण विशेष अधिक क्रम लीए है। तातैं तिनकी वर्गणानिका प्रमाण भी विशेष अधिक क्रम लीए कह्या। बहुरि लोभके अपूर्व स्पर्धकनिकी वर्गणानिका प्रमाणतैं लोभके पूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण अनन्तगुणा है, जातैं लोभके अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण प्रदेशगुणहानिकी स्पर्धकशलाकाके असंख्यातवें भागमात्र, ताकौ एक स्पर्धककी वर्गणाका प्रमाणकरि गुणैं लोभके अपूर्व स्पर्धकनिकी वर्गणानिका प्रमाण हो

१ क० चु० पृ० ७९६–७९७।

है अर एक गुणहानिकी स्पर्धक शलाकाकौ प्रदेशसम्बन्धी नाना गुणहानिकरि गुणै लोभके पूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण हो है। सो इहा एक स्पर्धककी वर्गणाका प्रमाणतै नाना गुणहानिका प्रमाण अनन्तगुणा है। तातै अनन्तका गुणकार सभवै है। बहुरि तातै लोभके पूर्व स्पर्धकनिकी वर्गणाका प्रमाण अनतगुणा है, जातै ताकौ एक स्पर्धककी वर्गणा शलाकाकरि गुणै यहु हो है। बहुरि तिसतै मायाके पूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण अनतगुणा है, जातै प्रथम अनुभागकाडकका घात कीए पीछै अनुभागसत्त्व अश्वकर्णके आकार भया है तातै अनतगुणापना सभवै है। बहुरि तातै मायाके पूर्व स्पर्धकनिकी वर्गणाका प्रमाण अनतगुणा है। तातै मानके पूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण अनतगुणा है। तातै मानके पूर्व स्पर्धकनिकी वर्गणानिका प्रमाण अनतगुणा है। तातै क्रोधके पूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण अनतगुणा है। तातै क्रोधके पूर्व स्पर्धकनिकी वर्गणानिका प्रमाण अनन्तगुणा है। इनविषै कारण पूर्वोक्त हो है। ऐसै अल्पबहुत्व जानना ॥४८४–४८६॥

रसठिदिखडाणेव सखेज्जसहस्सगाणि गतूण।
तत्थ य अपुव्वफड्डयकरणविही णिट्ठिदा होई[1] ॥४८७॥

रसस्थितिखंडानामेवं सख्येयसहस्रकाणि गत्वा।
तत्र च अपूर्वस्पर्धककरणविधिर्निष्ठिता भवति ॥४८७॥

स० च—ऐसै क्रमकरि हजारौ अनुभागकाडक गए एक स्थितिकाडक होइ, ऐसै सख्यात हजार स्थितिकाडक जाविषै होइ ऐसा अन्तर्मुहूर्तमात्र अश्वकर्णकरणका काल भए तहा अपूर्व स्पर्धक करणकी विधि है सो निष्ठिता कहिए पूर्ण भई। भावार्थ यहु—अपूर्व स्पर्धक क्रिया सहित अश्वकर्णका काल समाप्त भया। आगै कृष्टिक्रिया सहित अश्वकर्ण क्रिया होसी ऐसा यतिवृषभ आचार्यका तात्पर्य जानना ॥४८७॥

हयकण्णकरणचरिमे सजलणाणट्ठवस्सठिदिबधो।
वस्साण सखेज्जसहस्साणि हवति सेसाण[2] ॥४८८॥

हयकर्णकरणचरमे सज्वलनानामष्टवर्षस्थितिबंध।
वर्षाणा सख्येयसहस्राणि भवति शेषाणा ॥४८८॥

स० च०—अपूर्व स्पर्धक सहित अश्वकर्णकरण कालका अन्त समयविषै सज्वलन चतुष्टयका आठ वर्षमात्र स्थितिबध है। ताका प्रथम समयविषै सोलह वर्षमात्र था सो एक एक स्थिति बधापसरणविषै अन्तर्मुहूर्तमात्र घाटि इहा अवशेष आठ वर्षमात्र रहै है। बहुरि अवशेष कर्मनिका स्थितिबध सख्यात हजार वर्षप्रमाण है। ताका प्रथम समयविषै सख्यात हजार वर्षमात्र था सो एक एक स्थिति बधापसरण विषै सख्यातगुणा घादि सख्यात हजार स्थितिबधापसरणनिकरि घटया परंतु आलापकरि इतना ही कहिए है ॥४८८॥

---

१ एवमतोमुहुत्तमस्सकण्णकरण। —क० चु० पृ० ७९७।

२ अस्सकण्णकरणस्स चरिमसमए सजलणाण ट्ठिदिबधो अट्ठवस्साणि। सेसाण कम्माण ट्ठिदिबधो सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। —क० चु० पृ० ७९७।

ठिदिसत्तमघादीणं असंखवस्साण होंति घादीणं ।
वस्साणं संखेज्जसहस्साणि हवंति णियमेण[1] ॥४८९॥

स्थितिसत्त्वमघातिनामसंख्यवर्षा भवति घातिनाम् ।
वर्षाणां संख्येयसहस्राणि भवति नियमेन ॥४८९॥

स० च—बहुरि तिस ही अंत समयविषैं अघातिया नाम गोत्र वेदनीय तिनका स्थितिसत्त्व असंख्यात वर्षमात्र है। प्रथम समयविषै असंख्यात वर्षमात्र था सो असंख्यातगुणा घटता क्रम लीए संख्यात हजार स्थिति कांडकनिकरि घट्या तथापि आलापकरि इतना ही कहिए। बहुरि च्यारि घातिया कर्मनिका स्थितिसत्त्व संख्यात वर्षमात्र है। प्रथम समयविषैं भी संख्यात वर्षमात्र था सो संख्यातगुणा घटता क्रम लीए संख्यात हजार स्थिति कांडकनि करि घट्या परंतु सामान्य आलाप करि इतना ही कहिए है ॥४८९॥

इति अपूर्वस्पर्धक—अधिकार समाप्त।

•

स० च०—अब अपूर्व स्पर्धक करनेका कालके अनंतरि समयतैं लगाय कृष्टिकरणका काल है। जिस करणतैं कर्मका अनुभाग कृष कहिये हीन करिए सो सार्थक नाम कृष्टि जानना, सो दोय प्रकार है—बादर कृष्टि १ सूक्ष्म कृष्टि १। तहां संज्वलन कषायनिके पूर्व अपूर्व स्पर्धक जैसैं ईंटनिकी पंक्ति होइ तैसैं अनुभागका एक एक अविभाग प्रतिच्छेद बधती लीए परमाणूनिका समूहरूप जो वर्गणा तिनके समूहरूप हैं। तिनके अनंतगुणा घटता अनुभाग होनेकरि स्थूल स्थूल खण्ड करिए सो बादर कृष्टिकरण है अर तिन स्थूल खण्डनिका अनंतगुणा घटता अनुभागरूप करि सूक्ष्म सूक्ष्म खण्ड करिए सो सूक्ष्मकृष्टिकरण है तहां बादर कृष्टिकरणका काल प्रमाण जाननेकौं सूत्र कहै हैं—

छक्कम्मे संछुद्धे कोहे मोहस्स वेदगद्धा जा ।
तस्स य पढमतिभागो होदि हु हयकण्णकरणद्धा ॥४९०॥

षट्कर्मणि संक्षुब्धे क्रोधे क्रोधस्य वेदकाद्धा या ।
तस्य च प्रथमत्रिभागः भवति हि हयकर्णकरणाद्धा ॥४९०॥

विदियतिभागो किट्टीकरणद्धा किट्टिवेदगद्धा हु ।
तदियतिभागो किट्टीकरणो हयकण्णकरणं च ॥४९१॥

---

१ णामा-गोद-वेदणीयाणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जाणि वस्साणि । चउण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि । —क० चु० पृ० ७९७ ।

२ छसु कम्मेसु संछुद्धेसु जो कोधवेदगद्धा तिस्से कोधवेदगद्धाए तिण्णि भागा । जो तत्थ पढमतिभागो अस्सकण्णकरणद्धा, विदियो तिभागो किट्टीकरणद्धा, तदियतिभागो किट्टीवेदगद्धा । —क० चु० पृ०७९७ ।

द्वितीयत्रिभाग कृष्टिकरणाद्धा कृष्टिवेदकाद्धा हि ।
तृतीयत्रिभाग कृष्टिकरणं हयकर्णकरणं च ।।४९१।।

स० च—छह नोकषायनिकौ सज्वलन क्रोधविषै सक्रमणकरि नाश करनेके अनतरि समयतै लगाय जो अतमु हूर्तमात्र क्रोधबेदक काल है ताकौं सख्यातका भाग देइ तहा बहुभागके समानरूप तीन भाग करिए। बहुरि अवशेष एक भागकौ सख्यातका भाग देइ तहा बहुभागकौं प्रथम त्रिभागविषै जोडिए। बहुरि अवशेष एक भागकौ सख्यातका भाग देइ तहा बहुभाग दूसरा त्रिभागविषै जोडिए। अवशेष एक भाग तीसरा त्रिभागविषै जोडिए ऐसैं करतैं पहिला त्रिभाग माधिक भया, सो तौ अपूर्व स्पर्धकसहित अश्वकर्णकरणका काल हैं सो पूर्वै होइ गया। बहुरि दूसरा त्रिभाग किंचित् ऊन है सो च्यारि सज्वलन कषायनिका कृष्टि करनेका काल है सो अब वर्तै है। बहुरि तोसरा त्रिभाग किंचिदून है सो क्रोधकृष्टिका वेदककाल है सो आगें प्रवर्तिसी[1]। बहुरि इस कृष्टिकरण कालविषैं भी अश्वकर्णकरण पाइए हैं। जातै इहा भी अश्वकर्णके आकारि सज्वलन कषायनिका अनुभागसत्त्व वा अनुभागकाडक वर्तै है। तातै इहा कृष्टिसहित अश्वकर्णकरण पाइए है ऐसा जानना। तहा प्रथम समयविषै एक स्थितिबधापसरण होने करि सज्वलनचतुष्कका अतमु हूर्त घाटि आठ वर्षप्रमाण अन्य कर्मनिका पूर्व स्थिति बधतै सख्यातगुणा घटता सख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबध हो है[2]। बहुरि एक स्थितिकाडक घात होने करि घातिया च्यारि कर्मनिका पूर्व स्थिति सत्त्वतै सख्यात बहुभागमात्र घटता सख्यात हजार वर्षमात्र अर तीन अघातियानिका पूर्व स्थिति सत्त्वतै असख्यात बहुभागमात्र घटता असख्यात वर्षमात्र स्थितिसत्त्व पाइए है[3] ।।४९१।।

कोहादीण सगसगपुव्वापुव्वगयफड्ढयेहिंतो ।
ओकड्डिदूण दव्व ताण किट्टी करोदि कमे[4] ।।४९२।।

क्रोधादीनां स्वकस्वकपूर्वापूर्वगतस्पर्धकान् ।
अपकर्षयित्वा द्रव्य तेषा कृष्टि करोति क्रमेण ।।४९२।।

स० च—सज्वलन क्रोध मान माया लोभनिका अपना अपना पूर्व अपूर्वस्पर्धकरूप जो सर्व द्रव्य ताकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ एक भागमात्र द्रव्य ग्रहि यथाक्रम लीए तिन क्रोधादिकनिकी कृष्टि करै है ।।४९२।।

---

१ एदाओ तिण्णि वि अद्धाओ सरिसीओ ण होंति। किंतु पढमतिभागो बहुओ, विदियतिभागो विसेसहीणो, तदियतिभागो विमेसहीणो त्ति घेत्तव्वो। जयध प्र पृ ६९६०–६१।

२ सजलणाणमेयट्ठिदिबधो अतोमुहुत्तूणट्ठवस्समेत्तो। सेसाण कम्माण पुव्विल्लट्ठिदिबधादो सखेज्जगुणहीणो। क चु प ७९८।

३ अण्ण ट्ठिदिखडय चदुण्ह घादिकम्माण सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। णामा-गोद-वेदणीयाणमसखेज्जा भागा। क चु पृ ७९८।

४ पढमसमयकिट्टीकारगो कोधादो पुव्वफद्दएहिंतो च अपुव्वफद्दएहिंतो च पदेसग्गमोकड्डियूण कोहकिट्टीओ करेदि। माणादो ओकड्डियूण माणकिट्टीओ करेदि। मायादो ओकड्डियूण मायाकिट्टीओ करेदि। लोभादो ओकड्डियूण लोभकिट्टीओ करेदि।—क चु पृ ७९८।

ओक्कट्टिददव्वस्स य पल्लासखेज्जभागबहुभागो ।
बादरकिट्टिणिबद्धो फड्ढयगे सेसइगिभागो ॥४९३॥

अपकर्षितद्रव्यस्य च पल्यासख्येयभागबहुभाग ।
बादरकृष्टिनिबद्ध स्पर्धके शेषैकभन्ग ॥४९३॥

स० च०—अपकर्षण कीया जो द्रव्य ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभागमात्र द्रव्य तौ बादर कृष्टिसम्बन्धी है । याकरि बादर कृष्टि निपजै है । अवशेष एक भाग-मात्र द्रव्य पूर्व-अपूर्व स्पर्धकनिविषै निक्षेपण करिए है ॥४९३॥

किट्टीयो इगिफड्ढयवग्गणसखाणणतभागो दु[1] ।
एक्केक्कम्हि कसाये तिग तिग अहवा अणता वा[2] ॥४९४॥

कृष्टय एकस्पर्धकवर्गणासंख्यानामनतभागस्तु ।
एकैकस्मिन् कषाये त्रिकत्रिकमथवा अनंता वा ॥४९४॥

स० च०—एक एक अविभागप्रतिच्छेद बधनेका क्रम लीए प्रत्येक सिद्धराशिका अनतवा भागमात्र परमाणूका समूहरूप ईंटनिकी पक्तिके आकार जे वर्गणा, ते एक स्पर्धकविषै, एक गुणहानिविषै जेते स्पर्धक पाइए तिनतैं अनतगुणी पाईए है । सो ऐसै एकस्पर्धकविषै जो वर्गणानिका प्रमाण ताकौ वर्गणाशलाका कहिए । ताके अनतवे भागमात्र सर्व कृष्टिनिका प्रमाण है । अनुभागका स्तोक बहुत अपेक्षा कृष्टिनिका विभाग करिए है । तहा एक एक कषायविषै सग्रह कृष्टि तीन-तीन हैं । बहुरि एक एक सग्रह कृष्टिविषै अतर कृष्टि अनत हैं । तहा नीचैं ही नीचैं लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टि है तिसविषै अन्तर कृष्टि अनत हैं । ताके ऊपरि लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टि है । तहा अन्तर कृष्टि अनन्त हैं । ताके ऊपरि लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टि है । तहा अन्तर कृष्टि अनत है । ऐसै ही क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टि पर्यंत अवशेष नव सग्रह कृष्टि जाननी । तहा एक एक सग्रह कृष्टिविषै अनत अनत अन्तर कृष्टि जाननी । एक प्रकार बधता गुणकाररूप जो अन्तर कृष्टि तिनके समूह ही का नाम सग्रह कृष्टि जानना[3] ॥४९४॥

अकसायकसायाण दव्वस्स विभजणं जहा होई ।
किट्टिस्स तहेव हवे कोहो अकसायपडिबद्धं ॥४९५॥

---

१ एदाओ सव्वाओ वि चउव्विहाओ किट्टीओ एयफद्दयवग्गणाणमणतभागो पगणणादो । क० चु० पृ० ७९८ ।

२ एत्थ ताव कोहादिसजलणकिट्टीओ पादेक्क तीहिं पविभागाहिं रचेदव्वाओ । एव रचणाए कदाए एक्केक्कस्स कसायस्स तिण्णि तिण्णि सगहकिट्टीओ । जयध० पृ० ६९६५ ।

३ लोहस्स जहण्णिया किट्टी थोवा । विदिया किट्टि अणतगुणा । एवमणतगुणाए सेढीए जाव पढमाए सगहकिट्टीए चरिमकिट्टि त्ति । तदो विदियाए सगहकिट्टीए जहण्णिया किट्टी अणतगुणा । एत्थ गुणगारो वारसण्ह पि सगहकिट्टीण सत्थाणगुणगारेहि अणतगुणो । विदियाए सगहकिट्टीए सो चेव कमो जो पढमाए सगहकिट्टीए । तदो पुण विदियाए च तदियाए च सगहकिट्टीणमतर तारिस चेव । क० चु० पृ० ७९८-७९९ ।

अकषायकषायाणां द्रव्यस्य विभंजन यथा भवति ।
कृष्टेस्तथैव भवेत् क्रोध अकषायप्रतिबद्ध ॥४९५॥

स० च०—अकषाय कहिए नोकषाय अर कषाय इनिके द्रव्यका विभाग जैसें हो है तैसैं ही इन कृष्टिनिके प्रमाणका विभाग जानना। बहुरि नोकषायसम्बन्धी कृष्टि है ते क्रोधकी कृष्टिनिविषै जोडनी, जातैं नोकषायनिका सर्व द्रव्य सज्वलन क्रोधरूप सक्रमण भया है। तहा द्रव्य विभाग कैसैं हो है ? सो कहिए है—

पूर्वें अपूर्व स्पर्धककरण कालविषै जैसें अनुक्रम कहि आए हैं तिस अनुक्रम करि सर्व चारित्रमोहका द्रव्य साधिक द्व्यर्ध गुणहानिगुणित प्रथम वर्गणामात्र है। तहा लोभका द्रव्य साधिक आठवा भागमात्र, मायाका किंचिदून आठवा भागमात्र, मानका किंचिदून आठवा भागमात्र, क्रोधका किंचिदून आठवा भागमात्र अर याहीमे किंचिदून द्वितीय भागमात्र नोकषायका द्रव्य मिलाए क्रोधका द्रव्य पाचगुणा किंचिदून आठवा भागमात्र हो है। बहुरि इस अपने अपने द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए अपना अपना अपकर्षण कीया द्रव्यका प्रमाण आवै है। याकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए एक भागमात्र द्रव्य पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिविषै देना है। ताकौ जुदा राखि अवशेष बहुभागनिविषै क्रोधविषैं जो नोकषायनिका द्रव्य मिल्या ताकौ जुदा कीए जो अपना अपना द्रव्य रह्या ताकौं जुदा जुदा पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा वहुभागनिके समानरूप तीन पुज करने। बहुरि अवशेष एक भागकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभाग प्रथम पुजविषैं जोडने। बहुरि अवशेष एक भागकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभाग द्वितीय पुजविषै जोडने। अवशेष एक भाग तृतीय पुजविषैं जोडना। ऐसैं साधिक त्रिभागमात्र प्रथम पुज सो अपनी अपनी प्रथम सग्रह कृष्टिका द्रव्य है। किंचिदून त्रिभागमात्र द्वितीय पुज सो अपनी अपनी द्वितीय सग्रह कृष्टिका द्रव्य है। किंचिदून त्रिभागमात्र तृतीय पुज सो अपनी अपनी तृतीय संग्रह कृष्टिका द्रव्य है। बहुरि नोकषायसम्बधी सर्व द्रव्यकौ क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टि विषै मिलावना। या प्रकार कृष्टिसम्बन्धी सर्व द्रव्यको चौईसका भाग दीए क्रोधकी तृतीय कृष्टिका तेरह भागमात्र अर अन्य ग्यारह कृष्टिनिका एक एक भागमात्र द्रव्य हो है। तहा लोभकी कृष्टिविषै साधिकपना अन्यत्र किंचित् न्यूनपना यथासम्भव जानना। ऐसै द्रव्यका विभाग कीया। बहुरि याही प्रकार अब कृष्टिके प्रमाणका विभाग करिए है—

एक स्पर्धककी वर्गणा शलाकाके अनतवे भागमात्र सर्व कृष्टिनिका प्रमाण है। ताकौ आवलीके असख्यातवा भागका भाग दीए तहा बहुभागके समान दोय भागकरि अवशेष एक भागकौ प्रथम समान भागविषै मिलाए साधिक आधा तौ कषायनिके द्रव्यकरि कीया कृष्टिनिका प्रमाण हो है अर द्वितीय समान भागमात्र किंचिदून आधा नोकषायनिके द्रव्यकरि कीया कृष्टिनिका प्रमाण हो है। वहुरि कपायसम्बन्धी कृष्टिनिके प्रमाणकौ आवलीका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा एक भाग जुदा राखि वहुभागनिके समानरूप च्यारि भाग करने। वहुरि अवशेष एक भागकौ आवलीका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा वहुभाग प्रथम समान भागविषै मिलाए साधिक चौथा भागमात्र लोभकी कृष्टिनिका प्रमाण हो है। वहुरि अवशेप एक भागकौ आवलीका असख्यातवा भागका भाग दीए तहा वहुभाग दूसरे समान भागविषै मिलाए किंचिदून चतुर्थ भागमात्र मायाकी कृष्टिनिका प्रमाण हो है। वहुरि अवशेप एक भागकौ आवलीका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा वहुभाग तीसरा समान भागविषै मिलाए किंचिदून चौथा

भागमात्र क्रोधकी कृष्टिनिका प्रमाण हो है। बहुरि अवशेष एक भाग चौथा समान भागविषै मिलाए किंचिदून चौथा भागमात्र मानकी कृष्टिनिका प्रमाण हो है। बहुरि नोकषायनि-सम्बन्धी कृष्टिनिका प्रमाण क्रोधकी कृष्टिनिका प्रमाणविषै जोडना। ऐसैं सर्व कृष्टिनिका प्रमाणकौं आठका भाग देइ तहा एक एक भागमात्र लोभ माया मानकी, पाच भागमात्र क्रोधकी कृष्टिनिका प्रमाण हो है। तहा लोभकीविषै साधिकपना अन्यकीविषै किंचित् न्यूनपना यथासम्भव जानना। बहुरि क्रोधकी कृष्टिनिविषै नोकषायसम्बन्धी कृष्टि जुदो कोए अवशेष अपना अपना कृष्टिनिका जो प्रमाण ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभागके समान तीन भाग करिए। बहुरि अवशेष एक भागकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभाग प्रथम समान भागविषै मिलाए अपना अपना प्रथम सग्रह कृष्टिका आयाम साधिक हो है। बहुरि अवशेष एक भागकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभाग द्वितीय समान भागविषै जोडैं अपना अपना द्वितीय सग्रह कृष्टिका आयाम किंचित् ऊन हो है। बहुरि अवशेष एक भाग तीसरा समान भागविषै जोडै अपनी अपनी तृतीय सग्रह कृष्टिका आयाम किंचित् ऊन हो है। बहुरि नोकषाय सम्बन्धी कृष्टिनिका प्रमाण ताकौ क्रोधकी तृतीय सग्रहकृष्टिका आयामविषै जोडना। ऐसैं सर्व कृष्टिनिका प्रमाणकौ चौईसका भाग देइ तहा क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिका आयाम तेरह भाग-मात्र अन्य ग्यारह सग्रह कृष्टिनिका आयाम एक भागमात्र हो है। तहा लोभकीविषै साधिकपना अन्यत्र किंचित् न्यूनपना यथासम्भव जानना। इहा सग्रह कृष्टिविषै जितनी अन्तर कृष्टिका प्रमाण होइ तीहिका नाम सग्रह कृष्टिका आयाम है ॥४९५॥

पढमादिसगहाओ पल्लासखेज्जभागहीणाओ ।
कोहस्स तदीयाए अकसायाण तु किट्टीओ[1] ॥४९६॥

प्रथमादिसग्रहा पल्यासख्येयभागहीना ।
क्रोधस्य तृतीयायामकषायाना तु कृष्टय ॥४९६॥

स० च०—पूर्वोक्त प्रकार करि प्रथम आदि बारह सग्रह कृष्टिनिका आयाम है सो पल्यका असख्यातवा भागका क्रमकरि घटता जानना। बहुरि नोकषायसम्बन्धी सर्व कृष्टितै क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिविषैं प्राप्त जानना ॥४९६॥

कोहस्स य माणस्स य मायालोभोदएण चडिदस्स ।
बारस णव छत्तिण्णि य सगहकिट्टी कमे होंति[2] ॥४९७॥

क्रोधस्य च मानस्य च मायालोभोदयेन चटितस्य ।
द्वादश नव षट् त्रीणि च सग्रहकृष्टय क्रमेण भवंति ॥४९७॥

स० च—सज्वलन क्रोधका उदय सहित जो जीव श्रेणी चढै ताकै तो च्यारयो कषायनिकी बारह सग्रह कृष्टि हो है। बहुरि मानका उदय सहित श्रेणी चढै ताकै क्रोधका पहिले ही सक्रमण करि क्षय होइ, तातै अवशेष तीन कषायनिकी नव सग्रह कृष्टि हो है। बहुरि मायाका उदय सहित जो श्रेणी चढै ताकैं क्रोध मानका पहलैं ही सक्रमणकरि क्षय होइ, तातै दोय कषायनिकी छह सग्रह कृष्टि हो है। बहुरि लोभका उदय सहित जो श्रेणी चढै ताकै क्रोध मान मायाका

१ क० गा० १६३। २ क० गा० १६५।

पहलैही सक्रमण करि क्षय होइ, तातै एक लोभ हीकी तीन सग्रह कृष्टि हो हैं। तहा जेती सग्रह कृप्टि होइ तिनहीविषै कृष्टि प्रमाणका विभाग यथासभव जानना ॥४९७॥

संगहगे एक्केक्के अतरकिट्टी हवदि हु अणता ।
लोभादि अणतगुणा कोहादि अणतगुणहीणा[1] ॥४९८॥

संग्रहके एकैकस्मिन् अतरकृष्टि भवति हि अनंता ।
लोभादौ अनंतगुणा क्रोधादौ अनंतगुणहीना ॥४९८॥

स० च—एक एक सग्रह कृष्टि विषैं अन्तर कृष्टि अनत पाइए है जाते अनती कृष्टिनिके समूहका ही नाम सग्रह कृष्टि है। बहुरि तहा कृष्टिनिविषै लोभतै लगाय क्रमतै अनतगुणा वधता अर क्रोधतै लगाय क्रमतैं अनतगुणा घटता अनुभाग पाइए है। सोई कहिए है—

लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टि विषै जो जघन्य कृष्टि है सो स्तोक है। सर्वतैं मद अनुभाग सहित है। तातै ताकी दूसरी कृष्टि अनतगुणो हैं। अभव्यराशितै अनतगुणा वा सिद्ध राशिके अनतवे भागमात्र अनतप्रमाण लीए जो गुणकार तिस करि जघन्य कृष्टिके अनुभागकौ गुणै द्वितीय कृष्टिका अनुभाग हो है। ऐसै ही आगे भी जानना। बहुरि दूसरी कृष्टितै तीसरी कृष्टि अनतगुणी है। ऐसै ही प्रथम सग्रह कृष्टिकी अत कृष्टि पर्यंत अनुक्रम जानना। बहुरि तिस प्रथम सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टितै द्वितीय सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टि अनतगुणी है, सो इहा गुणकारका प्रमाण अन्य प्रकार हो है, जातैं इहा परस्थान गुणकार भया सो सर्व स्वस्थान गुणकारनितै यहु अनतगुणा है, सो ऐसै गुणकारका भेद ही करि सग्रह कृष्टिनिका भेद भया है। कृष्टिनिका अनुभाग विषै गुणकारका प्रमाण यावत् एक प्रकार बधता भया तावत् सो ही सग्रह कृष्टि कही। बहुरि जहा नीचली कृष्टितैं ऊपरली कृष्टिका गुणकार अन्य प्रकार भया तहातै अन्य सग्रह कृष्टि कही है। सो इस कथनकौ आगै व्यक्त करि दिखाइऐगा। बहुरि द्वितीय कृष्टिकी जघन्य कृष्टितै ताकी द्वितीय कृष्टि अनतगुणी है। ऐसै अन्त कृष्टि पर्यंत क्रम जानना। बहुरि द्वितीय कृष्टिकी अन्त कृष्टितै तृतीय कृष्टिकी जघन्य कृष्टि अनतगुणी हैं। इहा परस्थान गुणकार जानना। तातैं ताकी द्वितीयादि अत पर्यंत कृष्टि क्रमतैं अनतगुणी है। ऐसैं लोभ की तीन सग्रह कृष्टि भईं। बहुरि लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टितै मायाकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी है। वहुरि लोभवत् क्रम जानना। वहुरि मायाकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टितैं मानकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी है। वहुरि पूर्वोक्त प्रकार क्रम जानना। बहुरि मानकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टितै क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी है। वहुरि पूर्वोक्त प्रकार क्रम जानना। वहुरि क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टितैं अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणा अनन्तगुणी है, जातैं कृष्टिका अनुभागतैं स्पर्धकका अनुभाग अनन्तगुणापनेकौ लीए हैं। इहा गुणकार अनुभाग अपेक्षा ही जानना ॥४९८॥

विशेप—यहाँ क्रोधादिकसे प्रत्येककी सग्रह कृष्टिया तीन तीन रचनी चाहिये। इस प्रकार एक-एक कपायकी तीन-तीन सग्रह कृष्टियाँ होती हैं। इस प्रकार कुल सग्रह कृष्टियाँ वारह हो जाती हैं। उनमेंसे सबसे नीचे लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टि होती है। उसकी अवान्तर कृष्टियाँ अनन्त होती हैं। उसके ऊपर लोभकी दूसरी सग्रह कृष्टि होती है। उसकी भी अवान्तर कृष्टियाँ

1 धवला पु० ६, पृ० ३७५–३७६।

अनन्त होती है। उसके ऊपर लोभकी तीसरी सग्रह कृष्टि होती है। उसकी भी सग्रह कृष्टियाँ अनन्त होती है। इसी प्रकार शेष सग्रह कृष्टियोका भी आगमके अनुसार विचार कर लेना चाहिये। तीव्र-मन्दताकी अपेक्षा विचार करने पर लोभकी जघन्य कृष्टि सबसे मन्द अनुभागवाली होनेसे स्तोक है। उससे दूसरी कृष्टि अनन्तगुणी है। यहाँ गुणकारका प्रमाण अभव्यराशिसे अनन्तगुणा और सिद्धराशिके अनन्तवे भागप्रमाण है। इस प्रकार प्रथम सग्रह कृष्टिकी अन्तिम सग्रह कृष्टिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर तृतीयादि कृष्टियाँ अनन्तगुणी-अनन्तगुणी जाननी चाहिये। इस प्रकार जो प्रथम सग्रह कृष्टिकी अन्तिम अवान्तर कृष्टि प्राप्त होती है उससे दूसरी सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी है। यहाँ गुणकार क्या है इसका निर्देश करते हुए बतलाया है कि लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी अवान्तर कृष्टियोको लानेके लिए जो गुणकार ग्रहण किया था वह स्वस्थान गुणकार था। उससे यह गुणकार अनन्तगुणा है, कारण कि स्वस्थान गुणकारसे परस्थान गुणकार अनन्तगुणा है। यह गुणकार कितना बडा है इसका माहात्म्य बतलाते हुए लिखा है कि क्रोधकी तीसरी सग्रह कृष्टिका जो अन्तिम स्वस्थान गुणकार है उससे भी अनन्तगुणा देखा जाता है। इसी प्रकार दूसरी सग्रह कृष्टिका भी पूर्ण विचार पूर्वोक्तरूपसे जानना चाहिये। तथा तीसरी सग्रह कृष्टिके सम्बन्धमे भी इसी प्रकार जानना चाहिए। यहाँ पहली और दूसरी सग्रह कृष्टिके मध्य जिस प्रकार अन्तर है उसी प्रकार दूसरी और तीसरी सग्रह कृष्टिके मध्य भी अतर जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि प्रथम और द्वितीय सग्रह कृष्टिके मध्य जो अन्तर है उससे दूसरी और तीसरी सग्रहकृष्टिके मध्यका अन्तर अनन्तगुणा है। इसे लानेके लिए कृष्टि गुणकार ही लेना चाहिये। यहाँ जो लोभकी सग्रह कृष्टियोके सम्बन्धमे जो प्ररूपणा की गई उसी प्रकार क्रमसे माया, मान और क्रोधकी सग्रहकृष्टियो तथा उनकी अवान्तर कृष्टियोके विषयमे जानना चाहिये। अल्पबहुत्वकी अपेक्षा विचार करनेपर लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टिका जघन्य कृष्टि अन्तर सबसे स्तोक है। इस जघन्य कृष्टिको जिस गुणकारसे गुणा करनेपर दूसरी कृष्टि उत्पन्न होती है उसकी जघन्य कृष्टि अन्तर सज्ञा है। इससे द्वितीय कृष्टि अन्तर अनन्तगुणा है। तात्पर्य यह है कि दूसरी कृष्टिको जिस गुणकारसे गुणित करने पर तीसरी कृष्टि प्राप्त होती है इस गुणकारका नाम द्वितीय कृष्टि अन्तर है। इसी प्रकार उत्तरोत्तर अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक अन्तरका प्रमाण उत्तरोत्तर अनन्तगुणा जानना चाहिये। आगे लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है। यह परस्थान गुणकार है जो सभी स्वस्थान गुणकारोसे अनन्तगुणा है। आगे दूसरी सग्रह कृष्टिकी जो अनन्त अन्तर कृष्टियाँ है उन्हे प्राप्त करनेके लिए भी गुणकारका प्रमाण उत्तरोत्तर अनन्तगुणा जानना चाहिये। यह एक क्रम है जो स्वस्थान गुणकार और परस्थान गुणकारकी अपेक्षा आगे सभी सग्रह कृष्टियो और उनकी अन्तर कृष्टियो को प्राप्त करनेके लिए जानना चाहिये। विशेष कथन चूर्णिसूत्रो और उनकी जयधवला टीकासे जानना चाहिये। यहाँ मात्र थोडेमे निर्देश किया है। यही आगेकी गाथामे स्पष्ट किया गया है।

अब इस कथनके स्पष्ट करनेको सूत्र कहै हैं—

लोभादी कोहो त्ति य सट्ठाणतरमणतगुणिदकम।
तत्तो बादरसगहकिट्टी अतरमणतगुणिदक्कम ॥४९९॥

पहलैही सक्रमण करि क्षय होइ, तातै एक लोभ हीकी तीन सग्रह कृष्टि हो है। तहा जेती सग्रह कृष्टि होइ तिनहीविषै कृष्टि प्रमाणका विभाग यथासभव जानना ॥४९७॥

सगहगे एक्केक्के अतरकिट्टी हवदि हु अणता।
लोभादि अणतगुणा कोहादि अणतगुणहीणा[1] ॥४९८॥

संग्रहके एकैकस्मिन् अतरकृष्टि भवति हि अनंता।
लोभादौ अनतगुणा क्रोधादौ अनतगुणहीना ॥४९८॥

स० च—एक एक सग्रह कृष्टि विषै अन्तर कृष्टि अनत पाइए है जाते अनती कृष्टिनिके समूहका ही नाम सग्रह कृष्टि है। बहुरि तहा कृष्टिनिविषै लोभतै लगाय क्रमतैं अनतगुणा बधता अर क्रोधतै लगाय क्रमतैं अनतगुणा घटता अनुभाग पाइए है। सोई कहिए है—

लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टि विषै जो जघन्य कृष्टि है सो स्तोक है। सर्वतैं मद अनुभाग सहित है। तातै ताकी दूसरी कृष्टि अनतगुणो है। अभव्यराशितै अनतगुणा वा सिद्ध राशिके अनतवे भागमात्र अनतप्रमाण लीए जो गुणकार तिस करि जघन्य कृष्टिके अनुभागको गुणै द्वितीय कृष्टिका अनुभाग हो है। ऐसैं ही आगे भी जानना। बहुरि दूसरी कृष्टितै तीसरी कृष्टि अनतगुणी है। ऐसै ही प्रथम सग्रह कृष्टिकी अत कृष्टि पर्यंत अनुक्रम जानना। बहुरि तिस प्रथम सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टितै द्वितीय सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टि अनतगुणी है, सो इहा गुणकारका प्रमाण अन्य प्रकार हो है, जातैं इहा परस्थान गुणकार भया सो सर्व स्वस्थान गुणकारनितै यहु अनतगुणा है, सो ऐसैं गुणकारका भेद ही करि सग्रह कृष्टिनिका भेद भया है। कृष्टिनिका अनुभाग विषै गुणकारका प्रमाण यावत् एक प्रकार बधता भया तावत् सो ही सग्रह कृष्टि कही। बहुरि जहा नीचली कृष्टितैं ऊपरली कृष्टिका गुणकार अन्य प्रकार भया तहातै अन्य सग्रह कृष्टि कही है। सो इस कथनकौ आगै व्यक्त करि दिखाइऐगा। बहुरि द्वितीय कृष्टिकी जघन्य कृष्टितै ताकी द्वितीय कृष्टि अनतगुणी है। ऐसैं अन्त कृष्टि पर्यंत क्रम जानना। बहुरि द्वितीय कृष्टिकी अन्त कृष्टितै तृतीय कृष्टिकी जघन्य कृष्टि अनतगुणी हैं। इहा परस्थान गुणकार जानना। तातै ताकी द्वितीयादि अत पर्यंत कृष्टि क्रमतै अनतगुणी है। ऐसैं लोभ की तीन सग्रह कृष्टि भईं। बहुरि लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टितै मायाकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी है। बहुरि लोभवत् क्रम जानना। बहुरि मायाकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टितैं मानकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी है। बहुरि पूर्वोक्त प्रकार क्रम जानना। बहुरि मानकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टितै क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी है। बहुरि पूर्वोक्त प्रकार क्रम जानना। बहुरि क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टितै अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणा अनन्तगुणी है, जातै कृष्टिका अनुभागतैं स्पर्धकका अनुभाग अनन्तगुणापनेकौ लीए है। इहा गुणकार अनुभाग अपेक्षा ही जानना ॥४९८॥

विशेष—यहाँ क्रोधादिकसे प्रत्येककी सग्रह कृष्टिया तीन तीन रचनी चाहिये। इस प्रकार एक-एक कषायकी तीन-तीन सग्रह कृष्टियाँ होती हैं। इस प्रकार कुल सग्रह कृष्टियाँ बारह हो जाती हैं। उनमेसे सबसे नीचे लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टि होती है। उसकी अवान्तर कृष्टियाँ अनन्त होती है। उसके ऊपर लोभकी दूसरी सग्रह कृष्टि होती है। उसकी भी अवान्तर कृष्टियाँ

१ धवला पु० ६, पृ० ३७५–३७६।

अनन्त होती है। उसके ऊपर लोभकी तीसरी संग्रह कृष्टि होती है। उसकी भी संग्रह कृष्टियाँ अनन्त होती हैं। इसी प्रकार शेष संग्रह कृष्टियोका भी आगमके अनुसार विचार कर लेना चाहिये। तीव्र-मन्दताकी अपेक्षा विचार करने पर लोभकी जघन्य कृष्टि सबसे मन्द अनुभागवाली होनेसे स्तोक है। उससे दूसरी कृष्टि अनन्तगुणी है। यहाँ गुणकारका प्रमाण अभव्यराशिसे अनन्तगुणा और सिद्धराशिके अनन्तवें भागप्रमाण है। इस प्रकार प्रथम संग्रह कृष्टिकी अन्तिम संग्रह कृष्टिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर तृतीयादि कृष्टियाँ अनन्तगुणी-अनन्तगुणी जाननी चाहिये। इस प्रकार जो प्रथम संग्रह कृष्टिकी अन्तिम अवान्तर कृष्टि प्राप्त होती है उससे दूसरी संग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी है। यहाँ गुणकार क्या है इसका निर्देश करते हुए बतलाया है कि लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी अवान्तर कृष्टियोको लानेके लिए जो गुणकार ग्रहण किया था वह स्वस्थान गुणकार था। उससे यह गुणकार अनन्तगुणा है, कारण कि स्वस्थान गुणकारसे परस्थान गुणकार अनन्तगुणा है। यह गुणकार कितना बड़ा है इसका माहात्म्य बतलाते हुए लिखा है कि क्रोधकी तीसरी संग्रह कृष्टिका जो अन्तिम स्वस्थान गुणकार है उससे भी अनन्तगुणा देखा जाता है। इसी प्रकार दूसरी संग्रह कृष्टिका भी पूर्ण विचार पूर्वोक्तरूपसे जानना चाहिये। तथा तीसरी संग्रह कृष्टिके सम्बन्धमे भी इसी प्रकार जानना चाहिए। यहाँ पहली और दूसरी संग्रह कृष्टिके मध्य जिस प्रकार अन्तर है उसी प्रकार दूसरी और तीसरी संग्रह कृष्टिके मध्य भी अतर जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि प्रथम और द्वितीय संग्रह कृष्टिके मध्य जो अन्तर है उससे दूसरी और तीसरी संग्रहकृष्टिके मध्यका अन्तर अनन्तगुणा है। इसे लानेके लिए कृष्टि गुणकार ही लेना चाहिये। यहाँ जो लोभकी संग्रह कृष्टियोके सम्बन्धमे जो प्ररूपणा की गई उसी प्रकार क्रमसे माया, मान और क्रोधकी संग्रहकृष्टियो तथा उनकी अवान्तर कृष्टियोके विषयमे जानना चाहिये। अल्पबहुत्वकी अपेक्षा विचार करनेपर लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिका जघन्य कृष्टि अन्तर सबसे स्तोक है। इस जघन्य कृष्टिको जिस गुणकारसे गुणा करनेपर दूसरी कृष्टि उत्पन्न होती है उसकी जघन्य कृष्टि अन्तर संज्ञा है। इससे द्वितीय कृष्टि अन्तर अनन्तगुणा है। तात्पर्य यह है कि दूसरी कृष्टिको जिस गुणकारसे गुणित करने पर तीसरी कृष्टि प्राप्त होती है इस गुणकारका नाम द्वितीय कृष्टि अन्तर है। इसी प्रकार उत्तरोत्तर अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक अन्तरका प्रमाण उत्तरोत्तर अनन्तगुणा जानना चाहिये। आगे लोभकी द्वितीय संग्रह कृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है। यह परस्थान गुणकार है जो सभी स्वस्थान गुणकारोसे अनन्तगुणा है। आगे दूसरी संग्रह कृष्टिकी जो अनन्त अन्तर कृष्टियाँ है उन्हे प्राप्त करनेके लिए भी गुणकारका प्रमाण उत्तरोत्तर अनन्तगुणा जानना चाहिये। यह एक क्रम है जो स्वस्थान गुणकार और परस्थान गुणकारकी अपेक्षा आगे सभी संग्रह कृष्टियो और उनकी अन्तर कृष्टियो को प्राप्त करनेके लिए जानना चाहिये। विशेष कथन चूर्णिसूत्रो और उनकी जयधवला टीकासे जानना चाहिये। यहाँ मात्र थोडेमे निर्देश किया है। यही आगेकी गाथामे स्पष्ट किया गया है।

अब इस कथनके स्पष्ट करनेको सूत्र कहै है—

लोभादी कोहो त्ति य सट्ठाणंतरमणंतगुणिदकमं।
तत्तो बादरसंगहकिट्टी अंतरमणंतगुणिदकमं ॥४९९॥

लोभादित क्रोधात च स्वस्थानातरमनतगुणितक्रमं ।
ततो बादरसग्रहकृष्टेरतरमनतगुणितक्रम ॥४९९॥

स० च०—लोभतै लगाय क्रोध पर्यन्त स्वस्थान अन्तर है सो अनन्तगुणा क्रम लीए है। बहुरि तिस स्वस्थान अन्तरतै बादर सग्रह कृष्टि तिनका अन्तर अनन्तगुणा क्रम लीए है। सोई कहिए है—

बादर सग्रह कृष्टि है तहा एक एक सग्रह कृष्टिविषै अन्तर कृष्टि सिद्धि राशिकै अनन्तवे भागमात्र है। बहुरि तिनके अन्तराल एक घाटि कृष्टि प्रमाण हैं, जातै दोय बीचि अन्तराल एक होइ, तीनि बीचि दोय होइ ऐसै विवक्षित प्रमाणविषै अन्तराल एक घाटि तिस प्रमाणमात्र हो है। बहुरि इहा अन्तरकी उत्पत्तिकौ कारण जे गुणकार तिनकौ अन्तर कहिए। जातै कारणविषै कार्यका उपचार हो है। बहुरि इहा कृष्टिनिविषै गुणकार हीका नाम अन्तर भया, तातै तिनका नाम कृष्टयन्तर कहिए। बहुरि नीचली सग्रह कृष्टि अर ऊपरली सग्रह कृष्टिनिविषै ग्यारह अन्तर हो है, जातै सग्रह कृष्टि बारहविषै एक घाटि अन्तरनिका प्रमाण हो है सो इनका नाम सग्रह कृष्टयन्तर कहिए। भावार्थ यहु—जेते अन्तराल होइ तितनीवार गुणकार होइ तहा स्वस्थान गुणकारनिका नाम कृष्टयन्तर है। परस्थान गुणकारनिका नाम सग्रह कृष्टयन्तर है। एक ही सग्रह कृष्टिविषै नीचली अन्तर कृष्टितै ऊपरली अन्तर कृष्टिविषै गुणकार होइ ताकौ तौ स्वस्थान गुणकार कहिए है। बहुरि जहा नीचली सग्रह कृष्टिकी अन्तकी अन्तर कृष्टितै अन्य सग्रह कृष्टिकी आदि अन्तर कृष्टिविषै जो गुणकार होइ ताकौ परस्थान गुणकार कहिए हैं। ऐसै सज्ञा कहि कृष्टयन्तर वा सग्रह कृष्टिनिका अल्पबहुत्व कहिए है। तहा निस्सदेह होनेकौ अक सदृष्टि करि भी कथन करिए है—

तहा अनन्तकी सदृष्टि दोय अर एक सग्रह कृष्टिविषै अन्तर कृष्टिनिके प्रमाणकी सदृष्टि च्यारि जाननी। तहा प्रथम लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टि स्थापि ताकौ तिस अनन्त गुणकार करि गुणै ताकी द्वितीय कृष्टि होइ। तिस गुणकारका नाम जघन्य कृष्टियन्तर है ताकी सदृष्टि दोयका अक, बहुरि द्वितीय कृष्टिकौ जिस गुणकार करि गुणै तृतीय कृष्टि होइ तिस गुणकारका नाम द्वितीय कृष्टयन्तर है। सो यहु जघन्य कृष्टयन्तरतै अनन्तगुणा है। ताकी सदृष्टि च्यारिका अक, ऐसै क्रमतै तृतीयादि कृष्टयन्तर क्रमतै अनन्तगुणे होइ, जिस गुणकार करि द्विचरम कृष्टिकौ गुणै अन्त कृष्टि होइ सो अनन्तका गुणकार द्विचरम गुणकारतै अनन्तगुणा है, ताकी सदृष्टि आठका अक, बहुरि इस प्रथम सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टिकौ जिस गुणकार करि गुणैं द्वितीय कृष्टिकी प्रथम कृष्टि होइ सो परस्थान गुणकार है। तातै याकौ छोडि द्वितीय सग्रह कृष्टिकी प्रथम कृष्टिकौ जिस गुणकार करि गुणै ताकी द्वितीय कृष्टि होइ सो प्रथम गुणकार पूर्वोक्त अन्तका स्वस्थान गुणकारतै अनन्तगुणा है। ताकी सदृष्टि सोलहका अक ऐसै ही बीचि बीचि परस्थान गुणकार छोडि एक एक कृष्टि प्रति गुणकारका प्रमाण अनन्तगुणा जानना। सो कृष्टिनिका जेता प्रमाण तिनमै एक घाटि तो अन्तराल पाइए अर तहा ग्यारह परस्थान गुणकार पाइए अर एक जघन्य गुणकार हो है। ऐसैं तेरह घटाएं अवशेष जेता प्रमाण तितनी वार जघन्य गुणकारकौ अनन्तकरि गुणैं जो गुणकार भया तिसकरि क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी द्विचरम कृष्टिकौ गुणैं ताकी अन्तर कृष्टि हो है। अक सदृष्टि करि अठतालीस कृष्टिनिविषैं तेरह घटाए

पैंतीस रहे सो पैंतीस वार दोयकौं दोय करि गुणैं सोलहगुणा वादाल प्रमाण हो है। वहुरि इहातैं स्वस्थान गुणकार छोडि बाहुरि करि लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी अन्त वर्गणाकौं जिस गुणकार करि गुणैं द्वितीय संग्रह कृष्टिकी प्रथम वर्गणा होइ सो परस्थान गुणकार पूर्वोक्त अन्तका स्वस्थान गुणकारतैं अनन्तगुणा है। ताकी सहष्टि बत्तीसगुणा वादाल है। वहुरि लोभकी द्वितीय संग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टिकौं जिस गुणकार करि गुणैं लोभकी तृतीय संग्रह कृष्टिकी प्रथम कृष्टि होइ सो द्वितीय परस्थान गुणकार सो प्रथम परस्थान गुणकारतैं अनन्तगुणा है। वहुरि लोभकी तृतीय कृष्टिकी अन्त कृष्टिकौं जिस गुणकार करि गुणैं मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी प्रथम संग्रह कृष्टि होइ सो तीसरा परस्थान गुणकार द्वितीय परस्थान गुणकारतैं अनन्तगुणा है। याही प्रकार ग्यारह परस्थान गुणकारनिकौं क्रमतैं अनन्तकरि गुणैं क्रोधकी द्वितीय कृष्टिकी अन्त कृष्टिकौं जिस गुणकार करि गुणैं क्रोधकी तृतीय कृष्टिकी प्रथम कृष्टि होइ तिस गुणकार प्रमाण आवै है।

यहु गुणकारनिका यन्त्र है तहा पण्णट्ठीकी सहष्टि ऐसी ६५ = वादालकी ऐसी ४२ = अर इनके आगैं जितनेका अंक तितनेका इनकौं गुणकार जानना।

नाम	लोभ	माया	मान	क्रोध	
तृतीय संग्रहकृष्टि-विषै स्वस्थान गुणकार	५१२ २५६ १२८	६५ – ४ ६५ = २ ६५ = १	६५ = २०४८ ६५ = १०२४ ६५ = ५१२	४२ = १६ ४२ = ८ ४२ = ४	
परस्थान गुणकार	४२=६४	४२ = ५१२	४२ = ४०९६	४२ = ३२७६८	
द्वितीय संग्रहकृष्टि-विषै स्वस्थान गुणकार	६४ ३२ १६	३२७६८ १६३८४ ८१९२	६५ = २५६ ६५ = १२८ ६५ = ६४	४२ = २ ४२ = १ ६५ = ३२७६८	
परस्थान गुणकार	४२=३२	४२ = २५६	४२ = २०४८	४२ = १६३८४	
प्रथम संग्रहकृष्टि-विषै स्वस्थान गुणकार	८ ४ २	४०९६ २०४८ १०२४	६५ = ३२ ६५ = १६ ६५ = ८	६५ = १६३८४ ६५ = ८१९२ ६५ = ४०९६	अपूर्व स्पर्धक वर्गणा गुणकार
परस्थान गुणकार	जघन्य	४२ = १२८	४२ = १०२४	४२ = ८१९२	४२ = ६५ =

अंकसंदृष्टिकरि ग्यारह परस्थान गुणकारनिकौं दूणा २ कीए जैसैं बत्तीस हजार सातसै अडसठिगुणा वादाल प्रमाण होइ। वहुरि यातै तिस गुणकार करि क्रोधकी तृतीय संग्रह कृष्टिकी अंत कृष्टिकौ गुणै लोभके अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अनुभागका अविभाग प्रतिच्छेदनिका प्रमाण हो है। तिस परस्थान गुणकारका प्रमाण अनंतगुणा जानना। ताकी सहष्टि पण्णट्ठीगुणा वादाल है। ऐसैं गुणकारनिका प्रमाण कह्या। इहा ऐसा अर्थ जानना—

लोभादित क्रोधातं च स्वस्थानातरमनतगुणितक्रमं।
ततो बादरसग्रहकृष्टेरतरमनतगुणितक्रम ॥४९९॥

स० च०—लोभतै लगाय क्रोध पर्यन्त स्वस्थान अन्तर है सो अनन्तगुणा क्रम लीए है। बहुरि तिस स्वस्थान अन्तरतै बादर सग्रह कृष्टि तिनका अन्तर अनन्तगुणा क्रम लीए है। सोई कहिए है—

बादर सग्रह कृष्टि है तहा एक एक सग्रह कृष्टिविषै अन्तर कृष्टि सिद्धि राशिके अनन्तवे भागमात्र है। बहुरि तिनके अन्तराल एक घाटि कृष्टि प्रमाण हैं, जातै दोय वीचि अन्तराल एक होइ, तीनि बीचि दोय होइ ऐसैं विवक्षित प्रमाणविषै अन्तराल एक घाटि तिस प्रमाणमात्र हो हैं। बहुरि इहा अन्तरकी उत्पत्तिकौ कारण जे गुणकार तिनकौ अन्तर कहिए। जातै कारणविषै कार्यका उपचार हो है। बहुरि इहा कृष्टिनिविषै गुणकार हीका नाम अन्तर भया, तातै तिनका नाम कृष्टयन्तर कहिए। बहुरि नीचली सग्रह कृष्टि अर ऊपरली सग्रह कृष्टिनिविषै ग्यारह अन्तर हो हैं, जातै सग्रह कृष्टि बारहविषै एक घाटि अन्तरनिका प्रमाण हो है सो इनका नाम सग्रह कृष्टयन्तर कहिए। भावाथ यहु—जेते अन्तराल होइ तितनीवार गुणकार होइ तहा स्वस्थान गुणकारनिका नाम कृष्टयन्तर है। परस्थान गुणकारनिका नाम सग्रह कृष्टयन्तर है। एक ही सग्रह कृष्टिविषै नीचली अन्तर कृष्टितै ऊपरली अन्तर कृष्टिविषै गुणकार होइ ताकौ तौ स्वस्थान गुणकार कहिए है। बहुरि जहा नीचली सग्रह कृष्टिकी अन्तकी अन्तर कृष्टितै अन्य सग्रह कृष्टिकी आदि अन्तर कृष्टिविषै जो गुणकार होइ ताकौ परस्थान गुणकार कहिए है। ऐसैं सज्ञा कहि कृष्टयन्तर वा सग्रह कृष्टिनिका अल्पबहुत्व कहिए है। तहा निस्सदेह होनेकौ अक सदृष्टि करि भी कथन करिए है—

तहा अनन्तकी सदृष्टि दोय अर एक सग्रह कृष्टिविषैं अन्तर कृष्टिनिके प्रमाणकी सदृष्टि च्यारि जाननी। तहा प्रथम लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टि स्थापि ताकौ तिस अनन्त गुणकार करि गुणै ताकी द्वितीय कृष्टि होइ। तिस गुणकारका नाम जघन्य कृष्टियन्तर है ताकी सदृष्टि दोयका अक, बहुरि द्वितीय कृष्टिकौ जिस गुणकार करि गुणै तृतीय कृष्टि होइ तिस गुणकारका नाम द्वितीय कृष्टयन्तर है। सो यहु जघन्य कृष्टयन्तरतै अनन्तगुणा है। ताकी सदृष्टि च्यारिका अक, ऐसै क्रमतै तृतीयादि कृष्टयन्तर क्रमतै अनन्तगुणे होइ, जिस गुणकार करि द्विचरम कृष्टिकौ गुणै अन्त कृष्टि होइ सो अनन्तका गुणकार द्विचरम गुणकारतै अनन्तगुणा है, ताकी सदृष्टि आठका अक, बहुरि इस प्रथम सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टिकौ जिस गुणकार करि गुणैं द्वितीय कृष्टिकी प्रथम कृष्टि होइ सो परस्थान गुणकार है। तातै याकौ छोडि द्वितीय सग्रह कृष्टिकी प्रथम कृष्टिकौ जिस गुणकार करि गुणै ताकी द्वितीय कृष्टि होइ सो प्रथम गुणकार पूर्वोक्त अन्तका स्वस्थान गुणकारतै अनन्तगुणा है। ताकी सदृष्टि सोलहका अक ऐसै ही बीचि वीचि परस्थान गुणकार छोडि एक एक कृष्टि प्रति गुणकारका प्रमाण अनन्तगुणा जानना। सो कृष्टिनिका जेता प्रमाण तिनमै एक घाटि तो अन्तराल पाइए अर तहा ग्यारह परस्थान गुणकार पाइए अर एक जघन्य गुणकार हो है। ऐसै तेरह घटाएं अवशेष जेता प्रमाण तितनी वार जघन्य गुणकारकौ अनन्तकरि गुणैं जो गुणकार भया तिसकरि क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी द्विचरम कृष्टिकौं गुणैं ताकी अन्तर कृष्टि हो है। अक सदृष्टि करि अठतालीस कृष्टिनिविषै तेरह घटाए

पैंतीस रहे सो पैंतीस वार दोयकौं दोय करि गुणैं सोलहगुणा वादाल प्रमाण हो है। वहुरि इहातैं स्वस्थान गुणकार छोडि बाहुरि करि लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी अन्त वर्गणाकौं जिस गुणकार करि गुणैं द्वितीय सग्रह कृष्टिकी प्रथम वर्गणा होइ सो परस्थान गुणकार पूर्वोक्त अन्तका स्वस्थान गुणकारतैं अनन्तगुणा है। ताकी सहष्टि बत्तीसगुणा वादाल है। वहुरि लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टिकौ जिस गुणकार करि गुणे लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी प्रथम कृष्टि होइ सो द्वितीय परस्थान गुणकार सो प्रथम परस्थान गुणकारतैं अनन्तगुणा है। वहुरि लोभकी तृतीय कृष्टिकी अन्त कृष्टिकौ जिस गुणकार करि गुणैं मायाकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी प्रथम सग्रह कृष्टि होइ सो तीसरा परस्थान गुणकार द्वितीय परस्थान गुणकारतैं अनन्तगुणा है। याही प्रकार ग्यारह परस्थान गुणकारनिकौ क्रमतैं अनन्तकरि गुणैं क्रोधकी द्वितीय कृष्टिकी अन्त कृष्टिकौ जिस गुणकार करि गुणैं क्रोधकी तृतीय कृष्टिकी प्रथम कृष्टि होइ तिस गुणकार प्रमाण आवै है।

यहु गुणकारनिका यन्त्र है तहा पण्णट्ठीकी सहष्टि ऐसी ६५ = वादालकी ऐसी ४२ = अर इनके आगैं जितनेका अक तितनेका इनकौ गुणकार जानना।

नाम	लोभ	माया	मान	क्रोध	
तृतीय सग्रहकृष्टि-विषै स्वस्थान गुणकार	५१२ २५६ १२८	६५ – ४ ६५ = २ ६५ = १	६५ = २०४८ ६५ = १०२४ ६५ = ५१२	४२ = १६ ४२ = ८ ४२ = ४	
परस्थान गुणकार	४२=६४	४२ = ५१२	४२ = ४०९६	४२ = ३२७६८	
द्वितीय सग्रहकृष्टि-विषै स्वस्थान गुणकार	६४ ३२ १६	३२७६८ १६३८४ ८१९२	६५ = २५६ ६५ = १२८ ६५ = ६४	४२ = २ ४२ = १ ६५ = ३२७६८	
परस्थान गुणकार	४२=३२	४२ = २५६	४२ = २०४८	४२ = १६३८४	
प्रथम सग्रहकृष्टि-विषै स्वस्थान गुणकार	८ ४ २	४०९६ २०४८ १०२४	६५ = ३२ ६५ = १६ ६५ = ८	६५ = १६३८४ ६५ = ८१९२ ६५ = ४०९६	अपूर्व स्पर्धक वर्गणा गुणकार
परस्थान गुणकार	जघन्य	४२ = १२८	४२ = १०२४	४२ = ८१९२	४२ = ६५ =

अकसहष्टिकरि ग्यारह परस्थान गुणकारनिकौं दूणा २ कीए जैसैं बत्तीस हजार सातसै अडसठिगुणा वादाल प्रमाण होइ। वहुरि यातैं तिस गुणकार करि क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अत कृष्टिकौ गुणै लोभके अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अनुभागका अविभाग प्रतिच्छेदनिका प्रमाण हो है। तिस परस्थान गुणकारका प्रमाण अनतगुणा जानना। ताकी सहष्टि पण्णट्ठीगुणा वादाल है। ऐसैं गुणकारनिका प्रमाण कह्या। इहा ऐसा अर्थ जानना—

अंक सदृष्टिकरि जैसै लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टिविपै जो अनुभाग पाइए है तातै दूणा द्वितीय कृष्टिविषै तातैं चौगुणा तृतीय कृष्टिविषैं हैं। तातै अठगुणा अत कृष्टिविषैं है। तातै बत्तीस गुणित बादालगुणा लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टिकी प्रथम कृष्टिविषै अनुभाग है। इहातै पहलै अन्य प्रकार गुणकार था तातै तहा पर्यन्त प्रथम सग्रह कृष्टिका ही इहा अन्य प्रकार गुणकार भया। तातै इहातै लगाय द्वितीय सग्रह कृष्टि कही। ऐसै ही अन्त पर्यन्त विधान जानना। बहुरि याही प्रकार यथार्थ कथन जानना। दोयकी जायगा अनन्त जानना। अर सग्रह कृष्टिविषै च्यारि अन्तर कृष्टि कही है तहा अनन्ती जाननी। ऐसै अनुभागके अविभागप्रति-च्छेदनिकी अपेक्षा कृष्टिनिका कथन जानना ॥४९९॥

लोहस्स अवरकिट्टिगदव्वादो कोधजेट्ठकिट्टिस्स।
दव्वो त्ति य हीणकम देदि अणतेण भागेण[1] ॥५००॥

लोभस्य अवरकृष्टिगद्रव्यात् क्रोधज्येष्ठकृष्टे ।
द्रव्यमिति च हीनक्रमं दीयते अनतेन भागेन ॥५००॥

स० च०—लोभकी जघन्य कृष्टिका द्रव्यतै लगाय क्रोधको उत्कृष्ट कृष्टिका द्रव्य पर्यन्त हीन क्रमलीए द्रव्य दीजिये है। सोई कहिए है—

कृष्टिविषै देनेयोग्य अपकर्षण कीया द्रव्यविषै जो द्रव्य सो सर्वधन है। याकौं कृष्टिनिका प्रमाणमात्र जो गच्छ ताका भाग दीए मध्य कृष्टिविषैं जितना द्रव्य दीया ताका प्रमाणमात्र मध्य धन हो है। याकौ एक कृष्टि घाटि गच्छका आधाकरि हीन जो दो गुणहानि ताका भाग दीएं एक विशेषका प्रमाण आवै है। याकौं दोगुणहानिकरि गुणै जो प्रमाण आवै तितना द्रव्य तौ लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टिविषै दीजिए है। याके आगें द्वितीयादि कृष्टितै लगाय सर्व सग्रह कृष्टिनिकी अतर कृष्टि उल्लघि क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अत कृष्टिपर्यंत एक एक विशेष घटता क्रम लीए द्रव्य दोजिए है। इहा पूर्व-पूर्व कृष्टितै उत्तर-उत्तर कृष्टि विषै द्रव्य दीया सो ही दृश्यमान है सो अनतभाग घटता क्रम लीए है पूर्व कृष्टिकौ अनतका भाग दीए तहा एक भागमात्र घटता उत्तर कृष्टिका द्रव्य प्रमाण हो है ॥५००॥

लोभस्स अवरकिट्टिगदव्वादो कोधजेट्ठकिट्टिस्स !
दव्व तु होदि हीण असखभागेण जोगेण[2] ॥५०१॥

लोभस्यावरकृष्टिगद्रव्यत क्रोधज्येष्ठकृष्टे ।
द्रव्यं तु भवति हीनं अस   ।गेन योगेन ॥५०१॥

स० च०—लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टिका द्रव्य जो प्रदेशसमूह तातं क्रोधकी

---

१ लोभस्स जहण्णियाए पदेसग्ग वहुअ। विदियाए किट्टीए विसेसहीण, एवमणतरोपणिधाए विसेस-हीणमणतभागेण जाव कोहस्स चरिमकिट्टि त्ति। क० चु० पृ० ८०१।

२ परपरोपणिधाए जहण्णियादो लोभकिट्टीदो उक्कस्सियाए कोधकिट्टीए पदेसग्ग विसेसहीणमणत-भागेण। क० चु० पृ० ८०१।

तृतीय कृष्टिकी उत्कृष्ट कृष्टिका द्रव्य एक घाटि कृष्टि प्रमाणमात्र विशेषनिकरि घटता भय सो अनतवा भागमात्र घटता भया जानना । जातै सर्व कृष्टिनिका प्रमाण एक स्पर्धककी वर्गणाके अनतवे भागमात्र है सो एक घाटि इतने चय घटनेतै लोभकी जघन्य कृष्टि का द्रव्यके अनतवें भागमात्र ही द्रव्य घटता भया है। बहुरि पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिविषै जो देने योग्य द्रव्य कह्या था ताकौ साधिक द्व्यर्ध गुणहानिका भाग दीए अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाविषै दीया द्रव्यका प्रमाण हो है। सो यहु क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अत कृष्टिविषै दीया द्रव्यके असख्यातवें भागमात्र है। बहुरि तिसतै तिनकी द्वितीय वर्गणा आदि पूर्व स्पर्धकनिकी अत वर्गणा पर्यंतनिविषै विशेष घटता क्रम करि द्रव्य दीजिए है। ऐसै कृष्टिकारकका प्रथम समयका निरूपण जानना ॥५०१॥

पडिसमयमसखगुण कमेण ओकड्डिदूण दव्व खु ।
सगहहेट्ठापासे अपुव्वकिट्टी करेदी हु[1] ॥५०२॥

प्रथमसमयमसख्यगुण क्रमेणापकृष्य द्रव्य खलु ।
संग्रहाधस्तनपार्श्वे अपूर्वकृष्टि करोति हि ॥५०२॥

स० च—बहुरि प्रथम समयतैं द्वितीयादि समयनिविषै असख्यातगुणा क्रम लीए द्रव्यकौ अपकर्षणकरि सग्रह कृष्टिके नीचै वा पार्श्वविषै अपूर्व कृष्टिकौ करै है। पूर्व समयविषै जे कृष्टि करी थी तिनविषै बारह १२ सग्रह कृष्टिनिकी जे जघन्य कृष्टि तिनतै अनतगुणा घटता अनुभाग लीए नीचै केती इक नवीन कृष्टि अपूर्व शक्तियुक्त करिए है। याहीतै इनका नाम अधस्तन कृष्टि जानना। बहुरि पूर्व समयनिविषै जे कृष्टि करी थी तिनहीके समान शक्ति लीए तिनके पास केती इक कृष्टि करिए है। भावार्थ यहु—पूर्व समयनिविषै करी कृष्टिनिविषै जो नवीन द्रव्यका निक्षेपण करिए सो पार्श्वविषै करी कृष्टि कहिए है ॥५०२॥

हेट्ठा असखभाग पासे वित्थारदो असखगुण ।
मज्झिमखड उभय दव्वविसेसे हवे पासे ॥५०३॥

अधस्तनमसंख्यभाग पार्श्वे विस्तारतोऽसख्यगुणं ।
मध्यमखडमुभय द्रव्यविशेषे भवेत् पार्श्वे ॥५०३॥

स० च—सग्रहकृष्टिके नीचै करी हुई कृष्टिनिका प्रमाण तौ सर्व कृष्टिनिका प्रमाणके असख्यातवे भागमात्र है। बहुरि पार्श्वविषै करी हुई कृष्टिनिका प्रमाण तिनतै असख्यातगुणा है। तहाँ पार्श्वविषै करी कृष्टि तिनविषै मध्यम खड अर उभय द्रव्यविशेष हो है। अर स्तोक जानि न कह्या तथापि तहा अधस्तन शीर्षका भी होना जानना। कैसै ? सो कहिए है—

द्वितीयादि समयनिविषै समय समय प्रति असख्यातगुणा द्रव्यकौ पूर्व अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी द्रव्यतै अपकर्षणकरि तहा पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिविषै देने योग्य द्रव्य जुदा कीए अवशेष कृष्टिसम्बधी

१ विदियसमए अण्णाओ अपुव्वाओ किट्टीओ करेदि पढमसमए णिव्वत्तिदकिट्टीणमसखज्जदिभाग-मेत्ताओ। एक्किक्के सगहकिट्टीए हेट्ठा अपुव्वाओ किट्टीओ करेदि। क० चु० पृ० ८०१।

द्रव्य हो है। तिसविषै अधस्तन शीर्ष १, अधस्तन कृष्टि २, मध्यम खड ३, उभय द्रव्यविशेष ४ ऐसै च्यारि विभाग करिए सो अधस्तन शीर्षादिकका स्वरूप उपशम चारित्रविषै सूक्ष्मकृष्टिका वर्णन करतै पूर्वै विशेषकरि कह्या है सो जानना। वा इहा भी किछू कहिए है—

तहा पूर्व समयविषै करी कृष्टि तिनविषै प्रथम कृष्टितै लगाय विशेष घटता क्रम है सो सर्व पूर्व कृष्टिनिकी आदि कृष्टि समान करनेके अर्थि घटे विशेषनिका द्रव्यमात्र जो द्रव्य तहा दीजिए ताका नाम अधस्तन शीर्ष विशेष द्रव्य है। बहुरि पूर्वै न थी ऐसी करी जे नवीन कृष्टि तिनिकौ पूर्व कृष्टिकी आदि कृष्टिके समान करनेके अर्थि जो द्रव्य दीया ताका नाम अधस्तन कृष्टिद्रव्य है। बहुरि इन सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिनिविषै आदि कृष्टितै लगाय अन्त कृष्टि पर्यंत विशेष घटता क्रम करनेके अर्थि जो द्रव्य दीया ताका नाम उभय द्रव्य विशेष द्रव्य है। बहुरि इन तीनोको जुदा कीए अवशेष जो द्रव्य रह्या ताकौ सर्व कृष्टिनिविषै समानरूप दीजिए ताका नाम मध्यम खड है। ऐसै सग्रह कृष्टिनिके पार्श्ववर्ती कृष्टिनिविषै तौ अधस्तन शीर्ष, मध्यम खड, उभय द्रव्य विशेषरूप तीन प्रकार द्रव्य दीजिए है। अर सग्रहकृष्टिनिके नीचै जे नवीन कृष्टि करी तिनविषै अधस्तन शीर्ष, मध्यम खड, उभय द्रव्य विशेषरूप तीन प्रकार द्रव्य दीजिए है। अब याका विशेष दिखाइए है-तहा द्वितीय समयविषै कैसै द्रव्य दीजिए है सो वर्णन कीजिए है—

क्रोध मान माया लोभके पूर्व अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी द्रव्यतै पहले समय जो अपकर्षण कीया द्रव्य तातै असख्यातगुणा द्रव्य अपकर्षण करै है। तहा सर्व द्रव्यकौ आठका भाग दीए एक एक भागमात्र लोभ माया मानका, पाच भागमात्र क्रोधका द्रव्य पूर्वोक्त प्रकार यथासम्भव साधिक वा किंचित् न्यूनपना लीए जानना। बहुरि याकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए एक भागमात्र द्रव्य पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिविषै देना। ताकौ जुदा राखि अवशेष द्रव्यका पल्यका प्रथम समयवत् बारह सग्रह कृष्टिनिविषै विभाग करिए तब सर्व द्रव्यकौ चौईसका भाग दीए तहा ग्यारह सग्रह कृष्टिनिका एक एक भागमात्र अर क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिका तेरह भागमात्र द्रव्य हो है। इहा साधिकपना वा न्यूनपना यथासम्भव जानि लेना।

अब द्वितीय समयविषै अपकर्षण कीया जो द्रव्य तिसविषै एक एक सग्रह कृष्टिका द्रव्य जो कह्या तिसविषै अधस्तन शीर्षादि च्यारि प्रकार द्रव्यका प्रमाण ल्याइए है—तहा प्रथम समयविषै अन्त कृष्टितै लगाय कृष्टि २ प्रति जितना द्रव्य घट्या सो एक विशेष है। ताका प्रमाण पूर्वै कह्या था सो आदिविषै जो विशेषका प्रमाण सो आदि अर एक एक विशेष कृष्टि कृष्टि प्रति बध्या तातै एक विशेष उत्तर अर प्रथम समयविषै कीनी कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ सो ऐसै आदि उत्तर गच्छ स्थापि श्रेणी व्यवहार नाम गणितके अनुसारि—

रूपेणोनो गच्छो दलीकृत प्रचयताडितो मिश्र।
प्रभवेण पदाभ्यस्त सकलित भवति सर्वेषा ॥ १ ॥

इस सूत्रतै एक घाटि गच्छका आधाकौ विशेषकरि गुणि ताकौ आदिविषै जोडि ताकौ गच्छकरि गुणै सवनिका सकलित धन कहिए जोड्या हूवा प्रमाण हो है। सो जो जो प्रमाण होइ तितना तितना अधस्तन शीर्ष द्रव्य हो है। सोई कहिए है—

एक विशेष आदि एक विशेष उत्तर अर प्रथम कृष्टिविषै विशेष मिल्या नाही तातै एक

घाटि लोभकी प्रथम सग्रह् कृष्टिविषै प्रथम समयविषै कीनी अन्तर कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि तहा सकलन धनमात्र लोभको प्रथम सग्रहकृष्टिका जो द्वितीय समय विषै अपकर्षण द्रव्यविषै द्रव्य कह्या था तिस द्रव्यकौं द्वितीय समयविषै अपकर्षण किया तीहिविषै जो कृष्टिनिविषै देने योग्य द्रव्य कह्या था तीहिविषै अधस्तन शीर्ष द्रव्य हो है। बहुरि ऐसै ही लोभकी प्रथम सग्रह् कृष्टिकी अतर कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष तौ आदि अर एक विशेष उत्तर अर द्वितीय सग्रह् कृष्टिकी अतर सग्रह कृष्टिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि तहा सकलन धनमात्र लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टिका द्रव्यविषै अधस्तन शीर्ष द्रव्य हो है। बहुरि लोभकी प्रथम द्वितीय सग्रह् कृष्टिनिविषै जो अन्तर कृष्टिनिका प्रमाण तितने विशेष तौ आदि अर एक विशेष उत्तर लोभकी तृतीय सग्रह् कृष्टिकी अन्तर कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि तहा सकलन धनमात्र लोभको तृतीय सग्रहकृष्टिका द्रव्यविषै अधस्तन शीर्ष द्रव्य हो है। बहुरि लोभकी प्रथम द्वितीय तृतीय सग्रहकृष्टिनिकी अन्तर कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष तौ आदि अर एक विशेष उत्तर अर मायाकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टि प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि तहा सकलन धनमात्र माया की प्रथम सग्रह कृष्टिका प्रमाणविषै अधस्तन शीर्ष द्रव्य हो है। ऐसै ही अवशेष आठ सग्रह् कृष्टिनिविषै अपने अपने नीचैकी सग्रह् कृष्टिनिको अन्तर कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष तौ आदि अर एक विशेष उत्तर अर अपना अपना अन्तर कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि तहा सकलन धनमात्र अपना अपना सग्रह् कृष्टिका द्रव्यविषै अधस्तन शीर्षका द्रव्य हो है। इस सर्वको जोडै एक विशेष आदि एक विशेष उत्तर एक घाटि प्रथम समयविषै कोनी सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापै जो सकलन धन होइ तितना सर्व अधस्तन शीर्ष विशेष द्रव्य जानना।

बहुरि प्रथम समयविषै जो लोभकी प्रथम सग्रहकृष्टिकी जघन्य कृष्टिविषै द्रव्यका प्रमाण कह्या था तीहि प्रमाण एक एक घाटि कृष्टिका द्रव्य स्थापि ताकौ अपनी अपनी सग्रह कृष्टिनिविषै करी जे अन्तरकृष्टि नवीन कृष्टि तिनका प्रमाणकरि गुणै अपनी अपनी सग्रह् कृष्टिका द्रव्यविषै अधस्तन कृष्टिका द्रव्य प्रमाण हो है। सर्व कृष्टिनि का प्रमाणकरि ताहीकौ गुणै सर्व अधस्तन शीर्षकृष्टि द्रव्य हो है।

बहुरि प्रथम समय द्वितीय समयसम्बन्धी जो कृष्टिविषै देने योग्य द्रव्य ताकौं जोडै सर्व धन होइ याकौ पुरातन वा नवीन करी कृष्टिनिका प्रमाणमात्र जो गच्छ ताका भाग दीए मध्य धन हो है। ताकौ एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणकरि न्यून दोगुणहानिका भाग दीए एक उभय द्रव्यका विशेष हो है। सो एक विशेष आदि एक विशेष उत्तर अर क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी पुरातन नवीन कृष्टि प्रमाण गच्छ स्थापि तहा पूर्वोक्त सूत्र अनुसारि सकलन धनमात्र क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिविषै जो द्वितीय समयविषै कृष्टिनिविषै देने योग्य अपकर्षण द्रव्य कह्या था तिसविषै उभय द्रव्य विशेष द्रव्यका प्रमाण हो है। बहुरि एक अधिक क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिका पुरातन नवीन कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष तौ आदि अर एक विशेष उत्तर अर क्रोधकी प्रथम द्वितीय कृष्टिकी पुरातन नवीन कृष्टिमात्र गच्छ स्थापि तहा सकलन धनमात्र क्रोधकी द्वितीय सग्रह् कृष्टिविषै उभय द्रव्य विशेष द्रव्य हो है। बहुरि एक अधिक क्रोधकी तृतीय द्वितीय सग्रह् कृष्टिनिका पुरातन नवीन कृष्टि प्रमाणमात्र विशेष आदि अर एक विशेष उत्तर अर क्रोधकी प्रथम सग्रह् कृष्टिकी पुरातन नवीन कृष्टिमात्र गच्छ स्थापि तहा सकलन धनमात्र क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिविषै उभय द्रव्य विशेष द्रव्य हो है। बहुरि एक अधिक क्रोधकी तीनो संग्रह कृष्टिनिकी पुरातन

नवीन कृष्टि प्रमाणमात्र विशेष आदि अर एक विशेष उत्तर अर मानकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी पुरातन नवीन कृष्टि प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि तहाँ सकलन धनमात्र मानकी तृतीय सग्रहकृष्टिविषै उभय द्रव्य विशेष हो है। ऐसै एक अधिक अपनी ऊपरिकी सग्रह कृष्टिनिको पुरातन नवीन कृष्टि प्रमाणमात्र विशेष तौ आदि अर एक विशेष उत्तर अर अपनी-अपनी सग्रह कृष्टिकी पुरातन नवीन कृष्टि प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि सकलनकी अवशेष आठ सग्रहकृष्टिनिविषै भी उभय द्रव्य विशेष द्रव्यका प्रमाण आवै हैं। इस सर्वकौ जोडैं एक उभय द्रव्य विशेष आदि एक उभय द्रव्य विशेष उत्तर सब पुरातन नवीन कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि सकलन धन कोए सर्व उभय द्रव्य विशेष द्रव्यका प्रमाण आवै है। बहुरि द्वितीय समयविषै अपकर्षण कोया द्रव्यविषै जो कृष्टि सम्बन्धी द्रव्य तीहिंविषै पूर्वोक्त तीन प्रकार द्रव्य घटाएँ जो अवशेष द्रव्य रह्या ताकौ सर्व पुरातन नवीन कृष्टिके प्रमाणका भाग दीएँ एक खडका प्रमाण आवै ताकौ अपनी-अपनी पुरातन नवीन कृष्टिनिका प्रमाणकरि गुणैं अपनी-अपनी सगूह कृष्टिका द्रव्यविषै मध्यम खडका प्रमाण आवै है। बहुरि तिस एक खडकौ सर्व पुरातन नवीन कृष्टि प्रमाणकरि गुणैं सर्व मध्यम खण्डका द्रव्य हो है। इहाँ प्रथम समयविषै कीनी कृष्टिनिकौ पुरातन कहिए। द्वितीय समयविषै करिए है तिनकौ नवीन कहिए है। ऐसै द्वितीय समयविषै अपकर्षण कीया द्रव्यविषै जो कृष्टिसम्बन्धी द्रव्य तिसविषै च्यारि प्रकार कहे। अब इनके देनेका विधान कहिए है—

लोभकी प्रथम सगूह कृष्टिके नीचैं जे अपूर्व नवीन कृष्टि करी तिनकी जघन्य कृष्टिविषै बहुत द्रव्य दीजिए है। तहा अधस्तन शीर्षका द्रव्य तौ न दीजिए है अर अधस्तन कृष्टिका द्रव्यतैं एक कृष्टिका द्रव्य अर मध्यम खडका द्रव्यतैं एक खडका द्रव्य अर उभय द्रव्य विशेषका द्रव्यतैं सर्व नवीन पुरातन कृष्टिनिका जेता प्रमाण तितने विशेषनिका द्रव्य ग्रहि तहा ही दीजिए है। ऐसा यतिवृषभ आचार्यका तात्पर्य है। बहुरि द्वितीयादि अतपर्यंत जे नवीन कृष्टि तिनविषै अधस्तन कृष्टिका द्रव्यतैं एक कृष्टिका द्रव्य अर मध्यम खडतैं एक खड तौ समानरूप सर्वत्र दीजिए है अर उभय द्रव्य विशेष द्रव्यविषै एक एक विशेषमात्र द्रव्य घटता क्रमतैं दीजिए है। सो कृष्टि-कृष्टि प्रति उभय द्रव्यका एक विशेष जो घटया सो अनतवे भागमात्र घटया तातैं पूर्व कृष्टितैं उत्तर कृष्टिविषै अनतवे भागमात्र घटता द्रव्य दीया कहिए है। इहा प्रथम सगूहकृष्टि-का अधस्तन कृष्टि द्रव्य तौ समाप्त भया। बहुरि नवीन कृष्टिकी अत कृष्टिके ऊपरि पुरातन कृष्टिकी जघन्य कृष्टि है तीहिविषै मध्यम खडका द्रव्यतैं एक खड अर उभय द्रव्य विशेषतैं जितनी कृष्टि नीचैं नवीन होइ आई तिनके प्रमाणकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेषनि-का द्रव्य दीजिए है। सो इहा नवीन कृष्टिकी अत कृष्टिविषै दीया द्रव्यतैं एक अधस्तन कृष्टिका द्रव्य अर एक उभय द्रव्यका विशेषका द्रव्य घटता दीया सो तिस नवीन अत कृष्टिविषै दीया द्रव्यतैं एक अधस्तन कृष्टिका द्रव्य तौ असख्यातवे भागमात्र अर एक उभय द्रव्यका विशेष अनतवें भागमात्र है तातैं तिस नवीन अत कृष्टितैं असख्यातवा भागमात्र द्रव्य पुरातन कृष्टिकी जघन्य कृष्टिविषै दीया कहिए है। इहा पुरातन जघन्य कृष्टिविषै प्रथम समयविषै दीया द्रव्य एक अधस्तन कृष्टिका द्रव्यके समान है। ताकी जोडै एक गोपुच्छाकार होइ जाइ परतु ताकी इहा विवक्षा नाही। इहा द्वितीय समयविषै दीया द्रव्य हीकी विवक्षा है तातैं असख्यातवा भाग घटता कह्या ऐसैं आगैं भी जहा नवीन अन्त कृष्टिविषै दीया द्रव्यतैं पुरातन जघन्य कृष्टिविषै दीया द्रव्य असख्यात बहुभागमात्र घटता है तहा ऐसी ही युक्ति जाननी। बहुरि याके ऊपरि

पुरातन कृष्टिकी द्वितीय कृष्टि तिसविषै अधस्तन शीर्षका द्रव्यतै एक विशेषका द्रव्य अर मध्यम खडतै एक खडका द्रव्य अर उभय द्रव्य विशेषतै जितनी कृष्टि नीचै नवीन अर एक पुरातन होइ आई तिनके प्रमाणकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेषनिका द्रव्य दीजिए है। सो इहा पुरातन जघन्य कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै एक अधस्तन शीर्षके विशेषका द्रव्य वध्या अर एक उभय द्रव्यका विशेष घट्या सो उभय द्रव्यका विशेष विषै प्रथम समयसम्बन्धी विशेषमात्र अधस्तन शीर्षका विशेष घटाए जो अवशेष रह्या सो पुरातन प्रथम कृष्टिविषै दीया द्रव्यके अनन्तवें भागमात्र है। तातै तिस पुरातन प्रथम कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै इस द्वितीय कृष्टिविषै दीया द्रव्य अनन्तवें भागमात्र घटता कहिए है। बहुरि पुरातन कृष्टिकी तृतीयादि अन्त पर्यन्त कृष्टिनिविषै मध्यम खडतै एक एक खडका द्रव्य तौ समानरूप अर अधस्तन शीर्ष द्रव्यतै एक एक विशेषका द्रव्य क्रमतै वधता अर उभय द्रव्यविशेषतै एक एक विशेषतै एक एक विशेषका द्रव्य क्रमतै घटता दीजिए है। तातै अनन्तवा भागमात्र घटता द्रव्य दीया कहिए। ऐसै लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टिसम्बन्धी च्यारि प्रकार द्रव्य देनेका विधान कह्या। बहुरि लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी पुरातन अन्त कृष्टिके ऊपरि लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टिकी नवीन कृष्टिकी जघन्य कृष्टि है तिसविषै लोभकी द्वितीय सग्रहकृष्टि सम्बन्धी च्यारि प्रकार द्रव्यविषै अधस्तन शीर्ष द्रव्य तौ न दीजिए है अर अधस्तन कृष्टिका द्रव्यतै एक कृष्टिका द्रव्य अर मध्यम खड द्रव्यतै एक खडका द्रव्य अर उभय द्रव्य विशेषतै नीचै होइ आई जे प्रथम सग्रह कृष्टिकी जे नवीन पुरातनकृष्टि तिनके प्रमाणकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेषनिका द्रव्य दीजिए है। सो इहा प्रथम सग्रह कृष्टिकी पुरातन अन्त कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै एक अधस्तन शीर्ष विशेषका द्रव्य अर एक उभय द्रव्य विशेषका द्रव्य तौ घटता अर एक अधस्तन कृष्टिका द्रव्य बधता दीया सो एक अधस्तन कृष्टिका द्रव्यविषै एक अधस्तन शीर्षका विशेष अर एक उभय द्रव्य विशेषका द्रव्य घटाए जो अवशेष रह्या सो प्रथम सग्रह कृष्टिकी पुरातन अन्त कृष्टिविषै दीया द्रव्य असख्यातवें भागमात्र है, तातै तिस पुरातन अन्तकृष्टिविषै दीया द्रव्यतैं याविषै दीया द्रव्य असख्यातवे भागमात्र बधता कहिए है। ऐसै इहा दीयमान द्रव्यकी अपेक्षा गोपुच्छका अभाव भया। ऐसै ही आगै भी जहा पुरातन कृष्टिकी अन्त कृष्टिविषै दीया द्रव्यतैं नवीन कृष्टिकी प्रथम कृष्टिविषै दीया द्रव्य असख्यातवा भागमात्र बधता है तहा ऐसी ही युक्ति जाननी। बहुरि याके ऊपरि नवीन कृष्टिकी द्वितीयादि अन्त पर्यन्त कृष्टिनिविषै एक एक उभय विशेष प्रमाण घटता द्रव्य दीजिए है। तहा क्रमतै अनन्तवा भाग घटता दीया द्रव्य क्रमतै जानना। इहा अधस्तन कृष्टि द्रव्य समाप्त भया।

बहुरि द्वितीय सग्रह कृष्टिकी तिस नवीन अन्त कृष्टिके ऊपरि पुरातन जघन्य कृष्टि है तिस विषै अधस्तन शीर्षका द्रव्यतै तौ नीचै होई जे प्रथम सग्रहसम्बन्धी पुरातन कृष्टि तिनके प्रमाण मात्र विशेषनिका द्रव्य अर मध्यम खड द्रव्यतै एक खडका द्रव्य अर उभय द्रव्य विशेषतैं नीचै होइ आई जे सर्व नवीन पुरातन कृष्टि तिनका प्रमाणकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेषनिका द्रव्य दीजिए। सो एक एक अधस्तन कृष्टिका द्रव्य विषै इहा अधस्तन शीर्षका द्रव्य दीया सो घटाए अवशेष द्वितीय सग्रहकी जघन्य कृष्टिके समान होइ उभय द्रव्यका विशेष मिलाए जो द्रव्य भया सो नवीन अन्त कृष्टिविषै दीया द्रव्यके असख्यातवे भागमात्र है, तातैं नवीन अन्त कृष्टि विषै दीया द्रव्यतै इहा जघन्य पुरातन कृष्टिविषै दीया द्रव्य असख्यातवा भाग मात्र घटता द्रव्य दीया कहिए। बहुरि ताके ऊपरि द्वितीयादि अन्तपर्यंत पुरातन कृष्टि-

निविषै क्रमतै एक एक अधस्तन शीर्षका विशेष बधता अर एक एक उभय द्रव्यका विशेष घटता दीजिए है। तहा अनतवा भागमात्र घटता अनुक्रमतै पूर्वोक्त प्रकार है। ऐसै लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टिका च्यारि प्रकार द्रव्य देनेका विधान है। बहुरि ताके ऊपरि लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी नवीन पुरातन कृष्टि है तिन विषै द्रव्य देनेका विधान लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिका च्यारि प्रकार द्रव्य स्थापि तहा द्वितीय कृष्टिवत् जानना। विशेष इतना पुरातन कृष्टिनिविषै अधस्तन शीर्पका द्रव्यतै जेती नीचै पुरातन कृष्टि भईं तितने विशेषनिका द्रव्य देना अर नवीन वा पुरातन कृष्टिनि-विषै उभय द्रव्यका विशेषतै जेती नीचै नवीन पुरातन कृष्टि भईं तिनके प्रमाण करि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेषनिका प्रमाण द्रव्य देना। इहा लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिका च्यारि प्रकार द्रव्य समाप्त भया। बहुरि लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी पुरातन अन्त कृष्टिके ऊपरि मायाकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी नवीन जघन्य कृष्टि है तिस विषै मायाकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी च्यारि प्रकार द्रव्यविषै अधस्तन शीर्षका द्रव्य बिना एक अधस्तन कृष्टिका द्रव्य एक मध्यम खडका द्रव्य अर लोभकी सर्व नूतन पुरातन कृष्टिनिका प्रमाणकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाण-मात्र उभय द्रव्यके विशषनिका द्रव्य दीजिए है। सो एक अधस्तन कृष्टिका द्रव्यविषै लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टिविषै जो अधस्तन शीर्षका द्रव्य दिया ताकौ घटाए अवशेष लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टिका प्रथम समयविषै जो द्रव्य था ताका प्रमाण होइ तामै एक उभय द्रव्यका विशेष घटाए अवशेष द्रव्य लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टिके असख्यातवे भागमात्र है, तातै लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै इहा मायाकी जघन्य नूतन कृष्टिविषै दीया द्रव्य असख्यातवा भागमात्र बधता जानना। बहुरि ताके ऊपरि द्वितीयादि अन्यपर्यंत नवीन कृप्टिनिविपै एक एक उभय द्रव्यका विशेषप्रमाण अनतवा भाग घटता क्रमकरि द्रव्य दीजिए है। बहुरि ताके ऊपरि मायाकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी पुरातन जघन्य कृष्टितै लगाय क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिका पुरातन अन्त कृष्टिपर्यंत पूर्वोक्त प्रकार विधान द्रव्य देनेका जानना। तहा सर्व नूतन पुरातन कृष्टिनिविषै एक एक मध्यम खडका द्रव्यकौ देना अर जेती नीचै नूतन पुरातन कृष्टि भई तिनके प्रमाणकरि हीन सर्व नूतन पुरातन कृष्टि-निका प्रमाणमात्र उभय द्रव्यके विशेषनिका द्रव्यकौ देना अर नवीन कृष्टिनिविषै एक एक अधस्तन कृष्टिका द्रव्य देना अर पुरातन कृष्टिविषै जेती नीचै पुरातन कृष्टि भईं तिनके प्रमाणमात्र अधस्तन शीर्षके विशेषनिका द्रव्य देना। ऐसै द्वितीय समयविषै अपकर्षण कीया द्रव्य तिस विपै जो कृष्टिसम्बन्धी द्रव्य था तिसके निक्षेपण करनेका विधान कह्या। वहुरि जो अपना अपना पूर्व अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी द्रव्य था ताकौ "दिवडढगुण-हाणिभाजिदे पढमा" इत्यादि विधानकरि तिस द्रव्यकौ साधिक ड्योढ गुणहानिका भाग दीए लब्ध प्रमाणमात्र अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै वहुत द्रव्य दीजिए है। वहुरि ऊपरि प्रथम गुणहानि पर्यंत चय घटता क्रमकरि दीजिए है। वहुरि ऊपरि गुणहानि गुणहानि प्रति आधा-आधा द्रव्य दीजिए है। या प्रकार जैसैं यहु द्वितीय समयविषै वर्णन कीया तैसै ही कृष्टिकरण कालका तृतीयादि अतपर्यंत समयनिविपै विधान जानना। विशेष इतना—समय समय प्रति अपकर्पण कीया द्रव्यका प्रमाण क्रमतैं असख्यातगुणा वधता जानना। अर नीचै-नीचै नवीन कृष्टि करिए हे तिनका प्रमाण क्रमतै असख्यातगुणा घटता जानना ॥५०३॥

पुव्वादिम्हि अपुव्वा पुव्वादि अपुव्वपढमगे सेसे ।
दिज्जदि असंखभागेणूण अहिय अणंतभागूणं ॥५०४॥

पूर्वादौ अपूर्वा पूर्वादौ अपूर्वप्रथमके शेषे ।
दीयते असंख्यभागेनोनमधिक अनंतभागोन ॥५०४॥

स० च०—अपूर्व जो नवीन कृष्टि ताकी अंत कृष्टितैं पूर्वें जो पुरातन कृष्टि ताकी आदि कृष्टिविषैं तौ असंख्यातवे भाग घटता द्रव्य दीजिए है। बहुरि पूर्वें जो पुरातन कृष्टिकी अंत कृष्टि तातैं अपूर्व जो नवीन कृष्टि ताकी प्रथम कृष्टिविषैं असंख्यातवा भागमात्र अधिक द्रव्य दीजिए है। बहुरि अवशेष सर्व कृष्टिनिविषैं पूर्व कृष्टितैं उत्तर कृष्टिविषैं द्रव्य अनंतवा भागमात्र घटता दीजिए है। सो कथन करिही आए है ॥५०४॥[1]

बारेक्कारमणंतं पुव्वादि अपुव्वआदि सेसं तु ।
तेवीसं ऊटकूडा दिज्जे दिस्से अणंतभागूणं ॥५०५॥

द्वादशैकादशमनंत पूर्वादि अपूर्वादि शेषं तु ।
त्रयोविंशतिरुष्ट्रकूटा देये दृश्ये अनंतभागोनम् ॥५०५॥

स० च०—तहाँ पुरातन प्रथम कृष्टि तौ बारह अर प्रथम संग्रहकी विना नवीन संग्रह कृष्टि ग्यारह अर अवशेष कृष्टि अनंत जाननी। ऐसैं देय जो देने योग्य द्रव्य तिसविषैं तेईस स्थाननिविषैं उष्ट्रकूट रचना हो है। जैसैं ऊँटकी पीठि पछाडी तौ ऊँची अर मध्यविषैं नीची अर आगैं ऊंची वा नीची हो है तैसैं इहां पहलैं नवीन जघन्य कृष्टि विषैं बहुत, बहुरि द्वितीयादि नवीन कृष्टिनिविषैं क्रमतैं घटता अर आगैं पुरातन कृष्टिनिविषैं अधस्तन शीर्षविशेष करि बधता अर अधस्तन कृष्टि अथवा उभय द्रव्य विशेषकरि घटता द्रव्य दीजिए है तातैं देयमान द्रव्य विषैं तेईस उष्ट्रकूट रचना हो है।[2] बहुरि दृश्यमानविषैं लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी नवीन जघन्य कृष्टितैं लगाय क्रोधकी तृतीय संग्रह कृष्टिकी पुरातन अंत कृष्टिपर्यंत अनंतवें भागमात्र घटता क्रम लीएँ द्रव्य जानना[3]। जातैं नवीन कृष्टिनिविषैं तौ विवक्षित समयविषैं दीया द्रव्य सोई दृश्यमान है अर पुरातन कृष्टिनिविषैं पूर्व समयनिविषैं दीया द्रव्य अर विवक्षित समयविषैं दीया द्रव्य मिलाएँ दृश्यमान द्रव्य हो है सो नूतन कृष्टिनिविषैं तौ अधस्तन कृष्टिका द्रव्य दीए अर पुरातन कृष्टिनिविषैं अधस्तन शीर्षका द्रव्य दीए तौ सर्व कृष्टि पुरातन प्रथम कृष्टिके समान हो

---

१ एदेण कमेण विदियसमए णिक्खिवमाणगस्स पदेसग्गस्स बारसस्स किट्टिट्ठाणेसु असंखेज्जदिभागहीणं एक्कारससु किट्टिट्ठाणेसु असंखेज्जदिभागुत्तरं दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स सेसेसु किट्टिट्ठाणेसु अणंतभागहीणं दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स। क० चु० पृ० ८०३।

२ विदियसमए दिज्जमाणयस्स पदेसग्गस्स एसा उट्टकूडसेढी। जहा विदियसमए किट्टीसु पदेसग्गं तहा सव्विस्से किट्टीकरणद्धाए दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स तेवीसमुट्टकूडाणि। क० चु० पृ० ८०३।

३ जं पुण विदियसमए दीसदि किट्टीसु पदेसग्गं तं जहण्णियाए बहुअं, सेसासु सव्वासु अणंतभागहीणं।

है। तहाँ एक एक मध्यम खडको दीएँ तिनका समान प्रमाण ही रह्या। बहुरि उभय द्रव्य विशेष क्रमतैं एक-एक विशेष घटता दीया सो यहु विशेप विवक्षित कृष्टिकी नीचली कृष्टिका द्रव्यके अनतवे भागमात्र हैं। तातैं दृश्यमान द्रव्यकी अपेक्षा सर्वत्र अनतवा भागमात्र घटता क्रम कह्या है। वहुरि अत कृष्टितैं अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणा विषै दीया द्रव्य अनतगुणा घटता है जातैं तहा एक भागविषै द्व्यर्ध गुणहानिका भाग दीए ताका प्रमाण हो है ॥५०५॥

किट्टीकरणद्धाए चरिमे अतोमुहुत्तसजुत्तो ।
चत्तारि होंति मासा सजलणाण तु ठिदिबधो[1] ॥५०६॥

कृष्टिकरणद्धाया चरमे अतर्मुहूर्तसंयुक्ता ।
चत्वारो भवति मासा सज्वलनाना तु स्थितिबध ॥५०६॥

स० च०—कृष्टि करणकाल अतमुंहूर्तमात्र है ताका अत समयविषैं अतमुंहूर्त अधिक च्यारि मासप्रमाण सज्वलन चतुष्कका स्थितिबध है। अपूर्व स्पर्धक करणकालका अत समय-विषैं आठ वर्षमात्र था सो एक-एक स्थितिबधापसरणविषै अतमुंहूर्तमात्र घटि इहा इतना रहै है ॥५०६॥

सेसाण वस्साण सखेज्जसहस्सगाणि ठिदिबधो ।
मोहस्स य ठिदिसत अडवस्सतोमुहुत्तहियं[2] ॥५०७॥

शेषाणा वर्षाणां सख्येयसहस्रकानि स्थितिबध. ।
मोहस्य च स्थितिसत्त्वं अष्टवर्षोऽन्तर्मुहूर्ताधिक. ॥५०७॥

स० च०—बहुरि अवशेष कर्मनिका स्थितिबध सख्यात हजार वर्षमात्र है। पूर्वै भी सख्यात हजार वर्षमात्र ही था सो सख्यातगुणा घटता क्रमरूप सख्यात हजार स्थितिबधा-पसरण भए भी आलापकरि इतना ही कह्या। बहुरि मोहनीयका स्थितिसत्त्व पूर्वै सख्यात हजार वर्षमात्र था सो घटिकरि इहा अतमुंहूर्त अधिक आठ वर्षमात्र रह्या है ॥५०७॥

घादितियाण सख वस्ससहस्साणि होदि ठिदिसंत ।
वस्साणमसखेज्जसहस्साणि अघादितिण्ण तु[3] ॥५०८॥

घातित्रयाणा सख्यं वर्षसहस्राणि भवति स्थितिसत्त्वम् ।
वर्षाणामसख्येयसहस्राणि अघातित्रयाणा तु ॥५०८॥

१ किट्टीकरणद्धाए चरिमसमए सजलणाण ट्ठिदिबधो चत्तारिमासा अतोमुहुत्तब्भिहिया। क० चु० पृ० ८०३।

२ सेसाण कम्माण ट्ठिदिबधो सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। तम्हि चेव किट्टीकरणद्धाए चरिमसमए मोहणीयस्स ट्ठिदिसतकम्म सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि हाइदूण अट्ठवस्सगमतोमुहुत्तब्भहियं जाद। —क० चु०, पृ० ८०३–८०४।

३ तिण्ह घादिकम्माण ठिदिसतकम्म सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। णामा-गोद-वेदणीयाण ट्ठिदिसत-कम्ममसखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। —क० चु०, पृ० ८०४।

स० च०—तीन घातियानिका सख्यात हजार वर्षप्रमाण स्थितिसत्त्व है। बहुरि तीन अघातियानिका असख्यात हजार वर्षमात्र इहा स्थितिसत्त्व है ॥५०८॥

पडिपदमणतगुणिदा किट्टीयो फड्डया विसेसहिया।
किट्टीण फड्डयाण लक्खणमणुभागमासेज्ज[1] ॥५०९॥

प्रतिपदनतगुणिता कृष्टय स्पर्धका विशेषाधिका ।
कृष्टीना स्पर्धकाना लक्षणमनुभागमासाद्य ॥५०९॥

स० च०—कृष्टि है ते तौ प्रतिपद अनतगुणा अनुभाग लीए है। प्रथम कृष्टिका अनुभागतैं द्वितीय कृष्टिका अनुभाग अनतगुणा, तातै तृतीय कृष्टिका, ऐसैं अत कृष्टि पर्यंत क्रमतै अनतगुणा अनुभाग पाइए है। बहुरि स्पर्धक है ते प्रतिपद विशेष अधिक अनुभाग लीए है। स्पर्धकनिकी प्रथम वर्गणातै द्वितीय वर्गणाविषै तातैं तृतीय वर्गणाविषैं ऐसैं अनत वर्गणापर्यंत क्रमतै किछू विशेष अधिक अनुभाग पाइए है। ऐसैं अनुभागकौं आश्रय करि कृष्टि अर स्पर्धकनिका लक्षण है। द्रव्य अपेक्षा तौ चय घटता क्रम दोऊनिविषैं ही है परतु अनुभागका क्रमकी अपेक्षा इनका लक्षण जुदा जानि जुदापना कह्या है ॥५०९॥

पुव्वापुव्वप्फड्डयमणुहवदि हु किट्टिकारओ णियमा।
तस्सद्धा णिट्ठायदि पढमट्ठिदि आवलीसेसे[2] ॥५१०॥

पूर्वापूर्वस्पर्धकमनुभवति हि कृष्टिकारको नियमात्।
तस्याद्धा निष्ठापयति प्रथमस्थितौ आवलिशेषे ॥५१०॥

स० च०—कृष्टि करनेवाला तिस कालविषै पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिहीके उदयकौ नियम करि भोगवै है। जैसैं अपूर्व स्पर्धक करनेतैं पूर्व स्पर्धक सहित अपूर्व स्पर्धक भोगवै है तैसैं कृष्टि करतै कृष्टिकौ नाही भोगवै है ऐसा जानना। या प्रकार सज्वलन क्रोधका प्रथम स्थितिविषै उच्छिष्टावलिमात्र काल अवशेष रहैं तिस कृष्टिकरण कालकौं निष्ठापन करै समाप्त करै है। इति कृष्टिकरणाधिकार ॥५१०॥

अथ कृष्टिवेदनाधिकार कहिए हैं—

से काले किट्टीओ अणुहवदि हु चारिमासमडवस्स ।
बधो सत मोहे पुव्वालाव तु सेसाण[3] ॥५११॥

---

१ गुणसेढि अणतगुणा लोभादी कोधपच्छिमपदादो। कम्मस्स य अणुभागे किट्टीए लक्खण एद। —१६५ ग० क०, पृ० ८०७। किस कम्म कद जम्हा तम्हा किट्टी। क० चु०, पृ० ८०७–८०८।

२ किट्टीओ करेंतो पुव्वफद्दयाणि अपुव्वफद्दयाणि च वेदेदि, किट्टीओ ण वेदयदि। —क० चु०, पृ० ८०४।

३ से काले किट्टीओ पवेसदि। ताधे सजलणाण ट्ठिदिबधो चत्तारि मासा। ट्ठिदिसतकम्ममट्ठ वस्साणि। तिण्ह घादिकम्माण ट्ठिदिबधो ट्ठिदिसतकम्म च सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। वेदणीय-

स्वे काले कृष्टीन् अनुभवति हि चतुर्मासमष्टवर्षं ।
बंध सत्त्व मोहे पूर्वालापस्तु शेषाणाम् ।।५११।।

स० च०—कृष्टिकरण कालके अनतरि अपने कृष्टिवेदक कालविपैं कृष्टिनिके उदयकौ अनुभवै है। द्वितीय स्थितिके निषेकनिविषै तिष्ठती कृष्टिनिकौ प्रथम स्थितिके निषेकनिविषै प्राप्त करि भोगवै है। तिस भोगवने ही का नाम वेदना है। ताके कालका प्रथम समयविपैं च्यारि सज्वलनरूप मोहका स्थितिबध च्यारि मास है अर स्थिति सत्त्व आठ वर्षमात्र है। पूर्व अतर्मुहूर्त अधिक थे सो अतर्मुहूर्त घाटि इतने रहे। वहुरि अवशेष कर्मनिका स्थितिवध स्थितिसत्त्व यद्यपि घटती भया है तथापि आलापकरि पूर्वोक्त प्रकार जैसै कृष्टिकरण कालका अत समयविषै करै तैसैं ही जानना ।।५११।।

ताहे कोहुच्छिट्ठं मव्वं घादी हु देसघादी हु ।
दोसमऊणदुआवलिणवक ते फड्डयगदाओ[1] ।।५१२।।

तत्र क्रोधोच्छिष्टं सर्वं घाति हि देशघाति हि ।
द्विसमयोनद्व्यावलिनवक तत् स्पर्धकगतम् ।।५१२।।

स० च०—इहा अनुभागबध तौ गुड खड शर्करा अमृतरूप यथासभव उत्कृष्ट है। बहुरि अनुभागसत्त्व है सो क्रोधकी उच्छिष्टावलीका तौ सर्वघाती है। काहेतैं ?—समयघाटि आवली-प्रमाण क्रोधके निषेक उदयावलीकौ प्राप्त भये हैं। तिनविषैं पूर्व स्पर्धकरूप अनुभाग सत्त्व लता दारु समान शक्तियुक्त है। सो ऐसी शक्तिकी अपेक्षा इहा सर्वघाती न करै है। शैल समानादिकी अपेक्षा सर्वघाती न करे है। सो ए निषेक उदय कालविषै कृष्टिरूप परिणमि जो वर्तमान समयमे उदय आवने योग्य निषेक तिनविषैं उदयरूप होइ निर्जरै है। इहा आवलिविषै एक समय घाटि कह्या है सो उच्छिष्टावलिका प्रथम निषेक वर्तमान समयविषै कृष्टिरूप परिणमनेतैं परमुखरूप होइ उदय आवै है तातै कह्या है। बहुरि सज्वलन चतुष्कका जे दोय समय घाटि दोय आवलि मात्र नवक समयप्रबद्ध रहै हैं तिनविषैं अनुभाग देशघाति शक्ति करि सयुक्त है। जातैं कृष्टिकरण कालविषैं कृष्टिरूप बध नाही, तातैं ते स्पर्धकरूप शक्तिकरि युक्त है। ते दोय समयघाटि दोऊ आवली कालविषै कृष्टिरूप परिणमि सत्तानाशकौ प्राप्त होसी। नवक समयप्रबद्धका स्वरूप वा अन्यरूप परिणमनेका विधान पूर्वैं कह्या है सोई जानना। नवक बध अर उच्छिष्टावलिमात्र निषेक अवशेष रहे तिनका तौ ऐसै स्वरूप जानना अवशेष सर्व निषेक कृष्टिकरण कालका अन्त समयविषै ही कृष्टिरूप परिणमै हैं।। ५१२ ।।

विशेष—क्रोधसज्वलनका जो पूर्वानुभाग उदयावतिके भीतर अवस्थित है वह सर्वघाति-

---

णामा-गोदाण ट्ठिदिबधो सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। ट्ठिदिसतकम्ममसखेज्जाणि वस्ससहस्साणि।

—क० चु०, पृ० ८०४।

१ अणुभागसतकम्म कोहमजलणस्स ज सतकम्म समयूणाए उदयावलियाए च्छट्ठिदल्लिगाए त सव्वघादी। सजलणाण जे दो आवलियवधा दुसमयूणा ते देसघादी। त पुण फद्दयगद।

—क० चु०, पृ० ८०४।

रूपसे ही सम्भव है। इसलिए उसे सर्वघाति स्वीकार किया है। मात्र चारो सज्वलनोका जो नवक समयप्रबद्ध दो समयकम दो आवलिमात्र अवशिष्ट रहा है उनका अनुभाग अवश्य ही देशघाति है, क्योकि वह एक स्थानीयस्वरूप है। ऐसा होते हुए भी वह स्पर्धकस्वरूप है, क्योकि कृष्टिकरण के कालमे स्पर्धकगत अनुभागका ही बन्ध देखा जाता है।

लोहादो कोहादो कारउ वेदउ हवे किट्टी ।
आदिमसगहकिट्टिं वेदयदि ण विदीय तिदिय च ॥५१३॥

लोभात् क्रोधात् कारको वेदको भवेत् कृष्टेः ।
आदिमसंग्रहकृष्टि वेदयति न द्वितीया तृतीया च ॥ ५१३ ॥

स० च—कृष्टिका कारक तौ लोभतैं लगाय क्रम लीए है। अर वेदक है सो क्रोधतै लगाय क्रम लीए है। भावार्थ यहु—कृष्टिकरणविषै तौ पहिले लोभकी, पीछै मानकी, पीछै मायाकी, पीछै क्रोधकी ऐसैं क्रम लीए कृष्टि कही थी। इहा कृष्टिका वेदनेविषै पहिले क्रोधकी, पीछै मानकी, पीछै मायाकी, पीछै लोभकी कृष्टिनिका अनुभवन हो है। बहुरि इतना जानना—

कृष्टिकरणविषै याकौ तृतीय सग्रहकृष्टि कही है ताकौ तौ इहा कृष्टिवेदनविषै प्रथम कृष्टि कहनी अर जाकौ तहा प्रथम कृष्टि कही ताकौ इहा तृतीय कृष्टि कहनी[1]। जो ऐसैं न होइ तो पहलै स्तोक शक्ति लीए कृष्टिनिका अनुभवन होइ पीछै बहुत शक्ति लीए कृष्टिनिका अनुभवन होइ सो बनै नाही, जातै समय समय अनतगुणा घटता अनुभागका उदय हो है। तातैं सग्रहकृष्टिनिविषै कृष्टिकारकतैं कृष्टिवेदककै उलटा क्रम जानना। बहुरि तहा अतर कृष्टिनिविषै पूर्वोक्त प्रकार ही क्रम जानना। बहुरि इहा पहलै क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिकौ ही अनुभवै है द्वितीय तृतीय सग्रह कृष्टिकौ नाही अनुभवै है ऐसा जानना ॥ ५१३ ॥

किट्टीवेदगपढमे कोहस्स य पढमसगहादो दु ।
कोहस्स य पढमठिदी पत्तो ओवट्टगो मोहे ॥५१४॥

कृष्टिवेदकप्रथमे क्रोधस्य च प्रथमसग्रहात् तु ।
क्रोधस्य च प्रथमस्थिति प्राप्त अपवर्तको मोहे ॥ ५१४ ॥

स० च—कृष्टिवेदक कालका प्रथम समयविषै क्रोधकी प्रथम सग्रहकृष्टितै क्रोधकी प्रथम स्थिति करै है कैसै ? सो कहिए है—

कृष्टिकरण कालका अन्त समयपर्यंत तौ कृष्टिनिका तौ दृश्यमान प्रदेशनिका समूह है सो चय घटता क्रम लीए गोपुच्छाकाररूप अपने स्थानविषै तिष्ठै है अर स्पर्धकनिका अपने स्थान-

---

१ एत्थ कोहस्स पढमसगहकिट्टि त्ति भणिदे जा कारयस्स तदियसगहकिट्टी सा वेदगस्स पढम सगहकिट्टि त्ति घेतव्वा। तत्तो प्पहुडि पच्छाणुपुव्वीए जहाकममेव सगहकिट्टीणमेत्थ वेदगभावदसणादो।

जयध० पु०, पृ० ७०१४।

२ तम्हि चेव पढमसमए कोहस्स पढमसमयकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि।

—क० चु०, पृ० ८०४।

विषै प्रदेश समूह एक गोपुच्छाकाररूप तिष्ठै है। तहा कृष्टिनिका द्रव्यतै स्पर्धकनिका द्रव्य असख्यातगुणा है तातै कृष्टि अर स्पर्धकनिकै एक गोपुच्छाकार है नाही। बहुरि कृष्टिकरण कालकी समाप्तताके अनन्तरि सर्व ही द्रव्य कृष्टिरूप परिणमि एक गोपुच्छाकार तिष्ठै है। तहा सज्वलनके सर्व द्रव्यकौ आठका भाग देइ तहा एक एक भागमात्र लोभ माया मानका, पाच भाग-मात्र क्रोधका द्रव्य जानना। बहुरि बारह सग्रहकृष्टिनिविषै विभाग कीजिए तौ सर्व सज्वलन द्रव्यकौं चौईसका भाग दीए तहा अन्य सग्रह कृष्टिनिका एक एक भागमात्र, क्रोधकी प्रथम सग्रह-कृष्टिका तेरह भागमात्र द्रव्य है इहा साधिकपना न्यूनपना है सो यथासम्भव पूर्वोक्त प्रकार जानना। पूर्वै कृष्टिकरण कालका द्वितीय समयविषै जैसै विधान कह्या है तैसै कहना। बहुरि प्रथम समयविषै करी कृष्टिनिका प्रमाणविषै ताके असख्यातवे भागमात्र द्वितीयादि समयनिविषै करी कृष्टिनिका प्रमाण जोडै सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिनिका प्रमाण हो है। सो कृष्टिवेदकका प्रथम समयविषै क्रोधकी प्रथम सग्रहकृष्टिका जो द्रव्य ताकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहा एक भाग ग्रहि ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा एक भागमात्र द्रव्यकौ ग्रहि प्रथम स्थितिकौ करै है। सो क्रोधकी प्रथम सग्रहकृष्टि वेदकका कालतै उच्छिष्टावलीमात्र अधिक प्रथम स्थितिके निषेकनिका प्रमाण है। सोई इहा गुणश्रेणि आयाम जानना। ताके वर्तमान उदयरूप प्रथम निषेकविषै तौ स्तोक द्रव्य दीजिए है। तातै द्वितीयादि अत समय पर्यन्त असख्यातगुणा क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। ऐसै तिस एक भागमात्र द्रव्यका गुणश्रेणिरूप देना हो है। इहा प्रथम स्थितिका जो अतका निषेक ताहीका नाम गुणश्रेणिशीर्ष है। बहुरि अवशेष बहुभागमात्र द्रव्य कह्या ताकौ स्थितिकी अपेक्षा क्रोधकी द्वितीय तृतीय सग्रह कृष्टितै भी अपकर्षण कीया जो द्रव्य तामै मिलाए जो द्रव्य भया ताकी इहा आठ वर्षमात्र स्थिति है ताकी सख्यात आवली भई सोई गच्छ, ताका भाग दीए मध्यधन होइ। तामै एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणमात्र चय मिलाए द्वितीय स्थितिका प्रथम निषेकविषै दीया द्रव्यका प्रमाण हो है सो यहु गुणश्रेणिशीर्षविषै दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा है। बहुरि ताके असख्यातवा भाग-मात्र विशेषका प्रमाण है सो द्वितीयादि निषेकनिविषै अतिस्थापनावलीके नीचै एक एक विशेष घटता क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। ऐसै क्रमकरि समय समय प्रति उदयादि गलितावशेष गुणश्रेणि कीजिए है। बहुरि इहा मोहका अपवर्तन घात हो है। इहातै पहलै अश्वकर्णरूप अनुभाग अतर्मुहूर्त-करि सम्पूर्ण होइ ऐसा काडकघात वर्तै था। अब सज्वलनकी बारह सग्रहकृष्टि तिनका समय समय प्रति अनतगुणा घटता अनुभाग होनेकरि अपवर्तनघात वर्तै है ॥५१४॥

विशेष—कृष्टिवेदन कालके प्रथम समयमे कृष्टियोको उदयावलिमे प्रवेश कराते हुए क्रोध-सज्वलन की प्रथम सग्रह कृष्टिके प्रदेशपुजका अपकर्षण कर अपने वेदककालसे एक आवलि अधिक करके प्रथम स्थितिको उत्पन्न करता है। यह प्रथम स्थिति इसके ऊपर जो क्रोधवेदककाल है उसके साधिक तृतीय भाग प्रमाण होती है। इस प्रकार प्रथम स्थितिको करके उदयमे सबसे स्तोक देता है, उसके बादकी स्थितिमे असख्यातगुणे प्रदेशपुजको देता है। इस प्रकार देता हुआ प्रथम सग्रह कृष्टिके वेदककालसे एक आवलिप्रमाण स्थितियोकी अधिक करके उत्तरोत्तर असख्यातगुणे क्रमसे निक्षिप्त करता है। उसके बाद द्वितीय स्थितिको प्रथम स्थितिमे असख्यातगुणे द्रव्यको निक्षिप्त करता है। इसके आगे सर्वत्र असख्यात भागरूपसे विशेष हीन द्रव्यको निक्षिप्त करता है। मात्र गुणश्रेणिनिक्षेप गलितशेष जानना चाहिये। यहाँ पर क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टि ऐसा कहने

पर करनेकी अपेक्षा जो तीसरी सग्रह कृष्टि है उसे प्रथम जानना चाहिये। कारण कि जो अनुभाग की अपेक्षा जिसमे बहुत अनुभाग है उसका पहले उदय होता है। उत्तरोत्तर जो अनन्तगुणी विशुद्धि होती है उसके माहात्म्यवश इन सग्रह कृष्टियोका उदय इस विधिसे होता है ऐसा यहाँ जानना चाहिये।

पढमस्स सगहस्स य असखभागा उदेदि कोहस्स।
बधे वि तहा चेव य माणतियाण तहा बधे[1] ॥५१५॥

प्रथमस्य सग्रहस्य च असंख्यभागान् उदयति क्रोधस्य।
बधेऽपि तथा चैव च मानत्रयाणा तथा बधे ॥५१५॥

स० च०—कृष्टिवेदकका प्रथम समयविषै क्रोधकी प्रथम सग्रहकृष्टिसम्बन्धी जे अतर कृष्टि तिनके प्रमाणकौ असख्यातका भाग दीए तहा बहुभागमात्र कृष्टि उदय आवै है। तहा एक भागमात्र नीचेकी ऊपरिकी कृष्टिकौ छोडि बीचिकी बहुभागमात्र कृष्टिनिका उदय हो है। जे प्रथम द्वितीयादि कृष्टि तिनकौ नीचली कृष्टि कहिए। बहुरि अत उपान्त आदि जे कृष्टि तिनकौ ऊपरली कृष्टि कहिए है। तहा उदयरूप न होइ ऐसी नीचली कृष्टि ते तौ अनन्तगुणा वधता अनुभागरूप होइ करि अर ऊपरिकी कृष्टि अनन्तगुणा घटता अनुभागरूप होइ करि ते कृष्टि बीचिकी कृष्टिरूप परिणमि उदय आवै है। बहुरि बधविषै भी नीचली ऊपरली असख्यातवा भागमात्र कृष्टि छोडि बीचिकी असख्यात बहुभागमात्र कृष्टि जाननी। उदयरूप कृष्टिनिविषै जो ऊपरली अनुदय कृष्टिनिका प्रमाण तातै साधिक दूणा प्रमाण लीए नीचली ऊपरली कृष्टिनिका प्रमाण घटाए बधरूप कृष्टिनिका प्रमाण हो है। इनका बध इहा हो है। बहुरि इहा मानादिककी अपनी अपनी प्रथम सग्रह कृष्टिकी नीचली ऊपरली कृष्टिप्रमाणका असख्यातवा भागमात्र कृष्टिनिकौ नीचै ऊपरि छोडि बीचिकी बहुभागमात्र कृष्टि बधै है। बहुरि इहा मानादिकनिकी तीनो ही सग्रह कृष्टिनिका उदय नाही है अर क्रोधकी द्वितीय तृतीय सग्रहकृष्टिका बध वा उदय नाही है, ऐसा जानना ॥५१५॥

विशेष—नियम यह है कि क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिसम्बन्धी जघन्य कृष्टिसे लेकर अधस्तन असख्यातवें भागको और उसीकी उत्कृष्ट कृष्टिसे लेकर उपरिम असख्यातवे भागको छोडकर शेष असख्यात बहुभागप्रमाण मध्यम कृष्टियाँ उस समय उदयको प्राप्त होती है, क्योकि अधस्तन और उपरिम असख्यातवें भागप्रमाण सदृश धनवाली कृष्टियोका परिणामविशेषके कारण मध्यम कृष्टिरूपसे ही उदय होता है यह इसका तात्पर्य है। तथा बन्ध भी इसी प्रकार जानना चाहिये।

कोहस्स पढमसगहकिट्टिस्स य हेट्ठिमणुभयट्ठाणा।
तत्तो उदयट्ठाणा उवरिं पुण अणुभयट्ठाणा ॥५१६॥
उवरिं उदयट्ठाणा चत्तारि पदाणि होंति अहियकमा।
मज्झे उभयट्ठाणा होंति असखेज्जसगुणियां ॥५१७॥

---

१ ताहे कोहस्स पढमाए सगहकिट्टीए असखेज्जा भागा उदिण्णा। एदिस्से चेव कोहस्स पढमाए सग्रहकिट्टीए असखेज्जा भागा वज्झति। क० चु०, पृ० ८०४।

२ सेसाओ दो सगहकिट्टीओ ण वज्झति ण वेदिज्जति। पढमाए सगहकिट्टीए हेट्ठदो जाओ

क्रोधस्य प्रथमसग्रहकृष्टेश्चाधस्तनानुभयस्थानानि ।
तत उदयस्थानानि उपरि पुनरनुभयस्थानानि ॥१६॥
उपरि उदयस्थानानि चत्वारि पदानि भवति अधिकक्रमाणि ।
मध्ये उभयस्थानानि भवति असख्येयसगुणितानि ॥५१७॥

स० च०– क्रोधकी प्रथम सग्रहकृष्टिकी अतर कृष्टिनिविषै अधस्तन कहिए प्रथम द्वितीयादि नीचली जे अनुभय स्थान कहिए जिनका उदय अर बध दोऊ नाही ऐसी नीचली कृष्टि तिनिका प्रमाण स्तोक है। ताकी सदृष्टि दोयका अक २। बहुरि तातै ताहीकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा एक भागमात्र विशेषकरि अधिक तिनि अनुभय कृष्टिनिके ऊपरिवर्त्ती जे नीचली उययस्थाना कहिए जिनिका उदय पाइए बध न पाइए ऐसी कृष्टि तिनिका प्रमाण है। ताकी सदृष्टि तीनका अक ३। वहुरि तातै ताहीकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए तहा एक भागमात्र विशेषकरि अधिक उपरितन कहिए अन्त उपान्त आदि ऊपरिकी अनुभयस्थाना कहिए बध उदय रहित कृष्टि तिनका प्रमाण है। ताकी सदृष्टि च्यारिका अक ४। बहुरि तातै ताहीकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा एक भागमात्र विशेषकरि अधिक तिनि कृष्टिनिके नीचै पाइए ऐसो ऊपरली उदयस्थाना कहिए उदय सहित बध रहित कृष्टि तिनका प्रमाण है। ताकी सदृष्टि सातका अक ७, ऐसै च्यारि पद तौ अधिक क्रम लीए है बहुरि तातैं असख्यातगुणा वीचिकी उभयस्थाना कहिए जिनिका बध भी पाइए अर उदय भी पाइए ऐसी कृष्टिनिका प्रमाण है। सोई कहिए है—

क्रोधकी प्रथम सग्रहकृष्टिविषै जो कृष्टिनिका प्रमाण ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभागमात्र तौ वीचिकी उभय कृष्टिनिका प्रमाण। बहुरि अवशेष एक भाग रह्या ताकौ 'प्रक्षेपयोगोद्धृतमिश्रपिंड' इत्यादि सूत्र विधानतै अक सदृष्टि अपेक्षा दोय तीन च्यारि सात शलाकानिकौ जोडै सोलह भया ताका भाग देइ जो एक भागका प्रमाण आया ताकौं अपनी अपनी दोय आदि शलाकानिकरि गुणैं नीचली अनुभय कृष्टि आदिकनिका प्रमाण आवै है। ऐसैं ही बारह सग्रह कृष्टिनिका वेदक कालका प्रथय समय विषै अल्पबहुत्व जानना ॥ ५१६–५१७ ॥

विशेष—क्रोध सज्वलनकी प्रथम सग्रहकृष्टिसम्बन्धी अधस्तन जघन्य कृष्टिसे लेकर असख्यातवें भागप्रमाण जिन कृष्टियोका बध और उदय दोनो नही होते वे स्तोक है। उनसे उपरिम कृष्टिसे लेकर समस्त कृष्टि अध्वानके असख्यातवे भागप्रमाण जिन कृष्टिओका मात्र उदय होता है, बध नही होता वे विशेष अधिक हैं। यहाँ विशेषका प्रमाण अधस्तन अध्वानके असख्यातवे भागप्रमाण है। तात्पर्य यह कि अधस्तन अध्वानमे पल्यके असख्यातवे भागका भाग देने पर जो प्रमाण उपलब्ध है उतना विशेषका प्रमाण है। उसी प्रथम सग्रह कृष्टिकी ऊपर जिन कृष्टियोका न बध होता और न उदय होता वे सकल कृष्टि अध्वानके असख्यातवें भागप्रमाण होकर भी पूर्वोक्त उदय कृष्टियोसे विशेष अधिक हैं। यहाँ भी विशेषका प्रमाण पहलेके समान जानना चाहिये। इनसे ऊपर जिन कृष्टियोका मात्र उदय होता है बध नही होता वे विशेष

किट्टीओ ण वज्झति ण वेदिज्जति ताओ थोवाओ। । मज्झे जाओ किट्टीओ वज्झति च वेदिज्जति च ताओ असखेज्जगुणाओ। क० चु०, पृ० ८०४–८०५।

अधिक हैं। यहाँ भी विशेषका प्रमाण पहलेके समान जानना चाहिये। यहाँ पूर्वोक्त अग्रस्तन और उपरिम असख्यातवे भागप्रमाण कृष्टियोको छोडकर उदय और वधको प्राप्त होनेवाली शेष समस्त मध्यम कृष्टियाँ पूर्वोक्त कृष्टियोसे असख्यातगुणी हैं। यहाँ गुणकार तत्प्रायोग्य पल्योपमके असख्यातवे भागप्रमाण है।

विदियादिसु चउठाणा पुव्विल्लेहिं असखगुणहीणा।
तत्तो असखगुणिदा उवरिमणुभया तदो उभया ॥ ५१८ ॥

द्वितीयादिसु चतु स्थानानि पूर्वेभ्योऽसख्यगुणहीनानि।
तत• असख्यगुणितानि उपर्यनुभयानि तत उभयानि ॥ ५१८ ॥

स० च०—अब कृष्टिकरण कालका द्वितीयादि समयनिविषै कहिए है—पूर्व समयविषै जे नीचली वंध रहित केवल उदय कृष्टि थी ते तौ उत्तर समयविषै उभय कृष्टिरूप हो है। अर पूर्व समयविषै अनुभय कृष्टि थी तिनविषै अतकी केते इक कृष्टि उभयरूप तिनतै नीचली केती इक केवल उदयरूप उत्तर समयविषै हो है। बहुरि पूर्व समयविषै जे ऊपरिकी केवल उदय कृष्टि थी ते सर्व उत्तर समयविषै अनुभयरूप हो हैं। बहुरि पूर्व समयविषैं जे उभय कृष्टि थी तिनविषै अतकी केती इक कृष्टि अनुभयरूप तिनतै नीचैं केती इक केवल उदयरूप कृष्टि उत्तर समयविषै हो है। ऐसैं समय समय प्रति बध अर उदयविषै अनुभागका घटना हो है जातै नीचली कृष्टिनिविषै अनुभाग स्तोक पाइए है, ऊपरिकी कृष्टिनिविषै अनुभाग बहुत पाइये है। ऐसै होतै अल्पवहुत्व कहिए है—

नीचेकी अनुभय कृष्टि तौ स्तोक है तातै तिनके ऊपरि जे नीचली केवल उदय कृष्टि ते विशेष अधिक हैं। तातै परै उपरि पूर्व समयविषै जो उत्कृष्ट अनुभाग लीए अतकी बधरूप कृष्टि थी तातै लगाय नीचैं जे उत्तर समयविषै अनुभय कृष्टि भई ते विशेष अधिक है। तातै तिनके नीचै जे विवक्षित समयविषै केवल उदयरूप कृष्टि भईं ते विशेष अधिक है। ऐसै ए च्यारि स्थान तौ पूर्व समयविषै नीचली अनुभय कृष्टि आदिका प्रमाण जो था तातै असख्यातगुणे घाटि है। बहुरि तिन उदय कृष्टिनितै पूर्व समयविषै जो ऊपरिकी उदय कृष्टि थी तिनविषै स्तोक अनुभाग लीए जो आदिकी जघन्य कृष्टि तीहि समान कृष्टितै लगाय जे उत्तर समयविषै सर्व अनुभय कृष्टि भईं ते असख्यातगुणी है। जातै पूर्व समयविषै जो ऊपरिकी अनुभय कृष्टिनिका प्रमाण था ताके असख्यातवे भागमात्र कृष्टि पूर्व समयसबधी ऊपरिकी जघन्य उदय कृष्टितै नीचै उत्तरोत्तर समयविषै ऊपरिकी जघन्य अनुभय कृष्टि हो हैं। बहुरि तातै पूर्व समयसबधो ऊपरिकी उदय कृष्टिनिका प्रमाणके असख्यातवे भागमात्र कृष्टि नीचैं उतरै इस विवक्षित समयविषै ऊपरिकी जघन्य उदय कृष्टि हो है। बहुरि तिन अनुभय कृष्टिनिका प्रमाणतै वीचिविषै जे बध उदय युक्त उभय कृष्टि है ते असख्यातगुणी है। ऐसै द्वितीयादि समयनिविषै कृष्टिनिका अल्पबहुत्व जानना ॥५१८॥

विशेष—उत्तरोत्तर परिणामोमे विशुद्धि होते जानेके कारण एक तो सत्तामे स्थित अनु-

---

१ पढमसमयकिट्टीवेदगस्स कोधकिट्टी उदए उक्कस्सिया बहुगी। बधे उक्कस्सिया किट्टी अणतगुणहीणा। विदियसमये उदए उक्कस्सिया किट्टी अणतगुणहीणा। बधे उक्कस्सिया किट्टी अणतगुणहीणा। एव सव्विस्से किट्टीवेदगद्धाए। ध० पु० ६, पृ० ३८४।

भागमे उत्तरोत्तर हानि होती जाती है दूसरे प्रति समय बँधनेवाले अप्रशस्त कर्मोके अनुभागमे हानि होती जाती है, इसलिये प्रथम समयकी अपेक्षा द्वितीयादि समयोमे उक्त प्रकारसे अल्पबहुत्व प्राप्त होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसी तथ्यको आगेकी तीन गाथाओ द्वारा स्पष्ट किया गया है।

पुव्विल्लबधजेट्ठा हेट्ठासंखेज्जभागमोदरिय।
सपडिगो चरिमोदयवरमवरं अणुभयाण च ॥५१९॥

पौर्विकबधज्येष्ठात् अधस्तनमसख्येयभागमवतीर्य।
साप्रतिक चरमोदयवरमवर अनुभयाना च ॥५१९॥

स० च०—पूर्व समयसबधी बधकी उत्कृष्ट कृष्टि कहिए अतकी बध कृष्टि तातै लगाय पूर्व समयसबधी उभय कृष्टिनिके असख्यातवे भागमात्र कृष्टि नीचै उतरिकरि साम्प्रतिक कहिए वर्तमान उत्तर समयसम्बन्धी अतकी केवल उदयरूप उत्कृष्ट कृष्टि हो है। अर ताके अनतरि उपरि अनुभय कृष्टिकी जघन्य कृष्टि पाइए है। बहुरि तिस उत्कृष्ट उदय कृष्टितै नीचै पूर्व समयसम्बन्धी उदय कृष्टिके असख्यातवे भागमात्र कृष्टि नीचै उतरि साम्प्रतिक उदयकी जघन्य कृष्टि हो है। ताके अनतर नीचै उभय कृष्टिकी उत्कृष्ट कृष्टि हो है ऐसैं तौ ऊपरि भी कृष्टिनिविषै विधान जानना ॥५१९॥

हेट्ठिमणुभयवरादो असखबहुभागमेत्तमोदरिय।
सपडिबधजहण्ण उदयुक्कस्स च होदि त्ति ॥५२०॥

अधस्तनानुभयवरात् असख्यबहुभागमात्रमवतीर्य।
सप्रतिबंधजघन्य उदयोत्कृष्ट च भवतीति ॥५२०॥

स० च०—पूर्व समयसम्बन्धो अनुभय कृष्टिकी जो उत्कृष्ट कृष्टि कहिए अत कृष्टि तातै पूर्व समयसम्बन्धी अनुभय कृष्टिनिका असख्यात बहुभागमात्र कृष्टि नीचै ऊपरि साम्प्रतिक बन्ध कृष्टि जो बन्ध उदय युक्त उभय कृष्टि ताकी जघन्य कृष्टि हो है। बहुरि ताके अनन्तरि नीचली कृष्टि सो केवल उदय कृष्टिनिकी उत्कृष्ट कृष्टि है। तातै लगाय पूर्व समयसम्बन्धी उदय कृष्टि-निके असख्यातवे भागमात्र कृष्टि उतरि करि साम्प्रतिक उदय कृष्टिकी जघन्य कृष्टि हो है। ताके नीचैं पूर्व समयसम्बन्धी अनुभय कृष्टिनिके असख्यातवे भाग मात्र कृष्टि नीचैं उतरि साम्प्रतिक जघन्य अनुभय कृष्टि हो है। सोई सर्व कृष्टिनिविषैं जघन्य कृष्टि है। ऐसैं नीचली कृष्टिनिविषै विधान जानना। ऐसैं समय-समय प्रति पूर्व समयसम्बन्धी नीचली अनुभय उदय कृष्टि ऊपरली उदय अनुदय कृष्टिनिका प्रमाणतैं उत्तर समयसम्बन्धी तिनका प्रमाण असख्यात-गुणा घटता है। अर बीचिविषै जो उभय कृष्टि है तिनका प्रमाण विशेष अधिक हो है ऐसा जानना ॥५२०॥

पडिसमय अहिगदिणा उदये बधे च होदि उक्कस्स।
बंधुदये च जहण्णं अणतगुणहीणया किट्टी[1] ॥५२१॥

---

१ पढमसमयकिट्टीवेदगस्स कोहकिट्टीउदये उक्कस्सिया बहुगी। बधे उक्कस्सिया अणतगुणहीणा। विदियसमये उदये उक्कस्सिया अणतगुणहीणा। बधे उक्कस्सिया अणतगुणहीणा। एव सव्विस्से किट्टी-वेदगद्धाए। क० चु० पृ० ८५०–८५१।

प्रतिसमयमहिगतिना उदये बंधे च भवति उत्कृष्ट।
बधोदये च जघन्य अनतगुणहोनका कृष्टि ॥५२१॥

स० च०—समय-समय प्रति सर्पकी गतिवत् उत्कृष्ट कृष्टि तौ उदय अर वन्ध विपै वहुरि जघन्य कृष्टि बन्ध अर उदय विषैं अनन्तगुणा घटता क्रमलीए अनुभाग अपेक्षा जाननी। सोई कहिए है—

सर्व कृष्टिनिके अनत बहुभागमात्र बीचिकी कृष्टि वंधरूप है, तिनतै साधिक उदयरूप हैं। तिन विषैं जो सर्वतै स्तोक अनुभाग लीए प्रथम कृष्टि सो जघन्य कृष्टि कहिए। सर्वतै अधिक अनुभाग लीए अन्त कृष्टि सो उत्कृष्ट कृष्टि कहिए। तहाँ कृष्टिवेदकका प्रथम समय विपै जो उदयकी उत्कृष्ट कृष्टि सो बहुत अनुभागयुक्त है। तातै तिसही समयविषै वन्धकी उत्कृष्ट कृष्टि अनतगुणा घटता अनुभाग लीए है। तातै द्वितीय समयविषैं उदयकी उत्कृष्ट कृष्टि अनतगुणा घटता अनुभाग लीए है। तातै तिसही समयविषै बन्धकी उत्कृष्ट कृष्टि अनतगुणा घटता अनुभाग लीए है। तातै तीसरा समय विषै उदयकी उत्कृष्ट कृष्टि अनतगुणा घटता अनुभाग लीए है। तातैं तिस समय विषै बन्धकी उत्कृष्ट कृष्टि अनन्तगुणा घटता अनुभाग लीए है। या प्रकार जैसैं सर्प इधरतै इधर उधरतै इधर गमन करै है तैसैं विवक्षित समयविषै उदयकीतै बन्धकी अर पूर्व समय सम्बन्धी बन्धकीतै उत्तर समयसम्बन्धी उदयकी उत्कृष्ट कृष्टिविषै अनन्तगुणा घटता अनुभाग क्रमतैं जानना। बहुरि कृष्टिवेदकका प्रथम समयविषै बन्धकी जघन्य कृष्टि बहुत अनुभागयुक्त है। तातैं तिस समयविषैं उदयकी जघन्य कृष्टि अनन्तगुणा घटता अनुभागयुक्त है। तातै दूसरा समय विषै बन्धकी जघन्य कृष्टि अनतगुणा घटता अनुभागयुक्त है, तातैं तिस समयविषै उदय की जघन्य कृष्टि अनन्तगुणा घटता अनुभागयुक्त है। ऐसैं सर्पकी चालवत् एक समयविषैं बन्धकीतै उदयकी अर पूर्व समयसम्बन्धी उदयकीतै उत्तर समयसम्बन्धी बन्धकी जघन्य कृष्टि विषै अनन्तगुणा अनन्तगुणा घटता अनुभाग जानना। ऐसी प्ररूपणा क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टि वेदककालका अत समय पर्यंत है। वहुरि ताकी द्वितीय तृतीय सग्रह कृष्टि वेदककै भी ऐसैं ही क्रम जानना ॥५२१॥

विशेष—क्रोधसज्वलनकी जो प्रथम सग्रह कृष्टियाँ बन्ध उदयरूपसे प्रवृत्त होती है उनमेसे नीचे और ऊपरकी असख्यातवें भागप्रमाण कृष्टियोको छोडकर मध्यम कृष्टिरूपसे प्रवृत्त होती है। इस प्रकार प्रवृत्त होनेवाले बन्ध और उदयकी अग्र स्थितियाँ प्रत्येक समयमे अनन्तगुणी हीन होकर प्रवृत्त होती है। उन मध्यम कृष्टियोमेसे प्रथम समयमे उदयमे प्रवेश होनेवाली जो अनन्त मध्यम कृष्टियाँ है उनमे जो सवसे उपरिम उत्कृष्ट कृष्टि है वह तीव्र अनुभागवाली है। उससे बँधनेवाली जो उत्कृष्ट कृष्टि है वह अनन्तगुणी हीन है, क्योकि उदयको प्राप्त होनेवाली उत्कृष्ट कृष्टि है उससे अनन्त कृष्टियाँ नीचे उतरकर इसका अवस्थान देखा जाता है। उससे दूसरे समयमे उदयको प्राप्त होनेवाली उत्कृष्ट कृष्टि अनन्तगुणी हीन है। तथा उससे दूसरे समयमे बँधनेवाली उत्कृष्ट कृष्टि अनन्तगुणी हीन है। इसी प्रकार पूरे कृष्टि वेदककालमे अल्प-वहुत्व जानना चाहिये।

अब सक्रमण द्रव्यका विधान कहिए है—

सकमदि संगहाण दव्वं सगहेट्ठिमस्स पढमो त्ति ।
तदणुदये सखगुण इदरेसु हवे जहाजोग्ग[1] ॥५२२॥

सक्रामति सग्रहाणा द्रव्य स्वकाधस्तनस्य प्रथम इति ।
तदनूदये संख्यगुणमितरेषु भवेत् यथायोग्यम् ॥५२२॥

स० च०—सग्रह कृष्टिनिका द्रव्य है सो विवक्षित स्वकीय कषायके नीचै जो कषाय ताकी प्रथम सग्रह कृष्टिपर्यंत सक्रमण करै है। भावार्थ यहु—जो स्वस्थानविषै विवक्षित कषायकी सग्रह कृष्टिका द्रव्य तिस ही कषायकी अन्य सग्रह कृष्टिविषै सक्रमण करै तौ तीसरी सग्रह कृष्टिपर्यन्त करै। अर परस्थानविषै जो अन्य कषायविषैं सक्रमण करै तौ तिस विवक्षित कषायतै लगती जो कषाय ताकी प्रथम सग्रह कृष्टिविषै सक्रमण करै। जो द्रव्य जिसविषै सक्रमण करै सो द्रव्य तिस ही रूप परिणमै है। तहाँ जिस सग्रह कृष्टिकौ भोगवै है ताका अपकर्षण कीया हुआ द्रव्यतै ताकै अनन्तरि भोगने योग्य जो सग्रह कृष्टि तिसविषै सख्यातगुणा द्रव्य सक्रमण हो है। औरनिविषै यथायोग्य सक्रमण हो है। सोई कहिए है—

जैसैं प्रवृत्तिविषै जमा-खरच कहिए तैसै इहा आय द्रव्य व्यय द्रव्य कहिए है। जो अन्य सग्रह कृष्टिनिका द्रव्य सक्रमण करि विवक्षित सग्रह कृष्टि विषै आया—प्राप्त भया ताका नाम आय द्रव्य है। बहुरि विवक्षित सग्रह कृष्टिका द्रव्य सक्रमण करि अन्य सग्रह कृष्टिनिविषैं गया ताका नाम व्यय द्रव्य है। बहुरि इहा क्रोधका प्रथम सग्रह कृष्टि बिना अन्य ग्यारह सग्रह कृष्टिनिका अपना-अपना जो द्रव्य ताकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए जो एक भाग मात्र द्रव्य सक्रमण करै है सो एक द्रव्य कहिए है। बहुरि क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिका द्रव्यकौ अपकर्पण भागहारका भाग दीए जो एक भागमात्र द्रव्य सक्रमण करै सो तेरह द्रव्य कहिए है, जातै अन्य सग्रह कृष्टिका द्रव्यतै क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिका द्रव्य नोकषायके द्रव्य मिलनेतैं तेरहगुणा है[2]। तहा लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिविषै लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टि अर द्वितीय सग्रह कृष्टिका अपकर्षण कीया द्रव्य सक्रमण करै है, तातै ताकै आय द्रव्य दो है। बहुरि लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टिविषैं लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टिका ही अपकर्षण कीया द्रव्य सक्रमण करै है,

---

१ कोहविदियकिट्टीदो पदेसग्ग कोहतदिय च माणपढम च गच्छदि। कोहस्स तदियादो किट्टीदो माणस्स पढम चेव गच्छदि। माणस्स पढमादो किट्टीदो माणस्स विदिय तदियाए मायाए पढम च गच्छदि। माणस्स विदियकिट्टीदो माणस्स तदिय च मायाए पढम च गच्छदि। माणस्स तदियकिट्टीदो मायाए पढम गच्छदि। मायाए पढमादो पदेसग्ग मायाए विदिय तदिय च लोभस्स पढम किट्टि च गच्छदि मायाए विदियादो किट्टीदो पदेसग्ग मायाए तदिय लोभस्स पढम च गच्छदि। मायाए तदियादो किट्टीदो पदेसग्ग लोभस्स पढम गच्छदि। लोभस्स पढमादो किट्टीदो पदेसग्ग लोभस्स विदिय च तदिय च गच्छदि। लोभस्स विदियादो पदेसग्ग लोभस्स तदिय गच्छदि। क० चु० पृ० ८५६।

२ कोहस्स विदियाए सगहकिट्टीए पदेसग्ग थोव। पढमाए सगहकिट्टीए पदेसग्ग सखेज्जगुण, तेरसगुणमेत्त । क० चु० पृ० ८११–८१२।

तातै ताके आय द्रव्य एक है। बहुरि लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिविषै मायाकी प्रथम द्वितीय तृतीय संग्रह कृष्टिका अपकर्षण कीया द्रव्य संक्रमण करै है तातै ताकै आय द्रव्य तीन है। बहुरि मायाकी तृतीय संग्रह कृष्टिविषै मायाकी द्वितीय प्रथम संग्रह कृष्टिका अपकर्षण कीया द्रव्य संक्रमण करै है, तातैं ताकै आय द्रव्य दोय हैं। बहुरि मायाकी द्वितीय संग्रह कृष्टिविषै मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टिका अपकर्षण कीया द्रव्य संग्रह करै है, तातै ताकै आय द्रव्य एक है। बहुरि मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टिविषैं मानकी प्रथम, द्वितीय, तृतीय संग्रह कृष्टिका अपकर्षण कीया द्रव्य संक्रमण हो है, तातैं ताकैं आय द्रव्य तीन है। बहुरि मानकी तृतीय संग्रह कृष्टिविषै मानकी द्वितीय तृतीय संग्रह कृष्टिका अपकर्षण कीया द्रव्य संक्रमण हो है, तातैं ताकै आय द्रव्य दोय है। बहुरि मानकी द्वितीय संग्रह कृष्टिविषै मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिका ही अपकर्षण कीया द्रव्य संक्रमण हो है, तातैं ताकै आय द्रव्य एक है। बहुरि मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिविषै क्रोधकी प्रथम द्वितीय तृतीय संग्रह कृष्टिका अपकर्षण कीया द्रव्य संक्रमण हो है, तातै ताकै आय द्रव्य पंद्रह है। बहुरि क्रोधकी तृतीय संग्रह कृष्टिविषैं क्रोधकी प्रथम द्वितीय कृष्टिका अपकर्षण कीया द्रव्य संक्रमण हो है, तातै ताकै आय द्रव्य चोदह है। बहुरि क्रोधकी द्वितीय संग्रह कृष्टिविषै क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिका अपकर्षण कीया द्रव्य तेरह तातै चौदहगुणा संक्रमण हो है, तातै ताकै आय द्रव्य एकसौ वियासी है। इहा चौदहगुणा करनेका प्रयोजन कहिए है—

अनंतरि भोगने योग्य संग्रह कृष्टिविषै संख्यातगुणा द्रव्यका संक्रमण होना कह्या है सो इहा संख्यातका प्रमाण अपने गुणकारतै एक अधिक जानना। सो यहु क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिकौ भोगवै है। अर ताके अनंतरि क्रोधकी द्वितीय संग्रह कृष्टिकौ भोगवै है, तातै क्रोधकी प्रथम कृष्टिका अपकर्षण कीया द्रव्यतै संख्यातगुणा द्रव्यका द्वितीय संग्रह कृष्टिविषै संक्रमण हो है। बहुरि इहा प्रथम कृष्टिका द्रव्यविषै तेरहका गुणकार है, तातै एक अधिक कीए संख्यातका प्रमाण चौदह इहा जानना। अन्य संग्रह कृष्टि वेदकविषै संख्यातका प्रमाण अन्य होगा सो आगे कहैंगे। बहुरि क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिविषै आय द्रव्य है नाही, जातै आनुपूर्वी संक्रमण पाइए है। इहा संक्रमण द्रव्यकौ अपकर्षण द्रव्यका अनुभाग घटनेकी अपेक्षा हानि होनेतै कह्या है। ऐसैं आय द्रव्यका विभाग कह्या। अब व्यय द्रव्यका विभाग कहिए है—

क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिका द्रव्य क्रोधकी द्वितीय तृतीय मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिविषै गया, तातै एकसौ वियासी तेरह तेरह द्रव्य मिलि ताकै व्यय द्रव्य दोयसै आठ हो है। बहुरि क्रोधकी द्वितीय कृष्टिका द्रव्य क्रोधकी तृतीय मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिविषै गया, तातै ताकै व्यय द्रव्य दोय हो है। बहुरि क्रोधकी तृतीय कृष्टिका द्रव्य मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिहीविषै गया, तातै ताके व्यय द्रव्य एक है। बहुरि मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिका द्रव्य मानकी द्वितीय तृतीय मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टिविषै गया, तातै ताकै व्यय द्रव्य तीन है। बहुरि मानकी द्वितीय संग्रह कृष्टिका द्रव्य मानकी तृतीय मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टिविषै गया, तातै ताकै व्यय द्रव्य दोय हैं। बहुरि मानकी तृतीय संग्रह कृष्टिका द्रव्य मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टि ही विषै गया, तातै ताके व्यय द्रव्य एक है। बहुरि मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टिका द्रव्य मायाकी द्वितीय तृतीय लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिविषै गया, तातै ताकै व्यय द्रव्य तीन है। बहुरि मायाकी द्वितीय कृष्टिका द्रव्य मायाकी तृतीय लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिविषै गया, तातै ताकै व्यय द्रव्य दोय हैं। बहुरि मायाकी तृतीय संग्रह कृष्टिका द्रव्य लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिविषै ही गया, तातै ताकै व्यय द्रव्य एक है।

बहुरि लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टिका द्रव्य लोभकी द्वितीय तृतीय सग्रह कृष्टिविषै गया, तातै ताकैं व्यय द्रव्य दोय है। बहुरि लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टिका द्रव्य लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिविषै गया, तातै ताकैं व्यय द्रव्य एक है। बहुरि लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिका द्रव्य अन्यत्र न जाय है, जातै विपरीत सक्रमणका अभाव है तातै ताकैं व्यय द्रव्य नाही है। ऐसै व्यय द्रव्यका विभाग कह्या ॥ ५२२ ॥

विशेष—अक सदृष्टिकी अपेक्षा मोहनीयका पूरा द्रव्य ४९ अक प्रमाण है। पुन इसके दो भाग करनेपर उनमेसे असख्यातवे भागसे अधिक एक भाग चारो सज्वलन कषायोका द्रव्य है और असख्यातवाँ भाग हीन एक भाग नोकषायोका द्रव्य है। उसका प्रमाण २४ है। कषायके द्रव्यको १२ सग्रह कृष्टियोमे विभाजित करनेपर क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिको १२वाँ भाग प्राप्त होता है जो २ अक प्रमाण है। वह मोहनीयके पूरे द्रव्यकी अपेक्षा कुछ कम २४ वें भाग प्रमाण होता है। अक सदृष्टिकी अपेक्षा वह २ अक प्रमाण है। किन्तु नोकषायका समस्त द्रव्य क्रोध सज्वलनकी प्रथम सग्रह कृष्टिमे सक्रमित होता है, क्योकि उसका वेदककी प्रथम संग्रह कृष्टिरूपसे परिणमन देखा जाता है। अतएव नोकषायके समस्त द्रव्यके साथ क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिका कुल द्रव्य (२४ + २ = २६) अक प्रमाण हो जाता है। इसे क्रोधकी द्वितीय सग्रह कृष्टिके २ अक प्रमाण द्रव्यसे भाजित करने पर २६ – २ = १३ होता है, इसीलिये क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिके द्रव्य को उसीकी दूसरी सग्रह कृष्टिकी अपेक्षा १३ गुणा कहा है।

आगै अनुसमय अपवर्तनकी प्रवृत्तिका क्रम कहिए है—

पडिसमयमसखेज्जदिभागं[1] णासेदि कंडयेण विणा।
बारससगहकिट्टीणग्गदो किट्टिवेदगो णियमा[2] ॥ ५२३ ॥

प्रतिसमयमसख्येयभागं नाशगति काडकेन विना।
द्वादशसग्रहकृष्टीनामग्रत कृष्टिवेदको नियमात् ॥ ५२३ ॥

स० च—कृष्टिवेदक जीव है सो काडक बिना बारह् सग्रह कृष्टिनिका अग्रभागतै सर्व कृष्टिनिके असख्यातवे भागमात्र कृष्टिनिकौ नष्ट करै है नियमतैं। भावार्थ—कृष्टिकरण कालका अत समयपर्यंत तौ अतर्मुहूर्त कालकरि निष्पन्न जो काडक विधान ताकरि अनुभागका नाश होता था अब कृष्टि भोगनेका प्रथम समयतै लगाय समय समय प्रति अग्रयात होने लगा। तहा बारह् सग्रह कृष्टिनिका जे अतर कृष्टि तिनविषै अत कृष्टितैं लगती जे बहुत अनुभाग युक्त ऊपरिकी केते इक कृष्टि तिनका नाशकरि तिनि कृष्टिनिके द्रव्यकौ स्तोक अनुभाग यक्त नीचली कृष्टिनिविषै निक्षेपण करिए है। तहा जिनि कृष्टिनिका नाश कीया तिनिका नाम घात कृष्टि है सो अपनी अपनी सग्रह कृष्टिविषै अन्तर कृष्टिनिका प्रमाण स्थापि ताकौ अपकर्षण भागहारके असख्यातवें भागमात्र जो असख्यात ताका भाग दीए अपनी अपनी घात कृष्टिनिका प्रमाण आवै है।

---

१ मु० प्रतौ पडिसमय सखेज्जदिभाग इति पाठ ।

२ किट्टीण पढमसमयवेदगो वारसण्ह पि सगहकिट्टीणमग्गकिट्टिमादिं कादूण एक्केक्किस्से सगहकिट्टीए असखेज्जदिभाग विणासेदि। क० चु० पृ० ८५२।

बहुरि इन घात कृष्टिनिके जे परमाणू ताका नाम घात द्रव्य है, सो अपनी अपनी अन्त कृष्टिका द्रव्यकौं घात कृष्टिनिका प्रमाण करि गुणैं अन्त कृष्टिके नीचैं एक एक विशेष वधता है। तातैं विशेष अधिक कीए घात द्रव्यका प्रमाण आवै है ॥ ५२३ ॥

विशेष—प्रति समय अनन्तगुणी विशुद्धिसे वृद्धिको प्राप्त होता हुआ यह प्रथम समयवर्ती कृष्टिवेदक जीव जो बारह संग्रह कृष्टियाँ हैं उनमेसे एक-एक कृष्टिसम्बन्धी उत्कृष्ट कृष्टिसे लेकर उपरिम अनन्त कृष्टियोके असख्यातवे भागमात्र कृष्टियोका अपवर्तनाघातके द्वारा एक समयमे घात करता है। उसकी कृष्टियोकी शक्तिको अपवर्तनाघातके द्वारा अधस्तन कृष्टिरूपसे परिणमाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसी प्रकार द्वितीयादि समयोमे भी अपवर्तनाघात जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि प्रथम समयमे विनाशको प्राप्त होनेवाली कृष्टियोसे द्वितीयादि समयोमे विनाशको प्राप्त होनेवाली कृष्टियाँ उत्तरोत्तर असख्यातगुणी हीन जानना चाहिये।

णासेदि परट्ठाणियगोउच्छं अग्गकिट्टिघादादो।
सट्ठाणियगोउच्छ संकमदव्वादु घादेदि ॥ ५२४ ॥

नाशयति परस्थानक गोपुच्छमग्रकृष्टिघातात्।
स्वस्थानिकगोपुच्छ सक्रमद्रव्यात् घातयति ॥ ५२४ ॥

स० च—अग्रकृष्टि घाततैं तौ परस्थान गोपुच्छकौ नष्ट करै है अर सक्रम द्रव्य जो अन्य सग्रहरूप भया ऐसा पूर्वोक्त व्यय द्रव्य तातै स्वस्थान गोपुच्छकौ नष्ट करै है। कैसैं? सो कहिए है—

विवक्षित एक सग्रहकृष्टिविषै जो अन्तर कृष्टिनिकैं विशेष घटता क्रम पाइए सो इहा स्वस्थान गोपुच्छ कहिए है। बहुरि नीचली विवक्षित सग्रहकृष्टिकी अन्त कृष्टितैं ऊपरिकी अन्य सग्रह कृष्टिकी आदि कृष्टिकैं विशेष घटता क्रम पाइए है सो इहा परस्थान गोपुच्छ कहिए। तहा कृष्टिनिकैं हीन अधिक द्रव्यका सक्रमण होनेतैं चय घटता क्रम नष्ट भया तातैं पूर्वैं स्वस्थान गोपुच्छ था ताका सक्रमण द्रव्यकरि नाश भया। बहुरि नीचली सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टि अर ऊपरली सग्रह कृष्टिकी आदि कृष्टि तिनिके बीचि कृष्टिनिका घात होनेतैं एक विशेष घटता क्रम न रह्या तातैं पूर्वै परस्थान गोपुच्छ था ताका घातद्रव्यकरि नाश भया ॥ ५२४ ॥

आयादो वयमहिय हीण सरिस कहिं पि अण्ण च।
तम्हा आयदव्वा ण होदि सट्ठाणगोउच्छ ॥ ५२५ ॥

आयतो व्ययमधिक हीन सदृशं कुत्रापि अन्यच्च।
तस्मादायद्रव्यान्न भवति स्वस्थानगोपुच्छम् ॥ ५२५ ॥

स० च—इहा कोऊ कहै व्यय द्रव्य गया अर आय द्रव्य आया तातै व्यय द्रव्य करि स्वस्थान गोपुच्छका नाश कह्या, आय द्रव्यकरि स्वस्थान गोपुच्छका होना कह्या, तहा कहिए है—

कही सग्रहकृष्टिविषैं आय द्रव्यतैं व्यय द्रव्य अधिक है, कही हीन है, कही समान है, कही आय द्रव्य है, व्यय नाही, कही व्यय द्रव्य है आय द्रव्य नाही। तातैं आय द्रव्यतै स्वस्थान गोपुच्छ न हो है ॥ ५२४ ॥

अब जैसै स्वस्थान परस्थान गोपुच्छका सद्भाव हो है तैसै कहिए है—

घादयदव्वादो पुण नय आयदखेत्तदव्वग देदि ।
सेसासखाभागे अणतभागूणय देदि ॥ ५२६ ॥

घातकद्रव्यात् पुनर्व्ययमायतक्षेत्रद्रव्यक ददाति ।
शेषासख्यभागं अनतभागोनक ददाति ॥ ५२६ ॥

स० च—घात द्रव्यतै व्यय द्रव्य अर आयतक्षेत्र द्रव्यकौ दीए एक गोपुच्छ हो है। कैसै ? सो कहिए है—

पूर्वै जो व्यय द्रव्य कह्या तामै जिनि कृष्टिनिका घात कीया तिनि कृष्टिनिका व्यय द्रव्य घटाए अवशेष रहैं तितना द्रव्य घातद्रव्यतै ग्रहणकरि जिन कृष्टिनिका जितना जितना व्यय द्रव्य भया था तिन कृष्टिनिका तितना तितना देइ पूरण कीए स्वस्थान गोपुच्छका सद्भाव हो है। घात कृष्टिसम्बन्धी व्यय द्रव्य कितना ? सो कहिए है—

अपनो अपनी सग्रहकृष्टिकी अन्त कृष्टिका द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए तिस अन्त कृष्टिका व्यय द्रव्यका प्रमाण आवै हैं। ताकौ अपनी अपनी घात कृष्टिनिका प्रमाणकरि गुणै अर तहा विशेष अधिक कीए सर्व घात कृष्टिसम्बन्धी व्यय द्रव्यका प्रमाण हो है, सो घात कृष्टिनिका तौ नाश ही भया सो तहा द्रव्य देना ही नाही। तातै याकौ व्यय द्रव्यविषैं घटाइ अवशेष व्यय द्रव्यमात्र द्रव्य देनेकरि स्वस्थान गोपुच्छकी सिद्धि हो है। बहुरि लोभकी तृतीय सग्रहकृष्टिका घात कीए पीछै अवशेष रही जे कृष्टि तिनविषैं जो अन्त कृष्टि तिसतै लोभकी द्वितीय सग्रहकी प्रथम सग्रह कृष्टि है सो बीचि ही कृष्टिका घात होनेतैं एक अधिक लोभकी तृतीय सग्रहकी घात कृष्टिनिका प्रमाणमात्र जे विशेष कहिए चय तिनकरि हीन भई सो अपने नीचै लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी घात कृष्टिनिका को प्रमाण तितने विशैषनिका जेता द्रव्य होइ तितना द्रव्यकौ अपने घात द्रव्यतैं ग्रहणकरि तहा लोभकी द्वितीय सग्रहकी प्रथम कृष्टिविषै दीए यहु प्रथम कृष्टि तिस तृतीय सग्रहकी अन्त कृष्टितै एक विशेषमात्र घटती हो है। ऐसै ही याकी द्वितीयादि घात कीए पीछै अवशेष रही कृष्टिनिकी अन्त कृष्टिपर्यन्त कृष्टिनिविषैं तितना तितना द्रव्य घात द्रव्यतैं ग्रहणकरि दीए लोभकी तृतीय द्वितीय सग्रहविषै एक गोपुच्छ भया सो इहा आयतै नीचै तृतीय सग्रह ताकी घात कृष्टिनिका प्रमाणमात्र जे विशेष तिनका द्रव्य प्रमाण तौ चौडा अर अपनी घात कीए पीछै अवशेष रही कृष्टिनिका प्रमाणमात्र लबा क्षेत्र कल्पना कीए एक आयत चतुरस्र क्षेत्र भया। बहुरि ऐसै ही आयतै नीचैं द्वितीय तृतीय सग्रह कृष्टि तिन दोऊनिकी घात कृष्टिनिका जेता प्रमाण तितना विशेष प्रमाण तौ जुदा २ चौडा अर अपनी घात कीए पीछै अवशेष रही कृष्टिनिका प्रमाणमात्र लम्बा ऐसा दोय आयत चतुरस्र क्षेत्रप्रमाण द्रव्यकौ अपनी घात द्रव्यतैं ग्रहणकरि लोभकी प्रथम सग्रहकी प्रथमादि कृष्टिनिविषै दीए लोभकी तीनो सग्रहकृष्टिनिका एक गोपुच्छ भया। ऐसै ही क्रमकरि अपने नीचली सग्रह कृष्टिनिकी घात कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेषनिकरि तौ जुदा जुदा चौडा अर अपनी घात कीए पीछै अवशेष रही कृष्टिनिका प्रमाणमात्र लम्बा ऐसै क्रमतै तीन च्यारि पाच छह सात आठ नव दश ग्यारह आयत चतुरस्र क्षेत्ररूप द्रव्य ताकौ अपने अपने घात द्रव्यतैं ग्रहणकरि क्रमतै मायाको तृतीय सग्रहादि क्रोधकी प्रथम सग्रह पर्यन्त सग्रह कृष्टिनिविषैं दीए बारह सग्रह कृष्टिनिका एक गोपुच्छ हो है।

ऐसै आयत चतुरस्र क्षेत्ररूप द्रव्य देनेकरि परस्थान गोपुच्छकी सिद्धि भई। या प्रकार स्वस्थान परस्थान गोपुच्छ सम्पूर्ण हो है। बहुरि इहा सर्व मोहनीयका द्रव्य साधिक द्व्यर्थ गुणहानि गुणित आदि वर्गणामात्र है ताकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए अर साधिक नवगुणा कीए समस्त व्यय द्रव्यका प्रमाण आवै है। जातै सर्व मोहके द्रव्यकौ चौईसका अर अपकर्षण भागहारका भाग दीए एक व्यय द्रव्यका प्रमाण होइ अर पूर्वोक्त समस्त व्यय द्रव्यनिकौ जोडै दोयसै छब्बीस होइ। तहा दोयसै छब्बीस गुणकारका चौईसकरि अपवर्तन कीए साधिक नवका गुणकार हो है। बहुरि सर्व मोहनीयके द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारके असख्यातवा भागका भाग दीए सर्व घात द्रव्यका प्रमाण हो है। सो इस घात द्रव्यतै पूर्वोक्त व्यय द्रव्य अर आयत चतुरस्र क्षेत्ररूप जो द्रव्य ग्रहण कीया सो याके असख्यातवे भागमात्र है, सो घटाए अवशेष बहुभागमात्र द्रव्य रह्या ताकौ अनतवा भागमात्र जो एक विशेष ताकरि घटता क्रम लीए दीजिए है। कैसै ? सो कहिए है—सर्व अवशेष घात द्रव्यका घात कीए पीछै अवशेष रही कृष्टिका प्रमाणमात्र जो गच्छ ताका भाग दीए मध्यधन हो है। बहुरि ताकौ एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणकरि हीन जो दो गुणहानि ताका भाग दीए विशेषका प्रमाण हो है। बहुरि गच्छका एकबार सकलन धनकरि तिस चयकौ गुणै उत्तरधन हो है। बहुरि याकौ तिस द्रव्यमे घटाए अवशेष आदि धन हो है। ताकौ गच्छका भाग दीए एक खण्डका प्रमाण हो है। तहा एक खडकौं अर उत्तर धनतै गच्छप्रमाण अवशेषनिकौ ग्रहि लोभकी जघन्य कृष्टिविषै दीजिए है। बहुरि ताकी द्वितीय कृष्टितै लगाय क्रोधकी उत्कृष्ट कृष्टिपर्यंत एक एक खड समानरूप अर उत्तर धनविषै एक एक विशेष घटता दीजिए है। अर ऐसै अवशेष घात द्रव्य सर्व समाप्त हो है। ऐसै होतै सर्वत्र एक गोपुच्छ हो है ॥ ५२६ ॥

उदयगदसगहस्स य मज्झिमखडादिकरणमेदेण ।
दव्वेण होदि णियमा एवं सव्वेसु समयेसु ॥ ५२७ ॥

उदयगतसग्रहस्य च मध्यमखडादिकरणमेतेन ।
द्रव्येण भवति नियमादेव सर्वेषु समयेषु ॥ ५२७ ॥

स० च—उदयकौ प्राप्त जो सग्रह कृष्टि ताका इस घात द्रव्य ही करि मध्यम खडादिक करना हो है। भावार्थ—जिस सग्रह कृष्टिकौं वेदै है ताविषै आय द्रव्यका अभाव है। तातै सक्रमण द्रव्यकरि कीए तौ मध्यम खडादिक होइ नाही। तातै मध्यम खड उभय द्रव्य विशेष इत्यादि वक्ष्यमाण विधान करनेके अर्थि तिस भोगवनेरूप सग्रह कृष्टिनिका घात द्रव्यतै ताका असख्यातवा भागमात्र द्रव्यकौ जुदा स्थापि अवशेष घात द्रव्य हीकौं पूर्वोक्त प्रकार विशेष घटता क्रम लीए एक गोपुच्छाकारकरि दीजिए है। एक भागका आगै मध्यम खडादि विधानतै द्रव्य देना कहेगे सो जानना। ऐसै समय २ प्रति सर्व समयनिविषै विधान हो है।

या प्रकार घात द्रव्यकरि एक गोपुच्छ भया। अब जो अन्य सग्रहका विवक्षित सग्रहविषै द्रव्य आया ताकौ पूर्वै आय द्रव्य कह्या था ताका नाम इहा सक्रमण द्रव्य कहिए। बहुरि जो नवीन समयप्रबद्धविषै द्रव्य बधिकरि कृष्टिरूप हो है सो बध द्रव्य कहिए। ताका विधान कैसै है ? सो कहिए है—

केता इक सक्रमण द्रव्य अर बध द्रव्यकरि केती इक नवीन अपूर्व कृष्टि करिए है। तहा

सक्रमण द्रव्यकरि तौ तिनि सग्रह कृष्टिनिकी जो जघन्य कृष्टि ताके नीचै केती इक नवीन अपूर्व कृष्टि करिए है। सो इनका नाम अधस्तन कृष्टि है। बहुरि केती इक तिनि सग्रह कृष्टिनिकी पूर्व अवयव कृष्टिनिके वीचि वीचि नवीन अपूर्व कृष्टि करिए है। इनका नाम अतर कृष्टि है। बहुरि बध द्रव्यकरि अवयव कृष्टिनिके वीचि विचि ही नवीन अपूर्व कृष्टि करिए हैं सो इनका भी नाम अतर कृष्टि है। बहुरि केताइक सक्रमण द्रव्य वा बध द्रव्यकौ पूर्व कृष्टिनिहीविषै निक्षेपण करै है सौ यहु विधान कहिए है ॥ ४२७ ॥

हेट्ठा किट्टिप्पहुदिसु सकमिदासखभागमेत्त तु।
सेसा सखाभागा अतरकिट्टिस्स दव्व तु[1] ॥ ५२८ ॥

अधस्तनकृष्टिप्रभृतिषु सक्रमितासख्यभागमात्र तु।
शेषा असख्यभागा अतरकृष्टेर्द्रव्य तु ॥ ५१८ ॥

स० च—सक्रमण द्रव्यकौ असख्यातका भाग दीए तहा एक भागमात्र द्रव्य तौ नीचली कृष्टि आदिविषै दीजिए है। भावार्थ यहु—या द्रव्यकरि अधस्तन अपूर्व कृष्टि करिए हैं। बहुरि अवशेष असख्यात बहुभाग हैं ते अन्तर कृष्टिनिका द्रव्य है, याकरि अन्तर कृष्टि करिए है ॥५२८॥

बधदव्वाणतिमभाग पुण पुव्वकिट्टिपडिबद्ध।
सेसाणता भागा अतरकिट्टिस्स दव्व तु[2] ॥५२९॥

बंधद्रव्यानतिमभाग पुन पूर्वकृष्टिप्रतिवद्ध।
शेषानता भागा अंतरकृष्टेर्द्रव्य तु ॥५२९॥

स० च०—बन्ध द्रव्यकौ अनन्तका भाग दीए तहा एकभागमात्र तौ पूर्व कृष्टिसम्बन्धी है, या द्रव्यकौं पूर्वै कृष्टि कही थी तिनहीविषै निक्षेपण करिए है। बहुरि अवशीष अनन्त बहुभाग है ते अन्तर कृष्टिनिका द्रव्य है, या द्रव्यकरि नवीन अन्तर कृष्टि करिए हैं ॥५२९॥

कोहस्स पढमकिट्टी मोत्तूणेकारसगहाण तु।
बधणसकमदव्वादपुव्वकिट्टिं करेदी हु[3] ॥५३०॥

क्रोधस्य प्रथमकृष्टि मुक्त्वा एकादशसग्रहाणा तु।
बधनसकमद्रव्यादपूर्वकृस्टि करोति हि ॥५३०॥

स० च०—क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टि विना अवशेष ग्यारह सग्रह कृष्टिनिकैं यथा सम्भव वन्ध द्रव्य अथवा सक्रमण द्रव्यतै अपूर्व कृष्टि करै है। क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिविषै सक्रमण द्रव्यके अभावतैं वन्ध द्रव्यकरि ही अपूर्व करण कृष्टि करिए है ॥५३०॥

---

१. धवला० पु० ६, पृ० ३८७। जयध० ता० पृ० २१७४-२१७५।
२ धवला० पु० ६, पृ० ३८६। जयध० ता० पृ० २१७२-२१७३।
३. कोहस्स पढमसगहकिट्टि मोत्तूण सेसाणमेक्कारसगण्ह सगहकिट्टीण अण्णाओ अपुव्वाओ किट्टीओ

वधणदव्वादो पुण चदुसु ट्ठाणेसु पढमकिट्टीसु ।
बधापुव्वकिट्टीदो सकमकिट्टी असखगुणा ॥ ५३१ ॥

वधनद्रव्यात्पुन चतुर्षु स्थानेषु प्रथमकृष्टिषु ।
बंधापूर्वकृष्टित. संक्रमकृष्टि: असख्यगुणा ॥५३१॥

स० च०—बहुरि बन्ध द्रव्यतै क्रोधादि च्यारि कषायनिकी प्रथम सग्रह कृष्टिरूप जे च्यारि स्थान तिनहीविषै अपूर्व कृष्टि करिए है। सक्रमण द्रव्यकरि पूर्वै ग्यारह स्थाननिविषै कृष्टि करनी कही है। बहुरि बन्ध द्रव्यकरि निपजी अपूर्व कृष्टिनितै सक्रमण द्रव्यकरि निपजी कृष्टि पल्यका असख्यातवाँ भागगुणी हैं, जातैं बन्ध द्रव्य समयप्रबद्धमात्र है, तातै सक्रमण द्रव्य असख्यात-गुणा है। अर कृष्टि है ते द्रव्य कृष्टिके अनुसारि निपजै है ॥५३१॥

विशेष—आशय यह है कि क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिके वँधनेवाले प्रदेश पुजसे ही अपूर्व कृष्टियोको रचता है, क्योकि वहाँ कोई दूसरा प्रकार सम्भव नही है। मान, माया और लोभकी तीनो प्रथम सग्रह कृष्टियोमे बन्धको प्राप्त होनेवाले और सक्रमित होनेवाले प्रदेशपुजसे ही अपूर्व कृष्टियोकी रचना होना सम्भव है। इनके अतिरिक्त शेष सग्रहकृष्टियोमे सक्रमित होनेवाले प्रदेशपुजसे ही अपूर्व कृष्टियोकी रचना होती है, क्योकि उनमे बन्धको प्राप्त होनेवाले प्रदेशपुज नही पाया जाता।

सखातीदगुणाणि य पल्लस्सादिमपदाणि गतूण ।
एक्केक्कबधकिट्टी किट्टीण अंतरें होदि[2] ॥ ५३२ ॥

सख्यातीतगुणानि च पल्यस्यादिमपदानि गत्वा ।
एकैकबधकृष्टि. कृष्टीनामंतरें भवति ॥५३२॥

स० च०—जिनि सग्रहकृष्टिनिका बन्ध सम्भवै तिनकी जे अवयव कृष्टि हैं तिनिविषैं तिनका असख्यातवा भागमात्र नीचैकी वा उपरिकी कृष्टि तौ बन्ध योग्य ही नाही अर बीचिमे जे बहुभागमात्र बध्यमान कृष्टि हैं तिनिकी दोय कृष्टिनिके बीचि एक अन्तराल बहुरि एक कृष्टि यहु अर एक कृष्टि ऊपरिकी तिनिके वीचि एक अन्तराल ऐसैं जे अन्तराल हैं तिनि विषैं पहला दूसरा आदि असख्यात पल्यका प्रथम वर्गमूलमात्र अन्तराल उल्लघि जो अन्तराल है तिसविषैं नवीन एक अपूर्व कृष्टि करिए है। बहुरि ताके ऊपरि तितने ही अन्तराल उल्लघि जो अन्तराल आवै तहा दूसरी अपूर्व कृष्टि करिए है। ऐसें ही बन्धकी उत्कृष्ट कृष्टिके नीचैं पल्यका असख्यातका वर्गमूल-मात्र कृष्टि उतरैं तहा अन्तरालविषैं जो उत्कृष्ट अपूर्व कृष्टि करिए है तहा पर्यन्त ऐसे ही क्रम लीए कृष्टिनिके वीचि अपूर्व कृष्टिनिका होना जानना ॥५३२॥

१ वज्झमाणयादो थोवाओ णिव्वत्तेदि। सकामिज्जमाणयादो असखेज्जगुणाओ। जाओ ताओ वज्झमाणयादो पदेसग्गादो णिव्वज्जति ताओ चदुसु पढमसगहकिट्टीसु। क० चु०, पृ० ८५२।

२ किट्टी अतराणि अतरदुदाए असखेज्जाणि पलिदोवमपढमवग्गमूलाणि। एत्तियाणि किट्टीअतराणि गतूण अपुव्वाकिट्टी णिव्वत्तिज्जदि। क० चू० पृ० ८५३।

दिज्जदि अणंतभागेणूणकम बंधगे य णंतगुणं ।
तण्णंतरे णंतगुणूण तत्तोणंतभागूण[1] ।। ५३३ ।।

दीयते अनंतभागेनोनक्रमं बंधके चानंतगुण ।
तदनंतरेऽनंतगुणोन ततोऽनंतभागोन ।।५३३।।

स० च०—बंध द्रव्य कृष्टिनिविषैं कैसै दीजिए है सो कहिए है—पूर्वकृष्टिविषै बहुत द्रव्य दीजिए है। बहुरि दूसरी पूर्व कृष्टिविषै ताके अनंतवे भागमात्र जो एक विशेष ताकरि घटता द्रव्य दीजिए है। ऐसै यावत् अपूर्व कृष्टि न प्राप्त होइ तावत् अनन्तभागरूप विशेष घटता क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। बहुरि तहां अन्त कृष्टिविषै जो दीया द्रव्य तातै अपूर्व कृष्टिविषै अनंतगुणा द्रव्य दीजिए है। जातै यहु कृष्टि इसही द्रव्यकरि नवीन निपजै है। बहुरि यातै याके अनंतरवर्ती जो पूर्वकृष्टि तिसविषै अनंतगुणा घटता द्रव्य दीजिए है। तातै उपरि अनंतवा भागरूप विशेष घटता क्रम लीए द्रव्य यावत् अपूर्व कृष्टि प्राप्त न होइ तावत् दीजिए है। ऐसैं ही अनुक्रम लीए बंधकी उत्कृष्ट कृष्टि पर्यंत बंध द्रव्य देनेका विधान जानना। नवीन बंध द्रव्य करि करी अपूर्व कृष्टि भी अनंत है। ऐसैं बंध कृष्टिनिका स्वरूप कह्या है ।।५३३।।

विशेष—चारों प्रथम संग्रह कृष्टियोंके नीचे और ऊपर असंख्यातवें भागको छोड कर शेष समस्त मध्यम कृष्टियोरूपसे परिणमन करनेवाले नवकबन्धका अनुभाग पूर्व कृष्टिरूप भी परिणमता है और अपूर्व कृष्टिस्वरूप भी परिणमता है। उसमेसे जो प्रदेश पुंज पूर्व कृष्टियोको प्राप्त होता है वह नवकबन्धरूप समयबद्धके अनन्तवे भागप्रमाण होता है। शेष अनन्त बहुभाग प्रमाण प्रदेश पुंज अपूर्व कृष्टियोको प्राप्त होता है। इसलिये नवकबन्धरूप समयप्रबद्धके अनन्त बहुभागको पृथक रखकर जो शेष एक भागप्रमाण प्रदेशपुंज अवशिष्ट रहा उसे पूर्व कृष्टियोके सम्बन्धसे बन्धको प्राप्त होनेवाली जघन्य कृष्टिसे लेकर सिंचन करता हुआ उनमे जो बन्धरूप जघन्य कृष्टि है उसमे बहुत प्रदेशपुंजका निक्षेपण करता है। नवक बन्धरूप समयप्रबद्धके अनन्तवे भागको पूर्व कृष्टियोके प्रमाणसे भाजित करनेपर जो एक खण्डप्रमाण द्रव्य प्राप्त हो उसमे अनन्तवें भागप्रमाण द्रव्यके और मिलाने पर जो द्रव्य प्राप्त हो उसे विवक्षित जघन्य कृष्टिरूपसे सिंचित करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। उससे आगे दूसरी कृष्टिको विशेषहीन द्रव्य देता है। यहाँ विशेषका प्रमाण अनन्तवाँ भाग है। तात्पर्य यह है कि बन्धरूप जघन्य कृष्टिमे जितना द्रव्य दिया है उसे निषेक भागहारसे भाजित करने पर जो द्रव्य प्राप्त हो उतना कम देता है। इसी प्रकार अन्तिम पूर्व कृष्टिके प्राप्त होने तक तृतीयादि कृष्टियोको विशेष हीन विशेष हीन द्रव्य देता है। इस प्रकार पल्योपमके असंख्यात प्रथम वर्गमूलोको उल्लघन कर जो अपूर्व कृष्टि प्राप्त होती है उसके पूर्वतक पूर्व कृष्टियोमे उक्त द्रव्यका निक्षेपण करता है। यहा जो पूर्व कृष्टियोकी रचनाकी विधि कही सो दो पूर्व कृष्टियोके अन्तराल मे जो अपूर्व कृष्टियोकी रचना होती है उसमे अनन्तगुणे द्रव्यको देता है। उसके आगे नवकबन्धके निपजनेवाली अपूर्व कृष्टियोमे किस क्रमसे द्रव्यका विभाग होता है इसे जयधवला टीकासे जानना चाहिये।

---

१ तत्थ जहण्णियाए किट्टीए बज्झमाणियाए बहुअं। विदियाये किट्टीए विसेसहीणमणंतभागेण। तदियाए विसेसहीणमणंतभागेण। चउत्थीए विसेसहीणं। एवमणंतरोपणिधाए ताव विसेसहीणं जाव अपुव्वकिट्टिमपत्तो त्ति। अपुव्वाए किट्टीए अणंतगुणं। अपुव्वादो किट्टीदो जा अणंतरकिट्टी तत्थ अणंतगुणहीणं।

सकमदो किट्टीण संगहकिट्टीणमंतर होदि ।
सगहअतरजादो किट्टी अतरभवा असखगुणा ॥ ५३४ ॥

सक्रमत- कृष्टीना सग्रहकृष्टीनामतर भवति ।
सग्रहे अतरजात कृष्टिरतर्भवा असख्यगुणा ॥५३४॥

स० च०—सक्रमण द्रव्यतै निपजी जे अपूर्व कृष्टि ते केती इक कृष्टि तौ सग्रह कृष्टिनिके नीचै निपजै है अर केती इक पूर्व अवयव कृष्टि थी तिनिका अतरालविषै निपजै है । तहा सग्रह कृष्टिनिका अतरालविषै नीचै निपजी कृष्टिनितै अवयव कृष्टिनिका अतराल विषै निपजी कृष्टि असख्यातगुणी हैं ॥५३४॥

विशेष—पूर्वमे नवीन बन्धसे उत्पन्न हुई पूर्व अपूर्व कृष्टियोकी रचनाका खुलासा कर आये है । यहा सक्रमण द्रव्यसे निपजनेवाली कृष्टियोकी रचनाका खुलासा करना है । उस विषय मे ऐसा समझना चाहिये कि सक्रमण द्रव्यसे जो अपूर्व कृष्टिया बनती है वे कृष्टियोके अन्तरालमे भी उत्पन्न होती है और सग्रह कृष्टियोके अन्तरालमे भी उत्पन्न होती है । क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिको छोडकर शेष ग्यारह सग्रह कृष्टियोके नीचे उनके असख्यातवे भागप्रमाणरूपसे जो अपूर्व कृष्टिया रची जाती है उन्हे सग्रह कृष्टियोके अन्तरालमे उत्पन्न हुआ कहा जाता है । तथा उन्ही ग्यारह सग्रह कृष्टियोसम्बन्धी कृष्टियोके अन्तरालमे जो अपूर्व कृष्टिया उत्पन्न होती है उन्हे कृष्टियोके अन्तरालमे उत्पन्न हुई अपूर्व कृष्टिया कहा जाता है । उनमे जो सग्रह कृष्टियोके अन्तरालमे अपूर्व कृष्टिया उत्पन्न होती है वे स्तोक है । उनसे कृष्टियोके अन्तरालमे उत्पन्न हुई कृष्टिया असख्यातगुणी हैं ।

सगहअतरजाण अपुव्वकिट्टिं व बधकिट्टिं वा ।
इदराणमतर पुण पल्लपदासखभाग तु[2] ॥ ५३५ ॥

संग्रहातरजानामपूर्वकृष्टिमिव बंधकृष्टिमिव ।
इतरेषामतर पुन पल्यपदासख्यभागस्तु ॥ ५३५ ॥

स० च—सग्रह कृष्टिनिके नीचै जे सग्रह कृष्टि कीनी तहा द्रव्य देनेका विधान तौ जैसै कृष्टिकारकका द्वितीय समयविषै अपूर्व कृष्टिनिका विधान कह्या था तैसै जानना विशेष इतना—

तहा अधस्तन अपूर्व कृष्टिकी अन्त कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै पूर्व कृष्टिका जघन्य कृष्टिविषै दीया द्रव्य असख्यातवें भाग घटता कह्या था इहा असख्यातगुणा घटता जानना, जातै इहा अधस्तन कृष्टि द्रव्यतै मध्यम खड द्रव्य असख्यातगुणा घटता है । बहुरि तहा पूर्व कृष्टिकी

तदो पुणो अणतभागहीण । एव सेसासु सव्वासु । क० चु०, पृ० ८५३ ।

१ जाओ सकामिज्जमाणयादो पदेसग्गादो किट्टीओ णिव्वत्तिज्जति ताओ दुसु ओगासेसु । त जहा—किट्टीअतरेसु च सगहकिट्टीअतरेसु च । जाओ सगहकिट्टीअतरेसु ताओ थोवाओ । जाओ किट्टीअतरेसु ताओ असखेज्जगुणाओ । क० चु०, पृ० ८५४ ।

२ जाओ सगहकिट्टी अतरेसु ताहि जहा किट्टीकरणे अपुव्वाण णिव्वत्तिज्जमाणियाण किट्टीण विधी तहा कायव्वो । जाओ किट्टीअतरेसु तासि जहा वज्झमाणएण पदेसग्गेण अपुव्वाण णिव्वत्तिज्ज माणियाण किट्टीण विधी तहा कायव्वो । णवरि थोवदरगाणि गतूण सछुब्भमाणपदेसग्गेण अपुव्वा किट्टि णिव्वत्तिज्जमाणिणा दिस्सदि । ताणि किट्टी-अतराणि पगणणादो पलिदोवसवग्गमूलस्स असखेज्जदिभागो । क० चु० पृ० ८५४ ।

दिज्जदि अणतभागेणूणकम बधगे य णतगुण ।
तण्णंतरे णतगुणूण तत्तोणतभागूण[1] ॥ ५३३ ॥
दीयते अनंतभागेनोनक्रम वधके चानतगुण ।
तदनतरेऽनतगुणोन ततोऽनतभागोनं ॥५३३॥

स० च०—बध द्रव्य कृष्टिनिविषै कैसै दीजिए है सो कहिए है—पूर्वकृष्टिविपै वहुत द्रव्य दीजिए है। बहुरि दूसरी पूर्व कृष्टिविपै ताके अनतवे भागमात्र जो एक विशेष ताकरि घटता द्रव्य दीजिए है। ऐसै यावत् अपूर्व कृष्टि न प्राप्त होइ तावत् अनन्तभागरूप विशेप घटता क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। बहुरि तहा अन्त कृष्टिविषै जो दीया द्रव्य तातै अपूर्व कृष्टिविपै अनतगुणा द्रव्य दीजिए है। जातै यहु कृष्टि इसही द्रव्यकरि नवीन निपजै है। वहुरि यातै याके अनतरवर्ती जो पूर्वकृष्टि तिसविषै अनतगुणा घटता द्रव्य दीजिए है। तातै उपरि अनतवा भागरूप विशेष घटता क्रम लीए द्रव्य यावत् अपूर्व कृष्टि प्राप्त न होइ तावत् दीजिए है। ऐसै ही अनुक्रम लीए बधकी उत्कृष्ट कृष्टि पर्यंत वध द्रव्य देनेका विधान जानना। नवीन बध द्रव्य करि करी अपूर्व कृष्टि भी अनत हैं। ऐसै बध कृष्टिनिका स्वरूप कह्या है ॥५३३॥

विशेष—चारो प्रथम सग्रह कृष्टियोके नीचे और ऊपर असख्यातवे भागको छोड कर शेष समस्त मध्यम कृष्टियोरूपसे परिणमन करनेवाले नवकवन्धका अनुभाग पूर्व कृष्टिरूप भी परिणमता है और अपूर्व कृष्टिस्वरूप भी परिणमता है। उसमेसे जो प्रदेश पु ज पूर्व कृष्टियोको प्राप्त होता है वह नवकबन्धरूप समयबद्धके अनन्तवे भागप्रमाण होता है। शेष अनन्त बहुभाग प्रमाण प्रदेश पु ज अपूर्व कृष्टियोको प्राप्त होता है। इसलिये नवकबन्धरूप समयप्रबद्धके अनन्त बहुभागको पृथक रखकर जो शेष एक भागप्रमाण प्रदेशपुज अवशिष्ट रहा उसे पूर्व कृष्टियोके सम्बन्धसे बन्धको प्राप्त होनेवाली जघन्य कृष्टिसे लेकर सिंचन करता हुआ उनमे जो बन्धरूप जघन्य कृष्टि है उसमे बहुत प्रदेशपु जका निक्षेपण करता है। नवक बन्धरूप समयप्रवद्धके अनन्तवे भागको पूर्व कृष्टियोके प्रमाणसे भाजित करनेपर जो एक खण्डप्रमाण द्रव्य प्राप्त हो उसमे अनन्तवे भागप्रमाण द्रव्यके और मिलाने पर जो द्रव्य प्राप्त हो उसे विवक्षित जघन्य कृष्टिरूपसे सिंचित करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। उससे आगे दूसरी कृष्टिको विशेषहीन द्रव्य देता है। यहाँ विशेषका प्रमाण अनन्तवाँ भाग है। तात्पर्य यह है कि बन्धरूप जघन्य कृष्टिमे जितना द्रव्य दिया है उसे निषेक भागहारसे भाजित करने पर जो द्रव्य प्राप्त हो उतना कम देता है। इसी प्रकार अन्तिम पूर्व कृष्टिके प्राप्त होने तक तृतीयादि कृष्टियोको विशेष हीन विशेष हीन द्रव्य देता है। इस प्रकार पल्योपमके असख्यात प्रथम वर्गमूलोको उल्लघन कर जो अपूर्व कृष्टि प्राप्त होती है उसके पूर्वतक पूर्व कृष्टियोमे उक्त द्रव्यका निक्षेपण करता है। यहा जो पूर्व कृष्टियोको रचनाकी विधि कही सो दो पूर्व कृष्टियोके अन्तराल मे जो अपूर्व कृष्टियोकी रचना होती है उसमे अनन्तगुणे द्रव्यको देता है। उसके आगे नवकबन्धके निपजनेवाली अपूर्व कृष्टियोमे किस क्रमसे द्रव्यका विभाग होता है इसे जयधवला टीकासे जानना चाहिये।

१ तत्थ जहण्णियाए किट्टीए वज्झमाणियाए वहुअ। विदियाये किट्टीए विसेसहीणमणतभागेण। तदियाए विसेसहीणमणतमागेण। चउत्थीए विसेसहीण। एवमणतरोपणिधाए ताव विसेसहीण जाव अपुव्व-किट्टिमपत्तो त्ति। अपुव्वाए किट्टीए अणतगुण। अपुव्वादो किट्टीदो जा अणतरकिट्टी तत्थ अणतगुणहीण।

सकमदो किट्टीण संगहकिट्टीणमतर होदि ।
सगहअतरजादो किट्टी अतरभवा असखगुणा ।। ५३४ ।।

सक्रमत. कृष्टीना सग्रहकृष्टीनामंतर भवति ।
संग्रहे अतरजात. कृष्टिरतभंवा असख्यगुणा ।।५३४।।

स० च०—सक्रमण द्रव्यतै निपजी जे अपूर्व कृष्टि ते केती इक कृष्टि तौ सग्रह कृष्टिनिके नीचै निपजै हैं अर केती इक पूर्व अवयव कृष्टि थी तिनिका अतरालविषै निपजै हैं। तहा सग्रह कृष्टिनिका अतरालविषै नीचै निपजी कृष्टिनितै अवयव कृष्टिनिका अतराल विषै निपजी कृष्टि असख्यातगुणी हैं ।।५३४।।

विशेष—पूर्वमे नवीन बन्धसे उत्पन्न हुई पूर्व अपूर्व कृष्टियोकी रचनाका खुलासा कर आये हैं। यहा सक्रमण द्रव्यसे निपजनेवाली कृष्टियोकी रचनाका खुलासा करना है। उस विषय मे ऐसा समझना चाहिये कि सक्रमण द्रव्यसे जो अपूर्व कृष्टिया बनती है वे कृष्टियोके अन्तरालमे भी उत्पन्न होती है और सग्रह कृष्टियोके अन्तरालमे भी उत्पन्न होती है। क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिको छोडकर शेष ग्यारह सग्रह कृष्टियोके नीचे उनके असख्यातवें भागप्रमाणरूपसे जो अपूर्व कृष्टिया रची जाती हैं उन्हे सग्रह कृष्टियोके अन्तरालमे उत्पन्न हुआ कहा जाता है। तथा उन्ही ग्यारह सग्रह कृष्टियोसम्बन्धी कृष्टियोके अन्तरालमे जो अपूर्व कृष्टिया उत्पन्न होती है उन्हे कृष्टियोके अन्तरालमे उत्पन्न हुई अपूर्व कृष्टिया कहा जाता है। उनमे जो सग्रह कृष्टियोके अन्तरालमे अपूर्व कृष्टिया उत्पन्न होती हैं वे स्तोक हैं। उनसे कृष्टियोके अन्तरालमे उत्पन्न हुई कृष्टिया असख्यातगुणी हैं।

सगहअतरजाण अपुव्वकिट्टिं व बधकिट्टिं वा ।
इदराणमतर पुण पल्लपदासखभाग तु[2] ।। ५३५ ।।

संग्रहातरजानामपूर्वकृष्टिमिव बंधकृष्टिमिव ।
इतरेषामतर पुन पल्यपदासख्यभागस्तु ।। ५३५ ।।

स० च—सग्रह कृष्टिनिके नीचै जे सग्रह कृष्टि कीनी तहा द्रव्य देनेका विधान तौ जैसै कृष्टिकारकका द्वितीय समयविषै अपूर्व कृष्टिनिका विधान कह्या था तैसै जानना विशेष इतना—

तहा अधस्तन अपूर्व कृष्टिकी अन्त कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै पूर्व कृष्टिका जघन्य कृष्टिविषै दीया द्रव्य असख्यातवे भाग घटता कह्या था इहा असख्यातगुणा घटता जानना, जातै इहा अधस्तन कृष्टि द्रव्यतै मध्यम खड द्रव्य असख्यातगुणा घटता है। बहुरि तहा पूर्व कृष्टिकी

तदो पुणो अणतभागहीण । एव सेसासु सव्वासु । क० चु०, पृ० ८५३ ।

१ जाओ सकामिज्जमाणयादो पदेसग्गादो किट्टीओ णिव्वत्तिज्जति ताओ दुसु ओगासेसु । त जहा—किट्टीअतरेसु च सगहकिट्टीअतरेसु च । जाओ सगहकिट्टीअतरेसु ताओ थोवाओ । जाओ किट्टीअतरेसु ताओ असखेज्जगुणाओ । क० चु०, पृ० ८५४ ।

२ जाओ सगहकिट्टी अतरेसु ताहि जहा किट्टीकरणे अपुव्वाण णिव्वत्तिज्जमाणियाण किट्टीण विधी तहा कायव्वो । जाओ किट्टीअतरेसु तासि जहा वज्झमाणएण पदेसग्गेण अपुव्वाण णिव्वत्तिज्ज माणियाण किट्टीण विधी तहा कायव्वो । णवरि थोवदरगाणि गतूण सछुब्भमाणपदेसग्गेण अपुव्वा किट्टि णिव्वत्तिज्जमाणिणा दिस्सदि । ताणि किट्टी-अतराणि पगणणादो पलिदोवसवग्गमूलस्स असखेज्जदिभागो । क० चु० पृ० ८५४ ।

अन्त कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै अपूर्व कृष्टिकी आदि कृष्टिविषै दीया द्रव्य सख्यात भाग अधिक कह्या था। इहा असख्यातगुणा वधता जानना, जातै इहा मध्यम खडके द्रव्यतै अधस्तन कृष्टिका द्रव्य असख्यातगुणा है।

बहुरि जे अवयव कृष्टिनिके वीचि नवीन कृष्टि कीनी तहा द्रव्य देनेका विधान जैसैं वध द्रव्यकरि निपजी अपूर्व कृष्टिनिविषै विधान कह्या तैसै जानना। विशेष इतना—तहा असख्यात पल्यका वर्गमूल प्रमाण अतरालरूप स्थान जाइ जाइ वध द्रव्यकरि निपजी एक एक अपूर्व कृष्टि कही थी इहा पल्यका प्रथम वर्गमूलका असख्यातवा भाग मात्र जो उत्कर्षण वा अपकर्षण भागहार ताका जितना प्रमाण तितना अन्तराल भए सक्रमण द्रव्यकरि एक एक अपूर्व कृष्टि निपजाइए है। अव इहा प्रथम द्रव्य देनेका विशेष तात्पर्य निरूपण करिए है—

तहा प्रथम ही क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टि विना अन्य ग्यारह सग्रह कृष्टिनिविषै जो आय द्रव्य ताहीका नाम सक्रमण द्रव्य है ताका अर क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिविषै आय द्रव्यका तौ अभाव है, तातै पूर्वै कह्या था जो वेद्यमान कृष्टिविषै घात द्रव्यका असख्यातवा भागमात्र द्रव्य ताकौ जुदा स्थापना, तिस जुदा स्थाप्या घातद्रव्यकौ देनेका विधान कहिए है—पूर्वकृष्टिनिविषै एक एक विशेष घटता क्रम है तिस विशेषका प्रमाण ल्याइए है—

इहा घात कीए पीछै अवशेष सर्व कृष्टिका प्रमाणमात्र जे गच्छ तिस एक घाटि गच्छका आधा प्रमाण करि हीन जो दोगुणहानि ताकरि गुणित जो गच्छ ताका भाग सर्व द्रव्यकौ दीए एक विशेष हो है। सो लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिविषै एक विशेष आदि अर एकविशेष उत्तर अर एक घाटि अपनी कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि श्रेणी व्यवहार गणिततै जो सकलन धन आवै तितना अधस्तन शीर्ष द्रव्य है। अर अन्य सग्रह कृष्टिनिविषै जेती नोचली सग्रहसम्बन्धी कृष्टिका प्रमाण तितने विशेष आदि अर एक विशेष उत्तर अर अपनी अपनी कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि जो सकलन धन आवै तितना तितना अधस्तन शीर्षद्रव्य है। सो याकौ ग्यारह सग्रह कृष्टिनिका आय द्रव्यतै अर क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिका घात द्रव्यतै ग्रहि करि जुदा स्थापना। याकौ यथायोग्य कृष्टिनिविषै दीए सर्व पूर्व कृष्टि लोभकी तृतीय कृष्टिकी प्रथम कृष्टीके समान होइ।

बहुरि लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी प्रथम कृष्टिकौ अपकर्षण भागहारतै असख्यातगुणा ऐसा जो पल्यका असख्यातवा भाग ताका भाग दीए एक खडका प्रमाण आवै ताकौ अपनी अपनी कृष्टिनिका प्रमाण करि गुणै अपना अपना मध्यम खड द्रव्य हो है। सो याकौ ग्यारह सग्रह कृष्टिनिका आय द्रव्यतै अर क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिका घात द्रव्यतै ग्रहि जुदा स्थापना। याकौं एक एक खडकरि कृष्टिनिविषै दीए सर्व कृष्टि समान ही रहै हैं। बहुरि एक मध्यम खडकरि अधिक जो लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी प्रथम कृष्टिका द्रव्य तीहि प्रमाण एक अधस्तन कृष्टिका द्रव्य स्थापि ताकौ अपनी अपनी कृष्टिनिका प्रमाणकौ अपकर्षण भागहारतै असख्यातगुणा जो पल्यका असख्यातवा भाग ताका भाग दीए जो सग्रह कृष्टिनिके नीचै करी अधस्तन कृष्टिनिका प्रमाण ताकरि गुणै अधस्तन अपूर्व कृष्टिसम्बन्धी द्रव्य हो है। सो याकौ ग्यारह सग्रह कृष्टिनिका आय द्रव्यतै ग्रहि जुदा स्थापना। याकरि सग्रह कृष्टिनिके नीचैं नवीन अपूर्व कृष्टि निपजै है। क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिविषै सक्रमण द्रव्यके अभावतै नीचैं अपूर्व कृष्टि न हो है।

बहुरि पूर्व अपूर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्रगच्छ सो एक घाटिगच्छका आधा प्रमाण करि हीन जो दो गुणहानि ताकरि गुणित गच्छका भाग इहा सभवता सर्व द्रव्यकौ दीए उभय द्रव्यका एक

विशेष होइ सो क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिविपै एक विशेप आदि एक विशेप उत्तर अर अपनी भोगवनेरूप क्रोधकी प्रथम सग्रहकी सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि तहा जेता सकलन धन भया तितना उभय द्रव्य विशेष द्रव्य भया ताविपै अपना एक विशेपका अनतवा भागमात्र द्रव्य घटाए जो द्रव्य भया ताकौ क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिका घात द्रव्यतै ग्रहिकरि जुदा स्थापना। इहा क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिका घात द्रव्य जुदा स्थाप्या था सो पूर्ण भया। बहुरि जो पहलैं सग्रह कृष्टि भई तिनकी कृष्टिनिका प्रमाणतै एक अधिक विशेष तौ आदि अर एक विशेप उत्तर अर अपनी अपनी पूर्व अपूर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि सकलन कीए अपना अपना उभय विशेष द्रव्य हो है। याकौ ग्यारह सग्रह कृष्टिनिका अपना अपना आय द्रव्यतै ग्रहि जुदा स्थापना। विशेष इतना—

जो सग्रह कृष्टि बधै है ताका उभय द्रव्य विशेषविपै एक विशेपका अनन्तवा भागमात्र द्रव्य घटावना। यह घटाया द्रव्य है सो वध द्रव्यतै ग्रहकरि दीजिएगा। याकौ यथायोग्य कृष्टिनिविषै दीए सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिनिकै विशेष घटता क्रमरूप गोपुच्छ हो है। बहुरि इन कहे च्यारि द्रव्यनिकौं घटाए अवशेष जो अपना अपना आय द्रव्य रह्या ताकौ अपनी अपनी सक्रमण द्रव्यकरि करी अपूर्व अन्तर कृष्टिनिका प्रमाणका भाग दीए एक अन्तर कृष्टिसम्बन्धी एक खड होइ ताकौ अपनी अपनी सक्रमण द्रव्यकरि करी अन्तर कृष्टिनिका प्रमाण करि गुणै अपना अपना सक्रमण द्रव्यकरि निपजी जे अन्तर तिनके समान द्रव्य हो है। ताकौ जुदा स्थापना। याकरि पूर्व कृष्टिनिके वीचि वीचि नवीन अपूर्व कृष्टि निपजाइए है। इहा सक्रमण द्रव्यकरि भई अन्तर कृष्टिनिका प्रमाण ल्यावनेकौ उपाय कहिए है—

एक मध्यम खडकरि अधिक लोभकी तृतीय कृष्टिकी प्रथम कृष्टिका द्रव्यमात्र द्रव्य करि एक कृष्टि होइ तौ पूर्वोक्त च्यारि प्रकार द्रव्यकरि हीन अपना अपना आय द्रव्यकरि केती कृष्टि होइ? ऐसै त्रैराशिक कीए लब्धमात्र सक्रमण द्रव्यकरि करी अन्तर कृष्टिनिका प्रमाण आवै है। बहुरि याका भाग, अपनी अपनी पूर्व कृष्टिनिका भाग दीए अपनी अन्तर कृष्टिके अन्तरालका प्रमाण आवै है। दोय अपूर्व अन्तर कृष्टिनिके वीचि इतनी पूर्व कृष्टि पाइए है। ऐसै सक्रमण द्रव्यकरि निपजी कृष्टिनिका द्रव्य विभाग कह्या। अब बध द्रव्य करि निपजी कृष्टिनिका द्रव्य विभाग कहिए है—

मोहनीयका एक समयप्रबद्ध ताकौ आवलीका असख्यातवा भागका भाग दीए तहा बहुभागके च्यारि समान पुजकरि अवशेष एक भागकौ आवलीका असख्यातवा भागका भाग दीए तहा बहुभाग प्रथम पुजविषै जोडे लोभका बध द्रव्य हो है। अवशेष एक भागकौं आवलीका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभाग द्वितीय पुजविषैं जोडै मायाका बध द्रव्य हो है। अवशेष एक भागकौ आवलीका असख्यातवा भागका भाग दीए तहा बहुभाग तृतीय पुजविषै जोडें क्रोधका बध द्रव्य हो है। अवशेष एक भाग चतुर्थ पुजविषै जोडैं मानका बध द्रव्य हो है। अब बध द्रव्यकरि अन्तर कृष्टिनिका वा तहा अन्तरालनिका प्रमाण ल्यावनेके अर्थि इन द्रव्यविषै बध द्रव्यकरि करी अन्तर कृष्टिनिका विशेष सकलनरूप द्रव्य अर पूर्व एक विशेषका अनन्तवा भागमात्र द्रव्य आगैं कहिए है तिनकौ घटाए अवशेष जेता जेता द्रव्य रह्या ताकौ इच्छाराशिकरि त्रैराशिक करिए है—

एक मध्यम खडकरि अधिक लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टिका द्रव्यमात्र द्रव्यकरि एक अन्तर कृष्टि द्रव्य होइ तौ पूर्वोक्त द्रव्यकरि केती अन्तर कृष्टि होइ ? ऐसै त्रैराशिक कीए लब्धमात्र बध द्रव्यकरि निपजी अन्तर कृष्टिनिका प्रमाण सर्व पूर्व कृष्टिनिका प्रमाणकौ छह गुणहानिका भाग दीए जितना प्रमाण होइ तितना हो है। ते अन्तर कृष्टि मानविषै स्तोक, तातै क्रोधविषै विशेष अधिक, तातै मायाविषै विशेष अधिक, तातै लोभविषै विशेष अधिक जानना, जातै इनके द्रव्यविषै भी ऐसा ही क्रम है। इहा एक एक कषायकी एक एक सग्रह कृष्टिहीका वध है तातै च्यारि ही सग्रह कृष्टिनिविषै बध कृष्टिकी रचना जाननी। इन वध द्रव्यकरि करी अन्तर कृष्टिनिका प्रमाण है सो पूर्वोक्त सक्रमण द्रव्यकरि करी अन्तर कृष्टिनिका प्रमाणतै असख्यात-गुणा घटता है। जातै सक्रमणकी अन्तर कृष्टिनिका प्रमाण ल्यावनेकौ सर्वकृष्टिनिकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीया तातै इहा वधकी अन्तर कृष्टिनिका प्रमाण ल्यावनेकौ सर्व कृष्टिनिकौ असख्यात पल्यका प्रथम वर्गमूलका भाग दीया सो यहु भागहार तिस भागहारतै असख्यातगुणा है। बहुरि अपनी अपनी सग्रह कृष्टिकी उपरि नीचै असख्यातवा भागमात्र कृष्टि छोडि सक्रमणकी अन्तर कृष्टि सहित जे वीचिकी असख्यात बहुभागमात्र बधरूप पूर्व कृष्टि तिनकौ बध द्रव्यकरि करी अपनी अपनी अपूर्व अन्तर कृष्टिनिके प्रमाणका भाग दीए लोभ माया मानविषै गुणहानिका चौथा भागमात्र अर क्रोधविषै यातै तेरहगुणा अन्तरालनिका प्रमाण हो है। वध द्रव्यकरि करी ऐसी दोय अपूर्व अन्तर कृष्टि तिनके वीचि जेती पूर्वकृष्टि पाइए तिनके प्रमाणका नाम इहा अन्तराल जानना सो यहु सक्रमणकी अन्तर कृष्टिनिका अन्तरालतै असख्यातगुणा है। ऐसै प्रमाण ल्याइ अब बध द्रव्यका विभाग कहिए है—

अपना अपना पूर्वोक्त बध द्रव्यकौ स्थापि ताकौ अनन्तका भाग देइ तहा एक भाग जुदा राखि अवशेष बहुभाग रहे तिनतै बधातर कृष्टि विशेष द्रव्य ग्रहि जुदा स्थापना ताका प्रमाण कहिए है—बध द्रव्यकरि करी जे अपूर्व अन्तर कृष्टि तिनिविषै जो अन्तकी कृष्टि तिसविषै पूर्व अन्तकी कृष्टितै जेती कृष्टि नीचै यहु पाइए है तितने विशेष यामै चाहिये ताकौ तौ आदि स्थापिए। अर वीचिमे जो अन्तरालका प्रमाण तितने विशेष उत्तर स्थापिए अर अपनी अपनी बध द्रव्यकरि करी अन्तर कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापिए ऐसै स्थापै जो सकलन धन आवै तितना बन्धान्तर कृष्टिविशेष द्रव्य जानना। इस द्रव्यकरि बध द्रव्यतै जे नवीन अपूर्व कृष्टि करी तिनविषै जैसै अन्य कृष्टिनिका अर इनका एक गोपुच्छ होइ तैसै विशेषनिका सद्भाव हो है। सो एकविशेषका अनन्तवा भागमात्र बध द्रव्य करि घटते जे पूर्वै उभय द्रव्यविशेष कहे थे तिनविषै इनका अवस्थान जानना। भावार्थ यहु—

जो अन्य कृष्टिनिविषै तौ पूर्वोक्त सक्रमण द्रव्यका उभय द्रव्य विशेष द्रव्य देना। अर वधकी अतर कृष्टिनिविषै इहा कह्या बधातर विशेष द्रव्य सो देना। इहाँ भी एक विशेषका अनतवा भागमात्र घटतापना जानना। जातै इहा भी आगै कहिए है जो एक विशेषका अनतवा भागमात्र बध द्रव्य ताका निक्षेपण हो है। ऐसै दीए अन्य कृष्टिनिकैं अर बधकरि करी नवीन कृष्टिनिकैं एक गोपुच्छ हो है। बहुरि तिन बहुभागनिविषै इतना द्रव्य घटाए अवशेष जो द्रव्य रह्या ताकौ बधकी नवीन अतरकृष्टिनिके प्रमाणका भाग दीए एक खडमात्र एक कृष्टिका द्रव्य होइ। ताकौ बधकी अतरकृष्टिनिका प्रमाणकरि गुणै सर्व कृष्टिसम्बन्धी द्रव्य होइ सो याका नाम

बधात्तरकृष्टि समान खड द्रव्य है। इस द्रव्यकरि समान प्रमाण लीए वधकी नवीन अपूर्व अतर-कृष्टि निपजै है। बहुरि पूर्वें जो बध द्रव्यकौ अनतका भाग देइ एक भाग जुदा राख्या था तिसतै बधविशेष द्रव्य ग्रहि जुदा स्थापना सो कितना है ? सो कहिए है—

पूर्व अपूर्व बध कृष्टिनिका प्रमाणमात्र इहा गच्छ सो एक गच्छका आधा प्रमाणकरि हीन जो दोगुणहानि ताकरि गुणित गच्छका भाग तिस जुदा राख्या एक भागकौ दीए एक विशेष होइ, ताकौ अपना सर्व बध कृष्टिनिका प्रमाणकरि गुणैं बधविशेष द्रव्य हो है। इस द्रव्यकौ जहाँ उभय द्रव्य विशेष द्रव्यविषै अनतवा भाग घटाया था तहाँ देना। बहुरि जुदा राख्या एक भागविषै इतना द्रव्य घटाए जो अवशेष रह्या ताकौ अपनी सर्व बध कृष्टिके प्रमाणका भाग दीए एक खड होइ ताकौ अपनी बध कृष्टिनिका प्रमाण ही करि गुणैं जो द्रव्य होइ सो बधका मध्यम खड द्रव्य जानना। यहु द्रव्य अवशेष रह्या ताकौ बधकृष्टिनिविषै समानरूप जहाँ उभय द्रव्यविशेष द्रव्य विषै एक विशेषका अनतवा भाग घटाया तहा ही दीजिए है। भावार्थ यहु—

बधका विशेष अर मध्यम खडका द्रव्य दीए उभय द्रव्यका विशेषविषै घटाया था द्रव्य सो पूर्ण हो है। ऐसै बध द्रव्यका विशेष विभाग जानना। अब इन सक्रमण द्रव्यका वा बध द्रव्य देनेका विधान कहिए है—तहाँ लोभकी तृतीय द्वितीय सग्रहकृष्टिविषै तौ बध द्रव्यका अभाव है, तातै तहा सक्रमण द्रव्यहीकौ देनेका विधान कहिए है—

लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिविषै पचप्रकार द्रव्य कह्या। तहाँ नीचै जे अपूर्व कृष्टि करी तिनकी जघन्य कृष्टिविषै अधस्तन खडतै एक खड अर मध्यम खडतैं एक खण्ड अर उभय द्रव्य विशेषतैं सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिमात्र विशेष ग्रहि निक्षेपण करै है सो यहु आगै कृष्टिनिविषै दीजिए है द्रव्य तातैं बहुत हैं। बहुरि ताके ऊपरि द्वितीयादि अतपर्यंत जे अधस्तन अपूर्व कृष्टि तिनविषै एक एक अधस्तन खड अर एक एक मध्यम खड तौ समानरूप अर उभय द्रव्य विशेषविषै एक एक विशेष घटता ऐसैं द्रव्य दीजिए है। इहाँ अधस्तन खण्ड द्रव्य तौ समाप्त भया। बहुरि ताके ऊपरि पूर्वकृष्टिकी प्रथम कृष्टि तिसविषै मध्यम खडतै एक खड उभय द्रव्य विशेषतै जेती कृष्टि होइ आई तितनीकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष ग्रहि निक्षेपण करिए है। सो यहु अपूर्व-कृष्टिकी अतकृष्टिविषैं दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा घटता है, जातै मध्यम खडतैं अधस्तन कृष्टि, खड असख्यातगुणा है। अर एक उभय द्रव्य विशेष भी इहाँ घट्या है। बहुरि ताके ऊपरि द्वितीयादि पूर्व कृष्टि तिनविषै एक दोय आदि एक एक बधता अधस्तन शीर्षका विशेष अर एक एक मध्यम खण्ड अर होइ गईं कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टिप्रमाण उभय द्रव्यका विशेष क्रमतै यावत् अपकर्षण भागहारका अर्ध प्रमाणमात्र पूर्व कृष्टि होइ तावत् निक्षेपण करिए है। इहा कृष्टिनिविषै मध्य एक उभय द्रव्यका विशेषविषै एक अधस्तन शीर्ष विशेष घटाएँ जो प्रमाण होइ तितना विशेषकरि घटता दीया द्रव्यका क्रम जानना। बहुरि तिनके ऊपरि सक्रमण द्रव्यकरि करी अपूर्व अतरकृष्टि हैं। तीहिंविषैं अतरकृष्टिसम्बन्धी समान खण्ड द्रव्यतैं एक खण्ड अर उभय द्रव्य विशेषतै भईं कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टि प्रमाणमात्र विशेषनिकौ ग्रहि निक्षेपण करै है। सो यहु नीचली पूर्व कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा है। जातै एक घाटि भई कृष्टिनिका प्रमाणमात्र पूर्व विशेष अर एक मध्यम खण्ड इनकरि हीन जो यहु अतरकृष्टिसम्बन्धी एक खण्ड है सो पूर्व कृष्टिके समान है। सो तिस दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा है। तहा एक उभय द्रव्यका हीनपना

जानना। बहुरि ताके ऊपरि जो पूर्व कृष्टि तिसविषै भई पूर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र अधस्तन शीर्षके विशेष अर एक मध्यम खण्ड अर भईं पूर्व अपूर्व कृष्टिनिका प्रमाणकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र उभय द्रव्यके विशेष दीजिए है सो यहु सक्रमणकी अन्तरकृष्टिविषै दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा घटता है, जातै इहाँ मिलै अधस्तन शीर्ष विशेष अर मध्यम खण्डका द्रव्य है सो इनकरि हीन अन्तरकृष्टिसम्बन्धी समान खण्डका द्रव्य पूर्वकृष्टिके समान है, तातै असख्यातगुणा घटता है। बहुरि ताके ऊपरि पूर्व कृष्टिनिविषै एक एक अधस्तन शीर्ष बधता अर एक एक मध्यम खण्ड समानरूप अर एक एक उभय द्रव्य विशेष घटता ऐसै क्रमतै यावत् आधा अपकर्षण भागहारमात्र पूर्वकृष्टि होइ तावत् निक्षेपण करिए है। बहुरि तिनके ऊपरि सक्रमणकी अपूर्व अन्तरकृष्टि है तिसविषै सक्रमण अन्तरकृष्टिसम्बन्धी समान खण्ड द्रव्यतै एक खण्ड उभय द्रव्य विशेषतै भईं कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टि प्रमाणमात्र विशेषनिकौ ग्रहि निक्षेपण करै है। सो यहु यातै नीचली पूर्व कृष्टिविषैं दीया द्रव्यतै पूर्वोक्त प्रकार असख्यातगुणा है। बहुरि याके ऊपरि पूर्व कृष्टि तिसविषै भईं अपूर्व कृष्टिनिका प्रमाण मात्र अधस्तन शीर्षके विशेष अर एक एक मध्यम खण्ड अर भईं कृष्टिनिकरि हीन सर्ग कृष्टिनिका प्रमाणमात्र उभय द्रव्यके विशेष दीजिए है। सो यहु तिनि अन्तर कृष्टिनिविषैं दीया द्रव्यतै पूर्वोक्त प्रकार असख्यातगुणा घटता जानना। याही प्रकार अपूर्व कृष्टितैं पूर्ग कृष्टिविषै असख्यातगुणा घटता अर पूर्व कृष्टितै अपूर्व कृष्टिविषैं असख्यातगुणा बधता क्रमकरि लोभकी तृतीय कृष्टिकी अन्तकृष्टि पर्यन्त द्रव्य देनेका विधान जानना। बहुरि ताके ऊपरि लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टि तिसके पच प्रकार द्रव्य स्थापि तहाँ ताके नोचै सक्रमण द्रव्य करि करी जो अधस्तन अपूर्व कृष्टि तिनकी जघन्य कृष्टिविषै अधस्तन खण्डतैं एक खण्ड मध्यम खडतै एक खण्ड उभय द्रव्य विशेषतैं भई कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टिनि-का प्रमाणमात्र विशष ग्रहि निक्षेपण करै है। सो यहु लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टिविषैं दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा है। कारण पूर्वोक्त प्रकार जानना। बहुरि यातै ऊपरि एक एक अधस्तन खण्ड एक मध्यम खण्ड समानरूप एक एक उभय द्रव्यविशेष घटता क्रमलीए अधस्तन अपूर्व कृष्टिकी चरम कृष्टि पर्यन्त द्रव्य देना। इहा अधस्तन कृष्टि द्रव्य समाप्त भया।

बहुरि इनके ऊपरि पूर्व कृष्टिकी आदि कृष्टि तिस विषै भई पूर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र अधस्तन शीर्षके विशेष अर एक मध्यम खण्ड अर भई कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाण मात्र उभय द्रव्यके विशेष दीजिए है सो यहु अपूर्व कृष्टिकी अन्त कृष्टिविषैं'दीया द्रव्यतै असख्यात-गुणा घटता है। कारण पूर्वोक्त प्रकार जानना। तातै आगै जैसै लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिविषैं विधान कह्या है तैसैंही सर्व जानना। विशेष इतना—

इहा अपकर्षण भागहारमात्र वीचिमे पूर्व कृष्टि भए अपूर्व कृष्टिकौं निपजावै है। बहुरि ताके ऊपरि लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टि है सो याका वध भी है अर याकै आय द्रव्य भी है। तातै इहा पच प्रकार सक्रमण द्रव्य अर च्यारि प्रकार बध द्रव्य स्थापि देनेका विधान कहिए है। सक्रमण द्रव्यकरि करी नीचैं अधस्तन अपूर्व कृष्टि ताकी जघन्य कृष्टिविषैं एक एक अधस्तन खण्ड अर एक मध्यम खण्ड अर भई कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र उभय द्रव्यके विशेष निक्षेपण करिए है। सो यहु लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टिकी अन्त कृष्टि विषैं दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा है। बहुरि ताके ऊपरि द्वितीयादि अन्त पर्यन्त अधस्तन कृष्टिनिविषैं एक एक

अधस्तन खण्ड, एक एक मध्यम खण्ड अर भई कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टिमात्र उभय द्रव्यकी विशेषकरि क्रमतै दीजिए है। बहुरि तिनके ऊपरि पूर्व कृष्टिनिकी प्रथम कृष्टिविषै भई पूर्व कृष्टिनि-का प्रमाणमात्र अधस्तन शीर्षके विशेष अर एक मध्यम खड अर भई कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र उभय द्रव्यके विशेष दीजिए है। सो यहु अपूर्व अधस्तन कृष्टिकी अत कृष्टिका दीया द्रव्यतैं असख्यातगुणा घटता है सो इहा असख्यातगुणाका वा असख्यातगुणा घटताका कारण पूर्वोक्त ही जानना। बहुरि ताके ऊपरि सक्रमण अन्तर कृष्टिका अन्तरालतै एक घाटि कृष्टि पर्यन्त कृष्टिनिविषै एक एक अधस्तन शीर्षका विशेष वधता अर एक एक उभय द्रव्यका विशेष घटता ऐसै क्रमकरि दीजिए है। बहुरि ताके ऊपरि सक्रमण द्रव्य करि करी अपूर्व अन्तर कृष्टि तीहिं विषै सक्रमण अन्तरसम्बन्धी समान खडतैं एक खड अर उभय द्रव्य विशेषतै भई कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष दीजिए है। बहुरि ताके ऊपरि ऐसैं ही क्रमतै अपकर्षण भागहारमात्र वीचिमै पूर्व कृष्टि भए एक सक्रमणकी अन्तर कृष्टि निपजाइए है। तहा पूर्व कृष्टिविषै तौ भई पूर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र अधस्तन शीर्षके विशेष अर एक मध्यम खड अर भई कृष्टिनिकरि हीन सर्वकृष्टिनिका प्रमाणमात्र उभय कृष्टिके द्रव्यके विशेष दीजिए है। अर सक्रमणकी अन्तर कृष्टिनिविषै सक्रमण अन्तर कृष्टिसम्बन्धी समान एक खड अर भई कृष्टिकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र उभय द्रव्यके विशेष दीजिए है। तहा इतना विशेष जानना—

इनविषै बध होनेयोग्य कृष्टिकी जघन्य कृष्टितै लगाय जे पूर्व कृष्टि अर सक्रमण द्रव्यकरि करी अपूर्व कृष्टि हैं तिनविषैं पूर्वोक्त सक्रमण द्रव्य अपना एक निषेकका अनन्तवा भागमात्र घाटि दीजिए है। अर तहा ही बध द्रव्यतै पूर्व जघन्य बधकृष्टिविषैं तौ बध द्रव्यसम्बन्धी मध्यम खडतैं एक खड अर बधविशेष द्रव्यतैं सर्व बध कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष द्रव्य दीजिए है। अर ताके ऊपरि कृष्टिनिविषै यातै एक एक बधका विशेषमात्र घटता क्रम लीए दीजिए है। ऐसैं द्रव्य कीए जो सक्रमण द्रव्यविषैं एक विशेषका अनन्तवा भागमात्र घटता द्रव्य दीया था सो पूर्ण हो है। बहुरि या प्रकार द्रव्य दोया तहा अपूर्व कृष्टिविषै दीया द्रव्य तौ आयतै नीचली पूर्व कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा बधता अर पूर्व कृष्टिविषैं दोया द्रव्य आयतैं नीचली अपूर्व कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा घटता जानना। ऐसैं एक अधिक सक्रमण कृष्टिका अन्तरालका भाग गुणहानिका चौथा भागमात्र तो बध कृष्टिका अन्तराल ताकौ दीए जो प्रमाण आवै तितनी सक्रमणकी अपूर्व अन्तर कृष्टि यावत् पूर्ण होइ तावत् ऐसैं ही क्रम जानना। बहुरि इहा जो सक्रमणकी अन्तर कृष्टि अन्तविषै भई ताके उपरि जो अन्तरालविषै बध द्रव्यकरि अपूर्व अन्तर कृष्टि निपजाइए हैं तिस विषै सक्रमण द्रव्य न दीजिए है—

बध द्रव्यहोके बन्धान्तर कृष्टि समान खण्ड द्रव्यतैं एक खण्ड अर उभय द्रव्य विशेषको जायगा जो अन्तर कृष्टिसम्बन्धी विशेष द्रव्य कह्या तिसतै भई सर्व कृष्टिनिका प्रमाणकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष अपना एक विशेषका अनन्तवा भागकरि हीन अर मध्यम खण्डतैं एक खण्ड अर बध विशेष द्रव्यतैं भई बधकृष्टिनिका प्रमाणकरि हीन सर्व बध कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष ग्रहि दीजिए हैं सो यहु याके नीचै जो सक्रमण द्रव्यकी अन्तर कृष्टि तिसविषै दीया जो बध द्रव्य तातै अनन्तगुणा जानना। बहुरि ताके ऊपरि पूर्व कृष्टि तिसविषै सक्रमण

द्रव्यतै भई कृष्टिनिका प्रमाणमात्र अधस्तन शीर्षके विशेष अर एक मध्यम खड अर भई कृष्टि-निकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र उभय द्रव्यके विशेष अपने एक विशेषका अनन्तवा भाग-करि दीजिए है। तहा ही बध द्रव्यतै एक मध्यम खड अर बध विशेषतै भई बध कृष्टिनिकरि हीन सर्व बध कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष ग्रहि दीजिए। सो याके नीचै बन्धातर कृष्टिनिविषै दीया बध द्रव्यतै या विषै दीया बध द्रव्य अनन्तगुणा घाटि है। इहा अनन्तगुणा वा अनन्तगुणा घाटि द्रव्य कह्या ताका कारण यहु ही जो इहा दीया बध द्रव्यतै बन्धान्तरका द्रव्य अनन्तगुणा है। बहुरि ताके ऊपरि पूर्वोक्त प्रकार वीचि वीचि पूर्व कृष्टि होइ एक सक्रमणका अपूर्व कृष्टि होइ ऐसै एक अधिक सक्रमणका अन्तरालकरि बधके अन्तरालका भाग दीए जो प्रमाण आवै तितनी सक्रमणकी अपूर्व अन्तर कृष्टि होइ तहा द्रव्य देनेका विधान पूर्वोक्त प्रकार जानना। याही प्रकार तावत् बन्धान्तर कृष्टिनिकी अत कृष्टि होइ तावत् विधान जानना। इहा बध द्रव्यके अन्तर कृष्टि-सम्बन्धी समान खड द्रव्य अर बधान्तर कृष्टिविशेष द्रव्य समाप्त भया। बहुरि ताके ऊपरि पूर्वोक्त प्रकार सक्रमण द्रव्य दोय प्रकार बध द्रव्यहीका यथायोग्य निक्षेपण हो है सो बधकी उत्कृष्ट कृष्टिपर्यंत जानना। इहा सर्व बध द्रव्य समाप्त भया। बहुरि ताके ऊपरि च्यारि प्रकार सक्रमण द्रव्यहीका यथायोग्य निक्षेपण हो है सो अत कृष्टिपर्यंत जानना। इहा सर्व सक्रमण द्रव्य भी समाप्त भया। बहुरि जैसै लोभकी तीन सग्रह कृष्टिनिविषै द्रव्य देनेका विधान कह्या तैसै ही मान माया विषै भी कहना। विशेष इतना ही—जो मानका प्रथम सग्रह कृष्टिविषै सक्रमण द्रव्यकरि निपजा अपूर्व कृष्टिनिके वीचि अतराल अपकर्षण भागहारका पद्रहवा भाग मात्र है। बहुरि क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिविषै भी लोभवत् विधान जानना। विशेष इतना ही—सक्रमकी अतर कृष्टिनिका अतराल इहा तृतीय सग्रह कृष्टिविषै अपकर्षण भागहारका चौदहवा भागमात्र, द्वितीय सग्रह कृष्टिविषै अपकर्षण भागहारका एकसौ वियासीवा भाग मात्र जानना। बहुरि लोभ मान मायाकी बध्यमान सग्रह कृष्टिनिकै वध रहित जे नीचै उपरि कृष्टि तिनके वीचि सक्रमण द्रव्यकरि अपूर्व अतर कृष्टि करिए है ऐसा जानना। बहुरि ताके ऊपरि क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टि तिसविषै सक्रमण द्रव्यका तौ अभाव है, तातै घात द्रव्यका एक भाग जुदा स्थाप्या था ताका तीन प्रकार द्रव्य अर बध द्रव्यका च्यारि प्रकार द्रव्य स्थापि तहाँ अधस्तन अपूर्व कृष्टि होनेका तौ अभाव है। क्रोधकी द्वितीय सग्रह कृष्टिकी अत कृष्टिके ऊपरि प्रथम सग्रह कृष्टिकी प्रथम पूर्व कृष्टि है तिसविषै घात द्रव्यकी भई पूर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र अधस्तन शीर्षके विशेष अर एक मध्यम खड अर भई कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र उभय द्रव्यके विशेष निक्षेपण करिए है। सो यहु दीया द्रव्य क्रोधकी द्वितीय सग्रह कृष्टिकी अत कृष्टिविषै दीया सक्रमण द्रव्यके अनतवे भागमात्र घटता है। बहुरि ताके ऊपरि एक एक अधस्तन शीर्ष विशेष वधता एक एक उभय द्रव्यका विशेष घटता ऐसै क्रमतैं द्रव्य दीजिए है। इहा विशेष इतना—

बध होने योग्य कृष्टिकी जघन्य कृष्टि समान पूर्व कृष्टितैं लगाय कृष्टिनिविषै उभय द्रव्यका विशेष द्रव्य अपने विशेषका अनतवा भागमात्र घटता दीजिए है। तहा जघन्य बन्ध कृष्टिविषै बन्ध द्रव्यका एक मध्यम खण्ड अर अपनी बन्ध कृष्टिनिका प्रमाणमात्र बन्धके विशेष दीजिए है अर ताके ऊपरि कृष्टिनिविषै एक एक बधका विशेष घटता क्रम करि दीजिए है। ऐसै एक जघन्य बन्ध कृष्टिके ऊपरि सवा तीन गुणहानिमात्र कृष्टि भए ताके ऊपरि अतराल-विषै बध द्रव्यकरि अपूर्व अन्तर कृष्टि निपजाइए है। तहा बन्धान्तर कृष्टिसम्बन्धी समान खण्डतैं

एक खण्ड अर बन्धान्तर कृष्टिके विशेष द्रव्यतै जेती सर्व कृष्टि होइ आई तिनकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष अपने एक विशेषके अनतवे भागकरि हीन सर्व अर मध्यम खण्डतै एक खण्ड अर भई सर्व बन्ध कृष्टिनिका प्रमाणकरि हीन सर्व बन्ध कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष ऐसैं च्यारि प्रकार बन्ध द्रव्य ही दीजिए है। घात द्रव्य न दीजिए है। सो यहु दीया द्रव्य याके नीचली पूर्व कृष्टिविषै दोया बन्ध द्रव्यतै दीया अनन्तगुणा है। बहुरि ताके ऊपरि पूर्व कृष्टि तिसविषै घात द्रव्यतै ग्रहि पूर्वै भई सर्व पूर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र अधस्तन शीर्पके विशेष अर एक मध्यम खण्ड अर भई कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र उभय द्रव्यके विशेष अपने अपने विशेषका अनन्तवा भागकरि हीन निक्षेपण करै है। तहाँ ही बध द्रव्यका एक मध्यम खण्ड अर भई बन्ध कृष्टिनिकरि हीन बन्ध कृष्टिनिका प्रमाणमात्र बन्धविशेष निक्षेपण करिए है। सो यहु बन्ध द्रव्य बधान्तर कृष्टिका बन्ध द्रव्यतै अनन्तगुणा घटता है। याका सर्व पूर्व द्रव्य वा दीया द्रव्य मिलि तिस बन्धान्तर कृष्टितै उभय द्रव्यका एक विशेषमात्र घटता हो है। बहुरि ताके ऊपरि पूर्वोक्त प्रमाण पूर्व कृष्टि भए बन्ध द्रव्यकरि एक अपूर्व कृष्टि निपजै है, तिनविषै द्रव्यका देना पूर्वोक्त प्रकार जानना। ऐसैं बधकी उत्कृष्ट कृष्टि पर्यन्त जानना। ताके ऊपरि कृष्टिनिविषै घात द्रव्यहीका निक्षेपण अपनी उत्कृष्ट कृष्टिपर्यन्त हो है। ऐसै दीयमान द्रव्यकी पक्तिका अनुक्रम जानना। सो इहा जैसै ऊँटकी पीठ आदि विषै ऊँची, आगै नीची, आगै कही ऊँची कही नीची तैसै कही बहुत, कहो स्तोक, कही किछू हीन, किछू अधिक द्रव्य देनेतै अनत जायगा उष्ट्रकूट रचना हो है, जातै ऐसैं दीए ही सर्व कृष्टिनिका एक गोपुच्छ होइ। ऐसै ही यतिवृषभ मुनिका उपदेश हैं। ऐसै दीयमान प्रदेशनिका निरूपण कीया।

बहुरि दृश्यमान कहिए पूर्वै था वा दीया द्रव्य मिलि जैसै भया सो लोभकी तृतीय सग्रहकी जघन्य कृष्टिविषैं बहुत द्रव्य है, तातै क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिका घात कीए पीछै जो उत्कृष्ट कृष्टि रही तहा पर्यंत कृष्टिके द्रव्यके अनतवें भागमात्र जो एक एक उभय द्रव्यका विशेष तीहिंकरि घटता अनुक्रमतैं दृश्यमान द्रव्य जानना। या प्रकार जैसै प्रथम समयविषैं दीयमान द्रव्यका निरूपण कीया तैसैं ही द्वितीयादि समयनिविषै भी जानना। ऐसै तात्पर्य निरूपण कीया ॥ ५२५ ॥

विशेष—जो सग्रह कृष्टियाँ हैं उनके अन्तरालमे अपकर्पित होनेवाले प्रदेशपुजसे जो अपूर्व कृष्टिया रची जाती हैं उनके सम्बन्धमे कृष्टिकरणके समय रची जानेवाली अपूर्व कृष्टियोकी जो विधि पहले कह आये है वही यहाँ जाननी चाहिये, क्योकि दिये जानेवाले प्रदेशपुजकी उष्ट्रकूट-रूपसे जो रचना पहले बतला आये है उससे इसमे भेद नही पाया जाता। किन्तु इनमे सामान्य रूपसे भेद नही है ऐसा समझना चाहिये। वास्तवरूपसे देखनेपर तो उसके समान यह नही है, क्योकि उससे इसमे थोडा अन्तर है। जो इस प्रकार है—

कृष्टिकरणके समय पहले समयमे कृष्टिरूपसे परिणत प्रदेशपुजसे दूसरे समयमे कृष्टियोमे दिया जानेवाला प्रदेशपुज असख्यातगुणा होता है। उससे तीसरे आदि समयोमे दिया जानेवाला प्रदेशपुज उत्तरोत्तर असख्यातगुणा होता है। इस प्रकार विशुद्धिके माहात्म्यवश कृष्टिकरणके अन्तिम समय तक जानना चाहिये। ऐसा है ऐसा समझकर वहाँ वर्तमान समयमे रची जाने-वाली अपूर्व कृष्टियोसम्बन्धी अन्तिम कृष्टिमे निक्षिप्त होनेवाले प्रदेशपुजसे पूर्व समयमे की गई कृष्टियोसम्बन्धी जघन्य कृष्टिमे सीचा जानेवाला प्रदेशपुज असख्यातवें भाग हीन होता है, क्योकि

उसमे मात्र पहले अवस्थित द्रव्य परिहीन देखा जाना है। पुन वहाँ क्रमसे असख्यात भागहानि होती हुई पूर्व समयमे की गई सग्रह कृष्टिसम्बन्धी अन्तिम कृष्टिमे निक्षिप्त हुए प्रदेशपु जसे वर्तमान समयमे दूसरी सग्रह कृष्टिके नीचे की जानेवाली अपूर्व कृष्टिमे दिया जानेवाला प्रदेशपु ज असख्यातवे भाग अधिक होता है। पुन शेष कृष्टियोमे उत्तरोत्तर अनन्तवे भागहीन ही प्राप्त होता है। इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिये। दृश्यमान प्रदेशपु ज तो सर्वत्र अनन्तवे भाग हीन ही प्राप्त होता है। इस प्रकार यह क्रम कृष्टिकरणके कालके भीतर दूसरे समयसे लेकर इसके ही अन्तिम समय तक कहना चाहिये।

परन्तु कृष्टिवेदकके कालके भीतर यह विधि नही होती, क्योकि कृष्टिवेदक कालके भीतर अपूर्व कृष्टियोमे दिया जानेवाला प्रदेशपु ज।पूर्व कृष्टियोके प्रदेशपिंडके असख्यातवे भागमात्र ही है, इसलिये कृष्टिवेदक कालके भीतर प्रथम समयमे रची जानेवाली अपूर्व कृष्टियोकी अन्तिम कृष्टिमे प्राप्त हुए प्रदेशपु जसे पूर्व कृष्टियोकी प्रथम जघन्य कृष्टिमे प्राप्त होनेवाला प्रदेशपु ज असख्यातगुणा हीन होता है, अन्यथा पूर्व और अपूर्व कृष्टिकी सन्धियोमे एक गोपुच्छपना नही वन सकता है। इसलिए इस प्रकारका विशेष सम्भव है यह दिखलानेके लिये यहाँ श्रेणिकी प्ररूपणा करते है। यथा—पूर्वानुपूर्वीकी अपेक्षा लोभकी जो प्रथम सग्रह कृष्टि है उसके नीचे प्रथम समयमे कृष्टिवेदक जीव अपकर्षित होनेवाले प्रदेशपु जसे अपूर्व कृष्टियोकी रचना करते हुए सर्वप्रथम जो जघन्य कृष्टि प्राप्त होती है उसमे बहुत प्रदेशपुज देता है। उसके बाद अपूर्व कृष्टियोसम्बधी अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होनेतक उत्तरोत्तर अनन्तवे भागहीन प्रदेशपु ज देता है। तदनन्तर अपूर्व कृष्टियोसम्बन्धी अन्तिम कृष्टिमे प्राप्त हुए प्रदेशपुपुजसे लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टियोसम्बन्धी पूर्व कृष्टियोमे जो जघन्य कृष्टि है उसमे असख्यातगुणा हीन द्रव्य देता है। उससे दूसरी पूर्व कृष्टिमे अनन्तवाँ भागहीन द्रव्य देता है। इस प्रकार प्रथम सग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टि तक जानना चाहिये।

पुन उस सग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टिमे दिये गये प्रदेशपु जसे दूसरी सग्रह कृष्टिके नीचे रची जानेवाली अपूर्व कृष्टिकी जघन्य कृष्टिमे असख्यातगुणा प्रदेशपु ज देता है। उसके बाद अपूर्व कृष्टियोसम्बन्धी अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक सर्वत्र अनन्त भागहीन द्रव्य देता है।

पुन अपूर्व अन्तिम कृष्टिमे निक्षिप्त प्रदेशपु जसे दूसरी सग्रहकृष्टिसे पूर्वमे रचित अन्तर कृष्टियोकी जो जघन्य कृष्टि है उसमे असख्यातगुणा प्रदेशपु ज देता है। उससे ऊपर प्रदेशपु ज अनन्त भागहीन होकर जाता है। इतनी विशेषता है कि कृष्टि-अन्तरोमे प्रदेशविन्यासमे फरक जानना चाहिये। इस प्रकार यह विधि आगे भी जानकर कहनी चाहिये। इस प्रकार कृष्टिवेदकके द्वितीयादि समयोमे भी इस निषेक प्ररूपणाको जानना चाहिये।

कोहादिकिट्टिवेदगपढमे तस्स य असखभाग तु।
णासेदि हु पडिसमय तस्सासखेज्जभागकम[1] ॥ ५३६ ॥

---

१ पढमसमयकिट्टीवेदगस्स जा कोहपढमसगहकिट्टी तिस्से असखेज्जदिभागो विणासिज्जदि। किट्टी जाओ पढमसमये विणासिज्जति ताओ वहुगीओ। जाओ विदियसमये विणासिज्जति ताओ असखेज्जदि-हीणाओ। एव ताव दुचरिमसमयअविणट्ठकोहपढमसगहकिट्टि त्ति। क चु पृ ८५४–८५५।

क्रोधादिकृष्टिवेदकप्रथमे तस्य च असंख्यभागं तु।
नाशयति हि प्रतिसमय तस्यासख्यभागक्रमम् ॥ ५३६ ॥

स० च०—क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिका वेदक जीव है सो प्रथम समयविषै सर्व कृष्टिनिका असख्यातवा भागमात्र कृष्टिनिकौ नासै है-घात करै है। बहुरि द्वितीय समयविषै ताके असख्यातवे भागमात्र कृष्टिनिका घात करै है। ऐसै ही क्रमतैं समय समय प्रति असख्यातवाँ भागमात्र क्रमकरि घात कृष्टिनिका प्रमाण क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिका द्विचरम समयपर्यंत जानना, जातैं अन्त समयविषै नवक बध अर उच्छिष्टावली विना विवक्षित सग्रह कृष्टिकी सर्व ही कृष्टिनिका अभाव हो है ॥ ५३६ ॥

विशेष—विशुद्धिके माहात्म्यवश अनुसमय अपवर्तनाके द्वारा विवक्षित सग्रह कृष्टिकी अग्र कृष्टिसे लेकर असख्यातवे भागप्रमाण कृष्टियोको नष्ट करता है। ये प्रथम समयमे नष्ट होनेवाली कृष्टियाँ द्वितीयादि समयोमे नष्ट होनेवाली कृष्टियोकी अपेक्षा बहुत होती है। जो दूसरे समयमे नष्ट होती हैं वे असख्यातगुणी हीन होती हैं। अपनी कृष्टियोके वेदक कालके भीतर द्विचरम समयके प्राप्त होने तक अनुसमय अपवर्तनाके द्वारा उक्त कृष्टियोका इसी प्रकार विनाश होता जाता है। किन्तु अन्तिम समयमे नवक बन्ध तथा उच्छिष्टावलिको छोड कर नष्ट नही हुई क्रोधसम्बन्धी प्रथम सग्रह कृष्टियोका अनुत्पादानुच्छेदरूपसे विनाश देखा जाता है।

कोहस्स य जे पढमे सगहकिट्टिम्हि णट्ठकिट्टीओ।
बधुज्झियकिट्टीण तस्स असखेज्जभागो हु[1] ॥ ५३७ ॥

क्रोधस्य च या प्रथमे सग्रहकृष्टौ नष्टकृष्टय।
बधोज्झितकृष्टीना तस्यासंख्येयभागो हि ॥ ५३७ ॥

स० च०—क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टि वेदकका सर्व कालविषै जे नष्ट कृष्टि भई, जिनि कृष्टिनिका घात कीया तिनिका प्रमाण कृष्टि वेदकका प्रथम समयविषै क्रोधका प्रथम सग्रह कृष्टि-विषै जो ऊपरिकी बधरहित कृष्टिनिका पूर्वै प्रमाण कह्या था ताके असख्यातवे भागमात्र जानना ॥ ५३७ ॥

विशेष—अब कृष्टिवेदकके प्रथम समयसे लेकर विवक्षित प्रथम सग्रहकृष्टिके विनाशकालके द्विचरम समय तक विनाश होनेवाली कृष्टियाँ सब मिलकर कितनी हैं इसी बातको स्पष्ट करते हुए बतलाया है कि वे उपरिम बन्ध रहित कृष्टियोके असख्यातवें भागप्रमाण है। यहाँ प्रथम समयमे कृष्टिवेदकके क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिसम्बन्धी अधस्तन और उपरिम असख्यातवें भागप्रमाण कृष्टियोकी बन्ध रहित कृष्टियाँ सज्ञा है। प्रकृतमे क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी अपेक्षा जो कृष्टियोके विनाशका क्रम कहा है उसी प्रकार शेष सग्रह कृष्टियोके विषयमे भी जानना चाहिये।

कोहादिकिट्टियादिट्ठिदिम्हि समयाहियावलीसेसे।
ताहे जहण्णुदीरइ चरिमो पुण वेदगो तस्स[2] ॥ ५३८ ॥

---

१ एदेण सव्वेण तिचरिमसमयमेत्तीओ सव्वकिट्टीसु पढम-विदियसमयवेदगस्स कोधस्स पढमकिट्टीए अवज्झमाणियाण किट्टीणमसखेज्जदिभागो। क चु पृ ८५५।

२ कोहस्स पढमकिट्टि वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पदमट्ठिदीए समयाहियाए आवलियाए

उसमे मात्र पहले अवस्थित द्रव्य परिहीन देखा जाना है। पुन वहाँ क्रमसे असख्यात भागहानि होती हुई पूर्व समयमे की गई सग्रह कृष्टिसम्बन्धी अन्तिम कृष्टिमे निक्षिप्त हुए प्रदेशपु जसे वर्तमान समयमे दूसरी सग्रह कृष्टिके नीचे की जानेवाली अपूर्व कृष्टिमे दिया जानेवाला प्रदेशपु ज असख्यातवे भाग अधिक होता है। पुन शेष कृष्टियोमे उत्तरोत्तर अनन्तवे भागहीन ही प्राप्त होता है। इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिये। दृश्यमान प्रदेशपु ज तो सर्वत्र अनन्तवे भाग हीन ही प्राप्त होता है। इस प्रकार यह क्रम कृष्टिकरणके कालके भीतर दूसरे समयसे लेकर इसके ही अन्तिम समय तक कहना चाहिये।

परन्तु कृष्टिवेदकके कालके भीतर यह विधि नही होती, क्योकि कृष्टिवेदक कालके भीतर अपूर्व कृष्टियोमे दिया जानेवाला प्रदेशपु ज।पूर्व कृष्टियोके प्रदेशपिंडके असख्यातवे भागमात्र ही है, इसलिये कृष्टिवेदक कालके भीतर प्रथम समयमे रची जानेवाली अपूर्व कृष्टियोकी अन्तिम कृष्टिमे प्राप्त हुए प्रदेशपु जसे पूर्व कृष्टियोकी प्रथम जघन्य कृष्टिमे प्राप्त होनेवाला प्रदेशपु ज असख्यातगुणा हीन होता है, अन्यथा पूर्व और अपूर्व कृष्टिकी सन्धियोमे एक गोपुच्छपना नही वन सकता है। इसलिए इस प्रकारका विशेष सम्भव है यह दिखलानेके लिये यहाँ श्रेणिकी प्ररूपणा करते है। यथा—पूर्वानुपूर्वीकी अपेक्षा लोभकी जो प्रथम सग्रह कृष्टि है उसके नीचे प्रथम समयमे कृष्टिवेदक जीव अपकर्षित होनेवाले प्रदेशपु जसे अपूर्व कृष्टियोकी रचना करते हुए सर्वप्रथम जो जघन्य कृष्टि प्राप्त होती है उसमे बहुत प्रदेशपुज देता है। उसके बाद अपूर्व कृष्टियोसम्बधी अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होनेतक उत्तरोत्तर अनन्तवे भागहीन प्रदेशपु ज देता है। तदनन्तर अपूर्व कृष्टियोसम्बन्धी अन्तिम कृष्टिमे प्राप्त हुए प्रदेशपुजसे लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टियोसम्बन्धी पूर्व कृष्टियोमे जो जघन्य कृष्टि है उसमे असख्यातगुणा हीन द्रव्य देता है। उससे दूसरी पूर्व कृष्टिमे अनन्तवाँ भागहीन द्रव्य देता है। इस प्रकार प्रथम सग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टि तक जानना चाहिये।

पुन उस सग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टिमे दिये गये प्रदेशपु जसे दूसरी सग्रह कृष्टिके नीचे रची जानेवाली अपूर्व कृष्टिकी जघन्य कृष्टिमे असख्यातगुणा प्रदेशपु ज देता है। उसके बाद अपूर्व कृष्टियोसम्बन्धी अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक सर्वत्र अनन्त भागहीन द्रव्य देता है।

पुन अपूर्व अन्तिम कृष्टिमे निक्षिप्त प्रदेशपु जसे दूसरी सग्रहकृष्टिसे पूर्वमे रचित अन्तर कृष्टियोकी जो जघन्य कृष्टि है उसमे असख्यातगुणा प्रदेशपु ज देता है। उससे ऊपर प्रदेशपु ज अनन्त भागहीन होकर जाता है। इतनी विशेषता है कि कृष्टि-अन्तरोमे प्रदेशविन्यासमे फरक जानना चाहिये। इस प्रकार यह विधि आगे भी जानकर कहनी चाहिये। इस प्रकार कृष्टिवेदकके द्वितीयादि समयोमे भी इस निषेक प्ररूपणाको जानना चाहिये।

कोहादिकिट्टिवेदगपढमे तस्स य असखभागं तु।
णासेदि हु पडिसमय तस्सासखेज्जभागकम[1] ॥ ५३६ ॥

---

१ पढमसमयकिट्टीवेदगस्स जा कोहपढमसगहकिट्टी तिस्से असखेज्जदिभागो विणासिज्जदि। किट्टी जाओ पढमसमये विणासिज्जति ताओ वहुगीओ। जाओ विदियसमये विणासिज्जति ताओ असखेज्जदिहीणाओ। एव ताव दुचरिमसमयअविणट्ठकोहपढमसगहकिट्टि त्ति। क चु पृ ८५४–८५५।

क्रोधादिकृष्टिवेदकप्रथमे तस्य च असख्यभागं तु।
नाशयति हि प्रतिसमय तस्यासख्यभागक्रमम् ॥ ५३६ ॥

स० च०—क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिका वेदक जीव है सो प्रथम समयविषै सर्व कृष्टिनिका असख्यातवा भागमात्र कृष्टिनिकौ नासै है-घात करै है। बहुरि द्वितीय समयविषै ताके असख्यातवें भागमात्र कृष्टिनिका घात करै है। ऐसै ही क्रमतै समय समय प्रति असख्यातवाँ भागमात्र क्रमकरि घात कृष्टिनिका प्रमाण क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिका द्विचरम समयपर्यंत जानना, जातै अन्त समयविषै नवक बध अर उच्छिष्टावली विना विवक्षित सग्रह कृष्टिकी सर्व ही कृष्टिनिका अभाव हो है ॥ ५३६ ॥

विशेष—विशुद्धिके माहात्म्यवश अनुसमय अपवर्तनाके द्वारा विवक्षित सग्रह कृष्टिकी अग्र कृष्टिसे लेकर असख्यातवे भागप्रमाण कृष्टियोको नष्ट करता है। ये प्रथम समयमे नष्ट होनेवाली कृष्टियाँ द्वितीयादि समयोमे नष्ट होनेवाली कृष्टियोकी अपेक्षा बहुत होती हैं। जो दूसरे समयमे नष्ट होती है वे असख्यातगुणी हीन होती हैं। अपनी कृष्टियोके वेदक कालके भीतर द्विचरम समयके प्राप्त होने तक अनुसमय अपवर्तनाके द्वारा उक्त कृष्टियोका इसी प्रकार विनाश होता जाता है। किन्तु अन्तिम समयमे नवक बन्ध तथा उच्छिष्टावलिको छोड कर नष्ट नही हुई क्रोधसम्बन्धी प्रथम सग्रह कृष्टियोका अनुत्पादानुच्छेदरूपसे विनाश देखा जाता है।

कोहस्स य जे पढमे सगहकिट्टिम्हि णट्ठकिट्टीओ।
बंधुज्झियकिट्टीण तस्स असखेज्जभागो हु[1] ॥ ५३७ ॥

क्रोधस्य च या प्रथमे सग्रहकृष्टौ नष्टकृष्टय।
बंधोज्झितकृष्टीना तस्यासख्येयभागो हि ॥ ५३७ ॥

स० च०—क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टि वेदकका सर्व कालविषै जे नष्ट कृष्टि भई, जिनि कृष्टिनिका घात कीया तिनिका प्रमाण कृष्टि वेदकका प्रथम समयविषै क्रोधका प्रथम सग्रह कृष्टि-विषै जो ऊपरिकी बधरहित कृष्टिनिका पूर्वै प्रमाण कह्या था ताके असख्यातवें भागमात्र जानना ॥ ५३७ ॥

विशेष—अब कृष्टिवेदकके प्रथम समयसे लेकर विवक्षित प्रथम सग्रहकृष्टिके विनाशकालके द्विचरम समय तक विनाश होनेवाली कृष्टियाँ सब मिलकर कितनी है इसी बातको स्पष्ट करते हुए बतलाया है कि वे उपरिम बन्ध रहित कृष्टियोके असख्यातवे भागप्रमाण हैं। यहाँ प्रथम समयमे कृष्टिवेदकके क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिसम्बन्धी अधस्तन और उपरिम असख्यातवें भागप्रमाण कृष्टियोकी बन्ध रहित कृष्टियाँ सज्ञा है। प्रकृतमे क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी अपेक्षा जो कृष्टियोके विनाशका क्रम कहा है उसी प्रकार शेष सग्रह कृष्टियोके विषयमे भी जानना चाहिये।

कोहादिकिट्टियादिट्ठिदिम्हि समयाहियावलीसेसे।
ताहे जहण्णुदीरइ चरिमो पुण वेदगो तस्स[2] ॥ ५३८ ॥

---

१ एदेण सव्वेण तिचरिमसमयमेत्तीओ सव्वकिट्टीसु पढम-विदियसमयवेदगस्स कोधस्स पढमकिट्टीए अवज्झमाणियाण किट्टीणमसखेज्जदिभागो। क चु पृ ८५५।

२ कोहस्स पढमकिट्टि वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पदमट्ठिदीए समयाहियाए आवलियाए

क्रोधादिकृष्टिकादिस्थितौ समयाधिकावलीशेषे।
तत्र जघन्यमुदीरयति चरम पुनर्वेदकस्तस्य ॥ ५३८ ॥

स० च—क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी प्रथम स्थितिविषै समय अधिक आवली अवशेष रहैं तहा जघन्य स्थितिकी उदीरणा करनेवाला हो है। जो आवलीके उपरि एक समय है तिस सम्बन्धी निषेककौं अपकर्षणकरि उदयावलीविषै निक्षेपण करै है। बहुरि तहा ही क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिवेदकका अन्त समयविषै हो है ॥ ५३८ ॥

ताहे सजलणाण बधो अतोमुहुत्तपरिहीणो।
सत्तो वि य सददिवसा अडमासब्भहियछव्वरिसा[1] ॥ ५३९ ॥

तत्र सज्वलनाना बधोऽन्तर्मुहूर्तपरिहीन।
सत्त्वमपि च शतदिवसा अष्टमासाभ्यधिकषड्वर्षा ॥ ५३९ ॥

स० च—तहा सज्वलनचतुष्कका स्थितिबध्र अन्तमुंहूर्त घाटि शत' दिवस कहिए सौ दिन ताका तीन महीना अर दश दिन है। पहले समय च्यारि मास था सो सख्यात स्थिति बधापसरणनिकरि घटि इहा इतना रह्या। क्रोधकी तीनौ सग्रह कृष्टिनिका वेदक कालविषै जो दोय मास घटै तौ एक सग्रहकृष्टि वेदक कालविषैं कितना घटै ऐसैं त्रैराशिकतै स्थितिबध घटनेका प्रमाण पूर्वोक्त आया है। बहुरि तहा सज्वलन चतुष्कका स्थितिसत्त्व अन्तमुंहूर्त घाटि आठ महीना अधिक छह वर्ष है। प्रथम समय आठ वर्ष था सो घटिकरि इहा इतना रह्या। क्रोधकी तीनौ सग्रह कृष्टिनिका वेदक कालविषैं जो च्यारि वर्ष घटै तौ एक सग्रह कृष्टि वेदक कालविषैं कितना घटै ऐसैं त्रैराशिकतै स्थिति सत्त्व घटनेका प्रमाण पूर्वोक्त आवै है ॥ ५३९ ॥

घादितियाण बधो दसवासंतोमुहुत्तपरिहीणा।
सत्त सखं वस्सा सेसाण सखऽसखवस्साणि[2] ॥ ५४० ॥

घातित्रयाणा बधो दशवर्षा दशवर्षा अतर्मुहूर्तपरिहीनाः।
सत्त्व संख्यं वर्षा शेषाणा सख्यासख्यवर्षा ॥ ५४० ॥

स० च—घाति कर्मनिका स्थितिबध अन्तमुंहूर्त घाटि दश वर्षमात्र है। प्रथम समय विषै सख्यात हजार वर्षमात्र था सो इहा सख्यातगुणा क्रमतै घटि इतना रह्या। बहुरि घातिकर्मनिका

सेसाए एदम्हि समये जो विही त विहिं वत्तइस्सामो। त जहा—ताधे चेव कोहस्स जहण्णगो ट्ठिदिउदीरगो। कोहपढमकिट्टीए चरिमसमयवेदगो जादो। जा पुव्वपवत्ता सजलणाणुभागसतकम्सस्स अणुसमयमोहट्टणा सा तहा चेव। क चु पृ ८५५।

१ चदुसजलणाण ट्ठिदिबधो वे मासा चत्तालीस च दिवसा अतोमुहुत्तूणा। सजलणाण ट्ठिदिसतकम्स छ वस्साणि अट्ठ च मासा अतोमुहुत्तूणा। क चु पृ ८५५।

२ तिण्ह घादिकम्माण ठिदिबधो दस वस्साणि अतोमुहुत्तूणाणि। घादिकम्माण ट्ठिदिसतकम्म सखेज्जाणि वस्साणि। सेसाण कम्माण ट्ठिदिसतकम्ममसखेज्जाणि वस्साणि। क चु पृ ८५५।

स्थितिसत्त्व सख्यात हजार वर्षमात्र है। पूर्वै सख्यात हजार वर्पमात्र था सो सख्यात हजार स्थिति काडकनिकरि मख्यातगुणा घटता क्रम लीए घटया तथापि आलापकरि सख्यात हजार वर्पमात्र ही रह्या। बहुरि अघाति कर्मनिका स्थितिवध सख्यात हजार वर्षमात्र है। इहा भी पूर्ववत् तात्पर्य जानना। बहुरि आयु बिना तीन अघातियानिका स्थितिसत्त्व असख्यात वर्पमात्र है। यद्यपि पूर्वतै असख्यातगुणा घटता क्रमकरि घटया तथापि आलापकरि इतना ही रह्या। ऐसै क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिवेदकका निरूपण किया॥ ५४०॥

से काले कोहस्स य विदियादो सगहादु पढमठिदी।
कोहस्स विदियसगहकिट्टिस्स य वेदगो होदि[1] ॥ ५४१ ॥

स्वे काले क्रोधस्य च द्वितीयत सग्रहात् प्रथमस्थिति।
क्रोधस्य द्वितीयसग्रहकृष्टेश्च वेदको भवति ॥ ५४१ ॥

स० च०—क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टवेदकका अनन्तर समयरूप अपने कालविपै क्रोधकी द्वितीय सग्रह कृष्टितै प्रदेश समूहका अपकर्षण करि उदयादि गुणश्रेणिरूप प्रथम स्थिति करै है। ताका प्रमाण क्रोधकी द्वितीय सग्रह कृष्टिका वेदक कालतैं आवलीमात्र अधिक है। याके प्रथमादि समयनिविषै असख्यातगुणा क्रम लीए अपकर्षण कीया हुआ द्रव्य दीजिए है। वहुरि तहा ही क्रोधकी द्वितीय सग्रह कृष्टिका वेदक हो है॥५४१॥

कोहस्स पढमसगहकिट्टिस्सावलिपमाण पढमठिदी।
दोसमऊणदुआवलिणवक च वि चउउदे ताहे[2] ॥५४२॥

क्रोधस्य प्रथमसंग्रहकृष्टेरावलिप्रमाणं प्रथमस्थिति।
द्विसमयोनद्वयावलि क चापि चतुर्दश तत्र ॥५४२॥

स० च०—तिस समयविषै क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी प्रथम स्थितिविषै उच्छिष्टावलीमात्र निषेक अर द्वितीय स्थितिविषै दोय समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्धरूप निषेक अवशेष सत्त्वरूप रहै हैं। इन विना क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिका अन्य सर्व प्रदेश क्रोधकी द्वितीय सग्रह कृष्टिके नीचै अनन्तगुणा घटता अनुभागरूप होइ ताकी अपूर्व कृष्टि होइ परिणमै है। तब ही अन्य सग्रह कृष्टिनिविषैं भी यथासभव सक्रमण हो है। तीहि कालविषैं क्रोधकी द्वितीय सग्रह कृष्टिका द्रव्य चौदहगुणा हो है। एकगुणा आयका था तातैं तेरहगुणा प्रथम सग्रहका आया, मिलि चौदह गुणा भया॥५४२॥

पढमादिसगहाण चरिमे फालिं तु विदियपहुदीण।
हेट्टा सव्व देदि हु मज्झे पुव्व व इगिभागं[3] ॥५४३॥

---

१ से काले कोहस्स विदियट्ठिदीए पदेसग्गमोकड्डियूण कोहस्स पढमट्ठिदिं करेदि। ताहे कोहस्स विदियकिट्टीवेदगो। आदि, क चु पृ ८५५–८५६।

२ ताधे कोघस्स पढमसगहकिट्टीए सतकम्म दो आवलियवधा दुसमयूणा सेसा। ज च उदयावलिय पविट्ठ ते च सेस पढमकिट्टीए। क चु पृ ८५६।

३ जो कोहस्स पढमकिट्टि वेदयमाणस्स विधी सो चेव कोहस्स विदियकिट्टि वेदयमाणस्स विधी कायव्वो। क चु पृ ८५६।

प्रथमादिसंग्रहाणा चरमे फालिं तु द्वितीयप्रभृतीनाम् ।
अधस्तन सर्वं ददाति हि मध्ये पूर्वमिव एकभागम् ॥५४३॥

स० च०—प्रथमादि सग्रह कृष्टिनिका अत समयविषैं जो सक्रमण द्रव्यरूप फालि ताहि द्वितीयादि सग्रह कृष्टिनिके नीचै सर्व देहै अर मध्यविषै पूर्ववत् एक भागकौ देहै। भावार्थ—जिस सग्रहकृष्टिकौ भोगवै है ताका नवक समयप्रबद्ध बिना सर्व द्रव्य सो सर्व सक्रमणरूप है। जो उच्छिष्टावली सो ही अन्त फालि है। ताकौ अनन्तर समयविषैं याके अनन्तर जो सग्रह कृष्टि भोगिए ताके नीचै अर वीचिमै अपूर्व कृष्टिरूप परिणमावै है। तहा तिह सग्रह कृष्टिकी अवयव कृष्टिनिके बीचि जे अपूर्व कृष्टि करिए है ते पूर्ववत् अत समयविषै अपने द्रव्यका असख्यातवा भागमात्र द्रव्यकरि निपजाइए है। बहुरि अवशेष सर्व द्रव्यकरि तिस सग्रहकृष्टिके अनन्तरि द्वितीय सग्रह कृष्टि भोगिए है सो इहा भी ऐसा ही विधान जानना। इहा प्रश्न—

जो पूर्वै कृष्टिवेदकका प्रथम समयका व्याख्यानविषैं नीचै करी कृष्टिनिका प्रमाणतै वीचिकरी कृष्टिनिका प्रमाण असख्यातगुणा कह्या था, इहा वीचिकरी कृष्टिनिविषैं दीया द्रव्यतै नीचै करी कृष्टिनिविषैं दीया द्रव्य असख्यातगुणा कह्या तातैं विरुद्ध आवै है ? ताका समाधान— तहा तौ सग्रहकृष्टिके द्रव्यका असख्यातवा भागमात्र द्रव्य ग्रह्या था ताका विधान कह्या था, इहा सर्व सग्रह कृष्टिके द्रव्यकी अपेक्षा वर्णन है, तातै इहा ऐसा विधान जानना। बहुरि जो इहा भी पूर्ववत् विधान करिए तौ अन्तर कृष्टिनिके वीचि नवीन कृष्टि बहुत निपजै, सर्व अवयव कृष्टिनिके वीचि वीचि अपूर्व कृष्टि होइ तब पूर्व कृष्टिविषै दीया द्रव्यतैं असख्यातगुणा घटता द्रव्य जो कृष्टिविषै दीया तातै अनन्तरवर्ती कृष्टिनिविषैं दीया द्रव्य असख्यातगुणा होइ सो ऐसैं द्रव्य देना। सूत्रविषै नाही कह्या है, तातै इहा विधान कह्या है सोई अगीकार करना ॥५४३॥

कोहस्स विदियकिट्टीवेदयमाणस्स पढमकिट्टिं वा ।
उदओ बधो णासो अपुव्वकिट्टीण करण च ॥ ५४४ ॥

क्रोधस्य द्वितीयकृष्टिवेदकस्य प्रथमकृष्टिरिव ।
उदयो बधो नाश अपूर्वकृष्टीना करण च ॥ ५४४ ॥

स० च—क्रोधको द्वितीय सग्रहकृष्टिका वेदककैं कृष्टिनिका उदय अर बध अर घात अर सक्रमण द्रव्यकरि वा बध द्रव्यकरि अपूर्व कृष्टिका करना इत्यादि विधान जैसैं प्रथम सग्रह कृष्टिका कह्या तैसैं ही समस्त कहना ॥ ५४४ ॥

कोहस्स विदियसंगहकिट्टी वेदंतयस्स सकमण ।
सट्टाणे तदियो त्ति य तदणतरहेट्ठिमस्स पढम च ॥ ५४५ ॥

क्रोधस्य द्वितीयसंग्रहकृष्टिवेद्यमानस्य सक्रमणं ।
स्वस्थाने तृतीयात च तदनतरमधस्तनस्य प्रथमं च ॥ ५४५ ॥

---

१ उदिण्णाण किट्टीण वज्झमाणीण किट्टीण विणासिज्जमाणीण अपुव्वाण णिव्वत्तिज्जमाणीण वज्झमाणेण च पदेसग्गेण सछुब्भमाणेण च पदेसग्गेण णिव्वत्तिज्जमाणियाण। क० चु० पृ० ८५६।

२ क० चु० पृ० ८५६।

स० च०—क्रोधकी द्वितीय सग्रह कृष्टिका वेदकके स्वस्थान कहिए विवक्षित कषाय ही विपै सक्रमण तौ तीसरी सग्रह-कृष्टिपर्यंत होइ अर परस्थान कहिए अन्य कपायविपै सक्रमण सो आयके नीचै जो कषाय ताकी प्रथम सग्रह कृप्टिविषै होइ ॥ ५४५ ॥ सोई कहिए है—

पढमो विदिये तदिये हेट्ठिमपढमे च विदियगो तदिये ।
हेट्ठिमपढमे तदियो हेट्ठिमपढमे च सकमदि१ ॥ ५४६ ॥

प्रथमो द्वितीये तृतीये अधस्तनप्रथमे च द्वितीयकस्तृतीये।
अधस्तनप्रथमे तृतीयोऽधस्तनप्रथमे च सक्रामति ॥ ५४६ ॥

स० च०—विवक्षित कषायकी पहली सग्रह कृष्टिका द्रव्य तौ अपनी दूसरी तीसरी अर नीचली कषायकी पहली सग्रहकृष्टिविषै सक्रमण करै है अर दूसरी सग्रहकृष्टिका द्रव्य अपनी तीसरी अर नीचली कषायकी पहली सग्रह कृष्टिविषै सक्रमण करै है। अर तीसरी सग्रह कृष्टिका द्रव्य नीचली कषायकी पहली सग्रहकृष्टिविषै ही सक्रमण करै है। इहा वेदक अपेक्षा जाकौ भोगवै है ताके पीछे जाको भोगवै ताकौ नीचली कषाय कह्या है सो क्रोधकी द्वितीय सग्रहकृष्टितै प्रदेश समूह है सो क्रोधकी तीसरी मानकी पहली सग्रहकृष्टिविषै सक्रमण करै है। अर क्रोधकी तीसरी सग्रहकृष्टिका द्रव्यतै मानकी पहली ही विषै सक्रमण करै है। अर मानकी पहलीका द्रव्य मानकी दूसरी तीसरी मायाकी पहलोविषै सक्रमण करै है। अर मानकी दूसरीका द्रव्य मानकी तीसरी मायाकी पहलीविषै सक्रमण करै है। अर मानकी तीसरीका द्रव्य मायाकी लोभकी पहिलीविषै सक्रमण करै है। अर गायाकी पहलीका द्रव्य मायाकी दूसरी तीसरी लोभकी पहली विषै सक्रमण करै है। अर मायाकी दूसरीका द्रव्य मायाकी तीसरी लोभकी पहलीविषै सक्रमण करै है। अर मायाकी तीसरीका द्रव्य लोभकी पहलीविषै सक्रमण करै है। अर लोभकी पहलीका द्रव्य लोभकी दूसरी तीसरीविषै सक्रमण करै है। अर लोभकी दूसरीका द्रव्य लोभकी तीसरीविषै संक्रमण होइ प्रवेश करै है। इहा स्वस्थानविषै तौ विवक्षित सग्रहके द्रव्यकौं अपकर्षण भागहारका भाग दीए तहा एक भागमात्र अपनी अन्य सग्रह कृष्टिविषै सक्रमण करै है। अर परस्थानविषै तिसहोकौ अध प्रवृत्त भागहारका भाग दीए एक भागमात्र द्रव्य अन्य कषायकी प्रथम सग्रह कृष्टिविषै सांक्रमण करै है ऐसा विशेष जानना ॥ ५४६ ॥

कोहस्स पढमकिट्टी सुण्णो त्ति ण तस्स अत्थि सकमण ।
लोभतिमकिट्टिस्स य णत्थि पडित्थावणूणादो ॥५४७॥

क्रोधस्य प्रथमकृष्टि शून्या इति न तस्या·अस्ति सक्रमण ।
लोभातिमकृष्टेश्च नास्ति प्रतिस्थापनमूनत ॥५४७॥

स० च०—इहा क्रोधकी प्रथम सग्रहकृष्टि तौ शून्य भई—नास्ति भई, तातै ताकै सक्रमण नाही अर लोभकी तृतीय सग्रहकृष्टिका भी सक्रमण नाही, जातै प्रतिलोम जो उलटा सक्रमण ताका अभाव है। ऐसैं दोय विना अवशेष दश सग्रहकृष्टिनिका सक्रमण कीया। तहा भोगवनेरूप द्वितीय सग्रहकृष्टिविपै आय द्रव्यका अभाव है। तहा घात द्रव्यहोका पूर्व कृष्टिनिविषैं देना पूर्वोक्त

१ क चु पृ ८५६।

प्रकार हो है। बहुरि लोभकी तृतीय सग्रहकृष्टिविषै व्यय द्रव्य नाही, परन्तु आय द्रव्य है, तातै दश सग्रहकृष्टिनिविषै सक्रमण द्रव्यका पूर्व अपूर्वकृष्टिनिविषै देना पूर्वोक्त प्रकार हो है। ऐसा जानना ॥५४७॥

जस्स कसायस्स ज किट्टिं वेदयदि तस्स त चेव ।
सेसाणं कसायाण पढम किट्टिं तु बधदि हु[1] ॥५४८॥

यस्य कषायस्य या कृष्टि वेदयति तस्य ता चैव ।
शेषाणा कषायाणा प्रथमा कृष्टि बध्नाति हि ॥५४८॥

स० च०—जिस कषायकी जिस सग्रहकृष्टिकौं वेदै भोगवै है तिस कषायकी तौ तिस ही सग्रहकृष्टिको बाधै है। बहुरि अन्य कषायनिकी प्रथम सग्रहकृष्टिकौ बाधै है ऐसी व्याप्ति है। तातै बध द्रव्यका विधान च्यारि ही सग्रहकृष्टिनिविषैं जानना सो इहा क्रोधकी द्वितीय सग्रह-कृष्टिकौं अर अन्य कषायनिकी प्रथम सग्रहकृष्टिकौ बाधै है ॥५४८॥

माणतिय कोहतदिये मायालोहस्स तियतिये अहिया ।
सखगुण वेदिज्जे अन्तरकिट्टी पदेसो य[2] ॥५४९॥

मानत्रयं क्रोधतृतीये मायालोभस्य त्रिकत्रिके अधिका ।
सख्यगुण वेद्यमाने अन्तरकृष्टि प्रदेशश्च ॥५४९॥

स० च०—इहा सग्रहकृष्टिनिविषै अवयव कृष्टिनिका वा द्रव्यका अल्पबहुत्व कहिए है, सो मानकी तीन अर क्रोधकी एक तीसरी ही अर माया लोभकी तीन तीन इन सग्रह कृष्टिनिविषैं तौं विशेष अधिक अर वेद्यमान क्रोधकी दूसरी कृष्टिविषै सख्यातगुणा कृष्टिनिका वा प्रदेशनिका प्रमाण क्रमतै है। सोई कहिए है—

मानकी प्रथम सग्रहकृष्टिका स्तोक, तातै मानकी दूसरीका, तातैं मानकी तीसरीका, तातै क्रोधकी तीसरीका, तातै मायाकी प्रथमका, तातैं मायाकी दूसरीका, तातै मायाकी तीसरीका, तातैं लोभकी प्रथमका, तातैं लोभकी दूसरीका, तातैं लोभकी तीसरीका, अवयव कृष्टिनिका प्रमाण क्रमतैं विशेषकरि अधिक है। तहा विशेषका प्रमाण स्वस्थानविषै तौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए आवै है। जैसैं मानकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी अवयव कृष्टिनिका प्रमाणतै याहीकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए जो एक भागमात्र विशेष ताकरि अधिक मानकी द्वितीय सग्रहकृष्टिकी अवयव कृष्टिनिका प्रमाण हो है। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि परस्थानविषैं आवलीका असख्यातवा भागका भाग दीए विशेषका प्रमाण आवै है। जैसैं मानकी तीसरी सग्रह-कृष्टिकी अवयव कृष्टिप्रमाण क्रमतैं याहीकौ आवलीका असख्यातवा भागका भाग दीए एक भागमात्र विशेषकरि अधिक क्रोधकी तृतीय सग्रहकृष्टिकी अवयव कृष्टिनिका प्रमाण हो है। ऐसैं

---

१ चदुण्ह कसायाण जस्स ज किट्टि वेदयदि तस्स कसायस्स त किट्टि बधदि, सेसाण कसायाण पढमकिट्टीओ बधदि। क चु पृ ८५७।

२ क चु पृ ८५७–८५८।

ही अन्यत्र जानना। बहुरि क्रोधकी द्वितीय सग्रहकृष्टिकी[1] अवयव कृष्टिनिका प्रमाण सख्यातगुणा है सो चौदह गुणा जानना। ऐसै अवयव कृष्टिनिके प्रमाणका अल्पबहुत्व कह्या। याही प्रकार प्रदेश जे इन सग्रह कृष्टिनिके परमाणू तिनके प्रमाणका भी अल्पवहुत्व जानना, जातैं वध द्रव्य सक्रमण द्रव्य मिलि ऐसा क्रम हो है। बहुरि इस द्रव्य ही के अनुसारि कृष्टिनिका भी अल्पवहुत्व जानना। जातै थोडे द्रव्यकरि थोरी, वहुत द्रव्यकरि बहुत कृष्टि निपजै है॥ ५४९॥

वेदिज्जादिट्ठिदीए समयाहियआवलीयपरिसेसे।
ताहे जहण्णुदीरणचरिमो पुण वेदगो तस्स॥ ५५०॥

वेद्यमानादिस्थितौ समयाधिकावलिकपरिशेषे।
तत्र जघन्योदीरणचरम पुन वेदकस्तस्य॥ ५५०॥

स० च०—जिस सग्रह कृष्टिकौ वेदै है तिसकी प्रथम स्थितिविषै दोय आवली अवशेप रहै तौ आगाल प्रत्यागालका नाश हो है। बहुरि समय अधिक आवली अवशेष रहै जघन्य स्थिति जो उदयावलीतै ऊपरि एक निषेक ताका उदीरक कहिए उदयावलीविषै देनेरूप उदीर्णा करनेवाला हो है। तहा ही तिसके वेदककालका अत समय हो है सो इहा क्रोधकी द्वितीय सग्रह कृष्टिकी प्रथम स्थितिविषै समय अधिक आवली अवशेष रहैं जघन्य स्थितिका उदीरक अर ताके वेदकका अत समय भया॥ ५५०॥

ताहे सजलणाण बधो अतोमुहुत्तपरिहीणो।
सत्तो वि य दिणसीदी चउमासब्भहियपणवस्सा[3]॥ ५५१॥

तत्र संज्वलनाना बधो अंतर्मुहूर्तपरिहीन।
सत्त्वमपि च दिनाशीति चतुर्मासाभ्यधिकपंचवर्षा॥ ५५१॥

स० च०—तहा सज्वलनचतुष्कका स्थितिबध अतर्मुहूर्त घाटि असी दिन ताका दोय मास अर बीस दिनमात्र है। अर तिनका सत्त्व अतर्मुहूर्त घाटि च्यारि मास अधिक पच वर्षमात्र है। इहा भी पूर्ववत् निरूपण जानना॥ ५५१॥

घादितियाण बधो बासपुधत्त तु सेसपयडीण।
वस्साण सखेज्जसहस्साणि हवति णियमेण॥ ५५२॥

---

१ टीकामें बहुरि लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिकी ऐसा पाठ है मु०।

२ तिस्से चेव पढमट्ठिदीए समयाहियाए आवलियाए सेसाए ताहे कोहस्स विदियकिट्टीए चरिमसमयवेदगो। क चु पृ ८५८।

३ ताधे सजलणाण ट्ठिदिवधो बे मासा वीस च दिवसा देसूणा। सजलणाण ट्ठिदिसतकम्म पच वस्साणि चत्तारि मासा अतोमुहुत्तूणा। क चु पृ ८५८।

४ तिण्ह घादिकम्माण ट्ठिदिवधो वासपुधत्त। सेसाण कम्माण ट्ठिदिवधो सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। क चु पृ ८५८।

घातित्रयाणां बंधो वर्षपृथक्त्वं तु शेषप्रकृतीनाम् ।
वर्षाणा सख्येयसहस्राणि भवति नियमेन ॥ ५५२ ॥

स० च०—तीन घातियनिका स्थितिबध पृथक्त्व वर्षमात्र है। तीनके ऊपरि यथायोग्य पृथक्त्व सज्ञा जाननी। बहुरि अवशेष अघातियानिका स्थितिबध सख्यातक हजार वर्षमात्र है नियमकरि ॥ ५५२ ॥

घादितियाण सत्त सखसहस्साणि होंति वस्साण ।
तिण्ह पि अघादीणं वस्साणि असखमेत्ताणि[1] ॥ ५५३ ॥

घातित्रयाणा सत्वं सख्यसहस्राणि भवति वर्षाणा ।
त्रयाणामपि अघातिना वर्षा असंख्यमात्रा ॥ ५५३ ॥

स० च०—तीन घातियानिका स्थितिसत्त्व सख्यात हजार वर्षमात्र है। आयु बिना तीन अघातियानिका स्थितिसत्त्व असख्यात वर्षमात्र है ॥ ५५३ ॥

से काले कोहस्स य तदियादो सगहादु पढमठिदी[2] ।
अते सजलणाण बध सत्त दुमास चउवस्सा ॥ ५५४ ॥

स्वे काले क्रोधस्य च तृतीयत सग्रहात् प्रथमस्थिति ।
अते संजलनाना बध सत्त्वं द्विमास चतुर्वर्षा ॥ ५५४ ॥

स० च—ताके अनतरि अपने कालविषै क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिका वेदक हो है। तहा याका द्रव्य एकगुणा था अर यातै चौदहगुणा द्वितीय सग्रहका उच्छिष्टावली नवक समयप्रबद्ध बिना द्रव्य मिलनेतै पद्रहगुणा हो है। तिस द्रव्यतै तिसके वेदकका कालतैं आवलीमात्र अधिक प्रथम स्थित्ति करै है। तहा वर्णन क्रोधकी द्वितीय सग्रहकृष्टि वेदकवत् जानना। तहा अत समय विषै सज्वलन चतुष्कका स्थितिबध दोय मास अर स्थितिसत्त्व च्यारि वर्षमात्र जानना। अवशेष कर्मनिका पूर्ववत् आलाप है ॥ ५५४ ॥

से काले माणस्स य पढमादो सगहादु पढमठिदी ।
माणोदयअद्धाये तिभागमेत्ता हु पढमठिदी[3] ॥ ५५५ ॥

स्वे काले मानस्स च प्रथमात् संग्रहात् प्रथमस्थिति ।
मानोदयाद्धाया त्रिभागमात्रा हि प्रथमस्थिति ॥ ५५५ ॥

---

१ तिण्ह घादिकम्माण ठिदिसतकम्म सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। णामा-गोद-वेदणीयाण ठिदिसतकम्ममसखेज्जाणि वस्साणि। क चु पृ ८५८।

२ तदो से काले कोहस्स तदियकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि। ताधे ठिदिबधो सजलणाण दो मासा पडिपुण्णा, सतकम्म चत्तारि वस्साणि। क चु पृ ८५८।

३ से काले माणस्स पढमकिट्टिमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि। जा एत्थ माणवेदगद्धा तिस्से वेदगद्धाए तिभागमेत्ता पढमट्ठिदी। क चु ८५९।

स० च०—क्रोध वेदकके अनन्तरि अपने काल विषै मानकी प्रथम सग्रह कृष्टिका द्रव्य एकगुणा था अर पद्रहगुणा क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिका द्रव्य मिल्या सो मिलिकरि सोलहगुणा भया। ताकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए एक भागमात्र द्रव्य ग्रहि गुणश्रेणिरूप प्रथम स्थिति करै है। सो क्रोधवेदक कालतै किछू घाटि जो मानका वेदककाल ताका तीसरा भाग आवलीकरि अधिक तिस प्रथमस्थितिका प्रमाण है। तहाँ मानकी प्रथम सग्रह कृष्टिका वेदक हो है ।।५५५।।

कोहपढमं व माणो चरिमे अतोमुहुत्तपरिहीणो।
दिणमासपण्णचत्त बंध सत तिसजलणगाण[२] ।।५५६।।

क्रोधप्रथम व मान चरमे अंतर्मुहूर्तपरिहीन ।
दिनमासपंचाशच्चत्वारिंशत् बध. सत्त्व त्रिसंज्वलनाना ।।५५६।।

स० च०—क्रोधकी प्रथम सग्रहकृष्टिका वेदकवत् मानकी प्रथम सग्रह कृष्टिका वेदकका विधान जानना। विशेष इतना—क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिका वेदकके बध द्रव्यकरि उपजी जे नवीन अन्तर कृष्टि तिनका प्रमाण ल्यावनेकौ भागहारका प्रमाण छह गुणहानि मात्र कह्या था, इहाँ तातैं चौथाई घाटि है, तातैं साढा च्यारि गुणहानिमात्र है। आगै भी इतना ही घाटि जानना। सो मायाकी प्रथम सग्रह कृष्टि वेदककै तीन गुणहानिमात्र, लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टिविषै ड्योढ गुणहानिमात्र भागहार जानना। याका भाग सर्व कृष्टिनिकौ दीएँ क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिवेदककै तौ गुणहानिका चौथा भागमात्र अन्तरालका प्रमाण कह्या था। इहाँ वा आगै तातै सोलह्वाँ भागमात्र क्रमतै घटता जानना। सो मान माया लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टि वेदककैं बध द्रव्यकरि निपजी नवीन कृष्टिनिके वीचि जे कृष्टि पाइए तिनका प्रमाणमात्र अतराल सो क्रमतै गुणहानिका तीन सोलह्वाँ भागमात्र, दोइ सोलह्वा भागमात्र, एक सोलहवाँ भागमात्र गुणा स्थापिए। बहुरि क्रोधकी प्रथम द्वितीय तृतीय कृष्टि वेदककैं गुणकार क्रमतै तेरह चौदह पद्रहका अर मानकी प्रथमादि सग्रह कृष्टि वेदककै गुणकार क्रमतै सोलह सतरह अठारह वा मायाकी प्रथमादि सग्रह कृष्टि वेदककै गुणकार क्रमतै उगणीस वीस इकईसका, लोभकी प्रथमादि सग्रह कृष्टि वेदककै गुणकार क्रमतै बाईस तेईस चौईसका है। तहा अपने-अपने गुणकार करि गुण्यकौ गुणैं अन्तरालका प्रमाण आवै है। बहुरि इतना जानना—

क्रोध वेदककैं ग्यारह्यो कषायोका, मानवेदककैं क्रोध विना तीन कषायनिका, माया वेदककै क्रोध मान विना दोय कषायनिका, लोभ वेदककै लोभ हीका बध है। तातै इनके ही बध द्रव्यकरि अन्तर कृष्टि निपजै है। बहुरि जिस कृष्टिकौ भोगिए है ताका द्रव्य जिन कृष्टिनिविषैं सक्रमण करै है तिनविषै सक्रमण द्रव्यकरि निपजी जे कृष्टि तिनका अन्तरालविषै भी यथासभव जानना। बहुरि मान प्रथम सग्रह कृष्टि वेदककी प्रथम स्थितिविषै समय अधिक आवली अवशेष रहैं अन्त समय होइ। तहाँ क्रोध बिना तीन सज्वलनका स्थितिबध अन्तर्मुहूर्त

१ जेणेव विहिणा कोधस्स पढमकिट्टी वेदिदा तेणेव विधिणा माणस्स पढमकिट्टिं वेदयदि ।
—क० चु०, पृ० ८५९ ।

२ एदेण कमेण माणपढमकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए जाधे समयाहियावलियसेसा ताधे तिण्ह सजलणाण ठिदिबधो मासो वीस च दिवसा अतोमुहुत्तूणा। क० चु०, पृ० ८५९ ।

घाटि पचास दिन है। अर स्थितिसत्त्व अन्तमुंहूर्त घाटि चालीस मासमात्र है। इहा क्रोधकी प्रथम सग्रहकृष्टिवत् त्रैराशिक आदि विधान जानना। इहातै आगै पूर्व सग्रह कृष्टिका द्रव्य मिलनेतैं वेद्यमान कृष्टिका द्रव्यविषै एक एक गुणकार क्रमतैं बधै है। तहाँ मानकी द्वितीय तृतीय अर मायाकी प्रथम द्वितीय तृतीय अर लोभकी प्रथम द्वितीय तृतीय संग्रह कृष्टिका द्रव्य क्रमतैं सतरह अठारह उगणीस वोस इकईस बाईस तेईस चौईसगुणा है सो अपने-अपने द्रव्यकौं अपकर्षणकरि अपने वेदक कालतै आवली मात्र अधिक प्रथम स्थिति करिए है। तहाँ पूर्वोक्त विधानतैं तिस प्रथम स्थितिविषै समय अधिक आवली अवशेष रहैं अपनी-अपनी वेदक कालका अत समय हो है ॥५५६॥

तहाँ स्थितिबध स्थितिसत्त्वका विशेष कहिए है—

विदियस्स माणचरिमे चत्त वत्तीसदिवसमासाणि।
अतोमुहुत्तहीणा बधो सत्तो तिसजलणगाण[1] ॥५५७॥

द्वितीयस्य मानचरमे चत्वारिंशद्द्वात्रिंशद्दिवसमासा.।
अन्तर्मुहूर्तहीना बंधः ं त्रिसंज्वलनानां ॥५५७॥

स० च०—ताके अनन्तरि मानकी द्वितीय सग्रह कृष्टिका वेदक हो है। ताका अत समय-विषैं तीन सज्वलनका स्थिति बध अन्तमुहूर्त घाटि चालीस दिन अर स्थितिसत्व अन्तमुंहूर्त घाटि वत्तीस मासमात्र है ॥५५७॥

तदियस्स माणचरिमे तीस चउवीस दिवसमासाणि।
तिण्ह सजलणाण ठिदिबंधो तह य सत्तो य[2] ॥५५८॥

तृतीयस्य मानचरिमे त्रिंशद्चतुर्विशद्दिवसमासाः।
त्रयाणा संज्वलनाना स्थितिबंधस्तथा च सत्त्व च ॥५५८॥

स० च०—ताके अनन्तरि मानकी तृतीय सग्रह कृष्टिका वेदक हो है। ताका अन्त समयविषै तीन सज्वलनिका स्थितिबन्ध अन्तमुंहूर्त घाटि तीस दिन अर स्थितिसत्त्व अन्तमुंहूर्त घाटि चौबीस मासमात्र हो है ॥५५८॥

पढमगमायाचरिमे पणवीस वीसदिवसमासाणि।
अतोमुहुत्तहीणा वधो सत्तो दुसजलणगाण[3] ॥५५९॥

---

१ से काले माणस्स विदियकिट्टीयो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि। तेणेव विहिणा सपत्तो माणस्स विदियकिट्टि वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से समयाहियावलियसेसा त्ति ताधे सजलणाण ट्ठिदिवधो मासो दस च दिवसा देसूणा। सतकम्म दो वस्साणि अट्ठ च मासा देसूणा। क० चु०, पृ० ८६०।

२ ताधे तिण्ह सजलणाण ठिदिवधो मासो पडिपुण्णो। सतकम्म वे वस्साणि पडिपुण्णाणि। क० चु०, पृ० ८६०।

३ ताधे ठिदिववो दोण्ह सजलणाण पणुवीस दिवसा देसूणा। ठिदिसतकम्म वस्समट्ठ च मासा देसूणा। क० च०, पृ० ८६०।

प्रथमगमायाचरिमे पर्चविंशतिः विंशति. दिवसमासा ।
अन्तर्मुहूर्तहीना बंध सत्त्वं द्विसंज्वलनकयो ।।५५९।।

स० च०—ताके अनन्तरि मायाकी प्रथम सग्रह कृष्टिका वेदक हो है सो याका काल माया वेदककालके तीसरे भागमात्र है। ताका अन्त समयविर्षे सज्वलन माया लोभका स्थिति बध अतमुंहूर्त घाटि पचीस दिन स्थितिसत्त्व अतमुंहूर्त घाटि वीस मासमात्र हो है ।।५५९।।

विदियगमायाचरिमे वीस सोल च दिवसमासाणि ।
अतोमुहुत्तहीणा बधो सत्तो दुसजलणगाण[1] ।।५६०।।

द्वितीयगमायाचरिमे विश षोडश च दिव सा ।
अन्तर्मुहूर्तहीना बध सत्त्व द्विसज्वलनकयो ।।५६०।।

स० च०—ताके अनन्तरि मायाकी द्वितीय सग्रह कृष्टिका वेदक हो है। ताका अन्त समयविषैं दोय सज्वलननिका स्थितिबध अन्तमुंहूर्त घाटि वीस दिन अर स्थितिसत्त्व अन्तमुंहूर्त घाटि सोलह मासमात्र हो है ।।५६०।।

तदियगमायाचरिमे पण्णरवारस य दिवसमासाणि ।
दोण्ह संजलणाण ठिदिबधो तह य सत्तो य[2] ।। ५६१ ।।

तृतीय याचरमे पंचदश द्वादश च दिवसमासा ।
द्वयोः सज्वलनयो स्थितिबधस्तथा च सत्त्वं च ।। ५६१ ।।

स० च०—ताके अनतर मायाकी तृतीय सग्रह कृष्टिका वेदक हो है। ताका अन्त समयविषैं दोय सज्वलननिका स्थितिबध अन्तमुंहूर्त घाटि पद्रह दिन अर स्थितिसत्त्व अन्तमुंहूर्त घाटि[3] वारह मासप्रमाण हो है ।। ५६१ ।।

मासपुधत्त वासा सखसहस्साणि बध सत्तो य ।
घादितियाणिदराण स सखेज्जवस्साणि[4] ।। ५६२ ।।

मासपृथक्त्व वर्षा सख्यसहस्राः बध. च ।
घातित्रयाणामितरेषा संख्यमसख्येयवर्षा. ।। ५६२ ।।

---

1 ताधे ठिदिवधो वीस दिवसा देसूणा। ठिदिसतकम्म सोलस मासा देसूणा।

—क० चु०, पृ० ८६१।

2 ताधे दोण्ह सजलणाण ठिदिबधो अद्धमासो पडिपुण्णो। ठिदिसतकम्ममेक्क वस्स पडिपुण्ण।

3 क० चु० में 'परिपूर्ण' बतलाया है। अन्तर्मुहूर्त घाटि नही बतलाया। पृ० ६६९।

4 तिण्ह घादिकम्माण ठिदिवधो मासपुधत्त। तिण्ह घादिकम्माण ठिदिसतकम्म सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। इदरेसिं कम्माण [ठ्ठिदिवधो सखेज्जाणि वस्साणि।] क० चु० ८६१। ठिदिसतकम्मम-सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। क० चु० पृ० ।

स० च०—तहा ही तीन घातियानिका स्थितिबध पृथक्त्व मासप्रमाण है। स्थितिसत्त्व यथा योग्य सख्यात हजार वर्षमात्र है। बहुरि तीन अघातियानिका स्थितिबध यथायोग्य सख्यात वर्ष मात्र है। स्थितिसत्त्व यथायोग्य असख्यात वर्षमात्र है ॥ ५६२ ॥

लोहस्स पढमचरिमे लोहस्संतोमुहुत्त बधदुगे।
दिवसपुधत्तं वासा संखसहस्साणि घादितिये[1] ॥ ५६३ ॥

लोभस्य प्रथमचरिमे लोभस्यांन्लमुंहूर्तं बंधद्विके।
दिवसपृथक्त्व वर्षा संख्यसहस्रा घातित्रये ॥ ५६३ ॥

स० च०—ताके अनतरि लोभकी प्रथम सग्रहकृष्टिका वेदक हो है। ताका काल समस्त लोभ वेदक कालके तीसरे भागमात्र वा बादर लोभ वेदक कालतैं आधा है। ताका अन्त समय-विषैं सज्वलन लोभका स्थितिबध वा स्थितिसत्त्व अन्तर्मुहूर्तमात्र है। तहा स्थितिबधतैं स्थिति-सत्त्व सख्यातगुणा जानना। बहुरि तीन घातियानिका स्थितिबध पृथक्त्व दिनमात्र अर स्थिति सत्त्व सख्यात हजार वर्षमात्र है ॥ ५६३ ॥

सेसाण पयडीण वासपुधत्त तु होदि ठिदिबधो।
ठिदिसत्तमसखेज्जा वस्साणि हवति णियमेण[2] ॥ ५६४ ॥

शेषाणा प्रकृतीना वर्षपृथक्त्व तु भवति स्थितिबधः।
स्थितिसत्त्वमसंख्येया वर्षा भवंति नियमेन ॥ ५६४ ॥

स० चं०—अवशेष तीन अघातिया प्रकृतिनिका स्थितिबध पृथक्त्व वर्षमात्र अर स्थिति-सत्त्व यथायोग्य असख्यात वर्षमात्र है नियमकरि ॥ ५६४ ॥

से काले लोहस्स य विदियादो सगहादु पढमठिदी।
ताहे सुहुम किट्टिं करेदि तव्विदियतदियादी[3] ॥ ५६५ ॥

स्वे काले लोभस्य च द्वितीयत सग्रहात् प्रथमस्थितिः।
तत्र सूक्ष्मा कृष्टि करोति तद्द्वितीयतृतीयत ॥५६५॥

स० च—वहुरि ताके अनन्तरि अपने कालविषैं लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टिके द्रव्यतैं प्रदेश समूहका अपकर्षणकरि उदयादि गलितावशेष गुणश्रेणीरूप प्रथम स्थिति करै है ताका प्रमाण

---

१ ताधे लोभसजलणस्स ट्ठिदिबधो अतोमुहुत्त। ट्ठिदिसतकम्म पि अतोमुहुत्त। तिण्ह घादि-कम्माण ट्ठिदिबधो दिवसपुधत्त। घादिकम्माण ट्ठिदिसतकम्म सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। क० चु०, पृ० ८६१–८६२।

२ सेसाण कम्माण वासपुधत्त। सेसाण कम्माण असखेज्जाणि वस्साणि। क० चु०, पृ० ८६१–८६२।

३ तदो से काले लोहस्स विदियकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदि करेदि। ताधे चेव लोभस्स विदियकिट्टीदो च तदियकिट्टीदो च पदेसग्गमोकड्डियूण सुहुमसापराइयकिट्टीओ णाम करेदि। क० चु०, पृ० ८६२।

अवशेष रह्या अनिवृत्तिकरण कालतै आवलीमात्र अधिक है। वहुरि तिस ही कालविषै लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टि अर तृतीय सग्रह कृष्टिका जो द्रव्य तातै प्रदेशसमूहको अपकर्षण करि सूक्ष्म है अनुभागशक्ति जिनविषै ऐसी सूक्ष्म कृष्टि करै है। सो वादर लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टिका द्रव्य सर्व मोहका द्रव्यका चौइसका भागतै तेईसगुणा है। तातै अपकर्षण कीया द्रव्य अनुभागको अपेक्षा सर्व मोह द्रव्यका चौईसवाँ भागकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए एक भाग तातै पाचसै पिचहत्तरिगुणा है। तहाँ तेईसगुणा तौ लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिरूप द्रव्य है। अर अवशेष पाँचसै बावनगुणा द्रव्य रह्या ताकरि सूक्ष्म कृष्टि करिए है। इहाँ अपकर्षण कीया द्रव्यविषै तेईसका गुणकार था ताकौ तातै एक अधिक चौईस ताकरि गुणें ताके अनन्तरि भोगवने योग्य सूक्ष्म कृष्टि ता विषै सक्रमण होने योग्य द्रव्य पाचसै बावनगुणा हो है। ताके अनतरि भोगवने योग्य कृष्टिविषै सक्रमण द्रव्य सख्यातगुणा कह्या है। वहुरि लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिके द्रव्यतै अपकर्षण कीया द्रव्य है सो सर्व मोह द्रव्यका चौईसवा भागकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए एक भागहारमात्र है ताकरि सूक्ष्म कृष्टि करिए है। मिलिकरि मोह द्रव्यका चौईसवा भागको अपकर्षण भागहारका भाग दीएँ तातै पाँचसै तरेपणगुणा द्रव्य भया। सो इतने द्रव्यकरि सूक्ष्म कृष्टि करिए है ऐसा तात्पर्य जानना ॥५६५॥

लोहस्स तदियसगहकिट्टीए हेट्ठदो अवट्ठाण।
सुहुमाण किट्टीण कोहस्स य पढमकिट्टिणिभा[1] ॥५६६॥
लोभस्य तृतीयसंग्रहकृष्टचा अधस्तनत. अवस्थानम्।
सूक्ष्माना कृष्टीना क्रोधस्य च प्रथमकृष्टिनिभा ॥५६६॥

स० च०—तिनि सूक्ष्म कृष्टिनिका लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिके नीचै अवस्थान है। बहुरि ते सूक्ष्म कृष्टि क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिके समान हो है। कैसै ? सो कहिए है—

जैसै अपूर्व स्पर्धकनिके नीचै अनतगुणा घटता अनुभाग लीए क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टि है तैसै वादर कृष्टिके नीचै अनतगुणा घटता अनुभाग लीए सूक्ष्म कृष्टिनिकी रचना हो है। बहुरि जैसै क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिकी अवयव कृष्टिनिका प्रमाण या विना अवशेष वादर कृष्टिनिका जो प्रमाण तातै सख्यातगुणा है। तैसै ही सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रमाण क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टि विना अवशेष कृष्टिनिके प्रमाणतै सख्यातगुणा है। बहुरि जैसै क्रोधकी प्रथम सग्रह-कृष्टि जघन्य कृष्टितै लगाय उत्कृष्ट कृष्टिपर्यन्त अनन्तगुणा अनुभाग क्रम लीए है तैसै ही सूक्ष्म कृष्टि भी जघन्यतै लगाय उत्कृष्ट पर्यन्त अनन्तगुणा अनुभाग लीए है॥ ५६६ ॥

कोहस्स पढमकिट्टी कोहे छुद्धे दु माणपढम च।
माणे छुद्धे मायापढम मायाए सछुद्धे ॥ ५६७ ॥
लोहस्स पढमकिट्टी आदिमसमयकदसुहुमकिट्टी य।
अहियकमा पचपदा सगसखेज्जदिमभागेण[2] ॥ ५६८ ॥

---

१ तासि सुहुमसापराइयकिट्टीण कम्हि ट्ठाण १ तासि ट्ठाण लोभस्स तदियाए सगहकिट्टीए हेट्ठदो। जारिसो कोहस्स पढमसगहकिट्टी तारिसी एसा सुहुमसापराइयकिट्टी। क० चु०, पृ० ८६२।

२ कोहस्स पढमसगहकिट्टीए अन्तरकिट्टीओ थोवाओ। कोहे सछुद्धे माणस्स पढमसगहकिट्टीए

क्रोधस्य प्रथमकृष्टि क्रोधे क्षुब्धे तु मानप्रथम च ।
मानक्षुब्धे मायाप्रथम मायाया सक्षुब्धायाम् ।। ५६७ ।।
लोभस्य प्रथमकृष्टिरादिमसमयकृतसूक्ष्मकृष्टिश्च ।
अधिकक्रमाणि पंचपदानि स्वकसख्येयभागेन ।। ५६८ ।।

स० च०—प्रथम समयविषै कीन्ही सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रमाण ल्यावनेके अर्थि अल्पबहुत्व कहिए हैं—

क्रोधकी प्रथम सग्रहकी अवयव कृष्टि स्तोक है। बहुरि कृष्टिप्रमाणका चौईसवा भागतै तेरहगुणी है। बहुरि क्रोधकी तीनो सग्रह कृष्टि मानकीके ऊपरि मिलाए मानकी प्रथम सग्रहकी अवयव कृष्टि विशेष अधिक हो है। पूर्व राशिकौ त्रिभाग अधिक च्यारिका भाग दीए एक भागमात्र अधिक है सो सोलह गुणी हो है। बहुरि मानकी तीनो सग्रह कृष्टि मायाके ऊपरि मिलाए मायाकी प्रथम सग्रहकी अवयव कृष्टि विशेष अधिक है सो पूर्व राशिको त्रिभाग अधिक पाचका भाग दीए एक भागमात्र अधिक है सो तेरहकी जायगा उगणीस गुणी हो है। बहुरि मायाकी तीनो सग्रह कृष्टि लोभके ऊपरि मिलाए लोभकी प्रथम सग्रहकी अवयव कृष्टि विशेष अधिक हो है। सो पूर्व राशिकौ त्रिभाग अधिक छहका भाग दीए एक भागमात्र अधिक हो है सो बाईसगुणी हो है। बहुरि तातै प्रथम समयविषै कीन्ही सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रमाण विशेष अधिक है। पूर्व राशिकौं ग्यारहका भाग दीए एक भागमात्र अधिक हो है सो चौईसगुणी हो है। ऐसैं पच स्थान सख्यातवा भाग अधिक क्रम लीए जानने ।। ५६८ ।।

सुहुमाओ किट्टीओ पडिसमयमसखगुणविहीणाओ[1] ।
दव्वमसखेज्जगुण विदियस्स य लोहचरिमो त्ति[2] ।। ५६९ ।।

सूक्ष्मा. कृष्टय. प्रतिसमयमसख्यगुणविहीना. ।
द्रव्यमसख्येयगुण द्वितीयस्य च लोभचरम इति ।। ५६९ ।।

स० च०—सूक्ष्म कृष्टिका प्रथम समयविषै कीनी ते बहुत हैं। तातैं द्वितीय समयविषै कीनी अपूर्व सूक्ष्म कृष्टि सख्यातगुणी घाटि हैं। ऐसै क्रमतै समय समय प्रति करी नवीन अपूर्व कृष्टि सख्यातगुणी घाटि जाननी। बहुरि सूक्ष्म कृष्टिविषैं दीया द्रव्य प्रथम समयविषै स्तोक है। तातैं

अन्तरकिट्टीओ विसेसाहियाओ। माणे सछुद्धे मायाए पढमसगहकिट्टीए अतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ। मायाए सछुद्धाए लोभस्स पढमसगहकिट्टीए अतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ। सुहुमसापराइयकिट्टीओ जाओ पढमसमये कदाओ ताओ विसेसाहियाओ। एसो विसेसो अणतराणतरेण सखेज्जदिभागो। क० चु०, पृ० ८६३।

१ सुहुमसापराइयकिट्टीओ जाओ पढमसमए कदाओ ताओ बहुगाओ। विदियसमए अपुव्वाओ कीरति असखेज्जगुणहीणाओ। अणतरोपणिधाए सव्विस्से सुहुमसापराइयकिट्टीओ असखेज्जगुणहीणाए सेढीए कीरति। क० चु०, पृ० ८६४–८६५।

२ सुहुमसापराइयकिट्टीसु ज पढमसमये पदेसग्ग दिज्जदि त थोव। विदियसमये असखेज्जगुण। एव जाव चरिमसमयादो त्ति असखेज्जगुण। क० चु० पृ० ८६५।

दूसरा समयविषै संख्यातगुणा है। ऐसैं समय समय प्रति सूक्ष्म कृष्टिविषै दीया द्रव्य क्रमतैं संख्यातगुणा जानना। सो द्वितीय संग्रह कृष्टिवेदक कालरूप जो सूक्ष्म कृष्टि करनेका काल ताका अन्त समय पर्यन्तजानना ॥ ५६९ ॥

दव्व पढमे समये देदि हु सुहुमेसणंतभागूणं[1]।
थूलपढमे असंखगुणूणं तत्तो अणंतभागूणं[3] ॥ ५७० ॥

द्रव्यं प्रथमे समये ददाति ही सूक्ष्मेष्वनंतभागोन।
स्थूलप्रथमे असंख्यगुणोन तत अनंतभागोन ॥ ५७० ॥

स० च०—सूक्ष्म कृष्टिकरण कालका प्रथम समयविषै सूक्ष्म कृष्टिकी जघन्य कृष्टितै लगाय अनन्तवा भाग घटता क्रम लीए अर उत्कृष्ट सूक्ष्म कृष्टितै प्रथम जघन्य बादर कृष्टिविषै असंख्यातगुणा घटता अर तातै द्वितीयादि बादर कृष्टिनिविषै अनन्तवा भाग घटता क्रम लीये द्रव्य दीजिए है। सो इहा विशेष निर्णयके अर्थि व्याख्यान करिए है—सो बादर कृष्टिकरणका द्वितीय समयविषै जो विधान कह्या था ताकौ स्मरणकरि इहा जो विधान कहिए है ताकौ समझना। तहा प्रथम आयद्रव्य व्ययद्रव्य घातद्रव्यनिका स्वरूप कहिए है—

लोभकी द्वितीय संग्रह कृष्टिका द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए तहा एक भागमात्र लोभकी तृतीय संग्रह कृष्टिविषै आय द्रव्य है। बहुरि इतना ही लोभकी द्वितीय संग्रह कृष्टिविषै व्यय द्रव्य है। आनुपूर्वी संक्रमणके नियमतै लोभकी द्वितीय संग्रह कृष्टिविषै आय द्रव्य है नाही। बहुरि अपनी अपनी संग्रहकी अन्त कृष्टिका द्रव्यकौ अपनी अपनी कृष्टिनिका प्रमाणकौ अपकर्षण भागहारका असंख्यातवा भागका भाग दीए एक भागमात्र जो अन्तविषै नष्ट करी ऐसी घातकृष्टिनिका प्रमाणकरि गुणें अर विशेष अधिक कीए घात द्रव्यका प्रमाण हो है। तहा घातद्रव्य कृष्टिसम्बन्धी व्ययद्रव्य सर्व व्यय द्रव्यके असंख्यातवें भागमात्र है। ताकौ घटाए जो व्यय द्रव्य रह्या तितना घात द्रव्यतै ग्रहणकरि जिन कृष्टिनिका व्यय द्रव्य भया था तहा ही दीए स्वस्थान गोपुच्छ हो है। बहुरि घात कृष्टिनिका प्रमाणमात्र जे विशेष तिनकौ घात कीए पीछे अवशेष रही जे कृष्टि तिन एक एक विषै देना। तातै ताकौ अवशेष कृष्टिनिका प्रमाणकरि गुणैं जो द्रव्य होइ तितना द्रव्य घात द्रव्यतै ग्रहि करि दीए परस्थान गोपुच्छ भी होइ है। ऐसै सर्व कृष्टिनिका एक गोपुच्छ भया।

बहुरि पूर्वोक्त दोय प्रकार द्रव्य दीए पीछे अवशेष जो घात द्रव्य रह्या तिसविषै ताकौ घात कीए पीछे अवशेष रही कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छका भाग दीए जो एक खंड मध्यम धनरूप भया ताकौ एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणमात्र जे विशेष तिनकरि अधिक कीए जो द्रव्य भया ताकौ तृतीय संग्रह कृष्टिका अवशेष घात द्रव्यतैं ग्रहि तृतीय संग्रहका जघन्य कृष्टिविषै दीजिए है। अवशेष द्रव्यविषै घटता क्रम लीए अन्य कृष्टिनिविषै दीजिए है। ऐसैं अपने

१ जहण्णियाए किट्टीए पदेसग्ग बहुअ। विदियाए विसेसहीणमणंतभागेण। तदियाए विसेसहीण। एवमणंतरोपणिधाए गंतूण चरिमाए सुहुमसांपराइयकिट्टीए पदेसग्ग विसेसहीण। चरिमादो सुहुमसांपराइयकिट्टीदो जहण्णियाए बादरसांपराइयकिट्टीए दिज्जमाणग पदेसग्गमसंखेज्जगुणहीण। तदो विसेसहीण। क० चु० पृ० ८६५।

अपने अवशेष घात द्रव्यकौ दीए अवशेप घात द्रव्य एक गोपुच्छाकार हो है। ऐसैं एक गोपुच्छाकार तिष्ठती जे कृष्टि तिनिविपै सक्रमण द्रव्य अर वध द्रव्यकरि निपजी कृष्टिनिविपै सक्रमण द्रव्य अर वध द्रव्य देनेका विधान कहिए है—

तहा द्वितीय सग्रह कृष्टिविपै आय द्रव्यका अभाव है। तातैं घात द्रव्यतैं किछू द्रव्य जुदा राखि इहा कहिए है तैसैं देना। अवशेपकौ पूर्वोक्त प्रकार देना। तहा बादर कृष्टिसम्बन्धी एक विशेष आदि एक विशेष उत्तर घात कीए पीछै तृतीय सग्रहकी अवशेप रही कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापै जो सकलन होइ तितना द्रव्य तृतीय सग्रह कृष्टिका आय द्रव्यतैं ग्रहि जुदा स्थापना। अर जितनी तृतीय सग्रहकी कृष्टि भई तितने विशेप आदि अर एक विशेप उत्तर अर अपनी अपनी अवशेष कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापै जो सकलन धन होइ तितना द्रव्य द्वितीय सग्रहका घात द्रव्यतैं ग्रहि जुदा स्थापना, इनि दोऊनिका नाम अधस्तन शीर्ष द्रव्य है। बहुरि तृतीय सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टिका द्रव्यकौं असख्यातगुणा अपकर्षण भागहारका भाग दीए एक भागमात्र जो गुण्य सो एक खण्ड है। ताकौ तृतीय सग्रहसम्दन्धी कृष्टिनिका प्रमाण करि गुणैं जो होइ तितना द्रव्यको तृतीय सग्रहके आय द्रव्यतैं ग्रहि स्थापना। अर तिसही गुण्यकौं द्वितीय सग्रहकी कृष्टिनिका प्रमाणकरि गुणैं जो होइ तितना द्रव्यकौ तृतीय सग्रहके आय द्रव्यतैं ग्रहि स्थापना। इनिका नाम मध्यम खड द्रव्य है। बहुरि उभय द्रव्यसम्बन्धी एक विशेष आदि अर एक विशेष उत्तर द्वितीय सग्रहकी कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि तहा सकलन धनमात्र उभय द्रव्यके विशेष तिनविपै अपने एक विशेषका अनन्तवा भागमात्र घटाए अवशेष रह्या तितना द्वितीय सग्रहकी कृष्टिके घात द्रव्यतैं ग्रहि जुदा स्थापना। यहु वेद्यमान कृष्टि है। तातैं याका बध नाम भी है। सो घटाया द्रव्यकौ बध द्रव्यविषैं देइ पूर्ण करेगे, इहा द्वितीय सग्रहका घात द्रव्य पूर्ण भया। बहुरि एक अधिक द्वितीय सग्रहकी जेतो कृष्टि भई तितने विशेष आदि एक विशेष उत्तर अर सक्रमण द्रव्यकरि निपजी अपूर्व कृष्टि सहित सर्व तृतीय सग्रहकी कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापै तहा सकलन धनमात्र उभयद्रव्यके विशेषनिकौ तृतीय सग्रहके आय द्रव्यतैं ग्रहि स्थापने। इनि दोऊनिका नाम उभय द्रव्य विशेष द्रव्य है। बहुरि तीन प्रकार द्रव्यकरि हीन जो तृतीय सग्रहका आय द्रव्य ताकरि अपूर्व नूतन कृष्टि निपजाइए है तिनका प्रमाण ल्याइए है—

एक मध्यम खड अधिक जो तृतीय सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टिका द्रव्य तिस प्रमाण द्रव्यकरि एक सक्रमणसम्बन्धी अन्तर कृष्टि निपजै तौ पूर्वोक्त तीन प्रकार द्रव्य रहित सक्रमण द्रव्यकरि केती नवीन कृष्टि निपजैं ऐसैं त्रैराशिक कीए सक्रमण द्रव्यकरि निपजी कृष्टिनिका प्रमाण आवै है। याका भाग तृतीय सग्रहकी पूर्व कृष्टिनिका प्रमाणकौ दीए सक्रमण कृष्टिनिके वीचि अन्तरालका प्रमाण आवै है सो सक्रमण कृष्टिनिके प्रमाणका भाग अवशेष सक्रमण द्रव्यकौ दीए एक खड होइ। ताकौ सक्रमण कृष्टिनिका प्रमाणकरि गुणैं जो द्रव्य भया ताका नाम सक्रमण अन्तर कृष्टिसम्बन्धी समान खण्ड द्रव्य है। अब बध द्रव्यका विभाग कहिए है—

बध द्रव्यकरि निपजी जे अपूर्व अन्तर कृष्टि तिनिविषै जो अन्त कृष्टि तिसतैं लगाय ताके ऊपरि जेती कृष्टि पाइए तितने विशेष तौ आदि अर बधातर कृष्टिनिका अन्तरालमात्र विशेष उत्तर अर बन्धातर कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि तहा सकलनमात्र द्रव्यकौ मोहनीयका समयप्रवद्धतैं ग्रहि जुदा स्थापना। याका नाम बधातर कृष्टिविशेष द्रव्य है। इहा एक मध्यम

खंड अधिक तृतीय सग्रहकी जघन्य कृष्टिका द्रव्यमात्र द्रव्यतैं एक कृष्टि निपजै तौ किंचित् ऊन मोहका समयप्रबद्धमात्र द्रव्यकरि केती निपजै। ऐसैं त्रैराशिक कीए बन्ध द्रव्यकरि करी अपूर्व अन्तर कृष्टिनिका प्रमाण आवै है। याका भाग किंचिदून सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र जो द्वितीय सग्रहकी कृष्टिनिका प्रमाण ताकौं दीए बधातर कृष्टिनिके वीचि अन्तरालका प्रमाण आवै है। बहुरि बध द्रव्यतैं पूर्वोक्त बधातर कृष्टिविशेष द्रव्य अर बध द्रव्यका अनतवा भागमात्र द्रव्य जुदा स्थापि अवशेष रह्या द्रव्यकौ बधातर कृष्टिका भाग दीए एक खड होइ। अर याकौं बधातर कृष्टिका प्रमाणकरि गुणैं पूर्वोक्त द्रव्य होइ ताका नाम बधातर कृष्टिमबधी समान खड द्रव्य है। बहुरि पूर्वैं जो समयप्रबद्धका एक भागमात्र द्रव्य जुदा राख्या ताकौं बध कृष्टिनिका प्रमाणमात्र जो इहा गच्छ तिसका एक घाटि गच्छका आधा प्रमाण करि हीन जो दो गुणहानि ताकरि गुणी ताका भाग दीए इहा विशेषका प्रमाण होइ ताकौं सर्व बध कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छका एकवार सकलन धनमात्र प्रमाणकरि गुणैं जो द्रव्य होइ तितना द्रव्य जुदा स्थाप्या बध द्रव्यका अनतवा भागमात्र द्रव्यतैं ग्रहि जुदा स्थापना। याका नाम बध विशेष द्रव्य है। बहुरि बध द्रव्यका अनतवा भागविषै इतना घटाए जो अवशेष रह्या ताकौ सर्व बधकृष्टिनिका प्रमाणका भाग दीए एक खड होइ। ताकौ बन्ध कृष्टिनिका प्रमाण ही करि गुणैं जो द्रव्य होइ ताका नाम बधद्रव्य मध्यम खड है। बहुरि इहा सूक्ष्म कृष्टिविषै सक्रमण होने योग्य जो द्वितीय तृतीय सग्रहका द्रव्य अपकर्षण कीया ताका विभाग कहिए है—

सूक्ष्मकृष्टिसम्बन्धी जो द्रव्य ताकौ प्रथम समयविषै करी सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छकौ एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणकरि हीन दो गुणहानिकरि गुणी ताका भाग दीए एक विशेष होइ ताकौं सूक्ष्म कृष्टिका प्रमाणमात्र गच्छका एकवार सकलन धनमात्र प्रमाणकरि गुणैं जो होइ तितना द्रव्य सूक्ष्म कृष्टिसम्बन्धी द्रव्यतैं ग्रहि जुदा स्थापना। याका नाम सूक्ष्म कृष्टि सम्बन्धी विशेष द्रव्य है। बहुरि याकौ घटाए जो अवशेष सूक्ष्म कृष्टिसम्बन्धी द्रव्य रह्या ताकौ सूक्ष्म कृष्टिनिके प्रमाणका भाग दीए एक खण्ड होइ, अर याकौ सूक्ष्म कृष्टिका प्रमाणकरि ही गुणैं जो द्रव्य होइ सो सूक्ष्म कृष्टिसम्बन्धी समान खण्ड द्रव्य है। ऐसैं क्रमकरि विभागरूप कीया जो द्रव्य ताके देनेका विधान कहिए है—

सूक्ष्म कृष्टिकी जो जघन्य कृष्टि तिसविषैं बहुत द्रव्य दीजिए है। तहा सूक्ष्म कृष्टिसम्बन्धी समान खण्ड द्रव्यतैं एक खण्ड अर सूक्ष्म कृष्टिसम्बन्धी विशेषतैं सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष ग्रहि दीजिए है। बहुरि ताके ऊपरि द्वितीयादि अन्तपर्यन्त सूक्ष्म कृष्टिनिविषै कृष्टि द्रव्यके अनतवा भागमात्र जो एक सूक्ष्म कृष्टिसम्बन्धी विशेष ताकरि घटता अनुक्रमतैं द्रव्य दीजिए है। भावार्थ यहु—एक एक तौ सूक्ष्म कृष्टिसम्बन्धी समान खण्ड अर वीचि होइ गईं कृष्टिनिका प्रमाणकरि हीन सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रमाणमात्र सूक्ष्म कृष्टिसम्बन्धी विशेष क्रमतैं तिनविषैं दीजिए है। इहा सूक्ष्म कृष्टिसम्बन्धी द्रव्य समाप्त भया।

बहुरि अन्त सूक्ष्म कृष्टिविषै दीया द्रव्यतैं ताके ऊपरि जघन्य बादर कृष्टिविषैं दीया द्रव्य असख्यातगुणा घटता है। तहा तृतीय सग्रहका च्यारि प्रकार द्रव्यविषैं मध्यम खण्डतै एक खण्ड अर उभय द्रव्य विशेषतैं सर्व बादर कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष ग्रहि तहा जघन्य बादर कृष्टिविषै दीजिए है। बहुरि ताके ऊपरि द्वितीयादि बादर कृष्टिनिविषै अनतवा भागमात्र विशेष घटता क्रम

लीएं द्रव्य दीजिए है। भावार्थ—द्वितीयादि बादर कृष्टिनिविषै एकादि एक एक वधता क्रम लीएं अधस्तन शीर्षके विशेष अर एकादि एक अधिककरि हीन सर्व बादर कृष्टिप्रमाणमात्र उभयद्रव्यके विशेष अर एक एक मध्यम खण्ड तहा दीजिए है। सो एक उभय द्रव्यका विशेषविषै एक अधस्तन शीर्ष विशेष घटाइए है। इतना इतना क्रमतै घटता द्रव्य दीजिए है सो सक्रमण द्रव्यकरि निपजी अपूर्व कृष्टि पर्यन्त यहु अनुक्रम जानना। बहुरि जहा सक्रमण द्रव्यतै नवीन अपूर्व कृष्टि निपजी तिसविषै सक्रमणातर कृष्टिसम्बन्धी समान खण्ड उभय द्रव्य विशेप द्रव्यतै भई कृष्टिनिका प्रमाण करि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष ग्रहि दीजिए है। सो यहु अपनी नीचली पूर्व कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा है। बहुरि ताके ऊपरि पूर्व कृष्टिविपै भईं कृष्टिनिका प्रमाणमात्र अधस्तन शीर्षके विशेष एक मध्यम खण्ड, भई कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र उभय द्रव्यके विशेष दीजिए है। सो यहु यातै नीचली अपूर्व कृष्टिविपै दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा घाटि है। बहुरि ताके ऊपरि भी पूर्वोक्त प्रकार द्रव्य दीजिए है। बहुरि द्वितीय सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टिविषै भईं कृष्टिनिका प्रमाणमात्र अधस्तन शीर्षके विशेष, एक मध्यम खण्ड, भईं कृष्टिनिका प्रमाणकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र उभय द्रव्यके विशेष दीजिए है। ताके ऊपरि एक-एक अधस्तन शीर्षविशेष बधता अर एक उभय द्रव्यका विशेष घटता क्रमकरि द्रव्य दीजिए है। विशेष इतना—

वधकृष्टिकी जघन्य कृष्टितै लगाय उभय द्रव्यका विशेषविषै एक विशेषका अनतवा भागमात्र घटता क्रमकरि द्रव्य दीजिए है। अर तहा बध द्रव्यतै एक एक मध्यम खड अर भई बन्ध कृष्टिनिकरि हीन सर्वकृष्टिनिका प्रमाणमात्र बन्ध विशेषकौ ग्रहि दीजिए है। ऐसै क्रम होतै जहा बन्ध द्रव्यकरि अपूर्व कृष्टि निपजाइए है तहाँ बन्धद्रव्यतै बधातर कृष्टिसम्बन्धी समान खण्ड द्रव्यतै एक खण्ड अर बधातर कृष्टिसम्बन्धी विशेष द्रव्यतै भई सर्व कृष्टिनिका प्रमाणकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष ग्रहिकरि दीजिए है। सो यहु नीचली कृष्टिविषै दीया बध द्रव्यतै अनन्तगुणा है। ताके ऊपरि पूर्व कृष्टिविषै तीन प्रकार घात द्रव्य दोय प्रकार बन्ध द्रव्य दीजिए है। सो इहा दीया बन्ध द्रव्य अपूर्व अतर कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै अनतगुणा घाटि है। ताके ऊपरि बन्धरूप पूर्व कृष्टि वा बन्धकरि निपजी अपूर्व कृष्टि वा बन्ध रहित पूर्व कृष्टिनिविषै द्रव्य देनेका विधान पूर्वोक्त प्रकार ही जानना। ऐसै प्रथम समयविषै सूक्ष्म कृष्टिसम्बन्धी प्ररूपण समाप्त भया ॥५७०॥

विशेष—प्रथम समयमे सूक्ष्मसाम्पराय कृष्टियोको करनेवाला जीव उक्त कृष्टियोमे अपकर्षित द्रव्यका किस प्रकार बटवारा करता है, प्रकृत गाथा मे इसका निर्देश करते हुए बतलाया गया है कि जघन्य सूक्ष्म कृष्टिमे सबसे अधिक प्रदेशपुजको देता है, दूसरी कृष्टिमे अनन्तवे भागप्रमाण विशेष हीन द्रव्य देता है। इसी प्रकार अन्तिम सूक्ष्म कृष्टिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर विशेष हीन विशेष हीन द्रव्य देता है। आगे जघन्य बादर कृष्टिमे अन्तिम सूक्ष्म कृष्टिकी अपेक्षा असख्यातगुणा हीन द्रव्य देता है। आगे सर्वत्र उत्तरोत्तर अनन्तवाँ भागप्रमाण विशेष हीन विशेष हीन द्रव्य देता है। तात्पर्य यह है कि अपकर्षित द्रव्यमे से बहुभाग प्रमाण द्रव्य सूक्ष्म कृष्टियोमे देता है और एक भागप्रमाण द्रव्य बादर कृष्टियोमे देता है। किस विधिसे देता है इसका निर्देश पूर्वमे किया ही है।

विदियादिसु समयेसु अपुव्वाओ पुव्वकिट्टिहेट्ठाओ ।
पुव्वाणमंतरेसु वि अंतरजणिदा असंखगुणा[1] ॥५७१॥

द्वितीयादिषु समयेषु अपूर्वा पूर्वकृष्टयधस्तना ।
पूर्वासामंतरेष्वपि अंतरजनिता असंख्यगुणा ॥५७१॥

स० च०—द्वितीयादि समयनिविषै अपूर्व नवीन सूक्ष्म कृष्टि करिए है। ते पूर्व समयविषै कीनी जे सूक्ष्म कृष्टि तिनके नीचै करिए है अर तिनके वीचि करिए है। नीचै करिए तिनकौ अधस्तन कृष्टि कहिए। वीचि करिए तिनकौ अन्तर कृष्टि कहिए। तहा अधस्तन कृष्टिनिका प्रमाण स्तोक है। तिनतै अन्तर कृष्टिनिका प्रमाण असख्यातगुणा है ॥५७१॥

दव्वगपढमे सेसे देदि अपुव्वेसणंतभागूणं ।
पुव्वापुव्वपवेसे असंखभागूणमहियं च[2] ॥५७२॥

द्रव्यगप्रथमे शेषे ददाति अपूर्वेष्वनंतभागोनम् ।
पूर्वापूर्वप्रवेशे असंख्यभागोनमधिकं च ॥५७२॥

स० च०—द्वितीयादि समयनिविषै प्रथम समयवत् द्रव्य दीजिए है। विशेष इतना—सूक्ष्म कृष्टिसम्बन्धी द्रव्यकौ अधस्तन अपूर्व कृष्टिनिविषै अनन्तवाँ भाग घटता क्रम लीए बहुरि पूर्व कृष्टिका प्रवेशविषै असख्यातवा भागमात्र घटता अर अपूर्व कृष्टिका प्रवेश होतै असख्यातवा भागमात्र अधिक द्रव्य दीजिए है। सोई विशेषकरि कहिए है—

द्वितीयादि समयनिविषै घात द्रव्य अर सक्रमण द्रव्यका विभाग तौ पूर्ववत् करना। बहुरि सूक्ष्म कृष्टिके अर्थि अपकर्षण कीया द्रव्य समय समय प्रति असख्यातगुणा है। ताका विभागविषै विशेष है सो कहिए है—

तिस अपकर्षण कीया द्रव्यतै पूर्व समयविषैं कीनी कृष्टिसम्बन्धी एक विशेष आदि, एक विशेष उत्तर, पूर्व समयविषै कीनी कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि तहा सकलन धनमात्र द्रव्य ग्रहि जुदा स्थापना। याका नाम अधस्तन शीर्षविशेष है। बहुरि पूर्व समयविषै कीनी कृष्टिनिविषै

---

१ सुहुमसांपराइयकिट्टीकारगो विदियसमये अपुव्वाओ सुहुमसांपराइयकिट्टीओ करेदि असंखेज्जगुणहीणाओ। ताओ दोसु ट्ठाणेसु करेदि। त जहा—पढम समए कदाण हेट्ठा च अंतरे च। हेट्ठा थोवाओ। अंतरेसु असंखेज्जगुणाओ। क० चु० ८६५।

२ विदियसमये दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स सेढिपरूवणा। जा विदियसमए जहण्णिया सुहुमसांपराइयकिट्टी तिस्से पदेसग्ग दिज्जदि बहुअं। विदियाए किट्टीए अणंतभागहीणं। एवं गंतूण पढमसमए जा जहण्णिया सुहुमसांपराइयकिट्टी तस्स असंखेज्जदिभागहीणं। तत्तो अणंतभागहीणं जाव अपुव्वं णिव्वत्तिज्जमाणगं ण पावदि। अपुव्वाए णिव्वत्तिज्जमाणियाए किट्टीए असंखेज्जदिभागुत्तरं। पुव्वणिव्वत्तिदं पडिवज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स असंखेज्जदिभागहीणं। पर पर पडिवज्जमाणगस्स अणंतभागहीणं। जो विदियसमए दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स विधी सो चेव विधी सेसेसु वि समएसु जाव चरिमसमयबादरसांपराइओ त्ति। क० चु०, पृ० ८६६।

लीएं द्रव्य दीजिए है। भावार्थ—द्वितीयादि बादर कृष्टिनिविषै एकादि एक एक बधता क्रम लीएं अधस्तन शीर्षके विशेष अर एकादि एक अधिककरि हीन सर्व बादर कृष्टिप्रमाणमात्र उभयद्रव्यके विशेष अर एक एक मध्यम खण्ड तहा दीजिए है। सो एक उभय द्रव्यका विशेषविषै एक अधस्तन शीर्ष विशेष घटाइए है। इतना इतना क्रमतै घटता द्रव्य दीजिए है सो सक्रमण द्रव्यकरि निपजी अपूर्व कृष्टि पर्यन्त यहु अनुक्रम जानना। बहुरि जहा सक्रमण द्रव्यतै नवीन अपूर्व कृष्टि निपजी तिसविषै सक्रमणातर कृष्टिसम्बन्धी समान खण्ड उभय द्रव्य विशेष द्रव्यतै भई कृष्टिनिका प्रमाण करि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष ग्रहि दीजिए है। सो यहु अपनी नीचली पूर्व कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा है। बहुरि ताके ऊपरि पूर्व कृष्टिविषै भईं कृष्टिनिका प्रमाणमात्र अधस्तन शीर्षके विशेष एक मध्यम खण्ड, भई कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र उभय द्रव्यके विशेष दीजिए है। सो यहु यातै नीचली अपूर्व कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा घाटि है। बहुरि ताके ऊपरि भी पूर्वोक्त प्रकार द्रव्य दीजिए है। बहुरि द्वितीय सग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टिविषै भईं कृष्टिनिका प्रमाणमात्र अधस्तन शीर्षके विशेष, एक मध्यम खण्ड, भईं कृष्टिनिका प्रमाणकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र उभय द्रव्यके विशेष दीजिए है। ताके ऊपरि एक-एक अधस्तन शीर्षविशेष बधता अर एक उभय द्रव्यका विशेष घटता क्रमकरि द्रव्य दीजिए है। विशेष इतना—

बधकृष्टिकी जघन्य कृष्टितै लगाय उभय द्रव्यका विशेषविषै एक विशेषका अनतवा भागमात्र घटता क्रमकरि द्रव्य दीजिए है। अर तहा बध द्रव्यतै एक एक मध्यम खड अर भई बन्ध कृष्टिनिकरि हीन सर्वकृष्टिनिका प्रमाणमात्र बन्ध विशेषकौ ग्रहि दीजिए है। ऐसै क्रम होतै जहा बन्ध द्रव्यकरि अपूर्व कृष्टि निपजाइए है तहाँ बन्धद्रव्यतै बधातर कृष्टिसम्बन्धी समान खण्ड द्रव्यतै एक खण्ड अर बधातर कृष्टिसम्बन्धी विशेष द्रव्यतै भई सर्व कृष्टिनिका प्रमाणकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष ग्रहिकरि दीजिए है। सो यहु नीचली कृष्टिविषै दीया बध द्रव्यतै अनन्तगुणा है। ताके ऊपरि पूर्व कृष्टिविषै तीन प्रकार घात द्रव्य दोय प्रकार बन्ध द्रव्य दीजिए है। सो इहा दीया बन्ध द्रव्य अपूर्व अतर कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै अनतगुणा घाटि है। ताके ऊपरि बन्धरूप पूर्व कृष्टि वा बन्धकरि निपजी अपूर्व कृष्टि वा बन्ध रहित पूर्व कृष्टिनिविषै द्रव्य देनेका विधान पूर्वोक्त प्रकार ही जानना। ऐसै प्रथम समयविषै सूक्ष्म कृष्टिसम्बन्धी प्ररूपण समाप्त भया ॥५७०॥

विशेष—प्रथम समयमे सूक्ष्मसाम्पराय कृष्टियोको करनेवाला जीव उक्त कृष्टियोमे अपकर्षित द्रव्यका किस प्रकार बटवारा करता है, प्रकृत गाथा मे इसका निर्देश करते हुए बतलाया गया है कि जघन्य सूक्ष्म कृष्टिमे सबसे अधिक प्रदेशपुजको देता है, दूसरी कृष्टिमे अनन्तवे भागप्रमाण विशेष हीन द्रव्य देता है। इसी प्रकार अन्तिम सूक्ष्म कृष्टिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर विशेष हीन विशेष हीन द्रव्य देता है। आगे जघन्य बादर कृष्टिमे अन्तिम सूक्ष्म कृष्टिकी अपेक्षा असख्यातगुणा हीन द्रव्य देता है। आगे सर्वत्र उत्तरोत्तर अनन्तवाँ भागप्रमाण विशेष हीन विशेष हीन द्रव्य देता है। तात्पर्य यह है कि अपकर्षित द्रव्यमे से बहुभाग प्रमाण द्रव्य सूक्ष्म कृष्टियोमे देता है और एक भागप्रमाण द्रव्य बादर कृष्टियोमे देता है। किस विधिसे देता है इसका निर्देश पूर्वमे किया ही है।

विदियादिसु समयेसु अपुव्वाओ पुव्वकिट्टिहेट्ठाओ ।
पुव्वाणमंतरेसु वि अंतरजणिदा असंखगुणा[1] ॥५७१॥

द्वितीयादिषु समयेषु अपूर्वा पूर्वकृष्ट्यधस्तनाः ।
पूर्वासामंतरेष्वपि अंतरजनिता असंख्यगुणा ॥५७१॥

स० चं०—द्वितीयादि समयनिविषै अपूर्व नवीन सूक्ष्म कृष्टि करिए है। ते पूर्व समयविषै कीनी जे सूक्ष्म कृष्टि तिनके नीचै करिए है अर तिनके बीचि करिए है। नीचै करिए तिनकौं अधस्तन कृष्टि कहिए। बीचि करिए तिनकौं अन्तर कृष्टि कहिए। तहां अधस्तन कृष्टिनिका प्रमाण स्तोक है। तिनतै अन्तर कृष्टिनिका प्रमाण असंख्यातगुणा है ॥५७१॥

दव्वगपढमे सेसे देदि अपुव्वेसणंतभागूणं ।
पुव्वापुव्वपवेसे असंखभागूणमहियं च[2] ॥५७२॥

द्रव्यकप्रथमे शेषे ददाति अपूर्वेष्वनंतभागोनम् ।
पूर्वापूर्वप्रवेशे असंख्यभागोनमधिकं च ॥५७२॥

स० चं०—द्वितीयादि समयनिविषै प्रथम समयवत् द्रव्य दीजिए है। विशेष इतना—सूक्ष्म कृष्टिसम्बन्धी द्रव्यकौ अधस्तन अपूर्व कृष्टिनिविषै अनन्तवाँ भाग घटता क्रम लीए बहुरि पूर्व कृष्टिका प्रवेशविषै असंख्यातवा भागमात्र घटता अर अपूर्व कृष्टिका प्रवेश होतै असंख्यातवा भागमात्र अधिक द्रव्य दीजिए है। सोई विशेषकरि कहिए है—

द्वितीयादि समयनिविषै घात द्रव्य अर संक्रमण द्रव्यका विभाग तौ पूर्ववत् करना। बहुरि सूक्ष्म कृष्टिके अर्थि अपकर्षण कीया द्रव्य समय समय प्रति असंख्यातगुणा है। ताका विभागविषै विशेष है सो कहिए है—

तिस अपकर्षण कीया द्रव्यतै पूर्व समयविषैं कीनी कृष्टिसम्बन्धी एक विशेष आदि, एक विशेष उत्तर, पूर्व समयविषैं कीनी कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि तहां सकलन धनमात्र द्रव्य ग्रहि जुदा स्थापना। याका नाम अधस्तन शीर्षविशेष है। बहुरि पूर्व समयविषै कीनी कृष्टिनिविषै

१ सुहुमसांपराइयकिट्टीकारगो विदियसमये अपुव्वाओ सुहुमसांपराइयकिट्टीओ करेदि असंखेज्ज-गुणहीणाओ। ताओ दोसु ट्ठाणेसु करेदि। तं जहा—पढमसमए कदाणं हेट्ठा च अंतरे च। हेट्ठा थोवाओ। अंतरेसु असंखेज्जगुणाओ। क० चु० ८६५।

२ विदियसमये दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स सेढिपरूवणा। जा विदियसमए जहण्णिया सुहुमसांपराइय-किट्टी तिस्से पदेसग्गं दिज्जदि बहुअं। विदियाए किट्टीए अणंतभागहीणं। एवं गंतूण पढमसमए जा जहण्णिया सुहुमसांपराइयकिट्टी तस्स असंखेज्जदिभागहीणं। तत्तो अणंतभागहीणं जाव अपुव्वं णिव्वत्तिज्जमाणगं ण पावदि। अपुव्वाए णिव्वत्तिज्जमाणियाए किट्टीए असंखेज्जदिभागुत्तरं। पुव्वणिव्वत्तिदं पडिवज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स असंखेज्जदिभागहीणं। परं परं पडिवज्जमाणगस्स अणंतभागहीणं। जो विदियसमए दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स विधी सो चेव विधी सेसेसु वि समएसु जाव चरिमसमयबादरसांपराइओ त्ति। क० चु०, पृ० ८६६।

जो जघन्य कृष्टि ताका द्रव्यमात्र एक खण्ड ताकौ इस वर्तमान समयविषै कीनी अधस्तन कृष्टिनिका प्रमाणकरि गुणैं जो द्रव्य होइ ताकौं ग्रहि जुदा स्थापना। याका नाम अधस्तन शीर्ष अपूर्व कृष्टिसम्बन्धी समान खड द्रव्य है। वहुरि तिस ही जघन्य पूर्व कृष्टिका द्रव्यमात्र एक खडकौ वर्तमान समयविषै कीनी अतर अपूर्व कृष्टिनिका प्रमाणकरि गुणै जो द्रव्य हो ताकौ ग्रहि जुदा स्थापना। याका नाम अतर अपूर्व कृष्टिसम्बन्धी समान खड द्रव्य है। बहुरि पूर्व समय अर इस विवक्षित समयसम्बन्धी सर्व सूक्ष्म कृष्टिके द्रव्यकौ पूर्व अपूर्व सर्व सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रमाणमात्र जो गच्छ ताकौ एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणकरि हीन दो गुणहानिकरि गुणि ताका भाग दीए एक उभय द्रव्यसम्बन्धी विशेष होइ। ताकौ सर्व पूर्व अपूर्व सूक्ष्म कृष्टिप्रमाण गच्छका एक-बार सकलन धनमात्र प्रमाणकरि गुणे जो द्रव्य होइ ताकौ सर्व पूर्व अपूर्व सूक्ष्म कृष्टिप्रमाण गच्छका एक बार सकलन धनमात्र प्रमाणकरिगुणैं जो द्रव्य होई ताकौ ग्रहि जुदा स्थापना। याका नाम उभय द्रव्यविशेष द्रव्य है। वहुरि ऐसैं कह्या च्यारि प्रकार द्रव्यकौ इस विवक्षित समयविषै अपकर्षण कीया द्रव्यमैं घटाए अवशेष जो द्रव्य रह्या ताकौ सर्व पूर्व अपूर्व सूक्ष्म कृष्टिनिके प्रमाणका भाग दीए एक खड होइ ताकौ तिस भागहारमात्र प्रमाणकरि गुणैं जो द्रव्य होइ ताकौ जुदा स्थापना। याका नाम मध्यम धन खण्ड द्रव्य है। ऐसैं सूक्ष्म कृष्टिके अर्थि अपकर्षण कीया द्रव्यके पाच प्रकार विभाग कहे। तिनके सूक्ष्म कृष्टिनिविषै देनेका विधान अर पूर्वोक्त प्रकार बादर कृष्टिसम्बन्धी च्यारि प्रकार सक्रमण द्रव्यका तृतीय सग्रह कृष्टिविषै देनेका विधान अर च्यारि प्रकार बध द्रव्य तीन प्रकार घात द्रव्यका अनतवा भागका द्वितीय सग्रह कृष्टिविषै देनेका विधान इस विवक्षित समय विषै निरूपण कीजिए है—

विवक्षित समयविषै कीनी अधस्तन अपूर्व कृष्टि तिनकी जघन्य कृष्टिविषै बहुत द्रव्य दीजिए है। तहा इस प्रकार सूक्ष्म कृष्टिसम्बन्धी द्रव्यनिविषै अधस्तन कृष्टिसम्बन्धी समान खण्ड द्रव्यतै एक खण्ड, मध्यम द्रव्यतै एक 'खण्ड', उभय द्रव्यविशेष द्रव्यतै, सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिमात्र विशेष ग्रहि दीजिए है। बहुरि द्वितीय कृष्टिविषै अनतवा भाग घटता द्रव्य दीजिए है। तहा एक अधस्तन कृष्टिसम्बन्धी समान खण्ड, एक मध्यम खण्ड, एक घाटि सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिमात्र उभय द्रव्यविशेष ग्रहि दीजिए है। ऐसैं ही तृतीयादि अन्तपर्यन्त अधस्तन अपूर्व कृष्टिनिविषै एक एक उभय द्रव्यका विशेषमात्र घटता क्रमकरि दीजिए है।

बहुरि तिस अत कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै पूर्व समयसम्बन्धी सूक्ष्म कृष्टिनिकी जो जघन्य कृष्टि तिसविषै असख्यातवा भागमात्र घटता द्रव्य दीजिए है। तहा मध्यम खडतै एक खण्ड, उभय द्रव्यविशेष द्रव्यतै भई कृष्टिनिकरि हीन सर्व सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष द्रव्य ग्रहि दीजिए है। बहुरि ताके ऊपरि द्वितीय पूव कृष्टिविषै अनतवा भाग घटता द्रव्य दीजिए है। तहा अधस्तन शीर्षविशेष द्रव्यतै एक विशेष, मध्यम खडतै एक खड, उभय द्रव्यविशेषतै भई कृष्टिनिकरि सर्व सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष ग्रहि दीजिए है। ऐसैं ही तृतीयादि पूर्व कृष्टिनिविषै एक एक अधस्तन शीर्षविशेष बधता अर एक एक उभय द्रव्यविशेष घटता अर एक एक मध्यम खण्ड समानरूप द्रव्य दीजिए है। यावत् अपूर्व अन्तर कृष्टि प्राप्त न होइ तावत् ऐसा क्रम जानना। बहुरि ऐसैं पल्यका असख्यातवा भागमात्र कृष्टि भए तहा अन्त कृष्टिविषैं दीया द्रव्यतैं ताके ऊपरि नवीन निपजाई जो अपूर्व अन्तर कृष्टि तिसविषै असख्यातवाँ भागमात्र कृष्टि भए तहा अन्तविषैं दीया द्रव्यतै ताके ऊपरि नवीन निपजाई जो अपूर्व अन्तर कृष्टि तिसविषै

असख्यातवा भागमात्र अधिक द्रव्य दीजिए है। तहा अन्तर कृष्टिसम्बन्धी समान खण्ड द्रव्यतै एक खण्ड अर मध्यम खडतैं एक खड अर उभय द्रव्यविशेष द्रव्यतै भई कृष्टिनिकरि हीन सर्व सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष ग्रहि दीजिए है। बहुरि तातै ताके ऊपरि पूर्व कृष्टि तिसविषै असख्यातवा भागमात्र घटता द्रव्य दीजिए है। तहा अधस्तन शीर्षविशेषतै एक घाटि भई पूर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष अर मध्यम खण्डतै एक खण्ड अर उभय द्रव्य विशेषतै भई सर्व कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष ग्रहि दीजिए है। बहुरि ताके ऊपरि एक एक अधस्तन शीर्षविशेष बधता, एक एक उभय द्रव्यविशेष घटता, एक एक मध्यम खण्ड समान-रूप दीजिए है यावत् अपूर्व अन्तर कृष्टि न प्राप्त होइ। बहुरि ताके ऊपरि अपूर्व अन्तर कृष्टि-विषै एक अन्तर कृष्टिसम्बन्धी समान खण्ड, एक मध्यम खण्ड, भई कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टि प्रमाणमात्र उभय द्रव्यविशेष दीजिए है। सो यहु दीया द्रव्य अपनी नीचली कृष्टिनिविषै दीया द्रव्यतै असख्यातवा भागमात्र अधिक है। बहुरि ताके ऊपरि पूर्व कृष्टिविषै एक घाटि भई पूर्व कृष्टि प्रमाणमात्र अधस्तन शीर्षविशेष, एक मध्यम खण्ड, भई सर्व कृष्टिनिकरि हीन सर्व कृष्टि प्रमाणमात्र उभय द्रव्य विशेष द्रव्य दीजिए है सो यहु तिस अपूर्व अन्तर कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै असख्यातवा भागमात्र घटता है। ताके ऊपरि पूर्व अपूर्व कृष्टिनिविषै ऐसे ही अनुक्रमकरि द्रव्यका देना जानना। यावत् प्रथम समयकृत सूक्ष्म कृष्टिनिकी अत कृष्टि होइ। बहुरि ताके ऊपरि लोभकी तृतीय बादर सग्रहकृष्टिकी जघन्य कृष्टि तिसविषै अन्त सूक्ष्म कृष्टिविषै दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा घटता दीजिए है। तहा च्यारि प्रकार सक्रमण द्रव्यविषै मध्यम खण्डतैं एक खण्ड, उभय द्रव्य विशेषतै सर्व बादर कृष्टिमात्र विशेष ग्रहि दीजिए है। बहुरि ताके ऊपरि तृतीय सग्रह कृष्टिविषै च्यारि प्रकार सक्रमण द्रव्य देनेका अर द्वितीय सग्रहकृष्टिविषै च्यारि प्रकार बन्ध द्रव्य, तीन प्रकार घात द्रव्य देनेका विधान द्वितीय सग्रहकी उत्कृष्ट कृष्टिपर्यन्त जैसै प्रथम समय विषै द्रव्य देनेका विधान कह्या तैसै ही जानना। या प्रकार द्वितीयादि समयनिविषैं द्रव्य देनेका विधान जानना ॥५७२॥

विशेष—दूसरे समयमे जिन सूक्ष्म कृष्टियोको करता है उनमेसे जघन्य सूक्ष्म कृष्टिमे बहुत प्रदेशपुजका निक्षेप करता है। उससे दूसरी सूक्ष्म कृष्टिमे अनन्तवे भाग हीन प्रदेशपुजका निक्षेप करता है। इस प्रकार उत्तरोत्तर निक्षेप करते हुए अपकर्षण भागहार प्रमाण स्थान ऊपर जाकर उस स्थानसम्बन्धी कृष्टि अन्तरमे प्राप्त होनेवाली अपूर्व कृष्टिको नही प्राप्त करके तदनन्तर अधस्तन पूर्व कृष्टिको प्राप्त करता है। यहाँ जो कृष्टि अन्तररूप सन्धिका निर्देश किया है उसमे रची जानेवाली जो अपूर्व कृष्टि हैं उसमे असख्यातवे भाग अधिक प्रदेशपुजका निक्षेप करता है। पुन इसके आगे पूर्व कृष्टिमे असख्यातवे भागहीन प्रदेशपुजका निक्षेप करता है। इस प्रकार आगे भी जहा जहा उक्त विधिसे पूर्व और अपूर्व कृष्टियोका सन्धिस्थान प्राप्त हो वहा-वहा उक्तरूपसे ही प्ररूपणा करनी चाहिये। इस प्रकार पूर्व कृष्टिसे अपूर्व कृष्टिको और अपूर्व कृष्टिसे पूर्व कृष्टिको प्राप्त करनेवालेके जो सन्धि स्थान हैं उनमे तो उक्त विधिसे ही प्ररूपणा करनी चाहिये। किन्तु इनको छोडकर सभी स्थानोमे पूर्व कृष्टिसे पूर्व कृष्टिको प्राप्त होनेपर अनन्त भागहीन ही प्रदेशपुजका निक्षेप करना चाहिये। इस प्रकार इस विधिसे अन्तिम सूक्ष्म साम्पराय कृष्टिके प्राप्त होने तक जानना चाहिये। इस लिये अन्तिम सूक्ष्मसाम्पराय कृष्टिसे जघन्य बादर साम्पराय कृष्टिमे दिया जानेवाला प्रदेशपुज असख्यातगुणा हीन होता है। इस

प्रकार दूसरे समयमे दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी जो विधि कही वही विधि शेष समयोमे भी जाननी चाहिये।

पढमादिसु दिस्सकमं सुहुमेसु अणंतभागहीणकमं।
बादरकिट्टिपदेसो असंखगुणिदं तदो हीणं[1] ॥५७३॥

प्रथमादिसु दृ म सूक्ष्मेष्वनंतभागहीनक्रमं।
बादरकृष्टिप्रदेशः असंख्यगुणितस्ततो हीनं ॥५७३॥

स० च०—अब दीया द्रव्य वा पूर्व द्रव्य मिलैं कृष्टिनिविषै देनेमे आया ऐसा दृश्यमान द्रव्य ताका क्रम कहिए है—

प्रथमादि समयनिविषै जघन्य सूक्ष्म कृष्टिविषै दृश्यमान द्रव्य बहुत है। ताके ऊपरि द्वितीयादि अन्तपर्यन्त सूक्ष्म कृष्टिनिविषै अनन्तगुणा घटता क्रम लीए दृश्यमान द्रव्य है। एक-एक विशेष मात्र घटता है। बहुरि ताके ऊपरि तृतीय सग्रहकी बादर जघन्य कृष्टि ताका प्रवेश होतै तिसविषै दृश्यमान द्रव्य अंत सूक्ष्म कृष्टिका दृश्यमान द्रव्यतै असंख्यातगुणा है। ताके ऊपरि द्वितीयादि द्वितीय सग्रहकी अंत बादर कृष्टिपर्यन्त दृश्यमान द्रव्य अनतगुणा घटता क्रम लीए एक एक विशेष मात्र घटता है ऐसा जानना ॥ ५७३ ॥

विशेष—अब सूक्ष्म कृष्टियो को करनेवाले जीवके दृश्यमान प्रदेशपुंज किस प्रकार होता है यह बतलाते हैं—जघन्य सूक्ष्म कृष्टिमे द्रव्य बहुत होता है। उससे आगे अन्तिम सूक्ष्म कृष्टिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर अनन्तवाँ भागहीन द्रव्य होता है। उस अन्तिम सूक्ष्म कृष्टिसे बादर कृष्टिमे प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा होता है, क्योंकि बादर कृष्टियोमेसे असंख्यातवें भाग प्रमाण प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके सूक्ष्म कृष्टियोको करनेवाले जीवके सूक्ष्म कृष्टियोमे दिखनेवाले प्रदेशपुंजसे बादर कृष्टियोमे दिखनेवाले प्रदेशपुंजके असंख्यातगुणे होनेमे कोई प्रत्यवाय नही दिखाई देता। अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा विचार करने पर बादर कृष्टियोमे उत्तरोत्तर अनन्तवाँ भागहीन प्रदेशपुंज होता है ऐसा जानना चाहिये। सूक्ष्म कृष्टियोको करनेवालेकी अपेक्षा सभी समयोमे दृश्यमान प्रदेशपुंजोकी यह व्यवस्था है ऐसा जानना चाहिये।

लोहस्स य तदियादो सुहुमगदं विदियदो दु तदियगदं।
विदियादो सुहुमगदं दव्वं संखेज्जगुणिदकमं[2] ॥५७४॥

---

१ सुहुमसांपराइयकिट्टीकारगस्स किट्टीसु दिस्समाणपदेसग्गस्ससेढि परूवणं। तं जहा—जहण्णियाए सुहुमसांपराइयकिट्टीए पदेसग्गं बहुगं। तत्तो अणंतभागहीणं जाव चरिमसुहुमसांपराइयकिट्टी त्ति। तदो जहण्णियाए बादरसांपराइयकिट्टीए पदेसग्गमसंखेज्जगुणं। णवरि सेणीयादो जदि बादरसांपराइय-किट्टीओ धरेदि तस्स पदेसग्गं विसेसहीणं होज्ज। क० चु०, पृ० ८६६–८६७।

२ सुहुमसांपराइयकिट्टीसु लोभस्स चरिमादो बादरसांपराइयकिट्टीदो सुहुमसांपराइयकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं थोवं। लोभस्स विदियकिट्टीदो चरिमबादरसांपराइयकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं संखेज्जगुणं। लोभस्स विदियकिट्टीदो सुहुमसांपराइयकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं संखेज्जगुणं। क० चु० पृ० ८६७।

लोभस्य च तृतीयत सूक्ष्मगत द्वितीयस्तु तृतीयगत ।
द्वितीयत सूक्ष्मगत द्रव्य सख्येयगुणितक्रम ॥५७४॥

स० च०—लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टितै जो द्रव्य सूक्ष्म कृष्टिरूप परिनम्या सो स्तोक है। तातैं लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टितै जो द्रव्य लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिरूप परिनम्या सो सख्यातगुणा है। तातै लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टितै जो द्रव्य सूक्ष्म कृष्टिरूप परिनम्या सो सख्यातगुणा है, जातैं लोभकी तृतीय सग्रहकी कृष्टिनिका प्रमाणतै सूक्ष्म कृष्टिका प्रमाण सख्यातगुणा है ॥५७४॥

किट्टीवेदगपढमे कोहस्स य विदियदो दु तदियादो ।
माणस्स य पढमगदो माणतियादो दु मायपढमगदो ॥५७५॥
मायतियादो लोभस्सादिगदो लोभपढमदो विदिय ।
तदिय च गदा दव्वा दसपदमहियकमा होंति ॥५७६॥

कृष्टिवेदकप्रथमे क्रोधस्य च द्वितीयतस्तु तृतीयत. ।
मानस्य च प्रथमगतं मानत्रयात् तु मानप्रथमगत. ॥५७५॥
मायात्रिकात् लोभस्यादिगत. लोभप्रथमत द्वितीय ।
तृतीय च गतानि द्रव्याणि दशपदमधिकक्रमाणि भवति ॥५७६॥

स० च०—इहा सूक्ष्म कृष्टिनिविषै सक्रमण भया द्रव्यके प्रमाण ल्यावनेका साधक ऐसा बादर कृष्टिविषैं सक्रमण भया प्रदेशनिका अल्पबहुत्व कहिए है—

बादर कृष्टिवेदक कालका प्रथम समयविषैं क्रोधकी द्वितीय सग्रह कृष्टितैं मानकी प्रथम सग्रह कृष्टिविषैं सक्रमण भया द्रव्य स्तोक है। तातैं क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टितै मानकी प्रथम सग्रह कृष्टिविषै सक्रमण भया द्रव्य विशेष अधिक है। जातै स्तोक अनुभागयुक्त तृतीय सग्रह विषैं कृष्टिनिका प्रमाण है सो वह अनुभागयुक्त द्वितीय सग्रहकी कृष्टिनिका प्रमाणतै विशेष अधिक है, तातैं सक्रमण द्रव्य भी विशेष अधिक जानना। इहा पात्रके अनुसारि अधिकपना जानना। पात्रके अनुसारि कहा ? द्वितीय सग्रहको कृष्टिनिका प्रमाणतै तृतीय सग्रहकी कृष्टिनिका प्रमाण जैसैं अधिक कह्या तैसैं ही सक्रमण द्रव्य भी अधिक कहना। सो इहा पल्यका असख्यातवाँ भागका भाग दीए एक भाग मात्र अधिक जानना। बहुरि तातै मानकी प्रथम सग्रह कृष्टितै मायाकी प्रथम सग्रह कृष्टिविषै सक्रमण भया द्रव्य विशेष अधिक है। इहाँ भी पात्रानुसारि क्रोधकी तृतीय सग्रहकी कृष्टिनितैं मानकी प्रथम सग्रहकी कृष्टि जैसै अधिक है तैसै ही आवलीका असख्यातवा भागका भाग दीए एक भागमात्र अधिक जानना। बहुरि तातैं मानकी द्वितीय सग्रह कृष्टितै मायाकी प्रथम सग्रह कृष्टिविषै सक्रमण भया द्रव्य विशेष अधिक है। तातै मानकी तृतीय सग्रह-कृष्टितै मायाकी प्रथम सग्रहकृष्टिविषै सक्रमण भया द्रव्य विशेष अधिक है इहा दोऊ जायगा पात्रानुसारि अधिकका प्रमाण पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए एक भागमात्र है। बहुरि

१ पढमसमयकिट्टीवेदगस्स कोहस्स विदियकिट्टीदो माणस्स पढमसगहकिट्टीए सकमदि पदेसग्ग थोव। कोहस्स तदियकिट्टीदो माणस्स पढमाए सग्रहकिट्टीए सकमदि पदेसग्ग विसेसाहिय।

—क० चु० पृ० ८६७-८६८।

तातैं मायाकी प्रथम सग्रह् कृष्टितैं लोभकी प्रथम सग्रहकृष्टिविपैं सक्रमण भया प्रदेश विशेष अधिक है। इहा पात्रानुसारि विशेषका प्रमाण आवलीका असख्यातवा भागका भाग दीए एक भागमात्र है। बहुरि तातैं मायाकी द्वितीय सग्रहतैं लोभकी प्रथम सग्रहकृष्टिविषै सक्रमण भया प्रदेश विशेष अधिक है। तातै मायाकी तृतीय सग्रहतै लोभकी प्रथम सग्रह विषै सक्रमण भया प्रदेश विशेष अधिक है। इहा दोऊ जायगा विशेषका प्रमाण पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए एक भागमात्र है। तातै लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टितै लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टिविषै सक्रमण भया प्रदेश समूह विशेष अधिक है। इहा पात्रानुसारि विशेषका प्रमाण आवलीका असख्यातवा भागका भाग दीए एक भागमात्र है। इहा प्रश्न—

जो अन्य कषायकी सग्रहकृष्टिका द्रव्य अन्य कषायकी सग्रह कृष्टिविषैं सक्रमण होना कह्या तहा परस्थान सक्रमणविषैं अपने अपने द्रव्यकौ अध प्रवृत्त भागहारका भाग दीए एक भागमात्र द्रव्य सक्रमण हो है, तातै अन्य कषायविपै सक्रमण द्रव्यतै विशेष अधिकका क्रम कह्या सो तौ बनै है। बहुरि लोभकी प्रथम सग्रहतैं ताहीकी द्वितीय सग्रहविपै सक्रमण भया सो इहा स्वस्थान सक्रमण है। सो इहा अपने द्रव्यकौ अपकर्ष भागहारका भाग दीए एकभागमात्र द्रव्य सक्रमण हो है। अर अध प्रवृत्त भागहारतै अपकर्षण भागहार असख्यातगुणा घटता है, तातैं पूर्वोक्त सक्रमण द्रव्यतै याका सक्रमण द्रव्य असख्यातगुणा कहौ, विशेष अधिक कैसे कहौ हो ? ताका समाधान—

इहा परिणामके अतिशयतै अध प्रवृत्त भागहार भी अपकर्षण भागहारहीके अनुसारि बतैं है सो ऐसा विशेष इहा ही सभवै है, अन्यत्र सर्वत्र अध प्रवत्त भागहारतैं अपकर्षण भागहार असख्यातगुणा घटता ही जानना। बहुरि तातैं लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टितै लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टिविषैं सक्रमण भया प्रदेश विशेष अधिक है। इहा पात्रानुसारि विशेषका प्रमाण पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए एक भागमात्र है। ऐसैं दश स्थान [1]अधिक क्रम लीए जानने ॥५७५–५७६॥

विशेष—कृष्टिकरण कालके समाप्त होने पर तदनन्तर समयमे जो क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टिका अपकर्षण कर वेदन करता है वह प्रथम समयवर्ती कृष्टिवेदक कहलाता है। उसके क्रोधकी द्वितीय सग्रह कृष्टिसे मानकी प्रथम कृष्टिमे सक्रमित होनेवाला प्रदेशपुज सबसे थोडा है। उससे क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिसे मानकी प्रथम सग्रह कृष्टिमे सक्रमित होनेवाला प्रदेशपुज विशेष अधिक है। क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिमे पल्योपमके असख्यातवे भागका भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त हो उतना विशेषका प्रमाण है। उससे मानकी प्रथम सग्रह कृष्टिसे मायाकी प्रथम कृष्टिमे सक्रमित होनेवाला प्रदेशपुज विशेष अधिक है। यहाँ मानकी प्रथम सग्रह कृष्टिमे आवलिके असख्यातवें भागका भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त हो उतना विशेषका प्रमाण है। इसी प्रकार आगे जानना चाहिये। टीकामे स्पष्टीकरण किया ही है।

कोहस्स य पढमादो माणादी कोधतदियविदियगद।
तत्तो सखेज्जगुणं अहिय सखेज्जसगुणिय[1] ॥ ५७७ ॥

---

१ कोहस्स पढमसगहकिट्टीदो माणस्स पढमसगहकिट्टीए सकमदि पदेसग्ग सखेज्जगुण। कोहस्स

क्रोधस्य च प्रथमात् मानादौ क्रोधतृतीयद्वितीयगतम् ।
तत. सख्येयगुणमधिक सख्येयसगुणितम् ।। ५७७ ।।

स० च० —बहुरि तिस पूर्वोक्त क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टितै मानकी प्रथम सग्रहविषै सक्रमण भया द्रव्य सख्यातगुणा है, जातै लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टिका द्रव्यतै क्रोधकी प्रथम सग्रहका द्रव्य तेरहगुणा है। बहुरि तातैं क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टितैं क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिविषैं संक्रमण भया प्रदेश विशेष अधिक है। इहा विशेषका प्रमाण पात्रानुसारि पल्यका असख्यातवा भागमात्र है। बहुरि तातैं क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टितै क्रोधकी द्वितीय सग्रह कृष्टिविषैं सक्रमण भया प्रदेश समूह सख्यातगुणा हैं[1]। यद्यपि इहा पूर्वोक्ततै पात्र अल्प है, स्तोक कृष्टिनिका प्रमाण है तथापि वेदिये है जो सग्रह कृष्टि ताका द्रव्य है सो ताके अनतरि जो सग्रह कृष्टि वेदनेमे आवै तहा सक्रमण होने योग्य औरनितै सख्यातगुणा कह्या है, तातै इहा वेद्यमान क्रोधकी प्रथम सग्रहका ताके अनतरि वेद्यमान द्वितीय सग्रह विषै सक्रमण भया द्रव्य सख्यातगुणा कह्या है। ऐसैं इस कथनका अवसर उल्लघि आए तो भी इहा कथन कीया, सो सूक्ष्म कृष्टिका प्रमाण ल्यावनेकौ पूर्वैं कथन कीया ता कर्म मिलावनेकौं कह्या है। कैसैं ? लोभकी द्वितीय सग्रह कृष्टितै जो ताकी तृतीय सग्रह कृष्टिविषैं मक्रमण प्रदेश भया तातै सख्यातगुणा प्रदेश सूक्ष्म कृष्टिरूप हो है। ऐसैं यह अनुक्रम कह्या, सो इहा ही यह गुणकारकी प्रवृत्ति नाहो भई है। पूर्वैं वादर कृष्टिविषैं भी सख्यातगुणे द्रव्यतै सक्रमण भया द्रव्य सख्यातगुणा कहा है। ऐसैं क्रोधका द्रव्य तेरहगुणा था, तातैं सक्रमण भया द्रव्य चौदहका गुणकार लीए कह्या था, ऐसैं ही क्रमतै इहा लोभकी द्वितीय कृष्टिका द्रव्य तेईसगुणा है, तातै सक्रमण भया द्रव्य चौईसका गुणकार लीए जानना। इस अनुक्रम जाननेकौ इहा यह कथन कीया है ।। ५७७ ।।

लोभस्स विदियकिट्टिं वेदयमाणस्स जाव पढमठिदी ।
आवलितियमवसेस आगच्छदि विदियदो तदियं[2] ।। ५७८ ।।

लोभस्य द्वितीयकृष्टिं वेद्यमानस्य यावत् प्रथमस्थिति ।
आवलित्रिकमवशेषमागच्छति द्वितीयतस्तृतीयं ।। ५७८ ।।

स० च०—या प्रकार लोभकी द्वितीय सग्रहकृष्टिकौ वेदता जीवकै ताकी प्रथम स्थितिविषै यावत् तीन आवली अवशेष रहैं तावत् द्वितीय सग्रहतै तृतीय सग्रहकौ द्रव्य सक्रमणरूप होइ प्राप्त हो है। सो कहिए है—

लोभकी द्वितीय सग्रहकी प्रथम स्थितिविषै विश्रमणावली सक्रमणावली उच्छिष्टावली ए तीन अवशेष रहैं तावत् लोभकी द्वितीय सग्रहका द्रव्य लोभकी तृतीय सग्रहविषै दीजिए है। जातै

पढमसगहकिट्टीदो कोहस्स चेव विदियसगहकिट्टीए सकमदि पदेसग्ग सखेज्जगुण। एसो पदेससकमो अइक्कतो उक्खेदिदो सुहुमसापराइयकिट्टीसु कीरमाणीसु आसओ त्ति कादूण। क० चु० पृ० ८६८।

१ हिन्दी टीका में 'असख्यातगुणा हैं' यह पाठ मुद्रित है।

२ एदेण कमेण लोभस्स विदियकिट्टि वेदयमाणस्स जा पणमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए आवलिया समयाहिया सेसा त्ति तम्हि समये चरिमसमयवादरसापराइओ। क० चु० पृ० ८६८।

तृतीय सग्रहविषैं सक्रमण भया जो द्रव्य सो तहा विश्रमणावली पर्यन्त तौ तहा ही विश्रामकरि तिष्टै, पीछैं सक्रमणाबलीविषै सूत्मकृष्टिरूप होइ सक्रमण करै, तब उच्छिष्टावलीमात्र प्रथम स्थिति अवशेष रहि जाय, तातै तीन आवली अवशेष रहै तावत् द्वितीय सग्रहका द्रव्य तृतीय सग्रहविषै सक्रमण होना कह्या। बहुरि ताके ऊपरि द्वितीय सग्रहका द्रव्य अपकर्षण सक्रमणकरि सूत्मकृष्टि हीविषै सक्रमण करै है। यावत् दोय आवली अवशेष रहै तावत् ऐसैं जानना। बहुरि तहा आगाल प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति करि बहुरि समय घाटि आवलीमात्र निषेकनिकौ अधोगलनरूप क्रमतै भोगि समय अधिक आवली अवशेष राखै है ॥५७८॥

तत्तो सुहुम गच्छदि समयाहियआवलीयसेसाए।
सव्व तदिय सुहुमे णव-उच्छिट्ठ विहाय विदिय[1] च ॥५७९॥

तत सूक्ष्मं गच्छति समयाधिकावलीशेषायाम्।
सर्वं तृतीय सूक्ष्मे नवकमुच्छिष्ट विहाय द्वितीयं च ॥५७९॥

स० च०—बहुरि तहाँ द्वितीय सग्रहकी प्रथम स्थितिविषै समय अधिक आवली अवशेष रहैं अनिवृत्तिकरणका अन्त समय हो है। तहा लोभकी तृतीय सग्रहकृष्टिका तौ सर्व द्रव्य सूक्ष्म-कृष्टिकौ प्राप्त हो है। बहुरि लोभकी द्वितीय सग्रहका द्रव्यविषैं समय अधिक उच्छिष्टावलीमात्र निषेक अर समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्ध एतौ बादर कृष्टिरूप रहै हैं। अन्य सर्व द्रव्य सूक्ष्मकृष्टिरूप द्रव्यार्थिक नय अपेक्षा तौ इस सममयविषै परिनमै है। बहुरि पर्यायार्थिक नय अपेक्षा अगले समयविषै उच्छिष्टावलीमात्र निषेक अर दोय समय घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्ध विना अन्य सर्व द्वितीय सग्रहका द्रव्य सूक्ष्मकृष्टिरूप परिनमै है ऐसा जानना ॥५७९॥

लोभस्स तिघादीण ताहे अघादीतियाण ठिदिबंधो।
अतो दु मुहुत्तस्स य दिवसस्स य होदि वरिसस्स[2] ॥५८०॥

लोभस्य त्रिघातिना तत्राघातित्रयाणा स्थितिबध।
अंतस्तु मुहुर्तस्य च दिवसस्य च भवति वर्षस्य ॥५८०॥

स० च०—तहाँ अनिवृत्तिकरणका अत समयविषै सज्वलन लोभका जघन्य स्थितिबध अतर्मुहूर्तमात्र है। इहाँ ही मोहबधकी व्युच्छित्ति भई। बहुरि तीन घातियानिका एक दिनतै किछू घाटि अर तीन अघातियानिका एक वर्षतै किंचित् न्यून स्थितिबध हो है ॥५८०॥

---

१ एदेण कमेण लोभस्स विदियकिट्टि वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए आवलिया समयाहिआ सेसा त्ति तम्हि समये चरिमसमयबादरसापराइओ। तम्हि चेव समये लोभस्स चरिमबादरसापराइय-किट्टी सछुब्भमाणा सछुद्धा। लोभस्स विदियकिट्टीए वि दोआवलियबधे समयूणे मोत्तूण उदयावलियपविट्ठ च मोत्तूण सेसाओ विदियट्ठिदीए अतरकिट्टीओ सछुब्भमाणाओ सछुद्धाओ। क० चु० पृ० ८६८-८६९।

२ तम्हि चेव लोभसजलणस्स ठिदिबधो अतोमुहुत्त। तिण्ह घादिकम्माण ठिदिबधो अहोरत्तस्स अतो। णामा-गोद-वेदणीयाण बादरसापराइयस्स जो चरिमो ट्ठिदिबधो सो सखेज्जेहिं वस्ससहस्सेहिं हाइदूण वरसस्स अतो जादो। क० चु० पृ० ६६९।

ताणं पुण ठिदिसतं कमेण अंतोमुहुत्तय होइ ।
वस्साणं संखेज्जसहस्साणि असंखवस्साणि[1] ॥५८१॥

तेषा पुन स्थितिसत्त्व क्रमेणातर्मुहूर्तक भवति ।
वर्षाणा सख्येयसहस्राणि असख्यवर्षाणि ॥५८१॥

स० च०—तहा तिनिका स्थितिसत्त्व क्रमकरि लोभका अतर्मुहूर्त, तीन घातियानिका यथायोग्य सख्यात हजार वर्षमात्र, तीन अघातियानिका यथायोग्य असख्यात वर्षमात्र है ॥५८१॥

से काले सुहुमगुण पडिवज्जदि सुहुमकिट्टिठिदिखड ।
आणायदि तद्दव्व उक्कट्टिय कुणदि गुणसेढिं[2] ॥५८२॥

स्वे काले सूक्ष्मगुणं प्रतिपद्यते सूक्ष्मकृष्टिस्थितिखड ।
आनयति तद्द्रव्य अपकृष्य करोति गुणश्रेणि ॥५८२॥

स० च०—अनिवृत्तिकरणका अत समयके अनतरि सूक्ष्म कृष्टिनिकौ वेदतौ सतौ अपने कालविषै सूक्ष्मसापराय गुणस्थानकौ प्राप्त हो है। इहा ताका प्रथम समयविषै लोभकी सूक्ष्म कृष्टिनि-की जो अतर्मुहूर्तमात्र स्थिति है ताके सख्यातवें भागमात्र स्थितिकाडकआयाम लाछित हो है। बहुरि मोहका कृष्टिकौ प्राप्त भया अनुभाग ताका तौ अनुसमयापवर्तन अर ज्ञानावरणादिकनिका स्थितिकाडकघात अनुभागकाडकघात सो पूर्वोक्तवत् वर्तै है। बहुरि तिस समयविषै द्रव्यनिक्षेपणका विधान कहिए है—

सूक्ष्म कृष्टिसम्बन्धी स्थितिविषै प्राप्त जो मोहका सर्व द्रव्य ताकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहा एक भाग अपकर्षणकरि गुणश्रेणि करै है ॥५८२॥

गुणसेढि अंतरट्ठिदि विदियट्ठिदि इदि हवति पव्वतिया ।
सुहुमगुणादो अहिया अवट्ठिदुदयादिगुणसेढी[3] ॥५८३॥

गुणश्रेणिरतरस्थिति द्वितीयस्थितिरिति भवति पर्वत्रयाणि ।
सूक्ष्मगुणतोऽधिका अवस्थितोदयादिगुणश्रेणी ॥५८३॥

---

१ चरिमसमयबादरसापराइयस्स मोहणीयस्स ट्ठिदिसतकम्ममतोमुहुत्त । तिण्ह घादिकम्माण ठिदि-सतकम्म सखेज्जाणि वस्ससहस्साणि । णामा-गोद-वेदणीयाण ठिदिसतकम्ममसखेज्जाणि वस्साणि ।

क० चु० पृ० ८६९ ।

२ से काले पढमसमयसुहुमसापराइयो जादो । ताधे चेव सुहुमसापराइयकिट्टीण जाओ ठिदीओ तदो ठिदिखडयमागाइद । तदो पदेसमोकड्डिदूण उदये थोव दिण्ण । अतोमुहुत्तद्धमेत्तमसखेज्जगुणाए सेढीए देदि । क० चु० पृ० ८६९ ।

३ गुणसेढिणिक्खेवो सुहुमसापराइयअद्धादो विसेसुत्तरो । क० चु० पृ० ८६९ । एत्थ जइ वि सुहुमसापराइयकिट्टीण अतरापूरणवसेण एक्का चेव जादा, तो वि अणयट्टिचरिमसमयावेक्खाए पढम-विदिय-ट्ठिदिभेद काढूण अतरचरमट्ठिदी विदियट्ठिदी आदिट्ठिदी च घेत्तव्वा । जयध० ता० प्र०, पृ० २२१० ।

स० च०—गुणश्रेणि १ अतर स्थिति २ द्वितीय स्थिति ३ ए तीन पर्व है। अपकर्षण कीया हुआ द्रव्य इन तीनविषै विभागकरि दीजिए है। इहा यावत् अपकर्षण कीया द्रव्यकौ असख्यातगुणा क्रम लीए दीजिए ताका नाम गुणश्रेणि है। बहुरि ताके ऊपरिवर्ती जिनि निषेकनिका पूर्वै अभाव कीया था तिनका प्रमाणरूप अन्तरस्थिति है। ताके उपरिवर्ती अवशेष सर्वस्थिति ताका नाम द्वितीय स्थिति है। तहा सूक्ष्म सापरायका जो काल तातै किछू विशेषकरि अधिक है तौ भी इहा सभवता ज्ञानावरणादिकनिका गुणश्रेणि आयामतैं अन्तर्मुहूर्तमात्र घटता ऐसा इहा गुणश्रेणि आयाम है सो यहु उदयादि अवस्थित है। उदयरूप जो वर्तमान समय तातै लगाय यहु पाइए है। पूर्ववत् उदयावली भए पीछै नाही है, तातै उदयादि कहिए है। बहुरि अवस्थितिप्रमाण लीए है। पूर्वै गलितावशेष गुणश्रेणि आयामविषै एक एक समय व्यतीत होतै गुणश्रेणि आयामविषै घटता होता था अब एक एक समय व्यतीत होतें ताके अनन्तरवर्ती अन्तरायामका एक-एक समय मिलि गुणश्रेणि आयामका जेताका तेता रहै है, तातै अवस्थित कहिए ॥५८३॥

ओकड्डिदइगिभाग गुणसेढीए असखबहुभाग ।
अ तरहिद विदियठिदी सखसलागा हि अवहरिया ॥५८४॥
गुणिय चउरादिखंडे अ तरसयलट्ठिदिम्हि णिक्खिवदि ।
सेसवहुभागमावलिहीणे वितियट्ठिदीए हू[1] ॥५८५॥

अपकर्षितैकभाग गुणश्रेण्यामसंख्यबहुभागम् ।
अतरहिते द्वितीयस्थिति· सख्यशलाका हि अपहृरिता ॥५८४॥
गुणित्वा चतुरादिखडे अतरसकलस्थितौ निक्षिपति ।
शेषबहुभागमावलिहीने द्वितीयस्थितौ हि ॥५८५॥

स० च०—अपकर्षण कीया जो द्रव्य ताकौ पल्यका असख्यातवा भागमात्र असख्यातका भाग दीए तहा एकभागमात्र द्रव्यकौ गुणश्रेणी आयामविषै दीजिए हैं। बहुरि अवशेष बहुभाग-मात्र द्रव्यकौ अन्तर स्थितिका भाग द्वितीय स्थितिकौ दीए जो सख्यातप्रमाण लीए एकशलाकाका प्रमाण आवै ताका भाग दीजिए तहा एकभागकौ सदृष्टि अपेक्षा च्यारिकरि गुणिए इतना द्रव्य अन्तर स्थितिविषै दीजिए है। बहुरि अवशेष सर्वद्रव्य सो अन्तविषैं अतिस्थापनावलीकरि हीन जो द्वितीय स्थिति तीहविषै दीजिए है। सोई दिखाइए है—

अन्तरस्थितिका प्रमाण सर्वतै स्तोक सो सदृष्टिकरि चौगुणा अतमुहूर्तमात्र, बहुरि तातै स्थितिकाडकायामका प्रमाण सख्यातगुणा, सो सदृष्टिकरि सोलहगुणा अन्तमुहूर्तमात्र, बहुरि तातै स्थितिकाडकके नीचैं जो अवशेष स्थिति रहै ताका प्रमाण सख्यातगुणा सो सदृष्टिकरि चौसठि-

---

१ गुणसेढिणिक्खेवो सुहुमसापराइयअद्धादो विससुत्तारो। गुणसेढिसीसगादो जा अतरट्ठिदी तत्थ असखेज्जगुण। तत्तो विसेसहीण ताव जाव पुव्वसमये अतरमासी, तस्स अतरस्स चरिमादो अतरट्ठिदीदो त्ति। चरिमादो अतरट्ठिदीदो पुव्वसमये जा विदियट्ठिदी तिस्से आदिट्ठिदीएदिज्जमाणग पदेसग्ग सखेज्जगुणहीण। तत्तो विसेसहीण। पढमसमयसुहुमसापराइयस्स जमोकड्डिज्जदि पदेसग्ग तमेदीए सेढीए णिक्खवदि।
क० चु० पृ० ८७०।

गुणा अन्तर्मुहूर्तमात्र, स्थितिकाडकायाम अर अवशेष स्थिति जोडें सर्व द्वितीय स्थितिका प्रमाण होइ सो असोगुणा अन्तर्मुहूर्तमात्र, स्थितिकाडकायामका भाग द्वितीय स्थिति आयामकों दीए सदृष्टिकरि बीस पाए, सो ऐसा सख्यातप्रमाण लीए जो शलाका ताका भाग असख्यात बहुभाग-मात्र अपकर्षण द्रव्यकौ दीए तहा एक खडकौ अन्तर स्थितिविषै देना कहिए तौ अन्तर स्थितिका अन्त निषेकविषै दीया द्रव्यतै द्वितीय स्थितिविषै दीया द्रव्य किंचित् ऊन होइ, अर दोय खण्ड देना कहिए तौ किंचित् न्यून त्रिभागमात्र होइ। ऐसैं क्रमकरि यथायोग्य सख्यात खण्ड ग्रहि अतर स्थितिविषै दीजिए है। सो यहु अपकर्षण कीया सर्व द्रव्यके सख्यातवें भागमात्र होइ। सदृष्टिकरि तिस असख्यात बहुभागमात्र द्रव्यकौ बीसका भाग देइ च्यारिकरि गुणैं अतर स्थितिविषै दीया द्रव्यका प्रमाण आवै है। बहुरि तिस असख्यात बहुभागमात्र द्रव्यविषै इतना घटाए जो अवशेष रहा सो द्वितीय स्थितिविषै अन्तविषै अतिस्थापनावली छोडि सर्वत्र दीजिए है। सदृष्टि करि तिस असख्यात बहुभागमात्र द्रव्यकौ बीसका भाग देइ तहा सोलह भागमात्र द्रव्य द्वितीय स्थितिविषै दीजिए है॥ ५८४—५८५॥

विशेष—विशेष स्पष्टीकरण टीकामे अकसदृष्टि द्वारा किया ही है। टीकामे जो अक सदृष्टि दी है उसका भाव यह है कि गुणश्रेणिनिक्षेपको १ मानकर उससे अन्तर स्थितिका प्रमाण ४ गुणा है, स्थितिकाण्डकायामका प्रमाण १६ गुणा है, स्थितिकाण्डकायामके नीचे जो अवशेष स्थिति रही उसका प्रमाण ६४ गुणा है, इसलिये स्थितिकाण्डकायाम और अवशेष स्थितिका प्रमाण मिलकर ८० गुणा हुआ, यही द्वितीय स्थितिका प्रमाण है। अब यह देखना है कि गुणश्रेणिमे दिये द्रव्यके बाद जो असख्यात बहुभागमात्र अपकर्षित द्रव्य शेष रहता है उसमेसे कितना द्रव्य अन्तर स्थितिमे दिया जाता है और कितना द्रव्य द्वितीय स्थितिमे दिया जाता है। इसके लिये पहले जो द्वितीय स्थितिका प्रमाण ८० गुणा बतलाया है उसमे स्थितिकाण्डकायामका भाग भी सम्मिलित है, यहाँ इसकी २० शलाका मान ली गई हैं। अत असख्यात बहुभागमात्र द्रव्यमे २० का भाग देकर चारसे गुणा करने पर जो द्रव्य प्राप्त हुआ उतना अन्तर स्थिति आयाममे निक्षिप्त होता है और शेष बहुभागप्रमाण द्रव्य अतिस्थापनावलिको छोडकर द्वितीय स्थितिमे निक्षिप्त होता है ऐसा समझना चाहिये। यहाँ द्वितीयादि समयोमे प्रथम समयके समान जाननेकी सूचना की है सो अपकर्षित द्रव्यके निक्षेपकी जो विधि प्रथम समयमे बतलाई है वही विधि द्वितीयादि समयोमे भी जानना चाहिये यह इसका भाव है।

अतरपढमठिदि त्ति य असखगुणिदक्कमेण दिज्जदि हु।
हीणकमं सखेज्जगुणूण हीणक्कम तत्तो[1]॥ ५८६॥

अतरप्रथमस्थित्यत असख्यगुणितक्रमेण दीयते हि।
हीनक्रम सख्येयगुणोन हीनक्रम तत ॥५८६॥

स० च०—अतरायामकी प्रथम स्थिति जो प्रथम निषेक तहा पर्यन्त तौ असख्यातगुणा

---

१ पढमसमयसुहुमसापराइयस्स जमोकड्डिज्जदि पदेसग्ग तमेदीए सेढीए णिक्खिवदि। विदियसमए वि एव चेव। तदियसमए वि एव चेव। एस कमो ओकड्डियूण णिसिंचमाणगस्स पदेसग्गस्स ताव जाव सुहुमसापराइयस्स पढमट्ठिदिखडय णिल्लेविद। क० चु० पृ० ८७०।

स० च०—गुणश्रेणि १ अतर स्थिति २ द्वितीय स्थिति ३ ए तीन पर्व है। अपकर्षण कीया हुआ द्रव्य इन तीनविषै विभागकरि दीजिए है। इहा यावत् अपकर्षण कीया द्रव्यकौ असख्यातगुणा क्रम लीए दीजिए ताका नाम गुणश्रेणि है। बहुरि ताके ऊपरिवर्ती जिनि निषेकनिका पूर्वै अभाव कीया था तिनका प्रमाणरूप अन्तरस्थिति है। ताके उपरिवर्ती अवशेष सर्वस्थिति ताका नाम द्वितीय स्थिति है। तहा सूक्ष्म सापरायका जो काल तातै किछू विशेषकरि अधिक है तौ भी इहा सभवता ज्ञानावरणादिकनिका गुणश्रेणि आयामतै अन्तर्मुहूर्तमात्र घटता ऐसा इहा गुणश्रेणि आयाम है सो यहु उदयादि अवस्थित है। उदयरूप जो वर्तमान समय तातै लगाय यहु पाइए है। पूर्ववत् उदयावली भए पीछै नाही है, तातै उदयादि कहिए है। बहुरि अवस्थितिप्रमाण लीए है। पूर्वै गलितावशेष गुणश्रेणि आयामविषै एक एक समय व्यतीत होतै गुणश्रेणि आयामविषै घटता होता था अब एक एक समय व्यतीत होतै ताके अनन्तरवर्ती अन्तरायामका एक-एक समय मिलि गुणश्रेणि आयामका जेताका तेता रहै है, तातै अवस्थित कहिए ॥५८३॥

ओकड्डिदइगिभाग गुणसेढीए असखबहुभाग ।
अ तरहिद विदियठिदी सखसलागा हि अवहरिया ॥५८४॥
गुणिय चउरादिखंडे अ तरसयलट्ठिदिम्हि णिक्खिवदि ।
सेसबहुभागमावलिहीणे वितियट्ठिदीए हू ॥५८५॥

अपकर्षितैकभाग गुणश्रेण्यामसंख्यबहुभागम् ।
अतरहिते द्वितीयस्थिति· सख्यशलाका हि अपहरिता· ॥५८४॥
गुणित्वा चतुरादिखडे अतरसकलस्थितौ निक्षिपति ।
शेषबहुभागमावलिहीने द्वितीयस्थितौ हि ॥५८५॥

स० च०—अपकर्षण कीया जो द्रव्य ताकौ पल्यका असख्यातवा भागमात्र असख्यातका भाग दीए तहा एकभागमात्र द्रव्यकौ गुणश्रेणी आयामविषै दीजिए है। बहुरि अवशेष बहुभागमात्र द्रव्यकौ अन्तर स्थितिका भाग द्वितीय स्थितिकौ दीए जो सख्यातप्रमाण लीए एकशलाकाका प्रमाण आवै ताका भाग दीजिए तहा एकभागकौ सदृष्टि अपेक्षा च्यारिकरि गुणिए इतना द्रव्य अन्तर स्थितिविषै दीजिए है। बहुरि अवशेष सर्वद्रव्य सो अन्तविषैं अतिस्थापनावलीकरि हीन जो द्वितीय स्थिति तीहविषैं दीजिए है। सोई दिखाइए है—

अन्तरस्थितिका प्रमाण सर्वतै स्तोक सो सदृष्टिकरि चौगुणा अतमुंहूर्तमात्र, बहुरि तातै स्थितिकाडकायामका प्रमाण सख्यातगुणा, सो सदृष्टिकरि सोलहगुणा अन्तमुंहूर्तमात्र, बहुरि तातै स्थितिकाडकके नीचैं जो अवशेष स्थिति रहै ताका प्रमाण सख्यातगुणा सो सदृष्टिकरि चौसठि-

---

१ गुणसेढिणिक्खेवो सुहुमसापराइयअद्धादो विसंसुत्तारो। गुणसेढिसीसगादो जा अतरट्ठिदी तत्थ असखेज्जगुण। तत्तो विसेसहीण ताव जाव पुव्वसमये अतरमासी, तस्स अतरस्स चरिमादो अतरट्ठिदीदो त्ति। चरिमादो अतरट्ठिदीदो पुव्वसमये जा विदियट्ठिदी तिस्से आदिट्ठिदीएदिज्जमाणग पदेसग्ग सखेज्जगुणहीण। तत्तो विसेसहीण। पढमसमयसुहुमसापराइयस्स जमोकड्डिज्जदि पदेसग्ग तमेदोए सेढीए णिक्खवदि।

क० चु० पृ० ८७०।

गुणा अन्तर्मुहूर्तमात्र, स्थितिकाडकायाम अर अवशेष स्थिति जोडें सर्व द्वितीय स्थितिका प्रमाण होइ सो असंगुणा अन्तर्मुहूर्तमात्र, स्थितिकाडकायामका भाग द्वितीय स्थिति आयामकों दीए सदृष्टिकरि बीस पाए, सो ऐसा सख्यातप्रमाण लीए जो शलाका ताका भाग असख्यात बहुभागमात्र अपकर्षण द्रव्यकौ दीए तहा एक खडकौ अन्तर स्थितिविषै देना कहिए तौ अन्तर स्थितिका अन्त निषेकविषै दीया द्रव्यतै द्वितीय स्थितिविषै दीया द्रव्य किंचित् ऊन होइ, अर दोय खण्ड देना कहिए तौ किंचित् न्यून त्रिभागमात्र होइ। ऐसैं क्रमकरि यथायोग्य सख्यात खण्ड ग्रहि अतर स्थितिविषै दीजिए है। सो यहु अपकर्षण कीया सर्व द्रव्यके सख्यातवे भागमात्र होइ। सदृष्टिकरि तिस असख्यात बहुभागमात्र द्रव्यको बीसका भाग देइ च्यारिकरि गुणैं अतर स्थितिविषै दीया द्रव्यका प्रमाण आवै है। बहुरि तिस असख्यात बहुभागमात्र द्रव्यविषै इतना घटाए जो अवशेष रहा सो द्वितीय स्थितिविषै अन्तविषै अतिस्थापनावली छोडि सर्वत्र दीजिए है। सदृष्टि करि तिस असख्यात बहुभागमात्र द्रव्यकों बीसका भाग देइ तहा सोलह भागमात्र द्रव्य द्वितीय स्थितिविषै दीजिए है॥ ५८४—५८५॥

विशेष—विशेष स्पष्टीकरण टीकामे अकसदृष्टि द्वारा किया ही है। टीकामे जो अक सदृष्टि दी है उसका भाव यह है कि गुणश्रेणिनिक्षेपको १ मानकर उससे अन्तर स्थितिका प्रमाण ४ गुणा है, स्थितिकाण्डकायामका प्रमाण १६ गुणा है, स्थितिकाण्डकायामके नीचे जो अवशेष स्थिति रही उसका प्रमाण ६४ गुणा है, इसलिये स्थितिकाण्डकायाम और अवशेष स्थितिका प्रमाण मिलकर ८० गुणा हुआ, यही द्वितीय स्थितिका प्रमाण है। अब यह देखना है कि गुणश्रेणिमे दिये द्रव्यके बाद जो असख्यात बहुभागमात्र अपकर्षित द्रव्य शेष रहता है उसमेसे कितना द्रव्य अन्तर स्थितिमे दिया जाता है और कितना द्रव्य द्वितीय स्थितिमे दिया जाता है। इसके लिये पहले जो द्वितीय स्थितिका प्रमाण ८० गुणा बतलाया है उसमे स्थितिकाण्डकायामका भाग भी सम्मिलित है, यहाँ इसकी २० शलाका मान ली गई है। अत असख्यात बहुभागमात्र द्रव्यमे २० का भाग देकर चारसे गुणा करने पर जो द्रव्य प्राप्त हुआ उतना अन्तर स्थिति आयाममे निक्षिप्त होता है और शेष बहुभागप्रमाण द्रव्य अतिस्थापनावलिको छोडकर द्वितीय स्थितिमे निक्षिप्त होता है ऐसा समझना चाहिये। यहाँ द्वितीयादि समयोमे प्रथम समयके समान जाननेकी सूचना की है सो अपकर्षित द्रव्यके निक्षेपकी जो विधि प्रथम समयमे बतलाई है वही विधि द्वितीयादि समयोमे भी जानना चाहिये यह इसका भाव है।

अतरपढमठिदि त्ति य असखगुणिदक्कमेण दिज्जदि हु।
हीणकमं सखेज्जगुणूण हीणक्कम तत्तो[1] ॥ ५८६ ॥

अतरप्रथमस्थित्यत असख्यगुणितक्रमेण दीयते हि।
हीनक्रम सख्येयगुणोन हीनक्रम तत ॥५८६॥

स० च०—अतरायामकी प्रथम स्थिति जो प्रथम निषेक तहा पर्यन्त तौ असख्यातगुणा

१ पढमसमयसुहुमसापराइयस्स जमोकड्डिज्जदि पदेसग्ग तमेदीए सेढीए णिक्खिवदि। विदियसमए वि एव चेव। तदियसमए वि एव चेव। एस कमो ओकड्डियूण णिसिंचमाणगस्स पदेसग्गस्स ताव जाव सुहुमसापराइयस्स पढमट्ठिदिखडय णिल्लेविद। क० चु० पृ० ८७०।

क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। ताके ऊपरि हीन क्रम लीए सख्यातगुणा घटता बहुरि हीन क्रमलीए द्रव्य दीजिए है। सोई कहिए है।

गुणश्रेणिआयामका प्रथम निषेकविषैं दीया द्रव्यकी एक शालाका, तातै द्वितीय निषेकविषैं दीया द्रव्यकी शालाका पल्यकी असख्यातवा भागगुणी है। ऐसैं क्रमतै गुणकार लीए अन्त निपेकपर्यंत जेती शालाका होइ तिनका जोड दीए जो प्रमाण होइ ताका भाग गुणश्रेणिविषैं देने योग्य पूर्वोक्त द्रव्यकौ देइ तहा एक भागकौ अपनी अपनी शालाका प्रमाणकरि गुणें प्रथमादि निषेकनिविषै द्रव्य देनेका प्रमाण आवै है। अक सदृष्टिकरि जैसैं एकतैं लगाय चौगुणी-चौगुणी शलाका च्यारि निषेकनिविषै स्थापि १।४।१६।६४। जोडैं पिचासी होइ। ताका भाग द्रव्यकौ देइ एक च्यारि आदिकरि गुणें प्रथमादि निषेकनिविषै दीया द्रव्यका प्रमाण आवै है। इहा गुणकारविषै जोड देनेका प्रमाण करणसूत्र यह जानना—

पदमितगुणहतिगुणितप्रभेद स्याद्गुणधन तदा तदा द्व्यून।
एकोनगुणविभक्त गुणसकलित विजानीयात् ॥१॥

गच्छमात्र गुणकारनिकौ परस्पर गुणैं गुणधन होइ। तहा प्रथम स्थान घटाइ अवशेषकौ एक घाटि गुणकारका भाग दीए गुणकार विषैं सकलनधन आवै है। जैसै इहा सदृष्टिविषै गच्छ च्यारि, गुणकार च्यारि, सो च्यारि जायगा च्यारि च्यारि माडि परस्पर गुणें दोयसै छप्पन होइ, तामै आदि एक घटाइ अवशेषकौ एक घाटि गुणकार तीन, ताका भाग दीए जोड पिच्यासी हो है। सो ऐसैं वर्तमान उदयरूप गुणश्रेणिका प्रथम निषेकतैं लगाय गुणश्रेणि शीर्षपर्यंत दीजिए है। गुणश्रेणिका अन्तका निषेककौ गुणश्रेणिशीर्ष कहिए है, सो सूक्ष्मसापरायका प्रथम समयविषैं तो इहा कह्या गुणश्रेणि आयाम ताका जो अन्त निषेक सोई गुणश्रेणिशीर्ष है। बहुरि द्वितीयादि समयनिविषै एक एक समय व्यतीत होतै जो अन्तरायामका प्रथमादि निषेक गुणश्रेणिविषै (श्रेणि) मिल्या सो गुणश्रेणीशीर्ष है। जातै इहा अवस्थित गुणश्रेणिआयाम है। बहुरि गुणश्रेणिके उपरिवर्ती जो अतरायामके निषेक तिनिविषैं द्रव्य देनेका विधान कहिए है—

अतरायामविषैं देनेयोग्य जो पूर्वोक्त द्रव्य ताकौ अतरायाममात्र गच्छका भाग दीए मध्यम धन होइ। तीहिविषै एकघाटि गच्छका आधा प्रमाणमात्र विशेष जोडैं जो होइ तितना द्रव्य अतरायामका प्रथम निपेकविषै दीजिए है सो यहु द्रव्य गुणश्रेणिशीर्षविषै दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा है। तातै सूत्रविषै अन्तरायामका प्रथम निषेकपर्यंत असख्यातगुणा देय द्रव्य कह्या। बहुरि ताके ऊपरि अतरायामके द्वितीयादि निषेकनिविषै एक एक विशेषकरि घटता क्रमलीए द्रव्य दीजिए है सो यावत् अतरायामका अत निषेक होइ तावत् ऐसा क्रम जानना। अब द्वितीय स्थितिनिषेकनिविषै द्रव्य देनेका विधान कहिए है—

द्वितीय स्थितिविषै देनेयोग्य जो पूर्वोक्त द्रव्य ताकौ आवली रहित द्वितीय स्थितिका प्रमाणमात्र जो गच्छ ताका भाग दीए मध्यधन होइ। यामै एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणमात्र विशेप जोडैं जो होइ तितना द्रव्य द्वितीय स्थितिका प्रथम निषेकविषैं दीजिए है। सो यहु दीया द्रव्य अतरायामका अत निषेकविषै दीया द्रव्यतैं सख्यातगुणा घटता है। तातै सूत्रविषै इहा दीया द्रव्य सख्यातगुणा घटता कह्या। बहुरि ताके उपरि द्वितीय स्थितिके द्वितीयादि निषेकनिविषैं एक एक विशेप घटता क्रमकरि द्रव्य दीजिए है। ऐसे देय द्रव्यका विधान कह्या ॥५८६॥

अतरपढमठिदि त्ति य असखगुणिदक्कमेण दिस्सदि हु।
हीणक्कमेण असखेज्जेण गुणं तो विहीणकम[1] ॥

अतरप्रथमस्थित्यतं च असख्यगुणितक्रमेण दृश्यते हि।
हीनक्रमेण असंख्येयेन गुणमतो विहीनक्रमम् ॥५८७॥

स० च०--पूर्व द्रव्य वा दीया द्रव्य मिलि जो दृश्यमान होइ ताका विधान कहिए है—वर्तमान समयसम्वन्धी निषेकविषै दृश्यमान द्रव्य स्तोक है, तातैं अन्तरायामका प्रथम निषेक पर्यन्त असख्यातगुणा क्रम लीए है। बहुरि ताके ऊपरि अन्तरायामका अन्त निषेकपर्यन्त विशेष घटता क्रम लीए है। इहा पर्यन्त देय द्रव्यका जैसैं क्रम कह्या तैसैं ही दृश्यमान द्रव्यका भी क्रम जानना। बहुरि तातैं ताके उपरि द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकका दृश्यमान द्रव्य असख्यातगुणा है। बहुरि ताके ऊपरि ताका अन्त निषेकपर्यन्त विशेष घटता क्रमलीए दृश्यमान द्रव्य है। याप्रकार सूक्ष्मसापरायका प्रथम समयतैं लगाय प्रथम स्थितिकाडकका घात यावत् न होइ निवरै तावत् ऐसा क्रम जानना। विशेष इतना अपकर्षण कीया द्रव्यका प्रमाण समय समय असख्यातगुणा जानना ॥ ५८७ ॥ तहा प्रथम काडककी अन्त फालिके द्रव्यका प्रमाण ल्यावने निमित्ति कहिए है—

कडयगुणचरिमठिदी सविसेसा चरिमफालिया तस्स।
सखेज्जभागमतरठिदिम्हि सव्वे तु बहुभाग[2] ॥ ५८८ ॥

काडकगुणचरमस्थितिः सविशेषा चरमस्फालिका तस्य।
सख्येयभागमतरस्थितौ सर्वाया तु बहुभागम् ॥ ५८८ ॥

स० च०—काडकायामकरि गुणित जो विशेषसहित अन्त स्थिति तीहि प्रमाण अन्त फालि द्रव्य है। ताका सख्यातवा भाग तौ अन्तर स्थित्तिविषैं, बहुभाग सर्व स्थित्तिविषैं दीजिए है, सोइ कहिए है—

द्वितीय स्थितिका प्रथम निषेकविषैं एक घाटि द्वितीय स्थिति आयाममात्र विशेष घटाए ताका अन्त निषेकका द्रव्य होइ, तिसतैं लगाय नीचेके काडक आयाममात्र निषेकनिका द्रव्य अन्त फालिविषैं ग्रहण करिए हैं। तातैं तिस अन्त निषेकके द्रव्यकौ जो काडक आयाम सोई फालिका आयाम ताकरि गुणें तहा नीचले निषेकनिविषै जे विशेष अधिक पाइए है तिनकौ अधिक कीए अन्त फालिके सर्व द्रव्यका प्रमाण हो है। यामे नीचले निषेकनिका अपकर्षण कीया जो द्रव्य ताकौ जोडैं जो द्रव्य होइ ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ एक भागकौ गुणश्रेणीआयामविषै दीए पीछैं अवशेष जो द्रव्य रह्या ताके देनेका विधान कहिए है—

अन्तरायामका भाग फालिके आयामकौ दीए जो सख्यातमात्र प्रमाण होइ ताका भाग

---

१ पढमसमयसुहुमसापराइयस्स उदये दिस्सदि पदेसग्ग थोव। विदियाए ट्ठिदीए असखेज्जगुण दीसदि ताव जाव गुणसेढिसीसयादो अण्णा च एक्का ट्ठिदि त्ति। तत्तो विसेसहीण ताव जाव अतरट्ठिदि त्ति। तत्तो असखेज्जगुण। तत्तो विसेसहीण ८७०।

२ जयध० ता० मु० पृ० २२११, २२१२।

क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। ताके ऊपरि हीन क्रम लीए सख्यातगुणा घटता बहुरि हीन क्रमलीए द्रव्य दीजिए है। सोई कहिए है।

गुणश्रेणिआयामका प्रथम निषेकविषै दीया द्रव्यकी एक शालाका, तातैं द्वितीय निषेकविषै दीया द्रव्यकी शालाका पल्यकी असख्यातवा भागगुणी है। ऐसैं क्रमतैं गुणकार लीए अन्त निपेकपर्यंत जेती शालाका होइ तिनका जोड दीए जो प्रमाण होइ ताका भाग गुणश्रेणिविषै देने योग्य पूर्वोक्त द्रव्यकौ देइ तहा एक भागकौ अपनी अपनी शालाका प्रमाणकरि गुणें प्रथमादि निषेकनिविषै द्रव्य देनेका प्रमाण आवै है। अक सदृष्टिकरि जैसैं एकतैं लगाय चौगुणी-चौगुणी शलाका च्यारि निषेकनिविषै स्थापि १।४।१६।६४। जोडैं पिचासी होइ। ताका भाग द्रव्यकौ देइ एक च्यारि आदिकरि गुणे प्रथमादि निषेकनिविषै दीया द्रव्यका प्रमाण आवै है। इहा गुणकारविषै जोड देनेका प्रमाण करणसूत्र यह जानना—

पदमितगुणहतिगुणितप्रभेद स्याद्गुणधन तदा तदा द्व्यून।
एकोनगुणविभक्त गुणसकलित विजानीयात् ॥१॥

गच्छमात्र गुणकारनिकौं परस्पर गुणैं गुणधन होइ। तहा प्रथम स्थान घटाइ अवशेषकौ एक घाटि गुणकारका भाग दीए गुणकार विषै सकलनधन आवै है। जैसै इहा सदृष्टिविषैं गच्छ च्यारि, गुणकार च्यारि, सो च्यारि जायगा च्यारि च्यारि माडि परस्पर गुणै दोयसै छप्पन होइ, तामै आदि एक घटाइ अवशेषकौ एक घाटि गुणकार तीन, ताका भाग दीए जोड पिच्यासी हो है। सो ऐसैं वर्तमान उदयरूप गुणश्रेणिका प्रथम निषेकतैं लगाय गुणश्रेणि शीर्षपर्यंत दीजिए है। गुणश्रेणिका अन्तका निषेककौ गुणश्रेणिशीर्ष कहिए है, सो सूक्ष्मसापरायका प्रथम समयविषै तो इहा कह्या गुणश्रेणि आयाम ताका जो अन्त निषेक सोई गुणश्रेणिशीर्ष है। बहुरि द्वितीयादि समयनिविषै एक एक समय व्यतीत होतै जो अन्तरायामका प्रथमादि निषेक गुणश्रेणिविषै (श्रेणि) मिल्या सो गुणश्रेणीशीर्ष है। जातै इहा अवस्थित गुणश्रेणिआयाम है। बहुरि गुणश्रेणि-के उपरिवर्ती जो अतरायामके निषेक तिनिविषैं द्रव्य देनेका विधान कहिए है—

अतरायामविषै देनेयोग्य जो पूर्वोक्त द्रव्य ताकौं अतरायाममात्र गच्छका भाग दीए मध्यम धन होइ। तीहिविषै एकघाटि गच्छका आधा प्रमाणमात्र विशेष जोडै जो होइ तितना द्रव्य अतरायामका प्रथम निषेकविषै दीजिए है सो यहु द्रव्य गुणश्रेणिशीर्षविषै दीया द्रव्यतै असख्यात-गुणा है। तातै सूत्रविषै अन्तरायामका प्रथम निषेकपर्यंत असख्यातगुणा देय द्रव्य कह्या। बहुरि ताके ऊपरि अतरायामके द्वितीयादि निषेकनिविषै एक एक विशेषकरि घटता क्रमलीए द्रव्य दीजिए है सो यावत् अतरायामका अत निषेक होइ तावत् ऐसा क्रम जानना। अब द्वितीय स्थितिनिषेकनिविषै द्रव्य देनेका विधान कहिए है—

द्वितीय स्थितिविषै देनेयोग्य जो पूर्वोक्त द्रव्य ताकौ आवली रहित द्वितीय स्थितिका प्रमाणमात्र जो गच्छ ताका भाग दीए मध्यधन होइ। यामै एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणमात्र विशेष जोडै जो होइ तितना द्रव्य द्वितीय स्थितिका प्रथम निषेकविषै दीजिए है। सो यहु दीया द्रव्य अतरायामका अत निषेकविषै दीया द्रव्यतै सख्यातगुणा घटता है। तातै सूत्रविषै इहा दीया द्रव्य सख्यातगुणा घटता कह्या। बहुरि ताके उपरि द्वितीय स्थितिके द्वितीयादि निषेकनिविषै एक एक विशेष घटता क्रमकरि द्रव्य दीजिए है। ऐसे देय द्रव्यका विधान कह्या ॥५८६॥

अंतरपढमठिदि त्ति य असंखगुणिदक्कमेण दिस्सदि हु।
हीणकमेण असंखेज्जेण गुणं तो विहीणकमं[1] ॥

अंतरप्रथमस्थित्यंत च असंख्यगुणितक्रमेण दृश्यते हि।
हीनक्रमेण असंख्येयेन गुणमतो विहीनक्रमम् ॥५८७॥

स० च०—पूर्व द्रव्य वा दीया द्रव्य मिलि जो दृश्यमान होइ ताका विधान कहिए है—वर्तमान समयसम्बन्धी निषेकविषै दृश्यमान द्रव्य स्तोक है, तातैं अन्तरायामका प्रथम निषेक पर्यन्त असंख्यातगुणा क्रम लीए है। बहुरि ताके ऊपरि अन्तरायामका अन्त निषेकपर्यन्त विशेष घटता क्रम लीए है। इहा पर्यन्त देय द्रव्यका जैसैं क्रम कह्या तैसैं ही दृश्यमान द्रव्यका भी क्रम जानना। बहुरि तातैं ताके उपरि द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकका दृश्यमान द्रव्य असंख्यातगुणा है। बहुरि ताके ऊपरि ताका अन्त निषेकपर्यन्त विशेष घटता क्रमलीए दृश्यमान द्रव्य है। याप्रकार सूक्ष्मसांपरायका प्रथम समयतैं लगाय प्रथम स्थितिकांडकका घात यावत् न होइ निवरै तावत् ऐसा क्रम जानना। विशेष इतना अपकर्षण कीया द्रव्यका प्रमाण समय समय असंख्यात-गुणा जानना ॥ ५८७ ॥ तहा प्रथम कांडककी अन्त फालिके द्रव्यका प्रमाण ल्यावने निमित्ति कहिए है—

कंडयगुणचरिमठिदी सविसेसा चरिमफालिया तस्स।
संखेज्जभागमंतरठिदिम्हि सव्वे तु बहुभागं[2] ॥ ५८८ ॥

कांडकगुणचरमस्थिति- सविशेषा चरमस्फालिका तस्य।
संख्येयभागमंतरस्थितौ सर्वाया तु बहुभागम् ॥ ५८८ ॥

स० च०—कांडकायामकरि गुणित जो विशेषसहित अन्त स्थिति तीहिं प्रमाण अन्त फालि द्रव्य है। ताका संख्यातवा भाग तौ अन्तर स्थितिविषैं, बहुभाग सर्व स्थितिविषैं दीजिए है, सोइ कहिए है—

द्वितीय स्थितिका प्रथम निषेकविषैं एक घाटि द्वितीय स्थिति आयाममात्र विशेष घटाए ताका अन्त निषेकका द्रव्य होइ, तिसतैं लगाय नीचेके कांडक आयाममात्र निषेकनिका द्रव्य अन्त फालिविषैं ग्रहण करिए हैं। तातैं तिस अन्त निषेकके द्रव्यकौ जो कांडक आयाम सोई फालिका आयाम ताकरि गुणे तहा नीचले निषेकनिविषैं जे विशेष अधिक पाइए हैं तिनकौ अधिक कीए अन्त फालिके सर्व द्रव्यका प्रमाण हो है। यामें नीचले निषेकनिका अपकर्षण कीया जो द्रव्य ताकौ जोडैं जो द्रव्य होइ ताकौ पल्यका असंख्यातवा भागका भाग देइ एक भागकौ गुणश्रेणीआयाम-विषै दीए पीछैं अवशेष जो द्रव्य रह्या ताके देनेका विधान कहिए है—

अन्तरायामका भाग फालिके आयामकौं दीए जो संख्यातमात्र प्रमाण होइ ताका भाग

---

१ पढमसमयसुहुमसांपराइयस्स उदये दिस्सदि पदेसग्गं थोवं। विदियाए ट्ठिदीए असंखेज्जगुणं दीसदि ताव जाव गुणसेढिसीसयादो अण्णा च एक्का ट्ठिदि त्ति। तत्तो विसेसहीणं ताव जाव अंतरट्ठिदि त्ति। तत्तो असंखेज्जगुणं। तत्तो विसेसहीणं ८७०।

२ जयध० ता० मु० पृ० २२११, २२१२।

तिस अवशेष द्रव्यकौ दीए जो एक खड होइ तामै पूर्व जो अन्तर स्थितिविषै द्रव्य दीया था ताकौ घटाय अवशेषको अङ्गीकार करि बहुरि इतना द्रव्य घटाए जो अवशेष द्रव्य रह्या ताकौ काडकके नीचै अवशेष स्थिति जो पाइए ताकौ अन्तरायामका भाग दीए जो सख्यातका प्रमाण आवै तामैं एक अधिक करि ताका भाग दीए जो एक खडका प्रमाग होइ ताकौ पूवै अङ्गीकार किया द्रव्यविषै जोडैं जेता होइ तितना द्रव्य अन्तरायामविषै पूर्वोक्त प्रकार गोपुच्छ आकार करि चय घटता क्रम लीए देना। बहुरि तिस बहुभागमात्र द्रव्यविषै इतना द्रव्य घटाए जो अवशेष रह्या ताकौ द्वितीय स्थितिविषै पूर्वोक्त प्रकार गोपुच्छ-आकारकरि चय घटता क्रमलीए देना। तहा अन्तर स्थितिका अन्त निषेकविषै दीया द्रव्यतै द्वितीय स्थितिका आदि निषेकविषै दीया द्रव्य सख्यातगुणा घटता जानना। ऐसै ही अन्त फालिका द्रव्यका सख्यातवा भाग अन्तरायामविषैं बहुभाग द्वितीय स्थितिविषै देनेका विधान जानना। इहा सद्दष्टिविषै सख्यातकी सहनानी च्यारि जानि कथन समझना। इहा इतना जानना—

जो काडकविषै स्थिति घटाइए, तिसके द्रव्यकौ नीचले निषेकनिविषै देनेके अर्थि समय समय जेता ग्रहण करिए सो तौ फालिद्रव्य कहिए। अर गुणश्रेणी आदिके अर्थि जो सर्व स्थितिके द्रव्य अपकर्षण करि ग्रहिए सो अपकृष्टि द्रव्य कहिए हैं। तहा काडकको प्रथमादि फालि पतन समयविषै तौ अपकृष्टि द्रव्य बहुत है। फालिद्रव्य स्तोक है, तातै अपकृष्टि द्रव्यहीका मुख्यपनै देनेका विधान कह्या, बहुरि अन्त फालिविषै फालि द्रव्य बहुत है, अपकृष्टि द्रव्य स्तोक है, तातै फालि द्रव्यविषै अवशेष रही स्थितिका अपकृष्टि द्रव्यकौ साधिक करि द्रव्य देनेका विधान कह्या है। या प्रकार प्रथम काडक काल सपूर्ण होतै अन्तर पूरण भया। जिनि वीचिके निषेकनिका अभाव भया था तिनका सद्भाव भया। तब अन्तर पूरण होनेकरि गुणश्रेणि-आयाम बिना ऊपरिके सर्व निषेकनिविषै एक गोपुच्छ भया। ऐसै सूक्ष्मसापराय कालका प्रथम समयतै लगाय प्रथम काडककी अन्त फालि पतनपर्यन्त तौ तीन स्थाननिविषैं द्रव्य देनेका विधान समानरूप कह्या। अब द्वितीयादि काडकनिविषै देय द्रव्य दृश्य द्रव्यका विधान कहिए है ॥ ५८८ ॥

विशेष—प्रथम स्थितिकाण्डककी अन्त फालिके पतित होने पर जो प्रदेश-विन्यासका क्रम है उसे वतलाते हैं—द्वितीय स्थितिके समस्त द्रव्यके सख्यातवे भागप्रमाण अन्तिम फालिको ग्रहण कर उदयमे स्तोक प्रदेशपुजको देता है, उससे दूसरी स्थितिमे असख्यतागुणे प्रदेशपुजको देता है। इस प्रकार गुणश्रेणिशीर्षके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर असख्यातगुणे द्रव्यको देता है। यह गुणश्रेणिमे पतित हुआ द्रव्य अन्तिम फालिके द्रव्यके असख्यातवे भागप्रमाण ही जानना चाहिये। इसलिए गुणश्रेणिशीर्षके ऊपर अनन्तर जो एक स्थिति है उसमे असख्यातगुणे द्रव्यको देता है। उसके आगे भूतपूर्वन्यायसे अन्तरसवधी अन्तिम स्थितिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर विशेष हीन विशेषहीन द्रव्य देता है। गुणश्रेणिशीर्षसे ऊपर इस अन्तररूप कालमे पतित हुआ समस्त द्रव्य अन्तिम फालिके द्रव्यका सख्यातवां भागमात्र ही है। पुन अन्तरकी अन्तिम स्थितिके वाद द्वितीय स्थितिकी जो आदि स्थिति है उसमे सख्यातगुणे हीन द्रव्यका निक्षेप करता है। उसके वाद समस्त स्थितियोमे उत्तरोत्तर असख्यातवे भागहीन द्रव्यका निक्षेप करता है।

द्वितीय स्थितिकी आदि स्थितिमे जो सख्यातगुणे हीन द्रव्यका निक्षेप करता है उसका कारण यह है कि प्रथम स्थितिकाण्डकको द्विचरम फालिके पतन होने तक प्रत्येक समयमे अपकर्षित

होकर पतित होनेवाला द्रव्य द्वितीय स्थितिके समस्त द्रव्यके असख्यातवे भागप्रमाण ही है, क्योकि वह अपकर्षण भागहारसे भाजित एक भागप्रमाण ही है। इसलिए गुणश्रेणिको छोडकर उपरिम अन्तर स्थितियोमे निक्षिप्त हुआ प्रदेशपु ज एक गोपुच्छस्वरूप होकर वहाँ पाया जाता है। तथा द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकसे लेकर उपरिम सर्व स्थितियोमे निक्षिप्त प्रदेशपु ज एक गोपुच्छा-रूपसे अन्तर स्थितिमे निक्षिप्त प्रदेशपु जसे असख्यातगुणा प्राप्त होता है, क्योकि जब तक द्विचरम फालिका पतन होता है तब तक प्रत्येक समयमे अपकर्षित होकर अन्तर स्थितियोमे निक्षिप्त होनेवाला प्रदेशपु ज द्वितीय स्थितिके समस्त प्रदेशपु जके असख्यातवें भागप्रमाण ही होता है। होता हुआ भी तत्काल अपकर्षित होनेवाले समस्त द्रव्यके असख्यातवें भागप्रमाण या सख्यातवे भागप्रमाण ही है। इसलिए अन्तर स्थितियोमे और द्वितीय स्थितिमे भिन्न गोपुच्छाए हो जाती हैं। किन्तु प्रथम स्थितिकाडककी अन्तिम फालिके पतित होनेपर दोनोकी एक गोपुच्छा-श्रेणी हो जाती है, इसलिए प्रथम स्थितिकाडककी अन्तिम फालिके द्रव्यका सख्यातवाँ भागमात्र प्रदेशपिंड अन्तरस्थितियोमे उस समय पतित होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। पुन उस चरिम फालिके प्रदेश पिंडका असख्यात बहुभागप्रमाण द्रव्य प्रथम स्थितिकाण्डकसे न्यून तथा प्रथम स्थितिकाडकसे सख्यातगुणी ऐसी द्वितीय स्थितिकी अवयव स्थितियोमे पतित होता है जो उस समय अन्तिम फालिके एक-एक स्थितिके प्रदेशपु जका सख्यातवें भागरूप प्रदेशपु ज एक-एक स्थितिविशेषमे पतित होता है। परन्तु अन्तर स्थितियोमेसे प्रत्येकमे सख्यातगुणा प्रदेशपु ज पतित होता है, अन्यथा दोनोकी एक गोपुच्छा नही बन सकती। इसलिए अन्तरकी अन्तिम स्थितिमे निक्षिप्त हुए प्रदेशपु जसे द्वितीय स्थितिकी आदि स्थितिमे निक्षिप्त होनेवाला प्रदेशपु ज सख्यात-गुणा हो जाता है।

अथवा अन्तर की अन्तिम स्थितिमे निक्षिप्त हुए प्रदेशपु जसे द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकमे निक्षिप्त होनेवाला प्रदेशपु ज इस कारण सख्यातगुणाहीन है, क्योकि अन्तर स्थितियोके प्रमाणसे प्रथम स्थितिकाडकके प्रमाणमे भाग देनेपर जो सख्यात अक प्राप्त होते है उन्हे विरलित कर, विरलित अङ्को पर प्रथम स्थितिकाण्डकके प्रमाणको समान खण्ड कर देनेपर वहाँ एक-एक अकके प्रति अन्तरायामका प्रमाण प्राप्त होता है। पुन यहाँ पर एक अकके प्रति प्राप्त प्रमाणको ग्रहण कर तत्कालीन गुणश्रेणिशीर्षसे उपरिम अन्तर स्थितियोके ऊपर स्थापित करने पर अन्तर स्थितिसम्बन्धी प्रदेशपु ज और द्वितीय स्थितिसम्बन्धी प्रदेशपु ज दोनो ही स्तोकरूपसे एक पुच्छरूप हो जाते हैं।

पुन वहाँ द्वितीय अकके प्रति प्राप्त एक खडको ग्रहण कर सख्यात फालियाँ करनी चाहिये। वे कितनी हैं ऐसी जिज्ञासा होनेपर कहते है कि अन्तरस्थितिके प्रमाणसे, गुणश्रेणिको छोडकर शेष समस्त स्थितियोके भाजित करने पर जो लब्ध आवे उतनी फालियाँ करनी चाहिए। ऐसा करके उनमेसे एक फालिको ग्रहण कर अन्तर स्थितियोके ऊपर पहले स्थापित हुए खण्डके पास स्थापित कर पुन शेष फालियोको क्रमसे द्वितीय स्थितिमे स्थापित करना चाहिये। इसी प्रकार शेष अकोके प्रति व्याप्त खण्डोको भी आगमानुसार ग्रहण करना चाहिये। ऐसा करके देखने पर अन्तरसम्बन्धी अन्तिम स्थितिमे निक्षिप्त हुए द्रव्यसे द्वितीय स्थितिकी आदि स्थितिमे निक्षिप्त हुआ प्रदेशपु ज सख्यातगुणा हीन होता है ऐसा निश्चय करना चाहिये।

तिस अवशेष द्रव्यकौ दीए जो एक खड होइ तामै पूर्व जो अन्तर स्थितिविषै द्रव्य दीया था ताकौ घटाय अवशेषको अङ्गीकार करि वहुरि इतना द्रव्य घटाए जो अवशेष द्रव्य रह्या ताकौ काडकके नीचै अवशेष स्थिति जो पाइए ताकौ अन्तरायामका भाग दीए जो सख्यातका प्रमाण आवै तामैं एक अधिक करि ताका भाग दीए जो एक खडका प्रमाण होइ ताकौं पूर्वै अङ्गीकार किया द्रव्यविषै जोडै जेता होइ तितना द्रव्य अन्तरायामविषै पूर्वोक्त प्रकार गोपुच्छ आकार करि चय घटता क्रम लीए देना। बहुरि तिस बहुभागमात्र द्रव्यविषै इतना द्रव्य घटाए जो अवशेष रह्या ताकौ द्वितीय स्थितिविषै पूर्वोक्त प्रकार गोपुच्छ-आकारकरि चय घटता क्रमलीए देना। तहा अन्तर स्थितिका अन्त निषेकविषै दीया द्रव्यतै द्वितीय स्थितिका आदि निषेकविषै दीया द्रव्य सख्यातगुणा घटता जानना। ऐसै ही अन्त फालिका द्रव्यका सख्यातवा भाग अन्तरायामविषैं बहुभाग द्वितीय स्थितिविषै देनेका विधान जानना। इहा सदृष्टिविषै सख्यातकी सहनानी च्यारि जानि कथन समझना। इहा इतना जानना—

जो काडकविषै स्थिति घटाइए, तिसके द्रव्यकौ नीचले निषेकनिविषै देनेके अर्थि समय समय जेता ग्रहण करिए सो तौ फालिद्रव्य कहिए। अर गुणश्रेणी आदिके अर्थि जो सर्व स्थितिके द्रव्य अपकर्षण करि ग्रहिए सो अपकृष्टि द्रव्य कहिए है। तहा काडकको प्रथमादि फालि पतन समयविषै तौ अपकृष्टि द्रव्य बहुत है। फालिद्रव्य स्तोक है, तातै अपकृष्टि द्रव्यहीका मुख्यपनै देनेका विधान कह्या, बहुरि अन्त फालिविषै फालि द्रव्य बहुत है, अपकृष्टि द्रव्य स्तोक है, तातै फालि द्रव्यविषै अवशेष रही स्थितिका अपकृष्टि द्रव्यकौ साधिक करि द्रव्य देनेका विधान कह्या है। या प्रकार प्रथम काडक काल सपूर्ण होतै अन्तर पूरण भया। जिनि वीचिके निषेकनिका अभाव भया था तिनका सद्भाव भया। तब अन्तर पूरण होनेकरि गुणश्रेणि-आयाम बिना ऊपरिके सर्व निषेकनिविषै एक गोपुच्छ भया। ऐसैं सूक्ष्मसापराय कालका प्रथम समयतै लगाय प्रथम काडककी अन्त फालि पतनपर्यन्त तौ तीन स्थाननिविषै द्रव्य देनेका विधान समानरूप कह्या। अब द्वितीयादि काडकनिविषै देय द्रव्य दृश्य द्रव्यका विधान कहिए है॥ ५८८॥

विशेष—प्रथम स्थितिकाण्डककी अन्त फालिके पतित होने पर जो प्रदेश-विन्यासका क्रम है उसे बतलाते है—द्वितीय स्थितिके समस्त द्रव्यके सख्यातवे भागप्रमाण अन्तिम फालिको ग्रहण कर उदयमे स्तोक प्रदेशपुजको देता है, उससे दूसरी स्थितिमे असख्यतागुणे प्रदेशपुजको देता है। इस प्रकार गुणश्रेणिशीर्षके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर असख्यातगुणे द्रव्यको देता है। यह गुणश्रेणिमे पतित हुआ द्रव्य अन्तिम फालिके द्रव्यके असख्यातवे भागप्रमाण ही जानना चाहिये। इसलिए गुणश्रेणिशीर्षके ऊपर अनन्तर जो एक स्थिति है उसमे असख्यातगुणे द्रव्यको देता है। उसके आगे भूतपूर्वन्यायसे अन्तरसबधी अन्तिम स्थितिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर विशेष हीन विशेषहीन द्रव्य देता है। गुणश्रेणिशीर्षसे ऊपर इस अन्तररूप कालमे पतित हुआ समस्त द्रव्य अन्तिम फालिके द्रव्यका सख्यातवाँ भागमात्र ही है। पुन अन्तरकी अन्तिम स्थितिके वाद द्वितीय स्थितिकी जो आदि स्थिति है उसमे सख्यातगुणे हीन द्रव्यका निक्षेप करता है। उसके बाद समस्त स्थितियोमे उत्तरोत्तर असख्यातवे भागहीन द्रव्यका निक्षेप करता है।

द्वितीय स्थितिकी आदि स्थितिमे जो सख्यातगुणे हीन द्रव्यका निक्षेप करता है उसका कारण यह है कि प्रथम स्थितिकाण्डककी द्विचरम फालिके पतन होने तक प्रत्येक समयमे अपकर्षित

होकर पतित होनेवाला द्रव्य द्वितीय स्थितिके समस्त द्रव्यके असख्यातवे भागप्रमाण ही है, क्योकि वह अपकर्षण भागहारसे भाजित एक भागप्रमाण ही है। इसलिए गुणश्रेणिको छोडकर उपरिम अन्तर स्थितियोमे निक्षिप्त हुआ प्रदेशपुज एक गोपुच्छस्वरूप होकर वहाँ पाया जाता है। तथा द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकसे लेकर उपरिम सर्व स्थितियोमे निक्षिप्त प्रदेशपुज एक गोपुच्छारूपसे अन्तर स्थितिमे निक्षिप्त प्रदेशपुजसे असख्यातगुणा प्राप्त होता है, क्योकि जब तक द्विचरम फालिका पतन होता है तब तक प्रत्येक समयमे अपकर्षित होकर अन्तर स्थितियोमे निक्षिप्त होनेवाला प्रदेशपुज द्वितीय स्थितिके समस्त प्रदेशपुजके असख्यातवे भागप्रमाण ही होता है। होता हुआ भी तत्काल अपकर्षित होनेवाले समस्त द्रव्यके असख्यातवे भागप्रमाण या सख्यातवे भागप्रमाण ही है। इसलिए अन्तर स्थितियोमे और द्वितीय स्थितिमे भिन्न गोपुच्छाए हो जाती है। किन्तु प्रथम स्थितिकाडककी अन्तिम फालिके पतित होनेपर दोनोकी एक गोपुच्छाश्रेणी हो जाती है, इसलिए प्रथम स्थितिकाडककी अन्तिम फालिके द्रव्यका सख्यातवाँ भागमात्र प्रदेशपिड अन्तरस्थितियोमे उप समय पतित होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। पुन उस चरिम फालिके प्रदेश पिडका असख्यात बहुभागप्रमाण द्रव्य प्रथम स्थितिकाण्डकसे न्यून तथा प्रथम स्थितिकाडकसे सख्यातगुणी ऐसी द्वितीय स्थितिकी अवयव स्थितियोमे पतित होता है जो उस समय अन्तिम फालिके एक-एक स्थितिके प्रदेशपुजका सख्यातवे भागरूप प्रदेशपुज एक-एक स्थितिविशेषमे पतित होता है। परन्तु अन्तर स्थितियोमेसे प्रत्येकमे सख्यातगुणा प्रदेशपुज पतित होता है, अन्यथा दोनोकी एक गोपुच्छा नही बन सकती। इसलिए अन्तरकी अन्तिम स्थितिमे निक्षिप्त हुए प्रदेशपुजसे द्वितीय स्थितिकी आदि स्थितिमे निक्षिप्त होनेवाला प्रदेशपुज सख्यातगुणा हो जाता है।

अथवा अन्तर की अन्तिम स्थितिमे निक्षिप्त हुए प्रदेशपुजसे द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकमे निक्षिप्त होनेवाला प्रदेशपुज इस कारण सख्यातगुणाहीन है, क्योकि अन्तर स्थितियोके प्रमाणसे प्रथम स्थितिकाडकके प्रमाणमे भाग देनेपर जो सख्यात अक प्राप्त होते है उन्हे विरलित कर, विरलित अङ्को पर प्रथम स्थितिकाण्डकके प्रमाणको समान खण्ड कर देनेपर वहाँ एक-एक अकके प्रति अन्तरायामका प्रमाण प्राप्त होता है। पुन यहाँ पर एक अकके प्रति प्राप्त प्रमाणको ग्रहण कर तत्कालीन गुणश्रेणिशीर्षसे उपरिम अन्तर स्थितियोके ऊपर स्थापित करने पर अन्तर स्थितिसम्बन्धी प्रदेशपुज और द्वितीय स्थितिसम्बन्धी प्रदेशपुज दोनो ही स्तोकरूपसे एक पुच्छरूप हो जाते है।

पुन वहाँ द्वितीय अकके प्रति प्राप्त एक खडको ग्रहण कर सख्यात फालियाँ करनी चाहिये। वे कितनी हैं ऐसी जिज्ञासा होनेपर कहते है कि अन्तरस्थितिके प्रमाणसे, गुणश्रेणिको छोडकर शेष समस्त स्थितियोके भाजित करने पर जो लब्ध आवे उतनी फालियाँ करनी चाहिए। ऐसा करके उनमेसे एक फालिको ग्रहण कर अन्तर स्थितियोके ऊपर पहले स्थापित हुए खण्डके पास स्थापित कर पुन शेष फालियोको क्रमसे द्वितीय स्थितिमे स्थापित करना चाहिये। इसी प्रकार शेष अकोके प्रति व्याप्त खण्डोको भी आगमानुसार ग्रहण करना चाहिये। ऐसा करके देखने पर अन्तरसम्बन्धी अन्तिम स्थितिमे निक्षिप्त हुए द्रव्यसे द्वितीय स्थितिकी आदि स्थितिमे निक्षिप्त हुआ प्रदेशपुज सख्यातगुणा हीन होता है ऐसा निश्चय करना चाहिये।

अंतरपढमठिदि त्ति य असंखगुणिदक्कमेण दिज्जदि हु ।
हीणं तु मोहविदियट्ठिदिखंडयदो दुघादो त्ति[1] ॥५८९॥

अन्तरप्रथमस्थितिरिति च असंख्यगुणितक्रमेण दीयते हि ।
हीनं तु मोहद्वितीयस्थितिकांडकतो द्विघात इति ॥५८९॥

स० चं०—मोहकी द्वितीय स्थितिकांडकघाततैं लगाय द्विचरम काडकघातपर्यंत कांडककरि गृहीत स्थितितैं नीचै अर उदयावलीतैं उपरि जे निषेक तिनिका द्रव्यकौं अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहाँ एकभागमात्र द्रव्य ग्रहि ताकौं पल्यका असंख्यातवां भागका भाग देइ तहां एक भागकौं पूर्वोक्त प्रकार गुणश्रेणिआयामविषैं प्रथम उदय निषेकविषैं तौ स्तोक अर द्वितीयादि निषेकनिविषैं गुणश्रेणिशीर्षपर्यंत असंख्यातगुणा क्रम लीए दीजिए है। बहुरि अवशेष बहुभाग-मात्र द्रव्यकौं गुणश्रेणितें ऊपरिकी अंतर्मुहूर्तमात्र स्थितिमात्र जो गच्छ ताका भाग देइ तहां एक खंडविषैं एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणमात्र विशेष मिलाए जो होइ तितना गुणश्रेणिशीर्षके ऊपरि जो निषेक तीहिंविषै दीजिए है। सो यहु गुणश्रेणिशीर्षविषैं दीया द्रव्यतैं असंख्यातगुणा है। ऐसैं अंतरका प्रथम निषेकपर्यंत तौ असंख्यातगुणा क्रमकरि द्रव्य दीजिए है। बहुरि ताके ऊपरि एक एक विशेष घटता क्रमलीए द्रव्य दीजिए है। सो यावत् अतिस्थापनावली प्राप्त होइ तावत् ऐसा जानना। यहाँ प्रथम स्थितिकांडककालका अंत समयविषैं ही अन्तर है सो पूरण भया तातैं अन्तरायामविषैं जुदा द्रव्य देनेका विधान कह्या।

बहुरि सर्वस्थिति कांडकनिविषैं अंत फालिपर्यंत जो अपकृष्ट द्रव्य है सो तौ सकल द्रव्यकै असंख्यातवैं भागमात्र जानना। बहुरि अन्त फालिका पतन समयविषैं कांडकस्थितितैं आयाम जो फालिद्रव्य है सो सर्व द्रव्यके संख्यातवैं भागमात्र जानना ॥५८९॥

अंतरपढमठिदि त्ति य असंखगुणिदक्कमेण दिस्सदि हु ।
हीणं तु मोहविदियट्ठिदिखंडयदो दुघादो त्ति[2] ॥५९०॥

अंतरप्रथमस्थितिरिति च असंख्यगुणितक्रमेण दृश्यते हि ।
हीनं तु मोहद्वितीयस्थितिकांडकतो द्विघातातम् ॥५९०॥

स० चं०—मोहका द्वितीय स्थितिकांडकघाततैं लगाय द्विचरम कांडकघातपर्यंत दृश्यमान द्रव्य गुणश्रेणिका प्रथम निषेकविषैं स्तोक है, तातैं गुणश्रेणिशीर्षके ऊपरि जो अंतरायामका प्रथम निषेक तहांपर्यन्त असंख्यातगुणा क्रम लीए है। ताके ऊपरि अंत निषेकपर्यंत विशेष घटता क्रम लीए दृश्यमान द्रव्य है, जातैं प्रथम कांडककी अन्त फालिका पतन समयविषैं गुणश्रेणितैं उपरि सर्व स्थितिका एक गोपुच्छ हो है ॥५९०॥

१ विदियादो ट्ठिदिखंडयादो ओकड्डिदूण पदेसग्गमुदये दिज्जदि तं थोवं। तदो दिज्जदि असंखेज्ज-सेढीए ताव जाव गुणसेढीसीसयादो उवरिमाणंतरा एक्का ट्ठिदि त्ति। तत्तो असंखेज्जगुणं। तत्तो विसेसहीणं। एस कमो ताव जाव सुहुमसांपराइस्स पढमट्ठिदिखंडय चरिमसमयअणिल्लेविद त्ति। क० चु० पृ० ८७०–८७१।

२ पढमे ट्ठिदिखंडए णिल्लेविदे उदये पदेसग्गं दिस्सदि थोवं। विदियाए ट्ठिदीए असंखेज्जगुणं। पृ० ८७१।

पढमगुणसेढिसीस पुव्विल्लादो असखसगुणिय ।
उवरिमसमये दिस्स विसेसअहिय हवे सीसे[1] ॥५९१॥

प्रथमगुणश्रेणिशीर्ष पूर्वस्मात् असंख्यसगुणित ।
उपरिमसमये दृश्य विशेषाधिक भवेत् शीर्षे ॥ ५९१ ॥

स० च०—प्रथम समयविषै जो गुणश्रेणिशीर्ष है सोई गाथाका अर्थकी जायगा चाहिए ॥५९१॥

इसप्रकार प्रथम गुणश्रेणिशीर्ष तक जानना चाहिये। गुणश्रेणिशीर्षके ऊपर पूर्वके द्रव्यसे उपरिम समयमे असख्यातगुणा दृश्य द्रव्य है। आगे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके प्राप्त होने तक विशेषहीन प्रदेशपुज दिखाई देता है ॥ ५९१ ॥

सुहुमद्धादो अहिया गुणसेढी अतर तु तत्तो दु ।
पढमे खड पढमे संतो मोहस्स सखगुणिदकमा[2] ॥ ५९२ ॥

सूक्ष्माद्धातः, अधिका गुणश्रेणी अतर तु ततस्तु ।
प्रथम खडं प्रथमे सत्त्व माहस्य संख्यगुणितक्रम ॥ ५९२ ॥

स० च०—अतर्मुहूर्तमात्र जो सूक्ष्मसापरायका काल तातै ताहीका असख्यातवा भाग करि अधिक सूक्ष्मसापरायका प्रथम समयविषैं मोहकी गुणश्रेणिका आयाम है। तातै अतरायाम सख्यातगुणा है। तातै सूक्ष्मसापरायके मोहका प्रथम स्थितिकाडक आयाम सख्यातगुणा है तातै सूक्ष्मसापरायका प्रथम समयविषै मोहका स्थितिसत्त्व सख्यातगुणा है ॥ ५९२ ॥

एदेणप्पाबहुगविधाणेण विदीयखडयादीसु ।
गुणसेढिमुज्झियेया गोपुच्छा होदि सुहुमम्हि ॥ ५९३ ॥

एतेनाल्पबहुकविधानेन द्वितीयकाडकादिषु ।
गुणश्रेणिमुज्झित्वा एकं गोपुच्छ भवति सूक्ष्मे ॥ ५९३ ॥

स० च०—इस अल्पबहुत्व विधानकरि सूक्ष्मसापरायविषैं द्वितीय स्थितिकाडकनिका कालविषै गुणश्रेणिकौ छोडि ताके उपरिवर्ती सर्व स्थितिका एक गोपुच्छ हो है। कैसै ? सो कहिए है—

इहा अतरायामतै प्रथम स्थितिकाडकायाम सख्यातगुणा कह्या। तातै प्रथम स्थिति काडककी जो अन्त फालि ताका द्रव्यविषै अतरायामविषै देनेयोग्य गोपुच्छरूप द्रव्यकौ अतरायाम-विषै देइ द्वितीय स्थितिकै अर इस अतरायामकै एक गोपुच्छ कीया जो प्रथम स्थितिकाडक आयामतै अतरायाम बहुत होता तो तहा अन्तरायाम पूर्ण न होता, तब अन्तर स्थितिकै अर द्वितीय स्थितिकै एक गोपुच्छ न होता। सो इहा अन्तरायामतैं प्रथम स्थितिकाडकायाम बहुत

---

१ एव ताव जाव गुणसेडिसीसय। गुणसेढिसीसयादो अण्णा च एक्का ठिदि त्ति असखेज्जगुण दिस्सदि। तत्तो विसेसहीण जाव उक्कस्सिया मोहणीय ठिदि त्ति। क० चु० पृ० ८७१।

२ सव्वत्थोवा सुहुमसापराइयद्धा। पढमसमयसुहुमसापराइयस्स मोहणीयस्स गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ। अतरट्ठिदीओ सखेज्जगुणाओ। सुहुमसापराइयस्स पढमट्ठिदिखडय मोहणीये सखेज्जगुण। पढमसमयसुहुमसापराइयस्स मोहणीयस्स ठिदिसतकम्म सखेज्जगुण। क० चु० पृ० ८७१।

३ जयध० ता० मु० पृ० २२१५।

अंतरपढमठिदि त्ति य असंखगुणिदक्कमेण दिज्जदि हु ।
हीणं तु मोहविदियट्ठिदिखंडयदो दुघादो त्ति[1] ॥५८९॥

अन्तरप्रथमस्थितिरिति च असंख्यगुणितक्रमेण दीयते हि ।
हीन तु मोहद्वितीयस्थितिकांडकतो द्विघात इति ॥५८९॥

स० च०—मोहकी द्वितीय स्थितिकांडकघाततैं लगाय द्विचरम् कांडकघातपर्यंत कांडककरि गृहीत स्थितितैं नीचें अर उदयावलीतैं उपरि जे निषेक तिनिका द्रव्यकौं अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहाँ एकभागमात्र द्रव्य ग्रहि ताकौं पल्यका असंख्यातवां भागका भाग देइ तहां एक भागकौं पूर्वोक्त प्रकार गुणश्रेणिआयामविषैं प्रथम उदय निषेकविषैं तौ स्तोक अर द्वितीयादि निषेकनिविषैं गुणश्रेणिशीर्षपर्यंत असंख्यातगुणा क्रम लीए दीजिए है। बहुरि अवशेष बहुभागमात्र द्रव्यकौं गुणश्रेणितैं ऊपरिकी अंतर्मुहूर्तमात्र स्थितिमात्र जो गच्छ ताका भाग देइ तहां एक खंडविषैं एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणमात्र विशेष मिलाए जो होइ तितना गुणश्रेणिशीर्षके ऊपरि जो निषेक तीहिंविषें दीजिए है। सो यहु गुणश्रेणिशीर्षविषैं दीया द्रव्यतैं असंख्यातगुणा है। ऐसैं अंतरका प्रथम निषेकपर्यंत तौं असंख्यातगुणा क्रमकरि द्रव्य दीजिए है। बहुरि ताके ऊपरि एक एक विशेष घटता क्रमलीए द्रव्य दीजिए है। सो यावत् अतिस्थापनावली प्राप्त होइ तावत् ऐसा जानना। यहाँ प्रथम स्थितिकांडककालका अंत समयविषैं ही अन्तर है सो पूरण भया तातैं अन्तरायामविषैं जुदा द्रव्य देनेका विधान कह्या।

बहुरि सर्वस्थिति कांडकनिविषैं अंत फालिपर्यंत जो अपकृष्ट द्रव्य है सो तौ सकल द्रव्यके असंख्यातवैं भागमात्र जानना। बहुरि अन्त फालिका पतन समयविषैं कांडकस्थितितैं आयाम जो फालिद्रव्य है सो सर्व द्रव्यके संख्यातवैं भागमात्र जानना ॥५८९॥

अंतरपढमठिदि त्ति य असंखगुणिदक्कमेण दिस्सदि हु ।
हीणं तु मोहविदियट्ठिदिखंडयदो दुघादो त्ति[2] ॥५९०॥

अंतरप्रथमस्थितिरिति च असंख्यगुणितक्रमेण दृश्यते हि ।
हीन तु मोहद्वितीयस्थितिकांडकतो द्विघातातम् ॥५९०॥

स० च०—मोहका द्वितीय स्थितिकांडकघाततैं लगाय द्विचरम कांडकघातपर्यंत दृश्यमान द्रव्य गुणश्रेणिका प्रथम निषेकविषैं स्तोक है, तातैं गुणश्रेणिशीर्षके ऊपरि जो अंतरायामका प्रथम निषेक तहांपर्यन्त असंख्यातगुणा क्रम लीए है। ताके ऊपरि अंत निषेकपर्यंत विशेष घटता क्रम लीए दृश्यमान द्रव्य है, जातैं प्रथम कांडककी अन्त फालिका पतन समयविषैं गुणश्रेणितैं उपरि सर्व स्थितिका एक गोपुच्छ हो है ॥५९०॥

१ विदियादो ट्ठिदिखंडयादो ओकड्डिदूण पदेसग्गमुदये दिज्जदि तं थोवं। तदो दिज्जदि असंखेज्जसेढीए ताव जाव गुणसेढीसीसयादो उवरिमाणंतरा एक्का ट्ठिदि त्ति। तत्तो असंखेज्जगुणं। तत्तो विसेसहीणं। एस कमो ताव जाव सुहुमसांपराइस्स पढमट्ठिदिखंडय चरिमसमयअणिल्लेविद त्ति। क० चु० पृ० ८७०–८७१।

२ पढमे ट्ठिदिखंडए णिल्लेविदे उदये पदेसग्गं दिस्सदि थोवं। विदियाए ट्ठिदीए असंखेज्जगुणं। पृ० ८७१।

पढमगुणसेढिसीसं पुव्विल्लादो असंखसगुणियं ।
उवरिमसमये दिस्सं विसेसअहियं हवे सीसे[१] ॥५९१॥

प्रथमगुणश्रेणिशीर्षं पूर्वस्मात् असंख्यसगुणित ।
उपरिमसमये दृश्यं विशेषाधिक भवेत् शीर्षे ॥ ५९१ ॥

स० च०—प्रथम समयविषै जो गुणश्रेणिशीर्ष है सोई गाथाका अर्थकी जायगा चाहिए ॥५९१॥

इसप्रकार प्रथम गुणश्रेणिशीर्ष तक जानना चाहिये। गुणश्रेणिशीर्षके ऊपर पूर्वके द्रव्यसे उपरिम समयमे असख्यातगुणा दृश्य द्रव्य है। आगे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके प्राप्त होने तक विशेषहीन प्रदेशपुज दिखाई देता है ॥ ५९१ ॥

सुहुमद्धादो अहिया गुणसेढी अंतरं तु तत्तो दु ।
पढमे खंड पढमे संतो मोहस्स संखगुणिदकमा[२] ॥ ५९२ ॥

सूक्ष्माद्धातः, अधिका गुणश्रेणी अंतर तु ततस्तु ।
प्रथम खंड प्रथमे सत्त्व मोहस्य संख्यगुणितक्रम ॥ ५९२ ॥

स० च०—अंतर्मुहूर्तमात्र जो सूक्ष्मसापरायका काल तातै ताहीका असख्यातवा भाग करि अधिक सूक्ष्मसापरायका प्रथम समयविषै मोहकी गुणश्रेणिका आयाम है। तातै अतरायाम सख्यातगुणा है। तातै सूक्ष्मसापरायके मोहका प्रथम स्थितिकाडक आयाम सख्यातगुणा है तातै सूक्ष्मसापरायका प्रथम समयविषै मोहका स्थितिसत्त्व सख्यातगुणा है ॥ ५९२ ॥

एदेणप्पाबहुगविधाणेण विदीयखंडयादीसु ।
गुणसेढिमुज्झियेया गोपुच्छा होदि सुहुमम्हि ॥ ५९३ ॥

एतेनाल्पबहुकविधानेन द्वितीयकाडकादिषु ।
गुणश्रेणिमुज्झित्वा एकं गोपुच्छ भवति सूक्ष्मे ॥ ५९३ ॥

स० च०—इस अल्पबहुत्व विधानकरि सूक्ष्मसापरायविषै द्वितीय स्थितिकाडकनिका कालविषै गुणश्रेणिकौ छोडि ताके उपरिवर्ती सर्व स्थितिका एक गोपुच्छ हो है। कैसे ? सो कहिए है—

इहा अतरायामतै प्रथम स्थितिकाडकायाम सख्यातगुणा कह्या। तातै प्रथम स्थिति काडककी जो अन्त फालि ताका द्रव्यविषै अतरायामविषै देनेयोग्य गोपुच्छरूप द्रव्यकौ अतरायाम-विषै देइ द्वितीय स्थितिकै अर इस अतरायामकै एक गोपुच्छ कीया जो प्रथम स्थितिकाडक आयामतै अतरायाम बहुत होता तो तहा अन्तरायाम पूर्ण न होता, तब अन्तर स्थितिकै अर द्वितीय स्थितिकै एक गोपुच्छ न होता। सो इहा अन्तरायामतैं प्रथम स्थितिकाडकायाम वहुत

---

१ एव तात्र जाव गुणसेडिसीसय। गुणसेढिसीसयादो अण्णा च एक्का ठिदि त्ति असखेज्जगुण दिस्सदि। तत्तो विसेसहीण जाव उक्कस्सिया मोहणीय ठिदि त्ति। क० चु० पृ० ८७१।

२ सव्वत्थोवा सुहुमसापराइयद्धा। पढमसमयसुहुमसापराइयस्स मोहणीयस्स गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ। अतरट्ठिदीओ सखेज्जगुणाओ। सुहुमसापराइयस्स पढमट्ठिदिखडय मोहणीये सखेज्जगुण। पढमसमयसुहुमसापराइयस्स मोहणीयस्स ठिदिसतकम्म सखेज्जगुण। क० चु० पृ० ८७१।

३ जयध० ता० मु० पृ० २२१५।

कह्या, तातै अन्तरायामकै अर द्वितीय स्थितिकै एक गोपुच्छ प्रथम स्थितिकाडकी अन्त फालिका पतन समयविषै ही भया । जहा विशेष घटता क्रम लीए होइ तहा गोपुच्छ सज्ञा है ॥ ५९३ ॥

सुहुमाण किट्टीण हेट्ठा अणुदिण्णगा हु थोवाओ ।
उवरिं तु विसेसहिया मज्झे उदया असखगुणा[1] ॥५९४॥

सूक्ष्माणा कृष्टीनामधस्तना अनुदीर्णका हि स्तोका ।
ऊपरि तु विशेषाधिका मध्ये उदया असख्यगुणा. ॥ ५९४ ॥

स० च०—सूक्ष्मसापरायविषै जे सूक्ष्म कृष्टि हैं तिनिविषै जे जघन्य कृष्टि आदि नीचैकी कृष्टि उदयरूप न हो है । तिनिका प्रमाण स्तोक है । बहुरि यातै याहीकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए तहा एक भागमात्र करि अधिक जे अन्त कृष्टितै लगाय ऊपरली कृष्टि उदयरूप न होइ तिनिका प्रमाण है । बहुरि यातै पल्यका असख्यातवा भागगुणा जे वीचिका कृष्टि उदयरूप हो है तिनिका प्रमाण है । इहा सर्व सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रमाणकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए बहुभागमात्र वीचिकी उदय कृष्टिनिका प्रमाण है । एक भागकौं अक सदृष्टि अपेक्षा पाचका भाग दीए दोय भागमात्र नीचली, तीन भागमात्र ऊपरली अनुदय कृष्टिनिका प्रमाण है । तहा जे अनुदयरूप कृष्टि कही ते वीचिकी कृष्टिरूप परिणमि उदय हो हैं ऐसा जानना ॥ ५९४ ॥

विशेष—इस गाथाका खुलासा टीकामे किया ही है । विशेष इतना है कि द्वितीयादि समयोमे भी प्रथम समयके समान कथन करना चाहिए । तथा द्वितीयादि समयोमे नीचे असख्यातवे भागप्रमाण अन्य अपूर्व कृष्टियोकी भी रचना करता है । यह विधि सूक्ष्मसापरायके अन्तिम समय तक जाननी चाहिये ।

सुहुमे सखसहस्से खडे तीदेऽवसाणखडेण ।
आगायदि गुणसेढी अग्गादो सखभागे च[2] ॥ ५९५ ॥

सूक्ष्मे सख्यसहस्रे खडेऽतीतेऽवसानखडेन ।
आगाप्यते गुणश्रेणी अग्रत. सख्यभागे च ॥ ५९५ ॥

स० च०—पूर्वोक्त क्रमकरि सूक्ष्मसापरायविषैं ताका कालका सख्यात बहुभाग गए सख्यातवा भाग अवशेष रहैं सख्यात हजार स्थितिकाडक व्यतीत होतै अवसान खड जो अन्तका स्थितिकाडक ताकरि पूर्व गुणश्रेणि आयामके सख्यातवे भागमात्र आयामविषै गुणश्रेणि करै है। इहातै पहलै सर्व सूक्ष्मसापराय कालतैं साधिक अवस्थित गुणश्रेणि आयाम था अब जेता अवशेष सूक्ष्मसापरायका काल रह्या तितना गुणश्रेणिआयाम जानना ॥ ५९५ ॥

---

१ हेट्ठा अणुदिण्णाओ थोवाओ । उवरि अणुदिण्णाओ विसेसाहियाओ । मज्झे उदिण्णाओ सुहुमसापराइयकिट्टीओ असखेज्जगुणाओ । क० चु० पृ० ८७२ ।

२ सुहुमसापराइयस्स सखेज्जसु ठिदिखडयसहस्सेसु गदेसु जमपच्छिम ठिदिखडय मोहणीयस्स तम्हि ठिदिखडये उक्कीरमाणे जो मोहणीयस्स गुणसेढिणिक्खेवस्स अग्गग्गादो सखेज्जदिभागो आगाइदो ८७२ ।

विशेष—जब मोहनीयके सख्यात हजार स्थितिकाडकोका घात करके अन्तिम स्थितिकाडकके घातका समय प्राप्त हो तब जो गुणश्रेणिनिक्षेपणका काल सूक्ष्मसापरायके कालसे विशेप अधिक कहा था उस गुणश्रेणिनिक्षेपके अग्र भागको ग्रहण कर और उसे सूक्ष्मसापरायके कालके बरावर करता हुआ उस सबको अन्तिम काण्डकके बरावर करता है। केवल इतना ही नही करता, किन्तु जो सूक्ष्मसापरायके कालसे मोहनीयकी अधिक स्थितियाँ है जो कि गुणश्रेणिशीर्पसे सख्यातगुणी हैं उन्हे भी अन्तिम स्थितिकाण्डकरूपसे ग्रहण करता है, क्योकि उनके विना गुणश्रेणिशीर्पका ग्रहण करना सम्भव नही है। तात्पर्य यह है कि गुणश्रेणिशीर्प और उससे सख्यातगुणी स्थितियोको अन्तिम स्थितिकाण्डकके बराबर करता है। निक्षेपसम्वन्धी शेष कथन जयधवलासे जान लेना चाहिये।

एत्तो सुहुमंतो त्ति य दिज्जस्स य दिस्समाणगस्स कमो।
सम्मत्तचरिमखंडे तक्कदकज्जे वि उत्त व[1] ॥ ५९६ ॥

इत सूक्ष्मात इति च देयस्य च दृश्यमानस्य क्रम ।
सम्यक्त्वचरमखडे तत्कृतकार्येऽपि उक्तमिव ॥ ५९६ ॥

स० च०—इहातै लगाय सूक्ष्मसापरायका अन्तपर्यन्त देय द्रव्य अर दृश्यमान द्रव्यका क्रम है। जैसै क्षायिक सम्यक्त्व विधानविषै सम्यक्त्व मोहनीयका अन्त स्थितिकाडकविषै वा ताका कृतकृत्यपनाविषै कह्या था तैसै ही जानना। सो कहिए है—

इहा सर्व मोहकी स्थितिविषै सूक्ष्मसापरायका जितना काल अवशेष रह्या तितनी स्थिति बिना अवशेष सर्व स्थितिका घात अन्त काडककरि कीजिए है। तहा इस काडककी स्थितिके निषेकनिका द्रव्यविषै जो द्रव्य अन्त काडकोत्करण कालका प्रथम समयविषै ग्रह्या ताकौ प्रथम काल कहिए है। ताके देनेका विधान कहिए है—

प्रथम फालिद्रव्यकौं अपकर्षणकरि ताकौ पल्यका असंख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभागमात्र द्रव्यकौ इहा सम्बन्धी सूक्ष्मसापराय कालका अन्त समयपर्यन्त तौ गुणश्रेणिआयाम-रूप प्रथम पर्व तिसविषै दीजिए है, तहा तिसके उदयरूप प्रथम निषेकविषै स्तोक, तातै द्वितीयादि निषेकनिविषै असख्यातगुणा क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। तहा सर्व गुणकार शलाकाके जोडका भाग तिस द्रव्यकौ देइ अपनी अपनी गुणकार शलाकाकरि गुणै निषेकनिविषै द्रव्य देनेका प्रमाण आवै है। इहा सूक्ष्मसापरायका जो अन्त समय ताका नाम गुणश्रेणिशीर्ष है। बहुरि अवशेष एक भागमात्र जो द्रव्य ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभागमात्र द्रव्यकौ तिस गुणश्रेणिशीर्षतै ऊपरि पहलें जो गुणश्रेणिआयाम था ताका शीर्षपर्यन्त जो द्वितीय पर्व तिसविषै दीजिए है। तहा तिस द्रव्यकौ द्वितीय पर्वमात्र गच्छका भाग देइ तहा एक भागविषै एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणमात्र विशेष जोडै गुणश्रेणिशीर्षके अनतरि जो निषेक तीर्हिविषै दीया द्रव्यका प्रमाण आवै है। सो यहु गुणश्रेणिशीर्षविषैं दीया द्रव्यतैं असख्यातगुणा घाटि है, ताके ऊपरि ताके द्वितीयादि निषेकनिविषै चय घटता क्रमलीए द्रव्य दीजिए है। बहुरि अवशेष

1 जयध० ता० मु० पृ० २२१८।

एक भागमात्र द्रव्य रह्या ताकौ द्वितीय पर्वके ऊपरि जो सर्व स्थिति ताका अन्तविषै अतिस्थापनावलो छोडि सर्व निषेकरूप जो तृतीय पर्व तिसविषै दीजिए है। तहा तिस द्रव्यकौ तृतीय पर्वमात्र गच्छका भाग देइ तहा एक भागविषै एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणमात्र विशेष जोडै जो होइ तितना द्रव्य पुरातन गुणश्रेणिका शीर्षके अनतरिवर्त्ती जो निषेक तिसविषै दीजिए है। सो यहु पुरातन गुणश्रेणिशीर्षविषैं दोया द्रव्यतै असख्यातगुणा घाटि है। बहुरि ताके ऊपरि चय घटता क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। ऐसै अन्त काडककी प्रथम फालि पतन समयविषै द्रव्य देनेका विधान कह्या। याही प्रकार अन्त काडककी द्विचरम फालि पतनपर्यन्त द्रव्य देनेका विधान जानना। बहुरि अन्त काडककी अन्त फालिके द्रव्य देनेका विधान कहिए है—

किंचिदून द्वयर्ध गुणहानिगुणित समयप्रवद्धमात्र अन्त फालिका द्रव्य है। ताकौ असख्यातगुणा पल्यका वर्गमूलमात्र पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा एक भागमात्र द्रव्यकौ वर्तमान उदयरूप जो समय तातै लगाय सूक्ष्मसापरायका द्विचरम समयपर्यन्त जो प्रथम पूर्व तिस विषै दीजिए है। तहा प्रथम निषेकविषैं स्तोक, द्वितीयादि निषेकनिविषै असख्यातगुणा क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। तहा सर्व गुणकार शलाकानिके जोडका द्रव्यकौ देइ अपनी अपनी गुणकार शलाकाकरि गुणै निषेकनिविषै देने योग्य द्रव्यका प्रमाण आवै है। बहुरि अवशेष बहुभागमात्र द्रव्यका सूक्ष्मसापरायका अन्त समयसम्बन्धी निषेकरूप जो द्वितीय पर्व तिसविषै दीजिए है। यहु द्विचरम विषै दीया द्रव्यतै असख्यात पल्य वर्गमूलकरि गुणित जानना। ऐसै देय द्रव्यका विधान कह्या। दृश्यमान द्रव्यका विधान भी यथासभव जानना ॥ ५९६ ॥

उक्किण्णे अवसाणे खडे मोहस्स णत्थि ठिदिघादो।
ठिदिसत्त मोहस्स य सुहुमद्धासेसपरिमाणं ॥५९७॥[1]

उत्कीर्णेऽवसाने खडे मोहस्य नास्ति स्थितिघात·।
स्थितिसत्त्वं मोहस्य च सूक्ष्माद्धाशेषपरिमाण ॥५९७॥

स० च०—या प्रकार मोह राजाका मस्तक समान जो लोभका अत काडक ताका घात करते सतै अब मोहका स्थितिघात न हो है। अब सूक्ष्मसापरायका जेता काल अवशेष रह्या तितना ही मोहका स्थितिसत्त्व रह्या है सो अनुसमयापवर्तमान सूक्ष्म कृष्टिरूप अनुभागकौ प्राप्त हो है, ताके एक एक निषेककौ एक एक समयविषै भोगवता सता सूक्ष्मसापरायका अत समयकौ प्राप्त हो है ॥५९७॥

णामदुगे वेयणीये अड-वारमुहुत्तय तिघादीणं।
अंतोमुहुत्तमेत्तं ठिदिबंधो चरिम सुहमम्हि[2] ॥५९८॥

---

१ तम्हि ठिदिखडए उक्किणे तदो प्पहुडि मोहणीयस्स णत्थि ठिदिघादो। जत्तिय सुहुमसापराइयद्धाए सेस तत्तिय मोहणीयस्स ठिदिसतकम्म सेस। क० चु०, पृ० ८७२।

२ जावे चरिमसमयसुहुमसापराइयो जादो तावे णामा-गोदाण ट्ठिदि बधो अट्ठमुहुत्ता। वेदणीयस्स ठिदिबधो बारस मुहुत्ता। तिण्हं घादिकम्माण ठिदिबधो अतोमुहुत्त। क० चु०, पृ० ८९४।

नामद्विके वेदनीये अष्टद्वादशमुहूर्तक त्रिघातिनाम् ।
अंतर्मुहूर्तमात्र स्थितिबंध. चरमे सूक्ष्मे ॥५९८॥

स० च०—तहा सूक्ष्मसापरायका अत समयविपै नाम गोत्रका आठ मुहूर्त, वेदनीयका बारह मुहूर्त, तीन घातियानिका अतर्मुहूर्तमात्र जघन्य स्थितिबध हो है ॥५९८॥

तिण्ह घादीण ठिदिसतो अतोमुहुत्तमेत्त तु ।
तिण्हमघादीणं ठिदिसतमसखेज्जवस्साणि[1] ॥५९९॥

त्रयाणा घातिना स्थितिसत्त्वमतर्मुहूमात्र तु ।
त्रयाणामघातिना स्थितिसत्त्वमसख्येयवर्षा ॥५९९॥

स० च०—तहा ही तीन घातियानिका स्थितिसत्त्व अतर्मुहूर्तमात्र है, सो क्षीण कषायके कालतै सख्यातगुणा है। बहुरि तीन अघातियानिका स्थितिसत्त्व असख्यात वर्षमात्र है। मोहका स्थितिसत्त्व क्षयकौ सन्मुख है। द्रव्यार्थिक नयकरि इस समयविपै विद्यमान है। तथापि नष्ट ही भया जानना। ऐसै क्षयकौ सन्मुख जो लोभकी सग्रह कृष्टि ताकौ अनुभवे है। ऐसा पाचवाँ सूक्ष्मसापराय चारित्रकरि सयुक्त सूक्ष्मसापराय गुणस्थानवर्ती जीव जानना ॥५९९॥

ऐसै कृष्टिवेदना अधिकार समाप्त भया।

से काले सो खीणकसाओ ठिदिरसगबंधपरिहीणो ।
सम्मत्तडवस्स वा गुणसेढी दिज्ज दिस्स च[2] ॥६००॥

स्वे काले स क्षीणकषाय. स्थितिरसगबंधपरिहीण ।
सम्यक्त्वाष्टवर्षमिव गुणश्रेणी देयं दृश्यं च ॥६००॥

स च०—समस्त चारित्रमोहका क्षयके अनतरि अपने कालविषै सो जीव क्षीण भए है द्रव्य-भावरूप समस्त कषाय जाकै ऐसा क्षीणकषाय हो है, सो स्थिति अनुभाग बधरहित है। योग निमित्ततैं प्रकृति प्रदेशबध याकै साता वेदनीयका सभवे है सो ईर्यापथ बन्ध है। प्रथम समयविपैं बधि अनतर समयविषै निर्जरै है। बहुरि जैसैं क्षायिक सम्यक्त्वका विधान विपैं सम्यक्त्व मोहनीकी आठ वर्षकी स्थिति अवशेष रहैं कथन कीया था तैसे इहा गुणश्रेणि वा देय द्रव्य वा दृश्यमान द्रव्यका जानना। सो कहिए है—

छह कर्मनिका प्रदेशसमूहकौं अपकर्षणकरि ताकौं पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा एक भागकौं गुणश्रेणि आयामविषै दीजिए है। ताका प्रमाण क्षीणकषायके काल तै ताहीका सख्यातवा भागमात्र अधिक है। तहा पूर्वोक्त क्रमकरि उदयरूप प्रथम निषेकविषै स्तोक द्वितीयादि गुणश्रेणिशीर्षपर्यंत निषेकनिविषै असख्यातगुणा क्रम लीए दीजिए है। बहुरि अवशेष बहुभाग-मात्र द्रव्यकौ गुणश्रेणिशीर्षके ऊपरि जो अतिस्थापनावली रहित अवशेष स्थिति तीहि प्रमाण

---

१ तिण्ह घादिकम्माण ट्ठिदिसतकम्म अतोमुहुत्त। णामा-गोद-वेदणीयाण ट्ठिदिसतकम्ममसखेज्जाणि मोहणीयस्स ट्ठिदिसतकम्म णस्सदि। क० चु०, पृ० ८९४।

२ तदो से काले पढमसमयखीणकसायो जादो। ताधे चेव ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसस्स अवधगो। क चु पृ ८९४।

इहा गच्छ ताकौ एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणकरि हीन जो दोगुणहानिकरि गुणी ताका भाग दीए तहा एक खडकौ दोगुणहानिकरि गुणै जो होइ तितना द्रव्य गुणश्रेणिशीर्षके अनतरवर्ती निषेकविषै दीजिए है, सो यहु गुणश्रेणिशीर्षविषै दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा है। बहुरि ताके ऊपरि विशेष घटता क्रम लीए द्रव्य दीजिए है, सो यावत् अतिस्थापनावली न प्राप्त होइ तावत् ऐसा क्रम जानना। बहुरि सूक्ष्मसापरायका अत समयविषै अपकर्षण कीया द्रव्यतै इहा अपकर्षण कीया द्रव्य असख्यातगुणा जानना, जातै सकषाय परिणामसबधी गुणश्रेणिनिर्जरातै निष्कषाय गुणश्रेणि निर्जराकै असख्यातगुणापना सभवै है। बहुरि इहा क्षीणकषायके प्रथमादि समयनिविषै अपकर्षण किया द्रव्यका प्रमाण समानरूप है, जातै इहा विशुद्धता प्रमाण समान पाइए है। बहुरि इहा दीयमान वा दृश्यमान द्रव्यका अन्य विशेष निरूपण जैसै सम्यक्त्व मोहनीकी क्षपणाविषैं कीया था तैसैं इहा तीन घातिया कर्मनिका जानना। इहा ऐसा जानना—क्षीणकषायका प्रथम समयतै लगाय अतर्मुहूर्तपर्यंत तौ पहला पृथक्त्व वितर्क वीचार नामा शुक्लध्यान वर्तै है। अर क्षीणकषाय कालका सख्यातवा भाग अवशेष रहै एकत्ववितर्क अवीचार नामा दूसरा शुक्ल ध्यान वर्तै है ॥६००॥

विशेष—द्रव्य-भावरूप सम्पूर्ण मोहनीयका क्षय होनेके बाद क्षीणकषायके प्रथम समयसे ही यह जीव सभी कर्मोके स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोका अबन्धक हो जाता है, क्योकि स्थिति आदि-के बन्धका कारण कषायका वहाँ अत्यन्त अभाव है। परन्तु प्रकृतिबन्ध योगनिमित्तक होता है, इसलिये यहाँ उसका निषेध नही किया है। वह भी केवल वेदनीय कर्ममे सातावेदनीयका ही होता है, अन्यका नही, जो शुष्क दीवाल पर फेकी गई धूलके समान होने से बन्धके दूसरे समयमे ही गल जाता है। यह ईर्यापथ बन्ध है। इसके लिए वर्गणा खण्डको देखना चाहिये। वहाँ ईर्यापथका विशेष लक्षण दिया है। पूर्वमे जितनी भी गुणश्रेणिनिर्जराएँ कही हैं उन सबसे यहाँ होनेवाली गुणश्रेणिनिर्जरा असख्यातगुणी है, क्योकि यहाँ सकषाय परिणामका अभाव होनेसे पूर्वकी गुण-श्रेणि निर्जराओसे इसके असख्यातगुणी होने मे कोई बाधा नही आती।

घादीण मुहुत्तंत अघादियाण असखगा भागा।
ठिदिखड रसखडो अणतभागा असत्थाण[1] ॥६०१॥

घातिना मुहूर्तान्तमघातिकानामसख्यका भागा.।
स्थितिखड रसखड अनतभागा अशस्तानाम् ॥६०१॥

स० च०—इहा क्षीणकषायविषै तीन घातियानिका तौ अतर्मुहूर्तमात्र अर तीन अघातिया-निका पूर्व सत्त्वका असख्यात बहुभागमात्र स्थितिकाडकआयाम है। बहुरि अप्रशस्त प्रकृतिनिका पूर्व अनुभागकौ अनतका भाग दीए तहा बहुभागमात्र अनुभाग काडकआयाम है ॥६०१॥

बहुठिदिखडे तीदे सखा भागा गदा तदद्धाए।
चरिम खड गिण्हदि लोभ वा तत्थ दिज्जादि[2] ॥६०२॥

---

१ जयध० ता० मु०, पृ० २२६५।
२ जयध० ता० मु०, पृ० २२६५।

वहुस्थितिखडेऽतीते संख्यभागा गतास्तदद्धाया- ।
चरम खड गृह्णाति लोभ इव तत्र देयादि ॥ ६०२ ॥

स० च०—पूर्वोक्त प्रकार क्रम लीए सख्यात हजार स्थितिकाडक व्यतीय भए क्षीणकषाय कालको सख्यातका भाग देतै तहा बहुभाग गए एक भाग अवशेष रह्या तव तीन घातियानिका अन्त काडकको ग्रहण करै है। तहा देयादिक द्रव्यका विधान सूक्ष्म लोभविषै कह्या था तैसै जानना। सो कहिए है—

इहा क्षीणकषायका काल जितना अवशेष रह्या तीहिं विना तीन घातियानिकी अवशेष रही सर्व स्थितिको अन्त काडककरि घातै है। क्षीणकषायसवधी गुणश्रेणितै लगाय ताके नीचला क्षीणकषाय कालका सख्यातवा भागमात्र निषेक अर तातै सख्यातगुणा गुणश्रेणिशीर्षके उपरिवर्ती निषेकनिको ग्रहि अन्त काडककरि लाछित करै है ऐसा जानना। ताके द्रव्य देनेका विधान जैसै लोभका अन्त काडकविषै कह्या तैसै जानना। बहुरि ऐसै अन्त काडककी प्रथमादिक फालिनिको घातकरि पीछै किंचित् ऊन द्व्यर्धगुणहानिगुणित समयप्रबद्धमात्र जो अन्त फालिका द्रव्य ताको उदय निषेकतै लगाय क्षीणकषायका द्विचरम समयपर्यन्त असख्यातगुणा क्रम लीए अर द्विचरम समयविषै दीया द्रव्यतै असख्यात पल्य वर्गमूलगुणा क्षीणकषायका अन्त समयसवधी निषेकविषै द्रव्य दीजिए है—

चरिमे खडे पदिदे कदकरणिज्जो त्ति भण्णदे एसो ।
तस्स दुचरिमे णिद्दा पयला सत्तुदयवोछिण्णा[1] ॥ ६०३ ॥

चरिमे खडे पतिते कृतकरणीय इति भण्यते एष ।
तस्य द्विचरमे निद्रा प्रचला सत्त्वोदयव्युच्छिन्ना ॥ ६०३ ॥

स० च०—ऐसै अन्त काडकका घात होतै याको कृतकृत्य छद्मस्थ कहिए, जातै याके ऊपरि तीनि घातियानिका स्थितिकाडकघात नाही है। केवल उदयावलीके वाह्य तिष्ठता द्रव्यको उदयावलीविषै प्राप्त करणेरूप उदीरणा ही करै है, सो यावत् अधिक समय आवली अवशेष रहै तहा पर्यन्त वर्तै है। बहुरि ताके ऊपरि एक एक समयविषै एक एक निषेकका क्रमतै उदय ही पाइए है। जातै उदयावलीविषै प्राप्त द्रव्यकी उदीरणा न हो है। बहुरि ऐसै क्षीणकषायका द्विचरम समय प्राप्त भया तब निद्रा प्रचला कर्मका सत्त्व अर उदयका व्युच्छेद भया। इहा शुक्लध्यान होतै भी अव्यक्त निद्रा वा प्रचलाका उदय सभवै था सो भी नाश भया। अब इहा क्षपकश्रेणि चढनेवाले जीव तीन वेदविषैं एक वेद अर च्यारि कषायविषैं एक कषायका उदय सहित श्रेणी चढनेकी अपेक्षा बारह प्रकार है। तहा पूर्वोक्त सर्व प्ररूपणा पुरुषवेद अर क्रोधकषाय सहित श्रेणी चढनेवालेकी जाननी ॥ ६०३ ॥ बहुरि अवशेष ग्यारह प्रकार जीवनिविषै विशेष है सो कहिए है। तहा पुरुषवेद अर मानादिक कषायसहित श्रेणी चढनेवालेकै विशेष है सो कहिए है—

---

१ तदो दुचरिमसमये णिद्दा-पयलाणमुदयसतवोच्छेदो। क० चु०, पृ० ८९४।

इहा गच्छ ताकौ एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणकरि हीन जो दोगुणहानिकरि गुणी ताका भाग दीए तहा एक खडकौ दोगुणहानिकरि गुणै जो होइ तितना द्रव्य गुणश्रेणिशीर्षके अनतरवर्ती निषेकविषै दीजिए है, सो यहु गुणश्रेणिशीर्षविषै दीया द्रव्यतै असख्यातगुणा है। बहुरि ताके ऊपरि विशेष घटता क्रम लीए द्रव्य दीजिए है, सो यावत् अतिस्थापनावली न प्राप्त होइ तावत् ऐसा क्रम जानना। बहुरि सूक्ष्मसापरायका अत समयविषै अपकर्षण कीया द्रव्यतै इहा अपकर्षण कीया द्रव्य असख्यातगुणा जानना, जातै सकषाय परिणामसबधी गुणश्रेणिनिर्जरातै निष्कषाय गुणश्रे णि निर्जराकै असख्यातगुणापना सभवै है। बहुरि इहा क्षीणकषायके प्रथमादि समयनिविषै अपकर्षण किया द्रव्यका प्रमाण समानरूप है, जातै इहा विशुद्धता प्रमाण समान पाइए है। बहुरि इहा दीयमान वा दृश्यमान द्रव्यका अन्य विशेष निरूपण जैसै सम्यक्त्व मोहनीकी क्षपणाविषै कीया था तैसै इहा तीन घातिया कर्मनिका जानना। इहा ऐसा जानना—क्षीणकषायका प्रथम समयतै लगाय अतर्मुहूर्तपर्यंत तौ पहला पृथक्त्व वितर्क वीचार नामा शुक्लध्यान वर्तै है। अर क्षीणकषाय कालका सख्यातवा भाग अवशेष रहैं एकत्ववितर्क अवीचार नामा दूसरा शुक्ल ध्यान वर्तै है ॥६००॥

विशेष—द्रव्य-भावरूप सम्पूर्ण मोहनीयका क्षय होनेके बाद क्षीणकषायके प्रथम समयसे ही यह जीव सभी कर्मोके स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोका अबन्धक हो जाता है, क्योकि स्थिति आदि-के बन्धका कारण कषायका वहाँ अत्यन्त अभाव है। परन्तु प्रकृतिबन्ध योगनिमित्तक होता है, इसलिये यहाँ उसका निषेध नही किया है। वह भी केवल वेदनीय कर्ममे सातावेदनीयका ही होता है, अन्यका नही, जो शुष्क दीवाल पर फेकी गई धूलके समान होने से बन्धके दूसरे समयमे ही गल जाता है। यह ईर्यापथ बन्ध है। इसके लिए वर्गणा खण्डको देखना चाहिये। वहाँ ईर्यापथका विशेष लक्षण दिया है। पूर्वमे जितनी भी गुणश्रेणिनिर्जराएँ कही हैं उन सबसे यहाँ होनेवाली गुणश्रेणिनिर्जरा असख्यातगुणी है, क्योकि यहाँ सकषाय परिणामका अभाव होनेसे पूर्वकी गुण-श्रे णि निर्जराओसे इसके असख्यातगुणी होने मे कोई बाधा नही आती।

घादीण मुहुत्तंत अघादियाण असखगा भागा।
ठिदिखड रसखडो अणतभागा असत्थाण[1] ॥६०१॥

घातिना मुहूर्तान्तमघातिकानामसख्यका भागा.।
स्थितिखड रसखड अनतभागा अशस्तानाम् ॥६०१॥

स० च०—इहा क्षीणकषायविषै तीन घातियानिका तौ अतर्मुहूर्तमात्र अर तीन अघातिया-निका पूर्व सत्त्वका असख्यात बहुभागमात्र स्थितिकाडकआयाम है। बहुरि अप्रशस्त प्रकृतिनिका पूर्व अनुभागकौ अनतका भाग दीए तहा बहुभागमात्र अनुभाग काडकआयाम है ॥६०१॥

वहुठिदिखडे तीदे सखा भागा गदा तदद्धाए।
चरिम खड गिण्हदि लोभ वा तत्थ दिज्जादि[2] ॥६०२॥

---

१ जयध० ता० मु०, पृ० २२६५।
२ जयध० ता० मु०, पृ० २२६५।

बहुस्थितिखंडेऽतीते संख्यभागा गतास्तदद्धायाः।
चरमं खंडं गृह्णाति लोभ इव तत्र देयादि ॥ ६०२ ॥

स० च०—पूर्वोक्त प्रकार क्रम लीए संख्यात हजार स्थितिकांडक व्यतीत भए क्षीणकषाय कालकौं संख्यातका भाग देतैं तहां बहुभाग गए एक भाग अवशेष रह्या तब तीन घातियानिका अन्त कांडककौ ग्रहण करै है। तहां देयादिक द्रव्यका विधान सूक्ष्म लोभविषैं कह्या था तैसैं जानना। सो कहिए है—

इहां क्षीणकषायका काल जितना अवशेष रह्या तीहिं विना तीन घातियानिकी अवशेष रही सर्व स्थितिकौं अन्त कांडककरि घातै है। क्षीणकषायसंबंधी गुणश्रेणितैं लगाय ताके नीचला क्षीणकषाय कालका संख्यातवां भागमात्र निषेक अर तातैं संख्यातगुणा गुणश्रेणिशीर्षके उपरिवर्ती निषेकनिकौं ग्रहि अन्त कांडककरि लांछित करै है ऐसा जानना। ताके द्रव्य देनेका विधान जैसैं लोभका अन्त कांडकविषै कह्या तैसैं जानना। बहुरि ऐसैं अन्त कांडककी प्रथमादिक फालिनिकौं घातकरि पीछैं किंचित् ऊन द्व्यर्धगुणहानिगुणित समयप्रबद्धमात्र जो अन्त फालिका द्रव्य ताकौं उदय निषेकतैं लगाय क्षीणकषायका द्विचरम समयपर्यन्त असंख्यातगुणा क्रम लीए अर द्विचरम समयविषैं दीया द्रव्यतैं असंख्यात पल्य वर्गमूलगुणा क्षीणकषायका अन्त समयसंबंधी निषेकविषैं द्रव्य दीजिए है—

चरिमे खंडे पडिदे कदकरणिज्जो त्ति भण्णदे एसो।
तस्स दुचरिमे णिद्दा पयला सत्तुदयवोच्छिण्णा[1] ॥ ६०३ ॥

चरिमे खंडे पतिते कृतकरणीय इति भण्यते एषः।
तस्य द्विचरमे निद्रा प्रचला सत्त्वोदयव्युच्छिन्ना ॥ ६०३ ॥

स० च०—ऐसैं अन्त कांडकका घात होतैं याकौं कृतकृत्य छद्मस्थ कहिए, जातैं याके ऊपरि तीनि घातियानिका स्थितिकांडकघात नाहीं है। केवल उदयावलीके बाह्य तिष्ठता द्रव्यकौं उदयावलीविषैं प्राप्त करणेरूप उदीरणा ही करै है, सो यावत् अधिक समय आवली अवशेष रहै तहां पर्यन्त वर्तै है। बहुरि ताके ऊपरि एक एक समयविषैं एक एक निषेकका क्रमतैं उदय ही पाइए है। जातैं उदयावलीविषैं प्राप्त द्रव्यकी उदीरणा न हो है। बहुरि ऐसैं क्षीणकषायका द्विचरम समय प्राप्त भया तब निद्रा प्रचला कर्मका सत्त्व अर उदयका व्युच्छेद भया। इहां शुक्लध्यान होतैं भी अव्यक्त निद्रा वा प्रचलाका उदय संभवै था सो भी नाश भया। अब इहां क्षपकश्रेणि चढनेवाले जीव तीन वेदविषैं एक वेद अर च्यारि कषायविषैं एक कषायका उदय सहित श्रेणी चढनेकी अपेक्षा बारह प्रकार है। तहां पूर्वोक्त सर्व प्ररूपणा पुरुषवेद अर क्रोधकषाय सहित श्रेणी चढनेवालेकी जाननी ॥ ६०३ ॥ बहुरि अवशेष ग्यारह प्रकार जीवनिविषैं विशेष है सो कहिए है। तहां पुरुषवेद अर मानादिक कषायसहित श्रेणी चढनेवालेकैं विशेष है सो कहिए है—

---

१ तदो दुचरिमसमये णिद्दा-पयलाणमुदयसंतवोच्छेदो। क० चु०, पृ० ८९४।

कोहस्स य पढमठिदीजुत्ता कोहादिएक्कदोतीहिं ।
खवणद्धाहि कमसो माणतियाण तु पढमठिदी[1] ॥६०४॥

क्रोधस्य च प्रथमस्थितियुक्ता क्रोधादिएकद्वित्रयाणाम् ।
क्षपणाद्धा हि क्रमशो मानत्रयाणा तु प्रथमस्थिति· ॥६०४॥

स० च०—पुरुषवेदयुक्त मानादि कषायसहित श्रेणी चढ्या जीवकै। अध करणतै लगाय अतरकरणकी समाप्ति पर्यंत तौ सर्व प्ररूपणा पुरुषवेद क्रोधसहित श्रेणी चढ्या जीवकै समान जाननी। ताके अनतरि क्रोधकी प्रथम स्थितिसहित क्रोधादिक एक दोय तीन कषायनिक जो क्षपणा काल सो क्रमतैं मानादिक तीन कषायनिकी प्रथम स्थिति हो है सोई कहिए है—

मानसहित श्रेणी चढ्या जीव है सोई अतरकरणकी समाप्तिके अनन्तर क्रोधकी प्रथम स्थिति न स्थापै है। मानकी प्रथम स्थिति अन्तमुंहूतमात्र स्थापै है। सो क्रोधसहित श्रेणी चढ्याकै नपु सकवेदका क्षपणा कालतै लगाय कृष्टिकारककालपर्यंत तो क्रोधकी प्रथम स्थिति अर क्रोधकी तीनो सग्रह कृष्टिका वेदककालमात्र क्रोधका क्षपणा काल इनि दोऊनिकौ मिलाएँ जेता प्रमाण होइ तितना मानसहित श्रेणी चढ्याकैं मानकी प्रथम स्थितिका प्रमाण जानना। बहुरि मायासहित श्रेणी चढ्या जीव है, सो अन्तरकरणका समाप्तिके अनन्तरि क्रोध अर मानकी प्रथम स्थिति नाही स्थापै है। मायाकी प्रथम स्थिति अन्तमुंहूर्तमात्र स्थापै है। सो क्रोधसहित श्रेणी चढ्या जीवकैं जो पूर्वोक्त क्रोधकी प्रथम स्थिति अर क्रोध क्षपणाकाल अर मानकी तीनौ सग्रह कृष्टिका वेदक कालमात्र मान क्षपणा काल इन तीनौकौ मिलाएँ जो होइ तेता माया सहित श्रेणी चढ्या जीवकैं मायाकी प्रथम स्थितिका प्रमाण हो है। बहुरि लोभ सहित श्रेणी चढ्या जीव है, सो अन्तरकरणकी समाप्तिके अनन्तरि क्रोध अर मान अर मायाकी प्रथम स्थिति नाही स्थापै है, लोभकी प्रथम स्थिति स्थापै है। सो क्रोधसहित्त श्रेणी चढ्याकै जो पूर्वोक्त क्रोधकी प्रथम स्थिति अर क्रोध क्षपणा काल अर मान क्षपणाकाल अर मायाका वेदक कालमात्र जो मायाका क्षपणा काल इन च्यारोकौ मिलाएँ जो होइ तितना लोभ सहित श्रेणी चढ्या जीवकैं लोभकी प्रथम स्थितिका प्रमाण जानना ॥६०४॥

माणतियाणुदयमहो कोहादिगिदुतिय खवियपणिधम्हि ।
हयकण्णकिट्टिकरण किच्चा लोहं विणासेदि[2] ॥६०५॥

मानत्रयाणामुदयमथ क्रोधाद्येकद्वित्रय क्षपकप्रणिधौ ।
हयकर्णकृष्टिकरणं कृत्वा लोभ विनाशयति ॥६०५॥

स० च०—मानादिक तीन कषायनिका उदयसहित श्रेणी चढ्या जीव है, सो क्रमतै क्रोधादिक एक दोय तीन कषायनिका क्षपणा कालके निकटि अश्वकर्ण सहित कृष्टिकरणकौ करि लोभकौ बिनाशे है। सोई कहिए है—तहा प्रथम मान सहित श्रेणी चढ्याका व्याख्यान करिए है—

---

१ क० चु०, पृ० ८९०–८९२। २ क० चु०, दृ० ८९०–८९२।

क्रोधसहित श्रेणी चढ्या जीव जिस कालविषै च्यारो कपायनिका अश्वकर्णकरण अर अपूर्व स्पर्धक विधानकौ करै है तिस कालविषै मान सहित श्रेणि चढ्या जीव पूर्व स्पर्धकरूप जो क्रोध था ताकौ मान कषायरूप परिनमाय क्षय करै है। तातै क्रोधसहित श्रेणी चढ्याके बारह सग्रह कृष्टि हो है। मानसहित श्रेणी चढ्याकै तीन कषायनिकी नव ही सग्रहकृष्टि हो है। बहुरि क्रोधसहित श्रेणी चढ्या जिस कालविषै वादर कृष्टि करै है तिस कालविषै मानसहित श्रेणी चढ्या जीव तीन कषायनिकी अश्वकर्णसहित अपूर्व स्पर्धक क्रिया करै है। बहुरि क्रोध सहित श्रेणी चढ्या जीव जिस कालविषै क्रोधकी तीन सग्रह कृष्टिकौ वेद क्षपावै है तिस काल-विषै मानसहित श्रेणी चढ्या जीव मानादि तीन कषायनिकी नव वादर सग्रह कृष्टि करै है। बहुरि ताके ऊपरि मानकषायका वेदक काल आदि सर्व प्ररूपणा क्रोधसहित श्रेणी चढ्याकै अर मानसहित श्रेणी चढ्याकै समान है। अब मायासहित श्रेणी चढ्या जीवका व्याख्यान करिए है—

क्रोधसहित श्रेणी चढ्या जिस कालविषै अश्वकर्ण क्रिया करै है तिस कालविषै यह क्रोधकौ मानरूप परिनमाइ क्षय करै है। बहुरि क्रोधसहित श्रेणी चढ्या जिस कालविषै कृष्टि करै है तिस कालविषै यह मानको मायारूप परनमाइ क्षय करै है। बहुरि क्रोधसहित श्रेणी चढ्या जिस कालविषै क्रोधकी तीन सग्रह कृष्टिकौ वेदि क्षपावै है तिस कालविषै यह माया अर लोभकी छह बादर सग्रह कृष्टि करै है। बहुरि ताके ऊपरि मायाकी सग्रह कृष्टिका वेदक काल आदि सर्व प्ररूपणा क्रोधसहित श्रेणी चढ्याकै अर याकै समान है। अब लोभसहित श्रेणी चढ्या जीवका व्याख्यान कहिए है—

क्रोधसहित श्रेणी चढ्या जिस कालविषै अश्वकर्ण करै है तिस कालविषै यहु पूर्व स्पर्धक-रूप क्रोधकौ मानरूप परिनमाइ क्षय करै है। बहुरि क्रोधसहित चढ्या जीव जिस कालविषै कृष्टि करै है तिस कालविषै यहु पूर्व स्पर्धकरूप मानकौ मायारूप परनमाइ क्षय करै है। बहुरि क्रोध सहित चढ्या जिस कालविषै क्रोधकी तीन सग्रह कृष्टिनिकौ वेदि क्षय करै है तिस कालविषै यहु पूर्व स्पर्धकरूप मायाकौं लोभरूप परिनमाइ क्षय करै है। बहुरि क्रोधसहित श्रेणी चढ्या जीव जिस काल मानकी तीन सग्रह कृष्टिनिकौ वेदि क्षय करै है तिस कालविषै यहु लोभकी तीन बादर सग्रह कृष्टि करै है। तातै उपरि लोभकी प्रथम सग्रह कृष्टि वेदक काल आदि सर्व प्ररूपणा क्रोधसहित श्रेणी चढ्याकै अर याकै समान है ॥६०५॥

विशेष—चूर्णिसूत्रमे 'क्रोध कषायके उदयसे चढा हुआ जीव जिस कालमे मानसज्वलनका क्षय करता है उस कालमे लोभसज्वलनके उदयसे चढा हुआ जीव अश्वकर्णकरण क्रिया करता है। इस पर टीका करते हुए जयधवलाकार कहते है कि यद्यपि अकेले लोभसज्वलनका अश्वकर्ण-करणरूपसे विनाश सम्भव नही है तो भी अनुभागविशेषके घातको तथा अपूर्व स्पर्धकोके विधानको देखते हुए यहाँ भी अश्वकर्णकरण काल सम्भव है; इसलिये यह कथन विरुद्ध नही है। तथा उक्त जीव कृष्टिकरण कालके भीतर पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोका अपवर्तन करके तीन बादर सग्रह कृष्टियोको रचता है ऐसा जानना चाहिये, क्योकि यहाँ पर शेष कषाय सम्भव नही है।

ऐसै पुरुषवेद सहित चढ्या च्यारि प्रकार जीवनिके विशेषका वर्णन कीया अर स्त्रीवेद सहित चढे च्यारि प्रकार जीवनिकैं विशेष कहिए है—

पुरिसोदएण चडिदस्सित्थीखवणद्धत्त पढमठिदी ।
इत्थिस्स सत्तकम्मं अवगदवेदो सम विणासेदि[1] ॥६०६॥

पुरुषोदयेन चटितस्य स्त्रीक्षपणाद्धात प्रथमस्थिति ।
स्त्रिया सप्तकर्माणि अपगतवेद सम विनाशयति ॥६०६॥

स० च०—स्त्रीवेदसहित चढ्या जीवकै यावत् अतरकरण न होइ तावत् प्ररूपणा सर्व समान है। बहुरि अतरकरण करता सता यहु पुरुषवेदकी प्रथम स्थिति नाही करै है। स्त्रीवेदही-की प्रथम स्थिति स्थापै है, जातैं जिस वेदका कषायके उदै श्रेणी चढै ताहीका प्रथम स्थिति स्थापै है। तिस स्त्रीवेदकी प्रथम स्थितिका प्रमाण पुरुषवेदका उदयसहित श्रेणी चढ्या जीवकै जितना नपु सक वेदका क्षपणा काल सहित स्त्रीवेदका क्षपणा काल होइ तितना जानना। बहुरि नपु सक-वेदकी वा स्त्रीवेदकी क्षपणा करनेविषै स्त्रीवेदसहित चढ्या जीवकैं पुरुषवेद सहित चढ्या जीवकैं समान काल है। बहुरि ताके ऊपरि पुरुषवेदसहित चढ्या जीव है सो तौ पुरुषवेदका उदययुक्त हुवा सप्त नोकषायका क्षपणा कालविषै सप्त नोकषायनिकौ क्षपावै है। तहा पुरुषवेदके नवक समय प्रबद्धनिकौ ताके पीछे समय घाटि दोय आवली काल विषैं क्षपावे है। बहुरि यह स्त्रीवेद-सहित चढ्या जीव है सो वेद उदयकरि रहित होत सता सप्त नोकषायका क्षपणा कालविषै सर्व सप्त नोकषायनिकौ क्षपावै है। पुरुषवेदका बध याकैं नाही है, तातै नवक समयप्रबद्धका पीछैं खिपावना याकै न सभवे है। बहुरि ताके ऊपरि अश्वकर्णादि क्रियानिविषै जैसै पुरुषवेदसहित चढे च्यारि प्रकार जीवनिका विशेष कह्या तैसै ही स्त्रीवेदसहित चढे च्यारि प्रकार जीवनिका विशेष वर्णन जानना ॥६०६॥

अब नपुसकवेद सहित चढे च्यारि प्रकार जीवनिका व्याख्यान करिए है—

थीपढमट्ठिदिमेत्ता सढस्स वि अंतरादु सढेक्क ।
तस्सद्धा त्ति तदुवरि सढ इत्थिं च खवदि थीचरिमे ॥
अवगयवेदो सतो सत्त कसाये खवेदि त्थीचरिमे ।
पुरिसुदये चडणविही सेसुदयाण तु हेट्ठुवरिं[2] ॥६०८॥

स्त्रीप्रथमस्थितिमात्रा षढस्यापि अतरात् षंढेक ।
तस्याद्धा इति तदुपरि षंढ स्त्रीं च क्षपयति स्त्रीचरमे ॥ ६०७ ॥
अपगतवेद सत. सप्त कषायान् क्षपयति स्त्रीचरमे ।
पुरुषोदयेन चटनविधिः शेषोदयाना तु अधस्तनोपरि ॥ ६०८ ॥

स० च०—नपुसकवेदसहित श्रेणि चढ्या जीवकै यावत् अन्तरकरण न करिए तावत् सर्व प्ररूपणा समान है, ताके ऊपरि पुरुषवेदकी प्रथम स्थिति नाही स्थापै है, नपुसकवेदहीकी प्रथम

---

१ क० चु०, पृ० ८९३। २ क० चु० पृ० ८९३-८९४।

स्थिति स्थापै है। ताका प्रमाण स्त्रीवेद सहित चढ्याकै जितना स्त्रीवेदकी प्रथम स्थिति ताका प्रमाण कह्या तावन्मात्र ही है। बहुरि अन्तरकरण कीए पीछै यावत् पुरुषवेदसहित चढ्या जीवकै नपुंसकवेदका क्षपणा काल है तावत् याकैं एक नपुंसकवेदहीकी क्षपणा हुआ करै है। परन्तु तहा नपुंसकवेदकी क्षपणा होइ निवरै नाही, तहा पीछै पुरुषवेद सहित श्रेणी चढ्याके जो स्त्रीवेदका क्षपणाकाल है तिस विषै याकैं नपुंसकवेद अर स्त्रीवेद दोऊनिकी क्षपणा होने लगै, सो स्त्रीवेद क्षपणाकालका अन्त समयविषै सर्व नपुंसक स्त्रीवेदकौ युगवत् क्षय करै है। इहा द्रव्यार्थिक नय विद्यमानका नाशकौ कहै है तिस अपेक्षा इस समय नष्ट भया कह्या। पर्यायार्थिक अविद्यमान वस्तुका नाशकौ कहै है। तिस अपेक्षा इस समयविषै एक निषेकका सत्त्व है सो अगले समयविषै नष्ट होगा ऐसा जानना। ताके अनतरि स्त्रीवेदसहित चढ्या जीववत् अपगतवेद होत सता सप्त नोकषायनिका क्षपणा कालविषै सर्व सप्त नोकषायनिकौ क्षपावै है। इहा भी पुरुषवेदका नवका अभाव है। तातै नवक समयप्रबद्धका पीछै क्षिपावना न सभवै है। ताके ऊपरि जैसै पुरुषवेदसहित श्रेणी चढे च्यारि प्रकार जीवनिका वर्णन कीया तैसै ही नपुंसकवेद सहित श्रेणी चढे च्यारि प्रकार जीवनिका वर्णन जानना। ऐसै तीन प्रकार पुरुषवेदसहित श्रेणी चढे, च्यारि प्रकार स्त्रीवेद सहित चढे च्यारि प्रकार नपुंसकवेदसहित श्रेणी चढे ए ग्यारह प्रकार जीव तिनके वीचिकी क्रियानिविषै इहा विशेष वर्णन कीया सो विशेष जानना। अब शेष नीचै वा ऊपरी सर्व विधान क्रोधका उदय अर पुरुषवेदका उदयसहित श्रेणी चढ्याकै जैसै कह्या तैसैंही अवशेष ग्यारह प्रकार उदयसहित जीवनिकैं जानना। इहा तर्क—

जो अनिवृत्तिकरणविषै एक समयवर्ती सव जीवनिकै परिणाम समान कहे है इहाँ तुम परस्पर विशेष कैसै कहो हो? ताका समाधान—परिणामनिकी विशुद्धताकी अपेक्षा समान नाही है, परतु नानाप्रकार वेद कषायका उदयरूप सहकारी कारणका निकट होतै नानाप्रकार क्षपणाकार्य हो है। ६०७। ६०८।

विशेष—अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमे सब जीवोका समान समयमे अनिवृत्ति परिणाममे भेद नही होता, एक ही नियम है, फिर क्रोधादि कषायो और पुरुषादि वेदोकी अपेक्षा यह भेद कैसे होता है? यह एक प्रश्न है। समाधान यह है—सबका जीवोका समान समयमे समान एक परिणाम होते हुए भी कषायोके उदयके साथ वेदोके उदयमे भेद होनेके कारण यह नानात्व बन जाता है। तात्पर्य यह कि भिन्न-भिन्न जीवोके भिन्न-भिन्न कषाय और वेद पाया जाता है, इसलिये उक्त प्रकारसे नानात्व बननेमे कोई बाधा नही आती। यहाँ विशुद्धताकी अपेक्षा समान समयवर्ती जीवोका अनिवृत्ति परिणाम समान है उनमे भेद नही है। भेद है तो विविध कषायो और वेदोमे है, इसलिये उनकी अपेक्षा क्षपणाके क्रममे भेद पड जाता है।

ऐसैं अवसर पाइ विशेषका कथन करि पूर्वै क्षीणकषायका द्विचरम समयपर्यंत कथन कीया था अब आगै कथन करिए है—

चरिमे पढम विग्घ चउदसण उदयसत्त वोच्छिण्णा।
से काले जोगिजिणो सव्वण्हू सव्वदरसी य ॥६०९॥

चरमे प्रथम विघ्नं चतुर्दर्शनं उदयसत्त्वव्युच्छिन्ना।
स्वे काले योगिजिन. सर्वज्ञ. सर्वदर्शी च ॥६०२॥

स० च०—क्षीणकषायका अत समयविषै पहला पच प्रकार ज्ञानावरण अर विघ्न कहिए पच प्रकार अतराय अर चउ दसण कहिए च्यारि प्रकार दर्शनावरण ए उदयतै अर सत्त्वतै व्युच्छित्तिरूप भए। इहाँ अघाति कर्मनिका स्थितिसत्त्व पल्यके असख्यातवै भागमात्र असख्यात वर्षका है। जैसै घाति कर्मनिविषै मोहविशेष अप्रशस्त था ताका पहलैं नाश भया अवशेषनिका इहा नाश भया तैसै कर्मनिविषै विशेष अप्रशस्त घाति कर्म थे तिनका इहाँ नाश भया। अघातियानिका आगै नाश होगा। बहुरि इहाँ कोऊ पूछै कि—

छद्मस्थका तौ शरीर निगोदसहित था अर केवलीका शरीर निगोदरहित कहिए हैं सो कैसै भया ? ताका समाधान—क्षीणकषायका प्रथम समयविषैं निगोद जीव अनत मरैं हैं दूसरे समय तिनकौ आवलीका असख्यातवा भागका भाग दीएँ एक भागमात्र अधिक मरै है। ऐसै पृथक्त्व आवलीपर्यंत क्रम जानना। ताके ऊपरि पूर्व समय विषैं मरे जीवनि तै तिनको सख्यातका भाग दीए एक भागमात्र अधिक जीव मरै हैं। सो ऐसैं क्षीणकषायका काल आवलीका असख्यातवा भागमात्र अवशेष रहै तावत् क्रम जानना। बहुरि इस विशेष अधिकरूप मरणकालका अत समयविषै मरे जीवनिका प्रमाणकौ पल्यका असख्यातवा भागकरि गुणैं ताकौ अनंतरि गुणकारकी श्रेणी लीए मरण कालका जो प्रथम समय तीहिंविषै मरे जीवनिका प्रमाण हो है। तातै परै क्षीणकषायका अत समयपर्यंत समय-समय पल्यका असख्यातवा भागगुणा निगोद जीव मरै है ऐसै सर्व निगोद जीवनिका अभाव होतै केवलीका शरीर निगोदरहित है। इहाँ तर्क—

जो ऐसै मरण होतै यथाख्यातचारित्र कैसै कहिए ? ताका समाधान—इहा शुक्लध्यान बलकरि तिनके निपजनेका निरोध हो है। बहुरि उपजे थे ते स्वयमेव अपनी आयु नाशतै मरै है। यावत् निगोद जीवनिका जघन्य आयुमात्र क्षीणकषायका काल अवशेष रहै तावत् निगोद जीव तहाँ उपजै भी है। अर पूर्वे उपजे जीव मरैं हैं तहाँ पीछै उपजै नाही। आयु नाशतै केवल मरै ही है तातै इनकौं किछू दोष नाही उपजै है। ऐसैं क्षीणकषायका अत समयविषैं घाति कर्मनिका नाशकरि ताके अनतरि अपने कालविषै सयोगकेवली जिन हो है। सो सर्वज्ञ अर सर्वदर्शी हो है। सर्व पदार्थनिकौ आकाररूप विशेष ग्रहण करै है। तातैं सर्वज्ञ कहिए। बहुरि सर्व पदार्थनिकौ निराकाररूप सामान्य ग्रहण करै है तातै सर्वदर्शी कहिए है ॥६०९॥

खीणे घादिचउक्के णतचउक्कस्स होदि उप्पत्ती।
सादी अपज्जवसिदा उक्कस्साणतपरिसखा ॥६१०॥

क्षीणे घातिचतुष्केऽनंतचतुष्कस्य भवति उत्पत्तिः।
सादिरपर्यवसिता उत्कृष्टानतपरिसख्या ॥६१०॥

स० च०—घातिया कर्मनिका चतुष्कका नाश होतैं अनतचतुष्टयकी उत्पत्ति हो है। अनतपना कैसै सभवे है ? सो कहिए है—

सादि कहिए उपजने कालविषै आदि सहित है तथापि अपर्यवसिता कहिए अवसान जो अत ताकरि रहित है, तातैं अनत कहिए। अथवा अविभाग प्रतिच्छेदनिकी अपेक्षा इनकी उत्कृष्ट अनतानतमात्र सख्या है तातैं भी अनन्त कहिए ॥६१०॥

अब किस कर्मनिका नाशके कौन गुण हो है सो कहिए है—

आवरणदुगाण खये केवलणाण च दसण होइ ।
विरियतरायियस्स य खएण विरियं हवे णत ॥६११॥

आवरणद्विकयो. क्षये केवलज्ञानं च दर्शन भवति ।
वीर्यान्तरायिकस्य च क्षयेण वीर्यं भवेदनन्तम् ॥६११॥

स० च०—ज्ञानावरण दर्शनावरग इन दोऊनिका नाशकरि केवलज्ञान और केवलदर्शन हो है। तहाँ केवलज्ञान है सो इन्द्रिय मन प्रकाशादिकका सहाय रहित है। सो सूक्ष्म अन्तरित दूर आदि सर्व पदार्थनिकौ प्रत्यक्ष युगपत् जाने है। तहाँ परमाणू आदि सूक्ष्म कहिए। अतीत अनागत कालसम्बन्धी अन्तरित कहिए। दूर क्षेत्रवर्ती दूर कहिए। बहुरि तैसैंही केवलदर्शन है सो देखे है। जैसे चद्रविषै शीतस्पर्श श्वेतवर्णपनी युगपत् है तैसैं जिनेद्रविषैं केवलज्ञान केवल-दर्शन युगपत् प्रवर्तै है, छद्मस्थवत् क्रमवर्ती नाही है। बहुरि वीर्यांतरायकर्मका क्षयकरि अनत वीर्य हो है सो समस्त ज्ञेयनिकौं सदाकाल जानते भी खेद उपजनेका अभावकौ उपकारी काहूकरि घाती न जाय ऐसी समर्थतारूप है ॥ ६११ ॥

णवणोकसायविग्घचउक्काण च य खयादणतसुह ।
अणुवममव्वावाह अप्पसमुत्थ णिरावेक्ख ॥६१२॥

नवनोकषायविघ्नचतुष्काणा च क्षयादनन्तसुखम् ।
अनुपममव्याबाधमात्मसमुत्थ निरपेक्षम् ॥६१२॥

स० स०—नव नोकषाय अर दानादि अन्तरायचतुष्कका क्षयतैं अनत सुख हो है सो अन्यत्र ऐसा न पाइए है, तातैं अनौपम्य है। बहुरि काहूकरि बाधित नाही, तातैं अव्याबाध है। बहुरि आत्माकरि उत्पन्न है, तातैं आत्मसमुत्थ है। बहुरि इन्द्रियविषय प्रकाशादिअपेक्षा रहित है, तातैं निरापेक्ष है। ऐसा ज्ञानवैराग्य ताकी उत्कृष्टताकौ प्राप्त भया जो केवली तिनकै अनाकुल लक्षण अनत सुख जानना ॥ ६१२ ॥

सत्तण्ह पयडीण खयादु खइय तु होदि सम्मत्त ।
वरचरण उवसमदो खयदो दु चरित्तमोहस्स ॥६१३॥

सप्ताना प्रकृतीना क्षयात् क्षायिक तु भवति सम्यक्त्वम् ।
वरचारण उपशमत. क्षयतस्तु चारित्रमोहस्य ॥६१३॥

स० च०—च्यारि अनतानुबधी तीन मिथ्यात्व इन सात प्रकृतिनिके क्षयतैं क्षायिक सम्यक्त्व हो है सो तत्वार्थनिका यथार्थ श्रद्धानरूप जानना। बहुरि चारित्र मोहकी इकईस प्रकृतिनिके उपशमतैं वा क्षयतैं उत्कृष्ट यथाख्यात चारित्र हो है सो निष्कषाय आत्मचरणरूप है। इहा क्षायिक यथाख्यात चारित्र ही है। तथापि यथाख्यातका प्रसग पाइ उपशात कषायविषैं पाइए है जो उपशम यथाख्यात ताका भी कारण दिखाया है ॥६१३॥

अब इहां कोऊ कहै कि केवलीकै असाता वेदनीयके उदयतै क्षुधादि परीषह पाइए है तातै आहारादि क्रिया सभवै है तिस प्रति कहै है—

ज णोकसायविग्घचउक्काण बलेण दुक्खपहुदीण ।
असुहपयडिणुदयभव ददियखेद हवे दुक्ख ॥६१४॥

यत् नोकषायविघ्नचातुष्काणा बलेन दुःखप्रभृतीनाम् ।
अशुभप्रकृतीनामुदयभव इद्रियखेद भवेत् दु.खं ॥६१४॥

स० च०—जो नोकषाय अर अन्तरायचतुष्क इनका उदयके बलकरि दु खरूप असाता वेदनीय आदि अशुभ प्रकृतिनिका उदय करि उपज्या ऐसा इद्रियकै खेद आकुलता ताका नाम दु ख है। सो केवलीकै नाही सभवै है ॥६१४॥

ज णोकसायविग्घचउक्काण बलेण सादपहुदीण ।
सुहपयडीणुदयभव इदियतोस हवे सोक्खं ॥६१५॥

यत् नोकषायविघ्नचातुष्काणा बलेन सातप्रभृतीना ।
शुभप्रकृतीनामुदयभव इंदियतोषं भवेत् सौख्यं ॥६१५॥

स० च०—जो नोकषाय अर अन्तराय चतुष्कका उदयके बलकरि सात वेदनीय आदि शुभ प्रकृतिनिका उदयकरि उपज्या इन्द्रियनिके सतोष किछू निराकुलता ताका नाम इद्रिय-जनित सुख है सो भी केवलीके नाही सभवै है ॥६१५॥

णट्ठा य रायदोसा इदियणाण च केवलिम्हि जदो ।
तेण दु सादासादजसुहदुक्ख णत्थि इदियज ॥६१६॥

नष्टौ च रागद्वेषौ इद्रियज्ञानं चा केवलिनि यत ।
तेन तु सातासातजसुखदु.ख नास्ति इद्रियज ॥६१६॥

स० च०—जातै केवलीविषै राग द्वेष नष्ट भए है। बहुरि इद्रियजनित ज्ञान भी नष्ट भया है, तातै साता असाता वेदनीयका उदयकरि निपज्या ऐसा इन्द्रियजनित सुख दु ख नाही है। इस हेतुतै यहु सिद्ध भया जो कारणके सद्भावतै केवलीकै असातावेदनीयके उदयतै उपजे ऐसै परीषह उपचारमात्र कहिए है, तथापि तिनका दु ख नाही व्यापे है, जातै घातिकर्मनिका उदय केवल होतै वेदनीयका उदयतै सुख दु ख व्यापै है। जैसै उपघात परघात नाम कर्मका उदय होतै भी घाति कर्मनिके बल विना अपना वा अन्यका घात न हो है जो ऐसै न होइ तो परीषहनिके निमित्ततै केवलीकौ दु ख होइ तब लाभके अर्थि कार्य करै। जैसै मूल नाश होइ तैसै यहु कार्य भया सो न सभवै है तातै केवलीकै भोजन है ऐसा वचन अयुक्त है ॥ ६१६ ॥

अब अन्य हेतु कहै है—

समयट्ठिदिगो बधो सादस्सुदयप्पिगो जदो तस्स ।
तेण असादस्सुदओ सादसरूवेण परिणमदि ॥६१७॥

समयस्थितिको बध. सातस्योदयात्मको यत , तस्य ।
तेन असातस्योदय. सातस्वरूपेण परिणमति ॥६१७॥

स० च०—जातै केवलीकैं एक समयमात्र स्थिति लीए सातावेदनीयका वध हो है सो उदयरूप ही है, तातै ताकै असाताका उदय है सो भी सातारूप होइ परिनमै है। जातै इहा परम विशुद्धताकरि साताका अनुभागकी वहुत अधिकता पाइए है, तातै असाताजनित क्षुधादि परिषहकी वेदना नाही है। वेदना विना ताका प्रतिकाररूप आहार कैसै सभवै है ? ॥६१७॥

इहा कोऊ कहै कि जो आहार न सभवै तौ शास्त्रनिविषै केवलीकै आहार मार्गणाका सद्भाव कैसै कह्या है ? सो कहिए है—

पडिसमय दिव्वतम जोगी णोकम्मदेहपडिवद्ध ।
समयपवद्ध बधदि गलिदवसेसाउमेत्तठिदी ॥६१८॥

प्रतिसमय दिव्यतमं योगी नोकर्मदेहप्रतिवद्धम् ।
समयप्रबद्ध बध्नाति गलितावशेषायुर्मात्रस्थितिः ॥६१८॥

स० च०—सयोगी जिन है सो समय समय प्रति नोकर्म जो औदारिक शरीर तीहिसम्वन्धी जो समयप्रवद्ध ताकौ बाघे है ग्रहण करै है। ताकी स्थिति आयु व्यतीत भए पीछे जेता अवशेष रह्या तावन्मात्र जाननी। सो नोकर्मवर्गणाका ग्रहण हीका नाम आहारमार्गणा है, ताका सद्भाव केवलीकै है, जातै ओज १ लेप्य १ मानस १ केवल १ कर्म १ नोकर्म १ भेद तै छह प्रकार आहार है। तहा केवलीकै कर्म-नोकर्म ए दोय आहार सभवै हैं। साता वेदनीयका समयप्रवद्धकौ ग्रहै है सो कर्म आहार है। औदारिक शरीरका समयप्रबद्ध ग्रहै है सो नोकर्म आहार है ॥७१८॥

णवरि समुग्घादगदे पदरे तह लोगपूरणे पदरे ।
णत्थि तिसमये णियमा णोकम्माहारय तत्थ ॥६१९॥

नवरि समुद्घातगते प्रतरे तथा लोकपूरणे प्रतरे ।
नास्ति त्रिसमये नियमात् नोकर्माहारकस्तत्र ॥६१९॥

स० च०—इतना विशेष जो केवल समुद्घातकौ प्राप्त केवलीविषै दोय तौ प्रतरके समय अर एक लोकपूरणका समय इनि तीन समयनिविषैं नोकर्मका आहार नियमतै नाही है, अन्य सर्व सयोगी जिनका कालविषै नोकर्मका आहार है ॥६१९॥

अव इहाँ समुद्घात कब हो है सो कहना—तहाँ क्षीणकषायके अतरि ईर्यापथबधकौ कारण जौ योग तिनकरि सहित जो तीर्थंकर केवली भया सो समवसरणविषैं मडपके मध्य तीन पीठिका ऊपरि जो सिंहासन तीहिविषैं विराजमान है। अष्ट प्रातिहार्य चौतीस अतिशयसहित है। धातु-मलरहित, परम औदारिक शरीरसहित है। सर्व लोकपूज्य है। वहुरि एक योजन विषैं तिष्टते ऐसैं दूर वा निकटवर्ती तिर्यंच वा मनुष्य वा देव तिनकी अठारह महाभाषा सातसै क्षुल्लकभाषा ताके आकारि तद्रूप परिनम्या ऐसा जो दिव्यध्वनि ताकरि आसन्न भव्य जीवनिकौ ससारतै पार करै है। जैसैं विना इच्छा चद्रमा समुद्रकौ बधावै है तैसैं अबुद्धिपूर्वकपनैं केवली जगतका

हितकौ करै हैं। जातैं सर्व जीवनिका उपकाररूप परिणामनितैं ऐसा कर्म पूर्वं बध्या है जाके उदयतैं सर्व जीवनिका स्वयमेव उपकार हो है अर भव्य जीवनिका भला होना हैं, तातैं ऐसा निमित्त बना है। बहुरि भगवान विहार करैं तब आकाशविषै दोयसैं पचीस कमलनीके ऊपरि स्वयमेव गमन करैं हैं। सो या प्रकार उत्कृष्ट तौ किंचित् ऊन कोडि पूर्व अर जघन्य पृथक्त्व वर्षप्रमाण तीर्थंकर केवलीकी स्थिति सयोग गुणस्थानविषै जाननी। सामान्य केवलीनिकैं अतिशयादिक यथासभव जानना अर जघन्य स्थिति अतर्मुहूर्त जाननी। तहाँ सयोगीका प्रथम समयतैं लगाय उदयादि अवस्थित गुणश्रेणिनिर्जरा पाइए है। तहाँ प्रथम समयविषै वेदनीय नाम गोत्रका द्रव्यकौं अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहाँ एक भागमात्र द्रव्य ग्रहि पूर्वोक्त प्रकार गुणश्रेणिविषै देनै योग्य द्रव्यकौ उदयरूप प्रथम निषेकविषैं तौ स्तोक अर द्वितीयादि गुणश्रेणिशीर्षपर्यंत निषेकनिविषै असख्यातगुणा क्रम लीए निक्षेपण करिए है। बहुरि उपरितन स्थितिविषै देने योग्य द्रव्यको प्रथम निषेकविषै गुणश्रेणिशीर्षविषै दीया द्रव्यतैं असख्यातगुणा अर द्वितीयादि अतिस्थापनावली यावत् न प्राप्त होइ तावत् निषेकनिविषै विशेष घटता क्रम लीए निक्षेपण करिए है। इहा क्षीणकषाय करि अपकर्षण कीया द्रव्यतैं सयोगकेवलीकरि अपकर्षण कीया द्रव्य असख्यातगुणा जानना। बहुरि ताके गुणश्रेणिआयामतै याका गुणश्रेणिआयाम सख्यातगुणा घटता जानना। बहुरि सयोगकेवलीका द्वितीयादि समयनिविषै भी ऐसा ही विधान जानना। परिणाम अवस्थित है, तातै अपकर्षण कीया द्रव्यकी अर गुणश्रेणीआयामकी समानता जाननी। इतना ही विशेष गुणश्रेणिआयाम अवस्थित है, तातैं ज्यू-ज्यू गुणश्रेणिआयामका एक-एक समय व्यतीत हो है त्यूं त्यू उपरितन स्थितिका एक-एक समय गुणश्रेणिविषैं मिलै है। या प्रकार सयोगीका काल बहुत व्यतीत होतै समुद्घातक्रिया जिस कालविषै हो है सो कहिए है—

अतोमुहुत्तमाऊ परिसेसे केवली समुग्घाद ।
दड कवाट पदर लोगस्स य पूरणं कुणई[1] ॥६२०॥

अतर्मुहूर्तमायुषि परिशेषे केवली समुद्घात ।
दड कपाटं प्रतर लोकस्य च पूरणं करोति ॥६२०॥

स० च०—अपना आयु अन्तर्मुहूर्तमात्र अवशेष रहैं केवली समुद्घात क्रिया करै है। तहाँ दड कपाट प्रतर लोकपूरणरूप समुद्घात क्रियाकौ करैं है ॥६२०॥

हेट्ठा दडस्सतोमुहुत्तमावज्जिदं हवे करण ।
त च समुग्घादस्स य अहिमुहभावो जिणिंदस्स[2] ॥६२१॥

अघस्तन दडस्यातर्मुहूर्तमावर्जित भवेत् करणं ।
तच्च समुद्घातस्य च अभिमुखभावो जिनेन्द्रस्य ॥६२१॥

---

१ स केवलिसमुद्घातो दड-कवाट-प्रतर-लोकपूरणभेदेन चतुरवस्यात्मक प्रत्येतव्य । जयध० ता० मु०, पृ० २२७८।

२ अतोमुहुत्ते आउगे सेसे तदो आवज्जिदकरणे कदे तदो केवलिसमुग्घाद करेदि। क० चु०, पृ० ९००।

स० च०—दंड समुद्घात करनेका कालकैं अंतर्मुहूर्त काल आधा कहिए पहलैं आवर्जित नामा करण हो है सो जिनेंद्रदेवकैं जो समुद्घात क्रियाकौं सन्मुखपना सोई आवर्जितकरण कहिए ॥६२१॥

विशेष—जब केवली जिनकी अन्तर्मुहूर्तप्रमाण आयु अवशिष्ट रहती है तब केवली भगवान् अघाति कर्मोकी स्थितिको समान करनेके लिए केवलि समुद्घातके पहले आवर्जितकरण नामकी दूसरी क्रिया करते है। केवली जिनका केवलि समुद्घातके समुख होना इसका नाम आवर्जितकरण है। उसे वे अन्तर्मुहूर्तकालतक करते है, क्योकि यह करण किए विना केवलि समुद्घातके समुख होना सम्भव नही है। उसी समय केवली जिन उदयादि अवस्थित गुणश्रेणिकी रचना करते हैं। इसे करते हुए उदयमे स्तोक प्रदेशपुंजका निक्षेप करते हैं। इसके आगे गुणश्रेणिशीर्षके प्राप्त होनेतक उत्तरोत्तर असख्यातगुणे प्रदेशपुंजका निक्षेप करते हैं। यह गुणश्रेणिशीर्ष तदनन्तर पिछले समयमे विद्यमान सयोगि केवलीके द्वारा किये गये गुणश्रेणि आयामसे सख्यातगुणे स्थान नीचे जाकर स्थित रहता है, परन्तु प्रदेशपुंजकी अपेक्षा उससे असख्यातगुणे प्रदेशपुंजसे युक्त होता है। गुणश्रेणिके ऊपर अनन्तर समयमे असख्यातगुणे प्रदेशपुंजको देते है। इससे ऊपर सर्वत्र विशेष-हीन विशेषहीन प्रदेशपुंजका निक्षेप करते हैं। इस प्रकार आवर्जितकरणके भीतर सर्वत्र गुणश्रेणि-निक्षेप जानना चाहिये। यहाँसे लेकर सयोगी केवलीके द्विचरम कांडककी अन्तिम फालितक अवस्थितरूपसे इस गुणश्रेणिनिक्षेपके आयामकी प्रवृत्ति जाननी चाहिये। और यह असिद्ध भी नही है, क्योकि सूत्रके अविरुद्ध परम गुरु सम्प्रदायके बलसे इसका निश्चय होता है।

सट्ठाणे आवज्जिदकरणे वि य णत्थि ठिदिरसाण हदी।
उदयादि अवट्ठिदया गुणसेढी तस्स दव्व च ॥६२२॥

स्वस्थाने आवर्जितकरणेऽपि च नास्ति स्थितिरसयो, हतिः।
उदयादिअवस्थितका गुणश्रेणि, तस्य द्रव्य च ॥६२२॥

स० च०—आवर्जितकरण करने पहलैं जो स्वस्थान तीहिंविषैं अर आवर्जितकरणविषै भी सयोगकेवलीकैं कांडकादि विधानकरि स्थिति अनुभागका घात नाही है। बहुरि उदयादि अवस्थितरूप गुणश्रेणिआयाम है अर तिस गुणश्रेणिका द्रव्य भी अवस्थित है। तहा विशेष इतना जो स्वस्थान केवलीका गुणश्रेणिआयामतैं आवर्जितकरणयुक्त केवलीका गुणश्रेणि आयाम सख्यातगुणा घाटि है। बहुरि स्वस्थान केवलीकरि अपकर्षण कीया द्रव्यतैं आवर्जितकरणयुक्त केवलीकरि अपकर्षण कीया द्रव्य असख्यातगुणा है, जातै गुणश्रेणिनिर्जराके ग्यारह स्थान कहे हैं तहाँ ऐसा ही क्रम कह्या हैं। यद्यपि केवलीकैं परिणामनिकी समानता है, तथापि आयुका अंतर्मुहूर्तमात्र अवशेष रहनेका निमित्त पाइ विशेष होनेतैं स्वस्थान जिनतै समुद्घातकौं सन्मुख जिनकै गुणश्रेणिआयाम वा अपकर्षण कीया द्रव्यकी समानता नाही कही है। बहुरि स्वस्थान जिनकैं प्रथमादि अंत समयपर्यन्त गुणश्रेणिआयाम अर अपकर्षण कीया द्रव्य समान है, तातैं अवस्थित जानना। बहुरि आयुवर्जित करणका प्रथम समयतैं लगाय सयोगीकैं द्विचरम स्थितिकांडककी अंतफालिका पतन जिस समय होगा तहा पर्यन्त गुणश्रेणिआयाम अर अपकर्षण कीया द्रव्य समान है तातैं अवस्थित जानना ॥६२२॥

अब आवर्जितकरणविषै गुणश्रेणिआयाम कितना है ? सो कहिए है—

जोगिस्स सेसकाले गयजोगी तस्स सखभागो य ।
जावदिय तावदिया आवज्जिदकरणगुणसेढी[1] ॥६२३॥

योगिन शेषकाले गतयोगी तस्य संख्यभागश्च ।
यावत् तावत्कं आवर्जितकरणगुणश्रेणि ॥६२३॥

स० च०—आवर्जितकरण करनेके पहले समय जो सयोगीका अवशेष काल रह्या अर अयोगीका सर्वकाल अर अयोगीके कालका सख्यातवा भाग इनकौ मिलाए जितना होइ तितना आवर्जितकरण कालका प्रथम समयतै लगाय द्विचरम काडकको अतफालिका पतन समयपर्यंत समयनिविषै अवस्थित गुणश्रेणिआयाम जानना। तहाँ अपकर्षण कीया द्रव्य देनेका विधान जैसैं स्वस्थान जिनविषै कह्या तैसैं जानना।

या प्रकार अन्तर्मुहूर्तमात्र आवर्जितकरण कालविषै क्रियाविशेष कहे, ताके अनतरि समुद्घातक्रिया हो है। सो अघाति कर्मनिकी स्थिति समान करनेके अर्थि जीवके प्रदेशनिका समुद्गमन फैलना ताका नाम समुद्घात है। सो दड कपाट प्रतर लोकपूरणभेदतैं च्यारि प्रकार है। सो समुद्घात करनेवाले जीव पूर्वकौ सन्मुख वा उत्तरकौ सन्मुख हो हैं। बहुरि पद्मासन वा कायोत्सर्ग आसनयुक्त हो हैं। सो प्रथम समयविषै दड समुद्घात करै हैं। तहा उत्कृष्ट अवगाहयुक्त केवलीका शरीर एक सौ आठ प्रमाणागुल प्रमाण ऊँचो होइ, ताके नवमे भाग चौडाई होइ। सो बारह अगुल चौडाईकी सूक्ष्म परिधि सैंतीस अगुल अर एक अगुलका एकसौ तेरह भागमे पिच्याणवैं भागमात्र हो है। सो यहु तो कायोत्सर्ग स्थित केवलीके परिधिका प्रमाण जानना। बहुरि पद्मासन स्थितिके चौडाईका प्रमाण तातैं तिगुणा छत्तीस अगुल है। ताके सूक्ष्म परिधिका प्रमाण एकसौ तेरह अगुल अर एक अगुलका एकसौ तेरह भाग सत्ताईस भागमात्र हो है। ऐसैं परिधिरूप होइ किंचिदून चौदह राजू ऊँचे प्रदेश हो हैं। इहाँ नीचले ऊपरले वातवलयनिविषैं जीवके प्रदेश न फैलैं हैं, तातैं तिनके घटावनेके अर्थि किंचिदून कह्या है। ऐसैं दडके आकारि प्रदेश फैलनेतैं दड समुद्घात कह्या[2]।

१ केवलिसमुग्घादस्स अहिमुहीभावो आवज्जिदकरणमिदि भण्णदे। तमतोमुहुत्तमणुपालेदि। जयध० ता० मु० २२७७। ताधेव णामा-गोद-वेदणीयाण पदेसपिंडमोकड्डियूण उदए पदेसग्ग थोव देदि, से काले असखेज्जगुण। एव असखेज्जगुणाए सेढीए णिक्खिवमाणो गच्छइ जाव सेससजोगिअद्धादो अजोगिअद्धादो च विसेसाहियभावेण समवट्ठिदगुणसेढिसीसय त्ति। जयध० ता० मु०, पृ० २२७७–२२७८।

२ अतोमुहुत्ताउगे सेसे केवलीसमुग्घाद करेमाणो पुव्वाहिमुहो उत्तराहिमुहो वा होदूण काउस्सग्गेण वा करेदि पलियकासणेण वा। तत्थ काउस्सग्गेण दडसमुग्घाद कुणमाणस्स मूलसरीरपरिहाणेण देसूणचोद्दसरज्जुआयामेण दडायारेण जीवपदेसाण विसप्पण दडसमुग्घादो णाम। एत्थ देसूणपमाणं हेट्ठा उवरिं च लोयपेरतवादवलयरुद्धखेत्तमेद होदि त्ति दट्ठव्व। सहावदो चेव तदवत्थाए वादवलयब्भतरे केवलिजीवपदेसाण पवेसाभावादो। एव चेव पलियकासणेण समुदहस्स वि दडसमुग्घादो वत्तव्वो। णवरि मूलसरीरपरिट्ठयादो दडसमुग्घादपरिट्ठिओ तत्थ तिगुणो होदि। कारणमेत्थ सुगम। एवविहो अवत्थाविसेसो दडसमुग्घादो त्ति भण्णदे। जयध० ता० मु० २२७८–२२७९।

बहुरि द्वितीय समयविषै कपाट समुद्घात करै है। तहा पूर्व दिशा सन्मुख कायोत्सर्ग आसनयुक्त केवलीके प्रदेश किंचिदून चौदह राजू ऊँचे सात राजू चौडे बारह अगुल मोटे हो हैं। बहुरि पूर्व सन्मुख पद्मासन स्थित केवलीके प्रदेश ऊँचे चौडे पूर्वोक्त मोटे छत्तीस अगुल हो है। बहुरि उत्तर सन्मुख कायोत्सर्गस्थित केवलीके प्रदेश किंचिदून चौदह राजू ऊँचे अर नीचे सात राजू, क्रमतै घटि मध्य लोक निकटि एक राजू, क्रमतै बधि ब्रह्म स्वर्ग निकटि पाच राजू, क्रमतै घटि ऊपरि एक राजू चौडे अर बारह अगुल मोटे प्रदेश हो है। बहुरि उत्तर सन्मुख पद्मासन स्थित केवलीके प्रदेश ऊँचे चौडे तैसै ही अर मोटे छत्तीस अगुल है। ऐसैं कपाट आकारि प्रदेश फैलनेतैं कपाट कह्या[1]।

बहुरि तीसरे समय प्रतर करै है। तहाँ वातवलय विना अवशेष सर्व लोकविषै आत्माके प्रदेश फैलैं हैं, सो याका नाम मथान भी है[2]।

बहुरि चतुर्थ समयविषै लोकपूरण हो है। तहा वातवलयसहित सर्व लोकविषै आत्माके प्रदेश फैले है।[3] ऐसैं च्यारि समयनिविषै दण्ड कपाट प्रतर लोकपूरण क्रमतैं प्रदेश फैलै है ॥६२३॥

तहाँ कार्यविशेष हो है सो कहिए हैं—

ठिदिखडमसखेज्जे भागे रसखडमप्पसत्थाण।
हणदि अणता भागा दडादी चउसु समएसु[4] ॥६२४॥

स्थितिखंडमसख्येयान् भागान् रसखडमप्रशस्ताना।
हति अनतान् भागान् दडादिच ˚ समयेषु ॥६२४॥

स० च०—दडादिकके च्यारि समयनिविषै स्थित खड तौ असख्यात बहुभागमात्र, अप्रशस्तनिका अनुभागखड अनत भागमात्र ताको घाते है। सोई कहिए है—

दडरूप प्रथम समयविषै जो नाम गोत्र वेदनीयका स्थितिसत्त्व पूर्वै पल्यका असख्यातवाँ

१ कपाटमिव कपाट। क उपमार्थ? यथा कपाट बाहल्येण स्तोकमेव भूत्वा विष्कम्भायामाभ्या परिवर्धते, एवमयमपि जीवप्रदेशावस्थाविशेष मूलशरीरबाहल्येन तत्त्रिगुणबाहल्येन वा देसूणचोद्दसरज्जु-आयामेण सत्तरज्जुविक्खभेण वड्ढि-हाणिगदविक्खभेण वा वड्ढियूण चिट्ठदि त्ति कवाडसमुग्घादो त्ति भण्णदे। जयध० ता० मु० पृ० २२७९।

२ मथ्यतेऽनेन कर्मेति मन्थ। अघादिकम्माण ट्ठिदिअणुभागणिम्महणट्ठो केवलिजीवपदेसाण-मवत्थाविसेसो पदरसण्णिदो मथो त्ति वुत्त होइ। एदम्मि अवत्थाविसेसे वट्टमाणस्स केवलिणो जीवपदेसा चदुहिं मि पासेहिं पदरागारेण विसप्पियूण समतदो वादवलयवदिरित्तासेमलोगागासपदेसे आवूरिया चिट्ठति त्ति दट्ठव्व, सहावदो चेव तदवत्थाए केवलिजीवपदेसाण वादवलयब्भतरे सचाराभावादो। एदस्स चेव पदरसण्णा रुजगसण्णा च आगमरूढिबलेण दट्ठव्वा। जयध० ता० मु० पृ० २२८०।

३ वादवलयावरुद्धलोगागासपदेसु वि जीवपदेसेसु समतदो पविट्ठेसु लोगपूरणसण्णिद चतुत्थ केवलिसमुद्धादविसेसो तदवत्थाए पडिवज्जदि त्ति भणिद होदि। जयध० ता० मु० पृ० २२८०।

४ तम्हि ठिदीए असखेज्जे भागे हणइ। सेसस्स च अणुभागस्स अप्पसत्थाणमणताभागे हणदि। क० चु० पृ० ९०१।

भागमात्र था ताकौ असख्यातका भाग दीए तहाँ बहुभागमात्र घटाइ एक भागमात्र अवशेष राखे है। बहुरि अप्रशस्त प्रकृतिनिकौ क्षीणकषायका अन्त समयविषै जो अनुभाग रह्या था ताकौ अनन्तका भाग दीए तहाँ बहुभाग घटाइ एक भागमात्र अवशेष राखै है। बहुरि कपाटरूप द्वितीय समयविषै जो दड समयविषै स्थिति अनुभाग रहे थे तिनकौ क्रमतै असख्यात अनतका भाग दीए तहाँ बहुभाग घटाइ एक भागमात्र अवशेष राखे है। बहुरि प्रतररूप तीसरा समयविषै कपाट समयविषै जो स्थिति अनुभाग रह्या ताकौ असख्यात अनतका भाग क्रमतै दीए तहाँ बहुभाग घटाइ एक भागमात्र अवशेष राखै है। बहुरि लोकपूरणरूप चौथा समय विषै जो प्रतर समयविषैं स्थिति अनुभाग रह्या था ताकौ असख्यात अनतका भाग क्रमतैं दीए तहाँ बहुभाग घटाइ एक भागमात्र अवशेष राखै है। प्रशस्त प्रकृतिनिका स्थितिघात हो है, अनुभागघात न हो है ऐसा जानना। बहुरि गुणश्रेणिनिर्जरा आवर्जित करणवत् हो है ॥६२४॥

चउसमएसु रसस्स य अणुसमओवट्टणा असत्थाण ।
ठिदिखडस्सिगिसमयिगघादो अतोमुहुत्तुवरिं[1] ॥

चातुःसमयेषु रसस्य च अनुसमयापर्वतनमशस्ताना ।
स्थितिखडस्यैकसमयिकघातो अंतर्मुहूर्तोपरि ॥६२५॥

स० च०—ऐसैं च्यारि समयनिविषै अप्रशस्त प्रकृतिनिके अनुभागका अनुसमयापर्वतन भया। समय-समय अनुभागका घटना भया। बहुरि स्थितिखण्डका एक समयकरि घात भया। एक-एक समयविषैं एक-एक स्थितिकाडकघात कीया सो यह माहात्म्य समुद्घात क्रियाका जानना। बहुरि लोकपूरणके अनन्तरि अन्तर्मुहूर्तमात्र स्थितिकाडक वा अनुभागकाडकका आयाम जानना। अन्तर्मुहूर्त कालकरि स्थिति-अनुभागका घटावना जानना[2] ॥६२५॥

जगपूरणम्हि एक्का जोगस्स य वग्गणा ठिदी तत्थ ।
अतोमुहुत्तमेत्ता सखगुणा आउआ होदि[3] ॥६२६॥

जगत्पूरणे एका योगस्य च वर्गणा स्थितिस्तत्र ।
अतर्मुहूर्तमात्रा सख्यगुणा आयुषो भवति ॥६२६॥

स० च०—लोकपूरणका समयविषै योगनिकी एक वर्गणा है। पूर्वै आत्माके प्रदेशनिविषैं हीनाधिक योगनिके अविभागप्रतिच्छेद थे। इहा आत्माके सर्व प्रदेशनिविषैं समान प्रमाण लीए योगनिके अविभागप्रतिच्छेद भए। याका नाम समयोग परिणाम है। सो यहु सूक्ष्मनिगोदियाकैं

१ एदेसु चदुसु समएसु अप्पसत्थकम्मसाणमणुभागस्स अणुसमयमोवट्टणा। एगसमइओ ठिदिखडयस्स घादो। क चु पृ ९०३।

२ एत्तो सेसिगाए ठिदीए सखेज्जे भागे हणइ। सेसस्स च अणुभागस्स अणते भागे हणइ। एत्तो पाए ठिदिखडयस्स अणुभागखडयस्स च अतोमुहुत्तिया उक्कीरणद्धा। क० चु० पृ० ९०३।

३ तदो चउत्थसमये लोग पूरेदि। लोगे पुण्णे एक्का वग्गणा जोगस्स त्ति समजोगो त्ति णायव्वो। लोगे पुण्णे अतोमुहुत्त ठिदि ठवेदि। सखेज्जगुणमाउआदो। क०, चू०, पृ० ९०२।

जो जघन्य योगस्थान है ताकी जघन्य वर्गणातै असख्यातगुणी जो यथायोग्य मध्यम वर्गणा ताका वर्गनिके समान इहा सर्व आत्मप्रदेशनिविषै समानरूप अविभागप्रतिच्छेद हो हैं। सो यहु एक समय ही रहे है। पीछे हीनाधिकता लीए पूर्व स्पर्धकरूप योग परिणमि जाय हैं। बहुरि तहाँ लोकपूरण समयविषै अतर्मुहूर्तमात्र स्थिति अवशेष राखिए है। सो यहु अवशेष रह्या आयुतै सख्यातगुणा जानना। इहा पूर्व स्थिति थी तामै इतनी स्थिति विना अवशेष सर्व स्थितिका काडककरि घात भया है ॥६२६॥

इस लोकपूरण क्रियाके अनतरि समुद्धातक्रियाकौ समेटे हैं सो क्रम कहिए है—

एत्तो पदर कवाड दड पच्चा चउत्थसमयम्हि।
पविसिय देह तु जिणो जोगणिरोध करेदीदि ॥६२७॥

अत प्रतर कपाटं दड प्रतीत्य चातुर्थसमये।
प्रविश्य देह तु जिनो योगनिरोध करोतीति ॥६२७॥

स० च०—इस लोकपूरणके अनतरि प्रथम समयविषै लोकपूरणकौ समेटि प्रतररूप आत्मप्रदेश करै है। द्वितीय समयविषै प्रतर समेटि कपाटरूप आत्मप्रदेश करै है। तीसरे समय कपाट समेटि दडरूप आत्मप्रदेश करै है। ताके अनन्तरि चौथा समयविषै दड समेटि सर्वप्रदेश मूल शरीरविषै प्रवेश करै है। इहा समुद्धात क्रियाके करने समेटनेविषैं सात समय भए। तहा दडके दोय समयनिविषै औदारिक काययोग है, जातै इहाँ अन्य योग न सभवै है। बहुरि कपाटके दोय समयनिविषै औदारिकमिश्रकाययोग है, जातै इहा मूल औदारिकशरीर अर कार्मणशरीर इन दोऊनिका अवलबनकरि आत्मप्रदेश चचल हो हैं। बहुरि प्रतरके दोय समय अर लोकपूरणका एक समयविषैं कार्मण काययोग है, जातै तहाँ मूल शरीरका अवलबन करि आत्मप्रदेश चचल न हो हैं। वा शरीर योग्य नोकर्मरूप पुद्गलकौ नाही ग्रहण करै हैं। तहा अनाहारक है ऐसा जानना। पीछैं मूल शरीरविषैं प्रवेशकरि तिस शरीरप्रमाण आत्मा भया तहा औदारिकयोग ही है। ऐसैं समुद्धात क्रियाका वर्णन किया।

बहुरि लोकपूरण पीछैं स्थिति-अनुभागकाडकघातका आरम्भ किया था सो मूल शरीर विषै प्रवेशकरि शरीर प्रमाण आत्मा होई अन्तर्मुहूर्त काल तहा विश्राम कीया। तहाँ सख्यात हजार स्थिति काडक भए पीछैं योगनिका निरोध करै है। इहा निरोध नाम नाशका जानना ॥६२७॥

बादरमण वचि उस्सास कायजोग तु सुहुमजचउक्क।
रुभदि कमसो बादरसुहुमेण य कायजोगेण[1] ॥६२८॥

बादरमनो वच उच्छ्वासकाययोगं तु सूक्ष्मजचतुष्क।
रुणद्धि क्रमशो बादरसूक्ष्मेण च काययोगेन ॥६२८॥

---

१ एत्तो अतोमुहुत्त गतूण बादरकायजोगेण बादरमणजोग णिरुभइ। तदो अतोमुहुत्तेण बादरकायजोगेण बादरवचिजोग णिरुभइ तदो अतोमुहुत्तेण बादरकायजोगेण बादरउस्सासनिस्सास णिरुभइ। तदो अतोमुहुत्तेण बादरकायजोगेण सभवबादरकायजोग णिरुभइ ००००००। क चु पृ ९०३।

स० च०—बादर काययोगरूप होइ बादर मनोयोग वचनयोग उश्वास काययोग इन च्यारयोको क्रमतै नष्ट करै है। बहुरि सूक्ष्म काययोगरूप होइ तिन चारयो सूक्ष्मनिकौ क्रमतै नष्ट करै है। सोई कहिए है—

केवली भगवान् बादर काययोग प्रवर्तती सतौ पहले बादर मनोयोगको नष्टकरि सूक्ष्म कृष्टिरूप करै है। पीछे बादर वचनयोगकौ नष्टकरि सूक्ष्मरूप करै है। पीछै बादर उश्वासको नष्टकरि सूक्ष्मरूप करै है। पीछै बादर काययोगकौ नष्टकरि सूक्ष्मरूप करै है या प्रकार जो बादररूप इनकी शक्ति पूर्वे थी ताकौ घटाइ सूक्ष्म करी। बहुरि केवली सूक्ष्म काययोगरूप प्रवर्तती पहलै सूक्ष्म मनोयोगकौ पीछै सूक्ष्म वचनयोगकौ पीछै सूक्ष्म उश्वासकौ पीछै सूक्ष्म काययोगकौ नष्ट करै है। इहा प्रश्न—

जो विद्यमानका नाश सभवै। इहाँ काययोगरूप प्रवर्तना अन्य योग है नाही, जातै सिद्धातविषै एकै कालि एक योग कह्या है। बहुरि जे योग नाही तिनका नाश कैसें करै है ? ताका समाधान—जो वर्तमान व्यक्तरूप काययोग ही प्रवर्तै है, परतु मन-वचनयोगकी वर्गणानिविषै मन-वचनयोग उपजावनेकी शक्ति तहाँ पाइए है ताकौं नष्ट करै है। तिनकी पहलैं बादरयोग उपजावनेकी शक्ति दूर करि सूक्ष्म कृष्टि योग उपजावनेकी शक्तिरूप तिनकौं करै है। पीछै ताकौं भी मिटाइ योग उपजावनेकी शक्तिकरि रहित करै है। ऐसा अर्थ जानना। इहा कारणविषै कार्यका उपचार हो है इस न्यायकरि योगकौ कारण जो वर्गणानिविषै शक्ति ताकौ योग कहिए है ॥६२८॥

इहाँ पूर्वे बादरयोग थे तिनकौं सूक्ष्मरूप परिनमाएँ ते कैसैं भएँ ? सो कहिए है—

सण्णिविसुहुमणि पुण्णे जहण्णमणवयणकायजोगादो।
कुणदि असखगुणूणं सुहुमणिपुण्णवरदो वि उस्सास[1] ॥६२९॥

सज्ञिद्विसूक्ष्मनिपूर्णे जघन्यमनोवचनकाययोगत.।
करोति असख्यगुणोन सूक्ष्मनिपूर्णावरतोऽपि उच्छ्वास ॥६२९॥

स० च०—सज्ञी पर्याप्तकै जो जघन्य मनोयोग पाइए है तातै असख्यातगुणा घटता ऐसा सूक्ष्म मनोयाग करै है। अर वेंद्रिय पर्याप्तकै जो जघन्य वचन योग पाइए है तातै असख्यातगुणा बादर वचनयोग था ताकौ घटाइ तातै असख्यातगुणा घटता सूक्ष्म वचन योग करै है। बहुरि सूक्ष्म निगोद पर्याप्तका जघन्य काययोगतै असख्यातगुणा बादर काययोग था ताकौ मिटाइ तातै असख्यातगुणा घटता सूक्ष्म काययोग करै है। बहुरि सूक्ष्म निगोदिया पर्याप्तका जघन्य उश्वासतैं असख्यातगुणा बादर उश्वास था ताकौ मिटाइ तातै असख्यातगुणा घटता सूक्ष्म उश्वास करै है ॥६२९॥

एक्कक्कस्स णिठभणकालो अतोमुहुत्तमेत्तो हु।
सुहुम देहणिमाणमाण हियमाणि करणाणि[2] ॥६३०॥

---

१ जयध० ता मु पृ २२८३–२२८४।

२ तदो अतोमुहुत्तेण सुहुमकायजोया सुहुमउस्सास णिरुभइ। तदो अतोमुहुत्त गतूण सुहुमकायजोगण सुहुमकायजोग णिरुभमाणो इमाणि करणाणि करेदि। क चु पृ, ९०४।

एकैकस्य निष्टभनकालो अतर्मुहूर्तमात्रो हि ।
सूक्ष्म देहनिर्माण आन हीयमान करणानि ॥६३०॥

स० च०—एक एक बादर सूक्ष्म मनोयोगादिकके निरोध करनेका काल प्रत्येक अतर्मुहूर्तमात्र जानना । बहुरि सूक्ष्म काययोगविषै तिष्ठता सूक्ष्म उश्वासकौ नष्ट करनेके अनतरि सूक्ष्म काययोग नाश करनेकौ प्रवर्तै है । ताकै विना इच्छा अबुद्धिपूर्वक आगै कहिए है ते कार्य हो हैं ॥६३०॥

सुहुमस्स य पढमादो मुहुत्तअतो त्ति कुणदि हु अपुव्वे ।
पुव्वगफड्ढगहेट्ठा सेढिस्स असखभागमिदो[२] ॥६३१॥

सूक्ष्मस्य च प्रथमात् मुहूर्तान्तमिति करोति हि अपूर्वान् ।
पूर्वस्पर्धकाधस्तन श्रेण्या असख्यभागमित ॥६३१॥

स० च०—सूक्ष्म काययोग होनेका प्रथम समयतै लगाय अतर्मुहूर्त कालपर्यन्त पूर्व स्पर्धकनिके नीचै जगच्छ्रेणिके असख्यातवै भागमात्र अपूर्व स्पर्धक करै है । सोई कहिए है—

पूर्व स्पर्धकनिका स्वरूप गोम्मटसारका कर्मकाडविषै जो बध-सत्त्व-उदय अधिकार है तिसविषै प्रदेशबधका कथनका प्रसग पाइ योगनिका वर्णन कीया है, तहाँतै जानना । इहाँ भी किछू कहिए है—

जघन्य योगस्थानयुक्त जीव ताके लोकमात्र प्रदेश तिनविषै जिस प्रदेशविषै सबतै स्तोक योगशक्ति पाइए ताकौ स्थापि ताके उपरि तिसतै बधती अर अन्य प्रदेशनितै हीन जिस अन्य प्रदेशविषै योगशक्ति पाइए ताकौ स्थापै तिस प्रदेशतै याविषै जितनी योग शक्ति बधती है ताका नाम अविभागप्रतिच्छेद है । बुद्धिविषै इतने प्रमाण खड कल्पि याकरि योगशक्तिका प्रमाण कीजिए तब जघन्य शक्तियुक्त प्रदेशनिविषै असख्यात लोकमात्र अविभागप्रतिच्छेद हो है । इनका समूहरूप जो एक प्रदेश ताकौ जघन्य वर्ग कहिए है । बहुरि इतने इतने अविभागप्रतिच्छेद जिनि प्रदेशनिविषैं समानरूप पाइए तिनिका समूहका नाम जघन्य वर्गणा है । ते प्रदेश कितने है ?

सर्व जीवके प्रदेशनिकौ साधिक ड्योढ गुणहानिका भाग दीएँ एक भागमात्र है, सो असख्यात जगत्प्रतरप्रमाण हैं । इहा एक गुणहानिविषै जो स्पर्धकनिका प्रमाण ताकौ एक स्पर्धकविषैं जो वर्गणानिका प्रमाण ताकौ गुणैं जो होइ सो एक गुणहानिका प्रमाण जानना । बहुरि ताके उपरि जघन्य वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनितै एक अविभागप्रतिच्छेद जिनिविषै अधिक पाइए ऐसैं वर्गनिका समूहरूप द्वितीय वर्गणा है । ते वर्गरूप प्रदेश कितने है ?

जघन्य वर्गणाके प्रदेशनितै एक विशेषमात्र घटती हैं । विशेषका प्रमाण जघन्य वर्गणाकौ दोय गुणहानिका भाग दीएँ जो होइ सो जानना । बहुरि इहातै ऊपरि द्वितीय गुणहानिकी प्रथम वर्गणापर्यन्त वर्गणानिविषै प्रदेशरूप वर्गणानिका प्रमाण एक एक विशेषमात्र घटता क्रमतैं जानना ।

तहा द्वितीय वर्गणाका वर्गके अविभागप्रतिच्छेदनितै एक अधिक अविभागप्रतिच्छेदयुक्त वर्गनिका समूहरूप तृतीय वर्गणा होइ ऐसैं एक एक अधिक अविभागप्रतिच्छेदयुक्त वर्गनिका क्रम लीएँ जगच्छ्रेणिका असख्यातवा भागमात्र वर्गणानिकी रचना करिए, इनका समूहका

२ पढमसमए अपुव्वफद्दयाणि करेदि पुव्वफद्दाण हेट्ठदो । क चु पृ, ९०४ ।

नाम जघन्य स्पर्धक है। बहुरि ताके ऊपरि जघन्य वर्गके अविभागप्रतिच्छेदनितै दूणा अविभागप्रतिच्छेदयुक्त वर्गनिका समूहरूप द्वितीय स्पर्धककी प्रथम वर्गणा हो है। ताके ऊपरि तातै एक अधिक अविभागप्रतिच्छेदयुक्त वर्गनिका समूहरूप ताकी द्वितीय वर्गणा है। ऐसैं क्रम लीए श्रेणिका असख्यातवा भागमात्र वर्गणा होइ तिनके समूहका नाम द्वितीय स्पर्धक है। बहुरि ताके ऊपरि जघन्य वर्गके अविभागप्रतिच्छेदनितै तिगुणा अविभागप्रतिच्छेदयुक्त वर्गनिका समूहरूप तृतीय स्पर्धककी प्रथम वर्गणा होइ। ताके ऊपरि पूर्वोक्तवत् एक एक अधिक अविभागप्रतिच्छेद अधिकयुक्त वर्गनिका समूहरूप द्वितीयादि वर्गणा होइ। ऐसैं श्रेणिका असख्यातवा भागमात्र वर्गणा होइ तिनके समूहका नाम तृतीय स्पर्धक है। या प्रकार अविभागप्रतिच्छेद बधनेका यावत् अनुक्रम होइ तावत् सोई स्पर्धक अर युगपत् अनेक स्पर्धक बँधै अन्य स्पर्धक होइ। सो ऐसैं जगच्छ्रे णिके असख्यातवैं भागमात्र स्पर्धक भए तिनिका समूहरूप प्रथम गुणहानि हो है। बहुरि ताके ऊपरि एक गुणहानिविषै जो स्पर्धकनिका प्रमाण तातै एक अधिक प्रमाणकरि गुणित जो जघन्य वर्गके अविभाग प्रतिच्छेदनिका प्रमाण होइ तितने अविभागप्रतिच्छेदयुक्त वर्गनिका समूहरूप द्वितीय गुणहानिका प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणा होइ। याविषै वर्गनिका प्रमाण गुणहानिकी प्रथम वर्गणाके वर्गनिका प्रमाणतैं आधा जानना। बहुरि ताके ऊपरि प्रथम गुणहानिवत् अनुक्रम जानना। वर्गणानिविषै वर्गनिका प्रमाण एक एक विशेष घटता है। सो इहाँ विशेषका प्रमाण प्रथम गुणहानिके विशेषतै आधा जानना। ऐसैं द्वितीय गुणहानि समाप्त होइ है।

ऐसैं जघन्य स्पर्धकतै लगाय जितने स्पर्धक होइ तितना गुणकारकरि जघन्य वर्गके अविभागप्रतिच्छेदनिकौ गुणैं विवक्षित स्पर्धककी प्रथम वर्गणाका वर्गविषै अविभाग प्रतिच्छेदनिका प्रमाण होइ। ऊपरि द्वितीयादि वर्गणानिविषै एक एक अविभागप्रतिच्छेद बधता क्रम लीए वर्ग पाइए है। असख्यात लोकमात्र अविभागप्रतिच्छेदनिका समूहरूप एक प्रदेशका नाम वर्ग है। असख्यात जगत्प्रतरमात्र वर्गनिका समूहरूप एक वर्गणा है। जगच्छ्रे णिके असख्यातवैं भागमात्र वर्गणानिका समूहरूप एक स्पर्धक है। ताके असख्यातवैं भागमात्र जगच्छ्रे णिका असख्यातवाँ भाग प्रमाण स्पर्धकनिका समूहरूप एक गुणहानि हो है। गुणहानि गुणहानि प्रति वर्गणानिविषैं वर्गनिका प्रमाण वा विशेषका प्रमाण क्रमतैं आधा आधा हो है। याहीतैं गुणहानि ऐसा नाम है। ऐसैं पल्यका असख्यातवाँ भागमात्र नाना गुणहानिका समूहरूप जघन्य योगस्थान हो है। स्पर्धकनिकी सदृष्टि इहा जघन्य वर्गविषै अविभागप्रतिच्छेद आठ सो ऐसै वर्गनिका समूहरूप प्रथम वर्गणा है। ताके ऊपरि नव नव अविभागप्रतिच्छेदयुक्त वर्गनिका समूहरूप द्वितीय वर्गणा ऐसैं एक एक वधता क्रम ग्यारह अविभागप्रतिच्छेदयुक्त वर्गपर्यन्त कीया इहा प्रथम स्पर्धक भया। वहुरि दूसरे स्पर्धकके प्रथम वर्गणाके वर्गनिविषै सोलह सोलह अविभागप्रतिच्छेद, ऊपरि एक एक वधता, वहुरि तीसरे स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके वर्गनिविषैं चौईस चौईस ऊपरि एक एक वधता अविभागप्रतिच्छेद है। ऐसैं अकसद्दष्टिकरि पूर्वोक्त कथनके अनुसारि रचना जाननी—

	अतर		अतर		अतर		अतर	
११	०	१९	०	२७	०	३५	०	४३
१० १०	०	१८ १८	०	२६ २६	०	३४ ३४	०	४२ ४२
९ ९ ९	०	१७ १७ १७	०	२५ २५ २५	०	३३ ३३ ३३	०	४१ ४१ ४१
८ ८ ८ ८	०	१६ १६ १६ १६	०	२४ २४ २४ २४	०	३२ ३२ ३२ ३२	०	४० ४० ४० ४०

ऐसैं जघन्य योगस्थान सूक्ष्म निगोदिया लब्धिअपर्याप्तका विग्रहगतिविषैं प्रथम समयवर्ती जीवकै हो है। ताके प्रदेशनिविषै योगशक्तिकी हीन-अधिकता पूर्वोक्त प्रकार जाननी। बहुरि याविषै सूच्यगुलका असख्यातवा भागमात्र जे जघन्य स्पर्धक तिनके जेते अविभागप्रतिच्छेद होइ तिनने मिलाए दूसरा स्थान हो है। तिस जघन्य योगस्थानतैं वधता औरनितैं घटता योगस्थान कोई जीवके होइ तो दूसरा स्थान होइ, यातैं घाटि न होइ। या प्रकार एक एक स्थानप्रति सूच्यगुलका असख्यातवा भागमात्र जघन्य स्पर्धक वधै। ऐसैं जगच्छ्रेणिका असख्यातवा भागमात्र स्थान भए सर्वोत्कृष्ट योगस्थान हो है। सो सज्ञी पर्याप्तककै सभवै है। या प्रकार योगस्थान हैं, तिननिषै सयोगि जिन हैं सो पहिले सज्ञी पर्याप्तिकै सभवता जो वादर काययोगरूप स्थान तिस-रूप प्रवर्तंतौ ताकौ नष्टकरि सूक्ष्म निगोदियाका जघन्य स्थानतैं असख्यातगुणा घटता सूक्ष्म काययोग तिसरूप प्रवर्त्या। वहुरि तिस पूर्व स्पर्धकरूप सूक्ष्म काययोगकी शक्तिकौ अपूर्व स्पर्धक-रूप परिणमावे है। इहातैं पहले कवहू ऐसी क्रिया न भई तातैं सार्थक अपूर्व स्पर्धक नाम है। ते अपूर्व स्पर्धक योगनिका जघन्य स्थानसम्बन्धी जघन्य स्पर्धकके नीचै असख्यातगुणा घटता अविभागप्रतिच्छेद लीए हो है। तिनका प्रमाण जगच्छ्रेणिके असख्यातवा भागप्रमाण है ॥६३१॥

विशेष—जब सूक्ष्म काययोग करनेके बाद यह जीव सूक्ष्म काययोगकी परिस्पन्द शक्तिको सूक्ष्म निगोदिया जीवोके जघन्य योगसे भी असख्यातगुणी हीन परिणमाता हुआ उसे भी अत्यधिक अपकर्षित करके अपूर्व स्पर्धकरूपसे परिणमाता है तब इसकी अपूर्व स्पर्धककरण सज्ञा होती है। अतएव यहाँ इस करणका प्ररूपण करनेके लिए पूर्व स्पर्धकको श्रेणिके असख्यातवें भागरूपसे रचना करनी चाहिये। ऐसा करनेपर सूक्ष्म निगोदियाके जघन्य स्थानसम्बन्धी स्पर्धकोसे वे स्पर्धक असख्यातगुणे हीन होकर स्थित होते हैं, अन्यथा उनसे ये सूक्ष्मपनेको नही प्राप्त हो सकते। इस प्रकार पूर्व स्पर्धकोसे अपूर्व स्पर्धक करनेकी यह प्रक्रिया है।

पुव्वादिवग्गणाण जीवपदेसा विभागपिंडादो।
होदि असखं भाग अपुव्वपढमम्हि ताण दुगं[1] ॥६३२॥

पूर्वादिवर्गणाना जीवप्रदेशाविभागपिंडतः।
भवति असख्य भागमपूर्वप्रथमे तयोर्द्विकम् ॥६३२॥

स० चं०—पूर्वस्पर्धकनिके जीवके प्रदेशनिका पिंडतैं अर आदि वर्गणाका अविभाग-प्रतिच्छेदनिका पिंडतै अपूर्व स्पर्धकका प्रथम समयविषै तिनके ते दोऊ असख्यातवे भागमात्र हो हैं। भावार्थ—

पूर्व स्पर्धकनिके सर्व प्रदेश साधिक द्व्यर्धगुणहानिगुणित प्रथम वर्गणामात्र है। तिनकौ अपकर्षण भागहारमात्र असख्यातका भाग दीए जो एक भागमात्र प्रदेश तिनकौ अपूर्व स्पर्धकरूप हो है। वहुरि पूर्व स्पर्धकनिकी जो आदि वर्गणा ताका वर्गविषै जे ते अविभागमात्र प्रदेश तिनकौ अपूर्व स्पर्धकरूप हो है। वहुरि पूर्व स्पर्धकनिकी जो आदि वर्गणा ताका वर्गविषै जेते अविभाग-

---

१ आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदाणमसखेज्जदिभागमोकड्डदि। जीवपदेसाण च असखेज्जदिभाग-मोकड्डदि। एवमतोमुहुत्तमपुव्वफद्दयाणि करेदि। क चु पृ ९०४।

प्रतिच्छेद पाइए है ताकौ पल्यके असख्यातवा भागमात्र असख्यातका भाग दीए तहा एकभागमात्र अपूर्व स्पर्धककी अत वर्गणाका वर्गविषै अविभागप्रतिच्छेद पाइए है। इहा प्रथम समयविषै अपकर्षण कीए जे जीवके प्रदेश तिनिविषै अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै तो बहुत प्रदेश दीजिए है। अर द्वितीयादि अन्त पर्यन्त वर्गणानिविषै विशेष घटता क्रम लीए दीजिए है। इहा विशेषका प्रमाण प्रथम वर्गणाकौ जगच्छ्रेणिका असख्यातवा भागका भाग दीए आवै है। बहुरि अपूर्व स्पर्धककी अन्त वर्गणाविषै दीया प्रदेशसमूहकौ साधिक अपकर्षण भागहारका भाग दीए एक भागमात्र पूर्वस्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै दीया प्रदेश समूह हो है। ताके ऊपरि यथोचित विशेष घटता क्रमलीए प्रदेश दीजिए है। इहा प्रदेश देनेका अर्थ यहु जानना जो प्रदेशनिकौ ऐसै योगरूप परिनमाइए है। इहा प्रथम समयविषै कीने अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण जो एक गुणहानिविषैं पूर्वस्पर्धकनिका प्रमाण है ताके असख्यातवै भागमात्र जानना ॥६३२॥

ओंकड्डदि पडिसमय जीवपदेसे असंखगुणियकमे ।
कुणदि अपुव्वफड्डय तग्गुणहीणक्कमेणेव[1] ॥६३३॥

अपकर्षति प्रतिसमय जीवप्रदेशान् असंख्यगुणितक्रमेण ।
करोति अपूर्वस्पर्धक तद्गुणहीनक्रमेणैव ॥६३३॥

स० च०—द्वितीयादि समयनिविषैं समय समय प्रति असख्यातगुणा क्रमकरि जीव प्रदेशनिकौ अपकर्षण करै है। बहुरि असख्यातगुणा घटता क्रमकरि नवीन अपूर्व स्पर्धक करिए है। तहा द्रव्य देनेका विधान कहिए है—

द्वितीय सकयविषै जेते प्रथम समयविषैं प्रदेश अपकर्षण कीए तिनितै असख्यातगुणा प्रदेशनिकौ अपकर्षण करि प्रथम समयविषैं कीने थे जे अपूर्वस्पर्धक तिनके नीचै इस समयविषै नवीन अपूर्व स्पर्धक करिए है। तहा अपकर्षण कीए प्रदेशनिविषै तिन नवीन कीए अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै वहुत प्रदेश दीजिए है। ताके ऊपरि द्वितीयादि अन्त पर्यन्त वर्गणानिविषै विशेष घटता क्रम लीए दोजिए है। यहा प्रथम समयविषै कीए अपूर्व स्पर्धकनितै द्वितीय समयविषै कीए नवीन अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण असख्यात गुणा घटता कानना। बहुरि तिसकी अन्त वर्गणाके ऊपरि प्रथम समयविषैं कीए अपूर्व स्पर्धकनिकी प्रथम वर्गणा तीहिविषैं तातैं असख्यातगुणा घटता दोजिए है। ताके ऊपरि पूर्व स्पर्धककी अन्त वर्गणापर्यन्त विशेष घटता क्रम लीए दीजिए है। वहुरि तृतीयादि ममयनिविषै भी ऐसै ही विधान जानना। विशेष इतना—

समय-समय प्रति अपकर्षण कीए प्रदेशनिका प्रमाण असख्यातगुणा क्रमतैं जानना। अर नीचै नीचै नवीन अपूर्व स्पर्धक करिए है तिनका प्रमाण असख्यातगुणा घटता क्रमतै जानना। वहुरि तहाँ अपकर्पण कीया प्रदेशनिविपैं नवीन स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै वहुत प्रदेश होइ। ताके ऊपरि ताकी अन्त वर्गणापर्यन्त तौ विशेप घटता क्रमलीए देना। अर ताके ऊपरि पूर्व समयविपै कीने स्पर्धककी प्रथम वर्गणा विपैं असख्यातगुणा घटता दीजिए है। ताके ऊपरि विशेप घटता क्रम लीए दीजिए है। ऐसै देय प्रदेशनिका विधान कह्या अर दृश्यमान प्रदेश सर्व समयनिविपै पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिकै विशेप घटता क्रमलीए ही जानना ॥६३३॥

१ क० चु० पृ० ९०४।

सेढिपदस्स असखं भाग पुव्वाण फड्डयाण वा ।
सव्वे होंति अपुव्वा हु फड्डया जोगपडिबद्धा[1] ॥६३४॥

श्रेणिपदस्यासंख्य भाग पूर्वेषा स्पर्धकाना वा ।
सर्वे भवति अपूर्वा हि स्पर्धका योगप्रतिबद्धा ॥६३४॥

स० च०—सर्व समयनिविषै कीए योगसम्बन्धी अपूर्व स्पर्धक तिनिका जो प्रमाण सो जगच्छ्रेणिका प्रथम वर्गमूलके असख्यातवै भागमात्र है। अथवा सर्व पूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण के असख्यातवैं भागमात्र है। जातै पूर्व स्पर्धकनिविषै पल्यका असख्यातवा भागमात्र गुणहानि पाइए है। तहा एक गुणहानिविषै जो स्पर्धकनिका प्रमाण ताके असख्यातवै भागमात्र सर्व अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण है। ऐसै अन्तर्मुहूर्त कालविषै अपूर्व स्पर्धक क्रिया हो है। इहाँ स्थिति-अनुभागकाडकका घात गुणश्रेणीनिर्जरा पूर्ववत् ही प्रवर्तै है ॥६३४॥

एत्तो करेदि किट्टिं मुहुत्तअतो त्ति ते अपुव्वाण ।
हेट्ठादु फड्डयाण सेढिस्स असखभागमिदं[2] ॥६३५॥
इत करोति कृष्टि मुहूर्तान्तमिति ता अपूर्वेषाम्।
अधस्तनात् स्पर्धकाना श्रेण्या असख्यभागमिताम् ॥६३५॥

स० च०—याके अनतरि अन्तर्मुहूर्त कालपर्यन्त अपूर्व स्पर्धकनिके नीचै सूक्ष्म कृष्टि करै है। जो पूर्व अपूर्व स्पर्धकरूप योगशक्ति थी ताकौ घटाइ असख्यातगुणी घाटि करै है। तिन सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रमाण जगच्छ्रेणिके असख्यातवैं भागमात्र है। एक स्पर्धकविषै जो वर्गणानिका प्रमाण ताके असख्यातवै भागमात्र है ॥६३५॥

अपुव्वादिवग्गणाण जीवपदेसाविभागपिंडादो ।
होंति असख भागं किट्टीपढमम्हि ताण दुग[3] ॥६३६॥

अपूर्वादिवर्गणाना जीवप्रदेशाविभागपिडत. ।
भवति असख्यं भाग कृष्टिप्रथमे तयोर्दिकम् ॥६३६॥

स० च०—अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी सर्व जीव प्रदेशनिकै अर अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनिके असख्यातवें भागमात्र कृष्टिकरणका प्रथम समयविषैं तिनके ते दोऊ हो हैं। भावार्थ—

सर्व पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिका जो प्रदेश समूह ताकौं अपकर्षण भागहारका भाग दीए

---

१ अपुव्वफद्दयाणि सेढीए असखेज्जदिभागो। सेढिवग्गमूलस्स वि असखेज्जदिभागो। पुव्वफद्दयाण वि असखेज्जदिभागो सव्वाणि अपुव्वफद्दयाणि। क० चु०, पृ० ९०५।

२ एतो अतोमुहुत्त किट्टीओ करेदि। क० चु०, पृ० ९०५।

३ अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदाणमसखेज्जदिभागमोकड्डदि। जीवपदेसाणम-सखेज्जदिभागमोकड्डदि। क० चु० पृ० ९०५।

एकभागमात्र प्रदेश प्रथम समयविषैं ग्रहि कृष्टि करिए है। सो इनिका प्रमाण सर्व अपूर्व स्पर्धकनिके प्रदेशनिका प्रमाणके असख्यातवै भागमात्र है। बहुरि अपूर्व स्पर्धकनिकी जघन्य वर्गणाका वर्गके जैते अविभागप्रतिच्छेद है तिनके असख्यातवें भागमात्र उत्कृष्ट अन्त कृष्टिके एक प्रदेशसम्बन्धी अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाण हो है। वहुरि इहा प्रथम समयविषै अपकर्षण कीया प्रदेश देनेका विधान कहिए है—

जघन्य कृष्टिविषैं बहुत प्रदेश दीजिए है। ताके ऊपरि द्वितीयादि अन्त पर्यन्त कृष्टिनिविषै विशेष घटता क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। इहा विशेषका प्रमाण प्रथम कृष्टिकों जगच्छ्रेणिका असख्यातवा भागका भाग दीए आवै है। बहुरि अन्त कृष्टितै अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणा विषैं असख्यातगुणा घाटि दीजिए है। बहुरि उपरि विशेष घटता क्रम लीए प्रदेश दीजिए है। इहा प्रथम समय विषै कीनी कृष्टिनिका प्रमाण है सो एक स्पर्धक विषै जितना वर्गणानिका प्रमाण ताके असख्यातवें भागमात्र है ॥६३६॥

ओकड्डदि पडिसमयं जीवपदेसे असखगुणियकमे।
तग्गुणहीणकमेण य करेदि किट्टिं तु पडिसमए[1] ॥६३७॥

अपकर्षति प्रतिसमय जीवप्रदेशान् असख्यगुणितक्रमेण।
तद्गुणहीनक्रमेण च करोति कृष्टि तु प्रतिसमय ॥६३७॥

स० च०—द्वितीयादि समयनिविषैं समय समय प्रति असख्यातगुणा क्रमकरि जीवके प्रदेशनिकों अपकर्षण करै है। बहुरि समय समय प्रति पूर्व समयविषैं कीनी जे कृष्टि तिनके नीचैं असख्यातगुणा घटता क्रम लीए नवीन कृष्टि करै है। इहा अपकर्षण कीया प्रदेश देनेका विधान कहिए है—

नवीन कृष्टिकी प्रथम कृष्टिविषैं जो बहुत प्रदेश दीजिए है ताके ऊपरि द्वितीयादि अन्त पर्यन्त कृष्टिनिविषैं विशेष घटता क्रम लीए दीजिए है। ताके ऊपरि पूर्व समयविषैं कीनी कृष्टिकी प्रथम कृष्टिविषैं असख्यातगुणा घटता दीजिए है। इस कृष्टिविषैं पूर्व जेते प्रदेश थे तितने अर एक विशेष इतना प्रदेश नवीन अन्त कृष्टितै याविषै घाटि दीजिए है। बहुरि ताके ऊपरि अन्त कृष्टिपर्यन्त विशेष घटता क्रम लीए दीजिए है। इहा मध्यम खडादिविधान पूर्वोक्त प्रकार जानना। बहुरि अन्त कृष्टिविषैं दीया द्रव्यतैं अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाविषैं दीया प्रदेश सख्यात-गुणा जानना। ताके ऊपरि अन्त पूर्व स्पर्धक वर्गणापर्यन्त विशेष घटता क्रम लीए प्रदेश दीजिए है ॥६३७॥

सेढिपदस्स असख भागमपुव्वाण फड्ढयाण व।
सव्वाओ किट्टीओ पल्लस्स असखभागगुणिदकमा[2] ॥६३८॥

---

१ एत्थ अतोमुहुत्त करेदि किट्टीओ असखेज्जगुणहीणाए सेढीए। जीवपदेसाणमसखेज्जगुणाए सेढीए। क० चु०, पृ० ९०५।

२ किट्टीगुणगारो पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो। किट्टीओ सेढीए असखेज्जदिभागो। अपुव्वफद्दयाण पि असखेज्जदिभागो। क० चु०, पृ० ९०५।

श्रेणिपदस्य असख्य भाग अपूर्वेषा स्पर्धकाना वा ।
सर्वा. कृष्टय पल्यस्य असख्यभागगुणितक्रमा ॥६३८॥

स० च०—सर्व समयनिविषै कीनी कृष्टिनिका प्रमाण जगच्छ्रेणिका असख्यातवा भागमात्र है । अथवा अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाणके असख्यातवा भागमात्र है इहा कोऊ कहै—

स्पर्धक अर कृष्टिविषै विशेष कहा ? ताका समाधान—अविभागप्रतिच्छेद अपेक्षा स्पर्धक तौ विशेष बधता क्रमलीएँ है । अपूर्व स्पर्धकनिविषै भी पूर्व स्पर्धकवत् ही अविभागप्रतिच्छेदनिका क्रम पाइए हैं । बहुरि कृष्टि है सो गुणकार बधता क्रमलीएँ है ऐसा विशेष है । कृष्टिनिविषै गुणकार पल्यका असख्यातवा भागमात्र जानना । अत कृष्टिविषै समान अविभागप्रतिच्छेदयुक्त असख्यात जगत्प्रतरप्रमाण जीवप्रदेश है । तिनविषै जो एक प्रदेश तीहिविषै जेते अविभागप्रतिच्छेद हैं तिनतै द्वितीय कृष्टिका एक प्रदेशविषै पल्यका असख्यातवा भागगुणे हैं । तातै तृतीय कृष्टिका एक प्रदेशविषै तितनेगुणे हैं । ऐसै अत कृष्टिपर्यन्त क्रम जानना । अत कृष्टितै अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाका एक प्रदेशविषै अविभागप्रतिच्छेद पल्यका असख्यातवा भागगुणा हैं । इस गुणकारकौ कृष्टिस्पर्धकसबधी कहिए । ताके ऊपरि द्वितीयादि वर्गणानिके प्रदेशनिविष यथासभव स्पर्धक विधानवत् विशेष बधते अविभागप्रतिच्छेद पाइए है ऐसैं एक एक प्रदेश अपेक्षा कथन कीया । नाना प्रदेशनिकी अपेक्षा जघन्य कृष्टिके सर्व प्रदेशसबधी अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाण हो है । ऐसै अत कृष्टिपर्यन्त गुणकार जानना । बहुरि अत कृष्टितै अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके सर्व प्रदेशसबधी अविभागप्रतिच्छेद असख्यातगुणे घाटि है । जातै अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै अविभागप्रतिच्छेद अत कृष्टितै जेते गुणे है तिस गुणकारतै असख्यातगुणे गुणकार करि गुणित तिस प्रथम वर्गणाके प्रदेशमात्र अत कृष्टिके प्रदेश पाइए हैं ॥६३८॥

एत्थापुव्वविहाण अपुव्वफड्ढयविहिं व सजलणे ।
बादरकिट्टिविहिं वा करण सुहुमाण किट्टीण ॥६३९॥

अत्रापूर्वविधान अपूर्वस्पर्धकविधिरिव सज्वलने ।
बादरकृष्टिविधिरिव करणं सूक्ष्माणा कृष्टीनाम् ॥६३९॥

स० च०—इहाँ योगनिके अपूर्व स्पर्धक करनेका विधान जैसै पूर्वे सज्वलन कषायके अपूर्व स्पर्धक करनेका विधान कह्या तैसे जानना । बहुरि यहा योगनिकी सूक्ष्म कृष्टि करनेका विधान पूर्वै जैसै सज्वलन कषायकी बादर कृष्टि करनेका विधान कह्या है तैसे जानना । प्रमाणादिकका विशेष है सो विशेष जानना ॥६३९॥

किट्टीकरणे चरमे से काले उभयफड्ढये सव्वे ।
णासेइ मुहुत्त तु किट्टीगदवेदगो जोगी[1] ॥६४०॥

कृष्टिकरणचरमे स्वे काले उभयस्पर्धकान् सर्वान् ।
नाशयति मुहुर्तं तु कृष्टिगतवेदको योगी ॥६४०॥

१ किट्टीकरणद्धे णिट्ठिदे से काले पुव्वफद्दयाणि अपुव्वफद्दयाणि च णासेदि । अतोमुहुत्त किट्टीगदजोगो होदि । क० चु०, पृ० ९०५ ।

स० च०—कृष्टिकरण कालका अन्त समय भए ताके अनतरि अपने कालविषै सर्व पूर्व अपूर्व स्पर्धकरूप प्रदेशनिकौ नष्ट करै है। कृष्टिकरण कालका अन्त समयपर्यंत पूर्व अपूर्व स्पर्धक दृश्यमान थे अब ते सर्व ही कृष्टिरूप परिणमे बहुरि इस समयतै लगाय सयोगी गुणस्थानका अन्तपर्यत जो अन्तर्मुहूर्त काल तिसविषै कृष्टिको प्राप्त योग ताकौ वेदे है—अनुभवे है प्रदेशनिविषै जो कृष्टिरूप योगशक्ति भई सो अब वह प्रगट परिणमै है ॥

पढमे असखभागं हेट्ठुवरिं णासिदूण विदियादी।
हेट्ठुवरिमसखगुणं कमेण किट्टिं विणासेदि[1] ॥६४१॥

प्रथमे असख्यभाग अघस्तनोपरि नाशयित्वा द्वितीयादौ।
अधस्तनोपर्यसंख्यगुण क्रमेण कृष्टि विनाशयति ॥६४१॥

स० च०—कृष्टिवेदक कालका प्रथम समयविषैं स्तोक अविभागप्रतिच्छेदयुक्त नीचंकी अर बहुत अविभागप्रतिच्छेदयुक्त ऊपरिकी जे कृष्टि तिनकौ बीचिकी कृष्टिरूप परिणमाइ नष्ट करै है। तिनका प्रमाण सर्व कृष्टिनिके असख्यातवे भागमात्र है। बहुरि द्वितीयादि समयनिविषैं तिनतै असख्यातगुणा क्रमलीए ऊपरिकी कृष्टिनिकौ तैसै ही नष्ट करै है। इहाँ ऐसा जानना—

नीचै ऊपरिकी कृष्टिनिकौ नाही वेदै है। बीचिकी कृष्टिनिकौ वेदै है। वेदककालविषै नीचै ऊपरिकी कृष्टि है तिनिकौ वीचिकी कृष्टिरूप परिणमाइ वेदै है ॥६४१॥

मज्झिम बहुभागुदया किट्टिं पक्खिय विसेसहीणकमा।
पडिसमय सत्तीदो असखगुणहीणया होंति[2] ॥

मध्या बहुभागोदया कृष्टिमपेक्ष्य विशेषहीनक्रमा।
प्रतिसमय शक्तित. असख्यगुणहीनका भवति ॥६४२॥

स० च०—सर्व कृष्टिनिकौ असख्यातका भाग दीए तहा वहुभागमात्र जे बीचिकी कृष्टि ते उदयरूप हो हैं। ते प्रथम समयतै द्वितीयादि समयनिविषैं विशेष घटता क्रम लीए जाननी। ऐसैं कृष्टिनाश करनेतै अविभागप्रतिच्छेदरूप शक्ति अपेक्षा प्रथम समयतै द्वितीयादि सयोगीका अत समयपर्यंत असख्यातगुणा घटता क्रम लीए योग पाइए हैं ॥६४२॥

किट्टिगजोगी झाण झायदि तदिय खु सुहुमकिरिय तु।
चरिमे असखभागे किट्टीण णासदि सजोगी[3] ॥६४३॥

१ पढमसमय किट्टिवेदगो किट्टीणमसखेज्जे भागे वेदेदि। पुणो विदियसमए पढमसमयवेदिदकिट्टीण हेट्ठिमोपरिमाणसखेज्जभागविसयाओ किट्टीओ सगसरूव छडिय मज्झिमकिट्टीसरूवेण वेदिज्जति त्ति पढमसमयजोगादो विदियसमयजोगो असखेज्जगुणहीणो होइ। एव तदियादिसमएसु वि णेदव्व । जयध० ता० मु०, पृ० २२९०।

२ तदो पढमसमए वहुगीओ किट्टीओ वेदेदि, विदियसमए विसेसहीणाओ वेदेदि। एव जाव चरिमसमओ त्ति विसेसहीणकमेण किट्टीओ वेदेदि त्ति वत्तव्व। जयध० ता० मु०, पृ० २२९०।

३ सुहुमकिरियपडिवादझाण झायदि। किट्टीण चरिमसमए असखेज्जे भागे णासेदि। क० चु०, पृ० ९०५।

कृष्टिगयोगी ध्यान ध्यायति तृतीयं खलु सूक्ष्मक्रिय तु ।
चरमे असख्यभागान् कृष्टीना नाशयति सयोगी ॥६४३॥

स० च०—ऐसै सूक्ष्म कृष्टिका वेदक जो सयोगी जिन सो तीसरा सूक्ष्मक्रियाऽप्रतिपाति नामा शुक्लध्यानकौं ध्यावै है। सूक्ष्म कृष्टिकौ प्राप्त काययोग जनित इहाँ क्रिया जो परिस्पद सो पाइए है। अर अप्रतिपाति कहिए पडनेतैं रहित है, तातैं तिस ध्यानका नाम सार्थ है। याका फल योगनिरोध होना ही जानना। यद्यपि प्रत्यक्ष निरतर ज्ञानीकै चितानिरोध लक्षणरूप ध्यान सभवै नाही तथापि योगनिका निरोध होतैं आस्रव निरोध होनेरूप ध्यान फलकौ देख उपचारतैं केवलीकै ध्यान कह्या है। अथवा छद्मस्थनिकै चिताका कारण योग है, तातैं कारण विपै कार्यका उपचार करि योगका भी नाम चिता है। ताका इहा निरोध हो है। तातैं भी ध्यान कहना सभवै है। छद्मस्थनिकै चिताका निरोधका नाम ध्यान है। केवलीक योगनिरोधका नाम ध्यान है ऐसा जानना। ऐसैं पूर्वोक्त प्रकार समय समय प्रति असख्यातगुणा क्रम लीए कृष्टिनिकौ नष्ट करता सता सयोगीका अत समय विषै जे कृष्टिनिका सख्यात बहुभागमात्र वीचिकी कृष्टि अवशेष रही तिनिकौ नष्ट करै है जातैं याके अनतरि अयोगी होना है ॥६४३॥

जोगिस्स सेसकाल मोत्तूण अजोगिसव्वकाल च ।
चरिम खड गेण्हदि सीसेण य उवरिमठिदीओ[1] ॥६४४॥

योगिन. शेषकाल मुक्त्वा अयोगिसर्वकाल च ।
चरम खड गृह्णाति शीर्षेण च उपरिमस्थिती ॥६४४॥

स० च०—सयोगी गुणस्थानका अतर्मुहूर्तमात्र काल अवशेष रहै वदनी नाम गोत्रका अत स्थितिकाडककौ ग्रहै है। ताकरि सयोगीका जो अवशेष काल रह्या सो अर अयोगीका सव काल मिलाए जो होइ तितने निषेकनिकौं छोडि अवशेष सर्व स्थितिके गुणश्रेणिशीर्षसहित जे उपरितन स्थितिके निषेक तिनकौं लाछित करै है—नष्ट करनेकौ प्रारभै है ॥६४४॥

तत्थ गुणसेढिकरण दिज्जादिकमो य सम्मखवण वा ।
अ तिमफालीपडण सजोगगुणठाणचरिमम्हि[2] ॥६४५॥

तत्र गुणश्रेणिकरण देयादिक्रमश्च सम्यक्त्वक्षपणमिव ।
अतिमस्फालिपतन सयोगगुणस्थानचरिमे ॥६४५॥

स० च०—तहाँ गुणश्रेणिका करना वा तहा देय द्रव्यादिकका अनुक्रम सो जैसै पूर्वै क्षायिक सम्यक्त्व होतैं सम्यक्त्व मोहनीका क्षपणा विधानविषै कह्या था तैसैं जानना। अत काडकके द्रव्यकौ अपकर्षण करि पूर्वोक्त क्रमतैं उदय निषेकविषै स्तोक द्रव्य दीजिए है। ताके ऊपरि काडकघात भए पीछै जो अवशेष स्थिति रहैगी ताका अत समय पर्यन्त असख्यातगुणा

---

१ सपहि णामा-गोद-वेदणीयाण चरिमट्ठिदिखडयमागाएतो जेत्तियजोगिअद्धा से समजोगिकालो च एत्तियमेत्तट्ठिदीओ मोत्तूण गुणसेढि सीसएण सह उवरिमसव्वट्ठिदीओ आगाएदि। क० चु० पृ० २२९१।
२ जयध० ता० मु०, पृ० २२९१।

क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। यहाँ यहु गुणश्रेणि आयाम प्रारभ भया सो गलितावशेष जानना। बहुरि इसका अत समयसवधी निषेकहीका नाम गुणश्रेणिशीर्ष है। बहुरि इसतै याके ऊपरि जो स्थितिकाडकका प्रथम निषेक ताविषै असख्यातगुणा द्रव्य दीजिए है। ताके ऊपरि पूर्व जो गुणश्रेणिआयाम था ताका अतपर्यन्त विशेष घटता क्रमकरि दीजिए है। ताके ऊपरि जो अनतरवर्ती निषेक ताविषै असख्यातगुणा घटता द्रव्य दीजिए है। ताके ऊपरि विशेष घटता क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। ऐसै अत काडकोत्करणका प्रथमादि समयविषै द्रव्य देनेका विधान है। सो ऐसे अत काडककी द्विचरम फालिका पतनरूप जो सयोगीका द्विचरम समय तहाँ पर्यन्त तौ ऐसै ही विधान है। बहुरि सयोगीका अत समयविषै तिनकी अन्त फालिका पतन हो है। तहाँ तिस अन्त फालि द्रव्यकौ उदय निषेकविषैं स्तोक अर द्वितीयादि अयोगीका अन्त समयसवधी पर्यन्त निषेकनिविषै असख्यातगुणा क्रम लीए द्रव्य दीजिए है। तहाँ विशेष है सो जानि लेना। ऐसै सयोगीका अन्त समयविषै अघातियानिके अन्त काडककी अन्त फालिका पतन अर योगका निरोध अर सयोग गुणस्थानको समाप्ति युगपत् हो है। यातै उपरि गुणश्रेणि अर स्थिति-अनुभागका घात न हो है। अध स्थिति गलनकरि एक-एक समयविषै एक-एक निषेक क्रमतै उदयरूप होइ निर्जरै है। सो समय समय असख्यातगुणा द्रव्यकी निर्जरा प्रवर्तै है। ऐसै सयोग गुणस्थानका प्ररूपण समाप्त भया ॥४६५॥

से काले जोगिजिणो ताहे आउगसमा हि कम्माणि।
तुरियं तु समुच्छिण्णं किरियं झायदि अयोगिजिणो[1] ॥६४६॥

स्वे काले योगिजिन. तत्र आयुष्कसमानि कर्माणि।
तुरीयं तु समुच्छिन्नक्रियं ध्यायति अयोगिजिन. ॥६४६॥

स० च०—ताके अनतरि अपने कालविषै अयोगी जिन हो है। तहाँ आयु समान तीन अघातियानिकी स्थिति हो है। सो अयोगी जिन, चौथा समुच्छिन्नक्रियानिवृत्तिनामा शुक्ल ध्यानकौ ध्यावै है। सो समुच्छिन्न कहिए उच्छेद भई मन वचन कायकी क्रिया अर निवृत्ति जो प्रतिपात ताकरि रहित यहु ध्यान है तातैं याका नाम सार्थ है। इहाँ भी ध्यानका उपचार पूर्वोक्त प्रकार जानना जातै वस्तुवृत्तिकरि एकाग्र चिंतानिरोध ध्यानका लक्षण है सो केवलीविषै सभवै नाही। समस्त आस्रव रहित केवलीकै अवशेष कर्म निर्जराको कारण जो स्वात्माविषै प्रवृत्ति ताहीका नाम ध्यान है ॥६४६॥

सीलेसिं संपत्तो णिरुद्धणिस्सेसआसओ जीवो।
बंधरयविप्पमुक्को गयजोगो केवली होइ[2] ॥६४७॥

शीलेशत्व सप्राप्तो निरुद्धनि शे वो जीव ।
बन्धरजोविप्रमुक्त· गतयोग. केवली भवति ॥६४७॥

---

१ जोगम्हि णिरुद्धम्हि आउगसमाणि कम्माणि होंति । समुच्छिण्णकिरियमणियट्टिसुक्कज्झाण झायदि। क० चु०, पृ० ९०५–९०६।

२ तदो अतोमुहुत्त सेलेसिय पडिवज्जदि। क० चु०, पृ० ९०५।

स० च०—गया है योग जाका ऐसा अयोगकेवली जीव है सो समस्त शीलगुणका स्वामीपना होनेतैं शैलेश्य अवस्थाको प्राप्त हो गया है। यद्यपि सयोगी जिनकी समस्त शीलगुणका स्वामीपना सम्भवै है, परन्तु योगनिका आस्रव पाइए हैं। तातैं सकल सवरके न सभवतै ताके शैलेश्य अवस्था न सभवै है। अयोगीकै योगास्रव भी न पाइए है, तातैं सकल सवर होनेतैं ताके शैलेश्य अवस्था सम्भवै है। बहुरि सो अयोगी जीव निरोधे है समस्त आस्रव जानै ऐसा है। बहुरि कर्मबन्धरूपी रजकरि विप्रमुक्त कहिए रहित है। भावार्थ यहु—अयोगी जिन सर्वथा निरास्रव निर्बंध भया है ॥६४७॥

बाहत्तरिपयडीओ दुचरिमगे तेरस च चरिमम्हि।
झाणजलणेण कवलिय सिद्धो सो होदि से काले[2] ॥६४८॥

द्वासप्ततिप्रकृतय द्विचरमके त्रयोदश च चरमे।
ध्यानज्वलनेन कवलित सिद्ध स भवति स्वे काले ॥६४८॥

स० च०—अयोगीका काल पाच ह्रस्व अक्षर जेते कालकरि उच्चारण करिए तित्तना है। तहा एक-एक समयविषै एक-एक निषेक गलनरूप जो अध स्थितिगलन ताकरि क्षीण हुई तिस कालका द्विचरम समयविषैं बहत्तरि प्रकृति अर अन्त समय विषै तेरह प्रकृति शुक्लध्यानरूपी ज्वलन जो अग्नि ताकरि कवलित कहिए ग्रासीभूत हो हैं। तहा अनुदयरूप वेदनीय १ देवगति १ शरीर ५ बधन ५ सघात ५ सस्थान ६ अगोपाग ३ सहनन ६ वर्णादिक २० देवगत्यानुपूर्वी १ अगुरुलघु १ उपघात १ परघात १ उस्वास १ अप्रशस्त प्रशस्त विहायोगति दोय २ अपर्याप्त १ प्रत्येक १ स्थिर १ अस्थिर १ शुभ १ अशुभ १ दुर्भग १ सुस्वर १ दु स्वर १ अनादेय १ अयशस्कीर्ति १ निर्माण १ नीचगोत्र १ ए बहत्तरि प्रकृति तौ द्विचरमविषै क्षय भईं। बहुरि उदयरूप वेदनीय १ मनुष्य आयु १ मनुष्यगति १ पचेंद्री जाति १ मनुष्यानुपूर्वी १ त्रस १ बादर १ पर्याप्त १ सुभग १ आदेय १ यशस्कीर्ति १ तीर्थंकर १ उच्चगोत्र १ ए तेरह प्रकृति अत समयविषै क्षय भईं। ऐसै क्षयकरि अनतर समयविषैं सिद्ध हो है। जैसैं कालिमा रहित शुद्ध सोना निष्पन्न होइ तैसै सर्व कर्ममल रहित कृतकृत्य दशारूप निष्पन्न आत्मा हो है ॥६४८॥

तिहुवणसिहरेण मही वित्थारे अट्ठजोयणुदयथिरे।
धवलच्छत्तायारे मणोहरे ईसिपब्भारे ॥६४९॥

त्रिभुवनशिखरेण मही विस्तारे अष्ट योजनान्युदयस्थिरा।
धवलछत्राकारा मनोहरा ईषत्प्राग्भारा ॥६४९॥

स० च०—सो जीव ऊर्ध्व गमन स्वभावकरि तीन लोकके शिखरविषैं ईषत्प्राग्भार है नाम जाका ऐसी जो आठवी पृथ्वी ताके ऊपरि एक समयमात्र कालकरि जाइ तनुवात वलयका अन्तविषै विराजमान हो है। कैसी है वह पृथ्वी? मनुष्य पृथ्वीके समान पैंतालीस लाख योजन

---

२ सेलेसिं अद्धाए झीणाए सव्वकम्मविप्पमुक्को एगसमएण सिद्धिं गच्छइ। क० चु०, पृ० ९०६, जयध० ता० मु०, पृ० २२९३।

चौडी गोल आकार है। बहुरि आठ योजन ऊँची है। बहुरि स्थिर है। बहुरि श्वेत छत्रके आकारि है सो श्वेतवर्ण है। बीचिमे मोटी छेहडै पतली ऐसी है। बहुरि मनोहर है। यद्यपि ईषत्प्राग्भार नामा पृथ्वी घनोदधि वात वलयपर्यन्त है परन्तु इहा तिस पृथ्वीके वीचि पाइए है जो सिद्धशिला ताकी अपेक्षा ऐसा प्ररूपण कीया है। धर्मास्तिकायके अभावतैं तहातै ऊपरी गमन न हो है। तहा ही चरम शरीरतै किंचित् ऊन आकाररूप जीव द्रव्य अनंत ज्ञानानदमय विराजै है ॥६४९॥

पुव्वण्हस्स तिजोगो सतो खीणो य पढमसुक्क तु ।
विदियं सुक्क खीणो इगिजोगो झायदे झाणी ॥६५०॥

पूर्वज्ञस्य त्रियोग. शातः क्षीणश्च प्रथमशुक्लं तु ।
द्वितीय शुक्लं क्षीण एकयोगो ध्यायति ध्यानी ॥६५०॥

स० च—शुक्लध्यान च्यारि प्रकार है तहा सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति व्युपरतक्रियानिर्वृति ए दोऊ तो सयोगी अयोगी केवलीके हो है ते पूर्वे कहे। अर दोय शुक्लध्यान कौनकै हो है ? सो गाथामे वर्णन न कीया था सो अब इहा वर्णन करिए है—

जो महामुनि पूर्वनिका ज्ञाता तीन योगनिका धारक उपशमश्रेणी वा क्षपकश्रेणीवर्ती सो पृथक्त्ववितर्कवीचारनामा पहला शुक्लध्यानकौ ध्यावै है। बहुरि दूसरे शुक्लध्यानकौ क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती तीन योगनिविषै एक योगका धारक होइ सो ध्यावै हैं। इहा पृथक्त्व कहिए जुदा जुदा वितर्क कहिए भावश्रुतज्ञान ताकरि वीचार कहिए अर्थ व्यजन योगनिका सक्रमण तहाँ अर्थनैं ध्यावने योग्य द्रव्य वा पर्याय तिनका अर व्यजन श्रुतके शब्द तिनका अर योग मन वा वचन वा काय तिनका जो पलटना सो वीचार है। ऐसैं जिस ध्यानविषै प्रवृत्ति होइ सो पृथक्त्ववितर्कवीचार जानना। बहुरि जहाँ एकत्व कहिए एकता लिए वितर्क कहिए भाव श्रुत ताकरि अवीचार कहिए जिस अर्थकौं जिस श्रुतशब्दरूप जिस योगकी प्रवृत्ति लीए ध्यावै ताकौं तैसैं ही ध्यावै पलटना न होइ ऐसै एकत्वतर्कअवीचार ध्यानविषै प्रवृत्ति जाननी ॥६५०॥

सो मे तिहुणअमहियो सिद्धो बुद्धो णिरंजणो णिच्चो ।
दिसदु वरणाणदसणचरित्तसुद्धिं समाहिं च ॥६५१॥

स मे त्रिभुवनमहित सिद्धः बुद्धो निरंजनो नित्य. ।
दिशतु वरज्ञानदर्शनचारित्रशुद्धि समाधि च ॥६५१॥

स० च०—सो सिद्ध भगवान त्रिभुवनकरि पूजित अर बुद्ध कहिए सबका ज्ञाता अर निरजन कहिए कर्म रहित अर नित्य कहिए विनाश रहित ऐसा है सो मुझको उत्कृष्ट ज्ञान दर्शन चारित्रकी शुद्धता अर समाधि कहिए अनुभवदशा वा सन्यासमरण ताकौं द्यो प्राप्त करो। इहा सिद्धनिकै जो मोक्ष अवस्था भई ताकौ स्वरूप सर्व कर्मका सर्वथा नाशतैं सपूर्ण आत्मस्वरूपकी प्राप्तिरूप जानना। बहुरि अन्यमती अन्यथा कहै है सो न श्रद्धान करना। तहाँ—

बौद्ध तौ कहै जैसै दीपकका निर्वाण कहिए बुझना तैसैं आत्माका स्कधसतानका नाश होनेतैं जो अभाव होना सोई निर्वाण है ताको कहिए हैं—

जहाँ मूल वस्तुका नाश होइ तौ ताके अर्थि उपाय काहेकौं करिए। ज्ञानी तौ अपूर्व लाभके अर्थि उपाय करै, तातैं अभावमात्र मोक्ष कहना युक्त नाहीं। बहुरि योगमतवाला कहै है—बुद्धि सुख दुःख इच्छा द्वेष प्रयत्न धर्म अधर्म सस्कार ए नव आत्माके गुण हैं तिनका नाश सोइ मोक्ष है। ताकौं भी तिस पूर्वोक्त वचनहीकरि निराकरण समाधान कीया। जहा विशेषरूप गुणनिका अभाव भया तहाँ आत्मवस्तुका अभाव आया सो बनै नाहीं। बहुरि साख्यमतवाला कहै है—दूरि भया है कार्य-कारणसम्बन्ध जाका ऐसा सो आत्मा ताकै बहुत सूता पुरुषकी ज्यो अव्यक्त चैतन्यतारूप होना सो निर्वाण है। ताका भी पूर्वोक्त वचनकरि निराकरण भया। इहा भी अपना चैतन्यगुण था सो उलटा अव्यक्त भया। ऐसें नाना प्रकार अन्यथा प्ररूपै हैं। तिनिका निराकरण जैनके न्याय शास्त्रनिमे कीया है सो जानना। मोक्ष अवस्थाकौं प्राप्त सिद्ध भगवान है ते निरतर अनत अतीन्द्रिय आनन्दकौ अनुभवै है। जातै इन्द्रिय मनकरि किंचित् जानना होइ अर किछू निराकुलता होइ तब ही आत्मा आपकौ सुखी मानै हैं। तौ जहा सर्वका जानना भया अर सर्वथा निराकुलपना भया तौ तहा परम सुख कैसैं न हो है? तीन लोकके तीन कालसम्बन्धी पुण्यवत जीवनिका सुखतै भी अनतगुणा सुख सिद्धनिकै एक समयविषै हो है। जातै ससारविषैं सुख ऐसैं हैं जैसैं महारोगी किंचित् रोगकी हीनता भए आपकौ सुखी मानै अर सिद्धनिकै सुख ऐसै है जैसै रोगरहित निराकुल पुरुष सहज ही सुखी है। ऐसै अनत सुख विराजमान सम्यक्त्वादि अष्ट गुण सहित लोकाग्रविषैं विराजमान सिद्ध भगवान् है सो कल्याण करो।

याप्रकार बाहुबलि नामा मत्रीकरि पूजित जो माधवचद्रनामा आचार्य ताकरि यतिवृषभ नामा आचार्य जाका मूलकर्ता, वीरसेन आचार्य टीकाकर्ता ऐसा धवल जयधवल शास्त्र ताके अनुसारि क्षपणासार ग्रथ कीया। ताके अनुसारि इहा क्षपणाका वर्णनरूप जे लब्धिसारकी गाथा तिनका व्याख्यान कीया ॥६५१॥

अब आचार्य लब्धिसार शास्त्रकी समाप्ति करनेविषै अपना नाम प्रगट करै हैं—

वीरिंदणंदिवच्छेणप्पसुदेणभयणंदिसिस्सेण।
दसणचरित्तलद्धी सुसूयिया णेमिचदेण ॥६५२॥

वीरेंद्रनंदिवत्सेनाल्पश्रुतेनाभयनदिशिष्येण।
दर्शनचारित्रलब्धि सुसूचिता नेमिचन्द्रेण ॥६५२॥

स० च०—नेमिचद्र आचार्य करि इस लब्धिसार नाम शास्त्रविषैं दर्शन चारित्रकी लब्धि सो सुसूत्रिता कहिए भलेप्रकार कही है। कैसा है नेमिचन्द, वीरनदि अर इद्रनदि नामा आचार्य तिनिका वत्स है। ज्ञानदानकरि पोष्या है। बहुरि अभयनन्दि नामा आचार्य तिनिका शिष्य है ॥६५२॥

अब आचार्य अपने गुरूकौं नमस्काररूप अन्त मगल करै हैं—

जस्स य पायपसाएणणतससारजलहिमुत्तिण्णो।
वीरिंदणंदिवच्छो णमामि त अभयणदिगुरु ॥६५३॥

यस्य च पादप्रसादेनानतससारजलधिमुत्तीर्ण.।
वीरेंद्रनदिवत्सो नमामि तमभयनदिगुरुम् ॥६५३॥

स० च०—वीरनदि अर इन्द्रनन्दिका वत्स जो मैं नेमिचन्द्र आचार्य सो जाके चरणनिका प्रसाद करि अनन्त ससार समुद्रतै पार भया तिस अभयनन्दि नामा गुरुकौ मैं नमस्कार करौ हो ॥

ऐसै लब्धिसार नामा शास्त्रके जे गाथासूत्र तिनका अर्थ उपशमश्रेणीका व्याख्यान पर्यंत सस्कृत टीकाके अनुसारि अर क्षपकका व्याख्यान क्षपणासारके अनुसारि इहाँ अपनी बुद्धि माफिक मै कीया है। इहा जो चूक होइ ताकौ सम्यग्ज्ञानी जीव शुद्ध करियो। बहुरि इस शास्त्रका अभ्यासतै दर्शन चारित्रकी लब्धिका स्वरूप जानि आप स्वरूप श्रद्धान आचरणतैं सम्यग्दर्शन चारित्रका धारक होइ केवलज्ञानकौ पाइ सर्व कर्मकौ नाशकर उत्कृष्ट ज्ञानानन्दमय कृतकृत्य अवस्थारूप सिद्ध पदकौ प्राप्त होइ।

दोहा

सम्यग्दर्शन चरणके कारण कर्ता कर्म।
फल भोक्ता मम देहु सब अपनौ अपनौ धर्म ॥१॥

चौपाई

मगल निकौ श्रद्धान, मगल है फुनि सम्यग्ज्ञान।
मगल शुद्ध चरित्र अनूप, इनके धारक मगलरूप ॥१॥

इति श्रीलब्धिसारक्षपणासारव्याख्यान।

सपूर्णम्।



श्रीक्षपणासारगर्भित लब्धिसारका

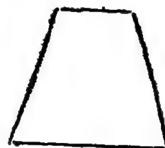
अर्थसंदृष्टि अधिकार

सदृष्टेर्लब्धिसारस्य क्षपणासारमीयुषः ।
प्रकाशिनः पदं स्तौमि नेमीन्दोर्माधवप्रभोः ॥१॥

लब्धिसार क्षपणासार शास्त्रविषै कहे जे अर्थ तिनविषै केते एक अर्थनिकी संदृष्टि जो पूर्वाचार्यनिकरि कीनी संकेतरूप सहनानी तिनके स्वरूपका निरूपण कीजिए है—सो संदृष्टि तौ मूल ग्रन्थविषै वा टीकाविषै जैसैं लिखी तैसे इहा लिखिए है। तहाँ परंपरा लेखक दोषतैं जे संदृष्टि तहाँ अन्यथा लिखी तिनिने बुद्धि अनुसारि सवारि लिखौगा, वा बुद्धि भ्रमतैं अन्यथा लिखी तौ विशेष बुद्धि सवारि लीजियो। बहुरि तिनिका स्वरूप गाथानिविषै लिख्या नाही, टीका-विषै भी लिख्या नाही, मै मेरी बुद्धि अनुसारि विधि मिलाइ २ तिनके स्वरूपकौ लिखौगा सो आकारादिरूप संदृष्टि तौ कठिन अर मेरी बुद्धि अल्प, शास्त्रविषै लिख्या नाही, वा बतावनेवाला मिल्या नाही तातैं जानौ हौ तिनके स्वरूप लिखनेमे चूक परैगी परंतु मार्ग तौ जान्या जाइ इस वासतैं मैं लिखौ हौ सो जहाँ चूक होइ तहाँ विशेष बुद्धि सवारि शुद्ध करियो। मोकौ बालक मानि क्षमा करियो। बहुरि इहाँ संदृष्टि वा तिनका स्वरूप विषैं जिनिका मोकौ स्पष्ट ज्ञान न भया ते इहाँ नाही लिखी है, मूल ग्रंथतैं जानियो। बहुरि केते इक सुगम जानि ग्रंथ विस्तार भयतैं नाही लिखिये है तिनिकौ विधि मिलाइ जानिये। बहुरि केते इक गोम्मटसार टीकाका संदृष्टि अधिकार विषै लिखी हैं ते इस शास्त्रविषै थी तिनकौ इहाँ नाही लिखिए है, तहातैं जानियो। बहुरि जे संदृष्टि वा तिनका स्वरूप इहाँ लिखिए है ते इहाँतैं जानियो। तहाँ एकबार जिस अर्थकी जो संदृष्टि लिखी होइ सोई तिस अर्थकी जहाँ तहाँ संदृष्टि जानि लेनी। ग्रंथ विस्तारभयतैं वारम्बार लिखी नाही है। बहुरि इहाँ लिखी संदृष्टिनिके वा तिनके स्वरूपकौ जान्या चाहे सो पहले तौ श्रीगोम्मटसारकी भाषाटीकाविषै जो जुदा जुदा संदृष्टि अधिकार कीया है ताकौ अभ्यासै तहाँ पहलैं सामान्य स्वरूप निरूपण कीया है ताकौ जानैं तो संदृष्टिनिकौ पहिचानै अर विशेषकौ जानैं। वहा इहा सदृश संदृष्टि होइ तिनिका ज्ञान होइ जाइ। बहुरि इहा आकार रूप संदृष्टि बहुत है। तहाँ ऊर्ध्व रचनाविषै घटता क्रमलीएँ निषेकादिकनिकी संदृष्टि ऐसी—

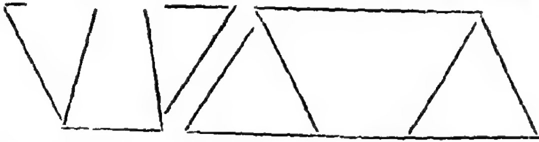


अर गुणश्रेणि आयामादिविषै बधता क्रमकी ऐसी



अर पूर्वैं द्रव्य था अर नवीन

द्रव्य और मिलाये तहाँ दो बडा लीक, तहा पूर्वं घटता क्रम था अर दीया द्रव्य का बधता क्रम है वा पूर्वं बधता क्रम था, दीया द्रव्य घटता क्रम लीएँ है तिनका ऐसी सद्दृष्टि जाननी।



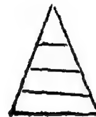
बहुरि नीचले ऊपरले निषेकनि-विषै जैसैं जैसैं विधान होइ तैसैं तैसै नीचे ऊपरि रचना लिखनी। बहुरि समपट्टिकाविषै समरूप रचना ऐसी करनी— बहुरि अनुभाग आदि तिर्यंग् रचनाविषै आडी रचना करनी।

तहा समपट्टिकाकी सूधी ऐसी घटता क्रमकी ऐसो करनी



इत्यादि अनेक प्रकार है। सो आगै जहा सद्दृष्टि लिखेगे तहा तिनका स्वरूप भी लिखेगे सो जानना। तहाँ पहलै प्रथमोपशम सम्यक्त्वका विधानकी सद्दृष्टि कहिए है—

तहा प्रकृतिनिका बध उदय सत्त्वविषै कूट रचना गोम्मटसारका स्थान समुत्कीर्तन अधिकार-विषै जैसै कही है तैसै इहा सभवती जानि लेनी[1] बहुरि तीनो करणनिकी सद्दृष्टि गोम्मटसारका सद्दृष्टि अधिकारविषै गुणस्थानाधिकारविषै जैसैं कही हैं तैसैं जाननी[2]। बहुरि अपकर्षण उत्कर्षणका कथनविषै परमाणूनिकी अपेक्षा घटता क्रम लीएँ जे निषेक तिनकी ऐसी △ सदृष्टि करि तहाँ अपकर्षणविषै जघन्य अतिस्थापन, जघन्य निक्षेपकी सद्दृष्टिविषै तौ जघन्य अतिस्थापन अर जघन्य निक्षेप अर ग्रह्या हूवा निषेक इनका विभागके अर्थि ऐसी—

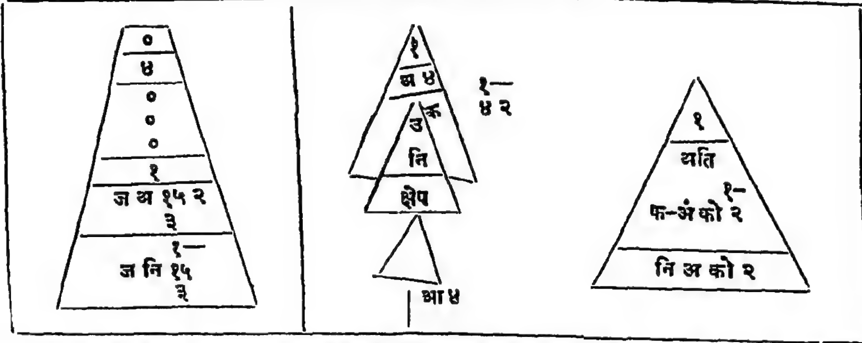


वीचिमे लीककरि तहा आवलीकी सहनानी इहा सोलह तामैं एक घटाए पद्रह ताका त्रिभाग एक अधिक प्रमाण नीचले निषेक जघन्य निक्षेप है। अर तामैं पद्रहका दोय त्रिभागमात्र बीचिके निषेक जघन्य अतिस्थापन अर ताके ऊपरि ग्रह्या हुआ निषेक एक : लिखना अर ताके ऊपरि अपकर्षणके अन्य भेदनिके अर्थि बिंदी लिखनी। बहुरि उत्कृष्ट निक्षेप अतिस्थापनकी सद्दृष्टिविषै नीचै तौ आबाधावली अर ऊपरि उत्कृष्ट निक्षेप, ताके ऊपरि उत्कृष्ट अतिस्थापन, ता ऊपरि ग्रह्या हूवा अतका निषेक स्थापना। इहा आबाधाविषै निषेक रचना नाही है तातैं ऊभी लकीर ही करनी। अर अतिस्थापन ग्रह्या निषेकका विभागके अर्थि निषेक रचनाके वीचिमे लकीर करनी, तहाँ आवलीकी सहनानी च्यारिका अक, उत्कृष्ट निक्षेपविषै कर्मस्थितिकी सहनानी ऐसी (क) ताके आगैं घटावनेकी सहनानी ऐसी (—) बहुरि ताके आगै हीनका प्रमाण एक समय

१ बडी टीका ६०० से लेकर पूरे प्रकरण से उपयोगी कूट रचना लो।

२ बडी टीका गो-जीवकाण्ड पृ० १०२ से लेकर १५७ तक।

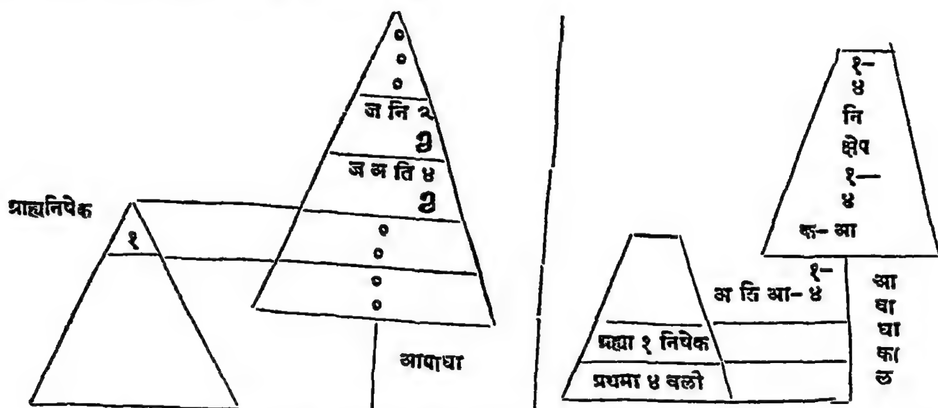
१—
अधिक दोय आवली ४। २ लिखनी बहुरि ग्रह्या हूवा निषेक एक लिखना। बहुरि व्याघातविषै अतिस्थापन निक्षेप ताकी रचनाविषै तहा निक्षेप, अतिस्थापन, ग्रह्या हूवा निषेकका विभागके अर्थि बीचिमे लीककरि तहा निक्षेपका प्रमाण अत कोटाकोटि। (अ को २) अतिस्थापनका प्रमाण कर्म-
१—
स्थिति (क) मै घटावना (–) एक समय अधिक अत कोटाकोटि अ को २ अर ग्रह्या हूवा अत निषेक एक असैं कीए अपकर्षणविषैं ऐसी सदृष्टि रचना हो है—



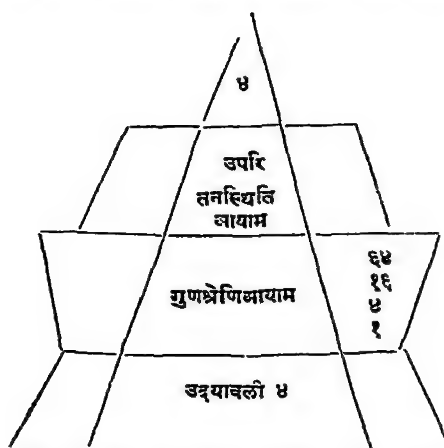
इहा ग्रह्या हूवा निषेकका द्रव्य ग्रहि निक्षेपरूप निषेकनिविषै दीजिए है। अस्तिस्थापनरूप निषेकनिविषैं न दीजिए है ऐसा जानना। बहुरि उत्कर्षण कथनविषै पूर्व सत्तारूप निषेकका द्रव्य नवीन बध्या समयप्रबद्धका निषेकनिविषै दीजिए है, तातै पूर्व सत्तारूप निषेकनिकी रचनाकरि ताके आगै द्रव्य नवीन बध्या सो समयप्रबद्ध ताकी नीचैं तौ आबाधाकी अर ऊपरि निषेकनिकी सदृष्टि लिखनी। तहा तौ पूर्व सत्ताका निषेकका ग्रहण कीया ताकैं अर नवीन बध्या समयप्रबद्धकैं सबध मिलावनेके अर्थि दोऊनिकौ अतरालविषै लीककरि मिलाय देने। बहुरि नवीन समयप्रबद्ध-विषै अतिस्थापन निक्षेपका विभाग करनेके अर्थि बीचिमे लीक करनी। तहा पूर्व सत्ताका अन्त निषेकका उत्कर्षण होतैं तहा जघन्य रचना हो है। ताका अतिस्थापनविषैं आवलीका असख्यातवा भागकी सहनानी ऐसी ४, निक्षेपविषैं आवलीका असख्यातवा भागकी सहनानी ऐसी २ बहुरि
a a
पूर्व सत्ताका उदयावलीतैं ऊपरि जो निषेक ताका उत्कर्षण होतै उत्कृष्ट रचना हो है। ताका
१—
अतिस्थापनविषैं एक समय अधिक आवलीकरि हीन आबाधा काल ऐसा आ – ४। उत्कृष्ट निक्षेपविषै एक समय अर आवलीकरि युक्त जो आबाधाकाल तीहिंकरि हीन कर्म-स्थितिमात्र काल
१—
ऐसा क—४, ताके ऊपरि एक समय अधिक आवलीमात्र अत निषेकनिविषै न दीजए है ते ऐसे
१—आ
४ जानने। बहुरि ऐसा जानना—

जो जघन्यविषै तौ पूर्वसत्ताका निषेक ग्रह्या सो जिस समय उदय होगा तिस समय आवने योग्य जो नवीन समयप्रबद्ध ताके ऊपरि अतिस्थापनके निषेक अर तिनके ऊपरि निक्षेपरूप निषेक जानने। बहुरि उत्कृष्टविषै पूर्व सत्ताका ग्रह्या निषेक वर्तमान समयतै आवली काल पीछै उदय आवने योग्य है। अर एक समय उस निषेकके उदय आवनेका है। अर नवीन समयप्रबद्धकी

आबाधाका काल वर्तमान समयतै लगाय है सो तातैं एक आवली एक समय घटाए अतिस्थापन हो है। अर नवीन समयप्रबद्धके प्रथमादि निषेक निक्षेपरूप हो है। अन्त विषै न दीजिए हैं। ऐसै उत्कर्षणविषै ऐसी सदृष्टि रचना हो है—



बहुरि आचार्यनिके मतकी अपेक्षा विशेष कह्या है तिनकी सदृष्टि ऐसै ही यथासभव जानि लेनी। बहुरि इहा रचना पहिले निषेकनिकी नीचै लिखिए है पिछले निषेकनिकी ऊपरि लिखी है। ऐसै ही अन्यत्र जानि लेनी। बहुरि गुणश्रेणि निर्जराके कथनविषैं ऐसी रचना करनी—



इहा अपकर्षण कीए पीछै जो हीन क्रम लीए निषेक रचना रही ताकी ऐसी △ सदृष्टि करि बहुरि निक्षेपण कीया द्रव्यकी सहनानी दूसरी लकीरकरि रचना करी। तहा उदयावली पर्यंत निषेकनिविषैं हीन क्रम लीए द्रव्य दीया तातै हीन क्रम लीएं दूसरी लीक करी। अर ताके ऊपरि गुणश्रेणि कालविषै असख्यातगुणा अधिक क्रम लीए द्रव्य दीया तातैं अधिक क्रम लीए दूसरी लीक करी। ताके ऊपरि उपरितन स्थितिविषैं हीनक्रम लीए द्रव्य दीया तातै हीनक्रम लीए दूसरी लीक करी। बहुरि ऊपरि अतिस्थापनावलीविषैं द्रव्य दीया ही नाही जातै दूसरी लीक न करी। बहुरि इहा उदयावलीका अत निषेकविषैं दीया द्रव्यतै गुणश्रेणिका प्रथम निषेकविषै दीया

द्रव्य बहुत है। अर गुणश्रेणिका अन्तविषै दीया द्रव्यतै उपरितन स्थितिका प्रथम निषेकविषै दीया द्रव्य स्तोक है। तातै दीया द्रव्यका हीनाधिक जाननेके अर्थि सकोच विस्ताररूप रचना करी है। ऐसैं ही आगैं भी रचना ऐसी आवै तहा ऐसा अर्थ समझ लेना। बारबार लिखनेमें विस्तार होइ तातैं नाही लिखौगा। बहुरि इन उदयावली आदिविषै दीया द्रव्यका वा तिनके निषेकनिविषैं दीया द्रव्यका प्रमाणकी सदृष्टि गोम्मटसारका सदृष्टि अधिकारविषै जो गुणस्थानाधिकार है ताविषैं लिखी है तैसैं जाननी। बहुरि गुणश्रेणिविषै दीया द्रव्यकौ अकसदृष्टि अपेक्षा पिच्यासीका भाग देइ क्रमतैं एक च्यारि सोलह चौसठिकरि गुणैं प्रथमादि निषेक हो है तातैं गुणश्रेणिविषै एक आदि अक लिखे है। आवलीको सहनानी च्यारिका अक है तातैं उदयावली अतिस्थापनावलीविषैं च्यारिका अक लिख्या है ऐसैं गुणश्रेणि रचना जाननी। बहुरि स्थितिकाडकघातका व्याख्यानविषै कोई जीवकैं जघन्य स्थिति सख्यात पल्यमात्र ऐसी प १ बहुरि कोई जीवकैं तातैं सख्यातगुणी उत्कृष्ट स्थिति ऐसी प १२ । उत्कृष्टमै जघन्य घटावनेके अर्थि अगिला सख्यातमैं एक घटाए अर

१——

१ –

सर्वमैं एक अधिक कीए नाना जीवनिके सर्व स्थितिभेद ऐसे प १२ बहुरि याके सख्यातवे भाग-

१———

१ २

मात्र नाना जीवनिकै स्थिति काडकभेद ऐसे प १२। इहा स्थितिकाडक भेद प्रमाणराशि, स्थितिभेद

२

फलराशि, इच्छाराशि एक कीए सख्यात स्थिति भेदनिविषै एक काडक भेद आवै है ताकी रचना ऐसी———

पृष्ठ ५१९ की (क) में देखो

इहा पूर्वै सत्तारूप क्रम हीन प्रमाण लीए निषेकनिकी ऐसी△सदृष्टिकरि तहा स्थितिकाडक-विषै ऊपरले निषेक नष्ट कीए अर अवशेष नीचले निषेक राखे तिनका विभागके अर्थि बीचिमैं लीक कीए ऐसी /⌂\ सदृष्टि भई। बहुरि कैसा स्थितिसत्त्वविषै कैसा स्थितिकाडकायाम सभवै ? ताके जाननेके अर्थि ऊपरि तौ काडककरि घटाए निषेकनिका प्रमाण लिख्या अर नीचैं जो स्थितिसत्त्व था ताका प्रमाण लिख्या। तहा पहले अक सदृष्टिकरि सात आठ नव समय स्थितिविषैं स्थितिकाडकायाम एक समयप्रमाण है। अर दश ग्यारह बारह समय स्थितिसत्त्वविषै स्थितिकाड-कायाम दोय समयप्रमाण है। ऐसैं ही अत पर्यन्त जानना। बहुरि अर्थ सदृष्टिकरि सख्यात पल्य-मात्र जघन्य स्थिति अत कोटाकोटी सागरके सख्यातवे भागमात्र ताकी सदृष्टि ऐसी अ को २

४

ताविषै अर यातै एक समय अधिक स्थिति सत्त्वविषै स्थितिकाडकायाम पल्यके सख्यातवै भागमात्र है ताकी सदृष्टि ऐसी प। बहुरि बीचिमैं एक एक समय अधिक स्थिति सत्त्वविषै तावन्मात्र

२

स्थितिकाडकायाम जाननेके अर्थि बिंदोकी सदृष्टि करि जघन्यतै सख्यात समय अधिक स्थिति ऐसी

१—१—

२ अ को २ तामैं अर यातैं एक समय अधिक स्थिति ऐसी २ २ तामै जघन्यतैं एक समय अधिक

४ अ को २

१— ४

स्थिति काडकायाम ऐसा हो है प। बहुरि वीचिमै स्थिति सत्त्वके स्थिति काडकके बहुत मध्य भेद

जाननेके अर्थि विदाको सद्दृष्टिकरि सख्यात घाटि अत कोटाकोटि सागर घाटिमात्र स्थिति ऐसी

१ ꣵ

अ को २-१ तातै एक समय अधिक ऐसी अ को २-१ तामै एक समय घाटि पृथक्त्व सागरप्रमाण

१ ꣵ

स्थितिकाडकायाम ऐसा–सा ।७।८। इहा पृथक्त्वकी सहनानि सात वा आठ जाननी। बहुरि वीचिमे एक एक समय अधिक स्थिति सत्त्वविषै तावन्मात्र स्थिति काडकायाम जाननेके अर्थि विदीनिकी

१ ꣵ

सहनानी करि एक घाटि अत कोटाकोटि सागर ऐसा–अ को २। सपूर्ण अत कोटाकोटि ऐसा अ को २। तामै स्थिति काडकायाम पृथक्त्व सागरप्रमाण ऐसा सा ७।८। बहुरि अपूर्वकरणकी आदिविषै स्थितिसत्त्व अत कोटाकोटि, स्थितिबध तातै सख्यातवे[1] भागमात्र है। तिनकी सदृष्टि ऐसी—

अ को २	अ को २ ४	अ को २ ४	अ को २ ४ । ४

इहा सख्यातकी सद्दष्टि च्यारिका अंक है। ऐसे स्थितिकाडकविधानविषै सद्दष्टि जाननी। बहुरि अनुभाग काडकका व्याख्यानविषै जघन्य वर्गणाकी स्पर्धक शलाका ऐसी ९। अर नाना गुणहानि ऐसो। ना। ताकरि गुणै अत गुणहानिकी प्रथम वर्गणा होइ। तामैं अक सद्दष्टि अपेक्षा

३——

तीन अधिक कीए अत गुणहानिकी अत वर्गणासबधी उत्कृष्ट अनुभाग ऐसा व। ९। ना। ताका

३——१ ꣵ

अनत बहुभागमात्र प्रथम काडक ऐसा व। ९। ना ख बहुरि अवशेष एक भागका अनत बहुभाग-

ख

३— १ ꣵ

मात्र द्वितीय काडक ऐसा व ९ ना ख। ऐसैं अत काडक पर्यंत क्रम जानना। बहुरि एक गुणहानिके

ख ख

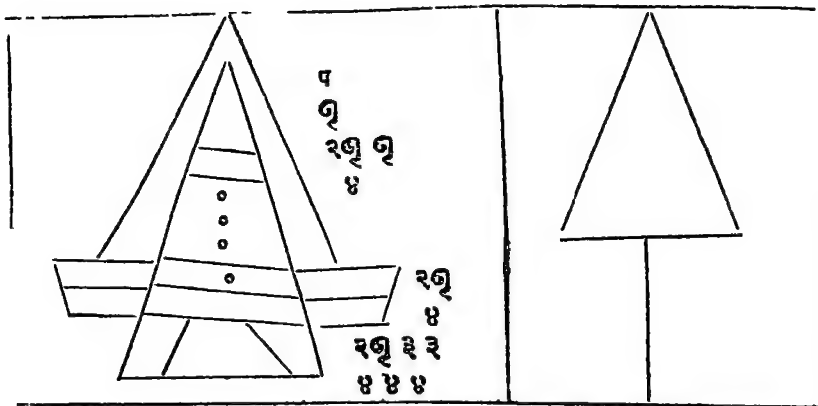
स्पर्धक सख्याकी सद्दष्टि ऐसी ९। तातैं क्रमतै अनतगुणे वीचिके अतिस्थापनरूप स्पर्धक अर नीचेके निक्षेपरूप स्पर्धक अर ऊपरि के अनुभागकाडकायामरूप स्पर्धक तिनकी सद्दष्टि ऐसी जाननी—

स्पर्धक	अतिस्थापन	निक्षेप	अनुभागकाडक
९	९ ख	९ ख ख	९ ख ख ख

इहा अनुभागका कथन है तातै आडो लीक करी है। ऐसैं अपूर्वकरणविषै भए कार्यनिकी सद्दष्टि कही।

बहुरि अनिवृत्ति करणविषै अन्तरकरण हो है तहा रचना ऐसी—

१ मुद्रित प्रतिमें असख्यातवें यह पाठ है।



इहा क्रमहीनरूप सत्व निषेकनिकी सदृष्टिकरि नीचै उदयावलीकी ऊपरि गुणश्रेणि आयामकी ऊवरि उपरितन स्थितिकी सदृष्टि पूर्ववत्करि गुणश्रेणि आवामविषै गुणश्रेणिशर्षिकौ जुदा दिखावनेके अर्थि वीचिमे लीक करो। अग उपरितन स्थितिविषै अन्तरायाम अर ताके ऊपरि द्वितीय स्थितिका भागके अर्थि वीचिमे लीक करी है। तहा गुणश्रेणिशीर्षरूप निषेक तो अतर्मुहूर्तके सख्यातवै भागमात्र ताकी सदृष्टि अैसी २ ७। इहा सख्यातकी सहनानी च्यारिका अक है। वहुरि
४

ताके ऊपरि तातै सख्यातगुणे उपरितन स्थितिके निषेक अैसै २ ७ ७। इनकौ मिलाएं अतर
४

१—
करणकरि शून्य कीए हैं निषेक ते अैसे २ ७ ७। तहा विंदीनिकी सदृष्टि करी है अर अंतरायामके
४

नीचैं प्रथम स्थिति है सो अवशेष अनिवृत्तिकरण कालका सख्यातवा भागमात्र गुणश्रेणिशीर्ष ऐसा २ ७। ताका सख्यात बहुभागमात्र अतर करनेका काल ऐसा २ ७। ३। ताका सख्यात
४ ४।४

बहुभागमात्र है सो ऐसा २ ७। ३। ३ ऐसै रचनाकरि ताके आगैं जाविषै अतर द्रव्य दीया तिस
४ । ४ ।४

नवीन बध्या समयप्रबद्धकी आबाधा सहित रचना करी हैं। बहुरि उपशमकालविषै प्रथम उपशम फालि ऐसी स ə १२—। इहा दर्शनमोहके द्रव्यकौ गुणसक्रमका भागहार जानना। द्वितीयादि
७ ख १७ गु

१ ə
फालि असख्यातगुणा क्रमतै जाननी। तहा अत फालि ऐसी—स। ə १२—ə। २ ७। ३। ३
७ । ख । १७ । गु ४।४।४

इहा प्रथम फालिकौ एक घाटि प्रथम स्थितिमात्र असख्यातका गुणकार जानना। सम्यक्त्वकी प्राप्ति भए मिथ्यात्वकौ तीन प्रकार करै है। ताकी रचना ऐसी—

६६

नाम	मिथ्यात्व	मिश्र	सम्यक्त्वमोहनी
निषेक			
द्रव्य	स ∂ १२– गु १_ ७ ख १७ गु ∂	स ∂ १२– ∂ ७ ख १७ गु	स ∂ १२– १ ७ ख १७ गु
अनुभाग	३___ वा ९ ना	३___ व ९ ना ख	३___ व ९ ना ख ख

इहा ऊपरि मिथ्यात्व मिश्र सम्यक्त्व प्रकृतिके निषेक क्रमहीन रूप हैं तिनकी सदृष्टि करि नीचैं तिनके द्रव्यका प्रमाण लिख्या। तहा किंचिदून द्व्यर्ध गुणहानिगुणित समयप्रबद्धमात्र सर्व कर्म परमाणूनिका प्रमाण ऐसा स ∂ १२– ताकौ सातका भाग दीए मोहका द्रव्य होइ। ताकौ अनतका भाग दीए सर्वघाती द्रव्य होइ। ताकौ सतरहका भाग दीए दर्शनमोहका द्रव्य ऐसा स ∂ १२ — होइ। याकौ गुणसक्रम भागहारका भाग दीए तहा बहुभागमात्र मिथ्यात्वका द्रव्य
७। ख। १७
होइ। बहुरि तिस एक भागविषै एक अधिक असख्यात था ताविषै एक रूप जुदा स्थापि अवशेष मिश्रमोहका द्रव्य होइ अर जुदा स्थाप्या एक रूपमात्र सम्यक्त्वमोहका द्रव्य हो है। इहा सदृष्टि-विषै गुणकार कैसैं भए ? ताका मौकौ नीकैं ज्ञान न भया है, विशेष ज्ञानी जानियो।

बहुरि ताके नीचै अनुभागका प्रमाण लिख्या सो जघन्य वर्गणाकौ एक गुणहानिविषै स्पर्धक सख्याकी सदृष्टि नवका अक ताकरि अर नाना गुणहानिकरि गुणै तामै तीन अधिक कीए उत्कृष्ट-
३——
रूप मिथ्यात्वका अनुभाग ऐसा—व। ९। ना। ताकौ अनतका भाग दीए मिश्रका, ताकौ अनतका भाग दीए सम्यक्त्वमोहका अनुभाग हो है। बहुरि गुणसक्रम कालविषैं मिथ्यात्वका द्रव्य मिश्रमोह सम्यक्त्वमोहरूप परिणमै है ताकी सदृष्टि ऐसी—

पृष्ठ १५ (क) में देखो।

इहा गुणकार सक्रमका प्रथम समयविषैं पूर्वोक्त प्रकार मिथ्यात्व द्रव्य ऐसा स ∂ १२—
७ ख १७
याकौं गुणसक्रमका भाग दीए सम्यक्त्वमोहरूप परिणम्या द्रव्य हो है। तातै असख्यातगुणा मिश्ररूप परिणम्या द्रव्य है। तातै द्वितीय समयविषै सम्यक्त्वरूप परिणम्या द्रव्य असख्यातगुणा है। सो इहा गुणकाररूप दोयवार असख्यातकी सहनानी करी। ऐसै ही चतुर्थ समय पर्यंत रचना जाननी। तहा चौथे समय असख्यातके आगै छहका अर सातका अक है सो छहवार वा सातवार असख्यात जानना। बहुरि बीचि मध्य समयनिकी रचनाकी सहनानी विंदी जाननी। बहुरि अत समयविषै प्रथम समय सम्यक्त्वरूप परिणम्या द्रव्यकौ दोय घाटि अतर्मुहूर्तका दूणाकरि तामैं दोय वधताकरि गुणित जो असख्यात ताकरि गुणै सम्यक्त्व प्रकृतिरूप परिणम्या द्रव्यकी सदृष्टि है। अर तिसहीकौ एक घाटि अतर्मुहूर्त दूणा एक अधिक ताकरि गुणित जो असख्यात ताकरि गुणैं मिश्रमोहरूप परिणम्या द्रव्यकी सदृष्टि हो है। अर तहा सम्यक्त्वमोहनीतैं मिश्रमोहनीविषैं, मिश्रमोहनीतैं सम्यक्त्वमोहविषै गुणकार अपेक्षा गमन कल्पित सर्पकी चालवत् रचना करी है।

बहुरि कालका अल्पबहुत्वविषै सदृष्टि सुगम है। तहा प्रथम पद अतर्मुहूर्तमात्र ऐसा २ १ ताके आग सख्यातकी सहनानी च्यारिकरि जहा सख्यातवा भागमात्र अधिक होइ तहा पूर्व राशिकौ च्यारिका भाग पाचका गुणकार जानना। जहा सख्यातगुणा होइ तहा पूर्व राशिके आगै च्यारि लिखना। बहुरि ग्यारह्वातै वारह्वा पद समय घाटि दोय आवलीमात्र अधिक है तहा ऊपरि

१ —२

ऐसी—४। २ जाननी। इहा आवलीकी सदृष्टि च्यारिका अक है। बहुरि चौदहवा पदविषै अपवर्तन कीए सदृष्टि ऐसो २ १। यातै सख्यातगुणा पद्रह्वा पदविषै ऐसो २ १ १ यामै ऐसा २ १

१— १—

अर ऐसा—२ १ मिलाए सोलह्वा पदविषै ऐसी २ १ १। ४ यातै आगै पूर्वोक्त प्रकार। बहुरि

४ ४

वीसवा पदविषै पल्यका सख्यातवा भागकी ऐसी—प। इकईसवा पदविषै पृथक्त्वसागरको ऐसी

१

सा। ७। ८। वाईसवा आदि पदनिविषै सागर अत कोटाकोटीकौ तीन दोय एकवार सख्यातका भाग दीए पचीसवा पदविषै सागर अत कोटाकोटि की सदृष्टि जाननी। ऐसै इनकी ऐसी सदृष्टि हो है—

पृष्ठ १६ (क) मे देखो।

बहुरि प्रथमोपशम सम्यक्त्व काल समाप्त भए उदय योग्य प्रकृतिका द्रव्य अपकर्षणकरि उदयावली अतरायाम द्वितीय स्थितिविषै निक्षेपण करै है। अनुदय प्रकृतिका उदयावली विना अन्यत्र निक्षेपण करै है। तहा दर्शनमोहके द्रव्यकौ गुणसक्रमका भाग दीए उदय योग्य सम्यक्त्व प्रकृतिका द्रव्य ऐसा स ∂ १२—याकौ अपकर्षण भागहारकी सदृष्टि प्राकृत आदि अक्षर अपेक्षा

७। ख। १७। गु

ऐसी (ओ) ताका भाग दीए अपकृष्ट द्रव्य ऐसा स ∂। १२—याकौ असख्यात लोक ≡∂ का

७ ख। १७। गु ओ

१ ᵔ

भाग दीए उदयावलीविषै दीया द्रव्य ऐसा—स ∂ १२—याका बहुभाग ऐसा स ∂ १२— ≡ ∂

७। ख। १७। गु। ओ ≡∂ ७। ख १७। गु। ओ ≡∂

इहा गुणकारविषै एक घाटिकौ न गिणै ऐसा स ∂। १२—बहुरि इस अपकर्षण भागहारका भाग

७। ख। १७। गु ओ

दीए तहा एक भागमात्र ग्रहण कीए जो द्रव्य बहुभागमात्र अवशेष रह्या सो ऐसा स∂। १२—ओ

७। ख १७। गु ओ

इहा गुणकारविषै एक घाटिकौ न गिणै ऐसा स ∂ १२—याकौ द्वयर्ध गुणहानि की सदृष्टि ऐसी

७। ख। १७ गु

१२। ताका भागदीए द्वितीय स्थितिका प्रथम निषेकका द्रव्य ऐसा स ∂ १२— भया। याकौ

७। ख। १७ गु १२

अतरायाम अतर्मुहूर्तमात्र ताकरि गुणै अतरायामका समपट्टिका द्रव्य ऐसा स ∂ १२—२ १

७। ख। १७ गु १२

यामै चयधन मिलावनेके अर्थि साधिककी ऐसी (।) सदृष्टि ऊपरि कीए इतना स a १२—२ ९
७ । ख । १७ । गु २
द्रव्य भया। ताहि तिस अपकर्षण कीया द्रव्यतै ग्रहि अतरायामविषै दीए अतरायामके अभाव कीए थे निषेक तिनका सद्भाव हो है। इसकौ घटाए जो अपकृष्ट द्रव्य किंचित् ऊन भया सो ऐसा स a १२—याकौ द्व्यर्ध गुणहानिका भाग दीए प्रथम निषेक ताकौ अतरायाम करि गुणैं सम-
७ । ख । १७ । गु । ओ
३
पट्टिका द्रव्य ताकौ साधिक कीए इतना द्रव्य स । a १२—२ ९ अतरायामविषै और दीया अव-
७ । ख । १७ । गु । ओ । १२
शेष अपकृष्ट द्रव्य ऐसा स a १२— सो द्वितीय स्थिति विषै अतिस्थापनावली छोडि
७ । ख । १७ । गु । ओ
क्रम हीन करि ऐसै उदय योग्य प्रकृतिविषै द्रव्य देनेका विधान है। बहुरि उदय अयोग्यका उदयावलीतै वाह्य अतरायाम अर द्वितीय स्थित्तिविषै ही द्रव्य दीजिए है।

इति प्रथमोपशम सम्यक्त्वाधिकारसदृष्टि समाप्त

अब क्षायिक सम्यक्त्वाधिकारविषैं सदृष्टि लिखिए है—तहा प्रथम अनतानुबधीका विसयोजन है। तहा गुणश्रेणी आदिककी सदृष्टि पूर्ववत् जानना। अर तहा च्यारि पर्वनिकी वा तहा स्थितिकाडकके प्रमाणकी सदृष्टि ऐसी—

पर्वनिविषै स्थिति	सातमध्ये ७ सागर १००० ८ १०० ५० २५	प	दूरापकृष्टि प ५ । ५ । ५ । ५	उच्छिष्टावली ४
काडकायाम	प a ५ a	प ४ ५	१ ᑊ प a ५ । ५ । ५ । ५ । a	

इहा स्थितिविषै पृथक्त्व लक्ष सागरको वा मध्यविषैं सहस्र आदि सागरकी अर पल्यकी अर दूरापकृष्टिविषैं च्यारि वार सख्यातकरि भाजितको अर उच्छिष्टावलीकी सदृष्टि प्रथमादि पर्वनिविषै जानना। वहुरि तिनके वीचि स्थिति काडकायामविषै पल्यका सख्यातवा भागकी, पल्यका असख्यातवा बहुभागकी, दूरापकृष्टिका असख्यात बहुभागकी सदृष्टि जानना। बहुरि सर्व कर्मके द्रव्यकौ सात अर अनत अर सतरहका भाग दीए अनतानुबधी क्रोध द्रव्य ऐसा स a १२—ताकौ
७ । ख । १७
अपकर्षण भागहारका भाग दीए जो अपकृष्ट द्रव्य भया ताकौ उदयावली आदिविषै निक्षेपण करै है। अर तिसहीकौ सख्यातका भाग दीए जो काडक द्रव्य ऐसा स a १२ — ताकौ गुणसंक्रमका
७ । ख । १७ । ९
भाग दीए प्रथम फालि ऐसा—स a १२ — यातै क्रमतै असख्यातगुणा द्वितीयादि फालि तिनकौ
७ । ख । १७ ९ । गु
वाहर कषाय नव नोकषाय तिनिरूप समय समय परिनमावै है। उच्छिष्टावली मात्र द्रव्य रहैं

ताकौ एक एक निषेककरि निनिरूप परिनमावै है। ऐसै अनन्तानुबंधीका विसयोजन करि दर्शन-मोहकी क्षपणा प्रारभै है। तहा अन्य क्रिया होइ जहा असख्यात समयप्रबद्धकी उदीरणा हो है तहा सम्यक्त्वमोहनीका द्रव्य ऐसा स ə १२ — याकौ अपकर्षण भागहारका भाग दोए ऐसा
७।ख।१७।गु

स ə १२ — याकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दोए बहुभाग उवरितन स्थितिविषै
७।ख।१७।गु।ओ

दीया शेष एक भागका पल्यकौ असख्यातवा भागका भाग दीए बहुभाग गुणश्रेणिविषै एक भाग उदयावलीविषै दोया तहा सदृष्टि ऐसी—

उपरितन स्थिति	१ᓀ स ə १२ — प ७।ख।१७।गु।ओ।प।ə ə
गुणश्रेणी आयाम	१ᓀ १ᓀ स ə १२ — प।प ७।ख।१७।गु।ओ।प ə प ə ə ə
उदयावली	१ᓀ स ə।१२ — प १ ७।ख।गु।ओ।प ə प ə ə

इहा बहुभागविषै एक घाटि भागहारका गुणकार सपूर्ण भागहारका भाग जानना। बहुरि सम्यक्त्वमोहनोकी अष्ट वर्षमात्र स्थिति जिस ससमय हो है तिस समय विषै क्रिया करै है।

मिश्र सम्यक्त्वमोहका अत फालिका द्रव्य किंचिदून द्वयर्ध गुणहानिमात्र है। कैसै ?

१ᓀ
मिथ्यात्वका द्रव्य ऐसा— स ə १२ — गु ताविषै उच्छिष्टावलीविना अन्य द्रव्यकौ मिश्र-
१ᓀ
७।ख।१७।गु ə
१—
ə

मोहनीविषैं निक्षेपण कीए मिश्रमोहका द्रव्य ऐसा स ə १२ — इहा दर्शनमोहका द्रव्यके आगैं
७।ख।१७

किंचिदूनकी सहनानी ऐसी (—) जाननी। बहुरि याका असख्यातवा भागमात्र इतर काडक द्रव्य सम्यक्त्वमोहनीविषै सक्रमण भए अवशेष बहुभागमात्र मिश्रमोहका चरम काडककी चरम फालिका
१ᓀ
द्रव्य ऐसा सə।१२—ə बहुरि सम्यक्त्वमोहका द्रव्य ऐसा— स ə १२—इहा भी इतर काडक
७।ख।१७।ə ७।ख।१७।गु

द्रव्य याका असख्यातवा भागमात्र नीचले निषेकनिविपै निक्षेपण कीए अवशेष बहुभागमात्र

१ ᒣ

सम्यक्त्व प्रकृतिकी चरम फालिका द्रव्य ऐसा—स ∂ । १२—। ∂ इनि दोऊनिकौ मिलाए किंचिदून

७ । ख । १७ । गु । ∂

द्वयर्ध गुणहानिगुणित समयप्रबद्धप्रमाण मिश्राद्विककी चरम फालिका द्रव्य किंचिदून दर्शन मोहका द्रव्यमात्र ऐसा—स ∂ । १२—याकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा एक

७ । ख । १७

भाग उदयादि गुणश्रेणी आयामविषै असख्यातगुणाक्रम लीए देना। तहा तिस द्रव्यकौ अक सदृष्टि अपेक्षा पिच्यासीका भाग देइ पहला निषेकविषै च्यारि अर सोलहका, अत निषेकविषै चौसठिका गुणकार कीए ऐसी सदृष्टि—

अतनिषेक	स ∂ । १२—६४ ७ । ख । १७ । प । ८५ ∂
मध्यनिषेक	० १६ ० ४
प्रथमनिषेक	स ∂ । १२—१ ७ । ख । १७ । प ८५ ∂

१ ᒣ

बहुरि अवशेष बहुभागमात्र द्रव्य ऐसा स ∂ । १२—प इहा गुणकारविषै एक घाटिकौं न गिणैं

∂

७ । ख । १७ प

∂

ऐसा स ∂ । १२-याकौ गुणश्रेणि आयाम मिलावनेके अर्थि अष्ट वर्षनिविषैं किंचिदून कीए गच्छ

७ । ख । १७

ऐसा व ८— ताका भाग दीए मध्य धन ऐसा स ∂ १२—याकौं एक घाटि गच्छका आधा

१ ᒣ ७ । ख । १७ । व ८ —

प्रमाणकरि हीन दो गुणहानि ऐसा १६—व ८—ताका भाग दीए चयका प्रमाण ऐसा—

स ∂ १२— १ ᒣ याकौ दोगुणहानि ऐसा (१६) ताकरि गुणै प्रथम निषेक एक

७ । ख । १७ । व ८ — १६ — व ८—

२

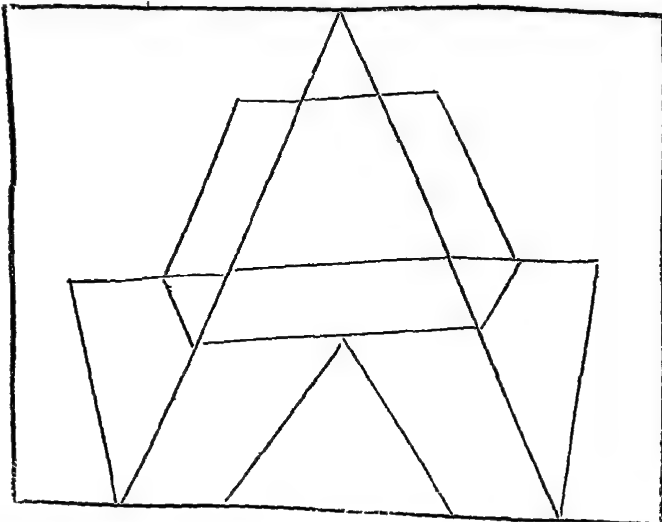
घाटि दोगुणहानि ऐसा १६—१ ताकरि गुणै द्वितीय निषेक इत्यादि क्रमतै एक घाटि गच्छकरि

१ ᒣ

हीन दोगुणहानि ऐसा १६—व ८—ताकरि गुणै अत निषेकविपै दीया द्रव्य है तिनकी सदृष्टि ऐसी—

अतनिषेक	१ ᴖ स a १२ – १६ – व ८— १ ᴖ ७ ख १७ व ८ – १६ व – ८ २
मध्य	० ० ०
चतुर्थ	स a १२ – १६ – ३ १ ᴖ ७ ख १७ व ८ – १६ – व ८— २
तृतीय	स a १२ – १६ – २ १ ᴖ ७ ख १७ व ८ – १६ – व ८— २
द्वितीय	स a १२ – १६ – १ १ ᴖ ७ ख १७ व ८ – १६ – व ८— २
प्रथमनिषेक	स a १२ – १६ १ ᴖ ७ ख १७ व ८ – १६ – व ८— २

बहुरि इहा गुणश्रेणि आयामका वा उपरितन स्थितिकी सदृष्टि ऐसी



इहा क्रमहीन सत्तारूप निषेकनिकी रचनाकरि पूर्वं जो नीचै उदयावलीविषै क्रमहीनरूप ताके ऊपरि गुणश्रेणि आयामविषै क्रम अधिकरूप निक्षेपण कीए तिनकी रचनाकरि बहुरि तह

उदयरूप प्रथम समयतैं लगाय गुणश्रेणि आयामविषैं क्रम अधिकरूप अर ताके उपरितन स्थिति-विषैं अतिस्थापनावली छोडि क्रम हीनरूप द्रव्य निक्षेपण किया तिनके अनुसारि लकीरनिकी सदृष्टि क्रम होनरूप वा अधिकरूप करी है। बहुरि इसही समयविषैं अनुभागका अनुसमयापवर्तन हो है। तहा पूर्वै अनुभाग एक गुणहानिविषैं स्पर्धक शलाकाकौ नाना गुणहानिकरि गुणै ऐसा (९ ना) ताकौ अनतका भाग दीए द्वितीयावलीके प्रथम निषेकका अनुभाग ऐसा (९ ना) इहा
ख

१ _ ।
अवशेष बहुभाग नष्ट कीए ते ऐसैं ९ ना ख बहुरि ताकौ अनतका भाग दीए उदयावलीके अत
ख
१ ० १ ०
निषेकका अनुभाग ऐसा ९ । ना । इहा नष्ट कीए बहुभाग ऐसा ९ । ना । ख ख बहुरि ताकौ
ख । ख ख ख
अनतका भाग दीए उदयावलीके प्रथम निषेकका अनुभाग ऐसा । ९ ना । इहा अवशेष बहुभाग
१ ० १ ० १ ० ख ख ख
नष्ट कीए ते ऐसैं ९ ना ख ख ख ऐसै ही अनत गुणहानि लीए समय समय अनुभागापवर्तनका
ख । ख । ख
विधान जानना।

बहुरि जिस समयविषैं सम्यक्त्व मोहनीकी स्थिति अष्ट वर्ष प्रमाण हो है तिस समयतैं पूर्व समयविषे विधान हो है ताकी सदृष्टि कहिए है—सम्यक्त्व प्रक्रतिका द्रव्य ऐसा—स ƌ । १२ –
७ । ख । १७ । गु
इहा गुणसक्रम विधानतै असख्यातगुणा द्रव्य भया है। परंतु सामान्यतैं इतना लिख्या सो नाना-गुणहानिविषैं वर्तै है। तहा तिस द्रव्यकौ द्व्यर्ध गुणहानि (१२) का भाग देइ ताकौ दो गुणहानि (१६) का भाग दीए चय होइ। ताकौ दो गुणहानिकरि गुणै उदयावलीका प्रथम निषेक होइ। बहुरि दो गुणहानिमात्र गुणकारविषैं क्रमतै एक एक घटाए मध्य निषेक होइ। एक घाटि आवली
१ ०
ऐसी १६ — ४ घटाए ताका अत निषेक होइ। बहुरि ताहीमैं आवली घटाए गुणश्रेणिका आदि
१ ०
निषेक होइ। बहुरि तैसै ही मध्य निषेक होइ। ताहीमै एक घाटि अतर्मुहूर्त ऐसा १६ — । २ ੨ घटाए ताका अत निषेक होइ। बहुरि ताहीमे अतर्मुहूर्त घटाए उपरितन स्थितिका आदि निषेक
१ ०
होइ। बहुरि तैसैं ही मध्य निषेक होइ। तिसहीविषैं एक घाटि किंचिदून आठ वर्ष ऐसै १६ – व ८ – घटाए अत निषेक होइ ऐसैं तौ पूर्व सत्त्व द्रव्य पाइए।

बहुरि इहा अपकर्षणकरि दीया द्रव्य पूर्वोक्त सम्यक्त्वप्रकृतिके द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारके असख्यातवा भागका भाग दीए ऐसा स ƌ । १२ — याकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग
७ । ख । १७ । गु आ
ƌ

१ᗝ
दीए बहुभागमात्र ऐसैं स ∂ १२ — प उपरितन स्थितिविषैं दीया द्रव्य हो है। तहा गुणकारविषैं
∂
७। ख १७ गु ओ प
∂ ∂

एक हीनकौ न गिणैं अपवर्तन कीए ऐसा स ∂ १२ — याकौ ड्योढ गुणहानि अर दो गुण-
७। ख। १७। गु ओ
∂

हानिका भाग दीए चय ऐसा स ∂। १२ —
७। ख। १७। गु। ओ। १२। १६
∂

याकौं दोगुणहानिकरि गुणैं प्रथम निषेक अर दो गुणहानि गुणकार विषै क्रमतैं एक एक घटाएं मध्य निषेक होइ। एक घटि किंचिदून आठ वर्ष घटाए अंत निषेक हो है। बहुरि एक भाग रह्या सो ऐसा स ∂। १२ —
७। ख। १७। गु। ओ प
∂ ∂
इहा पल्यका असंख्यातवा भागका भाग दीए बहुभाग ऐसा

१—
स ∂ १२ — प
∂
७। ख। १७। गु। ओ प प
∂ ∂ ∂
गुणश्रेणिविषैं दीया द्रव्य इहा भी गुणकारविषैं एक घाटिकौ न

गिणि अपवर्तन कीए ऐसा स। ∂। १२—
७। ख १७। गु ओ प
∂ ∂
याकौ अंक सदृष्टि अपेक्षा पिच्यासीका भाग

देइ एक करि गुणैं प्रथम निषेक, च्यारि सोलहकरि गुणैं मध्य निषेक, चौसठिकरि गुणैं अंत निषेक हो है। बहुरि अवशेष रह्या एक भाग ऐसा स ∂ १२—
७। ख। १७। गु। ओ प प
∂ ∂ ∂
सो उदयावलीविषैं

१ᗝ
देना सो याकौ आवली अर एक घाटि आवलीका आधाकरि हीन दो गुणहानि ऐसा ४। १६—४
२
ताका भाग दीए चय होइ। याकौ दो गुणहानि करि गुणैं प्रथम निषेक अर इस गुणकारविषैं एक एक घटाए मध्य निषेक होइ। एक घाटि आवली घटाए अंत निषेक होइ ऐसैं दीया द्रव्य जानना। इनकी सदृष्टि ऐसी—

उदयरूप प्रथम समयतैं लगाय गुणश्रेणि आयामविषैं क्रम अधिकरूप अर ताके उपरितन स्थिति-विषै अतिस्थापनावली छोडि क्रम हीनरूप द्रव्य निक्षेपण किया तिनके अनुसारि लकीरनिकी सदृष्टि क्रम हीनरूप वा अधिकरूप करी है। बहुरि इसही समयविषै अनुभागका अनुसमयाप-वर्तन हो है। तहा पूर्वैं अनुभाग एक गुणहानिविषैं स्पर्धक शलाकाकौ नाना गुणहानिकरि गुणैं ऐसा (९ ना) ताकौ अनतका भाग दीए द्वितीयावलोके प्रथम निषेकका अनुभाग ऐसा (९ ना) इहा
ख

१_।
अवशेष बहुभाग नष्ट कीए ते ऐसैं ९ ना ख बहुरि ताकौ अनतका भाग दीए उदयावलीके अत
ख १० १०
निषेकका अनुभाग ऐसा ९। ना। इहा नष्ट कीए बहुभाग ऐसा ९। ना। ख ख बहुरि ताकौ
ख। ख ख ख
अनतका भाग दीए उदयावलीके प्रथम निषेकका अनुभाग ऐसा। ९ ना। इहा अवशेष बहुभाग
१० १० १० ख ख ख
नष्ट कीए ते ऐसैं ९ ना ख ख ख ऐसै ही अनत गुणहानि लीए समय समय अनुभागापवर्तनका
ख। ख। ख
विधान जानना।

बहुरि जिस समयविषैं सम्यक्त्व मोहनीकी स्थिति अष्ट वर्ष प्रमाण हो है तिस समयतैं पूर्व समयविषै विधान हो है ताको सदृष्टि कहिए है–सम्यक्त्व प्रकृतिका द्रव्य ऐसा–स ə। १२ –
७। ख। १७। गु
इहा गुणसक्रम विधानतैं असख्यातगुणा द्रव्य भया है। परंतु सामान्यतैं इतना लिख्या सो नाना-गुणहानिविषै वर्तै है। तहा तिस द्रव्यकौं द्व्यर्ध गुणहानि (१२) का भाग देइ ताकौ दो गुणहानि (१६) का भाग दीए चय होइ। ताकौ दो गुणहानिकरि गुणैं उदयावलीका प्रथम निषेक होइ। बहुरि दो गुणहानिमात्र गुणकारविषैं क्रमतै एक एक घटाए मध्य निषेक होइ। एक घाटि आवली
१०
ऐसी १६ — ४ घटाए ताका अत निषेक होइ। बहुरि ताहीमै आवली घटाए गुणश्रेणिका आदि
१०
निषेक होइ। बहुरि तैसै ही मध्य निषेक होइ। ताहीमै एक घाटि अतर्मुहूर्त ऐसा १६ —। २ ९ घटाए ताका अत निषेक होइ। बहुरि ताहीमे अतर्मुहूर्त घटाए उपरितन स्थितिका आदि निषेक
१०
होइ। बहुरि तैसैं ही मध्य निषेक होइ। तिसहीविषैं एक घाटि किंचिदून आठ वर्ष ऐसैं १६ – व ८ – घटाए अत निषेक होइ ऐसैं तौ पूर्व सत्त्व द्रव्य पाइए।

बहुरि इहा अपकर्षणकरि दीया द्रव्य पूर्वोक्त सम्यक्त्वप्रकृतिके द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारके असख्यातवा भागका भाग दीए ऐसा स ə। १२ — याकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग
७। ख। १७। गु आ
ə

१ ०

दीएं बहुभागमात्र ऐसैं स ∂ १२ — प उपरितन स्थितिविषै दीया द्रव्य हो है। तहा गुणकारविषै

∂

७। ख १७ गु ओ प

∂ ∂

एक हीनको न गिणैं अपवर्तन कीए ऐसा स ∂ १२ — याकौ ड्योढ गुणहानि अर दो गुण-

७। ख। १७। गु ओ

हानिका भाग दीए चय ऐसा स ∂। १२ — ∂

७। ख। १७। गु। ओ। १२। १६

∂

याकौं दोगुणहानिकरि गुणै प्रथम निषेक अर दो गुणहानि गुणकार विषै क्रमतै एक एक घटाएं मध्य निषेक होइ। एक घटि किंचिदून आठ वर्ष घटाए अत निषेक हो है। बहुरि एक भाग रह्या सो ऐसा स ∂। १२ — इहा पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए बहुभाग ऐसा

७। ख। १७। गु। ओ प

∂ ∂

१—

स ∂ १२ — प गुणश्रेणिविषै दीया द्रव्य इहा भी गुणकारविषै एक घाटिकौ न

∂

७। ख। १७। गु। ओ प प

∂ ∂ ∂

गिणि अपवर्तन कीए ऐसा स। ∂। १२—याकौ अक सदृष्टि अपेक्षा पिच्यासीका भाग

७। ख १७। गु ओ प

∂ ∂

देइ एक करि गुणै प्रथम निषेक, च्यारि सोलहकरि गुणैं मध्य निषेक, चौसठिकरि गुणैं अत निषेक हो है। बहुरि अवशेष रह्या एक भाग ऐसा स ∂ १२— सो उदयावलीविषैं

७। ख। १७। गु। ओ प प

∂ ∂ ∂

१ ०

देना सो याकौ आवली अर एक घाटि आवलीका आधाकरि हीन दो गुणहानि ऐसा ४। १६—४

२

ताका भाग दीए चय होइ। याकौ दो गुणहानि करि गुणै प्रथम निषेक अर इस गुणकारविषै एक एक घटाए मध्य निषेक होइ। एक घाटि आवली घटाए अत निषेक होइ ऐसैं दीया द्रव्य जानना। इनकी सदृष्टि ऐसी—

	पूर्वसत्त्व द्रव्य	दीया द्रव्य
उपरितनस्थिति	१ ⌢ स ∂ १२– १६– प ८– ७ ख १७ गु १२ १६ ० ० ० स ∂ १२– १६– २७ ७ ख १७ गु १२ १६	१ ⌢ स ∂ १२– १६– प ८– ७ ख १७ गु ओ १२ १६ ० ∂ ० ० स ∂ १२– १६ ७ ख १७ गु ओ १२ १६ ∂
गुणश्रेणि	१ ⌢ स ∂ १२– १६– २७ ७ ख १७ गु १२ १६ ० ० ० स ∂ १२– १६– ४ ७ ख १७ गु १२ १६	स ∂ १२– ६४ ७ ख १७ गु ओ प ८५ ० ∂∂ ० ० स ∂ १२– १ ७ ख १७ गु ओ प ८५ ∂∂
उदयावली	१ ⌢ स ∂ १२– १६ ४ ७ ख १७ गु १२ १६ ० ० ० स ∂ १२– १६ ७ ख १७ गु १२ १६	१ ⌢ स ∂ १२– १६– ४ 　 १ ⌢ ७ ख १७ गु ओ प प ४ १६– ४ ० ∂∂∂ 　 २ ० ० स ∂ १२– १६ 　 १ ⌢ ७ ख १७ गु ओ प प ४ १६– ४ ∂∂∂ 　 २

बहुरि इन दोऊनिका मिलाए दृश्यमान द्रव्य हो है। तहा उदयावलीका तौ सत्त्व द्रव्य वहुत है अर दिया द्रव्य स्तोक है। तातै यहा सत्त्व द्रव्यकी सदृष्टिके ऊपरि ऐसी (।) सदृष्टि कीए दृश्यमान द्रव्यकी सदृष्टि हो है। बहुरि गुणश्रेणिविषैं दीया द्रव्य बहुत है। सत्त्व द्रव्य स्तोक है तातै दीया द्रव्यकी सदृष्टि ऊपरि अधिक की ऐसी (।) सदृष्टि कीए दृश्यमान द्रव्यकी सदृष्टि हो है। बहुरि उपरितन स्थितिका प्रथम निषेकविषै दो गुणहानिमात्र गुणकारविषैं अतर्मुहुर्त घटाया था सो अतर्मुहूर्तमात्र घटाए जे चय तिनिरूप ऋण ऐसा स ∂ १२ — २ ७ / ७ । ख । १७ । गु १२ १६ अर इस प्रथम निषेकविषै दीया द्रव्यरूप धन ऐसा—स ∂ । १२ – १६ / ७ । ख । १७ गु । ओ । १२ ।१६ / ∂ सो इस धनविषै ऋण घटावनेके अर्थि अन्य भागहार समान जानि अपकर्षण भागहारका असख्यातवा भागरूप भागहारकरि समच्छेद कीए ऋण द्रव्य ऐसा स ∂ । १२—२ ७ ओ / ∂ / ७ । ख । १७ गु । ओ । १२ । १६ / ∂ अब इहा अन्य गुणकार

भागहार समान जानि ऐसा २ ७ ओ। गुणकारकौ परस्पर गुणै जो असख्यात भया ताकौं धन
a

द्रव्यका दो गुणहानिविषै घटाए धन द्रव्य ऐसा भया स a १२—१६—a अव इहा उपरि-
७। ख। १७। गु। ओ १२। १६
ख

तन स्थितिका प्रथम निषेकविषै जो अतर्मुहूर्तमात्र चय घटाए थे ते तौ जुदे काढि धन द्रव्यविर्षे घटाय दीए तव दो गुणहाणि गुणित चयमात्र उपरितन स्थितिका प्रथम निषेक ऐसा—
स a। १२ — १६ रह्या। तिस ऊपरि तिस ऋण रहित धन द्रव्य मिलावनेकौं अधिककी
७। ख। १७। गु। १२।१६

ऐसी (।) सदृष्टि कीए उपरितन स्थितिका प्रथम निषकको सदृष्टि हो है। बहुरि दो गुणहानिका गुणकारविषें क्रमतै एक एक धटाए द्वितीयादि निपेक होइ। तिसहीमे एक घाटि किंचिदून आठ वर्ष घटाए अत निषेक हो हैं ऐसैं दृश्यमान द्रव्य हो है ताकी रचना ऐसी—

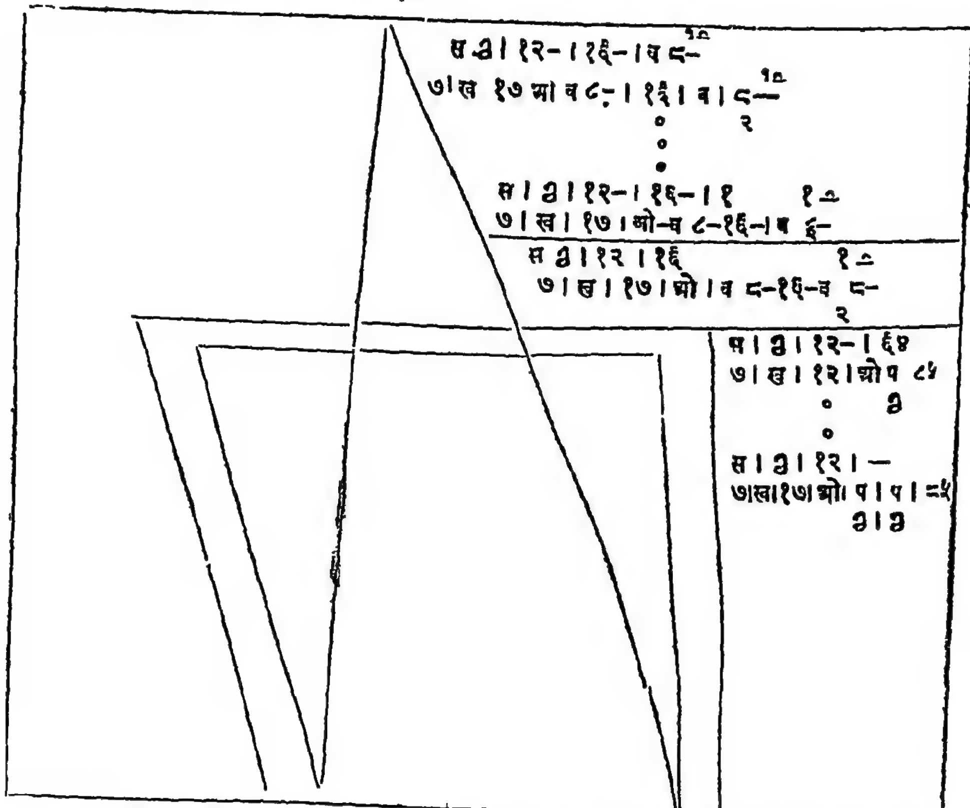
उपरितनस्थिति	गुणश्रेणि	उदयावलि

बहुरि ताके अनतरि सम्यक्त्वमोहनीका अष्ट वर्ष स्थिति होनेका समयविषै अष्ट वर्षमात्र सम्यक्त्व मोहनीके निषेकानिका द्रव्य ऐसा स। a। १२–ताकरि हीन द्व्यर्धं गुणहानि गुणित
६। ख। १७। गु

समयप्रबद्धमात्र मिश्र सम्यक्त्वमोहका चरम फालिका द्रव्य ताको गुणश्रेणि आयामविषै वा उपरितन स्थितिविषैं दीया द्रव्यका सदृष्टि पूर्वै कहि आए है। बहुरि ताके अनतरि अष्ट वर्ष स्थिति-करणका द्वितीय समय ता विषैं सर्व मोहनीके द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए एक भाग ऐसा स a १२–१ अपकर्षणकरि ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ एक भाग गुणश्रेणि
७। ख। १७ गु। ओ

आयामविषै असख्यातगुणा क्रमकरि अर बहुभाग उपरितन स्थितिविषैं हीन क्रमकरि पूर्वोक्त प्रकार देना। इहा उदयादि अवस्थित गुणश्रेणि आयाम है। तातें पूर्वें गुणश्रेणि आयामविषैं एक समय उपरितन स्थितिका मिलावना तहा उपरितन स्थितिविषैं दीया द्रव्यका गुणकारिविषै एक घाटिकौं न गिणि अपवर्तन कीए ऐसा स। a।१२– ताकौ किंचिदून आठ वर्षमात्र गच्छका अर
७। ख। १७। गु ओ

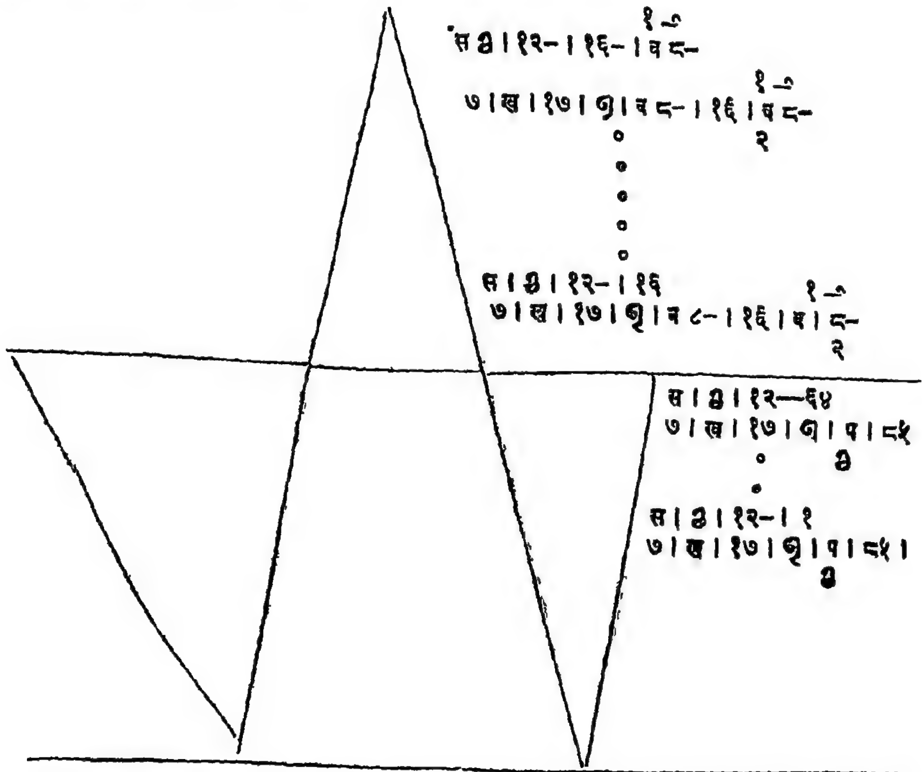
एक घाटि गच्छका आधाकरि हीन दो गुणहानिका भाग दीए चय धन होइ। ताकौं दो गुणहानिकरि गुणे प्रथम निषेक अर दो गुणहानिका गुणकारविषै एक एक घटाए अंत विषै एक घाटि किंचिदून आठ वर्ष घटाए द्वितीयादि निषेक हो है। बहुरि गुणश्रेणिविषैं दीया द्रव्यकौ अंक संदृष्टि अपेक्षा पिच्यासीका भाग देइ एक करि गुणे प्रथम निषेक, च्यारि सोलह करि गुणे मध्य निषेक, चौसठि-करि गुणे अन्त निषेक ताकी रचना ऐसी—



बहुरि इस ही समयविषैं सम्यक्त्वमोहनीका द्रव्यकौ संख्यातका भाग दीए प्रथम कांडक द्रव्य होइ। ताकौं पल्यके अर्धच्छेदकौ दोयवार असंख्यातका भाग दीए अधःप्रवृत्त भागहार ऐसा छे ताका भाग दीए प्रथम फालिका द्रव्य ऐसा स। ३। १२– सो अपकर्षण कीया द्रव्यकै
३ ३ ७। ख। १७। ७ छे
३ ३

असंख्यातवे भागमात्र है अर देनेका विधान तैसें ही है। तातें अपकर्षण द्रव्यविषैं याके मिलावनेकौ अधिककी संदृष्टि करि देनी। बहुरि ऐसे ही द्वितीयादि समयनिविषै रचना करनी। बहुरि प्रथम
१ ०
कांडककी अंत फालिका द्रव्य ऐसा स। ३। १२ – ३ कैसे ? सो कहिए है—
७। ख। १७ ७। ३

अंत फालिविना अन्य फालिनिका द्रव्य काडक द्रव्यके असख्यातवें भागमात्र है। ताकी घटाए असख्यात बहुभागमात्र अत फालिका द्रव्य हो है। इहाँ गुणकारविषैं एक हीनकों न गिणि अपवर्तनकरि बहुरि ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ एक भाग उदयादि अवस्थिति गुणश्रेणि आयामविषैं असख्यातगुणा क्रमकरि बहुभाग उपरितन स्थितिविषैं हीन क्रमकरि देना ताकी पूर्वोक्त प्रकार सदृष्टि ऐसी—



इहा काडक द्रव्य बहुत है। तातैं याविषैं अपकृष्ट द्रव्यका साधिकपना जानना। बहुरि ऐसै ही अन्य काडकनिविषैं रचना जाननी। बहुरि मिश्रद्विकको चरम फालिका द्रव्य स a। १२—
७। ख। १७

सो यहु द्रव्य इसके पतन समयतै पूर्व समयविषैं जो गुणसक्रमण द्रव्य सहित सम्यक्त्व मोहनीका द्रव्य ऐसा स a। १२—a तातैं असख्यातगुणा है। बहुरि अष्ट वर्ष स्थितिकरण समयविषैं जो सम्यक्त्व
७।ख।१२गु

मोहनीका द्रव्य है तातैं अष्ट वर्ष करणका द्वितीयादि प्रथम काडककी द्विचरम फालि पतन समय पर्यंत तौ अपकर्षण कीया वा फालिका द्रव्य असख्यातवैं भागमात्र है अर चरम फालि पतन समयविषै सख्यातवें भागमात्र है सो पूर्वोक्त भागहारतैं यहु सभवै है। बहुरि अष्ट वर्षकरण

समयविपै जो उपरितन स्थितिके प्रथम निपेकका दृव्य द्रव्य ऐसा स । ३ । १२—१६—१ ۵ इहा
७ ।ख१७।व८—१६ व८—
२

यहु गुणश्रेणीशीर्ष कहिए ताका जो यहु द्रव्य सो यातैं पूर्व समयविपै जो गुणश्रेणिशीर्षका द्रव्य द्रव्य ऐसा स । ३ । १२—६४ तातैं असख्यातगुणा है । वहुरि अष्ट वर्षकरणका प्रथम समयके गुणश्रेणी-
७ख१७ प ८५
३
शीर्ष द्रव्यतैं द्वितीय समयके गुणश्रेणीशीर्षका द्रव्य विशेष अधिक हो है, गुणकाररूप है नाही कैसे । सो कहिए है—

अष्ट वर्ष स्थितिकरणका प्रथम समयविपैं गुणश्रेणीशीर्षका दृव्य द्रव्य जैसा—

स ३ १२—१६ १ ۵ याके द्वितीय समयविपैं आया धन ऐसा स । ३ । १२—६४ वहुरि
७ख।१७। व ८—१६—व८—
२
७ । ख । १७ ओ ।प। ८५
३

अष्ट वर्षकी उपरितन स्थितिके द्वितीय निपेकका दृव्य द्रव्य ऐसा स । ३ । १२—। १६—१ यामैं
१
७ । ख १७ । व ८—। १६—। व ८—
२

गुणकारमे एक घटाया है सो एक चयमात्र ऋण जैसा स । ३ । १२—१ सो जुदा स्थापैं प्रथम
१۵
७ । ख । १७ व ८—। १६ व ८—
२

समयका गुणश्रेणीशीर्ष द्रव्य अर यहु समान भया । वहुरि द्वितीय समयविषैं जो याविषैं द्रव्य दीया सो गुणश्रेणिशीर्षका धन ऐसा स ३ । १२—१६ यातैं पूर्वोक्त ऋण सो असख्यातगुणा घाटि
१۵
७ । ख । १७ । ओ व ८—। १६—व ८—
२

है । जातैं तहा दो गुणहानिका गुणकार नाही है । बहुरि द्वितीय समयका गुणश्रेणिके अत निषेकका द्रव्य ऐसा स । ३ । १२—६४ जातैं तहा एक घाटि पल्यका असख्यातवा भागका गुणकार था अर
७ । ख । १७।ओ।प।८५
३

एक हीनकौ न गिणि अपवर्तन कीया था सो इहा नाही है । ऐसैं ऋण द्रव्य अर गुणश्रेणिका चरम निषेक द्रव्य घटावनेकौं तिस धन द्रव्यमैं किंचित् ऊनकरि बहुरि तहा दो गुणहानिका गुणकर था अर अपकर्षण भागहारका भाग था तिनका अपवर्तन कीए असंख्यातका गुणकार ही रह्या भागहारदूरि भया तव ऐसा स । ३ । १२—३ १ ۵ याको अष्ट वर्षकरणका प्रथम
७ । ख । १७ व ८ – १६ – व ८ —
२

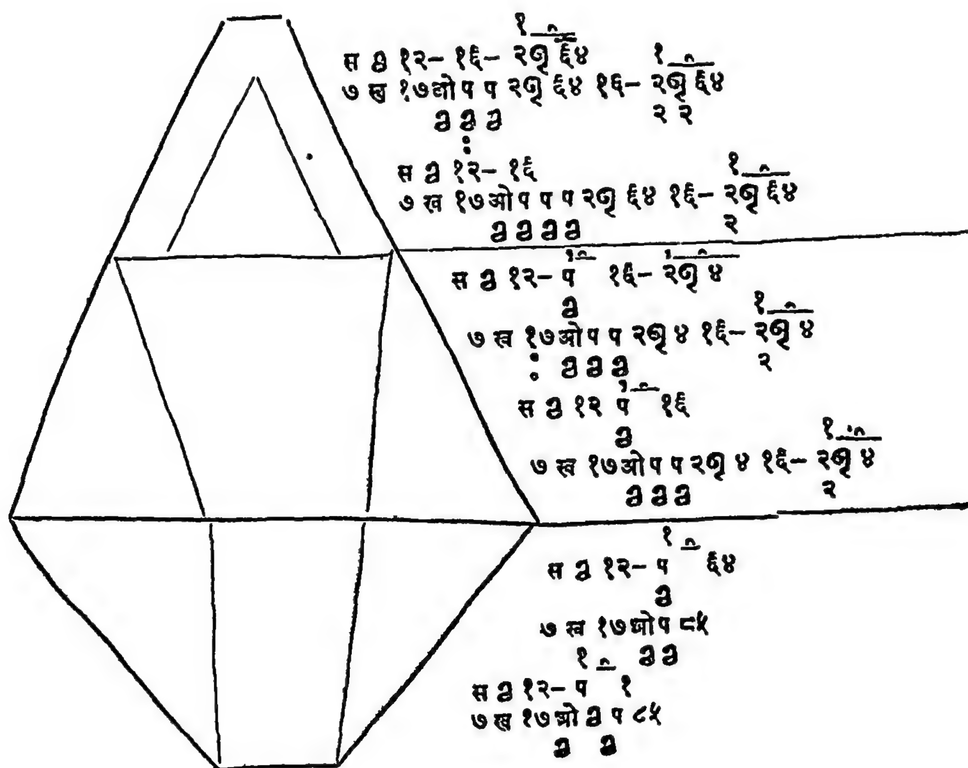
समनका गुणश्रेणी शीर्ष समान जो ताके अनतरि उपरितन स्थितिका निषेक तामें अधिक करना। ऐसे प्रथम समयका गुणश्रेणिशीर्षतैं द्वितीय समयका गुणश्रेणिशीर्षका दृश्य द्रव्य साधिक ही है–

।
स । २ । १२ – १६ १० इहा एक साधिकपना आगै था इतना यहु और साधिक
७ । ख । १७ । व ८ – । १६ – व ८—
२

भया ताके जाननेके अर्थि उपरि दूसरी ऊभी लीक [।] करी। ऐसे ही पूर्वते उत्तर गुणश्रेणिशीर्ष साधिक ही है। इहा ए सदृष्टि कही हैं तिनका स्वरूप पूर्वै होय आया है ताते इहा न कह्या है। बहुरि अवस्थित गुणश्रेण्यायाम अतर्मुहूर्तमात्र ऐसा २ ९ ताकौ सख्यात ऐसा (४) ताका भाग दीए बहुभाग ऐसा २९ ३ अर गलितावशेष गुणश्रेणि आयामविषैं गुणश्रेणिशीर्ष ऐसा
४
२ ९ ताका असख्यातवा भाग एसा २ ९ ताके ऊपरि द्विचरम फालि काडकते नीचें अवशेष रहे
४ ४ । ४
निषेक ते ऐसे २ ९ । ४ । ४ । ४ इनको मिलाये चरम काडक आयामका प्रमाण हो है। सो याकी प्रथम फालिका पतन समयते लगाय द्विचरम फालिका पतन समय पर्यन्त फालि द्रव्य वा अपकर्षण कीया द्रव्य तीन पर्वनिविषै देना। तहा अतकाडककी प्रथम फालिका पतन समयविषै जो गलितावशेष गुणश्रेणि आयाम आरम्या ताका शीर्ष पर्यन्त प्रथम पर्व, ताके ऊपरि पूर्व जो अवस्थित गुणश्रेणि आयाम था ताका शीर्ष पर्यन्त द्वितीय पर्व ताके उपरि उपरितन स्थितिका अत निषेक पर्यन्त तृतीय पर्व तहा सम्यक्त्व मोहनीका द्रव्यविषै पूर्वै गले निषेकनिका द्रव्य ताके असख्यातवै भागमात्र घटाऐं किंचिदून द्वयर्ध गुणहानि गुणित समयप्रबद्धमात्र चरम काडकका द्रव्य ऐसा स । २ । १२—याकौं असख्यातकरि भाजित अपकर्षण भागहारका भाग दीये एक भाग
७ । ख । १७
ऐसा स । २ । १२— याकौ पल्यके असख्यातवा भागका भाग देइ बहुभाग ऐसै स २ । १२ —प
७ । ख । १७ । ओ २
१० २ ७ । ख । १७ । ओ प
२ २
प्रथम पर्वविषै असख्यातगुणा क्रमकरि देना। तहा याकौं अंक सदृष्टिकरि पिच्यासीका भाग देइ एककरि गुणे प्रथम निषेक, च्यारि सोलहकरि गुणे मध्य निषेक चौंसठिकरि गुणे अत निषेक हो है। बहुरि ताका एक भाग ऐसा स । २ । १२— ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग
७ । ख । १७ । ओ । प
१० २ २
देइ बहुभाग ऐसा स । २ । १२—प द्वितीय पर्व विषै हीन क्रमकरि देना। तहा याकौ गच्छ
२
७ । भ । १७ । ओ । प । प
२ २ २
सख्यातकी सहनानी च्यारिकरि गुणित अतर्मुहुर्त मात्र ऐसा २ ९ । ४ ताका अर एक घाटि
१०

गच्छका आधाकरि हीन दो गुणहानि ऐसा—१६ – २ ७ ७ ताका भाग दीए चय होइ। याकी दो गुणहानिकरि गुणे प्रथम निषेक अर गुणकारविषै एक एक घटाए द्वितीयादि निषेक होइ। एक घाटि गच्छ घटाएँ अंत निषेक होइ बहुरि अवशेष एक भाग ऐसा स। ३। १२ —
७। ख। १७। ओ। प। प
३ ६ ३

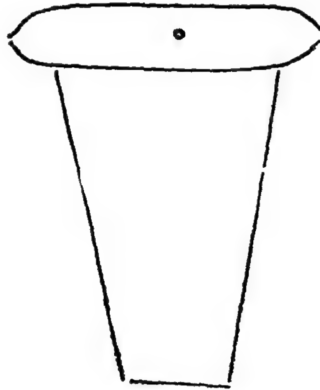
तीसरा पर्वविषै हीन क्रमकरि देना। तहा भी तैसें ही विधान जानना। विशेष इतना—इहा गच्छका प्रमाण अंक सदृष्टि अपेक्षा चौसठिगुणा अंतर्मुहूर्त ऐसा २ ७। ६४ जानना। इनकी रचना ऐसी—



इहा पूर्वावस्थित गुणश्रेणि आयाम था ताके दिखावनेकौ क्रम अधिकरूप सदृष्टिकरि तहा अब जो गलितावशेष गुणश्रेणि आयाम भया ताके दिखावनेकौ तौ क्रम अधिकरूप अर ताके ऊपरि हीन क्रमरूप दीया द्रव्य ताके दिखावनेकौ हीनरूप सदृष्टि करी। बहुरि उपरितन स्थितिविषै पूर्वे भी हीन क्रम था अब भी हीन क्रमरूप द्रव्य दीया तातैं दोऊ हीनरूप लीककरि सदृष्टि करी है। बहुरि अनिवृत्तिकरणका अंत समयविषै चरमकाडककी चरम फालिका पतन हो है। तहा गले पीछें अवशेष रह्या उदयादि गुणश्रेणि आयाम सो कृतकृत्य वेदक कालमात्र है। ताके प्रथमादि निषेक द्विचरम निषेकपर्यंत प्रथम पर्व है। ताका अंत निषेक द्वितीय पर्व है। सो

गले निषेक अर कृतकृत्य कालके निषेक विना अवशेष चरम फालिका द्रव्य ऐसा–स ౩ । १२ –
७ । ख । १७

ताकौ असख्यातगुणा पल्यके वर्गमूलका भाग देइ एक भाग प्रथम पर्वविषै असख्यातगुणा क्रमकरि देना। तहा पिच्यासीका भाग देइ एकादिकरि गुणै प्रथमादि निषेकनिकी सदृष्टि हो है। बहुरि बहुभाग द्वितीय पर्वविषै देना। ताकी सदृष्टि ऐसी—



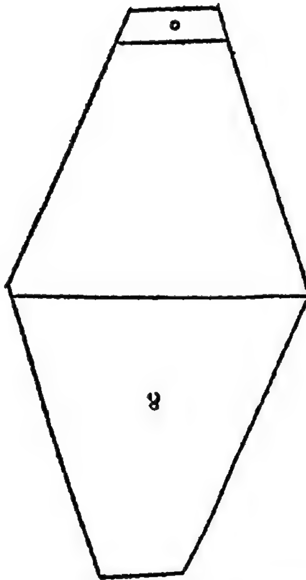
१ –
स । ౩ १२– । मू ౩
७ । ख । १७ । मू । ౩
स । ౩ । १२– । ६४
७ ख १७ । मू । ౩ । ८५
०   १६
०   ४
स । ౩ । १२– १
७ । ख । १७ । मू । ౩ । ८५

इहा गुणश्रेणिका द्विचरम समय पर्यंत अधिक क्रमरूप लीककरि ऊपरि अत निषेककी जुदो रचनाकरि सदृष्टि करी है। ताके आगै दीया द्रव्य लिख्या है। बहुरि कृतकृत्य वेदक काल गुणश्रेणिशीर्षके सख्यात बहुभागमात्र ऐसा २ ౨ । ३ तहा सम्यक्त्वमोहका सत्त्व ऐसा—
४ । ४

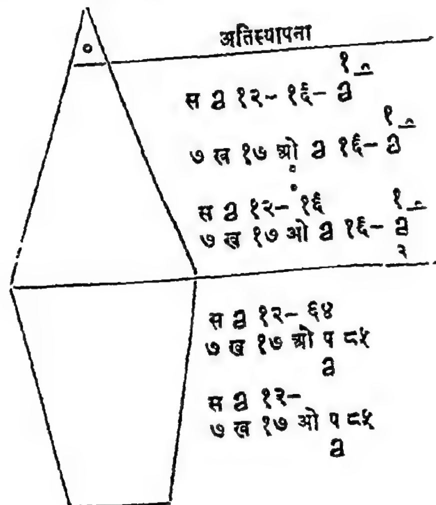
स । ౩ । १२—ताकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ एक भाग उदयावलीविषै बाह्य निषेकनितै
७ । ख । १७

ग्रहि ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ एक भाग उदयावलीविषै असख्यातगुणा क्रमकरि देना। तहा पिच्यासीका भाग देइ एकादिकरि गुणै प्रथमादि निषेक हो हैं। बहुरि बहुभाग उपरितन स्थितिविषै अतिस्थापनावली छोडि द्रव्य देना। तहा ताके द्रव्यका गुणकारविषै एक हीनकौं न गिणि अपवर्तन कीए द्रव्य ऐसा स ౩ १२— ताकौ गच्छ अतर्मुहूर्तमात्र ऐसा २ ౨ ताका
७ । ख । १७ । ओ

अर एक घाटि गच्छका आधाकरि हीन दो गुणहानिका भाग दीए चय धन होइ। ताकौ दो गुणहानिकरि गुणै प्रथम निषेक अर गुणकारविषै एक एक क्रमतै घटाए अन्तविषै गच्छमात्र घटाए द्वितीयादि निषेक होइ तिनकी रचना ऐसी—



इहा नीचैं उदयावलीकी अधिक क्रमरूप उपरितन स्थितिकी हीन क्रमरूप सद्दष्टि जाननी। ताके आगैं दीया द्रव्य लिख्या है। बहुरि कृतकृत्य वेदक कालविषै एक समय अधिक आवली अवशेष रहैं उदयावलीतैं उपरितन स्थितिविषै निषेकका अपकर्षणकरि ताकौं आवलीविषै एक घाटि आवलीका त्रिभागविषै दीजिए है। तहा आवलीका दोय त्रिभाग अतिस्थापनारूप राखि एक अधिक आवलीका त्रिभागविषै दीजिए है। तहा तिस द्रव्यकौ पल्यका असख्यातवा भाग प/ꣳ का भाग देइ एक भाग उदयादि असख्यात समय पर्यंत असख्यातगुणा क्रमकरि दीजिए है। इहा भाग ताके उपरिवर्ती अतिस्थापनाके नीचैं निषेक तिनविषैं हीनक्रमकरि दीजिये है इनके गच्छका प्रमाण यथासभव असख्यात ऐसा ꣳ इहा सद्दष्टि ऐसी—



बहुरि उदयावली अवशेष रहैं एक एक निषेक क्रमतैं गालि, क्षायिक सम्यग्दृष्टी हो है। बहुरि इहा कालका अल्पबहुत्वकी सदृष्टि सुगम है। सो उपशम सम्यक्त्वविषै अल्पवहुत्व कह्या तिस प्रकार वा अन्य यथासभव प्रकारकरि कथनके अनुसारि तेतीस अल्पवहुत्वके पदनिविषै ऐसी सदृष्टि हो है—

२ ९	२९ ५ ४	२९५ ४ ४	२९५ ४ ५	२ १ १ अपवर्तित	२ ९९ ४	२ ९९ ४ ४	२ ९९ ४ ४ ४	२ ९ ९ ४ ४ ४ ४
२ १ अपवर्तित	२ ९ ४	२ ९ ४ ४	२ ९ ४ ४ ४	२९४४४४	व ८	प–व ८ a a a	प a a a	
१० प a a a a	१० प a a a	प a	१० प a ५५५५ a	प ४ ५ ५ ५	प ४ ५ ५	प ९ ९	प ९	प ४ ५
प	सा a प ८ ९	सा a ल ८	सा अ को २ ४ ४ ४	सा अ को २ ४ ४	सा अ को २ ४	सा अ को २		

ऐसें क्षायिक सम्यक्त्व अधिकारविषै सदृष्टि जाननी

■

अथ देशचारित्राधिकारविषै सदृष्टि कहिए है—तहा अध प्रवृत्त देशसयतविषै चतु स्थान पतित वृद्धि हानि लीए अपकर्षण द्रव्य हो हैं। तहा सत्त्व द्रव्य ऐसा— स a । १२— ताकौ सातका भाग दीए एक कम ताकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए अपकृष्ट द्रव्य ऐसा— स a । १२— / ७ ओ —ताको असख्यात सख्यातका भाग देइ एक अधिक असख्यात सख्यात करि गुणैं असख्यात सख्यात भागवृद्धि हो है। अर ताहीकौ सख्यात असख्यातकरि गुणैं सख्यात असख्यात गुणवृद्धि हो है। अर ताहीकौ असख्यात सख्यातका भाग देइ अर एक घाटि असख्यात सख्यातकरि गुणैं असख्यात सख्यात भागहानि हो है। अर ताहीकौ सख्यात असख्यातका भाग दीए सख्यात असख्यात गुणहानि हो हैं। तिनकी सदृष्टि ऐसी—

१— स । a । १२—a ७ । ओ । a	१— स । a । १२—a ७ । ओ । १	स । a । १२—९ ७ । ओ	स । a । १२—a ७ । ओ
१—० स । a । १२ —a ७ । ओ a	१—० स । a । १२— ९ ७ । ओ । १	स । a । १२— ७ । ओ १	स । a । १२— ७ । a । a

बहुरि तहा कालके अल्पबहुत्वकी सदृष्टि पूर्वोक्त प्रकारकरि वा अन्य यथा सभव प्रकार करि कथनके अनुसारि अठारह पदनिविषै ऐसी जाननी—

२ ९	२ ९ । ५ ४	२ ९ ५ । ४ ४	२ ९ । ५ । ४ । ५ ४ । ४	२ ९ । ९	२९।९।४
२ ९९ ।४।४	२ ९ ९ ।४।४।४	२९ । ९। ९।९	२ ९ ९ ९ ९।४	प १ १	प १
प	सा । ७ ८	सा अ को २ ४ । ४ । ४	सा अ को २ ४ । ४	सा अ को २ ४	सा अ को २

बहुरि तहा जघन्य स्थानके अविभागप्रतिच्छेद अनतगुणी जीव राशिमात्र ऐसे १६ । ख । यातैं अनन्त जीव राशिगुणा उत्कृष्ट स्थानके ऐसे १६ । ख । १६ । ख । सर्व स्थान असख्यात लोक-मात्र ऐसे ≡ a इन विषै एक अधिक आवलीका असख्यातवा भागको पाचवार माढि २ २ २ २ २ / १—१—१—१—१— / a a a a a परस्पर गुणै जेता होइ तिनविषै एकवार षट्स्थानपतित वृद्धि होइ तो सर्व स्थानविषै केती होइ ऐसे त्रैराशिक कीए एतीवार होइ— ≡ a / १– १– १– १– १– / २ २ २ २ २ / a। a। a। a। a बहुरि तहा प्रतिपात प्रतिपद्यमान अनुभय स्थान क्रमतें हैं इनके वीचि वीचि असख्यात लोकमात्र स्वामी रहित अतर स्थान है तिनकी सदृष्टि ऐसी ≡ a। बहुरि तिन स्थाननिकी सदृष्टिविषैं आदि जघन्य लिखि मध्य स्थाननिके अर्थि बीचिमे विंदी लिखि अतविषै उत्कृष्ट लिखना। बहुरि ए स्थान नारककैं तौ सर्व सभवे हैं अर तिर्यंचके केते इक मध्यस्थान ही सभवै है, ताते तिनके आदि अक्षरकी सदृष्टि करनी। बहुरि जघन्यतै लगाय मनुष्य हीके सभवते अर मध्यविषै तिर्यंचकैं सभवते अर अतविषै मनुष्यहीकैं सभवते स्थान प्रत्येक असख्यात लोकमात्र है। तिनकी सदृष्टि ऐसी ≡ a। ऐसे कीए तिन स्थाननिकी ऐसी सदृष्टि हो है—

प्रतिपातस्थान	अ	प्रतिपाद्यमानस्थान	अ
ज ०००००००००००० उ न ≡ a ज०००० उ ≡ a न ति ≡ a ति	a	ज ०००००००००००० उ न ≡ a ज ०००० उ ≡ a न ति ≡ a ति	≡ a

अनुभय स्थान
ज ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० उ न ≡ a ज ० ० ० ० उ ≡ a न ति ≡ a ति

ऐसे देशसयमलब्धि अधिकारविषै सदृष्टि जाननी।

अब सकलचारित्र अधिकारविषै सदृष्टि कहिए है—तहा देशसयमविषै जैसे सदृष्टिनिका स्वरूप कह्या है तैसे इहा भी यथासभव जानना। तहा प्रतिपातादि स्थाननिविषै विशेष है सो कहिए है—

मिथ्यादृष्टि असयत देशसयतविषै पडनेवालीकी अपेक्षा प्रतिपातस्थान तीन प्रकार है। तहा जघन्यादिकको सदृष्टि पूर्ववत् करनी अर तिनके बीचि अतरालरूप स्थान असख्यात लोक-मात्र है तिनकी सदृष्टि करनी। बहुरि प्रतिपद्यमान स्थाननिविषै आर्य खण्डके मनुष्यके सभवते सर्व स्थान है अर म्लेच्छ खडके मनुष्यके सभवते वीचिके स्थान हैं। तातें जैसे देशसयतविषैं मनुष्य तिर्यंचविषैं सभवते स्थाननिकी सदृष्टि करी थी तैसे इहा आर्य म्लेच्छ खडनिके मनुष्यनिकैं सभवते स्थाननिकी रचना करनी। इहा इनके आदि अक्षर लिखने। बहुरि अनुभय स्थाननिविषै सामायिक द्विकविषै सभवते सर्व स्थाननिविषै मध्यविषै सभवते परिहारविशुद्धिके स्थान हैं। तातें इहा भी पूर्ववत् सदृष्टि करनी। बहुरि ताके परे सूक्ष्मसापरायके स्थान जघन्यादिरूप हैं। बहुरि ताके परे यथाख्यातका एक ही स्थान है। इनके बीचि बीचि अतराल स्थान हैं तिनकी सदृष्टि करनी। ऐसे इनकी ऐसी सदृष्टि हो है।

प्रतिपातस्थान					अ	प्रतिपद्यमान	अ
मिथ्यात्व	अ	असं	अ	देश		ज० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ०उ आ ≡ aज००००उ ≡ a आ म्ले ≡ म्ले	≡ a
ज००००००उ	≡ a	ज००००उ	≡ a	ज००००उ	≡ a		

अनुभय	अ	सूक्ष्मसांपराय	अ	यथा
ज ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० । ० उ सा ≡ a ज ० ० ० ० उ ≡ a सा प ≡ a प	≡ a	ज ० ० ० ० ० ० ० । उ	≡ a	१

बहुरि सर्वस्थान ऐसे ≡ a इनकौं छोटा असंख्यात लोककी सहनानी नवका अंक ताका भाग देइ बहुभागमात्र अनुभयस्थान ऐसे ≡ a । ८ । बहुरि याकौं ताहीका भाग दीए बहुभागमात्र
९

प्रतिपद्यमान स्थान ऐसे ≡ a । ८ । बहुरि एकभागमात्र प्रतिपात स्थान ऐसे जानने ≡ a । ऐसे
९ । ९ ९ । ९

सकलसंयमाधिकारविषै संदृष्टि जाननी ।

अथ चारित्रमोहका उपशमन अधिकारविषै संदृष्टि कहिए है—तहां जो द्वितीयोपशम-सम्यक्त्व सहित श्रेणी चढ़ै ताकैं द्वितीयोपशम सम्यक्त्वसम्बन्धी अपूर्वकरणका प्रथम समयादि अनिवृत्तिकरणका बहुभाग पर्यन्त गुणश्रेणिविषै ऐसी रचना जाननी—

मिथ्यात्व मिश्र सम्यक्त्व

उपरितनद्रव्य
१ ‿
स a १२– प
७ ख १७ गु ओ प
a

गुणश्रेणिद्रव्य
१ ‿
स a १२– ≡ a
७ ख १७ गु ओ प ≡ a
a

उदयावलीद्रव्य
स a १२–
७ ख १७ गु ओ प ≡ a
a

स a १२ ≡
७ ख १७
a

स a १२– a
७ ख १७ गु

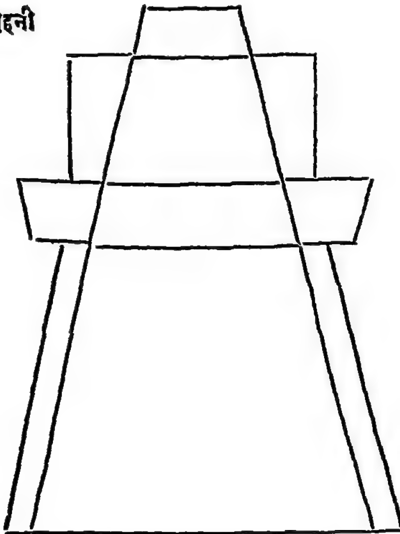
स a १२—
७ ख १७ गु

इहां तीनों दर्शनमोहके निषेकानिका क्रमरूप आकार लिखि ताके नीचे तिन तीनोंके द्रव्यकी संदृष्टि लिखी । द्व्यर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्धको सात अनन्त सतरहका भाग दीए दर्शनमोहका द्रव्य होइ । ताविषै किंचिदून कीए मिथ्यात्वका अर ताहीकौं गुणसंक्रमणका भाग देइ अस-

ख्यातकरि गुणै मिश्रका अर ताहीकौ गुणसंक्रमका भाग दीए सम्यक्त्व प्रकृतिका द्रव्य हो है। बहुरि तिन तीनोके निषेक रचनाविषै उदयावली गुणश्रेणि उपरितन स्थिति दिखावनेकौ क्रमहीन क्रम अधिक क्रम हीनरूप सदृष्टि करी। बहुरि तिनके आगे सम्यक्त्व मोहनीका द्रव्यकौ अपकर्षण भागहर ऐसा (ओ) ताका भाग देइ ताकौ पल्यका असंख्यातवा भाग ऐसा प/a ताका भाग देइ

बहुभाग उपरितन स्थितिविषै दीया। अवशेष एक भागकी असंख्यात लोक ऐसा ≡a ताका भाग देइ बहुभाग गुणश्रेणि आयामविषै एक भाग उदयावलीविषै दीया। तिनकी सदृष्टि लिखी। बहुरि अनिवृत्तिकरण कालका संख्यातवा भाग रहे सम्यक्त्व मोहनीका जो द्रव्य अपकर्षण कीया तिसविषै जहा असंख्यात लोकका भाग था तहा पल्यका असंख्यातवा भाग संभवै है। ताकी रचना ऐसी—

सम्यक्त्वमोहनी



उपरितनद्रव्य

१ ≏
स a १२– प
a
स ख १७ गु ओ प प
a a

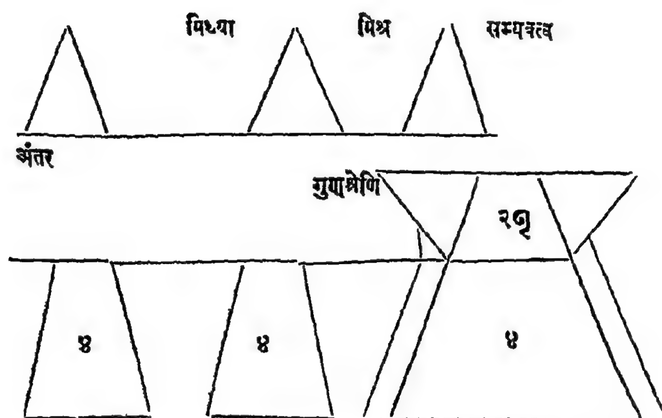
गुणश्रेणिद्रव्य

स a १२– १ ≏
प
a
७ ख १७ गु ओ प प
a a

उदयावलीद्रव्य

स a १२–
७ ख १७ गु ओ प प
a a

बहुरि अतर्मुहूर्त काल गए अतर करै है। तहा मिथ्यात्व मिश्रमोहनीकी आवली ४। मात्र सम्यक्त्वमोहनीकी अतर्मुहूर्तमात्र। २ ९। नीचै प्रथम स्थिति छोडि वीचिके निषेकनिका अभाव करि ऊपरि तीनोकी द्वितीय स्थितिकी रचना समान हो है। तिनकी रचना विषै नीचैं तीनोकी उदयावली लिखी। ताके ऊपर मिथ्यात्व मिश्रकै तौ अभावरूप निषेकनिकी सदृष्टि अर सम्यक्त्व मोहनीके गुणश्रेणिरूप निषेक लिखि ताके ऊपरि अभावरूप निषेकनिकी सदृष्टि करनी। बहुरि तिन तीनोके अभावरूप निषेकनिके उपरि द्वितीय स्थितिकी क्रमहीन सदृष्टि बरोबरि करनी - ऐसे कीए ऐसी रचना हो है—



बहुरि अंतर निषेकनिका द्रव्य निक्षेपण कीया ताकी वा संक्रमण द्रव्यादिकी सदृष्टि यथासंभव जानि लेनी। बहुरि अन्य क्रिया होइ द्वितीयोपशम सम्यक्त्वी हो है। अब चारित्रमोहका उपशम विधानविषै सदृष्टि कहिए है—

बहुरि नपुंसक वेदादिका सत्त्व द्रव्य इहातैं लगाय यहु कथन तौ पाछै लिखना। अर पुरुष वेदादिकका बंध द्रव्यकी रचना ऐसी— पृ० ५४३ (क) देखो

इहा नपुंसक वेदादि क्रमतैं उपशमाइए है—तिनको रचनाकरि आगैं अवशेष कर्म लिखे। बहुरि तिनके निषेकनिको क्रम हीन सदृष्टिकरि वीचिमैं गुणश्रेणि आयामकी क्रम अधिकरूप सदृष्टि करी है। बहुरि इहा पुरुषवेदादिकका सत्त्व द्रव्यके आगैं बंध द्रव्यकी ऐसी △ सदृष्टि जाननी। इहा नीचैं आबाधा ऊपरि निषेकनिकी रचना जाननी। बहुरि मोहका द्रव्य ऐसा स। ∂ १२—तामें सर्वघाती द्रव्य किंचित् घट्या ताकौं न गिणि ताकौ कषाय नोकषायका
७
भाग दीए दोयका भाग होइ। अर नोकषायविषैं वेद हास्यद्विक रतिद्विक भय जुगुप्साका भागके अर्थि पाचका भाग होइ। दोयकौं पाचकरि गुणैं दशका भाग होइ। ऐसैं वेदादिकका द्रव्य ऐसा—

वेद ३	हास्य २	रति २	भय १	जुगुप्सा १
∂। १२— ७। १०	स। ∂। १२— ७। १०	स ∂। १२— ७। १०	स। ∂ १२— ७। १०	स। ∂। १२— ७। १०

बहुरि अंक सदृष्टि अपेक्षा तीनौ वेदनिविषैं तिनके द्रव्यकौ अठतालीसका भाग देइ वियालीस च्यारि दोयकरि क्रमतैं गुणैं नपुंसकवेद स्त्रीवेद पुरुषवेदका द्रव्य हो है। बहुरि हास्यद्विकके द्रव्यकौं तैसैं ही भाग देइ सोलह बत्तीसकरि गुणैं हास्य शोकका द्रव्य हो है। बहुरि रति द्विकके द्रव्यकौ तैसैं ही भाग देइ सोलह बत्तीसकरि गुणैं रति अरतिका द्रव्य हो है। इहा पुरुषवेदका काल अंतर्मुहूर्तमात्र है तातैं स्त्री अर हास्य अर अरति शोकका काल क्रमतैं संख्यातगुणा है अर नपुंसक वेदादिकका विशेष अधिक है। तिस अपेक्षा ऐसैं द्रव्य कह्या है। बहुरि मोहके द्रव्यकौ अनंत अर सतरहका भाग दीए आठकरि गुणैं अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान कषाय आठका द्रव्य हो

है। इहा यहु सर्वघाती द्रव्य है। बहुरि मोहके द्रव्यकौ आठका भाग देइ च्यारिकरि गुणे सज्वलन-कषायचतुष्कका द्रव्य हो है। इहा मोहका आधा द्रव्य जानना। ऐसें इनकी सदृष्टि ऐसी—

नपु	स्त्री	हास्य	रति	अरति	शोक
स ∂ १२–४२ ७ १० ४८	∂ १२–४ ७ १० ४८	स ∂ १२–१६ ७ १० ४८	स ∂ १२–१६ ७ १० ४८	स ∂ १२–३२ ७ १० ४८	स ∂ १२ ३२ ७ १० ४८

भय	जुगुप्सा	पुरुष	अष्टकाषाय	सज्वलनचतुष्क
स ∂ १२–— ७ १०	स ∂ १२— ७ १०	स ∂ १२–२ ७ १० ४८	स ∂ १२–८ ७ ख १७	स प १२–४ ७ ८

इनिका ऐसा सत्त्व द्रव्य है। ताकौ अपकर्षणकरि गुणश्रेणि करे है। तहा अनुभागकाडक-
।
विषैं एक कर्मका द्रव्य ऐसा— स। ∂ १२। याकौ साधिक ड्योढ गुणहानि ऐसा (१२) ताका
७
भाग दीए प्रथम निषेकका द्रव्य ऐसा स ∂ १२— याकौ अनुभागसबधी अनत प्रमाण लीए गुण-
।
७। १२
हानि है सो इस साधिक ड्योढ गुणहानिका भाग दीए प्रथम वर्गणाका द्रव्य ऐसा स। ∂। १२—
।
७। १२। ख ३
२
याकौ आधा अन्योन्याभ्यस्त राशिका भाग दोए अत गुणहानिका प्रथम वर्गणाका द्रव्य ऐसा
स ∂। १२— याकौ दो गुणहानिका भाग देइ एक अधिक गुणहानि आयामकरि गुणें अत गुण-
। ।
७। १२। ख ३ अ
२ २
१—
हानिकी अत वर्गणाका द्रव्य ऐसा स। ∂। १२—गु। बहुरि ऐसें ही द्वितीयादि निषेकनिविषैं रचना
। ।
७। १२। ख। ३। अ गु २
२ २
करनी। तहा प्रथम गुणहानिका प्रथम निषेकका द्रव्यकौं अपनी वर्गशालाकाकरि भाजित पल्य-प्रमाण अन्योन्याभ्यस्तराशि ताका आधा ऐसा प ताका भाग दीए अत गुणहानिका प्रथम
व २
निषेकका द्रव्य ऐसा स। ∂ १२ — याकौ दो गुणहानिका भाग दीए एक अधिक गुणहानिकरि
।
७। १२ प
व २
१—
गुणें अत निषेकका द्रव्य ऐसा स। ∂ १२ — गु याकौं अनुभागसबधी ड्योढ गुण-
।
७। १२। प। गु २
व २

१८

हानिका भाग दीए प्रथम वर्गणाका द्रव्य ऐसा स । ∂ । १२ —गु । इहा वर्ग शलाकाकरि

| |

७ । १२ । प गु । ख । ३

व ४ २

भाजित पल्यकैं दोयका भागहार था ताकौं दो गुणहानिकैं दोयका गुणकार था ताकरि अपवर्तन कीया । इहा एक अधिकपना न गिणि गुणहानिका भी अपवर्तन कीए ऐसा स । ∂ । १२ —

| |

७ । १२—प । ख ३

व २ २

याकौ अनुभागसबधी आधा अन्योन्याभ्यस्त राशिका भाग दीए अनुभागसबधी अनत गुणहानिकी प्रथम वर्गणाका द्रव्य ऐसा— स । ∂ । १२— याको दोगुणहानिका भाग दीए एक अधिक

| |

७ । १२ प ख । ३ । अ

व २ २ २

१—

गुणहानिकरि गुणैं अत निषेककी अत गुणहानिकी अत वर्गणाका द्रव्य ऐसा स । ∂ । १२—गु

| |

। ७ । १२ । प । ख । ३ । अ । गु २

व २ २ २

इहा भी पूर्ववत् अपवर्तन कीए ऐसा स । ∂ । १२ — । ऐसे सर्व निषेकनिविषै अनुभाग रचना

| |

७ । १२ प ख ३ अ

व २ २

जाननी । तहा एक गुणहानिविषै स्पर्धकनिका प्रमाणकी सदृष्टि ऐसी (९) ताकौ नाना गुणहानि-करि गुणे सर्व अनुभाग ऐसा ९ । ना ताकी अनतका भाग दीए बहुभागमात्र खडकरि नष्ट कीया अनुभाग ऐसा १८ । अवशेष एक भागकौ अनतका भाग दीए एक भागमात्र अतिस्थापन

९ ना ख

ख

१८ १८ १८

ऐसा ९ । ना । ख बहुभागमात्र निक्षेपरूप अनुभाग ऐसा—९ ना । ख ख जानना ।

ख । ख ख ख

बहुरि अनिवृत्तिकरणविषैं स्थितिबध क्रमतैं हो है । तिनकी सदृष्टि आदि अक्षरादिरूप सुगम है । बहुरि इहा इकईस प्रकृतिनिका अतरकरण हो है । तहा सदृष्टि दर्शनमोहका अतरवत् जाननी । विशेष है सो विशेष जानि लेना । बहुरि नपुसकवेदका उपशमनविषै नपु सकका सत्त्व द्रव्य पूर्वोक्त प्रकार ऐसा स । ∂ । १३—४२ । ताकौ गुणसक्रमका असख्यातवा भागका भाग दीए

७ । १० । ४८

प्रथम फालि अर दोय आदि एक एक अधिकवार असख्यातकरि भाजित गुणसक्रमका भाग दीए द्वितीयादि फालि होइ तिनको सदृष्टि ऐसी—

स । ƏI । १२ — ४२
७ । १० । ४८ । गु
Ə

स । Ə । १२ — १२
७ । १० । ४८ । गु
ƏƏ

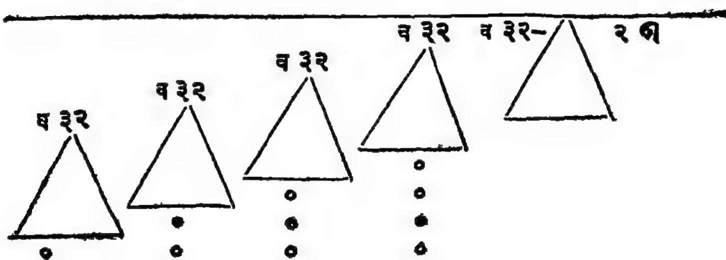
स । Ə । १२ — ४२
७ । १० । ४८ । गु
ƏƏƏ

बहुरि इहा अल्पबहुत्वविषै पुरुषवेदका पूर्वोक्त प्रकार सत्त्व द्रव्य ऐसा स Ə । १२—२
७ । १० । ४८

ताकौ अपकर्षण भागहारका असख्यातवा भाग अर दोयवार पल्यका असख्यातवा भाग दीए उदयावलीविषै दीया उदीरणा द्रव्य सो ऐसा स । Ə । १२ — २
७ । १० । ४८ । उ । प । प
Ə Ə Ə
। बहुरि तिसहीकौ अपकर्षण भागहारके असख्यातवा भागका अर पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए गुणश्रेणि द्रव्य ताकौ पिच्यासीका भाग दीए ताका प्रथम निषेकरूप उदय द्रव्य ऐसा—स । Ə । १२ – २
७ । १० । ४८ । उ । प । ८५
Ə Ə

सो तातै असख्यातगुणा है। बहुरि नपुसक द्रव्यकौ गुणसक्रमका भाग दीए गुणसक्रम द्रव्य ऐसा—स Ə । १२ – ४२
७ । १० । ४८ । गु
। सो तातै असख्यातगुणा है। बहुरि ताका उपशम द्रव्य ऐसा स Ə १२ – ४२
७ । १० । ४८ । गु
Ə

सो तातै असख्यातगुणा है । इहा भागहारका भागहार राशिका गुणकार होइ । इस अपेक्षा गुणसक्रमका भागहार तिस राशिका गुणकार जानना । बहुरि जहा सख्यातगुणित हजार वर्षप्रमाण स्थिति हो है तहा सदृष्टि ऐसी व १ ० ० ० ९ । याका सख्यात बहुभागमात्र स्थिति बधापसरण ऐसा व १ ० ० ० ९ । ४ । इहा सख्यातकी सहनानी पाचका अक है। ऐसे ही यथासम्भव अन्य
५
सदृष्टि जाननी । बहुरि पूर्वं स्थिति बधापसरण भए बत्तीस वर्षमात्र स्थितिबध प्रथमादि समयनिविषैं हो हैं। तिनकी सदृष्टि ऐसी—



इहा नीचै एक दोय आदि व्यतीत भए समयनिकी सदृष्टि विंदी लिखि ऊपरि वत्तीस वर्षमात्र स्थितिके निषेकनिकी क्रम हीन सदृष्टि करी। अैसैं अतर्मुहूर्त काल गए पीछैं अतर्मुहूर्त घाटि बत्तीस वर्षमात्र स्थितिबध हो है। ताकी अतविषै सदृष्टि करी है।

बहुरि अन्य विधान होइ पुरुषवेदके उपशम कालविषै नवक समयप्रवद्ध एक घाटि दोय आवलीमात्र उपशमित नाही तिनकी सदृष्टि अैसी—

उच्छिष्टावली	०
	० १
	० १ २
	० १ २ ३
	० १ २ ३ ४
	० १ २ ३ ४ ४
	० १ २ ३ ४ ४ ५
उमशमनावली	० १ २ ३ ४ ४ ४ ४
	१ २ ३ ४ ४ ४ ४
	२ ३ ४ ४ ४ ४
	३ ४ ४ ४ ४
बधावली	४ ४ ४ ४
	४ ४ ४
	४ ४
	४

इहा समयप्रबद्धकी च्यारि उपशम फालि कल्पि च्यारिका अककी सदृष्टि करी अर आवलीका प्रमाण च्यारि समय कल्पना कीए तहा बधावली विषै प्रथमादि समयविषैं एक एक समयप्रबद्ध बध्या ते तिनिविषैं क्रमतैं एक दोय तीन च्यारि समयप्रबद्ध अनुपशमरूप भए। बहुरि ता पीछै उपशमनावलीका प्रथम समयविषैं जो बधावलीका प्रथम समयविषै समयप्रबद्ध बध्या था ताकी एक फालि उपशमाई तीन अवशेष रही। अर बधावलीके द्वितीयादि समय विषैं बधे तीन समयप्रबद्ध अर उपशमनावलीका प्रथम समयविषैं बध्या एक समयप्रबद्ध सपूर्ण अनुपशमरूप रहे। बहुरि उपशमनावलीका द्वितीय समयविषै बधावलीका प्रथम समयविषै बध्या समयकी दूसरो फालि अर द्वितीय समय बध्याकी प्रथम फालि उपशमाई तातै तिनिकी दोय अर तीन फालि अनुपशमरूप रही अर बधावलीका द्वितीय तृतीय समय विषै बधे अर उपशमनावलीका प्रथम द्वितीय समयविषै बधे सपूर्ण दोय समयप्रबद्ध अनुपशमरूप रहे। अैसै ही क्रमतैं उपशमनावलीका अत समयविषै बधावलीका प्रथम समयविषै बध्या समयप्रवद्ध सवँ उपशम्या ताकी सदृष्टि विंदि लिखि ताके द्वितीयादि समयनिविषै बध समयप्रवद्धनिकी एक दोय तीन फालि अर उपशमनावलीके प्रथमादि समयनिविषैं बधे च्यारि समयप्रबद्ध तैं अनुपशमरूप रहे। ए नवीन समयप्रवद्ध हैं, तातैं फालिनिकी भी समयप्रवद्ध कल्पै एक घाटि दोय आवलीमात्र नवक समयप्रबद्ध अनुपशमरूप हैं। तिनिका उच्छिष्टावली मात्र सत्त्व रहैं पूर्वोक्त प्रकार एक एक फालिका उपशमन हो है। तहा प्रथम समयविषैं बधावलीके द्वितीय समयविषै बध्या समयप्रवद्ध तौ सवँ उपशम्या, तृतीयादि समयनिविषैं बधेकी एक दोय फालि अनुपशमरूप रही उपशमना-

वलीका प्रथम समयविषैं बध्याकी एक फालि उपशमी, तातैं तीन फालि रही। ताहीके द्वितीयादि समयनिविषैं बधे संपूर्ण समयप्रबद्ध अनुपशमरूप रहे। ऐसैं ही क्रमतैं एक घाटि दोय आवलीमात्र कालविषैं तिन सर्वंनिके उपशमावै है। बहुरि इहा अपने अपने समयप्रबद्धकी फालि आदिकी रचना उपरि उपरि अपनी अपनी सूधिविषैं करो है। बहुरि पुरुषवेदके नवक समयप्रबद्धकी सदृष्टि ऐसी

१—
स a । ४ । २ । इहा समयप्रबद्धकौ सातका भाग दीए मोहका बंध द्रव्य होइ, ताकौ कषाय नोकषाय
७ । २

भागके अर्थि दोयका भाग दीए इहा अन्य नोकषायनिका बंध नाही है तातैं पुरुषवेदका बंध द्रव्य

१—
ऐसा स a १२—। ताकौ दोय आवली एक समय घाटि ऐसा ४ २ ताका गुणकार जानना। बहुरि
७ । २

इहा जाकी बधावली व्यतीत भई ऐसा पुरुषवेदका एक समयप्रबद्ध ऐसा स a ताकौ गुण-
७ । २

सक्रमणका भाग दीए अपगत वेदका प्रथम समयविषैं उपशमन द्रव्य हो है। बहुरि एक दोय आदिवार असख्यातकरि भाजित गुणसक्रम ताहीकौ भाग दीए द्वितीयादि समयनिविषैं उपशम

१ ⌒
द्रव्य हो है। अतविषैं एक घाटि आवलोकी सदृष्टि ऐसी ४ सो इतनी वार असख्यातकरि भाजित गुणसक्रमणका भागहार जानना। ताको सदृष्टि रचना ऐसी—

प्रथमफालि	द्वितीयफालि	तृतीयफालि	अंतफालि
स a ७ । २ । गु	स । a ७ । २ । गु a	स a ७ । २ । गु a a	स a ७ । २ । गु १ ⌒ a ४

इहा क्रमहीन रूप निषेकनिकी सदृष्टिकरि ताके बीचि एक फालिविषैं सर्व निषेकनिका केता इक द्रव्य उपशमाइए है, तातैं ऊभी लोककी सदृष्टि करी अर नीचैं फालिनिका द्रव्यको सदृष्टि लिखी। बहुरि पुरुषवेदके नवक समयप्रबद्धनिविषैं एक एक समयप्रबद्ध ऐसा स a याकौ अध प्रवृत्त
७ । २

भागहारका भाग दीए एक भागका अपगतवेदके प्रथम समयविषैं क्रोधरूप सक्रमण हो है। अवशेष बहुभागकौ ताहीका भाग दीए एक भागका द्वितीय समय विषैं सक्रमण हो है। अवशेष बहुभागकौ ताहोका भाग दीए एक भागका तृतीय समय विषैं सक्रमण हो है। ऐसैं समय घाटि दोय आवली पर्यंत अनुक्रम जानना। तिनकी सदृष्टि ऐसी—

नाम	प्रथम समय	द्वितीय समय	तृतीय समय
अवशेष बहुभाग- मात्र द्रव्य	१— स । a । अ ७ । २ । अ	१⌓ १⌓ स । a । अ अ ७ । २ । अ । अ	१⌓ १⌓ १⌓ स । a । अ अ अ ७ । २ । अ । अ । अ
सक्रमणरूप भया द्रव्य	स । a ७ । २ । अ	१⌓ स । a । अ ७ । २ । अ । अ	१⌓ १ स । a । अ अ ७ । २ । अ । अ अ

इहा अध प्रवृत्तकी सहनानी अकार ताका भाग देइ वहुभागविषै एक घाटि तिसहीका गुणकार जानना। वहुरि पुरुषवेद अर क्रोधकौ उपशमाइ मानकौ उपशमावै है तहा मानकी द्वितीय स्थितिका द्रव्य ऐसा स । a । १२—इहा सर्व कर्मका सत्त्व द्रव्यकौ सातका भाग दीए
७ । ८
मोहका होइ, ताकौ दोयका भाग दीए कषायनिका होइ, ताको च्यारिका भाग दीए मानका होइ। सो दोयकौ च्यारिकरि गुणै इहा आठका भागहार मोहके द्रव्यकौ दीया है। याकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ एक भागकौ पल्यके असख्यातवा भागका भाग देइ एक भाग प्रथम स्थिति-विषै असख्यातगुणा क्रमकरि देना। तहा ताकौ अक सदृष्टिकरि पिच्यासीका भाग देइ एक आदिकरि गुणैं प्रथमादि निषेक हो हैं। बहुरि बहुभाग द्वितीय स्थितिविषै हीन क्रमकरि देना।

तहा तिस द्रव्यकौ साधिक ड्योढ गुणहानि ऐसा १२ ताका भाग दीए प्रथम निषेक, ताकौ दो गुणहानि ऐसा (१६) ताका भाग दीए चय होइ। ताकौ दो गुणहानिकरि गुणैं प्रथम निषेक होइ; एक आदि घाटि दो गुणहानिकरि गुणैं द्वितीयादि निषेक होइ। ऐसै क्रमतै गुणहानि गुणहानि प्रति आधा आधा होइ। गुणहानिका प्रथम निषेककौं वर्गशलाकाकरि भाजित पल्यप्रमाण जो अन्योन्याभ्यस्तराशि ताका आधा ऐसा प ताका भाग दीए अत गुणहानिका प्रथम निषेक होइ।
व २

तहा दो गुणहानिमात्र गुणकारविषैं एक घाटि गुणहान्यायाम ऐसा गु घटाए अत निषेककी सदृष्टि हो है। ऐसैं इनकी रचनाविषैं द्रव्य देनेकी अपेक्षा नीचें प्रथम स्थितिकी क्रम अधिकरूप सदृष्टिकरि ताके ऊपरि अतरायामविषै अभावरूप निषेकनिकी विंदीकी सदृष्टिकरि ताके ऊपरि द्वितीय स्थितिकी क्रम हीन रूप सदृष्टि अर अतविषैं अतिस्थापनावलीकी सदृष्टिकरि रचना जाननी। तिनिके आगैं आदि अत निषेकविषैं दीए द्रव्यकी सदृष्टि जाननी—

वलीका प्रथम समयविषै बध्याकी एक फालि उपशमी, तातैं तीन फालि रही। ताहीके द्वितीयादि समयनिविषै बधे सपूर्ण समयप्रबद्ध अनुपशमरूप रहे। ऐसै ही क्रमतैं एक घाटि दोय आवलीमात्र कालविषै तिन सर्वनिके उपशमावै है। बहुरि इहा अपने अपने समयप्रबद्धकी फालि आदिकी रचना उपरि उपरि अपनी अपनी सूधिविषै करी है। बहुरि पुरुषवेदके नवक समयप्रबद्धकी सदृष्टि ऐसी

१—
स ə । ४ । २ । इहा समयप्रबद्धकौ सातका भाग दीए मोहका बध द्रव्य होइ, ताकौ कषाय नोकषाय
७ । २

भागके अर्थि दोयका भाग दीए इहा अन्य नोकषायनिका बध नाही है तातैं पुरुषवेदका बध द्रव्य

१—
ऐसा स ə १२—। ताकौ दोय आवली एक समय घाटि ऐसा ४ २ ताका गुणकार जानना। बहुरि
७ । २

इहा जाकी बधावली व्यतीत भई ऐसा पुरुषवेदका एक समयप्रबद्ध ऐसा स ə ताकौ गुण-
७ । २

सक्रमणका भाग दीए अपगत वेदका प्रथम समयविषै उपशमन द्रव्य हो है। बहुरि एक दोय आदिवार असख्यातकरि भाजित गुणसक्रम ताहीकौ भाग दीए द्वितीयादि समयनिविषै उपशम

१०
द्रव्य हो है। अतविषैं एक घाटि आवलोकी सदृष्टि ऐसी ४ सो इतनी वार असख्यातकरि भाजित गुणसक्रमणका भागहार जानना। ताकी सदृष्टि रचना ऐसी—

प्रथमफालि	द्वितीयफालि	तृतीयफालि	अतफालि
स ə ७ । २ । गु	स । ə ७ । २ । गु ə	स ə ७ । २ । गु ə ə	स ə ७ । २ । गु १० ə ४

इहा क्रमहीन रूप निषेकनिकी सदृष्टिकरि ताके बीचि एक फालिविषैं सर्व निषेकनिका केता इक द्रव्य उपशमाइए है, तातैं ऊभी लीककी सदृष्टि करी अर नीचैं फालिनिका द्रव्यकी सदृष्टि लिखी। बहुरि पुरुषवेदके नवक समयप्रबद्धनिविषै एक एक समयप्रबद्ध ऐसा स ə याकौ अध प्रवृत्त
७ । २

भागहारका भाग दीए एक भागका अपगतवेदके प्रथम समयविषैं क्रोधरूप सक्रमण हो है। अवशेष बहुभागकौं ताहीका भाग दीए एक भागका द्वितीय समय विषैं सक्रमण हो है। अवशेष बहुभागकौ ताहीका भाग दीए एक भागका तृतीय समय विषै सक्रमण हो है। ऐसै समय घाटि दोय आवली पर्यंत अनुक्रम जानना। तिनकी सदृष्टि ऐसी—

नाम	प्रथम समय	द्वितीय समय	तृतीय समय
अवशेष बहुभाग- मात्र द्रव्य	१— स । ə । अ ७ । २ । अ	१⌢ १⌢ स । ə । अ अ ७ । २ । अ । अ	१⌢ १⌢ १⌢ स । ə । अ अ अ ७ । २ । अ । अ । अ
सक्रमणरूप भया द्रव्य	स । ə ७ । २ । अ	१⌢ स । ə । अ ७ । २ । अ । अ	१⌢ १ स । ə । अ अ ७ । २ । अ । अ अ

इहा अध प्रवृत्तकी सहनानी अकार ताका भाग देइ वहुभागविषै एक घाटि तिसहीका गुणकार जानना। वहुरि पुरुषवेद अर क्रोधकौ उपशमाइ मानकौ उपशमावै है तहा मानकी द्वितीय स्थितिका द्रव्य ऐसा स । ə । १२—इहा सर्व कर्मका सत्त्व द्रव्यकौ सातका भाग दीए
७ । ८

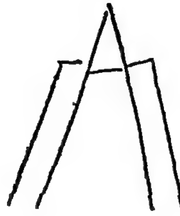
मोहका होइ, ताकौ दोयका भाग दीए कषायनिका होइ, ताको च्यारिका भाग दीए मानका होइ। सो दोयकौ च्यारिकरि गुणै इहा आठका भागहार मोहके द्रव्यकौ दीया है। याकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ एक भागकौ पल्यके असख्यातवा भागका भाग देइ एक भाग प्रथम स्थिति-विषै असख्यातगुणा क्रमकरि देना। तहा ताकौ अक सदृष्टिकरि पिच्यासीका भाग देइ एक आदिकरि गुणै प्रथमादि निषेक हो है। बहुरि बहुभाग द्वितीय स्थित्तिविषै हीन क्रमकरि देना।

।

तहा तिस द्रव्यकौं साधिक ड्योढ गुणहानि ऐसा १२ ताका भाग दीए प्रथम निषेक, ताकौ दो गुणहानि ऐसा (१६) ताका भाग दीए चय होइ। ताकौं दो गुणहानिकरि गुणै प्रथम निषेक होइ; एक आदि घाटि दो गुणहानिकरि गुणैं द्वितीयादि निषेक होइ। ऐसैं क्रमतैं गुणहानि गुणहानि प्रति आधा आधा होइ। गुणहानिका प्रथम निषेकको वर्गशलाकाकरि भाजित पल्यप्रमाण जो अन्योन्याभ्यस्तराशि ताका आधा ऐसा प ताका भाग दीए अत गुणहानिका प्रथम निषेक होइ।
व २

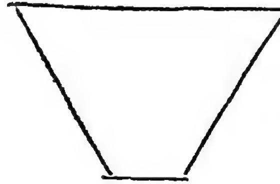
१ ⌢

तहा दो गुणहानिमात्र गुणकारविषैं एक घाटि गुणहान्यायाम ऐसा गु घटाए अत निषेककी सदृष्टि हो है। ऐसैं इनकी रचनाविषै द्रव्य देनेकी अपेक्षा नीचे प्रथम स्थितिकी क्रम अधिकरूप सदृष्टिकरि ताके ऊपरि अतरायामविषै अभावरूप निषेकनिकी विंदीकी सदृष्टिकरि ताके ऊपरि द्वितीय स्थितिकी क्रम हीन रूप सदृष्टि अर अतविषै अतिस्थापनावलीकी सदृष्टिकरि रचना जाननी। तिनिके आगै आदि अत निषेकविषैं दीए द्रव्यकी सदृष्टि जाननी—



१ ⌒ १ ⌒
स a १२ – प १६ – गु
a
७ ८ ३ प १२ १६ प
a ० व २
०

७ १ ⌒
स a १२ – प १६
a



७ ८ ३ प १२ १६
a
स a १२ – ६४
७ ८ ३ प ८५
० a
०
०
स a १२ – ६४
७ ८ ३ प ८५
a

बहुरि ऐसैं ही माया वेदकविषै मायाके द्रव्य देनेकी सदृष्टि जाननी, किछू विशेष नाही। बहुरि लोभवेदक काल सख्यात आवलीमात्र ऐसा २ a। ताकौ सख्यातका भाग देइ बहुभागके तीन भागकरि तीन जायगा स्थापना। बहुरि अवशेष एक भागका सख्यात बहुभाग द्वितीय स्थानविषैं, एक भाग तृतीय स्थानविषैं मिलावना। तहा प्रथम स्थानरूप लोभवेदकका आधा काल है। दूसरा स्थानरूप कृष्टिकरण काल है। तीसरा स्थानरूप कृष्टिवेदककाल है। ते ऐसे सदृष्टिरूप जानने—

०	प्रथम	द्वितीय	तृतीय
बहुभाग	१⌒ २ । a । a a । ३	१⌒ स a । a a । ३	१⌒ २ a । a a । ३
विशेष	१⌒ २ । a । a a । a	१⌒ स a । a a । a । a	१⌒ २ a a । a । a

१⌒

इहा प्रथम द्वितीय स्थानके मिलाए हुए बहुभाग ऐसैं २ a । a ／ a । ३। इहाँ एक घाटि रूप ऋण ऐसा २ a—२ ／ a । ३ जुदा राखि अवशेष विषैं सख्यातका अपवर्तन कीए ऐसा २ a २ ／ ३। बहुरि दूसरा स्थानका विशेष धन ऐसा २ a । a (१⌒) ／ a । a । a इहा एक घाटिका ऋण ऐसा २ a ／ a । a । a जुदा राखि

अवशेषविषै सख्यातका अपवर्तन कीए ऐसा २ ७ । बहुरि प्रथम स्थान विषै विशेष धन ऐसा—
७ ७

१ ०
२ ७ । ७ विषै एक घाटिका ऋण ऐसा २ ७ सो एतावन्मात्र ही है । तातैं प्रथम स्थानका विशेष
७ ७।७

विषै याकौ मिलाए प्रथम स्थानका विशेष धन ऐसा २ ७ भया । याकौं तीनकरि समच्छेद कीए
७ ७

ऐसा २ ७ । ३ या विषै प्रथम ऋण ऐसा २ ७ । २ अर द्वितीय ऋण ऐसा २ ७ घटाए जो
७ । ७ । ३ ७ । ३ ७ । ७ । ७

अवशेष रह्या ताका अधिकका प्रथम द्वितीय बहुभाग ऐसा—२ ७ । २ के उपरि ऐसा (।)
। ३

सदृष्टि कीए ऐसा २ ७ । २ । यामै आवली मिलाए बादरलोभकी प्रथम स्थितिका काल हो है ।
३

१ ०
बहुरि इहा प्रथम स्थानविषै बहुभाग ऐसा २ ७ । ७ । इहा ऋण ऐसा २ ७ । ७ जुदा कीए अर
७ । ३ ७ । ३

१ ०
सख्यातका अपवर्तन कीए ऐसा २ ७ । बहुरि तहा विशेष धन ऐसा २ ७ । ७ । इहा ऋण ऐसा
३ ७ । ७

२ ७ जुदा कीए सख्यातका अपवर्तन कीए ऐसा २ ७ याकौ तीनकरि समच्छेद कीए ऐसा
७ । ७ ७ । ।

२ ७ । ३ याविषैं द्वितीय ऋणकरि अधिक प्रथम ऋण ऐसा २ ७ । ७ घटाए ऐसा २ ७ । २—
७ । ३ । ७ । ३ ७ । ३

तिस बहुभागका घन ऐसा २ ७ विषै अधिक कीए बादर लोभ कालका प्रथम अर्ध साधिक लोभ
३

वेदक कालका तृतीय भागमात्र ऐसा २ ७ हो है । बहुरि कृष्टिकरण कालविषै विधानकी सदृष्टि
३

कहिए है—

जघन्य स्पर्धककी प्रथम वर्गणाकी एक परमाणूविषैं अनुभागके प्रतिच्छेद जीवराशितै अनत-गुणे ऐसे १६ । ख । तिनके समूहका नाम वर्ग है। ताकी सदृष्टि ऐसी (व) । बहुरि सज्वलन लोभका सत्त्व द्रव्य ऐसा स । ∂ । १२—। याकौ अनुभागसबधी गुणहानि अनत गुणित अनत
७ । ८

प्रमाण सो ऐसी (ख।ख) । साधिक ड्योढ गुणहानिका भाग दीएं प्रथम वर्गणा ऐसी स । ∂ । १२—
७ । ८ ख । ख । ३
२

याकौ दो गुणहानिका भाग दीए विशेष ऐसा स । ∂ । १२— इस विशेषकरि वर्गकौ
७ । ८ । ख । ३ । ख । ख । २
२

गुणैं लघु सदृष्टि ऐसी (व वि) याकौ दो गुणहानिकरि गुणै प्रथम वर्गणा ऐसी व वि ख ख २। इहा अकसदृष्टिकरि एक गुणहानिका प्रमाण आठ कल्पि दो गुणहानिका प्रमाण सोलह स्थापै ऐसी व। वि। १६ सदृष्टि हो है। याकी लघु ऐसी (व)। यहु वर्गणाका आदि अक्षर रूप जाननी। बहुरि याकौ अनुभागसबधी साधिक ड्योढ गुणहानिकरि गुणै लोभका सत्त्व

।

द्रव्य ऐसा व १२। याकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ एक भाग ग्रह्या सो ऐसा—

। ।

व १२। याकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए बहुभाग ऐसा व १२। प जुदा

ओ ओ प

। a

स्थापि एक भाग ऐसा a १२। ताकौं इहा एक स्पर्धकविषै वर्गणा शलाकाकी सदृष्टि ऐसी

ओ प

a

(४) ताकौ अनतका भाग दीए प्रथम समयविषै कीनी कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ ऐसा ४

१_० ख

ताका अर एक घाटि गच्छका आधाकरि हीन दो गुणहानि ऐसा ९६—४ ताका भाग दीए

ख २

।

चय होइ। ताकौ दो गुणहानिकरि गुणै प्रथम कृष्टिका द्रव्य ऐसा व १२ १६ याका

१_०

ओ। प। ४। १६-४

a ख ख २

अनुभाग पूर्व स्पर्धक वर्गकौ कृष्टिनिका प्रमाणमात्र वार अनतका भाग दीए हो है सो ऐसा—
व। बहुरि प्रथम कृष्टिविषै एक चय घटावनेकौ दो गुणहानिका गुणकारविषै एक घटाए द्वितीय
ख ४

ख ।

कृष्टिका द्रव्य ऐसा भया सदृष्टि व। १२। १६—१ १_० याका अनुभाग तिस अनुभागतै

ओ। प। ४। १६—४

a ख ख २

अनतगुणा ऐसा व। ख १ ऐसै ही क्रमतै दो गुणहानिका गुणकारविषै एक घाटि कृष्टिनिका

ख। ४

ख ।

प्रमाणकौ घटाए अत कृष्टिका द्रव्य ऐसा व। १२। १६—४ १_० बहुरि प्रथम

ख

ओ। प। ४। १६—४

a ख ख २

क्रृष्टिका अनुभागकौ एक घाटि क्रृष्टि प्रमाणमात्र वार अनतकरि गुणें अत क्रृष्टिकौ अनुभाग ऐसा–
१॒
व । ख । ४ अपवर्तन कीए वर्गणाके अनतवै भागमात्र याका अनुभाग ऐसा व जानना । वहुरि जुदे
ख । ४ । ख ख
ख । १॒
स्थापें बहुभाग ऐसा व । १२ । प साधिक ड्योढ गुणहानिनिका अर दो गुणहानिका भाग दीए चय
ओ प ३
३
होई ताकौ दो गुणहानिकरि गुणे स्पर्धककी प्रथम वर्गणाविषै दीया द्रव्य ऐसा–
। १॒
व । १२ । प १६ । वहुरि द्वितीयादि वर्गणाविषै दो गुणहानिका गुणकारविषै क्रमतै एक एक घटाए
। ३
ओ प । १२ १६
३
अत्तविषै एक घाटि गुणहानिमात्र घटाए प्रथम गुणहानिकी अत वर्गणा होइ। बहुरि गुणहानि गुणहानि
प्रति आधा आधा होइ। प्रथम गुणहानिके निषेकनिकौ एक घाटि नानागुणहानिका प्रमाणमात्र
१॒
हूवा परस्पर गुणें ऐसे (२ ना) तिनिका भाग दीए अत गुणहामिके प्रथमादि निषेक हो हैं।
१॒ १॒
ऐसैं अत्त वर्गणा ऐसी हो है व । १२ । प । १६ गु ऐसै क्रृष्टिनिकी वा पूर्व स्पर्धकनिविषैं दीया
। ३ १॒
ओ।प।१२।१६।२।ना
३

द्रव्यकी सदृष्टि ऐसी—

व
ख ४
ख
व
ख

।
व १२ १६ ००००० व १२ १६–४ १॒
१॒ । १॒ ख
ओ प ४ १६– ४ ओ प ४ १६–४
३ ख ख ३ ख ख

व
व
व९ना

। १॒ । १॒ १॒
व १२ प १६ ०००० व १२ प १६– गु
३ । ३ १॒
ओ प १२ १६ ओ प १२ १६ २ ना
३ ३

इहा ऐसा जानना—निषेक तौ ऊपरि ऊपरि समयविषै उदय आवने योग्य हैं, तातै निषेकनिकी तौ रचना वा ऊर्ध्वविषै क्रमरूप कीजे थी अर इहा युगवत् उदय आवने योग्य एक निषेकके परमाणूनिविषै अधिक हीन अनुभागकी रचना है, तातै आडी रचना करी है। तहा ऊपरि तौ समपट्टिकाकी सद्दष्टि करी है। नीचैं चय घटता क्रमकी क्रम हीनरूप सद्दष्टि करी है। तहा कृष्टि वा वर्गणानिविषैं कृष्टिनिविषै आदि अत कृष्टिनिके द्रव्यका अर स्पर्धकनिविषै आदि अत वर्गणानिविषै दोया द्रव्यका प्रमाण लिख्या है। मध्यभेदनिके अर्थि बीचिमे विंदी लिखी है। बहुरि कृष्टिकरण कालका द्वितीय समयविषैं अपकर्षण कीया हूवा द्रव्य प्रथम

।
समयवालेतैं असंख्यातगुणा ऐसा व । १२ । ३ याकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ
ओ

। १≈
बहुभाग ऐसैं व । १२ । ३ । प जुदे राखि अवशेष एक भागमात्र कृष्टि द्रव्य ऐसा—
ओ प ३

। ३
व । १२ ३ ताके विभाग करिये है—
ओ प
३

तहा प्रथम समयका कृष्टि द्रव्यविषै एक विशेषका प्रमाण कह्या सो ऐसा—

।
व १२ १≈ । इहा इसहीकौ आदि उत्तर स्थापि एक घाटि प्रथम समयविषैं कीनी
ओ । प । ४ । १६—४
३ । ख ख २ १≈

कृष्टिनिका प्रमाण गच्छ ऐसा ४ स्थापि 'पदमेगेण विहीण' इत्यादि सूत्रकरि गच्छतै एक घटाइ
ख १≈ । १≈
दोयका भाग दीए ऐसा ४ याकरि तिस विशेषकौं गुणै ऐसा—व १२ । ४ यामै आदिका
ख । २ ख २ १≈
ओ । प । ४ । १६—४
३ ख ख २

प्रमाण तिस विशेषमात्र ताके मिलावनेके अर्थि आगिला गुणकारविषै दोयकरि भाजित दोय ऋण था ताका एक भया। अर इहा इस गुणकारविषैं एक ही मिलावना तातैं तिस

। । १≈
घाटिकौ दूर कीए ऐसा व । १२ । ४ याकौं तिस गच्छकरि गुणैं ऐसा व १२ । ४ । ४
ख २ १≈ ख २ ख
ओ । प । ४ । १६—४ १
३ ख ख ओ । प । ४ । १६—४
३ ख ख २

चय धन भया सो यहु अधस्तन शीर्ष द्रव्य है। बहुरि प्रथम समयविषै कीनी कृष्टिनिविषै

।

आदि कृष्टिमात्र एक कृष्टि ऐसी व । १२ । १६ याकौ प्रथम समयविषै कीनी कृष्टिनि

१ ८

ओ । प । ४ । १६ – ४

a ख २

का प्रमाणकौ असख्यातगुणा अपकर्षण भागहारका भाग दीए द्वितीय समयविषै कीनी

।

कृष्टिनिका प्रमाण ऐसा ४ ताकरि गुणें अधस्तन कृष्टि द्रव्य ऐसा व १२ । १६ । ४

ख । ओ । a ख ओ a

१ ८

ओ प । ४ । १६—४

a ख ख

।

बहुरि द्वितीय समय कृष्टिका द्रव्य ऐसा व । १२ a या विषै प्रथम समयका कृष्टिद्रव्य

ओ । प

a

।

ऐसा— व १२ मिलानेकौ आगिला असख्यातकौ गुणकारविषैं एक अधिक कीए

ओ प

a

१ ८

ऐसा— व । १२ । a याकौ प्रथम समयविषै कीनी कृष्टिनिका प्रमाणके

ओ । प

a

ऊपरि द्वितीय समयविषैं कीनी कृष्टिनिका प्रमाण मिलावनेके अर्थि अधिकको ऐसी—(।) सदृष्टि

। । १८

कीए गच्छ ऐसा ४ ताका भाग दीए मध्य धन ऐसा व । १२ । a । बहुरि याकौ एक घाटि गच्छका

ख ओ । प । ४

a ख

आधाकरि हीन दो गुणहानिका भाग दीए उभय द्रव्यका एक विशेष ऐसा—

। "१८

व । १२ । a । इसकौ आदि उत्तर स्थापि अर प्रथम द्वितीय समयकृत कृष्टिनिका

१ ८

ओ । प । ४ । १६–४

a ख ख २

|
प्रमाणमात्र गच्छ ऐसा ४ स्थापि 'पदमेगेण विहीण' इत्यादि सूत्रकरि एक घाटि गच्छ दोयकरि
ख १०

भाजित ऐसी ४ याकरि तिस विषेषकौं गुणि इसविषै विशेषमात्र आदि मिलावनेकौ अगिला
ख २

गुणकार दोयकरि भाजित एक ऋण था तहा दोयकरि भाजित दोय मिलाए एक घाटिकी जायगा एक अधिक होइ। बहुरि याकौ तिस गच्छकरि गुणना। ऐसे कीए उभय द्रव्यविषै विशेष द्रव्य ऐसा–

| १० १० |
व । १२ । ∂ । ४ । ४ । बहुरि कृष्टिविषै देने योग्य द्रव्य ऐसा था व । १२ । ∂ ताकौ आगैं
ख २ । ख ओ । प
१० ∂

ओ । प । ४ । १६–४
∂ । ख ख
१ =

|
पूर्वोक्त तीन द्रव्य घटावनेकी ऐसी ≡ सदृष्टि कीए ऐसा—व । १२ । ∂ ≡ हो है। याकौं उभय
ओ प
∂

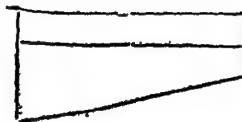
कृष्टिमात्र गच्छ ऐसा ४ ताका भाग दोए एक खण्डका द्रव्य ऐसा हो है—
| ख
व । १२ । ∂ ≡ याकौं तिस गच्छहीकरि गुणे मध्यधन खडका द्रव्य ऐसा हो है—
ओ प । ४
∂ ख

| |
व । १२ । ∂ ≡ । ४ । बहुरि इहा अधस्तन शीर्षादिकका द्रव्यविषै गुणकार भागहारका यथासभव
ओ । प । ४ ख
∂ ख

अपवर्तन कीए ते च्यारयो द्रव्य ऐसे हो है—

अधस्तन शीर्ष	। व १२ ओ प । ख । ख । ४ ə
उभय विशेष	। १— व । १२ । ə ओ । प । ख । ख । ४ ə
अधस्तन कृष्टि	। व १२ ओ । प । ओ । ə ə
मध्यम खड	। व १२ ə ≡ ओ प ə

इहा अधस्तन शीर्ष द्रव्यविषै ऐसा $\frac{४}{ख}$ तौ गुणकार भागहारविषैं समान जानि अपवर्तन कीया अर भागहारविषै दो गुणहानि अक सदृष्टि अपेक्षा ऐसा १६ लिख्या था तहा अर्थसदृष्टि अपेक्षा ऐसा ख । ख २ करि गुणकारका ऐसा $\frac{४}{ख}$ याकौ दोयका भागहार था ताकरि गुणें ऐसा ख । ख । ४ भागहार भया । ऐसा गुणकार वा दो गुणहानिविषै घटाया ऋण तिनकौ किंचित् जानि न गिणि अपवर्तन कीया है । ऐसै ही यथासभव औरनिविषै अपवर्तन जानना । ऐसें इनिकौं जानि जिन जिन कृष्टिनिविषै जो जो द्रव्य दीया तिनकी सदृष्टि जाननी । तहाँ समपट्टिकाकौं चयसयुक्त कीए पूर्वकृष्टि क्रम हीन द्रव्य लीए ऐसो—



र। तनविषैं अधस्तन शीर्ष द्रव्य दीए समान प्रमाण लीए सर्व कृष्टिनिका प्रमाण समपट्टिकारूप ऐसा हो है—



।
प्रमाणमात्र गक्छ ऐसा ४ स्थापि 'पदमेगेण विहीण' इत्यादि सूत्रकरि एक घाटि गच्छ दोयकरि
ख १०

भाजित ऐसो ४ याकरि तिस विषेषकौ गुणि इसविषै विशेषमात्र आदि मिलावनेकौ अगिला
ख २

गुणकार दोयकरि भाजित एक ऋण था तहा दोयकरि भाजित दोय मिलाए एक घाटिकी जायगा एक अधिक होइ। बहुरि याकौ तिस गच्छकरि गुणना। ऐसे कीए उभय द्रव्यविषैं विशेष द्रव्य ऐसा—

। १० १० । ।
व। १२। ३।४।४। बहुरि कृष्टिविषैं देने योग्य द्रव्य ऐसा था व। १२। ३ ताकौ आगैं
ख २। ख ओ। प
१० ३

ओ। प। ४। १६-४
३। ख ख
१ =

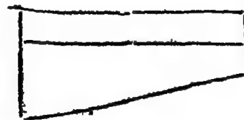
।
पूर्वोक्त तीन द्रव्य घटावनेकी ऐसी ≡ सदृष्टि कीए ऐसा—व। १२। ३ ≡ हो है। याकौ उभय
ओ प
३

कृष्टिमात्र गच्छ ऐसा ४ ताका भाग दोए एक खण्डका द्रव्य ऐसा हो है—
। ख
व। १२। ३ ≡ याकौ तिस गच्छहोकरि गुणै मध्यधन खडका द्रव्य ऐसा हो है—
ओ प। ४
३ ख

। ।
व। १२। ३ ≡। ४। बहुरि इहा अधस्तन शीर्षादिकका द्रव्यविषैं गुणकार भागहारका यथासभव
ओ। प। ४ ख
३ ख
अपवर्तन कीए ते च्यारयो द्रव्य ऐसे हो हैं—

अधस्तन शीर्ष	। व १२ ओ प । ख । ख । ४ a
उभय विशेष	। १— व । १२ । a ओ । प । ख । ख । ४ a
अधस्तन कृष्टि	। व १२ ओ । प । ओ । a a
मध्यम खड	। व १२ a≡ ओ प a

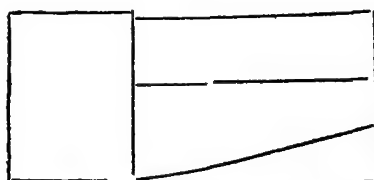
इहा अधस्तन शीर्ष द्रव्यविषै ऐसा ४/ख तौ गुणकार भागहारविषैं समान जानि अपवर्तन कीया अर भागहारविषै दो गुणहानि अक सदृष्टि अपेक्षा ऐसा १६ लिख्या था तहा अर्थसदृष्टि अपेक्षा ऐसा ख । ख २ करि गुणकारका ऐसा ४/ख याकौ दोयका भागहार था ताकरि गुणैं ऐसा ख । ख । ४ भागहार भया। ऐसा गुणकार वा दो गुणहानिविषैं घटाया ऋण तिनकौ किंचित् जानि न गिणि अपवर्तन कीया है। ऐसैं ही यथासभव औरनिविषैं अपवर्तन जानना। ऐसैं इनिकौ जानि जिन जिन कृष्टिनिविषै जो जो द्रव्य दीया तिनकी सदृष्टि जाननी। तहाँ समपट्टिकाकौ चयसयुक्त कीए पूर्वकृष्टि क्रम हीन द्रव्य लीए ऐसो—



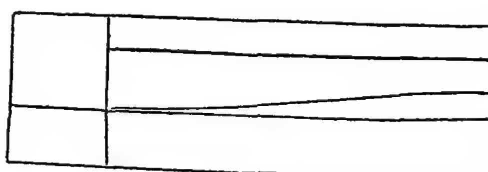
य। तनविषैं अधस्तन शीर्ष द्रव्य दोए समान प्रमाण लीए सर्व कृष्टिनिका प्रमाण समपट्टिकारूप ऐसा हो है—



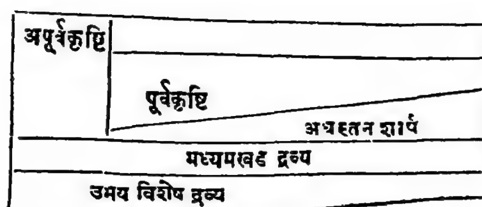
बहुरि याके नीचैं अधस्तन कृष्टि द्रव्यकरि नवीन करी कृष्टि याहीके समान प्रमाण लीए स्थापैं ऐसी कृष्टि हो है—



बहुरि कृष्टि द्रव्य करि न करी कृष्टि याविषैं मध्यम खड द्रव्य मिलाए समानरूप समपट्टिकारूप ऐसी—



याविषैं उभय द्रव्य विशेष मिलाए एक एक विशेष घटता क्रम लीए सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिनिका क्रम हीनरूप एक गोपुच्छाकार ऐसो रचना हो है—



इहा एक समय उदय आवने योग्य परमाणूनिकी अनुभाग अपेक्षा रचना है तातैं आडी लीककरि सहनानी करी है। तहा प्रथम कृष्टिविषैं एक अधस्तन कृष्टिका द्रव्य ऐसा—

।
व । १२ । १६ १० एक । मध्यम खडका द्रव्य ऐसा व । १२ । ३ ≡ । पूर्व अपूर्व कृष्टिका
ओ । प । ४ । १६—४ ओ प ४
३ ख ख २ ३ ख

। १०
प्रमाणकरि गुणित उभय द्रव्य विशेष ऐसैं व । १२ । ३ ४ । इन तीन द्रव्यकौ दीजिए है। द्वितीयादि
ख १०
ओ । प । ४ । १६ —४
३ ख ख २

कृष्टिनिविषै एक एक उभय विशेष घटता द्रव्य नवीन करी कृष्टिनिका अत पर्यंत दीजिए है। बहुरि पूर्व कृष्टिनिकी आदि कृष्टिविषै एक मध्यम खड अर पूर्व कृष्टि गुणित उभय विशेष द्रव्य दीजिए है। बहुरि द्वितीय कृष्टिविषै एक अधस्तनशीर्ष विशेप ऐसा—

।
व । १२ १८ । एक मध्यम खड एक घाटि पूर्व कृष्टिप्रमाण गुणित उभय द्रव्य
ओ । प । ४ । १६—४
ꣃ ख ख

। १८ १८
विशेष ऐसै—व । १२ । ꣃ ४ दीजिए है। तृतीयादि कृष्टिनिविषै एक एक अधस्तन शीर्ष
। ख १८
ओ । ष । १६—४
ꣃ ख ख २

बधता एक एक उभय द्रव्यविशेष घटता दीजिए है। ऐसै दीऐं सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिनिका एक गोपुच्छ हो है। तहा प्रथम समयविषै कीनो कृष्टिनिका द्रव्यविषै अधस्तन शीर्षविशेषका द्रव्य अर अधस्तन कृष्टिका द्रव्य दीए पूर्व अपूव कृष्टिनिका समपट्टिका द्रव्य पूर्व जघन्य कृष्टिकौ

।
पूर्व अपूर्व प्रमाणकरि गुणैं ऐसा व १२ । १६ । ४ । बहुरि उभय द्रव्य विशेषका द्रव्य ऐसा—
ख १८
ओ । प । ४ । १६—४
ꣃ ख ख

। १— । १— ।
व । १२ । ꣃ । ४ । ४ याविषै असख्यातका गुणकारकै ऊपरि जो अधिक था ताका
ख ख

। १८
ओ । प । ४ १६—४
ꣃ ख । ख २

। १८ ।
प्रमाण ऐसा व । १२ । ४ । ४ ग्रह्या सो यहु सर्व कृष्टि द्रव्य सबधी चय धन भया। तहा एक
ख । ख १८
ओ प । ४ । १६—४
ꣃ ख ख । २

।
चयमात्र द्रव्य ऐसा व १२ याकौ पूर्व अपूर्व कृष्टिकरि गुणैं सर्व कृष्टिनिकी नीचली कृष्टि-
१८
ओ प । ४ । १६—४
ꣃ ख ख २

विषै दीया द्रव्य ऐसा—व १२ ४ ख १० ओ प ४ १६ – ४ ३ ख ख बहुरि द्वितीयादि कृष्टिनिविषै एक एक चय घटता देइ

अतविषैं एक चयमात्र दीया द्रव्य ऐसा व १२ १० ओ प । ४ । १६–४ ३ । ख ख ऐसैं प्रथम समयसबधी

कृष्टि द्रव्यके उपरि अधस्तन शीर्ष द्रव्य अर अधस्तन कृष्टि द्रव्य अर उभय विशेष द्रव्य विषै असख्यातके ऊपरि एकका गुणकार था ताका द्रव्य ऐसैं तीन द्रव्य मिलावनेको तीन

उभी लीक रूप ऐसी (।।।) सदृष्टि कीए ऐसा भया व । १२ । १ । ओ प ३ याकौ पूर्व अपूर्व कृष्टिमात्र अर

एक घाटि गच्छका आधाकरि हीन दो गुणहानिका भाग दीए चय ऐसा व । १२ । १ १० ओ । प । ४ । १६–४ ३ ख ख

याकौ दो गुणहानिकरि गुणैं प्रथम कृष्टिका द्रव्य भया अर इस गुणकारविषै क्रमतैं एक एक घटाइ अतविषैं एक घाटि गच्छमात्र घटाए द्वितीयादि कृष्टिका द्रव्य है तहा रचना ऐसी—

प्रथमकृष्टि अन्तकृष्टि

व १२ १ । १६ १० ओ प ४ १६–४ ३ ख ख ००००० व १२ १ १६–४ ख १० ओ प ४ १६–४ ३ ख ख २

इहा रचनाविषैं लीकनिकी सदृष्टि पूर्ववत् जाननी। इहा मध्यम खड रचना नाही करी है अर उभय द्रव्यविशेष स्तोक है। नीचै द्रव्यका प्रमाण लिख्या है। ऐसैं इहा एक गोपुच्छ भया। बहुरि मध्यम खड द्रव्यका एक एक खड समपट्टिकारूप स्थापना। बहुरि द्वितीय समयसबधी कृष्टि द्रव्यका विशेषका चय धनरूप द्रव्य सर्व उभय विशेषका द्रव्यविषैं असंख्यातका गुणकार उपरि एक अधिक था ताकौ जुदा कीए ऐसा—व। १२। ३। ४। ४ / ख ख; १ ० / ओ। प। ४ १६—४ / ३ ख ख

इहा एक चयका द्रव्य ऐसा व। १२। ३ १ ० / ओ। प। ४। १६—४ / ३ ख ख। २। याकौ पूर्वापूर्व कृष्टि प्रमाणकरि गुणै प्रथम कृष्टिविषैं दीया द्रव्य अर एक एक चय घाटि क्रमकरि अतविषैं एक चयमात्र दीया द्रव्य हो है। ऐसैं इहा द्वितीय समयसबधी कृष्टि द्रव्य ऐसा व। १२। ३ / ओ प / ३ ताविषैं अधस्तन शीर्ष द्रव्य अधस्तन कृष्टि द्रव्य अर उभय द्रव्यका असख्यातका गुणकारके ऊपरि एक अधिक था ताका द्रव्य इन तीनोके घटावनेके अर्थि आगें ऐसो ≡ सदृष्टि कीएं ऐसा—

व। १२। ३ ≡ / ओ प / ३। याकौ पूर्वापूर्व कृष्टिमात्र गच्छका अर एक घाटि गच्छका आधाकरि हीन दो गुणहानिका भाग दीए चय होइ ताकौ दोगुणहानिकरि गुणैं प्रथम कृष्टिका द्रव्य इस गुणकार-विषैं क्रमतैं एक एक घटाइ अतविषैं एक घाटि गच्छमात्र घटावना तहा सदृष्टि ऐसी—

मध्यमखंड

उभयविशेष

मध्यमकृष्टि

व १२ ३ ≡ १६ / १ ० / ओ प ४ १६— ४ / ३ ख ख २   ० ० ० ०   व १२ ३ ≡ १६— ४ / १ ० ख / ओ प ४ १६— ४ / ३ ख ख २

इहा मध्यम खडकी समपट्टिकारूप अर नीचैं उभय विशेषकी क्रमहीनरूप सदृष्टि करी है ऐसैं यहु गोपुच्छ भया। याकौ पूर्व गोपुच्छके ऊपरि स्थापैं क्रमहीनरूप सर्व कृष्टिनिका एक गोपुच्छ हो है। ताकी रचना ऐसी—

असख्यात गुणकारका उभयविशेष द्रव्य
मध्यमखड द्रव्य
पूर्वकृष्टि समपट्टिका द्रव्य
अधस्तनकृष्टि द्रव्य
पूर्वचय
अधस्तनशीर्ष
एक गुणकारका उभयविशेष द्रव्य

प्रथमकृष्टि   अंतकृष्टि
। १-   । १-   १
व १२ a १६   ० ० ० ० ० ० ० व १२ a १६- ४
। १   ख
ओ प ४ १६- ४   १
a ख   ख २   ओ प ख १६- ४
                             a   ख २ ।

इहा पहली रचनाके उपरि पाछिली रचना लिखि क्रम हीनरूप एक गोपुच्छ कीया है। तहा द्वितीय समयसबधी कृष्टि द्रव्यका असख्यातका गुणकारके ऊपरि पहिला समयसबधी द्रव्य मिलावनेकौ एक अधिककरि ताकौं पूर्वापूर्वकृष्टिमात्र गच्छका अर एक घाटि गच्छका आधाकरि हीन दो गुणहानिका भाग दीए चय होइ। ताकौ दो गुणहानिकरि गुणैं प्रथम कृष्टि का अर इस गुणकारविषै एक एक क्रमतै घाटि होइ एक घाटि गच्छमात्र घाटि भए अत कृष्टिका द्रव्य हो हैं ताकी सदृष्टि नीचै लिखी है। बहुरि ऐसैं ही कृष्टिकरण कालका तृतीयादि समयनिविषैं यथासभव सदृष्टि जाननी। बहुरि अन्य क्रिया होइ अनिवृत्तिकरणका काल पूर्ण भए सूक्ष्मसापरायका प्रथम समयविषै कृष्टिनिका द्रव्य ऐसा—

। १
स a । १२ — a । २ १ इहा लोभके द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका अर पल्यका असख्यातवा
७ । ८ । ओ । प

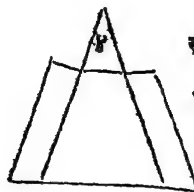
भागका भाग दीए कृष्टिकरण कालका प्रथम समयका द्रव्य होइ। ताको एक घाटि अतमुहूर्तके समयमात्र वार असख्यातकरि गुणें ताका अतिम समयका द्रव्य हो है। ताविषै पूर्व समयनिका द्रव्य मिलावनेकौ उपरि अधिककी सदृष्टि कीए यहु सदृष्टि भई है। याकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ एक भागकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ एक भाग ऐसा—

। । १
स । a । १२—a । २ १ ताकौं प्रथम स्थितिविषैं असख्यातगुणा क्रमकरि देना। तहा याकौ
७ । ८ । ओ । प । ओ । प
                a   a

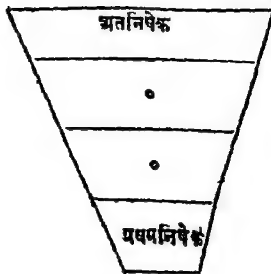
पिच्यासीका भाग देइ एक च्यारि आदि करि गुणै प्रथमादि निपेक हो है। बहुरि बहुभाग ऐसैं

| १० १०
स । ૩ । १२ — ૩ । २ ७ । प याकौ द्वितीय स्थितिविषै हीन क्रमकरि देना। तहा याकी
७ । ८ । आ । प । ओ । प ૩
૩ ૩

स्थिति अतर्मुहूर्तमात्र तामै अतिस्थापनावली घटाए गच्छ ऐसा २ ७—४ सो तिस द्रव्यविषैं एक हीनकौ न गिणि पल्यके असख्यातवा भागका अपवर्तनकरि ताकौ गच्छका अर एक घाटि गच्छका आधाकरि हीन दो गुणहानिका भाग दीए चय होइ। ताकौ दो गुणहानिकरि गुणैं प्रथम निपेक अर गुणकारविषै क्रमतै एक आदि घटाए अतविषै एक घाटि गच्छमात्र घटाए अन्य निषेकनिविषै दीया द्रव्य हो है। तहा सदृष्टिविषैं नीचै अधिक क्रम लीए प्रथम स्थितिकी रचनाकरि ताके उपरि अतरायामकी शून्यरूप सदृष्टिकरि ताके उपरि द्वितीय स्थितिकी वा तहा अत स्थापनावलीकी सदृष्टि करी है। बहुरि आगै प्रथम द्वितीय स्थितिके निषेकनिविषै दीया द्रव्यकी सदृष्टि जाननी।



| १० १०
स ૩ १२ - ૩ २ ७ १६ - २ ७ - ४
१०
७ ८ ओ ૩ प ओ २ ७ ४ १६ - २ ७ - ४
૩ ०
०
० १०
स ૩ १२ - ૩ २ ७ १६ १०
७ ८ ओ प ओ २ ७ - ४ १६ - २ ७ - ४
૩ २



| १०
स ૩ १२ - ૩ २ ७ १४
७ ८ ओ प ओ प ८५
૩ ૩ | १०
स ૩ १२ ૩ २ ७ १
७ ८ ओ प ओ प ८५
૩ ૩

बहुरि कृष्टिकरणका प्रथम समयविषैं कीनी कृष्टिनिका प्रमाणविषैं अन्य समयनिविषै कीनी कृष्टिनिका प्रमाण मिलावनके अर्थि उपरि अधिकको ऐसी (।) सदृष्टि कीए सर्व कृष्टिनिका

|
प्रमाण ऐसा ४ याकौ पल्यका असख्यातवा भागका भागका भाग दीए बहुभाग ऐसा—
ख

| १०
४ प उदयरूप कृष्टिनिका प्रमाण है। अवशेप एक भाग ऐसा ४ याकौं पल्यका असख्यातवा
ख ૩ ख प
प ૩
૩

१८
।
भागका भाग देइ बहुभाग ऐसे ४ प तिनिके आधे प्रमाण लीए तौ कृष्टिकरण कालका अत
a
ख प प
a a
समयविषै कीनी जे आदिकी जघन्यादि कृष्टि ते अनुदयरूप है। बहुरि आधे ऐसे—

।१८ ।
४ प याविषै रह्या एक भाग ऐसा ४ मिलावनेकौ अगिला गुणकारविषैं दोयकरि
a ख प । प
ख प प २ a a
a a

। १८
भाजित एक घाटि था तहा दोयकरि भाजित एक अधिक कीए ऐसा ४ प प्रमाण लीए
a
ख प प २
a a
कृष्टिकरण कालका प्रथम समयविषैं कोनी अतको उत्कृष्टपर्यंत कृष्टितैं अनुदयरूप हो है। इहा पल्यका असख्यातवा भागकौ सहनानी पाचका अक कीए जो एक भाग ऐसा—

। ।
४ । था ताकौ पाचका भाग देइ बहुभागके आधे ऐसे ४ । २ अर इनविषैं एक अवशेष भाग
ख प ख प । ५
a a

।
मिलाए ऐसैं हो है ४ । ३ ऐसैं सूक्ष्मसापरायका प्रथम समयविषैं उदय अनुदय कृष्टिनिका प्रमाण
ख प । ५
a
जानना। इहा रचना ऐसी—

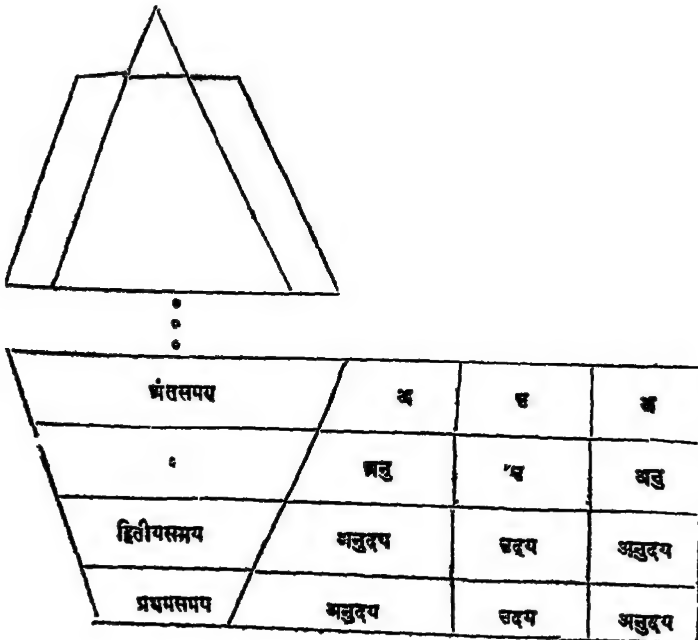


०
०
०

अन्यानिषेक	अनुदय	उदय	अनुदय
प्रथमनिषेक	। ४ २ ख प ५ a	। १८ १ प ख a	। ४ ३ ख प ५ a

प
a

इहा प्रथम स्थिति अतरायाम द्वितीय स्थितिका पूर्ववत् रचनाकरि प्रथम स्थितिका प्रथम समयसबधी निषेकनिकी कृष्टिनिविषै आदिकी जघन्यादि अनुदय कृष्टिका अर उदय आवने योग्य वीचिको कृष्टिनिका अर अतकी उत्कृष्ट पर्यंत अनुदय कृष्टिनिका प्रमाण लिखा है। बहुरि सूक्ष्मसापरायका द्वितीय समयविषै पूर्वोक्त अतकी अनुदय कृष्टिनिकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए एक भागमात्र कृष्टि ऐसी ४।३ / ख।प।५।प नवीन अनुदयरूप हो है। ते ए कृष्टि प्रथम समयकी उदय कृष्टिनिविषै अतकी कृष्टि जासना। बहुरि पूर्वोक्त आदिकी अनुदय कृष्टिनिका पल्यका असख्यातवा भागमात्र कृष्टि ऐसी ४।२ / ख।प।५।प नवीन उदयरूप कृष्टि हो हैं। ते ए कृष्टि प्रथम समयकी अनुदय कृष्टिनिविषैं अतकी कृष्टि जाननी। बहुरि इहा नवीन अनुदय कृष्टिनिविषैं नवीन उदय कृष्टिनिका प्रमाण घटाए ऐसा ४।१ / ख।प।५।प विशेषकरि घटता द्वितीय समयविषै उदय कृष्टिनिका प्रमाण हो है। ऐसै ही तृतीयादि समयनिविषै विधाव जानना, तिनकी रचना कथन अनुसार ऐसी—

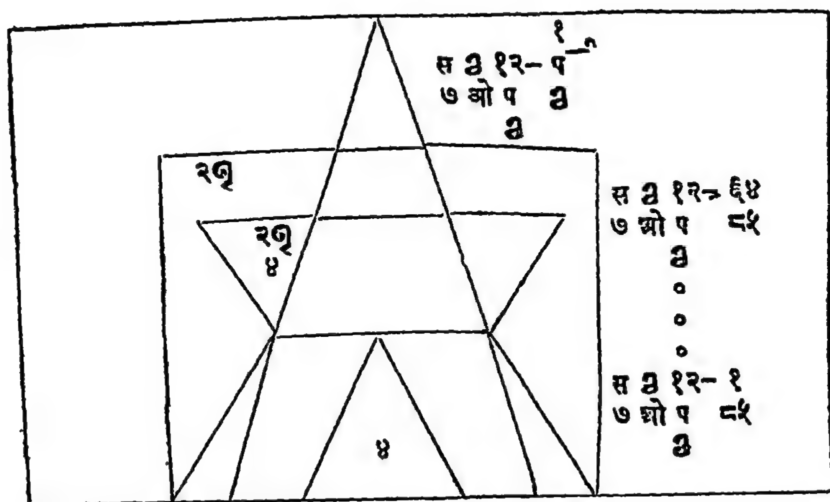


इहा पूर्वोक्त प्रकार प्रथम स्थित्यादिककी सदृष्टिकरि तहा समय समय क्रमतैं आदिकी अनुदय कृष्टि घटती वीचिका उदय कृष्टि विशेष हीन अतकी अनुदय कृष्टि बधती अतविषैं वा आदि विषै भई तिनकी सदृष्टि करी है। तिनका प्रमाणकी सदृष्टि तहा यथा सभव लिखनी

बहुरि सर्व कृष्टिनिका द्रव्य पूर्वोक्त प्रकार ऐसा स a । १२–a २ ७ / १० / ७।८।ओ। प / a याकौ पल्यका असंख्यातवा भागका भाग दीए प्रथम फालि, याकौ क्रमतैं असख्यातकरि (गुणें) द्वितीयादि फालि होइ। द्विचरम फालि पर्यन्त सर्व फालिनिका द्रव्य घटाए तिस सर्व द्रव्यकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए तहा वहुभागमात्र अत फालिका द्रव्य हो है। तिनकौ सूक्ष्मसापरायका प्रथमादि समयविषैं उपशमावै है। तिनकी सदृष्टिरूप रचना ऐसी—

स । a । १२–a । प । प a १ २ ७ १ प a ७ । ८ । ओ । प । प a a	० ० ०	स । a । १२– । a । प a १ ७ २ । a । प a ७ । ८ । ओ । प । प a a	स । a । १२– a प a १ ७ १ २ । प a ७ । ८ । ओ । प । प a a

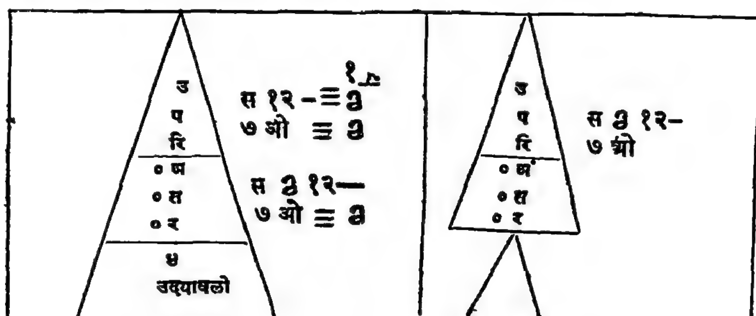
वहुरि उपशातकषायका प्रथमादि समयनिविषैं उदयादि अवस्थिति गुणश्रेणि आयाम हैं। तहा प्रथम समयविषै एक कर्मका द्रव्य ऐसा स a । १२– / ७ ताकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ एक भागकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए एक भाग ऐसा स । a । १२– / ७ । ओ । प / a ताकौ गुणस्थान काल अतर्मुहूर्त ताका असख्यातवा भाग ऐसा २ ७ / १० ताविषै गुणश्रेणि विधानकरि द्रव्य देना। वहुरि वहुभाग ऐसे स । a । १२–प / ७ । ८ । ओ प a / a उपरितन स्थितिविषै विशेष घटता क्रमकरि देने तहा सदृष्टि ऐसी—



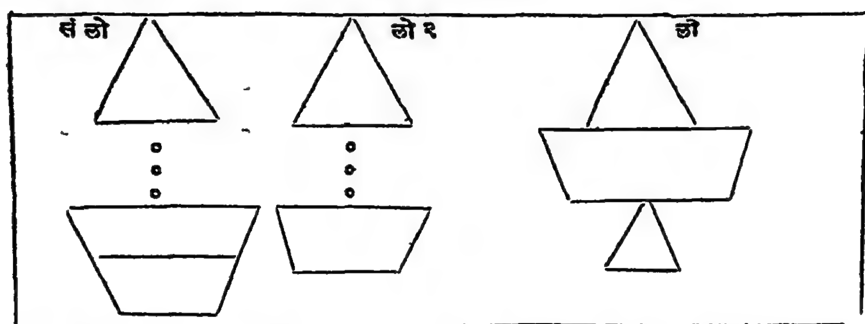
इहा पूर्वै उदयावली गुणाश्रेणि थी तिनकी सदृष्टि नीचैं क्रमहीनरूप उपरि क्रम अधिकरूप करि इहा भई, उदयादि गुणश्रेणिकी नीचैंहीतै लगाय क्रम अधिकरूप सदृष्टि करी अर ताके उपरि उपरितन स्थितिकी सदृष्टि करी है अर तहा दीया द्रव्यको सदृष्टि आगैं करी है। बहुरि प्रथम समयविषै कीनी गुणश्रेणिका अत समयविषै उत्कृष्ट प्रदेशोदय हो है। तहा प्रथम समय कृत गुणश्रेणिका अत निषेक ऐसा स। ३। १२—६४। द्वितीय समयकृत
७। ओ। प। ८५
३
गुणश्रेणिका द्विचरम निषेक ऐसा स। ३। १२-१६। ऐसै क्रमतै मिलै गुणश्रेणिमात्र द्रव्य ऐसा
७। ओ। प ८५
३
स। ३। १२—याविषैं इस समयसबधी गोपुच्छ द्रव्य ऐसा—
७। ओ। प
३
१०
स। ३। १२—७। १६—२ ७ साधिक कीए इहा उत्कृष्ट प्रदेशोदय हो हे। ऐसैं उपशमश्रेणी
३। ७ ओ।१२। १६ । ४
चढनेका विधान विषैं सदृष्टि कही। अव उतरनेका विधानविषै सदृष्टि कहिए है—

तहा भव क्षयतै उपशात कषायतै पड्या देव असयमी होइ। ताके प्रथम समयविषै उदयरूप मोह प्रकृतिनिके कर्मका द्रव्य ऐसा स। ३ १२—ताका अपकर्षणकरि ताकौ असख्यात
७
लोकका भाग देइ एक भागकौं उदयावलीविषैं देइ बहुभाग उदयावलीतैं बाह्य जो अतरायाम अर द्वितीय स्थिति विषैं हीन क्रमकरि दीजिए हैं। बहुरि उदय रहित मोह प्रकृतिका द्रव्य ऐसा

स। ३। १२—ताकौ अपकर्षण करि उदयावलीतैं वाह्य निषेक अर अतरायाम अर द्वितीय
७
स्थितिविषै पूर्वोक्त प्रकार हीन क्रमकरि दीजिए है। तहा सदृष्टि ऐसी—



इहा सर्वत्र हीन क्रमकरि द्रव्य दीया है। तातैं हीन क्रमरूप सदृष्टि करी। तहा उदयावली आदिका विभागके अर्थि वीचिमे लोककी सदृष्टि करी है। बहुरि अद्धाक्षय निमित्ततैं उपशात कषायस्यो पडि सूक्ष्मसापरायविषै आवै तहा प्रथम समयविषैं उदयवान सज्वलव लोभका द्रव्यकौ अपकर्पणकरि ताका पल्यकौ असख्यातवा भागका भाग देइ एक भागकौं उदयादि गुणश्रेणि आयामविषैं गुणकार क्रमकरि देइ ताके उपरि अतरायामविषै न देइ ताके उपरि तिनके बहुभागनिकौ द्वितीय स्थितिविषै विशेष हीन क्रमकरि दीजिए है। बहुरि उदय रहित अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान लोभका द्रव्य अपकर्षण करि पूर्वोक्त प्रकार उदयावली बाह्य गुणश्रेणि आयामविषैं देना। अतरायाम विषैं न देना। उपरितन स्थितिविषै देना। बहुरि ज्ञानावरणादि छह कर्मनिका द्रव्य अपकर्षण करि उदयावलीविषै हीन क्रमकरि गुणश्रेणि आयामविषैं गुणकार क्रमकरि उपरितन स्थितिविषै हीन क्रमकरि देना। ताकी सदृष्टि रचना ऐसी—



इहा दीया द्रव्यकी सदृष्टि यथासभव जानि लेनी। वहुरि सूक्ष्मसापरायका प्रथम
।
समयविषै सर्व कृष्टि ऐसी ४ ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए वहुभागमात्र
ख

।१०
ऐसी ४ प उदयकृष्टि है। बहुरि एक भागकौ अकसदृष्टि अपेक्षा पाचका भाग देइ दोय
ə
ख प

भागमात्र आदि कृष्टिविषै अनुदयरूप है। तीन भागमात्र अंत कृष्टिविषै अनुदयरूप हैं ते ऐसी—

। ।
४।२ ४।३ बहुरि द्वितीय समयविषै आदि कृष्टिनिकी पल्यका असंख्यातवा भागका भाग
ख।प।५ख।प।५
ə ə

दीए एक भागमात्र उदय कृष्टिनिविषै आदिकी नवीन कृष्टि अनुदयकृष्टिरूप हो है। बहुरि अंतकी अनुदय कृष्टिनिकौ तैसैं ही भाग दीए एक भागमात्र अंतकी अनुदय कृष्टिनिविषै नवीन

।
कृष्टि उदयरूप हो है। इहा पूर्व उदय कृष्टिनिविषै घटी कृष्टि ऐसी ४।२ अर वधी कृष्टि
ख।प।५।प
ə ə

। ।
ऐसी ४।३ वधीमै घटाए इतनो ४।१ इहा पूर्व उदयकृष्टितै अधिक इहा उदय
ख।प।५।प ख।प।५।प
ə ə ə ə

कृष्टि जाननी। ऐसें ही तृतीयादि समयनिविषै क्रम जानना। तहा सदृष्टि रचना ऐसी—

आदिकी अनुदयकृष्टि	मध्यकी उदयकृष्टि	अन्तकी अनुदयकृष्टि

इहा आदि अनुदयकृष्टि अधिक क्रमरूप मध्य उदयकृष्टि विशेष अधिकरूप अत अनुदयकृष्टि हीन क्रमरूप जाननी। बहुरि अनिवृत्तिकरण लोभ वेदक कालादिविषै गुणश्रेणि आदिकी सुगम सदृष्टि है। बहुरि क्रोधवेदक कालका प्रथम समयविषैं क्रोधका द्रव्य अैसा स ३ । १२ – ताकौ
७ । ८

अपकर्षण भागहारका भाग दीए अैसा स ३ । १२ – याकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए
। ७ । ८ । ओ

एक भाग अैसा स । ३ । १२ – उदयादि गुणश्रेणि आयामविषै गुणकार क्रमकरि देना। तहा
७ । ८ । ओ । प
३

याकौ अक सदृष्टिकरि पिच्यासीका भाग देइ एक आदिकरि गुणै प्रथमादि निषेक हो है। बहुरि बहुभागनिविषै केता इक द्रव्य देइ अतरायामकौ पूरे है। तहा क्रोध द्रव्यकौ साधिक ड्योढ गुणहानिका भाग दीए द्वितीयादि स्थितिके प्रथम निषेकका द्रव्य अैसा स । ३ । १२ – याकौ अत-
।
७ । ८ । १२

रायामका गच्छ अैसा २ १ करि गुणै समपट्टिकाधन अैसा स । ३ । १२ – । २ १ । बहुरि
।
७ । ८ । १२

तिस प्रथम निषेकका द्रव्यकौ दो गुणहानिका भाग दीए चय होइ ताकौ दो गुणहानि कीए तिसतै नीचलो गुणहानिका चय अैसा स । ३ । १२ – २ । याकौ एक अधिक गच्छकरि अर गच्छका
।
७ । ८ । १२ । १६

आधाकरि गुणै उत्तर धन अैसा—

१ ०
स । ३ । १२ – २ । २ १ । १ १ मिलावनेकौ समपट्टिका धन उपरि साधिककी सदृष्टि अैसी
। २
७ । ८ । १२ । १६
१३

(।) कीए अतरायामविषै दीया द्रव्य अैसा स । ३ । १२ – २ १ याकौ गच्छ अैसा २ १
।
७ । ८ । १२

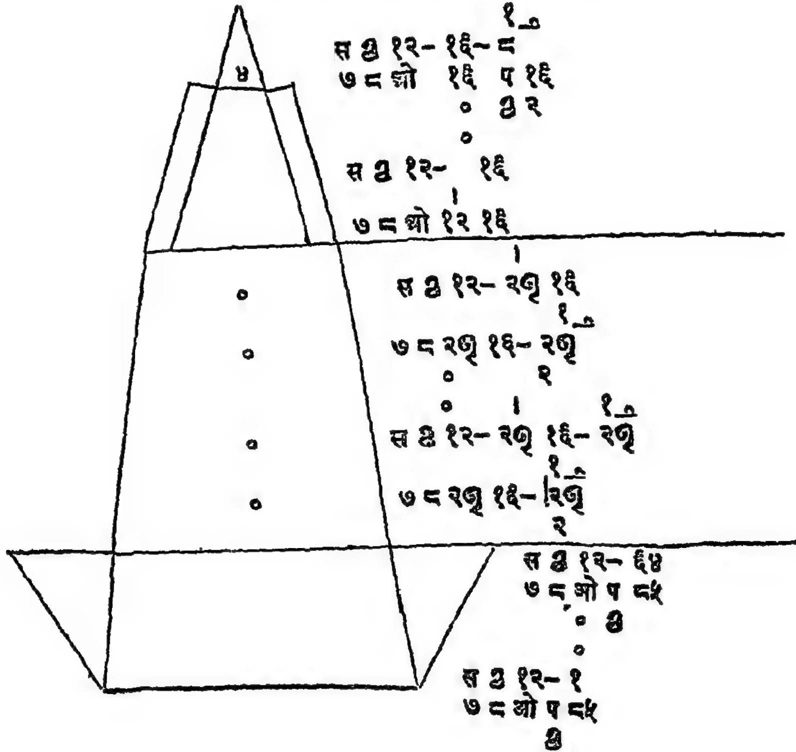
ताका अर एक घाटि गच्छका आधाकरि न्यून दो गुणहानिका भाग दीए चय होइ, ताकौ दो गुणहानिकरि गुणै प्रथम निषेक अर तिस गुणकारविषै एक-एक क्रमतै घटाइ अतविषै एक घाटि गच्छकौ घटाए अन्य निमेक हो है। बहुरि तिन बहुभागनिविषै इतना द्रव्य घटावनेकौ आगै अैसी (–) सदृष्टि कीएं अवशेष उपरितन स्थितिविषै दीया द्रव्य अैसा–

१ ०
स । ३ । १२ – प – इहा गुणकारका हीनपनाकौ न गिणि पल्यका असख्यातवा भागका अप-
७ । ८ । ओ । प ३
३

वर्तन कीए अैसा स । ३ । १२ – । याकौ साधिक ड्योढ गुणहानिका अर दो गुणहानिका भाग
७ । ८ । ओ

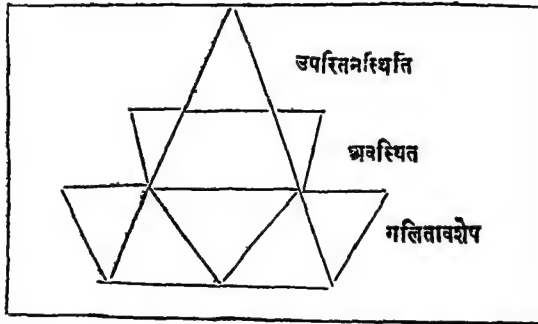
दीएं चय होइ – १ ताकौ दो गुणहानिकरि गुणें प्रथम गुणहानिका प्रथम निषेक अर याकौ आधा अन्योन्याभ्यस्तराशि ऐसा प का भाग दीए अर तिस दो गुणहानिका गुणकारविषै एक
ꣳ २

१ ꣳ
घाटि गुणहानि आयाम ऐसा– ८ घटाए अंत निषेकका द्रव्य हो है। तहां संदृष्टि रचना ऐसी–



इहां नीचैं गुणश्रेणिके बीचि अंतरायामकी उपरितन स्थितिकी अंतविषैं अतिस्थापनावलीको संदृष्टिकरि आगैं दीए द्रव्यनिकी संदृष्टि करी है। बहुरि संज्वलन मानादिक तीनका द्रव्य ऐसा – स। ꣳ। १२ – ३ / ७। ८ याविषै अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यानका द्रव्य ऐसा– स। ꣳ। १२ – ८ / ७। ख। १७

मिलावनेकौ साधिककी संदृष्टि कीए ऐसी स। ꣳ। – १२ — ३ / ७। ८। याकौ अपकर्षणकरि उदयावली बाह्य गुणश्रेणी आयामविषैं अर अंतरायामविषैं अर उपरितन स्थितिविषैं ऐसी विधान जानि संदृष्टि जाननी। बहुरि स्थिति बंधादिकी संदृष्टि सुगम है। तहां संख्यातकी सहनानी पांचका अंक इत्यादि यथासंभव जानि लेना। बहुरि उतरनेवाले सूक्ष्मसांपरायका प्रथम समयविषै प्रारंभो गलितावशेष गुणश्रेणिका आयामतैं अधःकरणका प्रथम समयविषैं आरंभी अवस्थित गुणश्रेणि आयाम संख्यातगुणी है। तहां संदृष्टि ऐसी—



इहा क्रम हीनरूप निषेकनिकी सदृष्टिकरि तहा स्तोक प्रमाण लीए गलितावशेष अर बहुत प्रमाण लिए अवस्थित गुणश्रेणि आयामकी सदृष्टि अधिक क्रमरूप करी है। ऐसै उपशमश्रेणिके उतरनेका विधानकौ सदृष्टि कही।

बहुरि उपशमश्रेणि चढनेवालोके क्रमतैं नपुसकवेद स्त्रीवेद सप्त नोकपाय तीन क्रोध तीन मान तीन माया तीन लोभ एक सूक्ष्मलोभका उपशमावना क्रमतैं हो है। विशेष इतना—नपुसकवेद सहित चढनेवालेकैं स्त्रीवेदका उपशमन कालविषैं नपुमकवेदका भी उपशमावना हो है। तहा क्रोध सहित श्रेणि चढ्याकैं क्रोध पर्यंतकी प्रथम स्थिति पहलैं होइ। उपरि मानादिककी जुदी जुदी प्रथम स्थिति हो है। बहुरि मान माया लोभ सहित चढनेवालोके क्रमतैं मान माया लोभ पर्यंतनिकी प्रथम स्थिति पहलैं होइ। उपरि अवशेषनिकी जुदी जुदी प्रथम स्थिति हो है। तहा प्रथम स्थितिविषैं अधिक क्रम लीए द्रव्य दोजिए है। तातैं तिनकी अधिक क्रम लीए ऐसी सदृष्टि रचना हो है—

बहुरि उपशमश्रेणिका चढनो वा पडनोका कालका अल्पवहुत्वविषैं सदृष्टि पूर्वोक्त प्रकार वा एकवार आदि अधिककी उपरि एक दोय आदिवार उभी लीकनैं आदि दैकरि कथनके अणुसारि ऐसी सदृष्टि जाननी। पृष्ट ५७२ (क) में देखो

ऐसै उपशम चारित्राविकारविषैं सदृष्टि जाननी।

इति श्रीलब्धिसारटीका अनुसारि उपशमश्रेणिपर्यन्त व्याख्यानकी सदृष्टि सपूर्ण भई।

अथ क्षपणासारका अनुसारि लीए क्षपकश्रेणिका व्याख्यानरूप लब्धिसारके सूत्रनिका अर्थकी सदृष्टि लिखिए है—तहा अपूर्वकरणविषै गुणश्रेणि गुणसक्रमण स्थितिकाडक अनुभाग काडककी सदृष्टि उपशमश्रेणिवत् इहा अर विशेष है तिनकी यथा सभव सदृष्टि जाननी। इहा सत्त्व द्रव्य विषै गुणश्रेणि आदि वा वध द्रव्यकी सदृष्टि अैसी—

पृष्ठ ५७३ (क) में देखो

इहाँ प्रकृति अष्ट आदि क्रमतै जैसै क्षपै है तैसै क्रमतै तिनके सत्त्वरूप निषेकनिकी क्रम-हीन सदृष्टिकरि तिनविषै नीचै उदयावलीकौ हीन क्रमरूप वीचि गुणश्रेणि आयामकी अधिक क्रमरूप उपरि उपरितन स्थितिकी हीनक्रमरूप रचना जाननी। बहुरि पुरुषवेद अर क्रोधकी प्रथम स्थिति स्थापी ताकी जुदी हीन क्रमरूप सदृष्टि दिखाइए है। बहुरि इस रचनाके वीचि वीचि पुरुषवेद अर क्रोधादिकका वध द्रव्यकी जुदी सदृष्टि अैसी $\overset{\Delta}{\text{।}}$ दिखाई है। इहा नीचै आबाधा उपरि निषेकिनिकी सदृष्टि जाननी। बहुरि ताके आगै अवशेष कर्मनिकी क्रमहीन रूप सत्त्व निषेक रचनाविषै नीचै उदयावली वीचि गुणश्रेणि उपरि उपरितन स्थितिकी रचना जाननी। बहुरि ताके आगै अवशेष कर्मनिका बध द्रव्यकी सदृष्टि है। तहा नीचै आबाधा ऊपरि निषेकनिकी रचना जाननी। बहुरि अनिवृत्तिकरणविषै स्थितिबधापसरणादिककी सदृष्टि सुगम है। बहुरि अष्ट कषाय सोलह प्रकृतिकी क्षपणा अश देशघातिकरण अतरकरण विषै सदृष्टि पूर्वोक्त प्रकार वा विशेष है। ताकी सभवती सदृष्टि जाननी। बहुरि नपुसकवेदका सक्रमण कालविषै पूर्वोक्त प्रकार नपुसकवेदका सत्त्व द्रव्य अैसा $\frac{\text{स । ∂ । १२—४२}}{\text{७ । १० । ४८}}$ ताकौ गुण-सक्रमका भाग दीए पुरुषवेदविषै सक्रमणरूप भया द्रव्यका प्रमाण हो है। अर पूर्वोक्त प्रकार पुरुषवेदका सत्त्व द्रव्य अैसा $\frac{\text{स । ∂ । १२—२}}{\text{७ । १० । ४८}}$ ताकौ अपकर्षण भागहार अर पल्यका असख्यातवा भाग अर अक सदृष्टि अपेक्षा पिच्यासीका भाग दीए गुणश्रेणिका प्रथम निषेक होइ। तिसविषै पूर्व सत्त्व निषेक साधिक कीए पुरुषवेदका उदय द्रव्य हो है। बहुरि समयप्रबद्ध अैसा स ∂ ताकौ सातका भाग दीए मोहका अर ताकौ दोयका भाग दीए पुरुषवेदका बध द्रव्य हो है। इनकी सदृष्टि अैसी—

सक्रमण नपुसक द्रव्य	स । ∂ । १२ — । ४२ ७ । १० । ४८ । गु
उदय पुवेद द्रव्य	स । ∂ । १२ — । २ ७ । १० । ४८ । ओ । प ८५ ∂
बध पुवेद द्रव्य	स । ∂ ७ । २

बहुरि अश्वकरण विषै अक सदृष्टिकरि जैसै व्याख्यानविषै कथन कीया तैसै इहा अर्थ सदृष्टिकरि पूर्व अनुभाग सत्त्व एक गुणहानिसबधी स्पर्धक शलाका (९) कौ नानागुणहानिकरि गुणै मानके स्पर्धक अैसे (९ । ना) याकौ अनतका भाग देइ क्रमतै एक दोय तीन अधिक अनत करि गुणै

१ २ ३
क्रोध माया लोभके अैसे ९ । ना ख । ९ ना ख । ९ ना । ख । बहुरि इहा क्रोधादिकका गुणकार
ख ख ख

उपरि एक दोय तीन अधिक थे तिनकौ जुदे कीए ते अैसे—

९ । ना । ९ ना २ । ९ ना ३ । मानकौ गुणकार विषै अधिक है नाही तहा शून्य लिखनी ।
ख ख ख

बहुरि क्रोधका जुदा कीया अधिकका प्रमाण अर अधिक जुदेकरि अपवर्तन कीए क्रोधके
१ ≗
असे ९ । ना । स्पर्धकनिकौ अनन्तका भाग देइ बहुभाग अैसे ९ । ना । ख । इनिकौ मिलाए
ख

क्रोधकाडकको प्रमाण हो है । अवशेष एक भागमात्र अैसा ९ । ना अवशेष सत्त्व क्रोधका रहै
ख

है । वहुरि तिस क्रोधसबधी वहुभागनिका प्रमाण अर अवशेष एक भागका अनन्त बहुभाग
१
ऐसा ९ । ना । ख ख मिलाए मानकाडकका प्रमाण हो है । अवशेष एक भागमात्र ऐसा—
ख ख

९ । ना अवशेष सत्त्व रहै है । बहुरि जुदा कीया मायाके अधिकका प्रमाण अर क्रोधसम्बन्धो
ख ख

मानसम्बन्धी कहे थे वहुभाग तिनिका प्रमाण अर मानसम्बन्वी अवशेष सत्त्व एक भागमात्र
१ ≗
ताका अनन्त वहुभागनिका प्रमाण ऐसा ९ ना ख मिलाए मायाकाडकका प्रमाण हो है
ख ख ख

अर अवशेष एक भाग ऐसा ९ । ना अवशेष सत्त्व रहै है । वहुरि जुदा कीया लोभका
ख ख ख

अधिकका प्रमाण अर क्रोध मान मायासम्बन्धी कहे थे वहुभाग तिनका प्रमाण अर तिस
१ ≗
मायाका अवशेष सत्त्व एक भागमात्र ताका अनन्त वहुभागनिका प्रमाण ऐसा ९ । ना । ख
ख । ख । ख । ख

इनि सवनिकौ मिलाए लोभ काडकका प्रमाण हो है । अवशेष एक भागमात्र ऐसा ९ । ना
ख । ख । ख । ख

अवशेष सत्त्व रहै है । ऐसे इहा उपरि जुदे कीए अधिकनिका प्रमाण लिखि नीचै अन्य मिलाऐ तिनका प्रमाण लिखना । तिनकौ जोडें काडकप्रमाण हो है ऐसें समझना । बहुरि इस काडकघात भए पीछैं अश्वकरणविषै अनन्त गुणहानि लीए क्रोधादिकके स्पर्धक क्रमरूप हो हैं । तिनका प्रमाण नीचै ही नीचै लिखना । ऐसें कीए ऐसी संदृष्टि हो है—

क्रो	मा	या	लो
९।ना।१ ख	० ०	९।ना।२ ख	९।ना।३ ख
१ ≘ ९।ना।ख ख	१ ≘ ९।ना।ख ख	१ ≘ ९।ना।ख ख	१ ≘ ९।ना।ख ख
९।ना ख	१ ≘ ९।ना।ख ख ख	१ ≘ ९।ना।ख ख ख	१ ≘ ९।ना।ख ख ख
	९।ना ख।ख	१ ≘ ९।ना।ख ख।ख।ख	१ ≘ ९।ना।ख ख।ख।ख
		९।ना ख।ख।ख	१ ≘ ९।ना।ख ख।ख।खख
			९।ना ख।ख।ख।ख

बहुरि इस अपकर्षण सहित अपूर्व स्पर्धक क्रिया हो है। तहा एक परमाणूविषैं अविभाग प्रतिच्छेदका समूह वर्ग ताको सदृष्टि ऐसो (व) । याकौ वर्गणा वर्गणा प्रति जो चय ताका नाम विशेष है ताकरि गुणैं ऐसा (व । वि) । बहुरि एक स्पर्धकविषैं जेती वर्गणा पाइए तिनका नाम वर्गणा शलाका है । ताकी सदृष्टि ऐसी (४) । बहुरि एक गुणहानिविषै स्पर्धकनिका प्रमाण ताका नाम स्पर्धक शलाका ताकी सदृष्टि ऐसी (९) । इनि दोऊनिकौं परस्पर गुणैं गुणहानि आयाम होइ ताकी अक सदृष्टि ऐसी (८) । याकौ दोयकरि गुणैं दो गुणहानिकी सदृष्टि ऐसी १६ । याकरि तिस विशेषको गुणैं प्रथम स्पर्धककी ऐसो व वि १६ । याको दूणा कीए द्वितीय स्पर्धकको आदि वर्गणाकी ऐसी व वि १६ २ । बहुरि तिसहीको तिगुणा कोए तृतीय स्पर्धकको आदि वर्गणाकी सहष्टि ऐसी व वि १६ ३ । ऐसैंही क्रमतै प्रथम समय विषै कीए अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण स्पर्धक शलाकाकौ असख्यातगुणा अपकर्षण भागहारका भाग दीए हो है सो ऐसा ९ याकरि गुण अन्त स्पर्धककी आदि

ओ ३

वर्गणाकी सहष्टि ऐसी व वि। १६। ९ हो है। ऐसैं ही जानि अन्य कथनकी सदृष्टि यथा सभव

ओ ३

जानि लेनी। बहुरि क्रोधके अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण पूर्वोक्त ऐसा ९ याकौं अनन्तका भाग देइ

ओ ३

क्रमतै एक दोय तीन अधिक करि गुणैं मान माया लोभके अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण हो है, ते ऐसे

१– ९।ख ओ ३ ख	२– ९।ख ओ ३ख	३— ९।ख ओ ख

बहुरि क्रोधकाडक अनन्तप्रमाण ऐसा (ख) यातैं एक दोय तीन अधिक मानादिकका काडक

ऐसा १ । २ । ३ । बहुरि पूर्व स्पर्धककी आदि अर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनिकौ अनन्तका भाग
ख । ख । ख
दीए अपूर्व स्पर्धककी अत वगणाके अविभागप्रतिच्छेद च्यारयो कषायनिके समान हैं। तिनकी सदृष्टि ऐसी व । याकौ अपने अपने अपूर्व स्पर्धकनिके प्रमाणका भाग दीए आदिवर्गणा हो है।
ख
याहीकौ जघन्य वर्गणा कहिए। बहुरि याकौं दोय तीन आदि क्रमतैं एक एक बधता गुणकार करि गुणैं जहा अपने अपने काडक प्रमाणका गुणकार होइ तहा च्यारयो कषायनिकी वर्गणानिके समान अविभागप्रतिच्छेद हो है। बहुरि ताके ऊपरि तैसैं ही एक एक बधता गुणकाररूप क्रमतैं तिन समान वर्गणानिके अविभागप्रतिच्छेदनितैं दूणा प्रमाण भए समान वर्गणा हो है। ऐसैं ही तिनतै तिगुणा चौगुणा आदि एक घाटि अनन्तगुणा पर्यंत प्रमाण होइ। ताके उपरि अत स्पर्धकविषै पूर्वोक्त ऐसा व च्यारयो कषायनिकी आदि वर्गणानिविषै समान अविभागप्रतिच्छेद
ख
हो है। तिनकी सदृष्टि ऐसी—

क्रो व ख ० ०	मा व ख ० ०	माया व ख ० ०	लो व ख ० ०
१ ᘯ ज ख । ख ० ०	१— १ ᘯ ज । ख ख ० ०	२— १ ᘯ ज । ख ख ० ०	३— १ ᘯ ज ख ख ० ०
ज । ख । २ ० ०	१— ज । ख २ ० ०	२— ज । ख २ ० ०	३— ज । ख २ ० ०
ज । ० ख ० व ख । ९ । ओ a	१— ज । ख ० व ० १— ख । ९ । ख ओ a ख	२— ज । ख ० व ० ख ९ ख ओ a ख	३— ज । ख ० व ० ३ — ख ९ ख ओ a ख

तहा मध्य भेदनिकी सदृष्टि विंदी जाननी।

बहुरि प्रथम वर्गणाकौ अनुभागसवधी ड्योढ गुणहानिकरि मुणे मोहका सत्त्व द्रव्य
।
ऐसा व । १२ । याकौं आवलीका असख्यातवा भागकी सहनानी नवका अक ताका भाग देइ एक भाग जुदा राखि बहुभागनिके दोय भाग करने। तहा एक भागविषैं जुदा राख्या भाग
।
मिलाए साधिक आधा द्रव्य कषायनिका ऐसा व १२ । किंचिदून आधा द्रव्य नोकषायनिका ऐसा—
२

व। १२ — हो है। बहुरि कषायनिके द्रव्यविषैं साधिक चौथा भागमात्र लोभका द्रव्य है।
 २

किंचिदून चौथा भागमात्र मायाका तातैं किंचिदून क्रोधका तातैं किंचिदून मानका द्रव्य है। इहां इस च्यारिका भागहारकौं पूर्व दोयका भागहार करि गुणें आठका भागहार हो है। बहुरि क्रोधका द्रव्यविषैं नोकषायनिका द्रव्य समच्छेदकरि मिलाए क्रोधका द्रव्य पाचगुणा हो है। तिनकी सदृष्टि ऐसी—लो माया मा क्रो बहुरि इहां लोभके द्रव्यकौं अपकर्षण

|
व १२ व १२ – व १२ = व १२ ☰ ५
 ८   ८   ८   ८
              |

भागहारका भाग दीए अपकृष्ट द्रव्य ऐसा व १२। तहां लोभकी पूर्व स्पर्धककी वर्गणाकौं अपकर्षण
ओ

भागहारका भाग दीए ऐसा व। ऐसैं ही दोय घाटि अपकर्षण भागमात्र पूर्व स्पर्धककी वर्गणानिका
ओ

अपकर्षण कीया द्रव्य ऐसा व ओ – २। यामैं आदि वर्गणाका अपकृष्ट द्रव्य मिलावनेकौं दोय
ओ

घाटिकी जायगा एक घाटि कीए ऐसा व। ओ – १। इतना द्रव्य ग्रहि अपूर्व स्पर्धककी आदि
ओ

वर्गणा निपजाइए है। सो यहु पूर्व स्पर्धककी आदि पर्गणाके समान है। जातैं तहां भी तिस वर्गणाकौं अपकर्षण भागहारका भाग देइ एक भाग ग्रहै बहुभागमात्र द्रव्य अवशेष रहै है। सो इतना ही यहु है। बहुरि अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण ऐसा ९ अर एक स्पर्धकविषै वर्गणानिका
ओ। ꣸

प्रमाण ऐसा [४] इनकौ परस्पर गुणें सर्व अपूर्व स्वर्धकनिकी वर्गणाका प्रमाण ऐसा ९। ४ भया।
ओ। ꣸

इहां स्पर्धक शलाकाकी सहनानी नवका अंक अर वर्गणा शलाकाकी च्यारिका अंक तिनको परस्पर गुणैं गुणहानि होइ, ताकी सहनानी आठका अंक कीए ऐसी ८ सदृष्टि हो है। याकरि
ओ ꣸

तिस आदि वर्गणाकौ गुणैं समपट्टिका धन ऐसा व ओ – १। ८ हो है। बहुरि पूर्व स्पर्धककी
ओ। ओ। ꣸

आदि वर्गणाकौ दो गुणहानिका भाग दीए ताका चय होइ। तातैं दूना अपूर्व स्पर्धकनिकी वर्गणानिविषै चयका प्रमाण है। तातैं तिस आदि वर्गणाकौ एक गुणहानिकी सहनानी आठका अंक ताका भाग दीए इहां चय ऐसा व। ओ – १। याकौ आदि उत्तर स्थापि अपूर्व स्पर्धक वर्गणा
ओ। ८

प्रमाणकौ गच्छ स्थापि जोडें जो चय धन भया ताकौ मिलावनेके अर्थि तिस समपट्टिका धनकी सदृष्टि उपरि साधिककी सदृष्टि कीए ऐसा– व। ओ – १। ८। बहुरि याके गुणकार भागहारकौ
ओ। ओ। ꣸

ऐसा १ । २ । ३ । बहुरि पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदनिका अनन्तका भाग
ख । ख । ख
दीए अपूर्व स्पर्धककी अंत वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद च्यार्यो कषायनिके समान है। तिनकी सहष्टि ऐसी व । याका अपने अपने अपूर्व स्पर्धकनिके प्रमाणका भाग दीए आदिवर्गणा हो है।
ख
याहीकौ जघन्य वर्गणा कहिए। बहुरि याकौ दोय तीन आदि क्रमतै एक एक बधता गुणकार करि गुणै जहां अपने अपने कांडक प्रमाणका गुणकार होइ तहां च्यार्या कषायनिकी वर्गणानिके समान अविभागप्रतिच्छेद हो है। बहुरि ताकै ऊपरि तमैं ही एक एक बधता गुणकाररूप क्रमतै तिन समान वर्गणानिके अविभागप्रतिच्छेदनितै दूणा प्रमाण भए समान वर्गणा हो है। ऐसैं ही तिनतै तिगुणा चौगुणा आदि एक धाटि अनन्तगुणा पर्यंत प्रमाण होइ। ताके उपरि अंत स्पर्धकविषै पूर्वोक्त ऐसा व च्यार्यो कषायनिकी आदि वर्गणानिविषै समान अविभागप्रतिच्छेद
ख
हो है। तिनकी सहष्टि ऐसी—

क्रो व ख ० ०	मा व ख ० ०	माया व ख ० ०	लो व ख ० ०
१ ⊇ ज ख । ख ० ०	१— १ ⊇ ज । ख ख ० ०	२— १ ⊇ ज । ख ख ० ०	३— १ ⊇ ज ख ख ० ०
ज । ख । २ ० ०	१— ज । ख २ ० ०	२— ज । ख २ ० ०	३— ज । ख २ ० ०
ज । ० ख ० व ख । ९ । ओ ३	१— ज । ख ० व ० १— ख । ९ । ख ओ ३ ख	२— ज । ख ० व ० ख ९ ख ओ ३ ख	३— ज । ख ० व ० ३ — ख ९ ख ओ ३ ख

तहां मध्य भेदनिकी सहष्टि विंदी जाननी।

बहुरि प्रथम वर्गणाकौ अनुभागसबंधी ड्योढ गुणहानिकरि गुणे मोहका सत्त्व द्रव्य
।
ऐसा व । १२ । याकौ आवलीका असंख्यातवा भागकी सहनानी नवका अंक ताका भाग देइ एक भाग जुदा राखि बहुभागनिके दोय भाग करने। तहां एक भागविषैं जुदा राख्या भाग
।
मिलाए साधिक आधा द्रव्य कषायनिका ऐसा व १२ । किंचिदून आधा द्रव्य नोकषायनिका ऐसा—
२

व । १२ — हो है । बहुरि कषायनिके द्रव्यविषै साधिक चौथा भागमात्र लोभका द्रव्य है ।
२
किंचिदून चौथा भागमात्र मायाका तातै किंचिदून क्रोधका तातै किंचिदून मानका द्रव्य है । इहा इस च्यारिका भागहारकौ पूर्व दोयका भागहार करि गुणे आठका भागहार हो है । बहुरि क्रोधका द्रव्यविषै नोकषायनिका द्रव्य समच्छेदकरि मिलाए क्रोधका द्रव्य पाचगुणा हो है । तिनकी सदृष्टि ऐसी—लो माया मा क्रो बहुरि इहा लोभके द्रव्यकौ अपकर्षण

लो	माया	मा	क्रो
।			
व १२ व	१२ – व	१२ =	व १२ ☰ ५
८	८	८	८
			।

भागहारका भाग दीए अपकृष्ट द्रव्य ऐसा व १२ । तहा लोभकी पूर्व स्पर्धककी वर्गणाकौ अपकर्षण
ओ
भागहारका भाग दीए ऐसा व । ऐसै ही दोय घाटि अपकर्षण भागमात्र पूर्व स्पर्धककी वर्गणानिका
ओ
अपकर्षण कीया द्रव्य ऐसा व ओ – २ । यामै आदि वर्गणाका अपकृष्ट द्रव्य मिलावनेकौ दोय
ओ
घाटिकी जायगा एक घाटि कीए ऐसा व । ओ – १ । इतना द्रव्य ग्रहि अपूर्व स्पर्धककी आदि
ओ
वर्गणा निपजाइए है । सो यहु पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाके समान है । जातें तहा भी तिस वर्गणाकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ एक भाग ग्रहै बहुभागमात्र द्रव्य अवशेष रहै है । सो इतना ही यहु है । बहुरि अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण ऐसा ९ अर एक स्पर्धकविषै वर्गणानिका
ओ । ꣵ
प्रमाण ऐसा [४] इनकौ परस्पर गुणैं सर्व अपूर्व स्वर्धकनिकी वर्गणाका प्रमाण ऐसा ९ । ४ भया ।
ओ । ꣵ
इहा स्पर्धक शलाकाकी सहनानी नवका अक अर वर्गणा शलाकाकी च्यारिका अक तिनको परस्पर गुणैं गुणहानि होइ, ताकी सहनानी आठका अक कीए ऐसी ८ सदृष्टि हो है । याकरि
ओ ꣵ
तिस आदि वर्गणाकौ गुणै समपट्टिका धन ऐसा व ओ – १ । ८ हो है । बहुरि पूर्व स्पर्धककी
ओ । ओ । ꣵ
आदि वर्गणाकौ दो गुणहानिका भाग दीए ताका चय होइ । तातैं दूना अपूर्व स्पर्धकनिकी वर्गणानिविषै चयका प्रमाण है । तातैं तिस आदि वर्गणाकौ एक गुणहानिकी सहनानी आठका अक ताका भाग दीए इहा चय ऐसा व । ओ – १ । याकौ आदि उत्तर स्थापि अपूर्व स्पर्धक वर्गणा
ओ । ८
प्रमाणकौ गच्छ स्थापि जोडै जो चय धन भया ताकौ मिलावनेके अर्थि तिस समपट्टिका धनकी संदृष्टि उपरि साधिककी सदृष्टि कीए ऐसा– व । ओ – १ । ८ । बहुरि याके गुणकार भागहारकौ
ओ । ओ । ꣵ

डयोढकरि गुणै ऐसा व । १२ । ओ – १ द्रव्यतौ अपूर्व स्पर्धकनिविषै दना बहुरि लोभका
ओ । ओ । ꣸ । ३
२

अपकर्षण कीया द्रव्य ऐसा व । १२ इहां मोहका सर्व द्रव्यकी अपेक्षा आठका भागहार था अर
८ । ओ

लोभहीकी वर्गणाको डयोढ गुणहानिकरि गुणै लोभका द्रव्य होइ । ताकौं अपकर्षण भागहारका भाग दीए ऐसो व १२ सदृष्टि हो है । याविषै पूर्वोक्त द्रव्य ऐसा व । १२ । ओ – १ घटावनेको
ओ ओ । ओ । ꣸ । ३
२

ऐसा ओ । ꣸ । ३ करि समच्छेद कीए यहु ऐसा व । १२ । ओ । ꣸ ३ भया । बहुरि याकैं अर
२ ओ । ओ । ꣸ ३ २
२

अर तिस घटावने योग्य द्रव्यकैं अन्य समान जानि ऐसा ओ ओ । ꣸ । ३ गुणकारविषै ऐसा ओ – १ सदृष्टि कीए घटाए पीछे अवशेष द्रव्यकी सदृष्टि ऐसी व । १२ । ओ । ꣸ । ३ ओ – १
ओ । ओ । ꣸ । ३ । २
२

संदृष्टि हो है । बहुरि अपूर्व स्पर्धक वर्गणा सबधी एक शलाका अर याका भाग पूर्व स्पर्धक वर्गणा शलाककौ देना । तहा गुणहानिकी सदृष्टि आठका अक ताकी डयोढकरि गुणै पूर्व स्पर्धक वर्गणा शलाका ऐसी ८ । ३ याकौ अपूर्व स्पर्धक वर्गणा शलाका ऐसी ८ का भग दीए ऐसा– ८ । ३
२ ओ ꣸ ।
८ । ३
ओ । ꣸

इहा गुणहानिका अपवर्तन कीए अर भागहारका भागहार ऐसा ओ ताकी राशिका गुणा कीए
꣸

१–
ऐसी ओ । ꣸ । ३ अपूर्व स्पर्धक सबधी शलाका भई । यामैं अपूर्व स्पर्धक शलाका एक अधिक
२ १–

कीए उभय शलाका ऐसी ओ । ꣸ । ३ याका भाग तिस अपशेग द्रव्य कौ देइ
ओ । ꣸ २
३
२

अपनी अपनी शलाका करि गुणैं पूर्व स्पर्धक सबधी द्रव्य ऐसा—
व । १२ । ओ । ꣸ । ३–ओ–१ ओ ꣸ ३ याविषैं ऐसा ओ । ꣸ । ३ का अपवर्तन कीए ऐसा
२ १– २ २

ओ । ओ । ꣸ । ३ । ओ । ꣸ । ३
२ २

व । १२ । ओ । due । ३ – ओ – १ हो है । बहुरि अपूर्व स्पर्धक सबधी द्रव्य ऐसा—
१– २
ओ । ओ । due । ३
२
व । १२ । ओ । due । ३ – ओ – १ याकौ पूर्वोक्त अपूर्व स्पर्धकविषै देने योग्य द्रव्यविषैं मिलावना
२ १–
ओ । ओ । due । ३ । ओ । due । ३
२ २

सो पूर्व द्रव्य ऐसा व । १२ । ओ—१ सो याविषै गुणकाररूप अपकर्षण भागहारके आगै एक घाटि
ओ । ओ । due । ३
२
था सो दूरिकरि भागहाररूप जो अपकर्षण भागहार था ताका गुणकार ऐसा due । ३ विषैं एक
२
अधिक कीए ऐसा व । १२ । ओ । याविषै मिलावने योग्य द्रव्यका साधिकपना जानना । बहुरि
१—
ओ । ओ । due । ३
२
याकौ अपूर्व स्पर्धक वर्गणा प्रमाण ऐसा ८ ताका भाग देना तहा गुणकारविषै ड्योढ गुणहानि
ओ due १५
ऐसा १२ था ताका गुणहानि ऐसा ८ का भागहारकरि अपवर्तन कीए गुणकारविषैं ड्योढ रह्या अर भागहारका भागहार ऐसा—ओ । due था ताकौ राशिका गुणकार करना । ऐसै कीए मध्य धन ऐसा व । ओ । ओ । due । ३ भया । याकौ एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणकरि हीन दोगुण-
१— २
ओ । ओ । due । ३
२
हानिका भाग दीए चय होइ सो ऐसा— व । ओ । ओ due । ३ याकौ दोगुणहानि ऐसा १६ करि
१— २ १
ओ । ओ । due । ३ । १६–८ओ । due । ३
२ २ १=
गुणैं । प्रथम वर्गणाविषै दीया द्रव्य होइ अर इस गुणकारविषैं क्रमतै एक एक घाटि गच्छ ऐसा ८
ओ due
अत वर्गणाविषै दीया द्रव्य हो है । ऐसै तौ अपूर्व स्पर्धक सबधी दीया द्रव्यकी सदृष्टि हो है ।

बहुरि पूर्व स्पर्धक सबधी दीया द्रव्य ऐसा व । १२ । ओ । due । ३ – ओ – १ याकौ
१— २
ओ । ओ । due । ३
२

ड्योढ गुणहानि असा १२ का भाग देइ याहीका अपवर्तन कीए आदि वर्गणाविषै दीया द्रव्य हो है। बहुरि याकौ दोगुणहानिका भाग दीए विशेष होइ ताकी लघु सदृष्टि असी (वि) ताकौ दोगुणहानिकरि गुणि तामैं एक एक घाटि प्रथम गुणहानि पर्यंत अर गुणहानि गुणहानि प्रति आधा आधा क्रम कीए अंत वर्गणाविषै दीया द्रव्यका प्रमाण विशेषकौ एक घाटि गुणहानिकरि हीन दोय गुणहानि करि गुणै अर एक घाटि नाना गुणहानि प्रमाण दूवानिका भाग दीए हो है। इनकी सदृष्टि असी—

पूर्वस्पर्धक १२ अपूर्वस्पर्धक

इहा नीचै अपूर्व स्पर्धक ऊपरि अपूर्व स्पर्धककी रचनाकरि ताके आगे तिनकी वर्गणाविषै दीया द्रव्यके प्रमाणकी सदृष्टि जाननी। असैं तौ दीया द्रव्यकी सदृष्टि है। अर पूर्वस्पर्धककी वर्गणानिकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ तहा बहुभागमात्र पुरातन द्रव्य है सो असा— व। ओ — १ इस
ओ

पुरातन द्रव्य अर दीया द्रव्यकौ मिलाए पूर्व अपूर्व स्पधकनिका चय घटता क्रम लीए एक गोपुच्छ हो है असा जानना। बहुरि इहा क्षेत्र रचना करि इस अर्थकौ दिखाया है सो टीका विषै लिखा ही है। तहा सदृष्टि सुगम है। बहुरि पूर्व स्पर्धक ड्योढ गुणहानिमात्र असे (१२) तिनकी नीचैं प्रथम समयविषैं कीए अपूर्व स्पर्धक गुणहानिके असख्यातवे भागमात्र असे ८ तिनके नीचै तिनके असख्यातवे
a

भाग मात्र द्वितीय समयविषैं कीए अपूर्व स्पर्धक असे ८ इनिकी रचना ऐसी—
aa

१२		१२		१२		१२	
८ a		८ a		८ a		८ a	
८ aa		८ aa		८ aa		८ aa	

इहा स्पर्धकनिकी रचनाकरि वीचिमैं पूर्व स्पर्धकादिकका विभाग करनेके अर्थि लीक करी है। अैसैं ही तृतीयादि समयनिविषैं नीचैं नीचैं असख्यात गुणा घटता क्रम लीए अपूर्व स्पर्धकनिकी रचना करनी। बहुरि प्रथम अनुभाग काडक घात भए अनुभागका अल्प बहुत्वविषैं क्रोध मान माया लोभके अपूर्व स्पर्धकनिका प्रमाणकी प्रथम समयविषैं कीए अपूर्व स्पर्धकनिकी सदृष्टिके ऊपरि अन्य समयनिविषैं कीए मिलावनेके अर्थि अधिककी सदृष्टि कीएं सदृष्टि हो है। अर एक गुणहानिविषैं स्पर्धक शलाकाकी अर एक स्पर्धक विषैं वर्गणा शलाकाकी तौ पूर्वोक्त सदृष्टि जाननी अर क्रोधादिकके अपूर्व स्पर्धकनिके आगैं वर्गणा शलाकाकी सदृष्टि कीए तिनकी वर्गणाकी सदृष्टि हो है। अर नानागुणहानि गुणित स्पर्धक शलाकाकौ क्रमतैं च्यारि तीन दोय एकवार अनतका भाग दीए लोभ माया मान क्रोधके पूर्व स्पर्धकनिका प्रमाण हो है। तिनकौ वर्गणा शलाकाकरि गुणैं अपना अपना वर्गणानिका प्रमाण हो है। ऐसैं कहे तिनकी सदृष्टि ऐसी है—

क्रो अ पू	मा अ पू	या अ	लो अ	गु स्प	स्प व	क्रौ व	मा व	या व
| ९ ओ a	| १_ ९ ख ओ a ख	| २_ ९ ख ओ a ख	३_ ९ ख ओ a ख	९	४	९ ४ ओ a	१_ ९ ख ४ ओ a ख	| २_ ९ ख ४ ओ a ख
लो व	**लो पू**	**लो पू व**	**या पू**	**या पू व**	**मा पू**	**मा पू व**	**क्रो पू**	**क्रो पू व**
३_ ९ ख ४ ओ a ख	९ ना खख खख	९ ना ४ खख खख	९ ना ख ख ख	९ ना ४ ख ख ख	९ ना ख ख	९ ना ४ ख ख	९ ना ख	९ ना ४ ख

बहुरि इहा क्रोधादिकनिके पूर्वस्पर्धकनिका प्रमाणकौ अनतका भाग दीए बहुभाग मात्र तौ द्वितीय काडक करि घात कीजिए है। एक भागमात्र अवशेष रहै है। तिनकी सदृष्टि ऐसी—

नाम	क्रो	मा	या	लो
घात कीए स्पर्धक	१ ० ९। ना। ख ख ख	१ ० ९। ना। ख ख। ख। ख	१ ० ९। ना। ख ख। ख। ख। ख	१ ० ९। ना। ख ख। ख। ख। ख ख
अवशेष स्पर्धक	९। ना ख ख	९। ना ख। ख। ख	९। ना ख। ख। ख। ख	९। ना ख। ख। ख। ख ख,

ऐसैं ही तृतीयादि काडकविषै क्रम जानना। बहुरि तहा अनुभागकी यथासभव सदृष्टि जाननी ऐसें अपूर्व स्पर्धक क्रिया विधानविषै सदृष्टि कही। अब बादर कृष्टिकरण विधानविषै सदृष्टि कहिए है–

तहा अतर्मुहूर्तमात्र कालकौ सख्यातका भाग देइ बहुभागनिके तीन समान भागकरि अवशेष एक भागका सख्यात बहुभाग प्रथम समान भागविषै मिलाए अश्वकरण काल है। अवशेष एक भागका सख्यात बहुभाग द्वितीय समान भागविषै मिलाए कृष्टिकरण काल है। अवशेष एक भाग तृतीय समान भागविषैं मिलाए कृष्टिवेदक काल है। तिनकी सदृष्टि रचना ऐसी—

नाम	अश्वकरण	कृष्टिकरण	कृष्टिवेदक
समभाग	१ ८ २ । ९ । ९ ९ । ३	१ ८ २ । ९ । ९ ९ । ३	१ ८ २ । ९ । ९ ९ । ३
देयभाग	१ ८ २ । ९ । ९ ९ । ९	१ ८ २ । ९ । ९ ९ । ९ । ९	२ । ९ ९ । ९ । ९

बहुरि च्यारथो कषायनिकी बारह सदृष्टि हो है। तिनका अनुभाग जाननेको अकसदृष्टि अपेक्षा पूर्वें टीकामे कथन किया है। बहुरि मोहका द्रव्य ऐसा व १२ याकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए अपकृष्ट द्रव्य ऐसा व १२ बहुरि वर्गणा शलाकाके अनतवे भागमात्र प्रथम समयविषैं कीनी
ओ

कृष्टिनिका प्रमाण ऐसा ४ तहा इनकौं आठका भाग देइ एक भाग च्यारथो कषायनिका द्रव्य वा
ख

कृष्टिका प्रमाण हो है। तहा लोभविषै साधिक मायाविषै किंचिदून तातैं भी क्रोधविषैं किंचिदून तातैं मानविषैं किंचिदूनपना जानना। बहुरि च्यारिभागमात्र नोकषाय सबधी कृष्टि क्रोधविषै मिलाए तहा पाच भाग हो हैं। तिनकी सदृष्टि ऐसी—

नाम	लोभ	माया	मान	क्रोध
द्रव्य	। व । १२ ८ । ओ	। व । १२ – ८ । ओ	। व । १२ । ≡ ८ । ओ	। व । १२ =५ ८ । ओ
कृष्टि	४ ख । ८	४ – ख । ८	४ ≡ ख । ८	४ =५ ख । ८

बहुरि अपना अपना द्रव्यका वा कृष्टि प्रमाणकौं पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा बहुभागके तीन समान भाग करने। बहुरि अवशेष एक भागकौं पल्यका असख्यातवा भागका

भाग देइ बहुभाग प्रथम समान भागविषैं मिलाए प्रथम सग्रहकृष्टिविषैं द्रव्यका वा कृष्टिका प्रमाण हो है अर अवशेष एक भागकौं तैसैं ही भाग देइ बहुभाग द्वितीय समान भागविषैं मिलाए द्वितीय सग्रहविषैं तिनिका प्रमाण हो है। अवशेष एक भाग तृतीय समान भागविषैं मिलाए तृतीय सग्रहविषैं तिनका प्रमाण हो है। सो लोभका इस विधानकी ऐसी सदृष्टि हो है—

लोभका	प्रथम सग्रह	द्वितीय सग्रह	तृतीय सग्रह
समानभाग द्रव्य	। व । १२ । प– १ २४ ओ । a प a	। व । १२ । प– १ २४ । ओ a प a	। व । १२ । प– १ २४ । ओ a प a
देयभाग द्रव्य	। व । १२ । प– १ ८ । ओ । प a प a a	। व । १२ । प– १ ८ । ओ । प a प प a a a	। व । १२ ८ । ओ प । प । प a a a
समानभाग कृष्टि	४ । प– १ १— a ख २४ । प a	४ । प– १ ख । २४ । प a	४ । प– १ a ख । २४ प a
देयभाग कृष्टि	४ प– १ a ख । ८ । प । प a a	४ । प– १ ख । ८ । प । प । प a a a	४ ख । ८ । प । प । प a a a

इहा बहुभागनिविषैं आठका अर तीनका भागहारकौ गुणि चौईसका भागहार लिख्या है। ऐसैं ही अन्य कषायनिकी जाननी। बहुरि तहा किंचित् हीन अधिक न गिणि अपना अपना सर्व द्रव्यका वा सर्व कृष्टिका प्रमाणकौ तीनका भाग देइ आठका भाग आगे था ताकरि गुणैं चौईसका भाग हो है। तहा ग्यारह सग्रहविषैं तौ एक एक भागमात्र प्रमाण हो है। अर क्रोधकी तृतीय सग्रहविषैं नोकषाय सबधी द्रव्यका सक्रमण भया है तातैं ताविषै तेरह भागमात्र तिनिका प्रमाण हो है तिनकी सदृष्टि ऐसी—

नाम	लोभ			माया			मान			क्रोध		
सग्रह	प्र	द्वि	तृ	प्र	द्वि	तृ	प्र	द्वि	तृ	प्र	द्वि	तृ
द्रव्य	। व१२ २४ओ	। व१२ २४ओ	। व१२ २४ओ	। व१२– २४ओ	। व१२ २४ओ	। व१२– २४ओ	व१२ ≡ २४ओ	व१२ ≡ २४ओ	व१२ ≡ २४ओ	व१२ = २४ओ	व१२ = २४ओ	व१२=१३ १२ओ
कृष्टि	। ४ ख२४	। ४ ख२४	। ४ ख२४	। ४– ख२४	। ४– ख२४	। ४– ख२४	४ ≡ ख२४	४ ≡ ख२४	४ ≡ ख२४	४ = ख२४	४ = ख२४	४ = १३ ख २४

बहुरि प्रथम समयविषैं अपकर्षण कीया द्रव्य ऐसा व । १२ / ओ ताको कृष्टि प्रमाणमात्र गच्छका अर एक घाटि गच्छका आधा प्रमाणकरि न्यून दोगुणहानिका भाग दीए विशेष हो है । सो ऐसा—

व । १२
१.०
ओ।४।१६-४
खाख २

याको दो गुणहानिकरि गुर्णे प्रथम कृष्टिविषै दीया द्रव्य होइ । बहुरि विशेष का जो दो गुणहानिका गुणकार ताविषैं क्रमतै एक एक घटाइ एक घाटि गच्छमात्र घटै अंत कृष्टिविषै दीया द्रव्य हो है । तिनकी संदृष्टि ऐसी—

प्रथम कृष्टि	मध्य कृष्टि	अंत कृष्टि
व । १२ । १६ १.० ओ । ४ । १६-४ ख ख २	वि १६ – १००००००००००००	१ व । १२ । १६ – ४ ख १.० ओ । ४ । १६ – ४ ख ख२

बहुरि स्पर्धक सबंधी द्रव्यको ड्योढ गुणहानिका भाग दीए प्रथम वर्गणाविषै एक एक विशेष घटता द्वितीयादि वर्गणाविषै बहुरि आधा आधा गुणहानिविषै द्रव्य दीजिए है । ताकी सदृष्टि सुगम है । बहुरि कृष्टिकारकका द्वितीय समयविषै प्रथम समयविषैं कीनी कृष्टिनिका प्रमाणको असख्यातगुणा अपकर्षण भागहारका भाग दीए नवीन करी कृष्टिनिका प्रमाण हो है । अर प्रथम समयविषैं जो द्रव्यविषैं अपकर्षण भागहारका भाग था तहां अपकर्षण भागहारके असख्यातवैं भागमात्र भागहारका भाग दीए अपकर्षण कीया द्रव्य हो । तिनको सदृष्टि ऐसी—

नाम	लोभ			माया		
संग्रह	प्र	द्वि	तृ	प्र	द्वि	तृ
कृष्टि	। ४ ख २४ ओ 𝟹	। ४ ख २४ ओ 𝟹	। ४ ख २४ ओ 𝟹	। ४– ख २४ ओ 𝟹	। ४– ख २४ ओ 𝟹	। ४– ख २४ ओ 𝟹
द्रव्य	। व १२ ओ २४ 𝟹	। व १२ ओ २४ 𝟹	। व १२ ओ २४ 𝟹	। व १२– ओ २४ 𝟹	। व १२ ओ २४ 𝟹	। व १२– ओ 𝟹

नाम	माया			क्रोध		
संग्रह	प्र	द्वि	तृ	प्र	द्वि	तृ
कृष्टि	४≡ । ख २४ ओ 𝟹	४≡ । ख २४ ओ 𝟹	४≡ । ख २४ ओ 𝟹	४= । ख २४ ओ 𝟹	४= । ख २४ ओ 𝟹	४=१३ । ख २४ ओ 𝟹
द्रव्य	व १२≡ ओ २४ 𝟹	व १२≡ ओ २४ 𝟹	व १२≡ ओ २४ 𝟹	व १२= ओ २४ 𝟹	व १२= ओ २४ 𝟹	व १२=१३ ओ २४ 𝟹

बहुरि द्वितीय समयविषैं अपकर्षण कीया द्रव्यविषैं अधस्तन शीर्ष अधस्तन कृष्टि उभय द्रव्य विशेष मध्यम खंडरूप च्यारि विभाग हो हैं। तहा प्रथम समय संबंधी पूर्वोक्त विशेष ऐसा है व १२ याकी आदि अक्षररूप ऐसी (वि) लघु संदृष्टिकरि याको आदि उत्तर

१ ╭╮
ओ। ४। १६ – ४
ख ख २

स्थापना अर एक घाटि लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिनिका प्रमाण ऐसा ४ १╭╮ ख। २४ ताकौ गच्छ स्थापना। तहा एक घाटि गच्छका आधाकौं उत्तरकरि गुणि तामैं आदि मिलाय ताकौ गच्छकरि गुणैं लोभका प्रथम संग्रहविषैं अधस्तन शीर्ष द्रव्य हो है। बहुरि लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिमात्र विशेष आदि स्थापि एक विशेष उत्तर स्थापि अपनी कृष्टिनिका प्रमाण गच्छ स्थापि पूर्वोक्त

विधान कीए लोभका द्वितीय सग्रहविपै अधस्तन शीर्ष द्रव्य हो है। ऐसैं ही क्रोधका तृतीय सग्रह पर्यन्त विधान जानना। विशेष इतना—जो आयतै नीचैं जे कृष्टि पाइए तिनका प्रमाण विशेष आदि स्थापने। अन्य विधान पूर्ववत् जानना। तिनकी सदृष्टि ऐसी—

नाम	लोभ	माया	मान	क्रोध
तृतीय सग्रह	१ ० ४ वि ४५ ख २४ ख २४ २	१ ० ४ वि ४ ११ ख २४ ख २४ २	१ ० ४ वि ४ १७ ख २४ ख २४ २	१ ० ४ वि ४ ४ ५५ ख २४ ख २४ २
द्वितीय सग्रह	१ ० ४ वि ४३ ख २४ ख २४ २	१ ० ४ वि ४९ ख २४ ख २४ २	१ ० ४ वि ४ १५ ख २४ ख २४ २	१ ० ४ वि ४ २१ ख २४ ख २४ २
प्रथम सग्रह	१ ० ४ वि ४१ ख २४ ख २४ २	१ ० ४ वि ४७ ख २४ ख २४ २	१ ० ४ वि ४ १३ ख २४ ख २४ २	१ ० ४ वि ४ १९ ख २४ ख २४ २

इहा लोभका प्रथम सग्रहविषैं एक घाटि गच्छ ऐसा (१ ० / ४ / ख । २४) ताकौ आधा कीए ऐसा— (१ ० / ४ / ख । २४ । २) ताकौ उत्तर जो विशेष ताकरि गुणैं ऐसा (१ ० / ४ वि / ख । २४ । २)। यामैं एक विशेषमात्र आदि मिलावनेके अर्थि विशेषका गुण्यविषैं दोयकरि भाजित दोय घाटि थे तिनकौं दूरि कीए ऐसा— (४ । २ । वि / ख । २४ । २)। बहुरि याकौं गच्छ ऐसा (१ ० / ४ / ख । २४) करि गुणना सो इस गुणकारकौ गुण्य कीए सकलन धन ऐसा हो है (१ ० / ४ वि । ४ / ख । २४ । ख । २४ । २)। बहुरि लोभका द्वितीय सग्रहविषैं एक घाटि गच्छका आधाकौ उत्तर जो विशेष ताकरि गुणैं ऐसा (१ ० / ४ । वि / ख । २४ । २)। यामैं प्रथम सग्रहका गच्छमात्र विशेष ऐसा— (१ ० / ४ वि / ख । २४)। मिलावना सो याकौ दोयकरि समच्छेद कीये यहु ऐसा—(१ ० / ४ वि २ / ख । २४ । २) भया। याकौ अर वाकौ अन्य सर्व समान जानि दोयका गुणकारविषैं एक गुणकाररूप वाकौ स्थापि मिलाए ऐसा— (१ ० / ४ । वि । ३ / ख । २४ । २)। याकौ गच्छ ऐसा—(१ ० / ४ / ख । २४) करि गुणैं गुणकार गुण्यनिकौ आगैं पीछैं लिखे द्वितीय सग्रह-

१०
विषैं सकलन धन ऐसा ४। वि। ४। ३। बहुरि लोभका तृतीय सग्रह विषै एक घाटि गच्छका
ख। २४। २। ख। २४। २

१०
आधा उत्तर करि गुणित ऐसा ४। वि। याविषै प्रथम द्वितीय सग्रहका गच्छमात्र विशेषरूप आदि
ख। २४। २

१० १०
मिलावना सो ऐसा ४। २ याकौ दोय करि समच्छेद कीए ऐसा ४। ४। याका च्यारिका
ख। २४। २ ख। २४। २

गुणकारविषै वाका एक गुणकार मिलाए तृतीय सग्रहविषैं सकलन धन ऐसा—
१०
४। वि। ४। ५ याही प्रकार मायाकी प्रथमादि सग्रहनिविषै विधान कीए भाज्य राशिका
ख। २४। ख। २४। २
गुणकारविषैं दोय दोय अधिकका अनुक्रम हो है। बहुरि क्रोधकी तृतीय सग्रहविषै गच्छ ऐसा—
४। १३। यामै एक घटाइ ताका आधाकौ विशेष करि गुणैं ऐसा—
ख। २४
१०
४। १३। वि। याविषै पूर्वैं ग्यारह सग्रह तातैं एक सग्रहका गच्छकौं ग्यारहकरि गुणै अर ताकौ
ख। २४। २

१०
विशेषकरि गुणि तिनिका गच्छमात्र विशेष ऐसा ४। ११। वि। याकौं दोयकरि समच्छेद
ख। २४

१०
कीए ऐसा ४। २२। वि। इनिके मिलावनेकौ अन्य समान जानि तेरह अर वाईसका गुण-
ख। २४। २

१० ।
कारकौ मिलाए ऐसा ४। ३५। वि। बहुरि याकौ गच्छ ऐसा ४। १३ करि गुणैं ऐसा—
१० ख। २४। २ ख। २४
४। ३५। वि। ४। १३ इहा पैंतीस अर तेरहका गुणकारकौ परस्पर गुणैं क्रोधकी तृतीय संग्रह-
ख। २४। २। ख। २४

१०
विषैं च्यारिसै पचावनका गुणकार हो है। सो ऐसा ४। वि। ४। ४५५ इहा गुण्य गुणकारादिविषैं
ख। २४। ख। २४। २
एक हीन वा अधिकको न गिणि सदृष्टि स्थापी है। ऐसा जानना। बहुरि इस सबकौ मिलाए
१०
एक घाटि सर्व कृष्टिमात्र गच्छ ऐसा ४ ताका आधाकौं विशेषकरि गुणै तामैं एक विशेष मिलाय
ख

गच्छकरि गुणें सर्व अधस्तन शीर्ष द्रव्य ऐसा वि । ४ । ४ इहा गुण्य गुणकार पीछै आगै लिखे हैं। ख । ख । २

बहुरि लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिका पूर्वोक्त प्रकार द्रव्य ऐसा व । १२ । १६ इहा भागहारविषै

ओ । ४ । १६—४

ख । २४ । ख । २४ । २

दोगुणहानिका ऋणकौ न गिणि अपवर्तन कीए ऐसा व याकौ अपनी अपनी द्वितीय समयविषै

ओ ४

ख २४

कीनी नवीन कृष्टिनिका प्रमाणकरि गुणें अपना अपना अधस्तन कृष्टि द्रव्य हो है। ताकी सदृष्टि ऐसी—

नाम	लोभ	माया	मान	क्रोध
तृतीय संग्रह	व १२ ४ ओ ४ ख २४ ओ ∂ ख २४	व १२ ४ ओ ४ ख २४ ओ ∂ ख २४	व १२ ४ ओ ४ ख २४ ओ ∂ ख २४	व १२ ४ १३ ओ ४ ख २४ ओ ∂ ख २४
द्वितीय संग्रह	व १२ ४ ओ ४ ख २४ ओ ∂ ख २४	व १२ ४ ओ ४ ख २४ ओ ∂ ख २४	व १२ ४ । ओ ४ ख २४ ओ ∂ ख २४	व १२ ४ ओ ४ ख २४ ओ ∂ ख २४
प्रथम संग्रह	व १२ ४ ओ ४ ख २४ ओ ∂ ख २४	व १२ ४ ओ ४ ख २४ ओ ∂ ख २४	व १२ ४ ओ ४ ख २४ ओ ∂ ख २४	व १२ ४ ओ ४ ख २४ ओ ∂ ख २४

बहुरि तिसही लोभकी प्रथम कृष्टिकौ सर्व नवीन कृष्टिका प्रमाणकरि गुणें सर्व अधस्तन कृष्टि द्रव्य ऐसा व । १२ । ४ बहुरि प्रथम समयविषैं अपकर्षण कीया द्रव्य ऐसा व १२
ओ । ४ । ख । ओ । ∂ ओ
ख । २४

यातै असख्यात गुणा द्वितीय समयविषैं द्रव्य अपकर्षण कीया सो ऐसा व । १२ । ∂ याका
ओ १—

असख्यातका गुणकार ऊपरि एक अधिककी सदृष्टि कीए उभय द्रव्य ऐसा व । १२ । ∂ ।
ओ

याकौं प्रथम समयविषैं कीनी कृष्टि ऐसी ४ याके ऊपरि द्वितीय समयविषैं कीनी कृष्टिनिका
ख ।

प्रमाण मिलावनेकौं अधिककी ऐसी (।) सदृष्टि कीए उभयमात्र द्रव्य ऐसा ४ ताका भर
ख

एक घाटि गच्छका आधाकरि न्यून दोगुणहानिका भाग दीए उभय द्रव्यका विशेष ऐसा

व । १२ । ३ । याकी लघु सदृष्टि ऐसी (वि) याकी आदि उत्तर स्थापना अर क्रोधकी तृतीय
। १०
ओ । ४ । १६-४
ख । ख २
सग्रहकी उभयद्रव्य कृष्टिमात्र गच्छ स्थापना तहा पूर्वोक्त प्रकार एक घाटि गच्छका आधाकौ विशेषकरि गुणि तामै आदि मिलाय गच्छकरि गुणैं क्रोधकी तृतीय कृष्टिविषैं उभय द्रव्यविशेष द्रव्य हो है । बहुरि क्रोधकी तृतीय सग्रह कृष्टिमात्र विशेष आदि अर एक विशेप उत्तर अर एक घाटि अपनी उभय कृष्टिमात्र गच्छ स्थाषैं सकलन घनमात्र क्रोधकी द्वितीय कृष्टिविपैं उभय द्रव्य विशेष द्रव्य हो है । ऐसै ही लोभका प्रथम सग्रह पर्यंन्त क्रम जानना । विशेप इतना—

अपनी-अपनी एक अधिक पहिली कृष्टिका प्रमाणमात्र विशेष आदि स्थापन करना तिनकी सदृष्टि ऐसी—

नाम	लोभ	माया	मान	क्रोध
तृतीय सग्रह	। वि ४ ४ ४३ ख २४ ख २४ २	। वि ४ ४ ३७ ख २४ ख २४ २	। वि ४ ४ ३१ ख २४ ख २४ २	। वि ४ ४ १६९ ख २४ ख २४ २
द्वितीय सग्रह	। वि ४ ४ ४५ ख २४ ख २४ २	। वि ४ ४ ३९ ख २४ ख २४ २	। वि ४ ४ ३३ ख २४ ख २४ २	। वि ४ ४ २७ ख २४ ख २४ २
प्रथम सग्रह	। वि ४ ४ ४७ ख २४ ख २४ २	। वि ४ ४ ४१ ख २४ ख २४ २	। वि ४ ४ ३५ ख २४ ख २४ २	। वि ४ ४ २९ ख २४ ख २४ २

।
इहा क्रोधकी तृतीय सग्रहविषैं गच्छ ऐसा–४ । १३ । यामै एक घटाय ताका आधाकौ
ख । २४
१—०
।
उत्तर जो विशेष ताकरि गुणैं ऐसा ४ । १३ वि । यामै आदि एक विशेष मिलावनेकौ दोय करि
ख । २४ । २
।
भाजित एक हीनकी जायगा एक अधिक चाहिए सो न गिणैं ऐसा ४ । १३ । वि । याकौ गच्छकरि
ख । २४ । २
।
गुणैं ऐसा ४ । १३ । वि । ४ । १३ इहा भाज्यविषै तेरह तेरहके दोय गुणकारनिकौ परस्पर गुणैं
ख । २४ । २ । ख । २४
अर गुण्य गुणकारनिकौ आगैं पीछै लिखैं क्रोधकी तृतीय सग्रह विषैं ऐसी ४ । ४ । १६९
ख । २४ । ख । २४ । २

।
बहुरि क्रोधकी द्वितीय सग्रहविषैं गच्छ ऐसा ४ तामैं एक घटाइ ताका आधाकौ विशेषकरि
ख । २४

१ ⌂
गुणैं ऐसा ४ । वि । यामैं एक अधिक क्रोधकी तृतीय सग्रहका गच्छमात्र विशेष आदि मिलावना
ख । २४ । २

१ ⌂ १ ⌂
सो ऐसा ४ । १३ । वि । याकौ दोयकरि समच्छेद कीए ऐसा ४ । २६ । वि । बहुरि याकैं अर
ख । २४ ख । २४

वाकै एक अधिक हीनकौ न गिणि अन्य समानता जानि याका छवीसका गुणकारविषैं एक गुण-
।
कार वाका मिलाए क्रोधकी द्वितीय सग्रहविषै ऐसा वि । ४ । ४ । २७ । बहुरि क्रोधकी प्रथम
ख । २४ । ख २४ । २

१ ⌂
सग्रहविषैं एक घाटि गच्छका आधा विशेष करि गुणित ऐसा ४ । वि । याविषैं एक अधिक
ख । २४

१ ⌂
क्रोधकी प्रथम द्वितीयका मिलाया हुवा गच्छमात्र विशेष आदि सो ऐसा—४ । ४ याकौ दोयकरि
ख । २४

समच्छेदकरि पूर्वोक्त प्रकार मिलाए सकलन धन ऐसा वि । ४ । ४ । २९ । ऐसैं ही विधान कीए
ख । २४ । ख । २४ । २

मानकी प्रथम सग्रह आदि लोभकी तृतीय सग्रह पर्यंन्त भाज्यराशिका गुणकारविषैं दोय दोय अधिकका क्रम हो है। बहुरि तिस विशेष प्रमाण आदि उत्तर स्थापि सर्व उभय कृष्टिमात्र गच्छ

१ ⌂
। ।
स्थापैं सर्व उभय द्रव्य ऐसा—वि । ४ । ४ । बहुरि अपना अपना द्वितीय समयविषै अपकर्षण
ख । ख

कीया द्रव्यका भागहार असख्यात ताके आगैं पूर्वोक्त तीन द्रव्य घटावनेके अर्थि तीनबार किंचिदूनकी ऐसी—(≡) सदृष्टि कीए अर अपनी अपनी उभय कृष्टिका गुणकार ताहीका भागहार कीए अपना अपना मध्य खड द्रव्यकी सदृष्टि ऐसी हो है—

नाम	लोभ	माया	मान	क्रोध
तृतीय संग्रह	। व १२ ४ ओ ४ ख २४ ə ≡ ख २४	। व १२ ४ ओ ४ ख २४ ə ≡ ख २४	। व १२ ४ ओ४ ख २४ ə ≡ ख १४	। व १२ ४ १३ ओ ४ ख २४ ə ≡ ख २४
द्वितीय संग्रह	। व १२ ४ ओ ४ ख २४ ə ≡ ख२४	। व १२ ४ ओ ४ ख २४ ə ≡ ख २४	। व १२ ४ ओ ४ ख २४ ə ≡ख २४	। व १२ ४ ओ ४ ख २४ ə ≡ ख २४
प्रथम संग्रह	। व १२ ४ । ओ ४ ख २४ ə ≡ ख २४	। व १२ ४ ओ ४ ख २४ ə ≡ख २४	। व १२ ४ ओ ४ ख २४ ə ≡ख २४	। व १२ ४ ओ ४ ख २४ ə ≡ख २४

बहुरि अपकृष्ट द्रव्यविषै तैसें ही सदृष्टि कीए सर्व मध्यम खड द्रव्यकी ऐसी—

।
व १२ ४ हो है। बहुरि इस च्यारि प्रकार द्रव्य देनेका विधान जानि तहा यथा सभव सदृष्टि

।
ओ ४ ख
ə ≡। ख

जाननी। बहुरि यहु दीया द्रव्य पूर्व कृष्टितैं अपूर्वकृष्टिविषैं असख्यात भाग वृद्धि रूप दीजिए है। सो ऐसैं ग्यारह स्थान है। बहुरि अपूर्व कृष्टितै पूर्व कृष्टिविषैं असख्यात भाग हानि लीए द्रव्य दीजिए है सो ऐसैं बारह स्थान हैं। अवशेष स्थाननिविषैं अनतभाग हानि लीए द्रव्य दीजिए है सो इनकी तेवीस ऊँट कूटनिके समान रचना हो है। सो यथा सभव जाननी। बहुरि इहा अपूर्व कृष्टिनिकी रचना ऐसी है—

पृ० न० ५९१ (क) मे देखो

इहा नीचैं लोभकी प्रथम कृष्टि ताविषैं नीचै अपूर्व कृष्टिनिविषैं अधस्तन कृष्टि दीया ताकी सदृष्टि ऐसी (८) बहुरि तिनके ऊपरि पूर्वकृष्टि तिनविषैं समपट्टिकारूप द्रव्य विशेष सहित

था ताकी सदृष्टि ऐसी  ताविषैं अधस्तन शीर्ष विषैं द्रव्य दीया ताकी सदृष्टि

ऐसी  ऐसै भए पूर्व अपूर्व कृष्टिनिकी समपट्टिका भई ऐसैं ही लोभकी द्वितीयादि

क्रोधकी तृतीय पर्यन्त विधान जानने। बहुरि इन सबनिविषैं समानरूप मध्यम खंड द्रव्य दीया ताकी समलकीररूप सहनानी जाननी। बहुरि इन सबनिविषैं एक एक विशेष घटता उभय द्रव्य विषैं विशेष द्रव्य दीया था ताकी क्रमहीन लकीररूप सहनानी जाननी। ऐसैंही कृष्टि करण कालका तृतीयादि अंत समय पर्यन्त विधान जानना। बहुरि कृष्टि करण काल समाप्त भए कृष्टि वेदक कालका प्रथम समयविषैं जो सर्व द्रव्य कृष्टिरूप परिनमि तिनि कृष्टिनिविषैं गोपुच्छाकार भया ताकी सदृष्टि कृष्टि कारक विधानविषैं कही थी तैसैं ऐसी जाननी—

नाम	लोभ	माया	मान	क्रोध
द्रव्य	। व १२ ७।८	। व १२ ७।८	व १२=५ ७।८	व १२=५ ७।८

बहुरि सर्व द्रव्य ऐसा व १२ याकौ चौइसका भाग देइ अन्य संग्रह विषैं एक एक भाग क्रोधकी तृतीय संग्रह विषैं तेरह भागमात्र द्रव्य है। सो इहां कृष्टि कारक कालविषैं जाकौ तृतीय संग्रह कृष्टि कही थी ताकौ कृष्टि वेदक कालविषैं प्रथम कृष्टि कहनी अर जाकौ प्रथम कृष्टि कही थी ताकौ तृतीय कृष्टि कहनी तातैं क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिका द्रव्य ऐसा—व। १२। १३
२४

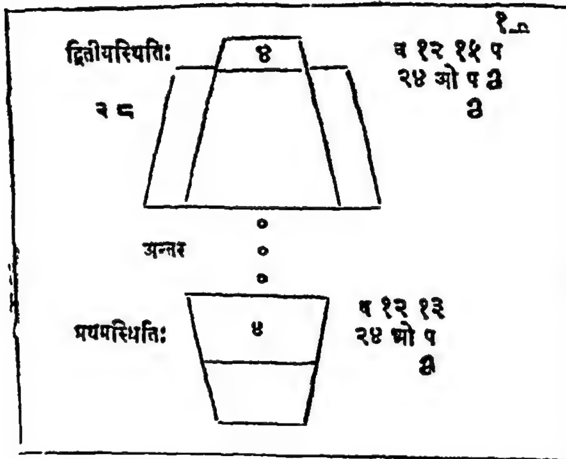
याकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए ऐसा व। १२। १३ याकौ पल्यका असंख्यातवां भागका
२४। ओ

भाग दीए एक भाग मात्र द्रव्य तौ उच्छिष्टावली अधिक वेदककाल मात्र प्रथम स्थिति विषैं असंख्यात गुणा क्रमकरि देना। बहुरि बहुभाग मात्र द्रव्य ऐसा—

१ ꣸
व १२। १३। प ताविषैं क्रोधकी द्वितीय तृतीय संग्रहका द्रव्य ऐसा व। १२। २ मिलाए तेरहकी
२४। ओ। प a   २४। ओ
a

जायगा पन्द्रहका गुणकार भए ऐसा व १२। १५। द्रव्य भया। ताकौ आठ वर्षमात्र द्वितीय
२४। ओ। प
a

स्थितिविषैं अतिस्थापनावली छोडि विशेष घटता क्रमकरि देना ताकी सदृष्टि रचना ऐसी—



इहा प्रथम स्थितिकी बधता क्रमरूप सदृष्टिकरि तिनिके वीचि उच्छिष्टावली वा अतिस्थापनावलीका विभागके अर्थि सदृष्टि करी है। आगै दीया द्रव्यका प्रमाण लिख्या है। बहुरि कृष्टिकारकका प्रथम समयविषै कीनी कृष्टिका प्रमाण ऐसा ४/ख तावियैं अन्य समयनिविषैं कीनी कृष्टिनिकौ मिलावनेके अर्थि अधिककी सदृष्टि कीए सर्व कृष्टिनिका प्रमाण ऐसा ४ I/ख ताकौ चौवीसका भाग देइ तेरहकरि गुणैं क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टि ऐसी—

४ I । १३/ख । २४ याकौं पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ बहुभाग ऐसैं ४ I । १३ । प १ ० / a ÷ ख । २४ । प / a कृष्टि

वेदकका प्रथम समयविषैं बध उदय रूप जे वीचिकी उभय कृष्टि तिनका प्रमाण है। बहुरि एक भाग ऐसा ४ । १३ / ख । २४ । प a ताकौं अक सदृष्टि अपेक्षा शलाकानिका जोड सोलहका अक ताका भाग देइ दोय शलाकाकरि गुणें तो नीचैकी बध उदय रहित अनुभय कृष्टिनिका अर तीन शलाकानिकरि गुणैं तितके ऊपरि जे नीचेकी उदय कृष्टि तिनिका च्यारि शलाकानिकरि गुणैं ऊपरिका अनुभय कृष्टिनिका सात शलाकानिकरि गुणैं तिनके नीचैं जे ऊपरिकी उदय कृष्टि तिनका प्रमाण है। तिनकी सदृष्टि ऐसी—

अनुभय	उदय	उभय	उदय	अनुभय
। ४ । १३ । २ / ख । २४। प। १६ / ३	। ४ । १३ । ३ / ख । २४ । प । १६ / ३	१ ४ । १३ । प / ३ / ख । २४ । प । १६ / ३	। ४ । १३ । ७ / ख । २४ । प । १६ / ३	। ४ । १३ । ४ / ख । २४ । प । १६ / ३

इहा युगपत् उदय आवने योग्य एक निषेकविषै ऐसा अनुभाग है। तातै आडी रचना करी है। तहा नीचैतै प्रथमादि कृष्टिनिकी क्रमतै रचना जाननी। तिनविषै अनुभय उदय उभय अनुभय कृष्टि क्रमतै पाइए है तिनका प्रमाण लिख्या है। बहुरि द्वितीय समयविषै निचली उदय कृष्टि थी सो तौ उदय रूप भई। अर निचली अनुभय कृष्टि थी ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ एक भाग ऐसा ४ । १३ । २ । ताकौ अक सदृष्टिकरि (ख । २४ । प । १६ । प / ३ ३) पाँचका भाग देइ तहाँ दोय भाग प्रमाण जघन्यादि कृष्टि तौ अनुभय रूप हो हैं। अर ताके उपरि तीन भाग प्रमाण कृष्टि उदय रूप हो हैं अर ताके उपरि बहुभागमात्र कृष्टि ऐसी

। १ ४ । १३ । प (३) / ख । २४ । प । १६ । प (३ ३) उभय रूप हो हैं। बहुरि जे उभय कृष्टि थी तिनिविषै पूर्वै जे उदय कृष्टि थी तिनकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए एकमात्र कृष्टि इहा उदयरूप अर अनुभ(द) य रूप भई ऐसी—। ४ । १३ । ७ / ख । २४ । प । १६ । प (३ ३) । ४ । १३ । ४ / ख । २४ । प । १६ । प (३ ३) इनिकौ मिलाए

ऐसा । ४ । १३ । ११ / ख । २४ प । १६ । प (३ ३) याकौ पूर्वै उभय कृष्टिनिका प्रमाण ऐसा १ ४ । १३ । प / ख । २४ । प ३ (३) तामैं घटावना सो अन्य भागहार समान जानि ऐसा १६ प (३) भागहारकरि समच्छेद कीए ऐसा—

। १ ४ । १३ । प । १६ । प (३ ३) / ख । २४ । प । १६ । प (३ ३) १। बहुरि याकैं अर तिस राशिकैं अन्य गुणकार भागहार समान जानि

आगला ऐसा प । १६ । प । गुणकार विषै ग्यारह घटावनेकी सदृष्टि कीए जे पूर्वै उभय
ā ā । १२

कृष्टि थी तिनविषै जे उभय कृष्टि होन रूप रही तिनिका प्रमाण ऐसा ४ । १३ । प १६प—११
ā ā
ख । २४ । प । १६ । प
। ā ā

हो है। बहुरि तिनके उपरि जे उदय रूप कृष्टि भईं ते ऐसी—४ । १३ । ७ बहुरि
ख । २४ । प । १६ प
। ā ā

तिनके उपरि जे अनुभय कृष्टि भईं ते ऐसी ४ । १३ । ४ बहुरि तिनके उपरि जे
ख । २४ प । १६ । प
ā ā

पूर्वै उदय कृष्टि थी ते अनुभय रूप भईं। बहुरि तिनके उपरि जे पूर्वै अनुभय कृष्टि थी ते अवु-भय रूप ही रही। तिनकी सदृष्टि पूर्ववत् जाननी। ऐसैं द्वितीय समयविषै अवस्था भई तिनकी रचना ऐसी—

पृ० (५९५ क) में देखो

इहा गुणश्रेणि रूप क्रम अधिक निषेकनिकी रचनाकरि तहा प्रथम निषेकविषैं अनुभयादि कृष्टिनिविषैं जघन्य मध्यम उत्कृष्टनिकी सदृष्टिकरि उपरि द्वितीय निषेकविषै रही – वा भई अनुभयादि कृष्टिनिकी रचना क्रमतैं करी है। ऐसैं ही यथासभव तृतीयादि समयनिविषैं रचना जाननी। बहुरि लोभकी तृतीय सग्रह आदि क्रोधकी प्रथम सग्रह पर्यंन्त बारह कृष्टिनिविषैं द्व्यर्ध गुणहानि गुणित आदि वर्गणामात्र द्रव्य ऐसा (व १२) अर साधिक
।

वर्गणा शलाकाके अनन्तवै भागमात्र कृष्टिनिका प्रमाण ऐसा ४ इनिकौ चौवीसका भाग देइ
ख

अन्यत्र एक भागमात्र अर क्रोधकी प्रथम सग्रहविषैं तेरह भागमात्र द्रव्य वा कृष्टिनिका प्रमाण हो है। बहुरि सर्व द्रव्यकौ चौइसका अर अपकर्षण भागहारका भाग दीए एक आय द्रव्य वा व्यय द्रव्य ऐसा व १२ हो है। ताकौ अपना-अपना आय द्रव्य व्यय द्रव्यका प्रमाणकरि गुणैं
२४ । ओ

आय द्रव्य वा व्यय द्रव्यका प्रमाण हो है। बहुरि जहा आय द्रव्य वा व्यय द्रव्य नाही तहा शून्यकी सदृष्टि जाननी। बहुरि अपना-अपना द्रव्यका वा कृष्टिका प्रमाणकौं अपकर्षण भागहारका असख्यातवा भाग ऐसा ओ ताका भाग दीए घात द्रव्य वा घात कृष्टिनिका प्रमाण हो है।
ā

तिनकी सदृष्टि ऐसी—

पृ० न० (५९५ क) में देखो

इहा आय द्रव्य वा व्यय द्रव्यका जोड ऐसा व । १२ । २२६ । तहा चौइसकरि दोयसै
ओ २४

छव्वीसका अपवर्तन कीए साधिक नवका गुणकार हो है ऐसा जानना। बहुरि क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिनिविषैं आय द्रव्यका अभाव है तातैं याका तौ घात द्रव्य है अर अन्य संग्रहका आय द्रव्यतैं द्रव्य ग्रहि अधस्तनशीर्षविशेष आदि द्रव्य स्थापने। तहां कृष्टिकौं प्राप्त

।

भया सर्व द्रव्य ऐसा (व । १२) ताकौ सर्व कृष्टिमात्र गच्छ ऐसा ४ ताका अर एक घाटि

ख

गच्छका आधाकरि न्यून दो गुणहानिका भाग दीए पूर्व विशेष ऐसा व १२ याकी लघु

। १ ᐤ

४ । १६—४

ख । ख २

सदृष्टि ऐसी (वि) बहुरि इहां गच्छका प्रमाण सर्व कृष्टिमात्र स्थापि जैसैं कृष्टिकारकका द्वितीय समयविषैं विधान कह्या है तैसैं अधस्तनशीर्षविशेषकी सदृष्टि हो है। विशेष इतना—

तहां ताकौ प्रथम संग्रह कृष्टि कही थी ताकौ इहां तृतीय संग्रह कहनी। तृतीय कही थी ताकौं प्रथम कहनी। बहुरि लोभकी तृतीय संग्रहकी जघन्य कृष्टि ऐसी। व । १२ इहां

।

४

ख

सर्व द्रव्यकौ सर्व कृष्टिके प्रमाणका भाग दीए मध्यम धन होइ। ताविषैं विशेषका अधिकपना कीए जघन्य कृष्टि भई है। बहुरि याकौ दोयवार असंख्यातकरि गुणित अपकर्षण भागहारका भाग दीए एक मध्यम खंड ऐसा व । १२ याकौं अपनी अपनी संग्रहके कृष्टि

।

४ । ओ । ३ ३

ख

का प्रमाणकरि गुणैं अपना अपना मध्यम खंड द्रव्य हो है। बहुरि लोभकी तृतीय संग्रहकी

।

जघन्य कृष्टिविषैं एक मध्यम खंड मिलावनेकौ साधिककी संग्रह कृष्टि कीए ऐसा व । १२

।

४

ख

बहुरि अपनी अपनी संग्रहके नीचे संक्रमण द्रव्यकरि करी जे नवीन कृष्टि तिनिका प्रमाण अपनी पूर्व कृष्टिनिकौ असंख्यात गुणा अपकर्षण भागहारका भाग दीए ऐसा ४ भागहारका गुण्य

। ख । ओ । ३

गुणकारनिकौ आगैं पीछैं लिखैं ऐसा ४ ताकरि तिस लोभकी जघन्य कृष्टि समान

ख । ३ । ख

द्रव्यकौं गुणे अपना अपना संग्रहके नीचैं संक्रमण द्रव्यकरि भई नवीन कृष्टि संबंधी समान द्रव्य हो हैं। तहां क्रोधकी प्रथम कृष्टिविषैं यहु द्रव्य नाहीं संभवै है। तहां शून्य जाननी। बहुरि पूर्व

उत्तर द्रव्यकी पुरातन नूतन कृष्टिमात्र गच्छका अर एक घाटि गच्छका आधाकरि न्यून दोगुणहानिका भाग दीए एक उभय द्रव्य विशेप होइ ताकी लघु सद्दष्टि ऐसी (वि) स्थापि जैसे कृष्टिकारकका द्वितीय समयविषैं विधान कह्या था तैसै इहा उभय द्रव्यविशेप कीए सद्दष्टि हो है। विशेष इहा मध्यम खडवत् जानना। वहुरि एक मध्यम खड सहित लोभकी तृतीय सग्रहकी

||
जघन्य कृष्टिका द्रव्य ऐसा व १२ ताकी एक शलाका होइ तौ लोभकी तृतीय सग्रहका आय द्रव्य
४
ख

विषै पूर्वोक्त च्यारि द्रव्य घटावनेकौ आगै किंचिदूनकी सदृष्टि कीए ऐसा व। १२। २— सो
२४ ओ

इतने द्रव्यकी केती शलाका होइ ? ऐसैं त्रैराशिक कीए लब्धिराशि ऐसा व। १२। २—इहा
२४। ओ। व। १२
४
ख ।

किंचित् हीन अधिक न गिणि ऐसा व। १२ का अपवर्तन कीए अर भागहारका भागहार ऐसा ४ ताकौ
ख ।

भाज्य कीए अर राशिका गुणकार ऐसा २—ताकौ भागहारका भागहार कीए ऐसा ४। ओ
ख। २४। २—

भया सो यहु लोभकी तृतीय सग्रहकी सक्रमणातर कृष्टिनिका प्रमाण हो है। पूर्वे कृष्टि थी तिनके वीचि वीचि इतनी नवीन कृष्टि सक्रमण द्रव्यकरि भई हे। ऐसे ही अवशेष दश सग्रहविषैं विधान कीए अन्य सदृष्टि तौ समान हो हैं। अर भागहारका भागहार अपना अपना एक आदि आय द्रव्यका प्रमाण किंचिदून हो है। अर क्रोधकी तृतीय सग्रहविषैं आय द्रव्यका अभाव हैं। तातै तहा यहु विधान सभवै हैं। तहा शून्य जाननी। तिनकी सदृष्टि ऐसी—

।	।	।	।	।	।	।	।	।	।	।
४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
ख२४ओ	ख२४ओ	ख२४ओ	ख२४ओ	ख२४ओ	ख२४ओ	ख२४ओ	ख२४ओ	ख२४ओ	ख२४ओ	ख२४ओ
२—	१—	३—	२—	१—	३—	२—	१—	१५—	१४—	१८२—

।
अपनी सग्रह कृष्टिनिके प्रमाणकौ भाग देइ ऐसा ४ का अपवर्तन कीए अर भाग-
ख। २४

हारका भागहारकौं राशि कीए सक्रमणातर कृष्टिनिके वीचि जे अन्तर कृष्टि हैं तिनका प्रमाण
।
हो है। तहा लोभका प्रथम सग्रहविषैं पूर्व कृष्टि ऐसी ४ याकौ नवीन करी कृष्टि
ख। २४

। । ।
ऐसी ४ ताका भाग दीए ऐसा ४ । इहा ऐसेका ४ अपवर्तन कीए अर भाग-
ख। २४। ओ ख। २४। ४ ख। २४
२ ख। २४। ओ २

हारका भागहार ऐसा ओ ताकौ राशि कीए लोभकी तृतीय सग्रहविषै नवीन कृष्टिनिके वीचि
२—
जे पूर्व कृष्टि हैं तिनका प्रमाण हो है। ऐसैं ही अन्य विषै जानना तिनकी सदृष्टि ऐसी—

ओ	ओ	ओ	ओ	ओ	ओ	ओ	ओ	ओ	ओ	ओ
२—	१—	३—	२—	१—	३—	२—	२—	१५—	१४—	१८२—

बहुरि इहा जो पूर्व कृष्टिनिके वीचि नवीन भई सक्रमणातर कृष्टि तिनिका प्रमाण कह्या ताका भाग अपने अपने किंचिदून आय द्रव्यकौ दीए एक नवीन कृष्टिका द्रव्य होइ। बहुरि याकौ तिसही सक्रमणातर कृष्टिप्रमाण करि गुणि अपवर्तन कीए अपना अपना किंचिदून आय द्रव्यमात्र सक्रमणातर कृष्टिसबधी समान खड द्रव्य हो है। आय द्रव्यकी सदृष्टि पूर्वे कही है। ताके आगै किंचिदूनकी सदृष्टि करनी। क्रोधकी प्रथम सग्रहकृष्टिविषै यहु विधान नाही तहा शून्य जाननी। ऐसै ग्यारह सग्रह कृष्टिनिका सक्रमण द्रव्यविषै क्रोधकी प्रथम सग्रहका घात द्रव्यविषै विभाग हो है तिनकी सदृष्टि ऐसी—

पृ० न० ५९८ (क) में देखो

ऐसैही सक्रमण द्रव्यका विधानकी सदृष्टि कहि अब बध द्रव्यका विधानकी सदृष्टि कहिए है—

मोहनीयका समयप्रबद्धकी सदृष्टि ऐसी (स)। ताकौ च्यारिका भाग दीए एक कषायका द्रव्य होइ। तहा मानका स्तोक, तातै क्रोध माया लोभका क्रम अधिक है। तिनकी सदृष्टि रचना ऐसी—मान क्रोध माया लोभ। बहुरि मध्यम खड सहित लोभकी तृतीय सग्रहकी जघन्य

मान	क्रोध	माया	लोभ
स	स	स	स
४	४	४	४

कृष्टिका द्रव्य ड्योढ गुणहानि गुणित समयप्रबद्धकी सर्व कृष्टिका भाग देइ साधिक कीए ऐसी
।
स १२ सो इतने द्रव्यकी एक कृष्टिरूप एक शलाका होइ तो पूर्वोक्त मानका द्रव्यकी केती होइ?
।
४
ख
ऐसैं त्रैराशिक कीए लब्धिराशि मानविषै ऐसी स इहा समयप्रबद्धका अपवर्तन कीए
४ स १२
४
ख
अर भागहारका भाग ऐसा ४ ताकौ भाज्य कीए अर भागहारविषै च्यारि अर ड्योढ गुणहानि ऐसा
ख
(१२) इनिकौं परस्परगुणैं छह गुणहानि भई। तहा गुणहानिकी सदृष्टि आठका अक करि ताके आगै छहका गुणकार कीए सदृष्टि हो है। बहुरि क्रोधादिक विषैं ऐसी ही अधिक क्रमरूप सदृष्टि हो है। ऐसैं बधातर कृष्टिनिका प्रमाणकी सदृष्टि ऐसी—

मान	क्रोध	माया	लोभ
।	।	।	।
४	४	४	४
ख ८।६	ख ८।६	ख ८।६	ख ८।६

बहुरि इनि बध कृष्टिनिके वीचि पाइए है जे अतर कृष्टि तिनका प्रमाण गुणहानिके चौथा भागमात्र है। तहाँ क्रोधविषै नोकषाय द्रव्य सबधी कृष्टि मिलनेतैं तेरहका गुणकार जानना। तिनकी सदृष्टि अैसी लो मा या क्रो एक एक कषायकी एक एक सग्रह वधरूप होइ सो इहा चार्यो

८ ८ ८ ८ १३
४ ४ ४ ४

कषायनिकी पहली सग्रह बधरूप हो है। सो इहा नवीन बधरूप भया समयप्रवद्ध च्यारो कषानिका

। ॥ ।॥
अैसा— स स स स । इनिकौ अनतका भाग देइ एक भाग तौ जुदा राखी अर बहुभागनिकरि
४ ४ ४ ४

नवीन बधातर कृष्टि निपजाइए है। तहाँ अत कृष्टितैं लगाय जेथवी अतकी नवीन कृष्टि होइ तितने विशेष तौ आदि अर अपना अपना अतरालरूप कृष्टिनिका पूर्वोक्त प्रमाणमात्र विशेष उत्तर अर अपनी अपनी बधातर कृष्टिनिका पूर्वोक्त प्रमाणमात्र गच्छस्थापि सकलनधन कीए बधातर कृष्टि विशेष द्रव्य हो है। सो अन्य कृष्टिनिविषैं तौ उभय द्रव्य विशेषद्रव्य देना जहा कह्या था तहा बध कृष्टिनिविषैं इस द्रव्यकौ देना। सो इहा क्रोध मान माया लोभकी प्रथम संग्रहके बधातर विशेष विषैं आदि उत्तर गच्छकी अर सकलन कीया धनकी ऐसी सदृष्टि हो है—

नाम	क्रोध प्र०	मान प्र०	माया प्र०	लोभ प्र०
सकलित धन	। वि।४।१३।४ ख।२४।२।ख ८।६	। वि।४।३१।४ ख।२४।२।ख ८।६	। वि।४।४३।४ ख २४।२।ख ८।६	। वि।४।४३।४ ख।२४।२।ख ८।६
गच्छ	४ ख।८।६	४ ख।८।६	४ ख।८।६	४ ख।८।६
उत्तर	१— वि।८।१३ ४	१— वि।८ ४	१— वि।८ ४	१— वि।८ ४
आदि	। वि।४।१३ ख।२४	। वि।४।१५ ख।२४	। वि।४।१८ ख।२४	वि।४।२१ ख।२४

बहुरि बहुभागनिविषैं इतना द्रव्य घटाए अवशेष द्रव्य जो रह्या ताकौं अपना अपना बधातर कृष्टि प्रमाणका भाग दीए एकका कृष्टिका द्रव्य होइ। ताकौ तिसही प्रमाणकरि गुणै बधातर कृष्टि समान खड द्रव्य होइ। याकरि लोभकी जघन्य कृष्टिके समान बध कृष्टि निपजै है। बहुरि एक भाग जुदा राख्या था तिसविषैं दोय भाग करने। तहा तिस एक भागकौ सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टि प्रमाण गच्छका अर एक घाटि गच्छका आधाकरि हीन दो गुणहानिका भाग दीए विशेष होइ सो एक विशेष आदि, एक विशेष उत्तर सर्व कृष्टि प्रमाणमात्र गच्छ स्थापि सकलन घन कीए

हारका भागहार ऐसा ओ ताकौं राशि कीए लोभकी तृतीय सग्रहविषैं नवीन कृष्टिनिके वीचि
२—

जे पूर्व कृष्टि हैं तिनका प्रमाण हो है। ऐसै ही अन्य विषैं जानना तिनकी सदृष्टि ऐसी—

ओ ओ ओ ओ ओ ओ ओ ओ ओ ओ ओ
२— १— ३— २— १— ३— २— २— १५— १४— १८२—

बहुरि इहा जो पूर्व कृष्टिनिके वीचि नवीन भई सक्रमणातर कृष्टि तिनिका प्रमाण कह्या ताका भाग अपने अपने किंचिदून आय द्रव्यकौ दीए एक नवीन कृष्टिका द्रव्य होइ। बहुरि याकौं तिसही सक्रमणातर कृष्टिप्रमाण करि गुणि अपवर्तन कीए अपना अपना किंचिदून आय द्रव्यमात्र सक्रमणातर कृष्टिसबधी समान खड द्रव्य हो है। आय द्रव्यकी सदृष्टि पूर्वै कही है। ताके आगै किचिदूनकी सदृष्टि करनी। क्रोधकी प्रथम सग्रहकृष्टिविषैं यहु विधान नाही तहा शून्य जाननी। अैसैं ग्यारह सग्रह कृष्टिनिका साक्रमण द्रव्यविषैं क्रोधकी प्रथम सग्रहका घात द्रव्यविषै विभाग हो है तिनकी सदृष्टि अैसी—

पृ० न० ५९८ (क) में देखो

ऐसैही सक्रमण द्रव्यका विधानकी सदृष्टि कहि अब बध द्रव्यका विधानकी सदृष्टि कहिए है—

मोहनीयका समयप्रबद्धकी सदृष्टि ऐसी (स)। ताकौं च्यारिका भाग दीए एक कषायका द्रव्य होइ। तहा मानका स्तोक, तातै क्रोध माया लोभका क्रम अधिक है। तिनकी सदृष्टि रचना ऐसी—मान क्रोध माया लोभ। बहुरि मध्यम खड सहित लोभकी तृतीय सग्रहकी जघन्य

स स स स
४ ४ ४ ४

कृष्टिका द्रव्य ड्योढ गुणहानि गुणित समयप्रबद्धकौ सर्व कृष्टिका भाग देइ साधिक कीए ऐसी
।

स १२ सो इतने द्रव्यकी एक कृष्टिरूप एक शलाका होइ तो पूर्वोक्त मानका द्रव्यकी केती होइ?
।
४
ख

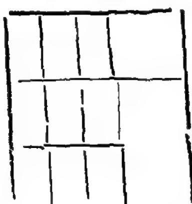
ऐसैं त्रैराशिक कीए लब्धिराशि मानविषैं ऐसी स इहा समयप्रबद्धका अपवर्तन कीए

४ स १२
४
ख

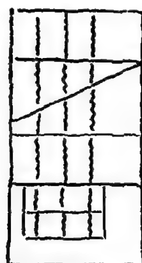
अर भागहारका भाग ऐसा ४ ताकौं भाज्य कीए अर भागहारविषैं च्यारि अर ड्योढ गुणहानि ऐसा
ख

(१२) इनिकौं परस्परगुणैं छह गुणहानि भईं। तहा गुणहानिकी सदृष्टि आठका अक करि ताके आगैं छहका गुणकार कीए सदृष्टि हो है। बहुरि क्रोधादिक विषैं ऐसी ही अधिक क्रमरूप सदृष्टि हो है। ऐसैं बधातर कृष्टिनिका प्रमाणकी सदृष्टि ऐसी—

अर क्रोधकी प्रथम सग्रहविषै वध द्रव्य ही करि नवीन कृष्टि भई तिनकी सादृष्टि ऐसी



जाननी । बहुरि इन सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिनिविषै मध्यम खड द्रव्य दीया ताकी समानरूप लीकको सादृष्टि जाननी । बहुरि इन सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिनिविषैं क्रम हीन रूप उभय द्रव्य विशेष द्रव्य दीया ताको क्रम हीन रूप लीक सदृष्टि जाननी । बहुरि बध होने योग्य पूर्व कृष्टिनिका उभय द्रव्य विशेष द्रव्यविषै वा वध द्रव्यकरि निपजो नवीन कृष्टिका वघातर विशेष द्रव्यविषैं घटता द्रव्य दीया तहा बध विशेष द्रव्य दीया अर वध द्रव्यका मध्यम खड द्रव्य दीया ताकी उभय द्रव्य विशेष द्रव्यकी सादृष्टि



ऐसी जाननी । ऐसै इहा रचना जाननी । बहुरि क्रोधकी प्रथम सग्रहका द्रव्य असा—व १२ १३ । सो द्वितीय सग्रह रूप भया । अर
२४
द्वितीय सग्रहका द्रव्य पूर्वे ऐसा व । १२ । १ था ही सो मिलि द्वितीय सग्रहका द्रव्य ऐसा व । १२
२४ २४
। १४ । भया । ऐसैं ही अन्य सग्रहविषैं लोभकी द्वितीय सग्रहपर्यंत पूर्व पूर्व सग्रहका द्रव्य अपने द्रव्यविषैं मिलनेतै अपना अपना द्रव्य हो है । सो जानना ताकी सदिृष्ट रचना ऐसी—

नाम	क्रोध			मान		
सग्रह	प्र	द्वि	तृ	प्र	द्वि	तृ
द्रव्य	व १२ १३ २४	व १२ १४ २४	व १२ १५ २४	व १२ १६ २४	व १२ १७ २४	व १२ १८ २४
नाम	माया			लोभ		
सग्रह	प्र	द्वि	तृ	प्र	द्वि	तृ
द्रव्य	व १२ १९ २४	व १२ २० २४	व १२ २१ २४	व १२ २२ २४	व १२ २३ २४	व १२ २४ २४

तहा अपने अपने द्रव्यका अपकर्षणकरि प्रथम स्थितिविषै गुणकार क्रमकरि द्वितिय स्थितिविषैं विशेष होन क्रमकरि देनेका विधान पूववंत् जानना । बहुरि आयुद्रव्य आदि यथासभव जानि तिनकी सदृष्टि पूर्ववत् जाननी । बहुरि तहा सक्रमण द्रव्य बध द्रव्यका विधान यथासभव जानि तिनकी सादृष्टि पूर्ववत् जाननी । विशेष होइ सो विशेष जानि लेना । बहुरि क्रोध मान माया लोभ वेदककै क्रमतै च्यारि तीन दोय एक कषायनिका बध है । तहा जिस कषायकी जिस सग्रहकौ वेदै

बध विशेष द्रव्य हो है। सो याकौ सर्व बध कृष्टिनिविषैं जहा उभय द्रव्य विशेषविषै घटता द्रव्य देना कह्या तहा याकौ देइ पूर्ण करना। बहुरि तिस एक भागविषैं याकौ घटाए जो अवशेष रह्या ताकौ अपनी अपनी सर्वकृष्टि प्रमाणका भाग दोए एक खड होइ ताकौ तिसहीकरि गुणें सर्व मध्यम खड द्रव्य होइ। ऐसैं बध द्रव्यविषैं च्यारि प्रकार कहे। इनिकी सदृष्टिनिका मोकौ नीकै ज्ञान न भया तातैं इहा नाही लिखी है। बहुरि इनि द्रव्यनिके देनेका विधान पूर्वे व्याख्यानविषैं कहि आए हैं। बहुरि इहा अनती जायगा पहलैं बहुत पीछैं घाटि पीछै वाधि वाधि द्रव्य दीए हैं तातै अनत उष्ट्र कूट रचना हो है। बहुरि बारह सग्रहनिविषै नीचैं नवीन भई कृष्टि अर पूर्व अर अपूर्व कृष्टिनिके वीचि वीचि सक्रमण द्रव्यकरि निपजी नवीन कृष्टि अर च्यारि सग्रहनिविषैं बध कृष्टि तिनकी रचना अैसी जाननी। —

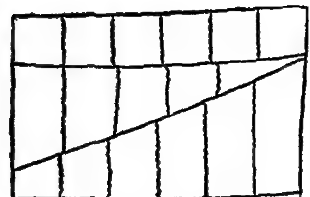
पृष्ठ न० ६०० (क) मे देखो।

इहा अनुभागकी रचना युगवत् कालविषैं सभवै है तातै आडी रचना करी है। तहा नीचैं लोभकी तृतीय सग्रह कृष्टि तिसविषैं नीचैं नवीन कृष्टिनिकी रचना अैसी तिनके उपरि

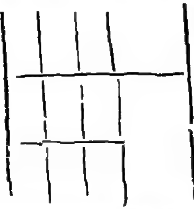
पूर्व कृष्टिनिकी रचना अैसी यांविषैं समपट्टिकाकी समान लीक अर विशेष घटता क्रमकी क्रम हीन रूप लीक अर तिनविषै अधस्तन शीर्ष विशेषका द्रव्य दीया ताका क्रम अधिक-रूप लीककी सदृष्टि कीए अैसी ऐसैं कीए सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिनिकी समपट्टिका

भई। अैसैं ही लोभकी द्वितीयादिविषैं सदृष्टि जाननी। तहा क्रोधकी तृतीय सग्रहविषै नीचै नवीन कृष्टि नाही भई तातै तिनकी रचना नाही करी है। पूर्व कृष्टिनिहीकी रचना करी है। बहुरि इनि पूर्व कृष्टिनिके वीचि सक्रमण द्रव्यकरि नवीन कृष्टि भई तिनकी सूधी ऊभी लीकरूप सदृष्टि अर बध द्रव्यकरि नवीन कृष्टि भई तिनकी वाकी ऊभी लीकरूप सदृष्टि जाननी। तहा लोभादिक च्यार्‍यो कषायनिकी तृतीय द्वितीय सग्रहविषै तौ सक्रमण द्रव्यहीकरि नवीन कृष्टि भई तिनकी सदृष्टि ऐसी अर लोभ माया मानकी प्रथम सग्रहविषैं सक्रमण द्रव्य-

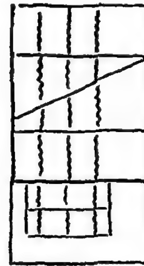
करि अर बध द्रव्यकरि नवीन कृष्टि भई तिनकी सदृष्टि अैसी



अर क्रोधकी प्रथम संग्रहविषै बंध द्रव्य ही करि नवीन कृष्टि भई तिनकी संदृष्टि ऐसी



जाननी। बहुरि इन सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिनिविषै मध्यम खंड द्रव्य दीया ताकी समानरूप लीककी संदृष्टि जाननी। बहुरि इन सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टिनिविषै क्रम हीन रूप उभय द्रव्य विशेष द्रव्य दीया ताकी क्रम हीन रूप लीक संदृष्टि जाननी। बहुरि बंध होने योग्य पूर्व कृष्टिनिका उभय द्रव्य विशेष द्रव्यविषै वा बंध द्रव्यकरि निपजी नवीन कृष्टिका बंधातर विशेष द्रव्यविषै घटता द्रव्य दीया तहां बंध विशेष द्रव्य दीया अर बंध द्रव्यका मध्यम खंड द्रव्य दीया ताकी उभय द्रव्य विशेष द्रव्यकी संदृष्टि



ऐसी जाननी। ऐसैं इहां रचना जाननी। बहुरि क्रोधकी प्रथम संग्रहका द्रव्य ऐसा—व १२ १३ / २४। सो द्वितीय संग्रह रूप भया। अर द्वितीय संग्रहका द्रव्य पूर्व ऐसा व। १२ / २४। १ था ही सो मिलि द्वितीय संग्रहका द्रव्य ऐसा व। १२ / २४। १४। भया। ऐसैं ही अन्य संग्रहविषैं लोभकी द्वितीय संग्रहपर्यंत पूर्व पूर्व संग्रहका द्रव्य अपने द्रव्यविषैं मिलनेतैं अपना अपना द्रव्य हो है। सो जानना ताकी संदृष्टि रचना ऐसी—

नाम	क्रोध			मान		
संग्रह	प्र	द्वि	तृ	प्र	द्वि	तृ
द्रव्य	व १२ १३ / २४	व १२ १४ / २४	व १२ १५ / २४	व १२ १६ / २४	व १२ १७ / २४	व १२ १८ / २४
नाम	माया			लोभ		
संग्रह	प्र	द्वि	तृ	प्र	द्वि	तृ
द्रव्य	व १२ १९ / २४	व १२ २० / २४	व १२ २१ / २४	व १२ २२ / २४	व १२ २३ / २४	व १२ २४ / २४

तहां अपने अपने द्रव्यका अपकर्षणकरि प्रथम स्थितिविषै गुणकार क्रमकरि द्वितिय स्थितिविषैं विशेष हीन क्रमकरि देनेका विधान पूर्ववत् जानना। बहुरि आयुद्रव्य आदि यथासंभव जानि तिनकी संदृष्टि पूर्ववत् जाननी। बहुरि तहां संक्रमण द्रव्य बंध द्रव्यका विधान यथासंभव जानि तिनकी संदृष्टि पूर्ववत् जाननी। विशेष होइ सो विशेष जानि लेना। बहुरि क्रोध मान माया लोभ वेदककैं क्रमतैं च्यारि तीन दोय एक कषायनिका बंध है। तहां जिस कषायकी जिस संग्रहकौं वेदै

है तिस कषायकी तौ तिसही सग्रहका बध है। अन्य कषायकी प्रथम सग्रहका वध है। तिस बधातर कृष्टि शलाकाविषैं क्रोधवेदकके कृष्टिप्रमाणकौ छह गुणहानिका भागहार कह्या था। मान माया लोभवेदककै क्रमतै साढा च्यारि, तीन, ड्योढ गुणहानिका भागहार जानना। तिनकी सदृष्टि ऐसी—

नाम	लोभ	माया	मान	क्रोध
क्रोधवेदक	४ ख।८।६	४ ख।८।६	४ ख।८।६	४ ख।८।६
मानवेदक	४ ख।८।९ २	४ ख।८।९ २	४ ख।८।९ २	
मायावेदक	४ ख।८।३	४ ख।८।३		
लोभवेदक	४ ख।८।३ २			

बहुरि बधातर कृष्टिनिके वीचि जे अन्तर कृष्टि तिनिका प्रमाण क्रोधका प्रथमसग्रहका वेदकविषै अन्य कषायनिकी गुणहानिका चौथा भागमात्र क्रोधका तातै तेरह गुणा कह्या था। बहुरि ताकरि द्वितीय तृतीय कृष्टि वेदकविषै अन्य कषायनिका पूर्ववत् अर क्रोधका चौदह पद्रह गुणा जानना। बहुरि मानकी प्रथमादि सग्रह वेदककै अन्यकषायनिका गुणहानिकै तीन सोलहवा भागमात्र मानका तातै सोलह सतरह अठारह गुणा क्रमतैं जानना। बहुरि मायाकी प्रथमादि सग्रह वेदककै लोभका गुणहानिका दोय सोलहवा भागमात्र, मायाका तातै उगणीस वीस इकईस गुणा क्रमतै जानना। लोभकी प्रथमादि सग्रह वेदकके लोभका गुणहानिका सोलहवा भाग वाईस तेईस चौवीस गुणा जानना। तिनकी सादृष्टि ऐसी—

नाम	लोभ	माया	मान	क्रोध
क्रोधवेदक	८ ४	८ ४	८ ४	८।१३।१४।१५ ४
मानवेदक	८।३ १६	८।३ १६	८।३।१६ १६	१७।१८
मायावेदक	८।२ १६	८।१८ १६	२०।२१	
लोभवेदक	८।२२ १६	२३।२४		

बहुरि द्वितिय सग्रहका द्रव्य ऐसा व।१२।२३ / २४ याकौ अरकर्षण भागहार का भाग देइ पचीस भागमात्र सक्रमण द्रव्य ऐसा व।१२।५७५ / २४।ओ तिसविषै एक भागमात्र तृतिय सग्रह रूप परिणया द्रव्य ऐसा— व।१२।२३ / २४।ओ अर चौईस भागमात्र सूक्ष्मकृष्टिरूप परिणया द्रव्य ऐसा व।१२।५५२ / २४।ओ बहुरि तृतीय सग्रहका द्रव्यकौ अपकर्पण भागहारका भाग दीए एक भाग सूक्ष्मकृष्टिरूप परिणया

ऐसा व । १२ । १ इनिकौ मिलाएँ सर्व सूक्ष्म कृष्टिरूप परिणया द्रव्य ऐसा व । १२ । ५५३ इतने
२४ । ओ   २४ । ओ
द्रव्यकरि सर्व सूक्ष्मकृष्टि करण कालका प्रथम समय विषै बादरकृष्टिनिके नीचै सूक्ष्मकृष्टिकरिए है । तिनिका प्रमाण कहिए है—

क्रोधकी प्रथम सग्रह कृष्टि ऐसी ४ । १३ बहुरि पूर्व पूर्व सग्रह उत्तर उत्तर सग्रहरूप होइ
ख । २४
परिनमै है तातै पूर्व प्रमाणकौ विवक्षित सग्रहकृष्टिका प्रमाणविषै मिलाए अपना अपना वेदक कालविषै कृष्टिनिका प्रमाण ऐसा—

नाम	क्रोध			मान		
सग्रह	प्र	द्वि	तृ	प्र	द्वि	तृ
कृष्टिप्रमाण	४ १३ ख २४	४ १४ ख २४	४ १५ ख २४	४ १६ ख २४	४ १७ ख २४	४ १८ ख २४
नाम	माया			लोभ		
सग्रह	प्र	द्वि	तृ	प्र	द्वि	सूक्ष्मकृष्टि
कृष्टिप्रमाण	४ १९ ख २४	४ २० ख २४	४ २१ ख २४	४ २२ ख २४	४ २३ ख २४	४ २४ ख २४

हो है । तहा सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रमाण ऐसा ४ । २४ अपवर्तन कीए ऐसा ४ हो है । बहुरि इहा लोभ-
ख २४   ख
का द्वितिय सग्रहविषै आय द्रव्यका तौ अभाव है । तृतीय सग्रहरूप भया व्यय द्रव्य ऐसा हो है व । १२ । २३ सोई तृतीय सग्रहका आय द्रव्य है । इसहीका नाम सक्रमण द्रव्य है । बहुरि लोभकी
२४ । ओ
द्वितीय तृतीय सग्रहविषै अपनी अपनी कृष्टि प्रमाणकौ अपकर्षण भागहारका असख्यातवा भागका भाग दीए अपना अपना घात कृष्टिका प्रमाण हो है । ताकरि अपनी अपनी अत कृष्टिका द्रव्यकौ गुणि किछू साधिक कीए अपना अपना घात द्रव्य हो है । तहा घात द्रव्यकौ यथासभव दीए स्वस्थान परस्थान गोपुच्छरूप होइ कृष्टि हो है । तिनविषै सक्रमण द्रव्य वा घात द्रव्यका विभाग कहिए है—

एक विशेष आदि अर एक विशेष उत्तर अर एक घाटि घात कीए पीछै रही अपनी कृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ स्थापै सकलन धनमात्र द्रव्य तृतीय सग्रहविषै आय द्रव्यतै ग्रहि स्थापना अर तृतीय सग्रह कृष्टिमात्र विशेष आदि अर एक विशेष उत्तर अर घात कीए पीछै रही अपनी कृष्टिमात्र गच्छ स्थापै सकलन धनमात्र द्वितीय सग्रहविषै घात द्रव्यतै ग्रहि स्थापने । इसका

नाम बादर कृष्टिसबधी अधस्तन शीर्पविशेष द्रव्य है। इहा 'पदमेगेण विहीण' इत्यादि सूत्रकरि सकलन धन कहिए है—

तृतीय सग्रहविषै गच्छ ऐसा ४ / ख। २४ इहा घात कृष्टिनिका वा एक घाटिका किंचिदूनपनाकौ नाही गिण्या है। यामे एक घटाइ दोयका भाग दीए ताकरि ऐसा ४ १ / ख। २४। २ याकरि उत्तर जो विशेष ताकौ गुणै ऐसा वि ४ १ / ख। २४। २ यामै आदि एक विशेष मिलावनेकौ एक घाटि था तहा एक अधिककरि ताकौ गच्छ ऐसा ४ १— / ख। २४ करि गुणि तहा गुण्य गुणकारनिकौ आगै पीछैं लिखै सकलन धन ऐसा वि। ४। ४ / ख। २४। ख २४। २ हो है। बहुरि द्वितीय सग्रहविषै गच्छ ऐसा—४। २३ / ख। २४ यामैं एक घटाइ दोयका भाग देइ ताकरि उत्तर जो विशेष ताकौ गुणै ऐसा—वि। ४। २३ १ / ख। २४। २ यामैं आदि ऐसा वि ४ / ख २४ मिलावना सो याकौं दोयकरि समच्छेद कीए ऐसा—वि। ४। २ / ख। २४। २ १ अर याकै वाकै अन्य समान देखि तेईसका गुणकारविषै दोयका गुणकार मिलाए ऐसा वि। ४। २५ / ख। २४। २ याकौ गच्छ ऐसा ४। २३ १ / ख। २४ करि गुणैं ऐसा वि। ४। २५। ४२३ / ख। २४। २। ख २४। इहा पचीस अर तेइसकौ परस्पर गुणैं पाचसै पिचहत्तरिका गुणकार कीए अर गुण्य गुणकार आगैं पीछैं लिखै सकलन धन ऐसा। वि। ४। ४। ५७५ १ / ख। २४। ख २४ २ हो है। इहा एक अधिक हीनकौ न गिणि सदृष्टि करी है ऐसा जानना। बहुरि तृतीय सग्रहकी जघन्य कृष्टि ऐसी व १२ याकौ असख्यातगुणा अपकर्षण भागहार ऐसा (ओ ∂) ताका भाग देइ ताकौ ४ / ख

तृतीय सग्रहविपै कृष्टिप्रमाण ऐसा ४ / ख। २४ अर द्वितीय सग्रहविपै कृष्टिप्रमाण ऐसा ४। २३ / ख। २४ सो इनकरि गुणै अपना अपना बादर कृष्टिसबधी मध्यम खड द्रव्य हो है। बहुरि एक विशेष आदि एक विशेष उत्तर अर अपनी अपनी पूर्व कृष्टिप्रमाणमात्र गच्छ स्थापि तहा जेता सकलन धन भया ताविषै एक विशेषका अनतवा भाग घटाए जो होइ सो द्वितीय सग्रहका घात द्रव्यतै ग्रहि स्थापना। इहा एक विशेषका अनतवा भाग घटाया है। तहा वध द्रव्य देइ पूर्ण करिए है ऐसा जानना। बहुरि एक अधिक द्वितीय सग्रहकी कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष आदि अर एक विशेष उत्तर अर सक्रमण द्रव्यकरि निपजा कृष्टिसहित अपनी पुरातन कृष्टिप्रमाणमात्र गच्छ स्थापि

तहां सकलन धनमात्र तृतीय सग्रहका आय द्रव्यतैं ग्रहि स्थापना, इसका नाम उभय द्रव्यविशेष द्रव्य है। इहा 'पदमेगेण विहीण' इत्यादि सूत्रकरि द्वितीय सग्रहविषै गच्छ ऐसा ४। २३ तामैं एक
ख। २४
१ ८
घटाइ ताकौ दोयका भाग देइ ताकरि उत्तर जो विशेष ताकौ गुणैं ऐसा वि। ४। २३ बहुरि
ख। २४। २
आदि एक विशेष मिलावनेकौ एक हीनकी जायगा एक अधिककरि ताकौ गच्छकरि गुणैं ऐसा
१ ८
वि ४ २३ ४ २३ बहुरि इहा ते ईसकरि तेइसकौ गुणि पाचसै गुणतीसका गुणकार कीए अर गुण्य
ख २४ २ ख २४ १—
गुणकारनिकौ आगै पीछै लिखै सकलन धन ऐसा वि। ४। ४। ५२९ हो है। बहुरि तृतीय सग्रह-
ख। २४। ख। २४। २
विषै गच्छ ऐसा—४ यामैं एक घटाइ दोयका भाग देइ ताकरि उत्तर जो विशेष ताकौं गुणै
१ ८ ख। २४
ऐसा वि। ४। ४ यामैं आदि ऐसा वि। ४। २३ मिलावना सो याकौ दोयकरि समच्छेद कीए यहु
ख। २४। २ ख। २४।
ऐसा—वि। ४। ४६ अर याकै वाकैं अन्य समान देखि याका छयालीसका गुणकारविषै वाका एक
ख। २४। २ १ ८
गुणकार मिलाए ऐसा वि। ४। ४७ बहुरि याक गच्छ ऐसा ४ करि गुणै गुण्य गुणकारनिकौ
ख। २४। २ १ ८ ख। २४
आगै पीछै लिखैं सकलन धन ऐसा वि। ४। ४। ४७ इहा घात कृष्टिनिका हीनपना वा
ख। २४। ख। २४। २
सक्रमण कृष्टिनिका अधिकपना वा एकका अधिक हीनपनाकौ न गिणि सदृष्टि करी है ऐसा जानना। बहुरि इस तीन प्रकार द्रव्यकरि हीन तृतीय सग्रहका आय द्रव्य ऐसा व। १२। २३ ≡
२४। आ
तहा किंचिदूनको न गिणि ताका मध्यम खड सहित तृतीय सग्रहकी जघन्य कृष्टि ऐसी व। १२
४
ख
ताका भाग देइ अपकर्षण कीए वा भागहारका भागहारकौ राशि कीए सक्रमण द्रव्यकरि वीच्चि वीचिमे भई नई कृष्टिनिका प्रमाण ऐसा ४। २३ बहुरि इसका भाग अपनी सर्व कृष्टिनिका
ख। २४। ओ
प्रमाणकौ दोए सक्रमणातर कृष्टिनिके वीचि जे कृष्टि पाइए तिनका प्रमाण ऐसा ४
ख। २४। ४। २३
ख। २४। ओ
इहा अपवर्तन कीए वा भागहारका भागहारकौ राशि कोए ऐसा ओ बहुरि पूर्वोक्त सक्रमणातर
२३

कृष्टिनिका प्रमाण ऐसा ४ । २३ ताका भाग अवशेष आय द्रव्यकौ दीए एक खंड होइ ताकौ तिस-
ख । २४ । ओ
हीकरि गुणैं अपने अवशेष आय द्रव्यमात्र संक्रमणातर कृष्टि समान खंड द्रव्य हो है। द्वितीय संग्रहविषैं आय द्रव्यके अभावतैं ऐसा द्रव्य नाही है । तहां शून्य जाननी । इनकी सदृष्टि ऐसी—

नाम	लोभकी तृतीय संग्रह	लोभकी द्वितीय संग्रह
अधस्तन शीर्ष पूर्वविशेष द्रव्य	१— वि । ४ । ४ ख । २४ । ख । २४ । २	१ ० वि । ४ । ४ । ५७५ ख । २४ । ख । २४ । २
मध्यम खंड	व । १२ ४ ४ । ओ । ३ । ख । २४ ख	व । १२ । ४ । २३ ४ । ओ । ३ । ख । २४ ख
उभय द्रव्य विशेष द्रव्य	१ ० वि । ४ । ४ । ४७ ख । २४ । ख । २४ । २	१ ० वि । ४ । ४ । ५२९ ख । २४ । ख । २४ । २
संक्रमणातर कृष्टि सबधीसमानद्रव्य	व १२ । २३ २४ । ओ ।	०

बहुरि बंध द्रव्यविषैं विभाग कहिए है—

अतकी बधातर कृष्टि सहित याके ऊपरि पूर्व कृष्टिनिका प्रमाणमात्र विशेष आदि ऐसा- वि । ४ । २३ । १ अर एक अधिक गुणहानिका सोलहवा भागकरि हीन ड्योढ गुणहानिमात्र
ख । २४ । प । १६
३
विशेष ऐसे—वि । ८ । २३ । सो उत्तर अर पूर्व सर्व कृष्टि प्रमाणकौ द्वयर्ध गुणहानिका भाग दीए
१६
सर्व नवीन भई बधातर कृष्टिमात्र गच्छ ऐपा ४ । ८ । ३ इहा गुणहानिकी सदृष्टि आठका अंक
ख । २
है। ऐसैं स्थापि तहा सकलन धनमात्र बधातर कृष्टि विशेष नामा द्रव्य हो है। सो इसकी सदृष्टि- के विधानका मोकौं ज्ञान न भया तातैं नाही लिख्या है । बहुरि समयप्रबद्धका अनतवा भाग जुदा जुदा स्थापैं अवशेष किंचिदून समयप्रबद्ध ऐसा (स ⁻) ताकौ द्व्यर्ध गुणहानि गुणित समय प्रबद्धमात्र द्रव्यकौं कृष्टि प्रमाणका भाग दीए एक बधातर कृष्टिका द्रव्य ऐसा स १२ ताका भाग
४
ख
दीए बधातर कृष्टिनिका प्रमाण ऐसा स—इहा किंचिदून न गिणि समयप्रबद्धका अपवर्तन कीए
स १२
४
ख
अर ऐसा ४ जो भागहारका भागहार था ताकौ राशि कीए ऐसी नवीन निपजी कृष्टिनिका प्रमाण
ख

४ भया। बहुरि याका भाग सर्व कृष्टिनिका प्रमाण ऐसा ४। २३ ताकौं दीए ऐसा ४। २३ इहा
ख। १२ ख। २४ ख। २४। ४
ख। १२

ऐसे का अपवर्तन कीए ४ अर भागहारका भागहार ऐसा (१२) कौ राशि कीए तहा ड्योढकरि
ख

अपवर्तन कीए ड्योढ गुणहानि ऐसा (१२) ड्योढ गुणहानिमात्र भाज्य था ताका तौ एक गुण-हानिमात्र ऐसा (८) भाज्य भया। अर चौईसका भागहार था सो सोलहका भागहार भया तव ऐसा ८। २३ नवीन निपजी बध कृष्टिनिके बीचि जे कृष्टि तिनका प्रमाण हो है बहुरि पूर्वोक्त
१

बघातर कृष्टिनिका प्रमाण ऐसा ४ ताका भाग किंचिदून समय प्रवद्ध ऐसा (स —) ताकौ
ख। १२

दीए एक खड होइ। ताकौ तिसहो करि गुणै बघातर कृष्टि सवधी समान खड हो है। बहुरि जो समय प्रबद्धका अनतवा भाग जुदा राख्या था ताकौ सर्व पूर्व अपूर्व वध कृष्टि प्रमाण गच्छका अर एक घाटि गच्छका आधाकरि न्यून दोगुणहानिका भाग दीए विशेष होइ सो सर्व वध कृष्टि प्रमाण गच्छका सकलन धनमात्र विशेष तिस जुदा राख्या भागविषै ग्रहणकरि स्थापना। सो इहा एक विशेष ऐसा (वि) आदि एक विशेष उत्तर अर सर्व कृष्टिनिका प्रमाणविषै अनुभय उदय कृष्टिका प्रमाण घटाए बध कृष्टि हो है। सो तिस प्रमाणकौं किंचित् जानि न गिण्या। तव बध
।

कृष्टिमात्र गच्छ ऐसा ४। २३। इहा गच्छमै एक घटाइ ताकौ दोयका भाग देइ उत्तर जो
ख। १४ १ ८

विशेष ताकरि गुणै ऐसा वि। ४। २३ यामैं एक विशेष आदि मिलावनेकौं एक हीनकी जायगा एक
ख। २४। २

१ ८

अधिक भया ताकौं न गिणि बहुरि गच्छकरि गुणैं ऐसा वि। ४। २३। ४। २३ इहा तेईस तेईस-
ख। २४। २। ख। २४।

कौं परस्पर गुणि पाचसै गुणतीस कीए अर गुण्य गुणकार आगे पीछैं लिखे ऐसा भया वि।४।४।५२९
ख।२४।ख।२४।२।

याका नाम बध विशेष है। बहुरि जुदा स्थाप्याविषै याकौ घटाएं अवशेष समय प्रबद्धका अनतवा भाग ऐसा स ताकौं सर्व बंधकृष्टिप्रमाणका भाग दीए एक खड होइ ताकौ तिसहीकरि गुणै
ख

बध मध्यम खड द्रव्य होइ। ऐसै बध द्रव्यका विधान कह्या ताकी सदृष्टि ऐसी—

नाम	लोभ द्वितीयसग्रह
बधातर कृष्टि विशेषद्रव्य	वि । ४ । २३ । ४ ख । २४ । २ । ख । ८ । ३
बधातरसबधी समान खड	स—४ ख । २४ । ख । १२
बधविशेष खड	वि । ४ । ४ । ५२९ ख । २४ । ख । २४ । २
बध मध्यम खड	स । ४ । २३ ख । ४ । २३ । ख । २४ ख । २४

इहा द्वितीय सग्रह हीका बध है। तातै तिसहोविषै ऐसा विधान जानना। बहुरि सक्रमण द्रव्यकरि निपजी सूक्ष्म कृष्टिनिका द्रव्यविषै विभाग कहिए है—

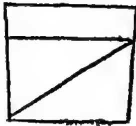
सूक्ष्मकृष्टि सबधो द्रव्य पूर्वोक्त ऐसा व । १२ । ५५३ / २४ । ओ ताकौ प्रथम समयविषै कोनी सूक्ष्मकृष्टिनिका प्रमाणमात्र गच्छ ऐसा ४ / ख ताका अर एक घाटि गच्छका आधाकरि न्यून दोगुणहानिका भाग दीए विशेष ऐसा व । १२ । ५५३ / २४ । ओ । ४ । १६—४ / ख ख २ १⌒ गच्छ अर सपूर्ण गच्छकी दोय अर एकका भाग दीए एक वार सकलन धन होइ तिहिंकरि तिस विशेषकौ गुणैं सूक्ष्मकृष्टि सबधी विशेष द्रव्य हो है। बहुरि याकरि हीन सूक्ष्मकृष्टिका द्रव्यकौ सूक्ष्मकृष्टि प्रमाण ऐसा ४ / ख का भाग दीए एक खड ताकौ तिसही करि गुणैं सूक्ष्मकृष्टि सबधी समान द्रव्य हो है। तिनकी सदृष्टि ऐसी—

नाम	सूक्ष्मकृष्टि
विशेष द्रव्य	१⌒ १⌒ व । १२ । ५५३ । ४ । ४ २४ । ओ । ४ । १६—४ । ख । ख । २ ख ख २
समान खड द्रव्य	व । १२ । ५५३ । ४ ४ २४ । ओ । ख । ख

वहुरि सूक्ष्मकृष्टि संवधी विशेष ऐसा व । १२ । ५५३ / २४ । ओ । ४ । १६—४ / ख ख १⌒ याकौं दोगुणहानिकरि गुणैं

प्रथम कृष्टिका द्रव्य होइ । इस गुणकारविषै क्रमतै ए ꠲ एक घटाइ एक घाटि सूक्ष्मकृष्टिमात्र घटै अत कृष्टिका द्रव्य हो है । इनि सवनिकी रचना ऐसी––

सूक्ष्मकृष्टि	लोभकी तृतीयसग्रह	लोभका द्वितीयसंग्रह
४ ख	४ ख २४	४ २३ ख २४
ब १२ ५५३ १६००० ब १२ ५५३ १६– ४ (१ ꠲) ; २४ ओ ४ ख १६– ४ (१ ꠲) ख २ ; २४ ओ ४ ख १६ ४ (१ ꠲) ख २ ख	७७	५२९

इहा अनुभागकी रचना है । तातै आडो सहनानी करी है । तहा नीचैं सूक्ष्मकृष्टि लिखी है । ताकी समपट्टिका अर विशेष घटता क्रमको सदृष्टिकरि नीचै आदि अत कृष्टिनिके द्रव्यका प्रमाण लिख्या है । बहुरि ताके ऊपरि लोभकी तृतीय कृष्टि अर ताके ऊपरि द्वितीय कृष्टि लिखी है । तहा समपट्टिका पूर्व विशेष अवस्तन कृष्टि उभय द्रव्य विशेषकी सदृष्टि पूर्वोक्त प्रकार करीहै । बहुरि तिन कृष्टिनिके वोचि जे नवीन कृष्टि भई तिनको सदृष्टि वीचिमे लीककरी है । तहा सक्रमण द्रव्यकरि निपजोकी तौ सूधी लीक अर बध द्रव्यकरि निपजो कृष्टिनिकी वक्र कहिए वाकी लीक करी है । बहुरि द्वितीय कृष्टिकी जिनि पुरातन नूतन बध कृष्टिनिविषैं बधान्तर कृष्टि विशेष बध मध्यम खडरूप बध द्रव्य दीजिये है । तहा उभय द्रव्य विशेषविषै इतना द्रव्य घटता दीया है ताकी सदृष्टि उभय द्रव्यकी रचनाविषै ऐसी  करी है । बहुरि सूक्ष्म कृष्टिकारक कालका

द्वितीयसमयविषैं प्रथमसमयविषैं जेती कृष्टि कीनी तिनके असख्यातवे भागमात्र नवीन कृष्टिकरिए है तिनकी सदृष्टि ४/ख ꠲ तिनविषै पूर्व कृष्टिनिके नीचै जे कृष्टि करिए है तिनके असख्यातवे भाग-मात्र ऐसी ४/ख ꠲ ꠲ अर पूर्व कृष्टिनिके वोचि करिए है ते बहुभागमात्र ऐसी ४ । ꠲ १ ꠲/ख ꠲ ꠲ इहा गुणकारका एक

हीनपनाकी न गिणि अपवर्तन कीए ऐसी ४ हो है। बहुरि इस समयविषै द्रव्य असख्यात गुणा
ख a

अपकर्षण करिए है। ताकी सदृष्टि ऐसी व । १२ । ५५३ इहा असख्यातका गुणकारकौ अपकर्षण
२४ ओ
a

भागहारका भाग कीया है। बहुरि याविषै एक पूर्व विशेष आदि एक विशेष उत्तर एक घाटि प्रथम
१

समयविषैं कीनी कृष्टि प्रमाणमात्र गच्छ ऐसा ४ करि तहा सकलन सूत्रके अनुसारि गच्छ अर एक
ख

अधिक गच्छकौ दोयका भाग दीए सकलन धन हो है। सो इतने विशेषमात्र द्रव्य ग्रहि जुदा स्थापना। याका नाम अधस्तन शीर्ष विशेष है। बहुरि प्रथमसमय सबधी सूक्ष्म कृष्टि द्रव्यकौ प्रथम समयविषै कीनी कृष्टि प्रमाणका भाग दीए अर विशेष अधिक है। तिनिकौ न गिणैं तिनकी जघन्य कृष्टि का द्रव्य ऐसा व । १२ ताकौं द्वितीय समयविषैं पूर्व कृष्टिनिके नीचैं करी कृष्टिनिका प्रमाण

२४ । ओ । ४
ख

ऐसा ४ ताकरी गुणैं नीचैं निपजाई अपूर्व कृष्टि सबधी समान खड द्रव्य हो है।
ख । a । a

बहुरि ताहीकौ वीचिकरी कृष्टिनिका प्रमाण ऐसा ४ ताकरि गुणैं वीचि निपजाई अपूर्व कृष्टि
ख । a

सबधी समान खड द्रव्य हो है बहुरि प्रथम द्वितीय समय सबधी सूक्ष्म कृष्टिका द्रव्यकौ मिलाय ताकौ प्रथम द्वितीय समय सबधी सर्व सूक्ष्म कृष्टि प्रमाणमात्र गच्छका अर एक घाटि गच्छका आधाकरि न्यून दोगुणहानिका भाग दीए एक उभय विशेष होइ ताकी सदृष्टि ऐसी [वि] ताकौ प्रथम समय सबधी कृष्टि प्रमाणविषैं द्वितीय समय सबधी कृष्टि प्रमाण मिलावनेकौ अधिककी

।

सदृष्टि कीए गच्छ ऐसा ४ ताकरि अर एक अधिककरि गुणि दोयका भाग दीए सकलन धनमात्र
वि

उभय विशेष द्रव्य हो है। बहुरि इस च्यारि प्रकारका द्रव्य घटावनेकौ सर्व द्रव्यके आगैं किंचिदून

।

की सदृष्टिकरि ताकौ सर्व पूर्व अपूर्व कृष्टि प्रमाण ऐसा ४ ताका भाग दीए एक खड होइ।
ख

याकौं तिसही गच्छकरि गुणैं सर्व मध्यम खड दव्य हो है। ऐसैं द्वितीय समयविषैं सूक्ष्म कृष्टि सबधी द्रव्यविषैं पाच प्रकार द्रव्य कहे तिनकी सदृष्टि ऐसी—

नाम	द्रव्य
अधस्तन शीर्ष	व । १a/ख । ४/ख । ४/२
अधस्तन कृष्टि समान खड	व । १२ । ५५३ । ४ / २४ । ओ । ४ ख ə ə / ख
मध्यम अपूर्व कृष्टि समान खड	व । १२ । ५५३ । ४ / २४ । ओ । ४ ख । ə
उभय द्रव्य विशेष	वि । ४ । ४ । १a / ख ख २
मध्यम खड	व । १२ । ५५३ ≡ ४ / २४ ओ ४ ख ख

बहुरि बादर कृष्टि सबधी च्यारि प्रकार सक्रमण द्रव्य अर द्वितीय कृष्टिविषै च्यारि प्रकार बध द्रव्य अर तीन प्रकार घात द्रव्य देनेका पूर्ववत् विधान जानना । इहा तिनकी रचना ऐसी—

अपूर्व अधस्तनकृष्टि | पूर्व अपूर्व सूक्ष्मकृष्टि | तृतीयसंग्रह | द्वितीयसंग्रह

४
ख ə ə

इहा पहलैं द्वितीय समयविषैं नवीन करी नीचली कृष्टिनिकी रचना करी । ताके ऊपरि प्रथमसमयविषै कीनी कृष्टिनिकी रचना करी । तहा समपट्टिका पूर्व विशेष अधस्तनकृष्टिकी रचना करी । अर वीचि वीचि नवीन भई कृष्टिनिकी ऊभी लीककी सहनानी करी । बहुरि तिन दोऊ रचनानिके मध्यम खड अर उभय द्रव्य विशेषकी समरूप क्रम हीन रूप सहनानी करी । बहुरि

ताके ऊपरि तृतीय द्वितीय सग्रहकी रचना करी ताका विधान प्रथम समयवत् जानना। ऐसैं ही आडी रचना इहा करी हैं। बहुरि ऐसै ही सूक्ष्म कृष्टिकारकका तृतीयादि अनिवृत्तिकरणका अत-समय पर्यंत विधानकी रचना यथासभव जाननी। बहुरि ताके अनतरि सूक्ष्म सापराय हो है। तहा प्रथम समयविषैं सर्व मोहनीयका सत्त्व द्रव्य ऐसा स। ३। १२ इहा उत्कृष्ट समय प्रबद्धकौ
७

द्व्यर्ध गुणहानिकरि गुणें सर्व सत्त्व द्रव्य होइ ताकौ सातका भाग दोएं मोहका सत्त्व द्रव्य जानना। याकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए अपकृष्ट द्रव्य ऐसा स ३। १२ याकौ पल्यका असख्यातवा
७ ओ

भागका भाग दोए एक भाग ऐसा स। ३। १२ ताकौं सूक्ष्म सापरायका कालतैं किछू अधिक जो
७। ओ प
३

अवस्थित गुणश्रेणि आयाम ताविषै गुणकार क्रमकरि देना। तहा अकसदृष्टि अपेक्षा पिच्यासीका भाग ताकौ देइ एककरि गुणैं प्रथम निषेकविषै चौसठिकरि गुणैं अत निषेकविषैं दीया द्रव्य हो है।

१०
बहुरि बहुभाग ऐसैं स ३। १२—प इहा गुणकारविषैं एक हीनकौ न गिणि पल्यके असख्यातवैं
७। ओ। प ३
३

भागका अपवर्तन कीए ऐसा स ३। १२ बहुरि अतरायामका प्रमाण सख्यात गुणा अतर्मुहूर्तमात्र
७। ओ

ऐसा २ ९। ४ यातैं सख्यात गुणा स्थिति काडकायाम ऐसा २ ९। ४। ४ यातैं सख्यात गुणी काडकके नीचैं अवशेष रही स्थिति सो ऐसी २ ९। ४। ४। ४ इहा गुणकारनिकौ परस्पर गुणैं काडकायाम ऐसा २ ९। १६ अर अवशेष स्थिति ऐसी—२ ९। ६४ इनिकौ मिलाए द्वितीय स्थितिका प्रमाण ऐसा २ ९। ८० याकौ अतरायामका भाग दोए वीस पाए ताका भाग तिस बहुभागकौ देइ च्यारितौ अतरायामविषैं दीए तिनकी सदृष्टि ऐसी स। ३। १२। ४ अर सोलह
७। ओ। २०

भाग प्रमाण द्रव्य द्वितीय स्थितिविषैं दीया ताकी सदृष्टि ऐसी स ३। १२। १६ इहा यथा योग्य
७। ओ। २०

सख्यातकी सहनानी च्यारिका अककरि ऐसी सदृष्टि करी है। बहुरि अपना अपना द्रव्यकौ अपना अपना आयाममात्र गच्छका अर एक घाटि गच्छका आधाकरि न्यून दोगुणहानिका भाग दोए विशेष होइ। ताकौं दोगुणहानिकरि गुणैं प्रथम निषेकविषैं अर तिस गुणकारविषैं क्रमतैं एक एक घटाइ एक घाटि अपने गच्छमात्र घटैं अत निषेकविषैं दीया द्रव्य हो है। इहा अतरायामका गच्छ ऐसा २ ९। ४ अर द्वितीय स्थितिका गच्छ ऐसा २ ९। ८० जानना। तहा द्वितीय स्थितिविषैं अतकी अतिस्थापनावलीविषैं द्रव्य दीजिए है। तातैं तिस गच्छविषैं इतना घाटि है। तथापि ताकौं किंचित् जानि सदृष्टिविषैं नाहीं गिन्या है। इनकी सदृष्टि ऐसी—

सूक्ष्मसापराय प्रथम काडक प्रथम समय रचना

अतिस्थापना वली

स ३ १२ १६ १६-२ ७ ८० १ -
७ ओ २० २ ७ १६ १६ - २ ७ ८०

द्वितीयस्थिति

स ३ १२ १६ १६ १ -
७ ओ २० २ ७ ८० १६ - २ ७ ८०
२

अंतरायाम

१ -
स ३ १२ ४ १६ - २७ ४ १ -
७ ओ २० २ ७ ४ १६ - २७ ८०
०

स ३ १२ ४ १६ १ -
७ ओ २० २ ७ ४ १६ - २७ ४
२

स ३ १२ ६४
७ ओ प ८५
० ३
८
०

गुणश्रेणि आयाम

स ३ १२ १
७ ओ प ८५
३ .

इहा नीचैं गुणश्रेणि आयामकी क्रम अधिक रूप ऊपरि अतरायामकी ताके ऊपरि द्वितीय स्थितिकी क्रम हीन रूप सदृष्टि करि तहा आदि अत निषेकविषैं दीया द्रव्य आगैं लिख्या है। मध्य निषेकनिकी विंदी सहनानी करी है। इनिके ऊपरि अतिस्थापनावलीकी सहनानी च्यारिका अक कीया है। अर इहा अतरायामविषै पूर्वैं द्रव्यका अभाव था, नवीन ही द्रव्य दीया, तातैं दो वडी लीक करी। द्वितीय स्थितिविषै पूर्वैं द्रव्य था, नवीन ही दीया, तातैं दो बडी लीक करी। बहुरि द्वितीयादि समयविषैं भी ऐसा क्रम जानना।

बहुरि प्रथम स्थितिकाडककी अत फालिका पतनसमयविषैं विधान कहिए है–द्वितीय स्थितिका प्रथम निषेकविषैं एक घाटि द्वितीय स्थितिमात्र विशेष घटाए चरम फालिका अत निषेक ऐसा स । ३ । १२ / ७ । २ ७ । ४ । २० इहा सत्त्व द्रव्यकौं द्वितीय स्थितिका भाग दीऐं मध्य निषेक हो है। ताविषैं जो विशेष हीन है तिनकौं द्रव्यका प्रमाण किंचित जानि नाही गिन्या है। बहुरि ताकौ अतरायाममात्र जो चरम फालिके निषेकनिका प्रमाण ताकरि गुणैं चरम फालिका सर्व द्रव्य ऐसा स । ३ । १२ । २ ७ । ४ । ४ / ७ । २ ७ । ४ । २० इहा विशेप अधिक है तिनिका द्रव्यकौ किंचित्त जानि नाही गिन्या है। इहा ऐसैं २ ७ । ४ का अपवर्तन कीए ऐसा स । ३ । १२ । ४ / ७ । २० याविषैं गुणश्रेणिके अर्थि अपकर्षण कीया द्रव्य मिलावना, ताकौ किंचित् जानि सदष्टिविषैं नाही गिन्या है। बहुरि याकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ एक भाग ऐसा–स । ३ । १२ । ४ / ७ । २० । प / ३ गुणश्रेणि आयामविषैं पूर्वोक्त

१ ೧

प्रकार क्रमरूप देना। बहुरि बहुभाग ऐसा स। ∂। १२। ४। प इहा गुणकारविषै एक हीनकौ न
७।२०। प ∂
∂

गिणि पल्यके असख्यातवे भागका अपवर्तन कोए ऐसा स। ∂। १२। ४ याविषै अतरायामविषै
७।२०।

दीया द्रव्य ऐसा स ∂। १२। २० अर द्वितीय स्थितिविषै दीया द्रव्य ऐसा स ∂। १२। ३। १६
७। २०। १७ ७। २०। १७

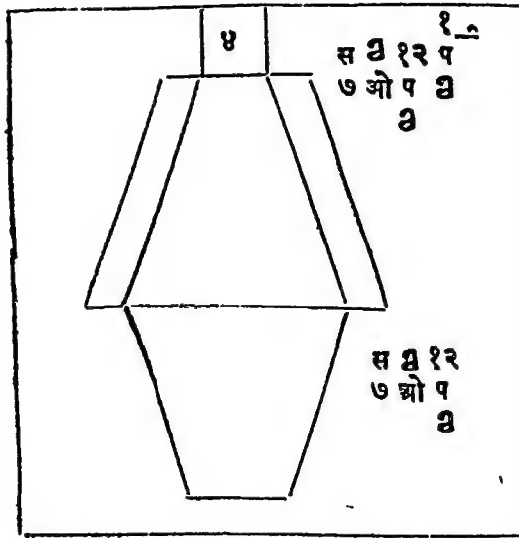
इनि दीए दोऊ द्रव्यनिविषैं ऐसा गुणकार भागहार कैसैं भया ताका मोकौं नीकै ज्ञान नाही भया, तातैं विधान नाही लिख्या है। बहुरि अतरायामका गच्छ ऐसा २ ७। ४ अर काडक घात इहा सपूर्ण भया तातै काडकायाम सहित अवशेष द्वितीय स्थितिका गच्छ ऐसा २ ७। ४। ४ सो अपने अपने गच्छका अर एक घाटि गच्छका आधाकरि न्यून दो गुणहानिका भाग दीए विशेष होइ ताकौं दो गुणहानिकरि गुणैं प्रथम निषेक इस गुणकारविषैं एक घाटि गच्छ घटाए अत निषेक हो है। इनकी रचना ऐसी—

सूक्ष्मसांपरायविषैं प्रथमकांडक अन्तफालि पतनसमय रचना।

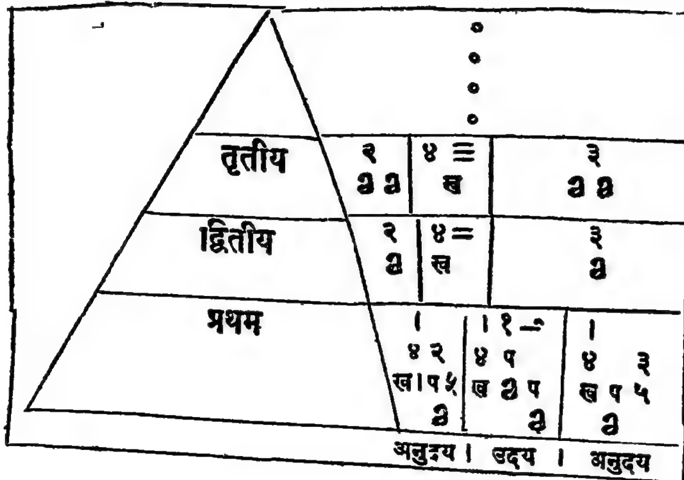
अतिस्थापनावली	४	स ∂ १२। ३। १६। १६–२७ ६४ / ७ २० १७ २७ ६४ १६— २७ ६४ / २
द्वितीयस्थितिः		स ∂ १२ ३ १६ १६ १ ೧ / ७ २० २७ ६४ १६— २७ ६४ / २
अंतरायाम		स ∂ १२ २० १६— २७ ४ / ७ २० २७ ४ १६— २७ ४ / २ / ० / स ∂ १२ २० १६ १ ೧ / ७ २० २७ ४ १६— २७ ४ / २
गुणश्रेणि		स ∂ १२ ४ ६४ / ७ २० ८५ / ० / ० / स ∂ १२ ४ / ७ २० ८५

इहा रचना पूर्वोक्त प्रकार जाननी। अतरायामविषैं पूर्वै भी द्रव्य था तातैं इहा दो वडी लीक करी हैं। वहुरि द्वितीय काडकका प्रथम फालि पतन समयविषैं सर्व द्रव्यको अपकर्षण भागहारका भाग दोए ऐसा स। ∂। १२ द्रव्य ग्रहि ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ एक
७। ओ

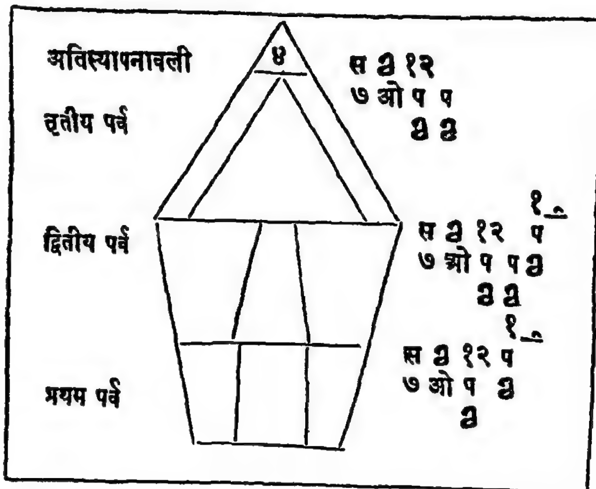
भाग गुणश्रेणि आयामविषै बहुभाग ऊपरितन स्थितिविषैं अतिस्थापनावली छोड दीजिए है। इहा अतरायाम पूर्ण होनेतैं अतरायाम अर द्वितीय स्थितिका एक गोपुच्छ भया। तातैं एक रचना ही क्रम हीनरूप जाननी। इनिकी सदृष्टि ऐसी—



बहुरि सूक्ष्मसापरायका प्रथम समयविषैं सर्व सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रथम समयविषैं कीनी सूक्ष्म कृष्टिनिका प्रमाणविषै साधिक कीए ऐसा ४ ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए ख बहुभागमात्र मध्य कृष्टि उदयरूप हो हैं। एक भागकौं अक सदृष्टि अपेक्षा पाचका भाग देइ तहा दोय भागमात्र नीचली तीन भागमात्र ऊपरिको कृष्टि अनुदयरूप हो हैं। बहुरि द्वितीयादि समयनिविषैं नीचली कृष्टि नवीन उदयरूप भईं। •ऊपरिली कृष्टि नवीन अनुदयरूप भईं। तिनिका प्रमाण पूर्वे नीचली ऊपरली अनुदय कृष्टिनिकैं असख्यातवा भागमात्र क्रमतैं है। मध्य उदय कृष्टि किंचित हीन क्रम लीए है। तिनकी सदृष्टि ऐसी—

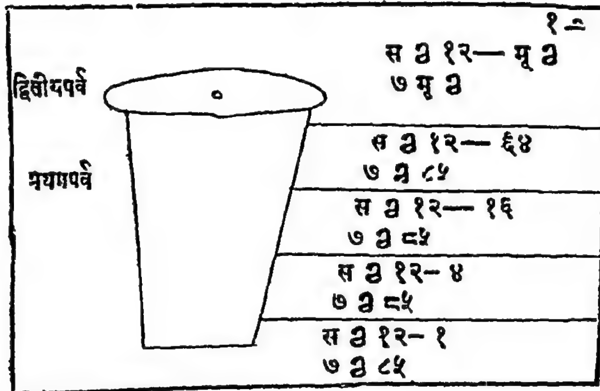


इहा क्रम हीनरूप प्रथमादि समयनिविषै उदय आवने योग्य प्रथमादि निषेक तिनकी ऊर्ध्व रचनाकरि तहा प्रथमादि निषेकनिविषै नीचली अनुदय मध्यकी ऊपरली अनुदय कृष्टिनिकी आडी रचना करी है। अर तिनिका प्रमाण लिख्या है। तहा द्वितीयादि निषेकनिविषै नीचली ऊपरली कृष्टिनिविषै दोय तीन भाग थे तिनकी सहष्टि दोय तीनका अककरि ताकौ क्रमतैं एक दोय आदि बार असख्यातका भाग देइ नवीन उदय अनुदय कृष्टिनिका प्रमाण लिख्या है। वीचि-मे सर्व कृष्टिनिकी दोय तीन आदि करि किंचिद्की सहनानीकरि उदय कृष्टिनिका प्रमाण लिख्या है ऐसा जानना। बहुरि सूक्ष्मसापरायका अत काडका द्रव्य ऐसा—स ∂ । १२ इहा किंचित् ऊन
७
है ताकौ न गिण्या है। याकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए ऐसा—स । ∂ । १२ प्रथम फालिका
७ । ओ
द्रव्य हो है। याकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ बहुभाग सूक्ष्मसापरायका अत समय-पर्यत गुणकार क्रमकरि दीजिए है। इहा यहु गुणश्रेणिशीर्ष है। बहुरि अवशेष एक भागकौ पल्य का असख्यातवा भागका भाग देइ बहुभाग पुरातन गुणश्रेणिका अतपर्यंत विशेष घटता क्रमकरि दीजिए है। बहुरि अवशेष एक भाग ताके ऊपरि स्थितिविषैं अतिस्थापनावली छोडि विशेष घटता क्रमकरि दीजिए है। ऐसैं तीन पर्वनिविषैं द्रव्य दीजिए है ताकी रचना ऐसी—

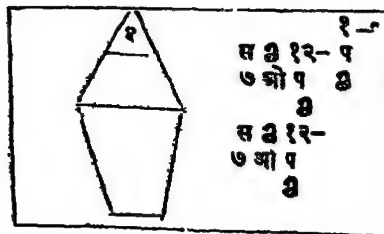


इहा नीचैं अधिक क्रमरूप पुरातन गुणश्रेणिकी रचनाकरि ताविषै दीया द्रव्यकी दूसरी लीक नीचैं प्रथम पर्वकी अधिक क्रमरूप ताके ऊपरि द्वितीय पर्वकी क्रमहीनरूप सहष्टि करी है बहुरि ताके ऊपरि तृतीय पर्वका पुरातन नवीन द्रव्यकी दोऊ लीक क्रमहीनरूप करी हैं। इनके आगैं दीया द्रव्यका प्रमाण लिख्या है। ऊपरि अतिस्थापनावली लिखी है ऐसा जानना। बहुरि ऐसैं ही द्वितीयादि फालिविषैं विधान जानना। बहुरि अत फालिका द्रव्य किंचिदून द्वयर्धगुणहानि-गुणित समयप्रबद्धप्रमाण ऐसा स । ∂ । १२ ताकौ पल्यका असख्यात वर्गमूलमात्र असख्यातका
७

भाग देइ एक भागमात्र ताकौ सूक्ष्मसापरायका द्विचरम समय पर्यंत प्रथम पर्वविपै असख्यातगुणा क्रमकरि देना। तहा ताकौ अक सदृष्टि करि पिच्यासीका भाग देइ एक च्यारि सोलह चौसठिकरि गुणे प्रथमादि निषेक हो है। बहुरि बहुभाग सूक्ष्मसापरायका अत समय सबधी निषेकविपै दीजिए है। यह दूसरा पर्व है। इनकी सदृष्टि रचना ऐसी—



इहा नीचैं प्रथम पर्वकी अधिक क्रमरूप सदृष्टि करी है। ताके आगै प्रथमादि निषेकका द्रव्य लिख्या है। ताके ऊपरि एक निषेक बडा लिख्या है। ताके आगें तहाही दिया द्रव्य लिख्या है ऐसैं कृष्टि वेदनाधिकारका विधानविषै सदृष्टि जाननी। बहुरि क्षीणकषायविषै छह कर्मनिविषै विवक्षित एक कर्मका सत्त्व द्रव्य ऐसा स। ३। १२ ताकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ एक
७
भागमात्र द्रव्य ग्रहि ताकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग देइ तहा एक भाग गुणश्रेणि आयाम विषै गुणकार क्रमकरि बहुभाग उपरितन स्थितिविषै अतिस्थापनावली छोडि विशेष घटता क्रमकरि देना तिनकी सदृष्टि ऐसी—



बहुरि निद्रादिक चौदह घातियानिका अत काडकविषैं प्रथमादि फालिनिका वा अत फालिका द्रव्य देनेका विधान जैसैं सूक्ष्मसापरायविषैं मोहका कह्या तैसैं ही जानना। तिनकी रचना पूर्वोक्त प्रकार ऐसी—

निद्रादिक प्रथमादिफालि	चौदह घातियानिकी प्रथमादिफालि	निद्रादिकनकी अंतफालि	चौदह घातियानिका अन्तफालि
४	४	०	०

बहुरि तीन वेद च्यारि कषायनिविषैं एक सहित चढनेकी अपेक्षा क्षपक जीव बारह प्रकार हैं। तहां पुरुषवेद क्रोध सहित चढनेवालेकै नपुंसक स्त्री सात नोकषाय क्षपणा अश्वकरण कृष्टि-करण क्रोध मान माया लोभ क्षपणा क्रमतैं हो है। बहुरि मान माया लोभ सहित चढ्याकै नोकषाय क्षपणा पर्यंत तौ समान है, पीछै क्रोधकी अर क्रोध मानकी अर क्रोध मायाकी क्रमतैं क्षपणा हो है। पीछै अश्वकरण कृष्टिकरण हो है, पीछै क्रमतै अवशेष कषायनिकी क्षपणा हो है। बहुरि अंत-करण पीछै कृष्टिकरण पर्यंत तौ जिस कषाय सहित चढ्या ताकी प्रथम स्थिति स्थापै है। पीछै अवशेष कषायनिकी जुदी जुदी प्रथम स्थिति स्थापै है, सो प्रथम स्थिति गुणश्रेण्यायामरूप है तातै तिनकी अधिक क्रमरूप रचना जाननी। बहुरि नपुंसक स्त्रीवेद सहित चढ्या जीवकै स्त्री-वेदका क्षपणा कालविषैं दोऊ वेदनिकी क्षपणा हो है। इहां जिस वेद सहित चढ्या ताहीकी प्रथम स्थिति स्थापै है ऐसा जानना। ऐसें ए नव कालके प्रत्येक यथायोग्य अंतर्मुहूर्तमात्र जानने तिनकी सदृष्टि रचना ऐसी—

२७ृ				लो ख	लो ख	लो ख	लोख
२७ृ				या ख	या ख	या ख	कि का
२७ृ				मा ख	मा ख	कि का	अस्स
२७ृ				को ख	कि का	अस्स	या ख
२७ृ				कि का	अस्स	मा ख	मा ख
२७ृ				अस्स	को ख	को ख	को ख
२७ृ			नो ७	नो ७	नो ७	नो ७	नो ७
२७ृ	न इ	न इ	इ	इ	इ	इ	इ
२७ृ	न	न	न	न	न	न	न
	न	इ	छी	क्रो	मा	या	लो

इहा इनका प्राकृत नामका आदि अक्षरकी सदृष्टि जाननी। बहुरि अवशेष तीन घाति कर्मनिका नाशकरि सयोगकेवली हो है। तहा प्रथमादि समयविषै आयुविना तीन अघातियानिका[1] द्रव्यकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ उदयादि गुणश्रेणि आयामविषैं गुणकार क्रमकरि उपरितन स्थितिविषैं विशेष घटता क्रमकरि अतिस्थापनावली छोड दीजिए है। ताकी सदृष्टि सुगम है। इहा स्वस्थान केवलीतैं आवर्जित करणविषैं अपकर्षण द्रव्य असख्यातगुणा, गुणश्रेणि काल सख्यातवे भागमात्र जानना। बहुरि दड कपाट प्रतर लोकपूरणविषैं स्थिति सत्त्व घात कीया ताका प्रमाण दडविषैं पल्यका असख्यातवा भागकौ असख्यातका भाग देइ बहुभागमात्र अर कपाटविषैं अवशेष एक भागकौ तैसैं ही भाग देइ बहुभागमात्र बहुरि प्रतरविषैं अवशेष एक भागकौ तैसै ही भाग देइ बहुभागमात्र अर लोकपूरणविषैं अवशेष एक भाग सख्यातगुणा अतर्मुहूर्तकरि हीन जानना। ऐसैं समय समय घात भए अवशेष स्थिति सख्यातगुणा अतर्मुहूर्तमात्र रहै है। ताका सख्यात बहुभाग आयामरूप काडक विधानकरि क्रमतैं घात कीए आयुके समान तीन अघातियानिकी अतर्मुहूर्तमात्र स्थिति रहै है। ताकी सदृष्टि ऐसी—

---

१ प्रथम सस्करणमें पक्ति २ व ११ में घातियानि पाठ है।

तीनघातिया तीनघातिया आयु

द द क पा ट म त र लो क पू र ण

१ ‒
प ३
३ ३
१ ‒
प ३
३ ३ ३
१ ‒
प ३
३ ३ ३ ३
प २ ११
३ ३ ३ ३
२ ७ ७

२७
२७७

२ ७

इहा क्रम हीनरूप निपेकनिकी सदृष्टि रचना जाननी। बहुरि सयोगी जिनकै पूर्व स्पर्धक अपूर्व स्पर्धक सूक्ष्म कृष्टिरूप योग अनुक्रमतैं हो है। तहा एक जीव प्रदेशविषै असख्यात लोक प्रमाण अविभागप्रतिच्छेद है। याहीका नाम वर्ग है, ताकी सदृष्टि ऐसी [व] बहुरि समान अविभागप्रतिच्छेद लीए वर्गनिका समूहरूप वर्गणा, ताविषैं वर्गनिका प्रमाण असख्यात जगत्प्रतर प्रमाण है। बहुरि वर्गणा समूहरूप एक स्पर्धक, तीहिविषैं वर्गणा श्रेणिका असख्यातवा भागमात्र है। याहीका नाम वर्गणाशलाका है। याकी सदृष्टि च्यारिका अक है। बहुरि स्पर्धक समूहरूप गुणहानि, तीहिविषै स्पर्धकनिका प्रमाण असख्यात है। याहीका नाम स्पर्धकशलाका है। ताकी सदृष्टि नवका अक है (९)। बहुरि गुणहानि समूहरूप एक स्थान तीहिविषैं गुणहानिका(प्रमाण) पल्यके असख्यातवे भागमात्र है। याहीका नाम नाना गुणहानि है। ताकी सदृष्टि ऐसी (ना)। ऐसैं जघन्य स्थान हो है। इनके प्रमाणकी सदृष्टि ऐसी जाननी—

अवि	वर्ग	वर्गणा	स्पर्धक	गुणहानि	नानागुणहानि
≡	≡ ३	३	३३	प ३	१

बहुरि स्थान स्थान प्रति सूच्यगुलका असख्यातवा भागप्रमाण मात्र जघन्य स्पर्धक वधै है। ऐसैं उत्कृष्ट परिणाम योगपर्यंत क्रम है। ऐसैं पूर्व स्पर्धकविषै विधान है। तहा पूर्व स्पर्धकका जघन्य वर्गके अविभागप्रतिच्छेदनिकी सदृष्टि ऐसी (व)। याकौ स्पर्धकशलाका अर नाना गुणहानिकरि गुणै अत स्वर्धकका प्रथम वर्गकी सदृष्टि होइ। तामै अक संदृष्टि अपेक्षा वर्गणा शलाकाका प्रमाण च्यारि तामै एक घटाए तीन होइ, सो अधिक कीए पूर्व स्पर्धकका उत्कृष्ट वर्गके
३—
अविभागप्रतिच्छेदनिकी सदृष्टि ऐसी–व। ना ९। ना। बहुरि इनके नीचैं अपूर्व स्पर्धक हो है, तिनका

इस पृष्ठकी सदृष्टिमें प्रथम सस्करणके अनुसार "तीन घातिया तीन घातिया" पाठ दो बार छपा है वहाँ "तीन घातिया तीन अघातिया" पाठ होना चाहिये।

प्रमाण स्पर्धकशलाकाकौ असख्यातगुणा अपकर्षण भागहारका भाग दीए एक भागमात्र हो है सो ऐसा— ८। याका उत्कृष्ट वर्गविषै अविभागप्रतिच्छेद पूर्व स्पर्धकका जघन्य वर्गके असख्यातवे
ओ a
भागमात्र है, सो ऐसा व । याकौ अपूर्व स्पर्धकप्रमाणका भाग अपूर्व स्पर्धकके जघन्य वर्गका अवि-
a
भागप्रतिच्छेद हो है। सो ऐसा— व ९। बहुरि सर्व प्रदेशनिकौ द्व्यर्थ गुणहानिका भाग दीए
a ओ a
पूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाका द्रव्य हो है। याकौ दो गुणहानिका भाग दीए एक विशेष हो है। बहुरि प्रथम वर्गणातै द्वितीयादि अत वर्गणापर्यंत एक एक विशेष घटता द्रव्य प्रथम गुणहानिविषै हो है। बहुरि द्वितीयादि गुणहानिविषैं आधा आधा क्रम अत गुणहानिपर्यंत जानना। बहुरि आदि वर्गणाकौ द्व्यर्द्ध गुणहानिकरि गुणें सर्व प्रदेशप्रमाण ऐसा (व १२) ताकौ अपकर्षण भागहारका भाग देइ एक भागमात्र द्रव्य ग्रहि ताकौं अपूर्व पूर्व स्पर्धकनिविषै यथायोग्य दीजिए है। इनकी सदृष्टि यथासभव जानि लेनी। पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिकी रचना ऐसी—

पूर्वस्पर्धक ९ ना	३— व ९ ना यहा द्रव्यकी सदृष्टि यथा सभव जाननी
अपूर्वस्पर्धक ९ ओ a	व व a व ९ a ओ a

इहा रचना ऊभी लीक करी है। बहुरि द्वितीय समयविषैं प्रथम समयतैं असख्यातगुणा द्रव्य अपकर्षण करै है, सो ऐसा—व १२। इहा गुणकारकौं भागहारका भागहार कीया है। बहुरि
ओ
a

प्रथम समयविषै कीने अपूर्व स्पर्धकनिके नीचैं नवीन अपूर्व स्पर्धक करिए है। तिनका प्रमाण प्रथम समयसबधी स्पर्धकनिके असख्यातवे भागमात्र है, सो ऐसा—९। इहा सदृष्टि रचना ऐसी—
a a a

९ ना	पूर्व स्पर्धक		३— व ९ ना व व a व ७ ९ ओ a व । ९ a । ओ । a । a
९ ओ a	प्रथम समय अपूर्व स्पर्धक		
९ ओ a a	द्वितीय समय अपूर्वस्पर्धक		

इहा सर्व स्पर्धकनिकी वर्गणाकी सदृष्टिविषैं समपट्टिका करि आगैं विशेष घटता क्रम की सदृष्टि करी हैं। तहा ऊपरि पूर्व स्पर्धक नीचैं प्रथम समयविषैं कीने, अपूर्व स्पर्धक नीचैं द्वितीय समयविषैं कीने। अपूर्व स्पर्धककी रचना जाननी। ऐसैं ही अपूर्व स्पर्धककरण कालका अत समयपर्यंत जानना। बहुरि कृष्टिकरण कालका प्रथम समयविषैं सर्व पूर्व अपूर्व स्पर्धक-सबधी जीव प्रदेश ऐसे—व १२। इनिकौ अपकर्षण भागहारका भाग दीए एक भागमात्र ऐसा व। १२। ग्रहि प्रथम समयविषै कीनी प्रथमादि कृष्टिनिविषै अर अपूर्व स्पर्धककी प्रथमादि
ओ
वर्गणानिविषैं द्रव्य दीजिए है। इहा कीनी कृष्टिनिका प्रमाण वर्गणाशलाकाके असख्यातवे भाग-मात्र ऐसा ४। इनकी रचना ऐसी—
a

इहा कृष्टिकी समपट्टिकारूप सदृष्टिकरि नीचैं विशेष घटता क्रमकी सदृष्टि करी है। बहुरि द्वितीय समयविषैं पूर्व द्रव्यतैं असख्यातगुणा द्रव्य ऐसा व। १२ ग्रहि ताकौ प्रथम समयविषैं कीनी कृष्टि
ओ
a
प्रमाणकौ असख्यातगुणा अपकर्षण भागहारका भाग दीए एक भागमात्र ऐसा ४। तिनके नीचैं
a a

नवीन कृष्टि करै है। तिनविषै अर प्रथम समयसंबंधी प्रथम कृष्टिकौ आदि देय अंत कृष्टि-पर्यंत कृष्टिनिविषै निक्षेपण करै है। इनकी रचना ऐसी—

द्वितीय समय कृत कृष्टि ६ ३ ओ ३

प्रथम समयकृतकृष्टि समपट्टिका

प्रथम समयकृतकृष्टि विशेष

अधस्तनशीर्ष

मध्यमखंड

उभय द्रव्य विशेष

इहां नीचैं नवीन कृष्टिनिकी ऊपरि पुरातन कृष्टिकी सदृष्टि करी है। तहां पुरातन कृष्टि-विषैं समपट्टिका अर विशेष घटता क्रमकी सदृष्टि करी है। बहुरि पुरातन कृष्टिविषै अधस्तन-शीर्ष विशेष द्रव्य दीए सर्व कृष्टिकी समपट्टिका भई। ताकी सर्व कृष्टिनिविषै मध्यम खंड द्रव्य दीए समपट्टिका रही। ताकी अर उभय द्रव्य विशेष द्रव्य दीए विशेष घटता क्रम भया ताकी रचना करी है। इहां ऐसे आडी रचना करी है। बहुरि इहां प्रथम समयविषैं ग्रह्या द्रव्य ऐसा व। १२
ओ
याकौं पल्यका असंख्यातवा भागका भाग दीए कृष्टिसंबंधी द्रव्य ऐसा व। १२। अवशेष बहुभाग-
ओ प
३
मात्र द्रव्य पूर्व अपूर्व स्पर्धकनिविषैं दीजिए है। बहुरि कृष्टिसंबंधी द्रव्यकौ प्रथम समयविषैं कीनी कृष्टि प्रमाणमात्र गच्छ ऐसा ४ ताका अर किंचिदून दो गुणहानि ऐसा १६— ताका भाग दीए
३
प्रथम समयसंबंधी विशेष होइ, सो ऐसा व। १२। ताकौ दो गुणहानि करि गुणैं प्रथम वर्गणा
ओ प ४ १६—
३ ३
ऐसी व। १२। १६। ताकौ द्वितीय समयविषैं कीनी कृष्टिप्रमाण ऐसा—४ ओ ३। ताकरि गुणैं
ओ प ४ १६—
७
अधस्तन कृष्टिका द्रव्य हो हैं। बहुरि प्रथम समयसंबंधी विशेष ऐसा—व। १२। ताकौ एक
ओ प ४ १६—
३ ३
घाटि प्रथम समयसंबंधी कृष्टिप्रमाण गच्छ अर तातैं एक अधिक प्रमाणकौ दोयका भाग दीए
१ २
तिस गच्छका संकलन धन होइ, सो ऐसा—४। ४ याकरि गुणैं अधस्तनशीर्षविशेष द्रव्य हो
३ ३ २

है। बहुरि द्वितीय समयविषैं द्रव्य ऐसा व १२ ओ। इहा भागहारका भागहारकौं राशिका
a
गुणकार कीए ऐसा व १२। a। याकौ पल्यका असख्यातवा भागका भाग दीए कृष्टिसबधी द्रव्य
ओ
ऐसा व। १२। a। याविषैं प्रथम समयसबधी कृष्टिसवधी द्रव्य मिलावनेकौ अगिला असख्यातका
ओ प
a
१ –
गुणकार ऊपरि एक अधिक कीए उभयसबधी कृष्टि द्रव्य ऐसा व। १२ a। याकौ प्रथम समय-
ओ। प
a
विषैं कीनी कृष्टि प्रमाणविषैं द्वितीय समयसबधी कृष्टि मिलावनेकौ साधिक कीए उभय समय-
।
सबधी कृष्टि प्रमाणमात्र गच्छ ऐसा ४ ताका अर किंचिदून दो गुणहानिका भाग दीए उभय द्रव्य
१— a
विशेष ऐसा व १२ a । याकौ उभयकृष्टि प्रमाणमात्र गच्छ अर तातै एक अधिक प्रमाणकौ
।
ओ प ४ १६—
a a
। १—
दोयका भाग दीए तिस गच्छका सकलन धन ऐसा ४। ४। ताकरि गुणै उभय द्रव्यविशेष द्रव्य
a। a। २
हो है। बहुरि द्वितीय समयसबधी द्रव्यविषैं पूर्वोक्त तीन द्रव्य घटावनेकी आगैं ऐसी (≡) सदृष्टि कीए अवशेष द्रव्य ऐसा व। १२। a। ≡। याकौं उभयसबधी कृष्टिनिका भाग दीए एक खड
ओ। प
a
होइ। ताकौ तिस ही करि गुणैं सर्व मध्यम खड द्रव्य हो है। इनकी सदृष्टि ऐसी—

अधस्तन कृष्टि	व। १२। १६। ४ ओ प। ४। १६ – a। ओ a a a
अधस्तन शीर्ष	१ ‿ व। १२। ४। ४ ओ। प। ४। १६ – a a। २ a a
उभय द्रव्य विशेष	१ ‿ १ ‿ व। १२। a। ४। ४ ओ। प। ४। १६ – a a। २ a a
मध्यम खड	। व। १२। a ४≡। ४ ओ। प। ४ a a a

बहुरि अंत कृष्टिकरण कालका तृतीयादि समयनिविषै यथासंभव रचना जाननी। इहां अपूर्व स्पर्धकनिका वा सूक्ष्म कृष्टिका विधान अनिवृत्तिकरणवत् जानना। तहां कर्मपरमाणूनिविषैं अनुभाग शक्ति अपेक्षा कथन है। इहां जीव प्रदेशनिविषै योग शक्तिका निरूपण है। तहां प्रमाणादिकका विशेष है सो विशेष जानना। वहुरि कृष्टिवेदक कालका प्रथम समयविषैं विधान कहिए है—

कृष्टिकरण कालका प्रथम समयविषै कीनी कृष्टि प्रमाणविषै अन्य समयविषै कीनी कृष्टि प्रमाण मिलावनेकौ अधिकको सदृष्टि कीए सर्व कृष्टि प्रमाण ऐसा ४ ताकौं पल्यका असंख्यातवा भागका भाग दीए बहुभाग ऐसा ४ | १० प प ३ ३ प ३ वीचिकी उदय कृष्टिनिका प्रमाण है। वहुरि एक भाग ऐसा ४ । प । ३ । ३ ताकौ अंक सदृष्टि अपेक्षा पांचका भाग देइ दोय भागमात्र नीचेकी तीन भागमात्र ऊपरिकी अनुदय कृष्टिनिका प्रमाण जानना। वहुरि द्वितीय समय विषै नीचेकी अनुदय कृष्टिनिविषैं तिनके असंख्यातवे भागमात्र उदय रूप हो है। अर ऊपरिकी अनुदयकृष्टिनिविषै तिनके असंख्यातवें भागमात्र उदयकृष्टि हैं। ते अनुदयरूप हो हैं। ऐसैं ही तृतीयादि समयनिविषै विधान जानना। इस सूक्ष्म कृष्टि वेदक कालविषै सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाती शुक्लध्यान हो है। ताकी सदृष्टि ऐसी—

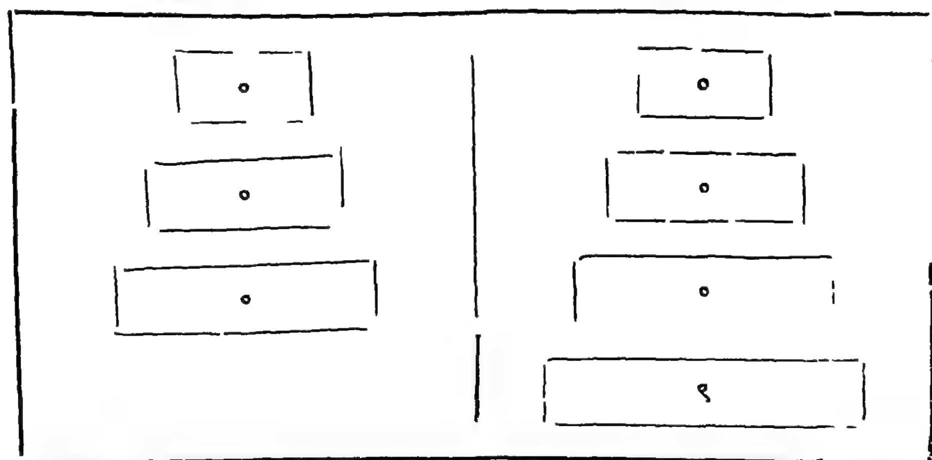
	० ० ०		
द्वितीयसमय	अनुदय	उदय	अनुदय
	। ४ २ ३ ३ प ५ ३	४=	। ४ ३ ३ ३ प ५ ३ ३
प्रथमसमय	अनुदय	उदय	अनुदय
	। ४ २ ३ प ५ ३	। १० ४ प ३ प ३ ३	। ४ ३ ३ प ५ ३

इहा प्रथमादि समयनिकी रचनाकरि तहा कृष्टिनिकी रचना आगै करी है। तहा सम-पट्टिका विशेष घटता क्रमरूप सदृष्टि करी है अर अनुदय उदय अनुदय कृष्टिनिका प्रमाण लिख्या हैं। बहुरि सयोगीविषैं अतर्मुहूर्त काल अवशेष रहैं वेदनीय नाम गोत्रका अत काडककी प्रथम फालिका पतन हो है। तहा ताके द्रव्यको ग्रहि स्थितिकाडकघात कीए पीछै अवशेष जो स्थिति रहैगी ताविषै असख्यातगुणा क्रमकरि अर ताके ऊपरि पुरातन गुणश्रेणि आयामका अत पर्यंत चय घटता क्रमकरि अर ताके ऊपरि अतिस्थापनावली छोडि उपरितन स्थितिविषै चय घटता क्रमकरि द्रव्य दीजिए है। ऐसैं इहा तीन पर्व जानने। ऐसैं ही ताकी द्वितीयादि चरम फालि पतन समयपर्यंत विधान जानना। बहुरि अत फालि पतन समयविषै अवशेष स्थितिका द्विचरम समय पर्यंत एक पर्व अर अत समयरूप द्वितीय पर्व ऐसैं दोय पर्वनिविषैं द्रव्य दीजिए है। इहा पिच्यासी प्रकृतिनिका सत्त्वविषै बहत्तरि प्रकृति तौ अयोगीका द्विचरम समयविषै अर तेरह प्रकृति ताका अत समयविषैं खिपैंगी, तातैं जुदी जुदी रचना करिए है। अर तेरह प्रकृतिनिविषै मनुष्यायुका स्थितिकाडकघात नाही। तातैं इहा बारह प्रकृतिनिका ग्रहण कीया है। सो इहा जैसैं क्षीणकषायविषै ज्ञानावरणादि-कनिका अत काडकविषै विधान वा सम्यग्दृष्टिका स्वरूप कह्या था तैसैं इहा जानना। बहुरि आयु की अतर्मुहूर्तमात्र स्थिति रही ताकी घटता क्रमलीए निषेकनिकी रचना जाननी। ऐसें इनकी सदृष्टि ऐसी हो है—

अतकाडककी प्रथमादिफालि	अतकाडककी अंतफालि		आयुकर्म
अतिस्थापनावली ४	प्रकृति ७२	प्रकृति १२	
तृतीय पर्व २७७७	अन्त० समय	अ० त० समय	
द्वितीय पर्व २७ ४	प्रथमपर्व	प्रथमपर्व	२७
प्रथम पर्व २७७			

बहुरि ताके अनतरि अयोगी गुणस्थान हो है। तहा पाच लघु अक्षर उच्चारण कालमात्र स्थिति है। ताकौ प्रथमादि समयनिविषैं तिन पर्वनिका एक एक निषेककौ गलावै है। तहा बहत्तरि प्रकृतिनिका द्विचरम समयविषैं तेरह प्रकृतिनिका अत समयविषैं अत निषेककौ गलावैं है। सो इहा

अयोगी कालका अक सद्दृष्टिकरि च्यारि समय मानि बहत्तरि प्रकृतिनिकी तीन निषेकरूप अर बारह प्रकृतिनिकी च्यारि निषेक रूप रचना ऐसी जाननी।



अर निषेक घटते क्रम लीए हैं अर अधोगलनरूप जुदे जुदे हैं, तातैं तिनकी जुदी जुदी रचना घटता क्रम लीए करी है। ऐसै सर्व कर्मनिका क्षयकरि ताका अनतर समयविषै पर द्रव्य-सबधी रहित केवल आत्मा ऊर्ध्वगमन करि लोकका अग्रभागविषै जाइ विराजमान हो है। तहा अनत्त कालपर्यंत तैसै ही रहै है, तातै कृतकृत्य अवस्थाकौ प्राप्त भए। तातैं तिनकौ सिद्ध कहिए। सो सिद्ध भगवान परम मगलकारी होऊ। ऐसैं श्रीलब्धिसार नामा शास्त्र अर इसहीविषै क्षपणा-सार शास्त्रका अर्थ गर्भित है। ताविषै अर्थनिकी सदृष्टि अर तिन सदृष्टिनिका स्वरूप निरूपण किया है। तहा जो चूक होइ सो विशेष ज्ञानो सवारि शुद्ध करियो, मोकौ अल्पज्ञ मानि क्षमा करियो।

श्लोक—

गर्भितक्षपणासार लब्धिसारश्रुत महत्।
तत्संदृष्टिसमाख्याति पूर्णजातार्थभासिका॥ १ ॥
मगल मलहताहँन् सिद्धात्मा शुद्धमगल।
मगल साधुसघस्तद्धर्मो मगलमुत्तम ॥ २ ॥

इति क्षपणासार अर्थगर्भित लब्धिसारके अर्थनिकी सदृष्टिनिका वर्णन सपूर्ण भया, याकौं सपूर्ण होतै यहु ग्रथ समाप्त भया, ग्रथ समाप्त होतै प्रारभ कीया कार्यकी सिद्धि होनेकरि हम आपको कृतकृत्य मानि इस कार्य करनेकी आकुलता रहित होइ सुखी भए। याके प्रसादतै सर्व आकुलता दूरि होइ हमारै शीघ्र ही स्वात्मज सिद्धिजनित परमानंदकी प्राप्ति होउ।

नाम	लोभ			माया		
संग्रहनाम	तृ	द्वि	प्र	तृ	द्वि	प्र
अपकर्षणशीर्ष विशेषद्रव्य	१_ । वि ४ ४ १ ख २४ ख २४ २	१_ । वि ४ ४ ३ ख २४ ख २४ २	१_ । वि ४ ४ ५ ख २४ ख २४ २	१_ वि ४ ४ ७ ख २४ ख २४ २	१_ वि ४ ४ ९ ख २४ ख २४ २	१_ वि ४ ४ ११ ख २४ ख २४ २
मध्यमखंड द्रव्य	। व १२ ४ । ४ ओ ३ ३ ख २४ ख	। व १२ ४ । ४ ओ ३ ३ ग २४ ख	। व १२ ४ । ४ ओ ३ ३ ख २४ ख	। व १२ ४— । ४ ओ ३ ३ ख २४ ख	। व १२ ४— । ४ ओ ३ ३ ख २४ ख	। व १२ ४— । ४ ओ ३ ३ ख २४ ख
नूतनकृष्टि सर्वधी समानकृष्टि द्रव्य	॥ । व १२ ४ । ४ ओ ३ ख २४ ख	॥ । व १२ ४ । ४ ओ ३ ख २४ ख	॥ । व १२ ४ । ४ ओ ३ ख २४ ख	॥ । व १२ ४— । ४ ओ ३ ख २४ ख	॥ । व १२ ४— । ४ ओ ३ ख २४ ख	॥ । व १२ ४— । ४ ओ ३ ख २४ ख
उभयद्रव्य विशेषद्रव्य	१_ वि ४ ४ ४७ ख २४ ख २४ २	१_ वि ४ ४ ४५ ख २४ ख २४ २	१_ वि ४ ४ ४३ ख २४ ख २४ २	१_ वि ४ ४ ४१ ख २४ ख २४ २	१_ वि ४ ४ ३९ ग २४ ख २४ २	१_ वि ४ ४—३७ ख २४ ख २४ २
संक्रमणांतरकृष्टि सबंधी समानखंड द्रव्य	व १२ २— २४ ओ	व १२ १— २४ ओ	व १२ ३— २४ ओ	व १२ २— २४ ओ	व १२ १— २४ ओ	व १२ ३— २४ ओ

नाम	मान			क्रोध		
संग्रहनाम	तृ	द्वि	प्र	तृ	द्वि	प्र
अधस्तनशीर्ष विशेषद्रव्य	१_ । वि ४ ४ ≡ १३ ख २४ ख २४ २	१_ । वि ४ ४ ≡ १५ ख २४ ख २४ २	१_ । वि ४ ४ ≡ १७ ख २४ ख २४ २	१_ । वि ४ ४ ≡ १९ ख २४ ख २४ २	१_ । वि ४ ४ ≡ २१ ख २४ ख २४ २	१_ । वि ४ ४ = ४४५ ख २४ ख २४ २
मध्यमखंड द्रव्य	। व १२ ४ ≡ । ४ ओ ३ ३ ख २४ ख	। व १२ ४ ≡ । ४ ओ ३ ३ ख २४ ख	। व १२ ४ ≡ । ४ ओ ३ ३ ख २४ ख	। व १२ ४ ≡ । ४ ओ ३ ३ ख २४ ख	। व १२ ४ = । ४ ओ ३ ३ ख २४ ख	। व १२ ४ १३ = । ४ ओ ३ ३ ख २४ ख
नूतनकृष्टि सर्वत्र समानकृष्टि द्रव्य	॥ । व १२ ४ ≡ । ४ ओ ३ ख २४ ख	॥ । व १२ ४ ≡ । ४ ओ ३ ख २४ ख	॥ । व १२ ४ ≡ । ४ ओ ३ ख २४ ख	॥ । व १२ ४ = । ४ ओ ३ ख २४ ख	॥ । व १२ ४ = । ४ ओ ३ ख २४ ख	०
उभयद्रव्य विशेषद्रव्य	१_ वि ४ ४ ≡ ३५ ख २४ ख २४ २	१_ वि ४ ४ ≡ ३३ ख २४ ख २४ २	१_ वि ४ ४ ≡ ३१ ख २४ ख २४ २	१_ वि ४ ४ = २९ ख २४ ख २४ २	१_ वि ४ ४ = २७ ख २४ ख २४ २	१_ वि ४ ४ = १६९ ख २४ ख २४ २
संक्रमणांतरकृष्टि संबंधी समानखंड द्रव्य	व १२ २— २४ ओ	व १२ १— २४ ओ	व १२ १५— २४ ओ	व १२ १४— २४ ओ	व १२ १८२— २४ ओ	०

लब्धिसार-क्षपणासार अर्थसंदृष्टि अधिकार पृष्ठ संख्या ३१९

७ १ ८ १ ९ १ १० २ ११ २ १२ २ १३ ३ १४ ३ १५ ३ १६ ४ १७ ४ १८ ४ १९ ५ २० ५ २१ ५

लब्धिसार-क्षपणासार अर्थसंदृष्टि अधिकार पृष्ठ संख्या ५७३

लब्धिसार-क्षपणासार अर्थसंदृष्टि अधिकार पृष्ठ संख्या ५४३

लब्धिसार-क्षपणासार अर्थसंदृष्टि अधिकार पृष्ठ संख्या ५९५

नाम	लोभ			माया			मान			क्रोध			जोड़ दीए समस्त प्रमाण
संग्रहनाम	तृ	द्वि	प्र	तृ	द्वि	प्र	तृ	द्वि	प्र	तृ	द्वि	प्र	समह घातक
द्रव्यप्रमाण	व १२ २५	व १२ २४	व १२ २४	व १२ २४	व १२ २४	व १२ २४	व १२ २४	व १२ २४	व १२ २४	व १२ २४	व १२ २४	व १२।१३ २४	व १२
कृष्टिप्रमाण	४ ख २४	४ ख २४	४ ख २४	४ ख २४	४ ख २४	४ ख २४	४ ख २४	४ ख २४	४ ख २४	४ ख २४	४ ख २४	४ १३ ख २४	४ ख
आयद्रव्य	व १२ २ २४ ओ	व १२ १ २४ ओ	व १२ ३ २४ ओ	व १२ २ २४ ओ	व १२ १ २४ ओ	व १२ ३ २४ ओ	व १२ २ २४ ओ	व १२ १ २४ ओ	व १२ १५ २४ ओ	व १२ १४ २४ ओ	व १२ १८२ २४ ओ	०	व १२ ९ ओ
व्ययद्रव्य	०	व १२ १ २४ ओ	व १२ २ २४ ओ	व १२ १ २४ ओ	व १२ २ २४ ओ	व १२ ३ २४ ओ	व १२ १ २४ ओ	व १२ २ २४ ओ	व १२ ३ २४ ओ	व १२ १ २४ ओ	व १२ २ २४ ओ	व १२ २०८ २४ ओ	व १२ २२६ २४ ओ
घातद्रव्य	व १२ २४ ओ ७	व १२ २४ ओ ७	व १२ २४ ओ ७	व १२ २४ ओ ७	व १२ २४ ओ ७	व १२ २४ ओ ७	व १२ २४ ओ ७	व १२ २४ ओ ७	व १२ २४ ओ ७	व १२ २४ ओ ७	व १२ २४ ओ ७	व १२ १३ २४ ओ ७	व १२ ओ ७
घातकृष्टि	४ ख २४ ओ ७	४ ख २४ ओ ७	४ ख २४ ओ ७	४ ख २४ ओ ७	४ ख २४ ओ ७	४ ख २४ ओ ७	४ ख २४ ओ ७	४ ख २४ ओ ७	४ ख २४ ओ ७	४ ख २४ ओ ७	४ ख २४ ओ ७	४ १३ ख २४ ओ ७	४ ख ओ ७

लब्धिसार-क्षपणासार अर्थसंदृष्टि अधिकार पृष्ठ संख्या ५२२

२ ७	२ ७ ५ ४	२ ७ ५ ४ ४	२७ ५ ४	२७ ५ ४ ५ ४ ४	२७ ५ ४ ५ ४ ४	२७ ५ ४ ५ ५ ४ ४ ४	२७ ५ ४ ५ ५ ४ ४ ४	२७ ५ ४ ५ २ ४ ४ ४ ४	
२७ ५ ४ ५ ५ ४ ४ ४ ४ ३	२७ ५ ४ ५ ५ ५ ४ ४ ४ ४ ४	१ ८ ४ २ २७ ५ ४ ५ ५ ४ ४ ९ ४ ४ ४	२७ अपवर्तित	२७ ७	१ १ २७ ७ ४ ४				
१ ८ १ ८ २७ ७ ४ ४ ४	१ १ २७ ७ ४ ४	१ १ २७ ७ ४ ४४४ ४	१ २७ ७ ४ ४४४४ ४	प ७	सा ७८	सा अं को २ ४ ४ ४	सा अ को १ ४ ४	सा अ को २ ४	सा अं को २

लब्धिसार-क्षपणासार अर्थसंदृष्टि अधिकार पृष्ठ संख्या ५२२

नाम	मिश्ररूपपरिणम्याद्रव्य	सम्यक्त्वप्रकृतिरूपपरिणम्या द्रव्य
अंतसमय	१____ १_ स a १२– ३ २७ २ ७ ख १७ गु	२____ २^ स a १२— २७ २ ७ ख १७ गु
मध्यसमय	० ०	० ०
चतुर्थसमय	a ७	a ६
तृतीयसमय	a a a a a	a a a a
द्वितीयसमय	a a a	a a
प्रथमसमय	स a १२- a ७ ख १७ गु	स a १२- १ ७ ख १७ गु

लब्धिसार- णासार अर्थसंदृष्टि अधि ार पृष्ठ संख्या ५९१

लोभकी सग्रहकृष्टि						मायाकी संग्रहकृष्टि						मानकी संग्रहकृष्टि						क्रोधकी संग्रहकृष्टि					
प्रथम		द्वितीय		तृतीय		प्रथम		द्वितीय		तृतीय		प्रथम		द्वितीय		तृतीय		प्रथम		द्वितीय		तृतीय	
अ	पू	अ	पू	अ	पू	अ	पू	अ	पू	अ	पू	अ	पू	अ	पू	अ	पू	अ	पू	अ	पू	अ	पू

लब्धिसार-क्षपणासार अर्थसंदृष्टि अधिकार संख्या ५९५

द्वितीयनिषेक	अनुभयरही । ४ १३ २।२ ख २४ प १६ प ५ ३ ३	उदयभई । ४ १३ २।३ ख २४ प १६ प ५ ३ ३	उभयभई । १ ४ १३ २ प ३ ख २४ प १६ प ३ ८	उभयभई । ४ १३ ३ ख २४ प १६ ३	उभयरही । १ ४ १३ प १६ प-११ ३ ३ ख २४ प १६ प ३ ३	उदयभई । ४ १३ ७ ख २४ प १६ प ३ ३	अनुभयभई । ४ १३ ४ ख २४ प १६ प ३ ३	अनुभयभई । ४ १३ ७ ख २४ प १६ ३	अनुभयरही । ४ १३ ४ ख २४ प १६ ३
प्रथमनिषेक	जघन्य ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० उत्कृष्ट			उदय ज ० ० ० उ	ज ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० उ			उदय ज ० ० ० उ	अनुभय ज ० ० ० उ

लोभकी संग्रहकृष्टि			मायाकी संग्रहकृष्टि		
तृतीय	द्वितीय	प्रथम	तृतीय	द्वितीय	प्रथम

मानकी संग्रहकृष्टि			क्रोधकी संग्रहकृष्टि		
तृतीय	द्वितीय	प्रथम	तृतीय	द्वितीय	प्रथम

२ृ	। २ृ	। २ृ ४ स्थान दोयसमान	। । २ृ ४ दोयस्थान समान	। ॥ २ृ ४	। ॥। २ृ ४	। ॥। २ृ ४ ४	। ॥। २ृ ४ ४ ४	। ॥। २ृ ४ ४ ४ ४	१_ २ृ	। १_ २ृ तीनस्थानसमान	। १_ २ृ अथवा २ृ ृ- ३

। २ृ २ ३	॥ २ृ २ ३	२ृ	१_ २ृ	१। २ृ	१॥ २ृ	१॥। २ृ	१॥॥ २ृ	२ृ	१_ २ृ	१। २ृ	१॥ २ृ	१॥। २ृ	१॥॥ २ृ	२ृ	। २ृ	॥ २ृ

॥। २ृ	२ृ	१- १८	१ २ १८	। २ृ	॥ २ृ	॥। २ृ	॥॥ २ृ ४	॥॥ । २ृ ४	॥॥ । २ृ ४ ४	॥॥ । । २ृ ४ ४	२ृ ृ	। २ृ ृ	॥ २ृ ृ

॥। २ृ ृ	॥॥ २ृ ृ	४	यातैं आगैं स्थान नव क्रमतैं संख्यात गुणे हैं ताके आगैं एक स्थान दूणा है	२ृ-२	सु १६	सु २४

सु ३२	सु ४८	पा १	पा २	मा ४	मा २ मा ४ मा ८	व १६	व ३२	व ६४	यातैं आगैं छह स्थान संख्यात गुणे हैं

यातैं आगैं छह स्थान असंख्यातगुणे	प ५	प ३ ५ २	प २ ५	प ३ ५ २ ३	प ृ ृ	प ० ० ० ० ० प ृ ृ ृ ृ ृ	यातैं आगैं दोय स्थान संख्यात गुणे हैं

सा अं को २ ४ ४ ४ ४	सा अं को २ ४ ४ ४	१ सा अ को २ − १ २ृ ४ ४	१ सा अ को २ ४ ४	सा अं को २ ४ ४	सा अं को २ ४	प ृ सा अ को २ ४	सा अ को २

अथ ग्रंथप्रशस्तिवर्णन ।*

श्रीमत लब्धिसार वा क्षपणासार सहित श्रुत गोम्मटसार
ताकी सम्यग्ज्ञान चद्रिका भाषामय टीका सुखकार ।
प्रारंभी अर पूरण भइ अव भए समस्त मंगलाचार
सफल मनोरथ भयो हमारो पायो ज्ञानानंद अपार ॥ १ ॥

दोहा

आप अर्थमय शब्दज्जुत ग्रथ उदधि गंभीर । अवगाहैं ही जानिये याकी महिमा धीर ॥ २ ॥
षट्कारक या ग्रंथके निश्चय अर व्यवहार । जानहु जानत होत हैं जातैं सत्य विचार ॥ ३ ॥

सवैया

सिद्ध श्रुत शब्द सोई है स्वतंत्र करतार भया यहु ग्रंथ सोई कर्म पहिचानिए ।
ग्रंथरूप जुरनेकी शक्ति सो करण जैन शासनके अर्थि अैसौ सप्रदान जानिए ।
ग्रंथहीतैं भयो ग्रंथ यहु अपादान जैन श्रुतविषैं यहु अधिकरण प्रमानिए ।
स्वाश्रित स्वरूप षट्कारक विचारो अैसै निश्चय करि आनकौ विधान न वखानिये ॥ ४ ॥
जिन गन इद नेमि इदु आदि करतार भयो ग्रंथ काज सोई कर्म शर्म थान है ।
याके होत भए जे सहाई हैं करण तेई भव्यनिके अर्थि किया अैसै संप्रदान है ।
आन काज छूटनेतैं भयो यहु काज सोई अपादान नाम अैसै जानत सुजान हैं ।
भयो क्षेत्रविषैं अधकरण कहावे सोई अैसै व्यवहार षट्कारक विधान हैं ॥ ५ ॥

दोहा

ग्रंथ होंनके जे भए समाचार सुखकार । तिनकौ जानहु कहत हो जाने जाने सार ॥ ६ ॥

सवैया ॥३१॥

वर्धमान केवलीके देहरूप पुद्गल ते जीव नाहि मेरै तौऊ उपकार करै हैं ।
मेघवत् अक्षर रहित दिव्य ध्वनि करि धर्मामृत वरसाय भवताप हरै हैं ।
ताहीका निमित्त पाइ आन स्कध पुद्गलके नानाविध भाषारूप होइ विसतरे है ।
जाकौ जैसौ इष्ट सो सुने हैं सो सत्य अर्थ सभा माहि अैसौ जिन महिमा अनुसरै है ॥ ७ ॥
गनधर गौतम जु च्यारि ज्ञानधारी आप महा रुचि धारि तिनकीं तहां सुने है ।
तिनकों निमित्त अर श्रुतज्ञान शक्ति सेती साचे नाना अर्थिनिकों नीकी भाति मुने है ।
राग अंश उदै होत भई उपकार बुद्धि तातें ग्रथ गुथनेकौ भले वर्ण चुने हैं ।
अग अंग वाह्यरूप रचना बनाई ताकों करिके अभ्यास भव्य सर्व कर्म धुने हैं ॥ ८ ॥
बुद्धि ऋद्धि धारी कोई संपूरण जानि ताहि कोई ताके अंग अश जानि अर्थ पायो है ।
केई ताके अनुसार ग्रथ जोरै हैं नवीन करिकें सक्षेप सोई अर्थ तहां गायो है ।
गणधरके गूथे ग्रथ तिनकों न पाठी अव अैसो कलिकाल दोष आपको दिखायो है ।
अनुसारी ग्रथनितैं शिव पंथ पाइ भव्य अवहू करि साधन स्वभाव भाव भायो है ॥ ९ ॥

* वादमैं पूरी प्रशस्ति मिल जानेसे यहाँ दे दी गई है ।

मुनि भूतवलि यति वृषभ प्रमुख भए तिनि हूनें तीन ग्रंथ कीने सुखकार हैं ।
प्रथम धवल अर दूजो है जयधवल तीजो महाधवल प्रसिद्ध नाम धार हैं ।
श्लोक तो हैं लखो अर अर्थ है कठिन घनो ताते बुद्धिमान विनु जानैं नाहि सार है ।
दक्षिणमे गोम्मट निकटि मूलविद्रपुर तहा ठीक कीए ग्रंथ पाइए अवार है ॥ १० ॥
दक्षिण दिशामे नेमिचंद्र आदि मुनिराज भये तिनहूके भयो तिनकों अभ्यास है ।
जैनी राजमल्ल राजा ताको मंत्री आप राजा भयो है चामुंडराय तहा ताकों वास है ।
तींहि कीनी प्रश्न तव धवलादि शास्त्रनिके अनुसारि कीयो इस ग्रंथको उजास है ।
वंधकादि संग्रहते नाम पंचसंग्रह है अथवा गोम्मटसार नामको प्रकाश है ॥ ११ ॥

दोहा

वहुत सूत्रके करनतै नेमिचंद गुनधार । मुख्यपने यों ग्रंथके कहिए हैं करतार ॥ १२॥

चौपई

कनकनंदि फुनि माधवचन्द । प्रमुख भए मुनि वहु गुन कंद ।
तिनहूकौ है यामै सीर । सूत्र कितेक किए गंभीर ॥ १३ ॥
मौक्तिक रत्न सूत्रमे पोय । गूथ्या ग्रंथ हार सम सोय ।
अर्थ प्रकाशक अमल अनूप । हृदय धरे सो है सुखरूप ॥ १४ ॥
नेमिचंद जिन शुभपद धारि । जैसे तीर्थ कियो गिरिनारि ।
तैसें नेमिचंद मुनिराय । ग्रंथ कियो है तरण उपाय ॥ १५ ॥
देशनिमे सुप्रसिद्ध महान । पूज्य भयो है यात्रा थान ।
यामै गमन करै जो कोय । उच्चपना पावत है सोय ॥ १६ ॥
गमन करणकौ गली समान । कर्णाटक टीका अमलान ।
ताकौ अनुसरती शुभ भई । टीका सुंदर संस्कृतमई ॥ १७ ॥
केशववर्णी वुद्धि निधान । संस्कृत टीकाकार सुजान ।
मार्ग कियो 'तिंहि जुत विस्तार । जह स्थूलनिकों भी संचार ॥ १८ ॥
हमहू करिके तहा 'प्रवेश । पायो तारन कारण देश ।
चितवन करि अर्थनिको सार । अैसे कीनो वहुरि विचारि ॥ १९ ॥
संस्कृत सदृष्टिनिकौ ज्ञान । नहि जिनके ते वाल समान ।
गमन करणको अति तरफरें । वल विनु नाहि पदनिकों धरे ॥ २० ॥
तिनि जीवनिको गमन उपाय । भाषा टीका दई वनाय ।
वाहन सम यह सुगम उपाव । याकरि सफल करो निज भाव ॥ २१ ॥
पूर्व कहे सिद्धान्त महान । तिनहीमे जयधवल प्रधान ।
ताका पंच दशम अधिकार । ताकरि करके अर्थ विचार ॥ २२ ॥
नेमिचंद नामा मुनिराय । लब्धिसार श्रुतसार वनाय ।
वर सम्यक्त्व चरित्र वखान । करिके प्रगट किए गुणथान ॥ २३ ॥

उपशम श्रेणि कथन पर्यंत । ताकी टीका संस्कृतवत ।
देखी देखे शास्त्रनि माहि । सपूरण हम देखी नाहि ॥ २४ ॥
माधवचद यती कृत ग्रथ । देख्यो क्षपणासार सुपथ ।
सस्कृत धारामय सुखकार । क्षपक श्रेणि वर्णनयुत सार ॥ २५ ॥
वह टीका यह शास्त्र विचार । तिनि करि किछू अर्थ अवधार ।
लब्धिसारकी टीका करी । भाषामय अर्थनसों भरी ॥ २६ ॥
अैसे ग्रथ दोयकी वनी । भाषा टीका सुंदर घनी ।
इनिमै जैसे कियो बखान । क्रमतै जानो ताहि सुजान ॥ २७ ॥

सवैया

करिकै पीठबंध जीवकांड भाषा कीनी तामै गुणथान आदि दोय वीस अधिकार है ।
प्रकृति समुत्कीर्तन आदि नव ग्रथनिकौ समुदाय कर्मकांड ताकी भाषा सार है ।
अैसें अनुक्रम सेती पीछे लिख्यो इनिहीकी संदृष्टीनिकौ स्वरूप जहां अर्थभार है ।
पूरण गोम्मटसार ग्रंथ भाषा टीका भई याकौ अवगाहैं भव्य पावैं भव पार है ॥ २८ ॥
समकित उपशम क्षायिककौ है बखान । पीछे देश सकल चारित्रको वखान है ।
उपशम क्षपक श्रेणी दोय तिनहूकौ कीयो है बखान ताकौ जाने गुणवान हैं ।
सयोगी अयोगी जिन सिद्धनिकौं वर्णनकरि लब्धिसार ग्रथ भयो पूरण प्रमान है ।
इनकी सदृष्टिनिकों लिखिकै स्वरूप ताकी संपूरण भाषा टीका कीनी भयो ज्ञान है ॥ २९ ॥

याविध गोम्मटसार लब्धिसार ग्रथनिकी
भिन्न भिन्न भाषा टीका कीनी अर्थ गायके ।
इनिके परस्पर सहायपनौ देख्यो ताते
एक करि दई हम तिनिकी मिलायकें ।
सम्यग्ज्ञान चद्रिका धरयो है याकौ नाम
सो ही होत है सफल ज्ञानानंद उपजायकें ।
कलिकाल रजनीमैं अर्थकौ प्रकाश करे
याते निज काज कीने इष्ट भाव भायकें ॥ ३० ॥

संशयादि ज्ञाननिकौ हेतुभूत जीवनिकै
तथाविध कर्मको क्षयोपशम जानिए ।
ताकरि हमारे किछू संशय विपर्यय वा
अनध्यवसाय भया होसी अैसें मानिये ।
तिनकरि ग्रथविषैं कहीं लिएं सशयकौं
कहीं विपरीत कहीं स्पष्ट न वखानिये ।
लिख्यो होइ अर्थ ताकौ मेरो वश नाहि तातैं
क्षमा करो गुनी, शुद्ध करो चूक मानिये ॥ ३१ ॥

दोहा ।

संशयादि होते विछू जो न कीजिए ग्रथ । तौ छद्मस्थनिकै मिटे ग्रथ करनको पंथ ॥ ३२ ॥
जो कषाय उपजायकैं धरै अर्थ विपरीत । तौ पापी है आप ही आज्ञा भंग अभीत ॥ ३३ ॥
आज्ञा अनुसारी भए अर्थ लिखे या माहि । धरि कषाय करि कल्पना हम किछु कीन्हों नाहि ॥ ३४ ॥

चौपाई

सम्यग्ज्ञान चंद्रिका नाम भाषामय टीका अभिराम ।
भई भले अर्थनिकरि युक्त, जाविध सो सुनिये अब उक्त ॥ ३५ ॥

सवैया

मैं हौ जीव द्रव्य नित्य चेतना स्वरूप मेरो लग्यो है अनादितै कलंक कर्ममलकौ ।
ताहीकौ निमित्त पाय रागादिक भाव भए भयो है शरीरकौ मिलाप जैसो खलकौ ।
रागादिक भावनिकौ पायकैं निमित्त फुनि होत कर्मबंध ऐसो है बनाव कलकौ ।
ऐसैं ही भ्रमत भयो मानुष शरीर जोग बने तो बने इहा उपाव निज थलकौ ॥ ३६ ॥

दोहा

रमापति स्तुत गुन जनक जाकौ जोगी दास । सोई मेरौ प्रान है धारे प्रगट प्रकाश ॥ ३७ ॥

चौपई

मै आतम अर पुद्गल स्कंध । मिलिकै भयो परस्पर बंध ।
सो असमान जाति पर्याय । उपज्यो मानुष नाम कहाय ॥ ३८ ॥

मातगर्भमै सो पर्याय । करिकैं पूरण अंग सुभाय ।
वाहिर निकसि प्रगट जव भयो । तब कुटुबकौ भेलो थयो ॥ ३९ ॥

नाम धर्यो तिनि हरषित होइ । टोडरमल्ल कहै सब कोय ।
ऐसो यहु मानुष पर्याय । बधत भरो निज काल गमाय ॥ ४० ॥

देश ढूढाहडमांहि महान । नगर सवाई जयपुर थान ।
तामैं ताकों रहनौ घनौ । थोरो रहनो औढे बनो ॥ ४१ ॥

तिस पर्यायविषैं जो कोय । देखन जानन हारो सोय ।
मै हौ जीव द्रव्य गुन भूप । एक अनादि अनत अरूप ॥ ४२ ॥

कर्म उदयको कारण पाय । रागादिक हो है द्रव्य दाय ।
ते मेरे औपाधिक भाव । इनिकौ विनशै मै शिवराव ॥ ४३ ॥

वचनादिक लिखनादिक क्रिया । वर्णादिक अर इंद्रिय हिया ।
ए सब है पुद्गलका खेल । इनिमै नाहि हमारो मेल ॥ ४४ ॥

रागादिक वचनादिक घना । इनके कारण कारिजपना ।
तातैं भिन्न न देखे कोय । विनु विवेक जन अंधा होइ ॥ ४५ ॥

सवैया

† कर्मको क्षयोपशम होत भयो मेरे किछू
बुद्धिको विकास तातैं विद्याभ्यास कर्यो है।
होनहार नीको तातै ऐसा ही वनाव वन्यो
नाना जैन ग्रथनिमे ज्ञान विस्तरयो है।
सार्थक गोम्मटसार लब्धिसार शास्त्रनिको
अर्थ अवभास्यो तब ऐसो भाव धरयो है।
इनिकी जो भाषा टीका ह्वै तौ तुच्छबुद्धि घनी
जानै सार अर्थ जो प्रमाण अनुसरयो है ॥ ४६ ॥

चौपाई

रायमल्ल साधर्मी एक। धर्म सधैया सहित विवेक।
सो नानाविध प्रेरक भयो। तन यहु उत्तिम कारज थयो ॥ ४७ ॥
ज्ञान राग तौ मेरो मिल्यो। लिखनौ करनौ तनको मिल्यो।
कागदमहि अक्षर आकारि। लिखिया अर्थ प्रकाशनहार ॥ ४८ ॥
ऐसैं पुस्तक भयो महान। जानै जाने अर्थ सुजान।
यद्यपि यहु पुद्गलको स्कध। है तथापि श्रुतज्ञान निबध ॥ ४९ ॥
सवत्सर अष्टादश युक्त। अष्टादश शत लौकिक युक्त।
माघ शुक्ल पचम दिन होत भयो ग्रथ पूरन उद्योत ॥ ५० ॥
लिखो लिखावो वाचौ पढौ। सोधौ सीखो रुचिजुत बढो।
अर्थ विचारो धारन करौ। दुखदायक रागादिक हरौ ॥ ५१ ॥
ऐसैं करि याको अभ्यास। पावो सम्यग्ज्ञान प्रकाश।
आशिर्वाद दयो है एह। होउ सफल सब विधि सुख गेह ॥ ५२ ॥
धर्म रागतैं करत अभ्यास। हो है शुभ उपयोग प्रकाश।
हीन होइ मोहादिक पाप। तातै प्रगटै आप प्रताप ॥ ५३ ॥
वीतराग ह्वै ध्यावै अर्थ। होइ शुद्ध उपयोग समर्थ।
तातैं ज्ञानानद स्वरूप। पावै निजपद अमल अनूप ॥ ५४ ॥
ऐसैं शुद्ध परमपद पाय। केवल दर्शन ज्ञान लहाय।
भासैं सर्व अर्थ प्रत्यक्ष। गुणपर्यय लक्षणयुत लक्ष ॥ ५५ ॥
आकुलता कारन नहि कोय। तातै सुखी सर्वथा होइ।
ऐसी दशा सर्वदा रहे। कबहूँ आन दशा नहि गहै ॥ ५६ ॥

† यह प्रशस्ति अधूरी है। इसके पूर्वका भाग गोम्मटसार जीवकाण्ड-कर्मकाण्डकी सदृष्टिसे सबधित होना चाहिये ऐसा प्रतीत होता है।

दोहा

ऐसा शास्त्राभ्यासकौ, उत्तम फल पहिचानि ।
रमौ शास्त्र आराममहि, सीख लेहु यहु मानि ॥ ५७ ॥
हम किछु शास्त्राभ्यास करि, फल पायो सुखकार ।
अब सपूरण सुखमई, होसी फल विस्तार ॥ ५८ ॥
शास्त्राभ्यासविषैं सुभग, वढ्यो अधिक उत्साह ।
तातै भाषा शास्त्र रचि, कियो अर्थ अवगाह ॥ ५९ ॥
आरभ्यो पूरण भयो, शास्त्र सुखद प्रासाद ।
अब भए कृतकृत्य हम पायौ अति आल्हाद ॥ ६० ॥
उपकारिकौ मानिए, भए आपनौ काज ।
तातै इस अवसर विर्षे, बदौ गुरु महाराज ॥ ६१ ॥
आदि अत मगल करत, होत काज हितकार ।
तातैं मगलमय नमौ, पच परम गुरु सार ॥ ६२ ॥

सवैया

अरहत सिद्ध सूरि उपाध्याय साधु सर्व
अर्थके प्रकाशी मगलीक उपकारी हैं ।
तिनकौ स्वरूप जानि रागतै भई है भक्ति
तातैं कायकौ नमाय स्तुतिकौ उचारी है ।
धन्य धन्य तुम तुमहीतैं सब काज भयो
करजोरि वारवार बदना हमारी है ।
मगल कल्याण सुख ऐसो अब चाहत हैं
होहु मेरी ऐसी दशा जैसी तुम धारी है ॥ ६३ ॥

इति श्रीलब्धिसार वा क्षपणासारसहित गोम्मटसार शास्त्रको सम्यग्ज्ञानचद्रिका नामा भाषा टीका संपूर्ण ।



गाथाअनुक्रमणिका

परिशिष्ट २

ऐतिहासिक नामसूची

५ करणसूत्रोल्लेख

१ दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा ५७, ८३, ८४, १०४, ११०, १११, १३२

२ उवरीदो गुणिदकमा कमेण सखेज्जरूवेण ७७

३ पदहतगुणमादिधनन्मि ८३

४ सैकपदाहतपददलचयहतमुत्तरधन ८३

५ अद्धाणेण सव्वधणे खडिदे १०५, ११३, १३३, २४१, २८६

६ रूपेणोनो गच्छा दलीकृत प्रचयताडितो मिश्र ।
प्रभवेण पदाभ्यस्त सकलित भवति सर्वेपाम् ॥१॥ ४१०

७ पदमिनगुणहतिगुणितप्रभेद स्याद् गुणधन तदा तदा द्व्यूनम् ।
एङ्कोनगुणविभक्त गुणसकलिन विजानीयात् ॥१॥ ४७४

८ एक करणसूत्र पृ० ३८८ मूलमें भी आया है। यथा–
जे हीणा अवहारे रूवा तेहिं गुणित्तु पुव्वफल ।
हीणवहारेणहिये अद्व (लब्ध) पुव्व फलेणहिय ॥४७३॥

परिशिष्ट ३

पारिभाषिक शब्दानु मणि

१ इसमें एक तो सख्यावाची शब्दोका सग्रह नही किया गया है, दूसरे इसमें पारिभाषिक शब्द वार-वार आये है, अत उनका मात्र एक-दो या तीन बार निर्देश कर दिया गया है। तीसरे सब शब्द सस्कृत छाया रूपमें दिये गये है।

श्रीमद् राजचद्र आश्रम, अगास द्वारा सचालित

श्री परमश्रुतप्रभावक मण्डल (श्रीमद् राजचन्द्र जैन शास्त्रमाला) के

प्रकाशित न्थोंकी सूची

(१) गोम्मटसार जीवकाण्ड

श्री नेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्तीकृत मूल गाथाएँ, श्री ब्रह्मचारी प० खूबचन्दजी सिद्धान्तशास्त्रीकृत सस्कृत छाया तथा नयी हिन्दी टीका युक्त। अवकी वार पडितजीने धवल, जयधवल, महाधवल और बडी सस्कृतटीकाके आधारसे विस्तृत टीका लिखी है। पचमावृत्ति। मूल्य—उन्नीस रुपये।

(२) गोम्मटसार कर्मकाण्ड

श्री नेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्तीकृत मूल गाथाएँ, प० मनोहरलालजी शास्त्रीकृत सस्कृत छाया और हिन्दी टीका। प० खूबचन्दजी द्वारा सशोधित। जैन सिद्धान्त-ग्रन्थ है। चतुर्थावृत्ति। मूल्य—सत्रह रुपये।

(३) स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा

स्वामिकार्तिकेयकृत मूल गाथाएँ, श्री शुभचन्द्र कृत बडी सस्कृत टीका तथा स्याद्वाद महाविद्यालय वाराणमीके प्रधानाध्यापक प० कैलासचन्द्रजी शास्त्रीकृत हिन्दी टीका। डॉ० आ० ने० उपाध्येकृत अध्ययन-पूर्ण अग्रेजी प्रस्तावना आदि सहित आकर्षक सपादन। द्वितीयावृत्ति। मूल्य—उन्नीस रुपये।

(४) परमात्मप्रकाश और योगसार

श्री योगीन्दुदेवकृत मूल अपभ्रश दोहे, श्री ब्रह्मदेवकृत सस्कृत टीका व प० दौलतरामजीकृत हिन्दी टीका। विस्तृत अग्रेजी प्रस्तावना और उसके हिन्दीसार सहित। महान् अध्यात्मग्रन्थ। डॉ० आ० ने० उपाध्येका अमूल्य सम्पादन। नवीन चतुर्थ सस्करण। मूल्य—अठारह रुपये।

(५) र्णव

श्री शुभचन्द्राचार्यकृत महान् योगशास्त्र। सुजानगढ निवासी प० पन्नालालजी वाकलीवालकृत हिन्दी अनुवाद सहित। चतुर्थ आवृत्ति। मूल्य—बारह रुपये।

(६) प्रवचनसार

श्री कुन्दकुन्दाचार्य विरचित ग्रन्थरत्नपर श्री अमृतचन्द्राचार्य कृत तत्त्वप्रदीपिका एव श्री जयसेनाचार्यकृत तात्पर्यवृत्ति नामक सस्कृत टीकाएँ तथा पाडे हेमराजजी रचित बालावबोधिनी भाषाटीका। डॉ० आ० ने० उपाध्येकृत अध्ययनपूर्ण अग्रेजी अनुवाद तथा विशद प्रस्तावना आदि सहित आकर्षक सम्पादन। तृतीयावृत्ति। मूल्य—पन्द्रह रुपये।

(७) बृहद्द्रव्यसंग्रह

आचार्य नेमिचन्द्रसिद्धान्तिदेवविरचित मूल गाथाएँ, सस्कृत छाया, श्री ब्रह्मदेवविनिर्मित सस्कृतवृत्ति और प० जवाहरलाल शास्त्रीप्रणीत हिन्दीभाषानुवाद। षड्द्रव्यसप्ततत्त्वस्वरूपवर्णनात्मक उत्तम ग्रन्थ। चतुर्थावृत्ति। मूल्य—बारह रुपये पचास पैसे।

(८) पुरुषार्थसिद्ध्युपाय

श्री अमृतचन्द्रसूरिकृत मूल श्लोक। प० टोडरमल्लजी तथा प० दौलतरामजीकी टीकाके आधार पर प० नाथूरामजी प्रेमी द्वारा लिखित नवीन हिन्दी टीका सहित। श्रावकमुनिधर्मका चित्तस्पर्शी अद्भुत वर्णन। पष्ठावृत्ति।

मूल्य—पाँच रुपये।

(९) पञ्चास्तिकाय

श्री कुन्दकुन्दाचार्यविरचित अनुपम ग्रन्थराज। श्री अमृतचन्द्राचार्यकृत 'समयव्याख्या' (तत्त्वप्रदीपिका वृत्ति) एव श्री जयसेनाचार्यकृत 'तात्पर्यवृत्ति' नामक सस्कृत टीकाओसे अलकृत और पाडे हेमराजजी रचित बालावबोधिनी भाषाटीकाके आधारपर प० पन्नालालजी बाकलीवालकृत प्रचलित हिन्दी अनुवाद सहित। तृतीयावृत्ति।

मूल्य—सात रुपये।

(१०) स्याद्वादमञ्जरी

कलिकालसर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्यकृत अन्ययोगव्यवच्छेदद्वात्रिंशिका तथा श्री मल्लिषेणसूरिकृत सस्कृत टीका। श्री जगदीशचन्द्र शास्त्री एम० ए० पी० एच० डी० कृत हिन्दी अनुवाद सहित। न्यायका अपूर्व ग्रन्थ है। बडी खोजसे लिखे गये ८ परिशिष्ट है। चतुर्थावृत्ति।

मूल्य—इक्कीस रुपये।

(११) इष्टोपदेश

श्री पूज्यपाद-देवनन्दि आचार्यकृत मूल श्लोक, पडितप्रवर श्री आशाधरकृत सस्कृतटीका, प० धन्यकुमारजी जैनदर्शनाचार्य एम० ए० कृत हिन्दीटीका, बैरिस्टर चम्पतरायजीकृत अग्रेजी टीका तथा विभिन्न विद्वानो द्वारा रचित हिन्दी, मराठी, गुजराती एव अग्रेजी पद्यानुवादो सहित भाववाही आध्यात्मिक रचना। द्वितीय आवृत्ति।

मूल्य—दो रुपये पचास पैसे।

(१२) लब्धिसार (क्षपणासार गर्भित)

श्री नेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्तीरचित करणानुयोग ग्रन्थ। पडितप्रवर टोडरमल्लजीकृत बडी टीका सहित। श्री फूलचन्दजी सिद्धान्तशास्त्रीका अमूल्य सम्पादन द्वितीयावृत्ति।

मूल्य—छत्तीस रुपये।

(१३) द्रव्यानुयोगतर्कणा

श्री भोजकविकृत मूल श्लोक तथा व्याकरणाचार्य ठाकुरप्रसादजी शर्माकृत हिन्दी अनुवाद। द्वितीयावृत्ति।

मूल्य—ग्यारह रुपये पचीस पैसे।

(१४) न्यायावतार

महान् तार्किक आचार्य श्री सिद्धसेन दिवाकरकृत मूल श्लोक व जैनदर्शनाचार्य प० विजयमूर्ति एम० ए० कृत श्री सिद्धर्षिगणिकी सस्कृतटीकाका हिन्दीभाषानुवाद। न्यायका सुप्रसिद्ध ग्रन्थ है। द्वितीयावृत्ति।

मूल्य—छ रुपये।

(१५) प्रशमरतिप्रकरण

आचार्य श्री उमास्वातिविरचित मूल श्लोक, श्री हरिभद्रसूरिकृत सस्कृतटीका और प० राजकुमारजी साहित्याचार्य द्वारा सम्पादित सरल अर्थ सहित वैराग्यका बहुत सुन्दर ग्रन्थ है। प्रथमावृत्ति।

मूल्य—छ रुपये।

(१६) सभाष्यतत्त्वार्थाधिगमसूत्र (मोक्षशास्त्र)

श्री उमास्वातिकृत मूलसूत्र और स्वोपज्ञ भाष्य तथा पं० खूबचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्रीकृत विस्तृत भाषाटीका। तत्त्वोका हृदयग्राह्य गम्भीर विश्लेषण। द्वितीयावृत्ति। मूल्य—छ रुपये।

(१७) सप्तभंगीतरंगिणी

श्री विमलदासकृत मूल और पंडित ठाकुरप्रसादजी शर्मा कृत भाषाटीका। न्यायका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ। तृतीयावृत्ति। मूल्य—छ रुपये।

(१८) समयसार

आचार्य श्री कुन्दकुन्दाचार्य विरचित महान् अध्यात्म ग्रन्थ, तीन टीकाओं सहित नयी आवृत्ति। (अप्राप्य)

(१९) इष्टोपदेश

मात्र अंग्रेजी टीका व पद्यानुवाद। मूल्य—पचहत्तर पैसे

(२०) परमात्मप्रकाश

मात्र अंग्रेजी प्रस्तावना व मूल गाथाएँ। मूल्य—दो रुपये।

(२१) योगसार

मूल गाथाएँ व हिन्दी सार। मूल्य—पचहत्तर पैसे।

(२२) कार्तिकेयानुप्रेक्षा

मूल गाथाएँ और अंग्रेजी प्रस्तावना। मूल्य—दो रुपये पचास पैसे।

(२३) प्रवचनसार

अंग्रेजी प्रस्तावना, प्राकृत मूल, अंग्रेजी अनुवाद तथा पाठांतर सहित। मूल्य—पांच रुपये।

(२४) अष्टप्राभृत

श्री कुन्दकुन्दाचार्य विरचित मूल गाथाओंपर श्री रावजीभाई देसाई द्वारा गुजराती गद्य-पद्यात्मक भाषान्तर। मूल्य—दो रुपये।

(२५) मोक्षमाला (भावनाबोध सहित)

श्रीमद् राजचन्द्रकृत मूल गुजराती ग्रन्थका श्री हंसराजजीकृत हिन्दी अनुवाद। इसमें जैन धर्मको यथार्थ समझानेका प्रयास किया गया है। भाषाशैली बहुत सुन्दर और सरल है। इसमें १०८ शिक्षापाठ हैं। साथमें भावनाबोधमें बारह भावनाओंका सुन्दर दृष्टान्तसहित वर्णन है। पुन छप रहा है।

(२६) श्रीमद् राजचन्द्र

श्रीमद् राजचन्द्रके मूल गुजराती पत्रों व रचनाओंका श्री हंसराजजीकृत हिन्दी अनुवाद। तत्त्वज्ञान-पूर्ण महान् ग्रन्थ है। मूल्य—बाईस रुपये पचास पैसे।

अधिक मूल्यके ग्रन्थ मँगानेवालोंको कमिशन दिया जायेगा। इसके लिये वे हमसे पत्रव्यवहार करें।

श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम, अगासकी ओरसे

प्रकाशित गुजराती ग्रन्थ

१ श्रीमद् राजचन्द्र २ मोक्षमाला ३ तत्त्वज्ञान ४ श्रीमद् राजचन्द्र जीवनकला ५ पत्रशतक ६ समाधिसोपान (रत्नकरण्ड श्रावकाचारके विशिष्ट स्थलोका अनुवाद) ७ सहजसुख-साधन ८ सुबोध सग्रह ९ नित्यनियमादि पाठ (भावार्थ सहित) १० पूजासचय ११ आठ दृष्टिनी सज्झाय १२ ज्ञानमञ्जरी (अप्राप्य) १३ आलोचनादि पद सग्रह १४ चैत्यवदन चोवीसी (अप्राप्य) १५ नित्यक्रम १६ श्रीमद् लघुराजस्वामी (प्रभुश्री) उपदेशामृत १७ आत्मसिद्धि शास्त्र १८ श्री समयसार सक्षिप्त (अप्राप्य) १९ धर्मामृत (अप्राप्य) २० अनित्यपचाशत् तथा हृदयप्रदीप २१ नित्यनियमादि पाठ भावार्थयुक्त (हिन्दी) २२ परमात्मप्रकाश २३ तत्त्वज्ञान तरगिणी २४ आत्मानुशासन २५ अध्यात्म राजचन्द्र (अप्राप्य) २६ अध्यात्मरसतरग २७ श्रीमद् राजचन्द्र जन्मशताब्दी महोत्सव पूजादि स्मरणाजलि काव्यो २८ सुवर्ण-महोत्सव–आश्रम परिचय २९ Shrimad Rajchandra, A Great Seer 30 Mokshamala (Out of Print)

आश्रमके गुजराती प्रकाशनोंका पृथक् सूचीपत्र मगाइये । सभी ग्रन्थोपर डाकखर्च अलग रहेगा ।

प्राप्तिस्थान

१ श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम,

स्टेशन–अगास; पोस्ट–बोरिया

वाया–आणद (गुजरात)

पिन ३८८१३०

२ श्री परमश्रुत प्रभावक मण्डल,

(श्रीमद् राजचन्द्र जैन शास्त्रमाला)

चौकसी चेम्बर, खारा कुवा, जौहरी बाजार

बम्बई–४००००२

■